Table of Contents

शीर्षक पेज
अंतर्वस्तु
लेखक के बारे में
समर्पण
द मिरर ऑफ ब्यूटी की प्रशंसा
पारिवारिक वृक्ष
पात्रों की सूची
प्रस्तावना
सौंदर्य का दर्पण
पुस्तक 1
1. सोफिया के वंशजों, सलीम जाफर और शमीम जाफर का जीवन और नियति
2. सेवानिवृत्त नेत्र रोग विशेषज्ञ और शौकिया वंशावली विशेषज्ञ डॉ. फारूकी लंदन में वसीम जाफर से मिलते
3. एक रहस्यमयी किताब प्रकट होती है, और साथ ही एक अज्ञात आत्मा भी, जो वसीम जाफर को मोहित कर लेती है।
पुस्तक 2
4. मियां मखसुल्लाह के चित्र ने हंगामा मचा दिया
5. हिंदल पुरवाह का स्वामी अपने मान-सम्मान पर लगे खतरे से क्रोधित है।
6. मियां मखसुल्लाह हिंदुस्तान के ठंडे उत्तरी भाग की ओर भागा।
7. चित्रकार मियां मखसुल्लाह ने तालीम की रहस्यमय कला सीखी।
8. एक बहुप्रतीक्षित जन्म के बाद एक अप्रत्याशित और अस्पष्ट मृत्यु हो जाती है।
9. मियां मखसुल्लाह के पुत्र और पोते समृद्ध और खुशहाल हों।
अन्तराल
10. याह्या एक असाधारण शक्ति और सुंदरता से भरपूर विलाप को देखता है और राजपूताना के चित्रकारों और गायक
11. याह्या एक सुंदर महिला के चित्र से मोहित हो जाता है।
12. याह्या कश्मीर के बाग के प्रति अपने प्रेम की पुष्टि करते हैं। वे पहली बार अपने बेटों को प्रदर्शन
13. दाऊद और याकूब अपनी विरासत का जायजा लेते हैं और एक ऐसा निर्णय लेते हैं जो उनके जीवन को बदल देगा।
14. याकूब और दाऊद किशनगढ़ जाते समय राजपूताना के कठोर रेगिस्तान से होकर गुजरते हैं।
15. याकूब और दाऊद रेगिस्तान की दो हूरों पर मोहित हो जाते हैं।
16. याकूब और दाऊद नए व्यापार सीखते हैं, और याकूब को एक पुत्र होता

है।
17. फिरंगी और मराठों के बीच एक भयंकर युद्ध हुआ जिसमें मुहम्मद यूसुफ अनाथ हो गए।
18. मुहम्मद यूसुफ और असगरी की तीन सुंदर बेटियाँ हैं जिनका स्वभाव भिन्न-भिन्न है।
पुस्तक 3
19. छोटी बेगम प्रेम के प्रश्नों को एक तरफ रखकर साहब के घर में बीबी बनना सीखती है।
20. मार्स्टन ब्लेक, वज़ीर खानम से एक अप्रत्याशित प्रश्न पूछता है, जो अब उसके दो बच्चों की माँ है।
21. जयपुर पैलेस में पनप रही साजिशों के बीच मार्स्टन ब्लेक खतरे में हैं।
22. वज़ीर खानम ने टिंडल परिवार के साथ एक समझौते पर बातचीत की।
पुस्तक 4
23. वज़ीर खानम दिल्ली के शानदार शहर में सहजता से बस जाती हैं।
24. वज़ीर खानम को पहाड़ी पर स्थित फ्रेज़र साहब के भव्य और आलीशान महल में आमंत्रित किया गया।
25. फैनी पार्क्स इलाहाबाद में जीवन का एक जीवंत वर्णन प्रस्तुत करती हैं।
26. युग के महानतम कवि, मिर्ज़ा असदुल्ला खान ग़ालिब, इस भव्य सभा में एक कविता का पाठ करते हैं।
27. Navab Shamsuddin Ahmad Khan pays a visit to Wazir Khanam
28. Wazir Khanam has a consultation with Navab Yusuf Ali Khan
29. वज़ीर खानम पंडित नंद किशोर से परामर्श करते हैं, और एक विकट दुविधा को हल करने के लिए ख्वाजा हाफ़िज़
30. कविता वज़ीर खानम और शम्सुद्दीन अहमद खान के बीच प्रेम पत्रों के आदान-प्रदान को सुगम बनाती है।
31. An exquisitely attired Wazir Khanam pays a visit to Navab Shamsuddin Ahmad Khan’s imposing and s
32. वज़ीर खानम और शम्सुद्दीन अहमद इस बात पर बहस करते हैं कि उनमें से कौन दानदाता है और कौन भिखारी; छ
33. वज़ीर खानम अपनी निराशा को स्वीकारने की कोशिश करती है, जबकि नवाब उसे रात वहीं रुकने का सुझाव देता
34. हबीब-उन निसा, वज़ीर खानम को रात की तैयारी में मदद करता है, और नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान उसके शरीर
35. वज़ीर खानम को एक प्रेमपूर्ण संदेश और एक राजकुमारी के योग्य उपहार प्राप्त होता है।
36. हकीम अहसानुल्लाह खान अनिच्छा से विलियम फ्रेजर से मिलते हैं और बाद में नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान क

ए गार्डियन 2013 की सर्वश्रेष्ठ पुस्तक

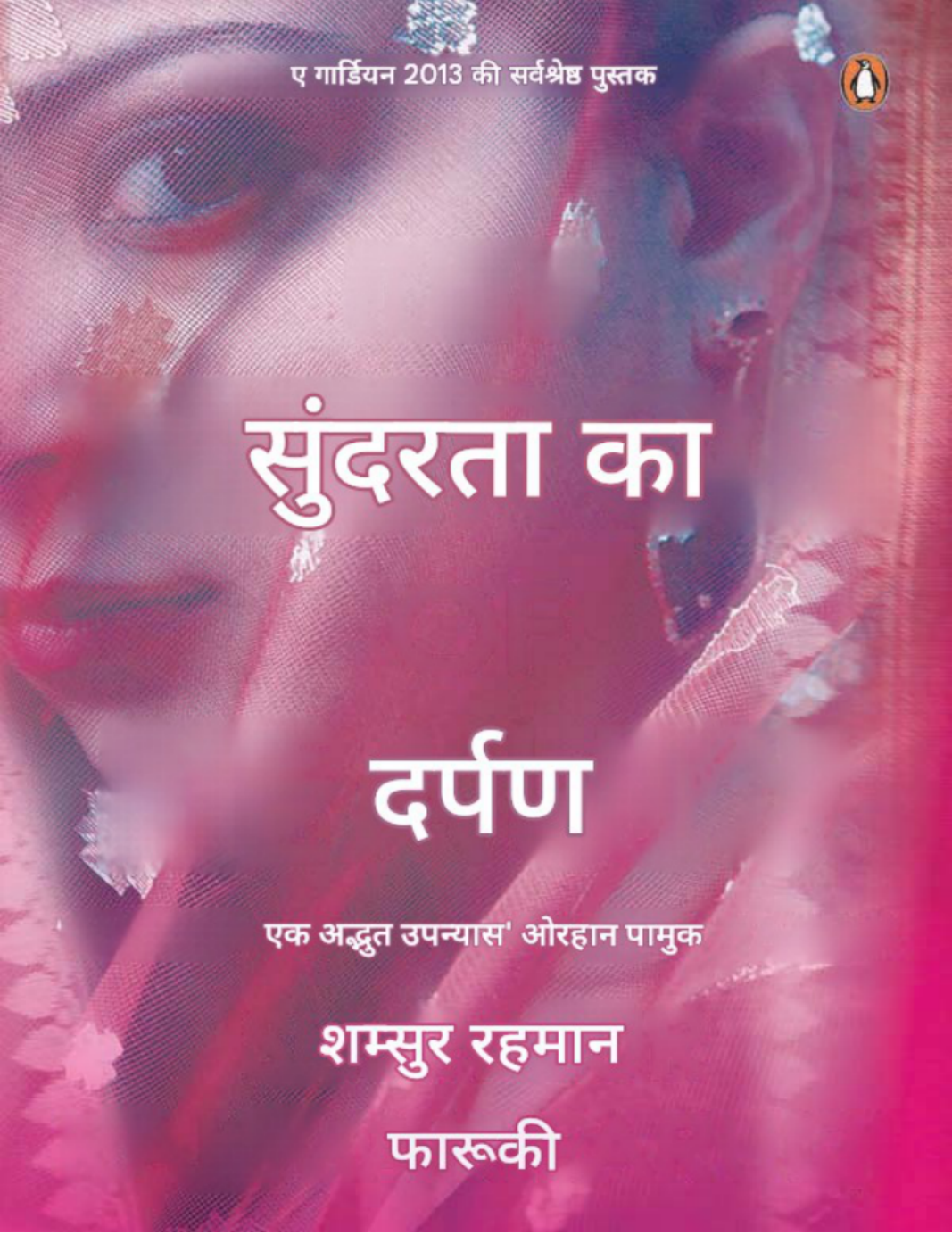

सुंदरता का दर्पण

एक अद्भुत उपन्यास' ओरहान पामुक

शम्सुर रहमान फारूकी

Table of Contents

शीर्षक पेज
अंतर्वस्तु
लेखक के बारे में
समर्पण
द मिरर ऑफ ब्यूटी की प्रशंसा
पारिवारिक वृक्ष
पात्रों की सूची
प्रस्तावना
सौंदर्य का दर्पण
पुस्तक 1
1. सोफिया के वंशजों, सलीम जाफर और शमीम जाफर का जीवन और नियति
2. सेवानिवृत्त नेत्र रोग विशेषज्ञ और शौकिया वंशावली विशेषज्ञ डॉ. फारूकी लंदन में वसीम जाफर से मिलते हैं और उनकी असाधारण खोज के बारे में जानते हैं।
3. एक रहस्यमयी किताब प्रकट होती है, और साथ ही एक अज्ञात आत्मा भी, जो वसीम जाफर

को मोहित कर लेती है।

पुस्तक 2

4. मियां मखसुल्लाह के चित्र ने हंगामा मचा दिया

5. हिंदल पुरवाह का स्वामी अपने मान-सम्मान पर लगे खतरे से क्रोधित है।

6. मियां मखसुल्लाह हिंदुस्तान के ठंडे उत्तरी भाग की ओर भागा।

7. चित्रकार मियां मखसुल्लाह ने तालीम की रहस्यमय कला सीखी।

8. एक बहुप्रतीक्षित जन्म के बाद एक अप्रत्याशित और अस्पष्ट मृत्यु हो जाती है।

9. मियां मखसुल्लाह के पुत्र और पोते समृद्ध और खुशहाल हों।

अन्तराल

10. याह्या एक असाधारण शक्ति और सुंदरता से भरपूर विलाप को देखता है और राजपूताना के चित्रकारों और गायकों से मिलता है।

11. याह्या एक सुंदर महिला के चित्र से मोहित हो जाता है।

12. याह्या कश्मीर के बाग के प्रति अपने प्रेम की पुष्टि करते हैं। वे पहली बार अपने बेटों को प्रदर्शन करते हुए भी देखते हैं।

13. दाऊद और याकूब अपनी विरासत का जायजा लेते हैं और एक ऐसा निर्णय लेते हैं जो उनके जीवन को बदल देगा।

14. याकूब और दाऊद किशनगढ़ जाते समय राजपूताना के कठोर रेगिस्तान से होकर गुजरते हैं।

15. याकूब और दाऊद रेगिस्तान की दो हूरों पर मोहित हो जाते हैं।

16. याकूब और दाऊद नए व्यापार सीखते हैं, और याकूब को एक पुत्र होता है।

17. फिरंगी और मराठों के बीच एक भयंकर युद्ध हुआ जिसमें मुहम्मद यूसुफ अनाथ हो गए।

18. मुहम्मद यूसुफ और असगरी की तीन सुंदर बेटियाँ हैं जिनका स्वभाव भिन्न-भिन्न है।

पुस्तक 3

19. छोटी बेगम प्रेम के प्रश्नों को एक तरफ रखकर साहब के घर में बीबी बनना सीखती है।

20. मार्स्टन ब्लेक, वज़ीर खानम से एक अप्रत्याशित प्रश्न पूछता है, जो अब उसके दो बच्चों की माँ है।

21. जयपुर पैलेस में पनप रही साजिशों के बीच मार्स्टन ब्लेक खतरे में हैं।

22. वज़ीर खानम ने टिंडल परिवार के साथ एक समझौते पर बातचीत की।

पुस्तक 4

23. वज़ीर खानम दिल्ली के शानदार शहर में सहजता से बस जाती हैं।

24. वज़ीर खानम को पहाड़ी पर स्थित फ्रेज़र साहब के भव्य और आलीशान महल में आमंत्रित किया गया।

25. फैनी पार्क्स इलाहाबाद में जीवन का एक जीवंत वर्णन प्रस्तुत करती हैं।

26. युग के महानतम कवि, मिर्ज़ा असदुल्ला खान ग़ालिब, इस भव्य सभा में एक कविता का पाठ करते हैं।

27. Navab Shamsuddin Ahmad Khan pays a visit to Wazir Khanam

28. Wazir Khanam has a consultation with Navab Yusuf Ali Khan
29. वज़ीर खानम पंडित नंद किशोर से परामर्श करते हैं, और एक विकट दुविधा को हल करने के लिए ख्वाजा हाफ़िज़ का दीवान पढ़ा जाता है।
30. कविता वज़ीर खानम और शम्सुद्दीन अहमद खान के बीच प्रेम पत्रों के आदान-प्रदान को सुगम बनाती है।
31. An exquisitely attired Wazir Khanam pays a visit to Navab Shamsuddin Ahmad Khan's imposing and splendid residence in Daryaganj
32. वज़ीर खानम और शम्सुद्दीन अहमद इस बात पर बहस करते हैं कि उनमें से कौन दानदाता है और कौन भिखारी; छोटी बेगम नवाब के प्रस्ताव से असंतुष्ट हैं।
33. वज़ीर खानम अपनी निराशा को स्वीकारने की कोशिश करती है, जबकि नवाब उसे रात वहीं रुकने का सुझाव देता है।
34. हबीब-उन निसा, वज़ीर खानम को रात की तैयारी में मदद करता है, और नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान उसके शरीर और आत्मा को अभिमान और संयम के सभी संभव पाठ पढ़ाता है।
35. वज़ीर खानम को एक प्रेमपूर्ण संदेश और एक राजकुमारी के योग्य उपहार प्राप्त होता है।
36. हकीम अहसानुल्लाह खान अनिच्छा से विलियम फ्रेजर से मिलते हैं और बाद में नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान को फ्रेजर के नापाक इरादों के बारे में चेतावनी देते हैं।
37. विलियम फ्रेजर ने सिरकी वालन स्थित वज़ीर खानम का दौरा किया, जिससे चिंता और भय का माहौल पैदा हो गया।
38. वज़ीर खानम चांदनी चौक के रंगीन और रमणीय इलाके में एक घर में रहने लगती हैं; उनके और नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान के यहाँ एक सांवला, सुंदर लड़का पैदा होता है।
39. कुछ सुखद वर्ष बीत जाते हैं, नवाब शम्सुद्दीन अहमद के परिवार में शादी का जश्न मनाया जाता है, लेकिन क्षितिज पर संकट के बादल मंडरा रहे हैं।
40. Resident Sahib William Fraser visits humiliation upon Navab Shamsuddin Ahmad Khan in public
41. विलियम फ्रेजर के महल में एक दुर्भाग्यपूर्ण घटना: शम्सुद्दीन खान को एक और अपमान का सामना करना पड़ा।
42. वे सुख की कामना करते हैं, परन्तु दुःख उनका इंतजार कर रहा है: वज़ीर खानम भय की भयानक गिरफ्त में आ गया है और नवाब प्रतिज्ञा करता है

पुस्तक 5

43. फ़िरोज़पुर झिरका में नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान अकबरबाद से अपनी बहन जहांगीर बेगम का विवाह प्रस्ताव स्वीकार कर लेते हैं; लेकिन उन्हें एक अन्य मोर्चे पर चौंकाने वाली खबर मिलती है।
44. शिकार के प्रमुख करीम खान अपने संरक्षक नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान से मिलते हैं।
45. दिल्ली में अफवाहों का बाजार गर्म हो जाता है और नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान संदेह के

घेरे में आ जाते हैं।
46. विलियम फ्रेजर की हत्या की खबर नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान तक पहुँचती है।
47. फिरोजपुर झिरका पर रात छा जाती है, नवाब हरम सरा की महिलाओं से मिलता है और उन्हें विदाई देता है।
48. गिरफ्तारी और मुकदमा: नवाब विश्वासघात और साजिश के जाल में फंस गया।
पुस्तक 6
49. चिंताजनक अफवाहों से वज़ीर खानम नवाब मिर्ज़ा के जीवन को लेकर भयभीत हो जाते हैं; हर ओर से, भाग्य के संदेश बाढ़ की तरह उमड़ पड़ते हैं।
50. ख्वाजा मीर दर्द साहब के दीवान से उभरते कवि नवाब मिर्ज़ा के लिए एक उपनाम मिला।
51. नवाब मिर्ज़ा से परामर्श लिया गया; एक प्रस्ताव रखा गया: वज़ीर खानम के प्रांगण में एक बार फिर वसंत ऋतु का आगमन हुआ।
52. आगा तुराब अली गंडक नदी के किनारे स्थित सोनपुर में लगने वाले वार्षिक पशु मेले के लिए रवाना हुए।
53. आगा तुराब अली की घर वापसी की यात्रा भयावह खतरों और शैतानी विश्वासघातों से भरी हुई है।
54. आगा तुराब अली के दल को यात्रियों के एक समूह की मदद करने के लिए रुकने के लिए राजी किया जाता है।
अन्तराल
55. विशेषज्ञ खोजकर्ताओं ने आगा तुराब अली के दल के पदचिह्नों का पता लगाया; शोकयात्रा का काफिला अंततः रामपुर पहुंचा।
56. वज़ीर खानम और नवाब मिर्ज़ा पुरुषों की मान्यताओं पर बहस करते हैं; नवाब मिर्ज़ा के ससुराल वालों की नीचतापूर्ण दुर्भावना वज़ीर को एक निर्णय लेने के लिए विवश करती है।
पुस्तक 7
57. दिल्ली के दिव्य नगर में कवियों और काव्य के आकाश में एक नया चमकीला तारा उदय होता है: दाग अपनी छाप छोड़ता है।
58. नवाब मिर्ज़ा की मुलाकात संयोगवश उस समय के महानतम कवि मिर्ज़ा ग़ालिब से होती है और उनकी मुलाकात अपने पिता के सौतेले भाई से अप्रत्याशित रूप से हो जाती है।
59. ज़ियाउद्दीन अहमद खान खानम का बाज़ार स्थित घर में आते हैं; दाग प्रेम की उथल-पुथल का अनुभव करते हैं।
60. विद्वान और पहेलियों के रचयिता मौलवी इमाम बख्श सहबाई राजकुमार की दुविधा को सुलझाने का प्रयास करते हैं।
61. सम्राट राजा ने मिर्ज़ा फ़खरू को शाही हमाम में बुलाया।
62. Anwari Khanam and Maulavi Muhammad Nazir receive a marriage proposal for Chhoti Begam
63. Chhoti Begam hears from Anwari Khanam, and consults Bai Ji

sahib for a solution to her dilemma
64. Wazir Khanam becomes Shaukat Mahal
65. उस चांदी जैसे शरीर के चारों ओर वासना बाघ की तरह मंडरा रही है।
66. शुभ किले में गुरु और मार्गदर्शक, अबू जफर बहादुर शाह द्वितीय के साये में जीवन और समय।
67. दिल्ली में मृत्यु: समय के मुँह में सड़े हुए दाँत की तरह, जिसे ज़रा से बहाने पर निकाल लिया जाता है।
68. युग की रानी ने वज़ीर खानम को अपने दरबार में बुलाया।
फुटनोट
14
63
64
स्वीकृतियाँ
प्रकार पर एक टिप्पणी
पेंगुइन का अनुसरण करें
कॉपीराइट पृष्ठ

शम्सुर रहमान फारूकी

सौंदर्य का दर्पण

यह कहानी उन्नीसवीं सदी के भारत की एक असाधारण महिला की है, जिसने तमाम मुश्किलों के बावजूद अपने लिए सही राह चुनने के लिए जीवन भर संघर्ष किया; इसे एक राजनीतिक-ऐतिहासिक प्रेम कहानी के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

अंतर्वस्तु

लेखक के बारे में
समर्पण
द मिरर ऑफ ब्यूटी की प्रशंसा
पारिवारिक वृक्ष
पात्रों की सूची
प्रस्तावना
कंपनी साहब कैप्टन एडवर्ड मार्स्टन ब्लेक ने महरौली के शुभ गांव में आयोजित मेले से लौटते समय दिल्ली जाने वाली सड़क पर कुछ यात्रियों को बचाया।
पुस्तक 1
1. सोफिया के वंशजों, सलीम जाफर और शमीम जाफर का जीवन और नियति
2. सेवानिवृत्त नेत्र रोग विशेषज्ञ और शौकिया वंशावली विशेषज्ञ डॉ. फारूकी लंदन में वसीम जाफर से मिलते हैं और उनकी असाधारण खोज के बारे में जानते हैं।
3. एक रहस्यमयी किताब प्रकट होती है, और साथ ही एक अज्ञात आत्मा भी, जो वसीम जाफर को मोहित कर लेती है।
पुस्तक 2
4. मियां मखसुल्लाह के चित्र ने हंगामा मचा दिया
5. हिंदल पुरवाह का स्वामी अपने मान-सम्मान पर लगे खतरे से क्रोधित है।
6. मियां मखसुल्लाह हिंदुस्तान के ठंडे उत्तरी भाग की ओर भाग जाता है।
7. चित्रकार मियां मखसुल्लाह तालीम की रहस्यमय कला सीखते हैं।
8. एक बहुप्रतीक्षित जन्म के बाद एक अप्रत्याशित और अस्पष्ट मृत्यु हो जाती है।
9. मियां मखसुल्लाह के पुत्र और पोते समृद्ध और खुशहाल हों।
अन्तराल
सिंधिया ने असंभव को संभव कर दिखाने वाला उच्च पद प्राप्त किया और पूरे राज्य में उत्सव मेले आयोजित करने के आदेश जारी किए।

10. याह्या एक असाधारण शक्ति और सुंदरता से भरपूर विलाप को देखता है और राजपूताना के चित्रकारों और गायकों से मिलता है।
11. याह्या एक सुंदर महिला के चित्र से मोहित हो जाता है।
12. याह्या कश्मीर के बाग के प्रति अपने प्रेम की पुष्टि करते हैं। वे पहली बार अपने बेटों को प्रदर्शन करते हुए भी देखते हैं।
13. दाऊद और याकूब अपनी विरासत का जायजा लेते हैं और एक ऐसा निर्णय लेते हैं जो उनके जीवन को बदल देगा।
14. याकूब और दाऊद किशनगढ़ जाते समय राजपूताना के कठोर रेगिस्तान से होकर गुजरते हैं।
15. याकूब और दाऊद रेगिस्तान की दो हूरों पर मोहित हो जाते हैं।
16. याकूब और दाऊद नए व्यापार सीखते हैं, और याकूब को एक पुत्र होता है।
17. फिरंगी और मराठों के बीच एक भयंकर युद्ध हुआ जिसमें मुहम्मद यूसुफ अनाथ हो गए।
18. मुहम्मद यूसुफ और असगरी की तीन सुंदर बेटियाँ हैं जिनका स्वभाव भिन्न-भिन्न है।
पुस्तक 3
19. छोटी बेगम प्रेम के प्रश्नों को एक तरफ रखकर साहब के घर में बीबी बनना सीखती है।
20. मार्स्टन ब्लेक, वज़ीर खानम से एक अप्रत्याशित प्रश्न पूछता है, जो अब उसके दो बच्चों की माँ है।
21. जयपुर पैलेस में पनप रही साजिशों के बीच मार्स्टन ब्लेक खतरे में हैं।
22. वज़ीर खानम ने टिंडल परिवार के साथ एक समझौते पर बातचीत की।
पुस्तक 4
23. वज़ीर खानम दिल्ली के शानदार शहर में सहजता से बस जाती हैं।
24. वज़ीर खानम को पहाड़ी पर स्थित फ्रेज़र साहब के भव्य और आलीशान महल में आमंत्रित किया गया।
25. फैनी पार्क्स इलाहाबाद में जीवन का एक जीवंत वर्णन प्रस्तुत करती हैं।
26. युग के महानतम कवि, मिर्ज़ा असदुल्ला खान ग़ालिब, इस भव्य सभा में एक कविता का पाठ करते हैं।

27. Navab Shamsuddin Ahmad Khan pays a visit to Wazir Khanam

28. Wazir Khanam has a consultation with Navab Yusuf Ali Khan
29. वज़ीर खानम पंडित नंद किशोर से परामर्श करते हैं, और एक विकट दुविधा को हल करने के लिए ख्वाजा हाफ़िज़ का दीवान पढ़ा जाता है।
30. कविता वज़ीर खानम और शम्सुद्दीन अहमद खान के बीच प्रेम पत्रों के आदान-प्रदान को सुगम बनाती है।
31. An exquisitely attired Wazir Khanam pays a visit to Navab Shamsuddin Ahmad Khan's imposing and splendid residence in Daryaganj
32. वज़ीर खानम और शम्सुद्दीन अहमद इस बात पर बहस करते हैं कि उनमें से कौन दानदाता है और कौन भिखारी; छोटी बेगम नवाब के प्रस्ताव से असंतुष्ट हैं।
33. वज़ीर खानम अपनी निराशा को स्वीकारने की कोशिश करती है, जबकि नवाब उसे रात वहीं रुकने का सुझाव देता है।
34. हबीब-उन निसा, वज़ीर खानम को रात की तैयारी में मदद करता है, और नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान उसके शरीर और आत्मा को अभिमान और संयम के सभी संभव पाठ पढ़ाता है।
35. वज़ीर खानम को एक प्रेमपूर्ण संदेश और एक राजकुमारी के योग्य उपहार प्राप्त होता है।
36. हकीम अहसानुल्लाह खान अनिच्छा से विलियम फ्रेजर से मिलते हैं और बाद में नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान को फ्रेजर के नापाक इरादों के बारे में चेतावनी देते हैं।
37. विलियम फ्रेजर ने सिरकी वालन स्थित वज़ीर खानम का दौरा किया, जिससे चिंता और भय का माहौल पैदा हो गया।
38. वज़ीर खानम चांदनी चौक के रंगीन और रमणीय इलाके में एक घर में रहने लगती हैं; उनके और नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान के यहाँ एक सांवला, सुंदर लड़का पैदा होता है।
39. कुछ सुखद वर्ष बीत जाते हैं, नवाब शम्सुद्दीन अहमद के परिवार में शादी का जश्न मनाया जाता है, लेकिन क्षितिज पर संकट के बादल मंडरा रहे हैं।
40. Resident Sahib William Fraser visits humiliation upon Navab Shamsuddin Ahmad Khan in public
41. विलियम फ्रेजर के महल में एक दुर्भाग्यपूर्ण घटना: शम्सुद्दीन खान को एक और अपमान का सामना करना पड़ा।
42. वे सुख की कामना करते हैं, परन्तु दुःख उनका इंतजार कर रहा है: वज़ीर खानम भय की भयानक गिरफ्त में आ गया है और नवाब प्रतिज्ञा करता है

पुस्तक 5
43. फ़िरोज़पुर झिरका में नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान अकबरबाद से अपनी बहन जहांगीर बेगम का विवाह प्रस्ताव स्वीकार कर लेते हैं; लेकिन उन्हें एक अन्य मोर्चे पर चौंकाने वाली खबर मिलती है।
44. शिकार के प्रमुख करीम खान अपने संरक्षक नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान से मिलते हैं।
45. दिल्ली में अफवाहों का बाजार गर्म हो जाता है और नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान संदेह के घेरे में आ जाते हैं।
46. विलियम फ्रेजर की हत्या की खबर नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान तक पहुँचती है।
47. फिरोजपुर झिरका पर रात छा जाती है, नवाब हरम सरा की महिलाओं से मिलता है और उन्हें विदाई देता है।
48. गिरफ्तारी और मुकदमा: नवाब विश्वासघात और साजिश के जाल में फंस गया।
पुस्तक 6
49. चिंताजनक अफवाहों से वज़ीर खानम नवाब मिर्ज़ा के जीवन को लेकर भयभीत हो जाते हैं; हर ओर से, भाग्य के संदेश बाढ़ की तरह उमड़ पड़ते हैं।
50. ख्वाजा मीर दर्द साहब के दीवान से उभरते कवि नवाब मिर्ज़ा के लिए एक उपनाम मिला।
51. नवाब मिर्ज़ा से परामर्श लिया गया; एक प्रस्ताव रखा गया: वज़ीर खानम के प्रांगण में एक बार फिर वसंत ऋतु का आगमन हुआ।
52. आगा तुराब अली गंडक नदी के किनारे स्थित सोनपुर में लगने वाले वार्षिक पशु मेले के लिए रवाना हुए।
53. आगा तुराब अली की घर वापसी की यात्रा भयावह खतरों और शैतानी विश्वासघातों से भरी हुई है।
54. आगा तुराब अली के दल को यात्रियों के एक समूह की मदद करने के लिए रुकने के लिए राजी किया जाता है।
अन्तराल
महाकाली के भक्त और उन्हें खत्म करने में जॉन कंपनी की भूमिका और उद्देश्य

55. विशेषज्ञ खोजकर्ताओं ने आगा तुराब अली के दल के पदचिह्नों का पता लगाया; शोकयात्रा का काफिला अंततः रामपुर पहुंचा।
56. वज़ीर खानम और नवाब मिर्ज़ा पुरुषों की मान्यताओं पर बहस करते हैं; नवाब मिर्ज़ा के ससुराल वालों की नीचतापूर्ण दुर्भावना वज़ीर को एक निर्णय लेने के लिए विवश करती है।
पुस्तक 7
57. दिल्ली के दिव्य नगर में कवियों और काव्य के आकाश में एक नया चमकीला तारा उदय होता है: दाग अपनी छाप छोड़ता है।
58. नवाब मिर्ज़ा की मुलाकात संयोगवश उस समय के महानतम कवि मिर्ज़ा ग़ालिब से होती है और उनकी मुलाकात अपने पिता के सौतेले भाई से अप्रत्याशित रूप से हो जाती है।
59. ज़ियाउद्दीन अहमद खान खानम का बाज़ार स्थित घर में आते हैं; दाग प्रेम की उथल-पुथल का अनुभव करते हैं।
60. विद्वान और पहेलियों के रचयिता मौलवी इमाम बख्श सहबाई राजकुमार की दुविधा को सुलझाने का प्रयास करते हैं।
61. सम्राट राजा ने मिर्ज़ा फ़खरू को शाही हमाम में बुलाया।
62. Anwari Khanam and Maulavi Muhammad Nazir receive a marriage proposal for Chhoti Begam
63. Chhoti Begam hears from Anwari Khanam, and consults Bai Ji sahib for a solution to her dilemma
64. Wazir Khanam becomes Shaukat Mahal
65. उस चांदी जैसे शरीर के चारों ओर वासना बाघ की तरह मंडरा रही है।
66. शुभ किले में गुरु और मार्गदर्शक, अबू जफर बहादुर शाह द्वितीय के साये में जीवन और समय।
67. दिल्ली में मृत्यु: समय के मुँह में सड़े हुए दाँत की तरह, जिसे ज़रा से बहाने पर निकाल लिया जाता है।
68. युग की रानी ने वज़ीर खानम को अपने दरबार में बुलाया।
फुटनोट
14. याकूब और दाऊद किशनगढ़ जाते समय राजपूताना के कठोर रेगिस्तान से होकर गुजरते हैं।
63. Chhoti Begam hears from Anwari Khanam, and consults Bai Ji sahib for a solution to her dilemma
64. Wazir Khanam becomes Shaukat Mahal
प्रकार पर एक टिप्पणी
स्वीकृतियाँ
पेंगुइन का अनुसरण करें
कॉपीराइट पृष्ठ

सौंदर्य का दर्पण

प्रख्यात लेखक शम्सुर रहमान फारूकी आधुनिक उर्दू साहित्य के सबसे प्रतिष्ठित आलोचक भी हैं। वे प्रतिष्ठित साहित्यिक पत्रिका 'शबखून' के संपादक और प्रकाशक रहे हैं। उन्होंने कवि मीर तकी मीर पर चार खंडों में एक महत्वपूर्ण अध्ययन और उर्दू के विशाल मौखिक प्रेम साहित्य 'दास्तान-ए अमीर हमजा' पर चार खंडों में एक और कृति लिखी है। उर्दू साहित्य में उनके योगदान के लिए उन्हें 1996 में प्रतिष्ठित सरस्वती सम्मान से सम्मानित किया गया था। 'द मिरर ऑफ ब्यूटी' उनका पहला उपन्यास है, जो मूल रूप से उर्दू में प्रकाशित हुआ और जिसे अपार प्रशंसा मिली।

समर्पित

29 सी, हेस्टिंग्स रोड, इलाहाबाद, इसकी मालकिन, और वे दो लड़कियां जो इस बगीचे के चमकीले गुलाब हैं और जो शायद भविष्य में इसकी रखवाली और बागवान बनेंगी।

दिसंबर *2005* में इलाहाबाद में रिकॉर्ड किया गया।

दो साल बाद

वह, जिसने लंबे समय तक—वास्तव में आधी सदी से भी अधिक समय तक—मुझे अपने पूरे दिल और शरीर से खुश रखा—मैंने अवश्य ही कुछ गलत किया होगा, क्योंकि अचानक, वह हमारा घर छोड़कर ऐसी जगह रहने चली गई जहाँ कुछ भी नहीं रहता।

तुम मेरी दोस्त थी, मेरी प्रेमिका थी, मेरे दिल के लिए एक सुरक्षित घर थी, तुम्हारी खुशबू जानी-पहचानी, दोस्ताना और स्वागत करने वाली थी; दिन में कभी-कभी मेरे चेहरे पर मुस्कान आ जाती थी, बिना रोए सो जाना, ऐसी रातें अब दुर्लभ हैं।

19 अक्टूबर *2007*

द मिरर ऑफ ब्यूटी की प्रशंसा

'द मिरर ऑफ ब्यूटी' एक सच्ची महाकाव्य रचना है, जो भारतीय उपन्यासों की कोह-ए-नूर है: भव्य, चमकदार और रहस्यमय। यह आपको वह आनंद प्रदान करेगी जो किसी अन्य पुस्तक ने कभी नहीं दिया।'

—मोहम्मद हनीफ

प्रत्येक भाषा में एक ऐसी विशिष्ट साहित्यिक कृति होती है जो उस भाषा की सारी सुंदरता, भव्यता और कहानी कहने की शक्ति को समाहित कर लेती है, और एक ऐसी रचना का निर्माण करती है जिसके आधार पर भविष्य की रचनाओं का मूल्यांकन किया जाता है। फारूकी ने 'द मिरर ऑफ ब्यूटी' में ऐसी ही एक रचना की है। उनका त्रुटिहीन अंग्रेजी अनुवाद उस कृति को और आगे ले जाता है, और उर्दू भाषा तथा विश्व साहित्य को उनका ऋणी बनाता है।

—मुशर्रफ अली फारूकी

'एक मनमोहक और जादुई किताब। शम्सुर रहमान फारूकी इतिहास और भ्रम को एक खूबसूरत ताने-बाने में पिरोते हैं। वे हमें हमारे अतीत से समृद्ध रूप से सजाते हैं।'

—नदीम असलम

'एक विद्वतापूर्ण, अद्भुत ऐतिहासिक उपन्यास, शोकपूर्ण लहजे में लिखा गया और एक लुप्त संस्कृति के विवरणों और रीति-रिवाजों पर हार्दिक ध्यान देते हुए प्रस्तुत किया गया।'

—ओरहान पामुक

‘धीमी गति में कविता।’

—फाइनेंशियल एक्सप्रेस

‘…एक लुप्त हो चुके युग का अनमोल चित्र…’

—कारवां

‘एक खूबसूरत चीज।’

—द हिंदू

‘फारूकी ने 1857 से पहले के भारत-इस्लामी जगत को इतने सूक्ष्म और सावधानीपूर्वक विवरण के साथ प्रस्तुत किया है कि आप वास्तव में इसे अपनी कल्पना में साकार होते हुए देख सकते हैं: सड़क के किनारे घास का सबसे छोटा तिनका भी सजीव और जीवंत प्रतीत होता है।’

—डीएनए

इस उपन्यास के पन्नों में, एक पूरी संस्कृति इतिहास के घावों से उबरकर फिर से पूर्ण हो उठती है।

—इंडियन एक्सप्रेस

‘द मिरर ऑफ ब्यूटी’ भारत-इस्लामी संस्कृति की प्रशंसा में लिखी गई एक रचना है।’

—आउटलुक

'यह एक ऐसी किताब है जिसका आनंद लेना चाहिए... इसे जल्दी-जल्दी नहीं पढ़ना चाहिए।'

—ट्रिब्यून, नई दिल्ली

‘[फारूकी] हमारे अतीत को उसकी पूरी भव्यता के साथ जीवंत कर देते हैं और यह एक शानदार

उपलब्धि है।’

—संडे गार्जियन

‘द मिरर ऑफ ब्यूटी में, शम्सुर रहमान फारूकी ने एक लुप्त होते युग के संपूर्ण इतिहास को समेट लिया है... यह सब मिलकर एक समृद्ध रचना बन जाती है: उपन्यास में परतों पर परतें सजी हुई हैं...’

—टेलीग्राफ

उर्दू और हिंदी संस्करणों की प्रशंसा

‘यह उपन्यास हमारे भीतर सांस्कृतिक संघर्षों और बेचैनियों से ऊपर उठने की क्षमता पैदा करता है।’

—Kedar Nath Singh in Sakhi

'पुराने जमाने की कहानियों की तरह, जो आपकी नींद उड़ा देती थीं और अंतहीन लगती थीं, इस उपन्यास के समाप्त होने पर मुझे लगा कि अब दुनिया में मेरे पास करने के लिए कुछ और नहीं बचा है।'

-उर्दू अदब में सादिकुर रहमान किदवई

'18वीं और 19वीं शताब्दियों के हमारे इतिहास के बारे में सभी सूक्ष्म सच्चाइयों का भंडार होने के नाते, यह उपन्यास उन सभी के लिए अवश्य पढ़ा जाना चाहिए जो हमारे सांस्कृतिक अतीत के गौरव के इतिहास को जानना चाहते हैं।'

—वंदना राग, वसुधा में

‘आप एक महान काव्यात्मक गरिमा की उपस्थिति में हैं... घटनाएँ और पात्र पाठक के हृदय और मन में निवास करने लगते हैं और पाठक के अपने अनुभव की भूमि के नागरिक बन जाते हैं।’

—Vishwanath Tripathi in Katha Des

पारिवारिक वृक्ष

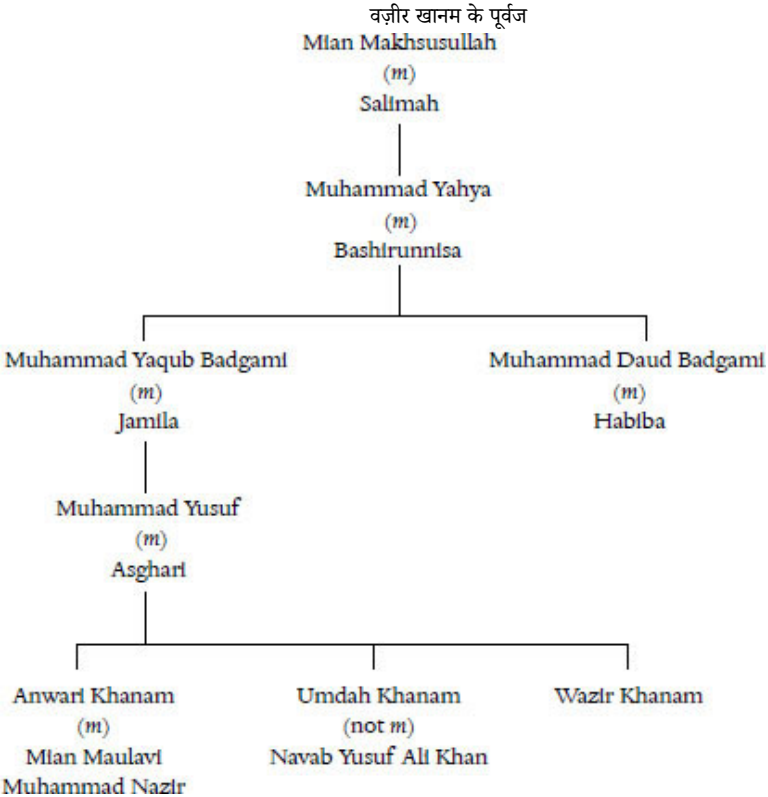

Marston Blake and Wazir Khanam

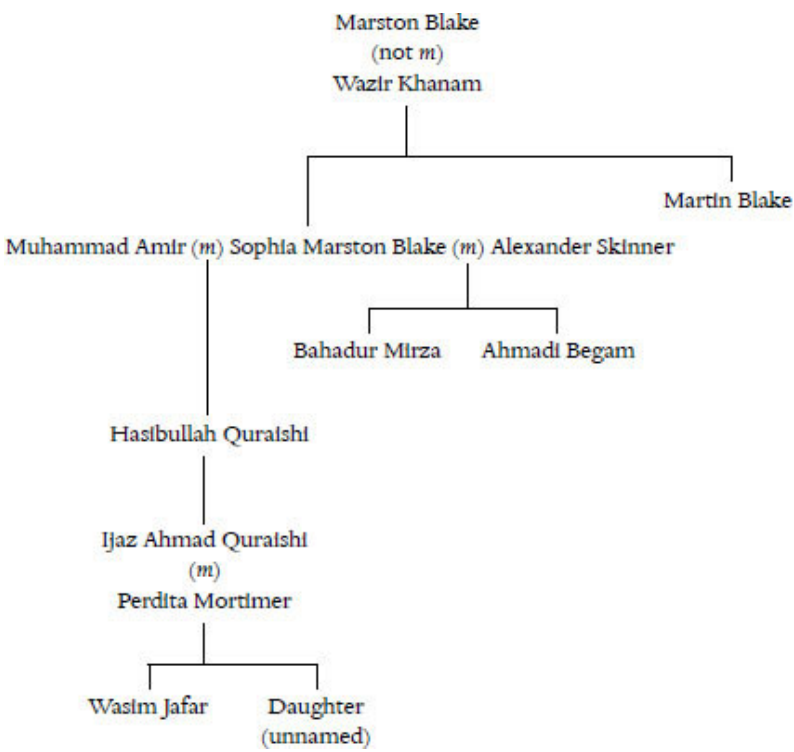

Navab Shamsuddin Ahmad Khan and Wazir Khanam

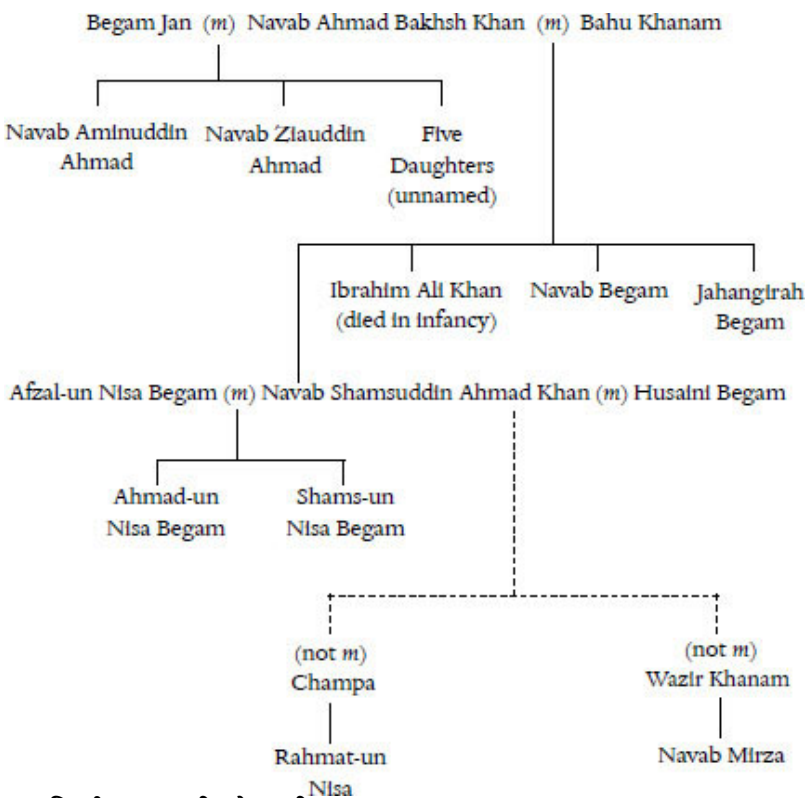

आग़ा मिर्ज़ा तुराब अली और वज़ीर ख़ानम

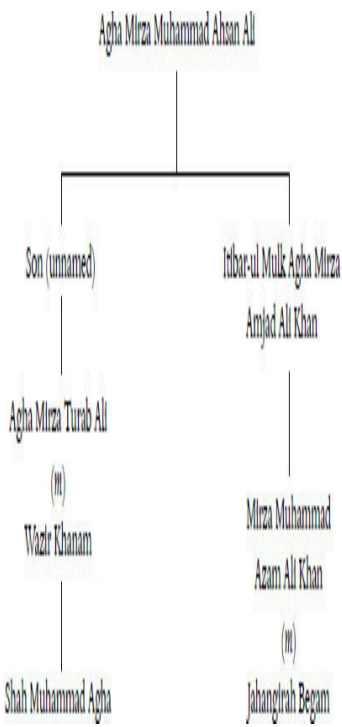

मिर्ज़ा फ़त्हुल मुल्क बहादुर और वज़ीर खानम की बेटी

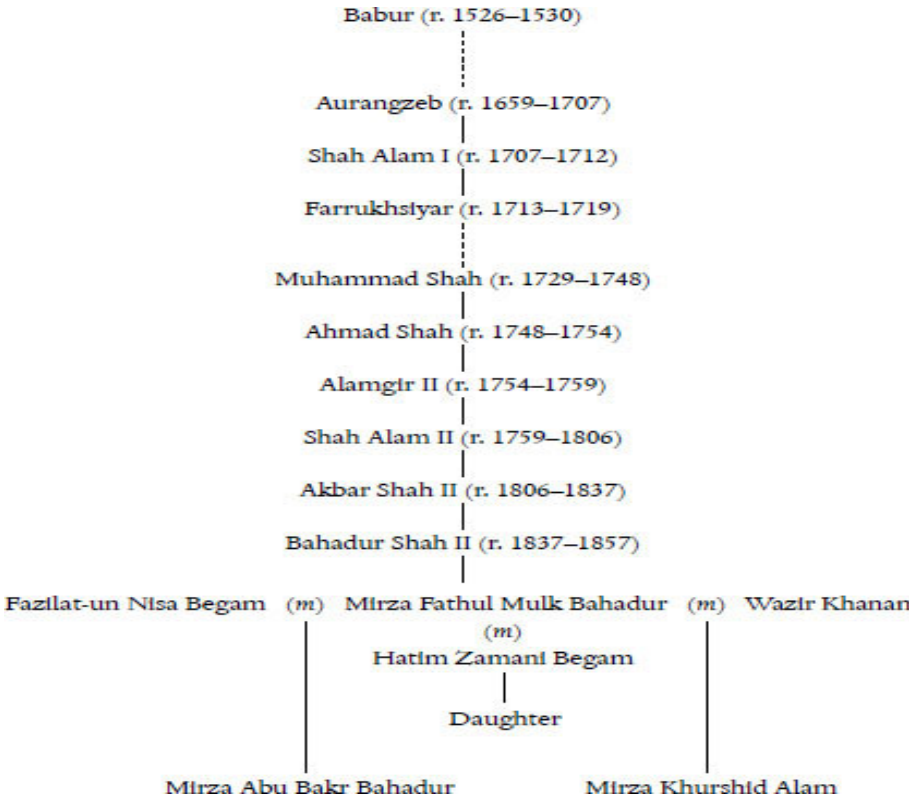

पात्रों की सूची

WAZIR KHANAM, also known as Chhoti Begam, daughter of Muhammad Yusuf Sadahkar and Asghari Begam

उसके पूर्वज

मियां मख़सूसुल्लाह, राजपूताना के हिंडाल पुरवा के एक चित्रकार

सलीमा, उनकी पत्नी

मुहम्मद याहया, मियां मखसूसुल्लाह और सलीमा के बेटे, बडगाम, कश्मीर के एक कालीन डिजाइनर

बशीरुन्निसा, उनकी पत्नी

कश्मीर के बदगाम के संगीतकार मुहम्मद याह्या और बशीरुन्निसा के जुड़वां बेटे याकूब बदगामी और दाऊद बदगामी।

जमीला और हबीबा, बहनें, क्रमशः याकूब और दाऊद से विवाहित हैं।

मुहम्मद यूसुफ सदाकर, याकूब और जमीला के पुत्र, दिल्ली शहर में सादे लेकिन नाजुक सोने और चांदी के आभूषणों के निर्माता थे।

उनकी पत्नी असगरी बेगम, अकबरी बाई की बेटी थीं।

उसकी बहनों

अनवरी खानम, जिन्हें बारी बेगम के नाम से भी जाना जाता है, वज़ीर खानम की सबसे बड़ी बहन थीं

मियान मौलवी मुहम्मद नाज़िर रिफाई, उनके पति अमात-उल फातिमा, जिन्हें फातिमा और परी बानो के नाम से भी जाना जाता है, उनकी बेटी

UMDAH KHANAM, also known as Manjhli Begam, elder sister of Wazir Khanam

NAVAB YUSUF ALI KHAN BAHADUR, an aristocrat in a permanent relationship with Umdah Khanam, later the Navab of Rampur

उसके जीवन के पुरुष

कैप्टन एडवर्ड मार्स्टन ब्लेक, ईस्ट इंडिया कंपनी के लिए जयपुर में सहायक अंग्रेज़ राजनीतिक एजेंट थे।

सोफिया ब्लेक, जिन्हें मसीह जान और बादशाह बेगम के नाम से भी जाना जाता था, वज़ीर खानम से उनकी बेटी थीं। मार्टिन ब्लेक, जिन्हें अमीर मिर्ज़ा के नाम से भी जाना जाता था, वज़ीर खानम से उनके बेटे थे।

DILAWAR-UL MULK NAVAB SHAMSUDDIN AHMAD KHAN BAHADUR, also known as Shamsuddin Ahmad Khan, ruler of Loharu and Firozepur Jhirka

NAVAB MIRZA, also known as Bacche Mian and as Navab Mirza Khan Dagh, his son with Wazir Khanam, a poet

आगा मिर्ज़ा मौलवी तुराब अली, जिन्हें आगा तुराब अली के नाम से भी जाना जाता है, रामपुर के नवाब के घोड़े और हाथी अस्तबल और तम्बू उपकरण के प्रबंधक थे। शाह मुहम्मद आगा मिर्ज़ा, जिन्हें शाह मुहम्मद आगा के नाम से भी जाना जाता है, वज़ीर खानम के पुत्र थे।

मिर्जा मुहम्मद सुल्तान गुलाम फखरुद्दीन फतहुल मुल्क शाह बहादुर, जिन्हें मिर्जा फतहुल मुल्क बहादुर, साहिब-ए आलम वा आलमियान, मिर्जा फखरू और रमज़, हिंदुस्तान के सिंहासन के तीसरे उत्तराधिकारी के नाम से भी जाना जाता है। मिर्ज़ा खुर्शीद आलम, जिन्हें खुर्शीद मिर्ज़ा के नाम से भी जाना जाता है, वज़ीर खानम के बेटे हैं।

उसके प्रतिष्ठान में

हबीब-उन निसा, जिन्हें हबीबा के नाम से भी जाना जाता है, वज़ीर खानम की प्रमुख साथी राहत अफ़ज़ा, उनकी बेटी

अन्य

डॉ. खलील असगर फारूकी, एक सेवानिवृत्त नेत्र रोग विशेषज्ञ और शौकिया वंशावली विशेषज्ञ।
वसीम जाफर, सोफिया ब्लेक के वंशज हैं, जो लंदन के विक्टोरिया एंड अल्बर्ट संग्रहालय में उन्नीसवीं सदी के मुगल चित्रों की सहायक संरक्षक थीं।
विलियम फ्रेजर, जिन्हें नवाब रेजिडेंट बहादुर और नवाब सीनियर साहिब बहादुर के नाम से भी जाना जाता था, ईस्ट इंडिया कंपनी के लिए दिल्ली के मुख्य रेजिडेंट थे।
नवाब मिर्ज़ा असदुल्ला खान बहादुर ग़ालिब, जिन्हें मिर्ज़ा नौशा और मिर्ज़ा ग़ालिब के नाम से भी जाना जाता है, एक कवि हैं।
KARIM KHAN, Chief of the Hunt for Navab Shamsuddin Ahmad Khan
जेम्स स्किनर, जिन्हें सिकंदर साहब के नाम से भी जाना जाता था, स्किनर हॉर्स रेजिमेंट के कप्तान थे।
अबू ज़फर मुहम्मद सिराजुद्दीन बहादुर शाह द्वितीय, हिंदुस्तान के राजा सम्राट और मिर्जा फखरू के पिता
NAVAB ZINAT MAHAL, his favourite wife
NAVAB ZIAUDDIN AHMAD KHAN BAHADUR, younger half-brother of Navab Shamsuddin Ahmad Khan

प्रस्तावना

कंपनी साहब कैप्टन एडवर्ड मार्स्टन ब्लेक ने महरौली के शुभ गांव में आयोजित मेले से लौटते समय दिल्ली जाने वाली सड़क पर कुछ यात्रियों को बचाया।

(नेत्र रोग विशेषज्ञ डॉ. खलील असगर फारूकी की टिप्पणियों और डायरियों से)

वज़ीर खानम, जिन्हें छोटी बेगम के नाम से भी जाना जाता था, का जन्म लगभग 1811 के आसपास हुआ था। वे सादे सोने के आभूषण बनाने वाले मुहम्मद यूसुफ की तीसरी और सबसे छोटी बेटी थीं। उनका जन्म दिल्ली में हुआ था, लेकिन मुहम्मद यूसुफ दिल्ली के मूल निवासी नहीं थे। उनके पूर्वज कश्मीर से थे। ये लोग कैसे और कब दिल्ली पहुँचे और दिल्ली में उनके साथ क्या हुआ, यह एक बहुत लंबी कहानी है। इसके विवरण कभी स्पष्ट नहीं हुए और अब, समय बीतने और कुछ सुविधाओं के कारण, शायद पूरी तरह से भुला दिए गए हैं। जो कुछ भी ज्ञात हो सका है, उसका वर्णन यहाँ किया गया है, लेकिन यह आवश्यक नहीं है कि यह सब ऐतिहासिक रूप से सटीक या सत्य हो।

सन् 1245-1246 हिजरी (जो कि सन् 1829-1830 ईस्वी के बराबर है) में वज़ीर खानम का फिरोज़पुर झिरका और लोहारू के शासक नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान से एक समझौता हुआ था। लेकिन इससे पहले, उनका एडवर्ड मार्स्टन ब्लेक से भी इसी तरह का संबंध था। उस दौरान, वे मार्स्टन ब्लेक के दो बच्चों की माता बनीं: एक लड़का जिसका नाम मार्टिन ब्लेक था, जिसे अमीर मिर्ज़ा के नाम से भी जाना जाता था, और एक लड़की जिसका नाम सोफिया था, जिसे मसीह जान और बादशाह बेगम के नाम से भी जाना जाता था।

इस बात की प्रबल संभावना है कि मार्स्टन ब्लेक वज़ीर के जीवन का पहला पुरुष था और उनकी पहली मुलाकात दिल्ली में हुई थी। उनकी मुलाकात के बारे में कोई पुख्ता या पुख्ता सबूत उपलब्ध नहीं है। एक मुस्लिम लड़की जो बंद दरवाजों और घूंघट में एकांत जीवन जी रही थी, और जो न तो नाचने वाली थी और न ही वेश्या: वह एक अंग्रेज के लिए कैसे सुलभ हुई और उसके द्वारा अपनाई गई? इस घटनाक्रम से संबंधित कोई लिखित विवरण या प्रत्यक्षदर्शी बयान नहीं मिलता है। परिवार में बहुत पहले मौजूद वृत्तांत के कुछ अंशों से जो कुछ भी जानकारी प्राप्त हुई है, वह इस प्रकार है।

समझदार और ज्ञानी बुजुर्ग महिलाएं बताती हैं कि एक बार, महरौली के पवित्र गांव में, ख्वाजा कुतुब साहब के दरगाह के पास लगे शुभ मेले के दिनों में, वज़ीर खानम और उनके पिता मेले से दिल्ली लौट रहे थे। शाम हो चुकी थी। सड़क पर सभी लोग घर पहुंचने की जल्दी में थे। क्योंकि उन दिनों हौज़-ए-शम्सी के खंडहरों को कुछ पंडारी कबायलियों ने गुप्त रूप से अपना ठिकाना बना लिया था। वे मौके का फायदा उठाकर रात के समय उस सड़क पर यात्रियों को लूटते थे। इसलिए हर कोई हौज़-ए-शम्सी और हौज़-ए-खास के आसपास के इलाके से जल्दी निकलने की पूरी कोशिश कर रहा था। वज़ीर और उनके पिता जिस हल्के दो बैलगाड़ी में यात्रा कर रहे थे, उसका एक धुरा पहले से ही घिसा हुआ था और यात्रा के दौरान और भी खराब हो गया था।

आशंका थी कि अगर गाड़ी को तेज चलाया गया तो धुरा टूट सकता है। बैलगाड़ी धीमी गति से चल रही थी और सड़क पर मौजूद बाकी सभी वाहनों से आगे निकल चुकी थी: बैलगाड़ियाँ, पालकी, टापू। हाथी, ऊँट, बग्गी या घोड़े पर सवार लोग आसानी से बाकी सभी को पीछे छोड़ते हुए तेज़ी से नज़र और आवाज़ से ओझल हो गए थे।

यह बैसाख का मध्य था, जो दिल्ली का सबसे गर्म महीना होता है। रेवाड़ी और लोहारू से नियमित रूप से बहने वाली पश्चिमी हवा गर्म तो थी, लेकिन अपने साथ गर्मी से ज़्यादा धूल और कंकड़ लाती थी। सप्ताह में चार-पाँच बार, यह धूल भरी और कंकड़ वाली हवा, सूर्यास्त से पहले अलवर और रणथंभोर के जंगलों में बसी थोड़ी सी नमी से तृप्त होकर, रास्ते में कंटीली झाड़ियों और झाड़ियाँ से थोड़ा सा टकराते हुए, गुड़गांव की दहलीज छूते-छूते बादलों और धूल भरी आंधी का रूप ले लेती थी। हर चीज़ पर धूल की एक हल्की और सौम्य चादर बिछाकर और शहर को ठंडी हवाओं के झोंकों से भरकर, यह आंधी - दिल्ली और उसके खेतों और चरागाहों के दिलों को खुश करते हुए, और शाम के दो-ढाई पहरों तक चलने वाले खेल-कूद के बाद - मथुरा की गलियों में विलीन हो जाती थी; लेकिन इससे पहले इसने दिल्ली शहर के अमीर-गरीब, आम आदमी-कुलीन, नौजवान-बुजुर्ग सभी के दिलों और आंगनों को ठंडा कर दिया था। लेकिन धूल भरी आंधी उन लोगों के लिए जीवन की परीक्षा बन गई जो अपनी मंजिल से बहुत दूर थे, या जिनके वाहन उनका साथ छोड़ने वाले थे।

अचानक, वज़ीर खानम की बैलगाड़ी रेत और लाल कंकड़ के विस्फोट में घिर गई। भय और दर्द से बैलों की बड़ी-बड़ी आँखें बंद हो गईं। गाड़ी के तीन पर्दे फड़फड़ाते हुए उड़ गए, मानो लोमड़ी से डरे हुए तीतर घबरा गए हों। धुंधली रोशनी में, भूरे और गहरे लाल रंग के पर्दे कुछ देर हवा में लटके रहे और फिर नज़र से ओझल हो गए, मानो दूर जा गिरे हों या किसी पेड़ की डालियों में अटक गए हों। पर्दों के अचानक उड़ने, बैलों के सहम जाने और अंदर बैठे यात्रियों के हिलने-डुलने से गाड़ी का संतुलन बिगड़ गया और वह दो पहियों पर लड़खड़ा गई। हवा के अगले झोंके ने गाड़ी को ज़मीन पर ज़ोर से पटक दिया। उसी समय, उसके धुरे के टूटने की कर्कश, भयानक आवाज़ सुनाई दी। यह तुरंत स्पष्ट नहीं हो पाया कि गाड़ी में कुछ टूटा था या पास के किसी पेड़ की कोई मोटी डाल तूफ़ानी हवा के झोंके से टूटकर बिखर गई थी। लेकिन पलक झपकते ही गाड़ी और उसका एक पहिया अलग हो गया; गाड़ी बाल-बाल पलटने से बची। तभी दुर्भाग्यशाली यात्रियों को अपनी विकट स्थिति का एहसास हुआ।

वज़ीर खानम के पिता ने अपनी नियति स्वीकार कर ली थी। उन्हें पता था कि वह रात उनकी और उनकी बेटी की आखिरी रात होगी। उन्हें एक-दो अकेले भटकते हुए लोगों के मिलने की भी कोई उम्मीद नहीं थी, किसी गुजरते हुए काफिले की तो बात ही दूर थी। रात के उस समय कोई बचाव दल मौजूद नहीं था। सभी अपने-अपने सुरक्षित ठिकानों में थे। टूटी हुई गाड़ी में सवार यात्रियों को वह रात वीरान में ही गुजारनी थी, और सुबह की रोशनी देखने की उनकी उम्मीद न के बराबर थी। लड़की का अंत निश्चित रूप से नौकरानी बनने या वेश्यालय में होने वाला था, और पिता की कब्र उसी वीरान और सुनसान जगह पर ही होनी थी। गाड़ी चालक शायद बच जाए।

फिर भी जिन्हें ईश्वर बचाना चाहता है, उन्हें कोई छू नहीं सकता। दिल्ली की दिशा से सड़क पर

एक धुंधली पीली रोशनी का घेरा दिखाई दिया, मानो किसी बादल में मंद सूर्य की रोशनी छनकर आ रही हो। तभी ऊंटों के टखनों में बंधी घंटियों की मधुर झंकार सुनाई दी। फिर एक घुड़सवार दिखाई दिया, जिसके आगे और पीछे दो भालाधारी थे। धूल और हवा से बचने के लिए उनके चेहरे ढके हुए थे, लेकिन वे जानबूझकर धीरे-धीरे अपना कदम मजबूती से रख रहे थे। घोड़ा भी बहुत प्रशिक्षित था, इसलिए तेज हवा के झोंके या पेड़ों के बीच से उसकी गर्जना भी उसकी एकाग्रता को भंग नहीं कर पा रही थी। घुड़सवार के दाएं और बाएं दो पैदल सैनिक थे, एक के हाथ में मशाल थी और दूसरे के हाथ में बद्दन। मशाल एक छड़ी में लगा हुआ मध्यम आकार का प्याला होता है, जो सामान्य मशाल से थोड़ा छोटा होता है। सरसों के तेल के गाढ़े अवशेष या नेफ्था में भीगे हुए चिथड़ों जैसे ज्वलनशील पदार्थों से भरा प्याले का किनारा लौ के लिए हवा अवरोधक का काम करता था और रोशनी को बुझने से रोकता था। एक हाथ से पकड़ने वाला कांच का शेड, जो अंदर से जलाया जाता था और चारों तरफ से बंद होता था, लेकिन हवा आने-जाने के लिए उसमें जगह-जगह छोटे-छोटे छेद होते थे, उसे बडबन कहा जाता था। अंग्रेजी लालटेन, जिसे हिंदी में लालटेन कहा जाता है, आम चलन में आ रही थी, लेकिन भारतीय पैदल सैनिकों या मशालवाहकों द्वारा इसका उपयोग शायद ही कभी किया जाता था।

ऊँट सवार ने अपनी सहज बुद्धि का प्रयोग करते हुए, तेज़ी से धुंधले होते परिवेश में दूर से ही यह पहचान लिया कि उसके सामने यात्रियों का एक छोटा समूह किसी दुर्घटना के कारण फँस गया है; वे बदमाश भी हो सकते थे, लेकिन बदमाशों के धंधे का मौसम नहीं था, और न ही यह इलाका बदमाशों का क्षेत्र था। और सबसे बढ़कर, बदमाशों के गिरोह में कोई महिला नहीं हो सकती थी। ऊँट सवार और भालाधारी आगे बढ़ते रहे, लेकिन कुछ दूरी पर सवार अपने प्रकाशवाहकों के साथ रुक गया।

सवार की जाति या समुदाय अभी स्पष्ट नहीं था: वह कोई भी हो सकता था। कभी-कभार शाम को, महामहिम राजा के सेवक इन इलाकों में गश्त करते नज़र आते थे। कभी-कभी तो माननीय कंपनी के नौकर भी इन स्थानों पर घूमते-फिरते दिखाई देते थे। गाड़ी चालक ने तुरंत यह पता लगा लिया कि उसका और उसके यात्रियों का सामना डाकुओं या लुटेरों से नहीं हो रहा है, और उनसे सहायता मांगी जा सकती है।

बैलगाड़ी चालक ने कुछ हिचकिचाते हुए कदम आगे बढ़ाए। ऊंट सवार ने तुरंत अपने घोड़े को आदेश दिया कि वह चालक का रास्ता रोक दे। 'तुम कौन हो? और इस समय यहाँ क्या कर रहे हो? क्या तुम्हें पता नहीं है कि सूर्यास्त के बाद बिना किसी काफिले या सैनिकों के दल के इधर-उधर घूमना मना है?'

‘माई-बाप, हम अच्छी तरह जानते हैं। हम ख्वाजा साहब के गाँव में बख्तियार बाबा के दरबार से लौट रहे थे। अचानक तूफान आ गया। फिर हमारी धुरी टूट गई। हम यहाँ खड़े होकर अपनी जान के डर से विलाप कर रहे थे। हमारे साथ घूंघट वाली महिला यात्री भी थीं। अल्लाह ही जानता है कि अगर आप और कप्तान साहब न होते तो क्या होता…’

बस करो! तुम्हारी ये मीठी-मीठी बातें बंद करो। तुम्हारा मालिक कहाँ है? उसे कंपनी साहब के सामने पेश होना चाहिए!

‘यहाँ मौजूद रहिए, महाराज। कृपया महिलाओं को थोड़ी आड़ में रख दें ताकि वे दिखाई न दें।’ अपनी दयनीय हालत में भी, बैलगाड़ी चालक ने यह संकेत देने में कोई संकोच नहीं किया कि फिरंगी पुरुष को महिला यात्रियों से थोड़ी दूरी बनाए रखनी चाहिए।

वज़ीर खानम के पिता टूटी हुई गाड़ी से निकलकर थोड़ा आगे आए। घुड़सवार ने अपने घोड़े को दौड़ाया और पल भर में वे और यात्री आमने-सामने आ गए। इसी बीच भालाधारी ने भी लालटेन जला ली थी; हवा और तेज़ हो रही थी और लालटेन की लौ से धुआँ निकल रहा था और वह बुझ रही थी। अचानक, हवा का एक तेज़ झोंका आया और वज़ीर खानम ने अपने शरीर पर जो चादर लपेटी थी, वह उड़ गई और उनका पूरा चेहरा दिखाई दिया। डर और शर्म से भरा उनका चेहरा, उनकी बड़ी भूरी-काली आँखों के नीचे काला और तपता हुआ लग रहा था, मानो किसी हिरण का माथा तेज़ धूप से झुलसकर भूरा-काला हो गया हो। लालटेन की कांपती हुई लौ ने उनके शरीर को और भी ज़्यादा उभार दिया। अंग्रेज़ उन्हें देखता ही रह गया, बिल्कुल स्थिर। जवानी की उमंगें, एक आकर्षक पुरुष को अपने वश में महसूस करते हुए, थोड़ी और बेशर्म हो गईं। उनकी आँखें एक पल के लिए मिलीं। गाड़ी चालक ने जल्दी से दूसरी चादर निकाली और उनके शरीर को फिर से ढक दिया।

वह अंग्रेज मार्स्टन ब्लेक था, जो अपनी प्रेमिका के साथ रात बिताने के लिए अरब सराय जा रहा था। थोड़ी बातचीत और विचार-विमर्श के बाद यह तय हुआ कि मार्स्टन ब्लेक साहब स्वयं यात्रियों को हौज़-ए-शम्सी से थोड़ा आगे मुनीर का बाग तक ले जाएंगे। वहाँ से दिल्ली के लिए विश्वसनीय वाहन का इंतज़ाम किया जा सकता था। महिलाएं किसी तरह ऊँट की पीठ पर बने संकरे डिब्बे में बैठ गईं; बाकी लोग सरपट दौड़ते घोड़े के बगल में पैदल चले। यात्रियों के पास ज़्यादा सामान नहीं था: कुछ सामान ऊँट पर लादा गया, बाकी भालाधारी और सारथी ने किसी तरह ढोया।

मार्स्टन ब्लेक, कोई न कोई बहाना बनाकर, अब हर दो-तीन दिन में वज़ीर खानम के पिता से मिलने जाने लगा। वह सैर-सपाटे और मनोरंजन की बातें बड़े मनोरंजक ढंग से सुनाता था। कभी-कभी वह वज़ीर को चांदनी चौक ले जाता और नहर के किनारे शाम की सैर का आनंद लेने का मौका देता। माँ का तो कुछ समय पहले ही निधन हो चुका था; पिता अनिच्छा से उनके साथ जाते थे और हमेशा अपनी बेटी से चादर ओढ़ने पर ज़ोर देते थे। फिर भी, कोई नहीं जान सकता था कि वज़ीर और ब्लेक के बीच कौन से रिश्ते चुपचाप पनपे और क्या वादे और समझौते हुए।

कुछ महीने बीत गए। एक दिन, मार्स्टन ब्लेक उनसे विदाई के तौर पर मिलने आए: उन्हें सहायक अंग्रेज़ राजनीतिक एजेंट के रूप में जयपुर में तैनात किया गया था। उस विदाई मुलाकात में औपचारिक खेद व्यक्त करने और मार्स्टन ब्लेक द्वारा अपने भारतीय मित्रों से संबंध बनाए रखने के वादे के अलावा कुछ खास नहीं हुआ। लगभग एक महीने बाद, मार्स्टन ब्लेक ने लौटकर बताया कि उन्होंने एक उपयुक्त घर किराए पर ले लिया है और नौकरों व अन्य सामानों के साथ एक अंग्रेज़ सज्जन के घर की सभी व्यवस्थाएं कर ली हैं; उन्हें अच्छा वेतन मिलता था, नौकरों की फौज थी और उन्हें पानी का गिलास लेने के लिए भी उठने की ज़रूरत नहीं पड़ती थी। उन्होंने कहा, 'जयपुर में मेरा बहुत सम्मान है और सभी मेरा स्वागत करते हैं। वहाँ मुझसे ऊँचा पद केवल राजनीतिक एजेंट साहब, मेरे प्रमुख का है।'

मार्स्टन ब्लेक को जयपुर के बारे में इतनी खूबसूरती से बात करते सुनकर सब चुप हो गए। फिर मार्स्टन ब्लेक ने ही पहला कदम उठाया। बिना कुछ कहे, उन्होंने वज़ीर खानम को अर्थपूर्ण, जिज्ञासु निगाहों से देखा। यह समझते हुए कि दूसरी तरफ से भी कुछ प्रतिक्रिया मिल रही है, ब्लेक और यूसुफ चुपचाप एक तरफ हट गए और फुसफुसाते हुए बातचीत करने लगे।

इसके एक सप्ताह बाद, मार्स्टन ब्लेक के जयपुर जाने वाले काफिले में एक रथ भी शामिल था जिसे चार बैल खींच रहे थे, जो झनझनाती घंटियों से सजे थे और जिनके गले में रंगीन मोतियों की मालाएं लटकी थीं। चमकीले सोने और चांदी के रिबनों से जगमगाता वह रथ रंग-बिरंगे फूलों की मालाओं की खुशबू से महक रहा था, मानो कोई जवान व्यक्ति फल-सब्जियों और फलों से लबालब हरा-भरा हो। नवविवाहित दुल्हन के सुनहरे और पीले रंग के वस्त्रों में लिपटी वज़ीर खानम-छोटी बेगम उस रथ में शान से विराजमान थीं।

पुस्तक 1

(नेत्र रोग विशेषज्ञ डॉ. खलील असगर फारूकी की टिप्पणियों और डायरियों से)

मार्स्टन ब्लेक की मृत्यु जयपुर में एक स्थानीय दंगे में हुई, जो वहाँ के अंग्रेज़ अधिकारियों के विरुद्ध अचानक भड़क उठा था। यह घटना संभवतः सन् 1830 के आरंभ में घटी थी। अंग्रेज़ों ने, शायद न्याय करने की अनिच्छा के कारण, या उस समय के प्रचलित अंग्रेज़ी कानूनों के कारण, छोटी बेगम और मार्स्टन ब्लेक के वैवाहिक संबंध को मान्यता नहीं दी थी। इस प्रकार, मार्स्टन ब्लेक द्वारा छोड़ी गई संपत्ति और अन्य धन में से उन्हें कुछ भी विरासत में नहीं मिला। कंपनी द्वारा उन्हें कोई पेंशन या जीवन निर्वाह अनुदान भी नहीं दिया गया।

जैसा कि मैंने पहले बताया, छोटी बेगम के मार्स्टन ब्लेक से दो बच्चे थे: एक बेटा मार्टिन और एक बेटी सोफिया। इन दोनों को भी अपने पिता की विरासत से वंचित रखा गया और उनका पालन-पोषण उनके पिता के रिश्तेदारों, एक चाचा और एक चाची ने किया। सोफिया बेहद खूबसूरत थीं; उनके पहले पति प्रसिद्ध इंडो-एंग्लियन अधिकारी अलेक्जेंडर स्किनर थे, जिन्हें लोकप्रिय रूप से 'एलेक साहब' के नाम से जाना जाता था। उनके पिता जेम्स स्किनर को गैर-यूरोपियों और उनकी रेजिमेंट, जिसे व्यापक रूप से प्रशंसित स्किनर हॉर्स कहा जाता था, के सिपाही अक्सर 'सिकंदर साहब' कहते थे। बेगम स्किनर—यानी सोफिया, या बादशाह बेगम—उर्दू साहित्य जगत में कवयित्री मिस ब्लेक खफी के रूप में कुछ हद तक प्रसिद्ध हुईं, यह वह नाम था जिसका उपयोग वह अपनी कविताओं में खुद को संबोधित करने के लिए करती थीं। उन्हें अपने समकालीनों में सबसे रचनात्मक उर्दू कवियों में गिना जाता था।

सोफिया मार्स्टन ब्लेक और अलेक्जेंडर स्किनर के दो बच्चे थे: एक बेटा बहादुर मिर्ज़ा और एक बेटी अहमदी बेगम। अहमदी का नाम शार्लोट रखा गया था, लेकिन उन्हें हर जगह अहमदी बेगम के नाम से जाना जाता था। 1946 में, उनके बच्चे जयपुर में खुशहाल जीवन जी रहे थे। कुछ लोग कहते हैं कि सोफिया और अलेक्जेंडर के विवाह से एक और बेटा हुआ जिसका नाम मुहम्मद अमीर, या अमीर मिर्ज़ा, या अमीरउल्लाह रखा गया था। लेकिन यह सच नहीं है। अमीर मिर्ज़ा वह उपनाम था जिससे मार्स्टन ब्लेक और वज़ीर खानम के बेटे मार्टिन को, खासकर स्थानीय लोगों के बीच, जाना जाता था।

हालांकि, यह सच है कि सोफिया के दूसरे पति का नाम मुहम्मद अमीर या अमीरउल्लाह था और उनसे भी उनका एक बेटा था। उनके बारे में बस इतना ही पता है कि अमीरउल्लाह से उनका एक बेटा हुआ था जिसका नाम हसीबुल्लाह कुरैशी था। हसीबुल्लाह का जन्म संभवतः 1890 के आसपास हुआ था। संभव है कि अमीरउल्लाह सोफिया के पहले पति थे और पहले पति की मृत्यु के बाद उन्होंने अलेक साहब से शादी कर ली थी। यह भी संभव है कि अमीरउल्लाह उनके दूसरे पति थे या फिर वे उनके पति थे ही नहीं, बल्कि उनके प्रेमी थे जिनके साथ वे रखैल के रूप में रहती थीं। हसीबुल्लाह ने कुरैशी उपनाम क्यों अपनाया और इस तरह अपने असली वंश और माता-पिता (कि उनकी माँ वज़ीर खानम और मार्स्टन ब्लेक की बेटी सोफिया थीं और उनके पिता अमीरउल्लाह थे) को क्यों छिपाया, यह एक ऐसा रहस्य है जिसका हल आज तक नहीं निकला

है। यह काफी संभव है कि अमीरउल्लाह एक ऐसे परिवार से आया हो जिसका उपनाम कुरैशी था, लेकिन हसीबुल्लाह के नाम परिवर्तन के आसपास की गोपनीयता से पता चलता है कि अमीरउल्लाह और सोफिया वास्तव में विवाहित नहीं थे और हसीबुल्लाह ने अपने जैविक पिता अमीरउल्लाह की पहचान छिपाने के लिए कुरैशी उपनाम अपना लिया था।

खैर, ये वही हसीबुल्लाह कुरैशी थे, जो सलीम जाफर के नाम से एक विद्वान उर्दू लेखक, आलोचक और छंदकार के रूप में कुछ हद तक प्रसिद्ध हुए। 1951 में, सलीम जाफर ने प्रसिद्ध लेकिन कम पढ़े जाने वाले उर्दू कवि नज़ीर अकबराबादी (1735-1830) की रचनाओं का एक प्रामाणिक संकलन इलाहाबाद स्थित हिंदुस्तानी अकादमी से प्रकाशित करवाया। गुलज़ार-ए-नज़ीर (नज़ीर का बाग) नामक इस पुस्तक की प्रतियां अब अपेक्षाकृत दुर्लभ हैं, लेकिन मिलना असंभव नहीं है। उन्होंने ग़ालिब और कुछ अन्य शास्त्रीय उर्दू कवियों पर भी लिखा। फ़ारसी के अलावा, वे संस्कृत और हिंदी में भी पारंगत थे, और निश्चित रूप से उर्दू और अंग्रेजी में पूर्णतः पारंगत थे। सलीम जाफ़र का निधन कराची में हुआ। अविभाजित भारत में वे एक अच्छे सरकारी पद पर कार्यरत थे, लेकिन पाकिस्तान में उन्हें अपनी योग्यताओं के अनुरूप या लगभग समान कोई नौकरी नहीं मिल पाई। शायद इसका कारण यह था कि वे ब्रिटिश सरकार द्वारा अपने सरकारी कर्मचारियों के लिए निर्धारित सेवानिवृत्ति की आयु (उस समय पचपन वर्ष) प्राप्त कर चुके थे। वे सिंध के मीरपुर खास में बस गए और वकील मुहम्मद लतीफ़ गांधी के यहाँ टाइपिस्ट के रूप में काम करने लगे। उन्होंने अपने साहित्यिक और लेखन कार्यों को जारी रखा और उर्दू व्युत्पत्ति का एक विस्तृत शब्दकोश भी तैयार किया। 'इन्वेस्टिगेटिंग द लैंग्वेज' नामक इस शब्दकोश में संस्कृत और फ़ारसी से लिए गए या उनसे व्युत्पन्न सभी उर्दू शब्दों के मूल सूचीबद्ध हैं। यह दुख की बात है कि यह शब्दकोश अभी भी प्रकाशक की प्रतीक्षा कर रहा है। मीरपुर खास में सलीम जाफ़र का जीवन अकेलेपन और ऊब से बचा रहा, क्योंकि उनकी दोस्ती और उर्दू साहित्य के दो स्थानीय विद्वानों, अदब गुलशनाबादी और प्रोफ़ेसर करार हुसैन के साथ साहित्यिक संपर्कों से उन्हें बहुत कुछ सीखने को मिला। करार हुसैन के कहने पर सलीम जाफ़र ने शाह अब्दुल लतीफ़ भिटाई महाविद्यालय में तुलनात्मक भाषाविज्ञान और इसी तरह के विद्वतापूर्ण विषयों पर कुछ व्याख्यान दिए। ये व्याख्यान महाविद्यालय के छात्रों और शिक्षकों दोनों को बहुत पसंद आए। सलीम जाफ़र अपने छात्रों के प्रति अत्यंत दयालु थे और अक्सर बिना किसी शुल्क के उनकी पढ़ाई में सहायता करते थे, जबकि उनकी अपनी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी।

सलीम जाफ़र की इकलौती संतान एजाज अहमद कुरैशी थे, जिन्हें उर्दू और फ़ारसी भाषा का शौक था और लेखन में भी उनकी गहरी रुचि थी। उन्होंने शमीम जाफ़र उपनाम अपनाया, लेकिन कोई भी रचना पूरी नहीं की। अपने पिता के विपरीत, वे अपने परिवार के उस रिश्ते को, चाहे वह कितना भी दूर का क्यों न हो, उन्नीसवीं सदी के प्रसिद्ध उर्दू कवि नवाब मिर्ज़ा खान दाग़ (1831-1905) के साथ महत्वपूर्ण और मूल्यवान मानते थे। शमीम दाग़ की माता वज़ीर खानम, जो उनकी परदादी थीं, के बारे में मौखिक और लिखित स्रोतों से जानकारी जुटाने में अत्यंत तत्पर थे।

शमीम जाफ़र ने अपने एक इंडो-एंग्लियन रिश्तेदार, हर्मियोन मोर्टिमर की बेटी परदिता से शादी

की। उस समय वे पूर्वी पाकिस्तान (अब बांग्लादेश) में एक विशाल चाय बागान का प्रबंधन कर रहे थे। एक बार जब चाय बागान के मजदूर अपने सुपरवाइजर द्वारा एक मजदूर के साथ किए गए क्रूर व्यवहार से नाराज होकर हड़ताल पर चले गए, तो पुलिस के पहुंचने से पहले ही शमीम जाफ़र के घर के सामने एक क्रोधित भीड़ जमा हो गई थी। कुछ हड़ताली हिंसा करने पर भी आमादा थे, लेकिन मजदूरों के बीच अपनी लोकप्रियता से आश्वस्त शमीम ने खतरे की परवाह किए बिना, शांत भाव से भीड़ का सामना किया। उन्होंने इतनी समझदारी और मधुरता से उनके नेताओं से बातचीत शुरू की कि हड़ताल तुरंत वापस ले ली गई और सफलता की खुशी और हड़ताल के जल्द समाप्त होने की प्रसन्नता से झूमते हुए मजदूरों ने शमीम जाफ़र को अपने कंधों पर उठा लिया और 'हमारे प्रबंधक साहब जिंदाबाद' के जयकारे लगाते हुए चाय बागान की ओर वापस चल दिए। लेकिन नियति और भाग्य की विडंबना ने यह सुनिश्चित कर दिया कि चाय बागान के अधिकारी के रूप में शमीम जाफर का सबसे शानदार क्षण ही उनके जीवन और उनके परिवार की छोटी सी दुनिया के अंधकारमय होने का कारण बन गया।

बारिश का मौसम था। देश के जिन इलाकों में चाय की खेती होती है, वहां राष्ट्रीय औसत से कहीं अधिक वर्षा होती है। चाय के बागान अधिकतर पहाड़ी ढलानों पर लगाए जाते हैं ताकि पौधों को भरपूर वर्षा मिले और पानी रुके नहीं, बल्कि गिरते ही बह जाए। कृतज्ञता और विजय की भावना से ओतप्रोत मजदूर, जाफर को अपने कंधों पर उठाए हुए, सामान्य से कहीं अधिक खड़ी ढलान पर चढ़ने की कोशिश कर रहे थे। आगे चल रहे एक मजदूर का संतुलन बिगड़ गया और पूरा जुलूस बाईं ओर एक गहरी खाई में गिर पड़ा। ईश्वर की कृपा से कोई जान नहीं गई। लेकिन शमीम जाफर के सिर में गंभीर चोट आई, जिससे उनकी याददाश्त पूरी तरह चली गई।

कलकत्ता में लंबे समय तक चले इलाज से उनकी याददाश्त काफी हद तक सुधर गई, लेकिन वे कुछ हद तक बुढ़ापे के कारण कमजोर हो गए, क्योंकि उनका मस्तिष्क बचपन जैसी अवस्था में चला गया, जिसके चलते अंततः उन्हें नौकरी छोड़नी पड़ी और मीरपुर खास में अपने पिता के साथ रहने चले गए। हालांकि, अपने मन में वे अब भी एक बड़े चाय बागान के मुखिया बने रहे, जिनके मित्रों में महत्वपूर्ण अंग्रेज और सरकारी अधिकारी शामिल थे। हर शाम, सलीके से तैयार सूट पहने, एक हाथ में छड़ी और दूसरे हाथ में जलती सिगार लिए, वे चाय बागान के 'क्लब' तक पैदल जाते थे। बेशक, वहां न तो कोई क्लब था और न ही दूर-दूर तक चाय की एक भी पत्ती की खुशबू। फिर भी, शमीम जाफर, अपने ख्यालों में खोए, मुस्कुराते हुए और अंग्रेजी में खुद से बातें करते हुए, शाम को अपने पड़ोस में टहलने निकलते थे और सूर्यास्त के समय लौट आते थे। साहब के पहनावे और शिष्टाचार का कड़ाई से पालन करने के कारण लोग, विशेषकर बच्चे, उनसे व्यंग्यपूर्वक पूछते थे, 'बाबू जी, समय कैसा है?' यह इतनी बार होता था कि उन्हें 'टाइम-बाबू' का उपनाम मिल गया, जो कुछ हद तक व्यंग्यात्मक और कुछ हद तक हंसमुख था।

शमीम जाफ़र के इकलौते बेटे वसीम जाफ़र की उम्र लगभग बारह वर्ष थी जब उनके पिता एक दुर्घटना में गिर गए और उनकी याददाश्त चली गई। उनकी एक बेटी भी थी, जो उनसे कुछ साल बड़ी थी। वह मानसिक रूप से मंद थी और गंभीर शारीरिक अक्षमता से भी पीड़ित थी। शमीम की पत्नी परदिता और उनके पिता सलीम जाफ़र ने उनकी यथासंभव देखभाल की, लेकिन ऐसा लग

रहा था कि उनके दिन बद से बदतर होते जा रहे हैं। एक अन्य दुर्घटना में सलीम जाफ़र के दाहिने कूल्हे में फ्रैक्चर हो गया। उनकी उम्र और परिस्थितियाँ उनके विरुद्ध थीं, इसलिए उनकी हालत में सुधार तो दूर, ठीक होना भी लगभग असंभव था। उनकी बहू न केवल उनकी, बल्कि अपने मानसिक रूप से अक्षम पति और अपनी दोहरी विकलांगता से ग्रस्त बेटी की भी देखभाल करती थी। सलीम जाफ़र के पूरे शरीर पर बिस्तर के घाव और बदबूदार छाले हो गए, जो जल्द ही संक्रमित हो गए। कभी साफ-सुथरे और सभ्य रहने वाले सलीम जाफ़र को ऐसी हालत में देखकर उन्हें जानने वाले सभी लोग दुखी और भयभीत हो गए। उस अपाहिज की हालत और उसके कष्टों की कल्पना करना असंभव था। अंततः, पहले से भी अधिक लाचार होकर उसे कराची ले जाया गया, जहाँ उसका एक दूर का रिश्तेदार चाचा रहता था। लेकिन अब, किसी भी उपचार से कहीं अधिक, उसकी हालत ऐसी थी कि प्रार्थना की आवश्यकता थी कि उसे अंततः इस दुनिया, इस पीड़ा के घर से मुक्ति मिल जाए। जीवनदाता को अपना जीवन समर्पित करने से पहले उसने कई महीनों तक कष्ट सहा। कुछ रिपोर्टों के अनुसार, यह वर्ष 1959 था।

सलीम जाफ़र ने वसीयत छोड़ी थी, जिसमें उन्होंने अपने बेटे के लिए यथासंभव प्रावधान किया था; उन्होंने वसीयत के कागजात मोहम्मद लतीफ़ गांधी को सौंप दिए थे, जिनके यहाँ वे लंबे समय से टाइपिस्ट के रूप में काम कर रहे थे। परदिता अपने मानसिक रूप से विक्षिप्त पति और दो बच्चों के साथ इंग्लैंड जाने की योजना बना रही थी। लेकिन शमीम को भी अपने पिता के कुछ ही महीनों बाद बुलावा आ गया। उनके अंतिम संस्कार के बाद, माँ और बच्चे माँ के परिवार के एक रिश्तेदार के माध्यम से इंग्लैंड चले गए, जिन्होंने उनके वीज़ा का खर्च उठाया।

मां की उम्मीदों के बिल्कुल उलट, वसीम जाफर अपने दादा के सांस्कृतिक और साहित्यिक अतीत में पूरी तरह डूब जाना चाहते थे। जितना संभव हो सका, उन्होंने जानबूझकर उन क्षेत्रों को अपनाया जिनमें सलीम जाफर ने ज्ञान प्राप्त किया था: जीवन शैली, साहित्य और विज्ञान, जिन्हें वे सलीम जाफर की विरासत मानते थे। वसीम ने कई वर्षों तक लंदन के स्कूल ऑफ ओरिएंटल एंड अफ्रीकन स्टडीज में अध्ययन किया और उर्दू और फारसी का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया। अपने पिता के साथ हमेशा उर्दू में बात करने के कारण, वे मुहावरेदार उर्दू धाराप्रवाह बोलते थे; अपनी मां के साथ वे अंग्रेजी और उर्दू का मिलाजुला प्रयोग करते थे। अब स्कूल में उर्दू का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने के बाद, वे साहित्यिक उर्दू बोलने और लिखने में भी काफी कुशल हो गए।

उन्होंने अपने दादाजी द्वारा सुनाई गई कहानियों से वज़ीर खानम के बारे में थोड़ा-बहुत जान लिया था और अपने पिता के मानसिक रूप से बीमार होने से पहले अपने दादाजी और पिता के बीच छिटपुट बातचीत से और भी बहुत कुछ सीखा था। उर्दू और फ़ारसी के अलावा, चित्रकला उनका दूसरा बड़ा शौक था और उन्होंने लंदन के प्रसिद्ध स्लेड स्कूल ऑफ़ आर्ट में शाम की कक्षाओं में भाग लेकर इसकी तकनीकें सीखीं। यह महसूस करते हुए कि उनका असली शौक मुगल चित्रकला है, उन्होंने इसका ज्ञान प्राप्त किया और इसका इतिहास सीखा, जिसमें उन्होंने काफी समय और मेहनत लगाई। अंततः उन्हें लंदन के विक्टोरिया और अल्बर्ट संग्रहालय में उन्नीसवीं शताब्दी के मुगल (और कंपनी स्कूल) चित्रों का सहायक क्यूरेटर नियुक्त किया गया। वे अपना अधिकांश खाली समय इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी एंड रिकॉर्ड्स में अठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दी

के भारत के पांडुलिपियों और प्रकाशनों का अध्ययन करने में बिताते थे। (यह पुस्तकालय अब ब्रिटिश पुस्तकालय का हिस्सा बन गया है, लेकिन पुराने विचारों वाले लोग इसे अभी भी इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी एंड रिकॉर्ड्स कहते हैं।)

कई वर्षों से वसीम जाफ़र अठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दी के कुछ भारतीय परिवारों पर शोध कर रहे थे: ऐसे परिवार जो अपने समय में अत्यंत प्रतिष्ठित थे, लेकिन अब अनपढ़े पन्नों के ढेर में दफ़न हो चुके थे। उनके नाम, यदि ज्ञात भी थे, तो केवल कुछ विशेषज्ञ इतिहासकारों को ही ज्ञात थे। उनमें से कुछ ब्रिटिश संरक्षण में फले-फूले और समृद्ध हुए, लेकिन अपनी संतानों की अयोग्यता के कारण अपमान या बर्बादी का शिकार हो गए; और कुछ ऐसे भी थे जिन्हें 1857 से पहले या बाद में अत्याचारी अंग्रेज़ों की तलवारों या न्याय का ढोंग करने वाली अंग्रेज़ी न्याय प्रणाली के तराजू पर तौला गया और वे दोषी पाए गए। उनकी आकांक्षा थी कि वे एक दिन उनकी कहानी लिखें।

यह बात सर्वमान्य है कि आज मुट्ठी भर विशेषज्ञ इतिहासकार ही इन परिवारों के नाम जानते हैं, लेकिन अपने समय में ये परिवार कला और ज्ञान, विशेषकर कविता, संगीत और चित्रकला के उद्गम स्थल थे। यदि इन परिवारों के दस्तावेजों और पांडुलिपियों का अध्ययन किया जाए, तो उनसे भारत-इस्लामी संस्कृति के अनगिनत अनमोल रत्नों की जानकारी प्राप्त होगी, जो इन पन्नों में सुप्त अवस्था में छिपे हुए हैं और अपनी अपरिहार्य मृत्यु की प्रतीक्षा कर रहे हैं। कुछ नाम ऐसे थे जिनमें वसीम जाफर की विशेष रुचि थी और वे उनके बारे में शोध कर रहे थे या उनसे संबंधित सामग्री खोज रहे थे: बरेली के राजा रतन सिंह ज़ख्मी, कारा मानकपुर के राय बलमुकुंद शाहूद, बनारस (बाद में बनारस और अब वाराणसी) के साहिब राम खामोश, बांदा के अली बहादुर खान, फर्रुखाबाद के तजम्मुल हुसैन खान, फिरोजपुर झिरका के शम्सुद्दीन अहमद खान, कोसगंज (अब खासगंज) के कर्नल गार्डनर और उनकी बेगम, जो खंबायत के नवाब की पुत्री थीं, और कर्नल की बहू, जो सम्राट शाह आलम बहादुर शाह द्वितीय (जो स्वर्ग में विराजमान हैं) की पुत्री थीं। राजकुमारी, अपने पहले पति और उसके पिता अवध के राजा द्वारा किए गए 'नरम' व्यवहार से घृणा और विद्रोह से भरी हुई, अंततः कर्नल गार्डनर के पुत्र के साथ भाग गई थी। दिल्ली के नवाब हुसामुद्दीन हैदर और दीवान फजलुल्लाह खान... और ऐसे कई अन्य लोग जिनकी कहानियाँ किसी दिन लिखी जानी बाकी थीं।

वसीम जाफ़र अक्सर खुद से पूछते थे: क्या उन घरों का पतन और जीर्णता अपरिहार्य थी, अगर उस समय के राजनीतिक दबाव और सैन्य संघर्ष न होते? समय के इस अंतराल से धुंधली सी दिखने वाली ये इमारतें अब कैसी लगती हैं? अब उनकी छवियों को कौन सा आवरण ढके हुए है? क्या यह अतीत का कालिख भरा अंधेरा है, या पुरानी यादों और लालसा का गुलाबी धुंध? ये लोग खुद को कैसे देखते थे? वे अपने आप को क्या महत्व देते थे? किस तरह के प्रकाश ने उनकी आत्म-धारणा को रंग दिया था? क्या उन्हें इस बात का आभास था या उन्होंने कल्पना भी की थी कि उनकी संस्कृति का गौरवशाली आवरण जल्द ही टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा, जिससे उनकी मूल्य प्रणाली एक जलते हुए देश के घने धुएं में बदल जाएगी, और वह धुआं नए युग के सागर में विलीन हो जाएगा, और इस विलीनता से उत्पन्न विच्छेद एक ऐसी खाई होगी जिसकी

गहराई का कोई अंदाजा नहीं लगा सकता, जिसमें अतीत को याद करने की मनुष्य की शक्ति कमजोर होकर विलीन हो जाएगी, और उनकी यादें हमेशा के लिए खो जाएंगी?
वसीम जाफ़र को यकीन नहीं था कि उन्हें कभी अपने सवालों के जवाब मिलेंगे, लेकिन उन्होंने इस धारणा को भी खारिज कर दिया कि अतीत एक अनजान देश है और वहाँ जाने वाले अजनबी उसकी भाषा नहीं समझ सकते। वे कहा करते थे कि पुराने शब्दों को नए शब्दों में फिर से कहा जा सकता है: इसके लिए केवल सहानुभूति, आलिंगन करने की शक्ति और क्षमता, और उस आलिंगन की गर्माहट को महसूस करने की क्षमता की आवश्यकता होती है।

सेवानिवृत्त नेत्र रोग विशेषज्ञ और शौकिया वंशावली विशेषज्ञ डॉ. फारूकी लंदन में वसीम जाफर से मिलते हैं और उनकी असाधारण खोज के बारे में जानते हैं।

(नेत्र रोग विशेषज्ञ डॉ. खलील असगर फारूकी की टिप्पणियों और डायरियों से)

जैसा कि ऊपर बताया गया है, वसीम जाफर लंदन में रहते थे। वे मेरे रिश्तेदार नहीं थे और सच कहूँ तो, अप्रत्याशित परिस्थितियों में हमारी मुलाकात से पहले मैं उन्हें जानता भी नहीं था और न ही उनके बारे में कुछ जानता था। मैं स्वयं भी लंदन में नहीं रहता। कुछ समय पहले मैंने लंदन स्कूल ऑफ ओरिएंटल एंड अफ्रीकन स्टडीज के उनके बेटे खालिद हसन कादिरी द्वारा हाल ही में प्रकाशित प्रसिद्ध विद्वान और सूफी मौलाना हामिद हसन कादिरी के पत्रों में वसीम के दादा सलीम जाफर के पारिवारिक इतिहास का विवरण बड़े चाव से पढ़ा था। मैं सलीम जाफर के लेखन से परिचित था और मानता था कि वे हैदराबाद, लखनऊ या दिल्ली के किसी संभ्रांत उर्दू भाषी परिवार से थे।

मैं सलीम जाफ़र की संतानों के बारे में कुछ नहीं जानता था; और न ही मुझे यह जानने में कोई दिलचस्पी थी कि वे कहाँ रहते हैं, यदि रहते भी हैं तो। मैंने बस यही मान लिया था कि वह मुझसे कहीं अधिक उम्र के थे और अब तक मर चुके होंगे और कहीं दफ़न हो चुके होंगे, जैसे अनगिनत अन्य लेखक जिनके कार्यों से मैं परिचित था, लेकिन जिनके जीवन और परिस्थितियों के बारे में मुझे कोई जानकारी नहीं थी।

सामान्य परिस्थितियों में, अपनी प्रवृत्ति के अनुरूप, मैं सलीम जाफ़र के बारे में जानने के बजाय वज़ीर खानम, कवि नवाब मिर्ज़ा खान दाग़ की माता, उनके जीवन के असाधारण उतार-चढ़ावों और सलीम जाफ़र का उनसे क्या संबंध था, इसके बारे में अधिक जानने के लिए उत्सुक होता; मैं सलीम जाफ़र के वंशजों का पता लगाने का प्रयास करता ताकि संभव हो तो सलीम जाफ़र की तुलना में वज़ीर खानम के बारे में अधिक जान सकूँ।

उन दिनों मेरे मन में कुछ और ही चल रहा था (कृपया इस पुराने मुहावरे के लिए क्षमा करें)। पिछले साल मुझे एक शादी के लिए लंदन जाना पड़ा। अपने बारे में यहाँ कुछ भी लिखने में मुझे थोड़ी झिझक हो रही है। और आगे जो कहानी है, उसका मुझसे व्यक्तिगत रूप से कोई लेना-देना नहीं है। इतना कहना ही काफी है कि पेशे से मैं एक प्रतिष्ठित नेत्र शल्यचिकित्सक हूँ, लेकिन कवियों और कविता में मेरी एक अलग ही रुचि है, और मैं कभी-कभी कविताएँ लिखता भी हूँ। लेकिन मेरा असली शौक वंशावली है। अगर मेरा जन्म मध्य युग में हुआ होता, तो मुझे नस्साब कहा जाता, यानी वह व्यक्ति जो अपने कबीले के सदस्यों और आस-पास के सभी कबीलों के पूर्वजों और वंशजों के नाम कंठस्थ जानता हो। मुझे पारिवारिक इतिहास जानने, वंशावली बनाने और एक-दूसरे से दूर और भिन्न परिवारों के सदस्यों को जोड़ने वाले संबंधों को खोजने में गहरी रुचि है। हालांकि मैं अभी सेवानिवृत्ति की आयु का नहीं हुआ हूं, मैंने चिकित्सा का अभ्यास छोड़ दिया है और अपना क्लिनिक बंद कर दिया है, और अपना अधिकांश समय पारिवारिक इतिहास और वंशावली के अध्ययन में लगा रहा हूं।

मैंने ऊपर एक प्रबल खोज की बात की। लेकिन अगर मैं एक के बजाय दो खोज कहूँ तो गलत

नहीं होगा। जब मैं हामिद हसन कादिरी के पत्र पढ़ रहा था, तब अचानक, बिना किसी स्पष्ट कारण के, मेरे मन में गोरखपुर के एक पारसी व्यापारी परिवार, बोमनजी खुदाईजी के वंश वृक्ष की खोज करने और उसके बारे में लिखने का विचार आया। कहा जाता है कि उनके पूर्वज जमशेद आर्यनपुर वही व्यक्ति थे जिन्हें अंग्रेज यात्री टॉम कोरिएट ने पश्चिमी भारत से होते हुए पूर्व और उत्तर में स्थित गोरखपुर तक जाने के लिए मार्गदर्शक के रूप में नियुक्त किया था। यह मुगल सम्राट नूरुद्दीन जहांगीर का समय था। कोरिएट ने यूरोप और एशिया में हजारों मील पैदल यात्रा की थी और अंत में, जहांगीर के दरबार में एक सहायक के रूप में यात्रा करते हुए, वह आगरा से अजमेर और सिंध होते हुए तुर्किस्तान और चीन गए थे।

कोरयात को जहांगीर से कुछ खास नहीं मिला, लेकिन जमशेद आर्यनपुर के बारे में कुछ ऐसा था जो सम्राट को इतना पसंद आया कि उन्होंने भारत के खाकान के राजमहल से उस क्षेत्र में शराब और कुछ वन उत्पादों जैसे शहद और बांस के रस का व्यापार करने का लाइसेंस प्राप्त कर लिया, जो अब पूर्वी उत्तर प्रदेश का हिस्सा है और उस समय अवध प्रांत का उत्तर-पूर्वी क्षेत्र था। गोरखपुर के वर्तमान शराब व्यापारी बोमनजी खुदाईजी को उक्त जमशेद आर्यनपुर का वंशज माना जाता है।

जिस दूसरी बात ने मेरी जिज्ञासा जगाई, वह मेरे अपने लोगों के बारे में थी। बहुत से लोग जानते हैं कि भारत के सूफियों और मुस्लिम संतों में ऐतिहासिक रूप से सैय्यद वंश का वर्चस्व रहा है। लेकिन बहुत से लोग यह नहीं जानते कि अब्दुल मुत्तलिब (अर्थात पैगंबर के परिवार) के वंशजों के बाद, सूफियों और संतों में सबसे प्रमुख वंश खत्ताब (अर्थात इस्लाम के दूसरे खलीफा उमर-ए-फारूक के पिता) के वंशज हैं। इसी प्रकार, अब केवल पेशेवर इतिहासकारों को ही पता है कि भारत में सैय्यद, तुर्क और पठान वंशों के कई शासक हुए हैं, लेकिन उपमहाद्वीप में केवल एक ही फारूकी वंश का शासन रहा है—भारत में इसे अलग-अलग तरह से फारूकी, फारूकी, फारूकी, फारूकी, फारूकी, यहां तक कि फारुकी या फारूकी भी लिखा जाता है (हालांकि शुद्धतावादी फारूकी को पसंद करते हैं, मैं फारूकी को पसंद करता हूं)। दक्षिण और मध्य भारत में स्थित बुरहानपुर के फारूकी साम्राज्य की स्थापना 1397 में मलिक राजा फारूकी द्वारा की गई थी। उन्होंने दो शताब्दियों से अधिक समय तक अपने राज्य पर शासन किया, जब तक कि 1601 में मुगल सम्राट जलालुद्दीन मुहम्मद अकबर के शासनकाल की तेज हवाओं ने बुरहानपुर के फारूकियों के साम्राज्य का अंत नहीं कर दिया।

राज्य के विघटन के बाद, फारूकी नाम इतिहास के पन्नों से मानो पूरी तरह से मिट गया, मानो युद्ध की कालिख और धूल के विलीन होने के साथ ही 'फारूकी' उपनाम भी धुएं में उड़ गया और हमेशा के लिए वायुमंडल में विलीन हो गया।

मुझे संयोगवश बुरहानपुर के फारूकियों के बारे में पता चला; तब से मेरे मन में यह जानने की सनक या यूं कहें कि एक अजीब सी जिज्ञासा है कि राज्य के पतन के बाद बुरहानपुर के फारूकियों का क्या हुआ। पारिवारिक किंवदंती के अनुसार, हम, आज़मगढ़ के फारूकी, 1388 में फिरोज तुगलक की मृत्यु से कुछ समय पहले अपने पैतृक गांव में बस गए थे, मलिक राजा द्वारा बुरहानपुर में अपना राज्य स्थापित करने से बहुत पहले। लेकिन कौन जानता है, शायद हमारे

कुछ पूर्वज बुरहानपुर के फारूकियों से जुड़े रहे हों; या शायद अकबर के लंबे शासनकाल के दौरान ऐसा कोई संबंध स्थापित हुआ हो?

मुझे अपने किसी भी प्रोजेक्ट में सफलता नहीं मिली थी; और न ही मुझे अपने प्रयासों में आंशिक सफलता की कोई वास्तविक संभावना दिखाई दे रही थी। दरअसल, मैंने शादी को लंदन यात्रा का अवसर बनाया, इस व्यर्थ आशा में कि शायद इससे मेरे शोध का दायरा बढ़ सके। इसलिए, शादी समारोह और उसके बाद के भोज के तुरंत बाद, मैंने इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी और रिकॉर्ड्स का उपयोग करने के लिए आवश्यक अनुमति और सुविधाएं प्राप्त कर लीं, ताकि मैं प्रतिदिन कई घंटों तक उसके वाचनालय में जाकर कैटलॉग, ग्रंथसूचियां, पारिवारिक दस्तावेज और उन्नीसवीं सदी के महत्वपूर्ण ब्रिटिश सिविल सेवकों के दस्तावेजों का अध्ययन कर सकूं। लाइब्रेरी के भूतल पर मुझे एक कोने में वर्कस्टेशन, एक कंप्यूटर टर्मिनल और उपयोग में आने वाले कागजात और दस्तावेजों को रखने के लिए एक छोटी सी अलमारी उपलब्ध कराई गई, जिससे मैं वहां सभी आवश्यक सुविधाओं का लाभ उठा सकूं।

हालांकि मुझे लगता है कि यह सभी शोध पुस्तकालयों में आम बात है, लेकिन कुछ भी उपलब्ध होने से पहले लंबा इंतजार करना पड़ता है। अक्सर पुराने पारिवारिक कागजात और कानूनी दस्तावेज, जो पहले से ही अच्छी स्थिति में नहीं होते, उन्हें ढूंढने में अतिरिक्त सावधानी बरतनी पड़ती है और अध्ययन के लिए उपलब्ध कराने में और भी अधिक समय लगता है।

मैंने ग्रेट वेस्ट रसेल स्ट्रीट की एक गली में कमरे किराए पर लिए। लंदन में रहने वालों को पता होगा कि सेंट्रल लंदन की ये गलियाँ बेहद लोकप्रिय, प्रतिष्ठित और महँगी होती हैं। मेरी खुशनसीबी थी कि मुझे उचित किराए पर आरामदायक कमरे मिल गए। ब्रिटिश लाइब्रेरी पैदल लगभग बीस मिनट की दूरी पर थी। खाने-पीने की दुकानें और चाय की दुकानें हर जगह थीं। भारतीय रेस्टोरेंट ज़्यादा नहीं थे, लेकिन गोवा का व्यंजन चिकन विंदालू, पंजाबी व्यंजन दम आलू और मुग़लाई ग्रिल्ड चिकन टिक्का ज़्यादातर रेस्टोरेंट में मिलते थे। मैंने हाल ही में आधुनिक अंग्रेज़ी उपन्यासकार और आलोचक पीटर एक्रॉयड की एक किताब पढ़ी, जिसमें उन्होंने लिखा है कि चिकन विंदालू ने अब ब्रिटिश राष्ट्रीय भोजन के रूप में फिश एंड चिप्स की जगह ले ली है।

लाइब्रेरी जाने के कुछ ही दिन हुए थे कि मेरी नज़र एक भारतीय सज्जन पर पड़ी, जो वी एंड ए संग्रहालय में उन्नीसवीं सदी के मुगल (और कंपनी शैली) चित्रों के सहायक संरक्षक बताए जाते थे। मुझे तो वे बस कुछ चिंतित से दिखने वाले, लंबे और पतले सज्जन के रूप में ही नज़र आए। उनका रंग गोरा था, लेकिन उम्र के कारण थोड़ा गहरा हो गया था। उनके बाल सफेद थे, जो फैशन के हिसाब से लंबे थे और उनकी मूंछें अपेक्षाकृत पतली थीं। वे हर मौसम में अपने सिर पर ऊनी टोपी पहने रहते थे और दोनों हाथों में ब्रीफकेस लिए तेज़ी से सीढ़ियों पर चढ़ते थे, अपने विचारों में खोए हुए। बाद में मुझे पता चला कि एक ब्रीफकेस में हमेशा कागज़, कलम और पेंसिल, डायरी, पोस्ट-इट मेमोरेंडम, एक-दो किताबें, चेकबुक, क्रेडिट कार्ड और ऐसी ही छोटी-मोटी चीज़ें होती थीं। दूसरे ब्रीफकेस में क्या होता था, यह कोई नहीं जान पाया; शायद उसमें कुछ खाने का सामान होता था। लेकिन वे हमेशा ब्रिटिश संग्रहालय के पास सेंट्रल रेस्टोरेंट में दोपहर का भोजन करते थे। मैंने अनुमान लगाया कि दूसरे ब्रीफकेस में दवाइयां थीं, क्योंकि वह मुझे

हमेशा कुछ बीमार सा लगता था।
जब मैंने उन्हें पहली बार देखा, तो मैंने उन्हें भारतीय-ब्रिटिश काल का एक अवशेष समझा, पांडुलिपियों को समझने में माहिर, एक अंग्रेज़ के उस 'मूनशी' जैसे व्यक्ति के रूप में, जो स्वतंत्रता के बाद भी घर नहीं लौटा, क्योंकि उसका स्वागत करने वाला कोई नहीं था। वह हमेशा ढीला-ढाला, सिकुड़ा हुआ सूट या शेरवानी पहनते थे, जिसका रंग फीका पड़कर मंद भूरा सा हो गया था।
उनके जूते, टोपी, छड़ी, छाता, सब कुछ काफी महंगा और उस दौर के फैशन के अनुरूप था। उनके कपड़े हमेशा अच्छी गुणवत्ता के होते थे, लेकिन लापरवाही से पहने जाते थे; यह स्पष्ट था कि पहनने वाले को कपड़ों की सिलवटों से मुक्त होने या धूल-मिट्टी से सावधानीपूर्वक साफ होने की कोई परवाह नहीं थी। वे ग्रेट वेस्ट रसेल स्ट्रीट पर लाइब्रेरी से ठीक पहले वाले बस स्टॉप पर बस से उतरते, अखबार बेचने वाले लड़के से उस दिन का इंटरनेशनल हेराल्ड ट्रिब्यून अखबार खरीदते (यह अजीब बात है कि हर कोई उन्हें 'अखबार बेचने वाला लड़का' ही कहता था, चाहे वह बूढ़ा ही क्यों न हो), फिर उसे कसकर मोड़कर अपनी बगल में दबाकर वे लाइब्रेरी की ओर चल पड़ते।
एक बार इत्तेफ़ाक से हम दोनों लिफ़्ट में मिले। मैंने उन्हें सलाम अलैकुम कहा, जो कि भारत-मुस्लिम तरीका था। उन्होंने कुछ गर्मजोशी से जवाब दिया, हालाँकि उनकी उम्र और व्यवहार को देखते हुए मुझे उनसे इतनी गर्मजोशी की उम्मीद नहीं थी। उस दिन, उन्हें करीब से देखकर मुझे एहसास हुआ कि उनका बेढंगा सूट उनके दर्जी की लापरवाही, उनके कपड़ों की देखभाल में कमी, या उनके जवानी और वज़न कम होने के कारण ढीला नहीं था। दरअसल, वे बहुत दुबले-पतले थे। उनकी गर्दन, हाथों और चेहरे की त्वचा ढीली और सूखी थी, मानो अंदर का मांस गल गया हो और बाहरी त्वचा किसी तरह हड्डियों पर चिपकी हो, और अगर मैं उसे छूता तो वह मेरी उंगलियों पर सिकुड़े हुए कागज़ की तरह रगड़ खाती। जिस कलाई पर उनकी छड़ी लटकी थी, वह किसी छोटे बच्चे की कलाई जैसी लग रही थी। इससे मुझे अठारहवीं सदी के उर्दू कवि मीर की एक कविता याद आ गई:
यह तो बस तुम्हारी कल्पना है कि मेरे कपड़ों के अंदर एक कमजोर शरीर है; वास्तव में, वहाँ कुछ भी नहीं है सिवाय मेरे स्वयं के एक मात्र विचार के।
मैं इन्हीं विचारों में खोया हुआ था कि लिफ्ट से बाहर निकलते ही मुझे पता चला कि वहाँ से गुजर रही सचिवों ने मुस्कुराते हुए उनका अभिवादन किया। उनके शब्द, 'सुप्रभात, डॉक्टर' या 'सुप्रभात, वसीम', यह दर्शाते थे कि वे यहाँ काफी जाने-माने व्यक्ति थे। उनका नाम वसीम था; इसलिए उनका पूरा नाम वसीम अहमद या वसीम अख्तर या ऐसा ही कोई आम भारतीय-मुस्लिम नाम होगा। लैंडिंग पर पहुँचकर उन्होंने हल्की सी मुस्कान के साथ मुझसे कहा, 'सलाम अलैकुम, इंशाअल्लाह फिर मिलेंगे,' और दाईं ओर गलियारे में मुड़ गए।
मैं अपने वर्कस्टेशन पर पहुँचा और यह देखकर सुखद, बल्कि अत्यंत प्रसन्न हुआ कि पिछली शाम के लिए मैंने जो किताबें और कागज़ात तय किए थे, वे मेरी डेस्क की शेल्फ पर करीने से रखे हुए थे। ये कानूनी कागज़ात अधिकतर 1661 के बाद के थे, जब पुर्तगालियों ने सात द्वीपों

को - जिन्हें वे बॉम बाहिया या बॉम्बैम (दोनों का अर्थ 'अच्छी खाड़ी') कहते थे, और कई मूल निवासी उन्हें मम्बाई कहते थे (शहर अब फिर से उसी नाम - मुंबई - से जाना जाता है) - पुर्तगाली राजकुमारी कैथरीन के राजा चार्ल्स से विवाह के समय दहेज के रूप में अंग्रेजों को सौंप दिया था। अंग्रेजों के बीच, पुर्तगाली बॉम बाहिया/बॉम्बैम समय के साथ मुंबई और फिर बॉम्बे में परिवर्तित हो गया। उस समय, कई पारसी और यहूदी दशकों से वहाँ रह रहे थे और उनके बारे में कुछ जानकारी उस समय के बौद्ध भिक्षुओं और शिक्षण संस्थानों के कागज़ात में उपलब्ध थी, लेकिन यह जानकारी छिटपुट और असंतुलित थी। सदी के अंत में, अंग्रेजों ने वहां एक नगरपालिका की स्थापना की और उस तारीख से कानूनी कागजात और दस्तावेज कमोबेश निरंतर रूप से मौजूद थे, जिन्हें कपड़े के बंडलों या बक्सों में सुरक्षित रूप से संग्रहीत किया गया था।
मैं कागज़ों में व्यस्त हो गया। दोपहर का भोजन न करने की आदत के कारण, मुझे समय बीतने का एहसास तभी हुआ जब मेरे आस-पास के दफ्तर धीरे-धीरे खाली होने लगे। मैं भी उठा और मन में ख्याल आया कि श्री वसीम शायद अभी भी यहीं हों और उनके साथ समय बिताना सुखद हो सकता है। लेकिन मैंने उनसे किसी और दिन मिलने का फैसला किया, क्योंकि हो सकता है कि वे वी एंड ए से पहले ही निकल गए हों या अभी भी काम कर रहे हों। अगले दिन रविवार था। थिएटर क्षेत्र के सामने टेम्स नदी के किनारे खुली जगह में हमेशा की तरह पुरानी किताबों का एक बड़ा बाज़ार लगने वाला था। मैंने पहले ही घंटे में वहाँ जाने और किताबों के बीच एक सुखद दिन बिताने की योजना बनाई; शायद मुझे कुछ रुचिकर मिल जाए।
उस रविवार को बाज़ार में कुछ स्टॉल पुराने नक्शे और पुरानी पेंटिंग्स दिखा रहे थे। ज़ाहिर है, वहाँ कोई दुर्लभ या अच्छी चीज़ मिलना नामुमकिन था। ज़्यादातर कागज़ की चीज़ें पुरानी तस्वीरों की छपी हुई प्रतियां थीं, लेकिन अठारहवीं सदी की अंग्रेज़ी पत्रिकाओं के सचित्र पन्ने बड़ी संख्या में थे और वो भी बहुत वाजिब दामों पर। एक स्टॉल से मैंने जनवरी 1772 के जेंटलमैन मैगज़ीन का एक सचित्र पन्ना सिर्फ़ दस पाउंड में खरीदा। पन्ने पर तारीख और पत्रिका का नाम साफ़-साफ़ लिखा था; उस पर जानवरों के दो काले-सफ़ेद चित्र बने थे। एक को 'जिराफ़' और दूसरे को 'चीनी मृग' बताया गया था। हालाँकि चित्र बिल्कुल सटीक नहीं थे, फिर भी उनकी स्याही काफ़ी चमकदार थी और पन्ने पर पानी के हल्के-फुल्के दाग़ थे। मैंने अपने कीमती पन्ने को सुरक्षित रखने के लिए एक खाली गत्ते की नली ढूँढ़ी। पास ही एक बुज़ुर्ग सज्जन पुराने नक्शों का ढेर लगाए बैठे थे। मैं उनके स्टॉल की तरफ़ मुड़ा तो मुझे एक जाना-पहचाना चेहरा दिखा: श्री वसीम थे, जो एक छोटे से नक्शे को अलग-अलग कोणों से देख रहे थे और कभी-कभी उसे रोशनी में चमका रहे थे।

‘सलाम अलैकुम, महोदय,’ मैंने उनके पास जाकर कुछ प्रसन्नता के साथ कहा, ‘वास्तव में आपसे मिलकर अच्छा लगा!’
उन्होंने चश्मे के पीछे से मुझे घूरकर देखा, उनकी भौंहें थोड़ी तन गई थीं। शायद उन्हें नक्शा देखते समय मेरा दखल देना पसंद नहीं आया। बाद में मुझे पता चला कि पहली नज़र में वे मुझे पहचान नहीं पाए थे।

'अरे, तो आप हैं! आप यहाँ कैसे आ गए? वैसे माफ कीजिएगा, हमारी अभी तक ठीक से जान-पहचान नहीं हुई है, हालांकि मैंने आपको कल पुस्तकालय में देखा था।'
उनकी आवाज कर्कश थी, मानो गला रुंध गया हो, जैसे उनके स्वरयंत्र में काफी कफ जमा हो गया हो। उनकी सांसें भी उथली थीं; मुझे ऐसा लगा कि किसी कारणवश उन्हें पर्याप्त ऑक्सीजन नहीं मिल पा रही थी।
मुझे खेद है, यह मेरी गलती है। मुझे पता है कि आपका आदरणीय नाम वसीम है और आप वी एंड ए में...
जी हाँ, महोदय, मेरा नाम वसीम जाफर है। लेकिन वी एंड ए कोई बहुत महत्वपूर्ण संस्था नहीं है। इसे अपने हाल पर छोड़ दीजिए। आप अपने बारे में बताइए।
'जी हां, महोदय, मेरा नाम खलील असगर फारूकी है। मैंने नेत्र रोग विशेषज्ञ के रूप में काम किया है। अब मैं सेवानिवृत्त हो चुका हूं और अपने शौक को पूरा करता हूं।'
'बहुत बढ़िया,' उसने खाँसी के बीच-बीच में कहा। 'शौक को ही अपना जीवन बनाने से बेहतर और कुछ नहीं हो सकता। अभाव से मुक्ति, एक सुखद घर का शांत कोना और एक शौक। कितना सुखद! केवल ईश्वर ही दोषरहित है!' उसने यह कहते हुए इंडो-मुस्लिमों द्वारा प्रशंसा और स्तुति व्यक्त करने के लिए और विनम्रता से यह बताने के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले सर्वत्र प्रचलित वाक्यांश का प्रयोग किया कि कोई व्यक्ति या वस्तु कितनी भी परिपूर्ण क्यों न हो, वह कभी भी ईश्वर की शाश्वत पूर्णता के समान नहीं हो सकती।
वसीम जाफ़र? अचानक मेरे मन में ख्याल आया कि कवि नवाब मिर्ज़ा खान दाग़ के परपोते का नाम सलीम जाफ़र था। क्या कोई संबंध था? मुझे उनसे पूछने की तीव्र इच्छा हुई, लेकिन मैंने अपना इरादा बदल दिया। ज़ाहिर है, सलीम जाफ़र दाग़ के साथ अपने रिश्ते को छिपाना चाहते थे, वरना उन्होंने अपना नाम क्यों बदला होता? लेकिन नाम बदलना हमारी संस्कृति में कवियों द्वारा अपनी रचनाओं में 'साहित्यिक' नाम अपनाने की प्रचलित प्रथा के अनुरूप भी हो सकता है। मुझे सोच में डूबा देखकर वसीम जाफर मुस्कुराए और बोले, "क्या बात है जो तुम्हें इतना चुप करा रही है? क्या मेरी बातों ने तुम्हें उमर खय्याम की उस कविता की याद दिला दी जिसमें पेड़ की डाल के नीचे शराब की बोतल और कविता की किताब का ज़िक्र है? अरे, मुझे अभी तक तुम्हारे शौक के बारे में पता नहीं चला है। उम्मीद है कि तुम संपत्ति और घर के दुश्मन नहीं हो, और इसीलिए तुम इस अजनबी जगह पर हो? तुम कहाँ से आए हो? या तुम यहाँ स्थायी रूप से बस गए हो?"

'मेरा शौक... खैर, आप मुझे नस्साब कह सकते हैं। मुझे पुरानी वंशावलियों में रुचि है—'
मुझे अपनी बात पूरी करने का मौका दिए बिना ही, उन्होंने उत्सुकता से मुझे बीच में ही रोक दिया। 'कितना दिलचस्प! एक आधुनिक वंशावली विशेषज्ञ! आप तो वाकई एक दुर्लभ प्रतिभा हैं, एक अनमोल रत्न। क्या आपने कुछ लिखा भी है?'
'मैं अपना जुर्म कबूल करता हूँ, लेकिन मैं किसी भी तरह से कोई प्रतिष्ठित व्यक्ति नहीं हूँ।' अब मुझे यकीन हो गया कि वह बुजुर्ग सज्जन सलीम जाफर के बेटे या भतीजे थे। आखिर यह

साहित्यिक संदर्भों से भरी परिष्कृत भाषा कहाँ से आई होगी? 'और आप जैसे लोग ही इस युग की शान हैं। मैं सलीम जाफर साहब के नाम और उनके कार्यों से भली-भांति परिचित हूँ।'
"तो आप मेरे दादाजी की रचनाओं से परिचित हैं! केवल ईश्वर ही दोषरहित हैं! तो आप बिल्कुल मेरे मनपसंद व्यक्ति हैं। सच में, मैं उनके जैसा बिल्कुल नहीं हूँ; यह तो मेरे माता-पिता और दादा-दादी की शिक्षा और पालन-पोषण का ही परिणाम है कि मैं कुछ हद तक साक्षर हो पाया और चित्रकला से थोड़ा-बहुत परिचित हो गया।" खेद भरी आह भरते हुए उन्होंने कहा, "वे लोग कितने अद्भुत थे! ईश्वर का नाम अमर है।"
मैंने हिम्मत जुटाकर पूछा, 'और आप वज़ीर खानम नाम की महिला के बारे में क्या सोचते हैं...?'
'केवल ईश्वर ही दोषरहित हैं!' उन्होंने विस्मय से कहा और इस वाक्य को दोहराया। 'ऐसी गरिमा, ऐसी गंभीरता, ऐसी शालीनता और ऐसी गरिमा वाली महिला! और वास्तव में, मैं उनसे संबंधित कुछ चीजों की तलाश कर रहा हूँ।'
'यह तो वाकई बहुत अच्छा है। लेकिन महोदय, आपके हाथों में यह नक्शा क्या है?'
'नक्शा?' वह खुशी से हँसा, लेकिन उसकी हँसी खाँसी में बदल गई। खाँसी के लंबे दौर से उसका चेहरा खतरनाक रूप से लाल हो गया। मैं बेबस होकर देखता रहा। उसने अपनी जेब से एक छोटी सी धातु की नली निकाली और गहरी साँस लेने की कोशिश करते हुए, दवा को अपने गले में छिड़का। उसने कुछ नाजुक सेकंड के लिए अपनी साँस रोकी और फिर उसे बाहर निकाल दिया। थोड़ी देर बाद, जब वह थोड़ा बेहतर महसूस करने लगा और दिखने लगा, तो उसने कहा, 'जी महोदय, यह मुंबई का नक्शा है, जो 1694 का है। जाहिर है, तब से शहर काफी आगे बढ़ चुका है।'
'जी हां,' मैंने कहा। 'लेकिन यह स्पष्ट है कि ऐतिहासिक और कानूनी दस्तावेज के रूप में इस मानचित्र का बहुत महत्व है। और संयोगवश, इस समय मेरी रुचि किसी ऐसी चीज में है जिसका मुंबई से संबंध है।'
'क्या सच में?' वह मुस्कुराया। 'ठीक है, तो चलिए नक्शा अभी खरीद लेते हैं। बाकी बातों पर बाद में चर्चा कर लेंगे।' उसने तुरंत 160 पाउंड में नक्शा खरीद लिया।
सौहार्दपूर्ण बातचीत करते हुए हम पिमलिको जिले की ओर चल पड़े, जहाँ उनकी किसी से मुलाकात थी। बातचीत के दौरान हम एक-दूसरे के बारे में और अधिक जानने लगे। पुराने परिवारों के वंशावली विशेषज्ञ होने के नाते, मुझे भी प्राचीन पुस्तकों और पुराने कानूनी दस्तावेजों में रुचि थी। वे पांडुलिपियों के व्याख्याकार, पुरातत्वविद और पूर्व-आधुनिक भारत-मुस्लिम चित्रों के विशेषज्ञ थे। पुराने चित्र, पुस्तकें, दस्तावेज, पांडुलिपियाँ उनके लिए जीवन-यापन का साधन थीं। उन्हें बहुत सी कविताएँ याद थीं, लेकिन उन्होंने मुहम्मद इकबाल (1877-1938) के बाद किसी भी उर्दू कवि को नहीं पढ़ा था। उन्हें कथा साहित्य में कोई रुचि नहीं थी, लेकिन उन्होंने कुर्रतुलैन हैदर (1926-2007) की लंबी कथाएँ पढ़ी थीं, विशेष रूप से उनकी 'कर-ए-जहाँ दराज़ है' (दुनिया का काम बहुत लंबा है), और एक पेशेवर पुरातत्वविद के रूप में उन्हें अपने लिए उपयोगी मानते थे।
एक सुविधाजनक स्थान पर पहुँचने के बाद, उन्होंने पारंपरिक भारतीय-मुस्लिम हाथ मिलाने के

लिए अपने दोनों हाथ मेरी ओर बढ़ाए और कहा, 'अब और परेशान मत होइए। मैं यहीं बगल वाली गली में बाईं ओर मुड़कर आसानी से अपने दोस्त के घर पहुँच जाऊँगा। हम कल फिर मिलेंगे।'

मुझे चिंता थी कि कहीं उसकी खांसी उसे फिर से परेशान न कर दे, लेकिन उसने इस विचार को सिरे से खारिज कर दिया और कहा, 'वाह, आप तो बड़े ही मजाकिया हैं! एक मामूली खांसी को लेकर परेशान हो रहे हैं! अलविदा।'

वह बाईं ओर वाली गली की तरफ मुड़ा। अचानक वह रुका और बोला, 'क्या आपको अरबी में "खांसी" को कहते हैं?'

'नहीं, माफ कीजिए। मुझे अरबी का बहुत कम ज्ञान है।'

'वेश्या,' उसने मुस्कुराते हुए कहा।

मैं असमंजस में पड़ गया। क्या वह इशारा कर रहा था कि मैं किसी गुजरती हुई महिला को देखूं?

'माफ़ कीजिए, मुझे समझ नहीं आया।'

उसने हंसने की कोशिश की, लेकिन फिर से खांसने लगा। काफी देर तक खांसता रहा, हालांकि इस बार उसने अपने दोनों हाथ सीने पर रखे हुए थे। जब खांसी थोड़ी कम हुई, तो वह फिर मुस्कुराया और बोला, 'दरअसल, इसी खांसने की वजह से मुझे यह बात याद आई। पुराने अरब में, वेश्याएं ग्राहकों का ध्यान खींचने के लिए धीरे से खांसती और गला साफ करती थीं। अरबी में इस क्रिया को क़हाबा कहते हैं, इसलिए इस शब्द का अर्थ वेश्या भी हो गया।'

'कितनी दिलचस्प जानकारी है!' मैं हँसते हुए बोला। 'भाषा वाकई एक अद्भुत चीज़ है। अमेरिकी अंग्रेज़ी में "स्ट्रीटवॉकर" के लिए एक शब्द "हुकर" है। मुझे लगता है कि उस शब्द का भी कोई ऐतिहासिक मूल ज़रूर होगा। लेकिन, महोदय, आपको अपनी खांसी का इलाज जल्दी करवाना चाहिए। आपकी उम्र में ऐसी चीज़ों को नज़रअंदाज़ करना बिल्कुल भी ठीक नहीं है।'

उसके चेहरे पर एक अजीब सी उदासी छा गई। 'इलाज? जी... जी, मेरा इलाज होता है।' वह उदास मुस्कान के साथ बोला, 'लेकिन एक वेश्या अपना धंधा क्यों छोड़ेगी? अलविदा।' वह गली में मुड़ा और देखते ही देखते ओझल हो गया।

अगले दिन उन्होंने मुझे ढूंढने और अपने पसंदीदा कोर्ट रेस्टोरेंट में दोपहर के भोजन के लिए ले जाने की जहमत उठाई।

उन्होंने कहा, 'क्या आपको पता है कि वर्जीनिया वुल्फ ब्रिटिश संग्रहालय में काम करने के दिनों में यहाँ दोपहर का भोजन किया करती थीं?' और उन्होंने आगे कहा, 'उन्होंने अपनी छोटी सी किताब, 'ए रूम ऑफ वन ओन' में इसका जिक्र किया है।'

वसीम जाफर का दिमाग बड़े संग्रहालयों के भंडारगृहों जैसा था, जहाँ कुछ कारणों से प्रदर्शित न की जाने वाली वस्तुएँ रखी जाती हैं। ऐसे कमरे अप्रत्याशित, विचित्र और दुर्लभ वस्तुओं से भरे होते हैं।

महान वसीम जाफ़र के पास भी रोचक जानकारियों का भंडार था। वे मुझे शर्मीला और अंतर्मुखी समझते थे, ऐसा व्यक्ति जो समाज में ज्यादा दिखना नहीं चाहता था। एक बार जब हम रॉयल सोसाइटी के सामने से गुजर रहे थे, तो उन्होंने मुझसे कहा कि अत्यधिक शर्म और एकांत में रहने

की चाहत साहित्यिक या वैज्ञानिक क्षेत्र में उच्च उपलब्धि दिला सकती है। उन्होंने मुझे हेनरी कैवेंडिश के बारे में बताया, जो हद से ज्यादा शर्मीले थे: वे अपनी घरेलू सहायिका से भी सामान्य बातचीत नहीं कर पाते थे। वे और उनकी गृहणी दिनभर में कई बार एक-दूसरे को चिट्ठियाँ लिखकर घर का काम संभालते थे। वे आमतौर पर गृहणी के सवालों का जवाब संक्षिप्त शब्दों में देते थे, जैसे 'हाँ', 'नहीं', 'रहने दो'। फिर भी, कैवेंडिश ने कई वैज्ञानिक खोजें कीं जो अपने समय से सदियों आगे थीं। घर में एकांत में बैठकर, एक साधारण मशीन, कुछ आदिम उपकरणों और कलम और कागज की सहायता से, कैवेंडिश ने पृथ्वी के वजन की गणना इतनी सटीकता से की कि उनका परिणाम आधुनिक प्रयोगशालाओं में सबसे नाजुक और सूक्ष्म उपकरणों की सहायता से प्राप्त वजन से एक प्रतिशत से भी कम भिन्न था।
“तो, मेरे प्यारे खलील, यह हमारे बड़ों की कोई मनगढ़ंत कहावत नहीं थी कि शर्मीला व्यक्ति अपना सारा सौभाग्य खो देता है,” उन्होंने कहा। “वास्तविक आवश्यकता तो अपने कर्मों पर लज्जा महसूस करते रहना है।” उन्होंने अचानक विषय बदल दिया। “अभी हाल ही में, मैं लॉर्ड लेक और महारावल बख्तावर सिंह के बीच के कागजात और पत्राचार देख रहा था। महारावल ने कुछ बेहतरीन चित्रकारों को काम पर रखा था। मैं उनके द्वारा बनाए गए चित्रों की तलाश कर रहा हूँ।”
उन्हें खांसी का एक भयंकर दौरा पड़ा। इससे उनका कमजोर शरीर कांपने लगा और वे मजबूर होकर सड़क किनारे एक दुकान की निचली सीढ़ी पर बैठ गए।

लगातार खांसी और इस तरह की कर्कश आवाज के साथ-साथ सांस लेने में तकलीफ उनके लिए बिल्कुल भी अच्छा संकेत नहीं थी। बात बदलने और खांसी से हो रही परेशानी से उनका ध्यान हटाने की कोशिश करते हुए मैंने कहा, 'लेकिन महोदय, क्या आप नवाब अहमद बख्श खान और वज़ीर खानम से संबंधित कुछ चीजों की तलाश नहीं कर रहे थे? और क्या ग़ालिब ने यह नहीं कहा था कि खुद से शर्म महसूस करना भी एक तरह का नखरा है? वज़ीर खानम आपकी सलाह के लिए एक उपयुक्त विषय होतीं, है ना?'
खांसी ने उन्हें फिर से घेर लिया, लेकिन इस बार पहले से कम तीव्र थी। उन्होंने एक रुमाल से अपना मुंह पोंछा, एक पल के लिए रुके और बोले, “जी हां, मेरे प्यारे नौजवान, हम जैसे लोग जो टीवी और इंटरनेट की संस्कृति में पले-बढ़े हैं, वे नखरे और नज़ाकत जैसी नाजुक और सूक्ष्म बातों को कैसे समझ सकते हैं? लेकिन नौजवान, मेरा मतलब यह था कि हमें वास्तव में अपने कुकर्मों, अपने बुरे कर्मों के बारे में कुछ समझ विकसित करने की ज़रूरत है...”
मैंने गौर किया कि बंगाली में, और भोजपुरी जैसी कुछ उत्तर भारतीय भाषाओं में, 'कुकुर' का अर्थ 'कुत्ता' होता है। मैं लगभग हंसते-हंसते लोटपोट हो गया। 'कुकरम, कितना बढ़िया शब्द है! ये विचार तुम्हें कैसे आया? इसे सुनकर तो एक सामान्य और पूर्ण विकसित इंसान भी खुद को कुत्ता समझ लेगा।'
‘खैर, यही तो इस शब्द की खूबसूरती है,’ उन्होंने मुस्कुराते हुए कहा। ‘क्या ऑडेन ने ही ‘द डॉग बिनीथ द स्किन’ नाम का नाटक नहीं लिखा था? तो क्या यह बिल्कुल सही नहीं था?’

जी हां, मशहूर आधुनिक उर्दू कवि स्वर्गीय अमीक हनफी ने भी अपनी एक कविता में लिखा था, "कोई मेरे भीतर भौंकने वाले कुत्ते को काबू में करे।"
‘मुझे नहीं पता कि ये श्री अमीक हनफी कौन थे, लेकिन उन्होंने बिल्कुल सही कहा। तो देखिए, यह शब्द कितना उपयोगी है। लेकिन मेरे प्रिय महोदय, मैं आपको सच बताता हूँ: अगर हम अपनी गलतियों के प्रति सचेत हो जाएँ तो—’
‘तब हमारी नजरों में किसी को दोष देने वाला कोई नहीं होगा।’ मैंने दिल्ली के अंतिम सम्राट बहादुर शाह जफर की एक प्रसिद्ध कविता का अंश उद्धृत किया।
नहीं, नहीं, कभी नहीं। बिलकुल नहीं। हम सब बुरे हैं, लेकिन हममें से कुछ लोग अपनी बुराई को अच्छाई समझते हैं। विलियम फ्रेजर को ही ले लीजिए, वह हर तरह से एक भारतीय की तरह इतराता फिरता था। फिर भी वह नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान और वज़ीर खानम के प्रेम प्रसंग को सहन नहीं कर सका। और नवाब, जिसका दिल नफरत से भरा हुआ था, उसने अपने भाई-बहनों को कभी माफ नहीं किया क्योंकि उनकी मां ने उसकी अपनी मां के साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया था।
और वज़ीर खानम, आपकी पूर्वज?
'ओह, वह बहुत जटिल व्यक्तित्व वाली और बहादुर भी थीं। मैं उनका चित्र बनवाने के लिए बेताब हूं। अगर मैं देख सकूं कि वह कैसी दिखती थीं, तो शायद मैं उन्हें बेहतर समझ पाऊं।'

अब हम अक्सर चाय या दोपहर के भोजन पर मिलने लगे। उन्हें वज़ीर खानम, मार्स्टन ब्लेक, नवाब अहमद बख्श खान, बहादुर शाह के अंतिम मान्यता प्राप्त उत्तराधिकारी मिर्ज़ा फथुल मुल्क बहादुर और उन खतरनाक समय के कई अन्य लोगों के बारे में काफी कुछ छुपी-छुपी बातें पता थीं। उन्होंने मुझे मार्स्टन ब्लेक की मृत्यु की सारी परिस्थितियाँ विस्तार से बताईं।
जब मैंने इस बात पर हैरानी जताई कि उन्नीसवीं सदी के आरंभिक काल में अंग्रेजों के कठोर शासन के विरुद्ध ऐसे ‘राजद्रोह’ के कृत्य और घटनाएँ कैसे हो सकती थीं, तो उन्होंने मेरी गलतफहमी दूर करते हुए बताया कि 1800 से 1857 के बीच कई ऐसे अवसर आए जब भारतीयों ने अपने फिरंगी आकाओं के विरुद्ध सशस्त्र कार्रवाई की और हर बार उन्हें भारी जानमाल का नुकसान पहुँचाया। उन्होंने विशेष रूप से बरेली और बनारस की घटनाओं का उल्लेख किया। बनारस में शाह आलम द्वितीय के निर्वासित पुत्र जहाँदर शाह थे, जो अपार प्रतिभा और क्षमता से परिपूर्ण थे। उन्होंने वास्तव में एक अंग्रेज अधिकारी पर गोली चलाई और उसे गंभीर रूप से घायल कर दिया। एक अन्य मुगल राजकुमार, जहाँगीर बख्त ने भी अपने साथ दुर्व्यवहार करने वाले एक अंग्रेज अधिकारी पर क्रोधित होकर गोली चलाई और दंडात्मक उपाय के रूप में उन्हें इलाहाबाद निर्वासित कर दिया गया।
वसीम जाफर ने कहा, “सैयद अहमद खान ने अपने पर्चे में बिजनौर के 1857 के विद्रोह के बारे में जो कहा था, उसमें कुछ सच्चाई थी। सैयद अहमद खान ने कहा था कि भारतीयों के दिलों में बहुत गुस्सा और आक्रोश था क्योंकि अंग्रेजों ने भारतीयों को बराबरी का दर्जा देने के बजाय, उन्हें इंसान तक नहीं समझा। बहुत बाद में बनारस में एक भोज में उनके बेटे सैयद महमूद ने अपने

भाषण में इस बात को आश्चर्यजनक और अप्रत्याशित तरीके से व्यक्त किया। उन्होंने अंग्रेजों की इस धारणा को खारिज कर दिया कि भारतीय अंग्रेज शासक की प्रजा थे; इसके विपरीत, उन्होंने कहा कि भारतीय और अंग्रेज, एक ही संप्रभु, महारानी की प्रजा होने के नाते, सभी समान थे, और हमारे अधिकार और कर्तव्य एक समान हैं।"
मैंने कहा, 'खैर, उन दिनों में यह कहना वाकई एक साहसिक और अद्भुत बात थी। दरअसल, सैयद महमूद का विचार बेहद ही नया था। तो अंग्रेजों ने इस पर कैसी प्रतिक्रिया दी?'
"मेरे बेटे, अंग्रेज लोग बड़े ही चतुर होते हैं। यह अवसर सैयद अहमद खान द्वारा श्री शेक्सपियर के सम्मान में आयोजित भोज का था, जो बिजनौर में उनके पूर्व जिला मजिस्ट्रेट और अब बनारस में उनके आयुक्त थे। शहर के सभी संभ्रांत लोग उपस्थित थे। सैयद महमूद के भाषण को हल्के-फुल्के दोपहर के भाषण के रूप में खारिज कर दिया गया। और बेचारे आयुक्त क्या कर सकते थे? सैयद महमूद कभी भी सरकार के सामने अपने दावे पेश नहीं कर सकते थे। अगर उन्होंने ऐसा किया होता, तो उन्हें सेवा से बर्खास्त कर दिया जाता।"

वह अपनी हमेशा की तरह कर्कश हंसी हंसा, जो जल्दी ही खांसी के एक और दौर में बदल गई। आखिरकार, वसीम जाफर ने मुझे पोर्टोबेलो रोड स्थित अपने फ्लैट में रात के खाने पर आमंत्रित किया। यह कोई बहुत फैशनेबल इलाका नहीं था, और उनका फ्लैट एक काफी पुरानी इमारत की तीसरी मंजिल पर था जिसमें लिफ्ट की सुविधा नहीं थी। फ्लैट तक पहुंचने के लिए पुराने जमाने की संकरी सीढ़ियाँ चढ़नी पड़ती थीं। मुझे आश्चर्य होता था कि वसीम दिन-रात कितनी बार उन सीढ़ियों से कैसे चढ़ते-उतरते होंगे।
जैसे ही मैं अंदर गया, मुझे तुरंत एहसास हुआ कि वह उस साधारण से मोहल्ले में एक अपेक्षाकृत असुविधाजनक फ्लैट में रहता था क्योंकि वह बेहतर फ्लैट नहीं खरीद सकता था, और इसका कारण गरीबी नहीं, बल्कि उसका संग्रह करने का जुनून या कहें कि सनक थी। उसका दो कमरों का फ्लैट प्राचीन वस्तुओं से भरा पड़ा था: नक्शे, पेंटिंग, किताबें, पांडुलिपियाँ, कांच के बर्तन... और भी बहुत कुछ। और पोर्टोबेलो रोड में रहने का एक और कारण था: वहाँ मौजूद उचित मूल्य वाली प्राचीन वस्तुओं की दुकानें। इस प्रकार, वहाँ से उसकी संग्रह की लालसा को पूरा करने के लिए पर्याप्त वस्तुएँ उपलब्ध थीं। फ्लैट में मैंने जो भी वस्तु उठाई, वह या तो अनोखी थी या निश्चित रूप से अपनी श्रेणी में दुर्लभ थी।
मेरे फ्लैट के अंदर रखी चीजों को देखकर मेरी उत्सुकता और आश्चर्य को देखकर वह हल्के से मुस्कुराया और बोला, 'मैंने आपको यहां एक खास वजह से परेशान किया है।'
'ओह, तो आप मुझे खाना नहीं खिलाएंगे?' मैंने एक कमजोर मजाक करने की कोशिश करते हुए कहा।
हम भोजन करेंगे; ज़रूर करेंगे, महोदय। लेकिन मुझे बताइए, क्या आपने मुहम्मद इब्राहिम ज़ौक़ (1788-1854) की कविताओं का संग्रह पढ़ा है, जिसका संपादन उनके शिष्य मुहम्मद हुसैन आज़ाद (1831-1910) ने किया है?
'नहीं, मुझे ऐसा नहीं लगता,' मैंने कुछ सोचने के बाद जवाब दिया। 'मैंने ज़ौक़ को इधर-उधर से

ज़रूर पढ़ा है, लेकिन मौलाना मुहम्मद हुसैन आज़ाद द्वारा संपादित 'संग्रहित रचनाएँ'? नहीं, मुझे लगता है मैंने उस पर नज़र भी नहीं डाली है; वह अब काफ़ी दुर्लभ होगी। टी.ए. अलावी द्वारा संपादित 'संग्रह' तो बेशक मुफ़्त में उपलब्ध है।'
"अगर तुमने उस पर नज़र नहीं डाली तो तुमने अच्छा किया।" अचानक, उसका चेहरा नाखुशी से लाल और तप उठा, मानो उसे बुखार हो गया हो।
मैंने हमेशा उन्हें शांत स्वभाव का पाया था, जो अप्रिय लगने वाली बातों पर तीखी प्रतिक्रिया नहीं देते थे। उनके इस अचानक और बिना किसी स्पष्ट कारण के गुस्से के outburst से मैं असहज महसूस कर रही थी। मैंने बात को हंसकर टालने की कोशिश की। 'ठीक है, तो हम इस बात को यहीं छोड़ देते हैं। मुझे डर था कि अगर मैंने वह किताब नहीं पढ़ी होती, तो आप मुझे खाना न देकर सजा देते।'

उसने अपने गुस्से को काबू में रखने की पूरी कोशिश की। 'नहीं, ऐसा कुछ नहीं है। ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे किसी को रात के खाने से वंचित होना पड़े... लेकिन जिसने यह लिखा है उसने ईमानदारी और न्याय का जरा भी ध्यान नहीं रखा।'
मैं थोड़ा हैरान था। मुझे चुप देखकर वसीम जाफर का गुस्सा थोड़ा शांत हुआ। उन्होंने कहा, 'देखो, इस पन्ने पर मुहम्मद हुसैन आजाद ने इतना घिनौना पूर्वाग्रह और अन्याय किया है।'
'खैर... मैंने किताब नहीं पढ़ी है, लेकिन मुझे नहीं लगता कि आज़ाद, जो ज़ौक़ को लगभग अपना आदर्श मानते थे, ने उनके बारे में कुछ बुरा या अपमानजनक कहा होगा।'
"हाँ, वह ज़ौक़ से इतना प्रेम करता था कि मानो वह मूर्तिपूजा की हद तक पहुँच गया हो," उसने उत्तेजित होकर कहा, "लेकिन मैं ज़ौक़ के बारे में आज़ाद की बात नहीं कर रहा हूँ। आज़ाद को न तो बादशाह से कोई प्रेम था, न ही मिर्ज़ा फ़तहुल मुल्क से, और न ही शौकत महल से!"
उनका चेहरा फिर से लाल हो गया था, उनकी सांसें तेज और छोटी हो गई थीं। मुझे समझ नहीं आ रहा था कि मैं क्या कहूँ या क्या करूँ। यह शौकत महल, जो देखने में एक महिला लग रही थी, कौन हो सकती है, इसका मुझे जरा भी अंदाजा नहीं था। न ही मुझे पता था कि वसीम जाफर को अक्सर ऐसे दौरे पड़ते थे या यह दौरा सिर्फ आज ही हुआ था। न ही मुझे यह पता था कि उनका डॉक्टर या राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा अस्पताल कहाँ स्थित है। क्या इस समय डॉक्टर को बुलाना उचित होगा? मैं घबराने लगी थी। मुझे वसीम जाफर के स्वास्थ्य के बारे में कुछ भी पता नहीं था, और मैं नहीं चाहती थी कि मेरी देखरेख में उनकी मृत्यु हो जाए। वे निश्चित रूप से बीमार लग रहे थे, लेकिन एक सेवानिवृत्त नेत्र रोग विशेषज्ञ होने के नाते मुझे उनका रक्तचाप मापना भी नहीं आता था। घबराई हुई और असमंजस में, मैंने फ्रिज से पानी की बोतल निकाली और उन्हें एक गिलास पानी दिया।
मैंने उससे कोमल और स्नेहपूर्ण स्वर में कहा, 'आओ, पहले थोड़ा पानी पी लो। आगे बात करने से पहले अपनी सांसों को सामान्य होने दो।'
उसने रुंधे हुए स्वर में मुझे धन्यवाद दिया। एक-दो घूंट पानी पीने के बाद वह थोड़ा शांत हुआ। वह कुछ मिनटों तक चुपचाप और स्थिर बैठा रहा, हालांकि उसके चेहरे के भाव से साफ पता चल रहा

था कि वह अभी भी सामान्य नहीं है: वह बेचैन और विचलित लग रहा था।
कुछ मिनट बीत गए; हम दोनों चुप रहे। फिर उसने गहरी सांस ली और अपने चेहरे और आंखों को हाथों से ज़ोर से रगड़ा, मानो वह अभी-अभी जागा हो। फिर उसने बचा हुआ सारा पानी एक ही घूंट में पी लिया और अपनी सामान्य आवाज़ में बोला, 'खलील असगर, चोरी के बारे में आपकी क्या राय है?'
मुझे समझ नहीं आ रहा था कि क्या कहूँ, और शायद मैं अपनी उलझन में कुछ अनुचित कह देता। सौभाग्य से, उन्होंने उसी सामान्य स्वर में बोलना जारी रखा, 'मेरा मतलब है, चोरी के बारे में आपका नैतिक और कानूनी दृष्टिकोण क्या है?'
मुझे अपमानित और प्रताड़ित महसूस हुआ। मैं इस पर क्या कहूँ? मैं उनके यहाँ भोजन के लिए मेहमान था, लेकिन वे मुझसे तरह-तरह की बेतुकी बातें कर रहे थे। मैंने सवाल को हँसी में उड़ाने की कोशिश की और हल्के-फुल्के अंदाज़ में कहा, 'खैर, महोदय, चोरी करना पाँच घातक पापों में से एक है, या सात घातक पापों में से एक है। लेकिन क्या आप इस पर कोई कानूनी राय प्रकाशित करने जा रहे हैं, या आपसे कुछ चोरी हो गया है?'
उनके चेहरे पर झुंझलाहट और झुंझलाहट साफ झलक रही थी, मानो उन्हें मेरे द्वारा उस मामले को हल्के में लेने का तरीका पसंद नहीं आया हो जो शायद उनके लिए महत्वपूर्ण था। या फिर शायद कुछ ऐसा था जो वे मुझे बताना चाहते थे, लेकिन वह बात उन्हें बेहद परेशान कर रही थी और उनके पास मुझे बताने के अलावा कोई विकल्प नहीं था?
‘देखो,’ उनका लहजा एक शिक्षक जैसा था जो किसी बच्चे या मंदबुद्धि व्यक्ति को कुछ समझा रहा हो, ‘मान लो कि किसी ने तुम्हारी कोई चीज चुरा ली है, समझ रहे हो ना, क्या तुम्हें अपनी संपत्ति वापस लेने का अधिकार नहीं होगा?’
‘अच्छा, क्या यह एक काल्पनिक मुद्दा नहीं है?’ अचानक, मैं लगभग हकलाने लगा, मेरे पास शब्द नहीं थे। ‘मेरा मतलब है कि, उह... जिसे अंग्रेजी में काल्पनिक कहा जाता है...’
मुझे उसके सवाल का जवाब देने से बचने या मना करने में डर लग रहा था। मुझे डर था कि इससे उसका गुस्सा या खांसी, या दोनों फिर से भड़क सकते हैं। लेकिन उसका सवाल अस्पष्ट था, बल्कि पूरी तरह से अनिश्चित था। मैं तय नहीं कर पा रहा था कि मेरा सबसे अच्छा जवाब क्या हो सकता है, जो न तो उपदेशात्मक लगे और न ही टालमटोल भरा।
वह फिर चुप हो गया। फिर उसने दृढ़ता से कहा, मानो उसने कोई निर्णय ले लिया हो। 'मुझे बताइए, क्या ब्रिटिश लाइब्रेरी या वी एंड ए के पास मौजूद संग्रहों का एक बड़ा हिस्सा कानूनी तौर पर भारत या जिसे अब दक्षिण एशिया कहा जाता है, से संबंधित नहीं है?'
‘निस्संदेह। जरूरी नहीं कि किसी विशेष व्यक्ति से संबंधित हो, लेकिन यह निश्चित रूप से भारत या दक्षिण एशिया के लोगों से संबंधित है।’
उन्होंने कहा, 'अच्छा, और क्या यही स्थिति अन्य समान संपत्तियों की भी है जो विभिन्न संग्रहालयों, निजी घरों और बकिंघम पैलेस में मौजूद हैं?'
'हां, निःसंदेह। लेकिन संपत्ति का कुछ हिस्सा वर्तमान मालिकों को उपहार के रूप में भी दिया गया होगा।'

‘निस्संदेह,’ उन्होंने मेरे शब्दों को दोहराया, लेकिन उनकी आवाज़ में कोई व्यंग्य नहीं था। ‘मैं स्वेच्छा से वह सब कुछ लौटाने को तैयार हूँ जो मुझे उपहार के रूप में दिया गया था, और बिना किसी दबाव के। लेकिन आप उन मूल्यवान वस्तुओं के बारे में कैसे निर्णय लेंगे जो रिश्वत के रूप में दी गई हों, या किसी का पक्ष जीतने के लिए दी गई हों, या लूटी गई हों, या किसी अत्याचारी कानून के तहत जब्त की गई हों?’

मुझे अस्पष्ट रूप से यह समझ आ रहा था कि चर्चा किस दिशा में जा रही है। लेकिन इसका उद्देश्य क्या था? मैंने बहुत सोच-विचार के बाद धीरे-धीरे कहा, 'यदि उस संपत्ति का कोई कानूनी रूप से सही और वैध उत्तराधिकारी सामने आता है, तो... मेरा मानना है कि वह उस संपत्ति की वापसी के लिए मुकदमा कर सकता है।'

लेकिन अगर मुकदमे के सफल होने की कोई उम्मीद ही न हो तो?

‘अच्छा...क्या मुकदमेबाज के लिए कानूनी सहारा लेना ही एकमात्र रास्ता नहीं है?’

‘क्यों? कोई दूसरा कोर्स क्यों उपलब्ध नहीं है?’

‘अच्छा, फिर और क्या विकल्प है? क्या दावेदार को जाकर उसे बलपूर्वक छीन लेना चाहिए? और बलपूर्वक छीनना, क्या यह उसके बस में है?’

नहीं, यह बलपूर्वक छीनने का मामला नहीं है।

‘श्री वसीम जाफर, महोदय, कृपया पहेलियों में बात न करें। मैं पहले से ही घुटन और उत्पीड़न महसूस कर रहा हूँ।’ मैंने यह बात कुछ तीखेपन और दबी हुई नाराज़गी के साथ कही, हालाँकि मुझे आशंका थी कि वसीम जाफर फिर से नाराज़ हो जाएँगे।

लेकिन वह थोड़ी देर के लिए फिर चुप हो गया, और फिर बोला, 'आप जानते हैं कि वज़ीर खानम मेरी परदादी थीं और मैं उनके जीवन की परिस्थितियों पर शोध कर रहा हूँ?'

'हां। और आप विशेष रूप से उनका चित्र ढूंढ रहे हैं, यदि कोई हो तो।'

'मुहम्मद हुसैन आजाद उसी ज़ौक़ की रचनाओं के संग्रह में एक चित्र का जिक्र करते हैं, जिसके बारे में मैंने अभी आपसे बात की थी।'

‘अरे वाह! मुझे तो पता ही नहीं था।’

'मुझे वह चित्र मिल गया है,' उसने धीमी, लगभग दबी हुई आवाज में कहा।

‘हे भगवान! क्या सच में?’ मैं लगभग अपनी कुर्सी से उछल पड़ा। ‘तो फिर इतिहास और साहित्य दोनों ही दृष्टि से इसकी कीमत बहुत अधिक होगी! मैं आपकी सफलता की प्रशंसा करता हूँ। यह वास्तव में एक अद्भुत उपलब्धि है!’

‘वज़ीर खानम के इकलौते जीवित पुरुष उत्तराधिकारी के रूप में, मैं उस चित्र का कानूनी स्वामी हूँ।’ उनकी आवाज़ अब और भी कर्कश लग रही थी।

लेकिन वह चित्र कहाँ है? क्या उसका वर्तमान मालिक उसे आपको बेच देगा?

‘आखिर वो ऐसा क्यों करेगा? क्या ब्रिटिश सरकार ने अब्दुल हामिद लाहोरी का बादशाहनामा लौटाया था?’

मुझे पता था कि बादशाह नामा मुगल सम्राट शाहजहाँ (शासनकाल 1627-1658) का प्रसिद्ध इतिहास है, जो दुनिया की सबसे भव्य रूप से अलंकृत पांडुलिपियों में से एक है, जिसे 1654 में

लाहौरी की मृत्यु के बाद उनके एक शिष्य ने पूरा किया था। इसे अवध के एक शासक द्वारा ईस्ट इंडिया कंपनी के एक अधिकारी को भेंट किया गया था।
उसने मेरी सोच को बीच में ही रोकते हुए लगभग गुस्से से चिल्लाते हुए कहा: 'क्या उन्होंने कोह-ए-नूर हीरा लौटा दिया?'
लेकिन उन चीजों की कीमत करोड़ों पाउंड स्टर्लिंग में है, रुपयों में नहीं। महोदय, यह तो महज़ एक चित्र है, और वह भी किसी रानी या राजकुमारी का नहीं। इसका वर्तमान मालिक इसे आपको मुफ्त में दे देगा, या ज़्यादा से ज़्यादा इसके लिए मोटी रकम वसूलेगा। क्या मैं गलत कह रहा हूँ?
मैं मानता हूं कि हम जिस चीज की बात कर रहे हैं वह कोई खजाना नहीं है। लेकिन यह देश ऐसी चीजों को नजरअंदाज करने वाला नहीं है।
'क्या मैं यह समझूं कि आपका मतलब यह है कि वह चित्र ब्रिटिश सरकार के पास है और आप उसे मांगने की स्थिति में नहीं हैं या इच्छुक नहीं हैं?'
'खैर, वास्तव में दोनों ही।'
मुझे लगभग आपा खो बैठा। 'माफ़ कीजिए, लेकिन आप टुकड़ों-टुकड़ों में क्यों बोल रहे हैं? अगर आपको मेरी सलाह चाहिए तो खुलकर क्यों नहीं बोलते?'
‘तुम कुछ नहीं कर सकते।’ उन्होंने शांत भाव से सोच-समझकर कहा। ‘लेकिन फिर भी सुनो। तुम्हें पता है मैं ब्रिटिश लाइब्रेरी में चीज़ें खोजता रहता हूँ। एक बार, बिल्कुल संयोग से मुझे लॉर्ड रॉबर्ट्स की डायरी के बारे में जानकारी मिली—वही लॉर्ड रॉबर्ट्स जिन्होंने ‘फोर्टी वन इयर्स इन इंडिया’ लिखी थी और जिन्होंने एक बार बहादुर शाह की रानी ज़ीनत महल के बारे में हद से ज़्यादा घमंड दिखाया था। उन्होंने अपनी किताब लिखने में अपनी डायरी का बहुत इस्तेमाल किया था। मुझे पता चला कि वह डायरी एबरडीन विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में दुर्लभ पांडुलिपियों के संग्रह में रखी है। अपने पुराने संपर्कों का इस्तेमाल करके मैंने डायरी तक पहुँच प्राप्त की। उसमें मुझे कई ऐसी बातें मिलीं जिनके बारे में उन्होंने अपनी किताब में नहीं लिखा था।’
‘अर्थात, लूटपाट और डकैती की घटनाएं?’
‘उनका भी जिक्र था, लेकिन उसमें बादशाह और फथुल मुल्क बहादुर के कुछ निजी कागजात भी थे जो कंपनी के सैनिकों को लाल किले और उसके कार्यालय पर हमले के दौरान मिले थे। उदाहरण के लिए, डायरी में फथुल मुल्क के दरबार की गतिविधियों का ब्यौरा था। इससे पहले मैंने किसी मामूली राजकुमार की डायरी के बारे में भी नहीं सुना था, अंतिम उत्तराधिकारी की तो बात ही छोड़िए। रॉबर्ट्स ने लिखा कि उन्होंने वे कागजात इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी एंड रिकॉर्ड्स में जमा करवा दिए हैं।’
मुझे सचमुच आश्चर्य है कि किसी और ने इसके बारे में कभी सोचा ही नहीं! आपकी खोज निश्चित रूप से बहुत महत्वपूर्ण है, लेकिन एबरडीन ही क्यों?
खैर, क्योंकि उनकी माँ स्कॉटिश थीं। फिर मैंने ब्रिटिश लाइब्रेरी में हर जगह खोजबीन की। मैंने हर संभव कैटलॉग, हैंडलिस्ट और वार्षिक रिपोर्ट देखी, लेकिन कहीं भी कुछ नहीं मिला। मैंने सारी उम्मीदें खो दी थीं, लेकिन तभी मुझे एक अप्रत्याशित स्रोत मिला। वह एक सेवानिवृत्त कर्मचारी

थे, एक सम्मानित बुजुर्ग सज्जन जो लगभग तीस साल पहले लाइब्रेरी से सेवानिवृत्त हुए थे। हम पुराने दिनों की बातें करने लगे, और जब मैंने उनसे रॉबर्ट्स के कागजात के बारे में पूछा, तो उन्होंने तुरंत मुझे बताया कि 1857 से संबंधित कागजातों का एक विशाल भंडार कैटलॉग में भी नहीं डाला गया था, क्योंकि उन्हें तत्काल महत्व का नहीं माना गया था। उन्होंने मुझे बताया कि वे कागजात तहखाने में बक्सों में रखे हुए थे।

'वास्तव में!'

'हां, विचार यह था कि उचित समय पर इन्हें सूचीबद्ध किया जाएगा ताकि उस समय के अधिक महत्वपूर्ण दस्तावेजों से निपटने के बाद इन्हें भी देखा जा सके। लेकिन ऐसा अवसर कभी नहीं आया।'

'कितना रोचक! यह सचमुच और भी अधिक रहस्यमय होता जा रहा है, मानो परिवार के इतिहास का कोई भूला हुआ हिस्सा हो।'

जी हाँ। लेकिन चलिए छोटी-मोटी बातों को छोड़ते हुए, मैं आपको अपनी कहानी का सार बताता हूँ। बहुत खोजबीन और कागज़ी झंझटों के बाद आखिरकार मुझे वे बक्से, या कहें कि लॉकर, मिल ही गए। कुल सात थे। हर बक्से में रखी चीज़ों की सूची कागज़ों के ऊपर करीने से रखी हुई थी। एक लॉकर में कुछ कानूनी कागज़ात और अन्य दस्तावेज़ थे...' वह रुका और फिर बोला, 'और साथ ही फथुल मुल्क बहादुर की संक्षिप्त पुस्तकें भी थीं...। कुछ और भी था।'

फिर से वह चुप हो गया, मानो आगे बोलना न चाहता हो। मेरी जिज्ञासा बढ़ गई। आखिर क्या हो सकता है? बादशाह की वसीयत, मिर्ज़ा इलाही बख्श के राजद्रोहपूर्ण आचरण के बारे में कुछ नए तथ्य, या फिर दिल्ली और आगरा के दो लाल किलों को जोड़ने वाली सुरंग के बारे में कोई पुख्ता जानकारी? किसी दबे हुए खजाने का सुराग? आखिर हो क्या सकता है?

'क्या मैं जान सकता हूँ कि वह क्या था, वह कुछ और?' मैंने धीरे-धीरे, उचित विरामों के साथ, ताकि उसे डरा न दूँ।

'जानते हो? तुम्हें इसके बारे में सिर्फ "जानने" की क्या जरूरत है? मैं तुम्हें दिखा दूंगा।'

वह उठा और अपना ब्रीफ़केस खोलकर उसमें से एक मोटा, कपड़े से लिपटा हुआ हल्के पीले रंग का लिफ़ाफ़ा निकाला, जैसा कि ब्रिटिश भारत में महत्वपूर्ण दस्तावेज़ों को सुरक्षित रखने के लिए आम तौर पर इस्तेमाल किया जाता था, और उसे मेरी ओर बढ़ाया। मैंने देखा कि उसके हाथ में एक स्पष्ट कंपन थी। लिफ़ाफ़ा सीलबंद नहीं था, इसलिए मैंने उसका फ्लैप खोला और उसमें से लगभग छह इंच लंबा और पाँच इंच चौड़ा एक मोटा कागज़ का टुकड़ा निकाला।

यह एक बेहद खूबसूरत महिला का चित्र था। वह लगभग पच्चीस वर्ष की थी, या शायद उससे भी कम। उसका रंग हल्का भूरा था—जैसा कि यूरोप और अमेरिका में 'हल्का भूरा' कहा जाता है—और चेहरा इतना तेजस्वी, इतना ताजगी भरा था, मानो उसे जलरंग से नहीं, बल्कि ताज़े खिले हुए आइरिस के रस से रंगा गया हो। उसकी नाक सीधी और कोमल थी, नथुने थोड़े से फैले हुए थे, मानो वह किसी हल्के-फुल्के मजाक का आनंद ले रही हो या कोई सूक्ष्म बात कहने वाली हो। यह पूरे चेहरे का चित्र था—जिसे बाद के मुगल और अन्य भारतीय चित्रकारों द्वारा 'दो आँखों वाला चित्र' कहा जाता था—डेढ़ शताब्दी से भी अधिक, शायद दो शताब्दी पुराना। उस समय की

चित्रकला के बिल्कुल विपरीत, चित्र में महिला को न केवल चित्रकार के प्रति, बल्कि चित्र पूरा होने पर उसे देखने वाले दर्शक के प्रति भी पूरी तरह सचेत दिखाया गया था। उसकी आँखें यौवन और कामुकता की ऐसी जीवंत चेतना से भरी थीं कि मेरी धड़कन तेज़ हो गई। ऐसा लग रहा था मानो चित्र में बनी आकृति अपनी आँखों से या भौंहों के हल्के से उठने से मुझसे कुछ कहना चाहती हो। लेकिन उसके चेहरे पर ज़रा भी अश्लीलता या कामुकता का भाव नहीं था। जब भी वह भाव प्रकट होता, तो मानो एक चुनौती होती, जैसे कह रही हो: क्या तुम ऐसी शरारती आँखों का सामना कर सकते हो? इस मोहक, पीड़ादायक चेहरे का?

एक परिपूर्ण तराशा हुआ चेहरा, असाधारण रूप से बड़ी आँखों से सुशोभित, लंबी पलकें पर्दे की तरह नीचे की ओर झुकी हुई नहीं थीं, बल्कि थोड़ी उठी हुई थीं, मानो नाजुक जालीदार बाँह के पर्दे हों। आँखें गहरे भूरे रंग की थीं जिनमें हल्के हरे रंग की झलक थी और सुनहरे धब्बे थे, जैसे गुड़हल के फूलों के रस से बना ठंडा पेय जिसमें कच्ची भारतीय चीनी मिलाई गई हो। पारंपरिक भारतीय सौंदर्य विशेषज्ञों के बीच इस रंग को शरबती कहा जाता है, जिससे अंग्रेजी शब्द 'शरबत' बना है। आँखों का सफेद भाग साफ और शीतल था, जैसे ताजा खिला हुआ बाज। गर्दन लंबी और नाजुक, हिरण जैसी, चमकते हुए हल्के हरे पन्ना रत्नों के नौ लड़ियों वाले हार से सजी थी, सभी रत्न आकार और बनावट में बिल्कुल एक जैसे थे। गर्दन से लेकर नीचे की ओर हल्की सी उभरी हुई दरार तक, आधे चने के आकार के पन्ना रत्न ही जड़े हुए थे। उनका हरा रंग एक भव्य दृश्य था जो आँखों में गहराई तक समा जाता था, उन्हें समाहित कर लेता था, जैसे ताजा उगे हुए घास के मैदान का रंग। सिर पर दुपट्टा नहीं था, जो सिर और छाती को ढकने वाला पारंपरिक हल्का स्कार्फ होता है। यह स्पष्ट था कि महिला को अपने सिर ढके न होने का पूरा एहसास था। बेहद हल्के कपड़े का आसमानी नीला दुपट्टा, जिसमें सुनहरे धागे की बारीक कढ़ाई थी, छाती और कंधों पर लापरवाही से लिपटा हुआ था, जो धड़ को अनायास ही ढक रहा था और साथ ही उसे उजागर भी कर रहा था। घने काले बाल एक मोटी और लंबी चोटी में बंधे थे, जो अंत में दो हिस्सों में बँट गई थी, और प्रत्येक चोटी में एक बड़ा भूरा मोती ऐसे ही लटका हुआ था मानो वह अभी-अभी वहाँ आ गिरा हो।

लेकिन, अफसोस की बात है कि चित्र अधूरा था; ऐसा इसलिए नहीं था कि चित्रकार ने इसे अधूरा छोड़ दिया था, बल्कि इसलिए कि इसका निचला आधा हिस्सा बेरहमी से फाड़ दिया गया था, जिससे चित्र का लगभग एक तिहाई हिस्सा नष्ट हो गया था।

मैंने फिर से रुक-रुक कर, हर शब्द को ध्यान से चुनते हुए कहा: 'यह... यह चित्र, क्या यह वज़ीर खानम का है? इसे किसने फाड़ा?' खुद को शांत रखने की कोशिश में, मैं अपनी घबराहट में अपने दूसरे प्रश्न की मूर्खता को समझ ही नहीं पाया।

वसीम जाफर ने कहा, 'पीछे लिखे शिलालेख को पढ़ो।' उनका चेहरा अब असामान्य रंग का था, गहरा और गर्म, मानो वे बीमार हों या दर्द में हों, और उनकी आवाज कांप रही थी।

मैंने कागज़ पलटा। उस पर शिकस्तह (जिसका अर्थ है घुंघराले अक्षरों से भरा हुआ) नामक फ़ारसी लिपि में एक छोटा सा लेख था, जो मुग़ल राजमंचों में प्रयुक्त लगभग अपठनीय लेखन शैली थी। शब्दों पर हल्के निशान थे, मानो किसी ने उन्हें मिटाने की कोशिश की हो। हालाँकि

लिखावट काफ़ी छोटी थी, फिर भी पुराने वंशावली वृक्षों और दस्तावेज़ों से परिचित होने के कारण मैं थोड़ी कोशिश करके उसे पढ़ सका। 'वज़ीर खानम साहब, जिन्हें छोटी बेगम के नाम से भी जाना जाता है, की सच्ची छवि। ईश्वर उनकी रक्षा करें।' इसके बाद एक तिथि लिखी थी, लेकिन मैं उसे पढ़ नहीं सका।

'बधाई हो, श्रीमान वसीम जाफर। आप अपने लक्ष्य में सफल हुए,' मैंने उत्साह से भरी आवाज़ में कहा। 'लेकिन... क्या आपको वह चित्र उन बक्सों में से किसी एक में मिला? अगर हाँ, तो फिर... आप उसे पुस्तकालय से बाहर कैसे निकाल पाए?'

'हाँ!' उसने कुछ ज़ोर और गुस्से के साथ कहा। 'मैंने इसे निकाल लिया। अब यह मेरा है!' उसके लहजे में एक चुनौती छिपी थी, मानो वह कह रहा हो: 'तो मैंने इसे निकाल लिया। अब तुम इसके बारे में क्या करोगे? क्या तुम पुस्तकालय को इसकी सूचना दोगे और मुझे मेरी खोज से वंचित कर दोगे?'

'लेकिन... ये सब कैसे मुमकिन हुआ?' मैंने विनम्रता से पूछा। मैं उन्हें ज़रा भी नाराज़ नहीं करना चाहता था, और वैसे भी इस मामले में नैतिकता का निरीक्षक बनने की मेरी कोई इच्छा नहीं थी। चाहे इसकी कानूनी स्थिति कुछ भी हो, यह चित्र वासिम जाफ़र का ही था।

'खैर, मेरे प्रिय खलील असगर,' उनका लहजा रहस्यमय और दोस्ताना था, 'असल बात यह है कि इस चित्र का कोई रिकॉर्ड नहीं है, कोई सूची नहीं है। उन बक्सों में रखी वस्तुओं की सूची नहीं बनाई गई है। प्रत्येक बक्से के साथ उसकी सामग्री की हस्तलिखित सूची का केवल एक प्रारंभिक मसौदा जमा है; यह चित्र उन अधूरी सूचियों में शामिल नहीं है। प्रत्येक सूची की एक प्रति निदेशक के कार्यालय में सुरक्षित रखी गई है। लेकिन मुझे पूरा यकीन है कि यह चित्र उसमें सूचीबद्ध नहीं है।'

वह रुका, शायद अपनी कहानी के अगले भाग पर जाने का कोई उपयुक्त तरीका सोच रहा था। मैंने एक शब्द भी नहीं कहा; मुझे डर था कि कहीं मैं कुछ ऐसा न कह दूं जिससे उस बुजुर्ग सज्जन को बुरा लग जाए, इसलिए मैं चुप रहा। एक-दो मिनट बाद उसने बोलना शुरू किया, उसकी बोलने की गति पहले से भी धीमी थी और आवाज़ और भी धीमी हो गई थी।

दरअसल, यह चित्र मिर्ज़ा फ़खरू के दरबार की डायरी के दो अलग-अलग पन्नों के बीच रखा हुआ था, ठीक उसी हालत में जैसा आप इसे अभी देख रहे हैं... शायद मैं ही वह पहला व्यक्ति हूँ जिसने उस डायरी के हर पन्ने को पलटकर ध्यान से देखा है। जब मेरी नज़र पहली बार उस चित्र पर पड़ी, तो मानो बिजली का झटका लगा। वज़ीर खानम के अलावा और कौन हो सकता था? हे भगवान! मुझे तो ऐसी किस्मत मिली! मैं तो कभी इतना भाग्यशाली नहीं हो सकता।

सांस फूलने के कारण वह फिर रुक गया। मुझे समझ नहीं आ रहा था कि क्या कहूँ, वह ऐसी अवस्था में था, मानो उसे कोई आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त हुआ हो।

'काफी देर तक मुझमें हिम्मत नहीं हुई कि मैं उस चित्र को पलट कर देखूँ और पहचान सकूँ कि वह किसका चित्र है। शायद वह वज़ीर खानम नहीं थे, शायद कोई और था, कोई भी... कौन जान सकता है? फिर, आँखें बंद करके, मैंने चित्र को बार-बार पलटा। फिर मैंने आँखें खोलीं... खैर, आपने चित्र के पीछे लिखा वह छोटा सा लेख तो पढ़ ही लिया होगा...'

अब मैं और क्या कहूँ? अचानक आए आवेग में आकर मैंने उस चित्र को अपनी जैकेट की अंदरूनी जेब में रख लिया। आप जानते ही हैं कि पुस्तकालय में कुछ भी लाना मना है: न ब्रीफकेस, न हैंडबैग और न ही पैकेट। सर्दियों के ओवरकोट हमेशा कोट रूम में जमा करने होते हैं। लेकिन मैंने तो बस एक साधारण जैकेट पहनी हुई थी, और वैसे भी वह एक छोटी सी तस्वीर थी, बिल्कुल अनजान और किसी को मुझ पर शक भी नहीं होता। उस दिन मैंने दिनचर्या से हटकर बस इतना किया कि तुरंत काम बंद कर दिया। मुझे जो भी सामान दिया गया था, उसे इकट्ठा करके और उसे करीने से शेल्फ पर वापस रखकर, मैं शांत, संयमित कदमों से बाहर निकल गया, हाथ जैकेट की आगे की जेबों में डाले हुए।

'सही दावेदार को उसका हक मिल गया!' मैंने एक बेहद मशहूर फारसी कहावत कही, जो उर्दू में भी काफी लोकप्रिय है।

उसने मेरी ओर ध्यान से देखा, मानो यह जानने की कोशिश कर रहा हो कि क्या मैं व्यंग्य कर रहा था।

'क्या सच में ऐसा है?' उसने तीखे स्वर में कहा। 'क्या आप सचमुच ऐसा सोचते हैं?'

क्योंकि मुझे इस बात का पूरा यकीन था कि पेंटिंग का नैतिक रूप से सही मालिक वही है, इसलिए मैंने गंभीरता से कहा, 'हाँ। मुझे पूरा यकीन है।' इसके बाद मैंने उतनी ही गंभीरता से प्रार्थना की, जो अक्सर खुशी के मौकों पर की जाती है, 'ईश्वर आपके लिए इसे शुभ बनाए!'

फिर से, उसने मुझे घूरकर देखा—वास्तव में, मानो गुस्से से घूर रहा हो। ऐसा लग रहा था मानो वह मुझे चेतावनी दे रहा हो कि उसे इस बात की ज़रा भी परवाह नहीं है कि मैं क्या मानता हूँ या क्या नहीं मानता। वह पेंटिंग उसकी संपत्ति थी, और हमेशा रहेगी।

'अब मुहम्मद हुसैन आजाद द्वारा संपादित ज़ौक़ के संकलित कार्यों पर एक नज़र डालिए,' उन्होंने कहा और मुझे एक कुछ धब्बेदार, मध्यम आकार की पुस्तक थमा दी।

तब तक मुझे बहुत भूख लग चुकी थी और मेरा दिमाग भी इतना उथल-पुथल में था कि मैं समझ ही नहीं पा रहा था कि मुझे क्या करना चाहिए। मैं एक मंदबुद्धि की तरह अवाक होकर उसे देखता रहा। तभी मुझे अचानक याद आया कि कुछ देर पहले उसने ज़ौक़ के 'संग्रहित रचनाएँ' और उसमें लिखी किसी ऐसी बात का ज़िक्र किया था जो उसे पसंद नहीं आई थी। जैसे ही मैंने उससे किताब लेने के लिए हाथ बढ़ाया, उसने मुझे पृष्ठ 2 की ओर इशारा किया। डॉ. फ़ारूक़ी, सेवानिवृत्त नेत्र रोग विशेषज्ञ और शौकिया वंशावली विशेषज्ञ, लंदन में वसीम जाफ़र से मिलते हैं और उनकी असाधारण खोज के बारे में जानते हैं।

उन्होंने कहा, 'मैंने वहां एक बुकमार्क लगा दिया है।'

मैंने पन्ना खोला और बढ़ते हुए घृणा, अरुचि और आश्चर्य के साथ निम्नलिखित शब्द पढ़े:

शहर में छोटी बेगम नाम की एक बेहद खूबसूरत महिला थी, जो अपनी कला में पूर्ण निपुण थी। उसके जीवन का चमकीला दोपहर का सूरज ढल रहा था। उसने दिल्ली के अनगिनत रईसों को मार डाला था और फिर भी वह जवानी के फूल तोड़ने का दिखावा कर रही थी। उस समय मिर्ज़ा फ़खरू [मिर्ज़ा गुलाम फ़खरुद्दीन फ़थुल मुल्क बहादुर] लगभग चौबीस या पच्चीस वर्ष के थे। उन्होंने एक वेश्या को काम पर रखा और खुद उसके गुलाम बन गए। मिर्ज़ा ने अपने निजी तिजोरी

से एक तस्वीर निकाली, उसे देखा और कहा, 'महान कवि ज़ौक़, ज़रा एक नज़र डालिए।' महान कवि तुरंत समझ गए कि यह उसी की तस्वीर है। तस्वीर पर एक नज़र डालते हुए उन्होंने कहा, 'बहुत सुंदर।' लेकिन मिर्ज़ा को यह पसंद नहीं आया। उन्होंने फिर कहा, 'ज़रूर एक नज़र डालिए।' अगर कोई प्रेमिका होती, तो क्या वह ऐसी नहीं होती?' उस्ताद अब समझ गए: उनका दिल उस स्त्री पर आ गया है और वे चाहते हैं कि मैं भी उस बुढ़िया की तारीफ करूँ। फिर भी, उन्होंने कहा, 'सुंदर, बहुत सुंदर!' लेकिन मिर्ज़ा इतनी हल्की-फुल्की तारीफ से संतुष्ट नहीं हुए। तीसरी बार उन्होंने चित्र उस्ताद के हाथों में दिया और कहा, 'अच्छा, उस्ताद, ज़रा देखिए। क्या आपको इसमें कोई कमी दिखती है?' उस्ताद ने ध्यान से देखा और कहा, 'स्तन थोड़े ढीले हैं।' उस्ताद कहा करते थे कि वे ऐसे शब्द कभी नहीं बोलते, लेकिन उनके दिल ने उन्हें ऐसा कहने के लिए मजबूर किया: वे तो बस एक लड़के हैं, एक वेश्या के जाल में फँस गए हैं। जो कहना है कहिए; शायद उन्हें कुछ समझ आ जाए।

मुझे मन कर रहा था कि मैं उस पन्ने को फाड़ दूं, टुकड़े-टुकड़े कर दूं और शौचालय में बहा दूं। लेकिन मुझे पता था कि ऐसा करना मूर्खतापूर्ण और घटिया होगा।

'मैं इस बात को मानने को तैयार नहीं हूँ। एक मुगल राजकुमार, और वो भी युवराज, कभी ऐसा व्यवहार नहीं करेगा, चाहे उसकी संपत्ति हज़ार गुना कम हो गई हो,' मैंने गुस्से से कहा। 'राजाओं के अपने नियम और सम्मान होते हैं। वे कभी किसी बाहरी व्यक्ति को अपनी महिलाओं पर नज़र डालने की इजाज़त नहीं देते, चाहे वो राजकुमार ही क्यों न हो, और एक मामूली कर्मचारी की तो बात ही छोड़िए, चाहे वो कविता का गुरु ही क्यों न हो। फिर,' मैंने थोड़ा धीमा होते हुए कहा, 'क्या गंभीरता और गरिमा अपने आप में कुछ मायने नहीं रखते? मुझे लगता है कि मुहम्मद हुसैन आज़ाद मिर्ज़ा फखरू और उनके सौतेले बेटे दाग़ के प्रति कुछ द्वेष रखते थे।'

'मैं इसे पूरी तरह से खारिज नहीं करूँगा, खासकर जब हम देखते हैं कि यह विवरण या किस्सा यहाँ पूरी तरह से संदर्भ से बाहर और बिना किसी उचित कारण के डाला गया है। फिर, भले ही भावी उत्तराधिकारी इतना असभ्य था कि उसने अपनी प्रेमिका का चित्र अपने गुरु को दिखाया, ज़ौक़ कभी भी इस तरह की अभद्रता से जवाब देने का साहस नहीं कर सकता था।'

लेकिन फिर, आदरणीय आज़ाद इतने द्वेषपूर्ण क्यों होंगे? ज़रूर कोई न कोई कारण होगा।

'मुझे सच में नहीं पता,' वसीम जाफर ने उदास स्वर में उत्तर दिया। 'लेकिन शायद आपने गौर किया होगा कि आज़ाद ने लाल किले के राजा और राजकुमारों के प्रति अन्यत्र भी दुर्भावना दिखाई है, और वास्तव में कई मौकों पर। शायद उस समय इतिहास लेखन का यही तरीका था। या हो सकता है कि वह यह संकेत दे रहा हो कि किले में रहने वाले लोग वास्तव में इतने पतित और सम्मानहीन थे कि उन्हें तलवार से मार देना और नष्ट कर देना ही सबसे अच्छा था।'

'जी हां, उनके बाद तो उन्हें बदनाम करना एक तरह का फैशन ही बन गया था। मानो नियाज़ फतेहपुरी काफी द्वेषपूर्ण न हों, यहां तक कि दिल्ली के सच्चे नागरिक मिर्ज़ा फरहतुल्लाह बेग ने भी किले के राजकुमारों के साथ न्याय नहीं किया।'

खैर, बेग वास्तव में आज़ाद की तुलना में काफी संयमित थे। ज़रा देखिए, आज़ाद मिर्ज़ा फ़खरू को चौबीस या पच्चीस साल का 'महज़ लड़का' बताते हैं और वज़ीर खानम को 'बुढ़िया' कहते हैं।

सच तो यह है कि मिर्ज़ा और वज़ीर खानम दोनों की उम्र लगभग एक जैसी थी। राजकुमार का जन्म 1811 में हुआ था और वज़ीर खानम का जन्म भी लगभग उसी समय हुआ था। वास्तव में, वह शायद थोड़ी छोटी रही होंगी।

खैर, जाने दो। चित्र अब आपके पास है और यह वाकई एक बड़ी सफलता है। अफसोस की बात है कि आप इन विषयों पर लिख नहीं सकते।

'मैं क्यों नहीं लिख सकता? बस देखते रहिए। मैं इन विषयों पर कभी न कभी जरूर लिखूंगा।'

उस बातचीत के कुछ समय बाद मैं भारत लौट आया। वसीम जाफ़र के विपरीत, मुझे अपने उद्देश्यों में ज़रा भी सफलता नहीं मिली थी। बुरहानपुर के फ़ारूक़ी और गोरखपुर के खुदाजी, दोनों ने ही हठपूर्वक मुझसे अपने बारे में कुछ भी बताने से इनकार कर दिया। मैं उन निराशाओं से कुछ हद तक उबर गया, लेकिन वज़ीर खानम को कभी नहीं भूल पाया। मुझे इस बात का अफ़सोस था कि मैं न तो इतिहासकार था और न ही कथाकार, वरना मैं उनकी कहानी ज़रूर सुनाता।

मेरी वापसी के लगभग तीन-चार महीने बाद, मुझे लंदन स्थित मार्टिन एंड मार्टिन नामक एक लॉ फर्म के पार्टनर श्री डगलस एबरनेथी का एक पत्र मिला। पत्र के साथ एक सीलबंद लिफाफा और कुछ कागजात भी थे। पत्र में निम्नलिखित बातें लिखी थीं:

हमें आपको यह सूचित करते हुए अत्यंत दुख हो रहा है कि हमारे एक पुराने और सम्मानित ग्राहक, डॉ. वसीम जाफर, पीएच.डी., एफ.आर.एच.एस., आदि, जो 14/42 पोर्टोबेलो रोड, लंदन के निवासी थे, का 19 सितंबर को लंदन में निधन हो गया। उन्हें फेफड़ों का कैंसर था। अंतिम क्षण तक उन्होंने बड़ी हिम्मत से इस बीमारी से संघर्ष किया। लेकिन कैंसर धीरे-धीरे उनके कई अंगों में फैल गया था। अपनी वसीयत में, डॉ. जाफर ने निर्देश दिया था कि संलग्न कागजात और सीलबंद लिफाफा उनके निधन के बाद आपको भेज दिया जाए। उन्होंने यह भी इच्छा व्यक्त की थी कि यदि आप संलग्न दस्तावेजों के आधार पर कोई ऐतिहासिक वृत्तांत तैयार करना चाहें, तो शोध और अन्य संबंधित खर्चों के लिए आपको 1000 पाउंड स्टर्लिंग की राशि उपलब्ध कराई जाए। इसके अलावा, डॉ. जाफर के सभी कागजात ब्रिटिश लाइब्रेरी में जमा हैं। उनकी वसीयत के अनुसार, यदि आपको अपने शोध कार्य के लिए उनके संग्रह में किसी दस्तावेज या पुस्तक की प्रति की आवश्यकता महसूस हो, तो वह उनकी संपत्ति से आपको उपलब्ध कराई जाएगी। हमें इस पत्र और संलग्न दस्तावेज़ की प्राप्ति की पुष्टि करने में आपकी सहायता की आवश्यकता होगी। आपका सादर, मार्टिन और मार्टिन की ओर से, डगलस एबरनेथी, कनिष्ठ भागीदार।

कागजों को एक तरफ रखकर मैंने लिफाफा खोला। उसमें वज़ीर खानम का चित्र था। उसके पीछे एक कोने में वसीम जाफर ने अपनी सुंदर और स्पष्ट लिखावट में तारीख सहित अपने हस्ताक्षर किए थे।

एक रहस्यमयी किताब प्रकट होती है, और साथ ही एक अज्ञात आत्मा भी, जो वसीम जाफर को मोहित कर लेती है।

(डॉ. वसीम जाफर के नोट्स और मेमोरेंडम से)

यह बड़ा नहीं था, वास्तव में यह सफीर बिलग्रामी (1834-1890) की रशहत-ए-सफीर के पहले और एकमात्र संस्करण जैसा ही था।

लेकिन ये किताब क्या थी और किसकी थी? इसे कौन लाया और मेरे सोते समय मेरे बिस्तर पर छोड़ गया? छूने पर यह कुछ गर्म सी लगी, मानो किसी ने इसे अभी-अभी आग के पास से या धूप में से उठाया हो। मैंने इसे खोलने की कोशिश की, लेकिन कुछ रुकावट महसूस हुई, मानो गत्ते के नीचे के पन्ने पहले पन्ने से और आपस में भी चिपके हुए हों।

चमड़े की जिल्द पर कोई नाम या शीर्षक नहीं था, न ही रीढ़ पर, जो कई जगहों से फटी हुई थी; लेकिन यह स्पष्ट था कि इसका कभी कोई शीर्षक था ही नहीं, और न ही इस पर लेखक या प्रकाशक के बारे में कोई जानकारी थी। क्या यह कोई हस्तलिखित पांडुलिपि थी, या कोई मुद्रित पुस्तक? यह मुझे उतनी प्राचीन नहीं लग रही थी; यह एक या डेढ़ शताब्दी से अधिक पुरानी नहीं हो सकती थी। लेकिन इतनी कम प्राचीनता वाली पुस्तक भी अत्यंत मूल्यवान हो सकती है। क्या यह कोई अत्यंत दुर्लभ वस्तु हो सकती है, कोई अनूठी वस्तु, जैसे कि अठारहवीं शताब्दी के महान उर्दू कवि मुहम्मद ताकी मीर के पत्र, या अंतिम मुगल सम्राट बहादुर शाह जफर की स्वयं की लिखाई में लिखी कविताओं का संग्रह?

मेरे शरीर में अचानक एक कंपकंपी दौड़ गई। लेकिन क्या मुझे किताब को जबरदस्ती खोलना चाहिए, जबकि पन्ने आपस में चिपके हुए थे? अगर मैं ऐसा करूँ तो शायद वह हमेशा के लिए खराब हो जाए। तो फिर क्या करूँ? मैंने झुंझलाहट और अधीरता से खुद से कहा। क्या पूरी किताब ही खराब कर दूँ? इसे पूरी तरह से खराब होने दो—अभी तो यह मेरे किसी काम की नहीं है। अगर यह खुल ही नहीं सकती, तो हमेशा के लिए बंद ही रहेगी।

अब मैंने किताब पर अपनी हथेली से थोड़ा और ज़ोर से मारा। पहले की तरह ही, उसमें अभी भी हल्की सी गर्मी महसूस हो रही थी। गर्मी? यह तो हम आम तौर पर इंसानों के लिए इस्तेमाल करते हैं। जैसे, 'उसे हल्का बुखार है।' एक किताब को बुखार कैसे हो सकता है? और अगर वह कहीं से एकदम गर्म आई भी हो... कहीं से एकदम गर्म...? इसका क्या मतलब है? क्या यह आग पर रखे सींक से निकला गरमा गरम शीश कबाब है? और अगर वह एकदम गर्म भी आई हो, तो अब तक तो ठंडी हो जानी चाहिए थी। कवि इकबाल की कुछ पंक्तियाँ अचानक मेरे दिमाग में आ गईं:

यहां आग लगी थी, अब बुझ चुकी है; वहां तंबू की रस्सियों के कुछ टूटे हुए टुकड़े पड़े हैं: यहां से कितने कारवां गुजरे होंगे? कौन जाने?

हाँ, कौन जाने कि यहाँ से लेकर अब तक और फिर जब यह बनी थी, तब तक यह कितने हाथों से गुज़री होगी? कितने हाथों ने इसे छुआ होगा, कितने हाथों ने इसे खोला होगा; कितनी आँखों ने इसे पढ़ा होगा? और यह क्यों मान लें कि यह उर्दू में लिखी किताब ही होनी चाहिए? फ़ारसी,

अरबी, हिब्रू... कई संभावनाएँ हैं। लेकिन हाँ, यह संस्कृत या अंग्रेज़ी में तो नहीं हो सकती, क्योंकि तब तो यह बाएँ से खुलेगी, दाएँ से नहीं। लेकिन मुझे कैसे पता चलेगा कि इसे किस तरफ से खोलना चाहिए? जब तक यह खुली नहीं होगी, मुझे कैसे पता चलेगा कि इसे खोलने के लिए सही तरफ कौन सी है?

मैंने हिम्मत जुटाकर बीच से किताब खोलने की कोशिश की, हालांकि थोड़ा डर भी लग रहा था। पन्ने सामान्य से थोड़े मोटे और भारी लग रहे थे, लेकिन आपस में चिपके नहीं थे। बल्कि ऐसा लग रहा था जैसे पानी में लंबे समय तक भीगे रहने के बाद छाया में धीरे-धीरे सूख गए हों। महान आधुनिक भारतीय चित्रकार अब्दुर रहमान चगताई भी अपने जलरंग चित्रों के लिए कागज को कुछ इसी तरह से तैयार करते थे। लेकिन वह कागज विशेष गुणवत्ता का होता था और वे उसे अंडे की सफेदी, कुछ रहस्यमयी मसालों और सौंफ के तेल की हल्की परत से उपचारित करते थे। फिर वे उस उपचारित कागज को पानी में, या कभी-कभी बारिश में भीगने देते थे। तो क्या यह किताब भी ऐसे ही कागज पर सुलेख में लिखी गई थी? अगर ऐसा है तो यह कोई प्राचीन वस्तु नहीं रह जाएगी...

लेकिन अब मुझे ऐसा लग रहा था कि किताब के पन्ने कुछ मोटे इसलिए हो गए थे क्योंकि किसी दुर्भाग्यपूर्ण घटना के कारण वे काफी समय तक पानी के संपर्क में रहे थे। शायद किसी चिड़चिड़े रईस ने, किताब में किसी बात से नाराज़ होकर या ऊबकर, उसे अपने महल के सजावटी तालाब में फेंक दिया होगा, और फिर कुछ समय बाद पछतावे से उसे निकलवाकर सुखाया होगा? (मुझे वह किस्सा याद आया कि सत्रहवीं सदी के उर्दू कवि वली के एक कुलीन प्रतिद्वंद्वी को वली की कविताओं की उत्कृष्टता से इतना गुस्सा आया कि उसने अचानक किताब को उस नदी में फेंक दिया, जिसके किनारे एक दरबारी उसे वली की कविताएँ सुना रहा था।)

और क्या ये कवि मीर सोज़ के पन्ने नहीं थे जिन्हें मुहम्मद ताकी मीर ने बेचारे सोज़ के हाथों से छीनकर नवाब आसिफुद्दौला के ठीक सामने बने सजावटी तालाब में डुबो दिया था, जो दोनों के संरक्षक थे? मेरा दिल उछल पड़ा। अगर वली नहीं, तो मीर सोज़ ही हों। शायद सोज़ ने बाद में चुपके से, मुहम्मद ताकी मीर की नज़रों से दूर, उन पन्नों को वापस ले लिया हो और उन्हें जिल्दबंद करवा लिया हो? यह कितनी अद्भुत खोज होगी! लेकिन मैं जानता था कि दोनों ही कहानियाँ लगभग मनगढ़ंत थीं।

भले ही कहानियां मनगढ़ंत हों, लेकिन इस किताब के पन्नों का एक-दो बार और काफी लंबे समय तक पानी से भीग जाना कोई मनगढ़ंत बात नहीं थी।

मैंने बड़ी सावधानी से किताब का जिल्द उठाया, इस उम्मीद में कि शायद अब तक वह सूख गया होगा और पृष्ठ के अंत का कागज़ दिख रहा होगा। जिल्द आसानी से, लगभग धीरे से खुल गया। मैं भूल गया कि कुछ क्षण पहले मैं किताब के पन्नों की हालत को लेकर विरोधाभासी कल्पनाओं, चिंताओं और उलझनों में उलझा हुआ था। मैं इस डर को भूल गया कि कहीं नमी के कारण सारे पन्ने और ऊपरी पृष्ठ आपस में चिपक कर एक ठोस कागज़ न बन गए हों।

मैंने किताब का जिल्द खोला तो देखा कि जिल्द और पृष्ठ के मोड़ के बीच एक छोटी सी सिल्वरफ़िश फंसी हुई है। ओह, बेचारा, जो इस छोटे से बगीचे का रक्षक माना जाता था, खुद ही

मौत के मुंह में चला गया! फिर भी, हवा के स्पर्श से वह थोड़ा सा हिलता हुआ सा लगा (... हवा के स्पर्श से? मुझे तो पता था कि सिल्वरफ़िश जीवित नहीं रह सकती और अगर किताब को बार-बार हवा लगे तो वह जल्दी मर जाएगी)। और फिर, धीरे-धीरे सरकते हुए, सिल्वरफ़िश जिल्द के पीछे गायब हो गई।

पन्ने का मोटा, गहरा भूरा और पीला रंग का कवर था, जिस पर बनी लहरदार डिज़ाइन सांप की खाल जैसी लग रही थी। इस तरह का कवर सौ साल पहले बहुत लोकप्रिय था। इसे कलकत्ता के अंग्रेज़ पुस्तक निर्माताओं ने लोकप्रिय बनाया था, जो इसे इंग्लैंड से आयात करते थे। डिज़ाइन का रंग इतना गहरा और घना था कि कागज़ पर कुछ लिखा भी होता तो दिखाई नहीं देता था। इसके अलावा, कागज़ अब भंगुर हो चुका था और कई जगहों से फटा हुआ था। दरअसल, यह निर्माण दोष था: कागज़ सख्त था, लचीला नहीं था, इसलिए मोड़ने पर आसानी से टूट जाता था। जोड़ के दबाव और उसकी प्राकृतिक भंगुरता ने उसे तोड़ दिया था। (सिल्वरफ़िश पन्ने के नीचे छिपी हुई थी, कवर की कई दरारों में से एक का फ़ायदा उठाकर। नहीं, वह छिप नहीं सकती थी, वह ज़रूर फिसलकर अंदर आ गई होगी, क्योंकि एक मरा हुआ कीड़ा अपने आप कैसे हिल सकता है?)

जिल्द की सिलाई तो ठीक लग रही थी, लेकिन रीढ़ की हड्डी की अंदरूनी परत हस्ताक्षरों से उखड़ रही थी। जिल्द को हस्ताक्षरों से चिपकाने के लिए गोंद का इस्तेमाल किया गया था, न कि किसी पेस्ट का। गोंद की गंध तो सदियों पहले ही खत्म हो चुकी थी, लेकिन उसकी परतें, गंदे पीले कांच की तरह सख्त और भंगुर, कई जगहों पर हस्ताक्षरों और रीढ़ की हड्डी की अंदरूनी सतह से चिपकी हुई थीं। शुक्र है, सिलाई टूटी नहीं थी; हस्ताक्षर साफ दिखाई दे रहे थे। एक कुशल पुस्तक संग्राहक रीढ़ की हड्डी को फाड़कर हस्ताक्षरों को सुरक्षित रूप से खोल सकता था, भले ही पाठक पुस्तक को ऊपर से न खोल पाए।

मैंने पन्ने का आखिरी पन्ना पलट दिया। इस तरह के पन्नों का पिछला पन्ना हमेशा खाली और लिखने लायक होता था। यानी, वह हल्के पीले या बिस्कुटी रंग का होता था और उस पर लिखना बहुत आसान होता था; बस एक चौड़े पेन और चमकीली स्याही की ज़रूरत होती थी। इस किताब में, पन्ना बिल्कुल खाली था, और अगला पन्ना भी, यानी पिछला पन्ना, जो किताब का पहला पन्ना था, खाली था। इसका क्या मतलब है? अगर यह कोई सही किताब होती, तो मालिक या कम से कम कोई और उस पर कुछ न कुछ ज़रूर लिखता: नाम, हस्ताक्षर, तारीख, लोगो, मुहर। कम से कम इतना तो लिखा होना चाहिए था, 'यहाँ सौ तरह की तबाही है; फिर भी, कुछ तो बचा है,' जैसा कि मीर ने कहा था। तब तो उस पन्ने पर मेरे लिए कुछ तो मौजूद होता।

मैं हमेशा, जहाँ तक संभव हो, हर किताब पर अपना नाम लिखता हूँ जो मैं खरीदता हूँ। और अगर किताब प्राचीन हो, तो मैं उसके बारे में संक्षिप्त टिप्पणियाँ भी लिख देता हूँ। बहुत निराश होकर और इस आशंका से कि पूरी किताब में केवल खाली पन्ने ही हों, मैंने मन ही मन कहा, ठीक है, अब यहीं छोड़ते हैं। कल देखेंगे।

मैं किताब बंद करके तकिये के नीचे रखने ही वाला था कि तभी मुझे अपनी गर्दन के बारीक बाल हवा के झोंके से हिलते और खड़े होते महसूस हुए। मानो कोई मेरे पीछे झुका हुआ हो, मेरे कंधे

पर झुककर किताब पढ़ने या पहचानने की कोशिश कर रहा हो, और उसकी साँसें मेरी गर्दन पर पड़ रही हों। इस घर में मेरे सिवा कोई और नहीं था, तो भला कौन...? मुझमें सिर घुमाकर देखने की हिम्मत नहीं हुई, और वैसे भी मेरी गर्दन हमेशा अकड़ी रहती है, जो कि क्रॉनिक स्पोंडिलोसिस की वजह से है। हमेशा की तरह, मुझे अचानक और बेतुके ढंग से मीर की एक व्यंग्यात्मक पंक्ति याद आ गई, जिसका सार अकड़ी हुई गर्दन से जुड़ा है: अकड़ी हुई गर्दन वाला व्यक्ति घमंडी और अभिमानी माना जाता है। और ठीक उसी तरह अप्रत्याशित रूप से और बेतुके ढंग से मुझे मीर की एक और पंक्ति याद आ गई, जिसमें वे कहते हैं, 'मैं किसी के सामने अपनी गर्दन नहीं झुकाता। कितनी अफ़सोस की बात है, मैं ईश्वर का दास हूँ, स्वयं ईश्वर नहीं।'

खैर, प्रकृति और भाषा इसी तरह हमारे साथ मज़ाक करती हैं। फिर भी, अगर मैं हिम्मत जुटा पाती, जो पूरी तरह से टूट चुकी थी, तो मैं अपना सिर धीरे से घुमा सकती थी, हालांकि इसमें मुझे काफी दर्द होता। मुझे अपने पीछे सांस लेने की हल्की आवाज़ सुनाई दे रही थी। किताब पहले की तरह खुली हुई थी।

अचानक, एक हल्की सी आवाज़ के साथ, किताब अपने आप बंद हो गई। मैं अभी पूरी तरह समझ भी नहीं पाया था कि किताब फिर से खुल गई और किसी ने फुसफुसाते हुए, हर अक्षर को स्पष्ट रूप से बोलते हुए कुछ कहा, लेकिन मैं भाषा को पहचान नहीं पाया। यह कुछ-कुछ उर्दू... या तुर्की... या पश्तो जैसी लग रही थी, लेकिन मुझे कुछ समझ नहीं आया। मैंने फिर से हिम्मत जुटाने की कोशिश की: कम से कम मुझे यह तो देखना चाहिए कि मेरे पीछे क्या हो रहा है, कहीं मैं सपना तो नहीं देख रहा?

एक नारंगी-सिंदूरी लहर खुले पन्ने पर फैलती हुई सी लग रही थी। नहीं, एक मिनट रुकिए, शायद मैं भूल गया। लहर सिर्फ़ हिली नहीं, बल्कि मानो सजीव थी। वह जलते हुए गोले से निकली किरण की तरह मुड़ती-घूमती जा रही थी। लेकिन पन्ना अभी भी खाली था... नहीं, अब ऐसा लग रहा था जैसे उस पर कुछ लिखा हो; किसी निर्दयी व्यक्ति ने जानबूझकर, धीरे-धीरे और पूरी तरह से उस लिखावट को मिटा दिया था। मैंने मन ही मन कहा, चलो मैं अपना आवर्धक लेंस ले आता हूँ, वह यहीं इस दराज में है। लेकिन नहीं, वह मनहूस डेस्क यहाँ नहीं है, मैं अपने बिस्तर पर हूँ।

मैंने अपनी बाईं मुट्ठी कसकर बंद कर ली, जिससे उसके सिरे पर एक छोटा सा छेद रह गया, जैसा कि मैं बचपन में अक्सर किया करता था। रात को चुपचाप पढ़ते समय मैं कभी-कभी 'सूक्ष्मदर्शी' का खेल खेलता था, यानी मैं कल्पना करता था कि मेरी बंद मुट्ठी, जिसके सिरे पर एक छोटा सा छेद है, एक सूक्ष्मदर्शी है। फिर, अपनी दाहिनी आंख बंद करके, मैं अपनी बाईं आंख को मुट्ठी के बड़े सिरे पर रखता था—जो मेरे काल्पनिक सूक्ष्मदर्शी का नेत्र-छोटा हिस्सा था। मेरा मानना था कि प्रकाश की एक अत्यंत सूक्ष्म किरण मेरी आंख से होकर मेरी छोटी मुट्ठी द्वारा बनाई गई फोकस दूरी के साथ नेत्र-छोटा हिस्सा पार करती है और पृष्ठ पर पड़ती है। मुट्ठी के सिरे पर बने छेद से मुझे जो एक-दो शब्द दिखाई देते थे, वे हमेशा पहले से अधिक चमकीले दिखाई देते थे, भले ही वे वास्तव में बड़े न हों।

लेकिन अब मैं आँख और उसकी किरणों की वास्तविकता के बारे में सब कुछ जानता हूँ। मैं

जानता हूँ कि किरणें महज़ एक भ्रम या निरर्थक कल्पना हैं। आँख से किसी वस्तु तक प्रकाश की कोई किरण नहीं पहुँचती, चाहे वह कितनी भी पतली और सूक्ष्म क्यों न हो। आँख से कोई प्रकाश नहीं निकलता: हम तभी देखते हैं जब किसी वस्तु पर बाहरी प्रकाश पड़ता है। मिस्र के अरब अल्हाज़ेन ने हमें इसके बारे में एक हज़ार साल से भी पहले बताया था, लेकिन हमें इस बात पर तभी यकीन हुआ जब हमने इसे यूरोपीय लेखकों द्वारा लिखी गई किताबों में पाया।

हाल ही में मैंने अपने नेत्र विशेषज्ञ से अपनी आँखों की जाँच करवाई। उन्होंने मेरी आँखों पर एक काली डिस्क रखी, जिसके केंद्र में एक बहुत ही छोटा छेद था। जब उन्होंने उस डिस्क को मेरी कमज़ोर आँख पर भी रखा, तो मैं बोर्ड पर लिखे उन अक्षरों को देख सका, जिन्हें पहले पढ़ना मेरे लिए नामुमकिन था। मुझे बहुत खुशी हुई कि मेरी आधी अंधी आँख भी ठीक हो रही थी। लेकिन डॉक्टर ने एक हल्की सी मुस्कान के साथ मेरी उम्मीदों पर पानी फेर दिया और कहा कि मैंने जो अनुभव किया वह दिलचस्प तो था, लेकिन उसका कोई खास मतलब नहीं था। यह बस वही था जिसे उन्होंने पिनहोल इफ़ेक्ट कहा। तो जब मेरे पास मैग्नीफाइंग ग्लास नहीं है, तो मैं पिनहोल इफ़ेक्ट का फ़ायदा क्यों न उठाऊँ?

लेकिन मेरे हाथ कांप रहे थे, जिससे मुट्ठी बांधना नामुमकिन था। दरअसल, मेरा शरीर भी हल्का सा कांप रहा था। मेरे पीछे कोई था, उसके चेहरे पर हल्की सी मुस्कान थी... कहीं से किसी ने मुझे कवि दाग़ के युवावस्था के वर्णन के बारे में फुसफुसाया—उनका चेहरा अद्भुत रूप से कोमल था—उनका चेहरा आनंद से दमकता था, मानो कोई नया खिला हुआ फूल हो।

मैं बुरी तरह भयभीत था, क्या मैं अपना मानसिक संतुलन भी खो बैठा था? मैंने पीछे मुड़कर नहीं देखा; और अपनी अकड़ी हुई गर्दन के कारण देख भी नहीं सकता था। न ही सच में कोई चेहरा या कोई प्राणी मेरे कंधे के ऊपर से झाँक रहा था, किताब पढ़ने की कोशिश कर रहा था—या मेरी किताब। और वहाँ कोई नहीं था, सचमुच कोई दिखाई नहीं दे रहा था, फिर भी, कोई वहाँ था जिसका चेहरा गर्मियों में खिले गुलाबों की तरह चमक रहा था। कोई फुसफुसा रहा था, किसी की साँसें मेरी गर्दन और कंधों पर गर्म और सुखद लग रही थीं, घर खाली था, बस मेरी मौजूदगी थी। मैं किसे पुकारूँ? हे भगवान, मुझे इससे बचाओ!

क्या यह कोई किताब थी या किसी जादुई लोक का द्वार खोलने वाली कोई पट्टिका? लेकिन जादुई लोक की पट्टिका पर कुछ लिखा होता है, जिसे केवल वही पढ़ सकता है जिसका भाग्य उस जादुई लोक का द्वार खोलना लिखा हो। मेरे माथे से पसीने की एक बूँद रिसकर मेरी दाहिनी आँख में चली गई। मेरी बाईं आँख बहुत कमज़ोर है; मैं बारीक अक्षरों को पढ़ने या पांडुलिपि का अध्ययन करने का सारा काम केवल अपनी दाहिनी आँख से ही करता हूँ। अनायास ही मेरा हाथ पसीने की बूँद पोंछने के लिए ऊपर उठा। 'यह खुल जाएगा,' किसी ने कहा। मेरी नसें अब तक इतनी तनावग्रस्त हो चुकी थीं कि वह आवाज़ एक पुली की तरह थी जिस पर अनायास ही मेरी बंद मुट्ठी ऊपर उठी और ज़ोर से मेरी आँख पर लगी, मानो कोई हथौड़ा मेरी भौंह और आँख पर प्रहार कर रहा हो।

उस नन्हे से छेद के सिरे पर, जो बिल्कुल सुई के छेद जितना छोटा था, कोई चीज़ एक नन्हे पुखराज के क्रिस्टल की तरह चमक रही थी, और किताब के पहले पन्ने पर, हाशिये में—अगर

वहाँ हाशिये होते तो—उसी सुनहरे पुखराज रंग की स्याही से कुछ लिखा हुआ था, लेकिन मिटाया हुआ था, हालांकि पूरी तरह से नहीं। मैंने एक आँख कसकर बंद कर ली और दूसरी आँख अपनी मुट्ठी के खुले सिरे से बने छेद पर टिका दी, और पूरी कोशिश की कि आँख उस पर टिकी रहे।
'किताब खुलते ही तुम्हें सुनाई देगा,' किसी ने कहा। मेरी कमजोर इंद्रियों को ऐसा लगा जैसे आवाज़ मेरे कानों तक नहीं पहुँची, बल्कि मेरी रीढ़ की हड्डी में समा गई हो। माथे से पसीने की छोटी-छोटी बूँदें बहकर मेरी आँखों में जा रही थीं, मानो धीरे-धीरे आँसू फूट पड़े हों, और अब मेरी मुट्ठी को गीला कर रही थीं। मुझे कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था।
थोड़ा गुस्सा और काफी घबराया हुआ, मैं किताब को हटाने की कोशिश कर रहा था... लेकिन नहीं, वह हिली नहीं, मानो पत्थर के टुकड़े की तरह सख्त हो गई हो। मैं बस थोड़ा और ज़ोर लगाने ही वाला था कि मैंने अपना हाथ उसकी तरफ बढ़ाया भी नहीं था... देखो, किताब फिर से खुल गई, मानो हवा के एक हल्के झोंके ने, जिसे मैंने महसूस भी नहीं किया, अपना काम कर दिया हो। कुछ लिखा हुआ था, फ़ारसी या उर्दू, मैं समझ नहीं पाया। पूरे पन्ने के दोनों तरफ छोटे-छोटे छेद थे जहाँ दीमक ने अपना काम किया था। शायद ही कोई पंक्ति उन छेदों से बची हो।
हताशा, निराशा और क्रोध ने मुझे लगभग रुला ही दिया था। नहीं! मेरी आँखों में आँसू नहीं हैं, बस पानी की धुंध है। पानी कहाँ से आया? और कहाँ से, सिवाय किताब के दागदार पन्नों में समाई नमी के। वह पहला पन्ना धीरे-धीरे खुला, अपनी शक्ति से, अपनी ताकत से पलटा; शायद किताब खुलने ही वाली थी। अगले पन्ने पर, ऊपर दाईं ओर, कुछ शब्द दिखाई दे रहे थे।
शायद कविता की एक-दो पंक्तियाँ ही थीं, लेकिन ज़्यादातर अक्षर दीमक खा गए थे। मैंने पूरी कोशिश की, पहले अपनी मुट्ठी से बने छेद से झाँकने की कोशिश की, फिर पन्ने को जितना हो सके अपनी आँख के पास लाया। कुछ इस तरह लिखा था: … y wak … ful … ness in this nig … t of separatio … knocks at … the door … death … it's not a nig … that can pass … in story …
यह किसकी कविता थी? मुझे याद है मैंने इसे सैकड़ों बार मन ही मन पढ़ा और दोहराया था, और इसकी पीड़ा और रहस्य से भरी भावना ने मुझे उन्मादी प्रशंसा से भर दिया था। यह बाबा नाम के एक फ़ारसी कवि की कविता थी... बाबा ताहिर उरयान? नहीं, यह उनकी भाषा नहीं है। बाबा... बाबा... फुघानी गिलानी? नहीं, ऐसा कोई कवि नहीं है। नासिरी गिलानी? हाँ, यही था। बाबा नासिरी गिलानी, और फिर मैं पूरी कविता पढ़ सका, या मुझे याद आ गई और मुझे लगा कि मैंने विकृत शब्दों को समझ लिया है।
यह जुदाई की रात है। मुझे नींद नहीं आ रही। मेरी बेचैनी मौत के दरवाजे पर दस्तक दे रही है। यह रात कहानियां सुनाकर नहीं गुजर सकती।

लिखाई उसी सुनहरे रंग की स्याही से की गई थी जिसे मैंने पिनहोल से देखा था, थोड़ी घिसी हुई थी, लेकिन अक्षर मानो पीले रंग की रोशनी में फूट पड़े थे। क्या उत्कृष्ट सुलेख था, कितनी आकर्षक थीं वे थोड़ी लंबी रेखाएँ और कितने दृढ़ विराम चिह्न! बस कुछ लगभग पूर्ण तीन-चौथाई वृत्त, उचित तीक्ष्णता और मोटाई के साथ, और अनेक लंबे अक्षर। प्रत्येक फ़ारसी शब्द—

विशेषकर वे जिन्हें मैं 'मेरी बेचैनी', 'मृत्यु', 'रात', 'नहीं है' के रूप में अनुवाद करता हूँ—इतने आकर्षक ढंग से गढ़े गए थे, मानो सावधानीपूर्वक बनाए गए चित्र हों। और लंबा, सीधा खड़ा अक्षर अलिफ़, कई बार आया हुआ, आत्मविश्वास से भरा और सीधा, मानो मानक हो।
यह ऐसी रात नहीं है जो कहानियां सुनाते हुए गुजर जाए।
वह संदेश कितना रहस्यमय था, और जिस तरह से वह आया, उससे वह और भी अधिक संकेतों और इशारों से भरा हुआ प्रतीत हुआ। वह रात किसी कहानी की तरह समाप्त होने वाली नहीं थी, न ही उसे कहानियां सुनाकर निष्कर्ष निकाला जा सकता था; लेकिन कहानियां सुनाने की पेशकश कौन कर रहा था, और किसे?
'मैं बता सकता हूँ, अगर तुम सुनो।' फिर कोई फुसफुसाते हुए बोल रहा था। तो फिर क्या था, कोई जिन्न, या कोई छिपा हुआ हुनर? मेरे शरीर और आत्मा का जंगल उस आवाज़ से सिहर उठा। मुझे एक कविता की भूली हुई पंक्तियाँ याद आ गईं:
रात के शांत और गंभीर सन्नाटे पर लंबे-लंबे कदमों से कौन गुजरा?
अगर मैं सुनूँ तो कौन बताएगा? और वह क्या बताएगा? ज़रूर कोई न कोई, कोई न कोई जीवित प्राणी होगा जो मुझे चेतावनी देगा, 'अगर तुम सुनो तो मैं बता सकता हूँ।' मुझे क्या सुनना चाहिए, और क्यों सुनना चाहिए? ग़ालिब की ये पंक्ति याद आई: 'अति भोलापन अच्छे विवेक के कानों को शोर के अर्थहीन झाग से भर देता है।'
किताब हल्की सी आवाज़ के साथ बंद हो गई। मेरे हाथों पर मेरा कोई नियंत्रण नहीं था, और न केवल हाथों पर, बल्कि मेरे शरीर पर, मेरे अस्तित्व पर भी। हालाँकि मैं हिम्मत बनाए रखना चाहती थी, मैंने अपनी आँखें कसकर बंद कर लीं और कुछ देर तक बंद ही रखीं। फिर, मैंने बड़ी दबे पांव तिरछी नज़र से देखा कि क्या किताब अभी भी वहीं है, क्या मेरे कंधे पर बैठा वह आदमी (या औरत) अभी भी मेरी गर्दन पर बिखरे हुए मुलायम बालों पर हल्की हवा छोड़ रहा है।

अपनी आँखें खोलो, ओह, उन्हें खोलो और देखो, कैसे समय, कैसे दृश्य गुजर रहे हैं!
मेरे प्रिय कवि मीर की एक कविता, जो अब खिड़की से झाँक रहे थे, या नहीं, वे झाँक नहीं रहे थे, क्योंकि वहाँ कोई खिड़की नहीं थी, बस एक दीवार थी जो बहुत ही बारीक शीशे से बनी थी जिस पर पांडुलिपि खुदी हुई थी। पांडुलिपि में शीशे के पार का पूरा दृश्य भी खुदा हुआ था, और जहाँ भी कुछ खुली जगह थी, सुबह की हवा किसी प्रेमिका या कविता की पंक्ति की तरह अंदर आ रही थी, जो आने वाली कविताओं के लिए विषय और भाव प्रदान करने वाली थी। क्या यह एक किताब है, या यह सभी प्रकार की अप्रासंगिक, मिली-जुली वस्तुओं से बेतरतीब ढंग से रचा गया एक दृश्य है?
लेकिन मेरी आँखें अब भी बंद हैं, मैंने मन ही मन कहा। शायद मेरी आँखें डर के मारे बंद थीं। लेकिन मुझे किताब से डर नहीं लग रहा था। मैं खुद से डर रहा था... कविता के नीचे कुछ लिखावट भी थी, उसकी स्याही भी सिंदूरी रंग की थी, जिसमें सोने की हल्की सी चमक थी। या शायद स्याही लैपिस लाजुली से बनी थी, लेकिन लैपिस लाजुली के नीले-हरे रंग को सिंदूरी रंग के लाल-नारंगी रंग से भला कैसे भ्रमित किया जा सकता है?

मैंने सैकड़ों, बल्कि हजारों प्राचीन उर्दू और फारसी किताबें देखी थीं, और मेरी अपनी लाइब्रेरी में भी ऐसी कई किताबें थीं। मैंने ऐसा पीला-नीला और गेरूआ रंग पहले कभी नहीं देखा था। दिल्ली के पारंपरिक चित्रकार और सुलेखक चार विशेष रंगों का इस्तेमाल करते थे: सफेद, सुनहरा, नीलमणि और सिंदूर। ये रंग हमेशा चित्रकार के कमरे की चारदीवारी के अंदर ही, बड़ी गोपनीयता से तैयार किए जाते थे। एक घर से दूसरे घर में इनका नुस्खा लीक होने का तो सवाल ही नहीं उठता था। तो शायद यह नारंगी-नीला रंग किसी खास कला कार्यशाला की गुप्त स्याही थी?
शिलालेख का पहला स्पष्ट शब्द 'मिर्ज़ा' था, जिसके पहले एक-दो शब्द लिखे थे। क्या यह अठारहवीं सदी के महान कवि मिर्ज़ा सौदा थे, या उन्नीसवीं सदी के अधिक प्रसिद्ध कवि मिर्ज़ा ग़ालिब? मुझे मुश्किल से 'नौ' जैसा कुछ दिखाई दिया, तो क्या मुझे इसे ग़ालिब के लिए स्नेहपूर्वक प्रयुक्त उपनाम मिर्ज़ा नौशाह समझना चाहिए? क्या मैं मिर्ज़ा ग़ालिब की हस्तलेख देख रहा था? मेरी धड़कन रुक गई। लेकिन नहीं, ग़ालिब ने कभी मिर्ज़ा नौशाह के रूप में हस्ताक्षर नहीं किए थे—दूसरे लोग उन्हें इसी नाम से पुकारते थे। फिर नौशाह... नवाब... क्या यह ग़ालिब का ही नाम था, लेकिन किसी और की लिखावट में?
अचानक मुझे याद आया कि यह नवाब मिर्ज़ा थे, न कि मिर्ज़ा नौशाह, और वास्तव में पूरा शिलालेख, या हस्तलेख, नवाब मिर्ज़ा खान दाग़ का था, जो प्रसिद्ध कवि और वज़ीर खानम के पुत्र थे...

किताब अचानक बंद हो गई, इससे पहले कि मुझे पता भी चलता कि वह बंद हो रही है। मैंने थोड़ा अचंभित होकर उसे देखा। लेकिन फिर, लगभग तुरंत ही एक हल्की सी क्लिक की आवाज़ आई और दूसरा पन्ना दूसरी जगह खुल गया। उस पर अंग्रेज़ी में कुछ लिखा था। मैं तय नहीं कर पा रहा था कि यह सुलेख है या लोहे की लिखावट। इतनी सुंदर, घुमावदार और सजावटी काली लिखावट लिखने के लिए किसी माहिर सुलेखक का हाथ होना चाहिए था। मैं पढ़ सका:
लॉर्ड रॉबर्ट्स
फिर मुझे पृष्ठ के निचले भाग के पास, उसी लिखावट में स्पष्ट रूप से दिखाई दिया:
मिर्ज़ा फ़ुथूलमूलक बहादूर गुलाम फ़ुख़रूद्दीन रमज़, 1849
अब मुझे पता चला कि मैं किताब को छूकर पन्ना पलट सकता हूँ। पिछले पन्ने पर कुछ भी नहीं लिखा था। अगले पन्ने पर, यानी सीधे पन्ने पर, कुछ लिखा था, लेकिन मैं समझ नहीं पा रहा था कि वह फ़ारसी है या उर्दू। मैं उलझन में पड़ गया और परेशान हो गया। आखिर यह किस तरह की किताब थी? क्या यह हस्तलिखित थी या छपी हुई? अगर यह छपी होती, तो इसमें इतने सारे पन्ने खाली या कम लिखे हुए नहीं होते, और कुछ पन्ने इतने सघन रूप से लिखे होते कि उन्हें पढ़ा ही नहीं जा सकता। कहीं अंग्रेज़ी थी, तो कहीं कोई दूसरी भाषा। यह किताब से ज़्यादा एक जिन्न जैसी लग रही थी। मैंने इसे तकिए के नीचे सुरक्षित रख देने का फैसला किया और सोचा कि अगले दिन इस पर विचार करूँगा। लेकिन अभी शाम काफ़ी जल्दी थी, सोने का समय बिल्कुल नहीं हुआ था।
निश्चित रूप से, यह शब्द के सामान्य अर्थों में एक पुस्तक नहीं थी। यह एक प्रकार का जादू था।

यह बोलती थी; यह चुप हो जाती थी; यह अपने आप खुलती थी, अपने आप बंद हो जाती थी। बारी-बारी से यह डराती भी थी और आकर्षित भी करती थी। आर्थर कोस्टलर ने अपनी पुस्तक का नाम 'मशीन में भूत' रखा। तो क्या मुझे भी अपनी पुस्तक का नाम 'पुस्तक में भूत' रखना चाहिए? लेकिन कोस्टलर ने अपनी पुस्तक का ऐसा नामकरण करके कार्तीय सिद्धांत की ओर इशारा किया था कि मानव शरीर एक पात्र है, और आत्मा या मन या विचार शक्ति, उसकी सामग्री है। इस प्रकार मन या आत्मा और पदार्थ दो अलग-अलग इकाइयाँ थीं। कोस्टलर को आशंका थी कि यदि विज्ञान उस समय की तरह तेजी से आगे बढ़ता रहा, तो एक दिन वह मशीन में भी एक जैविकता का संकेत देगा या उसे खोज निकालेगा। और मैं, खैर, मैं खोई हुई चीजों को खोजने की कोशिश कर रहा था (क्योंकि, जैसा कि किसी उर्दू कवि ने कहा है, हम उन स्थानों से आए पक्षी हैं जो अब खो चुके हैं)। हमने किताबों में बंद करके, नीले या काले कपड़े में लपेटकर, नदी के उस पार झाड़ियों में फेंक दी गई चीज़ों को, क्योंकि हमारे कंधे ढीले पड़ गए थे, हमारी कमर झुक गई थी और बोझ इतना भारी था कि हम उसे सहन नहीं कर पा रहे थे। और जब हम नदी के काले और भूरे रेतीले किनारों पर नावों की तलाश कर रहे थे, अर्ध-अंधेरे में लड़खड़ाते और गिरते हुए, वे बंडल हमारी पीठ से बार-बार फिसल रहे थे, लेकिन हमने उन पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया, क्योंकि हम खुद को बचाने की कोशिश में इतने व्यस्त थे।

हे परियों के जादूगर, यह परियों का कोई जादू नहीं है।

ऐसा लग रहा था मानो आज की रात मेरे लिए भूले-बिसरे फ़ारसी या उर्दू छंदों को याद करने की रात थी। उस किताब से एक आवाज़, एक ध्वनि आ रही थी, मानो कोई धुन गुनगुना रहा हो, जैसे पानी धीरे-धीरे बहकर किसी घड़े में इकट्ठा हो रहा हो; मानो कोई पेरी किसी छोटे, नाज़ुक तार वाले वाद्य यंत्र पर मधुर ध्वनि को निखारने और संतुलित करने में मशगूल हो। एक दिल को मोह लेने वाली, आत्मा को वश में करने वाली गूंज। कोमल लेकिन गहरी।

धुन बूंद-बूंद करके गिरती है, फिर भी यह इतनी गहरी गूंज पैदा करती है; विचार धूल की तरह उठते हैं और मस्तिष्क में उड़ते हैं।

फिर अचानक किताब का पन्ना एक छोटे सिनेमा स्क्रीन की तरह जगमगा उठा और तस्वीरें पूरे रंगों में दिखाई देने लगीं।

दिल्ली का लाल किला, उसका लाहौरी गेट... ये जानी-पहचानी तस्वीरें हैं, लेकिन क्या वहाँ की चहल-पहल एक अलग ही तरह की नहीं थी? मैंने वहाँ पैंट या नीली जींस और बुश शर्ट या टी-शर्ट पहने, कमर या पेट से बेढंगे शरीर वाले, नमक-मिर्च छिड़के केले के टुकड़े खाते हुए पुरुषों को नहीं देखा; मैंने वहाँ उदास चेहरों और उभरे हुए, गहरे रंग से रंगे होंठों वाली महिलाओं को नहीं देखा; वहाँ ऐसी कोई महिला नहीं थी जो थोड़ी ऊबी हुई और हर चीज़ से थोड़ी नाखुश दिखती हो; वहाँ दर्जनों पुरानी बसों, आक्रामक ढंग से चलाई जा रही कारों और फुर्तीले तीन पहिया स्कूटरों का शोर-शराबा नहीं था जो हर मिनट मेरे सामने से पैदल चलने वालों और ठेलागाड़ियों से भरी सड़क पर गुजरते थे; वहाँ न तो गंदे ठेले थे, न ही बदसूरत, फीके रंगों में लिपटी पॉलिथीन की भरमार, न ही प्लास्टिक के कपों में परोसे जाने वाले या अखबार के कोन में लिपटे तेज गंध और तीखे स्वाद वाले नमकीन बेचने वाले स्टॉल।

नहीं, बिलकुल नहीं, वहाँ ऐसी कोई बात नहीं थी। मुझे अपने पीछे शाहजहाँ की मस्जिद साफ़ दिखाई दे रही थी। मैंने किसी को कहते सुना: 'आज सादुल्लाह खान का चौक अद्भुत रूप धारण किए हुए है और किसी दूसरी दुनिया जैसा दिखता है। ईश्वर की सच्ची उपस्थिति, दिव्य सत्ता के स्वामी और मार्गदर्शक, धरती पर ईश्वर की छाया, भाग्य के विधाता, मीना बाज़ार जाएँगे।' और फिर कहीं से किसी राग की शुरुआती धुनें सुनाई दीं।

नहीं... न ही... कि... पुनः... पुनः...

ओह, ओह! ये तिलक कमोद है। शुरुआती सुरों में दो अन्य स्वरों का हल्का सा स्पर्श है, लेकिन बेस पूरी ताकत से बज रहा है। ध्वनि उमड़ती है, गूंजती है, इतनी गहरी कि सितार जैसी नहीं लगती; इसमें सरोद की ध्वनि है। कौन कह सकता है कि तारों को बजाने के लिए कितनी शक्ति, कितनी ताकत की ज़रूरत रही होगी, और इतना ज़ोर लगाने के लिए प्लेक्ट्रम कितना शक्तिशाली रहा होगा। सुरों में इतनी अद्भुत रेंज, इतनी गहराई और इतना गंभीर भाव था। शुरुआती सुर समाप्त हो गए।

फिर भी... फिर भी... फिर भी... द्वारा... में...

और फिर राग, पूरी तरह से विकसित।

सा ... नी ... धी ... पा ... मा ... गा ... रे ... गी ... सा ...

और फिर पूरा कॉन्फ़िगरेशन।

कि... न ही... कि... सही... सही... नहीं... लेकिन... जी...

न तो वादक और न ही संगतकार कहीं नजर आ रहे थे, लेकिन लाहौरी द्वार की भव्यता और चमक पहले से कहीं अधिक स्पष्ट थी। फिर भी, उस शोरगुल में कुछ लोग अपनी धीमी, लगभग उदास और सुस्त चाल के कारण ध्यान आकर्षित कर रहे थे। तिलक कमोदा रात के दूसरे पहर का राग है। यह राग सौराथा और देसा से बहुत मिलता-जुलता है, और केवल कुशल गायक या वादक ही इसे भेदों को बरकरार रखते हुए प्रस्तुत कर सकते हैं।

यह राग बीतती रात के दर्द, खोए हुए पलों की पीड़ा और आने वाली सुबह के भय को व्यक्त करता है, जब मोमबत्तियां बुझ जाएंगी, जब मशालों की लौ थम जाएगी।

पुस्तक 2

मेरा नाम मुहम्मद यूसुफ है। मैं एक कारीगर हूँ, यानी बिना रत्नों वाले नाजुक सोने या चांदी के आभूषण बनाने वाला। मैं मूल रूप से कश्मीर का रहने वाला हूँ, लेकिन मेरी उत्पत्ति का मामला इतना सरल नहीं है। अगर मैं इसे शुरू से बताऊँ, तो इसमें कई पेचीदगियाँ, मोड़ और उतार-चढ़ाव हैं जो उलझन भरे, बल्कि थकाऊ भी साबित होंगे। लेकिन अगर मैं शुरू से न बताऊँ, तो इसके बारीक और जटिल विवरण अधिकांश श्रोताओं की समझ से परे होंगे।

मैं जीवन के उस पड़ाव पर हूँ (1840 में, अंग्रेज़ी पंचांग के अनुसार, मेरी उम्र सैंतालीस वर्ष थी) जहाँ व्यक्ति पीछे मुड़कर यह सोचने लगता है कि क्या जो कुछ हुआ वह नियति थी, या कोई और संभावना भी थी। और सबसे बढ़कर, जीवन के इस मोड़ पर व्यक्ति उन चरणों और बाधाओं का विश्लेषण करना चाहता है जिन्हें पार करने के बाद ही समय के महान रचनाकार ने मनुष्य और उसकी संतान को उनके अंतिम स्वरूप और रूप में प्रस्तुत किया। हम सभी के आदर के पात्र महान कवि मीर ने कहा था, 'इन आकृतियों के बनने से पहले हज़ारों आकृतियाँ अविकसित थीं।' यह बात हम पर अनेक मायनों में सत्य प्रतीत होती है।

एक और बात है: जीवन के उस पड़ाव पर जब स्त्रियाँ अपने सगे संबंधियों से सांत्वना और बहनचारा तलाशती हैं, और पुरुष अपने घर की स्त्री में साथी और मित्र देखता है, मैं चारों ओर से अकेला हूँ। मेरी मधुर स्वभाव और सौभाग्यशाली पत्नी अचानक और चुपचाप ईश्वर के पास चली गईं, जैसे संसार को प्रकाशित करने वाले सूर्य की किरणें किसी काँटे की नोक से ओस की बूँद को उठा ले जाती हैं। मेरी तीनों बेटियाँ अपने-अपने घरों में मुझसे अलग रहती हैं और अब यहाँ मेरा कोई काम नहीं है। कवि के शब्दों में, वह दिन कितना सुखद होगा जब मैं इस उजाड़ घर से चला जाऊँगा। और इस अकेलेपन, मृत्यु की आशा और लालसा से एक और लाभ मिलता है: मैं जो कुछ भी कहूँगा वह सत्य होगा, और मैं कुछ भी नहीं छिपाऊँगा, क्योंकि मुझे किसी से कोई अपेक्षा नहीं है, न ही कोई भय है।

साधारण सोने के आभूषण बनाना हमारी खानदानी कला नहीं है। मेरे पिता मुहम्मद दाऊद बदगामी और उनके छोटे भाई मुहम्मद याकूब बदगामी बहुत समय से कश्मीर में रह रहे थे; वास्तव में, उनका जन्म वहीं हुआ था, लेकिन वे सच्चे कश्मीरी नहीं थे। उनके दादा मियां मखसुल्लाह चित्रकार थे। ये मियां साहब राजपूताना के किशनगढ़ में हिंदल वली का पुरवाह नामक एक छोटे से गाँव के निवासी थे। यह उस शुभ, सौभाग्यशाली और स्वर्ग-प्रमाणित शासनकाल के दौरान की बात है, जब विश्व और उसमें रहने वाले सभी लोगों के राजा, उन्नति के प्रतीक, सौभाग्य के प्रतीक, इस्लाम के प्रचारक मुहम्मद रौशन अख्तर बादशाह, जो अब स्वर्ग में विश्राम कर रहे हैं, का शासन था।

शायद मुझे यह कहने या ज़ोर देने की ज़रूरत नहीं है कि विशेष रूप से राजपूताना में, और सामान्यतः पूरे हिंद देश में, ईश्वर के साथ मित्रता के आकाश के सूर्य, उदारता और उत्कृष्टता के सूर्य के आकाश, महान गुरु, गरीबों के उपकारक, राजत्वों के निर्माता, सभी संतों के संत,

राजाओं को मुकुट दाता, बेरोज़गारों के रक्षक, हमारे प्रेमी और प्रिय, बाबू मुइनुद्दीन साहिब चिश्ती, ईश्वर के प्रिय, को प्रेमपूर्वक हिंद-अल वली की उपाधि से पुकारा जाता है।
पहले राजपूताना में केवल एक ही गाँव था जिसका नाम हिंदल वली का पुरवाह था; यह ख्वाजा साहिब का चिल्ला नामक छोटी बस्ती के पास स्थित था। समय के साथ-साथ, कई गाँवों के नामों में शुभ उपसर्ग हिंदल वली जुड़ गया।
बार-बार इस्तेमाल होने के कारण हमारे गाँव का नाम छोटा होकर हिंदल पुरवाह हो गया। गाँव में केवल तीन मुस्लिम घर थे। एक-दो ब्राह्मण और लगभग पाँच-सात राजपूत घर थे, और बाकी सभी कारीगर थे। ये सभी अपनी रोजी-रोटी के लिए चित्रकारी पर निर्भर थे। किशनगढ़ कलम की चित्रकारी की सारी सुंदरता और भव्यता उन नेक, कानून का पालन करने वाले और गरीब गाँव के कारीगरों की कुशलता, रंगों के निर्माण में उनकी रचनात्मकता और चित्रकारी के लिए कागज को तैयार करने में उनकी कुशलता के कारण थी। जहाँ तक किशनगढ़ शहर की बात है, वहाँ केवल नौसिखिए और बिचौलिए रहते थे जिनके माध्यम से चित्रकारों की कलाकृतियाँ बाजार तक पहुँचती थीं। असल काम तो हम, अनजान गाँव वालों ने किया, और नाम और प्रसिद्धि किशनगढ़ कलम को मिली। कभी-कभी खरीदार सीधे हमारे पास आते और चित्रकार द्वारा चित्र के लिए ली जाने वाली कीमत बिना किसी हिचकिचाहट के चुका देते। ये चित्र अधिकतर काल्पनिक होते थे; वास्तव में, जीवित व्यक्ति के चित्र बनाना नापसंद किया जाता था।

मुझे मियां मखसुल्लाह का असली नाम नहीं पता, और न ही मैं इस कहानी के प्रारंभ के समय उनकी आयु का सटीक अनुमान लगा सकता हूँ। हिंदल पुरवाह गाँव अब अस्तित्व में नहीं है। इसलिए अब कोई ऐसा व्यक्ति नहीं है जिससे मियां की आयु का पता लगाया जा सके। जो कुछ मुझे निश्चित रूप से पता है, वह मैं अपने प्रिय पाठकों को पहले ही बता चुका हूँ; यह संभव है कि वे मूल रूप से मुसलमान नहीं थे और उनका कोई दूसरा नाम रहा हो। उस समय उनकी आयु तीस या पैंतीस वर्ष से अधिक नहीं रही होगी, लेकिन गाँव से दूर एकांत में अधिक समय बिताने और अपने खान-पान और पहनावे पर बिल्कुल ध्यान न देने के कारण वे काफी बड़े दिखते थे। गाँव में सभी उन्हें 'मियां' या 'बाबा' कहकर पुकारते थे।
गाँव की आबादी 150 या 175 से ज़्यादा नहीं थी; जैसा कि मैंने ऊपर बताया, उनमें से ज़्यादातर लोग चित्रकारी से अपना जीवन यापन करते थे। गाँव की पारंपरिक सीमा से कुछ दूर, मुस्लिम और हिंदू चरवाहों और ऊँट चालकों के कुछ घर थे। वहाँ कुछ खानदानी लेकिन छोटे किसान भी थे। उनके बारे में लंबे समय से यह शंका थी कि वे गुंडे हैं और उनका रिवाज़ बिना खून बहाए हत्या करना, लाश को लूटना और फिर उसे इतनी गहराई में दफना देना है कि वह हमेशा के लिए छिपी रहे। लेकिन गाँव या उसके आस-पास यह अफवाह कभी सच साबित नहीं हुई थी। सच साबित होने की तो बात ही छोड़िए, किसी के पास भी उनके खिलाफ ऐसे अपराध का ज़रा सा भी संदेह करने का कोई कारण नहीं था।
उन कथित बदमाशों में कुछ मुसलमान भी थे; बाकी अलग-अलग जातियों के थे और उनमें से एक ब्राह्मण भी बताया जाता था। मुसलमान नियमित रूप से दिन में पांचों नमाज़ पढ़ते थे और

रमज़ान के महीने में रोज़ा रखते थे; हिंदू अपने-अपने पारिवारिक रीति-रिवाजों के अनुसार देवी-देवताओं की पूजा करते थे। कहा जाता था कि चाहे हिंदू हों या मुसलमान, उन बदमाशों की सच्ची देवी दुर्गा या काली माता थीं, जिनकी वे भवानी के रूप में पूजा करते थे।

हमारे गाँव की समृद्धि का मुख्य स्रोत चित्रकारों की आमदनी थी। हिंदल पुरवाह के चित्रकारों को जड़ी-बूटियों, पत्तियों, छालों, फूलों, फलों और कुछ कीड़ों से रंग बनाने या निकालने की तकनीक और विधि विरासत में मिली थी। इन रंगों में तेल का कोई अंश नहीं होता था, सिवाय उस तेल के जो मूल रूप से वनस्पति या पशु स्रोत में मौजूद होता था। रंगों को पहले एक सूखे, कुछ ढीले द्रव्यमान या गांठ के रूप में तैयार किया जाता था। फिर गांठ के ऊपर और नीचे बहुत महीन मलमल का एक टुकड़ा रखा जाता था, जिसे नरम, चिकने साबुन के पत्थर से धीरे-धीरे पीटा जाता था। पीटने और पीसने की प्रक्रिया इतनी धीमी होती थी कि आस-पास के किसी भी व्यक्ति को इसकी आवाज सुनाई नहीं देती थी। यदि किसी भी कारण से मलमल फट जाता या उसमें छेद हो जाते, तो उसे तुरंत बदल दिया जाता था।

इस प्रक्रिया में कई महीने लग जाते थे, जिसके बाद रंग का गुच्छा इतना बारीक और पाउडर जैसा हो जाता था कि वह हवा में अपने आप उड़ने लगता था। फिर, यह सुनिश्चित करने के लिए कि कोई अशुद्धि न रह जाए, इसे एक और महीन मलमल के कपड़े से छाना जाता था और उसके बाद ही इसे गाढ़ा पेस्ट बनाया जाता था। किशनगढ़ के रंग केवल आवश्यकतानुसार ही तैयार किए जाते थे। बाकी समय पाउडर वाले रंगों को छोटे जस्ता के जारों में सीलबंद करके रखा जाता था। चित्रकार ब्रश के लिए ऊंट के बच्चे की पूंछ के भीतरी मुलायम पंखों का इस्तेमाल करते थे, या कच्छ के जंगली गधों के नवजात बच्चों के कानों से निकले बेहद कोमल पंखों का। पेस्ट बनाने के लिए इस्तेमाल किया जाने वाला पानी भी खास था: इसे केवल किशनगढ़ की प्राचीन झील के पश्चिमी छोर पर स्थित एक पानी के नीचे के तालाब से लिया जाता था। यहाँ एक अनोखी किस्म की जलीय वनस्पति उगती थी। (कहा जाता था कि इसे झील में रहने वाले मगरमच्छों के मूत्र से सींचा जाता था; ऐसा माना जाता था कि वे सौ मील दूर स्थित पुष्कर झील के मगरमच्छ देवताओं के वंशज थे।)

इस जलीय खरपतवार में सिवार (अमरंथस सैंग्विनस) के समान कठोर, घने और नुकीले पत्ते नहीं थे, न ही यह मछली के पौधे की तरह लंबा, पतला, मुड़ा हुआ और चिपचिपा था। इस खरपतवार के तने मोटे, लगभग पत्तीहीन और रेशे रहित थे, और यह इतने विचित्र, मुड़े हुए और घुमावदार आकार में उगता था कि यह किसी जैविक खरपतवार की बजाय किसी विकृत मूर्ति जैसा दिखता था। इसका कुछ भाग ऐसा लगता था मानो किसी नुकीले दांतों वाले जानवर ने इसे कुतर दिया हो; और इस प्रकार पत्तों से रहित और कई जगहों से खुरचकर और काटकर, यह आपस में लिपटा हुआ खरपतवार किसी वनस्पति की बजाय पत्थर से तराशा हुआ प्रतीत होता था। वास्तव में, यह जयपुर के पास अंबर स्थित लाल किले की दीवारों पर की गई जटिल नक्काशी जैसा दिखता था।

झाड़ी और खरपतवार हमेशा पानी में डूबे रहते थे। कभी-कभी गर्मी के चरम महीनों में, पानी का स्तर खरपतवार के तनों से थोड़ा नीचे चला जाता था और चिलचिलाती धूप उन तक पहुँचने का

खतरा पैदा हो जाता था; तने खुद ही रिसने और पसीने की तरह बहने लगते थे, वास्तव में बूंद-बूंद करके नमी बाहर निकालते थे, जब तक कि पानी के ऊपर का पूरा पौधा गीला होकर धूप के प्रभाव से सुरक्षित नहीं हो जाता था।

किशनगढ़ की प्राचीन झील के पानी को रंगों को मिलाने से पहले छोटे मिट्टी के घड़ों में ठंडा किया जाता था। कभी-कभी, लैपिस लाजुली या जैस्पर और क्राइसोबेरिल के छोटे-छोटे टुकड़े महीनों तक उन्हीं घड़ों में डुबोकर रखे जाते थे। आवश्यकता पड़ने पर, घड़ों को खोला जाता था, लेकिन ज्योतिषीय पंचांग, आकाश के रंग और स्थानीय ब्राह्मण की सलाह लिए बिना नहीं।

मखसुल्लाह (या उस समय उनका जो भी नाम रहा हो; इसलिए शायद उन्हें 'मियां' कहना ही बेहतर होगा) ने कभी जानवरों या शिकार के दृश्यों का चित्रण नहीं किया, न ही युद्ध के दृश्यों का। उनके अधिकांश चित्रों में पृष्ठभूमि में एक प्राचीन, ऊँचा, सुनसान या जर्जर मीनार दिखाई देती थी, जिसके अग्रभाग में एक युवती किसी टूटे, भूरे और काई लगे पत्थर या धरती पर बने किसी हरे-भरे टीले पर बैठी या झुकी हुई होती थी। किसी तरह उसके शरीर का संतुलन और मुद्रा यह संकेत देती थी कि कुछ क्षण पहले वहाँ कोई उसे देख रहा था और युवती भी देखने वाले की उपस्थिति से अवगत थी, लेकिन अब उसकी बाईं ओर किसी चीज़ ने उसका ध्यान खींचा और उसने अपना सिर थोड़ा उस दिशा में घुमा लिया, जिससे अब चित्र को निहार रहे व्यक्ति को केवल उसका पार्श्व रूप ही दिखाई दे रहा था। गर्दन के हल्के झुकाव और कंधे की मांसपेशियों में हल्के तनाव के कारण उसके स्तन थोड़े उभरे हुए हैं। उसकी गोरी, पतली गर्दन में भी एक आकर्षक, सूक्ष्म तनाव है। नाजुक ठुड्डी से लेकर आंख तक की त्वचा में हल्का सा खिंचाव और तनाव झलक रहा है, मानो कुछ ही पल पहले उसके होठों पर मुस्कान थी, लेकिन अब वह थम सी गई है, और चेहरे पर अस्पष्ट भाव रह गए हैं। माथे का आधे से ज़्यादा हिस्सा उसकी ओढ़नी (ऊपरी शरीर के लिए एक हल्का आवरण, जो औपचारिक दुपट्टे से हल्का होता है) से ढका हुआ है, लेकिन ओढ़नी के किनारे की महीन लेस इतनी पारदर्शी है कि उसके कंघी किए हुए और संवारे हुए बाल दिखाई दे रहे हैं, जो गुल-ए-दुपाहरिया (पेरू का अद्भुत फूल, जो सूरज निकलने के बाद खिलता है और दोपहर के ठीक बाद मुरझा जाता है) के फूलों से सजे हैं। चूंकि यह चित्र साइड से लिया गया है, इसलिए उसके बालों की चोटी, गर्दन और कंधों की चमक वसंत ऋतु की मोहक लहर का आभास करा रही है।

वह लड़की कौन थी और मियान से उसका क्या रिश्ता था, ये ऐसे सवाल थे जिनके जवाब किसी को नहीं पता थे और न ही किसी की हिम्मत उससे पूछने की थी। वह दिन भर में मुश्किल से एक-दो शब्द ही बोल पाता था। कई रातें वह जंगल में चला जाता, चांदनी रात में रेत के टीले की छांव में चुपचाप लेटा रहता। क्या वह चुपचाप लेटा रहता था या प्रार्थना करता था? कोई नहीं जानता था। कभी-कभी वह एक कपड़े के थैले में बाजरे की रोटी, चटनी, छोटे पैकेटों में सावधानी से लपेटा हुआ थोड़ा सा रंग पाउडर, कुछ खाली कागज और पानी से भरी एक छोटी सी थैली भरकर दो-तीन दिनों के लिए गायब हो जाता था।

हमारा गाँव उत्तर-पूर्व में किशनगढ़ कस्बे से लगभग बीस मील दूर बाड़मेर-जैसलमेर मार्ग पर स्थित था। सदियों से ऊँट, बैलगाड़ी, घोड़े, कभी-कभार रथ और अक्सर पैदल चलने वालों के

पदचिह्नों ने मिलकर एक संकरा रास्ता बना दिया था। यहाँ बारिश न के बराबर होती थी, सिवाय तीन-चार साल में एक बार हल्की फुहार के। इसलिए बैलगाड़ी या वाहन के कीचड़ में फंसने की कोई संभावना नहीं थी, लेकिन रास्ते में गहरे गड्ढे और यहाँ तक कि खड्डे भी थे, जो देखने में साधारण रेत से ढके होते थे। चालक की थोड़ी सी भी लापरवाही या पैदल चलने वाले के एक गलत कदम से पहिया या पैर गड्ढे में फंस सकता था, जिससे अंग टूट सकता था या अन्य चोट लग सकती थी। उन दिनों हमारे गाँव के आसपास के इलाकों में तुगदार नाम का बड़ा पक्षी बहुत आम था। यह छोटे साँपों, चूहों, टिड्डियों और अन्य बड़े कीड़ों को बड़े चाव से खाता था। सबसे बढ़कर, इसे फ़ोर्सा बहुत पसंद था, जो हमारे क्षेत्र का सबसे घातक साँप है। मुश्किल से दो या ढाई हाथ लंबा, पतला और काले धब्बों वाला भूरा साँप, इसका ज़हर इतना शक्तिशाली था कि इसका डंक लगभग हमेशा ही इंसान या जानवर के लिए जानलेवा होता था। यह बेहद तेज़ और आक्रामक था, और इसकी फुफकार बहुत तेज़ और विशिष्ट थी, जिसके कारण इसे फ़ोर्सा ('फुफकारने वाला') नाम मिला। यह शायद ही कभी अपने लक्ष्य से चूकता था, हमला करने के लिए लगभग अपनी आधी लंबाई तक ऊपर उठ जाता था। यह बैलगाड़ी जैसे भारी वाहनों के पहियों या बैल के पैरों के निशान से बने गड्ढों की छाया में चुपचाप सोना पसंद करता था। अगर कोई राहगीर गलती से उस छोटे से गड्ढे में पैर रख देता जहाँ फ़ोर्सा सोता था, तो उसके लिए कुछ भी नहीं किया जा सकता था; फ़ोर्सा अपनी तेज़, डरावनी फुफकार के साथ उठता और दुश्मन की जांघ या पेट पर हमला कर देता। इसके काटने से कुछ घंटों का कोमा और लगभग निश्चित मृत्यु हो जाती थी। निडर तुग़दार ही फुर्से का खात्मा और विनाश का कारण बना। हम तुग़दार के साहस और उस घृणित साँप को निःस्वार्थ भाव से मारने की उसकी फुर्ती के लिए उसका सम्मान करते थे। हम हमेशा मखसुल्लाह मियां को उस ओर जाने के लिए प्रेरित करते थे जहाँ तुग़दार बहुतायत में पाए जाते थे।

महारावल गजेंद्रपति सिंह, जिनकी संपत्ति में हमारा गाँव भी शामिल था, वास्तव में बूंदी परिवार से थे, लेकिन विवाह और उसके बाद दामाद के अनौपचारिक निवास के कारण वे किशनगढ़ में स्थायी रूप से रहने लगे थे। त्योहारों के दिनों को छोड़कर, महारावल शायद ही कभी हमारे गाँव आते थे। वे त्योहार के दिन सुबह देर से आते थे, बिना घोड़े से उतरे उपहार स्वीकार करते थे, सोने की फीती और पतले सोने-चांदी के धागे से बने फूल बिखेरते थे, कुछ चुनिंदा लोगों को वस्त्र या आभूषण देते थे और फिर चले जाते थे। गाँव से उन्हें जो राजस्व प्राप्त होता था, वह कृषि से नहीं आता था। इसलिए उन्हें बीज, सिंचाई या फसलों से संबंधित मामलों में कोई रुचि नहीं थी। एक दिन अचानक यह खबर फैल गई कि महारावल गाँव की सैर पर आने वाले हैं। यह बात तो वाकई अनोखी थी, मानो पहले कभी सुनी ही न गई हो। महारावल तो दूर, उनका प्रतिनिधि भी कभी सैर या मनोरंजन के लिए गाँव नहीं आया था। सभी ने अपने घरों और दरवाजों को सजाया-संवारा; हर घर के सामने पानी छिड़का गया। गाँव की इकलौती सड़क की ओर वाली दीवारों पर जल्दी से चित्र बनाए गए और दरवाजों के सामने रंगोली बनाई गई, जिसमें फूलों की आकृतियाँ और अमूर्त डिज़ाइन थे। इलाके में मोरों की कोई कमी नहीं थी, इसलिए रंग-बिरंगे मोर पंख के पंखे उचित स्थानों पर टांगे गए। कुछ ही मिनटों में गाँव किसी त्योहार के दिन लगे बाज़ार जैसा

लग रहा था।
मखसुल्लाह मियां अपनी नियमित यात्राओं में से एक पर गए हुए थे, लेकिन उन्होंने कुछ ही दिन पहले एक नई पेंटिंग पूरी की थी। उन्होंने हल्के लेकिन मजबूत सफेद रेशम के एक टुकड़े को लेकर पहले उसे हल्का रंगा और फिर उस पर चित्र बनाया। क्या यह एक पेंटिंग थी, या किसी मोहित परी का दर्पण में कैद होना? यह मियां की विशेष कला का बेहतरीन नमूना था।
चौदह या पंद्रह वर्ष की एक युवती काले संगमरमर के एक छोटे, कुछ जर्जर चबूतरे पर बैठी थी: वह अत्यंत आत्मविश्वास से भरी हुई थी, मानो कह रही हो कि जब वह उठेगी, तो एक परिपूर्ण स्त्री बनकर उठेगी। यौवन की उमंग उसके शरीर के हर अंग को छू रही थी। उसकी स्कर्ट सामान्य से थोड़ी लंबी और ढीली थी; उसके टखने गुलाब की कली से भी अधिक कोमल थे, और उसके पैर थोड़े चंचल, कोमल, जीवंत और गुलाब की पंखुड़ी से भी अधिक सूक्ष्म रंग के थे, जो स्कर्ट के नीचे से झांक रहे थे। एक पैर के तलवे पर एक हल्का सा दाग था: शायद तिल या शायद कोई गुलाब की पंखुड़ी उसके पैर के नीचे दब गई हो? गर्दन और सिर थोड़ा एक तरफ मुड़े हुए थे, जिससे मियान की पिछली पेंटिंग्स की तरह ही उसका चेहरा सामने आ रहा था; उसकी पोशाक बिल्कुल भी भव्य या चंचल नहीं थी, बल्कि सफेद, केसरिया और गुलाबी रंग की थी: ये तीनों रंग इतने उपयुक्त और इतने जीवंत थे कि पेंटिंग जीवंत और सजीव प्रतीत हो रही थी। उसके ऊपरी शरीर पर एक हल्का दुपट्टा था, जिसके किनारों पर महीन सुनहरी लेस लगी थी, कुछ सीधी और कुछ मुड़ी हुई, फिर भी, ऐसा लग रहा था मानो दुपट्टा बस नीचे खिसकने ही वाला हो और पूरा चेहरा दिख जाए। आप सोच सकते हैं कि आप बस अपना हाथ बढ़ाकर अंगूठे और तर्जनी से कपड़े को पकड़ लें, लेकिन जैसे ही आप हाथ छोड़ेंगे, ओढ़नी वापस माथे पर गिर जाएगी और पहले जैसी हो जाएगी। नाक सीधी और सुडौल, सुडौल गर्दन गर्व से उठी हुई, बहुत लंबी, थोड़ी तिरछी बड़ी आँखें, जैसे तारा फल के टुकड़े, हरे और सुनहरे, दोनों सिरों पर पतले होते हुए। आँखों की पुतलियाँ पूरी तरह काली और सफेदी पूरी तरह सफेद, लेकिन उसमें माणिक लाल रंग की हल्की सी झलक थी, मानो अदृश्य गुलाबी किरणें नीचे बह रही हों, जो उन्हें अतिरिक्त जीवंतता प्रदान कर रही हों।
यह सब किशनगढ़ शैली की विशेषता थी, लेकिन आभूषणों और सजावट की सादगी नहीं। उन्होंने केवल एक सादा सोने का हार पहना था, जिसमें एक बड़ा तारा आकार का कैबोचोन माणिक लटकन था। उनकी कलाई पर सोने की चूड़ियों की एक जोड़ी थी, जिनके सिरे मगरमच्छ के सिर की तरह लंबे थे। उस्ताद ने प्रकाश और आकृतियों को इस प्रकार व्यवस्थित किया था कि तारा आकार के माणिक पर कुछ प्रकाश पड़ रहा था, जिससे तारे के सभी छह बिंदु प्रकाशित हो रहे थे। उनकी आंखें, पहाड़ की झील की तरह शांत और गहरी थीं, जिनमें स्वभाव की मिठास, चंचलता और गर्व का मिश्रण झलक रहा था। होठों पर स्पष्ट मुस्कान नहीं थी, लेकिन वह वहां शांत गरिमा और पूर्ण आत्मविश्वास के साथ बैठी थीं, सांसारिक भय से पूरी तरह मुक्त।
मियान की झोपड़ी के एक कोने में वह चित्र टंगा हुआ था। लोग उसे देखने और उसकी प्रशंसा करने के लिए दूर-दूर से आते थे। लेकिन प्रदर्शित होने के एक-दो दिन के भीतर ही यह अफवाह फैलने लगी कि चित्र में कुछ गड़बड़ है। गड़बड़? किस तरह की गड़बड़? क्या हम सब नहीं जानते

कि महिलाओं के सभी चित्र काल्पनिक होते हैं?
“नहीं,” पास ही खड़े महारावल के एक सैनिक ने चिंता से भरी फुसफुसाहट में कहा। “यह सच है।” फिर वह झट से चुप हो गया, अपने कानों पर हाथ रखे और मुंह कसकर बंद कर लिया।
शाम की रोशनी आसमान में फैलने लगी थी, लेकिन बाकी शामों के विपरीत, इसमें रेत के छोटे-छोटे कणों पर पड़ने वाली झिलमिलाहट जैसी चमक नहीं थी। काली, गहरी लकीरें, किसी मोटी और भारी रस्सी की तरह, क्षितिज पर धीरे-धीरे सरक रही थीं। सामान्य परिस्थितियों में भी, शाम हमारे आसमान और आसपास के वातावरण को अत्यंत तेज़ी से घेर लेती थी, मानो कोई तेंदुआ अचानक अपने शिकार पर झपटने के लिए पूरी ताकत लगा दे। एक पल उजाला होता था और अगले ही पल अंधेरा छा जाता था। और उस दिन, आसमान में बादल भी छाए हुए थे, धूल और जलवाष्प से भरे हुए, सांपों की तरह मुड़ते और रेंगते हुए।
‘ये क्या? “असली” से तुम्हारा क्या मतलब है?’ किसी ने तीखे और कठोर स्वर में कहा। ‘ये लड़कियाँ किसी आम परिवार की महिलाएँ नहीं हैं। ये अप्सराएँ हैं, सभी देवताओं के राजा इंद्र के दरबार की परियाँ हैं। क्या किसी ने कभी बनिथानी को देखा है? क्या किसी ने सपने में भी उसे देखा है? हम असली महिलाओं का चित्र नहीं बनाते। हम चित्रकार हैं, हम सूर्य और चंद्रमा का चित्र बनाते हैं।’
वे सब स्तब्ध रह गए। वे सब जानते थे कि सत्रहवीं शताब्दी में किशनगढ़ के शासक की रानी का अत्यंत सुंदर चित्र, जिसे ‘सजावटी’ कहा जाता था, बनिथानी कहलाता था। कुछ लोग इसे ‘किशनगढ़ की राधा’ भी कहते थे, जिसका अर्थ है भगवान कृष्ण की प्रियतमा। मूल चित्र की प्रतियाँ आधुनिक राजस्थान में हर जगह बनाई जाती हैं। इन्हें आज भी बनिथानी कहा जाता है, लेकिन इन्हें राधा का चित्र माना जाता है।
‘चुप रहो! चुप रहो!’ एक व्यक्ति जिसका चेहरा मोटे स्कार्फ के पीछे आधा छिपा हुआ था और जो दर्शकों से थोड़ी दूरी पर खड़ा था, अब पास आया और चेतावनी दी।
‘बहस करने का समय नहीं है। इस तस्वीर को तुरंत हटाओ! इसे रेत में गाड़ दो! इसे फेंक दो!’
उसकी बेचैनी कई गुना बढ़ गई थी और वह लगभग पागलों जैसी हालत में था। उसने अपनी छोटी सी पाइप से गहरा कश लिया, और गाढ़ा, गंदा पीला धुआँ उसकी घनी दाढ़ी के बीच से घूमता हुआ उसके चारों ओर फैल गया। हवा में गांजे की तेज़, मीठी-मीठी गंध फैली हुई थी।
‘क्यों? हम तस्वीर क्यों फेंक दें?’ किसी ने घृणा और तिरस्कार से होंठ और नाक सिकोड़ते हुए पूछा। ‘हमारे पास मियान भी नहीं है, जिसकी सहमति लेना ज़रूरी है। कौन जाने, शायद यह पहले ही बिक चुकी हो…’
एक अन्य राहगीर ने उसकी बात काटते हुए गांजा प्रेमी से कहा, 'अरे, अरे बेवकूफ! ये किस तरह की अफीमखाने की गपशप है? सच है? काल्पनिक है? ये क्या बकवास है? साफ और सीधे शब्दों में कहें तो, ये बनिथानी है, महान ख्याति प्राप्त सजे-धजे देवता।'
‘चुप रहो! चुप रहो!’ गांजा पीने वाला सांप की तरह फुफकारा। ‘इस गांव को लूटा जाएगा। इस गांव को तबाह कर दिया जाएगा, बर्बाद कर दिया जाएगा। क्या तुम्हें सैनिकों द्वारा सवार ऊंचे ऊंटों के पैरों की धमक और हवा की तरह दौड़ते हुए भारी-भरकम घोड़ों के खुरों की आवाज नहीं

सुनाई दे रही? आगे बढ़ो! चलो! अब सब खत्म हो गया है। मियां ने हम सबको फांसी पर लटका दिया है। तुम्हारी किस्मत अब अपनी स्थिर जगह से हिल गई है।'
उसकी आँखों में भय के आँसू भर आए थे, और उसके घुटने सूखे लकड़ी के टुकड़ों की तरह आपस में टकरा रहे थे।
'क्या तुम्हारा दिमाग खराब हो गया है, हे दुष्ट धूम्रपान करने वाले और हर तरह के घिनौने पेय पीने वाले? यहाँ से तुरंत निकल जाओ! वरना पल भर में तुम्हारा गला घोंट दिया जाएगा।'
किसी ने उसे धक्का दिया जिससे उसका संतुलन बिगड़ गया। गिरते हुए वह चिल्लाया: 'यह सजे-धजे व्यक्ति नहीं है; यह... सजे-धजे व्यक्ति... नहीं है!' वह ज़ोरदार स्वर में, हर शब्द पर रुक-रुक कर बोल रहा था, मानो दूर से किसी को पुकार रहा हो। दशकों तक गांजा पीने से उसकी ज़बान भारी हो गई थी, लेकिन उस क्षण उसकी आवाज़ में ज़रा भी लड़खड़ाहट या अस्पष्ट उच्चारण नहीं था।
'यह... है... मान... मोहिनी,' वह चिल्लाया।

सन्नाटा छा गया, मानो बिजली कड़क रही हो। मान मोहिनी? मान मोहिनी? क्या वह महारावल की छोटी बेटी नहीं थी? लगभग पंद्रह वर्ष की, उसकी सुंदरता की चर्चा किशनगढ़ और उसके आसपास हर जगह थी। लेकिन उसे किसी ने कभी नहीं देखा था। उसे सत्तर पर्दों के पीछे छिपाकर रखा गया था। उसकी विशेष श्रृंगार करने वाली दासी के अलावा, कोई भी उसके हाथ-पैर देखने की हिम्मत नहीं कर सकता था; और उसके चेहरे या शरीर को देखना तो चाँद पर जाने जितना असंभव था। तो फिर वह चित्र उसका कैसे हो सकता है? मान लीजिए कि किसी ने वास्तव में उसकी एक काल्पनिक तस्वीर बनाने की हिम्मत की भी हो, लेकिन वह उसके वास्तविक रूप से किसी भी अर्थपूर्ण तरीके से कैसे मेल खा सकती है? कोई भी, कहीं भी, उसका चित्र कैसे बना सकता है जब किसी को उसके चेहरे के अनुपात, उसकी हड्डियों की संरचना का पता ही न हो?

‘नहीं, नहीं! यह झूठ है; यह बेतुका है!’ किसी ने चिल्लाकर कहा। ‘अगर कोई हमारी राजकुमारी पर झूठे आरोप लगाने की कोशिश करेगा, तो उसकी जीभ काट दी जाएगी!’

‘लेकिन आखिर कोई उसे बदनाम करने की कोशिश क्यों करेगा?’ एक बूढ़ी औरत ने पूछा। ‘शुद्ध क्रीम पर गोबर मलने से किसी को क्या फायदा होगा? कृपया इस मामले की तह तक जाने की कोशिश कीजिए,’ उसने विनती की। ‘यह एक-दूसरे पर चिल्लाने और अपना आपा खोने का समय नहीं है। किसी का गला पकड़ने से क्या फायदा?’

‘शायद यह महारावल को बदनाम करने की साजिश है,’ किसी ने सिर खुजाते हुए अनुमान लगाया। ‘लेकिन…’

इससे पहले कि वह अपना वाक्य पूरा कर पाता, हमारे गाँव की बाहरी सीमा पर घोड़ों के खुरों की गड़गड़ाहट सुनाई दी। धूल का एक सैलाब उठा और पलक झपकते ही पूरे गाँव में फैल गया।

‘मियां कहाँ है? मियां कहाँ है? … मियां कहाँ है?’

धुंधली सी धूल में गूंजती आवाजें; घोड़ों के खुरों से निकलती चिंगारियां जैसे ही वे रास्ते में पत्थरों से टकराते; पत्थर बिखरते, तेज रफ्तार से दौड़ते खुरों के नीचे से बरसते हुए; धरती एक डरे हुए बच्चे की तरह कांप रही थी जैसे तेज रफ्तार से दौड़ते घोड़ों की गड़गड़ाहट की लहरें गांव से टकराई हों।

‘मियां यहाँ नहीं है, मियां यहाँ नहीं है, मियां यहाँ नहीं है। यहाँ कोई नहीं है!’

‘हममें से किसी के पास हथियार नहीं हैं! महाराज, आपके आदेशानुसार, हम पूरी तरह निर्दोष हैं!’ एक साहसी ग्रामीण चिल्ला उठा। फिर कई अन्य आवाजें भी आईं, सबने अपने-अपने शब्दों में यही बात दोहराई। लेकिन शोरगुल के कारण कोई भी ठीक से सुन या समझ नहीं पाया।

मियान की कुटिया के आले में लगी पेंटिंग ऐसे फड़फड़ा रही थी मानो कोई भूकंप आने वाला हो, जो सब कुछ तबाह कर दे और सबको धरती चूमने पर मजबूर कर दे। पूरा गाँव घिर चुका था। आख़िरकार, यह झोपड़ियों का एक छोटा सा समूह था। यहाँ तक कि कोई बाज़ार भी नहीं था।

अब शोर कुछ कम हो गया था। बूढ़ी औरतें और बच्चे घुटनों के बल बैठे थे, नज़रें झुकी हुई थीं और सिर पर कपड़ा या चादर ओढ़े हुए थे। वे जानते थे कि समर्पण का यह भाव उनकी जान तो नहीं बचाएगा, लेकिन कम से कम उन्हें उस नरसंहार के दृश्य से तो मुक्ति मिल जाएगी जो उनकी आँखों में खंजर की तरह चुभेगा।

कभी-कभी हर तरफ सन्नाटा छा जाता था; कभी-कभी गाँव भर में एक तेज़ भिनभिनाहट की आवाज़ तेज़ होकर धीमी हो जाती थी। ज़्यादातर लोगों की नज़रें ज़मीन पर या अपने दरवाज़े की चौखट पर टिकी रहती थीं। शायद ही किसी की नज़र सामने वाले व्यक्ति के माथे से ऊपर उठती थी। कुछ गिने-चुने, सबसे बहादुर, ऊँट सवारों के भालों की नोक को टकटकी लगाए देखते रहते थे। और हर भाला किसी न किसी दरवाज़े, किसी छाती, किसी बच्चे, किसी औरत की ओर तना हुआ था। हाथों में ऊँचे भाले बड़ी कुशलता से संतुलित किए हुए थे, भाला चलाने वाले ऊँचे और मज़बूत होकर सवार थे, उनके चेहरे पर कोई भाव नहीं था: न कठोरता, न नाराज़गी, न खून बहाने की लालसा। उनके भाले एक हाथ या डेढ़ हाथ से भी बड़े थे, उनके ब्लेड भालों की लंबाई के लगभग आधे से थोड़े कम थे। उनकी नोकें लंबी और नुकीली थीं, लेकिन उनमें हाथीदांत से बने पीठ खुजलाने वाले औजारों जैसी कोमलता और लचीलापन नहीं था। यहाँ ऐसा प्रतीत होता था मानो किसी जंगली सूअर के दांतों को घिसकर सीधा किया गया हो और फिर भाले के सिरे पर लगाया गया हो, जिसे बाद में चांदी की चादर से लपेटकर और मजबूत किया गया हो। सवारों का अपने घोड़ों पर बैठने का तरीका और उनके हाथ, कंधे या बांहों में भाले का संतुलन इतना सामंजस्यपूर्ण था कि उनमें अंतर करना लगभग असंभव हो गया था। भाला चलाने वाला ही भाला बन गया था।

गाँव की सीमा की बाड़ के पास थोड़ी हलचल मची; सैनिकों की कतारें टूट गईं और कई टुकड़ियों में बँट गईं। महारावल अपने अरबी घोड़े पर सवार होकर उनके आगे थे, लेकिन बिना सिर ढके। महारावल, बिना सिर ढके? बिना सिर ढके, महारावल? ऐसा नज़ारा शायद स्वर्ग की आँखों ने भी नहीं देखा होगा, गाँव वालों की तो बात ही छोड़िए, न कहीं और के गाँव वालों ने। आखिर हो क्या रहा था? यह ऐसा नज़ारा था जिसे देखकर पूरी दुनिया काँप उठे, मानो उसे बुखार आ गया हो। उनके बालों से टपकता हुआ पसीने का सुगंधित द्रव्य उनके चेहरे को एक अजीब सी चमक दे रहा था। उनके सिर के किनारों से कानों तक आते घने बाल, जो मूंछों को छू रहे थे, थोड़े बिखरे हुए और बेतरतीब लग रहे थे। और महारावल के पीछे: एक खुली पालकी। एक महिला की पालकी, और वह भी खुली हुई? यह कैसी अद्भुत बात थी? साहसी लोगों ने आँखों के कोनों से देखा, आँखें बंद कीं, खोलीं और फिर से देखा।

उन्होंने अपनी आँखें मलीं और फिर देखा। पालकी में पर्दे नहीं थे, और मान मोहिनी उसमें बैठी थी, उसका शरीर बिना चादर के था, उसके पैर बिना जूतों के थे। उसकी नाक, हाथ और पैर गहनों से रहित थे, उसके चेहरे पर गर्व और स्वास्थ्य की कोई झलक नहीं थी, लेकिन उसका सिर सीधा था। उसकी पतली गर्दन में वही जानी-पहचानी अकड़ थी, मानो उसकी शादी कुछ ही महीने पहले हुई हो, और रानी की तरह अपने राजकुमार के महल में आई हो, अपने पद के गर्व से भरी हुई, जिसने अपने प्रेमी के शहर में माणिक और पुखराज उगाए हों, और अब गर्भावस्था के बोझ

से अभिमानी हो गई हो। चौदह वर्षीय राजकुमारी ने कभी महल के मुख्य द्वार की दहलीज तक नहीं देखी थी, और यहाँ वह मियां मखसुल्लाह की साधारण झोपड़ी के आले में प्रदर्शित चित्र में थी। और अगर वह स्वयं नहीं थी, तो वह उसकी हूबहू छवि में कोई और थी, जो बिल्कुल वैसी ही दिखती थी जैसी वह असल जिंदगी में थी, हर दृश्य में वास्तविक। और अगर यह चित्र था, तो कोई चित्रकार भी जरूर रहा होगा।

किसी के आदेश या इशारे के बिना ही, मान मोहिनी की पालकी मखसुल्लाह की झोपड़ी के ठीक सामने आकर रुक गई, मानो उसे पता हो कि वह अपनी मंजिल पर पहुँच गई है। उसने अपने पैर फैलाए, मानो उतरने की कोशिश कर रही हो, और वहाँ मौजूद सभी लोगों ने भयभीत होकर देखा कि उसके पैर बेड़ियों में जकड़े हुए थे, और उसके कोमल, नाजुक पैरों पर कोई आभूषण भी नहीं थे। जैसे कोई लकवाग्रस्त हो, उसने अपने कंधों और कोहनियों के सहारे खुद को घसीटते हुए बाहर निकाला और पालकी के दरवाजे के पास सीधी खड़ी हो गई।

'मन मोहिनी...' वक्ता के स्वर में एक विचित्र, हृदयविदारक पीड़ा थी, एक ऐसी पीड़ा जिसमें विनती, भय और क्रोध के भाव समाए हुए थे, ठीक वैसे ही जैसे किसी शिकारी द्वारा अपने शरीर से सटी हुई छुरी की आरी जैसी धार की असीम शक्ति में प्रकट होने वाला क्रोध। परन्तु वह क्रोध एक दबी हुई आह में विलीन हो गया था।

'मन मोहिनी..., मेरी तरफ देखो, मन मोहिनी!'

लड़की ने अपना सिर उठाया, लेकिन उसकी निगाहें पिता के चेहरे तक नहीं पहुँच पाईं। उसकी निगाहें सीने पर लटके हुए तारेनुमा माणिक पर टिकी थीं—जो कबूतर के खून की तरह लाल था। पास और दूर की मशालों से आती रोशनी की किरणें हवा के चलने या रुकने पर माणिक को छूती थीं, जिससे पत्थर अपने तारे के छहों ओर से जगमगा उठता था, मानो मान मोहिनी के दिल को भेदने पर तुला हो।

'तुम मेरी पुत्री हो, मन मोहिनी, और मैं, वलजाह गजेंद्रपति मिर्जा, तुम्हारा पिता हूँ। मैंने तुम्हें जीवन इसलिए नहीं दिया कि तुम मेरा और अपना अपमान करो! तुम्हारा चित्र यहाँ कैसे आ गया? किसने तुम्हें देखा और किसने उसे यह दुस्साहस दिया कि वह तुम्हारा चित्र बनाए, जो मेरे लिए एक गहरा घाव है, ताकि तुम्हारा नाम गलियों और सड़कों पर इतनी जोर से गूंजे कि वह धरती और आकाश में टूटते तारे की तरह मुफ्त मनोरंजन बन जाए?'

मान मोहिनी ने कुछ नहीं कहा। उसका सिर पहले की तरह झुका हुआ था। कठोर रेतीली ज़मीन पर पड़े पत्थरों और कंकड़ों से उसके नंगे पैरों में ज़रूर चुभन हुई होगी, लेकिन उसके शरीर में कोई कंपन या बेचैनी नहीं दिखी।

'मोहिनी,' उसके पिता ने अत्यंत दयनीय स्वर में कहा, 'कृपा करके मुड़ो और देखो। यह किसका चित्र है? यह यहाँ कैसे आया? तुम यहाँ कैसे हो? यह कौन है? इस चित्र को बनाने वाला चित्रकार कौन है? बोलो! तुम्हारे चेहरे पर कालिख के रंग किसने उकेरे हैं?'

लड़की ने धीरे से पीछे मुड़कर देखा। वहाँ वह चित्र था, मानो शाम के अंधेरे में एक दीपक की तरह रोशनी बिखेर रहा हो, उसकी शारीरिक मुद्रा बिल्कुल असली लड़की जैसी थी। वही गहरा प्राकृतिक धूसर-हरा ओढ़नी जिस पर छोटे-छोटे सफेद फूल हल्के से बिखरे हुए थे, ओढ़नी थोड़ी

सी फिसल रही थी, पीछे से आती हल्की रोशनी उसके बालों को चमका रही थी, जिनके रंग कुछ जगहों पर ओढ़नी के साथ लगभग घुलमिल गए थे, जिससे दोनों में अंतर करना मुश्किल था, यहाँ तक कि बाल ऐसे लग रहे थे मानो चेहरे को पृष्ठभूमि बनाकर चित्रित किया गया हो। जामुन जैसे काले रंग की बड़ी-बड़ी आँखें, एक तरफ झुकी हुई, मानो पास आते कदमों की आहट सुनकर वह आने वाले व्यक्ति की ओर ध्यान दे रही हो।

'अपना चेहरा मेरी ओर करो। मेरी तरफ देखो।' इस बार, उसके पिता के स्वर में न तो कोई अपील थी, न भय, न पीड़ा। उसमें केवल एक सीधा आदेश था। धीरे-धीरे, वह मुड़ी, और उसका पूरा चेहरा सबके सामने था। गजेंद्रपति मिर्जा ने अपने भूरे अरबी घोड़े को इतनी ज़ोर से एड़ी मारी कि वह लड़की से लगभग दो सौ कदम दूर रुक गया। अपने भाले को घोड़े की पीठ और टांगों के समानांतर रखते हुए, उन्होंने उसे अपने बाएं हाथ में इस प्रकार स्थानांतरित किया कि भाले की नोक अब घोड़े के कानों के ठीक बीचोंबीच टिक गई। फिर उन्होंने अपनी तलवार म्यान से निकाली, और उसे अपने दाहिने हाथ की मुट्ठी में मजबूती से संतुलित करते हुए, अपना हाथ फैलाया। देखने वालों को ऐसा लगा मानो महारावल की मुट्ठी से आकाश के चील का शक्तिशाली पंख निकल आया हो। घोड़े को हल्की सी एड़ी मारते हुए, तलवार और हाथ को अकड़ाकर और स्थिर रखते हुए, अपनी जांघों को हवा में दौड़ते हुए घोड़े के किनारों से दबाते हुए, महारावल ने उसे कोई सूक्ष्म आदेश दिया, और घोड़ा एक छोटी छलांग लगा बैठा। उसके बाद, कोई यह निर्धारित नहीं कर सका कि घोड़े और सवार ने मोहिनी के दुबले-पतले शरीर को पार करते हुए दो सौ कदम की दूरी कब तय की, और कब तलवार की धार, जो बाल से भी तेज और महीन थी, ने मोहिनी की गर्दन पर एक छोर से दूसरे छोर तक खून की एक लकीर खींच दी।

कुशल घुड़सवार और उसका घोड़ा बिना रुके आगे बढ़ते चले गए। कुछ पल के लिए मोहिनी का सिर उसके कंधों पर टिका रहा। फिर, जैसे ही पर्वतीय शरीर वाले घोड़े के तेज़ खुरों का झटका ऊपर की ओर बढ़ा और उसके मृत शरीर तक पहुँचा, लड़की का सिर लुढ़क कर कुछ गज दूर खुरदरी, धूसर, निर्जीव धरती पर जा गिरा। लेकिन मोहिनी के शरीर रूपी हरे-भरे वृक्ष को धरती को चूमने में कुछ और क्षण लगे। खून ने उसके शरीर के किनारों और छाती को घूंघट की तरह ढक लिया, उसका लंबा शरीर नाचते हुए झूम उठा। फिर, सबसे नरम बिस्तर पर पला-बढ़ा वह शरीर, उस गाँव की गर्म, कठोर धूल की आलिंगन में समा गया, जिसका नाम हिंदुस्तान की धरती के सबसे दयालु और सर्वप्रिय संतों में से एक के नाम पर रखा गया था।

एक सहज गति में, घुड़सवार लहर की तरह आसानी से मुड़ा, मानो वह कहीं आगे नहीं जा रहा हो, बल्कि केवल घुड़सवारी की शैली और चाल का प्रदर्शन कर रहा हो। तलवार भी उसी फुर्तीली, लहरनुमा गति से म्यान में वापस चली गई। अब भाला उसके हाथ में था। उसने मियां के दरवाजे पर पड़ी सिर कटी हूरी की ओर एक नज़र भी नहीं डाली। उसने भाले वाले अपने हाथ को सीधा किया और उसकी नोक मियां की झोपड़ी के आले की ओर बढ़ाई। एक कुशल गति में, भाले ने चित्र को भेद दिया और उसे इतनी आसानी से बाहर निकाल लिया जैसे कोई कुशल मछुआरा पानी के नीचे भाला डालकर किसी अनजान मछली को भेद देता है। एक झटके में, चित्र भाले की नोक से मुक्त होकर मिट्टी के रास्ते पर गिर पड़ा। फिर घोड़े को इशारा किया, और

उसके भारी खुर ने चित्र को कुचल दिया।
“सुबह होने से पहले ये लोग गाँव खाली कर दें,” उसने थोड़ा मुड़कर किसी से कहा। “सुबह होने के बाद मैं इनके जीवन और संपत्ति के लिए ज़िम्मेदार नहीं रहूँगा।” फिर उसने भाला अपने घोड़े के रात के रंग के कानों के बीचोंबीच रखा और भीड़ के बीच से निर्भीक होकर निकल गया।

मियां मखसुल्लाह हिंदुस्तान के ठंडे उत्तरी भाग की ओर भाग जाता है।

एक गहरी आह उठी और आकाश में चील की तरह खो गई। यह किसी के गले से, किसी के सीने से, किसी के पूरे अस्तित्व से निकली, लेकिन हवा के अंधेरे में कोई वृद्धि नहीं हुई। बच्चे अपनी माताओं के लिए रो रहे थे, माताएँ अपने बेटों को पुकार रही थीं, युवक बूढ़े पुरुषों, पत्नियों या प्रेमिकाओं को चादर की पतली सी ओढ़नी में लपेटने के लिए दौड़ रहे थे... आख़िर उस छोटे से गाँव में कितने लोग थे? अपने गाँव से तीन मील दूर, मियां को निर्वासितों के बीच कुछ लोग मिले। अपने कपड़े के थैले में—जिसमें विशाल बस्टर्ड, काले सिर वाले सुनहरे ओरिओल और मोर के पंख थे—अपने कमज़ोर कंधे पर सावधानी से टिकाए हुए, थके हुए चित्रकार ने कुछ सवाल पूछे, बिना पूछे ही बहुत कुछ समझ लिया, और चुपचाप पैदल चल रहे काफिले के पीछे चल दिया।

दिल्ली से निकलने वाली मुख्य सड़क पर पहुँचने से पहले ही सुबह का समय गर्म और धूप से भरा था। यह सड़क मेराठ, बयाना, रेवाड़ी से होकर गुजरती थी और फिर कोटा को छूते हुए दाईं ओर मुड़कर उत्तर की ओर लाहौर की ओर जाती थी। फिर यह दक्षिण-पश्चिम की ओर मुड़कर गुजरांवाला, वज़ीराबाद, झेलम से होते हुए रावलपिंडी पहुँचती थी। वहाँ से यह उत्तर-पूर्व की ओर मुड़कर श्रीनगर की ओर जाती थी और अंत में बरहमुला में समाप्त होती थी। बुजुर्गों ने अपने गूढ़ हिसाब-किताब लगाकर यह तय किया कि उत्तर-पश्चिम दिशा दक्षिण-पूर्व दिशा से बेहतर है, भले ही उस क्षेत्र की जलवायु, भाषा, रीति-रिवाज और परंपराएँ पूरी तरह से अलग हों। अब वे राजमार्ग पर रुक गए, उत्तर-पश्चिम की ओर जाने वाले किसी बड़े और भरोसेमंद काफिले के आने का इंतज़ार कर रहे थे ताकि वे उसमें शामिल हो सकें।

उन्हें अपने लिए उपयुक्त कारवां मिलने से पहले तीन दिन इंतजार करना पड़ा। फिर, कई जगहों पर रुकते हुए, अलग-अलग स्टेशनों पर कुछ रातें ठहरते हुए, अपने थोड़े से थैलों और बंडलों को पैक और अनपैक करते हुए, वे अपने मूल स्थान से दूर होते चले गए, और एक नए गंतव्य की ओर बढ़ते गए। कारवां के कई सदस्य, थकान और चिंता से मुरझाए हुए, हर पड़ाव पर साथ छोड़ देते थे।

हिंदल पुरवाह से पैदल चलकर की गई लंबी और कष्टदायी यात्रा की कठिनाइयों और परेशानियों को सहते हुए, यात्रियों को बरहमुलाह पहुंचने में पांच महीने लग गए। तब तक उनकी संख्या काफी कम हो चुकी थी।

अंत तक बचे रहने वालों में मियान चित्रकार सबसे प्रमुख थे। जो लोग उन्हें जानते थे, वे यह भी जानते थे कि इंद्रधनुष उनके हाथों में था, और उनकी उंगलियां सुबह और चांदनी रात के उजाले, बादलों की छाया और शाम के अंधेरे को नियंत्रित कर सकती थीं। उन्हें चिनार के पेड़ का एक सूखा पत्ता, एक प्याला पानी और कुछ मैले-कुचले रंग के टुकड़े दे दीजिए, तो वे पूरे पेड़ को तो नहीं, लेकिन कम से कम उस मुरझाए पत्ते को तो पुनर्जीवित कर ही सकते थे। यही कारण था कि कारवां के प्रत्येक यात्री उनकी यथासंभव देखभाल करते थे, उनका आदर करते थे और उन्हें

शत्रुओं, शिकारी जानवरों और यात्रा की कठिनाइयों से हर संभव सुरक्षा प्रदान करते थे, और पहाड़ों की ओर बढ़ते हुए घुमावदार रास्तों के मनमोहक और अद्भुत दृश्यों से बचाने के लिए उन्हें यथासंभव लपेटकर रखते थे।

जब काफिला बरहमुला पहुंचा, तब तक चित्रकार मियां अपनी राजपूतानी भाषा का काफी हिस्सा भूल चुका था। कुछ ही महीनों बाद वह अपनी किशनगढ़ शैली की चित्रकला के लिए रंग बनाने की कला भी भूल गया।

और भला वो उन यादों को कैसे नहीं भूल सकता था? घर की याद दिलाने के लिए आसपास कुछ भी नहीं था: न तो वो जड़ी-बूटियाँ और झाड़ियाँ जिनकी जड़ों और पत्तियों से रंग निकलते थे; न ही किशनगढ़ की वो चट्टानें और झील का पौराणिक जल; न ही वो रंग बिखेरने वाले कीड़े जो साल के अलग-अलग समय पर झुंड में दिखाई देते थे। सबसे बढ़कर, इस नई भूमि में वो देवी जैसी लड़कियाँ नहीं थीं, लंबी और पतली, जिनके तांबे जैसे रंग के शरीर, गार्नेट की तरह कठोर और चमकदार, उनके गुजरने पर हवा को भी रंगीन बना देते थे; वो लड़कियाँ इतनी कुशल थीं कि हथौड़े के एक ही प्रहार से मिट्टी के रंग के लैपिस लाजुली या जैस्पर के टुकड़े को तीन हिस्सों में तोड़ देती थीं। फिर, पहले बड़े टुकड़े को हाथ में लेकर, उसे पानी के कटोरे में तब तक रगड़ती और घिसती थीं, जब तक कि पत्थर का दोषपूर्ण और धुंधला हिस्सा घिस न जाए, और उसका असली रंग, मिस्र के स्कारब की तरह नीला या चमेली की तरह लालिमा लिए नीला, उभर न आए।

कश्मीरी लड़कियों की कोमल उंगलियों और लचीली कलाइयों में न तो वो कौशल था और न ही वो शारीरिक शक्ति। न ही उनके गोरे, छोटे हाथों में वो ताकत थी कि वे राजपूतानी लड़कियों के लकड़ी के हथौड़ों को चला सकें, जो देखने में हल्के और पतले लगते थे, लेकिन वास्तव में इतने कठोर होते थे कि सही कोण से इस्तेमाल करने पर रत्नों की खान पर आसानी से अपना काम कर सकते थे।

मियां ने लकड़ी पर फूलों और पत्तियों के पैटर्न तथा ज्यामितीय आकृतियाँ बनाना सीखकर अपना नया जीवन शुरू किया। दरअसल, वह जल्द ही अपनी इस नई कला में निपुण हो गया। कश्मीरी चित्रकला में वह सूक्ष्म प्रभाव नहीं होता था जो केवल उत्कृष्ट चित्रकारी में ही पाया जा सकता है। कश्मीरी चित्रकार पतले लकड़ी के तख्तों पर मुलायम कोयले से चित्र बनाते थे। तख्ते को पहले चीड़ के तेल में तब तक डुबोया जाता था जब तक वह पूरी तरह से तेल में भीग न जाए और दोहरी या तिहरी आसुत शराब की तरह मजबूत न हो जाए। अब तख्ता लचीला हो जाता था और कागज की शीट की तरह मोड़ा जा सकता था, लेकिन यह आसानी से टूट भी जाता था। इसलिए इस पर शेलैक की हल्की परतें लगाई जाती थीं, प्रत्येक परत को सूखने के लिए पर्याप्त समय दिया जाता था। इस प्रकार तख्ता अंदर से मजबूत और बाहर से चमकदार हो जाता था, जिससे लेमिनेशन जैसा प्रभाव मिलता था। एकरूपता बनाए रखने और दरारें या पपड़ी बनने से रोकने के लिए सुखाने की प्रक्रिया छाया में की जाती थी। लकड़ी का तख्ता तब चित्रकारी के लिए तैयार माना जाता था जब वह गत्ते जैसा महसूस होने लगता था। तब इसे चित्रकार को अच्छे दाम पर बेचा जा सकता था।

यह सब तो ठीक था। लेकिन यहाँ कोई बनिथानी ऊंटनी नहीं थी। और फिर, वे सुनहरे बालों वाले ऊँट कहाँ थे जिनके रोएँ उनके शरीर से झालरों की तरह लटकते थे? और वे मादा ऊँटें कहाँ थीं जिनकी आँखें हिरण जैसी बड़ी थीं, लेकिन दौड़ते हुए घोड़े की आँखों से भी गहरी और तीव्र थीं? उनमें से किसी की भी ऊँचाई दस-बारह हाथ से कम नहीं थी, लेकिन उनके पैर रेगिस्तान की रेत पर इतनी कोमलता से पड़ते थे कि कोई भी यह नहीं बता सकता था कि कौन सी ऊँटनी बच्चे को जन्म दे चुकी है और कौन सी नहीं। वे तेंदुए और तेंदु कहाँ थे, जो आठ हाथ तक लंबे होते थे, जो रात में अजगर की तरह रेंगते हुए दीवार में बने एक संकरे छेद से किसी ग्रामीण की झोपड़ी में घुस जाते थे, जब दरवाजा बंद होता था, और अपने मानव शिकार को इतनी तेज़ी से आधा मार डालते थे कि शिकार एक आह भी नहीं भर पाता था। शिकार को बेबस कर देने के बाद, नरभक्षी शिकारी इतनी फुर्ती और खामोशी से दीवार में बने एक पतले से छेद से उसे घसीटकर ले जा सकता था कि शिकार के गुजरने का पता तभी चलता था जब उसके हाथों से मिट्टी का तंबाकू का पाइप गिर जाता था, जिससे जलते हुए अंगारे और तंबाकू मिट्टी की ज़मीन पर ऐसे बिखर जाते थे जैसे चांद के फूल खिलते हों।

यहाँ, इसके विपरीत, सरू और बलूत के पेड़ थे जिनकी ऊँची शाखाएँ मानो आकाश को चूम रही थीं, उनके सिर गर्व से, अभिमानी, गहरे और रहस्यमय ढंग से ऊपर उठ रहे थे। भारी और प्रभावशाली, सीधे और अकड़े हुए, घने, घुमावदार, कुंडलित और अपने आप में ही सिमटते हुए, ऐसा लगता था कि कोई पक्षी कभी उनकी सघनता में अपना घर नहीं बनाएगा। और वे भी कभी किसी जानवर या पक्षी से बात नहीं करेंगे, यहाँ तक कि पहचान में अपना सिर भी नहीं हिलाएँगे। जब उनकी शाखाओं पर और फिर उनके प्रत्येक पत्ते पर बर्फ की बूँदें और हिम क्रिस्टल उग आए, तब भी वे किसी से एक शब्द भी नहीं कहेंगे। शायद वे उस धरती की ओर थोड़ा सा झुक जाएँगे जहाँ से वे निकले थे। या शायद कभी-कभी, अपनी चुप्पी में ही वे यह कह रहे हों कि हम कहीं और से नहीं बल्कि यहीं से आए हैं, इस ठंडी धरती से। प्रभु ने हमारे सिर ऊँचे उठाए हैं, तो इसमें क्या गलत है अगर वह कभी-कभी इन पथरीली सुइयों को हमारे शरीर की हर नस और धागे में प्रवेश करने देते हैं ताकि हमें मृत्यु की ठंड का पूर्वाभास हो सके?

आकाश में भयावह ढंग से उठते वे काले चीड़ के पेड़, घने और नम, मियां को कभी भा नहीं पाए। जहाँ तक झेलम नदी के किनारे बरहमुला में साल भर खिलने वाले फूलों की बात है, जो बर्फ़बारी के दिनों को छोड़कर किसी न किसी तरह खिलते ही रहते थे, वे भी मियां को पसंद थे, लेकिन उनकी पंखुड़ियाँ हल्की और नसें इतनी पतली और कोमल थीं कि मियां को उनका कोई उपयोग नहीं था। उन्हें चिनार या प्लेन के बड़े पत्तों को चित्रित करना अच्छा लगता था—प्रत्येक रेशा स्पष्ट रूप से दिखाई देता था, प्रत्येक सूखी नस एक सटीक ज्यामितीय तरीके से फैली होती थी, मानो महीन मलमल का जाल बना रही हो, और पूरा पत्ता रेशम की तरह नरम और लचीला होता था।

अपनी झिझक को दूर करते हुए, मियां ने अंततः मोटे कागज और लकड़ी के तख्तों पर चित्रकारी की कला सीखी और उसमें महारत हासिल की। वे लाख के काम में भी निपुण हो गए। महज कुछ ही वर्षों में उन्हें कश्मीरी कला के उस्ताद के रूप में जाना जाने लगा। दर्शक और कला

पारखी, जब उनकी कलाकृतियों को देखते, तो उन्हें स्वाभाविक रूप से कश्मीरी ही मानते और उनकी विदेशी बोली या गैर-कश्मीरी रूप-रंग और व्यवहार पर ध्यान तक नहीं देते।
कुछ और साल बीत गए। चित्रकार मियां अब चित्रकार मकसुल्लाह बन चुके थे। उन्होंने बारामूला से कुछ मील उत्तर में स्थित कुपवारा नामक एक छोटे से कस्बे की रहने वाली सालिमा से विवाह किया और वहीं बस गए। उनका स्टूडियो खूब फला-फूला, लेकिन वे अब भी नए-नए तरीके खोजते रहते थे और हमेशा काम करने के नए-नए तरीकों के बारे में सोचते रहते थे। किशनगढ़ में हाथीदांत पर लघुचित्र बनाने की कोई परंपरा नहीं थी, और कश्मीर में कांगड़ा शैली के जो चित्र बचे थे, वे हाथीदांत पर लघुचित्र बनाने के लिए आवश्यक बारीकी और कोमलता को प्राप्त नहीं कर पाते थे। न ही कश्मीरी शैली किशनगढ़ शैली के लिए आवश्यक बड़े चित्रकला सतहों को व्यवस्थित कर पाती थी। फिर भी, अपनी किसी रहस्यमयी कुशलता से, मकसुल्लाह ने हाथीदांत पर बनिथानी का एक लघुचित्र बनाया, जिसमें किशनगढ़ और कश्मीर दोनों की झलक थी। इस चित्र को उन्होंने अपने स्टूडियो के एक कोने में टांग दिया। जब भी कोई किशनगढ़ या उस अजीबोगरीब हाथीदांत की लघु मूर्ति के बारे में जानने की कोशिश करता, तो वह कोई जवाब नहीं देता और तुरंत विषय बदल देता। कभी-कभी तो वह थोड़ा चिड़चिड़ा भी हो जाता, जिससे साफ संकेत मिलता कि उसे यह पसंद नहीं कि कोई भी, या खुद वह भी, इस विषय पर बात करे। बनिथानी के चित्र से सजे आले में रात भर एक दीपक जलता रहता था। किसी ने भी उनसे पूछने की हिम्मत नहीं की कि ऐसा क्यों है, लेकिन शायद मखसुल्लाह अक्सर हर दिन लंबे समय तक उस चित्र को निहारते रहते थे, और जैसा कि सालिमा को शक था, वे रात भर जागकर भी उस चित्र को देखते रहते थे। इसी वजह से मखसुल्लाह के स्वभाव में एक अजीब सी गड़बड़ी आ गई थी, कोई अनजानी सी बीमारी जिसके कारण वे कई दिनों तक काम पर नहीं जाते थे। कभी-कभी वे दो-तीन दिनों तक चुप रहते थे, कुछ खाते नहीं थे या बहुत कम खाते थे। कभी-कभी वे अपने आंगन में लगे बादाम या खुबानी के पेड़ों पर उगने वाली छोटी-छोटी टहनियों को गिनते थे और पड़ोस के बच्चों से शर्त लगाते थे कि उनमें से कौन सी टहनी पहले खिलेगी और फिर फल बनेगी। फिर एक दिन, मखसुल्लाह ने घोषणा की कि जल और तेल से चित्रकारी करने की शैली उन्हें बिल्कुल भी पसंद नहीं आई। उन्होंने बनिथानी चित्र को अपनी जेब में रखा, सिर पर पगड़ी कसी और घोषणा की कि वे अब जा रहे हैं।
सलीमा ने आधे दुख और आधे विरोध में अपना माथा पीटा और अपने जाने-पहचाने लहजे में बोली, “तो तुम क्या खाओगे? और हमें क्या खिलाओगे? तुम कोई नया हुनर सीखने की उम्र से बहुत आगे निकल चुके हो। अनपढ़ होने के कारण तुम्हें दरबार या किसी दफ्तर में लेखक के तौर पर नौकरी नहीं मिल सकती। तुम दुबले-पतले और कमज़ोर शरीर के हो, इसलिए सैनिक या घुड़सवार बनने के लायक नहीं हो। नाव चलाना तुम्हारा खानदानी पेशा नहीं है...”
'चुप रहो, स्त्री। जिसने मुंह बनाया है, वही उसे भरेगा भी। तो हमें चिंता क्यों करनी चाहिए?'
सलीमा जवाब में कुछ कहने ही वाली थी कि अचानक मखसुल्लाह क्रोधित हो उठा। उसने हुक्के का मुखड़ा होठों से खींचकर एक तरफ फेंक दिया और गुस्से से दहाड़ते हुए बोला, “मैं तुम्हारे कश्मीरी भूखों में से एक नहीं हूँ। मैं किशनगढ़ का चित्रकार हूँ। मुझे बस अपना हाथ उठाना है

और मैं फिर से वही चित्रकार बन जाऊँगा। तुम्हारा गोरा रंग, तुम्हारी कोमल सफेद त्वचा, ये मेरे किस काम की? अगर तुम मेरे लोगों में से होतीं, तो मैं तुम्हारे हाथ में कुल्हाड़ी थमा देता और तुम्हारे सिर पर दस गज लंबी मोटी रस्सी से भरी टोकरी रख देता। दिनभर की मेहनत में शायद एक-दो साँप या बिच्छू काट लेते, लेकिन कम से कम तुम घर के लिए पूरे हफ्ते की लकड़ियाँ तो इकट्ठा कर लेतीं। इन ठंडे, गीले, फिसलन भरे पहाड़ों पर उगने वाले पेड़ों की डालियाँ तुम कैसे काट सकती हो? तुम तो चूल्हा जलाने के भी लायक नहीं हो!" इस भूमि पर जंगली बेर, कांटेदार झाड़ी, सुगंधित मौलसारी या यहां तक कि मेहंदी भी नहीं पाई जाती, जिसका इस्तेमाल महिलाएं खुद को संवारने के लिए करती हैं।

उन्हें खांसी का दौरा पड़ा। वे चुप हो गए। शायद उन्हें लगा कि उन्हें इस मामले को ज्यादा आगे नहीं बढ़ाना चाहिए। वे अब अपने गुस्से को खत्म करने का कोई शालीन तरीका ढूंढ रहे थे। लेकिन अचानक, वे फिर से आवेश में आ गए: 'तुम्हारे बर्फीले मौसम ने मेरे काले रंग को पीला कर दिया है। और तुम्हारी बारिश से भरी हवाओं ने मेरे खून को पतला कर दिया है, मेरी हड्डियों को खोखला कर दिया है...' वे रुके, फिर गुस्से भरे लेकिन विनती भरे स्वर में बोले, 'अगर तुम और कुछ नहीं कर सकते, तो कम से कम मुझे एक बच्चा दे दो, मैं उसे अपने तरीके से पालूंगा।' यह कहकर चित्रकार मियां ने अपने सिर को अपने शॉल जैसे रुमाल से ढक लिया, धूप में एक चारपाई पर लेट गया और तीन दिनों तक बिना हिले-डुले या बोले वहीं पड़ा रहा।

शाम होते ही सालिमा ने मखसुल्लाह का पलंग अंदर ले जाने को कहा। फिर भी, मखसुल्लाह के शरीर का तापमान अपरिवर्तित प्रतीत हुआ; न तो वह बहुत गर्म थे और न ही बहुत ठंडे। उनकी धड़कन भी एक सामान्य व्यक्ति की तरह स्पष्ट और तेज थी; फिर भी कंधे हिलाने या पुकारने पर भी उन्होंने कोई प्रतिक्रिया नहीं दी। सालिमा ने सुगंधित अगरबत्तियों पर फूंक मारकर उन्हें जलाया और घर में हर जगह रख दिया। वह पास की मस्जिद से एक घड़ा पानी लाईं जिस पर मुल्ला ने नमाज पढ़ी थी और जिसमें उन्होंने अपनी सांस फूंकी थी। बुरी आत्माओं या जिन्नों के प्रभाव को दूर भगाने के लिए उस पानी को घर के हर कोने में छिड़का गया। उन्होंने मखसुल्लाह का जबड़ा भी खोला और उनकी जीभ और गले को पवित्र जल की कुछ बूंदों से गीला किया। कुछ मील दूर एक गाँव से एक चिकित्सक को बुलाया गया। उन्हें ग्रैंड मल रोग का संदेह हुआ और उन्होंने रोगी को कपिंग थेरेपी देने की सलाह दी; लेकिन कपिंग थेरेपी से उन्हें कोई लाभ नहीं हुआ। कुछ भी कारगर नहीं हुआ। मखसुल्लाह तीन दिन और तीन रात तक दुनिया से बेखबर रहे।

चौथी सुबह, मखसुल्लाह अकेले ही उठे। सुबह की नमाज़ की अज़ान अभी नहीं हुई थी, लेकिन उन्हें नमाज़ से कोई खास मतलब नहीं था। कभी-कभी वे शेखुल आलम शेख नूरुद्दीन वली की प्रशंसा में गीत गाते थे, जिनका मज़ार कुपवारा से कई मील दूर चिरार शरीफ़ नामक स्थान पर था। कभी-कभी औपचारिक स्तुतिगान शैली में लिखे गए कई छंदों वाला यह गीत, अनजाने में ही, हिंदल वली की ओर मुड़ जाता था, जिन्हें वे बहुत समय पहले सुदूर राजपूताना में छोड़ आए थे। कभी-कभी, किसी रहस्यमय मनोदशा या भावना से अभिभूत होकर, उनकी आँखों से आँसू बहने लगते थे; और अपनी अर्ध-बचकाना आवाज़ में, जिसमें कश्मीरी और राजपूतानी भाषाएँ मिश्रित थीं, वे शेखुल आलम को पुकारते और उनसे ऐसे बात करते जैसे वे शेख के सामने हों

और शेख उनकी हर बात ध्यान से सुन रहे हों।
सलीमा, जो रात भर ठीक से सोई नहीं थी, अपनी बेचैन नींद से ऐसे जागी जैसे किसी ने उसे ज़बरदस्ती झटक कर जगा दिया हो। वह दंग रह गई। उसका घर एक हल्की नीली-हरी रोशनी से जगमगा रहा था, ऐसी रोशनी उसने किसी पहाड़ पर कभी नहीं देखी थी। मखसुल्लाह पूरी तरह जाग चुके थे और नमाज़ की चटाई पर बैठकर शैखुल आलम से प्रार्थना कर रहे थे। सलीमा इस घटना या शगुन को समझ नहीं पा रही थी, तभी मखसुल्लाह ने, उसके कदमों की आहट सुनकर या यूँ कहें कि महसूस करके, उसकी ओर देखा। एक पल के लिए सन्नाटा छा गया। फिर मखसुल्लाह नमाज़ की चटाई से उठे, अपनी आँखें पोंछीं और दूध के प्याले की ओर इशारा किया, जो कई सालों से उनका नाश्ता हुआ करता था।
दूध पीने के बाद, मखसुल्लाह ने अपनी सूती कमरबंद की एक गांठ खोली, सम्राट फर्रुख सियार के समय में ढाले गए तीन सोने के मोहर निकाले और उन्हें अपनी पत्नी के हाथों में रख दिया।
‘ठीक है, अब मैं कोई नया हुनर सीखने जा रहा हूँ। मैंने आपको पहले ही बता दिया था कि आपके लोगों की जल और तेल चित्रकला किसी भी तरह से मेरा पेशा नहीं हो सकती।’
'कृपया बताएं। जीवन के इस पड़ाव पर आप कौन सा नया हुनर सीख सकते हैं? और उसमें आप क्या मुकाम हासिल कर सकते हैं? आप सचमुच पागल हो गए हैं।'
'चुप रहो, औरत। शांत रहो। औरतें अपने मर्दों से पलटकर जवाब नहीं देतीं।' उनकी आवाज़ का लहजा ऊपर से तो स्नेहपूर्ण नसीहत जैसा लग रहा था, लेकिन भीतर ही भीतर निराशा और असफलता का चुभन भरा दर्द छिपा था।
‘मेरा जन्म गर्म हवाओं द्वारा उड़ाई गई हल्की, नुकीली रेत के कणों को अपने हृदय और सीने में समाहित करने के लिए हुआ था। लेकिन अब जब आपके देश की बर्फ जैसी सफेद और बिच्छू की पूंछ जैसी तीखी हवाएं और उन पर तैरते बर्फ के जमे हुए कण मेरे हिस्से में आ गए हैं, तो मैं उनके प्रति भी निष्ठा रखूंगा।’
लेकिन आप कहाँ जा रहे हैं? आप मुझे अपने साथ क्यों नहीं ले जाना चाहते?
‘चिरार शरीफ के अलावा और कहाँ? मैं वहाँ चालीस दिन तपस्या और ध्यान करूँगा। फिर जो होगा सो होगा।’
‘तो इस मंदिर में आप कौन सा नया हुनर सीख सकते हैं? ये किस तरह की बातें हैं? आप होश में नहीं लग रहे हैं।’

'सलीमा, यही तो तुम और मुझमें फर्क है। मेरे लिए, वही गर्माहट चिरार शरीफ के संत के दरबार में फूटती हुई प्रतीत होती है, जो बदले में वेरीनाग के ठंडे पानी में बदल जाती है, जहाँ से झेलम नदी निकलती है और पूरे कश्मीर घाटी को सींचती है। चिरार शरीफ के राजा उन बीजों को उगाएंगे जिन्हें मैं बोऊँगी। वे अनाज को पकाएँगे, उसे गर्म रखेंगे और तुम्हारा और मेरा पेट उससे भरेंगे।'
‘या शेखुल आलम!’ चिरार के शेख को प्रणाम करते हुए, चित्रकार मखसुल्लाह दरवाजे से बाहर निकल गया और पीछे मुड़कर नहीं देखा। कुछ ही पलों में वह गायब हो गया, मानो वह हमारे जैसे

मांस और खून से बना कोई इंसान नहीं, बल्कि धूल का एक झोंका हो, और वह किसी गली में नहीं, बल्कि किसी गुफा में चला गया हो।

'तुम कहाँ ठहरोगे, कब लौटोगे?' सालिमा लगातार उसे पुकारती रही, पर मखसुल्लाह ने कुछ नहीं सुना, कुछ भी नहीं किया। ऐसा लग रहा था मानो कोई छिपी हुई शक्ति उसे अपनी ओर खींच रही हो।

उन्हें चिरार शरीफ का रास्ता नहीं पता था, न ही उन्हें उसके स्थान का कोई अंदाजा था, चाहे वह पहाड़ की चोटी पर हो या घाटी में, उत्तर में हो या दक्षिण में। वे बस इतना जानते थे कि यदि मानस बल झील पर सूर्यास्त के समय सैकड़ों रंग इतने सूक्ष्म अंतरों से भरे होते हैं कि उनका ब्रश उन्हें चित्र में चित्रित करने की कल्पना भी नहीं कर सकता; यदि युस मार्ग गाँव, जो एक ऊँची पहाड़ी की चोटी पर नम हवाओं से पोषित और विकसित हुआ है, आकाश को छूते काले चीड़ के घने पेड़ों की दीवार से घिरा है, जिसके नीचे तेज धूप हरी दिखाई देती है, मानो पूरा गाँव पानी के नीचे झिलमिला रहा हो; यदि बरहमुला के पार, कोई झेलम नदी को ऊँचाइयों से नीचे उतरते हुए देखे, और उसके फुहारों में हरे, नीले और नारंगी रंगों को लुका-छिपी खेलते हुए देखे; और यदि अच्छबल के फव्वारे कांच के क्रिस्टल की तरह सफेद पानी उगलते हैं, तो उसकी दुनिया, उसका कश्मीर (हाँ, अब यह उसका कश्मीर था)... कश्मीर का सूरज किशनगढ़ के उस क्रूर सूरज जैसा नहीं है जिसकी चकाचौंध भरी गर्मी भूरे को काला, काले को नीला और हरे को लाल कर देती है; जहाँ अंधकार जीवन के जल को घेरे हुए अंधकार को भी शर्मिंदा कर देता है; जहाँ ठंडे, गुलाबी महीनों की दोपहरें युवा लड़कियों के चेहरों को दिव्य लाल रंग से रंग देती हैं... तो अब क्या मैं उन रंगों को देखूँ जो मेरे कश्मीर के रंग हैं? फिर मैं उन रंगों को अपने हृदय में समा जाने दूँगा और उन रंगों के हृदय में प्रवेश करूँगा।

उन्हें पता नहीं था कि उन्होंने कितने दिन का सफर तय किया है, लेकिन चिरार शरीफ अभी भी काफी दूर था। उन्होंने खुद को बदगाम की बड़ी जुमे की मस्जिद के सामने पाया। वे मस्जिद के वज़ू कक्ष में दाखिल हुए, वहाँ बने शौचालय में पेशाब किया और फिर नमाज़ से पहले ज़रूरी रस्म अदा की। उन्होंने कुरान की पहली आयत पढ़ी और मस्जिद के आंगन की ठंडक में कदम रखा। शाम की नमाज़ के लिए लोग इकट्ठा हुए; कुछ लोग नमाज़ के बाद चले गए, कुछ बाद में आए। कुछ लोग कुरान पढ़ रहे थे, कुछ पैगंबर की प्रशंसा में कविताएँ गुनगुना रहे थे। कई नए लोग चूल्हे के पास घुटनों को पेट से लगाकर, सिर को घुटनों पर टिकाकर सो गए, उनका इरादा था कि वे रात की नमाज़ की अज़ान के समय ही उठेंगे।
अंततः नमाज़ की अज़ान दी गई और सब लोग इकट्ठा हो गए। नमाज़ पूरी होने के बाद मखसुल्लाह अपनी जगह से न तो उठे और न ही हिले। ठंड से वे कांप रहे थे और भूख उनकी देह को ऐसे तृप्त कर रही थी जैसे किसी साफ़ रात में तारों की रोशनी।
किसी ने बेहद कोमल और मधुर स्वर में उससे पूछा, 'क्या आप कहीं से आए यात्री हैं?'
'जी हां... नहीं... जी हां, महोदय। आप मुझे एक यात्री कह सकते हैं। मैं इस इलाके में अजनबी हूं।'
‘आप कहाँ जाना चाहते हैं?’ पूछने वाले के स्वर में लाउलाब घाटी के कबीले के लोगों की बोली की मधुरता और कोमलता थी। कहा जाता था कि दूर से सुनने पर उनका गाना किसी बद्दू द्वारा शुद्ध अरबी लहजे में कुरान पढ़ने जैसा लगता था। वहीं मियां मखसुल्लाह के शब्दों में अभी भी राजपूती लहजे की प्रबल, कठोर और ईंट जैसे लाल रंग की झलक थी।
‘मुझे अब पता नहीं कि मैं कहाँ जा रहा हूँ। मन की बेचैनी ने मुझे घर-बार छोड़कर जाने पर मजबूर कर दिया। शायद शेखुल आलम...’
“अगर शैखुल आलम ने आपको बुलाया है, तो आप अपनी मंज़िल तक ज़रूर पहुँच जाएँगे। लेकिन आपके पास यात्रा का सामान क्या है, और आपने उसे सुरक्षा के लिए कहाँ रखा है?”
अजनबी का शरीर कश्मीर में पुरुषों और महिलाओं द्वारा पहने जाने वाले पोंचो जैसे ऊपरी वस्त्र से लगभग पूरी तरह ढका हुआ था। और उसकी पगड़ी इतनी नीचे बंधी थी कि उसका चेहरा केवल आंशिक रूप से दिखाई दे रहा था। मखसुल्लाह अजनबी की स्थिति का पता नहीं लगा सका, सिवाय इसके कि उसके दाहिने हाथ में एक माला थी और वह लगातार, लेकिन बिना आवाज़ किए, उसके मनकों को गिन रहा था। इस तथ्य ने उसे आम इंसानों में शामिल कर दिया: उसके चेहरे के आंशिक रूप से ढके होने के अलावा कुछ भी असामान्य नहीं था। मखसुल्लाह ने अजनबी की उंगलियों पर ध्यान दिया; वे कोमल और नुकीली थीं, जैसे बिना खिले बादाम के फूल।
‘प्रायश्चित?’ मखसुल्लाह ने मानो स्वयं से कहा। ‘मेरे पास दिखाने के लिए कोई उपलब्धि नहीं है। मैं ज्ञान से भी वंचित हूँ। मेरे पास केवल अधीरता, मन का भटकाव, या एक विवशता है जो मुझे

यहाँ आपके चरणों में आ गिराने के लिए खींच लाई है। लेकिन कौन...?'
उसने अजनबी से सवाल पूछने की हिम्मत तो जुटा ली थी, लेकिन अब वह मन ही मन अपनी इस घोर गुस्ताखी के लिए खुद को कोस रहा था: यहाँ उसकी अपनी जिंदगी दांव पर लगी थी; उसे दूसरों के बारे में पूछने का कोई अधिकार नहीं था।
'आपने आखिरी बार कब खाना खाया था?' यह सवाल उसी मधुर आवाज में पूछा गया, लेकिन इसे जानबूझकर नजरअंदाज कर दिया गया।
'मैं बिना खाना खाए घर से निकल गया। जब मैं निकला, तो गांद्रा बाल में आसमान में बादल घिर रहे थे। झेलम नदी के किनारे रोते हुए विलो के पेड़ की आंखें नम थीं। मुझे याद नहीं कितने दिन पहले की बात है।'
तो चलिए पहले खाना खा लेते हैं।
बिना देर किए, मखसुल्लाह उस अजनबी के साथ निकल पड़े। जिस गली में मस्जिद थी, उसे छोड़कर वे एक विशाल, औपचारिक इमारत के सामने पहुँच गए, जो किसी मठ या हल्के किलेबंद कार्यशाला जैसी लग रही थी। ऐसा लग रहा था मानो वह इमारत एक साथ सब कुछ हो। वे एक बड़े हॉल जैसे कमरे में दाखिल हुए, जिसका लकड़ी का फर्श लगभग पूरी तरह से महंगे कालीनों से ढका हुआ था। हवा में केसर के इत्र की हल्की सी खुशबू फैली हुई थी। दीवारों और आलों में मोमबत्तियाँ नहीं थीं, लेकिन चीड़ और नीलगिरी की रालयुक्त शाखाओं को मोमबत्तियों का आकार देकर जलाया गया था। चीड़ और नीलगिरी की खुशबू, केसर की हल्की सी महक के साथ मिलकर, एक अजीब तरह का शांत और सुखद वातावरण बना रही थी।
लकड़ी की मोमबत्तियों और मशालों की हल्की सुगंध, जिनसे हल्का धुआं निकलता था; लकड़ी के जलने पर आने वाली धीमी चटकने की आवाज़; अदृश्य वाद्ययंत्रों द्वारा बजाए गए सुखदायक संगीत से भरा हॉल; कालीन पर बैठे दस-बारह लोगों के समूहों के बीच बातचीत की हल्की, रेशमी ध्वनि तरंगें—इन सबने मिलकर एक ऐसा माहौल बना दिया जो कमरे के वातावरण में आनंद की एक अदृश्य लेकिन स्पष्ट छाया की तरह व्याप्त था।
हर समूह के सामने एक लंबी, नीची ओक की लकड़ी की मेज थी, जिसकी ऊँचाई लगभग एक हाथ और लंबाई लगभग आठ या दस हाथ थी। मेज पर कोई मेज़पोश नहीं था, लेकिन हर मेज पर एक बड़ी थाली में एक पूरी भुनी हुई भेड़ रखी थी, जिसके चारों ओर रोटियों का ढेर लगा था। कुछ लोग चुपचाप खा रहे थे, कुछ लोग हर निवाले के बीच धीमी आवाज़ में कुछ बोल रहे थे। जब मखसुल्लाह और बूढ़ा आदमी अंदर आए तो सब लोग चौकन्ने और आदरपूर्वक खड़े हो गए, लेकिन किसी ने कुछ नहीं कहा। दोनों एक कोने में रखी लंबी भोजन मेजों में से एक पर बैठ गए। उस छोटे से मौन के इशारे के अलावा, बूढ़े आदमी या उसके मेहमान की विशेष स्थिति को दर्शाने वाली कोई और बात नहीं थी।
मखसुल्लाह के स्वाद को इस अनोखे भोजन से अभ्यस्त होने में कुछ समय लगा। इसी प्रकार, उस विशाल कमरे में चल रही बातचीत की लय को समझने में और वहां हो रही सारी बातों को आत्मसात करने में भी उनके कानों को कुछ समय लगा। उन्होंने आश्चर्य के साथ देखा कि भोजन करने वालों की भाषा वास्तव में कश्मीरी थी, लेकिन उसमें कई ऐसे शब्द थे जो उनके लिए पूरी

तरह अपरिचित थे, और उनकी बातचीत की गति कुपवारा की तुलना में कहीं अधिक तेज़ थी, जो जाहिर तौर पर उनके वर्तमान स्थान के उत्तर-पश्चिम में स्थित था। उन्होंने ध्यान से सुना और पाया कि उनकी बातचीत कुछ इस प्रकार थी:

'यहाँ आपको एक धागे की मोटाई का चालीसवाँ भाग लगाना है; यहाँ, तीन धागों की मोटाई का एक चौथाई भाग। फिर चित्र ऐसा दिखेगा।' वक्ता ने अपने श्रोता को खाकी रंग का एक कागज़ दिखाया जिस पर केसरिया स्याही से कुछ अजीबोगरीब निशान बने हुए थे। फिर उसने एक और ऐसा ही कागज़ दिखाया जिस पर कालीन के एक हिस्से का रंगीन डिज़ाइन बना हुआ था।

"कोचीनियल के इस रंग को यूकेलिप्टस के हरे रंग से मिलाइए, और जब इस हरे रंग को वीपिंग विलो के सुनहरे हरे रंग से मिलाया जाए, तो यह प्रभाव उत्पन्न होगा।" लेकिन उस रंग के कपड़े के बजाय, वक्ता ने खाकी रंग के कागज के एक छोटे से टुकड़े का एक कोना दिखाया जिस पर एक अजीब से गेरू-हरे रंग में चित्र बना हुआ था। वक्ता की आवाज़ में किसी राजा जैसा आत्मविश्वास था, या फिर ईश्वर के सच्चे मित्र के प्रवचन की मोहक शक्ति थी।

इसी बीच अठारह-उन्नीस साल का एक युवक उस बूढ़े के पास आया और थोड़ी झुंझलाहट के साथ बोला, लेकिन उसके लहजे में एक प्रियजन का भरोसा भी झलक रहा था: 'मास्ट्रो, मैं तो इस डिज़ाइन को ठीक से बना ही नहीं पा रहा।' उसने बूढ़े को खाकी रंग के कागज़ का एक लंबा टुकड़ा दिखाया, जिस पर केसरिया स्याही से वही बेतुके से दिखने वाले संकेत लिखे थे। 'इतने सारे धागे और कड़ियाँ पढ़ना मेरी समझ से परे है। अगर कोई मुझे पढ़कर सुना दे तो...'

'खैर, इसका भी इंतजाम किया जा सकता है,' बूढ़े आदमी ने कहा। 'लेकिन अगर आप तालीम लिखना सीखना चाहते हैं, तो आपको पहले उसे पढ़ना सीखना होगा।'

फिर बूढ़े आदमी ने युवक से कुछ घिसा-पिटा कागज़ का टुकड़ा लिया और उसे मखसुल्लाह को दिखाया। 'इसे तालीम कहते हैं। इस कागज़ पर छह गज लंबे और साढ़े तीन गज चौड़े कालीन का पूरा डिज़ाइन बना हुआ है। हर रंग, हर धागा, इन चिह्नों से दर्शाया गया है। इन्हें पढ़ना बहुत मुश्किल है, ऐसे डिज़ाइन या तालीम बनाने की तो बात ही छोड़िए। इन कागज़ों को पढ़ने वाले लोग सादी की कविताएँ नहीं पढ़ते, जो युवाओं को फ़ारसी सिखाने के लिए लंबे समय से लोकप्रिय हैं। न ही उन्हें गणित या माप-तोल का ज्ञान है। यह एक विज्ञान है, लेकिन एक अलग तरह का। इस विज्ञान के विशेषज्ञ कल्पना, रचनात्मकता और मौलिकता का उपयोग करके ये छोटे, दिखने में अर्थहीन चिह्न बना सकते हैं। फिर भी वे अपने द्वारा बनाए गए डिज़ाइन पर शायद ही कभी अपने हस्ताक्षर करते हैं।'

मखसुल्लाह का मुँह खुला रह गया और वह बूढ़े आदमी की बातों को ध्यान से सुनता रहा। उसने सोचा, तो यह कोई गुप्त भाषा जैसी चीज़ है। इस कला में महारत हासिल करने से पहले कई विषयों का ज्ञान होना ज़रूरी है, जैसे गणित, चित्रकला और रंगाई। और हाँ, असाधारण स्मृति शक्ति भी होनी चाहिए; और एक ऐसी शक्ति भी होनी चाहिए जिसका नाम मखसुल्लाह को नहीं सूझा, लेकिन वह कोई ऐसी शक्ति थी जिससे तालीम बनाने वाला लगभग भौतिक रूप से यह कल्पना कर सकता था कि स्थिर रेखाओं और रंगों का एक निश्चित पैटर्न जब असली कालीन पर उतारा जाएगा तो कैसा दिखेगा।

बूढ़े व्यक्ति ने मखसुल्लाह की कोहनी पकड़कर उसे दूसरे कमरे में ले गए। कई बुनकर कालीन बुनने में लगे हुए थे। एक आदरणीय दिखने वाला व्यक्ति थोड़ी ऊँची चौकी पर बैठा था और कुछ शब्द ज़ोर से बोल रहा था, मानो कोई पाठ लिखवा रहा हो।
'तालीम के प्रत्येक अंश को उल्त्श कहते हैं,' उसके मेज़बान ने उससे कहा। 'और प्रत्येक पंक्ति को वार कहते हैं। ध्यान से सुनो; गुरु जो कह रहे हैं उसे सुनो।'
उस्ताद ने पुकारा:
एक सफेद चीनी,
'एक गहरा पीला,
'नौ सफेद चीनी,
'तीन क्रीम,

एक बादाम, हल्के भूरे रंग का,
एक लाल अनार,
एक सफेद चीनी,
'एक साधारण गुलाबी रंग,
'क्या तुम लोगों ने ऐसा किया?'
अब उस्ताद के निर्देशानुसार बुनाई कर रहे सभी बुनकर एक स्वर में बोले: 'जी गुरुजी, हमने कर लिया। भाइयों, कृपया जारी रखिए।'
मखसुल्लाह आगे बढ़ा और तालीम के कागज को ध्यान से देखा। उस पर प्रतीकों के अलावा कुछ नहीं था, जो कुछ इस प्रकार थे:

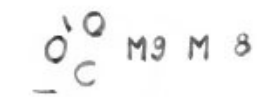

(यहाँ यह ध्यान देना आवश्यक है कि तालीम में प्रयुक्त वास्तविक चिह्नों का रोमन अक्षरों या अरबी अंकों से कोई संबंध नहीं है। यह समानता महज़ संयोगवश है, और ज़ाहिर है, वास्तविक तालीम के कागज़ पर वे बिल्कुल अलग दिखते हैं।)
मखसुल्लाह ने चिंता और उलझन से भरी आँखों से अपने मेज़बान की ओर देखा। उन्होंने मुस्कुराते हुए कहा, "घबराओ मत, एक बार सीख लेने पर सब आसान हो जाता है। पहला चिन्ह "एक सफेद चीनी" है, यानी सफेद चीनी के रंग का धागा, जिसे एक बार इस्तेमाल करना है, और इसी तरह आगे भी। इस प्रकार प्रत्येक चिन्ह धागे के रंग और उसके इस्तेमाल की संख्या को दर्शाता है। एक पंक्ति पूरी करने के बाद उस्ताद पूछते हैं, "क्या तुम लोगों ने कर लिया?", यानी क्या तुमने ठीक वैसे ही किया जैसा मैंने निर्देश दिया था? तब बुनकर जवाब देते हैं, "जी उस्ताद, हमने कर लिया", और फिर अगली पंक्ति के लिए अपनी तत्परता जताते हुए कहते हैं, "चलिए भाइयों।"
कभी-कभी वे कहते हैं, "आगे बढ़ो, उस्ताद, आगे बढ़ो।"

‘केवल ईश्वर ही दोषरहित है!’ मखसुल्लाह ने कहा। ‘तालीम को समझना उसे रचने से थोड़ा ही कम कठिन है।’

बूढ़े व्यक्ति ने बोलना जारी रखा, लेकिन इस बार उन्होंने कुछ उपदेशात्मक लहजे में कहा, मानो मखसुल्लाह को अपनी बात मनवाने की कोशिश कर रहे हों। “आप रंगों के प्रेमी हैं, लेकिन आपकी इच्छा के रंग तीखे और चमकीले हैं, चीड़ के तेल की तरह चिकने, साबुन के बुलबुले की तरह पारदर्शी, ऐसे रंग जो झिलमिलाते हैं और देखने वाले के हाथ से फिसल जाते हैं, ऐसे रंग जो गर्म और चमकीले हैं, जो आपस में टकराते हैं, लेकिन किसी न किसी स्तर पर सामंजस्यपूर्ण होते हैं, फिर भी अपनी वास्तविकता को बनाए रखते हैं। आप कागज की एक शीट पर एक बगीचा लगाना चाहते हैं, एक ऐसा बगीचा जहाँ चमकते फव्वारे हों, रंग-बिरंगे पक्षी हों और कश्मीरी हिरणों के झुंड हों।”

‘आप उन पहाड़ों को चित्रित करना चाहते हैं जो पेड़ों की छाया से जगमगाते हैं, जहाँ बादलनुमा तेंदुआ अपनी राजसी, बेफिक्र चाल से चलता है, जिसका शरीर वुलर झील के किनारे उगने वाली घास की तरह लचीला है। जब उसका रंग काले चीड़ के पेड़ की छाया में मिल जाता है, जहाँ धरती बर्फ से ढकी होती है, तो तेंदुआ गायब हो जाता है। और जब हिम तेंदुआ सफेद बर्फ की पृष्ठभूमि में दिखाई देता है, तो उसके फर से एक चकाचौंध भरी रोशनी निकलती है, जिससे बर्फ तेंदुए को अपने चारों ओर लपेट लेती है और उसे अदृश्य कर देती है। बर्फ तेंदुए को एक सांकेतिक संदेश में बदल देती है, जिसे केवल वही लोग पढ़ सकते हैं जो उस गूढ़ संदेश को सुलझा सकते हैं।’

बूढ़ा आदमी चुप हो गया, उसकी आँखें किसी दूर के दृश्य पर टिकी हुई थीं, मानो बर्फ से ढका परिदृश्य, तेंदुआ, काले चीड़ के पेड़ जिनके बीच कलिज तीतर दिन भर भोजन की तलाश करता है, सब कुछ उसकी आँखों के सामने हो और मखसुल्लाह कहीं बहुत दूर छूट गया हो। मखसुल्लाह, ज़ाहिर है, बीच में टोकने या कोई सवाल पूछने की हिम्मत नहीं कर सका।

कुछ क्षणों की चुप्पी के बाद, उनके मेज़बान ने बोलना फिर शुरू किया: ‘आप दो गज लंबे भालू को बीस गज से अधिक ऊँचे काले चीड़ के पेड़ की छाया में सोते हुए देखना चाहते हैं, ताकि एक तरफ से देखने पर काला भालू और काला चीड़ का पेड़ एक ही प्रतीत हों, और दूसरे कोण से देखने पर वे अलग-अलग लगें। आप ईश्वर के पवित्र स्थान के कोमल हरे रंग और ईश्वर के पैगंबर के पवित्र स्थान के गहरे हरे रंग को एक साथ लाना चाहते हैं। आप किसी तरह आकाश नीले, मोर नीले और लद्दाखी महिला कालीन बुनकरों द्वारा उपयोग किए जाने वाले नारंगी-लाल रंग का रहस्य भी जानना चाहते हैं। इसलिए यह जान लें कि यह सारा संसार—वास्तव में, संपूर्ण ब्रह्मांड —रंगों की घुमावदार और आपस में गुंथी हुई लहरों के अलावा कुछ नहीं है, और इन सबसे ऊपर वह रंग है जिसका कोई रंग नहीं है।’

मियां मखसुल्लाह अपने मेज़बान को विस्मय से घूर रहे थे, उन्हें बूढ़े आदमी की बातों में ज़रा भी समझ नहीं आ रही थी। क्या ये महान व्यक्ति मेरा मज़ाक उड़ा रहे हैं, या क्या वे सचमुच मेरे गहरे विचारों को जानते हैं? क्या उन्हें सचमुच पता है कि मुझे क्या करना चाहिए और मेरा काम कैसे पूरा हो सकता है?

बोलते समय बूढ़े व्यक्ति ने अपनी आँखें बंद कर रखी थीं। अब, उन्होंने अचानक अपनी आँखें खोलीं और मखसुल्लाह का हाथ मजबूती से पकड़कर कहा, 'मेरे साथ आओ। मैं तुम्हें तालीम के रहस्य सिखाऊँगा। कालीन बुनना भी एक प्रकार की चित्रकारी है, और तालीम में वे गुप्त अक्षर होते हैं जिनमें वे सूक्ष्म रूप छिपे होते हैं जो आगे चलकर वास्तविक कालीन बनेंगे। अपनी कल्पना शक्ति से, तालीम का रचयिता भविष्य के कालीन को अपने सामने हवा में फैलाता है। फिर, चिंतन की दृष्टि से, वह उसे हर संभव कोण और दिशा से देखता है। ऊपर से देखने पर वह कैसा दिखता है? दाईं ओर से देखने पर वह कैसा दिखता है? यदि कालीन को दीवार पर, दर्पण के सामने टांग दिया जाए तो क्या प्रभाव पड़ेगा? यदि कालीन को एक दीवार से दूसरी दीवार तक फैला दिया जाए; और यदि उसे इस प्रकार फैलाया जाए कि उस पर बाहर से भी प्रकाश पड़े तो क्या प्रभाव उत्पन्न होगा? ऐसे अनेक सूक्ष्म बिंदु हैं जिनकी तालीम रचयिता को कल्पना करनी होती है और फिर निर्णय लेना होता है। चित्रकार अपने काम को ध्यान से देखता है।'

वह एक पल के लिए चुप हो गया, मानो अपने ही कहे गए कठोर शब्दों पर विचार कर रहा हो। मखसुल्लाह ने हकलाते हुए हिम्मत जुटाई और कहा: 'मैं... मैं जानता हूँ कि सिर्फ चित्र कैसे बनाएँ। लेकिन मैं कागज पर चित्र बनाते समय इन सभी बातों का ध्यान रख सकता हूँ।'

हमारे पूर्वजों ने सदियों पहले ईरान, काशान और अक्साई चिन से पैटर्न और डिज़ाइन सीखे थे। उन्होंने कालीन बनाने की तकनीक, शैली और नए तरीके भी सीखे थे। क्या आपको लगता है कि ये सब इतने सालों तक हमारे पास अपरिवर्तित रहे हैं? सरसरी नज़र से देखने पर लगता है कि हमारा काम सदियों से एक जैसा ही रहा है। लेकिन अगर आप गौर से देखें, तो पाएंगे कि हर युग के, बल्कि हर पीढ़ी के तालीम लेखकों ने पुरानी शाखाओं पर नई-नई शाखाएँ लगाई हैं और उन पर ताज़गी से भरे फूल उगाए हैं। हर नया तालीम पहले से ज़्यादा चमकीला और रंगीन होता है, जिसमें नए बॉर्डर, नए गुच्छे और पत्तों व फूलों की नई लंबाई होती है। एक तालीम लेखक को कवि, चित्रकार, नर्तक, संगीतकार, सब कुछ एक साथ होना पड़ता है।

मियां मखसुल्लाह ने अभी कुछ कहने के लिए अपना मुंह खोला ही था कि उस बूढ़े व्यक्ति ने असाधारण रूप से गहरी, गूंजती हुई और अधिकारपूर्ण आवाज में कहा: 'तुम तालीम सीखोगे।' उनका यह कथन न तो प्रश्न था और न ही भविष्यवाणी। ऐसा प्रतीत होता था मानो सृष्टि के आरंभ से ही मखसुल्लाह को तालीम का उस्ताद बनने का भाग्य निर्धारित था।

‘क्या आप... क्या आपका मतलब... क्या आपका मतलब मुझसे है?’ वह शब्दों के लिए हड़बड़ा गया। ‘जी, उस्ताद, अगर मुझे यह सम्मान दिया जाए तो मैं खुद को सम्मानित महसूस करूंगा...’

अचानक, उसकी पीठ सीधी हो गई, गर्दन तन गई। ‘शायद ईश्वर को उस नाम और प्रसिद्धि का पता नहीं है जो मैंने किशनगढ़ में चित्र चित्रकार के रूप में अर्जित की थी। मैंने काल्पनिक चित्र बनाए थे...’

‘मैं इन सब बातों में नहीं पड़ना चाहता।’ बूढ़े उस्ताद के लहजे में अचानक दृढ़ता आ गई, मानो वह कोई फैसला सुना रहे हों। ‘मैं जानता हूँ। अगर चित्रकार में सच्ची प्रतिभा हो, तो हर चित्र, चाहे वह कितना भी काल्पनिक क्यों न हो, उसके लिए वास्तविक होता है। लेकिन मैं तालीम की कला की बात कर रहा हूँ। क्या आप हमारी इस कला में निपुण बनना चाहेंगे?’

अनैच्छिक रूप से, मखसुल्लाह ने कहा, 'पूरे दिल और आत्मा से!' किसी आंतरिक, रहस्यमय अवस्था से अभिभूत होकर, उन्होंने अपना सिर झुकाया। और फिर उनका सिर इतना नीचे झुक गया कि वह लगभग बूढ़े व्यक्ति के पैरों को छू गया।
आठ वर्षों तक मखसुल्लाह ने अथक परिश्रम किया, मानो उनका जीवन इसी पर निर्भर हो। तालीम की कला उनके इतिहास में नहीं थी, बल्कि उनकी आत्मा में बसी हुई थी। जिस पूजनीय गुरु से उन्होंने तालीम सीखी, वे समय-समय पर कोई कहानी सुनाते थे, जिसे उनके सभी शिष्य कंठस्थ कर लेते थे।
‘क्या तुम सुन रहे हो, राजपूताना के असभ्य रेगिस्तानी?’ उसने परिचित ‘तू’ शब्द का प्रयोग लगभग तिरस्कारपूर्ण ढंग से किया।
'जी हां, उस्ताद, मैं सुन रहा हूँ।'
‘प्राचीन काल में एक राजा हुआ करता था। क्या तुम सुन रहे हो?’
'जी हां, मैं सुन रहा हूं, मेरे स्वामी।'
‘राजा तुम्हारी ही तरह मूर्ख था। लेकिन उसका वज़ीर अत्यंत बुद्धिमान था। क्या तुम सुन रहे हो?’
जी हां, स्वामी जी, वज़ीर अत्यंत बुद्धिमान और समझदार थे।
क्या मैंने कहा था कि वह अत्यंत विवेकशील और गहरी समझ वाला था? मैंने कहा था कि वह अत्यंत बुद्धिमान था।
‘स्वामी, क्षमा करें। वज़ीर अत्यंत बुद्धिमान थे।’
‘मैं कुछ कहता हूँ और तुम कुछ और सुनते हो। तो भला तालीम कैसे सीखोगे? यह कोई ऐसी कला नहीं है जिसे कैक्टस का रस पीने वाले और पैंगोलिन का मांस खाने वाले सीख सकें। समझे, राजपूताना के गंवार?’ फिर गुरु पूरी कक्षा को संबोधित करते, ‘सुनो, कश्मीर के हिरण के मूर्ख बच्चों! प्राचीन काल में एक राजा था। वह मूर्ख था, पर कलाओं से प्रेम करता था। और उसका वज़ीर अत्यंत बुद्धिमान था। सुन रहे हो, बौद्ध तिब्बती स्त्रियों के स्मारक?’
सभी ने ये कहानियां दर्जनों बार सुनी थीं, फिर भी सभी ने एक स्वर में कहा, 'हां स्वामी, हमने सुना।'
तो राजा ने अपने वज़ीर को आदेश दिया, “मुझे सुलेख सिखाओ।” वज़ीर ने कहा, “हे संसार के शरणस्थल, सुलेखकार बनने के लिए पहले नर्तक होना आवश्यक है।” “ठीक है, तो आओ, मुझे नृत्य सिखाओ,” राजा ने आदेश दिया। वज़ीर ने उत्तर दिया… क्या तुम जानते हो कि वज़ीर ने क्या कहा?

सभी को इसका उत्तर पता था, लेकिन वे चुप रहे। गुरु ने हर शब्द पर ज़ोर देते हुए कहा, “वज़ीर ने कहा, ‘हे जगत के रक्षक, नर्तक के लिए पहले चित्रकार होना आवश्यक है।’ राजा ने आदेश दिया, ‘ठीक है, तो चलो चित्रकारी सीखते हैं।’ लेकिन फिर वज़ीर ने कहा, ‘हे ईश्वर की छाया, चित्रकार वही हो सकता है जो वास्तुकार हो।’ राजा नाराज़ हो गया, लेकिन अपने गुस्से को काबू में रखते हुए उसने आदेश दिया, ‘ऐसा ही हो। आज से मैं वास्तुकला का छात्र बनूँगा।’ वज़ीर कुछ देर चुप रहा, फिर बोला… ‘क्या तुम जानते हो कि अब वज़ीर क्या कहेगा?’

स्पष्ट था कि वहाँ मौजूद सभी लोग उत्तर जानते थे, लेकिन सबने इसे अपने तक ही सीमित रखा। गुरु ने विजयी भाव से कहा: "वज़ीर ने कहा, 'हे महाराज, हमारे घर और शरणस्थल, वास्तुकार वही हो सकता है जो इंजीनियर हो।' राजा ने मुस्कुराते हुए कहा, 'खैर, शुरुआत तो कहीं से करनी ही पड़ती है। मैं इंजीनियर बनने का प्रशिक्षण लेने को तैयार हूँ!'

गुरुजी मौन हो गए, मानो सस्पेंस पैदा कर रहे हों। फिर वे धीरे-धीरे बोले, हर शब्द के बीच थोड़ा विराम लेते हुए। 'लेकिन वज़ीर ने उत्तर दिया, "हे ईश्वर की छाया, अभियंता बनने के लिए नर्तक होना आवश्यक है।" और केवल सुलेखक ही नृत्य करना सीख सकता है,' गुरुजी लगभग बुदबुदाते हुए बोले, मानो स्वयं को याद दिला रहे हों। ऐसा लगा जैसे उन्होंने कुछ देर के लिए अपनी सांस रोक ली हो; फिर उन्होंने एक गहरी साँस ली और बोले: 'मनुष्य का अस्तित्व अविभाज्य है। क्या आप जानते हैं कि शरीर कहाँ समाप्त होता है और आत्मा कहाँ से शुरू होती है? क्या आप जानते हैं कि जो सुन नहीं सकता वह अपने साथियों से कहीं बेहतर देख सकता है? लेकिन जो सुन नहीं सकता वह बोल भी नहीं सकता, और जो बोल नहीं सकता वह गा भी नहीं सकता, फिर भी वह नृत्य कर सकता है। सात स्वरों को अलग करने वाली कोई दीवार नहीं है। सभी सात स्वर मिलकर एक हो सकते हैं, लेकिन प्रत्येक को दूसरे से अलग भी सुना जा सकता है। ये सभी महान कलाएँ मनुष्य का अस्तित्व हैं, और मनुष्य के अस्तित्व के उदाहरण सात स्वर, सत्तर रंग और सात सौ कोण हैं।'

मखसुल्लाह को ऐसा लगा जैसे उनकी श्वास नली में कुछ रुकावट आ गई हो, जैसे उनकी सांस रुक गई हो। उन्होंने मन ही मन कहा, अगर मैं यह सब समझ जाऊं, तो मैं सारी सृष्टि को एक ही तालीम में समा सकता हूं।

गुरु ने कहा, 'देखना सीखो। लेकिन तुम देखना तभी सीख पाओगे जब तुम रंगों की मधुर ध्वनि सुन पाओगे। मखसुल्लाह, मुझे बताओ हरे रंग के कितने प्रकार होते हैं?'

सरदार की निगाहें मखसुल्लाह पर टिकी हुई थीं, मानो किसी खंजर की नुकीली नोक उसकी छाती पर टिकी हो।

'हरा? क्या आपका मतलब...? स्वामी जी, क्या आपका मतलब हरे रंग के विभिन्न शेड्स से है? खैर, वहाँ अवश्य ही... अवश्य ही... पंद्रह होंगे? शायद सोलह?'

गुरु ने उसे घूरकर देखा। खंजर की सुई जैसी नुकीली नोक ने उसकी छाती को बहुत ही कम गहराई तक भेद दिया।

'कितना मूर्ख है वो! कितना निकम्मा है! मेरे नासमझ बेटे, मैं तुम्हें यहाँ हरे रंग के साठ-बासठ शेड्स दिखा सकता हूँ! बस एक पारखी नज़र चाहिए। चलो, अब ऋतुओं के संदर्भ में, समय के किसी विशेष क्षण के संदर्भ में सोचो।'

'जी हाँ, मालिक, मुझे ऐसा ही लगता है...' मखसुल्लाह ने बिना सोचे-समझे अचानक बोल दिया।

'नहीं, तुमने ज़रा भी नहीं सोचा, मेरे नन्हे बच्चे।' उस्ताद ने कोमल स्वर में कहा, मानो किसी बच्चे से बात कर रहे हों। 'मेरे प्यारे बच्चे, गर्मियों की कल्पना करो, मानस बल झील के पीछे डूबता

सूरज, चिनार के नए उगे पत्तों का हरा रंग, कच्चे सेबों की हरियाली। बारिश का मौसम खत्म होने के बाद जब काले चीड़ के नए, कोमल अंकुर निकलने लगते हैं, तो उन्हें देखो, वे कितने हरे होते हैं, और किस तरह के हरे होते हैं? जीवित चट्टान से अभी-अभी तराशे गए पन्ना के टुकड़े के हरे रंग की कल्पना करो; टुकड़े के बीच में एक छोटा सा रत्न है, लेकिन उस टुकड़े के चारों ओर का हरा रंग मिट्टी जैसा भूरा और हरा है, फिर भी पूरी तरह से हरा नहीं है, रत्न के स्तर तक पूरी तरह से विकसित नहीं है। यह रत्न को अपनी गोद में लिए हुए है, लेकिन इसका रंग अलग है। कल्पना करो कि एक दूसरे से कितना अलग है। और फिर, जब गर्मियाँ ढलने लगती हैं, तो वुलर झील की घाटी में ऊँचे उगते धान के पौधों के कोमल पत्तों के सुनहरे पीले-हरे रंग को देखो।' खांचों में स्थिर पानी को देखो, जिसमें उगते हुए पौधे प्रतिबिंबित हो रहे हैं, और ध्यान दो कि वह हरा रंग कितना अलग है। कल्पना करो कि आकाश का नीला रंग पानी में प्रतिबिंबित होने पर वह कितना हरा होगा। पानी में तैरते हुए लचीले जल सर्प की लहराती हरी आकृति की कल्पना करो... ये अंततः क्या हैं? क्या ये एक ही हरे रंग के नहीं हैं? इनकी ध्वनि सुनो, इनके ऊपर-नीचे जाते तराजू पर ध्यान दो। यह सब देखो और सुनो, तभी तुम जान पाओगे, मेरे बच्चे, कि तालीम माया का ब्रह्मांडीय जाल है या केवल मानवीय धोखे का जाल।
मखसुल्लाह को ऐसा लगा जैसे उसका सिर चकरा रहा हो। उसने मन ही मन कहा, इतनी स्पष्टता से तो एक चींटी भी नहीं देख सकती।
ऐसे भाषणों के बाद गुरुजी चुप हो जाते थे। फिर सभी छात्र अपने-अपने काम में लग जाते थे। जो छात्र ज्यादा कुछ नहीं कर पाते थे, वे पुरानी तालीमों की जांच करते, ऊन या रेशम के धागों को सुलझाते और खोलते, या तालीम लिखने के लिए इस्तेमाल होने वाले बादामी भूरे रंग के कागज की शीटों को छांटते और उलट-पुलट करते।

आठ वर्ष बीत गए। उस समय के अंत तक, मखसुल्लाह कश्मीर के सबसे महान जीवित तालीम लेखक बन चुके थे। उनकी अनूठी रचनात्मकता, दूरदृष्टि की तीक्ष्णता और उर्वरता, और चित्रकारी की सूक्ष्मता ऐसी थी जो कश्मीर से लेकर मध्य एशिया तक के कालीन डिज़ाइनरों के कुलीन समुदाय में पहले कभी देखी या सुनी नहीं गई थी। वे कुपवारा एक प्रसिद्ध कलाकार के रूप में लौटे, जिनकी रचनाएँ हिंदुस्तान, दक्कन, ईरान और काशान में विख्यात थीं।
दिल्ली में सम्राट अहमद शाह के राज्याभिषेक के पाँचवें वर्ष में, सर्वशक्तिमान ईश्वर ने मखसुल्लाह को पुत्र प्राप्ति का वरदान दिया। ऐसा लगा मानो भाग्य के विधाता ने मखसुल्लाह की सफलता और सौभाग्य पर अपनी मुहर लगा दी हो। मखसुल्लाह ने बालक का नाम याह्या रखा, जो एक पैगंबर का नाम है और अरबी में जिसका अर्थ है 'वह जीवित है'। क्योंकि मखसुल्लाह का मानना था कि बालक के भीतर उनकी रचनात्मकता और कला को नया जीवन देने की आशा और इच्छा को पूरा करने की क्षमता है।
याह्या का जन्म और मखसुल्लाह की मृत्यु लगभग एक ही समय पर हुई। लेकिन उनकी मृत्यु का कारण किसी को नहीं पता था, न ही यह पता था कि उन्होंने मृत्यु को क्यों गले लगाया। जब सलीमा को प्रसव पीड़ा शुरू हुई, तब वह अपने कार्यशाला में व्यस्त थे। वह घर के बाहरी हिस्से में

बने एक विशेष कमरे में काम करते थे: उनकी अनुमति के बिना कोई भी उसमें प्रवेश नहीं कर सकता था। उन्होंने हाल ही में एक नया तालीम (कालीन) बनाया था, जिसके बारे में उनका मानना था कि यह इतना जटिल है कि इसे केवल वही समझ सकते हैं, और इसे वास्तविक कालीन के रूप में बनाना तो दूर की बात है। एक और चिंता की बात यह थी कि मखसुल्लाह ने नारंगी-सुनहरा और काला जैसे कुछ रंगों का इस्तेमाल किया था, जिन्हें लेकर उन्हें डर था कि पारंपरिक खरीदार और आलोचक उन्हें अटपटा मानेंगे और उन रंगों का सही अर्थ नहीं समझ पाएंगे।

जब मखसुल्लाह को सलीमा के प्रसव की खबर मिली, तो उन्होंने तुरंत अपना कार्यशाला कक्ष बंद कर दिया और आकर प्रसव कक्ष के पास एक नमाज़ की चटाई पर बैठ गए। उन्होंने किसी से बात नहीं की, न ही किसी ने उनसे बात की; सभी चिंतित थे और संकट में फंसी महिला की देखभाल में व्यस्त थे।

उस समय वे मानो किसी दूसरी ही दुनिया में थे। ऐसा लग रहा था मानो वे किसी युवा कालीन बुनकर को एक नए डिज़ाइन की बारीकियां अत्यंत बारीकी से और रंगों की सुंदरता पर पूरा ध्यान देते हुए समझा रहे हों, हर धागे और हर गांठ के बारे में उसे जागरूक कर रहे हों। ऐसा लग रहा था मानो वे किसी छोटे बच्चे का हाथ पकड़कर उसे संकरे रास्ते के मोड़ों, घुमावों, ढलानों और उतार-चढ़ावों से ऊपर-नीचे ले जा रहे हों, जब तक कि वे दोनों को सुरक्षित घर न पहुंचा दें। वे ठीक यही कर रहे थे, बस फर्क इतना था कि नमाज़ की चटाई पर बैठे हुए वे अपने पूर्वजों, अपने आध्यात्मिक गुरुओं, विशेषकर शेखुल आलम और सदाबहार मार्गदर्शक एवं समस्याओं के हलदाता ख्वाजा खिज्र से प्रार्थना कर रहे थे, और फिर अपने पैगंबर से भी। उन्होंने उनके नाम लिए मानो वे उनकी उपस्थिति में हों और उनसे प्रार्थना की कि वे उनकी पत्नी के प्रसव के कठिन समय को सुगम बनाएं। मेरे बच्चे के लिए यह रास्ता नया और अनछुआ है, उसका हाथ थाम लो, उसे प्यार और करुणा से देखो, वह सुंदर हो, हर तरह से सुगठित हो, शरीर से विकृत या बुद्धि से कमजोर न हो। बच्चा लड़का होगा या लड़की? उसने इस बारे में बिल्कुल भी नहीं सोचा था। उसने अजन्मे बच्चे को 'शिशु' के रूप में कल्पना की, लेकिन उसके लिए उसने जो शब्द इस्तेमाल किए वे पुल्लिंग थे। हालांकि, उसने व्यावहारिक या बौद्धिक रूप से यह तय नहीं किया था कि वह लड़का होगा या लड़की।

एक बहुप्रतीक्षित जन्म के बाद एक अप्रत्याशित और रहस्यमय मृत्यु हो जाती है।

वह एक बेहद ठंडी सर्दियों की रात थी। दिन भर इतनी बर्फ गिरी थी कि मखसुल्लाह के बरामदे से ऊपर प्रसव कक्ष तक जाने वाली लकड़ी की सीढ़ियाँ जमी हुई बर्फ पर अतिरिक्त बर्फबारी का भार सहन नहीं कर पाईं और सुबह की रोशनी पूरी तरह से, भले ही हिचकिचाते हुए, स्थिति स्पष्ट करने से पहले ही ज़ोरदार आवाज़ के साथ ज़मीन पर गिर गईं। मखसुल्लाह अपनी नमाज़ की चटाई पर बैठे रहे; उस आवाज़ ने उनकी एकाग्रता और अपने पवित्र गुरुओं से की जा रही प्रार्थनाओं की गंभीरता को प्रभावित नहीं किया था। रात भर हुई बर्फबारी और गिरी हुई सीढ़ी के मलबे ने प्रसव कक्ष में प्रवेश करने का कोई रास्ता नहीं छोड़ा था। यहाँ तक कि एक अस्थायी सीढ़ी को भी ऊपर के कमरे तक ले जाने से पहले बर्फ हटानी पड़ती। एक हल्की सी अस्थायी सीढ़ी बनाने की कोशिश की जा रही थी कि नवजात शिशु के रोने की आवाज़ सुनाई दी, जिसके बाद दाई की आवाज़ आई: 'अरे वाह, सलीमा महोदया! इतना स्वस्थ और तंदुरुस्त बच्चा, और फिर भी इतना काला!' क्या यह निशात बाग के राजसी उद्यानों का कोई नन्हा गुलाब है या काला गुलाब! ईश्वर की स्तुति हो, क्योंकि केवल वही हर दोष से मुक्त है।

फिर घर के हर कोने से महिलाओं की बुलंद आवाजें गूंज उठीं, जो बधाई गीत गा रही थीं और हल्के कश्मीरी ढोल बजा रही थीं। चारों ओर गीतों और बधाईयों के शोरगुल के लंबे अंतराल के बाद, एक बूढ़ी औरत प्रसव कक्ष के दरवाजे पर आई और पुकार कर बोली, 'कृपया बच्चे को ले जाइए!'

लेकिन मैं बच्चे को कैसे ले जाऊँ? मखसुल्लाह ने मन ही मन कहा: ऊपर जाने का कोई रास्ता नहीं है। महिला की आवाज़ फिर आई, इस बार थोड़ी तेज़: 'कृपया बच्चे को ले जाइए। इसके कानों में अज़ान देनी है।'

मखसुल्लाह ने ऊपर देखा तो पाया कि दाई ऊपर के दरवाजे पर खड़ी थी, बच्चे को एक बंडल की तरह पकड़े हुए थी, जिसे ठंड से पूरी तरह सुरक्षित रखा गया था और घर में बुने हुए ऊन की एक भारी सफेद चादर में लपेटा गया था।

“कृपया यहाँ मेरे बिल्कुल पास, दरवाजे के ठीक नीचे आ जाइए और अपनी बाहें फैला लीजिए। इसकी ऊँचाई ज़्यादा नहीं है और यह बहुत छोटा बच्चा है। अपनी बाहों पर दुगनी शॉल फैला लीजिए और जैसे ही मैं झुककर इसे नीचे उतारूँ, इसे पकड़ लीजिए। इसके कानों में अज़ान सुनाने में देरी न करना बेहतर होगा। यही पहली चीज़ है जो इसे सुननी चाहिए।”

मैं इस नन्ही सी चीज को इस तरह गिरने कैसे दे सकता हूँ? मखसुल्लाह ने मन ही मन कहा। गिरने के झटके और हवा में से गुजरने से इसे कुछ नुकसान हो सकता है।

‘नहीं, यह तरीका सही नहीं है,’ उसने चिल्लाकर कहा। ‘मुझे टोकरी और रस्सी का इंतजाम करने दीजिए और बच्चे को टोकरी में रख दीजिए। बस थोड़ी देर रुकिए।’

बच्चे के लिए एक टोकरी भेजी गई, जिसके हैंडल रस्सी से बने थे और उनमें लंबी रस्सियाँ बाँधी

गई थीं। रस्सी भी ठीक से नहीं बनी थी, बस चादरों से फाड़ी गई पट्टियों को रस्सी की तरह लपेटा गया था; टोकरी भी एक पुरानी फलों की टोकरी थी जिसे शॉल से लपेटकर मजबूत किया गया था। बर्फ से ढकी उस सुबह में, जब बर्फ गिरती जा रही थी, इससे बेहतर कुछ मिल पाना संभव नहीं था।

'इसे नीचे आने दो! इसे नीचे आने दो!' मखसुल्लाह चिल्लाया। 'तुम देखोगे कि मैं टोकरी को कितनी सावधानी से अपनी बाहों में लेता हूँ! नन्हे बच्चे को ज़रा भी झटका नहीं लगेगा, सदमे की तो बात ही छोड़ो।'

टोकरी और उसमें रखा कीमती सामान यथासंभव धीरे-धीरे नीचे उतारा गया। मखसुल्लाह घुटनों तक ऊंची बर्फ में चलते हुए आंगन से गुजरे और टोकरी को बड़ी सावधानी से अपनी बाहों में उठाया। उन्होंने बच्चे के माथे पर चूमा और कहा, 'मैं इस बच्चे का नाम मुहम्मद याह्या रखता हूं। ईश्वर की कृपा से, यह नन्हा बच्चा दीर्घायु होगा। मेरा बेटा कालीन डिजाइनिंग और कालीन बनाने की कला में नई जान फूंकेगा। फिर हम दोनों मिलकर हिंदुस्तान की धरती पर राज करेंगे।'

भावुकता से उनकी आवाज बैठ गई। चुपके से उन्होंने अपनी लंबी आस्तीन से अपनी आँखें पोंछीं और बच्चे के दाहिने कान में अज़ान दी। उन्होंने ईश्वर की एकता और मुहम्मद के उनके पैगंबर होने की पुष्टि का रस्मी वाक्य बोला और बच्चे के बाएं कान में फूँका। फिर उन्होंने अपनी दाहिनी तर्जनी उंगली बच्चे के मुँह में डालकर उसे चूसने को कहा और दाई से पूछा, 'क्या उसकी माँ पूरी तरह से ठीक है? क्या उसे दूध आ रहा है?'

'मियां, सब कुछ एकदम ठीक है, सब कुछ। बस दूध पिलाते समय थोड़ा दर्द हो रहा है, पर मेरी छोटी बच्ची तो जी भर के दूध पी रही है। आप दोनों वाकई बहुत भाग्यशाली हैं। आपको दान देना चाहिए, ईश्वर के नाम पर दान-पुण्य करना चाहिए और हमें भी इनाम देना चाहिए!'

जी हां, जी हां। ये सब और इससे भी अधिक किया जाएगा। बस सूरज को उगने दीजिए और प्रियजन के अंगों को थोड़ी ताकत मिलने दीजिए। फिर आप देखेंगे।

यह कहकर उसने अपने पहले बेटे को सलीमा के भाई की गोद में रख दिया, जो उसके बगल में खड़ा था। फिर वह घर से बाहर चला गया और वापस नहीं लौटा।

पहले तो किसी को उनकी कमी महसूस नहीं हुई। गीतों के गायन, आगंतुकों की ज़ोरदार बातचीत और बधाइयों के आदान-प्रदान, मेहमानों के आने-जाने और नए बने घर की खुशियों भरी चहल-पहल में मखसुल्लाह सब भूल गए थे। लेकिन जब सूरज ढलने लगा, तो लोग उन्हें ढूंढने लगे। उनकी यह सामान्य खोज जल्द ही चिंता और बेचैनी में बदल गई। अगली सुबह तक, लोगों को उम्मीद सताने लगी थी कि मियां देर-सवेर ज़रूर लौट आएंगे। आख़िरकार, यह पहली बार नहीं था जब वे गायब हुए थे। बदगाम में भी तुरंत सूचना भेजी गई, लेकिन वहां भी उन्हें किसी ने नहीं देखा था।

छठे दिन रस्म के मुताबिक स्नान करने के बाद सलीमा घर से बाहर निकल सकीं और अपने पति की शीघ्र और सुरक्षित वापसी के लिए प्रार्थना करने हेतु संतों के मकबरों पर गईं। उन्होंने कई दिनों तक उपवास रखा, इस उम्मीद में कि ईश्वर के नाम पर उपवास करते समय उनकी प्रार्थनाएं

सुनी जाएंगी। उन्होंने साधुओं से ताबीज़ प्राप्त किए और उन्हें पत्थरों के नीचे गाड़ दिया या दबा दिया, लेकिन कोई लाभ नहीं हुआ। फिर एक दिन खबर आई कि दाचीगाम के घने जंगल में एक अजनबी का शव मिला है।

जब सलीमा का भाई दाचीगाम के लिए जांच करने निकला, तब भी भारी बर्फबारी हो रही थी। वन रक्षक ने उसे बताया कि अजनबी के शव की अभी तक पहचान नहीं हो पाई है और वह कुछ मील दूर लावारिस और असुरक्षित पड़ा है। नरम बर्फ में लड़खड़ाते कदमों को किसी तरह संभालते हुए, ठंड से बचने के लिए सिर और गर्दन को कसकर लपेटे हुए, ढीले वस्त्रों के नीचे सीने के पास जलती हुई कांगरी को लगातार जलाए रखते हुए, और तेज हवाओं का सामना करते हुए, उन्हें घटनास्थल तक पहुंचने में कई घंटे लग गए।

वह कोई और नहीं बल्कि मखसुल्लाह थे। एक विशाल बलूत के पेड़ के तने से टिके हुए, उनका शरीर पूरी तरह ढका हुआ था, वे मृत से अधिक सोए हुए प्रतीत हो रहे थे। उनका निचला शरीर बर्फ में दबा हुआ था और उनका चेहरा शांत था, मानो वे अपने साथ हो रही घटना से पूर्णतः संतुष्ट हों। ऐसा लग रहा था मानो मृत्यु का फरिश्ता उन्हें सोते हुए ही ले गया हो, जब वे किसी बात से बेखबर थे। भीषण हिमपात की अत्यधिक ठंड में, शरीर तेजी से गर्मी खोने लगता है, फिर उसकी ऊर्जा तेजी से कम होने लगती है। रक्त संचार धीमा हो जाता है। हृदय धीमी गति से हो रहे रक्त संचार की भरपाई के लिए रक्त को और भी तेजी से पंप करने का प्रयास करता है। फिर भी, ठंड के निरंतर प्रकोप के कारण रक्त गाढ़ा हो जाता है, और संकुचित धमनियां सामान्य तापमान पर रक्त के प्राकृतिक प्रवाह और लय को बाधित करती हैं, जिससे रक्त और भी धीमा हो जाता है। इस प्रकार हृदय पर मांसपेशियों, तंत्रिकाओं और धमनियों को रक्त की आपूर्ति की मांग लगातार बढ़ती जाती है। हृदय तेज़ी से धड़कने की कोशिश करता है, लेकिन रक्त के गाढ़ा होने और रक्त वाहिकाओं के संकुचित होने का लगातार विरोध करते हुए, वह थकने लगता है। सबसे पहले हाथ-पैर और फिर हृदय से दूर के अन्य अंग सुन्न होने लगते हैं। वास्तव में यह एक प्रकार का रक्षा तंत्र है, क्योंकि संवेदना खोने का विकल्प असहनीय, लगभग मृत्यु के समान दर्द है। बालों के सबसे पतले रेशे से भी पतली, आँखों की केशिकाएँ रक्त की कमी के कारण निष्क्रिय होने लगती हैं। दृष्टि धुंधली, अस्पष्ट और विक्षिप्त हो जाती है।

शुरुआत में मस्तिष्क मांसपेशियों को कांपने और थरथराने का आदेश देता है, ताकि गर्मी उत्पन्न हो सके। क्योंकि गर्मी ही जीवन का आधार है। लेकिन जल्द ही शरीर को थरथराने में खर्च होने वाली ऊर्जा का प्रतिफल कम होता जाता है। शरीर के कांपने से उत्पन्न होने वाली ऊष्मा और उस क्रिया में खर्च होने वाली ऊष्मा के बीच लगातार कमी बनी रहती है। जैसे-जैसे ठंड बढ़ती है, मस्तिष्क शरीर को थरथराने का आदेश देने में और भी बेचैन हो जाता है। इस प्रकार ऊर्जा की कमी तेजी से बढ़ती जाती है, जिससे एक ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है जब शरीर कांपना बंद कर देता है, मस्तिष्क के आदेशों का पालन करने में असमर्थ हो जाता है। उनींदापन छा जाता है। शरीर, मस्तिष्क से लगभग पूरी तरह से अलग होकर, शांत और स्थिर पड़े रहने में एक दिव्य आनंद का अनुभव करता है। यह नींद एक ऐसी शांति उत्पन्न करती है जो आध्यात्मिक प्रतीत होती है। यदि कोई ठंडे शरीर को जगाने की कोशिश करे और यहां तक कि उसके नीले होठों पर

गर्म कहवा का प्याला भी रख दे, तो नींद में डूबा व्यक्ति उस निर्दयी जगाने वाले पर लगभग जानलेवा क्रोध का अनुभव करता है।

एक लंबी नींद। तब शरीर की सारी हलचल खत्म हो जाती है, यहाँ तक कि सबसे छोटी नसें भी काम करने की इच्छा खो देती हैं। फिर दिमाग की बत्तियाँ एक-एक करके तेजी से बुझने लगती हैं।

मखसुल्लाह के साथ भी कुछ ऐसी ही घटना घटी होगी। जब उन्होंने उसे बर्फ के बिस्तर से उठाया और उसके बेजान शरीर से शॉल हटाया, तो उसके दाहिने हाथ की मुट्ठी कसकर बंद थी और उसमें एक कड़ा कागज़ का टुकड़ा था। वह हाथीदांत के रंग का था और ठंड से मुरझाया हुआ था। बड़ी मुश्किल से उस टुकड़े को मृत मुट्ठी से निकाला गया और सावधानी से सीधा किया गया ताकि वह पुराने, घिसे हुए लकड़ी के बुरादे की तरह न टूट जाए। तब पता चला कि वह कागज़ नहीं था; वे हाथीदांत के बारे में नहीं जानते थे और उसे किसी जानवर की हड्डी समझ रहे थे। उस हड्डी पर एक बेहद अपरिचित लेकिन बेहद खूबसूरत लड़की का चित्र बना हुआ था। वह बनिथानी चित्रकारी थी। लेकिन दूर कश्मीर के लोग उसे कैसे जानते? उन्होंने उस चित्र को बर्फ में, उसे बनाने वाले चित्रकार की कब्र के बगल में दफना दिया।

मियां मखसुल्लाह के पुत्र और पोते खूब तरक्की करें और समृद्ध हों।

चालीस दिनों तक सलीमा ने अपने पति के लिए काले वस्त्र पहने। जैसे-जैसे दिन और सप्ताह बीतते गए, उसे लगने लगा कि वह अपने पति को पूरी तरह से समझ नहीं पाई है, और शायद उसने कभी ऐसा करने का गंभीर प्रयास भी नहीं किया। लेकिन यह उसके लिए एक पहेली थी कि अब उसे अपने पति को न समझ पाने का यह एहसास क्यों होने लगा था, और उसके पति को उससे कहीं अधिक सम्मान मिलना चाहिए था, न कि केवल लाक्षणिक, पारंपरिक अर्थों में उसे धरती पर अपना भगवान मान लेना चाहिए था; उसे उसे भी एक इंसान समझना चाहिए था, एक ऐसा इंसान जिसकी भावनाएँ और चिंताएँ उसकी संस्कृति के पारंपरिक पतियों से भिन्न हो सकती हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि उसे उसके व्यक्तित्व के खुले पहलुओं और छिपे हुए कोनों और दरारों, दोनों से भली-भांति परिचित होना चाहिए था: जो ऊपर दिखाई देता था और जो गहराई में छिपा हुआ था।

उसके लिए यह एक बिल्कुल नया विचार था: अपने पति को 'समझना'। यह विचार उसके स्वभाव और परवरिश से पूरी तरह अलग था, एक ऐसा विचार जो उसकी दुनिया से बिलकुल परे था। उसने अपने माता-पिता के घर, अपने विस्तारित परिवार, अपने सांस्कृतिक परिवेश में जो कुछ भी सीखा था, वह इस विषय पर मौन था। उसके लिए पति एक प्रार्थना या ताबीज के समान था, जिसे समझने की आवश्यकता नहीं थी। वास्तव में, ताबीज को खोलकर उस पर लिखे हुए को देखना आम तौर पर वर्जित था। और प्रार्थना के शब्द लगभग हमेशा अरबी में होते थे, जिसे शायद मस्जिद का मुल्ला भी न समझ पाए। ताबीज को गले में पहनना या निर्धारित तरीके से प्रार्थना करना ही काफी था, और वास्तव में यह काफी वांछनीय भी था। ताबीज या प्रार्थना का कार्य विपत्ति से रक्षा करना, बीमारी को स्वास्थ्य में बदलना, महिलाओं को लड़कियों के बजाय लड़के पैदा करने में सक्षम बनाना, और घरेलू जीवन की लय को बिना किसी बाधा के बनाए रखना था। और यही वह उद्देश्य था जिसके लिए पति की आवश्यकता होती थी। जैसे कोई व्यक्ति ताबीज या प्रार्थना के कारगर होने की सच्ची आशा रखता है और उसके न होने पर भी आशा बनाए रखता है, ठीक उसी प्रकार, एक स्त्री अपने पति से यह आशा रखती है कि वह अपने परिवार के पालन-पोषणकर्ता और स्वामी के रूप में, अपनी पत्नी और उसके बच्चों के जन्मदाता और रक्षक के रूप में अपना कर्तव्य निभाए। यदि परिस्थितियाँ उस प्रकार से अनुकूल न हों, तो भी स्त्री को धैर्य बनाए रखते हुए, प्रार्थना करते हुए और सुधार और परिवर्तन की आशा करते हुए आगे बढ़ना चाहिए। अपने पति को इस दृष्टि से देखना ही एक स्त्री का सच्चा कर्तव्य और जीवन का उद्देश्य है।

संभवतः सलीमा के मन में हमेशा से एक दबी हुई आशंका, एक छोटा सा संदेह रहा होगा कि वह और उसका पति एक ही तरह के स्वभाव के नहीं हैं: चीजों के प्रति उसकी भावनाएँ और प्रतिक्रियाएँ उसके अपने लोगों से भिन्न हो सकती हैं। दुनिया को देखने का उसका नजरिया हमसे अलग था। सबसे बढ़कर, वह एक चित्रकार था, और उसका चित्रकारी भी हमारी चित्रकारी से

बिलकुल अलग थी। शायद वह उन तरीकों से प्रसन्न नहीं हो पाता था जो उसके अपने लोगों की अन्य स्त्रियाँ अपनाती थीं, हालाँकि वे तरीके उनके और उनके पतियों को प्रसन्न रखने के लिए पर्याप्त थे।

लेकिन चाहकर भी वो क्या कर सकती थी? उसकी ज़िंदगी तो खत्म हो जाएगी और वैवाहिक मामले, रोज़मर्रा के सवाल या बड़े-बड़े मामले, सब उसकी शॉल में बंधी गांठ की तरह या फिर भविष्य के किसी अनिश्चित पल के लिए अपनी पोशाक के किसी कोने में सहेज कर रखी हुई चीज़ों की तरह अधूरे ही रह जाएंगे। उसे सलाह देने वाला कोई नहीं था, और अगर कोई होता भी, तो वो बस एक और कश्मीरी ही होती; राजपुताना के एक अधेड़ उम्र के आदमी के मन को वो कैसे समझ सकती थी?

सलीमा के मन में हमेशा यह खटकता रहता था कि उसके पति के भीतर कोई कमी रह गई थी: एक ऐसी कमी जिसे केवल वही, उसकी विवाहित पत्नी, पूरा कर सकती थी। लेकिन वह कभी यह तय नहीं कर पाई कि क्या मखसुल्लाह को उस कमी का एहसास भी था। उनका जीवन इस तरह बीता कि वे शायद ही कभी अकेले में, गोपनीय या अंतरंग तरीके से बात करते थे। और यह सिर्फ सलीमा के साथ ही नहीं था; मखसुल्लाह कभी किसी के सामने नहीं आते थे, सिवाय तब जब वे अपने पड़ोसियों या अपनी पत्नी के रिश्तेदारों के बच्चों के साथ खेलते थे। अब, जब वे हमेशा के लिए चले गए, तो सलीमा का दिल टूट गया; वह अपने पति के लिए कुछ करना चाहती थी, कुछ ऐसा जो उसने उनके साथ रहते हुए नहीं किया था। यही उदासी और अधूरे रह जाने का एहसास ही था जिसने उसे यह एहसास दिलाया कि पति केवल एक स्त्री के जीवन रूपी किले की दीवार नहीं होता, बल्कि वह उसमें रहता भी है।

चालीस दिनों के गहन सार्वजनिक शोक और अपने अंतर्मन की जमी हुई चुप्पी के बीच, उसे धीरे-धीरे अपने विवाह की सच्चाई का एहसास हुआ: जो उससे दूर चला गया था, वह वास्तव में कभी रुका ही नहीं था; और यदि वह वास्तव में कभी रुका ही नहीं था, तो वह उसके लिए एक अपरिचित यात्री ही रहेगा, चाहे वह शारीरिक रूप से एक हजार साल तक ही क्यों न रहे।

इस जानकारी के बावजूद, सलीमा ने फैसला किया कि कम से कम अब उसे अपने पति को अपने करीब लाने के लिए अपनी पूरी कोशिश करनी चाहिए; उसे वह काम करने का प्रयास करना चाहिए जिसे वह तब करने में बुरी तरह असफल रही थी जब उसका पति शारीरिक रूप से उसके साथ मौजूद था।

सलीमा ने मन ही मन ठान लिया कि वह अपने मृत पति को अपने करीब लाने के लिए हर संभव प्रयास करेगी: वह पति जो अपने जीवनकाल में उसके करीब नहीं आ सका था या जिसे आने से रोका गया था। इसलिए, विधवा के लिए इस्लामी विधि के अनुसार घर न छोड़ने की अवधि समाप्त होते ही, उसने सबसे पहले कुपवारा छोड़कर बदगाम में अपने लिए एक उपयुक्त घर चुना। यद्यपि वह तालीम (धार्मिक शिक्षा) की पढ़ाई शुरू करने की उम्र पार कर चुकी थी, और उस समय महिलाओं को ऐसे पेशों के लिए उपयुक्त नहीं माना जाता था, फिर भी उसने तालीम सिखाने वाले शिक्षकों की महिलाओं और पत्नियों से जान-पहचान बनाई, उनसे समय-समय पर मिलने जाने लगी, उनके जीवन जीने के तरीके, चीजों के प्रति उनके दृष्टिकोण, शिक्षकों की

मानसिकता और मनोदशा, उनकी विशिष्टताओं और उनकी नापसंदों को समझने और जानने का प्रयास करने लगी।

मुहम्मद याह्या को चार साल और चार महीने की निर्धारित उम्र में पढ़ना सिखाया गया, जो बच्चों के लिए वर्णमाला सीखने की शुरुआत करने के लिए उपयुक्त और शुभ मानी जाती थी। सबसे पहले, उन्हें अपने शिक्षक के साथ पूरा बिस्मिल्लाह पढ़ने को कहा गया। कुरान की पहली आयत का पाठ बिस्मिल्लाह कहलाता है, जिसका अर्थ है, 'कुरान की पहली आयत का पाठ करना'। किसी भी कार्य की शुरुआत करते समय, विशेषकर किसी औपचारिक कार्य की शुरुआत करते समय, इसे पूरा पढ़ा जाता है। जब वह पाँच वर्ष के हुए, तब सलीमा ने उन्हें कहानियों के रूप में उनके पिता के जीवन और परिस्थितियों के बारे में बताना शुरू किया। एक दिन, बच्चे के साथ अपनी सामान्य बातचीत के दौरान, उन्होंने उनसे सहज भाव से पूछा, हालाँकि उनके मन में कहीं न कहीं कोई उद्देश्य छिपा था, 'मेरे बेटे, क्या तुम्हारा मन कभी अपने पिता की भूमि को देखने के लिए तरसता है?'

‘मैं और कहाँ जाऊँ, माँ? मेरे पिता की ज़मीन तो यहीं है, क्या यह सच नहीं है?’

'मेरा मतलब यह था कि आपके पिता मूल रूप से यहाँ के नहीं थे। दरअसल, वे बहुत दूर से आए थे, हिंदुस्तान की धरती से।'

लेकिन माँ, आप तो इसी जगह की हैं। क्या मेरे पिता ने आपको और इस भूमि को अपना नहीं माना था? नहीं, मैं कहीं और नहीं जा रहा हूँ।

सलीमा की आँखों से आँसू छलक रहे थे, मानो ग्रीष्म ऋतु की हल्की बारिश हो रही हो, और उसके शरीर पर लिपटे हल्के वस्त्र को भिगो रहे हों। आँसुओं से धुंधली आँखों से उसने पुत्र के चेहरे पर पिता के वंश को पहचानने की कोशिश की। मकसुल्लाह के चेहरे पर उसके गहरे काले रंग के अलावा कुछ भी स्पष्ट नहीं था।

‘ठीक है, किसी दिन मैं तुम्हें उस जगह ले जाऊंगा जहां मेरे अपने लोग रहते हैं।’

कई अंधेरी और खामोश रातों में, सलीमा चुपचाप अपनी नमाज़ की चटाई पर बैठकर ईश्वर से प्रार्थना करती कि उसका बेटा उसे कभी छोड़कर न जाए। प्रार्थना करती कि उसे यहीं अपनी दुल्हन से बेटियाँ पैदा हों, कोमल और सफेद रंग की, जैसे पहली बर्फ के बाद अंकुरित होने वाले पहले छोटे नरगिस के फूल, जो बर्फ के पिघलने पर सबसे पहले झाँकते हैं; गर्मियों में खिलने वाले गुलाब की तरह कोमल और सुंदर, लेकिन साथ ही दृढ़ और जीवन जीने की शक्ति से परिपूर्ण। उनके चेहरे और चेहरे पर दूर देशों के रंगों की छाया भी न पड़े; कोई परदेसी उन्हें अपने साथ न ले जाए। उसके बेटों का जीवन कश्मीर घाटी की ठंडी हवाओं में लहराते धान के दानों की तरह फले-फूले और समृद्ध हो; और वे इन्हीं पहाड़ियों और घाटियों की हवा में लंबे, मजबूत और समृद्ध हों, कहीं और नहीं।

मुहम्मद याह्या ने जल्द ही तालीम के एक कुशल कलाकार के रूप में ख्याति अर्जित की। उन्होंने फ़ारसी का भी अध्ययन किया और अरबी का थोड़ा-बहुत ज्ञान तथा अंकगणित की कुछ बुनियादी बातें भी सीख लीं। इस प्रकार वे अपने साथियों के बीच कलाकार और मुल्ला दोनों के रूप में जाने जाने लगे। पंद्रह वर्ष की आयु तक आते-आते उनमें एक परिपक्व व्यक्ति का सशक्त

व्यक्तित्व आ गया था और रूप-रंग में वे बिल्कुल अपने पिता की छवि थे। जहाँ मखसुल्लाह के चेहरे पर एक प्रकार की तीव्र तल्लीनता और एकाग्रता झलकती थी, वहीं याह्या के चेहरे पर एक आंतरिक शांति झलकती थी, मानो उनकी आत्मा की शांत गहराइयों से एक कांपती हुई आंतरिक प्रकाश की किरण निरंतर निकलती हो और उनके चेहरे पर उसी प्रकार खेलती हो जैसे लाउलाब घाटी के चमचमाते जलप्रपात पर भोर की हल्की गुलाबी रोशनी पड़ती है।

अठारह वर्ष की आयु तक मुहम्मद याह्या के लिए विवाह के प्रस्तावों की भरमार हो गई। काफी सोच-विचार और सावधानीपूर्वक खोजबीन के बाद, सालिमा ने उनका विवाह अपने गृहनगर कुपवारा की रहने वाली बशीरुन्निसा से करवा दिया। विवाह के दो साल पूरे होने से कुछ सप्ताह पहले ही याह्या की पत्नी ने जुड़वां बच्चों को जन्म दिया, जिनके जन्म में केवल एक घंटे का अंतर था। दोनों बच्चे दिखने में अपनी माँ के समान थे, लेकिन उनका रंग अपने पिता की तरह सांवला और गहरा भूरा था। बड़े बेटे का नाम मुहम्मद याकूब और छोटे बेटे का नाम मुहम्मद दाऊद रखा गया। वे बड़े होकर रेशम, केसर और शहद के प्रतिष्ठित व्यापारी बने। बदगाम में जन्म और पालन-पोषण होने के कारण वे याकूब बदगामी और दाऊद बदगामी के नाम से प्रसिद्ध हुए।

अपने पिता के बदगाम से घनिष्ठ संबंध और बदगाम से ही अपनी पहचान का एक हिस्सा प्राप्त करने के बावजूद, याकूब और दाऊद दोनों को अपने पिता की तरह दृश्य कलाओं का हुनर विरासत में नहीं मिला। उन्हें तालीम, लकड़ी की नक्काशी या कालीन बुनाई में कोई रुचि नहीं थी। फिर भी, उनकी आवाज़ सुरीली थी और संगीत में उनकी गहरी रुचि थी। वे संत लल्ल देद की कश्मीरी कविताएँ और सत्रहवीं शताब्दी के कश्मीरी फ़ारसी कवि मुल्ला ताहिर गनी की ग़ज़लें समान कुशलता और निपुणता से गाते थे। धीरे-धीरे, भाई-गायक की यह जोड़ी पूरे कश्मीर में प्रसिद्ध हो गई। कभी उनका व्यवसाय तो कभी संगीत में उनकी निपुणता उन्हें न केवल बदगाम के आसपास, बल्कि घाटी के दूर-दराज के कोनों तक ले जाती थी। कई बार ऐसा भी हुआ कि पिता और पुत्र हफ़्तों और महीनों तक एक साथ नहीं रह पाते थे। जैसे-जैसे उनकी ख्याति बढ़ती गई, वे पश्चिम में बल्ख और पूर्व में लाहौर तक यात्रा करते नज़र आने लगे।

सलीमा का निधन एक सुसंस्कृत आयु में हुआ, यानी पचपन वर्ष की आयु में, लेकिन पोतियों की चाहत अधूरी ही रह गई। उनकी इच्छा के अनुसार उन्हें दाचीगाम के जंगल में मियां मखसुल्लाह की कब्र के पास दफनाया गया। मुहम्मद याह्या अपने बेटों से बहुत निराश थे, और यह निराशा हमेशा उनके मन पर भारी पड़ती रही। उन्होंने आशा की थी कि उनके बेटे अपने पिता और दादा की कलात्मक विरासत को आगे बढ़ाएंगे और उसे संजोकर रखेंगे, न कि शहद की बोतलों, रेशम के गट्ठों और केसर से भरी थैलियों का बोझ ढोते हुए फेरीवालों की तरह पहाड़ियों, जंगलों और गांवों में भटकेंगे। इससे भी बुरी बात यह थी कि उन्हें गाने और संतूर नामक पारंपरिक कश्मीरी वाद्य यंत्र बजाने का शौक था। वे इन चीजों को अपने स्तर से बहुत नीचे मानते थे, केवल असभ्य, अनपढ़ कवियों और कवियों के योग्य समझते थे। सलीमा अपने बेटे के सामने उनके लिए हर समय विनती करती रहती थीं, लेकिन याह्या का मन शांत नहीं होता था। सलीमा अपने बेटे से बेहद प्यार करती थी, लेकिन उसके दिल में हमेशा एक छोटी सी चुभन रहती थी कि उसे पोतियां नहीं मिलीं और पोते भी उसके लायक नहीं निकले। शायद मियां की आत्मा को भी जन्नत में पूरी

तरह शांति नहीं मिली थी।

सिंधिया ने असंभव को संभव कर दिखाने वाला उच्च पद प्राप्त किया और पूरे राज्य में उत्सव मेले आयोजित करने के आदेश जारी किए।

दाऊद और याकूब के विपरीत, जिनका स्वभाव सच्चे घुमक्कड़ पर्यटकों और यात्रियों जैसा था, मुहम्मद याह्या ने अपने जीवन में केवल एक बार ही अपना घर छोड़ा था। इस यात्रा के पीछे एक दिलचस्प कहानी है। मैं इसे यहाँ सुनाना उचित समझूँगा, क्योंकि आजकल के लोग भूलने की आदत विकसित कर रहे हैं। आधुनिक जीवन की धूल और धुएँ ने पारिवारिक कहानियों और यहाँ तक कि राष्ट्रों के इतिहास में छिपी ऐसी कई घटनाओं को मिटाने या कम से कम धुंधला करने में व्यस्त हैं।

हिजरी का वर्ष 1207 था, जो अंग्रेजी वर्ष 1792-1793 के समतुल्य है। गुलाम कादिर रुहेला को फांसी दिए जाने और रुहेला पठानों की पूर्ण पराजय के लगभग पाँच वर्ष बीत चुके थे; धरती पर ईश्वर की छाया, सम्राट अली गौहर मुहम्मद अब्दुल्ला शाह आलम द्वितीय, पवित्र युद्धों के योद्धा, लाल किले में राजसी सिंहासन पर पुनः विराजमान हो चुके थे। इन पाँच वर्षों के दौरान, मराठों के समर्थन और सहयोग से, मुगल साम्राज्य के लाल झूमरों की रोशनी, यद्यपि काफी मंद और धुंधली थी, फिर भी निकट के प्रेक्षकों को चकाचौंध करने के लिए पर्याप्त थी। माधव राव सिंधिया, जिनका लोकप्रिय उपनाम महादा जी था, को सम्राट द्वारा प्रिय पुत्र, पूर्णाधिकार प्राप्त, प्रधान मंत्री, भाग्य में महान, माधव राव जी सिंधिया बहादुर की उपाधियों से सुशोभित और पदोन्नत किया गया था। निज़ामुल मुल्क और टीपू सुल्तान के क्षेत्रों को छोड़कर लगभग पूरा हिंदुस्तान और दक्कन की आधी से ज़्यादा ज़मीन सिंधिया साम्राज्य के अधीन थी। कुछ क्षेत्रों पर उन्होंने मराठा सरदार, जिसे पेशवा कहा जाता था, की ओर से सीधे शासन किया, कुछ पर शाह आलम के नाम से और कुछ छोटे क्षेत्रों पर विभिन्न मराठा सरदारों और शक्तिशाली शासकों की ओर से शासन किया। यह सच है कि कंपनी बहादुर ने शाह आलम के साम्राज्य के बहुत बड़े हिस्सों पर शासन किया, लेकिन भारत की जनता ने अभी तक दिल से उसे शासन करने और कर व भू-राजस्व वसूलने का अधिकार नहीं दिया था। कंपनी शासन कर रही थी, लेकिन उसने राज नहीं किया।

21 ज़िक़दाह, 1207 हिजरी (11 जून 1792) की दोपहर का समय था, जब माधव राव सिंधिया एक छोटे लेकिन भव्य दल के साथ पुणे के आसपास के इलाके में दाखिल हुए। हल्की-हल्की हवाएँ, आने वाली बारिश का संकेत देते हुए, उनके आगे-आगे चल रही थीं, मानो एक खुशहाल अग्रिम पंक्ति में हों। उनके हमनाम, उन्नीस वर्षीय पेशवा माधव राव द्वितीय, उनका इंतज़ार कर रहे थे, लेकिन सिंधिया ने अपना शिविर और तंबू अंग्रेज़ रेजीडेंसी के सामने वाले बड़े मैदान में लगा रखे थे। उन्होंने छत्रपति शिवाजी के प्रतिनिधि, आठ की परिषद के पेशवा या मराठा कुलीनतंत्र के मुखिया, महान भाग्य के नेता, जिनका शिविर आकाश था और जिनका निवास स्थान मंगल ग्रह था, अर्थात् माधव राव बहादुर द्वितीय के दरबार में स्वयं को प्रस्तुत किया। माधव राव सिंधिया शुभ किले से एक मील दूर अपने हाथी से उतरे और अपने लंगड़े पैर के बावजूद बाकी की दूरी पैदल तय की। उन्होंने अपने सिर पर हमेशा रहने वाली सुनहरी छतरी भी

उतार दी। उन्होंने पसीने से तर चेहरे को पोंछे बिना और एक मिनट भी रुके बिना, अरबों साल पुरानी सतपुरा पर्वत श्रृंखला की बौनी, काली चट्टानों पर पड़ रही तेज धूप का सामना करते हुए, लगभग आधे घंटे से भी कम समय में दूरी तय कर ली।

शुभ किले के मुख्य द्वार पर पहुँचकर सिंधिया ने अपने हथियार उतार दिए, जूते उतारे और सभा-प्रवेश कक्ष के सामने, जहाँ सभी लोग प्रवेश करने से पहले अपने जूते रखते थे, अपनी चौड़ी कमरबंद को नंगी ज़मीन पर फैलाकर बैठ गए। उनके चारों ओर सैनिक और वीर नहीं, बल्कि जूते और चप्पलें थीं। उनके दाहिने हाथ में सोने की कढ़ाई वाले कपड़े में लिपटा एक पार्सल था। उन्होंने अपने सभी हथियार अपने निजी अंगरक्षकों को सौंप दिए थे; इसलिए उस बक्से जैसे पार्सल में क्या हो सकता था, यह सवाल पूछने की हिम्मत किसी ने नहीं की।

विशाल हॉल के अंतिम छोर पर लटका काला मखमली पर्दा उस क्षण खुल गया जब सिंधिया अपने सोने के पार्सल के साथ बैठा। पर्दा पूरी तरह खुलते ही एक चबूतरा दिखाई दिया; यह लगभग दो हाथ ऊंचा, बीस हाथ लंबा और चौदह हाथ चौड़ा था, और यमन से लाए गए सुनहरे-पीले रेशमी कालीन से ढका हुआ था। बाघों और चीतों की खालें, जो देखने में तो लापरवाही से लगती थीं, लेकिन वास्तव में बड़ी सावधानी और योजना के साथ सजाई गई थीं, उस ऊंचे स्थान को सुशोभित कर रही थीं।

पेशवा माधव राव द्वितीय अब एक विशाल और चौड़ी आबनूस की कुर्सी पर बैठे हुए दिखाई दे रहे थे। उनकी सीधी पीठ, तनी हुई गर्दन और आत्मविश्वास से भरी आँखों के कारण ही उनका दुबला-पतला, किशोर जैसा शरीर और कुछ हद तक सिकुड़ा हुआ चेहरा—जिस पर शराब की लत के लक्षण दिखने लगे थे—उस विशाल कुर्सी के लिए छोटा और अनुपयुक्त प्रतीत होता, जिस पर वे सहजता से बैठे थे। इस समय, वह चौड़ी और भारी कुर्सी भी उनके लिए छोटी लग रही थी।

पेशवा जब हॉल के प्रवेश द्वार पर महादा जी को फर्श पर बैठे हुए देखा तो अपनी कुर्सी से उठ खड़े हुए। वे अभी अपने ऊंचे चबूतरे से दूसरी सीढ़ी ही उतर रहे थे कि महादा जी उनके पास आ गए और तीन बार झुककर अपने दाहिने हाथ से धरती को स्पर्श किया और फिर उसे अपने माथे से लगाकर अपने गुरु के प्रति औपचारिक समर्पण का भाव प्रकट किया। सोने की कढ़ाई वाले अपने पार्सल को खोलकर उन्होंने मराठा शैली की चप्पलें निकालीं और शुद्ध फारसी में बोले, “मेरे पूर्वजों ने इस सम्मान को अपने सबसे बड़े गौरव का स्रोत माना है। कृपया मुझे अपनी कृपा से यह सौभाग्य प्रदान करें कि मैं इन्हें आपके पवित्र चरणों में धारण कर सकूँ।”

माधव राव मुस्कुराए और जहाँ थे वहीं रुक गए, अपना दाहिना हाथ अपनी छाती पर रखा। महादा जी आगे बढ़े और पेशवा के पैरों में चप्पल पहनाई। उन्होंने पुरानी चप्पलों को अपने सुनहरे कपड़े में लपेटा और गठ्ठा अपनी दाहिनी बगल में दबा लिया, ताकि आगे की कार्यवाही में उन्हें जो कुर्सी दी जाएगी, उस पर रख सकें। वह एक ऊँची, सोने से सजी लकड़ी की कुर्सी थी, जो पेशवा के चबूतरे के ठीक नीचे थी और गहरे लाल और नीले रंग के भारी वस्त्र से ढकी हुई थी। पेशवा के पीछे और थोड़ा बाईं ओर गदा लिए खड़ा एक विशालकाय इथियोपियाई सैनिक तेज़ी से आगे बढ़ा और वस्त्र हटाकर उतनी ही तेज़ी से अपने स्वामी के पीछे वापस आ गया। अपनी गर्दन और

आँख के हल्के से इशारे से पेशवा ने महादा जी को बैठने की अनुमति दी।
अब ध्रुपद नामक प्राचीन भारतीय शास्त्रीय शैली में राग बहार में एक संक्षिप्त स्वागत गीत गाया गया। इससे कार्यवाही के समापन का संकेत मिला क्योंकि उस समय न्यायालय महादा जी का स्वागत करने और उन्हें दर्शन देने के लिए ही एकत्रित हुआ था।
अगले दिन, दरबार सार्वजनिक सभाघर में नहीं, बल्कि एक विशाल और खुले मैदान में एकत्रित हुआ। रातोंरात तरह-तरह के तम्बुओं का एक जंगल उग आया—चौकोर लेकिन रस्सियों से रहित तम्बुश, बड़े, खुले तम्बुश, उत्तल, चित्रित और अलंकृत छतों वाले विशाल, स्तंभों वाले मंडप, निजी कक्षों वाले उचित मेहराबदार और अलंकृत दरवाजों वाले दरबारी मंडप, और पीछे ढके हुए बांस के खंभों पर टिकी ऊंची, चित्रित कैनवास की दीवारें—उपस्थित लोगों के ठहरने के लिए। अतिथि और उनके मुख्य साथियों के लिए बने सभी तम्बुश सुनहरे लाल और नीले कपड़ों से ढके हुए थे।
पेशवा माधव राव के दरबारी तंबू भी कम भव्य नहीं थे। कुछ सबसे ऊंचे तंबुओं के शिखर दूर से ही चमकते और दमकते हुए दिखाई देते थे। अंदर की गर्मी को कम करने के लिए, हर जगह लगातार गुलाब जल की हल्की फुहारें छिड़की जाती थीं; लकड़ी के बीमों पर लटके लंबे, भारी कपड़े के पंखों से हवा का संचार होता था, जिन्हें मजबूत रस्सियों से खींचा जाता था; दो से छह आदमी मिलकर छह या आठ पंखे खींचते थे। सोने और रत्नों से सजे अलंकरणों वाले हाथियों, रंगीन चमड़े की काठी वाले शक्तिशाली घोड़ों, रत्नों से सजे बगुले और सोने-चांदी की बारीक कढ़ाई वाले कपड़े से सजी पूंछों के अलावा, यहां एक ऐसी चीज थी जो मुगल दरबारों में, चाहे वे अंदर हों या खुले में, कभी नहीं देखी गई थी: दो हजार या उससे अधिक भारी हथियारों से लैस सैनिकों ने उस पूरे मैदान को घेर रखा था जहां तंबू और साजो-सामान रखे थे।
इस विशाल शिविर के ठीक बीच में राजमहल था, जिसमें एक भव्य रूप से तराशा हुआ खाली सिंहासन था: खाली इसलिए क्योंकि यह समृद्धि के सूचक चरणों और शाह आलम द्वितीय की शुभ उपस्थिति का प्रतीक था, जो पृथ्वी पर ईश्वर की छाया, विश्व के राजा और उसमें विद्यमान समस्त के स्वामी थे। पेशवा माधव राव द्वितीय, नंगे पैर, लेकिन पूर्ण दरबारी पोशाक में, राजमहल की ओर बढ़े और द्वार पर प्रतीक्षा करने लगे। राजमहल के प्रबंधक ने फ़ारसी में पुकारा: 'सतारा नगर के मराठा दरबार के पेशवा, पृथ्वी पर ईश्वर की छाया, विश्व के रक्षक, जिनके राजमहल पर यह विराजमान है, हिंदुस्तान और दक्कन के सम्राट, उनकी परम आधिपत्य को अपना अर्पण प्रस्तुत करने के लिए यहाँ आए हैं।'
पूरा दरबार खड़ा हो गया, और माधव राव द्वितीय ने सात बार झुककर और उतनी ही बार अपना दाहिना हाथ माथे पर रखकर मंडप में प्रवेश किया; महादा जी उनके पीछे-पीछे चले। सिंहासन के इतने करीब पहुँचकर कि उनका हाथ उसे छू सके, माधव राव द्वितीय ने अपना सिर झुकाया, घुटनों के बल बैठे और एक सौ एक शाह आलमी सोने के मोहरों से भरा सोने की कढ़ाई और झालर वाला थैला सिंहासन पर रख दिया। बधाई और प्रशंसा की गूँज सुनाई दी।
अब, पीछे की ओर चलते हुए, पेशवा और महादा जी सिंहासन के पीछे बाईं ओर स्थित एक भारी सुनहरे पर्दे के पास पहुँचे। पीछे की ओर चलते हुए ही वे पर्दे के पीछे एक द्वार से अंदर गए। पर्दा

पूरी तरह से हट चुका था, जिससे एक भव्य रूप से अलंकृत कक्ष दिखाई दिया। यहाँ, दोनों इस प्रकार खड़े हुए कि वे सबके सामने आ सकें, और पेशवा ने महादा जी के कंधों और शरीर के निचले हिस्से पर राजा द्वारा भेजा गया सम्मान वस्त्र ओढ़ाया। इस वस्त्र में पाँच अनमोल रत्न और नौ अलग-अलग वस्त्र शामिल थे। फिर उन्होंने महादा जी के बाएँ हाथ में रत्नजड़ित तलवार रखी; उनके दाहिने हाथ में, पेशवा ने आबनूस की स्याहीदानी और राजमुकुट रखी।

राज्याभिषेक कक्ष से बाहर निकलते हुए, महादा जी ने पहले सिंहासन के चरणों को चूमा, फिर उन्होंने पेशवा के दाहिने हाथ को चूमा। दरबारी उद्घोषक ने अपनी बुलंद आवाज में कहा: 'खलीफा के रक्षक, पृथ्वी पर ईश्वर की छाया, बाबर वंश का गौरव, तैमूर की संतानों में श्रेष्ठ, सम्राट के पुत्र, सुल्तान के पुत्र, अली गौहर, शाह आलम बहादुर द्वितीय, ईश्वर उनके शासन को शाश्वत बनाए रखें और उनकी शक्ति को सदा के लिए संरक्षित रखें, उन्होंने तलवार और कलम के अतिरिक्त, अपने प्रिय पुत्र, राजकवि, भाग्य में महान, माधव राव सिंधिया बहादुर को मोर पंख का पंखा, सोने की कुर्सी, हौदा और ध्वज सहित छह हाथी और एक युद्ध अश्व प्रदान किया है।'
जयजयकार और प्रशंसा का शोर फिर से गूंज उठा, इस बार और भी तेज। ढोल बजने लगे। उपस्थित लोगों पर गुलाब जल, इत्र और अंबरग्रीस के तनु घोल का छिड़काव किया गया। तभी सिंधिया ने पास खड़े एक सचिव को इशारा किया। सचिव ने अपने सिर पर सोने की कढ़ाई वाले नीले मखमल से ढकी एक भारी तांबे की थाली रखी हुई थी। मखमल पर दो राजपत्र रखे थे। सिंधिया ने फिर तीन बार झुककर अपना दाहिना हाथ अपने सिर से छुआ, फिर दाहिना हाथ आगे बढ़ाया और दोनों पत्र निकाले, उन्हें चूमा, फिर अपनी आंखों से लगाया और अपने सिर पर रख लिया। सचिव आगे बढ़ा और एक-एक करके पत्र खोले और सिंधिया को भेंट किए।
उचित विरामों के साथ और गंभीर स्वर में, सिंधिया ने दरबार के समक्ष लिखित दस्तावेज पढ़े। पहले दस्तावेज का सार यह था कि स्वर्ग से पूज्य नवाब, मराठा दरबार के पेशवा, माधव राव द्वितीय को शाही प्रतिनिधि के पद पर नियुक्त किया जाता है। उन्हें अपने औपचारिक जुलूसों में मछली के उच्च प्रतीक चिन्ह का उपयोग करने की अनुमति दी जाती है, और उन्हें अपने सिर पर पगड़ी के आभूषण के चारों ओर मोतियों की माला पहनने का विशेषाधिकार प्राप्त है।
दरबार के अंदर और बाहर भी खुशी और बधाई की गूंज सुनाई दे रही थी। मैदान में तोपें दागी गईं, आसमान में आतिशबाजी के बड़े-बड़े पहिये छोड़े गए और बांसुरी और वाद्य यंत्रों पर उत्सव का संगीत बजाया गया। शोर शांत होने पर और दूसरा फरमान पढ़े जाने से पहले ही पेशवा सभा में आगे बढ़े और अपनी पतली लेकिन स्पष्ट आवाज में घोषणा की: 'मैं अपने भाई और सतारा के दरबार के प्रमुख माधव राव सिंधिया को राजमहल का प्रतिनिधि नियुक्त करता हूं।'
सिंधिया ने झुककर पेशवा के चरण स्पर्श किए। फिर उन्होंने दूसरा फरमान पढ़ा, जिसके अनुसार माधव राव सिंधिया, जो भाग्य में श्रेष्ठ, मुख्य मंत्री और पूर्ण अधिकार प्राप्त थे, को पूर्ण अधिकार प्राप्त उत्तराधिकारी के रूप में अपना चयन करने का अधिकार दिया गया था।

स्तब्ध सभा ने सन्नाटे में इस अविश्वसनीय घोषणा को सुना। भारत में मुगल वर्चस्व के लंबे

इतिहास में ऐसा सम्मान कभी किसी को नहीं मिला था। लेकिन जब स्वयं पेशवा सिंधिया को गले लगाने और बधाई देने के लिए आगे बढ़े, तो सभा ने उस क्षण की महत्ता को समझा और प्रशंसा एवं अभिनंदन के स्वर में गूंज उठी। सिंधिया दरबार में एक कदम आगे बढ़े और सम्मान में सिर झुकाया। फिर वे उठे और अंतिम घोषणा को इतनी बुलंद आवाज में पढ़ा कि ऐसा लगा मानो पूरा दरबार गूंज उठा हो।

आज से हम अपने पूरे साम्राज्य में सींग वाले जानवरों के वध पर प्रतिबंध लगाते हैं।

सभी जानते थे कि यह महज़ एक दिखावटी रियायत थी, जिसका कोई वास्तविक अर्थ नहीं था। लेकिन सिंधिया के समर्थकों ने तुरंत समझ लिया कि यह हिंदू धर्म की जीत से कहीं बढ़कर थी; यह मराठा राजनीति की पेचीदगियों में एक बड़ी जीत थी। इसका मतलब यह था कि पेशवाओं के एक सेवक, पटेल जाति के एक निचले तबके के व्यक्ति ने वह हासिल कर लिया था जो ब्राह्मण पेशवाओं और उनके महान मंत्री, चतुर नाना फरनवीस के लिए असंभव था। यह महादा जी के घटनापूर्ण और रंगीन जीवन का सबसे अनमोल क्षण था।

दरबार से लौटने के बाद, महादा जी ने पूरे साम्राज्य में उत्सव मनाने के आदेश जारी किए, जिनमें मेले और महिलाओं के लिए विशेष बाज़ार (जिन्हें मीना बाज़ार कहा जाता था, जहाँ केवल कुलीन वर्ग की महिलाएं ही दुकानें लगा सकती थीं और केवल कुलीन वर्ग के पुरुष ही खरीदारी के लिए प्रवेश कर सकते थे, और जहाँ सामान्य से अधिक मोलभाव और हंसी-मजाक होता था) शामिल थे। उन्होंने दूर-दूर से कारीगरों, शिल्पकारों और कलाकारों को आमंत्रित करने के लिए मेले आयोजित करने का भी आदेश दिया। यह आदेश दिया गया कि कला के क्षेत्र में काम करने वाले लोग दूर-दूर से हर बड़े शहर में इकट्ठा हों और अपनी कला और कृतियों की गुणवत्ता का प्रदर्शन करें। इस आदेश का एक उद्देश्य पशुओं के वध पर प्रतिबंध की खबर फैलाना और महादा जी के सम्मान और प्रतिष्ठा का प्रचार पूरे राज्य में करना था।

इस प्रकार, लाहौर में 11 ज़िलहिज्जा 1207 (30 जून 1792) से दो सप्ताह तक मीना बाज़ार और शिल्प मेला आयोजित किया गया, और मुहम्मद याह्या बदगामी को विशेष रूप से कश्मीर से अपना सामान लाने के लिए आमंत्रित किया गया।

ऐसा लग रहा था मानो गर्म दिन कभी खत्म नहीं होंगे। बारिश का मौसम बाज़ारों की एक अनुभवी मोहक स्त्री की तरह था, जो अपनी दौलत की एक झलक दिखाकर अचानक गायब हो जाती थी। वे झुलसा देने वाले, तपते दिन थे, जिनकी भीषण गर्मी से चीलें भी अपने अंडे छोड़कर चली जाती थीं और पहाड़ी गिरगिट का जिगर प्यास से कबाब की तरह जलता था; गर्म हवा के झोंके उबलती रातों के जलते दिल में और भी गर्मी भर देते थे। बीकानेर के रेगिस्तान में दिन के समय उठने वाली हवाएँ जोधपुर और मुल्तान को रौंदती हुई आगे बढ़तीं, अपने पीछे सब कुछ धूल से भर देतीं या ढक देतीं—पेड़-पौधे, पत्थर-घास, पुरुष-स्त्री—और दोपहर होते ही लाहौर पहुँच जातीं, सरसराहट और भिनभिनाहट करती हुई शहर के सुनसान बाज़ारों और गलियों में तबाही मचा देतीं।

बारिश की एक छोटी सी फुहार लाहौर की सूखी ज़मीन को नम करने के लिए क्या नमी ला सकती थी, जो मिट्टी के चूल्हे में जली रोटी की तरह सूखी और काली थी? कभी-कभार गिरने वाली बारिश की एक-दो बूँदें लाल लोहे के तवे पर दूध की बूँद की तरह चटकती और गायब हो जातीं। गर्म रातें, जो सबके घरों में होने के कारण शांत थीं, मानो शहर पर जम गई हों। लाहौर में दुनिया मानो जीवनहीन हो गई थी।

बेचारे याह्या बदगामी! उन्होंने अपने जीवन में कभी ऐसी गर्मी की कल्पना भी नहीं की थी, न ही कभी देखी थी। हर दिन, बल्कि दिन का हर घंटा और रात का हर पहर उनके लिए नरक जैसा था। यह सच है कि उनकी कला की पूरे शहर में चर्चा थी: उनका शोरूम देर रात तक बढ़िया कालीनों के खरीदारों और पारखियों से भरा रहता था। और उन्हें बिना किसी झंझट या मोलभाव के भुगतान मिलता था; वे अपनी मनचाही कीमत वसूलते थे। ऐसी इज्जत, ऐसी प्रशंसा उन्हें और कहाँ मिल सकती थी? कश्मीर में तो बिलकुल नहीं। यहाँ लाहौर में बदख्शान, ट्रांसोक्सियाना, सिस्तान, ईरान, अज़रबैजान, यहाँ तक कि तुर्की से भी कलाकार और खरीदार आते थे; वे याह्या की कला पर मुग्ध हो जाते थे और उसकी प्रशंसा करते नहीं थकते थे। लाहौर के कारीगर, बूढ़े और जवान, और यहाँ तक कि कुछ महिलाएँ भी, उन्हें काम करते देखने आती थीं और प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उनसे सीखने, उनकी नकल करने और उनके नवोन्मेषी डिजाइनों को अपनाने की कोशिश करती थीं। लेकिन याह्या का दिल कश्मीर के लिए तड़पता था। वह बेसब्री से उस समय का इंतजार कर रहा था जब मेला समाप्त हो जाएगा और उसे घर लौटने की अनुमति मिल जाएगी। यह मुहर्रम के महीने (शोक का महीना) का चांद दिखने से पहले होने वाला था।

वह लगातार मन ही मन महान कश्मीरी फारसी कवि मुल्ला ताहिर गनी की रुबाई का पाठ करता रहता था।

हिंद की हवाओं ने मेरे दिल को जकड़ लिया है, हे हवाओं, मुझे कश्मीर के बाग में ले चलो! यहाँ अजनबी होने की पीड़ा ने मुझे व्याकुल कर दिया है, मुझे मेरी भूमि पर सुबह का शीतल अमृत प्रदान करो।

लेकिन किस्मत को कुछ और ही मंजूर था। मुहर्रम का चांद दिखने से पहले महीने की शुरुआत होने में अभी कुछ दिन बाकी थे। फिर भी, मुहर्रम के रीति-रिवाजों— मातम मनाने और हुसैन (इस्लाम के पैगंबर के पोते, जिन्हें लगभग सर्वत्र इमाम (नेता) कहा जाता है) के दुखों और पीड़ाओं को बयान करने के लिए विशेष सभाओं—की तैयारियां लाहौर में पहले ही शुरू हो चुकी थीं। यह सब बहादुर शाह प्रथम (जो अब स्वर्ग में विराजमान हैं) द्वारा 1707 से 1712 तक के अपने शासनकाल में स्थापित परंपरा के कारण संभव हुआ था। विभिन्न कार्यक्रमों और समारोहों की तैयारियां पहले से कहीं अधिक व्यापक और गहन थीं। ऐसा लग रहा था मानो मुहर्रम का चांद दिखने से छह या सात दिन पहले, यानी ज़िलहिज्जा के 22वें दिन से ही शहर पर मातम का माहौल छाने लगा था।

अगले दिन मीना बाज़ार का समापन हो गया और मुहर्रम की तैयारियाँ और भी ज़ोरों से शुरू हो गईं। हर कोई काले कपड़े, काले कमरबंद और ऊपरी शरीर के लिए हल्के काले कपड़े ढूंढने लगा। दुकानों में काले मखमली सैंडल की तलाश के साथ-साथ, जो लोग हर समय हथियार रखते थे, वे काले रंग से ढके म्यान और ढाल ढूंढने लगे। मातम मनाने के लिए बने घरों की सफाई, सफेदी और साज-सज्जा शुरू हो गई। बच्चे, युवा, बूढ़े, औरतें, मर्द—धर्म या पंथ के भेदभाव के बिना— पिछले साल के मुहर्रम के विशेष मातम गीतों के संग्रहों से धूल झाड़ने लगे। सीखे या याद किए गए गीतों को शांत अभ्यास से ताज़ा किया जाने लगा। कई विधाएँ थीं, जिनमें सबसे लोकप्रिय थीं मर्सिया (या हुसैन पर शोकगीत), नौहा (शोकगीत, जिसे आम तौर पर बिना संगीत के सरल धुन पर गाया जाता था), और सोज़ (नौहा से अधिक साहित्यिक महत्व वाली एक छोटी कविता, जिसे शास्त्रीय संगीत के राग में गाया जाता था, लेकिन बिना किसी वाद्य यंत्र के)। यह अंतिम विधा स्पष्ट रूप से सबसे कठिन थी और अक्सर पेशेवर कलाकारों द्वारा प्रस्तुत की जाती थी। उन दिनों हीरा मंडी की नाचने-गाने वाली लड़कियों, यानी 'ऊपरी मंजिल की महिलाओं' से भी सुनाई देने वाली धुनें शोकपूर्ण और पीड़ा एवं बिछड़ने की भावनाओं से भरी होती थीं।

याह्या बदगामी मुहर्रम के दौरान मातम मनाने की रस्मों और हुसैन व उनके साथियों के कष्टों और पीड़ाओं के वर्णन वाली सभाओं में शामिल होने के शौकीन नहीं थे, लेकिन पैगंबर के प्रिय पोते और उनके साथ हिजरी के 61वें वर्ष (अंग्रेजी कैलेंडर के अनुसार 10 अक्टूबर 680) को कर्बला में शहीद हुए लोगों के प्रति उनका आदर और प्रेम अतुलनीय था। इसलिए उन्होंने फैसला किया कि अब उन्हें अपनी वापसी यात्रा के लिए उपयुक्त घोड़े, सामान ढोने वाले जानवर, पहरेदार और मार्गदर्शक जुटाने चाहिए। यदि वे यह सब जल्दी से कर लेते और शायद तय दिन कश्मीर जाने वाला कोई छोटा काफिला भी मिल जाता, तो वे मुहर्रम की 3 तारीख को सुबह-सुबह लाहौर से निकलकर मुहर्रम की 10 तारीख की शाम को श्रीनगर पहुँच जाते, जो मातम का सबसे प्रमुख दिन है। इसके बाद वह तुरंत झेलम नदी के बाएं किनारे पर स्थित ज़ैना कदल में शाह-ए हमदान मस्जिद जाते और मस्जिद में या उससे सटे धर्मशाला में पेशेवर रूप से योग्य विद्वानों को हुसैन और उनके साथियों की अच्छाई और पवित्रता की प्रशंसा करते हुए सुनते, और फिर कर्बला में उनकी मृत्यु की दुखद कहानी सुनाते हुए सुनते।

मुहम्मद याह्या ने मुहर्रम की पहली तारीख को अपने कारोबार का हिसाब-किताब निपटाया, एक

पालकी किराए पर ली और गरीबन तोला की ओर चल पड़े। गरीबन तोला शहर का वह इलाका था जहाँ बैलगाड़ी और ऊँट चालक, गाइड और लंबी यात्राओं से जुड़े लोग रहते थे। उनका मुख्य उद्देश्य एक शुभचिंतक द्वारा सुझाए गए बैलगाड़ी चालकों और गाइडों के परिवार से मिलना और उनके साथ सौदा करना था। जिस इमारत में वह परिवार रहता था, उसके बगल में एक बड़ा सराय था, जो शायद लाहौर किले जितना ही पुराना था। उस सराय में ठहरने वाले मेहमानों में अजमेर के चमड़े और जरी के जूते बनाने वाले कारीगर, किशनगढ़ के चित्रकार और जयपुर के सोने के अलंकरण के कारीगरों का एक मिला-जुला समूह शामिल था।

ज़ाहिर है, ये लोग शिल्प मेले में हिस्सा लेने आए थे, लेकिन घर लौटने की जल्दी में नहीं थे। उनके रुकने के कई कारण थे: राजपूताना स्थित उनके घरों तक जाने वाली सड़कों का मौसम, और साथ ही उन कस्बों और गांवों का भी जहां वे रहते थे, लाहौर के मौजूदा मौसम से कहीं ज़्यादा खराब था। इसके अलावा, अगर रास्ते में ही बरसात शुरू हो जाती, तो उनकी यात्रा नरक की यात्रा से भी ज़्यादा कष्टदायी हो सकती थी। लेकिन उनके तुरंत घर न लौटने का मुख्य कारण यह था कि मुहर्रम के पहले दस दिनों में यात्रा करना उनकी परंपरा के अनुसार अशुभ और गलत माना जाता था।

मुहम्मद याह्या की पालकी अब सराय के ऊँचे और विशाल द्वार के सामने थी। उन्होंने आँगन की विशालता का अवलोकन किया और फिर वहाँ एकत्रित महिलाओं के एक समूह को देखा। वे गहरे काले वस्त्र पहने हुए थीं; उनके शरीर का कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था, सिवाय इसके कि उनके चेहरे खुले थे और बाल खुले हुए थे। महिलाओं के पीछे कुछ पुरुष भी थे, लेकिन वे भी उन्हीं की तरह वस्त्र पहने हुए थे: उनके कमरबंद, दुपट्टा या कमरबंद नहीं था; जिनके पास था भी, उन्होंने उसके सिरे खुले छोड़ रखे थे। सभी ने हल्के काले सूती कुर्ते और सफेद पजामा पहन रखे थे। कुछ ने एक बाहरी वस्त्र भी पहन रखा था, लेकिन यहाँ भी, उसके डोर और बटन खुले हुए थे, जिससे छाती का काफी हिस्सा दिखाई दे रहा था। सभी नंगे पैर थे। मुहम्मद याह्या उनके धर्म या पंथ के बारे में कुछ भी अनुमान नहीं लगा सके, सिवाय इसके कि उनमें से कुछ स्पष्ट रूप से मुस्लिम नहीं थीं; कुछ, जिनकी ठुड्डी मुंडी हुई थी लेकिन मूंछें काफी उभरी हुई थीं, उनमें मुस्लिम और गैर-मुस्लिम में अंतर करने वाला कोई संकेत नहीं था।

यह तो स्पष्ट था कि सभी शहीद इमाम के शोक में डूबे हुए थे। उन्होंने उनके सम्मान में अपनी पालकी से उतरकर धीरे-धीरे सराय के चौकीदार के पास पहुँचे। वे चुपचाप ज़मीन पर नज़रें गड़ाए खड़े रहे, ताकि किसी को भी यह शक न हो कि वे वहाँ महिलाओं को देखने के लिए रुके थे। कुछ मिनट बीत गए। शोक मनाने वालों के बीच लगभग स्वतः ही एक पैटर्न उभर आया: भीड़ इस तरह व्यवस्थित हो गई कि महिलाएं केंद्र में थीं और पुरुष उनके चारों ओर। पुराने तांबे की तरह धूप में झुलसे महिलाओं के चेहरे शोक के कारण और भी गहरे हो गए थे, उनकी आंखें पूरी तरह झुकी हुई थीं। पुरुषों के चेहरों पर मानो कोई भाव ही नहीं था।

अचानक, भीतर से कहीं से एक ज़ोरदार आवाज़ आई: वा हुसैना! वा हुसैना! याह्या को लगा कि मातम मनाने वालों का जुलूस आने वाला है, पर कोई नहीं आया। शायद कोई दुर्भाग्यशाली व्यक्ति, बीमारी या चोट के कारण शारीरिक रूप से अक्षम, मातम मनाने वालों के साथ बाहर

आने में असमर्थ था। एक मिनट बाद, एक आदरणीय वृद्ध सज्जन बहुत धीमी, संयमित चाल से चलते हुए बाहर आए, लेकिन वे वह व्यक्ति नहीं हो सकते थे जिन्होंने आवाज़ लगाई थी। उनका हर रूप उस समूह से अलग था जिसमें वे अब शामिल हुए थे: उनकी चाल, उनके चेहरे की बनावट, उनके पहनावे का तरीका। उनकी पगड़ी काली थी और उनके कंधे एक चौड़े, मुलायम, काले शॉल से ढके हुए थे।

दाएं या बाएं देखे बिना, बूढ़ा व्यक्ति अपने श्रोताओं की ओर मुख करके, उनके दाहिनी ओर खड़ा होकर, फ़ारसी में एक रुबाई पढ़ रहा था। उसकी आवाज़ में एक विचित्र स्वर था, हल्की हवा में पत्तों की सरसराहट जैसा, सिसकी जैसा, दर्द भरी चीख जैसा। ऐसा लग रहा था मानो वह सिसकी को दबाने की कोशिश कर रहा हो, लेकिन दर्द भरी चीख सिसकी पर हावी होने की कोशिश कर रही हो, मानो वह चीख सिसकी को गले और सीने में दबा देना चाहती हो, और फिर बहकर ऊंचे आकाश में उड़ जाना चाहती हो, धरती की मानवीय सीमाओं को पार करते हुए।

हुसैन, अली के पुत्र, पैगंबर के प्यारे छोटे बेटे, पैगंबर के बाग के नए पके फल, उनके प्रिय राजकुमार, हाय हाय! क्रूरता की कुल्हाड़ी और दुष्ट खंजर से दुष्ट गिरोह ने उस फल, उस राजकुमार को काट डाला।

पूरी रुबाई का पाठ समाप्त करने के बाद, उन्होंने अंतिम पंक्ति को फिर से पढ़ा। फिर, उन्होंने पंक्ति के पहले शब्द (फ़ारसी में दर्दा) का उच्चारण एक अलग स्वर में किया, जिससे शोक राग 'देस' का पहला स्वर स्पष्ट रूप से सुनाई दे रहा था। अब महिलाओं ने उस स्वर को अपनाया और राग के अनुरूप नौहा का पाठ करना शुरू किया।

कूफ़ा जाते हुए किसी ने... कूफ़ा जाते हुए किसी ने सर्वशक्तिमान ईश्वर को यह समाचार दिया कि उनकी हत्या कर दी गई है, कि उनकी हत्या कर दी गई है: मुस्लिम और उसके दोनों पुत्रों की; यदि तुम कूफ़ा नहीं जाते... यदि तुम कूफ़ा नहीं जाते, तो बेहतर होता। उसने सुना और कहने लगा... उसने सुना और कहने लगा कि जिन्नों और मनुष्यों के इमाम...

सभी कलाकार चुप हो गए, मानो किसी में भी दुनिया के इमाम के कहे शब्दों को दोहराने की शक्ति न बची हो; मानो किसी में भी उन शब्दों को सुनने का साहस न हो। पीली चोंच और गुलाबी सिर वाले हीरामन तोते, जिनकी गर्दन पर काले घेरे थे; नुकीली लाल चोंच और गहरे हरे रंग वाले बड़े भारतीय तोते; छोटे-छोटे पंखों पर सफेद धब्बों वाले बेहद गहरे लाल रंग के लाहौरी वैक्सबिल; छाती पर असंख्य छोटे-छोटे बिंदुओं वाले भूरे वैक्सबिल; शोर मचाते चिड़चिड़े गौरैयों के झुंड जिनकी चहचहाहट हमेशा वातावरण को गर्म और जीवंत बनाए रखती थी; और सराय के सामने खड़े विशाल बरगद के पेड़ पर लौट रहे सभी अन्य पक्षी: ये सभी भी मानो चुप हो गए थे। बाज़ार की आवाज़ें मंद और कमजोर पड़ गई थीं। फिर, एक पल के लिए, ऐसा लगा जैसे सब कुछ थम गया हो। पैदल यात्री, घुड़सवार, ऊंट सवार, पालकी, रथ, सब जहाँ थे वहीं रुक गए; खरीदारों और विक्रेताओं ने अपने लेन-देन स्थगित कर दिए: ऐसा प्रतीत हुआ मानो पूरी दुनिया ने अपना सिर झुका लिया हो, मानो विनती कर रही हो।

घेरे के बीच में बैठी महिलाओं में से किसी ने अब कुछ अपरिचित शब्द बोलने शुरू किए। राग देस में अनुमत सबसे तीखे और तीव्र स्वर में, उसने फ़ारसी की दो पंक्तियाँ पढ़ना शुरू किया, लेकिन

उच्चारण इतना तीव्र और तीखा था कि दोनों पंक्तियाँ लगभग निरंतर ही बोली गई प्रतीत हुईं; लेकिन अंत की ओर स्वर काफी धीमा हो गया, मानो राग और उसे गाने वाला दोनों अपनी शक्ति की सीमा तक पहुँच गए हों।

मृत्यु के भाग्य द्वारा खींचा और निर्देशित किया गया, मैं दर्द और पीड़ा, परीक्षा और विपत्ति की ओर बढ़ता हूँ: मुसलमानों के लिए घंटी बज चुकी है, अब यह मेरे लिए बजेगी।

जब महिला 'मे' (फ़ारसी में मा) शब्द पर पहुँची, तो बूढ़े व्यक्ति ने उसी राग में, लेकिन गहरे स्वर में, फ़ारसी में फिर से वही पुकार दोहराई। और महिलाओं ने फिर से शुरू किया:

कूफ़ा जाते हुए किसी ने... कूफ़ा जाते हुए किसी ने सर्वशक्तिमान प्रभु को यह समाचार दिया...

पहले की तरह पूरी नौहा की प्रार्थना हो जाने के बाद, छोटे बच्चे कमरों से एक छोटे जुलूस में बाहर आए। वे नंगे बदन थे; अपने हाथों को अपनी छाती पर मारते हुए वे जप रहे थे, 'हसन, हुसैन! हसन, हुसैन! हसन, हुसैन!' ये बच्चे उसी उम्र के थे जिन्हें हुसैन ने कर्बला की लड़ाई में संदेशवाहक के रूप में नियुक्त किया था। महिलाओं ने बच्चों को अपने बीच में लिया और उनके सिर सहलाते हुए फारसी में पुकारने लगीं:

हुसैन शहीद हो गए... हाय हाय, हुसैन शहीद हो गए!

जब बच्चों ने मातम मनाना शुरू किया तो पुरुष भी अपनी छाती पीटने लगे। धीरे-धीरे उनकी आवाज़ धीमी होती गई; अंततः वे चुप हो गए और धीरे-धीरे अंदर जाने लगे।

याह्या ने कभी भी इतना पीड़ादायक विलाप, नौहा का इतना कुशल प्रदर्शन, प्रेम और सहानुभूतिपूर्ण पीड़ा से इतना परिपूर्ण अनुभव नहीं किया था। शोक संतप्त भीड़ की आवाज़ों से बहता दर्द उसके खून में धड़कन की तरह दौड़ रहा था। उस स्थान पर आने का अपना मूल उद्देश्य पूरी तरह भूलकर, वह जुलूस के पीछे-पीछे अंदर चला गया। फिर भी, वह झिझका; सराय में कोई भी ऐसा व्यक्ति नहीं था जिसे वह जानता हो; वह किससे पूछे और उनसे क्या कहे? उसने सोचा, वैसे भी, वह मुहर्रम के विलाप में इतना सक्रिय कभी नहीं रहा था। और उसे तुरंत अपने सामान ढोने वाले जानवरों, मार्गदर्शकों और घोड़ों को व्यवस्थित करने की आवश्यकता थी ताकि वह घर लौट सके।

उन्होंने मन ही मन कहा: मेरा उनसे कोई वास्ता नहीं है, न ही मैं उनके तौर-तरीकों से कुछ जानता हूँ। मान लो मैंने कुछ ऐसा कह दिया जो उन्हें पसंद नहीं आया? वे शायद हँस कर टाल दें, लेकिन मैं इमाम की आत्मा को नाराज़ करने का जोखिम उठा सकता हूँ! लेकिन सच में, उनकी आवाज़ें कितनी मधुर थीं, उन्होंने शोकगीत को कितनी सादगी और पवित्रता से गाया, उनका दर्द कितना दिल दहला देने वाला था! ऐसे गुणों के लिए पैगंबर की प्रशंसा और सलाम हो!

उसने अपनी भावनाओं को झटकने की कोशिश की और अपने पालकी की ओर मुड़ा ताकि वह अपने उद्देश्य को फिर से शुरू कर सके। एक सांवला और लंबा युवक, जिसकी मूंछें अभी-अभी उग रही थीं, सराय से निकला और उसके पास आया। उसकी बड़ी और भावपूर्ण आँखें, जो सामान्य रूप से चमकदार होतीं, थोड़ी धुंधली और थकी हुई लग रही थीं, शायद शोक के कारण। उसने अफ़ग़ान शैली की लंबी कमीज़ और ढीली पतलून पहनी हुई थी, जो इतने गहरे हरे रंग की

थी कि लगभग काली लग रही थी। उसके सिर पर लाल और काले रंग की सूती पगड़ी थी और उसके पैरों में नुकीली और ऊपर की ओर मुड़ी हुई चप्पलें थीं। मुहम्मद याह्या को बाद में पता चला कि इस तरह के जूते राजपूताना के जोधपुर नामक शहर के मोचियों की खासियत थे।
उस युवक ने सम्मानपूर्वक याह्या को इशारा किया कि वह उनका इंतज़ार करे। याह्या पूरी तरह समझ नहीं पाए, लेकिन उन्होंने इस स्पष्ट रूप से मैत्रीपूर्ण इशारे को नज़रअंदाज़ न करना शिष्टाचार समझा। युवक याह्या के पास आया, थोड़ा झुककर और अपना दाहिना हाथ माथे पर रखकर उनका अभिवादन किया। उसने कहा, "महोदय, पवित्र भेंट में आपका हिस्सा आपका इंतज़ार कर रहा है। हमारे आदरणीय सार्वजनिक वक्ता ने आपको जाने से पहले अपना हिस्सा स्वीकार करने के लिए कहा है।"
'शेयर? किस तरह का शेयर? माफ कीजिए, मुझे समझ नहीं आया।'
उन्होंने बताया, "इस दिन हमारे गाँव में कुछ भोजन और फलों पर प्रार्थनाएँ पढ़ी जाती हैं और उन्हें पवित्र इमामों को समर्पित किया जाता है। फिर यह भोजन गरीबों और उपस्थित लोगों में बाँटा जाता है। हमारे पूज्य इमाम कहते हैं कि चूंकि आप नौहा के समय उपस्थित थे, इसलिए आपको भी इसका थोड़ा सा आशीर्वाद मिलना चाहिए।"
'लेकिन...लेकिन नौजवान, यह तुम्हारा गाँव नहीं है। तुम अब... में हो।'
युवक ने सौम्य मुस्कान के साथ कहा, 'निस्संदेह, यह लाहौर है। हम राजपूताना से हैं, वास्तव में किशनगढ़ नामक स्थान से। हम सभी महत्वपूर्ण दिनों के रीति-रिवाजों का पालन करते हैं: बैसाखी, मुहर्रम का पहला और दसवां दिन, और बाकी सभी। मुहर्रम के लिए, हम विशेष रूप से अजमेर से अपने पूज्य वक्ता को आमंत्रित करते हैं। हमारे नौहे और इमाम के मकबरे और अन्य पवित्र वस्तुओं की प्रतिकृतियां बनाने वाले भी अजमेर से ही आते हैं।'
वे सराय के विशाल द्वार से अंदर दाखिल हुए। याह्या ने पूछा, 'तो आपके लोग मुसलमान नहीं हैं?'
नहीं। हममें से कुछ चित्रकार हैं; कुछ गायक हैं। चित्रकार पुरुषों और महिलाओं के चित्र बनाते हैं; गायक बंगाल के राजा गोपीचंद और उज्जैन के राजा भर्तरी के पराक्रम का गुणगान करते हुए प्राचीन कथाएँ गाते हैं।
जी हाँ, बिल्कुल। लेकिन वे राजा और महाराज कौन हैं? और आपके गाने हिंदी में हैं या राजपूतानी में?
"राजा गोपीचंद और राजा भर्तरी हजारों, बल्कि लाखों साल पहले के हैं। वे अमर देवताओं के समान हैं। हम जो उनकी गाथाएँ और उनकी पवित्र कथाएँ गाते हैं, हम नाथ कहलाते हैं, दरअसल घटियाली गाँव के नाथ। हमारा गाँव अजमेर से ज्यादा दूर नहीं है। क्या आप अजमेर के गौरवशाली शहर से परिचित हैं?"
जी हाँ, बिलकुल। हमारे देश में अजमेर के ख्वाजा, अजनबियों और गरीबों के मित्र, के असंख्य भक्त हैं।
विशाल आंगन और उससे होकर बहने वाली छोटी जलधारा को पार करने के बाद, वे अब बारह मेहराबों वाले चौड़े, दोहरे बरामदे में कदम रख रहे थे।
युवा गायिका ने कहा, 'चलो यहीं रुकते हैं। शायद वहां कुछ महिलाएं परदे में हों। हमारे आदरणीय

वक्ता अब किसी भी समय यहां आ सकते हैं।'
'हां। लेकिन आप मुझे अपनी जीभ के बारे में बता रहे थे?'
‘महोदय, हम अपने घरों में मारवाड़ी भाषा बोलते हैं। हम आपस में लगभग कभी हिंदी का प्रयोग नहीं करते। राजपुतानी नाम की कोई भाषा नहीं है, लेकिन हमारे राजपुताना में कई भाषाएँ हैं: भीली, मेवाड़ी, बीकानेरी और धुंधारी। वास्तव में, और भी बहुत सी भाषाएँ हैं। हमारे गाँव और आसपास के इलाकों की बोली मारवाड़ी है।’
लंबी बरामदे के एक छोर पर हल्की हलचल हुई। एक पर्दा हटाया गया। नौहा का संचालन करने वाले बुजुर्ग सज्जन, कुछ अधेड़ उम्र के पुरुषों के साथ बाहर आए। वक्ता ने आदरपूर्वक हाथ बढ़ाया और याह्या से हाथ मिलाते हुए कहा, 'मैं आपको विनम्र प्रणाम करता हूँ। मेरा नाम तकीउद्दीन हैदर रुकनाबादी है। आपने जो प्रेम और सम्मान का भाव दिखाया, और मुझे यह महसूस हुआ कि आप कोई अजनबी नहीं बल्कि नौहा में एक वास्तविक प्रतिभागी थे, इसी कारण मैंने आपको यहाँ आमंत्रित करने का निर्णय लिया।'
मुहम्मद याह्या बदगामी ने अभिवादन करते हुए अपना सिर थोड़ा झुकाया और हाथ उठाकर माथे को छुआ। सिर उठाते ही उन्होंने वक्ता के चेहरे पर एक नज़र डालने की कोशिश की: उनकी दाढ़ी ईरानी शैली की थी, हल्की और छोटी; रंग गोरा था, चेहरा थोड़ा लंबा था लेकिन हड्डियों का ढाँचा सुगठित था; वे लंबे थे, लेकिन थोड़े झुके हुए थे, मानो ज्ञान के बोझ या कर्बला के मृतकों के लिए अत्यधिक रोने और शोक मनाने से वे समय से पहले ही बूढ़े हो गए हों।
‘माननीय महोदय, मैं आपको प्रणाम करता हूँ,’ याह्या ने कहा। ‘मेरा सेवक मुहम्मद याह्या है। कोई बात नहीं; आप जैसे पवित्र सेवक से मिलना और उनसे हाथ मिलाना वास्तव में मेरा सौभाग्य और शुभ अवसर है।’
तकीउद्दीन ने कहा, ‘मैं अजमेर में रहता हूँ। मेरे कुछ लोग वहाँ पैगंबर मोहम्मद ख्वाजा साहब के पवित्र द्वार पर सेवा करते हैं। कुछ लोग पैगंबर मोहम्मद के परिवार के गुणों, अच्छाइयों, कष्टों और पीड़ाओं का वर्णन करने में लगे हैं; उन सभी को मेरी ओर से सलाम और शुभकामनाएँ।’
मुहम्मद याह्या ने मधुर आवाज को बड़े ध्यान से सुना। तकीउद्दीन ने आगे कहा, “यह निकम्मा उन कथावाचकों में से एक है। मेरे साथी यहाँ अधिकतर हिंदू धर्म के हैं। वे लंबे समय से मुहर्रम के महीने में अपने गाँवों और बस्तियों में मातम सभाएँ आयोजित करते आ रहे हैं। वे इतने आस्थावान हैं कि मुहर्रम के इस महीने में लाहौर में रहने के कारण उन्होंने मुझे यहाँ तक बुलाया, वह भी ख्वाजा साहब के तेजस्वी स्थान से। क्योंकि, जैसा कि आप जानते होंगे, महोदय, अजमेर लाहौर से अनगिनत मील दूर है।”
ताक़ीउद्दीन हैदर अपनी बात को विरामों के साथ कहते थे, उनकी भाषा में भाषणबाजी का कोई अंश नहीं था, बल्कि एक परिष्कृत संवाद का भाव था। उनका लहजा लाहौरी या कश्मीरी लहजों की तरह ठोस, कठोर और गूंजदार नहीं था। यह अत्यंत मधुर प्रतीत होता था। मुहम्मद याह्या ने इसे दिल्ली या शायद ईरान का लहजा समझा। लेकिन वास्तविकता यह थी कि अजमेर से कुछ मील पूर्व में धुंधारी भाषा का क्षेत्र शुरू होता था; और हिंदुस्तान की सबसे मधुर भाषा ब्रज भाषा का क्षेत्र धुंधारी बोलने वालों की भूमि से सटा हुआ था। इस प्रकार ताक़ीउद्दीन के लहजे की

मधुरता दिल्ली की हिंदी से नहीं, बल्कि आगरा की ब्रज भाषा से थी।
मुहम्मद याह्या को इन बारीकियों का बिल्कुल भी अंदाजा नहीं था। अधिकांश कश्मीरियों की तरह, उन्हें हिंदी का पर्याप्त ज्ञान था; लेकिन वक्ता के परिष्कृत उच्चारण ने उन्हें इतना प्रभावित किया कि उन्हें लगा कि वे अंतहीन रूप से सुनते रह सकते हैं।
'यह ईश्वर की कृपा है,' उन्होंने सिर झुकाकर कहा। उन्होंने ईश्वर के लिए 'मौला' शब्द का प्रयोग किया, जो 'ईश्वर' के लिए प्रयुक्त होता है, लेकिन तक़ीउद्दीन के अनुयायी इसे पैगंबर के दामाद और हुसैन के पिता अली के लिए भी प्रयोग करते थे। 'आपके यहाँ आने से मुझे आपसे मिलने का अवसर मिला। यह इतना पुण्यकारी है कि यह तीर्थयात्रा के समान है।'
'माननीय महोदय, शायद आप कश्मीर से हैं, वह भूमि जिसे ईश्वर ने स्वर्ग के समान बनाया है? क्या मैं जान सकता हूँ कि आप वहाँ क्या करते हैं?'
'महोदय, मैं कालीन डिजाइन करता हूँ। मेरे पिता, ईश्वर उन पर अपनी कृपा बनाए रखें, भी कालीन डिजाइनर थे, लेकिन वे एक चित्रकार भी थे।'
'चित्रकार' शब्द ने तकीउद्दीन हैदर के साथियों के बीच उत्सुकता की लहर पैदा कर दी। अब सबकी निगाहें और कान मुहम्मद याह्या पर टिके हुए थे।
'मैं यह भी समझता हूँ,' याह्या ने अब वहाँ एकत्रित लोगों को संबोधित करते हुए कहा, 'कि मेरे दिवंगत पिता, अल्लाह उन्हें जन्नत नसीब करे, वास्तव में दुनिया के उसी हिस्से से आए थे जो आप लोगों के इलाके में ही है।'
'अद्भुत! कितना अच्छा है!' उपस्थित लोगों में से एक बुजुर्ग व्यक्ति ने कहा। 'यह ईश्वर की कृपा है; प्रभु की कृपा से हम हजारों मील दूर अपने देशवासी से मिल पाए हैं!' उन्होंने 'ईश्वर' के लिए हिंदू शब्द और 'प्रभु' के लिए मुस्लिम शब्द का प्रयोग किया।
जी हाँ, महोदय। मुझे भी आप सबके बीच यहाँ बेहद सहज महसूस हो रहा है।
तकीउद्दीन हैदर ने कहा, "महोदय, आप उस देश से हैं जहाँ वृक्ष कभी मुरझाते नहीं, जहाँ पत्तियाँ कभी उस शाखा से अलग नहीं होतीं जिससे उन्हें जीवन मिला है। हमारे देश को मरुधर भी कहा जाता है, जिसका ब्राह्मण भाषा में अर्थ है मृत्यु का क्षेत्र। फिर भी यहाँ भी जीव-जंतु हैं; जीवन की शाश्वत गति और उसके आशीर्वाद यहाँ भी विद्यमान हैं।"
'निःसंदेह, मेरे प्रिय महोदय; जीवन के सागरों की लहरें हर जगह अपने मोती लिए घूमती हैं; और हर जगह उत्कृष्ट मूर्तिकार भी मौजूद हैं जो विशाल जल के मोतियों को भी अपने हाथों में संजो सकते हैं।'
'बहुत ही सटीक कहा, महोदय,' तकीउद्दीन ने कहा, 'और क्यों नहीं, आप स्वयं भी मूर्तिकार हैं। मेरे साथियों के परिवारों में से एक शाखा को सम्राट शिहाबुद्दीन शाहजहाँ के ज़माने में इस्लाम ने सम्मानित किया था, जिनका निवास अब स्वर्ग के सर्वोच्च स्थान पर है। आज भी वे मुसलमान हैं, लेकिन वे आज भी अपनी प्राचीन चित्रकला कला का अभ्यास करते हैं। वे श्री राधा के चित्र बनाते हैं।'
इस विवरण से शायद उस बूढ़े व्यक्ति के बारे में कुछ संकेत मिलता है जिसने पहले बात की थी। उसने कहा, 'मुझे यकीन है कि आपको भी चित्र बनाने में रुचि होगी। क्या मैं आपको अपने द्वारा

बनाए गए कुछ चित्र दिखाने की अनुमति प्राप्त कर सकता हूँ?'
'जी हां, मुझे यह सम्मान की बात लगेगी।'
पिता के इशारे पर, तक़ीउद्दीन का निमंत्रण लेकर याह्या के पास आया वह युवक तुरंत अंदर चला गया; कुछ ही मिनटों में वह मोटे, जलरोधी कपड़े में लिपटा एक पार्सल लेकर वापस आया। उसने सामूहिक रूप से बैठने या खाने के लिए इस्तेमाल होने वाले बड़े, निचले लकड़ी के चबूतरे से धूल झाड़ी, उस पर बिछी सफेद चादर को झाड़ा और उसे फिर से करीने से चबूतरे पर रख दिया। बूढ़े व्यक्ति ने पैकेट को हल्के से थपथपाकर यह सुनिश्चित किया कि उस पर कोई धूल या गंदगी न हो।
अब जब सारी तैयारियाँ हो चुकी थीं, तो बूढ़े आदमी ने सावधानी से पैकेट की गांठें खोलीं और उसे खोला। पहली पेंटिंग एक महिला की थी...

उसने हल्के लाल-बैंगनी रंग की साड़ी पहनी थी, जिस पर सोने का काम किया गया था। साड़ी का किनारा और बॉर्डर उसके सिर को ढके हुए था, लेकिन कपड़ा इतना महीन था कि लगभग पारदर्शी था; इस प्रकार उसके घने काले बाल, बीच की सफेद मांग में सोने की हल्की सी चमक, और उसके माथे पर जड़े माणिक, हीरे, गार्नेट और पीले-लाल पारदर्शी ज़िरकॉन स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहे थे। उसका रंग हल्का था, ऐसा कि भारतीयों में उसे गोरा माना जाता, काला नहीं। उसके होठों पर सूर्यास्त के अंतिम क्षण के हल्के लाल-सुनहरे रंग जैसी हल्की मुस्कान थी। और चित्रकार इतना कुशल था कि वह उसके चेहरे की हल्की लाली और कान की लोब के खिंचाव को भी चित्रित कर सका। बड़ी-बड़ी आंखें, गहरे बैंगनी रंग की, लगभग काली, तलवार की तरह नुकीली और कनपटी की ओर थोड़ी ऊपर उठी हुई; नाक पतली और सीधी थी और आंखों के अनुपात में बिल्कुल सही थी, हालांकि पहली नजर में यह थोड़ी लंबी लग सकती थी। नाक पर एक बड़ा, सोने का घेरा था जिसमें एक गहरे भूरे रंग का मोती जड़ा हुआ था; ऊँची, कोमल और सीधी गर्दन आत्मविश्वास और गर्व की प्रतीक थी, लेकिन उसमें अहंकार का कोई अंश नहीं था। गर्दन में बड़े, गोल नीलमों का हार था, जिनके बीच पीले-गुलाबी रंग के नाशपाती के आकार के मोती जड़े हुए थे, जिन्हें याह्या पहचान नहीं पाया। (बाद में उसे पता चला कि यह कटाहला नामक एक अर्ध-कीमती पत्थर था, जो केवल राजपूताना, विशेषकर जयपुर में पाया जाता है।) इस मामले में, पत्थरों की नाशपाती के आकार की कटाई ने उनका मूल्य बढ़ा दिया था। उसकी कोमल ठुड्डी पर एक तिल था, मानो उसकी गहरी आँखों की चमक को देखकर पलकें झपका रहा हो। यह निर्धारित करना कठिन था कि साड़ी रेशम की थी या सूती; यह लगभग पारदर्शी थी, लेकिन चित्रकार की शरीर को चित्रित करने की पूर्ण निपुणता ने चित्र में न तो नखरे और न ही कामुकता का कोई संकेत आने दिया था। लड़की ने साड़ी का एक सिरा एक हाथ में पकड़ रखा था, जिससे मेहंदी लगी हथेली दिखाई दे रही थी; कोमल, नुकीली उंगलियों के प्रत्येक जोड़ के बीच मेहंदी की एक हल्की सी लकीर खींची गई थी। उसने सिर्फ एक अंगूठी पहनी हुई थी—एक बड़ा, लाल माणिक रत्न जिसके चारों ओर छोटे-छोटे हीरे जड़े थे। उसकी जो सुडौल कलाई दिखाई दे रही थी, उस पर एक दर्पण का कंगन था; उस हाथ की उंगलियां, दूध की तरह कोमल और मीठी, एक लंबा, बैंगनी-नीला कमल पकड़े हुए थीं। दूसरे हाथ का केवल ऊपरी भाग ही दिखाई दे रहा था, लेकिन यह स्पष्ट था कि वह हाथ शालीनता से उसकी गोद में रखा हुआ था। सबसे बढ़कर, लड़की के चेहरे में एक ऐसी गंभीरता थी जो उसे देवदूत जैसी सुंदरता और आकर्षण प्रदान करती थी। उस्ताद चित्रकार ने इसे न केवल रेखाचित्र और रंगों के जादू से व्यक्त किया था, बल्कि गर्दन और ठोड़ी के नाजुक लेकिन दृढ़ ढंग से उठे होने और उस कोण से भी, जिससे वह न तो दर्शक की ओर, न ही किसी विशेष वस्तु की ओर देख रही थी—ऐसा लग रहा था मानो उसकी निगाहें अंतर्मुखी हों। यदि उसे उस हल्की मुस्कान के साथ चित्रित न किया गया होता, तो शायद यह सब अहंकार, सुंदरता की भयानक भव्यता का प्रभाव देता; अब चेहरे में वह

गरिमा थी जो उसकी अपनी अदम्य सुंदरता की चेतना में आत्म-साक्षात्कार से उत्पन्न हुई थी। जैसा कि था, चित्र एक परी को चित्रित करता प्रतीत होता था, जो दर्शक के हृदय रूपी सिंहासन पर एक रानी की तरह विराजमान थी, और सभी सुंदर महिलाओं के साम्राज्य में आदेश जारी कर रही थी। पूर्ण स्थिरता और आंतरिक शांति का वातावरण चित्र में व्याप्त प्रतीत होता था। काकेशस पर्वत की दूर स्थित एक परी अपनी इच्छा से दर्पण में उतर आई है; और दर्पण उसे अपनी बाहों में लिए हुए, विस्मय से स्तब्ध होकर सो रहा है। मुहम्मद याह्या ने एक फ़ारसी कवि के शब्दों में मन ही मन कहा:

जैसे किसी सुस्त विद्वान के सामने कोई कठिन पाठ हो: जब आप आईने में देखते हैं, तो आपकी सुंदरता आईने को सुला देती है।

मुहम्मद याह्या भली-भांति जानते थे कि यह चित्र वास्तविक नहीं था: ऐसा कोई व्यक्ति था ही नहीं। यह राजपूताना की श्री राधा थीं, या यूँ कहें कि किशनगढ़ की। उनके हाथ में नीले-बैंगनी कमल के फूल का गूढ़ अर्थ यही था: यह फूल हृदय का प्रतीक था, और श्री कृष्ण को हमेशा नीले रंग में चित्रित किया जाता है, ताकि उनके सांवले रंग को दर्शाया जा सके। और इस लड़की के लिए कभी कोई मॉडल नहीं थी; किशनगढ़ के चित्रकार सदियों से श्री राधा को इसी रूप में चित्रित करते आ रहे थे, और उन्हें स्नेहपूर्वक बनिथानी, यानी 'सजी-धजी' कहा जाता था।

याह्या को ऐसा लगा मानो उसका हृदय उसके सीने से चीरकर निकाल लिया गया हो, जैसे किसी मछली को शक्तिशाली भाले से पानी से बाहर खींच लिया गया हो। उसका स्वाभाविक रूप से सांवला रंग और भी गहरा हो गया; उसके शरीर में हल्की कंपकंपी दौड़ गई। फिर भी, इस स्पष्ट नियंत्रण खोने के बावजूद, याह्या भली-भांति जानता था कि उसकी भावनाओं में वासना का कोई अंश नहीं था। अब जाकर उसे उन शब्दों का अर्थ समझ में आया, जैसे 'आराधना करना', 'पूजा करना', 'साष्टांग प्रणाम करना', 'मूर्ति या देवता के समान मानना', जिनका प्रयोग कवि अपने प्रियतम के लिए करते हैं। अब जाकर उसे समझ में आया कि कैसे कोई मनुष्य से इस प्रकार प्रेम कर सकता है, जैसे लोग शाम को नदी के किनारे बिखरी नारंगी रोशनी में अपने घोंसलों में लौटते पक्षियों के झुंड से प्रेम करते हैं; जैसे लोग रात के अंतिम पहर में संतूर पर बज रहे राग भैरवी से प्रेम करते हैं। जिस तरह लोग बर्फ से ढकी चोटियों की पृष्ठभूमि में झरने की आवाज़ को पसंद करते हैं जब अंधेरी रात का घेरा सुबह की पहली किरणों से छंट जाता है; जिस तरह लोग लंबी यात्रा से घर लौटने पर अपने दरवाजे की दहलीज को पसंद करते हैं; जिस तरह लोग सुंदर कालीनों, मनमोहक चित्रों को पसंद करते हैं: वे बस देखते रहना, निहारते रहना, सुनते रहना चाहते हैं, बिना किसी अधिकार की इच्छा के, बिना किसी परिणाम की अपेक्षा के, बिना समय बीतने के अनुभव के, बिना किसी उपलब्धि के भ्रम के।

याह्या बदगामी का दिल उन्हें चित्र को सीने से लगाकर, उसमें समाहित होकर सो जाने और फिर कभी न जागने के लिए उकसा रहा था। याह्या की तल्लीनता देखकर तकीउद्दीन हैदर ने कहा: 'यह एक काल्पनिक चित्र है, महोदय। लगता है आपको यह पसंद आया। अगर ऐसा है, तो कृपया इसे स्वीकार कर लें...'

‘स्वीकार? क्या आपने “स्वीकार” कहा, आदरणीय महोदय?’ याह्या की आवाज़ और हृदय दोनों

ही असमंजस से भरे थे। 'मैं कैसे...? आपका उपहार मेरे लिए सम्मान की बात है, मैं इसे अपने सिर पर रखकर आँखों से चूमता... लेकिन... लेकिन भगवान के नाम पर मैं इसे कैसे स्वीकार कर सकता हूँ? मान लीजिए कि यह एक काल्पनिक प्रस्तुति है, फिर भी मैं इतना अनमोल उपहार कैसे ले सकता हूँ?'

याह्या लगभग 'तुम जैसे अजनबी से' कहने ही वाला था, लेकिन उसने समय रहते खुद को रोक लिया। वह मन ही मन खुद से नफरत कर रहा था कि उसने अपने गहरे भावों को इतनी आसानी से कैसे प्रकट कर दिया। ट्रांसोक्सियाना के बाकर की एक फ़ारसी कविता उसके मन में आई, जब वह अपने चेहरे पर उन भावों को देख रहा था जो उसकी आँखों ने बिना शब्दों के कह दिए थे। उसने अपने होंठ कसकर बंद कर लिए, लेकिन बहुत देर हो चुकी थी।

प्रेम ने मंसूर से कहा: हे प्रेम की प्यास से परिपूर्ण— तुम्हारे समान आत्म-विश्वासघात करने वाला कोई दूसरा न हो।

'महोदय, कृपया कीमत के बारे में चिंता न करें,' तकीउद्दीन हैदर ने अपनी विशिष्ट मधुरता से कहा और पुष्टि करते हुए चित्रकार की ओर देखा। 'किसी वस्तु का मूल्य देखने वाले की दृष्टि में होता है। यदि कोई चित्र पारखी नजरों को भा जाता है, तो उसकी कीमत चुका दी जाती है। यदि नहीं, तो वह कागज के एक तुच्छ टुकड़े से अधिक कुछ नहीं है।'

मुहम्मद याह्या अब भी असमंजस में थे, निर्णय नहीं ले पा रहे थे। तभी गिरधर नाथ नामक हिंदू चित्रकार ने कहा, "आदरणीय गुरुजी, खान जी, कृपया इस तुच्छ बात पर परेशान न हों। पहली बात तो यह है कि ये हमारी घरेलू संपत्ति हैं, घर में बनी हैं। इन्हें किसी भी हालत में बिक्री योग्य नहीं माना जा सकता, और न ही ऊँची कीमत पर। हमें बचपन से ही अभ्यास के लिए श्री राधा का ऐसा चित्र बनाना सिखाया जाता है। हम इसे बनिथानी कहते हैं। आदरणीय मौलवी याह्या, आपने भी श्री राधा के बारे में सुना होगा। मेरा विश्वास कीजिए, यदि आप हमारे वक्ता द्वारा दिए गए प्रस्ताव को अस्वीकार करते हैं तो हमें बहुत दुख होगा।"

'महोदय, यह किसी चीज़ से बचने का सवाल ही नहीं है,' याह्या ने इतनी विनम्रता से कहा कि उनके लहजे में अहंकार या आत्मप्रशंसा का जरा भी अंश नहीं था। 'सच तो यह है कि मैं इस कला की जटिलताओं और बारीकियों से कुछ नहीं जानता; मैं बस इतना जानता हूँ कि ऐसे चित्र युग के अजूबे होने चाहिए। जो इनके वास्तविक गुणों को नहीं जानता, उसे ये चित्र रखने की अनुमति नहीं है। और... रानी श्री राधा जी के लिए उपयुक्त कक्ष या आले का निर्माण करना मेरी तुच्छ स्थिति से परे है।'

'मुहम्मद याह्या, मेरे प्रिय महोदय, आपकी तल्लीनता कुछ और ही कहानी बयां करती है,' तकीउद्दीन हैदर ने सौम्य मुस्कान के साथ कहा। 'महामहिम, आप तो एक उच्च ख्यातिप्राप्त चित्रकार और कालीन डिजाइनर के बीज से उत्पन्न फलदायी वृक्ष हैं। और यह महज़ एक चित्र है। मेरा विश्वास कीजिए, इसका मूर्ति पूजा या किसी अन्य धर्म से कोई संबंध नहीं है।'

'निःसंदेह, माननीय महोदया के शब्द पूर्णतः सत्य हैं। परन्तु कृपया ध्यान दें, मेरी प्रशंसा तो केवल एक अज्ञानी मूर्ख की थी: यह सूफियों द्वारा वर्णित "अज्ञानी का घृणित आश्चर्य" से अधिक कुछ नहीं थी। यह सत्य है कि विवेक की आयु से लेकर बौद्धिक समझ तक और फिर उससे लेकर अब

तक, मैं सभी कलाओं और शिल्पों के उस्तादों की संगति में रहा हूँ। मैंने उनकी बातें सुनी हैं, फिर भी...'

इसी बीच, चित्रों के बंडल में खोजबीन कर रहे गिरधर नाथ ने अपनी कला का एक और नमूना निकाला और जल्दी से बोले: 'जी महोदय, यह रहा एक और चित्र; यह पहले वाले जैसा ही है, लेकिन आकार में आधा है और रेशम के कागज पर नहीं, बल्कि साधारण मोटे कागज पर बना है। कृपया इस चित्र को स्वीकार कर लें; इसका कोई मूल्य नहीं है।'

अब मुहम्मद याह्या के पास कोई बहाना नहीं था; उन्होंने यथासंभव विनम्रता से चित्र स्वीकार किया और कुछ ही देर बाद विदा ले ली। उन्होंने चित्र को सावधानीपूर्वक लपेटकर कपड़े में लपेट दिया, ताकि वह सुरक्षित रहे। वापसी के रास्ते में उनके मन में केवल चित्र का ही ख्याल था। उनका हृदय अनकहे और अवर्णनीय भय और चिंताओं से भारी था। राजपूताना से आ रहा बनिथानी नामक यह चित्र, उनके अस्तित्व की ऊपरी, प्रतीत होने वाली सुरक्षित परतों को चीरता हुआ; उनके अब तक व्यावहारिक, बुद्धिमान और जीवन के उतार-चढ़ाव से भलीभांति परिचित रहे अस्तित्व की गहराई में ऐसा उथल-पुथल मचा रहा था—यह सब उनके शांत और संतुष्ट स्वभाव में किसी प्रलयकारी परिवर्तन का संकेत दे रहा था।

हाँ, वह जानता था; वह अच्छी तरह जानता था कि बनिथानी जिस व्यक्ति का चित्र था, वह वास्तव में कोई व्यक्ति नहीं था... (लेकिन क्या लोग काल्पनिक चित्रों के लिए भी अपनी जान और दिल नहीं गंवाते? कम से कम कई कहानियों में तो यही बताया जाता था; ऐसी कहानियाँ जो उसने बाज़ारों में पेशेवर कहानीकारों को सुनाते हुए सुनी थीं।)

यह कहीं न कहीं एक मूल स्रोत के बिना नहीं हो सकता था: वह सौंदर्य जो गर्व और समर्पण का मिश्रण था; एक ऐसी आत्मा जो स्वयं से शांत थी, और फिर भी लोगों और उनके घरों को नष्ट करने में सक्षम थी; वह सौंदर्य जिसकी शांति कश्मीर की झीलों - वुलर, डल, नागिन - की असीम खामोशी के समान थी, और फिर भी पहलगाम में लेद्दोर नदी के पानी की गति और शोर की अदम्य, अडिग दृढ़ता को अपनी उंगली पर नियंत्रित करती प्रतीत होती थी।

यकीनन, कोई न कोई महिला तो रही होगी जिसने चित्र के लिए पोज दिया होगा? कम से कम पहला चित्र तो? सच है, ऐसी कोई चीज नहीं थी जिसे वह कभी छोड़ना चाहता—अपना घर, अपनी पत्नी और बेटे, अपनी कला—वह कभी भी, किसी भी मायने में उनसे अलग नहीं हो सकता था, या उन्हें एक पल के लिए भी अपने दिल से दूर नहीं कर सकता था। उन्हें छोड़ना नामुमकिन था...

फिर भी... फिर भी मैं क्या करूँ? उसने अपने दिल से पूछा और उसके दिल ने उससे पूछा। वह चेहरा, वह छवि, मेरे अस्तित्व को ऐसे भेद गई है जैसे किसी बर्फीले औजार ने पूरी ताकत से मेरी बगल में वार किया हो। मैं वास्तव में यही चाहता हूँ... कि मैं घर न लौटूँ, कि मैं एक अधेड़ उम्र के व्यक्ति के चित्र से प्रेम करने की बदनामी को स्वीकार कर लूँ। मुझे किसी न किसी तरह की प्रसिद्धि तो मिलेगी ही, है ना? फ़ारसी कवि ने कितनी अच्छी बात कही थी!

भले ही प्रेम में अपमान से कुछ हासिल न हो, फिर भी प्रतियोगिता की तीव्रता बनी रहती है, बाजार में तमाशबीनों की भीड़ तो होती ही है!

लेकिन मुझे नाम और शोहरत क्यों चाहिए? क्या मैं खुद काफी मशहूर नहीं हूँ? पूरा कश्मीर मुझे जानता है। और अब लोग मुझे कश्मीर के बाहर, और हिंद में भी जानने लगे हैं। क्या अब मैं ऐसी हरकतों और नादानियों की उम्र का हो गया हूँ? क्या यह मेरे लिए प्यार का खेल खेलने का समय है, या कोई भी बेवकूफी भरा खेल? लेकिन इसे बेवकूफी भरा खेल कौन कहता है? नहीं, यह तो भूकंप है; क्या मैं नहीं जानता कि इतनी तीव्रता का भूकंप सब कुछ उलट-पुलट कर देता है? क्या भूकंप आने पर लोग अंधाधुंध अपने घरों से बाहर नहीं भागते?

लेकिन फिर, क्या मेरी बुद्धि भी अपने घर से निकल गई है, और क्या अब मैं यहाँ अनजान रास्तों के खतरों और जोखिमों का सामना करने के लिए अकेला हूँ? क्या मैंने अपना दिल हर चीज़ से अलग कर लिया है? क्या मेरा कोई घर नहीं है, कोई रिश्तेदार नहीं हैं? ... यह मैं क्या बकवास कर रहा हूँ? क्या मैंने सचमुच अपना दिमाग खो दिया है?

मुहम्मद याह्या भली-भांति जानते थे कि ऐसा कोई व्यक्ति नहीं होता। जीवन हमें अनेक प्रकार से धोखा देता है। उम्र हमारे लिए नए-नए जाल बिछाती है, नए-नए तरीकों से हमें सताती है। कभी-कभी एक बूढ़ा व्यक्ति यह भ्रम पाल लेता है कि वह जवान है, कि वह दुनिया को जीत सकता है; कभी-कभी एक जवान व्यक्ति को यह सारी दुनिया बूढ़ी लगने लगती है, और उसकी नज़रों में बुढ़ापा जवानी का गुलाम प्रतीत होता है। कभी-कभी हम दूसरों की ऊर्जा को अपनी रोशनी समझ बैठते हैं; कभी-कभी हमारी अपनी खोखली सोच हमें उथल-पुथल भरे सागर के समान प्रतीत होती है।

मैं कहीं नहीं जा रहा; मैं अपने मुकाम पर पहुँच गया हूँ। मुझे ज्ञान प्राप्त हो गया है... लेकिन फिर, मेरे लिए इसमें कोई बड़ा संकेत जरूर होगा: इस जगह और ऐसी परिस्थितियों में चित्र का मेरे हाथ लगना। लेकिन इसका क्या मतलब हो सकता है? चित्र ने मुझसे कुछ नहीं कहा। उसे ख्याल आया कि उसे पालकी उठाने वालों को किसी खुली जगह, जैसे किसी बगीचे में, रुकने के लिए कहना चाहिए और किसी शांत कोने में बैठकर तेज रोशनी में चित्र को फिर से देखना चाहिए। शायद तब चित्र उसे कुछ कहे?

नहीं, किसी चित्र के बोलने की उम्मीद करना बिलकुल व्यर्थ होगा। क्या ऐसा कभी हुआ है? क्या चित्र बोलते हैं, और वो भी अजनबियों से? मैं इन लोगों के लिए बिलकुल अजनबी हूँ, कोई मामूली अजनबी नहीं। मेरा इनसे या इनके परिवार से कोई संबंध नहीं है, न ही उनका मुझसे। इसलिए विचारों या विषयों में भी कोई समानता नहीं होगी। इनमें से कोई मुझसे क्यों बात करेगा, और अगर करेगा भी, तो क्या कहेगा?

हाँ, ये सभी बातें जायज़ थीं; लेकिन याह्या का दिल इन्हें किनारे रखना चाहता था। बार-बार वह खुद से पूछता: इसका क्या मतलब है, ये चित्र मुझे अभी और इस तरह क्यों दिया गया? यह सच है कि मैं तालीम बनाने में सर्वमान्य उस्ताद हूँ, कश्मीर में कालीन बनाने की कला में सबसे महान हूँ; मैं फ़ारसी कविता का पारखी हूँ, घनी कश्मीरी कवि को मैं अपना खास कवि मानता हूँ। मेरे जीवन के बसंत के पन्ने बादाम के फूलों की शुद्ध, निर्मल सुगंध के धागे से बंधे हैं; काज़ी गुंड घाटी में केसर के खेतों का नारंगी-पीला रंग, जब पौधे उगने लगते हैं और पहली कलियों से खिल उठते

हैं; वुलर झील के आसपास के हरे-भरे धान के खेत, जो आसपास की पहाड़ियों के साथ ऊपर-नीचे जाते हैं और डूबते सूरज की लालिमा में नहाते हैं। मैं इन्हें क्यों छोड़ दूँ? और किसलिए? मेरा घर, मेरी पत्नी, निष्ठा की साक्षात मूर्ति, सुख-दुख में मेरी सहेली और साथी... लेकिन नहीं, मैं कश्मीर से नहीं हूँ। मैं उस दूर देश से हूँ, नीरस, धूसर और शुष्क, जहाँ की धूल बिच्छू के रंग की होती है, जहाँ मृत्यु दिन-रात काले, सीसे के आवरण में लिपटी, रेगिस्तानी हवा के थपेड़ों से प्रेरित होकर नाचती है, जहाँ दो-तीन साल तक लगातार बारिश नहीं होती।

याह्या कश्मीर के प्रति अपने प्रेम को फिर से व्यक्त करते हैं। साथ ही, वे पहली बार अपने बेटों को प्रदर्शन करते हुए देखते हैं।

कई साल पहले, मुझे याद नहीं कितने साल पहले की बात है, मैं अपनी माँ के साथ टट्टू पर सवार थी; या यूँ कहूँ कि मेरी माँ एक पहाड़ी पालकी पर सवार थीं, जो चारों तरफ से खुली थी, और मैं उनके पीछे थी। टट्टू की पीठ से चिपकी हुई और एक लंबी कमरबंद से बंधी हुई, मैं लगभग लटक रही थी। कभी-कभी हवा का एक झोंका मेरी माँ की चादर को उड़ाकर मेरी तरफ ले आता और मैं उसे पकड़ने की कोशिश करती। पालकी उठाने वाले पुकारते, 'सावधान! सावधान!' और मैं, यह सोचकर कि वे मुझे डांट रहे हैं, डर के मारे अपना हाथ पीछे खींच लेती। बहुत बाद में मुझे पता चला कि पालकी उठाने वाले अक्सर ये पुकारते हैं क्योंकि वे उस पहाड़ी रास्ते के ऊबड़-खाबड़ रास्तों से गुजरते हैं, जिसे दुनिया के उस हिस्से में एक सड़क के नाम से जाना जाता है।

बारिश अभी तक नहीं आई है, लेकिन झेलम नदी के दोनों किनारों पर आसमान बादलों से भर रहा है। कल तक, मुझे ऐसा लग रहा था, हवा में हल्की ठंडक थी। अब, लिली और वायलेट के चटख रंग हवा में छाने लगे हैं—सभी फूल विक्रेताओं की क्यारियों में बिक्री के लिए तैयार रखे हैं —हरे, हल्के भूरे, गहरे भूरे, बैंगनी—सभी फूलों की क्यारियों पर लदे हुए हैं। नदी के किनारों पर, पकते खुबानी की सुनहरी-पीली खुशबू नदी की मदहोश लहरों की तरह लहरा रही है। वातावरण ठंडा है और जैसे-जैसे हम ऊपर चढ़ते हैं, ठंड बढ़ती जाती है।

हमारा छोटा सा काफिला सोना मार्ग की ओर जा रहा है। मुझे इसके उद्देश्य का स्पष्ट अंदाजा नहीं है: शायद कोई मेला हो, शायद किसी रिश्तेदार की शादी। यह खुशी का अवसर है, लेकिन मैं खुद भी बहुत खुश हूं क्योंकि मुझे कई नई चीजें देखने या खोजने की उम्मीद है: नए लोग, नए पक्षी, नए फूल। मैं नए गीत सीखूंगा और गाऊंगा।

सुबह, रात भर रुकने के बाद जब हम अपनी यात्रा पर फिर से निकले, तो हमारे सामने दूर-दूर तक फैला पानी ही पानी था। हम कुछ ऊंचाई पर थे, और दूर से पानी हल्का नीला दिखाई दे रहा था, कुछ-कुछ जैस्पर जैसा। कभी-कभी, जब सूर्य की किरणें पानी में डूबने के बाद ताज़ी हवा लेने के लिए ऊपर आती हुई प्रतीत होती हैं, तो लहरें नीलम या हीरे की छोटी-छोटी भाले जैसी बन जाती हैं। गहरे नीले पानी की सतह पर लहरों की छोटी-छोटी कतारें चमकती हैं।

जब हम नीचे उतरते हैं तो झील का किनारा अभी भी काफी दूर लगता है। झील के चारों ओर खेत हैं, लेकिन पौधों ने अभी तक अपनी पूरी कलियाँ नहीं खोली हैं। खेत पानी से भरे हुए हैं और पौधों की छोटी-छोटी कलियाँ मुश्किल से पानी के ऊपर दिखाई दे रही हैं।

किसी ने कहा, 'यह वुलर झील है। और इसके चारों ओर धान के खेत हैं।'

कुछ ही देर में हम निचली घाटियों को पार कर लेते हैं और फिर से चढ़ाई शुरू कर देते हैं, खड़ी ढलानों के घुमावदार रास्तों से गुज़रते हुए। धान के खेत कुछ दूर तक हमारे साथ-साथ चलते हैं। पानी से भरी छोटी-छोटी क्यारियाँ, मानो छोटे तालाब हों, और धान के पौधे सूरज की किरणों को निहारते हुए उनमें से अपने सिर ऊपर उठा रहे हों: धरती की संकरी या थोड़ी कम संकरी पट्टियाँ जहाँ बारिश और हवाओं ने कठोर चट्टान को पिघलाकर नरम, उपजाऊ ज़मीन बना दी है। मैं जब

तक खेतों को देख सकता हूँ, पीछे मुड़कर देखता रहता हूँ।
जल्द ही हम आगे और ऊँचाई पर पहुँच जाते हैं: अब मुझे धान के खेत झील के चारों ओर एक विशाल हरे घेरे की तरह दिखाई देते हैं, मानो किसी दिव्य प्राणी का घेरा हो। मुझे कभी-कभार झील का चमकीला पानी दिखाई देता है, लेकिन उसके चारों ओर के खेत पतली हरी रेखाओं की तरह दिखते हैं, और फिर, बस इतना ही—हम सब कुछ पीछे छोड़ चुके होते हैं। अपने अजीबोगरीब दिखने वाले बड़े और पाँच नुकीले पत्तों वाले ऊँचे चिनार के पेड़ और मीठी, हल्की राल की महक वाली चमकीले हरे चीड़ के पेड़ हमें बहुत पहले ही छोड़ चुके होते हैं, उनकी जगह बड़े-बड़े बलूत के पेड़ आ जाते हैं जिनकी लंबी शाखाएँ लगभग उनके तने तक पहुँच जाती हैं। फिर बलूत के पेड़ भी नमी से भरी ऊँचाइयों से गायब हो जाते हैं; काले चीड़ के पेड़ उनकी जगह ले लेते हैं। उनका अंधेरा, जो लगभग आकाश को भी काला कर देता है, मेरे लिए अनकहे डर समेटे हुए है।
मीठे पानी की छोटी-छोटी धाराएँ हर जगह कलकल करती बह रही थीं; वे कभी हमारा साथ नहीं छोड़ती थीं: ऐसा कोई क्षण नहीं था जब पानी की चमक, उसकी मधुर कलकल या उसकी तेज़ गूंज हमारे साथ न रही हो, मानो वे हमारे साथ हों। फिर, तीसरे दिन, हम ऐसी ऊँचाइयों पर पहुँचे जहाँ हवा की कमी से थके हुए काले चीड़ के पेड़ भी हमारा साथ छोड़ गए। पानी अब भी हमारे साथ था। वह मन ही मन कहता है: 'ऐसा लगता है कि ये पहाड़ पानी पर ही बने हैं। कुछ पानी यहाँ तक ऊपर आया, और इसका एक बड़ा हिस्सा वुलर की झील और वाटलाब की घाटी और उसकी धाराओं में बह गया।'
लेकिन सबसे आश्चर्यजनक बात यह है कि सोना मार्ग बर्फ से ढका हुआ है, वहाँ एक नदी भी है, फिर भी वहाँ हरियाली बहुत कम है। 'ऐसा क्यों है?' मैंने अपनी माँ से पूछा।
मेरी मां मुझसे कहती हैं, 'यहां बहुत ठंड है। ठंड ने सारी हरियाली को सुखा दिया है।'
तो क्या ठंड भी चीजों को जला सकती है? मैं आश्चर्य से खुद से पूछता हूं।
बर्फ से ढके खेतों और घाटियों की कड़ाके की ठंड में खूब मौज-मस्ती करने के बाद, और यहां तक कि नदी पर बने एक मजबूत दिखने वाले बर्फ के पुल पर भी घूमने के बाद, हम एक या डेढ़ महीने बाद घर लौटते हैं।
क्या वहाँ कोई मेला लगता था? नहीं, मुझे मेले की याद नहीं है। मेरी माँ की एक बहन सोना मार्ग में रहती थी। हम उनके साथ रहते थे और वह मुझे घर पर मेरी माँ से भी ज़्यादा लाड़-प्यार करती थीं। मेरा वज़न काफ़ी बढ़ गया था और मैं लंबा भी दिखने लगा था।
अब ऐसा लगता है मानो वुलर झील के ऊपर और आसपास का नज़ारा बिलकुल बदल गया हो। या यूँ कहें कि नए फूल उग आए हैं, मानो कोई नया नक्शा बना रहे हों। धान के पौधे और भी लंबे हो गए हैं। ऐसा लगता है जैसे किसी ने उन्हें उठाकर किसी नई ऊँचाई पर लगा दिया हो। पौधे सिर उठाए खड़े हैं, मानो नए नज़ारे को निहार रहे हों। हवा के साथ पौधों का हिलना-डुलना और झुकना ऐसा लगता है मानो उन्हें भी आनंद आ रहा हो। खेतों में अब पानी नहीं है; पौधों की जड़ें नम, भीगी हुई काली-भूरी मिट्टी में छिपी हैं, और पौधे गहरे हरे, लगभग काले रंग के दिख रहे हैं, मानो उनके शरीर में खून तेज़ी से दौड़ रहा हो।

यह एक ऐसा परिवर्तन था जिसकी मुहम्मद याह्या ने कभी कल्पना भी नहीं की थी, और न ही अपनी आँखों से देखने की। कुछ ही हफ्तों में, पानी, मिट्टी और हवा ने पुरानी सतह को हटाकर उसकी जगह ऊँचे रेशों वाली नई कालीन बिछा दी।

...मरुधर...लोग वहां मरने जाते हैं...

कश्मीर में पत्ते कभी मुरझाते नहीं, पेड़ कभी पानी से वंचित नहीं रहते।

पीड़ा से व्याकुल आत्मा, चाहे वह कबाब की तरह भुनी हुई चिड़िया ही क्यों न हो, अगर वह कश्मीर चली जाए, तो उसके पंख और पर फिर से उग आएंगे; इसमें कोई संदेह नहीं होना चाहिए।

महान मुगल कवि उर्फी ने यही कहा था। लेकिन क्या जीवन के स्रोत काले सागर या ब्रह्मांड की सभा से भी नहीं पुकारते?

वह चेहरा जिस पर देवदूत जैसी शांति का भाव मोहक ढंग से झलकता है, गर्दन और उसका हल्का सा झुकाव, मानो किसी की ओर इशारा कर रहा हो? गर्दन का वह हल्का सा झुकाव, आत्मविश्वास और गरिमा से परिपूर्ण... ये आँखें किसे देख रही हैं? कोई भी खड़ा होकर घूर नहीं सकता। लेकिन आँखें झुकी हुई भी नहीं हैं। कश्मीर की समृद्धि कम नहीं होगी, भले ही मैं चला जाऊँ। लेकिन मुझे क्यों जाना चाहिए... दोपहर की चिलचिलाती धूप में चट्टानें चटक रही हैं, बिच्छू, काले, भूरे, प्यासे, पत्थरों के नीचे दुबके हुए, जानलेवा गर्मी से बचने की कोशिश कर रहे हैं। केसर के खेत, हिम तेंदुए या बादल वाले तेंदुए, भारी सींग वाले कश्मीरी हिरणों के झुंड। सेब, खुबानी और बादाम से लदे बाग। शाही उद्यान: चश्मा-ए-शाही, शालीमार, कालीनों पर बुने हुए। मुझे घर जाना है। हे मेरी नियति, मुझे कश्मीर के बाग में ले चलो...

अगले दिन, मुहम्मद याह्या ने एक घुड़सवार और एक गदाधारी को किराए पर लिया। उन्होंने तकीउद्दीन हैदर के लिए बादाम की एक थैली, सूखे खुबानी की एक थैली और शहद की एक चमड़े की बोतल उपहार के रूप में भेजी, और किशनगढ़ के पुराने चित्रकार गिरधर नाथ के लिए अपने स्वयं के डिजाइन का एक छोटा, सुंदर कालीन भेजा। उन्होंने मित्रता और विनम्रता का परिचय देते हुए खेद व्यक्त किया कि उन्हें जल्दी घर लौटना पड़ा और इसलिए वे स्वयं उपस्थित होकर उन्हें सादर प्रणाम नहीं कर सके।

याह्या द्वारा गिरधर नाथ को भेजा गया कालीन चीनी शैली के पीले और लैपिस लाजुली रंगों के उपयोग की अनूठी विशेषता रखता था। ये रंग कश्मीरी या ईरानी कालीनों में नहीं पाए जाते थे। वह उसी शाम लाहौर से निकल गए और महारानी नूरजहाँ के मकबरे के पास एक छोटी सराय में रात बिताई। कश्मीर के लिए उनकी यात्रा अगले दिन सुबह ही शुरू हो गई। काफी समय तक उन्हें यह समझ नहीं आया कि उन्होंने लाहौर को शाम को क्यों छोड़ा, जबकि उनकी असली यात्रा तो अगली सुबह शुरू होनी थी। कई दिनों बाद, जब उनका काफिला कोटली पहुँचा, जो श्रीनगर जाने वाले लंबे रास्ते का पहला महत्वपूर्ण पड़ाव था, और झेलम नदी के पार कई पड़ावों के बाद, वे वहाँ दो रात रुके, हालाँकि दोनों ही रातों में उन्हें अच्छी नींद नहीं आई। उन्होंने वे रातें एक अजीब तरह के उल्लास में बिताईं, एक ऐसे आनंद में डूबे हुए जो उन्होंने पहले कभी महसूस नहीं किया था। फिर भी उस आनंद में एक अनजानी उदासी भी मिली हुई थी। अब जाकर उन्हें समझ आया

कि लाहौर में बिताई वह आखिरी रात उनके लिए इतनी भारी क्यों थी। वे लाहौर से नहीं भाग रहे थे: वे बनिथानी से भाग रहे थे। अब जब चारों ओर चीड़ के पेड़ थे, और उन पेड़ों पर शरारती और चतुर दिखने वाले पहाड़ी बुलबुल चहचहा रहे थे, और वह इधर-उधर कुछ चिनार के पेड़ भी देख सकता था, और हवा चीड़ की पत्तियों की सुगंध से महक रही थी, तो वह निश्चित हो सकता था कि वह अंततः उस जादू से मुक्त हो गया था जो उस चित्र ने उस पर किया था।

ऊंचाइयों से उतरकर पीर पंजाल घाटी के दुर्गम दर्रे से प्रवेश करने के बाद, याह्या के मन का उथल-पुथल आखिरकार शांत हो गया। उनके हृदय और आत्मा पर शांति छा गई। आज वे अपने बेटों और पत्नी के चेहरे स्पष्ट रूप से देख पा रहे थे। उनकी दृष्टि ने उन्हें उनके घर में देखा, वही घर जो उनका भी घर था। मन की एक नई एकाग्रता और उपस्थिति की एक नई अनुभूति उन पर छा गई; यह उनके मन को उनके पहले घर की ओर खींच ले गई, वह घर जहाँ की दीवारें और दरवाजे बचपन की यादों की तरह परिचित थे। फिर भी उन छवियों के चारों ओर एक प्रकार की धुंधलापन या अस्पष्टता थी, जिससे उन्हें पहचानना और एक-दूसरे से अलग करना मुश्किल हो रहा था। हालांकि, उन्हें अच्छी तरह याद था कि बचपन में उन्होंने अपनी माँ से कहा था कि इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि उनके पिता विदेशी हैं: उन्होंने आपको अपना बनाया है और आपने उन्हें अपना बनाया है; इसलिए मैं कहीं नहीं जा रहा हूँ। और सच्चाई यह है कि कश्मीर ने मुहम्मद याह्या को अपना बना लिया था। उन्होंने अपने जीवन और व्यक्तित्व का सब कुछ कश्मीर को समर्पित कर दिया था।

फिर भी, कभी-कभी घर पर देखे जाने वाले सपनों में उसे ऐसे दृश्य और स्थान दिखाई देते थे जिन्हें वह कभी पहचान नहीं पाया था। उदाहरण के लिए, एक सपना कुछ इस प्रकार था: बहुत दूर, लगभग आँखों की देखने की क्षमता की सीमा पर, विशालकाय, लंबे-लंबे जानवरों के झुंड चुपचाप गुजर रहे हैं। कहीं पास में, पानी चमक रहा है और मुझे अपनी ओर बुला रहा है। लेकिन जब मैं उसके पास जाता हूँ, तो वह मेरी आँखों के सामने गायब हो जाता है। मैं मुड़कर पीछे देखता हूँ और श्रीनगर से शालीमार गार्डन जाने वाली मुख्य सड़क दिखाई देती है, और उसके एक तरफ, मुझे नागिन झील के फ़िरोज़ी पानी की हल्की-हल्की चमक दिखाई देती है।

वह जाग उठता है; नींद न आने के कारण बिस्तर पर करवटें बदलता है, सपने का अर्थ और उद्देश्य समझने की कोशिश करता है। वह सोचता है कि क्या उसमें उसके लिए कोई संकेत था।

खैर, अगर कोई संकेत था भी, तो उसका अर्थ हमेशा उसकी समझ से परे रहा। लेकिन सपने के बाद अगली सुबह उसके साथ एक बात हमेशा होती थी। उसे बेचैनी महसूस होती थी कि उसे किसी यात्रा पर जाना है, लेकिन उसे याद नहीं रहता था कि वास्तव में उसे कहाँ जाना है और क्यों जाना है। उसे यह पूर्वाभास भी होता था कि यह भूल उसके लिए शुभ संकेत नहीं है। और आज, जब वह एक वास्तविक यात्रा से घर लौट रहा था, तो घर के लिए प्रेम उसके हृदय में एक प्रचंड धारा की तरह उमड़ पड़ा। आज उसके हृदय में अपने बेटों के पेशे के चुनाव को लेकर वह छोटी सी भी नाराजगी नहीं थी: कि वे सच्चे कलाकार बनने के बजाय व्यापारी और गायक बन गए थे। कला और ज्ञान के प्रति प्रेम जैसे वे गुण, जो ईश्वर ने उसे प्रदान किए थे, उसके बच्चों को नहीं मिले। लेकिन वास्तव में यह ठीक ही था: वे अभी भी मौज-मस्ती और आनंद के दिनों में थे।

मेरी उम्र तक पहुँचते-पहुँचते वे अवश्य ही समझदार हो जाएँगे। मेरा घर उन चीजों से भरा हुआ है जो ईश्वर अपने दासों को देता है, और उसकी कृपा से, लड़के भी पैसा कमाने और खर्च करने में किसी से कम नहीं हैं।

दूरी के लिहाज़ से देखा जाए तो बडगाम श्रीनगर से ज़्यादा दूर नहीं था—यह दक्षिण की ओर लगभग बीस मील की दूरी पर था। लेकिन सड़क खतरनाक खाइयों से होकर गुज़रती थी, जो हाल ही में हुई बारिश के कारण कीचड़ और दलदल से भर गई थीं। इस वजह से बीस मील की छोटी सी दूरी तय करने में अब तीन या चार दिन भी लग सकते थे। मुहम्मद याह्या यात्रा के लिए उपयुक्त साथियों की तलाश कर रहे थे, तभी उन्हें अचानक खबर मिली कि एक प्रसिद्ध और समृद्ध व्यापारी हबीबुल्लाह भट्ट एक संगीतमय भोज का आयोजन कर रहे हैं, जिसके बाद वज़वान नामक भव्य औपचारिक रात्रिभोज होगा। उन्हें यह भी बताया गया कि दो मुख्य गायक याकूब और दाऊद होंगे। उन्हें थोड़ा दुख हुआ कि उनके बच्चे पेशेवर गायकों में गिने जा रहे हैं; फिर उन्होंने अपने हमेशा के तर्क से खुद को तसल्ली दी: आखिर वे बच्चे ही तो हैं। अपनी पसंद का पालन करने में कोई बुराई नहीं है। आखिर गायन तो कई महत्वपूर्ण सूफी संतों का प्रिय विषय था।

ये विचार उनके मन में ही लीन थे कि तभी सराय मालिक ने आकर उन्हें बताया कि हबीबुल्लाह भट्ट उनसे मिलने आ रहे हैं। उन्हें थोड़ा आश्चर्य हुआ, क्योंकि उनका पहले कोई परिचय नहीं था। खैर, हबीबुल्लाह भट्ट, जो एक बुजुर्ग और हंसमुख व्यक्ति थे, थोड़ी देर बाद आए और औपचारिक अभिवादन 'सलाम अलैकुम' के साथ उन्होंने 'महामहिम' भी कहा—सम्मान का एक अतिरिक्त संबोधन। मुहम्मद याह्या ने उठकर उन्हें गले लगाया और अपने सोफे पर अपने पास बैठा लिया। हबीबुल्लाह भट्ट ने याह्या को दो सोने के मोहर और अखरोट की लकड़ी से तराशा हुआ एक छोटा सा डिब्बा भेंट किया, जिसमें केसर के दो पैकेट थे। फिर उन्होंने कहा, 'आदरणीय उस्ताद, बिना परिचय दिए आने के लिए क्षमा चाहता हूँ, लेकिन कश्मीर में आपका स्वागत करने की मेरी दिली इच्छा थी और मैं चाहता था कि आप अपने प्रतिभाशाली पुत्रों के गायन को सुनकर मेरे साथ आनंदित हों। हम जानते हैं कि आप हिंद की धरती से बहुत प्रशंसा, सफलता और सम्मान लेकर लौटे हैं। आप कश्मीर का नाम रोशन करते हैं।' अल्लाह की प्रशंसा हो, सब कुछ अल्लाह की इच्छा के अनुसार है।' फिर उन्होंने एक प्रसिद्ध फ़ारसी कविता की एक पंक्ति पढ़ी:

आपने यह शानदार काम किया, और यही सच्चे पुरुषों की पहचान है।

मुहम्मद याह्या के दिल में अचानक दर्द की एक लहर दौड़ गई। उनके मन में सात परतों वाले भारी पर्दों के नीचे दबी हुई छवि अचानक मुस्कुरा उठी और बोली: 'तुम हिंद की धरती पर कुछ छोड़ गए हो। तुमने कुछ नहीं लूटा। शायद तुमने खुद को कुछ लूटने दिया है।'

नहीं। नहीं। यह सही नहीं है। मैंने जो कुछ भी पाया या खोया, वह सब मैंने नूरजहाँ के मकबरे में छोड़ दिया।

याह्या की चुप्पी देखकर हबीबुल्लाह भट्ट को डर लगा कि कहीं उन्होंने कुछ ऐसा कह या कर न दिया हो जिससे महान व्यक्ति नाराज हो गए हों। सीने पर हाथ जोड़कर उन्होंने विनम्रता से, नज़रें झुकाकर कहा, “महोदय, बिना परिचय दिए आपके सम्मानित द्वार पर आने का साहस करना मेरी

गुस्ताखी थी। मैं ईश्वर के नाम पर वचन देता हूँ: मेरी आपको नाराज करने या अपमानित करने की कोई इच्छा नहीं है। पूरा शहर आपके नाम से गूंज रहा है, इसलिए आपके चरणों को चूमने की मेरी इच्छा को रोकना स्वाभाविक था। और सबसे बढ़कर, जिनके सामने मैं अब उपस्थित हूँ, उनके प्रियजन भी सभा की गरिमा और सम्मान को बढ़ाएंगे। इन सब बातों ने मुझे यह साहस दिया…"

'नहीं, मेरे प्रिय और आदरणीय महोदय,' मुहम्मद याह्या ने तुरंत उत्तर दिया, 'मेरे नाराज़ या परेशान होने का कोई सवाल ही नहीं है। बस मुझे घर पहुँचने की जल्दी थी। लेकिन हाँ, अगर आप ज़िद करते हैं; और वैसे भी, याकूब और दाऊद के आपके मेहमान होने से बेहतर आपके यहाँ आने का और क्या मौका हो सकता है?'

प्रत्येक भाई के हाथ में एक-एक ताउस था, जो ध्वनि उत्पन्न करने वाला पारंपरिक वाद्ययंत्र है। उनके दाहिनी ओर एक संतूर वादक और बाईं ओर एक दफ़ वादक था। दफ़ एक छोटा ताल वाद्ययंत्र है, जो अरबों में प्रचलित है और ईरानियों द्वारा इसे बहुत लोकप्रिय बनाया गया है। संतूर वादक के पीछे एक और संतूर वादक और एक बहुत बुजुर्ग संगीतकार थे जो पीतल की बांसुरी बजा रहे थे। इस समूह के पीछे तीन युवक थे, जिनमें से प्रत्येक के हाथ में एक-एक सिह तार था, जो तीन तारों वाला वाद्ययंत्र है और बृहत्तर ईरान के उस हिस्से में बहुत लोकप्रिय है जो अब उज़्बेकिस्तान और ताजिकिस्तान है। ताउस और सिह तार के तारों को धीरे-धीरे बजाया जा रहा था, ताकि वे पूरी तरह से एक दूसरे के साथ सुर में आ जाएं। बांसुरी की कभी-कभार आने वाली मधुर ध्वनि के अलावा, बाकी सब कुछ शांत था।

लगभग बीस-पच्चीस अतिथि थे, सभी महंगे कालीनों पर बैठे थे—कुछ पद्मासन में और कुछ अपने पैर जांघों के नीचे दबाकर; बाद वाली मुद्रा में एक घंटे से अधिक बैठना मुश्किल था, लेकिन कवि, संगीतकार और उनके जानकार श्रोता कई घंटों तक, कभी-कभी पूरी रात, उस मुद्रा में बिना हिले-डुले बैठने के लिए अच्छी तरह से प्रशिक्षित थे। सिह तार वादकों के अलावा, संगीतकार कक्ष के केंद्र में बैठे थे, ताकि श्रोता उनके चारों ओर एक घेरा बना सकें। कक्ष में तेज रोशनी नहीं थी; चंदन के इत्र की घनी सुगंध, किसी अन्य हल्के इत्र के मिश्रण से कम होकर, कक्ष के चारों ओर चुपचाप खड़े नौकरों द्वारा समय-समय पर छिड़के जाने वाले छिड़काव से हवा में फैली हुई थी। कक्ष के चार कोनों में बने आलों में चार धूपदान रखे थे; किसी विशेष मिश्रण के कारण वे धीरे-धीरे जलते थे, लेकिन ज्यादा तेज नहीं। उनका धुआं, बहुत हल्का और पतला, कक्ष की बंद हवा में आलस्य से ऊपर उठता था; उसमें अंबरग्रीस और अगरबत्ती की हल्की सी महक थी।

जैसे ही मुहम्मद याह्या ने प्रवेश किया, उनके दोनों पुत्र तुरंत आगे बढ़े और उनके चरणों को स्पर्श किया, फिर उन्होंने उनके वस्त्र और हाथों के किनारों को चूमा और कहा: 'बाबा, बाबा! आपने इतनी मेहनत क्यों की? हम तुरंत और खुशी-खुशी आपके सामने उपस्थित हो जाते। हमें पता ही नहीं था कि आप हिंदुस्तान से लौट आए हैं। यह हमारा सौभाग्य है कि हमें यहाँ आपकी पवित्र उपस्थिति के दर्शन हुए!'

याह्या की आँखों में आँसू भर आए, हालाँकि वह बता नहीं सका कि क्यों। उसने अपना रुमाल निकाला और जल्दी से अपने चेहरे पर फेर लिया ताकि यह बात छिप जाए कि वह अपने आँसू

पोंछ रहा है। उसने हल्के-फुल्के अंदाज़ में कहा, “सचमुच, मैं दाऊद के मधुर गीतों और याकूब के जोशीले, भावपूर्ण गीतों को सुनने का अवसर कैसे छोड़ सकता था!”
उन्होंने बड़े स्नेह से अपने बेटों को गले लगाया, उनकी पीठ पर प्यार से थपथपाया, उनके माथे पर चुंबन किया और फिर मुस्कुराते हुए पूछा: 'ठीक है, अब जानते हैं कि संगीत के राजकुमार घर से कब निकले और उनकी मां कैसी हैं।'
जी हाँ, महोदय। ईश्वर की कृपा से वह बिल्कुल ठीक हैं। हम कल ही बैडगम से यहाँ पहुँचे हैं।
‘बहुत बढ़िया, सचमुच बहुत बढ़िया,’ याह्या ने कहा और अपने बेटों को उनके लिए निर्धारित सीट तक ले गए, और ‘सलाम अलैकुम, सज्जनों’ कहते हुए बैठ गए।

प्रार्थना की मुद्रा में हाथ जोड़ते हुए हबीबुल्लाह भट्ट ने याह्या से पूछा: 'हम शुरू करने के आपके आदेश की प्रतीक्षा करेंगे।'
'बेशक, चलो शुरू करें,' याह्या ने कहा, 'बिस्मिल्लाह-ए-अल-रहमान वा अल-रहीम।'
इसी दौरान तीनों संतूर धीमी आवाज़ में बजने लगे। बेटों ने अपने-अपने ताऊ को फिर से सुर में ढालना शुरू किया। जब सभी ताऊ पूरी तरह से सुर में बजने लगे, तो भाई उठे और औपचारिक सलाम के साथ उपस्थित लोगों का अभिवादन करने के बाद, सिर झुकाकर और हाथ जोड़कर अपने पिता को प्रणाम किया और कहा, ‘हे परम पूज्य, यह हमारे लिए पहली बार है कि हम इतने भव्य और विवेकशील श्रोताओं के समक्ष, अपने परम पूज्य पिता की उपस्थिति में, कुछ टूटे-फूटे, अटपटे शब्द बोल रहे हैं। हम प्रार्थना करते हैं कि हमारी कमियाँ आपको अप्रिय न लगें और आप हमारी गलतियों को सुधारने के उद्देश्य से हमारी बात सुनें।’
‘हे प्रिय और आदरणीय नौजवानों, कृपया बोलना शुरू करें। हम सब सुनने के लिए उत्सुक हैं,’ एक अत्यंत वृद्ध व्यक्ति ने कहा।
‘निःसंदेह, अब हमारे पास इंतजार करने की ताकत नहीं है,’ किसी और ने पुकारा। ‘बिस्मिल्लाह!’
अब तक सिह तार की तीखी ध्वनि उठने लगी थी, हालांकि वह संतूर की मधुर गुनगुनाहट के साथ सामंजस्य बिठा रही थी। मुहम्मद दाऊद ने राग चांदनी केदारा के प्रारंभिक स्वरों से शुरुआत की, जो एक संध्या राग है, जो प्रेम की कोमलता और पूर्ण भक्ति को व्यक्त करता है। मुहम्मद याकूब ने कहा, 'माननीय सज्जनों, यह सुल्तान अबू सईद अबी अल खैर की रुबाई है। कृपया इसे अपने कानों और हृदय से सुनें। जैसा कि आप जानते ही होंगे, उन्हें "सुल्तान" इसलिए नहीं कहा जाता क्योंकि उन्होंने किसी देश पर शासन किया, बल्कि इसलिए कहा जाता है क्योंकि उन्हें अपने समय में सूफियों में सबसे महान माना जाता था।'
श्रोताओं में मौजूद सभी लोग गायक पर पूरा ध्यान देने के लिए बेहतर ढंग से बैठ गए।
याकूब ने गाना शुरू किया:
मेरा हृदय तुम्हारे प्रेम के मार्ग के अतिरिक्त किसी और मार्ग पर कदम नहीं रखता; और तुम्हारे रहस्यों को कभी प्रकट नहीं करता; तुम्हारे प्रेम ने मेरे हृदय के विशाल मैदान को खारे दलदल में बदल दिया, ताकि उसमें किसी और का प्रेम कभी पनप न सके।
पहली पंक्ति गाने के बाद याकूब थोड़ी देर रुके। फिर मुहम्मद दाऊद ने राग का पहला भाग

उठाया और उसे ऊंचे स्वर में गाया, लेकिन दूसरी पंक्ति उन्होंने धीमी आवाज़ में गाई। आम तौर पर, जो दो गायक एक साथ गाते हैं, उनमें से एक की आवाज़ धीमी और भारी होती है; दूसरे की आवाज़ ऊंची और थोड़ी कर्कश होती है। लेकिन याकूब और दाऊद के मामले में ऐसा नहीं था। दोनों की आवाज़ें संतुलित और एक-दूसरे से मेल खाती थीं। न तो आवाज़ ऊंची थी और न ही ऊँची, और दोनों की गायन शैली इतनी परिपूर्ण थी कि अगर कोई ध्यान न दे, तो यह पता लगाना मुश्किल था कि किसने शुरुआती स्वर गाए, किसने मध्य स्वर गाए, और इसी तरह आगे। उनकी आवाज़ें इतनी निपुण और परिपक्व थीं कि उन्हें स्वर की कलाबाज़ी या अत्यधिक अलंकरण की आवश्यकता नहीं थी। श्रोता को कभी-कभी ऐसा लगता था मानो लद्दाख में कहीं बर्फ से ढकी सुनसान रात में, दो गुर्जर कबीले के लोग राग के माध्यम से आपस में बातचीत कर रहे हों। कभी-कभी यह किसी दूर बौद्ध मंदिर में बजती तांबे की घंटियों की आवाज़ जैसा लगता था। उनकी आवाज़ किसी प्रेमिका के लंबे बालों की तरह थी, जिन्हें नाई ने इतनी कुशलता और सावधानी से संवारा था कि एक भी बाल अपनी जगह से ज़रा सा भी नहीं हटा था। आखिरी पंक्ति को इतने प्रवाह और शक्ति के साथ गाया गया था कि मानो लाउलाब घाटी की पर्वतीय धाराओं को भी मात दे दे।

मुहम्मद याह्या को संगीत में कोई रुचि नहीं थी; वे इस पेशे को एक सच्चे कलाकार के पेशे से हीन समझते थे। फिर भी, ऐसा नहीं था कि वे रागों के प्रभाव और शक्ति से अनभिज्ञ थे। अक्सर ऐसा होता था कि किसी कुशल गायक या वाद्य यंत्र की दूर से आती ध्वनि सुनकर उनका हृदय इतना भावुक और बेचैन हो जाता था मानो वह उनके सीने में कैद हो और आज़ाद होने के लिए छटपटा रहा हो। कभी-कभी संगीत उन पर इतना गहरा प्रभाव डालता था कि उनका मन करता था कि वे अपनी पगड़ी और सम्मान का चोला उतार फेंकें और किसी दूर जंगल में जाकर भटकें और जंगली कबीलों का संगीत सुनें।

विशेषकर वे रातें, जब वह अपने घर के पीछे पहाड़ी पर कारगिल या गिलगित के उन खानाबदोशों की बांसुरी की मधुर धुन सुनकर अचानक भोर से पहले ही जाग जाता था, जो गर्मियों में कभी-कभार बडगाम आते थे, उसके लिए सबसे कष्टदायक रातें होती थीं। बड़ी मुश्किल और आत्म-नियंत्रण से वह अपने शयनकक्ष से निकलकर खानाबदोशों के साथ गीत गाने जाने की इच्छा को रोकता था। यहाँ, हबीबुल्लाह के घर में, जब वह अपने बेटों द्वारा गाई जा रही रुबाई सुनता था, तो श्री राधा या बनिथानी—या जो भी वह व्यक्ति थीं; उसके मन में अभी यह स्पष्ट नहीं था कि क्या वह किसी वास्तविक सत्ता के जादू के वश में था या किसी अवास्तविक और काल्पनिक चीज़ के लिए उसका हृदय क्षीण हो रहा था—उनकी आँखों के सामने स्पष्ट और उज्ज्वल रूप से कौंध जाती थी; यदि वह एक वास्तविक व्यक्ति होती तो यह छवि इससे अधिक स्पष्ट नहीं हो सकती थी। अचानक उसे ऐसा महसूस हुआ जैसे किसी प्रकार के धुएं के कारण उसकी छाती घुट रही हो, जो लगातार घूमता और उमड़ता रहा, जिससे उसका दिल अनचाहा कैदी बन गया और उसे अपनी सामान्य लय भूलने के लिए मजबूर होना पड़ा।

श्रोताओं द्वारा सराहे गए प्रशंसा भरे शब्दों और 'उत्कृष्ट!' की आवाज़ों ने मुहम्मद याह्या को अपने आस-पास के वातावरण के प्रति सचेत कर दिया। उन्होंने अपनी आँखों के कोने से देखा कि श्रोता

अभी भी अपने दिलों में गूंज रहे संगीत की धुन पर मग्न होकर झूम रहे थे। उनका मन किया कि वे उठकर अपने बेटों के पास जाएँ और उनकी प्रशंसा करें और उनकी पीठ थपथपाएँ। लेकिन ऐसा करना उन्हें सभा के सामने अपनी योग्यता का प्रदर्शन करने या अपने बगीचे के फूलों को सूंघकर दुनिया को यह बताने जैसा लगा कि उनके गुलाब कितने सुगंधित हैं।

इन सब विचारों के बावजूद, वह लगभग बेटों के पास जाने के लिए तैयार हो ही गया था कि तभी मामला उसके हाथ से निकल गया। याकूब और दाऊद आधे खड़े हुए, नीचे झुके और अपने हाथ सिर पर रखकर श्रोताओं को उनके प्रोत्साहन के लिए धन्यवाद दिया। फिर एक क्षण रुककर, याकूब ने आदर और लगभग श्रद्धा से भरी आवाज़ में घोषणा की: 'अब मैं साहस जुटाकर इस सम्मानित सभा को सूचित करता हूँ कि हम कश्मीर के अद्वितीय उस्ताद, मुल्ला मुहम्मद ताहिर गनी (जिनकी अल्लाह उनकी कब्र को रोशन करे और उनका दर्जा बढ़ाए) की कुछ चमत्कारिक कविताएँ प्रस्तुत करेंगे; यानी, उनके अलावा कोई और नहीं, मुल्ला मुहम्मद ताहिर गनी (अल्लाह उनकी कब्र को रोशन करे) की। कृपया सुनें।'

पूरी सभा 'ओह!', 'आह!', 'शाबाश!' और 'कितना उपयुक्त है!' की आवाज़ों से गूंज उठी, जब भाइयों ने अपने ताऊ को फिर से ट्यून किया और लकड़ी की छड़ियों ने संतूरों पर थोड़ी और ज़ोर से प्रहार किया। दोनों गायकों ने पीलू नामक राग के शुरुआती स्वरों से शुरुआत की, जो उदासी और अकेलेपन के लिए उपयुक्त प्रेम राग है। उन्होंने गाना शुरू किया:

मेरी चलती-फिरती सरू की टहनी—अब वह किसकी बाहों में विश्राम कर रही है? उसका दयालु हाथ—अब किसके कंधे पर टिका है?

मुहम्मद याह्या को ऐसा लगा मानो उन्हीं की ज़बान से ये शब्द निकल रहे हों। उनके शरीर की हर नस में एक रोमांच, एक लहर दौड़ गई। पिता पर पड़ने वाले प्रभाव से पूरी तरह अनभिज्ञ पुत्रों ने अपना काम जारी रखा:

मेरी दृष्टि, धागे की तरह, आंसुओं से भीगी हुई है: किसके कानों की लोबियों के लिए तड़पते हुए मेरी आंखें ये मोती बना रही हैं?

मुहम्मद याह्या को वही पुराना एहसास हुआ, जैसे उनके सीने में सफेद-भूरे रंग का धुआँ खतरनाक ढंग से ऊपर उठ रहा हो। कुछ सेकंड बाद, उन्हें एहसास हुआ कि उनके सीने के पास से लेकर ऊपरी छाती और फिर बाएं कंधे तक एक अस्पष्ट दर्द फैल रहा है। उन्हें सांस लेने में कुछ कठिनाई हो रही थी; लेकिन इसी बीच लड़कों ने अगला श्लोक सुनाया:

हर पल उसकी याद आती रहती है, मेरा शरीर अब धागे की तरह कमजोर हो गया है, जैसे फूलों का गुच्छा बांधने के लिए उपयुक्त धागा: मेरे फूलों का गुच्छा, अब वह किसके हाथों में है?

पूरी सभा कविता के भाव और गायन की गुणवत्ता में खो गई थी। अंतिम छंद, हालांकि यह एक महान कवि की एक पारंपरिक शेखी मात्र थी, फिर भी इससे कहीं अधिक आनंद मिला क्योंकि यह बहुत ही उपयुक्त था।

मेरी कविता किसी के कानों का इंतजार नहीं करती: चाहे वो साथी कवि हो या प्रतिद्वंद्वी; मेरी कविताओं की स्वादिष्ट थाली को ढकने के लिए किसी के ढक्कन की जरूरत नहीं है।

उपस्थित लोगों में से कोई भी एक-दूसरे की ओर मुश्किल से देख रहा था, इसलिए कोई भी याह्या की शारीरिक या मानसिक स्थिति के बारे में नहीं जान सकता था। उसके सीने में दर्द बढ़ा, फिर कम हुआ, लेकिन उसे बेजान छोड़ गया। जब दर्द की तीव्रता थोड़ी कम हुई, तो उसने उठकर जाने की अनुमति मांगने का सोचा। लेकिन उसके दिल में कोई ताकत नहीं थी, उसके जिगर में कोई जान नहीं थी। उसने अपने हाथ कालीन पर रखे और उठने के लिए सहारा लेने की कोशिश की, लेकिन वह वहीं बैठा रहा, आवश्यक बल लगाने में पूरी तरह असमर्थ।

याह्या के पुत्रों ने अब तक अपने पिता के पीलेपन का कारण संगीत को माना था; अब उन्हें रुककर यह देखने का समय मिला कि उनका चेहरा सामान्य से कहीं अधिक मुरझाया हुआ और पीला था, माथे पर पसीने की बूँदें थीं और उनकी भौंहें बेचैनी से सिकुड़ी हुई थीं। वे तुरंत समझ गए कि कुछ गड़बड़ है और उन्होंने अपने मेज़बान को मदद के लिए बुलाया।

वहाँ मौजूद सभी लोगों के अचानक और अप्रत्याशित ध्यान से याह्या बहुत परेशान हो गए, लेकिन वे केवल इतना ही कह पाए कि उन्हें किसी सहायता की आवश्यकता नहीं है, वे बिल्कुल ठीक हैं। वहाँ एक चिकित्सक भी मौजूद थे जिन्होंने रोगी की नाड़ी जाँची। दुर्भाग्यवश, वे सही निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सके और उन्होंने बताया कि गर्मी और उत्तेजना के कारण पेट के ऊपरी हिस्से में गैस जमा हो गई थी; गैस ऊपर उठकर डायाफ्राम पर दबाव डाल रही थी। एक छोटे से स्थान में गैस के दबाव के कारण ही हृदय में भारीपन और सिर में चक्कर आ रहे थे। उन्होंने तनाव और उच्च रक्तचाप को कम करने के लिए मानक दवा (ऑक्स टंग के फूलों का किण्वन, जिसमें शहद, अंबरग्रीस और रत्न मिलाए गए हों) दी: एक खुराक तुरंत कस्तूरी विलो के रस के साथ लेनी थी, फिर एक घंटे बाद दोहराना था। पूर्ण विश्राम और दवा देने पर, ईश्वर की कृपा से रोगी पूरी तरह से ठीक हो जाएगा। यदि उन्हें सोने में कठिनाई हो, तो कुछ समय के लिए उनके पैरों के तलवों पर बादाम का तेल धीरे से मलना चाहिए।

मुहम्मद याह्या के बेटे उनके साथ सराय तक गए। उन्होंने दवाइयाँ मंगवाईं और उन्हें दवाइयाँ दी गईं। वे रात भर उनके बिस्तर के पास रहे। सुबह मरीज़ की हालत में काफ़ी सुधार हुआ और उन्होंने घर लौटने की जल्दी तैयारी करने का आदेश दिया। उनके बेटों ने मन ही मन सोचा कि बूढ़े को कुछ दिन आराम करना चाहिए, लेकिन उनका विरोध न करने के लिए उन्होंने अपने सारे कार्यक्रम रद्द कर दिए और उसी दिन अपने पिता के साथ एक आरामदायक पालकी में बडगाम के लिए रवाना हो गए।

दाऊद और याकूब अपनी विरासत का जायजा लेते हैं और एक ऐसा फैसला लेते हैं जो उनके जीवन को बदल देगा।

घर वापसी का सफर सुकून और सुरक्षा के साथ समाप्त हुआ। प्रतीक्षा और जागते रहने से लाल हुई बशीरुन्निसा की आँखें अब अपने पति और दोनों बेटों को देखकर ठंडी और संतुष्ट महसूस कर रही थीं, जो उसकी आँखों का असली तारा थे। यह याह्या की पहली लंबी यात्रा थी और वह भी बेहद सफल रही। बशीरुन्निसा उम्मीद कर रही थी कि उसके पति अपनी सफलता की कहानियाँ और जिन जगहों पर वे गए थे, उनके बारे में कुछ विवरण सुनाएँगे। लेकिन याह्या अंतर्मुखी और चुप लग रहे थे। बशीरुन्निसा ने मन ही मन सोचा, यह यात्रा की थकान होगी। कोई कल्पना भी नहीं कर सकता था कि श्रीनगर में याह्या की छोटी सी बीमारी गंभीर या जानलेवा भी हो सकती है।

याह्या का रंग अब पीला पड़ गया था, नीला पड़ रहा था, मानो उसे सायनोसिस हो गया हो। ऐसा लगता था मानो उसे किसी से कुछ कहना ही न हो, न ही किसी की आवाज़ उसके कानों में गूंजती हो। वह सुबह देर से उठता, मानो किसी बात से बेखबर हो, और चाहता कि कहीं दूर, घर से बाहर चला जाए, दिनभर के कामों से बेफिक्र। अगले दिनों में, जब कभी वह खुद को ठीक से कपड़े पहनने और कमरे से बाहर निकलकर दुनिया का सामना करने के लिए तैयार करता, तो अक्सर उसे लगता कि उसमें न सिर्फ शारीरिक शक्ति है, बल्कि इस काम के लिए मानसिक दृढ़ता भी नहीं है। और जब कभी-कभार वह नीचे आता और दिनभर के कामों में लग जाता, तो अपने शयनकक्ष तक सीढ़ियाँ चढ़ना उसे हिमालय की सबसे कठिन चोटी नंगा पर्वत चढ़ने जैसा लगता। चढ़ाई के कारण उसे हमेशा सीने में हल्का दर्द, गले में सूखापन और बाएँ कंधे में भारीपन महसूस होता था।

इन सब बातों के बावजूद, किसी ने भी चिकित्सक से परामर्श लेने के बारे में नहीं सोचा। जहाँ तक याह्या की बात है, उन्हें इस मामले में कोई दिलचस्पी नहीं थी। उन्हें इस बात की परवाह नहीं थी कि वे अस्वस्थ हैं या अस्वस्थ हो सकते हैं। जैसे ही उन्हें दर्द या जीवन की व्यस्तताओं से राहत मिलती, उनके मन में अतीत में अकल्पनीय या अनदेखे दृश्यों की छवियाँ उभरने लगतीं: महीन, पीले-भूरे रंग की धूल की एक या एक से अधिक परतों से ढकी वस्तुएँ; ऊँटों के लिए ऊँची काठी, घोड़ों के लिए पूरा साज-सामान; पकी और धूप में सूखी मिट्टी से बने विशाल घड़े, या शायद पत्थर के बने हुए, लेकिन घड़ों में पानी नहीं था; दूर क्षितिज तक फैला एक निर्जन क्षेत्र, लेकिन उस पर प्रकाश मंद या धुंधला था—बर्फ की एक पतली चादर ने पूरे निर्जन क्षेत्र को ढक रखा था, लेकिन बर्फ इतनी हल्की थी कि वह रेत जैसी लग रही थी; ऊँटों के भारी जंजीर वाले कॉलर से लटकती भारी घंटियाँ; रात में गाती कश्मीरी गुर्जर जनजाति की युवतियाँ; प्राचीन रथों के टूटे हुए पहिये; गुलाबी और नारंगी रंग की किनारी वाली युवतियों के वस्त्र हल्की हवा में लहरा रहे थे; एक लगभग पारदर्शी सूती कपड़े का पर्दा, बहुत हल्का, बहुत पतला, और उसके पीछे: बड़ी-बड़ी, चमकीली आँखें, दमकता माथा, लंबे बाल, आत्मविश्वास से दमकता चेहरा, लेकिन दोपहर के समय सूरज की नीली किरणों की तरह मुझसे बेपरवाह... नहीं, आँखें मुझे देख रही हैं, मुझे

महसूस कर रही हैं... नहीं। नहीं। यह सच नहीं है। वह मुझे महसूस करती हुई प्रतीत होती है, लेकिन वास्तव में वह बिल्कुल बेफिक्र, बिल्कुल लापरवाह है...

मुहम्मद याह्या सपना देख रहे हैं; रात बहुत ढल चुकी है, या शायद सुबह के बहुत सुबह के समय है। उन्हें समय का पता नहीं है, क्योंकि उनकी आँखें बंद हैं। उनके सीने में दर्द हो रहा है। फिर भी दर्द न तो बढ़ रहा है और न ही कम हो रहा है। यह एक धुंधली गूँज की तरह है, ठीक वैसे ही जैसे मुगल गार्डन में शाही झरने के कृत्रिम जलप्रपात की धीमी आवाज़। आवाज़ लगातार आ रही है, लेकिन न तो गड़गड़ाहट है और न ही फुसफुसाहट। यह मेरे कानों से टकराती रहती है, मानो मेरे दिमाग में घुसना चाहती हो, और दर्द... दर्द सिर्फ मेरे सीने या कंधे में नहीं है। किसी चीज़ ने मेरे गले को अपना घर बना लिया है; उसने जबरदस्ती मेरे गले पर कब्ज़ा कर लिया है। वहाँ से मेरे दिमाग को संकेत जा रहे हैं कि यहाँ कुछ अटक गया है, यहाँ दर्द है, और मेरी साँस न तो बाहर जा पा रही है और न ही अंदर आ पा रही है।

नींद में डूबे याह्या ने अपने ऊपर ओढ़े कंबल को झटक दिया; वह उठना चाहता था, पर महसूस कर रहा था कि उसके पैर घुटनों से जकड़े हुए हैं और हिल नहीं रहे हैं। वह दो-तीन बार करवटें बदलता रहा और फिर सो गया। या यूं कहें कि उसे फिर से सपने आने लगे।

दर्द की लहर लगातार उठ रही है, जैसे पास में गिरते पानी की गूंज; लेकिन अब झरना पहले से ज़्यादा ऊँचा और तेज़ लग रहा है, और जहाँ से पानी गिर रहा है, वह जगह कुछ गर्म है जिससे पानी की छोटी-छोटी बूँदें धुएँ में बदल गई हैं और मेरे दिल के चारों ओर एक धुंध सी छा गई है। उसे अपनी छाती और गर्दन पर बूँदों की नमी महसूस हो रही है, लेकिन वह अपने हाथों से उसे पोंछ नहीं पा रहा है। तभी कोई उससे कहता है: यह धुआँ नहीं है, सच में। यह तो बस सुई जैसी बारीक फुहार है जो बहुत तेज़ी से फैल रही है। लेकिन, वह मन ही मन सोचता है, धुएँ के ये गुच्छे मेरी छाती में कैसे और कहाँ से घुस गए? और अब तो उसकी छाती भी नम, बल्कि गीली सी लग रही है।

अचानक उसके दिल में तेज दर्द उठा, मानो किसी सर्जन का हाथ फिसल गया हो और लैंसेट गलती से मरीज के शरीर में उस जगह घुस गया हो जहाँ उसे नहीं घुसना चाहिए था। दर्द से कराहते हुए उसके होंठों से एक सिसकी निकल पड़ी; उसकी आँखें खुल गईं। सपना, अगर सपना था, तो खत्म हो गया था। लेकिन नहीं, यह सपना बिल्कुल नहीं था। दर्द उसके सीने, जबड़े, कंधों और बांहों में फैल रहा था। यहाँ तक कि उसकी कलाई भी पहले से कहीं ज्यादा दर्द कर रही थी। साँस लेना पल-पल और मुश्किल होता जा रहा था। उसने पूरी ताकत से बशीरुन्निसा को पुकारा, लेकिन उसे अपनी ही आवाज़ सुनाई नहीं दे रही थी। वह पानी का जग ढूंढने के लिए बगल की मेज की ओर बढ़ा ताकि एक घूँट पानी पीकर अपना गला तर कर सके। तभी उसने देखा कि उसकी आँखें बंद थीं, लेकिन किसी तरह खुली भी थीं। वह जानता था कि वह सपना नहीं देख रहा था; किसी ने, किसी चीज़ ने जबरदस्ती उसकी आँखें बंद कर दी थीं। उसे याद आया कि जब वह छोटा बच्चा था और उसे चोट लग जाती थी और दर्द असहनीय लगता था, तो वह अपनी आँखें कसकर बंद कर लेता था, मानो बंद आँखें दर्द को महसूस होने से रोक देंगी। उन्हें इस बात का एहसास नहीं था कि आंखें बंद करने से दर्द अंदर आने से तो रोका जा सकता है, लेकिन साथ

ही पहले से मौजूद दर्द को बाहर जाने से भी रोका जा सकता है।
उसने अपनी पूरी ताकत से बशीरुन्निसा को फिर पुकारा, लेकिन फिर भी उसे अपनी आवाज़ सुनाई नहीं दी। तो शायद मैं मर गया? उसने मन और हृदय की शांति से अपने आप से कहा। लेकिन नहीं, दर्द अब भी उसके सीने में गड़गड़ाहट पैदा कर रहा था, और साथ ही हल्की हवा की सरसराहट जैसी आवाज़ उसके कानों में फुसफुसा रही थी।
बिना किसी सचेत प्रयास के, एक बिल्कुल नया कालीन का डिज़ाइन उसके सामने चमक उठा, चमका, गायब हुआ और फिर प्रकट हुआ। वह उसे स्पष्ट रूप से देख सकता था: रंग इतने चौंकाने वाले थे कि तिब्बत और काशान के सबसे प्रतिभाशाली डिज़ाइनर भी उनकी कल्पना नहीं कर सकते थे। चमकदार नीला, जैसे युस मार्ग की ऊँचाइयों पर बारिश के बाद आसमान का रंग होता है। नीले रंग के चारों ओर, कुछ पीलापन लिए हुए सफेद रंग, जैसे बादाम की गुठली, फिर कच्चे खुबानी का हरा रंग, फिर गहरा नीला, बहुत गहरा नीला; क्या मानस बल झील का पानी भी इतना गहरा हो सकता है? रंग की गहराई ने उसे पलकें झपकाने पर मजबूर कर दिया, मानो वह इसे सहन न कर सके। तो क्या मैंने ही इस कालीन को डिज़ाइन किया है? नहीं, नहीं। यह मेरे लिए बिछाया गया है। लेकिन कहाँ? मैं कहाँ हूँ? बर्फ गिर रही है। हाँ, लेकिन मेरे सामने एक हवेली है, इतनी ऊँची कि उसके मुख्य द्वार का मेहराब बादलों में खोया हुआ सा लगता है। और वह कालीन मेरे लिए बिछाया गया है; यह मेरे पैरों के नीचे से मुख्य द्वार तक फैला है, और मुझे वहाँ जाना है। तो चलिए, मैं आगे बढ़ता हूँ, लेकिन... उस विशाल द्वार पर कुछ लिखा हुआ है। पहले मैं उसे पढ़ लेता हूँ, शायद वह कोई महत्वपूर्ण बात हो।
लेकिन मुझे कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा। किसी ने मेरी दीवारों, दरवाजों और छतों पर बहुत सारा कालिख पोत दिया है। या मैं किसी सुरंग में कैद हूँ? हे प्रभु, अपने ही घर में अजनबी जैसा महसूस करना कितना भयानक है! जैसे ही यह विचार उनके मन में आया, एक और विचार आया: मैं अब हमेशा के लिए इस घर से, इस दुनिया से अजनबी हो जाऊँगा। मेरे घर के दरवाजे मेरे लिए कभी नहीं खुलेंगे।
उन्हें सफलता का एक अनूठा अहसास हुआ। केवल ईश्वर ही दोषरहित है! मुझे उनका धन्यवाद करना चाहिए! ईश्वर के पैगंबर के पवित्र शब्द उनके अंतर्मन में कौंध गए: तो क्या मुझे वह दास नहीं होना चाहिए जो सदा अपने प्रभु का धन्यवाद करता रहे? उन्होंने अपनी दाहिनी तर्जनी उंगली उठाई और कुरान के उन शब्दों का उच्चारण किया जो मुसलमान ईश्वर का धन्यवाद करने के लिए सार्वभौमिक रूप से बोलते हैं: समस्त प्रशंसा अल्लाह के लिए है। फिर उन्होंने आस्था की आवश्यक प्रतिज्ञा पढ़ी, अपनी बंद आँखों से बशीरुन्निसा को प्रेमपूर्वक देखा, एक क्षण के लिए अपने पुत्रों पर ध्यान केंद्रित किया, और फिर उन्होंने 'या शैखुल आलम' कहकर पैगंबर के मकबरे के हरे गुंबद को सीने से लगाकर सो गए।
चालीस दिन के मातम के बाद बशीरुन्निसा बिस्तर पर लेट गईं। दरअसल, उस दिन तक वे देखने में बिल्कुल ठीक थीं। कुछ दिन पहले ही उन्होंने अपने बेटों के साथ उनकी शादी के बारे में सुखद और हल्के-फुल्के अंदाज़ में बातचीत की थी। लेकिन आखिरी मेहमान के जाने के साथ ही ऐसा लगा जैसे उनके शरीर की शक्ति और मन की सहनशक्ति भी क्षीण हो रही हो। उन्होंने लगभग

खाना-पीना छोड़ दिया और धीरे-धीरे उनके शरीर और मन में सन्नाटा छाने लगा। वे पढ़ी-लिखी नहीं थीं, लेकिन कुरान की कुछ आयतें जानती थीं, जो उनकी रोज़ाना की नमाज़ पढ़ने के लिए काफ़ी थीं। उन्हें अरबी की कई दुआएँ भी ज़बानी याद थीं, जो प्राचीन काल से ही अपनी पुण्य और प्रभाव के लिए जानी और अनुशंसित थीं। बिस्तर पर लेटे-लेटे वे अपनी पाँचों नमाज़ें पढ़तीं और फिर जब भी उनकी शक्ति होती, कुरान की याद की हुई आयतें और दूसरी दुआएँ पढ़तीं। हर बार ऐसा करने के बाद वे अल्लाह से दुआ करतीं कि नमाज़ और कुरान पढ़ने से उन्हें जो भी पुण्य मिले, वह उनके पति के अच्छे कर्मों में गिना जाए।

मुहम्मद याह्या की मृत्यु के बाद तीसरे महीने की शुरुआत में, बशीरुन्निसा ने तड़के की नमाज़ के बाद अपने बेटों को बुलाया और कुछ बातों को लेकर आशा से भरी आँखों से और उन बातों के लिए खेद व्यक्त करते हुए जो अब उनके लिए नहीं होंगी, उन्हें देखते हुए अपनी दुर्बल आवाज़ में उन्हें निर्देश दिया: 'मेरे पलंग को इस तरह घुमाओ कि मेरा मुख काबा की ओर हो जाए।'

बेटों में हिम्मत नहीं हुई कि वे कारण पूछें, लेकिन वे अपने मन में अच्छी तरह समझ गए थे। आँखों में आँसू लिए, उन्होंने पलंग को मनचाही दिशा में खिसकाया, अपनी माँ से अपने गुनाहों को माफ़ करने की भीख माँगी और उनसे प्रार्थना की कि वे उनके खून-पसीने से उन्हें दूध पिलाने के कारण उन पर हुए कर्ज को माफ कर दें। फिर उन्होंने कुरान का अध्याय या-सीन पढ़ा, जिसके बारे में माना जाता है कि यह मृत्यु के कष्टों को कम करता है। अचानक, वह सामान्य से कहीं अधिक ऊँची आवाज़ में चिल्लाईं: 'अल्लाह! मेरा दिल और जिगर बहुत दर्द कर रहे हैं!'

बेटों ने पाठ रोक दिया और अपनी माँ की छाती पर झुक गए। बड़ी मुश्किल से, माँ ने अपने दुबले-पतले, सफ़ेद दाहिने हाथ से उनके कहीं बड़े दाहिने हाथों को पकड़ने की कोशिश की, मुस्कुराने का प्रयास किया और कहा, 'तुम दोनों गवाह बनोगे, है ना?'

बेटों का गला भर आया था; उनके मुंह से शब्द नहीं निकल रहे थे, लेकिन वे बार-बार सिर हिलाकर दृढ़ता से अपनी सहमति जता रहे थे। उन्होंने आस्था की मूल प्रतिज्ञा दोहराई, हाथों पर फूँक मारी और उन हाथों को उस प्रिय चेहरे पर फेरा। उसने धीरे से कहा, 'कृपया मुझे उनके बगल में दफना दीजिए,' और फिर अपनी पूरी क्षमता से प्रतिज्ञा दोहराई और अपनी आँखें बंद कर लीं।

आप कब तक जीवन और मृत्यु के बारे में पूछते रहेंगे? सूरज दीवार में एक दरार से अंदर आया और चला गया।

कोई घर कितना भी बड़ा या भव्य क्यों न हो, उसकी जान सिर्फ एक ही शख्स में बसती है। चाहे वह नवाब का महल हो या राजा का, या किसी बादशाह का आलीशान राजमहल, लेकिन जब वह शख्स इस दुनिया से चला जाता है, तो घर भी अपनी जान खो बैठता है। अगर अखबारों या आम चलन और मान्यता की मानें तो मुहम्मद याह्या उसके मालिक थे, लेकिन घर की आत्मा बशीरुन्निसा में बसती थी, न सिर्फ उनके कुशल प्रबंधन, उचित, सौंदर्यपूर्ण और उपयोगी चीजों के प्रति उनकी समझ, न सिर्फ उनके मधुर स्वभाव के कारण; बल्कि सच तो यह है कि वह घर सिर्फ एक निवास स्थान नहीं, बल्कि सुगंधित सेबों की फसल जैसा लगता था जिस पर बादाम और वायलेट के फूल बरस रहे हों। नहीं, असली वजह यह थी कि उनके व्यक्तित्व में शीतलता और

सुकून का ऐसा सुखद एहसास था, हर चीज के प्रति उनका इतना उदार, इतना सुखदायक और मधुर व्यवहार था कि वह हर किसी को झेलम नदी के स्रोत, वर्नाक के गहरे झरने की याद दिला देता था।

झेलम नदी का उद्गम स्थल एक विशाल कुएँ जैसा था, जो पानी से लबालब भरा हुआ था। सम्राट जहांगीर के इंजीनियरों ने इसकी गहराई चौदह गज मापी थी। पानी नीला था और उसमें हमेशा बड़ी-बड़ी काली महाशेर मछलियाँ और नारंगी-लाल ट्राउट मछलियाँ पाई जाती थीं। जहांगीर ने उनकी नाक में छेद करवाकर उनमें सोने की नथें पहनाई थीं। बशीरुन्निसा का स्वभाव सभी के मन में वर्नाक की मिठास, अपार समृद्धि और गहराई की याद दिलाता था। झरने की भव्य चौड़ाई और बहाव, तथा उसकी हवा की अद्भुत मनमोहकता भी उन सभी के मन में बसी हुई थी जिनका उससे कोई संबंध था।

बशीरुन्निसा की मृत्यु के बाद घर अचानक डरावना, वीरान और उपेक्षित सा लगने लगा। याकूब और दाऊद मन ही मन घर छोड़कर तुरंत चले जाने को बेताब थे। लेकिन संसार के नियम और रीति-रिवाज मृतकों के लिए भी उतने ही महत्वपूर्ण थे जितने जीवितों के लिए। घर में सामान और सामग्रियाँ भरी पड़ी थीं, उन्हें निपटाने या दान करने की समस्या भी थी। ऐसा लग रहा था मानो घर सामान से भरा पड़ा हो। कई कालीन थे, पुराने और नए। लड़कों के लिए कहीं अधिक मूल्यवान वे नए डिज़ाइन के कालीन थे जिन पर मुहम्मद याह्या अपनी मृत्यु के समय काम कर रहे थे।

इनके अलावा, ओक या अखरोट की लकड़ी के बर्तन थे; फिर कुर्सियाँ, सोफे और लाउंज थे, जिनमें से कुछ प्राचीन थे। भंडारगृह पुराने चांदी के जग, प्याले और थालियाँ; मध्य एशियाई शहरों खल्लुख और खोतान और अन्य कई शहरों से लाए गए चित्रित या उत्कीर्ण लकड़ी या चीनी मिट्टी के प्याले; तिब्बत और लद्दाख से लाए गए अगेट और फ़िरोज़ा की मालाएँ; चीनी तुर्किस्तान के काशान और काशगर से लाए गए रेशमी पर्दे और कपड़े; समरकंद और बुखारा से लाए गए मिट्टी के बर्तन और चांदी के सामान; किर्गिज़िस्तान से लाए गए ऊनी शॉल और लबादे; कज़ाखस्तान से लाए गए चमड़े की पानी की बोतलें और डफ; हिम तेंदुओं की खालें; कश्मीरी हिरणों में सबसे बड़े हंगुल के सिर और सींग; कस्तूरी के लिए चमड़े की शीशियाँ; केसर के तेलयुक्त चमड़े के पैकेट —वह सब कुछ और उससे भी अधिक जो एक समृद्ध और सुस्थापित कश्मीरी हवेली में अपेक्षित हो सकता है।

याकूब और दाऊद को यह विशाल भंडार घुटन भरा लगा, जो दो या दो से अधिक पीढ़ियों से इकट्ठा किया गया था। लेकिन ज़ाहिर है, वे इसे फेंक नहीं सकते थे। और यद्यपि उनके कोई करीबी रिश्तेदार नहीं थे, फिर भी कई दूर के रिश्तेदार थे जो उपहार के रूप में ऐसी चीज़ों की सराहना करते, और वास्तव में याह्या या बशीरुन्निसा से छोटी-मोटी विरासत के हकदार हो सकते थे।

उन्होंने ग्यारहवें दिन चालीसवें दिन की रस्में निभाने का प्रबंध किया। जब सभी रस्में—प्रार्थना, गरीबों को भोजन वितरण, मेहमानों के लिए भोज—समाप्त हो गईं, तो वे अपने वाद्य यंत्र लेकर

अपनी माताजी के कमरे में गए। उन्होंने सबसे पहले ईश्वर और उनके पैगंबर की स्तुति में कविताएँ और सूफी शैली की कविताएँ गाकर अपने मन को शांति देने का प्रयास किया। अंत में, उन्होंने उनकी आत्मा की शांति के लिए कुरान की प्रार्थना पढ़ी।
उन्होंने सबसे औपचारिक और गंभीर रागों में से एक, दरबारी राग से शुरुआत की, जिसमें उन्होंने तेरहवीं शताब्दी के महान भारतीय फारसी कवि खुसरो की ईश्वर को संबोधित कुछ पंक्तियाँ गाईं। हे आप जो हमारी कल्पना से परे हैं, भला विचार आपके निकट कैसे आ सकता है? बुद्धि भला आपके गुणों का वर्णन करने में सक्षम कैसे हो सकती है? यदि सभी मनुष्य, सभी देवदूत आपके द्वार पर धूल में मिल जाएँ, तो क्या क्षय की धूल कभी आपकी शक्ति, आपकी महिमा के वस्त्र के किनारे को भी छू सकती है? कर्बला के हुसैन की तरह सैकड़ों, आपकी परम उदासीनता के मार्ग पर प्यास से मरते हुए, साष्टांग प्रणाम करते हैं; क्या कोई कभी शुद्ध जल के स्रोत तक पहुँच सकता है? उस बाग से, जहाँ देवदूत जिब्राइल बुलबुल बनकर सेवा करने के योग्य भी नहीं है, धूल के ढेर में रहने वालों तक एकता की एक झलक भी कैसे पहुँच सकती है?
अब तक, कविता का दुख, पहुँच से बाहर होने का दुख, मनुष्य के टुकड़े-टुकड़े होने का दुख, और उनका अपना हृदय दर्द, उनके धीमे, गहरे स्वरों में समाहित होकर उन्हें घेरे हुए थे। ऐसा लग रहा था मानो बेस शुद्ध पीड़ा की अभिव्यक्ति से उबलने ही वाला हो। ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो दोनों के लिए गाना बंद करके फूट-फूट कर रोने में बस एक पल की बात हो। अचानक, दाऊद की आवाज़ बहुत ऊँची हो गई और उसने राग के शुरुआती स्वरों को दोहराया, और याकूब की आवाज़ परमानंद के नशे में भर गई, मानो उन्हें अपनी प्यारी माँ की यात्रा के बारे में कोई रहस्योद्घाटन हुआ हो: डर के रास्ते पर अकेली यात्रा करने वाली नौसिखिया अपनी मंजिल तक सुरक्षित और अक्षुण्ण पहुँच गई थी।

यह मेरे जैसे लोगों के मन और चेहरों को भाता है कि प्रेम के प्रकाश की चमक हम पर पड़े; पवित्र यात्री को विपत्ति और कष्ट से अपवित्र होने का कोई भय नहीं होता।
उन्हें यह स्पष्ट रूप से पता नहीं था कि वे खुसरो की उन पंक्तियों का गायन क्यों कर रहे थे जो उस समय अपेक्षाकृत अपरिचित थीं; लेकिन उन्हें किसी न किसी रूप में यह विश्वास था कि उनकी माता की आत्मा उस दिव्य लोक में विलीन हो गई है जहाँ सूफी मान्यता के अनुसार समस्त आत्माओं का वास होता है, और इस प्रकार उनकी माता अपने मूल से पुनः जुड़ गई हैं। वे लगभग परम सत्ता की आनंदमय दृष्टि की सुनहरी-नीली चमक देख सकते थे, जो उनकी माता की आत्मा के उच्च लोकों की यात्रा पर वसंत की शीतल वर्षा का पूर्वाभास दे रही थी। इस दर्शन से प्रेरित होकर, वे अंतिम पंक्ति को बार-बार दोहराते रहे, प्रस्तुति की विविधता और निपुणता का एक दुर्लभ प्रदर्शन करते हुए, जो यदि कोई ज्ञानी श्रोता उपस्थित होता तो उसे चकित और अभिभूत कर देता।
दाऊद चुप हो गया। याकूब ने अब एक और राग, मलकौस, एक और गंभीर राग चुना, जो रात के बढ़ते अंधेरे और अस्तित्व के रहस्य के लिए उपयुक्त था। उसने तराना शैली से शुरुआत की, जो राग का सबसे शुद्ध रूप है क्योंकि इसमें अर्थहीन छोटे अक्षर होते हैं, जो केवल ध्वनि की पवित्रता

का प्रतीक होते हैं। जानबूझकर, या शायद अनजाने में, उसने सत्रहवीं शताब्दी के सूफी कवि सरमद की एक रुबाई चुनी, जो पैगंबर के स्वर्गारोहण का जश्न मनाती है।
जिसने ईश्वर के सत्य पर दृढ़ विश्वास रखा, वह आकाश से भी विशाल और विकराल हो गया।
मुल्ला ने कहा: अहमद आकाश में थे; सरमद ने कहा: आकाश अहमद में थे।
वे काफी देर तक गाते रहे, सामान्य से तेज़ गति से, कविता की शक्ति और उसकी अपनी व्याख्या में पूरी तरह डूबे हुए। जैसे ही वे अपनी गायन की चरम सीमा पर पहुँचे, वे अचानक रुक गए; क्योंकि दोनों फूट-फूटकर रोने लगे। दाऊद ने धीरे से अपना वाद्य यंत्र एक तरफ रख दिया, अपना सिर अपनी माँ के खाली पलंग के फ्रेम पर टिका दिया और एक बच्चे की तरह रोने लगा। याकूब ने अपने भाई का सिर उठाया, उसे अपने कंधे पर रखा; उसने प्यार से उसकी पीठ थपथपाई और कहा, 'अमीर खुसरो की कही बात याद रखना, "पवित्र यात्री को कोई भय नहीं होता।" मुझे कोई संदेह नहीं है, वह स्वर्ग में होगी और वहाँ हमारे लिए भी प्रार्थना कर रही होगी। अपने जिगर को इतना कष्ट मत दो। वह बहुत अच्छी जगह पर है।'
फिर उन्होंने सोलहवीं शताब्दी के फारसी कवि सहाबी की एक रुबाई पढ़ी। उनकी आवाज कभी खुद से फुसफुसाने जैसी तो कभी सामान्य बातचीत जैसी थी।
जिस भी गुण से मनुष्य उस सत्ता की ओर झुकाव रखे, वह मधुर और सुंदर है; गीत चाहे जिस धुन पर गाया जाए, मधुर और सुंदर है; ईश्वर के लिए किया गया कोई भी कर्म व्यर्थ नहीं जाता; स्वर्ग में चाहे जिस द्वार से प्रवेश किया जाए, वह मधुर और सुंदर है।
जब उसने अपनी बात खत्म की, तो वह भी अपने आँसू नहीं रोक पाया। उसने अपना छोटा ढोल एक तरफ रख दिया, अपनी माँ के बिस्तर के पास गया और बोला, “प्यारी माँ, अब जब आप यहाँ नहीं हैं, तो कोई ऐसा नहीं बचा जिसके सामने हम गाना चाहते। जब हमारे संगीत से बाबा नाराज़ होते थे, तो आप उन्हें कई तरह से शांत करती थीं। आखिरकार, ईश्वर ने हमें वह अवसर दिया कि उन्होंने हमें सबके सामने गाते हुए सुना, और मुझे पूरा विश्वास है कि उन्हें बुरा नहीं लगा होगा। अब जब आप दोनों नहीं हैं, तो हमारा संगीत भी नहीं रहेगा।”
अब तक उन्हें यह स्पष्ट नहीं था कि उन्हें अपने जीवन में क्या करना चाहिए। ऐसा लग रहा था मानो जीवन उनके सामने एक विशाल और ठंडी बर्फीली रेगिस्तान की तरह मंडरा रहा हो। संगीत छोड़ने के बाद उनका जीवन कहाँ और कैसा होगा? उन्हें यह बात बिल्कुल स्पष्ट थी कि वे अब बैडगम में नहीं रहेंगे; वे न तो संगीत का काम करेंगे और न ही कोई व्यापार, चाहे वह आनंद के लिए हो या लाभ के लिए। यह भी स्पष्ट था कि उनके लिए सबसे पहला काम अपने घर और संपत्ति के लिए आवश्यक व्यवस्था करना था।
जैसे-जैसे सुबह की गुलाबी रोशनी धीरे-धीरे आसमान में फैल रही थी, उन्होंने अपना संकल्प दृढ़ कर लिया: उन्होंने घर का सामान छांटना शुरू कर दिया। सबसे पहले, उन्होंने वे बक्से खोले जो उनके पिता हिंद की यात्रा से वापस लाए थे; उनके लौटने के बाद से उन्हें खोला तक नहीं गया था।
कांपते हाथों से उन्होंने हर वस्तु को उठाया और उसके उचित स्थान पर रखा, मानो वे किसी महान संत की पवित्र और पूजनीय वस्तुओं को संभाल रहे हों। आखिरी बक्से में रेशम में लिपटा एक

मोटा, भारी कागज का टुकड़ा था। कुछ जिज्ञासावश उन्होंने पैकेट खोला, यह सोचकर कि यह किसी संपत्ति की खरीद-बिक्री का दस्तावेज या लाहौर में व्यापार का कोई समझौता होगा। उन्हें यह देखकर गहरा सदमा और दुख हुआ कि यह एक महिला का चित्र था।
एक अनजान औरत की तस्वीर? ऐसी चीज़ उनके पिता के सामान में कैसे और क्यों आ सकती है? जहाँ तक उन्हें पता था, उनके पिता को औरतों या किसी भी तरह के शारीरिक संबंधों में कोई दिलचस्पी नहीं थी। बेशक, वे अपने पिता का आदर करते थे और उन्हें अच्छी तरह समझते भी थे। उन्हें पूरा यकीन था कि उनके पिता को अश्लीलता, पेशेवर महिलाओं या मेलों और बाज़ारों के नज़ारों और आवाज़ों में कोई रुचि नहीं थी। तो फिर यह युवती कौन थी? ज़ाहिर है, उसका अंदाज़ बहुत ही शानदार था, उसकी अदाएँ लाजवाब थीं। क्या हमारे पिता दूसरी शादी के बारे में सोच रहे थे? या वह उनकी कोई गुप्त प्रेमिका थी, या शायद लाहौर की कोई नाचने वाली लड़की जिसे वे अपने जीवन में दूसरी साथी के रूप में रखना चाहते थे?
उन्होंने सुना था कि बुढ़ापे में पुरुषों के चरित्र और स्वभाव में बड़े बदलाव आते हैं। जुड़वा बच्चों के दिल पछतावे और घृणा से भर उठे। बेहतर होगा कि इस बदकिस्मत कागज को छोटे-छोटे टुकड़ों में फाड़कर नदी में फेंक दिया जाए ताकि यह हमेशा के लिए मिट जाए। इस तरह उनके पिता का रहस्य हमेशा के लिए पानी में दफ़न हो जाएगा।
याकूब ने दाऊद के हाथ से वह शापित कागज़ छीन लिया, उसे फाड़-फाड़ करने का इरादा था, लेकिन किसी आवेग ने उसे रोक दिया। वह सोचने के लिए रुका: सबूतों को नष्ट करने से तथ्य नहीं बदलेंगे। बस इतना होगा कि भौतिक प्रमाण का अस्तित्व समाप्त हो जाएगा; लेकिन जो कुछ हमारी आँखों के सामने घटित हो चुका है, उसे बदला नहीं जा सकता: वह हो चुका है। और हमारे पास वास्तविकता का बोझ उठाने के अलावा कोई विकल्प नहीं है; यह एक ऐसा बोझ है जिसे हमारे सिर से हटाया नहीं जा सकता। और कौन जानता है कि इस सब की वास्तविकता क्या है? यह तो स्पष्ट है कि बाबा इस चित्र को हममें से किसी के लिए संभावित दुल्हन के रूप में वापस नहीं लाए थे। उन्होंने कहा, 'भाई, थोड़ा रुको। चलो इस पर थोड़ा और विचार करें। मुझे लगता है कि यहाँ कुछ पेचीदगियाँ हो सकती हैं...'
‘समस्याएँ? कैसी समस्याएँ?’ दाउद ने अचानक तीखे स्वर में कहा। ‘निस्संदेह खेदजनक है। लेकिन यहाँ विचार करने के लिए और क्या हो सकता है?’
नहीं। कृपया ज़रा सोच-समझकर विचार करें। यह महिला मुसलमान नहीं है, यह तो स्पष्ट है। लेकिन यह भी उतना ही स्पष्ट है कि वह किसी पेशे से नहीं है। ऐसी भव्यता, ऐसा सम्मान, ऐसा आत्मविश्वास... ये दुर्लभ गुण हैं। और उसका माथा, वह शक्ति से दमक रहा है...
‘भाई, मैं तुम्हें क्या कहते हुए सुन रहा हूँ? क्या वह ... के अलावा कुछ और हो सकती है?’

“प्रिय भाई, जल्दबाजी में फैसला मत करो। उसका शरीर अद्भुत अनुपात में चित्रित किया गया है, कमर उसके ऊपरी धड़ के मुकाबले इतनी पतली है कि वह अभी भी भारी-भरकम नहीं लगती। सचमुच, उसका चेहरा दिव्य है। इसमें कोई और रहस्य भी हो सकता है। हमारे पिता कभी भी दूसरी स्त्रियों के पीछे भागने वाले नहीं थे। मुझे तो वह किसी दूर देश की रानी जैसी लगती है।

शायद वह बाबा से किसी कारणवश प्रसन्न हुई हो—शायद उनकी कला से—और उन्हें यह चित्र स्मृति चिन्ह और पुरस्कार के रूप में भेंट किया हो? वह निश्चित रूप से हमारे इलाके की नहीं है, न ही पंजाब की।"

अब दाऊद ने चित्र को कुछ ध्यान से देखा। उसके हृदय में एक कंपकंपी दौड़ उठी, और जल्द ही वह कंपकंपी उसके हाथों तक पहुँच गई। स्त्री की मुस्कान में थोड़ी सी शरारत थी, लेकिन व्यंग्य की, न कि नखरे की। ऐसा लग रहा था मानो चित्र में बैठी महिला किसी न किसी तरह उसके बारे में दाऊद की राय से अवगत थी और मन ही मन उस पर हंस रही थी: सचमुच, आपने रहस्य को कितनी अच्छी तरह समझा! हर कोई उतना ही सोचता है जितना वह सोच सकता है। मैं बहुत दूर हूँ, आपकी मात्र मानवीय सोच से बहुत दूर।

दाऊद ने चित्र को और भी ध्यान से देखा। चित्र में बैठी महिला के होंठ हल्की मुस्कान की लालिमा से दमक रहे थे। उसके गोरे रंग के पीछे से मानो एक चमक निकल रही थी, हालांकि उसमें कश्मीरी महिलाओं जैसी सफेदी नहीं थी। कुछ पल पहले तो यह सिर्फ एक चित्र था, लेकिन अब यह किसी जीवित शरीर जैसा कैसे लगने लगा? उसने अपने होश संभालने की कोशिश की। हे मूर्ख नौजवान, उसने मन ही मन कहा, यह संगीत की कोई साधारण धुन नहीं है जिसे तू पल भर में सीख ले। उसके चेहरे पर आत्मविश्वास एक अलौकिक प्रकाश की तरह चमक रहा है। क्या ऊर्जा है, क्या अद्भुत रूप है...!

वह अचानक रुक गया। ऊर्जा? अभिव्यंजक रूप? उसने ये शब्द पहले कभी नहीं सुने थे, और किसी स्त्री के चेहरे के संदर्भ में तो कभी इनका प्रयोग भी नहीं किया था। मुझे ये शब्द किसने सिखाए...? और ये चित्र में दिख रही महिला के लिए कितने उपयुक्त हैं! यह अवश्य ही हिंदुओं की कोई देवी होगी, जो मेरी कल्पना में मुझसे बात कर रही है। वह अवश्य ही कोई देवी होगी। किसी मनुष्य के चेहरे में इतनी चमक नहीं हो सकती।

याकूब की आवाज ने उसे घोर भ्रम में डूबने से बचा लिया।

'चलिए पन्ना पलटते हैं और पीछे की तरफ ध्यान से देखते हैं। शायद वहां कोई सुराग मिल जाए। यह औरत यकीनन कोई बेईमान और चरित्रहीन औरत नहीं है।'

पन्ना पलटते ही दाउद को महसूस हुआ कि उस पर किसी तरह की परत या अस्तर लगा हुआ है। शायद यह चित्र वाले कागज को मजबूती देने के लिए था, या फिर उसे तेल या नमी से बचाने के लिए। दाउद ने बड़ी सावधानी से पतले ब्लेड वाले कागज काटने वाले चाकू की नोक को परत और चित्र के बीच डाला और चित्र को नुकसान न पहुँचाते हुए, आखिरकार दोनों को अलग करने में सफल हो गया।

अब वह तस्वीर के पीछे, ठीक बीच में कुछ फ़ारसी लिपि देख सकता था; लिपि सुरुचिपूर्ण थी, लेकिन अनौपचारिक मुगल दस्तावेजों की तरह शिकस्तह शैली में थी। शिलालेख में यह लिखा था:

श्री राधा जी का काल्पनिक चित्र, जो बनिथानी के रूप में प्रसिद्ध हैं: परम प्रख्यात उस्ताद और अद्वितीय शिल्पकार मुहम्मद याह्या बदगामी कश्मीरी को भाईचारे और प्रेम से अर्पित किया गया उपहार; ईश्वर उन्हें दीर्घायु प्रदान करें और उनकी शिल्पकारी को और भी निखारें; गिरधर नाथ

चित्रकार द्वारा, जो घटियाली निवासी और राजपुताना के अजमेर प्रांत के किशनगढ़ के महाराजा, राजाओं के राजा के सबसे तुच्छ प्रजाजन हैं।

इस प्रकार चित्र का रहस्य सुलझ गया। वे श्री कृष्ण और उनकी पत्नी राधा के प्रेमपूर्ण चंचल स्वभाव और उनके खेल-खेल में देवत्व की अनुभूति से भलीभांति परिचित थे। वे बनिथानी का अर्थ या महत्व नहीं समझते थे, लेकिन अब यह स्पष्ट हो गया था कि यह सब व्यक्तिपरक और आस्था से संबंधित था: भक्ति, मोह और परम सौंदर्य। उन्हें अपने पिता के लिए चिंता करने या किसी प्रकार का अपराधबोध या शर्म महसूस करने का कोई कारण नहीं था।

वे बेशक इस बात से अनजान थे कि उस चित्र ने उनके पिता को कितना गहरा आघात पहुँचाया था, जो जीवन भर एक समझदार और अपनी भावनाओं पर नियंत्रण रखने वाले व्यक्ति रहे थे। फिर भी, दोनों भाई उनकी सुंदरता की आग को अपनी रगों और नसों में दौड़ते हुए महसूस कर सकते थे, जैसे सुबह की ठंडी हवा बैंगनी फूल की पंखुड़ियों को छूकर उन्हें नया जीवन दे देती है। उन्होंने एक-दूसरे को देखा और फिर अपनी निगाहें बनिथानी पर टिका दीं। जुड़वाँ होने के कारण, दोनों भाई एक-दूसरे की भावनाओं या इरादों को आसानी से समझ सकते थे या उनका अनुमान लगा सकते थे। अक्सर ऐसा होता था कि एक भाई वही शब्द बोल देता था जो दूसरा कहने वाला होता था। या अगर एक भाई किसी जगह घूमने की सोच रहा होता, तो दूसरा बिना किसी संदर्भ के उस जगह की प्रशंसा करने लगता। अगर एक भाई किसी से नाराज़ होता, या किसी के साथ कुछ करने का मन नहीं करता, तो दूसरे भाई को भी तुरंत उस व्यक्ति के बारे में वैसा ही महसूस होता। और यही कारण था कि अक्सर जब दोनों एक साथ गाते थे, तो दूर से सुनने वालों को लगता था कि केवल एक ही गायक है। यही एक कारण था कि उन्हें गायकों के रूप में पूरी तरह से अद्वितीय माना जाता था।

उसी समय दोनों ने चित्र से अपनी निगाहें ऊपर उठाईं। दाऊद ने कहा, 'किशनगढ़...'

याकूब ने कहा, 'हमारे दादाजी वहीं से आए थे।'

मैंने किसी को यह कहते सुना था कि दादी ने एक बार बाबा से पूछा था कि क्या उनका मन कभी किशनगढ़ के लिए तरसता है।

जी हां, और बाबा उस समय बहुत छोटे बच्चे थे। फिर भी, उन्होंने दादी से कहा कि वहां कोई ऐसा नहीं था जिसे वे अपना कह सकें। उन्होंने आगे कहा कि उनके पिता ने उन्हें अपना बना लिया था, और इसी तरह दादी ने भी उन्हें अपना बना लिया था। इसलिए उन्हें कहीं और जाने की जरूरत नहीं थी।

उनकी आँखों में आँसू भर आए। 'लेकिन अब यहाँ हमारा कोई अपना नहीं है।'

‘बाबा ने तस्वीर को बचाने और उसकी रक्षा करने में इतनी सावधानी क्यों बरती? मुझे लगता है कि उनके मन में कोई अच्छा कारण रहा होगा, या कोई औचित्य रहा होगा।’

‘इसमें क्या अच्छा कारण है और क्या औचित्य?’ दाउद अपने भाई की टिप्पणी के निहितार्थों से थोड़ा परेशान था। ‘वे दूर देश के कलाकार थे; वास्तव में, वे विदेशियों की तरह थे। यह उनकी ओर से एक उपहार था। बस इतना ही है।’

लेकिन मुझे कुछ अपशगुन दिखाई दे रहा है... कुछ ऐसा जो हमें दिखाया जा रहा है, जिसमें एक

छिपा हुआ संकेत है... और, भाई, क्या हमने यहाँ न रुकने का फैसला नहीं कर लिया है...?
'एक अजनबी देश, अजनबी लोग; हम उनकी भाषा नहीं जानते, न ही वे हमारी। हम उनके धर्म, उनकी मान्यताओं से अनभिज्ञ हैं; वे हमारी मान्यताओं से अनभिज्ञ हैं। ज़रा रुककर सोचिए। आप क्या कहना चाह रहे हैं?'
'हम अपने संगीत प्रदर्शनों और सामान की खरीद-बिक्री के लिए शहरों और कस्बों में घूमते रहे हैं। अजमेर या दिल्ली न जाना कोई मायने नहीं रखता। बेशक, लाहौर कई बार हमारा गंतव्य रहा है।'
लेकिन, भाई, क्या यह चित्र पूरी तरह से काल्पनिक नहीं है?
'सफल लोगों के लिए कोई भी द्वार बंद नहीं रह सकता। हम विचारों को वास्तविकता में बदलेंगे।'
उन्होंने इस विषय पर आगे कोई चर्चा नहीं की। उनके मन में यह स्पष्ट था कि उन्हें किशनगढ़ जाना ही है। वे वहाँ क्या करेंगे, यह स्पष्ट नहीं था और कम से कम उस समय तो यह महत्वपूर्ण भी नहीं लग रहा था। इसी प्रकार, यह प्रश्न कि वे किशनगढ़ में बसेंगे या केवल वहाँ घूमने जाएंगे, इस पर भी उन्होंने कोई विचार-विमर्श नहीं किया था।
उन्होंने घर खाली करना शुरू कर दिया। उन्होंने तुरंत ही घरेलू उपयोग की लगभग सभी चीजें दान कर दीं। उन पर कोई कर्ज नहीं था और न ही कोई करीबी रिश्तेदार था जिसे कोई बड़ी रकम या संपत्ति विरासत में मिल सके। इसलिए उन्होंने घर में मौजूद सभी कीमती चीजें गरीब रिश्तेदारों और अन्य जरूरतमंदों में बांट दीं। उन्होंने अपने उपयोग के लिए कुछ ही वस्तुएं और अधिकांश नकदी बचाकर रखी। जो कुछ भी बचा, उसे उन्होंने पास के एक स्कूल को भेज दिया। हालांकि, उन्होंने घर अपने पास रखा और उसकी देखभाल के लिए एक प्रबंधक नियुक्त किया, साथ ही उसके वेतन के लिए एक निधि भी स्थापित की। उनके मुख्य द्वार के सामने एक सख्त, पथरीली जमीन थी। उन्होंने काफी मेहनत और खर्च से उसे खुदवाया और अपने सभी संगीत वाद्ययंत्र और अन्य सामान उसमें गहराई में गाड़ दिए।
उन्होंने अपनी मां को अपने पिता के बगल में दफनाया और संगमरमर के एक पत्थर पर एक साधारण शिलालेख खुदवाया:
स्वर्ग की निवासी, बशीरुन्निसा बेगम: वह रक्त जिसे आपके प्रेम ने दूध में बदल दिया और जिससे आपने हमें पाला-पोसा, अब फिर से रक्त में बदल गया है और हमारी आँखों से बह रहा है। दाऊद और याकूब, उनके पुत्र और शोक मनाने वाले — हिजरा का 1207वाँ वर्ष
इसके कुछ ही समय बाद, वे बडगाम से लाहौर के लिए रवाना हुए। लाहौर से वे रेवाड़ी गए, उनका मार्ग कसूर, फिरोजपुर, मलेरकोटला और हिसार से होकर गुजरा। रेवाड़ी वह स्थान था जहाँ सोलहवीं शताब्दी के आरंभ में अफगान बादशाह शेर शाह द्वारा निर्मित सड़क पूर्व और दक्षिण की ओर दिल्ली की ओर मुड़ती थी। दिल्ली वहाँ से बहुत दूर नहीं थी, लेकिन उनके दिलों में राजपूताना की रेत-कंकड़ वाली भूमि का गीत गूंज रहा था; राजपूताना ने उनकी कल्पना को प्रेरित किया और उनका सबसे बड़ा जुनून था। तो दिल्ली से उनका क्या लेना-देना हो सकता था? उन्होंने मन ही मन दिल्ली की प्रशंसा में खुसरो का प्रसिद्ध श्लोक दोहराया और अपना मुख लोहारू और उससे आगे अलवार की ओर कर लिया।

दिल्ली न्याय और मार्ग की उपस्थिति, संरक्षक और रक्षक है; सत्यनिष्ठा का स्वर्ग है, यह सदा समृद्ध होता रहे।

अलवर में कई मुख्य सड़कें मिलती और अलग होती थीं। इनमें से एक सड़क सम्राट अकबर के समय की थी, जो बांदीकुई होते हुए आगरा को अजमेर से जोड़ती थी। यह वही प्रसिद्ध सड़क थी जिस पर अकबर ने तीन बार आगरा से अजमेर तक पैदल चलकर शेख मुइनुद्दीन चिश्ती के मकबरे पर श्रद्धांजलि अर्पित की थी। राजकुमार खुर्रम (जो बाद में सम्राट शाहजहाँ के नाम से जाने गए) ने अपने मेवाड़ अभियान के दौरान अलवर को जयपुर, बांदीकुई और फिर अजमेर से एक चौड़ी सड़क से जोड़ा था। किशनगढ़ जयपुर और अजमेर के बीच इस मुख्य सड़क के लगभग मध्य में स्थित था।

भाई किशनगढ़ पहुँचने के लिए इतने उत्सुक थे कि उन्होंने जयपुर के सवाई राजा जय सिंह द्वारा कुछ दशक पहले निर्मित प्रसिद्ध वेधशाला देखने के लिए एक दिन भी अतिरिक्त नहीं रुका। सवाई राजा की उपाधि का अर्थ है 'एक राजा और एक चौथाई', और यह उपाधि मुगल सम्राट औरंगजेब ने अपने प्रतिभाशाली सेनापति और दरबारी जय सिंह प्रथम को प्रदान की थी, ताकि साम्राज्य के अन्य सभी सेनापतियों और सरदारों के बीच जय सिंह के उच्च स्थान को दर्शाया जा सके। यह वेधशाला दूर-दूर से पर्यटकों को आकर्षित करती थी, लेकिन भाइयों की नज़र इस पर नहीं थी।

अलवर से जयपुर जा रहे इस काफिले में कई धनी यात्री थे। इनमें से अधिकतर जौहरी थे, जो रत्नों का व्यापार करते थे। कुछ लोग कीमती सूती और रेशमी कपड़ों के आयातक भी थे। चूंकि उनका अंतिम गंतव्य जयपुर था और वहां उन्हें काफी व्यापार करना था, इसलिए काफिले के अधिकांश लोगों ने जयपुर में ही यात्री से निवासी का दर्जा प्राप्त कर लिया। दाऊद और याकूब ने किसी दूसरे काफिले के आने का इंतजार न करने का फैसला किया; आखिरकार, किशनगढ़ की यात्रा तो सिर्फ तीन दिन की ही थी। उन्होंने चार उत्तम घोड़े खरीदे, एक सहायक को किराए पर लिया जो मार्गदर्शक का भी काम करेगा, और जयपुर पहुंचने के अगले दिन भोर से ठीक पहले किशनगढ़ के लिए रवाना हो गए।

जयपुर से कुछ ही मील दूर जाते ही उनकी आंखों के सामने दुनिया पूरी तरह बदल गई। सच है, लाहौर शहर में प्रवेश करने से पहले ही पेड़-पौधों, जीव-जंतुओं और भू-आकृति में बदलाव दिखने लगे थे। कसूर से आगे बढ़ते ही इरावली पर्वतमाला की छोटी, गर्म, धूसर और काली पहाड़ियाँ उनके सामने आ गईं। उनमें से अधिकतर पहाड़ियाँ किसी विशालकाय चट्टान की तरह लग रही थीं, मानो किसी दानव ने उन्हें बेतरतीब ढंग से इकट्ठा करके इधर-उधर फेंक दिया हो। इसलिए जयपुर के बाद का उनका सफर पूरी तरह अजीब नहीं लगा। बेशक, बहुत गर्मी थी। लेकिन कश्मीर में भी उस समय गर्मी पड़ रही थी, इसलिए मौसम की मार सहने की उनकी क्षमता के भीतर ही थी। जंगल तो वे अच्छी तरह जानते थे, लेकिन हिंद के इन इलाकों में पानी की कमी उन्हें हमेशा अचंभित करती थी।

अतीत में, उन्हें एक बार लाहौर के दक्षिण और पश्चिम में स्थित शुष्क क्षेत्र मुल्तान तक यात्रा करने का अवसर मिला था। लेकिन वहाँ भी, सूखापन और कंटीली झाड़ियों की बहुतायत उस स्थिति के सामने कुछ भी नहीं थी जिसका सामना उन्होंने अब किशनगढ़ जाने वाली सड़क पर किया। सड़क के दोनों ओर घनी और दूर-दूर तक फैली, लंबी, धूसर और भूरी कंटीली झाड़ियाँ भयावह लग रही थीं और उदासी और अवसाद का भाव पैदा कर रही थीं। उनके नाम भी अप्रिय और क्रोधी लग रहे थे: भटकतैया, झार बेरी, गोखरू, कुबबुल, करैल, थुहर, नाग-फानी। नाग-फानी एक अद्भुत पौधा था: इसका नाम 'कोबरा का फन' था और यह पौधा अपने नाम से भी अधिक भयानक था।

कुछ नाग-फनियों के पौधे (अगर वे सचमुच पौधे थे तो) झुंडों में उगते थे, जिनकी ऊँचाई ढाई या तीन गज, या उससे भी अधिक होती थी। उनके पत्ते—जिनमें से अधिकतर एक बड़े साँप के फैले हुए फन जैसे दिखते थे—मोटे, भारी और गहरे हरे रंग के थे, वास्तव में लगभग भूरे रंग के। कई नाग-फनियों में तना या डंठल न के बराबर था, और कुछ तो केवल लंबे तने ही थे। तना, डंठल या पत्ता, सब कुछ काँटों से ढका हुआ था। कुछ की शाखाएँ इतनी मोटी थीं कि वे हाथियों के लिए विशेष रूप से बनाई गई लंबी, लसलसी रोटियों जैसी दिखती थीं। लेकिन उनमें रोटी जैसा कुछ भी नहीं था। पत्ते और शाखाएँ कई आकारों में थीं, लेकिन वे सभी एक विशाल मांसाहारी खरगोश या जंगली गधे के कानों जैसी लगती थीं। ज़मीन के ऊपर कोई जड़ दिखाई नहीं देती थी, वे रेगिस्तान की ज़मीन से सीधे ऊपर की ओर उगती थीं, और इतनी मज़बूती से आपस में गुंथी हुई थीं कि कोई जानवर, मनुष्य तो दूर की बात है, उनके बीच से नहीं गुजर सकता था। उनके भयानक शरीर से कैंसर या फोड़े जैसी डरावनी आभा निकलती प्रतीत होती थी।

सड़क पर उनके पहले दो दिन शांतिपूर्ण रहे। तीसरे दिन सुबह की बिगुल और प्रस्थान हमेशा की तरह भोर से पहले ही हो गए। लेकिन कुछ ही घंटे बीते थे कि धूल भरी आंधी ने उन्हें घेर लिया। दरअसल, उनका रसोइया केवल सीधी सड़कों से ही परिचित था, जहाँ दूरी दर्शाने वाले मील-टावर दूर से ही दिखाई देते थे, ऐसी सड़कें जिन पर हर दस या चौदह मील पर छोटे-बड़े सराय बने होते थे। कभी-कभी रास्ते में छोटे-छोटे गाँव या उनके एक-दो निवासी भी मिल जाते थे जो आगे

के रास्ते के बारे में जानकारी दे सकते थे।
इस रास्ते पर चलते हुए तेज़ हवाओं ने सबसे पहले उनकी दिशा का ज्ञान ही छीन लिया। जहाँ तक उनकी नज़र जाती, वहाँ न कोई छायादार पेड़ था, न कोई छप्पर की छत, न ही किसी योगी की छोटी सी कुटिया। और भला वे कुछ देख भी कैसे सकते थे? चारों ओर इतनी धूल उड़ रही थी कि दृश्यता घटकर केवल दो-तीन गज रह गई थी। घोड़े बार-बार ठोकर खा रहे थे, जिससे उन्हें गिरने या चोट लगने का डर सता रहा था। हर कुछ मिनट में रुकना और चलना ही सबसे अच्छा विकल्प लग रहा था। लेकिन कुछ समय बाद वे दिशा का ज्ञान खो बैठे। उन्हें ऐसा लग रहा था मानो वे एक संकरे घेरे में घूम रहे हों। या शायद हर नए घेरे के साथ घेरे का केंद्र उनकी जानकारी के बिना ही बदल रहा हो: रास्ता, दिशा, सब कुछ मानो रेत का गुलाम हो गया हो। उन्हें पता ही नहीं चला कि कब वे सड़क छोड़कर जंगल में प्रवेश कर गए...
यह एक ऐसा निर्जन क्षेत्र था जहाँ छाया का नामोनिशान भी नहीं था। पानी का नामोनिशान भी नहीं था: मीलों तक नमी का अभाव था। न कोई झरना, न कोई कुआँ, न कोई तालाब, न कोई धारा, चारों ओर सन्नाटा पसरा था। यह ठीक वैसा ही था जैसा किसी ने कहा था: मैदान समतल और बंजर था, हथेली की तरह; और, ओह! वहाँ ईश्वर के हाथ के सिवा कुछ नहीं था। जैसे-जैसे सूर्य आकाश में ऊपर चढ़ता है, धड़कती हुई गर्मी और बेचैनी भी उसी अनुपात में बढ़ती जाती है; सूर्य की रोशनी और भी गर्म और कठोर होती जाती है। तेज धूप ने उन्हें ऐसी स्थिति में पहुँचा दिया था जहाँ उनकी प्यास बाकी सभी भावनाओं पर हावी हो गई थी। और क्योंकि उस निर्जन क्षेत्र में न तो पेड़ थे और न ही झाड़ियाँ, इसलिए वे अपनी भूख मिटाने के लिए न तो कोई फल, न कोई पत्ता, न ही कोई जंगली वनस्पति प्राप्त कर सके। यह कैसा निर्जन क्षेत्र था, ऐसा कि एलियाह और खिज्र जैसे पैगंबर भी असहाय होकर भटकते, उनके दिमाग चकरा जाते। महान योद्धा भी ऐसे विशाल निर्जन क्षेत्र को पार करने से डरते। पानी की कमी से वे अपना सिर ज़मीन पर पटकते और दम तोड़ देते। वे मुश्किल से तीन-चार मील ही चले थे कि सूरज आसमान में बहुत ऊपर चढ़ गया और उसकी किरणें इतनी तेज़ थीं कि उन्हें लगा जैसे वे बेहोश हो जाएँगे। किसी तरह उन्होंने होश संभाला, घोड़ों पर सवार हुए और आगे बढ़ गए। अब भूख और प्यास उन्हें इतना सता रही थी कि वे काठी पर नहीं बैठ सकते थे। और बेचारे घोड़े! उनकी हालत सचमुच दयनीय थी: प्यास से जीभ बाहर लटक रही थी, पैर हिलने से इनकार कर रहे थे, और इन सबके ऊपर सवार पीठ पर बैठा था। यह तो सारे रेगिस्तानों को मात देने वाला रेगिस्तान था! चारों ओर रेत के सिवा कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था। और अगर उन्हें कोई पेड़ जैसी चीज़ दिखाई देती और वे उसकी ओर इस उम्मीद में दौड़ते कि शायद थोड़ी देर उसकी छाँव में आराम कर सकें, तो पास पहुँचने पर उन्हें पता चलता कि वह पेड़ भी पानी की कमी से सूख चुका था: उस पर न पत्ते थे, न फल। बस तना था, और वह भी पूरी तरह से सूखा हुआ। दूर से भी अगर उन्हें कोई नदी या झरना दिखाई देता, तो वे पानी की उम्मीद में उसकी ओर दौड़ पड़ते। पास पहुँचकर उन्हें पानी नहीं मिलता। और अगर थोड़ा-बहुत पानी मिल भी जाता, तो वह इतना दुर्गंधयुक्त होता कि उसे देखते ही उन्हें उल्टी आने लगती। उन्होंने नदी में साँपों और अजगरों को तड़पते और छटपटाते देखा, जो भीषण गर्मी के कारण अपना ज़हर पानी में उगल रहे थे। यह

देखकर वे तुरंत उस जगह को छोड़कर आगे बढ़ जाते। अब हवा तेज़ चलने लगी, जिससे धूल और कंकड़ उनके शरीर पर ज़ोर से लगने लगे, और वे कण जलते हुए अंगारों की तरह गर्म महसूस होने लगे। और घोड़े प्यास से लगभग बेहाल हो चुके थे। अपने घोड़ों की दयनीय हालत देखकर वे नीचे उतरे और लगाम पकड़कर उन्हें आगे ले जाने की कोशिश की। लेकिन ज़मीन इतनी जल रही थी कि ऐसा लग रहा था जैसे उनके पैरों के नीचे स्टील की प्लेट गर्म करके रख दी गई हो। ज़मीन छूते ही उनके तलवों पर छाले पड़ जाते। वह वीरान मैदान प्रलय के मैदान जैसा था, जहाँ कहा जाता है कि सूर्य पृथ्वी पर मात्र सवा भाले की दूरी से चमकेगा। गर्मी इतनी असहनीय थी कि आगे बढ़ना नामुमकिन था; ऐसा लग रहा था मानो ज़मीन से लपटें निकल रही हों और आसमान से आग बरस रही हो। हवा इतनी गर्म थी कि एक झोंका भी शरीर को हड्डियों तक जला सकता था। किसी तरह सूर्य दोपहर के चरम बिंदु से नीचे चला गया; सूर्य की गर्मी और शक्ति थोड़ी कम हुई; हवा भी थमने लगी। लेकिन भूख और प्यास ने उन्हें एक कदम भी आगे नहीं बढ़ने दिया; और बेचारे घोड़े, ऐसा लग रहा था मानो उनका जीवन बस एक पल और बाकी है। भला उस बंजर और वीरान विशाल मैदान में घास या अनाज कैसे उग सकता था? मनुष्यों की तो बात ही छोड़िए, पक्षी और खुर वाले जानवर भी वहाँ बिल्कुल नहीं थे। अगर गलती से कोई बदकिस्मत जानवर, जैसे चील या गिद्ध, वहाँ भटक भी जाता, तो उसके पंख जलकर राख हो जाते और बेचारा पक्षी कबाब की तरह भुन जाता। अगर उनमें से कोई किसी तरह बच भी गया, तो वह ज्यादा दूर नहीं गया: उसकी हड्डियाँ कुछ ही गज आगे रेतीली धरती पर बिखरी पड़ी थीं। स्पष्ट था कि वह उड़कर जाने में असमर्थ था। हड्डियाँ, मानव हड्डियाँ, चारों ओर बिखरी पड़ी थीं; शायद कोई साहसी यात्री इस जगह पर आया होगा, और प्यास-भूख से मर गया होगा। कुछ मांसाहारी जानवरों की हड्डियाँ भी थीं; अजगरों से भरे गहरे गड्ढे थे। कुछ जगहों पर काली गुफाएँ दिखाई दे रही थीं; जाहिर है कि ये गुफाएँ भूतों का घर थीं। भूत के अलावा कोई और वहाँ जीवित नहीं रह सकता था। अंत में, पीला पड़ा हुआ और कांपता हुआ सूरज पश्चिम की ओर अपने ठिकाने में शरण लेने चला गया।

लेकिन याकूब और दाऊद के मन में यह बात बिल्कुल स्पष्ट थी कि आगे या पीछे जाना उनके लक्ष्य से और भी दूर भटकने की गारंटी मात्र थी। उन्होंने अपने शरीर को चादरों से कसकर लपेट लिया, यहाँ तक कि अपनी नाक और आँखों को भी ढक लिया। वे अपने घोड़ों से उतरे और चौपायों के शरीरों की काल्पनिक छाया में लेट गए। जैसे-जैसे दिन ढलने लगा, हवा धीमी होती गई। बौनी झाड़ियों और काँटेदार पौधों पर धूल धीरे-धीरे जमने लगी। अब सब कुछ दिखाई दे रहा था, लेकिन देखने लायक कुछ भी नहीं था। उस विशाल, परदेस में, पीड़ा और कष्टों से भरे रेगिस्तान में, उन्हें कोई रास्ता नहीं दिख रहा था; या रास्ता किसी चित्रित आँख से निकलने वाली रोशनी जैसा था। उन्हें कम से कम यह तो पता था कि उन्हें किस दिशा में जाना है: दक्षिण-पश्चिम, या दक्षिण-दक्षिण-पश्चिम। डूबता सूरज उनकी आँखों के सामने था, इसलिए उन्होंने यथासंभव अपने मार्ग का अनुमान लगाया; सड़क पर वापस लौटना अत्यंत आवश्यक था। इससे भी ज्यादा महत्वपूर्ण यह था कि उन्हें कोई भी ऐसी जगह मिल जाए - एक झोपड़ी, एक छोटा सा गांव, एक सराय - जहां वे किसी तरह की छत के नीचे रात बिता सकें, खुले स्थानों में छिपे भय

से मुक्त होकर।
याकूब और दाऊद खुशकिस्मत थे। या शायद वह शक्ति जिसने उन्हें उनके हरे-भरे घर से रेतीले, कंटीले रेगिस्तान में खींच लाया था, किसी न किसी तरह उनकी रक्षा कर रही थी। जो भी हो, एक घंटे की यात्रा के बाद उन्हें धुंधली, धूसर रंग की एक बसी हुई जगह दिखाई दी। फिर भेड़ों के छोटे-छोटे झुंड और गायों के एक-दो झुंड शांति से सिर हिलाते हुए अपने घर लौटते हुए दिखाई दिए। उनकी घंटियों की झंकार से हवा में एक सुखद नमी घुल गई। और भी दूर, ऊंटों के विशाल झुंड एक कतार में धीरे-धीरे उनकी ओर बढ़ रहे थे।
ये दृश्य उनके होश उड़ा रहे थे, मानो वे सपना देख रहे हों। जागने पर उन्हें वही विशाल, दुर्गम, निर्मल रेत दिखाई देगी, और उनकी बेबसी ही उनकी एकमात्र मार्गदर्शक और साथी होगी। उनका मार्गदर्शक हंस भी रहा था और रो भी रहा था। वह नए यात्रियों की तुलना में यात्रा के खतरों से कहीं अधिक अवगत था।

वे जल्द ही गाँव पहुँच गए; वास्तव में वह कोई गाँव नहीं था, बल्कि एक छोटा सा कस्बा था। पचास-साठ घर, कुछ पेड़, कुछ मवेशियों के झुंड जो कुपोषित लग रहे थे, एक मंदिर, एक कुआँ: बस यही सब उस गाँव को बनाते थे। जब वे कुएँ पर पहुँचे तो सूरज डूबने ही वाला था। हर तरह की और हर उम्र की औरतें थीं: जवान युवतियाँ, अधेड़ और युवा विधवाएँ, बच्चों की माताएँ जिनके बच्चे उनके निचले अंगों को ढकने वाले ढीले और फड़फड़ाते हुए छोटे से वस्त्र से चिपके हुए थे। उनके कपड़े बहुत ही फटे-पुराने थे। उनके चेहरों पर, बिना किसी अपवाद के, एक धुंधली, धूसर रोशनी की झलक के साथ थकान दिखाई दे रही थी: आगंतुकों ने निराशा के साथ महसूस किया कि वह रोशनी उदासी की थी; ये औरतें दुख की छाया में जी रही थीं। उनकी आँखों में चाँदनी की चमक का नामोनिशान भी नहीं था, जो संतोष का सबसे बड़ा धन है: विवाहित महिलाओं या आशा से भरे जीवन जीने वाली माताओं का सच्चा वरदान। चांदनी की रोशनी के बजाय, उनके चेहरे धूल की एक महीन चादर से ढके हुए प्रतीत हो रहे थे, जो उनके बीते दिनों का प्रतीक और आने वाले दिनों का पूर्वाभास दे रही थी। वे आपस में बातें कर रहे थे, लेकिन उन तोतों की तरह नहीं जो शाम के समय घर लौटते समय अपने साथियों से ध्वनि की चहचहाहट में आगे निकलने की होड़ में खुशी से आपस में चहचहाते हैं।

आगंतुकों ने दृश्य को थोड़ा और गौर से देखा। तब उन्होंने पाया कि अधेड़ उम्र की महिलाएं वास्तव में अधेड़ नहीं थीं। उनमें से कोई भी तीस या पैंतीस वर्ष से अधिक उम्र की नहीं होगी। लेकिन उनके चेहरों से जवानी किसी अनिश्चित समय में ही गायब हो गई थी। एकरस और कष्टदायक नियमितता के साथ गर्भवती होना, फिर बच्चों के पालन-पोषण का बोझ और अपने असंख्य घरेलू कर्तव्यों का दैनिक भार उठाना; माता-पिता के प्यार और दुलार के बजाय पति के घर पर डांट-फटकार और यहां तक कि मार-पीट सहना, और एक उदासीन पति; सबसे बढ़कर, निर्दयी भूमि, जो अपने बच्चों के साथ मैत्रीपूर्ण आतिथ्य सत्कार की भावना को नहीं समझती, और जानलेवा चरम जलवायु की कठिनाइयों को सहने की निरंतर दिनचर्या ने उनके शरीर और आत्मा दोनों को तोड़ दिया था। यह सच है कि उनकी कमर अब भी पतली थी, लेकिन उनके स्तनों और कूल्हों में जवानी की ताजगी और सुडौलपन की कमी थी। उनमें से प्रत्येक के सिर या कूल्हे पर पानी का एक भारी पीतल का घड़ा था; कुछ लोगों के तो दो-दो निशान थे, एक कूल्हे पर और एक सिर पर।

पानी भरने वालों में एक भी पुरुष या मजदूर नहीं था। पानी भरने के लिए इस्तेमाल की जाने वाली धातु की बाल्टी काफी पुरानी, बड़ी और चौड़े मुंह वाली थी, जिसका निचला हिस्सा थोड़ा संकरा था। वर्षों के उपयोग से उसमें कई छोटे-छोटे छेद हो गए थे। बाल्टी इतनी बड़ी थी कि कोई महिला उसे पूरी तरह भरकर नहीं भर सकती थी; वे उसे तब तक भरती थीं जब तक वह पूरी तरह भरी न हो, और इस दौरान उसमें से पानी रिसता या छिटकता रहता था। इस प्रकार, एक बार में भरा गया पानी केवल एक घड़ा भर पाता था। कुएं पर मौजूद हर महिला पानी भरने के बीच आराम करती थी, और दूसरी महिला तुरंत उसकी जगह ले लेती थी; फिर भी, कुएं के

आसपास मौजूद महिलाओं का समूह धीरे-धीरे कम होता जा रहा था।
नए आए लोग उचित दूरी से देख रहे थे; एक घंटा या उससे थोड़ा कम समय बीत गया। वे बेसब्री से उचित समय की प्रतीक्षा कर रहे थे ताकि वे पास जाकर ठंडा, ताज़ा पानी पी सकें और रात आराम से बिताने के लिए जगह के बारे में पूछताछ कर सकें। लेकिन उनमें इतनी हिम्मत नहीं थी कि वे उन महिलाओं के समूह पर दबाव डालें जिनसे वे पूरी तरह अपरिचित थे। वे तटस्थता का दिखावा करते हुए खड़े रहे, अपने घोड़ों की लगाम कसकर पकड़े हुए।
उन्होंने कुछ और धैर्य बनाए रखा और आगे बढ़ने का साहस तभी किया जब कुछ ही महिलाएं बची थीं। उनके घोड़े भी, इतने लंबे समय तक ताज़ा पानी की गंध सूंघने के बाद, अब हिनहिना रहे थे और अपने खुर ज़मीन पर पटक रहे थे। उन्होंने घोड़ों को आगे बढ़ने दिया और महिलाओं को ध्यान से देखा। जो लगभग अंत में थीं, उनमें दो लड़कियां थीं। लगभग पंद्रह या सोलह वर्ष की आयु की, प्रत्येक ने अपने सिर पर दो घड़े रखे हुए थे। घड़े खाली थे; फिर भी, उनका वजन इतना था कि उनकी पीठ थोड़ी झुक गई थी। उन्होंने अपनी ओढ़नी को अपने धड़ के चारों ओर कसकर लपेटा हुआ था। इससे, और उनकी थोड़ी झुकी हुई पीठ से, उनके युवा स्तन उभरे हुए दिख रहे थे, लेकिन उनमें वह चंचलता नहीं थी जो उनकी उम्र की लड़कियों में किशोरावस्था से स्त्रीत्व में प्रवेश के दौरान विकसित होती है। लेकिन उनकी पतली गर्दनें, हिरण की तरह उठी हुई, और उनकी आंखों की सतर्कता किसी न किसी तरह आगंतुकों के लिए एक वादा करती हुई प्रतीत हो रही थी।

वे बाकियों से अलग खड़े थे। शायद वे अकेले थे और महिलाओं में उनका कोई रिश्तेदार नहीं था। वे दबी आवाज़ में आपस में बातें कर रहे थे। दोनों भाइयों को लग रहा था कि भले ही उन्होंने इस दिशा में सचेत प्रयास किए हों, फिर भी उनके मन में प्रेम और आकर्षण की भावना अभी भी जागृत थी।
दोनों लड़कियों ने मोटे सूती कपड़े की चौड़ी स्कर्ट पहनी हुई थी, जिस पर नारंगी और गुलाबी धारियाँ थीं और किनारी पर छोटे फूलों के डिज़ाइन बने हुए थे। उनके हल्के हरे और पीले रंग के ट्यूनिक भी सस्ते सूती कपड़े के थे, लेकिन स्कर्ट से थोड़े अधिक आकर्षक थे। उनकी चमकीली लाल और पीली ओढ़नी, जिसे राजपूताना में चुनरी कहते हैं, चूरू से थी, जो अपने टाई-एंड-डाई हल्के सूती कपड़ों के लिए प्रसिद्ध एक छोटा सा शहर है। अपने क्षेत्र की औसत लड़कियों की तुलना में लंबी, वे दुबली-पतली और सुडौल थीं; उनके चेहरे अंडाकार थे, उनकी आँखें गहरे भूरे रंग की थीं, जिनमें हल्की लाल धारियाँ थीं, जिससे ऐसा लगता था मानो उन्होंने कोई हल्का नशीला पदार्थ पिया हो। उनके बाल घने और मोटे थे, लेकिन बहुत लंबे नहीं थे। उनकी चमकीली काली लटों की एक-दो लटें उनके चेहरे को घेरे हुए थीं और हवा में हल्के से लहरा रही थीं। दोनों ने गले में काला धागा पहना हुआ था; भारी हाथीदांत की चूड़ियाँ उनकी गोल, सुडौल कलाइयों से चिपकी हुई थीं; उनकी नाक पर सादे सोने के पिन लगे थे और कानों में पतले सोने के छल्ले थे। उनके स्कर्ट ज़्यादा नीचे तक नहीं थे, इसलिए टखनों से घुटनों तक के पैर का अच्छा-खासा हिस्सा खूबसूरती से दिखाई दे रहा था। उन्होंने साधारण चांदी की पायल पहनी थी, लेकिन वे नंगे

पैर थीं। हैरानी की बात यह थी कि उनकी उंगलियां बदसूरत और फैली हुई नहीं थीं, जैसा कि आमतौर पर नंगे पैर चलने वाले लोगों में होता है।

लड़कियाँ कभी-कभार युवा यात्रियों की ओर देखती थीं, लेकिन यह क्रिया हमेशा अनैच्छिक और आकस्मिक प्रतीत होती थी। फिर भी, आँखें तुरंत नीचे नहीं होती थीं, मानो किसी सभा में दो लोगों की उंगलियाँ गलती से छू जाएँ, लेकिन तुरंत अलग न हो पाएँ।

आकाश से अंधेरा छाने लगा था; भाइयों ने देखा कि उन्हें तुरंत कार्रवाई करनी होगी, क्योंकि पूरी तरह अंधेरा होने में ज्यादा समय नहीं बचा था और दोनों जलपरियां उसमें गायब हो जाएंगी। वे अपने घोड़ों को पास ले आए। दोनों लड़कियां अभी भी कुएं से भारी बाल्टी खींचने की कोशिश कर रही थीं, लेकिन उसमें पर्याप्त पानी नहीं भर पा रही थीं।

'कृपया। आप कुएँ से दूर आ सकते हैं। हम आपके लिए पानी भर देंगे,' याकूब ने किसी विशेष व्यक्ति से नहीं कहा।

लड़कियों ने अपनी भोली-भाली आँखें ऊपर उठाईं; उन्होंने उन दोनों को देखा जो अब उनके बहुत करीब थे, फिर पीछे मुड़कर देखा। पानी भरने वालों की कतार अभी ज़्यादा दूर तक नहीं पहुँची थी। उनकी नज़दीकी लड़कियों की सुरक्षा की गारंटी जैसी थी। हल्की सी मुस्कान के साथ वे कुएँ से पीछे हट गईं। हालाँकि उनकी मुस्कान में कोई व्यक्तिगत भाव नहीं था, फिर भी उन दोनों आगंतुकों को लगा कि यह कृपा उन्हीं के लिए थी।

'हम प्यास से लगभग मर रहे हैं,' दाऊद ने बाल्टी को कुएँ में डालते हुए कहा। 'अगर अनुमति मिल जाए, तो हम भी थोड़ा पानी पी लेंगे और अपने जानवरों को पानी पिला देंगे।'

फिर वही हल्की सी मुस्कान, लेकिन इस बार सिर हिलाने के हल्के इशारे के साथ। अब लड़कियों के शरीर, उनकी चाल में कोई तनाव नहीं था, मानो उस संक्षिप्त मौन आदान-प्रदान ने उनके डर को शांत कर दिया हो। दोनों कुएँ के चौड़े पत्थर के किनारे पर आराम से बैठ गईं। देखते ही देखते, युवा यात्रियों ने लड़कियों के चारों घड़े भर दिए। इससे पहले कि वे अपने घड़े उठाने के लिए झुक पातीं, यात्रियों ने अपने सामान से नक्काशीदार तांबे के चार भारी प्याले निकाले; फिर उन्होंने एक घोड़े की काठी से लटके थैले से मुट्ठी भर बादाम, अखरोट और सूखे खुबानी निकाले। उन्होंने फलों को दूसरे प्याले में डाला और पानी के साथ लड़कियों को दे दिया।

'कृपया, हमें साथ दीजिए,' भाइयों में से एक ने मुस्कुराते हुए कहा।

'जी हां, बिल्कुल,' दूसरे ने कहा। 'तुम्हें भी प्यास लगी होगी।'

लड़कियां कुछ पल तक देखती रहीं, और फिर उन्होंने उस गाइड की ओर देखा जो कुछ दूरी पर खड़ा था और घोड़ों के लिए पानी की व्यवस्था कर रहा था।

'ये लोग कौन हैं और हमें क्या खाने को दे रहे हैं?' बड़ी लड़की ने उससे मारवाड़ी में पूछा। उसकी आवाज़ में परिपक्वता और मासूमियत का अनूठा मिश्रण था। उसकी आवाज़ में किशोरावस्था से यौवन की अवस्था तक पहुँचने का भाव था, लेकिन साथ ही यह भी स्पष्ट था कि उसे भोली नहीं समझना चाहिए: वह दुनिया और उसमें रहने वाले लोगों के बारे में अच्छी तरह जानती थी।

गाइड को समझ नहीं आ रहा था कि क्या कहे। उसने स्पष्ट रूप से कुछ जादुई, कुछ विद्युतीय आवेग महसूस किया था, लेकिन अभी तक उसका अर्थ या महत्व नहीं समझ पाया था। उसके

मन में यह बात स्पष्ट थी कि उसे सच बोलना चाहिए, लेकिन उसे यह पक्का नहीं था कि उसके मालिक उससे सच बोलने की उम्मीद करते हैं या नहीं।
उन्होंने सावधानी से कहना शुरू किया, 'ये लोग कश्मीर से हैं। मैं उनकी जाति या धर्म के बारे में कुछ नहीं जानता, सिवाय इसके कि वे तुर्क हैं और उनका व्यवहार बहुत अच्छा है। उनके प्याले में कश्मीर के फल हैं। इन्हें सूखा ही खाया जाता है।'
दाऊद और याकूब 'तुर्क' और 'कश्मीर' शब्दों को अच्छी तरह समझ सकते थे। उन्हें मारवाड़ी भाषा नहीं आती थी, लेकिन अब तक वे अपनी सीमित हिंदी से काम चला रहे थे। अब वे गाइड की बातों का सामान्य अर्थ समझ सकते थे।

याकूब थोड़ा आगे बढ़ा और बोला, 'इन फलों का आपके रीति-रिवाजों या आपके धर्म से कोई विरोध नहीं है। हम पैगंबर की आस्था की मूल प्रतिज्ञा का पालन करते हैं और भोजन संबंधी मामलों में धार्मिक स्वच्छता और उचित पालन का विशेष ध्यान रखते हैं।'
याकूब के शब्द जानबूझकर इस तरह से चुने गए थे कि वे किसी हिंदू को ठेस न पहुंचाएं और किसी मुसलमान को संतुष्ट कर दें। लड़कियों में से बड़ी के होठों पर हल्की सी मुस्कान आ गई। उसने अपने गले में बंधे काले धागे पर हाथ रखा और उसका एक हिस्सा खींचकर देखा तो पता चला कि उसमें हिंदू धर्म से जुड़ी कोई बात नहीं थी। धागे में एक पतला, चांदी का ताबीज पिरोया हुआ था, जिस पर अरबी लिपि में 'अल्लाह' शब्द स्पष्ट रूप से खुदा हुआ था। उसके शरीर की उस छोटी सी हरकत में भी एक ऐसी लय और सूक्ष्मता थी, जो किसी भी तरह के मोहक अभ्यास से नहीं आ सकती थी।
ताबीज और उसे धारण करने वाले के चेहरे की चमक को देखकर दाऊद ने हिम्मत दिखाते हुए व्यक्तिगत संदेश दिया: 'कृपया हमें अपना शुभचिंतक और मित्र समझें। मैं कश्मीर का दाऊद हूँ और यह मेरा जुड़वा भाई याकूब है। हम व्यापारी हैं, लेकिन हमें संगीत और गीत का भी शौक है। हमारे दादाजी चित्रकार थे। वे मूल रूप से इसी जगह, किशनगढ़ के रहने वाले थे...'
वह एक पल के लिए रुका, लेकिन याकूब ने बात आगे बढ़ाते हुए कहा, '...और वह बहुत पहले मर गया।' उसने आगे कहा, 'हमारे न तो पिता हैं और न ही माता। हम अपने पहाड़ी इलाके को छोड़कर तुम्हारी इस कठोर भूमि पर आ गए, इस उम्मीद में कि हमें रहने के लिए कोई जगह मिल जाएगी।'
उसने गंभीर स्वर में बात की और अचानक उसके अपने ही शब्दों का उस पर इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि उसकी आँखें नम हो गईं। उसने सुना था कि यदि कोई शाम को बिना किसी कारण के अचानक रोने लगे, तो स्वर्गदूतों का एक समूह उसके सिर के ऊपर से गुजरकर पश्चिम की ओर ढलते सूरज की हल्की रोशनी में विलीन हो जाता है।
इन अप्रत्याशित मेहमानों के आकर्षक रूप और परिष्कृत वाणी का लड़कियों पर उतना प्रभाव नहीं पड़ा जितना याकूब की आँखों में उमड़ते आँसुओं का। अचानक आवेग में आकर छोटी लड़की उठकर याकूब के पास सांत्वना देने जाने ही वाली थी कि बड़ी लड़की ने उसे रोक दिया, हालाँकि वह भी थोड़ा विचलित और परेशान थी क्योंकि उसने देखा कि दूसरे भाई की आँखों में

भी आँसुओं की हल्की सी झलक थी।
प्रेम का सूर्य, उदय होने से पहले ही, अपनी ऊष्मा से पृथ्वीवासियों के कठोर हृदयों को पिघला देता है; यह सूखी मिट्टी को गर्म कर देता है और जीवन की ज्वाला को प्रज्वलित कर देता है। युवाओं और बूढ़ों को चेतावनी दो: प्रेम अग्नि है। लड़कियाँ कोई उपाय नहीं सोच पा रही थीं, सिवाय इसके कि वे भाइयों के रहस्यों का उत्तर अपने रहस्यों से दें और इस प्रकार यात्रियों के हृदयों में तनाव कम करें।

'सर, मेरा नाम हबीबा है,' उसने झुकी हुई निगाहों से कहा। 'और... और यह मेरी छोटी बहन जमीला है... मुझसे दो साल छोटी...'
'...और हम भी अनाथ हैं,' जमीला ने जल्दी से कहा। 'हम इस दुनिया में अकेले हैं।'
दोनों लड़कियों की हिंदी में उनके इलाके में बोली जाने वाली मारवाड़ी की कठोर बोली के साथ-साथ मधुर ब्रज हिंदी की झलक भी थी। यात्रियों को इन बारीकियों का ज़रा भी अंदाज़ा नहीं था। उनके लिए, लड़कियों की मधुर आवाज़ और उनके होठों से निकले मीठे शब्द ही उन्हें मंत्रमुग्ध करने के लिए काफी थे।
'चुप रहो!' हबीबा ने उसे घूरते हुए कहा। 'हमारे पास हमारे बाबू हैं, है ना?' उसने अपना लहजा नरम करते हुए कहा। 'अब और फालतू बातें नहीं। चलो अब घर चलते हैं। मुझे नहीं पता कि लोग हमारे यहाँ रुकने का क्या मतलब निकालेंगे।'
'नहीं, कृपया!' दाऊद ने कहा। 'थोड़ी देर और रुकिए! पानी भरना और ढोना आपके लिए बहुत मुश्किल काम होगा। क्या आपके पास घरेलू नौकर नहीं हैं?'
'घरेलू नौकरानियाँ?' जमीला ने धीमी आवाज़ में दोहराया। 'क्या तुम्हारा मतलब नौकरों से है? नहीं। हमारे यहाँ कोई घरेलू नौकरानी नहीं है। सारा काम औरतें ही करती हैं।' यह कहते हुए उसने अपनी हथेलियाँ खोलीं और फैलाईं। हालाँकि रोशनी तेज़ी से कम हो रही थी, फिर भी उन पर गहरे भूरे रंग के कठोर निशान साफ़ दिखाई दे रहे थे।
'कितना दुखद! ठीक है, तो आपको हमें अपने नौकरों के रूप में काम पर रखना होगा। इससे हमारे सिर पर छत तो होगी।'
'सचमुच, प्यारे कश्मीरी सज्जनों! आपके सुंदर दिमागों में क्या विचार चल रहे हैं!' जमीला ने चंचल मुस्कान के साथ कहा। रेगिस्तान के यात्रियों की कोमलता और उनकी मीठी बातों ने उसे हिम्मत दी थी।
'चुप रहो, मूर्ख चुड़ैल!' हबीबा ने उसे पूरी गंभीरता से डांटा। 'क्या तुम्हारा दिमाग खराब हो गया है?'
जमीला ने उसकी बात अनसुनी कर दी और दाऊद को ताने मारना जारी रखा। 'जाओ किसी झील में कूद जाओ। हमारी सेवा करना तुम्हारी प्यारी चाची के घर में समय बर्बाद करने जैसा नहीं है, समझे?'
इन शब्दों में गहरा अर्थ छिपा था, और दाऊद और याकूब दोनों ही इनका अर्थ निकालने से हिचकिचा रहे थे, फिर भी दोनों झिझक रहे थे। वे अंतरंगता के स्तर को जल्दी पार नहीं करना

चाहते थे। दाऊद ने फलों का कटोरा आगे बढ़ाया, घुटनों के बल बैठ गया, जमीला के पास आकर बोला मानो उनके बीच कोई और बातचीत हुई ही न हो। उसने कहा, 'लो, थोड़ा सा खा लीजिए। थोड़ी देर और रुकिए।'

अत्यंत संकोच के साथ हबीबा ने पानी का एक छोटा सा घूंट पिया। हालांकि वह मुस्लिम थी, लेकिन हिंदू धर्म के अनुसार वह किसी भी अजनबी व्यक्ति, चाहे वह स्त्री हो या पुरुष, को छूने या उनके बर्तनों और प्लेटों में खाने से हिचकती थी, क्योंकि उसे अपवित्रता का डर रहता था। फिर भी, अजनबियों का व्यवहार और उनकी बातचीत में एक अनोखा आकर्षण था; उनका आग्रह ठुकराने का उसका मन नहीं हुआ। हबीबा का अनुसरण करते हुए, जमीला एक कदम आगे बढ़ी। उसने कटोरे से कुछ बादाम उठाए और चबाने लगी।

‘आपके घर में खाना कौन बनाता है?’ चूंकि कहने लायक बातें आसानी से नहीं कही जा सकती थीं, इसलिए याकूब ने उन्हें जाने से रोकने के लिए बातचीत का एक कमजोर दांव खेला।

‘हमने शाह आलम बादशाह गाज़ी की विशेष रसोई से मुख्य रसोइए को नियुक्त किया है,’ जमीला ने कहा। उसकी आवाज़ सपाट और तथ्यात्मक थी।

हबीबा ने उसे फिर से डांटा, और हमेशा की तरह 'तू' शब्द का प्रयोग करते हुए कहा: 'चुप रहो, तुम! मुझे इस तरह की बकवास और हंसी-मजाक बिल्कुल पसंद नहीं है।'

फिर उसने नए आए लोगों से कहा, ‘महोदय, मुझे आपकी बात समझ नहीं आ रही। आप कहाँ से आए हैं? क्या हम अपने लिए खाना नहीं बना सकते? और हम कितना खाते हैं? अगर ईश्वर हमें सूखी रोटी और एक कटोरी दाल दे दे तो हम उसका धन्यवाद करते हैं। कभी-कभी तो हमें वह भी नहीं मिलता।’

‘हम चाहते हैं कि आप हमारे साथ भोजन करें। क्या आप हमारे साथ भोजन करेंगे?’

‘माफ़ कीजिए!’ हबीबा ने थोड़ी झुंझलाहट और एक व्यंग्यात्मक हावभाव के साथ कहा। ‘बचपन में हमें सिखाया गया था कि कुछ लोग मेजबान पर ज़बरदस्ती करते हैं, भले ही वे अवांछित और अनचाहे हों। लेकिन आपकी नदी तो ढलान के विपरीत बह रही है!’

दाऊद मुस्कुराया। 'कृपया हमें मेहमान या परदेसी न समझें। हमें अपने घर के सदस्यों की तरह मानें।'

यह दोहरा अर्थ जानबूझकर व्यक्त किया गया था, और लड़कियों को इसका मतलब स्पष्ट हो गया था। उनके कान लाल हो गए।

‘नहीं। हमें अब चलना चाहिए,’ हबीबा ने कहा। ‘बाबू सोच रहे होंगे कि हम कहाँ चले गए। क्या आपने पानी पी लिया?’

‘खैर... हमने पानी तो पिया, लेकिन हमारी प्यास नहीं बुझी।’

‘दरअसल, हमने पानी पिया, लेकिन किसी ने हमसे हमारी जाति और धर्म के बारे में नहीं पूछा!’ जमीला ने थोड़े तीखे लहजे में कहा, 'ठीक है, महोदय, जी भर के पीजिए, लेकिन कृपया हमारा मजाक मत बनाइए, समझे? क्या आपको सच में प्यास लगी है या आप हमसे मजाक कर रहे हैं?'

“नहीं, मैं अपनी जान की कसम खाकर कहता हूँ, हमें बहुत प्यास लगी है। आओ, मुझे अपने

हाथों की हथेली से पानी पिलाओ।" यह कहकर दाऊद ने पानी का प्याला जमीला को वापस दे दिया और उसके सामने पैर मोड़कर बैठ गया, जैसे कोई याचना करता है। हथेलियाँ फैलाकर वह मानो भीख माँग रहा हो, मानो प्रार्थना न कर रहा हो।

दोनों बहनें अब तक यथासंभव दूरी बनाए हुए थीं, भाइयों को नवोदित और अजनबी समझकर उनके साथ सही व्यवहार कर रही थीं। अब जमीला, किसी अपरिचित आंगन में गलती से आ बैठी कबूतर की तरह छोटे-छोटे कदमों से दाऊद के पास पहुंची और प्याले से पानी उसके खुले हाथों में डालने लगी। उसकी नजर दाऊद के हाथों पर नहीं, बल्कि उसके झुके हुए सिर पर थी। उसे इस बात का एहसास नहीं हुआ कि दाऊद अपनी पलकों के नीचे से उसे देख रहा था और पानी पी नहीं रहा था, जो उसकी जानकारी के बिना ही जमीन पर बह रहा था, जब तक कि प्याला खाली नहीं हो गया। अब जमीला को समझ आया कि क्या हो रहा था। थोड़ी शर्मिंदा और काफी गुस्से में, उसने प्याला फेंक दिया और चिल्लाई, 'महाराज, आपका भाग्य अच्छा हो! आपने प्यास से मरने का नाटक किया और पूरा प्याला पानी बर्बाद कर दिया! क्या आपको शर्म नहीं आती?'

इस बीच हबीबा की निगाहें याकूब पर टिकी थीं, जिसकी आँखों में मानो उसके लिए कोई छुपा संदेश था। अब काफी रात हो चुकी थी, शाम ढलते ही चारों ओर अंधेरा छा गया था। रेगिस्तान में जन्मी, नाजुक हड्डियों वाली और डरपोक लड़कियाँ, चीनी मूर्तियों जैसी, वहाँ रुकने की हिम्मत नहीं जुटा पा रही थीं। दूल्हे की मदद से, उन्होंने अपने-अपने सिर और कमर पर दो-दो घड़े उठाए और भाइयों पर एक सरसरी नज़र डालते हुए कुएँ के किनारे से नीचे उतरकर अंधेरी गली में तेज़ी से कदम बढ़ा दिया। भाइयों ने बार-बार पुकारा, 'कृपया, कृपया सुनो...', लेकिन उन्होंने कोई ध्यान नहीं दिया।

वातावरण में अंधेरा बढ़ता जा रहा था। लड़कियाँ देखते ही देखते ओझल हो गईं।

दाऊद और याकूब ने कुएँ पर ही रुकना बेहतर समझा और अपने नौकर को गाँव में या उसके आस-पास ठहरने की जगह पता करने के लिए भेज दिया। दोनों भाइयों के मन में यह बात पक्की तरह बैठ गई थी कि अब वे कहीं नहीं जाएँगे। यह ठीक वैसा ही था जैसा पहले हमेशा होता आया था: यह विचार उनके मन में अनायास ही और एक साथ आया; इसे व्यक्त करने की कोई आवश्यकता नहीं थी। वे सहज रूप से जानते थे कि वे कहीं भी नहीं पहुँचेंगे, चाहे वे कहीं भी चले जाएँ। हर जगह एक ही मंज़िल थी और मंज़िल तक पहुँचने का रास्ता भी एक ही था। जैसा कि फ़ारसी कवि ने कहा है:

हम चाहे जितना भी चलें, हम कहीं नहीं पहुँचते: रेत चाहे कितनी भी खिसकती रहे, पर वह रेगिस्तान से बाहर निकलने का रास्ता कभी नहीं खोज सकती।

लगभग आधे घंटे में गाइड शाहजहाँ के ज़माने की एक सराय के बारे में खबर लेकर लौटा। यह गाँव से लगभग पाँच मील दूर थी, और सड़क पर तो नहीं थी, लेकिन उससे ज़्यादा दूर भी नहीं थी। उन्होंने दक्षिण-पश्चिम दिशा पकड़ी और लगभग पौने घंटे में सराय पहुँच गए। मुख्य सड़क वहाँ से बीस मिनट की दूरी पर थी।

उस रात जुड़वा बच्चियों को मुश्किल से नींद आई। पूरी रात वे कुएँ, पानी और उन बड़ी-बड़ी गहरे भूरे रंग की आँखों के बारे में सोचती रहीं; वे उन बड़ी आँखों में डूबती और तैरती रहीं; वही

चुलबुली बातें, वही खुला दिल, लड़कियों की वही छोटी-छोटी स्वागत भरी अदाएँ। एक तरफ, उनकी कल्पनाएँ इतनी तेज़ी से बदलती और इतनी विविध थीं कि लाख कोशिशों के बावजूद वे लड़कियों के व्यक्तित्व, उनकी आवाज़ की मधुरता, उनके प्यार भरे शब्दों की मिठास को पूरी तरह से याद नहीं कर पाईं—क्योंकि उन्हें यकीन था कि उन सीधे-सादे शब्दों के नीचे कहीं न कहीं प्यार छिपा हुआ है। कभी-कभी वे उनके हाव-भाव, उनके शरीर के इशारों से निकले किसी शब्द को पकड़ पातीं; कई बार, बहुत सी चीज़ें दूर से एक हल्की सी चमक की तरह दिखाई देतीं, जैसे कोई भोर का तारा उन्हें अपने पीछे आने का इशारा कर रहा हो, और फिर उनके विचारों के अगले मोड़ पर गायब हो जातीं।

फिर भी, दूसरी ओर, उन्हें ऐसा प्रतीत हो रहा था कि हर समय उनकी आत्माएँ—और केवल उनकी आत्माएँ ही नहीं, उनका शरीर भी—एक शीतल हरे-नीले प्रकाश से प्रकाशित थीं, जिसका स्रोत एक ऐसा प्राणी था जिसे वे नहीं जानती थीं या पहचानती नहीं थीं। उनके शरीर कोमल तरंगों के प्रभाव से कांप रहे थे। कल क्या होगा, कौन जाने? लेकिन एक बात निश्चित थी: रेगिस्तान की उन दो हूरों का प्रेम अब उनके दिलों में इस कदर समा चुका था कि उनके लिए कहीं और जाना, या अपनी योजना के अनुसार किशनगढ़ जाना असंभव सा लग रहा था।

यद्यपि तुम्हारी चंचल, व्यंग्यात्मक सुंदरता तुम्हें एक जगह टिकने नहीं देती, फिर भी तुम उस हृदय से कभी बाहर नहीं निकलती जिसे तुमने अपना घर बना लिया है।

बिना किसी आपसी सलाह-मशविरे या अपने दावे पर चर्चा किए, जुड़वा बहनों ने तय कर लिया था कि जमीला याकूब की उम्मीदों का घर है, जबकि हबीबा दाऊद के दिल की ख्वाहिश रखती है। उनकी ये मुहिम कैसे कामयाब होगी? उन्हें कोई अंदाजा नहीं था। और अगर वे कामयाब नहीं हुईं, तो फिर क्या होगा? क्या लड़कियों को जबरदस्ती ले जाया जाएगा? भगवान न करे! कितने घिनौने विचार हैं!

भोर होने से पहले ही जुड़वां भाई बेचैनी से अपनी नींद से उठ गए। रिवाज़ के विपरीत, उन्होंने देर तक स्नान किया, बालों में हल्के से अगरबत्ती का तेल लगाया; उतनी ही हल्की सुगंध से उन्होंने अपनी दाढ़ी और गर्दन पर चंदन से निकाला हुआ हल्का इत्र लगाया। दोनों ने अपने गले में एक बड़ा, अंडाकार, धूसर पुखराज जड़ा हुआ सोने का ताबीज़ पहना। उनके कपड़े भी एक जैसे थे। उन्होंने फूलों की धारियों वाले कपड़े की लंबी, ढीली कमीज़ पहनी थी; लद्दाखी ऊन के एक छोटे से हिस्से ने इसे मजबूती दी थी, जिससे यह फड़फड़ाती नहीं थी। उनकी सलवार भी उतनी ही ढीली थी। ऊपरी वस्त्र के रूप में, उन्होंने बुखारा के हल्के नीले मखमल से बनी जैकेट पहनी थी; उनकी गर्दनें तुर्की शैली में चौड़ी थीं, लेकिन नीचे सफेद नीलम के तीन बटन लगे थे। उन्होंने बनारस में बनी लाल और हरे रेशम की चौड़ी कमरबंद पहनी थी, जिसे जैकेट के नीचे कमर के चारों ओर स्कार्फ की तरह कसकर बांधा गया था। बाईं ओर, उन्होंने एक बहुत लंबा और पतला खंजर लटका रखा था, जो पेननाइफ की तरह नाजुक था। खंजर को आबनूस की म्यान में रखा गया था, जिस पर नक्काशी की गई थी और चांदी से जड़ा हुआ था, यह व्यवस्था कमरबंद और जैकेट के साथ बहुत अच्छी तरह मेल खा रही थी।

उनके सिर पर बेहद मुलायम और चिकने चिंट्ज़ के औपचारिक पगड़ी बंधे थे, लेकिन उस समय

के फैशन के अनुसार पगड़ी कुछ ढीली और बेपरवाह ढंग से बंधी हुई थी। उन्होंने सफेद हिरण की खाल से बनी मुगल शैली की चप्पलें पहनी थीं; ऊपर से लंबी और पीछे से खुली हुई, ये चप्पलें सवार के पैरों पर मजबूती से खड़े रहने के कौशल की परीक्षा लेती थीं, खासकर जब वह पूरी रफ्तार से घुड़सवारी कर रहा होता था। हालांकि उस समय तक फीते वाले अंग्रेजी शैली के जूते पूरी तरह से अपरिचित नहीं थे, लेकिन भारतीय उच्च वर्ग के सामाजिक हलकों में उनका उपयोग नीचा माना जाता था। और वैसे भी, आम धारणा यही थी कि वह असली घुड़सवार नहीं है जिसके जूते उसके पैरों से मजबूती से न बंधे हों और जो रकाब से मजबूती से न जुड़े हों।

उन्होंने सराय की मालकिन को निर्देश दिया कि वह उनके गाइड का अच्छे से ख्याल रखे और उसे भोजन कराए, और उसे यह बता दे कि वह उनके आने का इंतज़ार करे, क्योंकि वे सैर पर जा रहे थे। उन्होंने अपने घोड़ों को तेज़ दौड़ाया और झट से ढलते सूरज की रोशनी में गायब हो गए। जब तक वे कुएँ पर पहुँचे, असली सुबह की रोशनी चारों ओर फैल चुकी थी। वे कुएँ से ज़्यादा दूर नहीं, रेत के टीलों के पीछे छिप गए और नज़ारा देखने लगे। पानी भरने वाली औरतें, ज़ाहिर है, आने लगी थीं, लेकिन जमीला या हबीबा का अभी तक कोई अता-पता नहीं था।

भीड़ धीरे-धीरे बढ़ी, फिर धीरे-धीरे कम हो गई। तभी दोनों बहनें दिखाई दीं। कल की तरह ही दोनों ने अपने सिर और कमर पर घड़ा रखा हुआ था। उनके कदम किसी कारणवश धीमे लग रहे थे, मानो वे कुएँ तक जाने को लेकर दुविधा में हों। चाहे वे अनिश्चित हों या नहीं, उन्हें पानी तो निकालना ही था, और इसका मतलब था कुएँ तक जाना, जो उन्होंने किया, और फिर जल्दी जाने की कोई जल्दी नहीं दिखाई दी। उनकी आँखें मानो चुपके से आसपास देख रही थीं। हो सकता है कि उन्हें कुएँ से कुछ दिखाई न दिया हो; शायद उनके अंतर्ज्ञान ने उन्हें बताया हो कि भाई कहीं आस-पास ही हैं।

भीड़ धीरे-धीरे कम होती गई और केवल कुछ ही महिलाएं बचीं। बहनों ने अब भी कुएं से आगे खुले में जाने या बढ़ने की कोई इच्छा नहीं दिखाई।

भाई कुएँ और उसके आसपास के क्षेत्र का ध्यानपूर्वक निरीक्षण करते हुए आगे बढ़ने का निर्णय लेने लगे। वे चुपचाप कुछ दूर तक गए और फिर दूर से आते हुए मानो सरपट दौड़ने लगे। उन्हें आते देख एक स्त्री ने हबीबा की बगल में कोहनी मारी और फुसफुसाते हुए कहा, "देखो, प्यासे यात्री आ गए!"

'माफ़ कीजिए, बड़ी बहन! ये कैसी बातें हैं? इन्हें "हमारे प्यासे यात्री" क्यों कहा जाए? मैं तो इन्हें अपने स्नान के लिए पानी लाने-ले जाने का काम भी नहीं दूंगी!'

‘माननीय देवियों, मैं निवेदन करता हूँ,’ याकूब पास आते हुए बनावटी विनम्रता से बोला। ‘हम शिकार से लौट रहे हैं, इसलिए हमें बहुत प्यास लगी है। कृपया हमें थोड़ा पानी पिलाएँ?’

बाकी महिलाएं अपने भरे हुए घड़े और जार लेकर अपने-अपने घरों की ओर चल पड़ीं, लेकिन जाने से पहले उन्होंने किसी को विशेष रूप से संबोधित किए बिना एक अर्थपूर्ण मुस्कान दी। उनमें जाने की कोई जल्दी नहीं थी, न ही वे और देर तक रुकना चाहती थीं, और न ही उन्होंने किसी से कुछ कहा, लेकिन दोनों बहनों के चेहरे गुलाबी हो उठे।

‘मालकिन, क्या यहाँ पीने का पानी नहीं है?’ अन्य महिलाओं के जाने की तैयारी करते देख दाऊद

का हौसला और बढ़ गया। वह मुस्कुराया, ‘कुओं पर यह रिवाज नहीं है कि कर्बला में पानी नहीं है, बल्कि यहाँ आने-जाने वालों के लिए मुफ्त पानी उपलब्ध है।’
अब जमीला ने तीखे स्वर में कहा, 'अगर तुम्हारे पास कोई प्याला या बर्तन है तो उसे लाओ। लगता है तुमने हथेली से पानी पीना भी नहीं सीखा है।'
'पीने और दूसरों को नशे में धुत करने के कई और तरीके हैं, और पीने के लिए केवल एक कप से कहीं अधिक चीजें उपलब्ध हैं।'
जमीला ने अपना चेहरा दूसरी तरफ मोड़ लिया। 'मैं तुम्हारी ये झूठी बातें और नहीं सुनूंगी। वैसे भी हमें देर हो रही है।'
अब तक कुएँ से स्त्रियों का समूह तितर-बितर हो चुका था। वे ज़्यादा दूर नहीं गई थीं और अभी भी दिखाई दे रही थीं। हबीबा ने पीछे मुड़कर स्त्रियों को देखा और धीमी आवाज़ में बोली, “यह ठीक नहीं है, बिलकुल भी नहीं। और इस तरह आना-जाना आपके पद और ओहदे के लायक नहीं है। सोचो, लोग क्या कहेंगे?”
हम बेरोजगार और फिजूलखर्च नहीं हैं; कृपया हमें दूसरों जैसा न समझें। हर इंसान में इंसानियत होती है; कुछ हीरे जैसे होते हैं, कुछ पत्थर जैसे।
जमीला ने तिरछी नजरों से उनकी ओर देखा, लेकिन हल्की सी मुस्कान के साथ बोली, 'तो तुममें से हीरा कौन है और सिर्फ पत्थर कौन?'

दाऊद ने कहा, 'जो तुम्हारे पैरों तले रौंदा जाता है, वही हीरा है, और जिसे तुम अपने रास्ते से हटा देते हो, वह मात्र एक पत्थर है।'
‘मियां साहब कविता करना बहुत अच्छी तरह जानते हैं, लेकिन शायद उन्हें इस बात का एहसास नहीं है कि कविता जितनी मधुर और सुव्यवस्थित होती है, असल जिंदगी उतनी ही कठोर और कड़वी होती है।’ हबीबा के शब्दों में अप्रत्याशित शीतलता और तिरस्कार की कटुता थी।
'यदि जीवन अकेले बिताया जाए, तो निश्चित रूप से यह कड़वा और कठिन होता है। लेकिन यदि किसी को एक अनुकूल प्रेमी मिल जाए, तो जीवन का आनंद और प्रेम का सुख कुछ और ही होता है।'
तो आप यहाँ कुछ खोजते हुए आए हैं? संभलकर जाइए। आपको गुमराह किया जा सकता है।
‘वहाँ हमारा कोई अपना नहीं था। हमारी उत्पत्ति यहीं से हुई है। अपनों से धोखा खाने में भी एक अलग ही आनंद है,’ याकूब ने गंभीरता से, लेकिन थोड़ी शरारत भरी मुस्कान के साथ कहा।
दाऊद ने अपनी बात आगे बढ़ाते हुए कहा: ‘हम बनिथानी के लिए अपने मन और मन को खो बैठे थे। हम यहाँ भटकते हुए, बिखरे बालों और जलते दिलों के साथ, उसकी तलाश में आए थे। संयोग से दो हूरों ने हमें किसी दूसरे ही संसार में पहुँचा दिया।’
याकूब का धैर्य टूट रहा था। उसे लगा कि अब और मीठी-मीठी बातें करने और हल्के-फुल्के मज़ाक में उलझने का कोई फायदा नहीं है—चलो अब काम की बात पर आते हैं। उसने कहा, ‘तो, जिसे आप बाबू कहते हैं, उसका आपसे क्या रिश्ता है? क्या हम उससे मिल सकते हैं?’
दोनों लड़कियों के चेहरे पीले पड़ गए। जमीला की जीवंतता चिलचिलाती धूप में सुबह की धुंध

की तरह गायब हो गई। हबीबा ने अपने पैर के अंगूठे से ज़मीन को खरोंचते हुए धीमी आवाज़ में कहा, 'वह हमारे दूसरे पिता हैं।'
जमीला की आवाज़, जो अब तक स्पष्टता से भरी हुई थी, अचानक धुंधली और बेजान हो गई। 'क्या हमने आपको नहीं बताया कि हमारे न पिता हैं और न माता?'
जुड़वां बच्चे एक पल के लिए सन्नाटे में आ गए।
'लेकिन परिवार में कुछ और लोग भी तो होंगे, कुछ बड़े-बुजुर्ग होंगे जो फैसले लेते हैं?' याकूब ने कुछ अनिश्चितता से पूछा।
‘हमारा कोई नहीं, इस पूरी दुनिया में कोई नहीं। रेगिस्तान में एक फुर्सा सांप के काटने से हमारे पिता की मृत्यु हो गई। उस समय हमारा भाई दूध पीता हुआ बच्चा था। हमारा कोई और रिश्तेदार नहीं था। हमारी मां इस गांव की नहीं थी। उसके लोगों ने उसे उसके हाल पर छोड़ दिया था। मां ने जितना हो सका उतनी कठिनाइयों का सामना किया, लेकिन ज्यादा देर तक नहीं...’
‘...लेकिन न तो कोई सहारा था, न ही उसकी कोई उम्मीद,’ हबीबा ने कहानी जारी रखी। ‘एक महिला एक ऐसे गाँव में अकेली थी जो उसका अपना नहीं था। इसलिए उसने पुनर्विवाह कर लिया। कुछ ही दिन बीते थे कि हमारी बहन को माँ शीतला अपने साथ ले गईं।’
‘माता शीतला...?’ याकूब ने आश्चर्य से पूछा।
‘चुप रहो!’ दाउद ने फुसफुसाते हुए जल्दबाजी में कहा। ‘चेचक। ये लोग इसका नाम नहीं लेते।’
‘मेरे बेचारे छोटे भाई का शरीर आग की तरह जल रहा था, बुखार इतना तेज़ था... और फुंसियां इतनी बड़ी-बड़ी थीं,’ हबीबा ने तर्जनी और अंगूठे से इशारा करते हुए कहा। ‘मां न केवल उसे दूध पिलाती रहती थी, बल्कि हमेशा उसे अपने पास रखकर सोती भी थी। हमारे छोटे भाई को दफनाए जाने के तुरंत बाद ही मां को भी बुखार चढ़ गया...’
‘...और हमारी मां का निधन ठीक चार दिन बाद हो गया।’
दोनों लड़कियां अब खुलकर रो रही थीं। 'बाबू हमें बुरी निगाहों से देखता है। कभी-कभी वह गुस्से में चिल्लाता है कि वह हमें जयपुर ले जाकर वहां बेच देगा।'
याकूब और दाऊद, दोनों ने कभी ऐसी स्थिति का सामना नहीं किया था। उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि क्या करें और क्या कहें। उनमें से एक जल्दी से कुएँ के पास गया, बाल्टी में पानी भरा और धीरे से अपनी गीली हथेलियों और उंगलियों से बहनों के चेहरे धोए। उस बहन के होंठों और चेहरे को छूना रोमांचकारी था, जिसके दर्शन और आवाज़ के लिए वह रात भर गर्म कोयलों पर लेटा रहा था; लेकिन यह उस पल का आनंद लेने का समय नहीं था। ज़रूरी था उनके आँसू पोंछना और उन्हें सांत्वना देना।
बहुत मिन्नतें करने के बाद लड़कियों ने पानी के छोटे-छोटे घूंट लिए। उन्होंने अपने हल्के शॉल के किनारे से अपने आंसू पोंछे। मुस्कुराने की नाकाम कोशिश करते हुए हबीबा ने कहा, “कृपया हमें क्षमा कर दीजिए। आप सोच रहे होंगे कि ये बेचारी लड़कियां किसी काम की नहीं हैं, ये सिर्फ अपने दर्द पर विलाप कर सकती हैं; लेकिन यह तेरहवीं सदी हिजरी है। किसी भी पल कुछ भी हो सकता है। हम महान ख्वाजा जी के द्वार पर हृदय से प्रणाम करते हैं ताकि हमारी कौमार्य की गरिमा बनी रहे।” उनकी आंखें फिर से आंसुओं से भर आईं।

‘अपने आप को परेशान मत करो, न ही प्रतिरोध करने की अपनी इच्छाशक्ति खोओ; क्योंकि वह कर्मों का सबसे बड़ा कर्ता और कठिनाइयों का हल करने वाला है... लेकिन कहो, क्या तुमने कभी अपने भविष्य के लिए क्या करना चाहिए, इस बारे में सोचा है?’
‘हम क्या सोच सकते थे, और किस पर भरोसा कर सकते थे?’ जमीला ने दर्द से भरी आवाज में कहा।
‘प्रिय और आदरणीय महिलाओं, आकाश की प्रतिकूल चालों के आगे हर कोई असहाय है। लेकिन क्या आकाश को गति देने वाला भी असहाय है?’ याकूब ने कहा।

हबीबा ने कहा, “हमने अपना जीवन इसी आशा के सहारे इतने लंबे समय तक जिया है; लेकिन अब हमारा हर दिन मौत से भी बदतर है। काश मुझे कोई ज़हर मिल जाए और मैं उसे पीकर सो जाऊं। यह देश मौत की जगह के नाम से जाना जाता है। काश मैं कहीं ऐसी जगह छिप जाऊं जहां कौवे और चीलें भी हमें कभी न ढूंढ पाएं।”
चुप रहो! ऐसे शब्द होठों पर नहीं आने चाहिए। सर्वशक्तिमान के लिए क्या कुछ भी कठिन है? वह पल भर में दुर्गम पहाड़ों में भी रास्ता बना सकता है।
‘खैर, तुम्हारा रास्ता खुला है। कल तक तुम कहीं और होगे।’
याकूब ने अपने पैरों पर नजर रखते हुए धीरे से कहा, "लेकिन तुमने हमारे सारे रास्ते रोक दिए हैं।"
हबीबा अविश्वास भरी निगाहों से उसे देखती रही। एक मिनट की खामोशी के बाद, याकूब ने पूरे आत्मविश्वास से कहा, 'हम अब कहीं नहीं जा रहे हैं।' फिर दाऊद ने भी उतने ही दृढ़ स्वर में कहा, 'आपके दरवाजे पर भीख मांगना हमारे लिए कहीं और राजा बनने से कहीं बेहतर है।'
‘तुम क्या कह रहे हो? क्या तुम इस मामले को भी व्यापारिक सौदा समझ रहे हो? और हमारे दरवाजे और हमारी गली में ऐसा क्या है? हम तो बस इतना जानते हैं कि सांप और औरत धरती के नीचे ही सबसे अच्छे रहते हैं।’
मैं उन लोगों को धिक्कारता हूँ जो ऐसा कहते हैं, और उस दुनिया पर धिक्कार है जो तुम दोनों को, सौंदर्य के उद्यान की सच्ची महिमा और मनमोहक बुलबुलों को, एहसानमंद बनाती है...
जमीला ने एक छोटी, व्यंग्यात्मक हंसी के साथ उन्हें बीच में ही रोक दिया। 'मौलवी जी, हमसे अपनी उलझी हुई फारसी में बात मत कीजिए, हमें तो ठीक से हिंदी भी नहीं आती।'
दाऊद ने कहा, 'सूरज तेजी से आसमान में चढ़ रहा है। जरा सोचो, तुम्हारे सामने एक उज्ज्वल और खुला रास्ता दिखाई दे रहा है। अगर ऐसा नहीं हुआ, तो यह दिन भी रात में बदल जाएगा।'
याकूब ने विनम्रतापूर्वक विनती भरे स्वर में कहा, “कुछ ही क्षणों में चारों ओर लोग ही लोग होंगे। हमें अभी निकलना होगा; यदि आप चाहें तो हम शाम को लौट आएंगे, अन्यथा हमें जाना पड़ सकता है...”
हबीबा ने दृढ़ता से कहा: 'नहीं। आप हमें शाम को यहीं, इसी जगह पर पाएंगे।'
उन शब्दों का क्या अर्थ था? क्या उनमें कोई संकेत छिपा था, या यह महज़ एक अनौपचारिक बातचीत को समाप्त करने का एक सामान्य तरीका था? लड़कियों की आँखें, जो आम तौर पर

बहुत कुछ कह देती थीं, उनमें कोई संकेत या संदेश नहीं था; उनकी आवाज़ का लहजा तटस्थ था। उनके चेहरे पर नाराज़गी का कोई भाव नहीं था, उनकी भौंहों पर कोई शिकन नहीं थी जो मन की जकड़न दर्शाती हो। यह जुड़वा बहनों का काम था कि वे उस कथन का अर्थ निकालें; लेकिन क्या कथन करने वाले ने उसमें कोई अर्थ डाला भी था? अर्थ का खजाना सभी के लिए उपलब्ध है, लेकिन प्रत्येक को अपनी क्षमता या ईश्वरीय कृपा के अनुसार। सार्वभौमिक शराबखाने से किसी को भी उसका उचित हिस्सा नहीं मिलता। लेकिन कौन कह सकता है कि वास्तव में वह कौन सा शराबखाना है जहाँ हमें जाना तय है?

धर्मनिष्ठ लोगों को मस्जिद के माध्यम से बदनामी मिली; मेरी बदनामी शराबखाने से मिली: दोनों के रहस्य किसी न किसी स्थान पर उजागर हो जाते हैं।

यह सच था कि उन्हें पूरी तरह से यकीन नहीं था, लेकिन दोनों अपनी किस्मत को पूरी तरह आजमाने के लिए दृढ़ थे। उस शाम असफल होने पर भी उनका इरादा हार मानने का नहीं था। और अगर ईश्वर की कृपा से उनकी मनचाही इच्छा पूरी हो जाती, तो उन्होंने अपने भविष्य की योजना भी बना रखी थी।

सराय लौटकर उन्होंने अपने घोड़े के रखवाले को अच्छी-खासी तनख्वाह और इनाम देकर विदा कर दिया। उन्होंने उसे बताया कि वे वहाँ से अकबरबाद का रास्ता जानते हैं, जो उनका अंतिम गंतव्य था। उन्होंने कहा कि उनका अगला पड़ाव बांदीकुई होगा। घोड़े के रखवाले को विदा करने के बाद वे खुद बांदीकुई की सड़क पर चले और गाँव से लगभग सोलह मील दूर एक सराय में कमरे बुक किए। जब वे लौटे तब तक लगभग शाम हो चुकी थी। उन्होंने अपना सामान पैक किया, सराय के मालिक को अच्छी-खासी टिप देकर अपना हिसाब चुकाया। वे दिखावे के तौर पर बांदीकुई के लिए निकले, लेकिन कुछ मील आगे एक उपयुक्त जगह पर रुके, चारों घोड़ों को आराम दिया और कुएँ वाले गाँव की ओर फिर से चल पड़े। इस बार उनकी कमर पर पतली कटार के अलावा गले में एक तलवार भी लटकी हुई थी।

जब वे कुएँ पर पहुँचे तो पूरी तरह अंधेरा नहीं हुआ था। किसी कारणवश, या शायद एक सुखद संयोग से, वहाँ उन दो लड़कियों के अलावा कोई और नहीं था। वे तेज़ी से और निडर होकर कुएँ की ओर बढ़े, लेकिन यह देखकर आश्चर्यचकित रह गए कि दोनों लड़कियों के पास कपड़ों का एक छोटा सा बंडल था, जो देखने में उनके कपड़ों से भरा हुआ लग रहा था। वे आश्चर्यचकित होने के बजाय रोमांचित और प्रसन्न हो गए।

'माननीय देवियों, हम अपनी बात रखते हैं। जैसा कि हमने वादा किया था, हम यहां उपस्थित हैं।' हबीबा ने शरमाते हुए मुस्कुराते हुए कहा, 'हम भी यहीं हैं। हमारी किस्मत हमें जहां ले जाए, वहीं ले जाए,' उसने शर्माते हुए अपने गठ्ठों की ओर इशारा किया। 'लेकिन हमारे घर हमारे साथ जाएंगे।'

दाऊद कांपती हुई आवाज में बोला: ‘केवल ईश्वर ही दोषरहित है! कितना बड़ा सौभाग्य है, और हमारा भाग्य कितना अद्भुत है! कृपया आगे आइए, आपके वाहन आपका इंतजार कर रहे हैं।’

दाऊद और याकूब दोनों ने अभी अपनी बाहें फैलाकर आगे छलांग ही लगाई थी कि तभी दोनों लड़कियाँ दहशत से काँप उठीं और वहीं रुक गईं। उन्होंने एक तेज़, गर्जना जैसी आवाज़ सुनी।

‘रुको! वेश्याओं! मैं तुम्हें ऐसी हालत में पहुँचा दूँगा कि चीलें और कौवे भी तुम पर तरस खाएँगे। तुम हारी हुई, बेशर्म औरतें, अपने नीच प्रेमियों के लिए वासना रखती हो और पूरे गाँव के सामने उसे दिखाती हो! तुम कामुक लड़कियों, तुम्हारी हिम्मत कैसे हुई...’
‘बाबू यहाँ हैं!’ हबीबा सिसकते हुए बोली। ‘या अल्लाह! अब हमारा क्या होगा?’
लगभग अधेड़ उम्र का एक आदमी प्रकट हुआ। उसने गाँव के रीति-रिवाज के अनुसार, जो वहाँ के सभी समुदायों में प्रचलित था, अपने शरीर के निचले हिस्से पर सूती कपड़ा लपेटा हुआ था। उसकी कमीज़ मोटी और खुरदुरे सूती कपड़े की बनी थी। उसके गले में एक काला धागा और ताबीज था, और हाथों में एक लंबा राजपूती भाला था। वह मज़बूत और दृढ़ कदमों से आगे बढ़ा। उसकी छोटी, पीली आँखें रात में सियार की तरह धधकती हुई प्रतीत हो रही थीं।
वह भाले के हमले के लिए उपयुक्त क्षेत्र में दाखिल हुआ, लेकिन उसने यात्रियों की ओर देखा तक नहीं। उसने लड़कियों पर झपटने का नाटक किया। दाऊद ने अपना लंबा पैर आगे बढ़ाया और उसे बड़ी कुशलता से गिरा दिया। जैसे ही वह उठने की कोशिश कर रहा था, याकूब ने अपनी तलवार निकाली और चिल्लाया: 'इन लड़कियों पर तुम्हारा कोई अधिकार नहीं है। इस्लामी कानून के अनुसार, ये लड़कियां बालिग हैं और अपने भाग्य की खुद मालिक हैं। तुम इन्हें अपनी हवस का शिकार बनाकर वेश्यालय में बेचना चाहते हो। हम ऐसा नहीं होने देंगे।'
बाबू ने अपने भाले के सहारे संतुलन बनाने की कोशिश की और चिल्लाकर कहा, 'तुम कौन हो? तुम कमीने हो, मुझे यह नहीं बता सकते कि क्या है और क्या नहीं है!'
याकूब ने अपनी तलवार की नोक से बाबू के पैर में चुभोया और ठंडे स्वर में, तिरस्कारपूर्ण 'तू' कहते हुए कहा, 'उठो और बिना कुछ बोले वापस चले जाओ। इन लड़कियों को हम इस्लाम के कानूनों के अनुसार पत्नियों के रूप में ले लेंगे। तुम्हारा इनसे कोई लेना-देना नहीं है। ये तुम्हारी कोई ऋणी नहीं हैं। फिर भी, अगर तुम्हें लगता है कि इनसे तुम्हारा कुछ बकाया है, तो इसे ले लो!'
अपनी बेल्ट खोलते हुए याकूब ने दो मजबूत सूती थैले निकाले और नीचे फेंक दिए, जिनमें से प्रत्येक सौ-सौ रुपये के सिक्कों से भरा था। उसने उन्हें इतनी चालाकी से फेंका कि गिरते ही एक थैला खुल गया और चमकीले, खनकते सिक्के बाबू के सिर और चेहरे पर बिखर गए। सहज ही, वह सिक्कों की बौछार को समेटने के लिए मुड़ा और जुड़वां भाइयों ने लड़कियों को अपने घोड़ों पर बिठा दिया, एक-एक करके। उन्होंने अपने घोड़ों के पंजों में एड़ी मारी और पलक झपकते ही नज़र से ओझल हो गए। दूसरे घोड़े भी उतनी ही तेज़ी से उनके पीछे दौड़ पड़े।

उन्होंने अपनी यात्रा के पहले चरण में रात नहीं बिताई। उनका इंतज़ार कर रहे चार घुड़सवार आगे की यात्रा के लिए उनके साथ पहरेदार के रूप में शामिल हो गए। भाइयों ने यह व्यवस्था पहले ही कर ली थी। दो घुड़सवारों के पास फ्रांसीसी डिज़ाइन की राइफलें थीं; अन्य दो के पास भारतीय दोहरी बैरल वाली शॉटगन थीं। राइफलें सटीकता और दूर तक मार करने की क्षमता में श्रेष्ठ थीं; नज़दीकी स्थितियों में, विशेष रूप से शत्रुतापूर्ण भीड़ को तितर-बितर करने के लिए, भारतीय बंदूकें अन्य सभी बंदूकों से बेहतर थीं। इन बंदूकों से बर्डशॉट और ग्रेपशॉट दोनों का इस्तेमाल किया जा सकता था। चारों पहरेदारों के पास सेल भी थे: छोटे भाले, जो भाले से छोटे और संगीन से हल्के होते थे, जिन्हें आसानी से अच्छी दूरी तक फेंका जा सकता था और ये आमने-सामने की लड़ाई के लिए भी उपयुक्त थे। चारों के पास एक बडबान भी था, जिसे उन्होंने रात भर की यात्रा के दौरान जलाए रखा, जबकि यात्रियों के घोड़े हमेशा अंधेरे में पीछे रहते थे। दो घुड़सवार लगभग पचास कदम आगे, जबकि अन्य दो पीछे चल रहे थे।
अतिरिक्त घोड़ों की बदौलत वे रात भर यात्रा करते रहे। वे हर घंटे थोड़ी देर के लिए रुकते, घोड़ों को बदलते और तरोताज़ा करते, फिर आगे बढ़ते। बांदीकुई पहुँचने पर लगभग सुबह हो चुकी थी। वे सराय में ठहरे और बाद में बांदीकुई की अदालत में पेश हुए। उन्होंने बताया कि उन्होंने लड़कियों को एक गाँव से खरीदा था और वे उनसे शादी करना चाहते थे। न्यायाधीश ने आदेश दिया कि पहले लड़कियों को मुक्ति पत्र दिए जाएँ। पत्रों पर मुहर लगवाकर, हस्ताक्षर करवाकर और उन्हें सौंपने के बाद, न्यायाधीश ने लड़कियों से कुछ सामान्य प्रश्न पूछे और मुक्त दासी लड़कियों के कानूनी संरक्षक के रूप में अपनी सहमति से याकूब का विवाह जमीला से और दाऊद का विवाह हबीबा से करवा दिया। चारों घुड़सवार गवाह के रूप में उपस्थित हुए।

ऊपर वर्णित घटनाओं के ग्यारह महीने बाद, मेरे परम पूज्य पिता, मेरे प्रिय पिता याकूब बदगामी (अल्लाह उन पर रहम करे) और मेरी प्रिय माता बीबी जमीला (अल्लाह उनकी आत्मा पर रहम करे) को एक पुत्र हुआ। परिवार की परंपरा के अनुसार, बेटों का नाम पैगंबरों के नाम पर रखा जाता था, इसलिए मेरे प्रिय पिता ने मेरा नाम मुहम्मद यूसुफ रखा। अंग्रेजी पंचांग के अनुसार, वर्ष 1793 था। मेरे आदरणीय चाचा की कोई संतान नहीं थी। दोनों भाइयों के बीच पुरानी आध्यात्मिक आत्मीयता और आपसी हृदय का जुड़ाव बना रहा, जो समय के साथ जुड़वाँ भाईचारे से परे जाकर जुड़वाँ भाइयों की तरह एक-दूसरे पर निर्भर हो गया। एक के घर की कमी को दूसरा पूरा करता था; एक की समस्या का समाधान दूसरा करता था; यहाँ तक कि एक का दुख भी दूसरा बाँटता था।
विवाह पंजीकरण और दोहरे विवाह भोज के ठीक दो दिन बाद वे बांदीकुई से रवाना हुए। एहतियात के तौर पर उन्होंने जयपुर और मेवाड़ से काफी दूर स्थित समृद्ध शहर फर्रुखाबाद में बसने का फैसला किया था। वे आठ दिनों में आराम से अकबरबाद पहुँच गए, उनका मार्ग गंगापुर, बयाना और फतेहपुर सिकरी से होकर गुजरा। वहाँ कुछ दिन रुकने के बाद, वे फिरोजाबाद,

मैनपुरी और ब्यावर होते हुए फर्रुखाबाद की ओर बढ़े और पास के फतेहगढ़ स्थित अंग्रेजी छावनी से बच गए।

फर्रुखाबाद में बसने का सबसे महत्वपूर्ण कारण यह था कि वहाँ मराठा शक्ति काफी कमजोर हो चुकी थी, भले ही पूरी तरह समाप्त न हुई हो। चार दशक पहले (1750 में), नवाब अहमद खान बंगश ने सफदर जंग और राजा नवल राय के संयुक्त आक्रमण का प्रतिरोध किया और उसे विफल कर दिया था। तब से, और विशेष रूप से वर्तमान नवाब, दिलेर हिम्मत खान मुजफ्फर हुसैन बंगश के उत्तराधिकार (1771 में) के बाद, फर्रुखाबाद में जीवन सुखमय और शांतिपूर्ण रहा था। दिल्ली की उच्च उपस्थिति भी उनके प्रति अनुकूल थी। फिरंगी निस्संदेह अपना प्रभाव बढ़ा रहा था और उसने फतेहगढ़ में एक छावनी स्थापित कर ली थी, जहाँ बंगाल नेटिव इन्फैंट्री की एक प्लाटून तैनात थी।

एक दृष्टिकोण से देखा जाए तो कहा जा सकता है कि यद्यपि नवाबों द्वारा शासित और तकनीकी रूप से मुगल राज्य का हिस्सा होने के बावजूद, देश को फिरंगी साम्राज्य का प्रत्यक्ष संरक्षण प्राप्त था। वहाँ श्रावण माह की वर्षा की तरह धन-दौलत भरपूर थी। फर्रुखाबाद में कश्मीरी कालीनों या सूखे मेवों के व्यापार की अधिक संभावना नहीं थी। इसलिए, अपनी कलात्मक रुचि के चलते और साथ ही सोने-चांदी के आभूषणों के उद्योग और व्यापार की अत्यधिक लोकप्रियता के कारण, जुड़वा भाई-बहनों ने साधारण लेकिन नाजुक आभूषणों के डिजाइनर और निर्माता बनने का विकल्प चुना। इसी कलात्मक प्रवृत्ति के चलते उन्होंने फर्रुखाबाद की प्राचीन स्थानीय शिल्पकला, यानी फूलों से सजे चिंट्ज़ और कैलिको कपड़े पर डिज़ाइन और प्रिंटिंग में भी रुचि दिखाई, जिसे हिंदी में कलमकारी कहते हैं। बहुत जल्द ही, दोनों कलाओं में अपनी उत्कृष्टता के कारण जुड़वा भाई-बहनों की हर जगह मांग बढ़ गई।

कलमकारी का पेशा पूरी तरह से मुसलमानों के एक बंद समूह द्वारा किया जाता था, जो पेशे से चपेरा कहलाते थे, लेकिन उनका समुदाय साध कहलाता था। आज भी वे इन्हीं नामों से जाने जाते हैं। वे अपनी कला और शिल्प की तकनीकों और बारीकियों को लेकर बेहद गुप्त रहते थे, और किसी भी बाहरी व्यक्ति को अपने कार्यक्षेत्र में प्रवेश करने की अनुमति नहीं देते थे। लेकिन मेरे पिता और चाचा उनसे इतने प्रभावशाली ढंग से पेश आते थे कि साध लगभग उनके शिष्य और अनुयायी बन जाते थे। साधकार के रूप में भी उन्होंने दूर-दूर तक अच्छी प्रतिष्ठा अर्जित की और अच्छी कीमत वसूलते थे। कुछ फिरंगी महिलाएं उनके काम की इतनी प्रशंसक थीं कि वे बिना किसी हिचकिचाहट के शाह आलमी के सोने के मोहर या अंग्रेजी गिनी अग्रिम भुगतान के रूप में जमा कर देती थीं, ताकि उनके द्वारा दिए जाने वाले ऑर्डर को उनकी सुविधानुसार पूरा किया जा सके। फर्रुखाबाद के रुपयों की बात करें तो, उनकी सेवाएं लेने आने वाले ग्राहकों की कोई कमी नहीं थी।

चापेराओं के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध स्थापित करने और बनाए रखने का एक बड़ा लाभ यह था कि हालांकि वे मुसलमान थे, लेकिन उनके कई रीति-रिवाज और परंपराएं हिंदुओं के बहुत करीब थीं। मेरी मां और मौसी मारवाड़ी जाट समुदाय से थीं और उनकी कई प्रथाएं और अंधविश्वास हिंदू धर्म से प्रभावित थे। इस प्रकार, उनका उनसे स्वाभाविक जुड़ाव हो गया, जिससे उनके दिलों से

अपनी जन्मभूमि खोने का दर्द कम करने में मदद मिली।

एक दशक बीत गया, सुख-शांति का दशक। कंपनी बहादुर का प्रभाव और प्रभुत्व तेजी से बढ़ता गया। दशक के अंत तक स्थिति यह हो गई थी कि परम पूज्य नवाब, अपने ही देश में शासन की लगभग निष्प्रभावी भूमिका निभाने लगे थे। दूसरी ओर, दिल्ली, वह समृद्ध नगर जिसकी भूमि पर राजगद्दी टिकी थी, मराठों के प्रभाव से और भी अधिक दबने लगा। गंगा नदी के बाढ़ के पानी की तुलना भी यमुना नदी के किनारे बसे उस समृद्ध नगर पर मराठा शक्ति के बढ़ते प्रभाव से नहीं की जा सकती थी। फर्रुखाबाद और उसके आसपास हर जगह फिरंगी का बोलबाला था; दिल्ली और उसके आसपास मराठा शक्ति का उदय दोनों शहरों के बीच प्रतिस्पर्धा और प्रतिद्वंद्विता का पर्याप्त कारण और आधार था।

लगभग दो दशक बीत चुके थे जब सम्राट शाह आलम द्वितीय, जिनकी महिमा महान जमशेद, अली गौहर, जनसंरक्षक, ब्रह्मांड के केंद्र के समान थी, ने अंग्रेजों से अपने संबंध तोड़ लिए थे और मराठा शासक महादा जी सिंधिया के साथ मित्रता की मुहर लगा दी थी। इलाहाबाद छोड़कर सम्राट दिल्ली के लाल किले में चले गए थे।

स्पष्टतः, अंग्रेज़ों जैसी द्वेषपूर्ण और प्रतिशोधी प्रजा राजा के हाथों इस प्रकार अपमानित होने को कभी नहीं भूल सकती थी। वे षड्यंत्र रचते रहे और अपना प्रभाव बढ़ाते रहे। अवध के शुजाउद्दौला को युद्ध में रुहेला सरदार हाफ़िज़-उल मुल्क हाफ़िज़ रहमत खान को मारने के लिए उकसाकर उन्होंने बराइच वंश के रुहेलों की कमर तोड़ दी। हाफ़िज़ के पराजित और मारे जाने के बाद, दिल्ली की ओर उनके मार्ग में केवल मुहम्मद खानी बंगश रुहेल ही चुनौती या बाधा बन सकते थे।

अंग्रेज़ों ने कानपुर से अपनी सेना का एक हिस्सा फतेहगढ़ में तैनात कर दिया था। अब, लॉर्ड लेक साहिब बहादुर की कमान और देखरेख में एक विशाल सेना का गठन शुरू हुआ। अंग्रेज़ों के दबाव ने नवाब का मनोबल इतना गिरा दिया कि उन्हें मजबूर होकर 1217 हिजरी (अंग्रेज़ी पंचांग के अनुसार 1802) में अंग्रेज़ों के साथ संधि पर हस्ताक्षर करने पड़े, जिसके तहत उन्होंने 125,000 रुपये के वार्षिक भुगतान के बदले अपनी भूमि का प्रशासन उन्हें सौंप दिया। अब कंपनी बहादुर पूरे बंगश क्षेत्र के स्वामी बन गए थे।

फर्रुखाबाद को सुरक्षित रूप से पीछे छोड़ते हुए, अंग्रेजों के लिए दिल्ली पर हमला करना और उस बादशाह को, जिसका दरबार आकाश के समान है और जिसके चारों ओर सूर्य और चंद्रमा विचरण करते हैं, शाह आलम द्वितीय को मराठों के घोर कारावास से मुक्त कराना अब आसान हो गया था। इस प्रकार, अंग्रेजी सेना का एक विशाल दल कानपुर से उफनती नदी की तरह निकला। अंग्रेजी पंचांग के अनुसार तिथि 8 अगस्त 1803 थी। फतेहगढ़ में तैनात सेना की शाखा 20 अगस्त 1803 को कानपुर की सेना में शामिल हो गई।

हमारा पूरा परिवार फतेहगढ़ सेना के साथ शिविर में था। यह दुर्भाग्य—वास्तव में, विपत्ति—हमारे कुछ साधकार मित्रों की निःस्वार्थ दया और बहकावे के कारण हम पर आई थी। उन्होंने अंग्रेजी सेना में मिलने वाले धन और उसे कमाने के अवसरों के बारे में बढ़ा-चढ़ाकर बताया और मेरे पिता और चाचा को शिविर में शामिल होने के लिए राजी कर लिया। उन्होंने कहा कि कमांडरों की तो बात ही छोड़िए, उस सेना में निचले दर्जे के सिपाहियों की पत्नियाँ भी सोने की दीवानी होती हैं। इसके अलावा, युद्ध जीतने पर जो लूट या इनाम मिलता है, उसमें सोने की कोई कमी नहीं होती। उन्होंने कहा कि अगर लॉर्ड लेक साहब दिल्ली में जीत जाते हैं, तो हमारी तो मौज होगी; और अगर युद्ध हार भी जाते हैं, तो भी हमें कुछ नहीं खोना पड़ेगा, बल्कि हमारा व्यापार और भी फलेगा-फूलेगा।

ईश्वर मेरे पूर्वजों की कब्रों को शांति और सुकून प्रदान करें—मुझे यह भी नहीं पता कि वे कहाँ दफन हैं—लेकिन यह साहसिक कार्य उनके जीवन की पहली और आखिरी गलती थी।

भगवान साहब की 'महान सेना' 10 सितंबर 1803 को दिल्ली क्षेत्र में पहुंची और यमुना नदी के किनारे से थोड़ी दूरी पर हिंडन नदी के पास डेरा डाला। मुझ जैसे व्यक्ति के लिए, जिसकी वाणी मात्र अस्पष्ट है और वह भी हकलाने से बाधित है, भगवान साहब की उस महान सेना की महिमा और भव्यता का वर्णन करने के लिए शब्दों की शक्ति कैसे जुटाई जा सकती है, जिसका दर्जा आकाश के समान ऊंचा था? कल्पना कीजिए एक विशाल आयताकार आंगन की, जो कई वर्ग मील में फैला हुआ है; कल्पना कीजिए कि वह गतिशील है। दाहिनी ओर दाहिना भाग, जिसमें पैदल सैनिक और बंदूकधारी शामिल हैं; बाईं ओर बायां भाग, जिसमें घुड़सवार सेना शामिल है। एक मजबूत अग्रिम पंक्ति, फिर धावक और अधिक पैदल सैनिक, उनके पीछे पहरा। तोपें, तोपें, तोपखाने और बारूद भंडार पहरेदारों को घेरे हुए थे और उनके पीछे-पीछे चल रहे थे; अग्रिम पंक्ति हल्की तोपों और तोपखानों से सुसज्जित थी।

जहां तक व्यक्तिगत हथियारों की बात है, सभी घुड़सवार और टुकड़ियां भारी हथियारों से लैस थीं: तलवार, भाला, कार्बाइन या राइफल, और कमर पर लटकी एक छोटी कटार; अंग्रेजी कमांडेंटों के पास कटार के बजाय पिस्तौल होती थी।

घोड़ों, हाथियों, ऊँटों, बैलगाड़ियों, सांडों, टट्टुओं और गधों की गिनती करना असंभव था। प्रत्येक घुड़सवार के दो सेवक होते थे: एक घोड़ों की देखभाल करने वाला और एक घास काटने वाला। प्रत्येक हाथी का एक महावत होता था; हर तीन ऊँटों या सांडों के लिए एक ऊँट चालक या गाड़ी

चालक होता था। प्रत्येक फिरंगी कमांडर का अपना तंबू होता था; प्रत्येक तंबू में उसे लगाने और हटाने के लिए कई सेवक होते थे जिन्हें लस्कर कहा जाता था। इन सबके अलावा, प्रत्येक अंग्रेज अधिकारी के पास भेड़, बकरियाँ, मुर्गियाँ, अंडे और पानी और अंडे उबालने और आपात स्थिति में चाय बनाने के लिए एक छोटा पोर्टेबल चूल्हा होता था। ये चूल्हे अल्कोहल जैसे या वास्तव में अल्कोहल से चलने वाले ईंधन का उपयोग करते थे।

फिरंगी कमांडरों की सेवा में नौकरों की एक बड़ी फौज रहती थी। प्रत्येक लेफ्टिनेंट के पास कम से कम दस सहायक होते थे, जिन्हें अर्दली कहा जाता था; एक कैप्टन के पास कम से कम बीस होते थे, और उससे ऊपर बटालियन के कमांडर के पास तीस या उससे अधिक अर्दली होते थे। जनरल साहबों और स्वयं लॉर्ड लेक साहब की सेवा में तैनात पुरुषों की संख्या तो अनगिनत थी। इसके अलावा, कुछ फिरंगी साहबों के साथ उनकी पत्नियां भी होती थीं। उनके लिए दासियों और परिचारिकाओं का एक अलग दल होता था।

पीछे की टुकड़ी के साथ अनाज व्यापारी भी थे। बंजारा कहलाने वाले ये व्यापारी चींटियों की तरह धीमी चाल से चलते थे, और अपने माल को दस हजार या उससे अधिक हल्के बैलगाड़ियों में लादकर ले जाते थे। मजबूरीवश, सेना को उनके साथ कदम मिलाकर चलना पड़ता था। उस सेना में कुल मिलाकर डेढ़ लाख से अधिक लोग थे।

सेना के शिविर में रुकते ही, पलक झपकते ही तंबू लगा दिए जाते थे। आधे घंटे के भीतर ही वहाँ एक चहल-पहल भरा बाज़ार लग जाता था। वहाँ हर तरह के तंबू, टेंट और पर्दे लगे होते थे: बिना रस्सियों वाले तंबू, चौड़े और चौकोर तंबू, और बड़े अधिकारियों के तंबू जिन पर झंडे लहराते थे और चमचमाते शिखर होते थे। ऐसे तंबू मंडपों की तरह बनाए जाते थे, जिनमें सामने के कमरे और प्रतीक्षा क्षेत्र होते थे। यदि कोई महिला साथ होती थी, तो हमेशा एक सुरक्षा क्षेत्र होता था, जो आम लोगों की नज़रों से छिपा रहता था।

सेना शिविर का ढांचा शहर की तरह व्यवस्थित था: प्रत्येक पेशे, प्रत्येक प्रकार के व्यापारी के लिए अलग-अलग क्षेत्र या बाज़ार आवंटित थे। वहाँ हमेशा अनाज व्यापारी, कसाई और अन्य खाद्य विक्रेता मौजूद रहते थे, विशेष रूप से वे जो मौके पर ही खाना पकाते थे और मोटे तले हुए पैनकेक जैसे ब्रेड और कबाब बेचते थे। इसके अलावा, कम से कम एक भोजनालय भी होता था, जिसमें रसोइये और विशेष ब्रेड बनाने वाले मौजूद होते थे।

वहाँ अंग्रेज़ व्यापारी भी थे; उन्हें 'सौदागर' कहा जाता था, जो दुकानदार या छोटे व्यापारी से कुछ अधिक सम्मानजनक उपाधि थी। सौदागर केवल शराब, मदिरा और केक-पेस्ट्री जैसी मिठाइयों का व्यापार करते थे। देशी व्यापारियों में सबसे प्रमुख साहूकार, जौहरी, सादे सोने के आभूषण बनाने और बेचने वाले, कश्मीरी शॉल बेचने वाले और बंगाल के ढाका के प्रसिद्ध मलमल के व्यापारी थे। लेकिन प्रसिद्धि में उनसे भी ऊपर नाचने वाली युवतियाँ थीं, जो कामुक सुख प्रदान करती थीं और स्थापित वेश्याएँ थीं, जिनका इतना उच्च स्थान था कि वे कहीं बाहर नहीं जाती थीं और केवल अपने तम्बुओं में ही मनोरंजन करती थीं। निम्न श्रेणी की वेश्याओं के पास केवल 'बिस्तर' होते थे, जबकि अन्य के पास तम्बुओं या वेश्यालय होते थे; यह सब शिविर के एक विशेष भाग तक ही सीमित था।

बाज़ारों में प्रवेश करते ही आपको हिंदी, भाषा, मारवाड़ी, तेलंगाना, बंगाली, कश्मीरी, पश्तो, फ़ारसी, यहाँ तक कि अरबी और निश्चित रूप से अंग्रेज़ी भी बोली जाती सुनाई देती थी; जितनी भाषाएँ थीं, उतने ही तरह के पहनावे, साजो-सामान और बोलने वालों की शैलियाँ थीं। फिर वहाँ सोने की काठी वाले घोड़े, कीमती चादरों (झूल), चाँदी के हौदे और कंबल से ढके ऊँट और हाथी थे। घोड़ों और ऊँटों के मुकुट रंग-बिरंगे पंखों से सजे थे। हाथियों के माथे और सूंड चमकीले रंगों से रंगे थे, और उनके दाँतों पर सोने के छल्ले जड़े थे। बैलों और हाथियों के गले में मधुर घंटियाँ लटकी थीं; और सबसे आनंददायक बात यह थी कि दोनों घंटियाँ, यद्यपि समान रूप से मधुर ध्वनि वाली थीं, फिर भी बिल्कुल अलग थीं। दूर से ही एक घंटी को दूसरी से पहचाना जा सकता था। ऊँटों के पैरों में घंटियाँ बंधी थीं, जिनकी ध्वनि धीमी और मधुर थी।

ज़रा विभिन्न रेजिमेंटों के सिपाहियों की रंगीन वर्दी, और कुछ बेहद धनी दरबारी महिलाओं के द्वारपालों और पहरेदारों के भड़कीले लेकिन शानदार वस्त्रों की कल्पना कीजिए; गहनों से सजी और भव्य पोशाक पहने मेमसाहिबों की, जो अपनी सुंदरता के कारण स्वाभाविक रूप से अभिमानी होंगी; और जनरल साहबों के रंगीन दल-दलों की, और महान भगवान साहब की शान-शौकत की। क्या आपको लगता है कि अरेबियन नाइट्स का कोई दृश्य भी इस दृश्य से अधिक भव्य और आडंबरपूर्ण हो सकता है?

अफसोस! कुछ ही क्षणों में यह सब मेरे लिए नरक के दृश्य में तब्दील हो गया। अभी भोर भी नहीं हुई थी; शायद तीन बजे के आसपास लॉर्ड लेक साहब ने मराठा सेना पर आम हमले का आदेश दिया। असली भोर होने ही वाली थी कि मराठों को देख पाए। दृश्यता बहुत कम थी; और नदी के दोनों किनारों पर जहाँ तक नज़र जाती थी, कंटीली झाड़ियों, जंगली तंबू, बौने बेर, बबूल और मेहंदी का घना जंगल फैला हुआ था। कभी-कभी नदी की रोशनी बिजली की तरह चमकती हुई दिखाई देती थी।

मराठों ने अपनी पहली किलेबंदी एक छोटी लेकिन सुरक्षित पहाड़ी पर की थी और सूर्य दक्षिण-पश्चिम दिशा में उनके पीछे था। शाही सेना कहीं भी दिखाई नहीं दे रही थी। जैसे ही हमला शुरू हुआ, सुबह की धुंधली रोशनी अंग्रेजों के पक्ष में थी, क्योंकि वे मराठा सेना की पंक्तियों को दूर से, भले ही अस्पष्ट रूप से, देख सकते थे। जैसे-जैसे सूर्य ऊपर चढ़ता गया, लॉर्ड साहब के सैनिक तेज धूप से लगातार चकाचौंध होते रहे, जिससे उनकी दृष्टि शक्ति गंभीर रूप से कम हो गई। लॉर्ड साहब की तोपखाने ने अभी तक गोलीबारी शुरू नहीं की थी, लेकिन पैदल सैनिकों ने, दुश्मन की पंक्तियों में घुसने की कोशिश करते हुए, तुरंत हमला शुरू कर दिया जैसे ही तोपों और फिर घुड़सवार सेना ने गोलीबारी शुरू की। घने कंटीले पेड़ों और झाड़ियों से होकर गुजरना मुश्किल था; वास्तव में हमला करना असंभव था। बंगाल रेजिमेंट के पैदल सिपाही, कंधों पर तोपें और हाथों में कुल्हाड़ी लिए, धीरे-धीरे एक रास्ता बनाते गए, जिसके माध्यम से घुड़सवार सेना भारी तोपों की बौछार करते हुए आगे बढ़ी।

अंग्रेजी सेना के सभी अनुयायी सबसे पीछे तैनात थे; उनकी सुरक्षा के लिए केवल पिछला दस्ता ही था। हॉवित्जर तोपें, और उनके पीछे भारी तोपें, काफी आगे बढ़ चुकी थीं और अब घुड़सवार सेना के समानांतर चल रही थीं; जैसे ही वे घुड़सवार सेना की कतारों को पार कर गईं, उन्होंने

गोलीबारी शुरू कर दी। लेकिन अब अंग्रेजी सेना भी मराठा तोपखाने की मारक क्षमता के दायरे में आ गई थी। उन्होंने अंग्रेजी सेना पर भारी गोलाबारी की, जिसने घुड़सवार सेना से आगे बढ़कर अपनी वापसी के रास्ते काट दिए थे।

मराठों को फिरंगी सेना को खदेड़ने में लगभग एक घंटा लगा। भारी नुकसान झेलने के बाद पैदल सेना, घुड़सवार सेना और हल्की तोपें अस्त-व्यस्त हो गईं। पीछे हटने की अफरा-तफरी में अग्रिम पंक्ति और पिछली पंक्ति में अंतर करना मुश्किल हो गया। अगर उन्हें नदी हिंडन के पार अव्यवस्थित रूप से पीछे हटना पड़ता, तो वह भगदड़ होती, न कि पीछे हटना।

यह सौभाग्य था, या कहें कि लॉर्ड लेक साहब और उनके फिरंगी जनरलों का सौभाग्य था, कि उनकी अधिकांश तोपें सुरक्षित रूप से नदी पार कर गईं। मराठा जनरल ने फिरंगियों को नदी के पीछे हटते हुए देखकर यह समझ लिया कि दुश्मन के पास बचने का कोई रास्ता नहीं है और उसने ऊँची जगह से अपनी सौ से अधिक भारी तोपें दाग दीं। मराठा तोपखाने की गोलाबारी ने अंग्रेजों को लगभग पराजित कर दिया।

व्यवस्थित तरीके से पीछे हटने का कोई रास्ता न देखकर, भगवान साहिब ने असाधारण सामरिक सूझबूझ का परिचय देते हुए अपनी सेना को जंगल में बिखेरने का आदेश दिया, ताकि यह झूठा आभास हो कि सेना बिना किसी योजना के भाग रही है। दूसरी ओर, भगवान साहिब ने अपने दूतों के माध्यम से घुड़सवार सेना को तत्काल संदेश भेजा कि वे आगे न बढ़ें और पूरी गति से और गुप्त रूप से वापस लौट जाएं।

अंग्रेजी सेना के अचानक तितर-बितर हो जाने से मराठा सेनापति भ्रमित हो गया और उनका पीछा करने के लिए निकल पड़ा। मराठा सेना ने भारी तोपों से लगातार गोलाबारी करते हुए तेजी से आगे बढ़ना शुरू किया, जिससे दोनों सेनाओं के बीच की दूरी और कम हो गई और अंग्रेज सेना हल्की तोपों की मारक क्षमता के भीतर आ गई। मराठा सेना ने अपनी बंदूकों और कार्बाइनों से भीषण गोलाबारी की।

लगभग दोपहर हो चुकी थी। लॉर्ड लेक साहब मराठों की ओर धीरे-धीरे बढ़ रहे थे, लेकिन उनका दायाँ और अग्रिम दस्ता, जो स्पष्ट रूप से तितर-बितर हो गया था, और उनका पूरा शिविर और उनके अनुयायी अब दुश्मन की हल्की तोपों की मारक क्षमता के दायरे में आ गए थे। घनी झाड़ियों और जंगली बेरों से घिरे होने के कारण, हम ठीक से यह नहीं देख पा रहे थे कि कौन कहाँ तैनात है। लड़ाई के बारे में हमें बस इतना ही पता चल रहा था कि डरावनी आवाज़ें आ रही थीं: तोपों की, जानवरों की, इंसानों की; जंगल भागते या आगे बढ़ते सैनिकों के भारी कदमों से गूंज रहा था। शोर इतना ज़्यादा था कि हमारे लिए बात करना और अपनी कार्ययोजना पर चर्चा करना असंभव था। हम किसी सुरक्षित जगह पर डेरा डालने और शोर कम होने तक कुछ खाने और आराम करने के लिए बेचैन थे।

हमारे सहयात्रियों में फर्रुखाबाद की एक प्रसिद्ध दरबारी का परिवार भी शामिल था। अकबरी बाई बेहद धनी और लोकप्रिय थीं, और उनके प्रशंसकों में कई कुलीन लोग भी थे। उनके साथ महिला गायिकाएँ, संगीतकार, संगीत शिक्षक, सशस्त्र अंगरक्षक और घुड़सवार सहित कई सेवक और आश्रित लोग यात्रा कर रहे थे। फतेहगढ़ से लंबी यात्रा के दौरान, वे और हम सब दोस्त बन गए

थे। अकबरी बाई के गोरखा सैनिकों को एक उपयुक्त जगह मिली और उन्होंने हम सबके लिए तंबू लगाने शुरू कर दिए।

अचानक ऐसा लगा मानो सूरज हम पर टूट पड़ा हो। मराठा हमसे उतनी दूर नहीं थे जितना हमने सोचा था। शोरगुल इतना ज़्यादा था कि उनकी आहट सुनना या दोस्त-दुश्मन में फ़र्क करना नामुमकिन था। हम अपने बैलगाड़ियों से उतरकर तंबू में जाने ही वाले थे कि दर्जनों गोलों की बौछार से हम घिर गए। सल्फर, साल्टपीटर और पिच से भरे विस्फोटक गोले सीधे हम पर गिरे। कई और विस्फोटक गोले लोहे के बोल्ट, जंजीरों और ग्रैपल से भरे हुए थे। हमारी तबाही का ब्योरा देने में जितना समय लगा, उससे भी कम समय में सब कुछ नष्ट हो गया। तंबू, जानवर, पुरुष, महिलाएं सब मारे गए। उनमें मेरे प्यारे माता-पिता, मेरे चाचा और चाची, हमारे नौकर, वास्तव में हमारा सब कुछ शामिल था।

हमारे इस दुर्भाग्यपूर्ण परिवार में केवल आपका यह कथावाचक ही बच पाया। अकबरी बाई का तम्बू बच गया क्योंकि वह अभी तक लगाया ही नहीं गया था। अकबरी बाई, उनकी छोटी बेटी असगरी, कुछ दासियाँ और बच्ची की दाइयाँ बच गईं। आग के घेरे से ठीक बाहर अपनी बैलगाड़ी में होने के कारण वे आग से मामूली रूप से झुलस गईं।

उस समय मैं दस वर्ष का था और अपनी स्थिति तथा अपने भविष्य को भलीभांति समझता था। मैं जानता था कि अगर मैं एक पल भी और जी गया, तो मेरा जीवन उस दिन की विपत्ति से भी बदतर होगा। मैं अंधाधुंध नदी की ओर भागने लगा, इस उम्मीद में कि मैं डूब जाऊँगा, या शायद कोई गोली या गोला मुझे लग जाए। अकबरी बाई की एक बहादुर दासी ने मुझे तुरंत पकड़ लिया, या यूँ कहें कि मेरे हाथ-पैर जकड़ लिए। मैं जितना रो सकता था, खरोंच सकता था और काट सकता था, लेकिन उसने मुझे तब तक नहीं छोड़ा जब तक मैं थककर सो नहीं गया।

शाम ढल चुकी थी जब मैंने आंखें खोलीं और खुद को अकबरी बाई साहब के साथ बैलगाड़ी में पाया। युद्ध का शोरगुल थम चुका था। पीछा करने वालों और पीछा किए जाने वालों में से कोई भी कहीं नजर नहीं आ रहा था। मुझे यह समझने में काफी समय लगा कि यह युद्ध के बाद का दिन था; नियति का क्षण आ चुका था। लॉर्ड लेक साहब की रणनीति को अमल में लाते हुए, उनकी घुड़सवार सेना अचानक प्रकट हुई और मराठों को घेरकर उन पर पलटवार कर दिया। अनगिनत लोग हिंदन नदी में डूब गए, लेकिन मराठा सैनिकों के एक बड़े हिस्से ने अपनी जान की कुर्बानी दे दी। फिरंगी सेना के सैकड़ों सैनिक भी मारे गए। कुछ अंग्रेज कमांडरों ने भी मौत को गले लगाया। देशी सिपाहियों में से पांच से सात सौ घायल हुए; इतने ही लापता थे। शिविर में मौजूद लोगों और गैर-लड़ाकों के बीच जान-माल के नुकसान का कोई हिसाब नहीं रखा गया।

जब तक मुझे होश आया, लॉर्ड लेक साहब की सेनाएँ विजय ध्वज लहराते हुए दिल्ली नगर में प्रवेश कर चुकी थीं। जो भी सैनिक मृत्यु या विनाश से बच गए थे, वे तुरंत उनके पीछे-पीछे चल पड़े। हम, टूटे हुए दिल और शरीर से घायल, बचे हुए गैर-लड़ाकू सैनिक, यमुना नदी पार करने ही वाले थे। नदी पार करने के बाद, हम नगर के बाहरी इलाके में पहुँचे, लेकिन वहाँ हमें घूमने-फिरने वालों, खरीदारों और विक्रेताओं की हमेशा की तरह रंगीन भीड़ नहीं मिली। ऐसा लग रहा था मानो दिल्ली के सभी नागरिक अपने दरवाजों के पीछे सुरक्षित हो गए हों, उन्हें पता ही नहीं था कि फिरंगी सेना उन पर किस तरह का विनाश और लूटपाट करने की योजना बना रही है। सौभाग्य से, ईश्वर की कृपा उन पर थी: संकट का क्षण सुरक्षित रूप से टल गया।
हमने सुना था कि युवराज बहादुर लाल किले से निकलकर भगवान साहब का स्वागत करने और उन्हें ईश्वर के दरबार, पृथ्वी पर ईश्वर की छाया, तक ले जाने वाले थे। लेकिन उन्हें आने में बहुत देर हो गई। मजबूरीवश, भगवान साहब को उनका इंतज़ार करना पड़ा। उन्होंने इस समय का उपयोग अपनी सेना को शहर की दीवार से दूर, कश्मीरी द्वार से भी आगे, पहाड़ियों और जंगल में तैनात करने के लिए किया। उन्हें अपनी कमर कसने और आराम करने, खाना पकाने, खाने और विश्राम करने का आदेश दिया गया।
अकबरी बाई अपने दल के साथ चौरी बाज़ार में अपनी चचेरी बहन के घर मेहमान बनकर रुकीं। उन्होंने पहले सोचा था कि वे कुछ दिनों तक रुकेंगी, ताकि उनकी बदकिस्मती के सदमे और दुख तथा यात्रा की थकान थोड़ी कम हो जाए और वे शारीरिक और मानसिक रूप से कुछ स्वस्थ होकर फर्रुखाबाद लौट सकें। लेकिन उनकी चचेरी बहन ने उनसे कहा, 'प्यारी बहन, हम दोनों लंबे समय से अकेले हैं। अब जब तुम यहाँ हो, तो यहीं रुक जाओ। और आखिर तुम वापस जाओगी कहाँ? उस वीरान फर्रुखाबाद में हमारा कोई नहीं बचा है। यकीन मानो, अल्लाह और मौला अली यहाँ भी वैसे ही सहारा देंगे जैसे हर जगह देते हैं।'

उनकी बार-बार की मिन्नतों से आखिरकार अकबरी बाई का दिल पिघल गया। दिल्ली में बसने का फैसला करने के बाद, उन्होंने घर की तलाश शुरू की और जल्द ही चौरी बाजार में एक अच्छा घर पा लिया, ठीक उसी जगह जहाँ सड़क बाईं ओर मुड़कर कुचा पंडित में जाती थी। पूरा इलाका उच्च कोटि की नर्तकियों और दरबारी महिलाओं के आलीशान घरों से भरा हुआ था। अकबरी बाई का घर जल्द ही शहर के संभ्रांत वर्ग के लोगों और प्रशंसकों को आकर्षित करने लगा। उनका घर और उनका प्रतिष्ठान अपनी शान-शौकत और वैभव के लिए हर जगह मशहूर हो गया।
मैं अकबरी बाई की मेरे प्रति दयालुता को कभी नहीं भूल सकता। यह पूरी तरह से करुणापूर्ण और निःस्वार्थ थी। उन्होंने मुझे अपने बच्चे की तरह पाला। उन्होंने मुझे अजमेरी गेट स्थित गाज़ी-उद-दीन खान के मदरसे में भेजा। वहाँ मैंने अरबी और फ़ारसी का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया। घर पर, उन्होंने मुझे संगीत की बुनियादी शिक्षा दी और मैंने एक-दो वाद्य यंत्र बजाने में भी कुछ निपुणता हासिल की। मुझे हिंदी की शिक्षा के लिए मदरसे जाने की आवश्यकता नहीं पड़ी।

वास्तव में, उस समय किसी भी विद्यालय में हिंदी नहीं पढ़ाई जाती थी। बहुत जल्द, मैं दिल्ली के फ़ारसी साहित्य के महान विद्वानों जैसे मियां नासिर अली, मियां नूरुल ऐन वक़ीफ़, राय आनंद राम मुखलिस, किशन चंद इखलास, सुखराज सबकात और उन सभी में सर्वोत्कृष्ट, मिर्ज़ा अब्दुल कादिर बेदिल के नामों और रचनाओं से परिचित हो गया। हिंदी में, मैंने इसके प्रमुख विद्वान शाह हातिम और उनके शिष्य मिर्ज़ा मुहम्मद रफ़ी सौदा की रचनाओं को जाना और पढ़ा, जो शायद अपने गुरु से भी महान थे; मुझे मीर मुहम्मद ताकी साहब, जिन्हें सभी लोग मात्र मीर के नाम से जानते थे, आदरणीय ख्वाजा मीर दर्द और उनके समान ही प्रतिष्ठित भाई मीर असर, राय सरब सुख दीवाना के कार्यों के बारे में भी जानने का अवसर मिला, साथ ही कई अन्य प्रसिद्ध और प्रतिष्ठित व्यक्तियों के कार्यों के बारे में भी।

यह सब तो ठीक था, लेकिन अकबरी बाई साहब ने मुझ पर जो दया और स्नेह बरसाया, उसका इससे बड़ा प्रमाण और क्या हो सकता है कि जब मैं पंद्रह साल की हुई और उनकी बेटी असगरी तेरह साल की हुई, तो उन्होंने हम दोनों का विवाह करा दिया। वे चाहती थीं कि हम उनके घर में ही रहें, लेकिन मैं चाहती थी कि हम अलग रहें और मैं अपने पिता की तरह साधकर बनूँ। उन्होंने बड़ी विनम्रता से सहमति दे दी और उन्होंने न केवल हमें अनुमति दी, बल्कि कुचा राय मान में हमारे लिए एक उपयुक्त घर भी खरीद लिया।

मेरा कारोबार जल्दी ही चल पड़ा और हमारे दिन ठीक-ठाक खुशहाल बीतने लगे। असगरी अक्सर अपनी माँ के साथ मिलने जाती थी और मैं भी वहाँ जाता था, हालाँकि कम ही जाता था। शादी के दूसरे साल हमारी एक बेटी हुई। अपनी नानी की तरह गोरी और गुलाबी रंग की, उसके चेहरे और हाथ-पैर कोमल थे और जन्म से ही उसके बाल बेहद घने और घुंघराले थे, मानो किसी दिव्य कारागार ने उसके जन्म से पहले ही उन्हें संवारा हो। हमने उसका नाम अनवरी खानम और बारी बेगम रखा। उसके बाद, हमें लगातार दो और बेटियाँ हुईं। दोनों बेहद खूबसूरत थीं, लेकिन अपने पिता और दादा की तरह सांवली या हल्के भूरे रंग की थीं। अगर बारी बेगम के चेहरे और बनावट हिंदुस्तानी लड़कियों जैसी थी, तो बाकी दोनों कश्मीरी लड़कियों जैसी दिखती थीं, बस उनका रंग अलग था। दूसरी बेटी का नाम उमदा खानम या मंझली बेगम रखा। सबसे छोटी बेटी का नाम हमने वज़ीर खानम या छोटी बेगम रखा। अकबरी बाई साहब कहती थीं कि ये दोनों जब बड़ी हुईं तो कश्मीर की सुंदरियों की तरह चलने लगीं। यह बिल्कुल उस पुरानी कहावत की तरह था: चाहे माँ का गर्भ हो या कुम्हार का भट्टा, कुछ गोरे होते हैं, कुछ काले।

छोटी उम्र से ही बारी बेगम प्रार्थना में लीन रहती थीं—अल्लाह और उसके पैगंबर के प्रति प्रेम ही उनके जीवन का आधार था। सात साल की उम्र से ही उन्होंने पांचों अनिवार्य नमाज़ें कभी नहीं छोड़ीं और नौ साल की उम्र से ही रमज़ान के पूरे महीने रोज़ा रखती थीं। उन्होंने कुरान के कई छोटे अध्याय, अल्लाह के पैगंबर की कुछ दुआएं और कथन तथा पैगंबरों की कहानियों के पन्ने जल्दी ही कंठस्थ कर लिए थे। बिना कहे ही वे पर्दा प्रथा का पूरी सख्ती से पालन करती थीं। उन्हें गुड़ियों या किसी भी तरह के खेल में कोई रुचि नहीं थी; वे कभी किसी मेले में नहीं जाती थीं, यहाँ तक कि दिल्ली के सबसे प्रसिद्ध मेले—सर्दियों के अंत के ठीक बाद मनाए जाने वाले बसंत के उत्सव में भी नहीं। मुहर्रम के मातम के महीने में, हर जगह की औरतें, जवान और बूढ़ी, अमीर

लोगों के घरों की ऊपरी मंज़िलों, बालकनियों और छतों पर इकट्ठा होती थीं—चाहे वे हिंदू हों या मुसलमान—और मुहर्रम के जुलूस देखती थीं, खासकर शहीदों की कब्रों की प्रतिकृतियां, जिन्हें ताजिया कहा जाता था। औरतें खानम का बाज़ार, चौरी बाज़ार और कुचा चेलान से आती थीं, जुलूस देखने और हो सके तो उसमें हिस्सा लेने के लिए। लेकिन मेरी सबसे बड़ी बेटी नहीं: उसे इन सब चीज़ों में कोई दिलचस्पी नहीं थी।

बारी बेगम कभी-कभी दिल्ली के महानतम मुस्लिम संत और विद्वान शाह अब्दुल अजीज के भाषण या उपदेश सुनने जाया करती थीं, जब वे पास की फतेहपुरी की जामी मस्जिद में भाषण देते थे। उनका व्यवहार देवदूत जैसा था, ठीक वैसे ही जैसे उनकी सूरत किसी हूर जैसी थी। इसलिए जब वे मुश्किल से दस साल की थीं, तभी उनके लिए शादी के प्रस्ताव आने शुरू हो गए। हमने इस मामले पर गंभीरता से विचार किया और शादी के इच्छुक परिवारों में से सबसे अच्छे परिवार को चुनकर बारह साल की उम्र में उनकी शादी कर दी। वे एक समृद्ध परिवार थे, लेकिन बहुत अमीर नहीं थे, और शेख समुदाय से थे। उनके तौर-तरीके और घरेलू संस्कृति श्रेष्ठ और धार्मिक थी; संक्षेप में, वे व्यवहार से मिर्जा और विचारधारा से सूफी थे; इस प्रकार उन्हें धार्मिक और सांसारिक दोनों ही सुख-सुविधाओं का भरपूर लाभ प्राप्त था। उनके परिवार का घर फाटक हबश खान में बस गया, जो हवेली हुसामुद्दीन हैदर के नाम से मशहूर विशाल इमारत के पास स्थित था। उनके पति, मियां मौलवी मुहम्मद नजीर, एक सूफी सिलसिले से जुड़े थे और एक संपन्न व्यक्ति थे। सर्वशक्तिमान ईश्वर की कृपा से हमारी बेटी अपने वैवाहिक जीवन में सुखी रही। ईश्वर की कृपा और दया के लिए हम उनकी स्तुति करते हैं।

मंझली बेगम भी गंभीर स्वभाव की थीं, लेकिन उन्हें अपनी नानी और उनका घर सबसे प्रिय था और अगर उनकी मर्ज़ी चलती तो वे वहीं बस जाना चाहती थीं। अकबरी बाई साहब और उनकी कुशल सेविकाओं की संगति ने उनमें एक उच्च कोटि की बेगम के लिए उपयुक्त सभी मनमोहक शिष्टाचार विकसित कर दिए थे। वे परिष्कृत लहजे में बोलती थीं, हाजिरजवाबी और जीवंत एवं हल्के-फुल्के संवादों में निपुण थीं, और उन्हें सैकड़ों उर्दू और फारसी छंदों का ज्ञान था, जिनका वे अक्सर अपनी बातचीत में बुद्धिमानी और उपयुक्तता से प्रयोग करती थीं। वे काव्य-प्रेमी थीं और कविता की लय की अच्छी समझ रखती थीं, और कभी-कभार एक-दो छंद रचती भी थीं। वे गायन की नई शैली, ख्याल से भी भलीभांति परिचित थीं, जो मुहम्मद रौशन अख्तर मुहम्मद शाह बादशाह के समय में प्रचलित हुई थी, जो अब स्वर्ग में विराजमान हैं। उन्होंने संगीत कला को व्यावसायिक रूप से नहीं, बल्कि केवल अपनी रुचि को संतुष्ट करने के लिए सीखा था।

नवाब सैयद मुहम्मद सईद खान बहादुर के वंशज नवाब सैयद यूसुफ अली खान बहादुर उस समय दिल्ली नगर की शोभा थे। रामपुर नगर के उत्तराधिकारी नियुक्त होने से पहले ही वे रामपुर के जीवंत शहर से दिल्ली आ बसे थे। वे दिल्ली में इस्लामी और दार्शनिक विषयों का अध्ययन करने आए थे, जहाँ उन्हें जलालुद्दीन दव्वानी और तफ्ताज़ानी के समकक्ष माने जाने वाले मौलाना सदरुद्दीन खान साहब अज़ुर्दा और उस युग के अरस्तू, उस समय के अविसेना, नासिरुद्दीन तुसी के लिए ईर्ष्या का विषय और रहज़ेस के लिए गौरव माने जाने वाले मौलाना फ़ज़ल-ए-हक खैराबादी मिले। नवाब इन सभी के सबसे कुशल शिष्यों में से एक थे। जब भी उनकी पढ़ाई पूरी

नहीं होती थी, वे आराम करने के लिए अकबरी बाई साहब के घर जाया करते थे। वहाँ उनकी नज़र मंझली बेगम पर पड़ी और वे उन पर मोहित हो गए।
इस संबंध को सौभाग्य और समृद्धि का आगमन मानते हुए, अकबरी बाई साहब ने पूरे दिल से इसका समर्थन किया। परिणामस्वरूप, मेरे और उनकी माता के कड़े विरोध के बावजूद, मंझली बेगम उस भव्य और सुंदर नवाब की स्थापना से जुड़ गईं।

जब छोटी नन्ही सी थी, तभी से ही वह ऊँची उड़ान भरने लगी और बेखौफ हो गई, तो मैं मंझली के लिए कितना शिकायत कर सकती थी, कितना परेशान हो सकती थी और रो सकती थी? बचपन से ही उसमें एक तरह की परिपक्वता झलकती थी, और दूसरों के साथ उसका व्यवहार और बर्ताव एक तरह की सजी-धजी अदा से भरा होता था। उसे बड़ा होते देख मैं उसके लिए चिंतित हो जाती थी, यह सोचकर डर जाती थी कि जब वह औरत बनेगी तो मर्दों पर क्या कहर बरपाएगी। उसकी माँ की नसीहतें, उसकी सबसे बड़ी बहन का प्यार और आदर्श, ये सब उसकी नानी की लाडली पोती की मनमानी शरारतों के आगे फीके पड़ गए। दस साल की उम्र के बाद, वह अपना ज़्यादातर समय अकबरी बाई साहब के आलीशान कमरे में बिताती थी। सच है, उसने वहाँ से थोड़ा-बहुत गाना-बजाना सीखा, लेकिन उसकी असली शिक्षा उन कलाओं और रहस्यों में हुई, जिनमें महारत हासिल करने से एक औरत मर्द की इच्छा और जुनून को वश में कर सकती है। दरअसल, जब वह महज सात या आठ साल की थी, तब भी वह अपनी सुंदरता से अवगत थी, और उससे भी कहीं अधिक अपनी सुंदरता की शक्ति और उस शक्ति का उपयोग करने की अपनी अनूठी क्षमता से अवगत थी।
वह नौकरानियों, फेरीवालों, मिस्त्रियों, पानी ढोने वालों, फूल बेचने वालों, ठेला चलाने वालों, छोटे व्यापारियों और यहाँ तक कि अपने माता-पिता को भी अपने इशारों पर नचा सकती थी, उन्हें अपनी मर्ज़ी से नचाती थी। वह जो चाहती, ले लेती और जिससे चाहे, जिस काम के लिए चाहे, सहमति ले लेती थी। अगर उसे बुरा लगता, तो वह इस तरह रूठ जाती कि उसे उस हालत में देखने वालों का दिल पसीज जाता। भला इस कोमल, फूल जैसी आत्मा के साथ कोई इतना क्रूर कैसे हो सकता है? वे उदास होकर सोचते। अगर वह खिलखिलाकर हंसती, तो ऐसा लगता मानो शिराज के किसी बगीचे में बुलबुल चहचहा रही हो, मानो उसकी छोटी सी चोंच में गुलाब की पंखुड़ी हो। उसे कोई भी पोशाक पहना दो, ऐसा लगता मानो सारे वस्त्र उसी के लिए सिले हों। जैसा कि रिवाज था, अनवरी अपना लगभग सारा समय अपने पति के साथ, उनके माता-पिता के घर पर बिताती थी। वह महीने में कम से कम एक बार हमसे मिलने आती थी और त्योहारों पर हमेशा उपहार भेजती थी। मंझली से उसका कोई वास्ता नहीं था। जहाँ तक छोटी की बात है, उसके पास दूसरों के लिए शायद ही कोई समय होता था, वह हमेशा अपने आप में ही मग्न रहती थी। ग्यारह साल की उम्र तक आते-आते वह न केवल कुचा राय मान में, बल्कि आस-पास की गलियों, उपगलियों और घरों में भी एक उभरती हुई सुंदरी के रूप में मशहूर हो गई थी, यहाँ तक कि आगंतुक उसे देखने के लिए बहाने या बहाने बनाकर आने लगते थे। वे कपड़े बेचने वाले, नमकीन बेचने वाले या शर्बत बेचने वाले बनकर आते थे, तो कुछ फूल बेचने वाले बनकर आते

थे। अगर किसी आगंतुक को कोई और बहाना सूझता नहीं, तो वह रास्ता भटकने वाले की तरह हमारी गली में आ जाता था।

ज़ाहिर है, छोटी कभी दरवाज़ा पूरा नहीं खोलती थी, और गली में तो बिल्कुल भी नहीं आती थी। वह दरवाज़े के पीछे से या बालकनी की आधी खुली खिड़की के पीछे से एक-दो शब्द कहकर उन्हें विदा कर देती थी। कभी-कभी ऐसा होता था कि बाज़ारों और कॉफ़ी हाउसों में अक्सर आने वाले ऊँचे खानदान के किशोरों में से जो ज़्यादा उद्दंड होते थे, वे किसी रत्न व्यापारी या आभूषण विक्रेता के साथ आ जाते थे और कहते थे कि उन्हें पता चला है कि यहाँ ऐसे व्यापारी की ज़रूरत है, इसलिए वे उसे हमारे दरवाज़े तक लाए हैं। वे गिड़गिड़ाते हुए कहते, "कृपया उसकी चीज़ों में से जो चाहें ऑर्डर करें या खरीदें, और भुगतान की चिंता न करें, हम यह सुनिश्चित करेंगे कि व्यापारी को उसका पैसा मिल जाए।"

नवीनतम डिज़ाइन के गहने, फैशन में चलन में आए कपड़े, दूर-दराज के देशों से लाए गए अनोखे कट और रंग के कपड़े, नवीनतम मॉडल और स्टाइल के जूते और सैंडल: छोटी को इन सब चीजों का बहुत शौक था। वह सभी गहनों के नाम जानती थी, चाहे वे कितने भी रहस्यमय क्यों न हों, और उसे विभिन्न प्रकार के कपड़ों और उनकी कीमतों की अच्छी जानकारी थी। उसे पता था कि कलकत्ता, हैदराबाद और लखनऊ में उच्च वर्ग की फैशनेबल महिलाएं क्या पहनती हैं। मुझे कभी पता नहीं चला कि वह किससे पूछती थी और कहाँ से जानकारी लेती थी, लेकिन उसे इन सब चीजों की अचूक जानकारी होती थी।

कई बार अमीर बिगड़े हुए बच्चे दूर-दराज के इलाकों से छोटी को नई-नई चीज़ें, संग्रहणीय वस्तुएँ और महंगे उपहार भेजने के बहाने ढूंढ लेते थे; कभी-कभी तो वे ऐसी महिलाओं की सेवाएँ भी लेते थे जो संदेशों के आदान-प्रदान और विवाह प्रस्तावों को अकबरी बाई के घर तक पहुँचाने के लिए पेशेवर बिचौलियों का काम करती थीं। मैं और असगरी हमेशा ऐसे अवांछित उपहारों का विरोध करते और उन्हें ठुकरा देते थे। छोटी के चाहने वाले कुछ समय के लिए रुक जाते, फिर दुगने जोश के साथ अपनी अवांछित ज़िद फिर से शुरू कर देते।

वज़ीर के तेरहवें वर्ष में प्रवेश करते ही उसके लिए औपचारिक प्रस्ताव आने लगे। इनमें से कुछ प्रतिष्ठित परिवारों से थे, तो कुछ छोटे-मोटे कुलीन परिवारों से। कुछ ने सुझाव दिया कि वज़ीर अपने घर में ही रह सकती है, लेकिन एक रखैल के रूप में, जो पूरी तरह से केवल एक ही व्यक्ति, यानी प्रस्तावक के प्रति समर्पित हो। लेकिन किसी से विवाह करने या किसी के साथ घरेलू संबंध स्थापित करने की बात सुनते ही वह ऐसे भड़क उठती जैसे उसके भीतर कोई आग लग गई हो। उसका चेहरा नाखुशी से लाल हो जाता, भौंहें तन जातीं और वह राजकुमारी के अहंकार से कहती कि उसे गृहस्थी के इस रोग में कोई रुचि नहीं है।

तब तक, उनके अन्य गुण भी स्पष्ट हो चुके थे, या अधिक ध्यान देने योग्य हो गए थे। उनकी आवाज़ हमेशा से सुरीली थी और यद्यपि उनमें हमारे रागों और संगीत शैलियों में महारत हासिल करने के लिए आवश्यक कठिन अभ्यास और परिश्रम करने की बुद्धि या हृदय नहीं था, फिर भी उन्होंने अपनी नानी के यहाँ सुनकर ही कई राग और उप-राग सीख लिए थे। उदाहरण के लिए, उन्हें रागों में बसंत, यमन, बहार और बागेसरी का ज्ञान था, और दादरा जैसी कुछ लोकप्रिय

शैलियों का भी; इसके अलावा, उन्हें चरवाहों द्वारा बहुत पसंद की जाने वाली चैती और अवध से हाल ही में आई बनारसी ठुमरी जैसी कुछ प्रसिद्ध धुनें भी आती थीं; और वे अफजल गोपाल की बिकत कहानी के लंबे अंश हिंदू व्यापारियों की पत्नियों के लहजे में इतनी भावपूर्ण आवाज़ में गा सकती थीं कि श्रोताओं का दिल पिघलकर आँसू से भर आता था।

जैसा कि मैंने ऊपर बताया, उन्हें हिंदी कविता की लय की अच्छी समझ थी और समय के साथ वे ग़ज़ल कला में प्रसिद्ध उस्ताद मियां शाह नासिर की शिष्या बन गईं। नवाब हुसामुद्दीन हैदर खान बहादुर के दूसरे पुत्र मुज़फ़्फ़र-उद-दौला नासिरुल मुल्क मिर्ज़ा सैफुद्दीन हैदर खान सैफ जंग के माध्यम से उन्हें शाह साहब से मिलने का अवसर मिला। जैसा कि मैंने पहले बताया, बड़ी बेगम के पति और परिवार हुसामुद्दीन हैदर खान के महल के पास ही रहते थे, इसलिए उनके बीच कुछ जान-पहचान थी, और शायद हुसामुद्दीन हैदर खान वज़ीर का नाम भी जानते थे। खैर, हुसामुद्दीन हैदर खान कभी-कभी अकबरी बाई साहब के घर जाते थे, और वहीं छोटी बेगम को नवाब से व्यक्तिगत परिचय और अभिवादन का सम्मान और गौरव प्राप्त हुआ—उनकी ओर से सम्मानपूर्वक और उनकी ओर से विनम्र और सौम्य अभिवादन।

शाह नासिर साहब एक दयालु गुरु थे। उन्होंने स्वयं छोटी का उपनाम ज़ुहरा (फिरंगी भाषा में शुक्र) रखने का सुझाव दिया था। जब वे अपनी प्रतिभाशाली शिष्या की ग़ज़ल सुधार कर लौटाते थे, तो शायद ही कभी ऐसा होता था कि वे कम से कम एक पंक्ति पर विशेष प्रशंसा न करते हों। कभी-कभी, वह अपनी ग़ज़ल के साथ कुछ छोटी भेंट भेजती थीं, जिसे गुरु सहर्ष स्वीकार कर लेते थे, लेकिन हमेशा कुछ न कुछ टिप्पणी के साथ—हमेशा फ़ारसी में—जैसे, 'उस प्रिय व्यक्ति की कविता की पंक्तियाँ ताज़गी भरी और खिलखिलाती हैं, और वे सुंदर मुहावरे गढ़ती हैं। ईश्वर इन्हें और भी निखारें। अन्य भेंटों की कोई आवश्यकता नहीं है। फ़कीर, शाह नासिर।'

कविता के लिए उपयुक्त स्वभाव की बात करें तो मंझली किसी से कम नहीं थीं। नवाब यूसुफ अली खान की मदद से वे हाफ़िज़ अब्दुर रहमान खान इहसान की शिष्या बनीं और नवाब ने ही उन्हें 'मह' उपनाम सुझाया, लेकिन कविता उनका असली शौक नहीं थी। उन्हें सुलेख और कढ़ाई में अधिक रुचि थी। रामपुर आने-जाने के कारण उनके पास कविता के लिए आवश्यक गहन मानसिक साधना के लिए समय नहीं बचता था। अगर वज़ीर ने पर्याप्त मेहनत की होती और अपना पूरा ध्यान कविता पर लगाया होता, तो वे हैदराबाद की प्रसिद्ध गायिका और कवयित्री मह लाका बाई चंदा से कम कवयित्री नहीं होतीं। लेकिन वे कविता लेखन को पुरुषों के बराबर दर्जा पाने का एक शौक मात्र मानती थीं और उनके दिलों को जीतने का एक ज़रिया समझती थीं। इस हद तक वे कविता रचना की कला में माहिर थीं; बाकी बातें मायने नहीं रखतीं। मैंने उनकी एक ग़ज़ल सहेज कर रखी है जो उन्होंने जयपुर जाने से पहले रची थी। इसमें उनके आदरणीय गुरु द्वारा किए गए संशोधन भी शामिल हैं। ग़ज़ल को पूर्व निर्धारित पंक्ति के छंद और लय में लिखा गया था। वह पंक्ति थी:

कोई भी भिखारी को स्नेह और दुलार नहीं देता;

वज़ीर ने अपनी लिखी पहली पंक्ति के साथ छंद को पूरा किया:

ज़ुहरा, वह तुम्हें चुंबन नहीं देगी: कोई भी भिखारी को स्नेह या दुलार नहीं देता।

उनके गुरु ने इस आयत के आगे स्वीकृति का चिह्न लगा दिया था। नीचे मैं पूरी ग़ज़ल और उस्ताद द्वारा किए गए संशोधन दे रहा हूँ:
आओ, मैं अपना यह दिल कहीं कुएँ में फेंक दूँ और इस तरह अपनी सारी समस्याओं का समाधान कर लूँ। दिल से उठती दर्द की लहरें, ये लहरें नदी के किनारे से टकराकर उसे काटती हैं।
अपने ही खून में लथपथ, उसके रास्ते में पड़ा हुआ: शिकारी चला गया, शिकार को घायल छोड़कर: काश कोई उस घायल प्रेमी को उठा ले!
शाह साहब अक्सर किसी सुधार का स्पष्टीकरण या कारण नहीं बताते थे, लेकिन उन्होंने पहली पंक्ति को काटकर उसकी जगह अपनी एक पंक्ति लिख दी। हाशिये में उन्होंने फ़ारसी में लिखा, 'केवल ईश्वर ही दोषरहित है! किसके मार्ग में, और क्यों रक्त में लथपथ? दोनों पंक्तियों में कोई संबंध नहीं है।'

ओह! कितना उबाऊ है ये उपदेशक! परामर्शदाता की बात सुनना और कुछ न कहना ही बेहतर है, मैं तो उसे जवाब नहीं देने वाला, वो तो बिल्कुल मूर्ख है।
यहां भी, पहली पंक्ति को स्वयं शाह साहब द्वारा रचित एक नई पंक्ति से बदल दिया गया था। उन्होंने इसका कोई कारण नहीं बताया, लेकिन बात स्पष्ट होनी चाहिए: इस सुधार से छंद अधिक परिष्कृत मुहावरे के अनुरूप हो गए और इसके अलावा, उत्तर देने का अवसर किसी उपदेशक की तुलना में एक परामर्शदाता के लिए अधिक उपयुक्त है।
क्या शिकारी-पकड़ने वाला फूलों के बगीचे में वापस आ गया है? क्या शिकारी-पकड़ने वाला फूलों के बगीचे में घूम रहा है? क्या हुआ? बुलबुलें चुप क्यों हो गई हैं? बुलबुलें चुप क्यों हैं? क्या हुआ?
दोनों पंक्तियों में सुधार का कोई कारण नहीं बताया गया, लेकिन यह स्पष्ट प्रतीत होता है। संशोधित पहली पंक्ति में प्रवाह और मुहावरे की उपयुक्तता बढ़ जाती है, जबकि दूसरी पंक्ति व्याकरण और वाक्य संरचना के अनुरूप बेहतर हो जाती है, हालांकि एक शब्द को छोड़कर बाकी सभी शब्द समान हैं।
लैला की सुगंध रेगिस्तान और पहाड़ियों में व्याप्त है, बेचारा ऊंट चालक, वह उसके ऊंट के बच्चों की देखभाल करता है!
उस्ताद ने इस आयत पर भी अपनी स्वीकृति का चिह्न लगा दिया। और अब अंतिम आयत:
ज़ुहरा, वह तुम्हें चुंबन नहीं देगी: कोई भी भिखारी को स्नेह या दुलार नहीं देता।
यह कहना शायद उचित न लगे, लेकिन सच्चाई यह है कि सभी छंद बौद्धिक शक्ति और नए विषयों को रचने की क्षमता को दर्शाते हैं। चौदह वर्षीय अविवाहित और पर्दा प्रथा का पालन करने वाली लड़की की रचना के बजाय, यह ग़ज़ल किसी परिपक्व कवि की रचना प्रतीत होती है, जिसने उस्ताद कवियों की संगति का अनुभव किया हो।

जब वज़ीर पंद्रह वर्ष की थीं, तभी अचानक हम पर विपत्ति आ पड़ी। असगरी बीमार पड़ गईं और देखते ही देखते, मात्र चार दिनों में ही उनका देहांत हो गया। अक्सर यह कहावत सुनने को

मिलती है कि रोजी-रोटी के लिए चतुराई चाहिए होती है, और मृत्यु को तो बस एक बहाना, लेकिन उन दिनों दिल्ली में मृत्यु लाने वाली कोई भी चीज नहीं थी: न कोई महामारी, न नदी में बाढ़, न भूकंप, और न ही किसी लुटेरे, मराठा या दुर्रानी का आगमन। भाग्य का निर्धारण करने वाली और नियति बांटने वाली शक्तियों के पास मेरे घर के सबसे उज्ज्वल द्वार को इस तरह अंधकारमय करने का कोई बहाना नहीं था।

सर्दी ढल रही थी। मेरी प्यारी और स्नेहशील पत्नी को कुछ दिनों के लिए हल्की-फुल्की सर्दी, खांसी और जुकाम हो गया था, कुछ गंभीर नहीं, बस वैसी ही परेशानी जो दो मौसमों के एक साथ आने पर होती है। हम सभी का मानना था कि सर्दी एक हफ्ते या दस दिन में ठीक हो जाएगी: नाक और गले की जकड़न दूर हो जाएगी और साइनस से नीचे बह जाएगी, जिससे आराम मिलेगा। किसी दवा की ज़रूरत नहीं समझी गई, सिवाय उस औषधीय काढ़े के जो आमतौर पर ऐसी सर्दी के लिए दिया जाता था। मैं इसे हकीम महमूद खान साहब के क्लिनिक से नियमित रूप से लाता था, जो हमारे घर से ज़्यादा दूर नहीं था।

पांचवें दिन असगरी को बेहतर महसूस हुआ। उसने ठंडे पानी से अच्छी तरह स्नान करने का सोचा, क्योंकि चार दिनों से न नहाने और कपड़े न बदलने के कारण वह खुद को बेजान और मैली महसूस कर रही थी। खैर, वह स्नान साधारण नहीं था: वह तो मौत को दावत देने जैसा था। स्नान के तुरंत बाद ही उसका शरीर तेज बुखार से जलने लगा। उसने खुद को शॉल में कसकर लपेट लिया और बिस्तर पर गिर पड़ी, मानो उसे होश ही न हो। मैं उस समय घर में नहीं था, क्योंकि मैं कुछ गहने एक ग्राहक को देने के लिए थोड़ी देर के लिए बाहर गया था। घर लौटकर उसे बिस्तर पर पाकर मुझे लगा कि वह स्नान के बाद गहरी नींद में सो रही होगी। संयोग से मैंने उसकी कलाई को छुआ और सदमे से तुरंत अपना हाथ पीछे खींच लिया। वह सोई नहीं थी: वह लगभग बेहोश थी और उसके दुबले-पतले शरीर में भयंकर बुखार दौड़ रहा था।

छोटी ऊपर अपने कमरे में अपनी ही दुनिया में खोई हुई थी, हमेशा की तरह खुद को बहुत बड़ा समझती थी। उसे अपनी मां की हालत और नीचे के दिल दहला देने वाले मंजर का जरा भी अंदाजा नहीं था। मैंने उसे तुरंत नीचे बुलाया और हकीम महमूद खान साहब के घर की तरफ भागा, लेकिन मुझे बड़ा झटका लगा और दुर्भाग्य से पता चला कि वे वहां नहीं थे। घबराहट में मैंने एक सहायक को सारी बात बताई, उससे जल्दी से जल्दी दवा लिखवाई और वापस घर आ गया; लेकिन असगरी अभी भी बेहोश थे।

हम सारा दिन उसके बिस्तर के पास मंडराते रहे, इस उम्मीद में कि वह अपनी आँखें खोलेगी। शाम होते-होते हमें सूचना मिली कि हकीम महमूद खान अभी भी उपलब्ध नहीं हैं, लेकिन उन्होंने अपने सबसे अच्छे सहायक और शिष्य हकीम भूरे खान साहब को मरीज की जांच करने और दवा लिखने के लिए भेजा है। उन दिनों हकीम भूरे खान तेजी से अपनी प्रतिष्ठा बना रहे थे। वे अपनी खुली पालकी में हमारे घर आए। मरीज की नब्ज़ जाँचते ही उनका चेहरा गंभीर हो गया। धीमी आवाज़ में उन्होंने आदेश दिया: 'फेफड़ों में तीव्र सूजन है, जिससे प्लूरा प्रभावित है, और अपनी कमज़ोर हालत में मरीज बलगम नहीं निकाल पा रही है। अगर बलगम आगे बढ़कर श्वासनली को अवरुद्ध कर दे तो...'

‘हकीम साहब, कृपया बलगम के स्राव के लिए कुछ कीजिए... मैं तुरंत जाकर किसी भी तरह से आपकी बताई हुई दवा मंगवा लूँगा, और... शायद हकीम महमूद खान साहब से भी सलाह लेना अच्छा रहेगा?’
‘ज़रूर, मैं उनसे सलाह लूंगा। लेकिन अभी तो बलगम तेज़ी से जमा हो रहा है।’ उन्होंने एक कागज़ पर डॉक्टरों की अस्पष्ट लिखावट में कुछ लिखा। ‘ये लीजिए, इस लेप का नुस्खा। अभी तुरंत लाल कुआं जाइए और वैद्य अब्दुल मजीद से इसे बिना देर किए बनवा लीजिए। लेप को हल्का गर्म कीजिए, पट्टियों पर फैलाइए और प्रभावित हिस्सों पर लगाइए। हर पौने घंटे में ऐसा कीजिए। अल्लाह हम सबका मालिक है।’
‘हाकिम साहब, बुखार का क्या हुआ?’ मैंने हिम्मत करके पूछा।
‘हम उचित समय पर इसका ध्यान रखेंगे, निश्चित रूप से। फिलहाल, गले में जमा हुआ बलगम और अंदरूनी सूजन के कारण किसी भी दवा का रोगी के गले से नीचे जाना असंभव है।’
मैं हकीम के साथ ही निकला और लाल कुआं स्थित औषधालय की ओर भागा। मैंने उनसे मेरे लिए दवा तैयार रखने को कहा और तुरंत कुचा पंडित में अकबरी बाई साहब को सूचित करने के लिए दौड़ पड़ा। फिर मैं वापस औषधालय की ओर लौटा और घर आ गया।
जब मैं लौटा, तब तक अकबरी बाई, उसके पीछे मंझली और बारी अपनी मां के घर तेजी से निकल चुकी थीं। मैं और लड़कियां पूरी रात असगरी के बिस्तर से लिपटी रहीं, बुखार से तड़पते उसके शरीर में जीवन की आखिरी सांस को देखती रहीं। अगर देखभाल करने वालों की प्रार्थनाओं और आंसुओं से भरी विलाप में जरा भी दम होता, तो एक नहीं, बल्कि सौ फ़रिश्ते भी मेरी प्यारी पत्नी को मुझसे नहीं छीन सकते थे। आधी रात के बाद उसकी सांसें अनियमित हो गईं। उसके फेफड़ों में जमे बलगम को थोड़ा सा भी खांसकर निकालने की ताकत उसमें नहीं बची थी। उसका गला पूरी तरह से बंद हो गया था, उसकी सांसें एक कर्कश घरघराहट जैसी थीं, मानो उसकी पसलियों पर आरी चल रही हो। वह बस कभी-कभार हांफते हुए 'अल्लाह, अल्लाह' कह पाती थी, इससे ज्यादा कुछ नहीं।
जैसे ही नए दिन का उदय हुआ, महिलाओं ने कुरान की आयत यासीन का पाठ करना शुरू किया, जो मृत्यु के कष्टों को कम करती है। मुअज़्ज़िनों द्वारा सुबह की नमाज़ के लिए पुकारने से ठीक पहले, असगरी की गर्दन एक तरफ झुक गई, उनकी अमर आत्मा ने शरीर त्याग दिया। निःसंदेह हम ईश्वर के हैं और निःसंदेह, हमें उन्हीं के पास लौटना है।
बाहर हर जगह भले ही सुबह का समय रहा हो; लेकिन मेरा घर रात के अंधेरे में डूबा हुआ था। मेरी दोनों बेटियाँ, बारी बेगम और मंझली बेगम, चालीस दिन के शोक समारोह तक मेरे साथ रहीं। अपने पति के घर लौटने से पहले, बारी ने काफी हिचकिचाहट के साथ मुझसे कहा, 'क्या मैं कुछ कह सकती हूँ, पिताजी?'
आपको पूछने की जरूरत नहीं है। बेझिझक बोलिए।
‘अब आप बिलकुल अकेले हैं,’ उसने ज़मीन पर नज़रें गड़ाए कहा। ‘उम्दा खानम के भविष्य के बारे में कोई कुछ नहीं कह सकता, वैसे भी उसका स्वभाव अजीब और पराया है। लेकिन मेरी असली चिंता तो उस छोटी बच्ची को लेकर है। यही बेहतर है कि वह यहीं रहे और बुढ़ापे में

आपकी देखभाल करे। लेकिन उसकी चंचलता मुझे डरा देती है, कहीं कुछ... कुछ गड़बड़ न हो जाए। माँ की मौजूदगी में वह कुछ हद तक संयमित रहती थी, अब वह नहीं रहीं। मुझे लगता है आपको देर नहीं करनी चाहिए। उसके लिए एक अच्छा पति ढूँढ़िए...'
मैंने कहा, 'यह तो मेरी दिली तमन्ना है। और तुम्हारी माँ, अल्लाह उन्हें जन्नत नसीब करे, भी यही सोचती थीं, पर वज़ीर किसी की नहीं सुनता और न ही सुनेगा। मैं चिंता से व्याकुल हूँ, क्योंकि तुम्हारी माँ के सहयोग के बिना मैं उसे अकेले कैसे संभाल पाऊँगी? और जब मुझे लगातार उसकी चिंता सताती रहेगी, तो मैं इस दुख से कैसे उबर पाऊँगी? सचमुच, मैं बहुत परेशान हूँ... और अगर मैं उसकी दादी को उसकी ज़िम्मेदारी सौंप दूँ तो हालत और भी बदतर हो जाएगी।'
नहीं। कृपया उसे वहां मत भेजिए। मैं उससे बात करूंगा। शायद कोई रास्ता निकल आए।
दोनों बहनों के बीच हुई बातचीत का वही नतीजा निकला, जिसका मुझे डर था। उसकी हठधर्मिता को पार करने का कोई रास्ता नहीं था। रास्ता उन्हीं के लिए मिल सकता है जो रास्ता खोजना चाहते हैं। जैसा कि कवि ने कहा है, क्या कोई मुझे समझा सकता है, अगर मैं खुद न समझना चाहूँ?

'छोटी, मैं सिर्फ तुम्हारे भले के लिए बोल रही हूँ,' अनवरी ने स्नेह भरे लहजे में परिचित 'तू' का प्रयोग करते हुए कहा। 'सलाह मानना समृद्धि का बीज बोना है। जरा अपने बारे में सोचो, भविष्य में तुम्हारा क्या होगा?'
'मुझे क्या हो सकता है? क्या मुझे कोई बीमारी है? हमारी मां के कफ़न पर धूल का एक कण भी नहीं है और तुम मुझ पर ताने कसने लगे हो!'
'कौन से ताने? कोई ताने नहीं हैं। मैं बस इतना कह रहा हूँ कि...'
'... मेरा मानना है कि मेरी सदाचार और मेरी समृद्धि विवाह करने में निहित है। लेकिन क्यों? क्या मेरे चरित्र में कोई दोष है, कोई ऐसी गलती जिसे विवाह सुधार देगा?'
'मेरी प्यारी बच्ची, हमारी माँ के चले जाने से, हमारे घर में कोई ऐसा व्यक्ति नहीं है जो इसे संभाल सके। हमारे पिता से यह उम्मीद करना कि वे अकेले ही तुम्हारी रक्षा करें, घर का सारा काम करें और तुम्हें खाना खिलाएँ... यह कैसे संभव हो सकता है?'
'वह मेरी रक्षा क्यों करेगा? क्या मैं कोई छोटी बच्ची हूँ जिसे कोई उठाकर ले जाएगा? कृपया ध्यान से सुनो, मैं किसी से नहीं डरती और न ही किसी से दबूँगी।'
तो क्या तुम जीवन भर अविवाहित रहोगी? और उन अनगिनत प्रस्तावों और सुझावों का क्या जो तुम्हारे पास आते रहते हैं?
'बाजी,' उसने कोमल स्वर में, लेकिन तर्कपूर्ण लहजे में कहा, मानो वह बड़ी बहन हो, 'जिस घर में बेर का पेड़ होता है, वहां पत्थर गिरना तो तय है। चिंता की कोई बात नहीं है। सब कुछ नियत समय पर ही होगा।'
'क्या यह सच है? तो क्या मुझे पिताजी को बताना चाहिए...?'
वज़ीर हँसा। 'पिताजी, बताने को कुछ नहीं है। मैं बस इतना कह रहा हूँ कि आप इंतज़ार कीजिए और देखिए। जब समय आएगा, सब कुछ हो जाएगा।'

‘तुम बार-बार “निर्धारित समय” के बारे में क्या कह रहे हो? मुझे तुम्हारी ये रट समझ नहीं आ रही। तुम हमसे क्या करवाना चाहते हो? क्या हम तुम्हारे लिए कोई उपयुक्त रिश्ता ढूंढें या नहीं?’ बारी को हार महसूस हुई और बहस करते-करते वह थक गई।
‘तो सुनो,’ वज़ीर ने बड़े ही उपदेशात्मक लहजे में कहा, ‘मैं शादी करने वाला आदमी नहीं हूँ। मैं किसी से भी शादी नहीं करने वाला।’
‘क्यों? तुम शादी क्यों नहीं करोगी? और अगर शादी नहीं की तो क्या करोगी? लड़कियाँ तो शादी करने, घर बसाने और... के लिए ही पैदा होती हैं।’
‘...बच्चे पैदा करना, पति और सास द्वारा पीटे जाना, चक्की और भट्टी में पीसकर झुलस जाना, और समय से पहले बुढ़ापा आ जाना। क्या यही है?’ वज़ीर ने अपनी बड़ी बहन का मज़ाक उड़ाया।

‘और क्या? क्या लड़कियाँ किसी वेश्यालय में कुछ मालकिनों के साथ रहने चली जाएँ? क्या वे इस दुनिया और परलोक दोनों में खुद को बर्बाद कर लेंगी? क्या वे अपने माता-पिता के अच्छे नाम पर कलंक और कलंक लगाएँगी?’
‘बाजी,’ छोटी ने फिर से तर्क और सुलह भरे लहजे में कहा, ‘क्या लड़कियों के पास बस यही दो विकल्प हैं? क्या ईश्वर की कृपा और न्याय उन्हें बस इतना ही देता है?’
‘मुझे उदारता या न्याय के बारे में कुछ नहीं पता। ईश्वर अपने मामलों को स्वयं देखता है। लेकिन जब से संसार अस्तित्व में आया है, इन चीजों में केवल महिलाओं को ही लगाया गया है: एक मार्ग अच्छे और नेक लोगों का है, और दूसरा मार्ग दीन और नीच लोगों का है।’
“बस करो, कृपया नेक और नीच के बारे में ये शब्द बोलना बंद करो। पुरुषों को जो चाहे करने दो, उन पर कभी कोई दोष नहीं लगेगा। और हम, महिलाएं, बस फुसफुसाहट से थोड़ा तेज बोलें: हमें तुरंत ही बदचलन औरत और बदचलन कह दिया जाएगा। हे भगवान, क्या यही न्याय है?”
“खैर, यही प्रथा है, और यह प्रथा न्याय पर आधारित है। ईश्वर ने स्त्री को नम्रता, लज्जा, मातृत्व प्रेम, दया और आत्म-बलिदान की साक्षात छवि के रूप में बनाया है।”
मैं किसी भी चीज़ या किसी भी व्यक्ति की छवि या व्यंग्यचित्र नहीं बनना चाहता। मैं सुंदर हूँ, मेरा दिमाग तेज़ है, और मेरा कोई भी अंग टूटा हुआ या लकवाग्रस्त नहीं है। मुझे एक ऐसा आदमी दिखाओ जिसके सामने मैं हीन साबित हो सकूँ। जिस ईश्वर ने मुझमें इतनी प्रतिभाएँ समाहित की हैं, क्या वह मुझे अपनी प्रतिभाओं को व्यर्थ ही अपने भीतर रखने देगा? क्या वह मुझे मनुष्यों की शारीरिक वासना की झूठी वेदी पर बलिदान होते देखना स्वीकार करेगा?
‘छोटी बच्ची, कौन तुम्हें किसी की हवस के लिए कुर्बान करने की हिम्मत करेगा? तुम्हारा पति तुम्हें एक शान से चलते घोड़े पर बिठाकर तुम्हारे नए घर ले जाएगा। वह तुम्हें आराम से रखेगा; वह तुम्हारी इच्छा के आगे झुक जाएगा।’
'हां, और फिर जब उसका मन करेगा, मुझे बाहर निकाल देगा। या फिर, वह मुझे एक अंधेरी कोठरी में बंद कर देगा, और बेशर्मी से जो चाहेगा करेगा, जहां चाहेगा वहां जाएगा, जिसे चाहेगा उसे घूरेगा या इससे भी बुरा करेगा।'

‘प्यारी बच्ची, तुमसे कौन बहस कर सकता है? तुम्हें तो झगड़े के बहाने चाहिए, बहस में अंक हासिल करने के बहाने चाहिए।’
‘देखो, बाजी प्रिय, मैं शादी करके अपने पूरे जीवन को इस जाल में क्यों बांधूं? वे बंधन सबसे अच्छे होते हैं जिन्हें तोड़ा जा सकता है।’
‘हे भगवान! छोटी, तुम ये क्या बोल रही हो! ये तो साफ तौर पर बेवफाई है, इस्लाम और उसके कानूनों का खंडन है!’
‘शायद। लेकिन मैं ईश्वर से उस विश्वासघात के बारे में ज़रूर पूछूँगी जो मैंने स्त्री के रूप में जन्म लेकर किया है। क्या यह इतना जघन्य पाप था कि मुझे इसी संसार में नरक में धकेल दिया जाए? आपने ही मुझे स्त्री बनाया है; मैं अपनी इच्छा से स्त्री नहीं बनी।’
‘पुरुष स्त्री के लिए अविभाज्य है। स्त्री पुरुष की गरिमा, सम्मान और आदर है। पुरुष स्त्री का रक्षक, स्वामी और मालिक है।’
‘ठीक है, उसे जो कुछ भी होने दो, लेकिन क्या शादी भी जरूरी है?’
तो क्या तुम वो काम करोगी जो सबसे बड़ा नाजायज है? प्यारी बच्ची, भगवान से डरो!
क्या तुम्हें सच में लगता है कि कुछ शब्द बोलने मात्र से नाजायज औलाद जायज हो जाती है? और तुम्हारी बहन, क्या वो कोई गाय है जिसकी बलि कुछ शब्द बोलने मात्र से जायज हो जाती है, जब तक कि उस पर चाकू न रख दिया जाए? बाजी प्रिय, सुनो और याद रखो। मैं शादी नहीं करूंगी। और अगर कर भी लूं, तो मैं निश्चित रूप से किसी ऐसे पति को नहीं चुनूंगी जो थाली में खाना परोसता हो, या भीख मांगने वाले अनपढ़ मुल्ला हों, या फिर गरीब, पेंशन मांगने वाले तथाकथित ऊंचे खानदान के पाखंडी हों!
“क्या तुम्हें लगता है कि कोई नवाब या राजकुमार तुम्हारा हाथ मांगने आएगा? प्यारी बच्ची, इतना घमंड मत करो। ईश्वर घमंड को पसंद नहीं करता।”
'अगर मेरी किस्मत में राजकुमार लिखा है, तो वह जरूर आएगा। अगर नहीं, तो कोई बात नहीं। मैं पहले उस आदमी को परखूंगी जो मुझे चाहता है। अगर मैं उसे पसंद करूंगी तो उसे अपने पास रहने दूंगी, नहीं तो उसे बाहर का रास्ता दिखा दूंगी।'
‘हे भगवान, हे भगवान! इस युवती को धर्म के मार्ग पर चलने का निर्देश दीजिए, इसे अक्ल सिखाइए,’ बारी ने अपने आंसू पोंछते हुए कहा। ‘इसका दिमाग खराब हो गया है।’

पुस्तक 3

मार्स्टन ब्लेक दुबला-पतला, लंबा और एथलेटिक शरीर वाला युवक था। लगभग अट्ठाईस वर्ष की आयु का वह दिखने में बहुत आकर्षक नहीं था। उसका रंग गोरा था और बाल भूरे थे, तथा उसकी आँखें छोटी और हल्के भूरे रंग की थीं। उसकी अंग्रेज़ी के बारे में तो कोई जानकारी नहीं है—वैसे भी अंग्रेज़ी उसकी मातृभाषा थी—पर वह हिंदी में काफी धाराप्रवाह था और अंग्रेजों के बीच प्रचलित 'मूनशाइज़ की फ़ारसी' में भी उसे कुछ महारत हासिल थी। हास्यबोध और मिलनसारिता उसकी सबसे अच्छी खूबियाँ थीं।

वज़ीर खानम के प्रति उनका गहरा लगाव था, लेकिन यह कहना मुश्किल है कि वे उन्हें अपनी पत्नी बनाने और उन्हें वह दर्जा देने के लिए तैयार थे जो वे किसी अंग्रेज़ पत्नी को देते। बेशक, अंग्रेजों में जाति या जन्मजात गुणों का कोई भेद नहीं था, लेकिन वे अपने देश के प्राचीन परिवारों में जन्मे लोगों के प्रति अत्यंत आदर और सम्मान रखते थे। धन का बहुत महत्व था, इसमें कोई संदेह नहीं, और धनी वर्ग का काफी प्रभाव था। यदि धन के साथ-साथ उनके अनुसार कुलीन जन्म भी हो, तो यह एक अजेय संयोजन था।

उनकी नज़र में, पुरुष के लिए सबसे महत्वपूर्ण चीज़ गोरी त्वचा थी। बेशक, कुछ साहब ऐसे भी थे जिनके खून में कुछ पीढ़ियों पहले कुछ ‘देशी’ तत्व आ गया था। ‘शुद्ध’ अंग्रेज साहब उन्हें श्रेष्ठ दृष्टि से देखते थे, हालाँकि अगर वे अपनी योग्यता साबित कर देते और कंपनी बहादुर की सेवा में अच्छा प्रदर्शन करते तो उन्हें नियमित रूप से पदोन्नति या तरक्की दी जाती थी। फिर भी, दफ्तरों या दरबारों के बाहर, ‘सच्चे’ अंग्रेज उन दूसरे तरह के साहबों से ज़्यादा मेलजोल नहीं रखते थे। गोरी चमड़ी वाली औरतें ज़्यादातर बदसूरत होती थीं—उनकी रंगत को अक्सर 'फीका' या 'बेस्वाद, कम चीनी और ज़्यादा पानी' कहा जाता था—घमंडी और कम बुद्धिमान। उनके चेहरे का मेकअप और उनके हाव-भाव में गर्माहट और आकर्षण की कमी होती थी। यही कारण था कि हर अंग्रेज हमेशा भारतीय पत्नियां रखता था: एक नहीं, बल्कि चार या उससे भी ज़्यादा। वेश्याओं या नाचने वाली लड़कियों के साथ थोड़े समय के लिए संबंध बनाना और कभी-कभार शयनकक्षों में जाना उनके लिए एक अतिरिक्त आनंद होता था।

वज़ीर खानम ने मार्स्टन ब्लेक से कभी सीधे जानकारी नहीं ली थी, लेकिन अनौपचारिक और गुप्त पूछताछ या अपने अनुमानों के आधार पर उन्होंने परिवार और परिस्थितियों के बारे में जो कुछ भी पता लगाया था, उससे यह संकेत मिलता था कि वह किसी प्रतिष्ठित या धनी अंग्रेज़ परिवार से नहीं थे। लेकिन उनका रक्त शुद्ध था, इसलिए योग्यता और कर्तव्यनिष्ठा से अपने कर्तव्यों का पालन करने पर उनके लिए उन्नति के रास्ते खुले और लंबे थे। उन दिनों, महाराजाओं के प्रशासन में एक अंग्रेज़ के लिए निम्नलिखित पद सर्वोच्च सम्मान के पात्र थे: रेजिडेंट/ पॉलिटिकल एजेंट, सशस्त्र बलों में अधिकारी और राजस्व अधिकारी, जिसके दायरे में भू-राजस्व, कर, सीमा शुल्क और उत्पाद शुल्क शामिल थे। बाकी सभी पद निम्न स्तर के थे, भले ही वे अंग्रेज़ों के पास थे। रेजिडेंट या पॉलिटिकल एजेंट के दस में से नौ पद चयनित सैन्य अधिकारियों से भरे जाते थे, जबकि बाकी राजस्व विभाग से आते थे। अपने-अपने जिलों तक सीमित, राजस्व

एकत्र करने और भूमि और उसके राजस्व से संबंधित मामलों का निपटारा करने वाले तथा फौजदारी (छोटे आपराधिक मामलों) के प्रभारी अधिकारी वरीयता क्रम में पहले स्थान पर थे। इन अधिकारियों को कलेक्टर या उपायुक्त का पदनाम दिया जाता था और उनके कार्य विवरण में सबसे महत्वपूर्ण बात चौबीसों घंटे उपलब्ध रहना और स्वयं जिम्मेदारी संभालने के लिए तत्पर रहना था। उन्हें हर समय अपने विवेक का प्रयोग करना होता था, दिन-प्रतिदिन के मुद्दों और समस्याओं का तुरंत समाधान करना होता था और कंपनी के अधिकार, गरिमा और भव्यता को बिना किसी समझौते के बनाए रखना होता था। ये कार्य कठिन थे और अक्सर कलेक्टर द्वारा बिना किसी अन्य अंग्रेज के सहयोग के ही किए जाते थे। एक-दो कनिष्ठ सहयोगियों को छोड़कर, यदि कोई होता भी था, तो जिले के प्रभारी अंग्रेज (उस समय की अंग्रेजी भाषा में जिला अधिकारी) के पास उनका समर्थन करने या उन्हें दरकिनार करने वाला कोई नहीं होता था। राजनीतिक महत्व, एक बड़े क्षेत्र पर प्रभुत्व, और शासक या यहां तक कि राजा के साथ लगभग समानता, जिसके दरबार में रेजिडेंट तैनात था, और सबसे महत्वपूर्ण बात, राज्य के मामलों से पूरी तरह परिचित होना और शासक पर व्यक्तिगत प्रभाव होना, रेजिडेंट या राजनीतिक एजेंट को कंपनी के अन्य सभी कर्मचारियों की तुलना में एक अद्वितीय प्रतिष्ठा और महत्व प्रदान करता था। वज़ीर खानम की नज़रों में मार्स्टन ब्लेक की सबसे बड़ी खूबी यह थी कि उन्होंने महज अट्ठाईस साल की उम्र में कप्तान का पद हासिल कर लिया था और अब वे सहायक राजनीतिक एजेंट थे। वे भविष्य के उन दिनों का सपना देखती थीं जब वे जनरल ओचटरलोनी (जिन्हें स्थानीय लोग अख्तरलोनी साहब के नाम से जानते थे) की तरह अंग्रेज़ सेना में जनरल बनेंगे और लाल किले में दरबार के रेजिडेंट के रूप में तैनात होंगे, जिसे दिल्लीवासी आमतौर पर हवेली या फिर स्नेह या दिखावे के तौर पर लाल हवेली कहते थे। मार्स्टन ब्लेक का एक और प्रशंसनीय गुण—जो उनके वर्ग के फिरंगी लोगों में दुर्लभ था—यह था कि वज़ीर खानम से संबंध स्थापित करने के बाद उन्होंने किसी अन्य भारतीय या फिरंगी महिला पर ज़रा भी ध्यान नहीं दिया था। इस प्रकार, यद्यपि वह अपनी कल्पना की दृष्टि से मार्स्टन ब्लेक को ओचटरलोनी की सिंहासन जैसी कुर्सी पर दृढ़ता से विराजमान देख सकती थी, फिर भी उसने स्वयं को ओचटरलोनी की उन अनेक बीबीओं में से एक के रूप में नहीं देखा, जो उनके पीछे हाथियों के जुलूस में सवार होती थीं - ग्यारह या (कुछ के अनुसार) तेरह की संख्या में - जब अख्तरलोनी साहब शाम को दिल्ली की सड़कों पर ताज़ी हवा लेने के लिए निकलते थे।

जयपुर में वज़ीर खानम की दुनिया पूरी तरह बदल गई। अब तक वह एक साधारण मुस्लिम परिवार की लड़की थी, जो पर्दा प्रथा की पाबंदियों में पली-बढ़ी थी और अपना ज़्यादातर काम खुद करती थी। दिल्ली में घर में एक बुज़ुर्ग नौकरानी और बाहरी कामों के लिए एक अधेड़ उम्र का नौकर था—ये नौकर अक्सर सिपाही होते थे जिन्हें अपनी रेजिमेंट छोड़कर दिल्ली में बसना पड़ता था। घरेलू व्यवस्था के नाम पर बस इतना ही था। वज़ीर के परिवार के शहर के कुछ स्थानीय परिवारों से जान-पहचान थी, और ज़ाहिर है, अनवरी बेगम के पति का घर भी था। नवाब यूसुफ अली खान के घर में मांझली बसने के बाद कई उच्च कुल के परिवार वज़ीर के परिवार से दूर और उदासीन हो गए। फिर भी, वज़ीर के माता-पिता को पूरी तरह से उपेक्षित नहीं किया गया

और न ही उन्हें अच्छे घरों से पूरी तरह से बाहर रखा गया। फिर ऐसा हुआ कि नवाब के संबंध ने उन परिवारों के बीच महत्वपूर्ण या गैर-महत्वपूर्ण परिचितों का अपना एक नेटवर्क बना लिया, जो किसी न किसी तरह से नवाब यूसुफ अली खान या उनके पिता पर निर्भर थे।

वज़ीर खानम के लिए पारिवारिक सैर पर जाने या दिल्ली के अनेक मेलों में उमड़ने वाले अनगिनत व्यापारियों, कलाकारों, कलाबाज़ों और गायकों की चहल-पहल और चहल-पहल का आनंद लेने पर कोई रोक नहीं थी। इसी तरह, वह अपने घर से या खुले बाज़ार में, अपनी क्रय क्षमता के अनुसार, अपनी पसंद की वस्तुओं का निरीक्षण, मूल्यांकन, मोलभाव और खरीददारी कर सकती थीं। वैसे भी, वज़ीर के चाहने वालों की कोई कमी नहीं थी, जो उन्हें उपहार और स्वादिष्ट व्यंजन देकर बाज़ार या मेले में आने के लिए प्रेरित करते रहते थे। कम से कम, वे उनकी लगभग अनदेखी सुंदरता की प्रशंसा में हिंदी कविताएँ रचने पर ज़ोर देते थे। इस प्रकार, वज़ीर ने कभी भी घर में बंद या सीमित महसूस नहीं किया, राजधानी की विशाल और रंगीन दुनिया से दूर।

फिर भी जयपुर की दुनिया कई मायनों में अनोखी थी। घरेलू नौकरों की भरमार थी, और घर चलाने के लिए हजारों छोटे-मोटे काम थे, जो अब तक उसके माता-पिता संभालते थे; सबसे बढ़कर, घर के कामकाज और घर का स्वरूप उसके लिए बिल्कुल अलग था। सप्ताह के हर दिन मेहमानों का तांता लगा रहता था, और खर्च पर कोई रोक-टोक नहीं थी और न ही पैसों की कोई कमी थी। हालांकि, एक बेहद महत्वपूर्ण या शायद सबसे महत्वपूर्ण अंतर वह था जिसके लिए उसने खुद को तैयार नहीं किया था। उसने पाया कि जयपुर में वह उच्च वर्ग के सामाजिक दायरे का हिस्सा नहीं थी, जैसा कि वह दिल्ली के मुसलमानों और हिंदुओं के बीच थी, और न ही वह साहबों की दुनिया की निवासी थी।

यह सच था कि सामाजिक जीवन पहले से अधिक था, लेकिन त्योहारों के दिनों में भी मिलने आने वालों में से कोई भी उच्च कुल का नहीं था, चाहे वह हिंदू हो या मुसलमान। दिल्ली में, कम से कम दिखावे के लिए ही सही, उसके परिचितों के दायरे में कई लोग उच्च या मध्यम वर्ग के कुलीन परिवारों से थे; मियां शाह नासिर के प्रोत्साहन और संरक्षण ने कुछ पुरुष और महिला कवियों को उसके साथियों के दायरे में ला दिया था। उसने धुंधली सी ही सही, यह आशा की थी कि भले ही उसे आमेर स्थित महाराजा के महल तक पहुँच न हो, लेकिन कम से कम उसके सामाजिक दायरे में दरबारियों के आलीशान घरों में रहने वाले लोग तो शामिल होंगे।

जयपुर में कुछ ही हफ्तों के भीतर उनके ये सारे भ्रम दूर हो गए। उन्होंने पाया कि घरेलू नौकरों को छोड़कर कोई भी भारतीय, बिल्कुल कोई भी नहीं, उन्हें जानने वालों में शामिल नहीं था। ज़ाहिर है, अंग्रेजों, चाहे वे महिलाएं हों या पुरुष, के साथ मेलजोल का तो सवाल ही नहीं उठता था। अगर कभी-कभार कोई अंग्रेज ऊब के मारे या किसी आधिकारिक काम से मार्स्टन ब्लेक से मिलने आता, तो वह ज़रूर उसके लिए मेहमाननवाज़ी का इंतज़ाम करतीं, लेकिन उन्हें कभी भी ड्राइंग रूम में नहीं बुलाया गया (वह जानती थीं कि अंग्रेज महिलाओं को हमेशा बुलाया जाता था), और न ही कोई अंग्रेज मेहमान कभी कहता या इशारा भी करता कि वह बीबी का अपने घर में स्वागत करके खुश होगा।

मेहमाननवाज़ी में हमेशा शराब या स्पिरिट परोसी जाती थी, और यह बात उसे बेहद नापसंद थी। कई अंग्रेज साहब ज़्यादा शराब नहीं पीते थे, लेकिन वे गर्मियों में नींबू के रस और बर्फ़ के साथ कोई फ़िज़ी ड्रिंक (जिसे वे 'सोडा वाटर' कहते थे) ज़रूर पीते थे। यह पेय धीरे-धीरे नींबू पानी के नाम से मशहूर होने लगा था और गर्मियों में हर अंग्रेज घर में ताज़ा नींबू और बर्फ़ के साथ-साथ 'सोडा वाटर' की बोतलें भी भरपूर मात्रा में होती थीं। लंबे समय तक वज़ीर ने 'सोडा वाटर' को छूने से भी इनकार कर दिया, क्योंकि वह इसे एक तरह की शराब समझती थी। मार्स्टन ब्लेक को उसे यह समझाने में काफ़ी मशक्कत करनी पड़ी कि यह सिर्फ़ फ़िज़ी पानी है।

इसी तरह, वज़ीर को पूरा यकीन था कि उसके आने से पहले मार्स्टन ब्लेक के घर में सूअर का मांस नियमित रूप से खाया जाता रहा होगा। इसलिए, बिना उससे पूछे, वज़ीर ने सारे बर्तन, छुरी और पतीले धुलवाए और फिर उन्हें मक्का के पवित्र कुएँ ज़मज़म के पानी से 'शुद्ध' करवाया। दरअसल, इस स्थिति का अनुमान लगाते हुए, वह अपने साथ पानी से भरी चमड़े की एक शीशी लाई थी। उसने मार्स्टन ब्लेक से कहा कि अगर घर में उस मृत्युदंड के योग्य अपवित्र जानवर का नाम तक लिया गया, तो वह ज़हर पी लेगी।

मार्स्टन ब्लेक ने अपना हाथ उसके कंधे पर रखा, लगभग उसे कसकर गले लगा लिया और कहा, 'वज़ीर, तुम सिर्फ़ वज़ीर नहीं हो, तुम इस घर की रानी हो। तुम जो कहोगी वही होगा।'

यह कहते हुए उसने उसके होंठों पर कई बार चुंबन किया। वज़ीर ने बड़ी मुश्किल से खुद को छुड़ाया और भागकर अपने बेडरूम में चली गई और बोली, 'कृपया मुझे छोड़ दीजिए। अब और नहीं। हर बात का अपना समय और स्थान होता है।'

‘मुझे पता है,’ वह मुस्कुराया। ‘और मुझे यह भी पता है कि आपकी भाषा में “बातचीत” का क्या मतलब होता है।’

मार्स्टन ब्लेक हिंदी के इतने जानकार थे कि वे जानते थे कि हिंदी शब्द 'बत' ('बातचीत') का अर्थ महिलाओं की बातचीत में 'यौन संबंध' भी हो सकता है, ठीक उसी तरह जैसे सोलहवीं शताब्दी में अंग्रेजी में 'बातचीत' का अर्थ भी यही होता था।

उनका उच्चारण और स्वर अन्य अंग्रेजों की तरह ही था: बहुत धाराप्रवाह नहीं, और थोड़ा कर्कश। वे नरम 'ट' और 'द' का उच्चारण कर सकते थे, और उनकी आवाज़ गहरी थी, जिसे उन दिनों पुरुषों की विशिष्ट आवाज़ माना जाता था। सही शब्द ढूंढते समय उनकी थोड़ी हिचकिचाहट के कारण, उनकी हिंदी सुनना सुखद तो था, लेकिन आश्चर्यजनक भी, मानो कोई बच्चा बड़ों की तरह बोलने की कोशिश कर रहा हो। लेकिन उनकी आवाज़ में कोई लचीलापन, कोई लय या संगीत नहीं था। उन्हें शाह नासिर साहब के उच्चारण की याद आ गई, जो इतने मधुर और सुरीले थे। वे प्रत्येक अक्षर का उच्चारण समान सावधानी और सोच-समझकर करते थे, लेकिन किसी मुल्ला की तरह नहीं, जिसकी आवाज़ स्पष्ट उच्चारण के बावजूद, एक कठोरता और अकड़न से भरी होती थी, मानो वह अपना गला साफ करने की कोशिश कर रहा हो। जब शाह साहब बोलते थे, तो ऐसा लगता था जैसे पत्तों और फलों से लदी बेल पर हल्की बारिश हो रही हो।

वज़ीर एक पल के लिए घबरा गई; अब उसे अपना पूरा जीवन मार्स्टन ब्लेक की आवाज़ के साथ बिताना था। लेकिन उसने जानबूझकर इस विचार को किनारे रख दिया और शांत स्वर में उत्तर

दिया, "तो ठीक है, मैं अच्छी तरह जानती हूँ कि बातचीत किसे कहते हैं। मनुष्य की आत्मा का सार वाणी में निहित है। आप काफ़ी थके हुए घर आए हैं। अब जाइए, कृपया तरोताज़ा हो जाइए, स्नान कर लीजिए..."

'क्या हमें इसके बाद स्नान नहीं करना चाहिए...? मुझे विश्वास था कि आप एक धर्मनिष्ठ मुसलमान हैं, लेकिन अब आप चाहते हैं कि मैं इससे पहले स्नान करूँ...'

वज़ीर का चेहरा लाल हो गया। उसने अपनी ओढ़नी का एक कोना समेटा और ज़ोर से हंसने से खुद को रोकते हुए उसे मुंह में दबा लिया और बोली, 'जाओ, कृपया जाओ। मैं तुमसे बात नहीं करूंगी। क्या तुम्हें शर्म नहीं आती? नौकरों की ये टोली हमारे सामने मुंह खोले खड़ी है और तुम...'

वह हँसा। 'वज़ीर बेगम, यह एक अंग्रेज़ का घर है। मृत्यु में भी इनसे छुटकारा नहीं मिल सकता। ये आपकी प्रजा हैं और आप इनकी वैध स्वामिनी हैं। इनसे कुछ भी छिपा नहीं रह सकता।'

और यह एक सच्चाई भी थी। उसने यूसुफ अली खान बहादुर के आलीशान महल में भी इतने नौकर नहीं देखे थे। नवाब बड़े ठाठ-बाठ से रहते थे, लेकिन उनके नौकरों में मुख्य रूप से घुड़सवार, पैदल सैनिक, तोपची सिपाही, भालाधारी और इसी तरह के लोग होते थे। मंझली की निजी सेविकाओं के रूप में केवल चार-पाँच दासियाँ ही थीं, बस इतना ही। यहाँ तो नौकरों की एक पूरी सेना थी, और उनमें से कई के काम तो बिल्कुल ही अजीब थे।

नौकरों की भीड़ ने भले ही उसे सत्ता का अहसास कराया हो, एक हल्का सा नशा दिया हो, लेकिन साथ ही यह बात भी उसे स्पष्ट रूप से बता दी कि उसके नए राज्य में न तो फुसफुसाहट होगी, न खामोशी, न अंतरंग बातचीत, न ही दोस्ताना शब्दों का आदान-प्रदान, न ही पीछे की संकरी खिड़कियों से झांकते चेहरे जो घरों के बीच सुरक्षित संचार का साधन थे, न ही हारमोनिकॉन की मधुर ध्वनि जैसे मीठे और संगीतमय शब्द—संकरे घरों में साथ बिताए जीवन के बावजूद, अपने दिल का वह छोटा सा आंतरिक कोना। यह सब दिल्ली था, और अब यह सब उसके पीछे छूट चुका था।

एक बार जब उसने धीरे-धीरे ही सही, मार्स्टन ब्लेक को अपना हाथ सौंपने का निश्चय कर लिया, तो उसे एक धुंधली सी उम्मीद थी, बल्कि एक हल्का सा आभास था, कि उसका यह महत्वपूर्ण कदम, उसे पद और शक्ति प्रदान करने के साथ-साथ, कम से कम भारतीय कुलीन वर्ग की महिलाओं के साथ, भले ही वह अंग्रेजों के घरों की मेमसाहिबों के साथ न हो पाए, लेकिन उसके लिए समान, या कहें तो मैत्रीपूर्ण संबंध स्थापित करने का मार्ग प्रशस्त करेगा। लेकिन वास्तविकताएँ बिलकुल भिन्न निकलीं।

उसे पता चला कि भारतीय उच्चवर्गीय परिवारों की एक अलग दुनिया थी, एक ऐसी दुनिया जो अंग्रेजों की ताकतवर सेना के आगे बेबस होती जा रही थी—लेकिन फिर भी उसमें आत्मसम्मान की भावना और उसे नियंत्रित करने वाले नियम-कायदे कायम थे। फिर अंग्रेजों की एक अलग दुनिया थी, एक ऐसी दुनिया जिसमें भारतीयों का कोई प्रवेश नहीं था। और एक और दुनिया थी: बीबीओं, उनके नौकरों और चापलूसों की दुनिया। बीबीओं की दुनिया के नौकरों को ही इन दोनों दुनियाओं में प्रवेश मिल सकता था, और वह भी बहुत कम। अन्यथा, अंग्रेजों की दुनिया आम

आदमी के लिए बंद, स्व-अस्तित्व वाली और रहस्यमय दुनिया थी।
उन्हें यह भी पता चला कि सभी बीबी केवल बीबी ही थीं। हिंदू या मुस्लिम, उच्च कुल या निम्न कुल, शिक्षित या कारीगर समुदाय से होने का कोई भेद या प्रतिबंध नहीं था, न ही उनकी संख्या की कोई सीमा थी; और साथ ही, सभी बीबी का दर्जा एक समान नहीं था, उनका महत्व उनके साहब के पद से निर्धारित होता था—साहिब जितना बड़ा या उच्च पदस्थ होता था, बीबी का उतना ही अधिक प्रभाव होता था। इस प्रकार जयपुर में सबसे उच्च पदस्थ बीबी रेजिडेंट की बीबी थीं, उसके बाद वज़ीर खानम का स्थान आता था, और फिर पद के अनुसार सेना अधिकारियों की बीबी आती थीं।
वज़ीर को सबसे ज़्यादा संतोष इस बात से था कि वह इकलौती बीबी थीं और मार्स्टन ब्लेक ने निजी बातचीत में उन्हें उनकी विवाहित पत्नी बताया था। आम तौर पर यह प्रथा थी कि कोई भी फिरंगी अपनी बीबी के साथ कभी भी विवाह समारोह, चाहे वह इस्लामी हो, हिंदू हो या ईसाई, नहीं करता था। ज़्यादा से ज़्यादा यही हो सकता था कि साहब, बीबी लेने से ठीक पहले या बाद में, अपने वरिष्ठ अधिकारी को इसकी सूचना दे देते थे; यह सूचना लिखित में हो सकती थी, लेकिन असल में यह ज़्यादातर मौखिक ही होती थी, और यह भी केवल मध्यम श्रेणी के साहबों तक ही सीमित थी। बड़े साहब—गवर्नर जनरल परिषद के सदस्य, राज्यपाल, बड़े देशी राज्यों के निवासी या राजनीतिक प्रतिनिधि, वरिष्ठ सैन्य कमांडर—अपनी बीबी के बारे में कोई रिपोर्ट देने के लिए बाध्य नहीं थे। कुछ ने तो अपनी बीबी के अस्तित्व को भी गुप्त रखा। इसी तरह, कुछ साहिब बहादुरों ने भारत छोड़ते समय या अपनी वसीयत बनाते समय बीबी के लिए कुछ धन या वसीयत छोड़ी, लेकिन कई ने उनका ज़िक्र तक नहीं किया, उन्हें उनके हाल पर छोड़ दिया।
ऐसा भी अक्सर होता था कि साहब नीच कुल की बीबी को छोड़कर उच्च कुल की बीबी से विवाह कर लेते थे और उससे, अपनी संतानों से और पहले से हुई अन्य सभी संतानों से मुंह मोड़ लेते थे। यदि कोई अंग्रेज बीबी के पक्ष में यह घोषणा करता कि उसने उसे अपनी पत्नी बना लिया है, तो अंग्रेज कानून और कंपनी बहादुर के नियम तब तक विवाह को मान्यता नहीं देते थे जब तक कि वह किसी विधिवत गिरजाघर में संपन्न न हो जाए या कंपनी द्वारा मान्यता प्राप्त न्यायालय में संपन्न न हो जाए।

यहां तक कि अगर कोई फिरंगी भारतीय होता, तो भी उसे अपने बच्चों पर कोई नैतिक या कानूनी अधिकार नहीं होता था। बात को हद से ज्यादा खींचने पर बस इतना ही जायज़ था कि ऐसे बच्चों के दो नाम रखे जाते थे, एक ईसाई और दूसरा भारतीय। बच्चों की शिक्षा और प्रशिक्षण का अधिकांश नियम-कानून अंग्रेज़ी सिद्धांतों पर आधारित था। अक्सर, बच्चे—लड़का हो या लड़की—को लगभग सात या आठ साल की उम्र में माँ से अलग कर दिया जाता था और 'घर' यानी इंग्लैंड भेज दिया जाता था; कभी-कभी माँ मान जाती थी, कभी-कभी उसकी अपनी इच्छा का कोई महत्व नहीं होता था। ऐसे मामलों में, अगर बच्चा भारत लौट आता और साहब के साथ माँ का रिश्ता बरकरार रहता, या अगर साहब खुद भारत छोड़कर चले गए होते, लेकिन बच्चे को माँ की पहचान के बारे में कुछ पता होता, तो वह माँ को ढूंढ सकता था, या शायद नहीं भी।

उनके दो जीवन अलग-अलग ही रहते थे, चाहे समुद्र का काला पानी उन्हें अलग करता हो या नहीं।

वज़ीर खानम को इन बातों की हल्की-फुल्की जानकारी थी, पर सच कहें तो उन्हें ज़्यादा चिंता नहीं थी। वह जानती थीं, या यूँ कहें कि उन्हें ऐसा लगता था, कि भले ही साहब लोग भारतीयों को अपना दुश्मन मानकर उनके साथ कितना भी छल-कपट करें, वे अपने लोगों के साथ पूरी ईमानदारी से पेश आते थे: वे अपने वादे निभाते थे और उनमें आत्मसम्मान की प्रबल भावना थी। इसलिए, हो सकता है कि मार्स्टन ब्लेक उनसे सच्चा प्यार न करते हों, लेकिन अगर उन्होंने उनसे कोई वादा किया होता तो उसे तोड़ते नहीं। यही कारण था, जैसा कि उन्हें लगता था, कि वे नौकरों के सामने हमेशा उन्हें 'बेगम' कहकर बुलाते थे और सबको यही लगता था कि इस्लामी कानून के अनुसार उनका 'आधिकारिक' विवाह या निकाह हो चुका है। इससे उन्हें थोड़ा गर्व महसूस होता था। उन्हें यह भी लगता था कि मौखिक रूप से इस बात की पुष्टि हो जाने के बाद, मार्स्टन ब्लेक को कागजी कार्रवाई पूरी करने और गवाहों से दस्तावेज़ पर हस्ताक्षर करवाने की कोई जल्दी नहीं होगी।

उसने एक-दो बार मार्स्टन ब्लेक से संशय भरे शब्दों में विवाह अनुबंध के बारे में पूछा था, और वह हमेशा यही कहता था कि उसने रेजिडेंसी में दोनों के नाम साहब और बीबी के रूप में दर्ज करवा दिए हैं और उसे इसे निकाह से कम नहीं समझना चाहिए। संतान, उनके अधिकारों और परवरिश के बारे में वज़ीर का मानना था कि अभी इन मामलों पर विचार करना जल्दबाजी होगी। उसे मातृत्व की कोई विशेष इच्छा नहीं थी और वास्तव में वह अक्सर सोचती थी कि दिल्ली की अपनी अगली यात्रा पर उसे मांझली से गर्भनिरोधक के बारे में सलाह लेनी चाहिए। केवल मांझली ही छोटी की मनस्थिति को समझती थी, उसके शरीर और उसके अंतर्मन के आकर्षण को जानती थी, जो उसकी बाहरी उपस्थिति में झलकता था और सभी प्रकार के पुरुषों पर अपना प्रभाव डालता था। वह यह भी जानती थी कि वज़ीर उसकी सुंदरता और आकर्षण को ही अपनी एकमात्र संपत्ति मानता था और वह केवल अपनी सुंदरता और व्यक्तित्व के बल पर अपने लिए एक नया जीवन रचने के लिए दृढ़ संकल्पित थी।

वज़ीर को यह समझने में छह महीने से भी कम समय लगा कि यद्यपि वह मार्स्टन ब्लेक के समृद्ध और संपन्न घर की मालकिन थी, उसकी वास्तविक स्थिति उसके बिस्तर में एक आकर्षक शरीर मात्र की थी। अंततः उसे वास्तविकता का एहसास हुआ: यह उम्मीद करना व्यर्थ था कि मार्स्टन ब्लेक उसे अपने घर में विवाहित पत्नी के रूप में स्वीकार करेगा और उसे कम से कम वे अधिकार देगा जो फिरंगी साहब उन भारतीय बेगमों को देने से कतराते थे जिनसे उनका आधिकारिक विवाह हुआ था। जयपुर आने के कुछ ही हफ्तों बाद उसने दक्कन के प्रसिद्ध जनरल पामर और अवध के कर्नल गार्डनर की कहानी सुनी, जिससे उसे धुंधली सी उम्मीद जगी कि एक दिन वह और मार्स्टन ब्लेक अन्य कुलीन परिवारों के जोड़ों की तरह एक सम्मानित विवाहित जोड़े के रूप में अपना जीवन व्यतीत कर सकेंगे। वह अपने धर्म और सांस्कृतिक रीति-रिवाजों का पालन करेगी, मार्स्टन ब्लेक अपने धर्म का पालन करेगा, लेकिन ज़नाना के अंदर असली सत्ता वज़ीर के हाथों में होगी। उनके बच्चे बड़े होकर भारत में ही रहेंगे और उचित रूप से उच्च कुल के मुसलमानों

में गिने जाएंगे।
जब वह अपने मन में आशा के ये भव्य महल बना रही थी, तो उसने इस तथ्य पर ध्यान नहीं दिया कि कर्नल गार्डनर की बेगम उच्च कुल की थीं और उनके लोग आम लोगों से इतर थे। उनकी अपनी संपत्ति थी और वे खंबायत के नवाब की पुत्री थीं। जनरल पामर की बेगम तो सम्राट शाह आलम बहादुर शाह की दत्तक पुत्री थीं, जो अब स्वर्ग में विराजमान हैं। ऐसे गौरव के सामने वज़ीर की क्या स्थिति होती? यह तो मानो नीची धरती के सामने उस उच्च लोक के समान था जहाँ केवल आत्माएँ ही निवास कर सकती हैं। सबसे बढ़कर, जनरल और कर्नल दोनों ने अपने वतन को हमेशा के लिए त्याग दिया था और भारत को अपना घर बना लिया था। स्पष्ट है कि मार्स्टन ब्लेक का इस समय ऐसा कोई इरादा नहीं था, और न ही उन्होंने भविष्य में ऐसा करने का कोई संकेत दिया था।
वज़ीर को यकीन था कि भले ही साहब जाति या जन्म के आधार पर मिलने वाले गुणों में विश्वास न करते हों, फिर भी वे पद और शिष्टाचार के पालन तथा जन्म के आधार पर मिलने वाले सम्मान के मामले में भारतीयों से कम नहीं थे। इसके विपरीत, भारतीयों को अपने भारतीय स्वामियों द्वारा विवाहित या संबंध रखी गई महिलाओं से कोई आपत्ति नहीं थी। वे ऐसी महिला को रानी, रखैल या शासक की संगिनी के रूप में सहर्ष स्वीकार करते थे। फिर भी, वे फिरंगी साहबों की महिलाओं के प्रति घोर पूर्वाग्रह रखते थे, और वास्तव में, उनसे लगभग घृणा करते थे।
जनरल ओचटरलोनी ने एक निम्न जाति की मराठा दासी को इस्लाम में परिवर्तित कराया और फिर उससे विधिवत विवाह किया। उन्होंने अपनी वसीयत में उन्हें 'बीबी मुहतराम मुबारकुन्निसा बेगम, जिन्हें लोकप्रिय रूप से बेगम ओचटरलोनी कहा जाता था' के रूप में याद किया, अर्थात् 'माननीय बीबी मुबारकुन्निसा बेगम, जिन्हें बेगम ओचटरलोनी के नाम से भी जाना जाता था'। उन्होंने उनके लिए बहुत धन और संपत्ति छोड़ी। फिर भी भारतीयों ने हठपूर्वक उनकी इस्लामी पहचान का सम्मान करने से इनकार कर दिया, और उनकी नवाबवी स्थिति का तो बिल्कुल भी नहीं। मुबारकुन्निसा बेगम की हवेली कहलाने वाला उनका महल कई दशकों तक खाली पड़ा रहा, और जैसा कि आधुनिक उर्दू लेखक मिर्ज़ा फरहतुल्लाह बेग ने बताया है, अंततः इसे एक मुद्रण प्रेस के लिए खरीदा गया था, मौलवी करीमुद्दीन द्वारा, जिन्हें बाद की पीढ़ियों ने फैलन के 'ए न्यू हिंदुस्तानी इंग्लिश डिक्शनरी' (1879) में उनके सहयोगी के रूप में जाना। हौज काजी में अपने आलीशान घर के पास उसने जो मस्जिद बनवाई थी, वह आज भी खड़ी है, लेकिन वहां कोई नमाज पढ़ने नहीं जाता और लोगों ने उसे 'वेश्या की मस्जिद' नाम दे दिया है।
इन परिस्थितियों में, क्या वज़ीर खानम को अपने प्रिय देशवासियों से बेहतर व्यवहार की कोई उम्मीद थी? क्या वह एक ऐसे अंग्रेज के लिए महज़ एक मनोरंजन की वस्तु बनकर रहना चाहती थीं, जो न केवल एक अलग धर्म का अनुयायी था, बल्कि एक अलग सामाजिक वर्ग का भी था और जिसका जीवन जीने का तरीका भी बिल्कुल अलग था? यह सच है कि उन्हें सुख-सुविधाओं की कोई कमी नहीं थी, और निम्न जाति के भारतीय उन्हें सम्मान और आदर देने में कोई कसर नहीं छोड़ते थे। बाहर जाते समय वह नलकी में सफर करती थीं। नलकी एक बंद, कठोर छत वाली पालकी होती थी, जिसमें आगे की तरफ एक दरवाजा और धूप से बचाव के लिए शेड या

बालकनी होती थी, और यह केवल अमीर और शक्तिशाली लोगों को ही दी जाती थी। लेकिन यह सब कब तक चलेगा?
वज़ीर को यकीन था कि वह प्रेम से भी बढ़कर कुछ जानती है, यहाँ तक कि 'इश्क' शब्द के बारे में भी, जिसके इतने सारे अर्थ हैं और इतनी गहराई है कि 'प्रेम' शायद इसका सबसे साधारण अनुवाद है। क्या उसे मार्स्टन ब्लेक के लिए इश्क था? वह प्रेम पर लिखी गई कविताओं की ज़्यादातर मशहूर पंक्तियाँ जानती थी: कोई मेरे दिल में बिना जाने या पूछे ही प्रवेश कर जाता है; मेरे सीने में आग सी लग जाती है। लेकिन इन शब्दों का असल मतलब क्या था? इनका सच्चा अर्थ कहाँ छिपा था: वह अर्थ जिसे दिल को अंतिम, अटल सत्य मान लेना चाहिए? क्या उसका दिल हमेशा यही चाहता था, हमेशा यही ख्वाहिश रखता था कि उसका साहब हमेशा उसके सामने रहे? वह उसके प्रति ठंडा हो सकता है या भावुक, द्वेषपूर्ण हो सकता है या उदार और प्रेममय, लेकिन उसके दिल में मार्स्टन ब्लेक के लिए असीम आकर्षण, निरंतर संवेदनशीलता और अथाह इच्छा के सिवा कुछ नहीं होना चाहिए। क्या उसके मन में उनके लिए ऐसी भावनाएँ थीं?
उन्होंने फारसी कवि जामी (मृत्यु 1492) की लंबी कविता 'यूसुफ जुलैखा' की कुछ पंक्तियाँ याद कीं। पैगंबर यूसुफ के प्रति प्रेम में पूरी तरह से पागल होकर, जुलैखा ने संसार त्याग दिया था और एक घुमंतू भिक्षुणी बन गई थीं। कई वर्षों बाद, जब यूसुफ की मुलाकात जुलैखा से हुई, तो वह अभिमानी, अद्वितीय रूप से सुंदर जुलैखा नहीं थीं, जिनकी सुंदरता के आगे कोई भी सहेली, महिलाएँ या दासियाँ प्रतिस्पर्धा नहीं कर सकती थीं, जिनका घमंडी और उदासीन व्यवहार मिस्र के राजा को भी भयभीत कर देता था। जुलैखा का चेहरा मुरझाया हुआ था, उनकी सुंदरता धूमिल हो गई थी, उनकी कमर झुकी हुई थी और उनके कदम लड़खड़ाते हुए अस्थिर थे। उनकी आँखें अब हीरों की तरह नहीं चमकती थीं; सोने की कढ़ाई वाले शानदार ढंग से डिजाइन किए गए वस्त्रों और रत्नों से जड़े आभूषणों के स्थान पर, उनके कमजोर शरीर पर चिथड़े लिपटे हुए थे।
जामी ने उस मार्मिक क्षण का वर्णन यूसुफ और जुलेखा के बीच प्रश्न-उत्तर संवाद के रूप में किया था। फारसी कविता की एक प्रसिद्ध शैली, जिसे सवाल-ओ-जवाब कहा जाता है, को महान कवि ने गीत और त्रासदी की एक उत्कृष्ट कृति में बदल दिया था।
उसने कहा: तुम्हारी जवानी कहाँ है, तुम्हारी सुंदरता कहाँ है? उसने कहा: तुम्हारे मिलन से बहुत दूर, मैंने उन्हें रास्ते में खो दिया। उसने कहा: तुम्हारी आँखें इतनी बेजान, इतनी चमकहीन क्यों हैं? उसने कहा: खून में डूबी हुई, तुम्हें न देख पाने के कारण। उसने कहा: तुम्हारा गर्वित सरू जैसा शरीर कैसे झुक गया? उसने कहा: तुम्हारी अनुपस्थिति के आत्मा को झुलसा देने वाले भार के कारण। उसने कहा: तुम्हारा सोना और चाँदी कहाँ है? तुम्हारा मुकुट कहाँ है, तुम्हारा रत्नजड़ित ताज कहाँ है? उसने कहा: सबने तुम्हारी सुंदरता की प्रशंसा की, सबने तुम्हारी प्रशंसा के मोती मेरे सिर पर बिखेरे। मैंने अपना सिर झुकाया, अपना सोना उनके चरणों में बिखेरा और इस प्रकार मैंने उन मोतियों का प्रतिफल दिया जो उन्होंने मुझ पर बिखेरे थे।

छोटी बेगम को वो भावना और दुःख भली-भांति याद था जो उन पंक्तियों को पहली बार पढ़ते ही उन पर छा गया था। वो फूट-फूटकर रोईं और उस रात मुश्किल से कुछ घंटों की अधूरी नींद ही

सो पाईं। बेचैन बिस्तर पर करवटें बदलते हुए, उनके मन में ये आशा और इच्छा थी कि शायद एक दिन उन्हें भी कोई ऐसा मिल जाए जिसके लिए उनकी जिंदगी और परिस्थितियां ज़ुलेखा की तरह बदल जाएं। तो क्या उनके मन में भी मार्स्टन ब्लेक के लिए अपने अस्तित्व को नकारने का वैसा ही दृढ़ संकल्प था? अरे, छोटी बेगम, अपनी उम्र के हिसाब से ही चलो! कविता तो बस कविता है, और कुछ नहीं। लेकिन फिर, उन पंक्तियों को पढ़ते ही तुम इतना क्यों रोईं? तुम्हारे हृदय में आशा के कौन से तंबू थे: शायद तुम भी किसी से उसी तरह प्रेम कर सको? कविता कभी-कभी सत्य की उस सीमा को धारण कर लेती है जिसे लोग आमतौर पर अपने विश्वास के लिए बचा कर रखते हैं।

शायद, लेकिन उस अंग्रेज बदमाश का मैं क्या करूँ? जब वह पान के रस से लाल हुए होठों से मुझे अर्थपूर्ण निगाहों से देखता है, तो मेरा दिल ज़ोर से चाहता है कि वह मुझे अपनी बाहों में भर ले...

अगर कुछ और नहीं तो, मार्स्टन ब्लेक प्रेम और प्रेम-प्रसंग के मामलों में निस्संदेह बहुत कुशल थे। अनुभवी, अचूक अंतर्ज्ञान से परिपूर्ण, स्त्रियों के जानकार, वे वज़ीर के हर मनोभाव, हर इच्छा और हर ज़रूरत को समझ सकते थे, भले ही हमेशा पूर्वानुमान न लगा सकें, और वे उस क्षण के अनुसार उन्हें संतुष्ट करने में पूरी तरह सक्षम थे। उन्होंने कभी भी इतनी ज़िद नहीं की कि वज़ीर थक जाए; उन्होंने कभी भी उन्हें नाराज़ नहीं किया, न ही उन्हें मुँह फेरने पर मजबूर किया। और न ही उन्होंने कभी इतना दूर का व्यवहार किया कि वज़ीर उनके ध्यान के लिए व्याकुल हो जाए, यह सोचकर कि वे कब दोबारा उनकी ओर देखेंगे और कब उनके शरीर से वासना की तीव्र सुगंध निकलकर वज़ीर तक पहुँचेगी।

मार्स्टन ब्लेक को वज़ीर के साथ बिस्तर पर व्यवहार करने का एक अनोखा हुनर था। वह वज़ीर से भी पहले जान जाता था कि वह उससे क्या चाहती है: कब यह सिर्फ़ एक सामान्य शारीरिक संबंध है, और कब यह उससे कुछ अधिक है। जब दोनों पूरी तरह से कामुक मूड में होते थे और उनकी आपसी प्रतिक्रिया कम नहीं होती थी, तब लगभग पूरी रात वज़ीर को कोई दबाव महसूस नहीं होता था और न ही मार्स्टन ब्लेक अपनी गति धीमी करता था।

जैसा कि स्पष्ट है, वज़ीर यौन कामुकता और प्रेम-संबंध बनाने के तौर-तरीकों से पूरी तरह अनभिज्ञ थी। उसने अपनी इस कमी को कुछ हद तक कल्पना, दृश्य-कल्पना और सहेलियों के साथ अंतरंग बातचीत से पूरा किया था। लेकिन उसने सबसे ज़्यादा अपने आंतरिक विकास और शरीर के बदलते स्वरूप से सीखा। फिर भी, मार्स्टन ब्लेक उसे ऐसी दुनिया में ले जाते थे जिनके बारे में वह अपने सबसे जोशीले सपनों और कल्पना की ऊँचाइयों में भी नहीं सोच सकती थी। उदाहरण के लिए, उसे बताया गया था कि पुरुष अपनी शारीरिक इच्छाओं की पूर्ति के अलावा कुछ नहीं जानते। कई तो यह भी नहीं जानते कि एक स्त्री की भी अपनी ज़रूरतें हो सकती हैं। और जो जानते भी थे, उन्हें कोई परवाह नहीं थी। वह अक्सर अपनी सहेलियों से सुनती थी कि फलां महिला संयोग से गर्भवती हो गई; उसके साथी का इसमें कुछ हाथ हो सकता था, लेकिन उसे ज़रा भी अंदाज़ा नहीं था—उसने कुछ भी योगदान नहीं दिया था।

वह जानती थी कि पुरुष अपनी इच्छा के अनुसार काम करते हैं और जो करना होता है, वही करते

हैं। वे स्त्री की थकान, उसकी इच्छाशक्ति की कमी या उसे इस क्रिया से कोई आनंद न मिलने की परवाह नहीं करते। उन्हें स्त्री की संतुष्टि का कोई अंदाजा नहीं होता: वास्तव में, वे ऐसी कल्पना भी नहीं कर सकते थे। लेकिन मार्स्टन ब्लेक के साथ ऐसा नहीं था।

लेकिन क्या वह उससे प्यार करता था? क्या उसे उससे इश्क़ (प्यार का जुनून) था? या फिर यह इश्क़ के बाद की वह दुर्लभ अवस्था थी, किसी को पूरी तरह से जानने और उसके साथ खुश रहने की अवस्था? सूफी इसे 'उन्स' कहते हैं। यह तब होता है जब इच्छा की उन्माद शांत हो जाती है और मन की शांति आ जाती है, जब इच्छा, हालांकि अप्रासंगिक नहीं होती, अब सर्वोपरि भावना नहीं रह जाती। मुझे नहीं पता कि इन शब्दों का कोई वास्तविक अर्थ है भी या नहीं। किताबों और कवियों द्वारा वर्णित प्रेम के लक्षण और संकेत, यहाँ किसी काम के नहीं लगते।

अठारहवीं शताब्दी के महान कवि मीर, जिन्हें स्नेहपूर्वक मीर साहब कहा जाता था, ने प्रेम के लक्षणों पर एक सुंदर कविता लिखी थी। वज़ीर को वह कविता इतनी पसंद आई कि दिल्ली में अकेले होने पर वह अक्सर उसे गुनगुनाती थीं। कभी-कभी तो वह हिम्मत जुटाकर उन लोगों को भी वह कविता सुना देती थीं जो स्नेह के प्रतीक के रूप में उन्हें उपहार देने पर जोर देते थे।

हर कोई सच्चा प्रेमी होने का दावा करता है, लेकिन मैं कैसे स्वीकार करूँ जब दिखाने के लिए कुछ भी नहीं है? आँसुओं में खून की एक झलक, चेहरे पर पीलापन, प्यार का कम से कम कोई संकेत तो होना चाहिए।

सच कहूँ तो, मार्स्टन ब्लेक का चेहरा उसे देखते ही खिल उठता था। उनका हर हावभाव, उनके शरीर की हर हरकत और उनका स्नेहपूर्ण व्यवहार शब्दों से कहीं अधिक यह प्रकट करता था कि वे उसकी संगति में आनंदित होते थे और हमेशा उसके साथ रहना चाहते थे। लेकिन फिर...? वैवाहिक बंधन, विवाह की औपचारिक रस्में, ये सब अभी बहुत दूर की बात थी। उनके बीच कोई अनौपचारिक दस्तावेज़ भी नहीं था। फिर भी उसे पूरा भरोसा था कि मार्स्टन ब्लेक साहब विश्वासघात नहीं करेंगे। और जब उनके सामने पूरा जीवन पड़ा था, तो इतनी जल्दी कागज़ात, हस्ताक्षर और मुहर की बात करना अशुभ लग रहा था।

लेकिन क्या वह मुझसे सच्चा प्यार करता है? और अगर करता है, तो मैं उसके लिए क्या महसूस करती हूँ? उसके दिल में कहीं न कहीं एक हल्की सी बेचैनी ज़रूर थी। मैं जानती हूँ कि मैं हमेशा उसके घर लौटने का इंतज़ार करती हूँ। यह सच है कि जब वह देर से आता है तो मुझे उसकी चिंता होती है। यह भी सच है कि कई रातों तक हम... क्या इसे भी प्यार कहते हैं? और अगर यह प्यार नहीं है, तो मैंने अपना घर, अपने पिता का दरवाज़ा, अपने भाई-बहनों का प्यार, अपना धर्म, अपनी जाति और जन्म छोड़कर यहाँ क्यों आई? एक पुरानी कहावत है: अपनी इज़्ज़त बचाकर रखो, फिर दूसरे तुम्हें इज़्ज़त देंगे। मैं यहाँ आई हूँ, अपनी इज़्ज़त शाहजहानाबाद में छोड़कर। अगर वह मेरा हाथ छोड़ दे तो क्या कोई ऐसा होगा जिसे मैं अपना कह सकूँ? अगर मैं उसे छोड़ दूँ तो क्या मैं पूरी तरह से बेघर नहीं हो जाऊँगी?

भविष्य में जो भी हो, भाड़ में जाए। अब मेरा जीवन चिंताओं और परेशानियों से मुक्त है। धन की कोई कमी नहीं है, भले ही वह भरपूर मात्रा में न बहे। मैं अपने कुल और परिवार के लोगों में सम्मान नहीं पाती, लेकिन बाहरी और निम्न कुल के लोग मेरा आदर करते हैं। मेरे पास चालीस-

पचास नौकर हैं, जो मेरी हर इच्छा पूरी करने के लिए तत्पर और तैयार रहते हैं। मैं सिर्फ एक फिरंगी की बीबी नहीं हूँ, बल्कि जयपुर शहर की प्रतिष्ठित हस्तियों में से एक हूँ और अपनी सुंदरता और घर के कुशल प्रबंधन के कारण सभी भिखारियों में विशिष्ट हूँ। साहब मुझे बहुत प्यार करते हैं, मेरे नियमों से सभी नौकर-चाकर खुश रहते हैं और व्यापारी और साहूकार मेरा आदर करते हैं। लोग मुझे 'दिल्ली की बेगम' के नाम से जानते हैं। तो फिर और क्या चाहिए?

सच कहूँ तो, मैं उस मिस उमदा खानम से कहीं बेहतर स्थिति में हूँ। क्या इन नवाबों के स्नेह पर कभी भरोसा किया जा सकता है? ये हमेशा अपनी सच्ची भावनाओं को छुपा कर रखते हैं। इनकी असली चाहत कौन है? ये वास्तव में किसके साथ जुड़े हुए हैं या जल्द ही जुड़ने वाले हैं? कोई नहीं कह सकता। और फिर, ये अभी असली नवाब नहीं हैं। इन्हें अभी गद्दी संभालनी है: कौन जाने कल क्या होगा? इनके साथ कुछ भी हो सकता है, और इनके पास अपनी कोई संपत्ति नहीं है, ये तो बस शासक नवाब की पेंशनभोगी हैं। इनकी पेंशन बेशक अच्छी-खासी है, लेकिन महल, महल की साज-सज्जा, फर्नीचर, कालीन—इनमें से कुछ भी इनका अपना नहीं है। ठीक है, इनके कुछ नौकर हैं, लेकिन बाकी का वेतन रामपुर राज्य देता है और वे वास्तव में इनके प्रति जवाबदेह नहीं हैं।

मंझली को मुझे देखने दो। ये सारे नौकर-चाकर पूरी तरह मेरे इशारों पर चलते हैं। मैं जिसे चाहूँ निकाल सकती हूँ और जिसे चाहूँ रख सकती हूँ। मेरे यहाँ आने से पहले साहब के पास एक नौकरानी थी, वह जवान थी, पूरब से आई थी। वह हमेशा सलीके से रहती थी और बड़े ठाठ-बाठ से पेश आती थी। उसे साहब के शरीर को धीरे-धीरे मालिश करने और दबाने के लिए रखा गया था ताकि जब वे थक जाएँ तो उन्हें आराम मिले... और शायद कुछ और भी... खैर, मैंने उसे तुरंत निकाल दिया और कहा कि अगर ऐसे किसी काम की ज़रूरत हो तो मैं उसे बखूबी कर सकती हूँ। साहब ने एक शब्द भी बोलने की हिम्मत नहीं की।

और हमारी बड़ी बहन? भला, भला कौन उनकी बराबरी कर सकता है? जन्नत की हूर की तरह पवित्र, शुद्ध और मधुर। लेकिन क्या उनका जीवन सचमुच जीवन कहलाने लायक है? बच्चों का पालन-पोषण, दिन-रात उनकी हर ज़रूरत पूरी करना, पति की हर आज्ञा मानना और हर समय उनके इशारों पर चलना, सास-ससुर के अधीन जीवन बिताना: क्या इसे जीवन कहा जा सकता है? कम से कम अब तक तो मुझे अपने साहब के नखरों और मनमानी से परेशान नहीं होना पड़ा; बल्कि वे ही हर बात में मेरी बात मानते आए हैं। बारी का चेहरा और रंग कितना प्यारा और ताजा था, बिल्कुल अर्मेनियाई गुड़िया जैसा, और अब वह इतनी मुरझाई हुई, इतनी सिकुड़ी हुई। आखिर सारी तकलीफें सिर्फ औरतें ही क्यों उठाती हैं? सारा बोझ उन्हें ही क्यों उठाना पड़ता है, मैं कहती हूँ! क्या यह कहावत नहीं है कि 'दासी को दासी कहो तो वह नाराज़ होकर रोएगी; पत्नी को दासी कहो तो वह मज़ाक पर मुस्कुराएगी'? इसीलिए तो लोग कहते हैं: किताब से दो शब्द बोलो और उससे मनचाहा काम करवा लो। चाहे तुम उसे नीचा दिखाओगे, वो हंस कर टाल देगी। वो मज़ाक समझेगी। अगर अंत में बेगम बनकर ही रहना पड़े तो बेगम साहब की उपाधि का क्या फायदा?

खैर, मैं उन 'औरतों' से तो ज़रूर बेहतर हूँ। जैसा कि कहते हैं: ज़िंदा बिल्ली मरे हुए शेर से बेहतर

होती है। भाड़ में जाए वो औरत, अगर मैं बेगम नहीं हूँ। लेकिन मैं नौकरानी या आया तो बिलकुल नहीं हूँ।
धीरे-धीरे वज़ीर ने बीबी की तरह जीना सीखा और फिर बीबी के रूप में खुश रहना सीखा। इसके लिए उसे न केवल अपने आंतरिक संघर्षों और प्रेम जगत से जुड़े सवालों को त्यागना पड़ा, बल्कि समझौते भी करने पड़े, ठीक वैसे ही जैसे मार्स्टन ब्लेक को करने पड़े थे। यह स्वीकार करना होगा कि मार्स्टन ब्लेक ने समझौते करने में जरा भी कंजूसी नहीं की और वज़ीर को अपने घर को अपनी इच्छानुसार या कम से कम स्वीकार्य तरीके से व्यवस्थित करने और चलाने की अनुमति दी।

वज़ीर जिन घरों से परिचित था, उनमें हमेशा पानी रखने के लिए एक अलग कमरा होता था। पानी के कमरे में कुछ ऊँचे लकड़ी के स्टैंड होते थे जिन पर मिट्टी के घड़े और धातु के चम्मच रखे होते थे। संपन्न घरों में केओरा (एक ऐसा पौधा जिसके फूल में अनोखी सुगंध होती है), आम के गूदे और अनार के गाढ़े रस से बने शीतल पेय की बोतलें भी होती थीं। गर्मियों में बर्फ रखने के लिए एक बड़ा लकड़ी का टब होता था, जिसमें बर्फ पर बुरादा चढ़ाकर जूट से ढका जाता था, यह एक महत्वपूर्ण वस्तु थी। पानी के कमरे के दूर वाले छोर पर, दरवाजे से दूर, लगभग नौ से बारह इंच ऊँचा एक छोटा चबूतरा होता था, जो लकड़ी या पत्थर का बना होता था। इस चबूतरे पर नहाने के पानी के लिए एक या दो बड़े मुँह वाले मिट्टी के घड़े रखे होते थे। चबूतरे और पास के आले में तेल, मेहंदी और जड़ी-बूटियों से उपचारित चने के आटे (शैम्पू या साबुन के रूप में उपयोग किए जाने वाले) से भरे पैकेट, डिब्बे और चमड़े की बोतलें और सुगंधित पानी की बोतलें भी होती थीं।
यदि शौचालय में पर्याप्त जगह होती, तो सर्दियों में उसके एक कोने का उपयोग मूत्रालय के रूप में किया जाता था, और वास्तव में, यदि कमरा पर्याप्त बड़ा होता, तो हर मौसम में इसका उपयोग होता था। यह सीधे पानी के निकास से जुड़ा होता था और उपयोगकर्ता से अपेक्षा की जाती थी कि वह हर बार उपयोग के बाद इसे पर्याप्त पानी से धोए ताकि दुर्गंध दूर हो जाए। शौचालय घर के एक दूर कोने में, बिल्कुल अलग होता था।
वज़ीर को यह देखकर बहुत गुस्सा आया कि मार्स्टन ब्लेक पानी के कमरे को कबाड़खाने की तरह इस्तेमाल कर रहा था। उसने उसे बताया कि अंग्रेज़ घरों में बहुत कम पानी पिया जाता है, और शौच के लिए शयनकक्ष में चीनी मिट्टी या एनामेल का कटोरा इस्तेमाल किया जाता है। यह एक छोटे से स्टूल पर रखा होता है, या कभी-कभी बिस्तर के नीचे। वज़ीर ने पहले कभी पेशाब करने का बर्तन नहीं देखा था और जब मार्स्टन ब्लेक ने अपने शयनकक्ष में उसे दिखाया तो वह दंग रह गई। उसे पता चला कि औरतें और मर्द अपने-अपने बर्तन इस्तेमाल करते थे; बर्तन इस्तेमाल करने के बाद सफाई का कोई ध्यान नहीं रखा जाता था, न ही शयनकक्ष में उसकी तेज़ क्षारीय गंध को कोई समस्या माना जाता था। सफाई करने वाली एक महिला हर सुबह और शाम बर्तन खाली करने और ज़रूरत पड़ने पर उसे धोने के लिए आती थी। और स्नान? खैर, हर चार-पाँच हफ़्ते में एक बार अच्छी तरह से स्नान करना ही काफ़ी स्वच्छता माना जाता था, बस इतना ही।

चेहरे और शरीर को ज़ोर से रगड़कर साफ़ करना और फिर पूरे शरीर पर बहुत बारीक पाउडर लगाना ही काफ़ी समझा जाता था। यह पाउडर, साबुन जैसी खुशबू वाला, सफ़ेद और सबसे बारीक आटे से भी कहीं ज़्यादा महीन, अक्सर हाथों या चेहरे और शरीर पर चिपक जाता था। यह रूज जैसा कुछ था, जिसका इस्तेमाल अत्यधिक मात्रा में किया जाता था, और अगर यह साबुन के पत्थर की धूल की तरह सूखा और बारीक न होता तो इसे मरहम कहा जा सकता था। इसका सामान्य नाम 'पाउडर' था, लेकिन वज़ीर इसे कभी सही ढंग से उच्चारित करना नहीं सीख पाई ताकि यह 'लाउडर' से मिलता-जुलता उच्चारण करे। वह हमेशा इसका उच्चारण कुछ-कुछ 'पाउडर' की तरह करती थी।

इस पाउडर को, भगवान उसकी मदद करे, मार्स्टन ब्लेक दिन में कई बार इस्तेमाल करते थे, लेकिन इससे उनकी शरीर की दुर्गंध दूर नहीं होती थी। अंग्रेज़ पुरुष कभी भी किसी तरह का इत्र या परफ्यूम इस्तेमाल नहीं करते थे। मार्स्टन ब्लेक हमेशा कहते थे कि महिलाएं चाहे जितना भी इत्र लगा लें, लेकिन पुरुषों के लिए तंबाकू की खुशबू ही सबसे अच्छा परफ्यूम है।

वज़ीर ने एक बार फिर पानी का कमरा बनवाया, उन घृणित पेशाब के बर्तनों को सफाई करने वाली महिला को दे दिया और सुबह नहाने की नियमित दिनचर्या स्थापित की। मार्स्टन ब्लेक के लिए भी यह अनिवार्य था। इस पहले बड़े बदलाव के बाद, उनका दूसरा कदम उस महिला को नौकरी से निकालना था जो मार्स्टन ब्लेक के थके हुए अंगों की मालिश और हल्के दबाव का काम करती थी। अगला बड़ा बदलाव उन्होंने खान-पान के मामले में किया। वह जानती थीं कि ईसाई धर्म में कोई भी भोजन वर्जित नहीं है, व्यावहारिक रूप से कुछ भी वर्जित नहीं है। सूअर का मांस उन्होंने अपने घर में पहले ही वर्जित घोषित कर दिया था। शराब और मदिरा के बारे में उन्होंने माना कि उन्हें ड्राइंग रूम में पिया जा सकता है, लेकिन कहीं और नहीं। भोजन के बारे में उन्हें सबसे आश्चर्यजनक बात यह पता चली कि अंग्रेजों को मांस के संबंध में ताज़ा या बासी की कोई अवधारणा नहीं थी। सूअर के मांस के अलावा, वे निश्चित रूप से ज़बीहा नामक मांस खाने के लिए बाध्य थे, अर्थात् इस्लामी कानून: शरिया द्वारा निर्धारित औपचारिकताओं के अनुसार वध किए गए जानवरों का मांस। इसका कारण यह था कि शहर में कहीं भी गैर-ज़बीहा मांस नहीं बेचा जाता था। लेकिन अंग्रेज बासी या बदबूदार मांस को लेकर ज्यादा सख्त नहीं थे। इसका उपाय था तेज मसालों का भरपूर इस्तेमाल करके बदबू को खत्म करना।

दूध के मामले में, अंग्रेज़ों को बकरी का दूध सबसे ज़्यादा पसंद था; उन्हें इसकी तेज़ गंध से कोई फ़र्क नहीं पड़ता था, या शायद वे इसे महसूस ही नहीं कर पाते थे। वज़ीर ने बकरी के दूध और बासी मांस पर प्रतिबंध लगा दिया था। ताज़ा मांस और अंडे की निरंतर आपूर्ति सुनिश्चित करने के लिए, उन्होंने मुर्गियों, तीतरों, बटेरों, बत्तखों, मोरों और कबूतरों का एक तरह से बड़ा पालन-पोषण केंद्र स्थापित किया। मार्स्टन ब्लेक खरगोश भी पालना चाहते थे, लेकिन वज़ीर ने मना कर दिया। वह जानती थीं कि खरगोश का मांस वर्जित नहीं था, लेकिन यह मुसलमानों के पसंदीदा भोजन में शामिल नहीं था। ताज़ा दूध की निरंतर आपूर्ति सुनिश्चित करने के लिए दो गायें और एक भैंस खरीदी गईं। पक्षियों और जानवरों की देखभाल के लिए अतिरिक्त कर्मचारी नियुक्त किए गए। शिकार का एक अलग विभाग था, जिसमें कुत्ते और उनके विशेष रखवाले थे, जिन्हें डोरिया कहा जाता था। अतिरिक्त शिकार का मांस, चाहे वह मुर्गी का हो या खुर वाले जानवर का, कभी भी रात भर नहीं रखा जाता था। इसे नौकरों और करीबी पड़ोसियों को दे दिया जाता था।

लेकिन एक बात ऐसी थी जिस पर मार्स्टन ब्लेक वज़ीर की इच्छा से सहमत नहीं थे। उच्च कुल के भारतीय घरों में, महिलाएं पुरुषों के बाद और एकांत में भोजन करती थीं। यहां तक कि पति या भाई-बहनों को भी महिलाओं के भोजन करते समय ज़नाना में प्रवेश करने की अनुमति नहीं थी। मार्स्टन ब्लेक ने ज़ोर देकर कहा कि अगर नाश्ता नहीं तो वज़ीर को दोपहर और रात के खाने में उनके साथ ही बैठना चाहिए। उन्हें चाकू और कांटे का भी इस्तेमाल करना होगा। छोटी बेगम ने कहा कि वह उनके साथ भोजन करने के इस बेशर्म कृत्य को करने के बजाय ज़हर खाना ज़्यादा

पसंद करेंगी। लंबे वाद-विवाद के बाद यह तय हुआ कि साहब और बीबी रात का खाना एक साथ खाएंगे, लेकिन अगर रात के खाने में कोई दूसरा पुरुष मेहमान हो, तो वज़ीर उनके साथ तभी बैठेंगी जब वह मेहमान वाकई कोई खास व्यक्ति हो। साहब की सेवा में उन्हें इससे आगे जाने की कोई बाध्यता नहीं थी। उनके साथ मेज पर या मेज़पोश के चारों ओर ज़मीन पर भी खाना उनके लिए एक बोझिल सेवा के समान था। जब मार्स्टन ब्लेक ने उसे विभिन्न प्रकार के चाकू और कांटे के उपयोग के बारे में सिखाना शुरू किया, तो वह यह देखकर आश्चर्यचकित और प्रसन्न हुए कि उनकी प्यारी छात्रा ने केवल एक या दो पाठों में ही विभिन्न प्रकार के चाकू और कांटों के बीच के अंतर को समझ लिया।

वज़ीर और मार्स्टन ब्लेक की बातचीत आम तौर पर घरेलू मामलों या खबरों के सरसरी आदान-प्रदान से आगे नहीं बढ़ती थी। उनके साहब को विलायत (यानी इंग्लैंड) से नियमित रूप से डाक मिलती थी, लेकिन वज़ीर को कभी भी उन चिट्ठियों की जानकारी नहीं दी जाती थी। क्या मार्स्टन ब्लेक का इंग्लैंड में कोई परिवार या भाई-बहन थे? क्या उनके माता-पिता जीवित थे और यदि हाँ, तो वे कहाँ थे और उनका क्या हाल था? उन्होंने इन मामलों पर कभी भी वज़ीर से कोई जानकारी साझा नहीं की।

वज़ीर को पता था, या उसने लोगों से सुना था, कि कई साहबों ने भारत में बीबी रख ली थीं, जबकि विलायत में उनकी पहले से ही पत्नी या मंगेतर थीं। यह लगभग तय था कि मौका मिलते ही वे उनके पास लौट जाते थे। कोई बीबी इस मामले में उनका विरोध या बाधा नहीं कर सकती थी। चूंकि बीबी को अपने साहब के माता-पिता के बारे में कोई जानकारी नहीं थी, इसलिए दूर देश में किसी फिरंगी पत्नी या मंगेतर के बारे में जानने की उसकी संभावना बहुत कम थी।

फिरंगियों और यहां तक कि मार्स्टन ब्लेक के भारतीयों के प्रति रवैये और विचारों में बहुत कुछ ऐसा था जो उन्हें पसंद नहीं था। कई बार उनकी असहमति झगड़े में बदल जाती थी। मार्स्टन ब्लेक का मानना था कि भारतीय मोटे तौर पर आदिम और संस्कृतिहीन थे। वे उनके जीवन के हर संभव अवसर पर भव्य समारोहों में अत्यधिक व्यस्तता का उपहास करते थे। वे अक्सर वज़ीर से कहते थे कि उनके लोगों ने धन और सम्मान दोनों को खोने का एक अच्छा तरीका ढूंढ लिया है। खैर, वज़ीर शायद इस हद तक उनसे सहमत हो सकती थीं, कम से कम आंशिक रूप से, लेकिन अंग्रेज भारतीयों की मान्यताओं, उनके जीवन शैली, उनके व्यवसायों, उनके धर्मों को कोई महत्व नहीं देते थे। इससे भी बुरी बात यह थी कि दो बातें न केवल उनके शब्दों या अप्रत्यक्ष टिप्पणियों से, बल्कि भारत में समय बिताने के उनके तरीके और अपनी व्यक्तिगत संपत्ति बढ़ाने की उनकी रणनीतियों और युक्तियों से भी स्पष्ट थीं। पहली बात, वे यहां धन वसूलने और निकालने आए थे; और दूसरी बात, यदि धन वसूलने के रास्ते में उन्हें शासन करना पड़े, तो वे छल, षड्यंत्र, रिश्वतखोरी या युद्ध करने से भी पीछे नहीं हटेंगे। दरअसल, वे ऐसा करने के लिए हमेशा तैयार थे। उन्हें मुशफी की यह आयत याद थी:

नाज़रीन लोग किसी समूह में शामिल होने या उससे अलग होने की योजना बनाने में कितने माहिर हैं! युद्ध में वे सबसे पहले दुश्मन सेनापति को अलग होने के लिए उकसाते हैं।

वज़ीर ने मार्स्टन ब्लेक के घर में एक अजीब बात देखी: छोटी-मोटी चोरियाँ आम बात थीं। ऐसा

कोई नौकर शायद ही होता था जो आदत से छोटी-मोटी चोरियाँ न करता हो या घर के खातों में थोड़ी-बहुत हेराफेरी करने से परहेज न करता हो। इन छोटी-मोटी बेईमानियों से घर के आर्थिक मामलों में ज़्यादा नुकसान तो नहीं होता था, लेकिन मार्स्टन ब्लेक को इनसे बहुत चिढ़ होती थी; ऐसी घटनाएँ होने पर वह हमेशा परेशान और क्रोधित हो जाते थे और सच तो यह था कि उनका पक्ष सही था। फिर भी, कभी-कभी, हालांकि बहुत कम ही, वह अपना आपा खो बैठते थे और आम तौर पर सभी भारतीयों पर बरस पड़ते थे और उन्हें स्वभाव से बेईमान घोषित कर देते थे। तब वज़ीर गुस्से से चिल्लाते हुए कहते कि घर के इंतज़ाम में या फिर अंग्रेज़ साहबों के चरित्र में ही कुछ गड़बड़ है—उनका सिर कलम कर दिया जाए—क्योंकि हमारे घरों में नौकरों ने कभी भी नकदी या सामान की छोटी-मोटी चोरी भी नहीं की।
'तो आपका मतलब यह है कि हमने उन्हें चोरी करना सिखाया?' मार्स्टन ब्लेक गुस्से से पलटवार करते।
वह चिल्लाकर कहती, 'हो सकता है कि तुमने उन्हें सिखाया न हो, लेकिन ईश्वर गवाह है कि हमारे सेवक चोर नहीं हैं। यह सच है कि तुमने उन्हें चोरी करना नहीं सिखाया। लेकिन क्या तुमने कभी यह सोचने की कोशिश की कि उन्हें यह बुरी आदत किससे लगी?'

'इसमें सोचने जैसी कोई बात नहीं है। ये सभी भारतीय कमीने हैं। सब एक जैसे हैं।'
'तुम अंग्रेज ही हो जो विवाह या कानूनी शादी में विश्वास नहीं करते, और तुम ही मेरे लोगों को नाजायज कहते हो! ऐसे शब्द फिर कभी अपने मुंह से मत निकलने देना, वरना मैं...'
वह गुस्से और भावनाओं के आवेश से हांफ रही थी। मार्स्टन ब्लेक को भी एहसास हुआ कि उसने बेवजह ही मामले को झगड़े में बदल दिया था। वह पानी के कमरे से अनार के रस की एक बोतल लाया और उसे शांत करने की कोशिश करते हुए विनम्रता से बोला, 'लो, इसके दो चम्मच पी लो। इससे तुम्हारा गुस्सा शांत हो जाएगा। चलो, इस सब को खत्म करो। मुझे खेद है।'
वज़ीर ने अपने हल्के शॉल के किनारे से अपनी आँखें पोंछीं; उसके होंठों पर एक हल्की सी मुस्कान खिल उठी। साहब की माफ़ी मांगने की आदत उसे हमेशा अजीब लगती थी, लेकिन साथ ही सुखद और दिल को छूने वाली भी। वे 'मुझे माफ़ कर दो' कहने में कभी नहीं हिचकिचाते थे। वह हमेशा इसे 'मुझे माफ़ कर दो' सुनती थी और उसे यह सुनना अच्छा लगता था। वह जानती थी कि पुरुष आमतौर पर माफ़ी नहीं मांगते। कभी-कभी वह जानबूझकर थोड़ी शरारत करती, बहस शुरू कर देती, जो साहब के 'मुझे माफ़ कर दो' के साथ खत्म होती।
दूसरी ओर, साहब को अपनी बीबी द्वारा सरल अंग्रेजी शब्दों को बिगाड़ने का तरीका भी बहुत पसंद था, जिन्हें वह किसी तरह कभी भी सही उच्चारण के साथ बोलना नहीं सीख पाईं। उनकी बोली में, 'क्रिसमस' को 'किस्मिस', 'शैम्पेन' को 'संपान', 'पार्सले' को 'पीटर्सली' कहते थे। यह सच है कि साहब भी सरल हिंदी शब्दों को बिगाड़ने में पीछे नहीं थे, जिनमें से कुछ शब्द, उन्हें बहुत बाद में पता चला, उस समय की अंग्रेजी भाषा में शामिल हो गए थे। जब वह वज़ीर से बात करते थे, तो मार्स्टन ब्लेक हमेशा उन और अन्य हिंदी शब्दों का उच्चारण काफी हद तक सही करते थे, लेकिन जब वह नौकरों या अन्य अंग्रेजों से बात करते थे तो उनका लहजा और उच्चारण बदल

जाता था। तब, पिकदान (थूकदान) पिगदान हो जाता था; पिकदानी (छोटा थूकदान) पिगडन्नी हो जाता था; छिंट (छोटे फूलों के पैटर्न वाला सूती कपड़ा) चिंट्ज़ हो जाता था; चिट्ठी (एक नोट, एक पत्र) चिट बन जाता था; चंपी (मालिश) शैम्पू हो जाता था; एक सिपाही को सिपाही बना दिया गया, और सादे चावल और दाल से बने अत्यंत साधारण भोजन को खिचड़ी से बदलकर केडगेरी बना दिया गया, जो कि साधारण खिचड़ी से कुछ बेहतर व्यंजन है।

साहब के लिए ये सब बच्चों का खेल था। उनके जीवन में हंसी-मजाक और विनोद के पलों की कोई कमी नहीं थी, और हिंदी शब्दों का गलत इस्तेमाल भी ऐसा ही एक अवसर प्रदान करता था। लेकिन घरेलू चोरियों को लेकर उनके मन में हमेशा थोड़ी बेचैनी रहती थी, मानो कोई काम अधूरा रह गया हो। वे साहब से कहना चाहती थीं कि हम भारतीय अपने दिल में आप फिरंगियों को अतिक्रमणकारी और घुसपैठिए समझते हैं, और यही कारण है कि हमारे कुछ लोग आपसे चोरी करने में जरा भी संकोच नहीं करते। फिर वे आगे कहना चाहती थीं कि आप हमें एक कौम के रूप में सम्मान नहीं देते। आप यहाँ व्यापार करने आए थे, लेकिन आपकी ज्यादतियाँ उस नीच कुल के पानी ढोने वाले से भी कहीं अधिक हैं, जिसके बारे में कहा जाता है कि वह ढाई दिन के लिए काबुल का बादशाह बन गया था। आपके लोग राजाओं और शासकों की तरह व्यवहार करने लगे हैं। आपने आगरा में हमारे बादशाह के किले के दीवान-ए-खास को रसोई में बदल दिया है। इस किले को पहले ही अफगानों, जाटों और मराठों के अत्याचारों से काफी नुकसान हो चुका था, अब आपके लोग इसकी बची-खुची खूबसूरती को बेचकर जल्दी पैसा कमाने पर तुले हुए हैं। हाँ, मैं मानता हूँ कि आप मेरे प्रति बहुत दयालु हैं, लेकिन भगवान की धरती जयपुर के इस छोटे से घर से कहीं अधिक विशाल है।

यह और भी बहुत कुछ था, जिसे वह कभी व्यक्त नहीं कर सकी। उसकी सबसे बड़ी दुविधा यह थी कि मार्स्टन ब्लेक उसे बेहद पसंद था; वह उसे चाहती थी, फिर भी अगर वह अंग्रेजों और उनके तौर-तरीकों से नफरत नहीं करती थी, तो निश्चित रूप से उनके कई कामों से उसे घृणा होती थी। व्यक्तिगत स्वच्छता और धार्मिक अनुष्ठानों के संबंध में, उसने साहिब को पहले ही अपने विश्वास और रीति-रिवाजों में परिवर्तित कर दिया था। उसने बेशक पहले ही दिन सूअर, उस काले चेहरे वाले अपवित्र जानवर के बारे में अपना कड़ा मत दे दिया था; और उसके पास अपना पानी का कमरा और पानी वाला था क्योंकि अंग्रेज घरों में पानी वाला शराब और मदिरा भी परोसता था, इसलिए साहिब का पानी वाला उसके लिए अछूत था।

यह सब तो ठीक था, लेकिन उसे यह पक्का यकीन हो गया था कि राज-व्यवस्था के मामले में फिरंगियों की योजना अंततः उसके देश पर राज करने, हर जगह अपने कानून और रीति-रिवाज लागू करने और भारतीयों को उसी तरह अपना गुलाम बनाने की थी, जैसे वह अपने साहब की गुलाम थी। अब उसे यह भी यकीन हो गया था कि साहब, बाकी सभी फिरंगियों की तरह, भारत या भारतीयों को ज़रा भी पसंद नहीं करते थे। अब वह समझ सकती थी कि ऐसे लोगों के साथ रहना कितना मुश्किल होता है जिनमें अनगिनत जटिलताएं और अनिश्चितताएं अंतर्निहित होती हैं। वह किसके साथ ऐसे राज़ साझा कर सकती थी, और अगर उसका कोई राज़दार होता भी, तो वह उन अनकही और अनकही बातों को कहने के लिए शब्द कहाँ से और कैसे पाती? वह भली-

भांति जानती थी कि उसके और उसके साहब के बीच का रिश्ता मुख्य रूप से शयनकक्ष के मामलों और लेन-देन पर आधारित था; राज्य और राजनीति के मामले वहाँ दखल नहीं देते थे। अगर साहब उसे छोड़ दें तो वह किसकी ओर देखेगी? उसे अपने हालात सुधारने के लिए फिर से संघर्ष करना पड़ेगा और अपनी सुंदरता को ही अपनी पूंजी बनाना होगा।

उस समय हालात ऐसे थे कि चाहे दिल्ली की राजधानी हो या पूरा हिंदुस्तान, हर कोई अपने-अपने कामों में और अपने जीवन को बनाने या बिगाड़ने में लगा हुआ था। हर कोई अपने लिए ही था। ऐसे में अगर छोटी बेगम भी अपनी स्थिति को सुधारने और संवारने की कोशिश कर रही थीं, तो इसमें उन्हें दोष कौन दे सकता है?

दिल्ली की लाल हवेली, बार-बार बर्बरता और युद्धों का शिकार होने के बावजूद, आज भी अपने राज्य पर शासन करने वालों का निवास स्थान थी और अपने पूर्वजों की एक भव्य स्मृति थी। अब ऐसा प्रतीत होता है कि यदि अंग्रेज़ तोपखाने से इसे पूरी तरह नष्ट न कर दिया जाए, तो वह समय जल्द ही आएगा जब इस पर फिरंगी ध्वज लहराएगा। शासक और सम्राट, दोनों ही भूमिकाएँ ईसाइयों को सौंपी जाएँगी या वे उन पर अधिकार कर लेंगे। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि वज़ीर जैसी हज़ारों लड़कियाँ स्वार्थ और स्वार्थ की होड़ में कुचली जाएँगी, जो कि युद्धरत पक्षों के बीच होना ही था।

आज कम से कम उसके पास एक सुरक्षित ठिकाना तो था, लेकिन उससे क्या? मुझे किसी राज्य या दरबार का संचालन करना चाहिए था, या किसी शाही शयनकक्ष की शोभा बनना चाहिए था, बजाय इसके कि मुझे एक गोरे मूर्ख के लिए घरेलू काम करके अपना गुजारा चलाना पड़े, नाम की रानी और असल में एक गुलाम की तरह जीना पड़े।

लेकिन... यह भी सच है कि मेरे साहब मुझे बहुत चाहते हैं और मुझे भी उनके साथ एकांत में रहना अच्छा लगता है...

वज़ीर को मार्स्टन ब्लेक को अपनी पहली बेटी का नाम बादशाह बेगम रखने के लिए राज़ी करने में काफ़ी बहस करनी पड़ी। उन्होंने सोफिया के अलावा किसी और नाम पर विचार करने से इनकार कर दिया, क्योंकि सोफिया नाम से ही बच्ची की पहचान ईसाई धर्म से जुड़ जाती थी। काफ़ी चर्चा के बाद, वे मसीह जान नाम पर राज़ी हुए, जो कुछ हद तक मुस्लिम नाम था और जिसे ईसाई नाम भी माना जा सकता था, लेकिन बच्ची का बपतिस्मा केवल सोफिया के नाम से ही होना था। जब प्रसव कक्ष में छोटी बेगम ने वहाँ मौजूद सभी लोगों से मुँह फेर लिया और कसम खाई कि उन्हें बच्ची को अपने से दूर ले जाने से कोई आपत्ति नहीं है, लेकिन अगर उसका नाम केवल सोफिया रखा गया तो वह उसे कभी नहीं देखेंगी, तब मार्स्टन ब्लेक का मन थोड़ा नरम पड़ा। लेकिन फिर भी काफ़ी बहस और विवाद के बाद यह तय हुआ कि बच्ची का एक नाम बादशाह बेगम भी होगा, लेकिन उसका बपतिस्मा सोफिया के नाम से ही होना चाहिए, हालाँकि मुल्ला बच्ची के कान में नमाज़ के लिए अज़ान देते समय उसका नाम बादशाह बेगम ही लेंगे।

किसी तरह विवाद सुलझ गया, लेकिन उन दिनों वज़ीर की मुलाकात मार्स्टन ब्लेक के कुछ

रिश्तेदारों से हुई: विलियम कॉटरिल टिंडेल, जो उनकी मां की तरफ से उनके चचेरे भाई थे, और उनकी बहन अबीगैल टिंडेल। विलियम मैसूर में थे और अंग्रेज़ सैनिकों को आपूर्ति करने का व्यापार करते थे। जिस रेजिमेंट से वे जुड़े थे, वह अब जयपुर चली गई थी और टिंडेल परिवार भी समय के साथ उनके पीछे-पीछे आ गया था।

विलियम अभी तक अविवाहित थे और उनकी बहन, उनसे कई साल बड़ी होने के बावजूद, अब भी कुंवारी थीं। कई साल पहले वह अपने छोटे भाई के साथ रहने के लिए मातृभूमि छोड़कर आई थीं और तब से विलियम के घर की गृहणी और लगभग मालकिन के रूप में उनके साथ रह रही थीं। उनका कद छोटा था, उनकी छोटी नीली आँखें और भूरे बाल थे जिनमें सफ़ेद बाल भी थे, और उनकी आवाज़ मधुर लेकिन ऊँची थी। वह नियमित रूप से चर्च जाती थीं और अत्यंत धार्मिक थीं।

बहुत जल्द ही एबिगेल, मार्स्टन ब्लेक के घर में सभी के लिए, यहाँ तक कि छोटी बेगम के लिए भी, 'एबी मेमसाहिब' बन गईं। विलियम और एबी ने अपना घर बसा लिया था, लेकिन एबी अपना काफी समय मार्स्टन ब्लेक के घर में ही बिताती थीं और अनौपचारिक रूप से सोफिया की देखभाल करने वाली और उसकी अभिभावक की भूमिका निभाती थीं। इसलिए यह स्वाभाविक था कि सोफिया के पालन-पोषण में प्रोटेस्टेंट ईसाई धर्म का गहरा प्रभाव पड़ा। एबी मेमसाहिब सोफिया से अंग्रेजी में बात करती थीं। सोफिया की माँ और घर की अन्य नौकरानियों को अंग्रेजी नहीं आती थी, इसलिए वे उससे हिंदी में बात करती थीं। इस प्रकार, सोफिया लगभग दो साल की उम्र तक हिंदी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में पारंगत हो गई।

यह एक प्रकार की विडंबना ही थी कि मूल अंग्रेजी भाषी द्वारा अंग्रेजी सिखाए जाने के बावजूद, 'सच्चे' अंग्रेजी साहब और मेमसाहिबों का मानना था कि सोफिया के अंग्रेजी लहजे पर हिंदुस्तानी भाषा का गहरा प्रभाव था। कई वर्षों बाद, जब गवर्नर जनरल बहादुर के एजेंट और दिल्ली दरबार में रेजिडेंट सर थॉमस मेटकाफ की बेटी लेडी एमिली बेली को सोफिया मार्स्टन ब्लेक से सामाजिक रूप से मिलने का अवसर मिला, तो उन्होंने अपनी डायरी में तिरस्कारपूर्वक लिखा कि सोफिया ने एक अंग्रेजी गीत गाया, लेकिन उसका लहजा इतना अधिक आम और हिंदुस्तानी था कि एमिली बेली को उसके गाए हुए का एक शब्द भी समझ नहीं आया।

जैसा कि ऊपर बताया गया है, टिंडेल भाई-बहन कट्टर प्रोटेस्टेंट थे, और उससे भी बढ़कर, वे कैल्विनवादी थे। इस प्रकार, जहाँ वे 'सेवा', 'देशभक्ति', 'उद्योग' और 'मितव्ययिता' को उच्च महत्व देते थे, वहीं वे आत्म-धर्मी भी थे और अन्य सभी संप्रदायों को, चाहे वे ईसाई हों या नहीं, अज्ञानी मानते थे। वे गरीबी और गरीबों को खुलेआम संदेह और शत्रुता की दृष्टि से देखते थे क्योंकि उन्हें यह विश्वास दिलाया गया था कि ईश्वर के पास किसी को गरीब बनाने के बहुत अच्छे कारण रहे होंगे। उनमें हास्यबोध का अभाव था और वे सभी गैर-धार्मिक कविता और संगीत में रुचि नहीं रखते थे।

विलियम कम बोलने वाला व्यक्ति था, लेकिन एबी की ज़बान किसी माहिर कैंची की तरह तेज़ चलती थी। वह इस बात को साबित करने का कोई मौका नहीं छोड़ती थी कि भारतीय न केवल बाहरी रूप से काले होते हैं, बल्कि त्वचा के कालेपन और घोर कालेपन में कोई अंतर नहीं होता;

और चूंकि कालापन भ्रष्टता और तर्क शक्ति की कमी का प्रतीक है, इसलिए भारतीयों के लिए कोई मुक्ति नहीं हो सकती। वज़ीर का रंग, जिसे भारतीय हल्के भूरे और मनभावन नमकीन रंग का मानते थे, उसकी नज़र में 'गहरा भूरा' था। वह अपने मन में अपने चचेरे भाई को उसकी काली स्त्री के चंगुल से छुड़ाने और किसी उपयुक्त, गोरी, मृदुभाषी, अच्छी ईसाई लड़की से उसकी शादी करवाने की योजना बना रही थी। चूंकि यह सपना अभी पूरा होने वाला नहीं था, इसलिए उसने अपनी सारी ऊर्जा सोफिया के पालन-पोषण और नैतिक शिक्षा में लगा दी ताकि वह कम से कम एक आत्मा को विनाश से बचा सके।

छोटी बेगम को टिंडेल परिवार कई मायनों में मार्स्टन ब्लेक से अलग लगा। अब उन्हें एहसास हुआ कि सभी फिरंगी स्वभाव और चरित्र में एक जैसे नहीं होते, लेकिन अहंकार, आडंबर और शासक वर्ग का सदस्य होने का भाव उनमें समान था। मार्स्टन ब्लेक और टिंडेल परिवार में कुछ अंतर थे, लेकिन कई मायनों में समानता भी थी। उदाहरण के लिए, एबी व्यक्तिगत स्वच्छता के मामले में मार्स्टन ब्लेक से भी कम सजग थी। वह नियमित रूप से अपने नाखून नहीं काटती थी और अक्सर उसके नाखूनों के नीचे गंदगी जमी रहती थी और उनका रंग बदल जाता था। फिर भी, एबी को वज़ीर के बच्चों के मुंह में उंगली डालने और उन्हें चूसने के लिए प्रोत्साहित करने में कोई झिझक नहीं होती थी। वज़ीर को घिन आती थी, लेकिन वह उंगली निकालने के लिए उचित समय का इंतजार करने के अलावा कुछ नहीं कर सकता था; मार्स्टन ब्लेक से शिकायत करने का कोई फायदा नहीं होता। उसके बच्चे के मुंह में एक-दो गंदे नाखून होने से उसे कोई फर्क नहीं पड़ता था।

अपनी बहन के बिल्कुल विपरीत, विलियम टिंडेल अपनी व्यक्तिगत स्वच्छता को लेकर लगभग जुनूनी थे। वे मृदुभाषी थे और कम बोलते थे, जबकि एबी जल्दी नाराज़ हो जाती थी। पैसों के मामले में वे एक जैसे थे: भाई-बहन दोनों का आपस में अच्छा-खासा तालमेल था। हालांकि, खाने-पीने के मामले में दोनों में से कोई भी खास नहीं था, अपने चचेरे भाई के विपरीत जिसे अच्छे खाने का बहुत शौक था। फिर भी, उनकी इन कमियों के बावजूद, टिंडेल परिवार ने वज़ीर को एक बड़ा फायदा पहुंचाया था: अब वह गर्व से और सच्चाई से कह सकती थी कि उसके फिरंगी लोगों के साथ भी सामाजिक संबंध हैं। अब वह खुद को सामाजिक क्षेत्र में पिछड़ी हुई नहीं समझती थी, जैसा कि जयपुर आने पर हुआ था जब अंग्रेज उसे एक नज़र भी नहीं डालते थे।

कभी-कभी छोटी बेगम को लगता था कि एबी उससे ईर्ष्या करती है क्योंकि वह सुंदर थी और रंग सांवला होने के बावजूद आकर्षक दिखती थी। उसे शक था कि एबी अपने बच्चों पर इतना ध्यान और स्नेह इसलिए देती है क्योंकि वह इसे मार्स्टन ब्लेक के बच्चों को उनकी मां के प्रभाव से दूर करने की एक रणनीति समझती है। छोटी को यह बात बिल्कुल पसंद नहीं थी, लेकिन वह एबी के बच्चों पर दिए जाने वाले इस ध्यान को सहन करती थी क्योंकि पहली बात तो यह थी कि वह अपने बच्चों के पालन-पोषण में इतनी मेहनत नहीं करना चाहती थी, और दूसरी बात यह थी कि वह एक अच्छी मां बनने के लिए बहुत छोटी थी। उसका मानना था कि बच्चों को बहुत देर तक

दूध पिलाना और रात भर जागकर उनके डायपर बदलना, उन्हें कंधे पर रखना, डकार दिलाना और सुलाना, उसके शरीर की जवानी की कसावट और सुडौलपन को खत्म कर देगा, और उसके चेहरे की ताजगी और चमक फीकी पड़ जाएगी। सच है, उसे बच्चे बहुत प्यारे थे, लेकिन उनका पालन-पोषण करने की कठिनाई... अल्लाह और पैगंबर मुझे माफ करें, मैं यह नहीं कर सकती। हर किसी में बारी बाजी जैसी सहनशक्ति नहीं होती।

इन्हीं कारणों से छोटी अपने बच्चों के लगभग सभी कर्तव्यों को दासियों और अबी मेमसाहिब को सौंपने में संतुष्ट थी। बादशाह बेगम के जन्म के समय, मार्टिन ब्लेक, जिनका दूसरा नाम अमीर मिर्ज़ा था, लगभग दो वर्ष के थे (जन्म 1827)। दोनों बच्चों की देखभाल के लिए घर में एक आया थी, जबकि बाहरी देखभाल और देखरेख के लिए एक दासी थी जिसे 'दाई खिलाई' कहा जाता था। सोफिया के लिए एक दूध पिलाने वाली दासी भी थी, और जब अमीर मिर्ज़ा छोटे थे तब उनके लिए भी एक थी। वज़ीर ने दूध पिलाने वाली दासियों के चयन में सावधानी बरती थी। वे मुस्लिम थीं, और निम्न कुल की नहीं थीं। मार्स्टन ब्लेक बच्चों को दूध पिलाने की व्यवस्था से काफी संतुष्ट थे, क्योंकि इससे वज़ीर को बिस्तर पर और सामान्य कामुक क्रीड़ाओं में आसानी से सेवा मिल जाती थी। वैसे तो उन्हें छोटे बच्चे ज्यादा पसंद नहीं थे, लेकिन वे उन्हें उपहार, मिठाई और खिलौने देने में बहुत उदार थे।

मौसम बेहद ठंडा था; 1829 के क्रिसमस (जिसे भारतीय लोग बारा दिन कहते हैं) में कुछ ही सप्ताह शेष थे, लेकिन इसकी तैयारियां पहले ही शुरू हो चुकी थीं। पशुओं को मोटा-ताज़ा किया जा रहा था, कलकत्ता से शैंपेन और पुर्तगाली व अंग्रेज़ी शराब के डिब्बे मंगवाए जा रहे थे। दूर-दूर के रिश्तेदारों, बच्चों, आश्रितों और नौकरों के लिए क्रिसमस के उपहार तैयार किए जा रहे थे। नौकर भी अपने मालिकों के लिए उपयुक्त उपहार, जिन्हें 'डाली' कहा जाता था, ढूंढने के काम में बड़े मशगूल थे। डाली देने की परंपरा यह थी कि उपहार देने वाले को उसी मूल्य का या उससे थोड़ा अधिक मूल्य का उपहार दिया जाना चाहिए। जयपुर के नौकर मिठाई या फलों जैसे लोकप्रिय उपहारों के बजाय स्थानीय हस्तशिल्प की वस्तुएं लाए, जिनमें से कुछ घर में काम आ सकती थीं और कुछ केवल सजावटी वस्तुएं थीं जिनका कोई विशेष उपयोग नहीं था। फिर भी, उनकी कीमत का आकलन किया गया और बदले में उसी मूल्य का उपहार दिया गया। धनी भारतीयों और कुछ अंग्रेजों ने, शादी के बड़े दिन से काफी पहले, अच्छे दामों पर कीमती सामान आयात किया, ताकि उच्च वर्ग के लोगों को उपहार दिए जा सकें: बनारस से सोने के काम वाले रेशमी कपड़े, दिल्ली और आगरा से सोने की फीते, अजमेर से स्टाइलिश जूते, उदयपुर से सोने पर जड़े हुए आभूषण, कश्मीर से रेशम, ऊनी शॉल और कपड़े बनाने के गट्ठे। इन और इसी तरह की वस्तुओं की बहुत मांग थी। सोफिया उस समय अठारह महीने की थी और मार्टिन तीन साल से थोड़ा अधिक उम्र का था। उनके लिए खेलने वाली नौकरानियों और अन्य आयाओं की व्यवस्था थी। अबी मेमसाहिब ने सोफिया की दूध पिलाने वाली नौकरानी को हटा दिया था, जिस पर वज़ीर ने कोई खास आपत्ति नहीं जताई, ताकि बच्ची में आत्मविश्वास पैदा हो सके।

बारा दीन की तैयारियां चल रही थीं, एक दिन दोनों बच्चे नौकरानियों की निगरानी में बाहर खेल रहे थे। मार्स्टन ब्लेक की तबीयत थोड़ी खराब थी और उन्होंने छुट्टी ले रखी थी। अपने बड़े से

पलंग पर पेट के बल लेटे हुए वे सोने की कोशिश कर रहे थे। वज़ीर धीरे से उनकी पीठ दबा रहा था।

'यह सब बंद करो,' वह मुस्कुराया। 'वरना मुझे दरवाजा बंद करना पड़ेगा।'

'भगवान हमें माफ करें,' उसने पलटकर जवाब दिया। 'तुम्हारे दिमाग में बस यही चलता रहता है। इन नौकरों को देखो, चोरों की तरह हर जगह छुप-छुप कर देख रहे हैं कि ज़मीन कैसी है। लोग क्या कहेंगे?' नौकरों की इतनी अधिकता के कारण एकांत में बातचीत करना मुश्किल हो गया था।

वे क्या कह सकते थे? क्या उनके घरों में ऐसी बातें नहीं होतीं?

'मैं ईश्वर से क्षमा मांगती हूँ! मैं अब जा रही हूँ और तुम्हें अकेला छोड़ दूंगी!' वज़ीर उठने ही वाली थी कि मार्स्टन ब्लेक ने उसकी बांह कसकर पकड़ ली, बिस्तर पर बैठ गया और बोला, 'ठीक है। लेकिन बताओ, क्या तुम मुझसे खुश हो?' उसने उसकी ठोड़ी पकड़ी और उसका सिर ऊपर उठाया ताकि वह उसकी गहरी भूरी आँखों में देख सके, जिनमें हल्के हरे रंग की झलक और सुनहरी चमक थी। 'डरो मत। खुलकर बताओ।'

वज़ीर ने अपनी बड़ी-बड़ी, भावपूर्ण आँखें नीचे कर लीं, मानो वह सोच रही हो, बोलने से पहले अपने शब्दों को तौल रही हो। और सचमुच वह गंभीर चिंतन में डूबी हुई थी। साहब इस समय यह सवाल क्यों पूछ रहे थे? हाल ही में बच्चों के भविष्य या घर वापस जाने की उसकी इच्छा, भले ही थोड़े समय के लिए ही सही, अपने पिता और बहनों से मिलने की, पर कोई चर्चा नहीं हुई थी। मार्स्टन ब्लेक की जिन बातों को वह बहुत पसंद करती थी, उनमें से एक थी उनकी स्पष्टवादिता और बात को घुमा-फिराकर न कहने का उनका स्वभाव। भारतीयों के विपरीत, जो हमेशा समय लेते थे और अपनी बात पर आने के लिए घुमावदार रास्ते अपनाते थे, और फिर भी अपने उद्देश्य को अस्पष्ट संकेतों के माध्यम से बताना पसंद करते थे, मार्स्टन ब्लेक बिना किसी झिझक के सीधे मुद्दे पर आते थे और अपने उद्देश्य को स्पष्ट रूप से बताते थे। भारतीय हर किसी से कम बोलते थे, पति-पत्नी से, पुत्र-पिता से, इत्यादि, लेकिन उनके साहब के पास ऐसी चुप्पी के लिए समय नहीं था। वह सीधी और स्पष्ट बात करते थे, और वज़ीर ने भी काफी हद तक इसी शैली को अपनाया। फिर भी, जब उसे खुलकर अपनी बात कहनी होती थी, तो वह खुद को संकोची और लगभग चुप पाती थी, और उसका साहब इतना मूर्ख था (ऐसे लोगों को किसी और नाम से नहीं पुकारा जाना चाहिए) कि वह कभी इशारा नहीं समझता था, या इशारा समझने के लिए कभी तैयार ही नहीं था।

उसे अचानक कहने की तीव्र इच्छा हुई, 'बाकी सब ठीक है, लेकिन हमारे बीच कोई लिखित समझौता नहीं है। क्या आपने मेरे भविष्य के बारे में ज़रा भी सोचा है?' लेकिन वह ऐसे शब्द नहीं कह सकी, चाहे उसे मृत्यु का सामना करना पड़े। उसने अपनी आँखें ऊपर उठाईं, हल्की सी मुस्कान बिखेरी और बोली, 'हाँ, मैं खुश हूँ। बहुत खुश हूँ, लेकिन...' उसने फिर से अपना सिर नीचे कर लिया।

बोलो, बोलो। लेकिन क्या? तुम्हें किस चीज की कमी है? मुझे बताओ, मैं उसे तुरंत पूरा कर दूंगा। डरो मत। खुलकर बोलो।

‘नहीं। बिलकुल नहीं। मुझे किसी चीज की कमी नहीं है,’ उसने ‘चीज’ शब्द पर जानबूझकर या अनजाने में जोर देते हुए कहा। ‘क्या मेरे पास वह सब कुछ नहीं है जिसकी मुझे जरूरत है? लेकिन आज आप यह क्यों पूछ रहे हैं? मुझे पता है; आज आपकी तबीयत ठीक नहीं है, इसलिए आपने सोचा कि जब आपके पास करने के लिए और कुछ नहीं है तो आप मेरा थोड़ा मजाक उड़ा लें।’

नहीं। मजे का मेरे सवाल से कोई लेना-देना नहीं है। दरअसल, मेरे मन में अभी-अभी यह ख्याल आया कि तुम मेरे लिए अपने घर से इतनी दूर यहाँ आए हो।

मैं यहाँ किसी और कारण से नहीं हूँ। आप इसे अच्छी तरह जानते हैं। और यही मेरा जवाब है।

‘शाबाश! मेरी प्यारी!’ मार्स्टन ब्लेक ने कहा। ज़ाहिर है, दोनों हिंदी में बात कर रहे थे। ऐसे मौकों पर, साहब का लहजा अनजाने में अंग्रेज़ों जैसा हो जाता था जब वे अज्ञानतावश या दूरी और श्रेष्ठता बनाए रखने की चाह में हिंदी शब्दों का गलत उच्चारण करते या उन्हें बिगाड़ देते थे। वज़ीर खानम को यह बिल्कुल पसंद नहीं था, लेकिन वे हमेशा अपनी नापसंदगी को दबाने में कामयाब रहती थीं। ‘मैं तुमसे बहुत, बहुत खुश हूँ।’ उन्होंने उसी संशयपूर्ण लहजे में कहा। ‘मुझे तुम पर गर्व है।’

वज़ीर को बनावटी हिंदी लहजे से भी ज़्यादा वह उपदेशात्मक लहजा नापसंद था, लेकिन फिर भी उसने ऐसा दिखावा किया कि वह भी 'बहुत-बहुत' खुश है।

‘साहिब, आपको गर्व करने लायक आखिर क्या है? क्या दुनिया में कोई ऐसा है जो आपकी दयालु छत्रछाया में रहना पसंद न करे?’

नहीं, तुम अलग हो, बिलकुल अलग। दिल्ली के तुम्हारे फारसी कवि खुसरो की वह कौन सी कविता थी? कितनी मनमोहक कविता है! मुझे ठीक से शब्द याद नहीं आ रहे, कृपया मुझे बस एक संकेत दे दो।

मुझे नहीं पता कि आप किस श्लोक का जिक्र कर रहे हैं।

“ओह, कृपया इसे याद करने की कोशिश करें... कुछ इस तरह: “आप अलग हैं...” क्या अब आपको याद आ रहा है?”

अब वज़ीर खानम के पास उस श्लोक को सुनाने के अलावा कोई विकल्प नहीं था। उन्होंने कहा, 'हां, मुझे अब याद आ गया है।'

मैंने ब्रह्मांड की सैर की है, सभी सुंदरियों के प्रेम का आकलन किया है, मैंने कई सुंदरियों को देखा है, लेकिन...

मार्स्टन ब्लैंक ने तुरंत शेष शब्द उपलब्ध करा दिए:

... तुम कुछ अलग हो!

‘बहुत बढ़िया! बिल्कुल सही बात है!’ उन्होंने आगे कहा।

‘ऐसा हो सकता है,’ वज़ीर ने जवाब दिया। ‘वे दूसरे लोग थे, दूसरे समय की बात थी—’

लेकिन मार्स्टन ब्लेक ने उसे फिर से बीच में ही रोक दिया। 'ठीक है, सब समझ आ गया है। लेकिन कृपया मुझे यह बताएं कि आप मेरे साथ रहकर खुश हैं या नहीं।'

वह हंस पड़ी। 'बेचारे को देखो! इसने पूरी रामायण सुन ली और अब जानना चाहता है कि सीता कौन है! क्या मैंने नहीं कहा था कि मैं तुम्हारे लिए ही यहाँ रहती हूँ? तुम्हारा द्वार ही मेरी खुशियों का द्वार है। लो, अब तुम संतुष्ट हो? अब तुम्हें मेरे दिल की सारी बातें पता चल गई हैं।'
इस बार मार्स्टन ब्लेक ने कोई जवाब नहीं दिया। शायद वह छोटी बेगम से कुछ और सुनना चाहते थे। शायद उन्हें उम्मीद थी कि वह अपनी बातों में और अधिक भावुक होंगी, शाश्वत कृतज्ञता व्यक्त करेंगी और उन शारीरिक सुखों के बारे में बताएंगी जो उन्हें उनकी वजह से प्राप्त हुए थे।
वह एक पल के लिए चुप रहीं, और फिर बोलीं, 'यह विशाल, भव्य घर, लोगों और चीजों से भरा हुआ, शक्ति, सम्मान और आप...'
वह कहना चाहती थी, 'तुम्हारा प्यार, तुम्हारे मोहक और मोहक अंदाज़', लेकिन शायद शर्मिंदगी कहीं से उसके होंठों पर आ गई और उसे रोक दिया। उसके मनचाहे शब्द उसके दिल की गहराइयों में दबे रह गए। मार्स्टन ब्लेक ने रहस्यमयी मुस्कान दी।
'और वो दोनों बच्चे, सूरज और चाँद की तरह,' उसने कहा, 'और मैं, जो तुम्हारी सुंदरता के लिए अपनी जान भी दे दूंगा...'

'सचमुच, ये सब मुझे और कहाँ मिल सकता था? और सिर्फ मुझे ही नहीं, दुनिया में किसी को भी ऐसे आशीर्वाद नहीं मिल सकते थे। ये मुझ पर ईश्वर की विशेष कृपा है।'
उसने ये शब्द पूरी ईमानदारी से कहे थे, लेकिन साथ ही किसी न किसी तरह से ये पूछना भी चाहा था: अगर आप सचमुच इतने उत्सुक हैं और मेरे लिए अपनी जान तक देने को तैयार हैं, तो क्या आपके लिए मुझे कम से कम अपनी औपचारिक बीबी बनाना उचित नहीं होगा, अगर कानूनी तौर पर विवाहित पत्नी नहीं तो? लेकिन साहब उसे अपनी उस खास नज़र से देख रहे थे, उनकी आँखों में दिली चाहत और गर्व के साथ-साथ अपनेपन और अधिकार का भाव भी झलक रहा था। वज़ीर को लगा जैसे वह अंदर ही अंदर पिघल रही हो।
'क्या मैं कुछ कह सकता हूँ?' मार्स्टन ब्लेक ने अचानक पूछा।
'जी हां, बिल्कुल। आपको मुझसे पूछने की जरूरत नहीं है।'
तो सुनो। 1830 के नए साल की शुरुआत में, मैं तुमसे विवाह का प्रस्ताव रखूंगा। अगले साल मेरी तनख्वाह बढ़ जाएगी, और शायद बाद में मेरा पद भी बढ़ जाए। तब शायद हम दिल्ली वापस जा सकेंगे।
वज़ीर स्तब्ध रह गई। दिल्ली? ब्लेक साहब जैसे साहब की कानूनी तौर पर विवाहित पत्नी? क्या एक अंधे को आँखों की ज़रूरत होती है! उसके शरीर में एक कंपकंपी दौड़ गई, मानो कभी न खत्म होने वाली। किसी तरह वह उठी और मार्स्टन ब्लेक का हाथ कसकर पकड़ लिया, मानो उसी क्षण विवाह बंधन में बंध रही हो।
तो? क्या आप स्वीकार करते हैं? क्या अब आप खुश हैं?
बहुत खुशी हुई! मैं पहले भी खुश था। लेकिन अब आपने मुझे जीते जी जन्नत का वादा किया है। ईश्वर आपकी खुशकिस्मती को और भी बढ़ाए।
मार्स्टन ब्लेक ने उसे अपनी बाहों में भर लिया और उसके हाथों, होंठों, बालों, गर्दन और माथे पर

चुंबन बरसाने लगा। वह उसे रोकने की कोशिश करती रही और कहती रही, 'कृपया। मुझे छोड़ दो, मुझे अकेला छोड़ दो। नौकर हमें देख लेंगे!'

कुछ देर बाद, मार्स्टन ब्लेक बिस्तर पर लेट गया और वज़ीर की ओर मुँह करके लगभग तुरंत सो गया। शायद शादी का प्रस्ताव बताने के बाद उसका मन हल्का हो गया था। वज़ीर के दिल की धड़कन तो शांत हो गई थी, लेकिन उसकी जगह चिंता और कुछ हद तक उलझन ने ले ली थी। अब तक वह आज़ाद थी, कम से कम उसे यही लगता था। अगर साहब से उसका कोई मतभेद होता, या साहब उससे ऊब जाते, तो उसके पास यह संभावना थी कि वह बीते हुए कल को धूल में मिला दे और नए सिरे से शुरुआत करे। लेकिन शादी? तब तो वह बस एक और बंधुआ मज़दूर बन जाएगी, या ज़्यादा से ज़्यादा एक और नौकरानी। साहब जब चाहे उसे तलाक़ दे सकते थे, और अगर ऐसा हुआ तो यह उसके हाथ-पैर तोड़ने जैसा होगा। तुम पहले से ही एक नौकरानी हो, खुद को धोखा मत दो। क्या तुम अपने बच्चों के बिना रह सकती हो? लेकिन क्या बच्चे सचमुच मेरे हैं? हाँ, वे हिंदी अच्छी तरह जानते हैं; अगर वे बड़े होकर लंबी उम्र तक जीवित रहे तो मैं उन्हें ग़ज़ल, मसनवी और हिंदी कविता के अन्य रूप सिखाऊँगा। मैं उन्हें फ़ारसी और अरबी भी पढ़ाऊँगा। मैं उन्हें सुलेख और घुड़सवारी का प्रशिक्षण दूँगा। मैं उन्हें मिर्ज़ा बनाऊँगा, संस्कृति और प्रतिष्ठा वाले लोग। लेकिन पहले उन्हें मेरे साथ रहने दो, मेरे साथ बड़े होने दो, तभी ये सब संभव होगा। साहब ने बच्चों के बारे में मुझसे कोई बात नहीं की है। लेकिन अबी मेमसाहिब की योजनाएँ मुझे साफ़-साफ़ समझ आ रही हैं। वह उन्हें न सिर्फ़ ईसाई बनाना चाहती हैं, बल्कि पूरी तरह से अंग्रेज़ भी बनाना चाहती हैं और जब तक वे मुझसे छीन न लिए जाएँ, तब तक चैन से नहीं बैठेंगी। कहते हैं अंग्रेज़ अपने खून के किसी भी व्यक्ति को कभी नहीं छोड़ते, चाहे उसमें मुसलमान खून ही क्यों न हो। दरअसल, यही कारण था कि अख्तरलोनी साहब ने अपनी मराठा दासी को इस्लाम में परिवर्तित किया, उसका नाम मुबारकुन्निसा रखा और उसे बेगम की उपाधि दी। बल्क साहब भी अंततः मेरे बच्चों को मुझसे छीन लेंगे... मुझे अपना जीवन अकेले ही जीना होगा, यह तो तय है। ये समय सामान्य समय नहीं हैं, ये कयामत के दिन की उथल-पुथल और कोलाहल जैसे हैं, हर कोई अपने लिए जी रहा है, कोई भी कभी रुककर दूसरे की तरफ नहीं देखेगा। मैं और बल्क साहब... नौकर कहते हैं कि हम एक अच्छी जोड़ी हैं... लेकिन वह ईसाई और अंग्रेज़ हैं, मैं भारतीय और मुसलमान हूँ। उनके लोग जल्द ही हम पर राज करने का सपना देखते हैं। क्या ऐसा पुरुष कभी मेरा हो सकता है और हमेशा मेरा रह सकता है? और मुझे भी कुछ जगह चाहिए, अपनी एक ऐसी जगह जहाँ मैं खुलकर साँस ले सकूँ। मैं किसी की प्रजा बनकर क्यों रहूँ, भले ही वह फिरंगी साहब ही क्यों न हों? क्या मुझे उनके विवाह प्रस्ताव को ठुकरा देना चाहिए? सच में, बलक साहब को लगता है कि वे मुझ पर बहुत बड़ा उपकार कर रहे हैं और बदले में कुछ नया नहीं माँग रहे। लेकिन मैं तो पहले ही अपना सम्मान उन्हें सौंप चुकी हूँ। अब वे मुझ पर निःस्वार्थ उपकार कर सकते हैं या मेरी पीठ पर लात मार सकते हैं। मैंने अपने जीवन का नक्शा बना लिया है। उसमें बलक साहब का बहुत बड़ा हिस्सा है, लेकिन फिर...? अगर मैं उनसे शादी करने से इनकार कर दूँ, तो क्या वे मुझे अपने पास रखेंगे या मुझे जाने के लिए कहेंगे? सच कहूँ तो, जाना बुरा विचार नहीं लगता, लेकिन मैं कहाँ जाऊँ, अपने साथ क्या

ले जाऊँ? मुझे पीछे क्या छोड़ना चाहिए? मेरी आत्मा मेरे शरीर में हो सकती है या इसे छोड़ सकती है, लेकिन बलक साहब का प्रेम इसमें बसा हुआ है। मुझे उससे मुस्लिम रीति-रिवाज से शादी करनी चाहिए और फिरंगी अदालत में उसके कागजात प्रमाणित करवाने चाहिए। लेकिन तब मैं और भी ज़्यादा बंध जाऊंगी। सोचो, ये समय कितना विपत्तिपूर्ण और डरावना है। किसी पर भरोसा नहीं किया जा सकता, न जीवन पर, न वादे पर, न ही समझौते पर। बल्क साहब सेना में अधिकारी हैं। एक दिन उन्हें ज़रूर मोर्चे पर भेजा जाएगा। तब... काश शैतान सुन न रहा हो! कौन जाने उनके साथ क्या हो सकता है? अगर कुछ ज़्यादा नहीं हुआ, तो शायद वो घायल हो जाएं और अपने अंग खो दें। तब उनकी देखभाल कौन करेगा, उन्हें खाना कौन खिलाएगा, उनके कपड़े कौन बदलेगा? और मान लीजिए—हालाँकि ऐसा होना असंभव है—कि वो वहाँ अपनी जान गंवा बैठे, तो इस विपत्ति में बेचारी, बदनसीब मुझ पर कौन तड़पेगा? मान लीजिए कि ये दूर की संभावनाएं हैं; ऐसा कुछ नहीं होगा। लेकिन अगर बल्क साहब देश लौटने का फैसला कर लें तो? सच है, वो कहता है कि यहीं जिएगा और यहीं मरेगा, लेकिन क्या कोई कभी किसी पुरुष पर, और वो भी नाज़रीन फिरंगी पर, भरोसा कर सकती है? मुझे तो लगता है कि नास्तिक भी बेहतर है। कौन जाने कब देश में उसके लोग, या फिर ये अबी मेमसाहिब और उसका भाई, मेरे खिलाफ साजिश रच दें? बल्क साहब किसी दिन किसी गोरी औरत पर मोहित हो सकते हैं। दरअसल, मुझे पहले अपनी सुरक्षा का ध्यान रखना चाहिए। लेकिन इसमें कोई शक नहीं: बल्क साहब में आकर्षण की कोई अनोखी शक्ति है, जैसे मोहिनी मंत्र का असर होता है। कहते हैं कि जो इसे जानता है, वो किसी भी औरत को अपने प्यार में पागल कर सकता है। उनमें भी कुछ ऐसा ही ज़रूर होगा। उस भयानक रात, ख्वाजा साहब से लौटते समय, धूल भरी आंधी में, जब मैंने पहली बार उन्हें देखा तो मेरा दिल कितनी ज़ोर से धड़कने लगा! अगर उन्होंने हमारा हाथ न पकड़ा होता, तो हम सब वहीं मर जाते। मुझे डकैत पकड़ लेते, या कौन जाने कोई जिन्न मुझे उठा ले जाता। उनके पास सेवा करने और प्रेम करने वाली महिलाओं की कमी नहीं थी। लेकिन क्या मैं खुद हज़ारों में एक नहीं हूँ? क्या उन्हें कभी मेरे जैसी गुणी, प्रतिभाशाली और सुंदर पत्नी मिल सकती है? शायद उनके रिश्तेदार और दोस्त इस रिश्ते को मंज़ूर न करें, लेकिन उन्होंने मेरा हाथ पकड़ा और अब शादी की बात कर रहे हैं। क्या मुझे उनकी नज़र से देखना चाहिए? क्या ईश्वर ने मुझे ऐसा दिल दिया है कि मैं हर किसी के दुख और तकलीफ़ पर दुखी हो जाऊँ? अगर बल्क साहब मुझसे सच्चा प्यार करते हैं, तो मैंने भी उनके लिए सब कुछ त्याग दिया है। मैंने भी उन्हें पाने के लिए बहुत कुछ खोया है। क्या महान बलिदान केवल उनकी तरफ से हैं और मेरी तरफ से केवल सांसारिक सुख और ऐशो-आराम की ज़िंदगी, बेफिक्री? सच्चाई बिल्कुल अलग है। लेकिन क्या न्याय की दृष्टि से देखने वाला कोई है भी?

उसे नींद आ गई, पता ही नहीं कब। बच्चों के खेलने के बाद वापस आने की खुशी भरी आवाज़ से वह जाग उठी। उसका सिर और कंधा पलंग के फ्रेम पर टिका हुआ था और वह एक अजीबोगरीब असुविधाजनक मुद्रा में सो रही थी। उसका पूरा शरीर सिर से पैर तक दर्द कर रहा था, लेकिन जिस बात ने उसे चौंका दिया, वह थी उसके दुपट्टे की नमी। यह सिर्फ पसीने की वजह से नहीं हो सकता था।

वह महान दिन आ गया, चारों ओर उत्सव और उल्लास का माहौल था। गिरजाघरों में क्रिसमस की घंटियाँ बजीं, प्रार्थना सभाएँ हुईं; लोग एक-दूसरे के घर आए-गए। वज़ीर का घर मिठाइयों और अन्य उपहारों से भर गया। महाराजा ने भी कुछ अनमोल वस्तुएँ भेजीं, जिनमें हाथीदांत का बना एक रथ भी शामिल था: लगभग डेढ़ फुट लंबा और एक फुट से थोड़ा कम ऊँचा, उस पर दो बैल सवार थे, रथ चालक अपनी पेटी पर बैठा था, और रथ के अंदर नवविवाहित जोड़ा शाही पोशाक में था। बैलों के माथे पर बनी आकृतियों से लेकर नवविवाहित जोड़े के वस्त्रों और आभूषणों तक, सब कुछ इतनी बारीकी और सटीकता से उकेरा गया था, और इतने उपयुक्त रंगों में रंगा गया था कि ऐसा लगता था मानो उन्हें साक्षात तराशा गया हो और वे किसी ऐसे देश के वास्तविक लोगों का प्रतिनिधित्व कर रहे हों जहाँ हर चीज़ छोटी होती है। वज़ीर इस सुंदर और स्पष्ट रूप से महंगे उपहार को देखकर मंत्रमुग्ध हो गई। उसने पूरा दिन रथ को घर के विभिन्न हिस्सों में रखकर, अलग-अलग तरीकों से उसका अधिकतम प्रभाव प्राप्त करने के लिए विचार-विमर्श करने, प्रयोग करने और उसे बार-बार बदलने में बिताया।

नव वर्ष का आगमन लगभग नव वर्ष के समापन के तुरंत बाद हुआ और इसे हमेशा की तरह धूमधाम और उत्साह के साथ मनाया गया। नव वर्ष के तुरंत बाद, राजपूताना के राजनीतिक एजेंट कर्नल एल्व्स साहब छह सप्ताह की छुट्टी पर कलकत्ता के लिए रवाना हुए और मार्स्टन ब्लेक को अपना डिप्टी नियुक्त किया और उन्हें रेजिडेंसी का प्रभार सौंपा। वज़ीर के लिए यह और भी खुशी का दिन था, क्योंकि उनकी समझ के अनुसार, यह उनके साहब की पदोन्नति की दिशा में पहला, भले ही अस्थायी, कदम था। उनका यह विश्वास तब और भी मजबूत हो गया जब घरेलू कर्मचारियों के अलावा, टिंडेल परिवार ने भी इस अवसर पर उन्हें और मार्स्टन ब्लेक को बधाई दी।

जैसा कि हिंदी कवि कहते हैं: जिनका पद ऊंचा होता है, उनकी समस्याएं भी उतनी ही अधिक होती हैं। मार्स्टन ब्लेक की शक्ति और जिम्मेदारी बढ़ने के साथ-साथ काम और चिंता भी बढ़ती गई। कंपनी बहादुर की कार्यप्रणाली के अनुसार, राजनीतिक एजेंट के कर्तव्यों में सीधे नियंत्रण वाले क्षेत्रों के पुलिस प्रमुख और न्यायाधीश के कर्तव्य भी शामिल थे। प्रतिदिन, एक लंबी सूची तैयार होती थी, और छोटे-बड़े मामलों का निपटारा करना होता था। कभी-कभी महाराजा का दरबार राजनीतिक एजेंट को तत्काल सलाह या मार्गदर्शन के लिए शिकायतें या विवादास्पद मुद्दे भेज देता था, यदि उनका कोई राजनीतिक महत्व होता था। सामान्य राजनीतिक मामले, कलकत्ता से और आसपास के राज्यों के निवासियों से आने वाली चिट्ठियां: इन सभी का तुरंत निपटान करना आवश्यक था। इन सब बातों ने मार्स्टन ब्लेक के आमतौर पर हंसमुख स्वभाव को कुछ हद तक चिड़चिड़ा बना दिया; इसके अलावा, उन्हें घर के कागजातों का भी ध्यान रखना पड़ता था—महत्वपूर्ण दस्तावेजों का एक बंडल हमेशा उनके साथ घर जाता था।

देशी राज्यों की आंतरिक और स्थानीय राजनीति, राजा की कृपा पाने के लिए आपस में प्रतिस्पर्धा

करने वाली रानियों के बीच प्रतिद्वंद्विता, सैन्य व्यय, अयोग्य या अक्षम शासकों या उनके वंशजों का प्रशिक्षण और निर्देश, महाराजा की प्रजा में अशांति या शांति एवं समृद्धि की स्थिति से संबंधित रिपोर्टें - इन सभी मामलों की राजनीतिक एजेंट द्वारा दैनिक निगरानी आवश्यक थी। कुछ रेजिडेंट्स के लिए अपना अधिकांश समय गुप्त रूप से अपने जासूसों से जानकारी प्राप्त करने और दरबार में अपने मुखबिरों से संपर्क करने में व्यतीत करना असामान्य नहीं था।

कर्नल एल्व्स के कलकत्ता जाने के लगभग दो सप्ताह बाद, रसोइया चांद खान रसोई के लिए ज़रूरी सामान खरीदकर लौटते हुए मार्स्टन ब्लेक के घर पर बने कैंप ऑफिस के दरवाजे पर खड़ा था। मार्स्टन ब्लेक कलकत्ता से आई चिट्ठियों में व्यस्त थे और उन्होंने रसोइए पर ध्यान नहीं दिया। कुछ देर इंतजार करने के बाद, चांद खान ने खाँसी करके अपनी मौजूदगी का संकेत दिया। बिना अनुमति के कैंप ऑफिस में प्रवेश करना मना था, और चांद खान की मौजूदगी पर ब्लेक का ध्यान न देना इस बात का संकेत था कि वे उस समय किसी को भी अपने काम में बाधा डालने नहीं देना चाहते थे। हिम्मत जुटाकर चांद खान ने फिर से खाँसी, इस बार ज़ोर से। मार्स्टन ब्लेक ने ऊपर देखा और कुछ नाराज़गी से पूछा, 'जी? क्या बात है? मैं व्यस्त हूँ।'

'माननीय न्यायाधीश महोदय, मुझे कुछ कहना है... क्या मैं अंदर आ सकता हूँ?'

चांद खान के चेहरे पर तनाव और चिंता देखकर मार्स्टन ब्लेक ने अनिच्छा से कहा, 'ठीक है। जल्दी बोलो। क्या बात है, क्या कोई संकट है?'

'जी हां, माननीय न्यायाधीश महोदय... हमारे सवाई महाराजा जय सिंह साहिब बहादुर... माननीय न्यायाधीश महोदय, वे कुछ समय से अस्वस्थ हैं।'

मार्स्टन ब्लेक को 'हमारे महाराजा' वाक्यांश बिल्कुल पसंद नहीं था, लेकिन उन्होंने इसे नजरअंदाज कर दिया और माथे पर शिकन के साथ फटकार भरे लहजे में कहा, 'हाँ, तो क्या हुआ? आपको इससे क्या लेना-देना है? आप हमारे सेवक हैं, है ना?'

जी हां, माननीय न्यायाधीश, लेकिन... लेकिन बात यह है कि...'

जो कुछ भी कहना चाहते हो कह दो! ये फालतू की बातें और बहाने बनाना बंद करो, यार!

'जी हां, महाराज, बात यह है कि... बाज़ार में यह अफवाह फैली हुई है कि महाराजा को जहर देने की साजिश रची जा रही है।'

यह सुनकर मार्स्टन ब्लेक उठ बैठे और अपने कागज़ों को कपड़े के मूठ में वापस रख दिया; उन्होंने अपनी कमीज़ की सिलवटें सीधी कीं और मेज पर स्याहीदान और कागज़ के वज़न जैसी चीज़ों को फिर से व्यवस्थित किया, जिससे उन्हें अपने विचारों को इकट्ठा करने के लिए कुछ समय मिल गया। महाराजा के दुश्मनों की कमी नहीं थी। ऐसी अफवाहें तो आम बात थीं। लेकिन इस समय, इस अफवाह का कुछ और ही मतलब था। उन्होंने बड़ी बेफिक्री से कहा, 'यह अफवाह ज़रूर किसी अफीम के अड्डे से आई होगी। तुम्हें यह कहाँ से पता चली, यार?'

'महामहिम, मैं अपने भाई से मिलने हवा महल गया था। महाराजा की सेना वहाँ तैनात है। आपके आदेश को ज्ञात है कि मेरा भाई भी उस सेना में है।'

मार्स्टन ब्लेक ने कोई जवाब नहीं दिया। वह रसोइए के भाई के बारे में जानता था। ऐसी बातें जानना उसका काम था। उसने रसोइए के बोलने का इंतज़ार किया।

‘सिपाहियों के बीच यह कानाफूसी चल रही थी कि महाराजा के अटॉर्नी जनरल लाला झुंटा राम का मानना है कि बीमार महाराजा को हटाकर उनके लिए शिशु महाराजा का रीजेंट बनने और उनके नाम पर शासन करने का रास्ता साफ कर देना चाहिए। लेकिन जनता झुंटा राम को बिल्कुल पसंद नहीं करती।’
यानी, अगर ऐसा हुआ तो लोग अटॉर्नी जनरल के खिलाफ विद्रोह कर देंगे?
'यह पूरी तरह संभव है, आपकी उपस्थिति।'
कंपनी के दृष्टिकोण से सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि झुंटा राम के अजमेर, मारवाड़ और अलवार के पड़ोसी राजाओं के साथ अच्छे संबंध थे। सदियों से उनके परिवार में साहूकारी का कारोबार चला आ रहा था और राजपूताना के सभी राजाओं, विशेषकर पड़ोसी राजाओं का उनसे लेन-देन रहा था या अभी भी है। अब अगर झुंटा राम ने राजगद्दी हथिया ली, तो वह संभवतः एक संयुक्त मोर्चा या प्रभाव की श्रृंखला स्थापित कर सकता था, जो कंपनी के हितों के लिए हानिकारक हो सकता था। सवाई राजा जय सिंह की मृत्यु स्वाभाविक थी या किसी षड्यंत्र के परिणामस्वरूप उनकी हत्या की गई थी, यह इस समय ज्यादा महत्वपूर्ण नहीं था। महत्वपूर्ण बात यह थी कि जो व्यक्ति शिशु महाराजा का संरक्षक बने और राजगद्दी पर शासन करे, वह कंपनी के प्रति वफादार हो। कंपनी बहादुर के प्रतिनिधि के रूप में, मार्स्टन ब्लेक का यह कर्तव्य था कि वह लाला झुंटा राम के सत्ता हथियाने के प्रयास को रोकने का कोई रास्ता निकाले।
‘सवाई राजा साहब उतने बीमार नहीं हैं। मुझे अभी-अभी मेरे समाचार संवाददाताओं से इस बारे में जानकारी मिली है।’
जी हां, आपका आदेश है, लेकिन असली सच्चाई तो महाराजा के चिकित्सक को ही पता है। कहा जाता है कि उन्होंने माननीय महल को निर्देश दिया था कि महाराजा ठीक नहीं होने वाले हैं। उनकी अधिकतम देखभाल के लिए दिन-रात उन पर नजर रखी जानी चाहिए।
‘मैं समझ गया। तो इसीलिए झुंटा राम इतनी जल्दी में हैं। क्या किसी ने मुख्य कोषाध्यक्ष सेठ रावल राम को इस स्थिति की सूचना दी?’
‘उन्हें पल-पल की खबरें मिल रही हैं, लेकिन उनके हाथ बंधे हुए हैं। उन्हें सवाई महाराजा जय सिंह साहिब बहादुर से मिलने की अनुमति नहीं दी गई है।’
रावल सेठ के अंग्रेजों, विशेषकर राजनीतिक एजेंट, के साथ संबंध अत्यंत सौहार्दपूर्ण थे। यदि सवाई महाराजा की मृत्यु हो जाती और उनके शिशु पुत्र को किसी शासक के अधीन नियुक्त किया जाता, तो सेठ इस कार्य के लिए उपयुक्त व्यक्ति थे।
मार्स्टन ब्लेक ने चंद खान को इशारे से विदा किया और गहरी सोच में डूब गए। काश, कर्नल एल्व्स सत्ता की बागडोर संभाल रहे होते। चालाक कर्नल के लिए झुंटा राम की शक्ति को कमजोर करना या नष्ट करना और रावल राम को उनकी जगह बिठाना आसान होता, लेकिन यह मेरे बस की बात नहीं लगती। तो क्या सवाई महाराजा को झुंटा राम की साजिश का शिकार होने से रोकना मेरे बस में है? क्या मुझे झुंटा राम को रेजिडेंसी बुलाकर गिरफ्तार कर लेना चाहिए? लेकिन किस आरोप पर? और उनके अंगरक्षकों में पक्के, वफादार राजपूत और फार्मुली पठान शामिल हैं। वह जानते थे कि फार्मुली मूल रूप से राजपूत थे और सोलहवीं शताब्दी के आरंभ में

शेर शाह के शासनकाल में इस्लाम में परिवर्तित हो गए थे और पठान के रूप में राजा की सेना में भर्ती हो गए थे। उन पर काबू पाना बहुत मुश्किल था, और सेठ झुंटा राम कभी भी अपने अंगरक्षकों के बिना बाहर नहीं जाते थे। वास्तव में, वे महल से कभी बाहर नहीं निकलते थे, इस डर से कि कहीं उन पर अचानक हमला न हो जाए।

क्या मुझे राजनीतिक एजेंट की ओर से एक घोषणा जारी करनी चाहिए, जिसमें सवाई महाराजा जय सिंह को उनकी अक्षमता के कारण पदच्युत कर दिया जाए, और साथ ही शिशु सवाई महाराजा राम सिंह को उत्तराधिकारी घोषित करते हुए सेठ रावल राम को अंतरिम रीजेंट नियुक्त किया जाए? लेकिन अगर घोषणा पर अमल नहीं हुआ तो क्या होगा? मेरी बहुत बदनामी होगी और वैसे भी मुझे जयपुर छोड़ना ही पड़ेगा, कंपनी की प्रतिष्ठा भी मिट्टी में मिल जाएगी। काश कर्नल यहाँ होते!

कलकत्ता से हाल ही में एक संदेश आया था कि कर्नल जयपुर के लिए रवाना हो चुके हैं, लेकिन रास्ते में उन्हें देरी हो सकती है क्योंकि उन्होंने कुछ दूरी जलमार्ग से तय करने का विकल्प चुना है। अब उन्हें सबसे पहले कुशल ऊंट सवारों को दिल्ली भेजना चाहिए ताकि कर्नल एल्व्स का वर्तमान स्थान पता चल सके। उन्हें उन सवारों के साथ एक पूरी रिपोर्ट गवर्नर जनरल के सचिव, लॉर्ड विलियम बेंटिंक को भी भेजनी चाहिए, ताकि इसे दिल्ली से कलकत्ता तक सबसे तेज़ डाक द्वारा भेजा जा सके। यहाँ, मैं कंपनी के चिकित्सक को महल में, या यूँ कहें कि महाराजा के बीमार बिस्तर पर तैनात करूँगा। अब यदि महल से—अर्थात अटॉर्नी जनरल से—इस तैनाती का कोई विरोध होता है, तो उस विरोध को निर्दयतापूर्वक कुचलना होगा। तब हम देखेंगे कि घटनाएँ क्या मोड़ लेती हैं।

इन निर्णयों को लेने के बाद, मार्स्टन ब्लेक ने इन्हें तुरंत लागू करने के लिए कदम उठाए। उन्होंने कंपनी के डॉक्टर मेजर थियोबाल्ड मैकडोनाल्ड को रेजिडेंसी में बुलाया और उन्हें स्थिति की जानकारी देते हुए, अंबर स्थित महल के लिए एक आदेश पत्र लिखा, जिसमें उन्हें पूर्ण निर्देश दिए गए थे। उनके साथ दो अंग्रेज सार्जेंट और छह स्थानीय सिपाही भी थे। सेना में उनके पद के अनुसार, थियोबाल्ड मैकडोनाल्ड स्पष्ट रूप से मार्स्टन ब्लेक से उच्च पद पर थे, लेकिन प्रशासनिक प्रोटोकॉल के अनुसार, चिकित्सक कार्यवाहक राजनीतिक एजेंट के अधीन थे।

शाम होने से पहले ही, रेजिडेंसी के जासूसों ने मार्स्टन ब्लेक को सूचना दी कि महाराजा की हालत बहुत खराब लग रही है और सेठ झुंटा राम ने महल के चारों ओर सेना तैनात कर दी है, जिससे किसी का भी आना-जाना बंद हो गया है। महाराजा को जहर देकर मारने की अफवाह के बारे में कोई रिपोर्ट दर्ज नहीं की गई। मार्स्टन ब्लेक ने खुद जासूसों से पूछताछ की, लेकिन उन्होंने किसी भी साजिश के होने या उसके बारे में जानकारी होने से इनकार कर दिया। फिर भी, मार्स्टन ब्लेक बेचैन थे, खासकर इसलिए क्योंकि जासूसों के पास इस सवाल का कोई जवाब नहीं था कि महल के सभी प्रवेश और निकास द्वारों पर सशस्त्र पहरेदार क्यों तैनात किए गए थे। उन्होंने जासूसों को तुरंत वापस जाकर मामले की गहन जांच करने का निर्देश दिया।

अगले दिन दोपहर में, जासूसों ने बाज़ारों में ज़रूरी चीज़ों की कमी और उसके परिणामस्वरूप कीमतों में बढ़ोतरी की सूचना दी। दरअसल, इस जानकारी के लिए जासूसों की ज़रूरत नहीं थी

क्योंकि मार्स्टन ब्लेक के अपने नौकरों और टिंडेल परिवार के नौकरों ने दिन में काफ़ी पहले ही इसकी सूचना दे दी थी, और यह खबर वज़ीर खानम तक पहुँच गई थी, जिन्होंने तुरंत इसे अपने साहब को बता दिया था। फिर भी, वह इतने मूर्ख थे कि उन्होंने इस जानकारी पर विश्वास नहीं किया, इसे बाज़ार की गपशप या भारतीय नौकरों की स्वाभाविक बेईमानी मानकर, जो इस बहाने से थोड़ा अतिरिक्त पैसा कमाना चाहते थे। लेकिन जब यह जानकारी उनके अपने जासूसों द्वारा दी गई, तो इस घटना का रंग ही बदल गया। मार्स्टन ब्लेक अब इस निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए मजबूर हो गए कि महल में बनी असामान्य स्थिति और उत्तराधिकार को लेकर अनिश्चितता के कारण ही यह कमी हुई थी और कीमतें बढ़ी थीं।

शाम के समय, जासूसों ने आखिरकार सूचना दी कि महल के चारों ओर सशस्त्र पहरेदारों की तैनाती संभवतः महाराजा की आत्मा के स्वर्गवास के कारण थी; और सेठ झुंटा राम नहीं चाहते थे कि यह खबर लोगों तक पहुंचे क्योंकि वे किसी चीज़ या किसी व्यक्ति की प्रतीक्षा कर रहे थे। मार्स्टन ब्लेक तुरंत समझ गए कि यह प्रतीक्षा निश्चित रूप से राजनीतिक एजेंट के लिए नहीं होगी; कारण कहीं अधिक गंभीर होना चाहिए, शायद कोई षड्यंत्र रचा जा रहा था, जो अफवाहों से भी बड़ा था। उन्होंने कंपनी के चिकित्सक और उनके दल के बारे में पूछताछ की, और उन्हें बताया गया कि वे एहतियाती हिरासत में हैं, लेकिन सुरक्षित हैं।

उसी शाम, मार्स्टन ब्लेक अपना घर छोड़कर रेजिडेंसी में चले गए। उन्होंने वज़ीर और बच्चों को टिंडेल के घर पर छोड़ दिया और अपने चचेरे भाइयों से अनुरोध किया कि वे उनके रेजिडेंसी में रहने के दौरान कुछ दिनों के लिए उनकी देखभाल करें। उस समय उन्होंने किसी भी आक्रामक कार्रवाई को आवश्यक नहीं समझा, सिवाय इसके कि सभी महत्वपूर्ण स्थानों पर सशस्त्र गार्ड तैनात करके रेजिडेंसी को और मजबूत किया जाए। महल से महाराजा के बारे में कोई घोषणा या सूचना नहीं आई थी, और न ही उन्हें कंपनी के डॉक्टर और उनके दल के बारे में महल को भेजे गए लिखित अनुरोध का कोई जवाब मिला था। उन्होंने यह भी अनुरोध किया कि यदि उनकी अब कोई आवश्यकता न हो तो उन्हें वापस भेज दिया जाए।

अगली सुबह एक नई अफवाह फैली, जो पूरे शहर में हवा की तरह दौड़ गई। लोग एक ऐसी सेना के बारे में बात कर रहे थे जो कुछ दिन पहले अजमेर से जयपुर के लिए रवाना हुई थी। उसने पिछली रात किशनगढ़ में अपना डेरा उठाया था और उम्मीद थी कि वह परसों शाम तक जयपुर में प्रवेश कर जाएगी। कोई नहीं कह सकता था कि वह किसकी सेना थी, लेकिन आम आदमी हो या जासूस, सभी जानते थे कि उसका उद्देश्य सेठ झुंटा राम की सहायता करना था। मार्स्टन ब्लेक ने एक बार फिर मेजर मैकडोनाल्ड और उनके साथियों के बारे में जानकारी मंगवाई, और इस बार उन्हें महल से सूचना मिली कि वे बीमार महाराजा की सेवा में हैं और अभी उनकी वापसी संभव नहीं है। चूंकि यह जवाब काफी विश्वसनीय था, इसलिए मार्स्टन ब्लेक ने धैर्य रखा और कुछ नहीं कहा। हालांकि, उन्हें पूरा विश्वास था कि हिरासत में होने पर भी, कंपनी बहादुर के बढ़ते भाग्य के कारण डॉक्टर और उनके साथियों को कोई नुकसान नहीं होगा।

दिल्ली के लिए ऊंट सवारों के रवाना होने के पाँचवें दिन, जासूसों ने सूचना दी कि बाज़ार में फैली अफवाहों के अनुसार, ऊंट सवार दिल्ली पहुँच चुके थे; इतना ही नहीं, बल्कि यह भी कि

राजनीतिक एजेंट बहादुर दिल्ली पहुँचते ही डाक सेवा, यानी डाक गाड़ी से जयपुर के लिए रवाना हो गए थे, जो घोड़ों के बार-बार बदले जाने के कारण तेज़ चलती थी। इसलिए यह पूरी संभावना थी कि वे अपने प्रस्थान के चौथे दिन जयपुर पहुँच जाएँगे। लेकिन स्थिति इतनी अच्छी नहीं थी: अजमेर की सेना अब जयपुर से ज़्यादा दूर नहीं थी।

इन सभी मामलों पर अभी तक कोई आधिकारिक जानकारी नहीं मिली थी, लेकिन मार्स्टन ब्लेक जानते थे कि भारत में खबरें, जो अक्सर सटीक होती हैं, बहुत तेज़ी से फैलती हैं और निश्चित रूप से आधिकारिक डाक सेवा से भी तेज़। न तो कोई संदेशवाहक, न कोई जासूस, कभी सक्रिय दिखाई देते थे, फिर भी खबर हमेशा पहुंचती थी और किसी रहस्यमय प्रणाली के माध्यम से फैलती थी, और अक्सर आधिकारिक पुष्टि होने में एक सप्ताह लग जाता था।

मार्स्टन ब्लेक ने अनुमान लगाया कि कुछ ही दिनों में कर्नल एल्व्स के आने की खबर ने लाला झुंटा राम के विरोधी गुट को ताकत और कुछ हद तक साहस प्रदान किया है। उनके मन में यह विचार आया कि वे इस स्थिति का लाभ उठाकर झुंटा राम को उनके पद से हटा सकते हैं। उन्होंने तुरंत कार्रवाई की, इस तथ्य को जरा भी समझे बिना कि यह अनुभवहीनता थी, न कि दूरदर्शिता, जिसने उन्हें यह कदम उठाने के लिए प्रेरित किया था। उन्होंने अपने इस कार्य की कीमत अपनी जान देकर चुकाई। उनके निर्णय की पहली खामी यह थी कि इसके कारण लेफ्टिनेंट मार्कस इंचबोल्ड की कमान में बारह तेलंगाना गार्डों की एक कंपनी को आमेर स्थित महल में तैनात करना पड़ा, जिससे निवास स्थान की सुरक्षा का स्तर कम हो गया। इससे भी बुरी बात यह थी कि पूरे शहर में बिजली की तरह अफवाहें फैल गईं, या फैलवाई गईं, कि कंपनी नन्हे उत्तराधिकारी महाराजा राम सिंह को बंदी बनाने और शायद उनकी हत्या करके अपनी पसंद के किसी महाराजा को गद्दी पर बिठाने का इरादा रखती है। और यह कि एक अंग्रेज अधिकारी के नेतृत्व में सशस्त्र तेलंगानाई सैनिकों की टुकड़ी को तैनात करने का वास्तविक उद्देश्य बीमार महाराजा की मृत्यु की प्रतीक्षा किए बिना ही एक कठपुतली महाराजा को सत्ता में स्थापित करना था, और यदि संभव हो तो, उनके नियत समय से पहले ही उनके जीवन को भी समाप्त कर देना था।

जब लेफ्टिनेंट इंचबोल्ड राजनीतिक एजेंट के आदेश के साथ सेठ झुंटा राम को हटाने के लिए पहुंचे, तो महाराजा के अंगरक्षकों और झुंटा राम के सशस्त्र अंगरक्षकों के अधिकारी और सैनिक महल की रक्षा और कंपनी की सेना का विरोध करने के लिए पहले ही तैनात हो चुके थे; उन्होंने निष्कासन आदेश की वैधता की जांच और विवाद करने में समय बर्बाद नहीं किया। इंचबोल्ड अभी अपने हाथी से उतरे ही थे कि उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया और तहखाने में बंद कर दिया गया।

उचित तरीका तो यह होता कि राजनीतिक एजेंट द्वारा उठाए गए इस साहसी कदम के लिए महाराजा की सभी प्रजा का समर्थन प्राप्त किया जाता, और वे उसका साथ देते। लेकिन असल में हुआ ये कि राजनीतिक एजेंट पर गालियों की बौछार की गई और उस पर शिशु महाराजा की हत्या की साजिश रचने का आरोप लगाया गया। हालांकि, मार्स्टन ब्लेक के मुखबिरों और जासूसों ने उसे इस घटनाक्रम की भनक तक नहीं लगने दी। मार्स्टन ब्लेक इस भ्रम में रहा कि जनता

उसके पक्ष में है। इंचबोल्ड और उसके सैनिकों की गिरफ्तारी की खबर मिलने के बाद भी उसने अपने रुख पर पुनर्विचार नहीं किया। उसे लगा कि चिंता की कोई बात नहीं है, कुछ ही दिनों में कर्नल एल्व्स शहर में होंगे और सब कुछ उनकी इच्छानुसार हो जाएगा। इस बीच, महल के अंदर मौजूद अंग्रेज अधिकारियों की उपस्थिति में, भले ही सीमित उपस्थिति में, कुछ भी अप्रिय नहीं हो सकता था।

मार्स्टन ब्लेक कर्नल एल्व्स के बारे में अपनी आशावादी धारणा में कम से कम सही थे। अगले ही दिन कर्नल ने सिकंदर साहब की प्रसिद्ध टुकड़ी - स्किनर हॉर्स - के साथ शहर में प्रवेश किया, जो पूरी तरह से हथियारों से लैस थी। कर्नल ने रेजिडेंसी की शेष प्लाटूनों और स्किनर हॉर्स को महल तक अपने साथ चलने का आदेश दिया। रवाना होने से पहले, उन्होंने कंपनी के कागजों पर एक घोषणापत्र तैयार करवाया, जिसमें शिशु राम सिंह को सवाई महाराजा जय सिंह का कानूनी उत्तराधिकारी घोषित किया गया और उन्हें सवाई महाराजा राम सिंह के रूप में वर्णित किया गया। फिर उन्होंने अपने हाथ से राज्य का एक फरमान लिखा, जिसमें महाराजा के बालिग होने तक सेठ रावल राम को रीजेंट घोषित किया गया और सेठ झुंटा राम को आजीवन कारावास की सजा सुनाई गई। उस समय राम सिंह की आयु केवल अठारह महीने थी, लेकिन कर्नल की योजना राम सिंह के उत्तराधिकार पर महारानी माँ के हस्ताक्षर प्राप्त करने और उचित समय पर कलकत्ता में गवर्नर जनरल की परिषद द्वारा इसकी पुष्टि करवाने की थी।

कर्नल एल्व्स मेजर मैकडोनाल्ड और लेफ्टिनेंट इंचबोल्ड की स्थिति से भलीभांति परिचित थे, और उन्होंने किसी भी प्रतिकूल प्रतिक्रिया या गलतफहमी को रोकने के लिए अंबर स्थित महल में नर्तकियों, नर्तकियों, गायिकाओं और आम पुरुषों और महिलाओं का एक जुलूस भेजा; वे वहां बधाई गीत गाते हुए, शिशु महाराजा के राज्याभिषेक का जश्न मनाते हुए गए। इस प्रकार उनका उद्देश्य महल के रक्षकों की किसी भी प्रकार की हिंसक प्रतिक्रिया को रोकना और झुंटा राम को भी प्रतिरोध के संभावित परिणामों के बारे में चेतावनी देना था। अजमेर से सेना के न पहुंचने के कारण झुंटा राम की स्थिति वैसे भी कमजोर हो गई थी।

सूर्योदय होते-होते महाराजा की प्रजा का एक बड़ा जनसमूह आमेर महल के सामने और आसपास जमा हो गया था। कवचधारी हाथी, जिन पर हाथी तोपें लगी थीं और जिन पर झुंटा राम के अंगरक्षक भरी हुई कार्बाइन राइफलों के साथ सवार थे, महल के विशाल मुख्य द्वार पर धीरे-धीरे चल रहे थे। महल एक ऊँची पहाड़ी पर बना था, इसलिए उस तक पहुँचने के लिए एक खड़ी सड़क से होकर जाना पड़ता था। हालाँकि, कूटनीतिक उपाय के तौर पर, रेजिडेंसी की सशस्त्र बटालियनों के अग्रिम दल को द्वार से गुजरने की अनुमति दे दी गई थी। उनमें से कुछ सार्वजनिक सभा कक्ष के सामने कर्नल का इंतजार कर रहे थे, जबकि कुछ निजी सभा कक्ष के द्वार पर जमा थे। शिशु महाराजा राम सिंह निजी सभा कक्ष के भीतर थे। वे पूर्ण राजसी वस्त्रों में थे, दो बलवान राजपूत सैनिकों के सहारे, और असंख्य महिला सेविकाओं, परिचारिकाओं और अंगरक्षकों से घिरे हुए थे। झुंटा राम महाराजा के सामने खड़े थे, उनके हाथ छाती पर समर्पण की पारंपरिक मुद्रा में जुड़े हुए थे।

निजी सभा कक्ष में राजनीतिक एजेंट के प्रवेश पर झुंटा राम की ओर से कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई।

यही उनकी सबसे बड़ी गलती थी। यदि उन्होंने गुप्त संकेत या इशारे से अपने सशस्त्र सैनिकों को कर्नल से निपटने का निर्देश दिया होता, तो खून की नदियाँ बह जातीं और झुंटा राम की स्थिति दोनों में अधिक मजबूत होती, क्योंकि अंग्रेजों को एक खूनी आमने-सामने की लड़ाई के बाद पीछे हटना पड़ता। शायद झुंटा राम को अब भी उम्मीद थी कि सावधानी बरतकर वे निकट भविष्य में कंपनी का समर्थन हासिल कर लेंगे। उन्होंने इसी उद्देश्य से बड़ी मात्रा में सिक्के और सोने का भंडार भी कर रखा था। हालांकि, वे इस सरल तथ्य को भूल गए कि कंपनी के अंग्रेज अधिकारियों को हिरासत में लेकर, भले ही थोड़ी सी ही सही, कंपनी को अपमानित करने के बाद, वे अपना खेल पूरी तरह से हार चुके थे।

कर्नल एल्व्स के सहायक मेजर क्रैडॉक ने अपना दाहिना हाथ अपनी बेल्ट में रखी पिस्तौल पर रखा और अपना बायां हाथ झुंटा राम के कंधे पर रखते हुए सख्त स्वर में कहा, 'मेरे साथ आओ। तुम गिरफ्तार हो।'

दो सिपाही फुर्ती से आगे बढ़े और झुंटा राम के हाथ पीछे बांध दिए, और उनके पैरों में बेड़ियाँ डालकर उन्हें हिलने-डुलने से रोक दिया। अपने स्वामी को इस तरह अपमानित देखकर झुंटा राम के अंगरक्षकों ने अपनी तलवारें निकाल लीं। एक अंगरक्षक के जोरदार प्रहार से कर्नल एल्व्स के कंधे पर गहरा प्रहार हुआ और उनका हाथ कुछ नसों के सहारे शरीर से अलग होकर लटक गया। कर्नल के ठीक बगल में खड़े कैप्टन मार्स्टन ब्लेक ने बिजली की गति से अपनी तलवार निकाली और कर्नल पर हमला करने वाले को मार डाला; वह वहीं मर गया; कैप्टन की सफेद वर्दी उसके शिकार के खून से लथपथ हो गई।

कंपनी की सेना ने पिस्तौल, कटार और संगीनों से आमने-सामने की लड़ाई का फैसला किया। महिलाओं, बच्चों और अन्य गैर-लड़ाकू लोगों के तंग स्थान में ठसाठस भरे होने के कारण, यह लड़ाई के बजाय एक हाथापाई में बदल गई। शिशु महाराजा के सैनिक, खुलकर लड़ने के बजाय, शिशु महाराजा को अपने ही हाथों से चोट पहुँचाए जाने के भय से लगभग पंगु हो गए थे। कंपनी की सेना की पिस्तौलों और सिकंदर साहब के घुड़सवार सैनिकों की कटारों ने आधे घंटे से भी कम समय में विरोधियों का सफाया कर दिया। झुंता राम को हथकड़ी पहनाकर कालकोठरी में डाल दिया गया। महल में मौजूद महाराजा की सेना को क्षमा कर दिया गया, लेकिन कंपनी के किसी भी सैनिक को घायल करने वाले बचे हुए सैनिकों को मौके पर ही गोली मार दी गई।

कंपनी की ओर से कर्नल एल्व्स ने राम सिंह द्वारा पहले से पहनी हुई औपचारिक पगड़ी पर जिघा बांधा। जिघा, जिसे प्रारंभिक मुगल काल से ही संप्रभुता का प्रतीक माना जाता था, लगभग दो इंच चौड़ी मखमली पट्टी थी। सोने की कढ़ाई से खूबसूरती से सजी इस पट्टी में उपयुक्त लंबाई की सोने की प्लेट लगी थी, जिसमें अन्य रत्नों से घिरा एक बड़ा पन्ना जड़ा हुआ था। कर्नल ने पगड़ी में सफेद पंखों का एक गुच्छा भी लगाया और शिशु की कमर में रत्नजड़ित म्यान में एक कटार बांधी, कटार का म्यान और हैंडल दोनों ही सोने से जड़े हुए थे। इसके बाद राजनीतिक एजेंट ने सेठ रावल राम की राजगद्दी की औपचारिक घोषणा की। पंडितों ने आवश्यक अनुष्ठान किए और शुभ मंत्रों का उच्चारण किया। एक संक्षिप्त, औपचारिक भोज के दौरान बधाई संगीत बजाया गया। यह निर्णय लिया गया कि नक्षत्रों की अनुकूल स्थिति सुनिश्चित करने के लिए पंचांग और

अन्य दस्तावेजों से परामर्श करने के बाद राज्याभिषेक किया जाएगा।
तब तक कर्नल एल्व्स की हालत बहुत खराब हो चुकी थी, उनके घाव से खून बह रहा था और मैकडोनाल्ड के इलाज के बावजूद उनकी ताकत तेजी से कम होती जा रही थी। अर्धचेतन अवस्था में उन्हें पालकी में लिटाया गया और कंपनी के चिकित्सक ने शहर तक उनकी वापसी की देखरेख की। अंग्रेज अधिकारी और कंपनी के सैनिक भी उनके पीछे-पीछे चले। वज़ीर को अपनी सफलता और सुरक्षा की खुशखबरी देने के लिए उत्सुक मार्स्टन ब्लेक ने शहर में प्रवेश करने के लिए एक अलग रास्ता चुना, जो उन्हें रेजिडेंसी पहुँचने से पहले टिंडेल निवास के पास से होकर ले जाएगा।

जैसे ही कंपनी के अधिकारी और सैनिक शहर की मुख्य सड़क पर आगे बढ़े, मार्स्टन ब्लेक और उनके तीन निजी सेवक एक संकरी, कम व्यस्त सड़क पर मुड़ गए। उस समय सड़क पर वही एकमात्र फिरंगी थे; चारों ओर उत्सव का माहौल था। लोग सड़कों पर निकले हुए थे, झंडे लहरा रहे थे, नाच-गा रहे थे। नए शासक के समर्थकों में से सबसे खुशहाल और समृद्ध लोगों ने स्टॉल लगा रखे थे जहाँ मिठाई, फूलों की मालाएँ, फल और यहाँ तक कि महिलाओं के लिए साड़ी और पुरुषों के लिए धोती जैसे वस्त्र भी सभी को बाँटे जा रहे थे। इतने रंगीन उत्सव के साथ, चौराहा किसी मेले या त्योहार जैसा लग रहा था। मार्स्टन ब्लेक ने खुद को पूरी तरह सुरक्षित महसूस किया, उन्हें इस बात का जरा भी अंदाजा नहीं था कि उनके घर के रास्ते में एक बड़ा तूफान आने वाला है।
शहर में यह अफवाह फैल गई थी कि मार्स्टन ब्लेक बीमार महाराजा और शिशु महाराजा दोनों की हत्या करने और शाही वंश के महाराजा के चुनाव की जटिल औपचारिकताओं के पूरा होने तक सेठ झुंटा राम को अस्थायी शासक के रूप में स्थापित करने की साजिश रच रहा था। जब उसे आमेर के महल से खून से सने कपड़ों में बाहर आते देखा गया और फिर कंपनी के वैभव और भव्य दल के बिना अकेले ही चले जाने के लिए छोड़ दिया गया, तो यह अफवाह उससे पहले ही फैल गई कि उसने वास्तव में शिशु महाराजा की हत्या कर दी है और जैसे ही अजमेर से झुंटा राम के गुट का समर्थन करने के लिए सेना पहुंचेगी, वह एक नए महाराजा को स्थापित कर देगा।
जब तक मार्स्टन ब्लेक शहर में दाखिल हुए, तब तक यह अफवाह इतनी फैल चुकी थी कि कई जगहों पर शिशु महाराजा के राज्याभिषेक के उत्सव और समारोह रद्द कर दिए गए थे, और जश्न मना रही भीड़ की जगह उदास लोगों के समूह जमा हो गए थे जो आपस में दबी आवाज़ में बातें कर रहे थे और कंपनी तथा 'अपराधी' कप्तान के खिलाफ अपशब्दों का प्रयोग कर रहे थे। जब मार्स्टन ब्लेक को केवल तीन सेवकों के साथ अकेले यात्रा करते हुए पाया गया, तो एक समूह सड़क पर इकट्ठा हो गया और उनका रास्ता रोकने की कोशिश की। कुछ नारे भी लगाए गए। मार्स्टन ब्लेक को उनका मतलब समझ नहीं आया, लेकिन उनके भालाधारी ने एक बंद दुकान के काउंटर के नीचे छिपने की कोशिश की और चिल्लाकर कहा कि महाराजा की जान खतरे में है क्योंकि इन लोगों का मानना है कि उन्होंने शिशु महाराजा की हत्या कर दी है।
इस समूह की पहचान कभी नहीं हो सकी। कहा जाता था कि वे झुंटा राम के समर्थक या भाड़े के सैनिक थे जो अपने स्वामी और संरक्षक की गिरफ्तारी का बदला लेना चाहते थे। लेकिन झुंटा

राम की वास्तविक शक्ति समाप्त हो चुकी थी; उनके समर्थक शीत ऋतु के सूरज की तरह ठंडे पड़ चुके थे। कुछ लोगों का मानना था कि मार्स्टन ब्लेक का भारतीयों, विशेषकर महाराजा के कर्मचारियों के प्रति व्यवहार अत्यंत कठोर और अपमानजनक था, बल्कि कहें तो सरासर उद्दंड था, जिसके कारण स्थानीय आबादी में कई लोगों की दुश्मनी उन पर हावी हो गई थी, जिनमें से कुछ आदतन अपराधी भी थे। इन्हीं लोगों ने उनके खिलाफ फैली अफवाहों का फायदा उठाते हुए उन्हें अकेला पाया। वे उन्हें जान से मारना नहीं चाहते थे, लेकिन लोगों का छोटा सा समूह जल्द ही हिंसक होने के संकेत देने लगा। जब भालाधारी को काउंटर के नीचे कोई सुरक्षा नहीं मिली और भीड़ में से कुछ लोग उसकी ओर मुड़े, तो वह भाग गया और एक संकरी गली में गायब हो गया। उसने मार्स्टन ब्लेक से कहा कि वह अपनी रक्षा यथासंभव करे, जबकि वह मदद के लिए सैनिकों को बुलाने के लिए रेजिडेंसी की ओर दौड़ पड़ा।

मार्स्टन ब्लेक के पास अब केवल दो ही राजदंडधारी बचे थे, दोनों निहत्थे। उसने उन्हें अपने दाएं और बाएं खड़ा किया और अपनी पिस्तौल को होल्स्टर से निकालकर भीड़ को डराने के लिए हवा में कुछ गोलियां चलाईं ताकि आगे बढ़ने का रास्ता साफ हो सके। लोगों की भीड़ के ऊपर से गोली चलाने के कारण किसी को भी लगने की संभावना नहीं थी, लेकिन अचानक एक आदमी जमीन पर गिर पड़ा और दर्द से कराहते हुए चिल्लाने लगा, 'ओह! ओह! मुझे गोली लग गई है! मैं मर गया! कृपया मुझे बचाओ, कृपया मुझे बचाओ!'

उसकी चीखें आग में घी डालने जैसी थीं। भीड़ अब बहुत उत्तेजित हो चुकी थी और सब एक साथ नारे और गालियां देने लगे।

'फिरंगी को मार डालो, मार डालो!'

'महाराजा के हत्यारे को मार डालो!'

'उसे भागने मत दो, उस कमीने को यहीं जमीन पर गिरा दो!'

'चलो, उस कमीने के पास जाओ और उसे मार डालो... व्यभिचारी माँ का कमीना बेटा!'

'वह कमीना कुत्ता भाग नहीं सकता, उसे भागने नहीं देना चाहिए!'

देखते ही देखते भीड़ की चीखें गुर्राहट और दहाड़ों में बदल गईं। कुछ ही मिनटों में, शुरू में मुश्किल से बीस-पच्चीस बेरोजगार और निकम्मे लोगों की भीड़ तीन-चार सौ लोगों की भीड़ में बदल गई, जो सब मिलकर कुछ गड़बड़ करने पर तुले हुए थे। मार्स्टन ब्लेक को न तो रुकने की जगह मिली और न ही आगे बढ़ने का रास्ता, इसलिए उसने पास ही के चौराहे तक जबरदस्ती जाने का फैसला किया, जहाँ शायद उसे कोई पुलिस चौकी मिल जाए और वह वहाँ शरण ले सके। उसने अपनी दूसरी पिस्तौल एक लाठीधारी को सौंप दी और अपनी पिस्तौल से गोली चलाते हुए चिल्लाकर उससे कहा, 'अब तुम क्या ढूंढ रहे हो, बेवकूफ! गोली चलाओ और भागने की कोशिश करो। अब हमारी जान बचाने का कोई और रास्ता नहीं है!'

दोनों पिस्तौलों के एक साथ चलने से भीड़ के भागने के संकेत मिले, कम से कम इतना तो ज़रूर कि उन्हें रास्ता मिल जाए, और मार्स्टन ब्लेक ने अपने घोड़े को भीड़ की ओर दौड़ा दिया। दूसरा गदाधारी घोड़े के पीछे, अपेक्षाकृत सुरक्षित जगह से गोली चला रहा था। लेकिन उसकी पिस्तौल पुराने मॉडल की थी, और उसे पिस्तौल चलाने का कोई खास अनुभव भी नहीं था, और वह भी

इंसानों पर। इसलिए उसकी गोली चलाने की गति धीमी और अनियमित थी। दूसरा गदाधारी लड़खड़ा गया और भीड़ में दब गया, जिससे उसकी सारी हड्डियाँ टूट गईं। मार्स्टन ब्लेक के पास पाँच गोलियों वाली आधुनिक पिस्तौल थी, इसलिए वह तेज़ी से गोली चला रहा था और उसके निशाने सटीक लग रहे थे। उसका अरबी घोड़ा भी बेहद साहसी और प्रशिक्षित था। वह अपने सवार के ज़रा से इशारे या आदेश का तुरंत पालन करता था; वह स्थिर रूप से चलता रहा, इस बात की परवाह किए बिना कि उसके पैरों के नीचे कुछ आ जाए।

जब मार्स्टन ब्लेक संकरी गली से बाहर निकला, तो उसे वहाँ न तो कोई चौराहा मिला और न ही कोई पुलिस चौकी। उसके सामने एक छोटा सा खुला मैदान था जिसके अंत में एक मंदिर था। मंदिर के दोनों ओर खुले मैदान के बाहर सड़कें थीं, लेकिन मार्स्टन ब्लेक को पता नहीं था कि वे सड़कें कहाँ जाती हैं। उसने मुड़कर पिस्तौल लिए हुए गदाधारी व्यक्ति की ओर जिज्ञासा भरी निगाहों से देखा। गदाधारी व्यक्ति ने सिर हिलाकर इनकार किया और मंदिर की ओर इशारा करते हुए उसे शरणस्थल बताया।

मार्ग और गली के अंत के बारे में एक गलती से मार्स्टन ब्लेक बुरी तरह घबरा गया। अपने तात्कालिक निर्णय के संभावित परिणामों के बारे में सोचे बिना, वह अपने अरबी घोड़े की पूरी रफ्तार से आगे बढ़ा। मंदिर के द्वार तक सुरक्षित पहुँचकर उसने देखा कि पीछा करने वाली भीड़ पचास गज या उससे अधिक पीछे थी, लेकिन उनके शोर ने दूसरी तरफ से और भी आवारा और लुटेरों को आकर्षित कर लिया था और वह उनकी पहुँच में था। और अगर उसके घोड़े को खुले मैदान का फायदा मिलता और वह तेजी से दौड़ता, तो उसके पीछा करने वाले भी आराम से फैल सकते थे, क्योंकि वे गली की संकरी दीवारों से बंधे नहीं होते।

वह घोड़े से उतरा और निडर होकर मंदिर में घुस गया। उसके राजदंडधारी के गोला-बारूद खत्म हो चुके थे, इसलिए भीड़ ने उसे एक ही झटके में नीचे गिरा दिया और उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिए। मार्स्टन ब्लेक ने खुद को कम से कम उस क्षण के लिए सुरक्षित समझा, क्योंकि एक ईसाई होने के नाते वह किसी भी चर्च को पवित्र स्थान मानता था और गलती से मंदिर को भी उसी तरह पवित्र समझता था। लेकिन मार्स्टन ब्लेक दो महत्वपूर्ण बातों से अनभिज्ञ था।

पहली बात तो यह कि मंदिर देवी काली को समर्पित था और इसलिए सदियों से यहाँ बलि और अन्य हिंसक अनुष्ठान होते रहे थे। दूसरी बात यह कि मंदिर में पूजा-पाठ कराने वाले पंडित अलवर के महाराजा के परिवार के पारंपरिक पुजारी थे, जिनके सेठ झुंटा राम के साथ व्यापारिक संबंध थे। जब उन्हें पता चला कि उनके मंदिर में शरण लेने वाला व्यक्ति मार्स्टन ब्लेक है, जिसे भीड़ सेठ झुंटा राम का शत्रु बता रही थी, तो उन्होंने न केवल मंदिर का दरवाजा खुला रखा और खून की प्यासी भीड़ का कोई विरोध नहीं किया, बल्कि उन्हें मंदिर को घेरने और उस पर हमला करने की अनुमति भी दे दी।

कोई भी प्रत्यक्षदर्शी इसके बाद की घटना का कोई विवरण नहीं दे सका। बाद में, जब कंपनी बहादुर ने मामले की जांच के लिए एक सैन्य न्यायाधीश-वकील नियुक्त किया, तो मंदिर के पंडित और अन्य सभी ने शपथपूर्वक कहा कि उन्होंने यह नहीं देखा कि बल्क साहब पर पहला हाथ किसने उठाया था, और एक बार हाथ उठ जाने के बाद, दूसरों को रोकने की हिम्मत किसमें

हो सकती थी?

मार्स्टन ब्लेक के शरीर को सिर से पैर तक तलवारों से छलनी करने में आधे घंटे से भी कम समय लगा। फिर उनके हत्यारों ने उनके पार्थिव शरीर को उनके घोड़े पर लादा और उसे खुले मैदान से बाहर सड़क पर खड़ा कर दिया। जब तक अंग्रेज़ सेना के अधिकारी और उनकी टुकड़ी पूरी तरह से हथियारों से लैस होकर, सरपट दौड़ते घोड़ों पर बिगुलों की थाप और 'रास्ता दो!' और 'रास्ता खाली करो!' के नारों के बीच वहाँ पहुँची, तब तक उन्होंने कैप्टन एडवर्ड मार्स्टन ब्लेक के अरबी घोड़े को अपने स्वामी के शव को अपनी उदास और झुकी हुई पीठ पर लादे हुए, अपना गरिमामय सिर नीचे किए हुए, एक तीन तरफा चौराहे पर पाया, मानो वह तय नहीं कर पा रहा हो कि किस तरफ जाना है। घोड़े के सभी कीमती और उपयोगी सामान ले लिए गए थे; साथ ही कैप्टन के शरीर पर जो कुछ भी काम आ सकता था, वह सब कुछ ले लिया गया था। लेकिन भीड़ ने कम से कम इतनी तो शालीनता दिखाई कि शव की वर्दी नहीं उतारी और न ही उसे अपमानित या क्षत-विक्षत किया। मंदिर का पुजारी कहीं दिखाई नहीं दे रहा था, और दंगा करने वाली भीड़ का तो कोई अस्तित्व ही नहीं था। मंदिर के चारों ओर की जमीन को भी इस तरह से साफ किया गया था कि मनुष्य या जानवर के पैरों या खुरों के निशान मिलना पूरी तरह से असंभव हो गया था।

वज़ीर को ऐसा लगा जैसे किसी ने उसके शरीर पर गहरा घाव किया हो और ज़बरदस्ती उसके जिगर और तिल्ली को फाड़कर उसके शरीर का सारा खून निकाल लिया हो। ऐसा लग रहा था मानो उसके शरीर में अब कुछ भी उसका अपना नहीं बचा था। उसने मार्स्टन ब्लेक को आखिरी बार तब देखा था जब वह उसे और बच्चों को टिंडेल परिवार की देखरेख में छोड़कर गया था और उसने उसे भरोसा दिलाया था कि वह रेजीडेंसी में पूरी तरह सुरक्षित रहेगा और उसे बिल्कुल भी चिंता नहीं करनी चाहिए; कि वह जल्द ही, बहुत जल्द वापस आएगा और वे अपने घर को फिर से आबाद करेंगे।
हाफ़िज़ की आयतें बार-बार उसके मन में आती थीं, और वह उन्हें मन ही मन दोहराती और रोती रहती थी:
कोई जाकर मेरे निर्दयी चाँद से कहे: कृपया लौट आओ, क्योंकि तुम्हारे प्रेमी प्रतीक्षा की पीड़ा से मर चुके हैं; मैंने तुम्हें अपना हृदय दिया और तुम्हारा प्रेम अपने प्राणों से खरीदा, अब मुझे तुमसे बिछड़ने का अत्याचार मत दो।
उन्होंने अपने साहब के लिए इक्कीस दिन शोक मनाया। उनका अंतिम संस्कार ईसाई रीति-रिवाजों के अनुसार किया गया और चर्च में निर्धारित विधि से प्रार्थना सभा आयोजित की गई। लेकिन वज़ीर ने स्वयं भी दिवंगत आत्मा की शांति और पुण्य के लिए मस्जिदों में कुरान पाठ का आयोजन किया और पास के मदरसे के विद्यार्थियों को तीन दिन तक उनके नाम पर भोजन कराया। उन्होंने स्वयं दिन में पांच बार निर्धारित नमाज़ पढ़ी और अपने साहब पर ईश्वर की कृपा की विशेष प्रार्थना की।
जैसे ही उसका दर्द कुछ कम हुआ, एक और चिंता उसके मन को कीड़े की तरह खा रही थी: उसने चारों ओर देखा और सोचा कि क्या वह इस क्षति से उबर पाएगी, और यदि हाँ, तो बिना सहारे या मदद के जीवन जीने का उसका क्या साधन होगा? उसे हाफ़िज़ की उसी ग़ज़ल की एक और पंक्ति याद आई—उसे अदृश्य की ज़बान के रूप में जाना और प्यार किया जाता था, और यह कोई आश्चर्य की बात नहीं थी।

हे हृदय! अपने दुःख को स्वीकार करो और धैर्य रखो, हे नेत्र! विरह में इतना अधिक रक्त मत बहाओ।
लेकिन जीवन जीने के लिए केवल धैर्य से कहीं अधिक और भी बहुत कुछ चाहिए था। मैं दो बच्चों का पालन-पोषण कैसे करूँ, यहाँ किसके सहारे रहूँ, इस परदेसी धरती पर किस पर निर्भर रहूँ? मैं उस घर में नौकरानी और निर्धन आश्रित की तरह कैसे रहूँ जहाँ कभी मैंने रानी की तरह राज किया था?
मार्स्टन ब्लेक की मृत्यु बिना वसीयत बनाए हुई थी, और कंपनी के कागजातों में वज़ीर खानम का नाम उनकी बीबी के रूप में दर्ज नहीं था। अपने चचेरे भाई के अंतिम संस्कार के अगले दिन, अबी

मेमसाहिब ने वज़ीर को स्पष्ट रूप से बता दिया था कि वहाँ उनके कपड़ों के अलावा उनका कुछ भी नहीं है। उस समय वज़ीर ने कोई प्रतिक्रिया नहीं दी, लेकिन बाद में, जब शोक का तूफान थम गया और उनका मन कुछ हद तक स्थिर हुआ, तो उन्होंने फिर से इस मामले को उठाया और टिंडेल परिवार के साथ खुलकर चर्चा की। यह सच है कि वह कोई भव्य दहेज लेकर नहीं आई थीं, लेकिन मार्स्टन ब्लेक द्वारा दिए गए उपहारों पर उनका पूरा अधिकार था। जनरल पामर साहब के बैंक में उनके नाम पर जमा की गई धनराशि भी उनकी ही थी, मूलधन और ब्याज दोनों। दैनिक उपयोग की वस्तुएँ जो इतने वर्षों से उनके पास थीं, उन्हें भी उनकी संपत्ति माना जाना चाहिए।

बातचीत गरमागरमी और कड़वाहट की ओर बढ़ती दिख रही थी। विलियम टिंडेल ने अपनी बहन से अंग्रेज़ी में कुछ कहा। एबी एक मिनट के लिए चुप हो गई, मानो वह थोड़ी झिझक रही हो, या अपने भाई की बात दोहराने में हिचकिचा रही हो। थोड़ी देर बाद उसने कहा, 'और बच्चों, मार्टिन और सोफिया के बारे में आपका क्या विचार है?'

'सोचने की क्या बात है?' वज़ीर ने तुरंत जवाब दिया। 'वे मेरे बच्चे हैं, मैं उनका पालन-पोषण करूँगा।'

'ऐसा करने के लिए आपके पास क्या साधन हैं? और इसके अलावा, आप अकेले रहेंगे। लेकिन अगर आपको किसी और का हाथ पकड़ने का मौका मिले तो...?'

'अरे साहब, कृपया उन मामलों को लेकर परेशान न हों जो आपके लिए मायने नहीं रखते। क्या मैंने नहीं कहा कि वे मेरे बच्चे हैं? ज़रूरत पड़ने पर मैं एक ही वक्त के खाने पर गुज़ारा कर लूँगी, लेकिन मैं उनका अच्छे से ख्याल रखूँगी। इससे आपका क्या लेना-देना है?'

'ये बच्चे हमारे भी हैं!' विलियम टिंडेल अचानक बोल पड़े। 'एडवर्ड ने उनके जन्म का पंजीकरण करवाते समय अपना नाम उनके पिता के रूप में लिखवाया था।'

यह बात छोटी बेगम को पता नहीं थी। वह इस बात का भी आकलन नहीं कर पा रही थी कि मार्स्टन ब्लेक द्वारा मां का नाम बताए बिना अपने पिता होने का दावा करने से बच्चों पर उसका पूरा अधिकार जताने के उसके अधिकार पर कितना कानूनी असर पड़ सकता है। वह तुरंत कोई स्पष्ट जवाब नहीं दे पाई और चुप रही। एबी ने कहा, 'अब सुनो। मेरे पास तुम्हारे लिए एक प्रस्ताव है और मुझे लगता है कि इसे स्वीकार करने में ही तुम्हारा भला है।'

कुछ क्षणों के लिए, एबी ने सोचा कि उसे अपना प्रस्ताव किस प्रकार रखना चाहिए। तीनों चुप थे, और फिर वज़ीर ने व्यंग्य भरे लहजे में कहा, 'कृपया आदेश दीजिए, मैं सुन रही हूँ।'

'ठीक है, सुनो,' एबी थोड़ा चिढ़कर बोली। 'तुम बच्चों को हमारे हवाले कर दो—'

'इसका क्या मतलब है?' वज़ीर ने कुछ कठोर स्वर में बीच में ही टोकते हुए कहा। 'तुम उन्हें मुझसे छीन लोगे, उनका ईसाईकरण करोगे, उन्हें मेरे जीवन से निकाल दोगे? तुम भूल गए हो कि वे मेरे बच्चे भी हैं।'

'हाँ, वे तुम्हारे बच्चे भी हैं। लेकिन अब तुम कुछ भी नहीं हो। शान-शौकत और विलासिता में पले-बढ़े, नौकरों की फौज द्वारा देखभाल किए गए, हर चीज की प्रचुरता और अंग्रेजी घर द्वारा दिए गए सत्ता के अहसास के आदी: क्या तुम उन्हें ये सब कभी दे पाओगे?'

और उनके धर्म, उनकी जीवनशैली के बारे में क्या?
‘उनकी आस्था के बारे में मुझसे कुछ मत कहो। उनका बपतिस्मा ईसाई धर्म में हो चुका है। मुझे यह बात पक्के तौर पर पता है। उन्हें मुसलमान बनाने का सपना भी मत देखना।’
‘मैं ऐसा क्यों करूं? वे जो बनना चाहेंगे बनेंगे। लेकिन आपको उन पर अपना फिरंगी मत थोपने का कोई अधिकार नहीं है।’
‘इस छोटी सी औरत को देखो, ये क्या कह रही है!’ एबी जोर से हँस पड़ा। ‘हमें किसी पर कुछ भी थोपने की क्या ज़रूरत है? ये जन्म से ही ईसाई हैं और ईसाई ही रहेंगे।’
‘उन्हें ईसाई क्यों बने रहना चाहिए?’ वज़ीर ने पलटवार किया। ‘उन्हें इस्लाम की मूलभूत बातें बताई जाएं और फिर उन्हें चुनने दिया जाए।’
‘वाह, यह तो बिल्कुल अभूतपूर्व बात है!’
आपने शायद ऐसी बातें न सुनी हों। लेकिन मेरे साहब के मन में भी यही विचार था। नहीं तो उन्होंने उन्हें दो नाम क्यों दिए होते?
तो तुम बच्चों के लिए क्या चाहते हो? क्या तुम्हें नहीं दिखता, उन्हें हमारे साथ ही रहना होगा। तुम्हारे पास न पैसा है, न इज्जत...
‘मेरे आख़िरकार मेरी इज़्ज़त नापने का अधिकार आपको किसने दिया, साहब? मेरी बात साफ़-साफ़ कह रही हूँ, लेकिन अपनी हदें पार मत कीजिए। मेरे भी अपने लोग हैं, मेरा परिवार है। मैं जानती हूँ कि साहब की शहादत ने मुझे बेघर कर दिया है, लेकिन मेरी इज़्ज़त नहीं गई है। आप जो भी प्रस्ताव रखें, लेकिन मेरे परिवार का अपमान न करें।’
‘ठीक है, मुझे बस इतना ही कहना है: बच्चे हमारे साथ ही रहेंगे; घर का आवश्यक सामान आपका ही रहेगा; हमारे भाई से आपको जो कुछ भी मिला है, वह आप ही रखें। आप जयपुर में रहें या कहीं और, आप कभी-कभार बच्चों से मिलने आ सकती हैं, लेकिन वे कभी भी आपसे मिलने नहीं आएंगे।’
वज़ीर ने गौर किया कि 'तुम' शब्द को लगभग छिपी हुई अवमानना के साथ उच्चारित किया गया था। वह बीच में टोकना चाहती थी, लेकिन एबी ने उसे रोकने के लिए हाथ उठाया और आगे कहा, 'तुम्हें बच्चों के पालन-पोषण पर कुछ भी खर्च करने की ज़रूरत नहीं है।'
और उनकी शादी, उनकी शिक्षा, उनका पालन-पोषण?
‘ज़ाहिर है, वे हमारे साथ बड़े होंगे और हमारे जैसे बनेंगे। वे अपनी पसंद के अनुसार शादी कर सकते हैं, लेकिन हमारी सहमति से। उन्हें एक अंग्रेज के बच्चों की तरह शिक्षित और पाला-पोसा जाएगा।’
वज़ीर खानम खड़ी हो गईं। उन्होंने कठोर स्वर में कहा, 'आपके प्रस्ताव मुझे बिल्कुल भी स्वीकार्य नहीं हैं और—'
लेकिन इससे पहले कि वह अपना वाक्य पूरा कर पाती, विलियम ने फिर से अपनी बहन से अंग्रेजी में कुछ कहा। उसने ज़ोर से सिर हिलाया और कहा, 'युवती, बैठ जाओ। सुनो, तुम बच्चों पर कोई दावा नहीं कर सकती। हम कंपनी बहादुर के दरबार से तुम्हारे खिलाफ तुरंत फैसला ले सकते हैं, और यदि आवश्यक हुआ तो महाराजा के दरबार से भी।'

वज़ीर, जो अकड़कर बाहर निकलने ही वाली थी, अचानक सिकुड़ गई और रुक गई, फिर धीरे-धीरे अपनी जगह पर वापस बैठ गई।

एबी ने कहा, 'हमारा प्रस्ताव आपकी स्थिति को ध्यान में रखते हुए बनाया गया है और मौजूदा परिस्थितियों में यह सबसे दयालु प्रस्ताव है। हम अन्य मामलों पर बातचीत कर सकते हैं, लेकिन बच्चों के बारे में हम कुछ भी नहीं सोचते, सिवाय इसके कि वे हमारे हैं और हमेशा हमारे ही रहेंगे।'

वज़ीर खानम इस बात को भली-भांति समझती थीं कि इस तरह का कोई भी लेन-देन एकतरफा नहीं हो सकता: टिंडेल परिवार का भी अपना स्वार्थ था। इसीलिए वे बातचीत और समझौता करने को तैयार थे। उनके पास निस्संदेह शक्ति थी, लेकिन वे मामले को लंबा खींचकर विवाद का रूप लेने देना नहीं चाहते थे; वहीं उनकी समस्या यह थी कि अपने दम पर बच्चों का पालन-पोषण और देखभाल करना उनके लिए अत्यंत कठिन था।

उन्होंने उस समय जितना संभव हो सका, उस मामले पर विचार किया और कहा, “ठीक है, सबसे पहले आपको यह ध्यान रखना चाहिए कि जयपुर की अदालतों का फैसला इस मामले को खत्म नहीं कर देगा। लॉर्ड गवर्नर जनरल साहब और उनका कलकत्ता स्थित न्यायालय है। मैं लॉर्ड गवर्नर जनरल बहादुर के समक्ष अपील करने के लिए पूरी तरह तैयार हूं। लेकिन इस तरह के विवाद और झगड़े अच्छे परिवारों के लिए उचित नहीं हैं। इसलिए मेरे पास कुछ अपने प्रस्ताव हैं।”

‘तो जैसा आप कहें, वैसा ही हो। अपने प्रस्ताव बताइए,’ एबी ने बेपरवाही से कहा, मानो वज़ीर के पास कहने के लिए कुछ ऐसा हो ही न जिसे वह सिरे से खारिज न कर सके।

मैं अपने बच्चों के भरण-पोषण और अन्य सभी खर्चों का वहन करूंगा।

भाई और बहन दोनों चौंक गए और एक साथ बोले, 'ओह!'

‘आश्चर्यचकित मत होइए। फिलहाल मैं प्रत्येक बच्चे के लिए प्रति माह बीस रुपये का भुगतान करूँगा और उनके बड़े होने पर राशि बढ़ा दूँगा। यह पैसा कहाँ से आता है, इससे आपको कोई लेना-देना नहीं होना चाहिए। यह पूरी तरह से मेरा निजी मामला है।’

'और क्या?'

‘वे हिंदी और फारसी में शिक्षित होंगे। अंग्रेजी वे जितना चाहें पढ़ सकते हैं, इस बारे में मुझे कुछ नहीं कहना। उन्हें हमारे और आपके दोनों तरह के कपड़े पहनने की अनुमति होनी चाहिए। मैं उनके केवल अंग्रेजी कपड़े पहनने से सहमत नहीं हूँ।’

‘अच्छा, इस पर भी विचार किया जा सकता है। और कुछ?’ एबी अपनी आवाज में व्यंग्य छिपा नहीं सकी।

मुझे जब चाहे उनसे मिलने की आजादी होनी चाहिए। उनके विवाह से संबंधित मामलों में मुझसे परामर्श लिया जाना चाहिए।

‘देखते हैं। क्या बस इतना ही?’

वज़ीर ने गहरी सांस ली और संयमित स्वर में, हर शब्द को स्पष्ट रूप से उच्चारित करते हुए बोला, 'मेरे बलिदानों के बदले में, इस घर की हर चीज़ का एकमात्र मालिक मैं ही होऊंगा: फर्नीचर, कालीन, कांच, धातु के बर्तन, झूमर, सब कुछ मेरा होना चाहिए।'

टिंडेल परिवार थोड़ा चौंक गया। बच्चों की कस्टडी लेने के पीछे उनका मकसद धार्मिक पुण्य के साथ-साथ कुछ सांसारिक लाभ भी हासिल करना था। इस तरह वे मार्स्टन ब्लेक के घर की लगभग सारी संपत्ति, या कहें तो लगभग सारी संपत्ति, विरासत में पाने की उम्मीद कर रहे थे। वे एक-दो मिनट चुप रहे, फिर अंग्रेजी में आपस में बातचीत की। अंत में उन्होंने कहा, 'हम सहमत हैं।'

'बहुत खूब, मैं आपकी आभारी हूँ।' यह कहते हुए उनकी आँखों में अचानक आँसू आ गए, लेकिन उन्होंने समझौते पर हस्ताक्षर करने के लिए दृढ़ता से अपना हाथ आगे बढ़ाया।

टिंडेल दंपत्ति ने यह उम्मीद नहीं की थी कि एक भारतीय महिला इतनी कुशलता से बातचीत करेगी और फिर एक पुरुष की तरह हाथ मिलाएगी। उन्होंने पूरी शालीनता से हाथ मिलाया और वादा किया कि सभी कागजात चार दिनों के भीतर तैयार कर दिए जाएंगे। इस बीच, यदि वज़ीर चाहे तो वह अपने साथ ले जाने वाले घरेलू सामानों की पूरी सूची तैयार करवा सकती है। बिना कहे ही यह स्पष्ट हो गया कि वह जयपुर को हमेशा के लिए छोड़कर दिल्ली वापस चली जाएगी।

ऊपर बताई गई बातचीत के आठवें दिन, वज़ीर ने अपना सामान ऊँटों पर लादवाया और एक भरोसेमंद काफिले का नेता नियुक्त किया; उसने दावक से दिल्ली लौटने का इंतज़ाम किया। दोनों बच्चों की मौजूदगी में, उसने अबी को सौ-सौ रुपये के पाँच थैले सौंपते हुए कहा कि यह बच्चों के एक साल के खर्चे के लिए है। वह रोई, बच्चों को गले लगाया, बार-बार चूमा और वादा किया कि वह जल्द ही उन्हें अपने साथ वापस ले आएगी या उनसे मिलने आएगी। उसने अपने सबसे बुरे सपने में भी नहीं सोचा होगा कि वह उन्हें फिर कभी नहीं देख पाएगी। हालाँकि, यह बात सभी को स्पष्ट थी: कि वज़ीर खानम के जीवन का एक चरण हमेशा के लिए समाप्त हो गया था, और बहुत जल्दी समाप्त हो गया। शायद अगला चरण लंबा चले। उसने हाफ़िज़ के शब्दों के बारे में सोचा:

मैंने सोचा कि उससे पूछूं कि आसमान में जाने वाली उस गेंद का क्या हाल है, उसने कहा: मैं उसे अपने पोलो बल्ले के घुमाव में इस तरह घुमाऊंगी कि फिर पूछने के लिए कुछ बचेगा ही नहीं।

पुस्तक 4

वह पाँचवें दिन शाम को दिल्ली पहुँचीं, लेकिन अपने पिता के घर नहीं गईं। उन्होंने मांझली की मदद से सिरकी वालन में एक उपयुक्त मकान किराए पर ले रखा था। उनके आगमन के छठे दिन, उनका सामान सात ऊँट गाड़ियों पर लादकर दिल्ली पहुँचा। वह अपने साथ नकदी और गहने भी लाईं। उस समय वज़ीर खानम उन्नीस साल और कुछ दिन की थीं। दो बच्चों का जन्म, साहब की मृत्यु का सदमा और शोक, और अपने बच्चों से बिछड़ना: इन सबके बावजूद, उनकी सुंदरता ऐसी थी कि कोई भी उन्हें निहारता रहता और उनकी सुंदरता की कसम खाता कि वह फिर से उन्हें निहारना चाहेगा।
मार्च का महीना था और वर्ष 1830 था। छोटी बेगम के सामने दो समस्याएँ थीं: अकेलापन और आजीविका। यह सच था कि साहिब से विरासत में मिली कीमती वस्तुएँ और पिछले पाँच वर्षों में अच्छे प्रबंधन के बल पर अर्जित उनकी अपनी बचत काफी थी; लेकिन यदि किसी की संपत्ति में वृद्धि न हो और खर्च निरंतर बना रहे, तो क्रोएसस का धन भी लंबे समय तक पर्याप्त नहीं होगा। बेशक, जयपुर में उनके पास जो आलीशान घर था, जिसमें नौकरों की फौज, पालकी, नलकी, बग्गी, घोड़े, मवेशी, कुत्ते और अन्य जानवर, और चापलूसों की भीड़ रहती थी, उसे रखना अब उनके लिए नामुमकिन था। इन सब चीजों का तो वे सपना भी नहीं देख सकती थीं। वे अपने पहले के जीवन से काफी कम खर्च में रहने के विचार से संतुष्ट थीं। लेकिन किस हद तक और कैसे, यह सवाल था। उन्हें न्यूनतम घरेलू खर्चों के लिए एक नियमित, निश्चित राशि की आवश्यकता थी। भोजन और अन्य खर्चों के अलावा, सुरक्षाकर्मी और खरीदारी जैसे बाहरी कामों के लिए एक नौकर रखना अनिवार्य था। वे बेशक फिजूलखर्ची नहीं करतीं और न ही आराम और विलासिता की चीजों पर पैसा लुटातीं, लेकिन उन्हें शालीनता से जीना था और अपनी छवि, खासकर अपने पहनावे को बनाए रखना था।

गायन और नृत्य में उनकी कुछ प्रतिभा तो थी, लेकिन ऐसी चीजों में उनकी कोई रुचि नहीं थी। उदाहरण के लिए, सहेलियों के बीच या किसी शादी के दौरान महिलाओं की सभाओं में अचानक गाना गाना या थोड़ा-बहुत नृत्य करना उनके लिए बिल्कुल अलग बात थी। उन्हें नाच-गाना करके जीविका कमाने की कोई इच्छा नहीं थी। यह प्रश्न उनके जीवन के दृष्टिकोण या आत्म-छवि में कहीं भी मायने नहीं रखता था: वे अपनी प्रतिभा या शरीर को बेचकर थोड़ी-बहुत जीविका कमाने या अपने लिए आरामदायक जीवन शैली बनाने के लिए तैयार नहीं थीं। वे पुरुषों से संबंध बनाने के लिए तैयार थीं, लेकिन अपनी शर्तों पर। यदि उनकी सभी शर्तें स्वीकार नहीं होतीं, तो भी वे किसी के साथ संबंध स्थापित करने से पहले अपनी सबसे महत्वपूर्ण शर्तों को पूरी तरह से स्वीकार करवाना चाहती थीं, उनके हरम में प्रवेश करने की तो बात ही छोड़ दें।
जयपुर में अंग्रेज़ सहायक राजनीतिक एजेंट की हत्या की गूंज दिल्ली में दूर-दूर तक सुनाई दी। और जो लोग सुख-सुविधाओं और जीवन के भौतिक पहलुओं का आनंद लेने में रुचि रखते थे, वे

इस बात से अनजान नहीं थे कि वज़ीर खानम दिल्ली में थीं, उनके बच्चे उनके साथ नहीं थे, और समाज में उनका अभी तक कोई परिचय नहीं हुआ था, और किसी के साथ उनका कोई संबंध भी नहीं बना था।

किसी को भी यह पता नहीं था कि वह अपने साहब के लिए कब तक शोक मनाएगी। न ही किसी को यह अंदाजा था कि काले वस्त्र उतारने के बाद उसकी क्या योजना होगी। यह स्पष्ट था कि वज़ीर खानम जैसी आकर्षक महिला, जो सौंदर्य के धनी और धनी होने के कारण हमेशा ही आकर्षक थीं, उन्हें चाहने वाले पुरुषों की कमी नहीं होगी। उनकी अपनी इच्छा क्या थी, यह अनुमान का विषय नहीं था। फिर, यह भी उनके जीवन का एक तथ्य था कि दिल्ली के सामाजिक हलकों में, विशेष रूप से मंझली बेगम के उदाहरण के बाद, उन्हें ऐसी महिला माना जाता था, जिनकी कृपा उचित परिस्थितियों में प्राप्त की जा सकती थी।

दिल्ली के समाज में उनके बारे में चाहे जो भी अटकलें लगाई जाएं, वज़ीर खानम खुद को किसी भी तरह से बेगम से कम नहीं समझती थीं। अब बात यह थी कि वह एक ऐसी बेगम थीं जिनका हर अंग, हर हावभाव, हर अदा, हर वाणी एक ऐसी कामुकता भरी चुनौती पेश करती थी जिसका कोई भी पुरुष विरोध नहीं कर सकता था। कीमती सांसारिक वस्तुओं को त्यागने, भाग्य की विपत्ति को स्वीकार करने और दृढ़ इच्छाशक्ति के मामले में कोई राजकुमारी या रानी उनसे आगे नहीं निकल सकती थी। और वह केवल दिल्ली में ही पाई जाती थीं, कहीं और नहीं।

यह सच है कि उन दिनों दिल्ली का वैभव फीका पड़ रहा था, लेकिन याद रखिए, एक हाथी, चाहे उसका वजन कितना भी कम हो जाए, फिर भी दस हजार पाउंड से अधिक ही होता था। हर गली में, हर दरवाजे पर, धर्मपरायण, विद्वान, सूफी, कवि, सौंदर्य प्रेमी, शौकीन मिजाज, घुमक्कड़, संगीतकार, शतरंज के उस्ताद, अचूक निशानेबाज, तलवारबाजी के उस्ताद, ज्योतिषी और ज्ञानवर्धक व्यक्तित्व की चमक दिखाई देती थी। तो फिर यह कैसे संभव था कि लोग यह न जानते हों कि वज़ीर खानम जैसी खूबसूरत हस्ती दिल्ली में बसकर वहां की रौनक बढ़ा रही थी? यह कैसे संभव था कि लोग यह न जानते हों कि वह अधखिली कली, जो अब हजारों फूलों की बहार और हजारों वसंतों का फूल है, राजपूताना की कंटीली जमीनों से दिल्ली के सुखमय शयनकक्षों में अपनी सुगंध बिखेरने और जुदाई की आग में फिर से तड़पने के लिए आई थी।

वज़ीर के दिल्ली पहुँचने के एक या दो सप्ताह के भीतर ही, उसे विभिन्न स्रोतों से संकेत और सुझाव मिलने लगे। विवाह या संबंध स्थापित करने में माहिर महिलाएं उसके घर आने की अनुमति मांगने लगीं; और सबसे आसान बहाना, ज़ाहिर है, मंझली बेगम का था। जो भी उससे मिलने आता, उसे छोटी के बारे में पूछने का कोई न कोई मौका ज़रूर मिल जाता। छोटी भी अब कभी-कभी मन ही मन सोचती: कब तक विधवा का लिबास पहने रहोगी? आखिर तुम्हें जीना भी तो है, और दो और लोगों का पालन-पोषण करना है। तुम्हें खुद को नीचा नहीं दिखाना चाहिए, बल्कि अपनी वर्तमान स्थिति को सुधारने के तरीके खोजने चाहिए।

उम्दा खानम के माध्यम से उनकी नवाब यूसुफ अली खान से मुलाकात होती थी, लेकिन उनकी मुलाकातें पूरी तरह से घरेलू और बहन के तौर पर ही होती थीं। उन्होंने न तो कोई संबंध स्थापित करने की बात की और न ही कहीं जाने की, और न ही नवाब ने कभी ऐसा कोई संकेत दिया।

उनके बीच बस इतना ही होता था कि अगर नवाब उस समय महल में होते जब वह मंझली के साथ उनसे मिलने जाती थीं, तो वह उनके सामने नमन करने के लिए उपस्थित हो जाती थीं। ज्यादा बातचीत नहीं होती थी, लेकिन छोटी बहन होने के नाते उनका स्वागत आशीर्वाद भरे शब्दों से किया जाता था, उन्हें फल या पैसे का उपहार दिया जाता था और सामान्य आतिथ्य सत्कार किया जाता था।

कई महीने इसी तरह बीत गए, लेकिन एक दिन, जब वह अपनी औपचारिक प्रणाम करने के बाद वापस जाने के लिए मुड़ीं, तो नवाब ने अपने चमत्कारिक शब्दों में कहा, 'छोटी बेगम, आपको जल्दी तो नहीं है? कृपया थोड़ी देर रुकिए।'

'महाराज, आपकी सेविका पूरे मन से आपकी सेवा में यहाँ उपस्थित है,' उसने कहा और अपने पैरों को जांघों के नीचे दबाकर कालीन पर बैठ गई।

नवाब यूसुफ अली खान ने पहली बार वज़ीर के चेहरे को इतनी नज़दीक से देखा था। पिछली मुलाकातों में वे हमेशा अपनी नज़रें नीचे रखते थे और औपचारिक शिष्टाचार का पालन करते हुए कम ही बोलते थे। उस समय वज़ीर ने बनारस में बने हल्के रेशमी कपड़े, जिसे गुलबदन कहते हैं, की कई रंगों वाली पट्टियों से बनी ढीली, थोड़ी लटकती हुई पतलून पहनी हुई थी। पतलून ऊपर से तंग थी, लेकिन जैसे-जैसे पोशाक शरीर पर नीचे उतरती गई, वह चौड़ी होती गई। पट्टियों के रंग—मोर-हरा, सुनहरा और नीला—मौसम के लिए बहुत उपयुक्त थे। आमतौर पर शरीर के उभारों को छिपाने के लिए ढीली पतलून पहनी जाती है, लेकिन वज़ीर ने शालीनता का पालन करते हुए इस तरह से शरीर को समेटकर बैठी थीं कि उनकी जांघों के कोण हल्के से दिखाई दे रहे थे। क्रीम रंग के रेशमी कपड़े, जिसे तश कहते हैं, की महीन जाली से बनी उनकी चोली उन पर अच्छी तरह फिट थी, न तंग, बल्कि उपयुक्त। चोली की आस्तीनें छोटी थीं, जो बांहों के ऊपरी हिस्से को मुश्किल से ढक पा रही थीं, और उन पर बारीक नक्काशीदार सुनहरी लेस लगी हुई थी। गला नीचा था, लेकिन इतना भी नहीं कि शालीनता भंग हो। चोली के कप लगभग सादे थे, लेकिन उन पर बहुत पतले सुनहरे धागे से छोटे-छोटे तारे बने हुए थे, हालांकि बहुत ज्यादा नहीं। चोली का आगे और पीछे का हिस्सा चौड़ा था, लेकिन ध्यान से देखने वाले को कभी-कभार पेट और पीठ की झलक मिल सकती थी। चोली के ऊपर उसने बिना आस्तीन का एक ट्यूनिक पहना हुआ था, जो काफी नीचा और ढीला था। कपड़ा बेहतरीन गुणवत्ता का सफेद सूती था जिसे शबनम कहते हैं, जिस पर हल्की सुनहरी कढ़ाई थी, जबकि इसके आगे और पीछे के किनारों पर बारीक सुनहरी नक्काशी थी।

चोली और ट्यूनिक के संयोजन से उसके ऊपरी शरीर का कुछ हिस्सा दिखाई भी दे रहा था और कुछ छिपा भी रहा था, जिससे जिज्ञासा जागृत होती थी और वह अतृप्त भी रह जाती थी। ट्यूनिक इतने हल्के और नाजुक कपड़े से बनी थी कि चोली के रंग स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहे थे, लेकिन फिर भी छिपाने की कला का इस तरह से प्रयोग किया गया था कि गर्दन के नीचे केवल संकेत और इशारे ही थे, स्पष्ट रूप से कुछ भी नहीं।

उसका सिर दुपट्टे से अच्छी तरह ढका हुआ था, और इस दुपट्टे में भी वही संकेत और वादे छिपे थे। आसमानी नीले सूती कपड़े का छह गज लंबा, बेहद नाजुक कपड़ा, जिसे शरबती कहा जाता

था: यह नाम से तो सूती था, लेकिन इसके चारों किनारों पर शुद्ध सोने का काम और सोने के धागे की लटकनें थीं। इस पर छोटे-छोटे सोने के सितारे बने हुए थे; इस तरह सूती कपड़े का वह हल्का सा कपड़ा भी भारी और भव्य बन गया था।

वज़ीर खानम के शरीर पर दुपट्टा नहीं था, बल्कि एक नीले-सुनहरे बादल जैसा था जिसके पीछे उनके माथे, चेहरे और ठुड्डी की हल्की भूरी त्वचा चमक रही थी, मानो हल्के नमकीन मसाले की तरह मनमोहक हो। बादल के पीछे उनके शरीर के उभारों की झिलमिलाहट भी दिखाई दे रही थी, जो धनुष की तरह कसे हुए थे, और उनका नौ रत्नों वाला हार, जिसमें नीलमणि प्रमुख था। उनके क्लीवेज के ठीक ऊपर रेशम और सोने के धागे से जड़ा एक छोटा सा दर्पण आभूषण था, जिसके चारों ओर नीले नीलमणि जड़े थे; सोने की बालियां जो गोल घेरे जैसी थीं और जिनमें प्रत्येक में एक छोटा माणिक पिरोया हुआ था; रत्नों से जड़ी चौड़ी चूड़ियां जिनके दोनों सिरे बाघ के जबड़े की आकृति से बने थे, और प्रत्येक कलाई पर दो रत्नों से जड़ी चूड़ियों के बीच हल्के हरे रंग की कांच की चूड़ियां; प्रत्येक हाथ की तर्जनी और छोटी उंगली पर हीरे और कैट्स आई रिंग्स; पन्ना जड़े हुए नोज रिंग: ये सब फर्श पर रखे गोल लैंपों से निकलने वाली तेज रोशनी में बिजली की तरह चमक रहे थे।

आसमानी नीले रंग का दुपट्टा, मलाई रंग की चोली और शुद्ध सफेद कुर्ता, वज़ीर का रंग, उसकी काली आँखें, लंबी, तिरछी, ताराफल जैसी, पलकों के नीचे गहरे काले काजल की पतली सी रेखा, गले से उठती सुडौल गर्दन: इन सभी रंगों का इतना संतुलित मेल, बिना किसी अतिशयोक्ति के सामंजस्यपूर्ण ढंग से घुलमिलकर, नवाब जैसे नारी सौंदर्य के पारखी को भी चकित कर दिया। क्षण बीतते गए, पर वह अपनी दृष्टि नहीं हटा सका, फिर भी उसे वज़ीर के शरीर से निकलती गर्म लहरों का एक रहस्यमय अनुभव हुआ, मानो उसे तेज बुखार हो और उस बुखार की लहरें उसके शरीर में दौड़ रही हों। शर्मिंदा होकर उसने अपनी नज़रें नीचे कर लीं, गला साफ किया और बोला, 'छोटी बेगम, तुम ठीक हो ना? तुम्हें किसी चीज़ की ज़रूरत तो नहीं है?'

‘नेक नवाब की उदारता और सर्वशक्तिमान ईश्वर की कृपा से, अब तक सब कुछ ठीक रहा है।’

नवाब मुस्कुराया। 'बस यहीं तक? सिर्फ यहीं तक क्यों, आगे क्यों नहीं?'

वज़ीर ने एक फीकी, पीली मुस्कान के साथ कहा, 'पृथ्वी पर ईश्वर की छाया, जो अब स्वर्ग में विश्राम कर रहे हैं, की चमत्कारिक कविता, माननीय नवाब की शुभ स्मरण शक्ति के भीतर अवश्य ही होगी?'

नवाब ने तुरंत सम्राट शाह आलम द्वितीय की प्रसिद्ध कविता का पाठ किया:

परलोक का ज्ञान तो ईश्वर को ही है, फिलहाल तो समय सुखमय बीत रहा है।

‘माननीय महोदय, सब कुछ दर्पण की तरह स्पष्ट है। मुझे पूरा विश्वास है कि पृथ्वी पर ईश्वर की छाया के हृदय में अदृश्य वाणी से कुछ प्रेरणा अवश्य मिली होगी। शायद उन्हें इसका एहसास न हुआ हो, लेकिन संकेत अवश्य था: ‘परलोक’ का अर्थ निश्चित रूप से इसी संसार में भविष्य था, जब उनका ‘लूट लिया जाएगा’, यदि जीवन का खजाना नहीं तो दृष्टि का खजाना अवश्य। मेरे मामले में भी...’

‘हे युवती, ईश्वर का नाम लो! भगवान न करे, तुम्हें ऐसी विपत्तियों का सामना क्यों करना पड़े?’

'जब तक माननीय नवाब की छत्रछाया मेरे सिर पर रहेगी, ईश्वर भी मुझ पर कृपा बनाए रखेगा।'
'अच्छा, ठीक है। ईश्वर ही सबका रक्षक और पालनहार है। लेकिन अपने बारे में कुछ बताइए। क्या आपके साथ सब कुछ ठीक चल रहा है?'
अंततः, नवाब का उद्देश्य छोटी को समझ आ गया। उसके चेहरे पर हल्की सी शर्मिंदगी छा गई और तुरंत गायब हो गई। उसने अपना सिर झुकाया और लगभग फुसफुसाते हुए कहा, 'हे आदरणीय नवाब, आप जानते हैं कि मैं बिलकुल अकेली हूँ। मंझली और आपके दयालु चेहरे को देखकर मेरा हृदय शांत हो जाता है। मेरे पास और कोई नहीं है।'
यह बात पूरी तरह सच नहीं थी, लेकिन वज़ीर के जीवन की वास्तविकताओं पर आधारित थी। मार्स्टन ब्लेक की हत्या की खबर मिलते ही उसके पिता ने उसे औपचारिक शोक संदेश भेजा था, लेकिन घर लौटने के लिए नहीं कहा था। वज़ीर की बड़ी बहन, अनवरी खानम, उसकी सच्ची सांत्वना और दुख में भागीदार थीं और दिल्ली लौटने के बाद से कई बार उससे मिलने आई थीं। लेकिन वज़ीर की असली समस्या का उनका समाधान यही था कि वह अपने पिता के पास वापस चली जाए। उन्होंने कहा, 'मैं वादा करती हूँ कि मैं तुम्हारे लिए एक उपयुक्त विधुर ढूँढूँगी और अगले बारह महीनों के भीतर या उससे भी कम समय में तुम्हारी शादी करवा दूँगी।'
लेकिन वज़ीर को यह बिल्कुल भी मंज़ूर नहीं था। वह अपने भाग्य की खुद मालिक बनना चाहती थी। कोई विकल्प न होने के कारण, बारी ने धीरे-धीरे छोटी से संपर्क कम कर दिया, और अब मंझली ही एकमात्र ऐसी थी जिसके साथ उसके मैत्रीपूर्ण संबंध थे।
स्पष्टतः, नवाब इन घटनाक्रमों से अवगत था। उसका मुख्य उद्देश्य यह पता लगाना था कि क्या वज़ीर ने उसके भविष्य के बारे में कोई विशिष्ट योजना बनाई थी, और यदि हाँ, तो उन योजनाओं का स्वरूप क्या था।
'तो आपने लोगों से मिलना-जुलना छोड़ दिया है। आपकी कोई सामाजिक जिंदगी नहीं है?'
'हे नवाब साहब, स्त्री की पवित्रता की परीक्षा तब होती है जब वह आवरणहीन होती है। क्या मुझे यहाँ कोई ऐसा व्यक्ति दिखाई देता है जिससे मिलना और जानना सार्थक हो?'
'हाँ, मैं यही कहना चाहता था। यहाँ कुछ लोग ऐसे हैं जो आपको जानने के लिए उत्सुक हैं।'
वज़ीर असमंजस में था। क्या नवाब की योजना उसे उसकी बहन के पास भेजने की थी...?
यूसुफ अली खान तुरंत समझ गए कि उनके शब्दों का गलत अर्थ निकाला जा सकता है। उन्होंने तुरंत स्पष्टीकरण देते हुए कहा, 'दिल्ली के कुछ कुलीन और संभ्रांत वर्ग के लोग हैं जिनसे मेरी जान-पहचान है, जिन्होंने आपके बारे में अच्छी बातें सुनी हैं। वे आपसे व्यक्तिगत रूप से मिलने के लिए बेहद उत्सुक हैं।'
वज़ीर ने चैन की सांस ली। वह एक पल रुकी और फिर बोली, 'मैं आपकी सेविका हूँ। मैं आपके आदेश का उल्लंघन नहीं कर सकती।'

'बहुत अच्छा। बहुत अच्छा। अल्लाह आपको सदा सुख प्रदान करे,' यह कहते हुए नवाब ने अपने हाथ से हल्का सा इशारा किया। वज़ीर उस इशारे को देख नहीं पाए, लेकिन पीछे खड़े नवाब के

सहायक ने तिरछी नज़र से इशारा किया कि सभा समाप्त हो चुकी है। वज़ीर उठे, तीन सलाम किए और पीछे की ओर चलते हुए दीवान खाना (सभा कक्ष) से बाहर निकलकर ज़नाना में प्रवेश कर गए।

वज़ीर खानम को पहाड़ी पर स्थित फ्रेज़र साहब के आलीशान और भव्य महल में आमंत्रित किया गया है।

लगभग आठ या दस दिन बाद, नवाब यूसुफ अली खान द्वारा भेजे गए एक लाठी-धारक और एक गदा-धारक वज़ीर के दरवाजे पर नवाब का संदेश और सौ-सौ रुपये से भरे दस थैले लेकर पहुंचे। दयालु नवाब ने अपने हाथ से फ़ारसी में लिखा था कि वज़ीर खानम, जो सदा सुरक्षित रहें, उनकी सुंदरता और समृद्धि में वृद्धि और उनके सौभाग्य की निरंतरता के लिए हमारी प्रार्थनाओं के बाद, कृपया यह पढ़ें कि आने वाले गुरुवार की शाम को, सूर्यास्त के तुरंत बाद अदा की जाने वाली नमाज़ के बाद, दिल्ली की पहाड़ी पर स्थित नवाब विलियम फ्रेजर साहब, कंपनी बहादुर के राज्य के निवासी, के ऊंचे हॉल में कविता और वार्तालाप की एक सभा आयोजित की जाएगी। नवाब मिर्ज़ा असदुल्ला खान साहब, जिनका उपनाम ग़ालिब और उपाधि मिर्ज़ा नौशाह है, अपनी नवीनतम कविताओं के पाठ से सभा को सुशोभित करेंगे। दिल्ली स्थित सभा के चयनित रईस और कुलीन व्यक्ति भी इस समूह की शोभा बढ़ाएंगे। यह वास्तव में खुशी का कारण होगा, यदि वह प्रिय और सम्मानित महिला अपने उन कदमों को चलने का कष्ट दें, जो सौभाग्य और सुख लाने के लिए जाने जाते हैं, और वहां उपस्थित हों।

यहां यह ध्यान देने योग्य है कि आधुनिक दिल्ली के उत्तर-पश्चिम में, कश्मीरी दरवाज़ा और पहाड़गंज के पार स्थित पहाड़ी, अर्ध-वन क्षेत्र, जिसे अब रिज के नाम से जाना जाता है, उन दिनों पहाड़ी कहलाता था। राय सीना हिल और दक्षिण-पश्चिम में स्थित अर्ध-वन पहाड़ी क्षेत्र, जिसे अब नई दिल्ली का हृदय माना जाता है, शाहजहानाबाद शहर से बहुत दूर था और उन्नीसवीं शताब्दी के आरंभिक वर्षों में दिल्लीवासियों के लिए लगभग अस्तित्वहीन था।

नौकरों को उदारतापूर्वक पुरस्कृत करते हुए, वज़ीर ने तुरंत उन्हें अपनी स्वीकृति का पत्र देकर वापस भेज दिया, लेकिन विलियम फ्रेज़र का नाम सुनकर उनका दिल ज़ोर से धड़कने लगा। क्या दिल्ली में कोई ऐसा था जो फ्रेज़र के नाम से परिचित न हो? उन्होंने एक बार अपने साहब से सुना था कि जनरल अख्तरलोनी की मृत्यु (1825 में) के बाद, दिल्ली में नियुक्त एडवर्ड कोलब्रुक साहब भ्रष्टाचार के कई मामलों में फँसे थे। उन्हें निलंबित कर दिया गया और विलियम फ्रेज़र को कार्यवाहक रेजिडेंट बनाया गया। वास्तव में, उनके अपने मट्टन ब्लैक साहब की आशाएँ फ्रेज़र साहब की दीर्घकालिक पदोन्नति और उनके द्वारा खाली किए गए पद को भरने की संभावना पर टिकी थीं। लेकिन अब, जैसा कि फ़ारसी कवि ने कहा था: वह शराब का प्याला टूटा, वह प्याला लाने वाला नहीं रहा। हालाँकि, यह पद अभी भी खाली था। फ्रेज़र साहब, निश्चित रूप से, कार्यवाहक रेजिडेंट के रूप में दिल्ली में अपना दबदबा बनाए हुए थे।

फ्रेजर के बारे में तरह-तरह की अफवाहें फैली हुई थीं। उनमें से एक यह थी कि उन्होंने इस्लाम धर्म अपना लिया था। यह बात शायद सच न हो, लेकिन यह लगभग निश्चित था कि जनरल अख्तरलोनी की तरह फ्रेजर भी भारतीय रीति-रिवाजों में पूरी तरह ढल चुके थे। वे गोमांस या सूअर का मांस नहीं खाते थे और पान, हुक्का और भारतीय इत्र के बेहद शौकीन थे। उन्हें भारतीय शराब उतनी पसंद नहीं थी, लेकिन वे फ्रांसीसी शराब का भरपूर सेवन करते थे। वे

फारसी भाषा में पूरी तरह पारंगत थे और हिंदी कविता में भी उनकी रुचि थी, जिसे उस समय रेखा भी कहा जाता था।

हालांकि, फ्रेजर साहब की अत्याचारी छवि भी थी। उन्होंने किसानों पर भू-कर और वसूली के मामले में इतनी सख्ती बरती कि दिल्ली और आसपास के कई गांव वीरान हो गए और उजाड़ हो गए, क्योंकि किसान उनकी मांगें पूरी न कर पाने के कारण पहाड़ों या अन्य जिलों में भाग गए थे। कहा जाता है कि उनकी जीवनशैली, पहनावा और व्यवहार भारतीय कुलीन वर्ग के समान थे। उनके बैठक कक्ष में सोफे, कुर्सियां, सोफे आदि जैसे यूरोपीय फर्नीचर नहीं थे। बल्कि, वह कालीनों से सजा हुआ था, जहां कालीन नहीं थे वहां मुलायम रजाई बिछी हुई थी, या अक्सर कालीनों के नीचे बिछी होती थी, और तुर्की शैली के दीवान थे। वे हिंदू रीति-रिवाज के अनुसार नंगे पैर अपने ज़नाना और रसोई में प्रवेश करते थे।

कर वसूली के उनके अत्याचारी तरीकों के अलावा, फ्रेजर की जीवनशैली के कुछ ऐसे पहलू भी थे जिन्हें दिल्ली के लोग पसंद नहीं करते थे। उनकी छह-सात पत्नियां थीं और कई लड़के उनके प्रेमी थे। हालांकि दिल्ली में लड़कों से प्रेम करना कोई असामान्य बात नहीं थी, फिर भी वे अपनी मनमानी के लिए जाने जाते थे और अपने दोस्तों या परिचितों से संबंध रखने वालों को बहकाने या उनके साथ बलात्कार करने से भी पीछे नहीं हटते थे।

वज़ीर के शरीर में एक अजीब सी बेचैनी, मानो एक रोमांच सी दौड़ गई। अगर फ्रेज़र साहब मुझे चाहते हैं... तो क्या मुझे उनकी नौकरानियों में से एक बनना मंज़ूर होगा? मत्टन ब्लैक साहब का घर तो बिल्कुल अलग था। वहाँ मैं इकलौती औरत थी। और यहाँ... अल्लाह से माफ़ी माँगती हूँ... ओह, मुझे समलैंगिकों और हिजड़ों से कितनी नफ़रत है... और ऊपर से, यहाँ पहले से ही बहुत सी औरतें मौजूद हैं। मैं ऐसी जगह रहने को तैयार नहीं हूँ जहाँ मुझे किसी बड़े या ऊँचे पद वाले के अधीन रहना पड़े। और मैं कभी भी एक ही घर में या किसी बड़े महल में भी दूसरों के साथ रहना बर्दाश्त नहीं करूँगी।

तो क्या मुझे उस जगह नहीं जाना चाहिए? लेकिन यह ज़रूरी नहीं कि फ्रेज़र साहब मुझमें दिलचस्पी लें। हो सकता है उन्होंने मुझे अन्य आमंत्रितों में से एक के रूप में आमंत्रित किया हो। नवाब साहब ने मुझे बताया था कि बहुत से लोग मुझसे व्यक्तिगत रूप से मिलना चाहते हैं। फ्रेज़र साहब को मुझमें क्या दिलचस्पी हो सकती है? उनके पास अनगिनत प्रेमिकाएँ हैं जो उनके लिए अपनी जान देने को तैयार हैं, और मुझे आश्चर्य नहीं होना चाहिए अगर उनमें से कई मुझसे ज़्यादा सुंदर हों। सच में, मैं खुद को ज़रूरत से ज़्यादा महत्व दे रही हूँ; मैं बेवजह हवाई महल बना रही हूँ। और अगर मैं नहीं गई तो नवाब साहब को कैसा चेहरा दिखाऊंगी? मैंने उन्हें संदेश भेज दिया है कि मैं, उनकी नौकरानी, ज़रूर वहाँ पहुँचूँगी। और वो हज़ार रुपये जो उन्होंने मुझे मुलाक़ात की तैयारी के लिए भेजे थे? क्या मैं उनकी इस उदारता का मूर्खतापूर्ण उदासीनता से जवाब दूँ? लेकिन फिर भी, अगर फ्रेजर साहब... मान लीजिए कि वो कोई इशारा या सुझाव दे ही दें? तब मैं क्या जवाब दूँगी? जवाब? बिलकुल नहीं। जवाब न देना ही हमारे लिए काफी जवाब है। और अगर वो नाराज़ या गुस्सा हो जाएँ? तो क्या हुआ? उन्हें नाराज़ होने दीजिए, मुझे कोई फ़र्क नहीं पड़ता। मैं उनके जैसे आदमियों को अपने जूतों की नोक पर रख दूँगी, वो मेरा क्या बिगाड़ सकते

हैं? नवाब साहब शायद नाराज़ हो जाएँ, लेकिन मैं उन्हें मना लूँगी। अगर मैं नहीं मना पाई, तो मंझली बाजी हैं ना? नवाब साहब उनके हाथों की मोम की तरह हैं। मैं उनसे बीच-बचाव करवा लूँगी। मैं किसी हट्टे-कट्टे, हवस भरे अंग्रेज के हरम में सड़ने वाली नहीं—मौत उसे ले जाए—चाहे वो फ़ारसी ही क्यों न बोलता हो।
अब मुझे अपने जीवन की योजना इस प्रकार बनानी होगी कि मेरे जीवन का वह चक्र, जो बल्क साहब के असमय और अप्रत्याशित निधन से थम सा गया था, फिर से पटरी पर आ जाए और मेरी इज्जत भी सलामत रहे। उन्हें यह नहीं सोचना चाहिए कि मैं उन लोगों में से हूँ जो बाज़ारों में टूटी-फूटी सरकंडे की चौकी पर बैठकर ग्राहकों को लुभाते हैं और जिन्हें ज़रा भी शर्म नहीं होती। शायद कुछ और लोग भी हों, जो अंधे और निर्लज्ज हों, जो दो वक्त के खाने के लिए अपनी इज्जत बेच देते हैं। खैर, मैं उनके जैसा नहीं हूँ।

उन्होंने मंझली बेगम के अस्तबल से एक रथ उधार लिया, दो लाठी-कमान किराए पर लिए और सूरज डूबने से आधा घंटा पहले पहाड़ी की ओर चल पड़ीं। उन्हें रात होने के बाद अकेले लौटने की चिंता सता रही थी। तभी उन्हें एहसास हुआ कि कई और लोग भी लौट रहे होंगे; नवाब यूसुफ अली खान साहब बहादुर भी वहाँ होंगे, वे मुझे सुरक्षित वापस पहुँचा देंगे।
रथ को दो बैल खींच रहे थे, एक काला और दूसरा दूधिया सफेद। उनके सींगों के सिरों पर चांदी और सोने की पन्नी लिपटी हुई थी। उनके शरीर मोतियों से जड़े हुए भारी रेशमी चादरों से ढके थे, और उनके पैरों में पीतल की घंटियाँ लगी थीं। रथ ज़मीन से लगभग तीन फीट ऊँचा था, और अंदर से इतना चौड़ा और ऊँचा था कि महिलाएँ या बच्चे लगभग सीधे खड़े हो सकें। उत्तम गुणवत्ता वाली भारतीय रोज़वुड या सागौन की लकड़ी से बना यह डिब्बे जैसा रथ चारों ओर से बंद था, और इसकी छत सागौन या साल की लकड़ी की मजबूत पट्टियों से बनी थी, जिसे मौसम के अनुसार फेल्ट, छप्पर या अतिरिक्त चंदवा लगाकर हल्का या भारी बनाया जा सकता था। नवाब यूसुफ अली खान के रथ के पहियों को पीतल के फूलों से सजाया गया था और प्रत्येक पहिए के ऊपरी आधे हिस्से पर कीचड़ या पानी के छींटे अंदर जाने से रोकने के लिए मोटे कैनवास के पर्दे लगे थे। किनारों और पीछे की तरफ मखमली पर्दे थे, जिन पर सोने के लटकन खूब लगे थे, और दोनों तरफ की छोटी खिड़कियों से रोशनी और हवा अंदर आती थी, हालांकि ठंड के मौसम में मखमली पर्दे के नीचे जटा का पर्दा लटका दिया जाता था। इसी शैली में, बाहरी मखमली और भीतरी जटा के पर्दों से ढके हुए, प्रवेश और निकास के लिए दो दरवाजे थे। रथ में चढ़ने या उतरने के लिए चौड़ी लकड़ी की सीढ़ियाँ थीं, जिन्हें इस्तेमाल न होने पर सारथी के पास रखा जाता था।
अंदर, फर्श पर मुलायम कालीन बिछे थे, जिन पर यात्रियों के लिए दो गद्देदार कुर्सियाँ रखी थीं। दूसरी तरफ एक बक्सा था, जो नौकर के बैठने की जगह और अतिरिक्त पर्दों, गद्देदार रजाईयों, सूखे मेवों और इसी तरह के खाने-पीने के सामान रखने की जगह के रूप में इस्तेमाल होता था। पेय पदार्थ और पानी के जग बाहर ड्राइवर के बक्से में रखे थे।
पहाड़गंज के खुले ईदगाह और फिर सत्रहवीं शताब्दी के मुस्लिम संत ख्वाजा बाक़ी बि-अल्लाह के

मकबरे से गुज़रते हुए, वज़ीर खानम का रथ पहाड़ी की हल्की चढ़ाई को बड़ी आसानी से पार कर गया। फिर सड़क प्राचीन सराय के पीछे से मुड़ गई, जहाँ से अरावली पर्वतमाला की असली श्रृंखला शुरू होती थी, जिसका दिल्ली की पहाड़ी एक छोटा सा हिस्सा थी। अब चढ़ाई कठिन हो गई थी। संकरी सड़क—वास्तव में एक पगडंडी—के दोनों ओर जंगली बेर, बड़े पत्तों वाले जंगली पलाश, बबूल, फूलदार माल्टी और इसी तरह के कई अन्य पौधों की घनी, कांटेदार झाड़ियाँ थीं। बरसाती मौसम लगभग समाप्त हो चुका था। हवा नम थी, लेकिन भारी नहीं, जो जंगली और प्राकृतिक वनस्पतियों के विकास के लिए अनुकूल थी। इसने पुराने झाड़ियों और पेड़ों को भी हरियाली से भर दिया था। झाड़ियाँ, जो आम तौर पर मुरझाई हुई और विलुप्त होने की कगार पर होती हैं, अब आसपास की खाली जगहों को भरने के लिए फैल रही थीं। सराय की रोशनी, जो अब दूर दिखाई दे रही थी, मंद पड़ गई और फिर गायब हो गई, लेकिन जैसे ही नवाब रेजिडेंट के महल के पास पहुँचे, ऐसा लगा मानो रोशनी का त्योहार हो। महल के पास पहुँचने से पहले ही, सड़क के दोनों ओर रोशनी जगमगा रही थी और मुख्य द्वार गोल-गोल लालटेन और ढोल के आकार के कांच के झूमरों से जगमगा रहा था। सिपाहियों की संगीनें और मुकुट हर जगह चमक रहे थे। कुछ औपचारिक पूछताछ के बाद वज़ीर खानम की गाड़ी को अंदर जाने की अनुमति दे दी गई।

द्वार के अंदर का रास्ता लंबा था और थोड़ा घुमावदार होने के बाद, यह दाईं ओर मुड़ जाता था, जहाँ से रथ को थोड़ी खड़ी ढलान पार करनी पड़ती थी, जिसके बाद रेजिडेंट बहादुर का महल दिखाई देने लगता था। कुछ दूरी से ही एक ऊँचे चबूतरे पर बनी एक विशाल, सफेद इमारत दिखाई देती थी, जिसके सामने एक चौड़ा बरामदा था और पश्चिमी शैली के मेहराबों को सहारा देने वाले गोलाकार और मोटे पत्थर के खंभे थे, जिन पर बरामदे की सफेद छत टिकी हुई थी। प्रत्येक मेहराब से एक झूमर लटका हुआ था और मेहराबों पर प्लास्टर से डिज़ाइन और नक्काशी की गई थी। चारों ओर घनी झाड़ियों और झाड़ियाँ से घिरी हुई, विशाल, सफेद और अच्छी रोशनी से जगमगाती हवेली मक्खन और क्रीम से बने किसी अंग्रेजी केक जैसी लग रही थी।

घर का बाहरी हिस्सा एक मजबूत, किले जैसी संरचना को छुपाता था। दिन के उजाले में हवेली को देखने पर ही इसकी किलेबंदी का कुछ अंदाजा लगाया जा सकता था। फ्रेजर ने इसके निर्माण के पूरा होने के बाद हिजरी 1235 (1819-1820) में अपने पिता को लिखे पत्र में कहा कि उन्होंने 'एक पहाड़ी की चोटी पर एक बड़ा सफेद घर बनाया है, जिसकी चोटी से उन्हें दिल्ली का विस्तृत दृश्य दिखाई देता है'। कहा जाता है कि यह घर उस स्थान पर बनाया गया था जहाँ पाँच शताब्दियों पहले तैमूर लंगड़ा ने दिल्ली पर आक्रमण करने से पहले अपना पहला शिविर लगाया था। किसी ने तो फ्रेजर के घर के बारे में हिंदी में एक कविता भी लिखी थी, जो 1820 के दशक के आरंभ में काफी लोकप्रिय हुई थी।

बारह या चौदह फुट चौड़े बरामदे के सामने एक खुला पोर्टिको था। रथ वहीं रुका। कई लोग घोड़ों की लगाम पकड़े हुए दिखाई दे रहे थे। दूसरी तरफ, कुछ रथ और पालकी, एक अंग्रेजी शैली की गाड़ी जिसे चारेट कहते हैं, और एक बंद बग्गी खड़ी थी, जिनके चालक या भारवाहक उनकी रखवाली कर रहे थे। अधिकांश सेवक नारियल नामक पुराने जमाने का हुक्का पी रहे थे, जबकि

कुछ लोग शराब का आनंद ले रहे थे। बरामदा एक बड़े, ऊँची छत वाले कमरे में खुलता था, जिसके तीन दोहरे दरवाजे, जो स्वयं भी काफी ऊँचे थे, भारी पर्दों से ढके हुए थे। दरवाजों के पीछे से सौहार्दपूर्ण बातचीत की आवाजें सुनाई दे रही थीं।

पोर्टिको में तैनात वर्दीधारी सेवक तेजी से आगे बढ़ा और वज़ीर खानम के रथ का पर्दा उठाया, सलाम करते हुए झुका और विनम्र और आदरपूर्ण स्वर में बोला: 'कृपा करके उतरें। बिस्मिल्लाह।' वज़ीर ने अपना चौड़ा दुपट्टा संभालते हुए गाड़ी से नीचे उतरीं। एक अन्य द्वारपाल ने बीच वाले दरवाजे पर लगे पर्दे का एक हिस्सा हटाया और घोषणा की: 'माननीय वज़ीर खानम साहब आ गए हैं।'

जैसे ही घोषणा समाप्त हुई, वज़ीर बरामदे की पहली सीढ़ी पर उतरे और उसी क्षण विलियम फ्रेजर नवाब निवासी बहादुर स्वयं भी बाहर आ गए। स्वागत में दोनों हाथ फैलाते हुए, उन्होंने मुस्कुराते हुए फ़ारसी में कहा: 'स्वागत है! और फिर से स्वागत है! वास्तव में आपका आना मेरे दिल को खुशी से भर गया है।'

उन्होंने अरबी का एक विशेष मुहावरा और फ़ारसी कविता की एक प्रसिद्ध पंक्ति का प्रयोग किया था; वे स्पष्ट और धाराप्रवाह बोल रहे थे, लेकिन किसी फ़ारसी या भारतीय मूल के वक्ता की तरह नहीं। उनकी आवाज़ भारी थी, उसमें थोड़ी सी गड़गड़ाहट थी, जैसा कि सभी फिरंगियों के साथ हिंदी या फ़ारसी बोलते समय होता है। वज़ीर खानम ने सलाम में सिर झुकाया और बिना किसी प्रसन्नता या विनम्रता का संकेत दिए फ़ारसी में उत्तर दिया: 'महामहिम, वरिष्ठ साहब बहादुर, मैं आपकी दीन सेविका हूँ और मैं सदा आपकी समृद्धि के लिए प्रार्थना करूँगी।'

फ्रेजर ने हिंदी में बोलना शुरू किया। “आँखें और दिल आपके लिए कालीन की तरह बिछे हैं। कृपया अंदर आइए,” फ्रेजर ने गंभीरता से कहा, यह जताने के लिए कि वह जिन वाक्यों का प्रयोग कर रहे थे, वे केवल स्वागत के औपचारिक तरीके नहीं थे।

उन्होंने वज़ीर को खुले दरवाजे से अंदर आने का इशारा किया और खुद भी दरवाजे की ओर मुड़ गए, अपने प्रिय अतिथि का मार्गदर्शन करते हुए। वज़ीर खानम अब उनके पीछे थीं। उन्होंने देखा कि फ्रेज़र थोड़ा लंगड़ाकर चल रहे थे। उन्होंने फ्रेज़र के कई युद्धों में भाग लेने के बारे में सुना था, लेकिन उन्हें कभी किसी घाव के बारे में जानकारी नहीं थी।

वज़ीर ने उन्हें पहली बार देखा था। उनकी उम्र पचास से ज़्यादा होनी चाहिए थी, लेकिन वे स्वस्थ थे और उनका शरीर सुगठित और एथलेटिक था, इसलिए वे पैंतालीस से ज़्यादा उम्र के नहीं लग रहे थे। फिर भी, वज़ीर को वे काफ़ी उम्रदराज़ लग रहे थे। उन्हें यह देखकर भी थोड़ी हैरानी हुई कि वे लंबे नहीं थे, यहाँ तक कि भारतीय मानकों के अनुसार भी नहीं, क्योंकि एक औसत भारतीय एक औसत अंग्रेज़ से छोटा होता है। फिर भी, फ्रेज़र साहब की लंबाई एक औसत भारतीय से भी कम लग रही थी। उनकी मूंछें लाल-भूरी और घनी थीं, जिनमें मुस्लिम और राजपूती दोनों शैलियों की झलक थी। घनी मटन-चॉप मूंछें ठुड्डी को छूते हुए भूरी दाढ़ी में बदल जाती थीं। दाढ़ी को बीच से राजपूती शैली में बाँटा गया था और ऊपर की ओर कंघी करके ठुड्डी पर एक स्पष्ट मांग रेखा बनाई गई थी। लेकिन ठुड्डी में वह मजबूती नहीं झलक रही थी जिसे आम तौर पर दृढ़ और संकल्पित मानसिकता का संकेत माना जाता है, और घनी मूंछें भी ठुड्डी की

कमजोरी को छुपाने में सफल नहीं हुईं।
फ्रेजर की बड़ी, भावपूर्ण आँखें थीं, सुगठित सीधी नाक थी, और होंठ सामान्य से थोड़े मोटे थे, लेकिन पान के पत्तों की लालिमा के कारण आकर्षक लग रहे थे। उनके मुस्कुराते चेहरे से हास्यबोध और हंसी-मजाक का आनंद लेने की क्षमता झलकती थी, लेकिन उनकी आँखों में एक शरारती चमक थी; अत्यधिक शराब पीने से उनका चेहरा थोड़ा फूला हुआ था, जो उनके जीवंत चेहरे से कुछ मेल नहीं खाता था। उनका पहनावा पूरी तरह से भारतीय था: दिल्ली के सुदूर दक्षिण-पश्चिम में स्थित औरंगाबाद में ही बनने वाले प्रसिद्ध सूती कपड़े हिमरू की संकरी पतलून, और तनजेब नामक महीन सूती कपड़े का एक लंबा कुर्ता। यह कपड़ा हमेशा चमकदार सफेद होता था और इतना कसकर बुना हुआ होता था कि उंगलियों से छूने पर कागज जैसा लगता था। कुर्ते के ऊपर, उन्होंने काले मखमल का एक महंगा नीमा पहना हुआ था - एक लंबी आस्तीन वाला लेकिन छोटा ऊपरी वस्त्र जिसकी आस्तीन नीचे से कटी हुई थी, जिससे वे लटकती रहती थीं। इसके ऊपर, उन्होंने कुछ-कुछ अंग्रेजी शैली का दिखने वाला एक घरेलू लबादा पहना हुआ था; उस पोशाक में बटन तो थे, लेकिन कोई भी बटन लगा हुआ नहीं था और उसकी आस्तीनें बहुत छोटी थीं, जिससे नीमा की कटी हुई आस्तीनें दिखाई दे रही थीं। उसके हाथों की दस में से आठ उंगलियों में कीमती अंगूठियां थीं और उसके सुगठित गले में सफेद मोतियों का एक लंबा हार लटका हुआ था। उसने ऊँची और नुकीली उंगलियों वाले जोधपुरी जूते पहने थे, जिन पर सोने की बारीक कारीगरी की गई थी। उसके सिर पर लाल रंग की मुड़ी हुई रेशम की एक छोटी पगड़ी थी, जिस पर छोटे-छोटे काले फूल छपे हुए थे।
संक्षेप में कहें तो, विलियम फ्रेजर देखने में दिल्ली के एक धनी रईस की तरह ही दिखते थे।

फैनी पार्क्स ने इलाहाबाद के जीवन का एक जीवंत चित्रण प्रस्तुत किया है।

वे एक छोटे जुलूस की तरह कमरे में दाखिल हुए: फ्रेजर कुछ तेज़ गति से चल रहा था, उसके पीछे वज़ीर खानम ऐसे चल रही थी मानो वह कोई राजकुमारी हो और फ्रेजर उसका दूत। अंदर जाकर उसने पाया कि कमरा बहुत बड़ा था, इतना बड़ा कि तेज़ रोशनी के बावजूद भी वह एक नज़र में दूर का सिरा नहीं देख पा रही थी। छोटी बेगम थोड़ी घबराई हुई थी; ठंडी हवा के बावजूद उसे डर था कि कहीं उसे पसीना न आ जाए। उसके कदम एक पल के लिए लड़खड़ा गए, लेकिन फिर उसने खुद को संभाला और अपनी सामान्य सहज, लयबद्ध चाल से चलने लगी।

मेहमानों में भारतीय और अंग्रेज लगभग बराबर संख्या में थे। कुछ ही महिलाएं थीं, और वे सभी अंग्रेज थीं। बरसात के मौसम के बीतने की हल्की नमी और ठंडक के बावजूद, कमरे का वातावरण सुखद रूप से गर्म था, और उत्तम गुणवत्ता वाले खमीरा तंबाकू की सुगंध - किण्वित सेब या अनानास के रस को तंबाकू के पेस्ट में मिलाकर तैयार किया गया तंबाकू, जिसे बड़े ही सलीके से हुक्के में पिया जाता था - अंग्रेजी शराब की मधुर सुगंध के साथ मिलकर एक सुखद खुशबू बना रही थी।

वज़ीर जैसे ही कमरे में दाखिल हुई, जो दोस्ताना और सहज बातचीत से गुलजार था, मानो सब कुछ थोड़ा धीमा हो गया हो। औरतें, मर्द, सबकी निगाहें उसकी ओर खिंची चली गईं, उससे पहले खुद फ्रेज़र भी आ चुके थे। वज़ीर, मानो सबकी निगाहों से बेपरवाह, गरिमा और बिना किसी हड़बड़ी के मजबूती से कदम बढ़ाती रही। उसने हल्के पीले रंग की पतलून पहनी हुई थी, जो बुलबुल चश्म (बुलबुल की आंखें) नामक रेशमी कपड़े से बनी थी, क्योंकि उस पर छपा प्रिंट बुलबुल पक्षी की गोल, थोड़ी चंचल दिखने वाली आंखों जैसा लगता था। उसकी पतलून पर मोर के नीले और सुनहरे रंग का प्रिंट था। रिवाज के विपरीत, उसकी पतलून काफी तंग थी, खासकर जांघों के नीचे से, पिंडलियों तक और टखनों तक जाती हुई। पतलून थोड़ी खुली हुई थी, लेकिन उसमें जरा भी भद्दापन या परिष्कार की कमी नहीं थी। ऐसी पतलून का तकनीकी नाम 'आरा' है, जिसका अर्थ है 'तिरछा'। वज़ीर ने यह शैली राजपूताना के कथक नर्तकों से सीखी थी, जो इस तरह के पतलून के ऊपर एक बहुत चौड़ी स्कर्ट पहनते थे ताकि जब वे गोलाकार गति में तेजी से घूमते थे, तो स्कर्ट लहराती थी, जिससे आरा पतलून और कमर के नीचे शरीर का आकार दिखाई देता था।

वज़ीर ने अपनी पतलून के ऊपर एक जमाह पहना हुआ था, जो कथक नर्तकियों के स्कर्ट के समान, लेकिन उससे अधिक चौड़ा और ढीला एक गाउन जैसा था। यह तीस फीट तक चौड़ा हो सकता था, जो स्तनों और सीने के नीचे अनगिनत छोटी-छोटी सिलवटों में कसकर इकट्ठा होता था। जमाह आमतौर पर सूती कपड़े का बना होता था, लेकिन वज़ीर ने बैंगनी रंग का एक महीन, लगभग रेशमी कपड़ा चुना था। (संयोग से इस कपड़े को भी आरा कहा जाता था।) जमाह की पारदर्शिता के कारण, यदि कोई इतनी देर तक देखने की हिम्मत करे, तो जांघों और पिंडलियों की सुडौल आकृति और नीचे पतलून पर छपे नाजुक, छोटे प्रिंट की रंगीनता को देखा जा सकता था।

वज़ीर ने अपने शरीर पर, यानी स्तनों और उनके ठीक नीचे, एक बिना आस्तीन का बेहद नीचा कुर्ता ओढ़ रखा था, जो मशहूर ढाका मलमल से बना था और उस पर सोने के बारीक फूलों की कढ़ाई थी। कुर्ते के नीचे काले मखमल की चोली थी—यह भी राजपुताना शैली में थी—जिसके आगे और पीछे के गले और आस्तीनों पर सोने के धागे और बारीक कारीगरी की गई थी। इस बार भी उसने जालीदार दुपट्टा ओढ़ा था, लेकिन यह पहले से कहीं ज़्यादा भारी था, जो आसमानी नीले ब्रोकेड से बना था। इतना भारी दुपट्टा उसके धड़ पर कैसे टिका हुआ था, यह बात वज़ीर के लिए भी समझना मुश्किल होता; यह उसके सिर और स्तनों को ऐसे ढके हुए था जैसे चाँद की रोशनी को और भी ज़्यादा चमकाने वाला नीला प्रभामंडल।

दुपट्टा उनके सिर पर सलीके से लिपटा हुआ था, जिसकी एक बड़ी वजह उनकी सहजता थी। उनके लंबे, घने बाल, कुछ लंबी गुंथी हुई लटों में पिरोए मोती और लंबी चोटियों को थोड़ा-बहुत संभालने वाली जाली दुपट्टे के नीचे से साफ दिखाई दे रही थी। उन्होंने माथे पर सोने का अर्धचंद्राकार मुकुट पहना हुआ था, जिसमें कैट्स आई, नीलम, गुलाबी माणिक और सफेद मोती जैसे छोटे-छोटे रत्न जड़े हुए थे। उनकी मुस्कुराती हुई, भावपूर्ण आंखों के निचले पलकों और कोनों पर काजल की हल्की सी लकीर लगी हुई थी। आभूषणों में उन्होंने हीरे और नीलम से जगमगाते लंबे झुमके और सफेद मोती और गहरे हरे पन्ना से जड़ी भारी नथनी पहनी हुई थी। गले में एक छोटी सी लाल माणिक एक पतली, नाजुक चेन में लटकी हुई थी, साथ ही सात लड़ियों वाला मोतियों का हार भी था। उनकी कलाई पर ठोस सोने के कंगन थे जिनके सिरे मगरमच्छ के आकार के थे। कंगन के दोनों ओर उसने नाजुक कांच की चूड़ियाँ पहनी हुई थीं जिन पर सोने की कुछ बारीक रेखाएँ उकेरी गई थीं।

पैरों में चांदी की पायल थी, जिन पर छोटी-छोटी घंटियाँ लगी थीं, और जकूज़ी के चप्पल जैसे जूते थे जिनमें एड़ियों को सहारा देने के लिए पीछे का हिस्सा नहीं था। जूतों का ऊपरी हिस्सा इतना छोटा था कि पैरों पर बनी मेहंदी की रेखाओं, बिंदुओं और छोटी पत्तियों के डिज़ाइन की झलक दिखाई दे रही थी। उसकी उंगलियाँ लंबी और पतली थीं, और दाहिनी तर्जनी और बाईं मध्यमा उंगली पर पीले हीरे और पीले पुखराज की सोने की अंगूठियाँ थीं। उसकी सधी हुई और संतुलित, लेकिन धीमी चाल हाथों और पैरों की कोमलता और एक सुंदर, सुगठित शरीर की सौम्यता को दर्शाती थी।

उस सुखद, रोशनी से जगमगाते हॉल में ऐसा लग रहा था मानो वज़ीर खानम के शरीर के चारों ओर कोमल रोशनी नाच रही हो, और उस खुशनुमा रात का गहरा नीला रंग उन पर इस तरह खेल रहा हो मानो वह महज़ एक स्त्री नहीं, बल्कि कोई अलौकिक आत्मा हों। वह औसत भारतीय युवती से थोड़ी लंबी थीं, और उनके कदम बिना किसी झिझक के, पूरे आत्मविश्वास के साथ कालीन पर पड़ रहे थे। उनकी चाल में एक मनमोहक प्रवाह था, मानो यमुना नदी की कोमल लहरों पर एक सुंदर तोरी तैर रही हो।

अचानक, कमरे के दूसरे छोर से एक फिरंगी महिला अंग्रेज़ी में कुछ ज़ोर से बोलने लगी। चारों ओर सन्नाटा छा गया। शराब और मदिरा परोसने वाले (जो लोग शराब और मदिरा परोसते थे, उन्हें भी मदिरा वाहक कहा जाता था) जो बड़े हॉल में सम्मानपूर्वक शराब या मदिरा की बोतलों

या मसालों से भरी थालियों में रखे जगमगाते हुए या हुक्का और उसके सामान को ऊपर उठाए घूम रहे थे, वे सब अपनी जगह पर रुक गए। वज़ीर ने ध्यान से सुना और पाया कि वह महिला एक कविता सुना रही थी। आवाज़ साफ़ और मधुर थी, लेकिन उसमें पेशेवर कवियों की गूंज नहीं थी। वज़ीर ने बल्क साहब की संगति में थोड़ी-बहुत अंग्रेज़ी सीख ली थी, लेकिन उसे अंग्रेज़ी कविता और उसकी सुंदरता का कोई ज्ञान नहीं था। अंग्रेज़ महिला अपनी सीट से उठकर मुस्कुराते हुए उसके पास आई और बोली:
वह रात की तरह सुंदरता से चलती है, जैसे बादलों से रहित आकाश और तारों से जगमगाते आसमान में; और अंधेरे और उजाले की सभी बेहतरीन चीजें उसके रूप और उसकी आँखों में मिलती हैं।
वज़ीर को बेशक यह पता नहीं था कि ये पंक्तियाँ उस समय के सबसे प्रसिद्ध अंग्रेज़ी कवि लॉर्ड बायरन ने लिखी थीं, लेकिन उन्हें यह ज़रूर समझ आ गया था कि ये पंक्तियाँ उस महिला ने उनकी प्रशंसा में कही थीं। एक पल के लिए उन्हें शर्मिंदगी महसूस हुई और उनका चेहरा थोड़ा लाल हो गया, लेकिन कविता समाप्त होते ही अंग्रेज़ों ने ज़ोरदार तालियाँ बजाईं और भारतीयों ने 'वाह वाह!', 'सचमुच, केवल ईश्वर ही हर दोष से मुक्त है!' कहकर जवाब दिया, और उन्हें एहसास हुआ कि शोरगुल भरी प्रतिक्रिया ने उनकी शर्मिंदगी को ढक लिया होगा।
वज़ीर अंग्रेज़ महिला की ओर थोड़ा तेज़ी से बढ़ीं, और महिला स्वयं भी आगे आकर उनका अभिवादन करने लगीं। उन्होंने धाराप्रवाह और सहज हिंदी में कहा, "आइए, कृपया आइए, वज़ीर खानम साहब। हम सभी आपके आने का इंतज़ार कर रहे थे। मैं फैनी पार्क्स हूँ, इलाहाबाद में रहती हूँ। आशा है आपको मेरी कविता पढ़ने में कोई आपत्ति नहीं हुई होगी?"
नहीं...नहीं। दुखी होने की कोई बात नहीं है। मैं आपको अपना अभिवादन अर्पित करता हूँ।
वज़ीर का हाथ अपने हाथ में लेकर, फैनी पार्क्स उसे उस दीवान तक ले गईं जहाँ वह बैठी थीं।
'आओ, कृपया यहाँ बैठो। तुम्हारी चाल इतनी मनमोहक थी कि बायरन साहब की कविता मुझे अनायास ही याद आ गई... हे भगवान, तुम्हारे हाथ कितने कोमल, कितने सुंदर हैं, और तुमने अपने हाथों पर जो फूलों की आकृतियाँ बनाई हैं, क्या उनका कोई नाम है? क्या मैं सही कह रही हूँ? यह एक सुंदर नाम है।'
'हां, इन्हें निगार कहते हैं।'
'जी हां, नीगर, कितना प्यारा शब्द है! और कृपया, आपके कपड़े आपके शरीर पर बहुत अच्छे लग रहे हैं! हमारी पोशाकें हमें पिंजरे में बंद कबूतरों जैसा महसूस कराती हैं। सच में, मैंने ये स्कर्ट और टोपी मजबूरी में पहनी है।'
फैनी पार्क्स कद में छोटी और थोड़ी गोल-मटोल थीं, उनकी गहरी भूरी आँखें चमकीली थीं और बुद्धिमत्ता, सौम्य स्वभाव और एक निश्चित स्वतंत्र भावना को दर्शाती थीं। अंग्रेज़ महिलाओं के आम तौर पर भद्दे पहनावे को देखते हुए उनका पहनावा भी बुरा नहीं था। उनके खुले और सहज व्यवहार ने वज़ीर की झिझक को कम करने में मदद की। जिस सोफे पर वे दोनों बैठी थीं, उस पर पहले भी एक महिला सो चुकी थीं: वह एक अपेक्षाकृत वृद्ध फिरंगी महिला थीं। वह ज्यादा बात नहीं करती थीं, लेकिन फैनी और वज़ीर को एक-दूसरे से बात करने में आनंद आया। वज़ीर को

पता चला कि फैनी के पति इलाहाबाद में बर्फ़ कारखाने के प्रबंधक थे। फैनी मेमसाहिब को यात्रा का शौक था और वह भारतीय रीति-रिवाजों और जीवन शैली से मुग्ध थीं। अपने पति को इलाहाबाद में छोड़कर, वह नाव से आगरा गई थीं और वहाँ के दर्शनीय स्थलों और स्मारकों का आनंद लेने के बाद, उसी नाव से दिल्ली लौट आई थीं और फ्रेजर साहब के यहाँ रह रही थीं। फैनी ने वज़ीर से अपने बारे में कुछ नहीं पूछा और बस अपने बारे में ही बातें करती रही। उदाहरण के लिए, उसने आगरा और इलाहाबाद के मुगल किलों की तुलना करते हुए दोनों की खूबियों का वर्णन किया; उसने गंगा और यमुना की तुलना की और वज़ीर को दोनों नदियों के जल के गुणों के बारे में बताया। उसने इलाहाबाद के लोगों की बहुत प्रशंसा की और कहा कि उनकी वाणी और आवाज़ दोनों ही मधुर और कोमल हैं। वहाँ के नौकर चोरी नहीं करते थे और इलाहाबाद के आम और खरबूजे—तरबूज और कस्तूरी खरबूजा—अत्यंत स्वादिष्ट थे।

फैनी पार्क्स और उनके पति यमुना नदी के किनारे एक ऊंचे स्थान पर बने एक बड़े घर में रहते थे, जहाँ से चारों ओर का मनमोहक दृश्य दिखाई देता था। वे यमुना नदी के हरे पानी को दूर-दूर तक तेज़ लहरों के साथ उठते-गिरते देख सकती थीं। नदी में मगरमच्छ, बड़ी-बड़ी मछलियाँ खाने वाले घड़ियाल, मीठे पानी के डॉल्फ़िन और विशाल कछुए बहुतायत में पाए जाते थे। फिर, सर्दियों के मौसम में, अनगिनत प्रवासी पक्षियों का आगमन और महीनों तक दोनों नदियों के संगम के आसपास उनका घोंसला बनाना एक अविस्मरणीय और अनूठा दृश्य था, जो कभी पुराना नहीं होता था; वहाँ रंगों, शोर और हलचल का भी अद्भुत नज़ारा होता था। और उस अनोखे पक्षी, कौवे जैसे तीतर, जो बड़ा, वृक्ष पर रहने वाला, आधा काला और आधा लाल होता है, और सारस, यानी मोर, को तो साल भर देखा जा सकता था।

उन्होंने आगे बताया कि शाम के समय शाहजहानी मस्जिद जगमगाती रहती थी और सूर्यास्त की खामोशी में नमाज़ की मधुर अज़ान आसानी से सुनाई देती थी। (यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि सितंबर 1857 में इलाहाबाद पर पुनः कब्ज़ा करने के बाद अंग्रेजों ने इस मस्जिद को नष्ट कर दिया था।) शहर और पार्क्स के निवास के बीच किदगंज और मुट्ठीगंज नाम के दो गाँव थे। (किदगंज को अब किटगंज के नाम से जाना जाता है और ये दोनों गाँव अब शहर के सबसे घनी आबादी वाले क्षेत्रों में से हैं।) इसलिए, यदि किसी को शहर जाना होता था, तो उसे यात्रा की योजना इस प्रकार बनानी पड़ती थी कि सूर्यास्त से पहले वापसी संभव हो सके।

आलोपीबाग नाम का एक उपनगरीय इलाका था, जहाँ वार्षिक मेले और दशहरा उत्सव के दौरान खूब चहल-पहल और रौनक रहती थी। उस समय दिन-रात लगभग एक जैसे ही होते थे। साल में एक या दो बार आलोपीबाग स्थित मंदिर के सामने खुले मैदान में सती प्रथा का पालन किया जाता था। कहा जाता है कि सती स्वेच्छा से अपनी जान देने के लिए तैयार होते थे; हालाँकि कंपनी अक्सर इसे रोकने में सफल रहती थी, लेकिन कभी-कभी भीड़ बेकाबू हो जाती थी और कभी-कभी विधवा—स्वयं सती माता—अपने पति के साथ आत्मदाह करने पर अड़ी रहती थी, जिससे कंपनी के सैनिक इस भयावह घटना को रोकने में असमर्थ हो जाते थे।

अपनी वाचालता और वज़ीर से संवाद करने की तीव्र इच्छा से प्रेरित होकर, फैनी पार्क्स वहाँ मौजूद अन्य लोगों की परवाह किए बिना लगातार बोलती रहीं। वज़ीर को फैनी का वृत्तांत रोचक

लगा; वह एक अच्छी श्रोता थीं, लेकिन बीच-बीच में दूसरों, विशेषकर उपस्थित भारतीयों की ओर भी नज़र डालती रहीं। फ्रेज़र साहब ने फैनी पार्क्स को फैनी पार्क्स की देखरेख में छोड़कर अब अन्य अतिथियों का ध्यान रख रहे थे।

इलाहाबाद के अपने जीवंत वर्णन के दौरान, फैनी कभी-कभी अचानक विषय से भटककर वज़ीर के वस्त्र या आभूषणों की प्रशंसा में कुछ शब्द कह देती थी। कभी-कभी वह अपनी नाक की नथनी की चमक का आनंद लेते हुए अपने चेहरे को छूती और फिर अपने विषय पर लौट आती। एक रोचक और कुछ विचित्र बात जो उसने बताई, वह यह थी कि यद्यपि कंपनी के शासन में इलाहाबाद में अधिक सुरक्षा और कम नागरिक समस्याएं थीं, फिर भी गंगा के उस पार रहने वाले और अवध के राजा की प्रजा, इलाहाबाद आना पसंद नहीं करते थे और कंपनी के शासन के बजाय राजा के शासन को प्राथमिकता देते थे।

'क्यों? ऐसा क्यों होना चाहिए, फैनी मेमसाहिब?' वज़ीर ने पूछा।

फैनी पार्क्स कुछ देर तक सोच में डूबी रहीं, फिर धीरे से बोलीं: "असल बात तो यह है कि शहरवासी कंपनी के शासन में सुख-सुविधाओं से रहते हैं, लेकिन गाँव के लोगों को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। कंपनी ने भू-राजस्व की दरें बढ़ा दी हैं, जमींदार और किसान के बीच संबंध अच्छे नहीं हैं, स्थानीय कारीगर बेरोजगार हैं... लेकिन इन सब बातों को छोड़ दें, दुनिया ऐसी ही है।"

वज़ीर इस मामले में और अधिक जानकारी जुटाना चाहती थी। वह यह भी जानना चाहती थी कि फैनी मेमसाहिब के बच्चे हैं या नहीं, और यदि हैं तो कितने? और उनके साहब इस समय कहाँ हैं? क्या वे मेहमानों में शामिल हैं? लेकिन वह जानती थी कि निजी सवाल पूछना अंग्रेजों के बीच शिष्टाचार के विरुद्ध और अनुचित माना जाता है। वज़ीर ने सोचा कि शायद यही कारण था कि फैनी मेमसाहिब ने अपने निजी मामलों के बारे में पूछने में संकोच किया। या हो सकता है कि उन्हें पहले से ही सब कुछ पता हो। बेशक, उन्हें बल्क साहब के बारे में तो पता ही होगा।

युग के महानतम कवि, मिर्ज़ा असदुल्ला खान ग़ालिब ने इस भव्य सभा में एक कविता का पाठ किया।

वह इन्हीं विचारों में डूबी हुई थी कि तभी दरवाजे पर घोषणा हुई: 'दिव्य उपस्थिति, दिलावर-उल मुल्क, नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान बहादुर आ गए हैं।'

फ्रेजर तुरंत बाहर गए और एक बेहद खूबसूरत, लंबे, मजबूत कद-काठी वाले और शानदार वस्त्र पहने युवक के कंधे पर हाथ रखकर लौटे। वहाँ मौजूद अधिकांश लोग उनका अभिवादन करने के लिए खड़े हो गए। यहाँ तक कि जो लोग नहीं खड़े हुए, उन्होंने भी हिंदी या अंग्रेजी में उनका स्वागत किया। उस समय शम्सुद्दीन अहमद खान की उम्र इक्कीस या ज़्यादा से ज़्यादा बाईस रही होगी, लेकिन उनके चेहरे पर धन और कुलीनता का घमंड और अनुभव की परिपक्वता झलकती थी।

शम्सुद्दीन अहमद खान के सिर पर मुगल कुलीन वर्ग की पसंदीदा शैली में लिपटी हुई, थोड़ी उभरी हुई पगड़ी थी। उनकी पगड़ी के चारों ओर कलात्मक रूप से बुना हुआ एक सरपेच था—लगभग ढाई इंच चौड़ा और साढ़े तीन गज लंबा ब्रोकेड या रेशम का पट्टा। उन्होंने सामान्य प्रथा से हटकर अपने सरपेच पर एक विशाल बदख्शानी माणिक जड़ा हुआ था, जो लगभग कबूतर के अंडे के आकार का था और एक तराशा हुआ कैबोचोन था, जो अत्यधिक पॉलिश किया हुआ था और कमरे की सभी रोशनी में चमक रहा था।

ठंडे मौसम की परवाह न करते हुए, उन्होंने तंज़ेब का शुद्ध सफेद कुर्ता पहना हुआ था। इसके ऊपर उन्होंने कश्मीरी ऊन से बनी भारी कढ़ाई वाली नीमा पहनी थी, जिसे जामवार कहते हैं। कुर्ते और नीमा की कटिंग उस समय के फैशन के अनुरूप थी: कुर्ते के नीचे से उनके दाहिने स्तन का कुछ हिस्सा दिखाई दे रहा था। उनके गले में सात लड़ियों का मोतियों का हार था और कमर पर जटाधारी कमरबंद था; कमरबंद में सोने और रत्नों से सजी कटार लगी हुई थी।

उनकी ब्रोकेड की पतलून तंग थी, लेकिन उन्होंने उसके ऊपर कोई जामा नहीं पहना था, जिससे उनकी मांसल जांघों और पिंडलियों की बनावट साफ दिखाई दे रही थी। उनका रंग बेहद गोरा था और उनकी बड़ी-बड़ी आंखें उनके ट्रांसॉक्सिया मूल की झलक दे रही थीं। उनकी दाढ़ी मुगल शैली में कटी हुई थी, बहुत लंबी नहीं बल्कि नुकीली; मूंछें घनी नहीं थीं, लेकिन उभरी हुई थीं। उनके हाव-भाव, चेहरे पर शांत और आत्मविश्वास से भरे भाव, उनकी प्रभावशाली पुरुष उपस्थिति, चाल-ढाल और समग्र व्यवहार से जो समग्र प्रभाव उत्पन्न हुआ, वह शक्ति, गरिमा और कुलीनता का ऐसा प्रदर्शन था कि उस विशाल कमरे में, जहां मेहमानों द्वारा पहने गए आभूषणों का न्यूनतम मूल्य लाखों रुपये से अधिक रहा होगा, हर कोई एक पल के लिए महत्वहीन हो गया। यहां तक कि फ्रेजर, जिनका शम्सुद्दीन अहमद खान से नियमित संपर्क और बातचीत होती थी, भी कुछ स्तब्ध और फीके से दिखाई दिए।

नवाब के पीछे, दो लाठीधारक निडर होकर कक्ष में प्रवेश कर गए, हालाँकि अतिथियों के परिचारकों को आमतौर पर अंदर जाने की अनुमति नहीं थी। अब जब शम्सुद्दीन अहमद खान ने उन्हें उंगलियों से संक्षिप्त इशारा किया, तो उन्होंने तीन सलाम किए और पीछे हटते हुए चले गए।

विलियम फ्रेजर ने नवाब को एक प्रमुख स्थान पर बैठाया ही था कि वे अपने हाथों से उन्हें हुक्का का चांदी का मुखपत्र भेंट कर रहे थे कि तभी दरवाजे पर घोषणा सुनाई दी: 'नवाब मिर्जा असदुल्ला खान साहब!'

विलियम फ्रेजर तुरंत बाहर गए और पल भर में नवाब मिर्जा असदुल्ला खान ग़ालिब का हाथ थामे वापस आ गए। चारों ओर से अभिवादन और शुभकामनाएँ आ रही थीं।

‘मेरी प्रस्तुतियाँ!’

‘माननीय नवाब साहब, आपका सेवक!’

‘कृपया इधर आइए, आपने हमें बहुत देर तक इंतजार कराया!’

वज़ीर ने गौर किया कि नवाब शम्सुद्दीन अहमद के प्रवेश द्वार पर ऐसा भव्य स्वागत और अभिवादन नहीं हुआ था। मिर्ज़ा साहब लंबे, ऊंचे माथे वाले, चमकीली और मुस्कुराती आंखों वाले, चौड़े सीने वाले, लंबी कलाइयों वाले और सीधे गर्दन वाले थे। उनकी चाल में आत्मविश्वास और संयम झलकता था, लेकिन घमंड या आत्म-प्रशंसा का कोई नामोनिशान नहीं था। उनका रंग बेहद गोरा था, जिसमें हल्की सुनहरी चमक थी—इस दुर्लभ रंग का तकनीकी नाम 'मैदाह साहब' ('लाल कुसुम के रस से गूंथा हुआ उत्तम पिसा आटा') था—उनके चेहरे पर दाढ़ी नहीं थी, लेकिन तुर्कमेन शैली में कुछ लंबी और नुकीली मूंछें थीं। उनकी भौहें घनी, पलकें लंबी और उनके नाजुक होंठों पर एक स्वाभाविक, हालांकि स्पष्ट नहीं, मुस्कान थी। इन सभी गुणों ने उनके चेहरे को इतना आकर्षक और मोहक बना दिया था कि उन्हें निहारने का मन करता था। एक क्षण के लिए, वज़ीर ने भी अपनी निगाहें शम्सुद्दीन अहमद से हटाकर मिर्ज़ा ग़ालिब पर केंद्रित कर लीं।

मिर्ज़ा ग़ालिब को मुज़फ़्फ़र-उद-दौला नासिर-उल मुल्क मिर्ज़ा सैफुद्दीन हैदर खान बहादुर के बगल में बैठाते हुए, फ्रेज़र ने कहा: 'मिर्ज़ा साहब, मैंने आज आपके लिए आपकी पसंदीदा फ्रांसीसी शराब की कुछ बोतलें मंगवाई हैं, लेकिन मेरी शर्त यह है: कृपया हमें अपनी नवीनतम ग़ज़लें सुनाइए।'

यह याद किया जा सकता है कि वज़ीर खानम और सैफुद्दीन हैदर खान पहले से ही एक-दूसरे को जानते थे, जब सैफुद्दीन हैदर खान शाह नासिर के शिष्य थे। जब वज़ीर खानम पहली बार आई थीं, तब सैफुद्दीन हैदर और वज़ीर खानम ने औपचारिक सलाम और अभिवादन का आदान-प्रदान किया था।

मिर्ज़ा ग़ालिब और मुबारिज़-उद-दौला मुमताज़-उल मुल्क नवाब हुसाम-उद-दीन हैदर खान बहादुर के सबसे बड़े बेटे मिर्ज़ा सैफुद्दीन हैदर खान के बीच घनिष्ठ मित्रता दिल्ली भर में प्रसिद्ध थी। इसलिए ग़ालिब का उनके बगल में बैठना बिल्कुल उचित था। कहा जाता है कि मिर्ज़ा सैफुद्दीन हैदर खान ही वह मुख्य कारण थे जिनकी वजह से ग़ालिब अपने जन्म के धर्म सुन्नीवाद से विमुख होकर मिर्ज़ा सैफुद्दीन हैदर और उनके पूर्वजों के धर्म शियावाद की ओर अग्रसर हुए थे।

उन दिनों नवाब हुसामुद्दीन हैदर की संतान हवेली में दरबार में अत्यंत प्रभावशाली थी। सैफुद्दीन हैदर का राजा के प्रति प्रेम और वफादारी ही वह कारण था जिसके चलते सितंबर 1857 में अंग्रेजों द्वारा दिल्ली पर पुनः कब्जा करने के बाद घेराबंदी और विनाश के दौरान एक अंग्रेज गोली से उनकी मृत्यु हो गई। वर्तमान में, हैदर परिवार को कंपनी बहादुरों का भी स्नेह प्राप्त था, और

फ्रेजर और सैफुद्दीन हैदर दोनों में फारसी कविता के प्रति प्रेम समान था।
ग़ालिब मुस्कुराते हुए बोले, “मुझे अपनी खुशकिस्मती पर गर्व है कि मुझ जैसे छोटे से आदमी के लिए इतने शाही इंतज़ाम किए गए हैं। हमारे लिए तो फिरंगों के शराबखाने से इतना ही काफी है कि बोतल में बस बची हुई शराब हो और हम सब पर जन्नत से शराब छिड़क सकें। हम कवि इससे ज़्यादा मुआवज़ा नहीं मांगते।”
मिर्ज़ा ग़ालिब की आवाज़ में एक अनोखी कोमलता और संगीतमयता थी। स्पष्ट उच्चारण के साथ, उनकी आवाज़ आसानी से दूर तक पहुँचती थी, न तो तेज़ थी और न ही धीमी, और उनके लहजे में इतनी गर्माहट और मित्रता भरी होती थी कि उनसे बात करने वाले व्यक्ति को ऐसा लगता था मानो वही उनके सबसे खास व्यक्ति हों।
नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान ने हुक्के के लंबे पाइप से कश लिया और संयमित स्वर में बोले, लेकिन उनके शब्दों में कहीं न कहीं व्यंग्य की हल्की सी झलक भी दिखाई दी: 'केवल ईश्वर ही हर दोष से मुक्त है! हमारे आदरणीय भाई मिर्ज़ा नौशाह साहब, सचमुच, आप अपने गद्य में कविता के मोती पिरोते हैं। वास्तव में, हम भी आपकी उत्कृष्ट कविताओं का आनंद लेने के लिए उत्सुक हैं।'
नवाब के भाषण का अंतर्निहित भाव यह था कि विदेशी, और वह भी फिरंगी, फारसी भाषा को उसके साहित्य की प्राथमिक और प्रसिद्ध कृतियों से तो सीख सकता है और फारसी व्याकरण और वाक्य रचना को रटकर याद कर सकता है, लेकिन कविता की सराहना, और वह भी उच्च कोटि की फारसी कविता की, उसकी क्षमता और योग्यता से परे है। यह कला हम ट्रांसोक्सियावासियों और ईरानियों तक ही सीमित है। शम्सुद्दीन अहमद के व्यंग्य के भाले के प्रहार का महत्व विलियम फ्रेजर से छिपा नहीं था, लेकिन वह भली-भांति जानते थे कि मिर्ज़ा ग़ालिब निश्चित रूप से एक सधी हुई और मनोरंजक प्रतिक्रिया देंगे। और वे सही थे। मिर्ज़ा साहब ने अपनी अत्यंत मनमोहक सहज मुस्कान बिखेरी और नवाब शम्सुद्दीन अहमद की आँखों में देखते हुए कहा: 'आपका आदेश बिल्कुल सही है, मियां नवाब शम्सुद्दीन अहमद साहब। फिर भी कविता लिखना और कविता की सराहना करना फिरंगी बेड़ियों में जकड़े होने जैसा है, और इसमें परिश्रम करने से कुछ भी लाभ नहीं है। कला की प्रस्तुति में तो कोई लाभ नहीं है।' सच कहूं तो, मैं अक्सर सोचता हूं कि अपने पूर्वजों की सौ पीढ़ियों के पेशे को छोड़ने का मेरा फैसला काफी नासमझी भरा था।
‘फिरंगी बेड़ियाँ! आदरणीय भाई मिर्ज़ा नौशाह साहब, आपने बिल्कुल सही कहा। ऐसा लगता है कि आपकी कविता की भूमि अत्यंत उपजाऊ है। और वह भूमि ईश्वर की अपनी धरती के समान है: उसका कोई अंत नहीं, कोई सीमा नहीं। वहाँ जेलखानों का सवाल ही कहाँ उठता है? वास्तव में, हम जैसे लोगों के लिए ही ईश्वर की धरती संकरी और निर्जन प्रतीत होती है।’
यहां भी, शम्सुद्दीन अहमद के शब्दों में जो दिख रहा था उससे कहीं अधिक गहरा अर्थ था। वे लोहारू राज्य के छिन जाने की आशंका का संकेत दे रहे थे, और यह भी जता रहे थे कि अंग्रेजी संरक्षण में मिर्ज़ा ग़ालिब की काव्य साधना खूब फल-फूल रही थी। ग़ालिब हँसे और बोले, 'फिर भी, मियां साहब, फ़ारसी कवि ने जो कहा था उसे याद करना उचित होगा:

हे स्वामी, जब तक तुम अपने आँसुओं के बीज अपनी भूमि पर नहीं बोओगे, तब तक तुम्हारा सारा परिश्रम और कृषि व्यर्थ होगी।
तो यही बात हमारे साथ है और शायद आपके साथ भी।
मिर्ज़ा सैफ़ुद्दीन हैदर को शायद लगा कि कवि और नवाब के बीच की बातचीत तीखी बहस में बदल सकती है, इसलिए उन्होंने दोनों हाथों से इशारा किया, मानो पूरी सभा को संबोधित कर रहे हों, लेकिन इस तरह से कि ऐसा लगे कि वे वास्तव में वज़ीर खानम को संबोधित कर रहे हैं।
“आपका आदेश बिल्कुल सही है, मिर्ज़ा साहब, लेकिन हम प्रेम के बाग में माली और सेवक हैं। ज़रा सुनिए, अदृश्य की ज़ुबान ने क्या कहा है:
देखते हैं दोस्ती का पेड़ कब फल देता है, मैंने अभी-अभी एक बीज बोया है।
नवाब यूसुफ अली खान ने प्रशंसा और अनुमोदन के पारंपरिक भाव में अपना दाहिना हाथ उठाया: 'केवल ईश्वर ही सभी दोषों से मुक्त है! बहुत अच्छा आदेश दिया है, सैफ़ुद्दीन अहमद खान बहादुर। एक बार फिर, हाफ़िज़ के शब्दों में:
मैंने सिकंदर और दारियस की गाथाएँ नहीं पढ़ी हैं; मुझसे प्रेम और निष्ठा की कहानियों के अलावा कुछ और मत पूछो।
ये दोनों सज्जन अत्यंत विवेकशील थे; वे किसी भी परिस्थिति की बारीकियों को उतनी ही कुशलता से समझ सकते थे जितनी किसी साहित्यिक रचना की। दिल्ली की आम जनता फ्रेजर और शम्सुद्दीन अहमद खान के बीच पैदा हुई मैत्रीपूर्ण संबंधों में दरार से अनभिज्ञ थी, और इसके विपरीत, फ्रेजर और मिर्जा ग़ालिब के बीच बढ़ते घनिष्ठ संबंधों के बारे में भी उन्हें ज्यादा जानकारी नहीं थी। ग़ालिब के प्रति शम्सुद्दीन अहमद खान के मन में पनपी कटुता का एक कारण यह भी था कि ग़ालिब, फ्रेजर से अपने पिता, स्वर्गीय नवाब अहमद बख्श खान की रियासत से आय के आवंटन में ग़ालिब द्वारा किए गए अन्यायपूर्ण व्यवहार की शिकायत करते रहे थे। ग़ालिब की फ्रेजर के साथ बढ़ती मित्रता के साथ-साथ इन शिकायतों ने ग़ालिब और नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान के बीच संबंधों को पूरी तरह से बिगाड़ दिया था।
ग़ालिब और फ्रेज़र दोनों के नाम दिल्ली के हर नागरिक को ज्ञात थे, हालांकि अलग-अलग कारणों से: ग़ालिब दिल्ली के प्रमुख फ़ारसी कवि के रूप में और फ्रेज़र दिल्ली के वास्तविक शासक के रूप में। दिल्ली के कुलीन वर्ग और शक्तिशाली लोगों में से बहुत कम लोग नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान और विलियम फ्रेज़र के बीच और मिर्ज़ा ग़ालिब और नवाब के बीच पनप रहे आंतरिक तनाव और बढ़ती कड़वाहट से अवगत थे। यह एक ऐसी पहेली थी जिसका हल वहाँ मौजूद कोई भी संतोषजनक ढंग से नहीं निकाल सका: क्या फ्रेज़र ने कवि और नवाब को सुलह कराने के लिए एक साथ लाया था? या क्या इसके पीछे कोई सूक्ष्म संकेत था कि शम्सुद्दीन अहमद खान स्वयं को, चाहे जितना भी चाहे, एक विशाल राज्य का स्वायत्त शासक समझ सकता था, लेकिन अंग्रेज़ रेज़िडेंट ग्रैंड साहब की नज़र में वह केवल एक स्थानीय सरदार था? नवाब रेज़िडेंट बहादुर जिसे चाहे उसे अपने महल में आमंत्रित कर सकता था और उससे मुलाकात कर सकता था; वह किसी के प्रति जवाबदेह नहीं था।
इस तरह फ्रेजर शम्सुद्दीन अहमद खान को अप्रत्यक्ष रूप से यह संकेत दे रहा था कि वह नाराज़

होने के लिए स्वतंत्र है, लेकिन मिर्ज़ा ग़ालिब रेज़िडेंट के घर आते-जाते रहेंगे, और यदि नवाब को ज़रूरत पड़ी तो वह रेज़िडेंट से सौ बार या उससे भी अधिक बार मिल सकता है, और ग़ालिब के साथ भोजन भी कर सकता है। या शायद, फ्रेजर ने शम्सुद्दीन अहमद खान को किसी अन्य तरीके से अपमानित करने के लिए आमंत्रित किया था?

इस मामले की सच्चाई वाकई सबसे छिपी हुई थी। असल बात यह थी कि नवाब यूसुफ अली खान से वज़ीर खानम के बारे में सुनकर फ्रेज़र की स्त्री-प्रेम की प्रवृत्ति जागृत हो गई थी। इसलिए मिर्ज़ा ग़ालिब के साथ रात्रिभोज और कविता पाठ वज़ीर को अपने घर आमंत्रित करने का एक अच्छा बहाना बन गया। शम्सुद्दीन अहमद खान को दिया गया निमंत्रण युवा नवाब के प्रति सुलह का एक संकेत मात्र था।

फिर भी, फ्रेजर की मंशा कुछ और ही रही होगी: जो लोग उन्हें जानते थे, उनके लिए यह स्पष्ट था कि घमंडी और अभिमानी शम्सुद्दीन अहमद, जो जल्दी नाराज हो जाते थे, के लिए फ्रेजर का भोज निमंत्रण स्वीकार करना—खासकर तब जब ग़ालिब भी आमंत्रितों में शामिल थे और नवाब के लिए फ्रेजर का निमंत्रण ठुकराना लगभग नामुमकिन था—बहुत चुभने वाली बात होती। दूसरी ओर, मिर्ज़ा ग़ालिब को अपने उच्च वंश का गहरा सम्मान था और वे कभी भी अपने आत्मसम्मान से समझौता नहीं करते थे।

यह सच है कि नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान की एक बड़ी चचेरी बहन—उनके चाचा नवाब इलाही बख्श खान मारूफ की बेटी—का विवाह मिर्ज़ा ग़ालिब से हुआ था, और इस प्रकार मिर्ज़ा ग़ालिब युवा नवाब के बहनोई थे। नवाब अहमद बख्श खान निःसंदेह एक सैयद थे, और इस प्रकार जन्म और संतान के मामले में ग़ालिब से कहीं अधिक श्रेष्ठ थे, लेकिन जिस स्त्री से उन्हें शम्सुद्दीन अहमद का पुत्र हुआ, वह निम्न जाति की थी और किसी भी तरह से उसी या समान कुल की नहीं थी जिससे वह अहमद बख्श खान की पत्नी बनने के योग्य हो। इस प्रकार, जन्म के आधार पर ग़ालिब, शम्सुद्दीन अहमद को अपने से हीन मानते थे। दूसरी ओर, सांसारिक प्रतिष्ठा और धन के मामले में नवाब शम्सुद्दीन अहमद न केवल ग़ालिब से, बल्कि दिल्ली के कई अन्य रईसों से भी श्रेष्ठ थे। इसलिए शम्सुद्दीन अहमद खान के मामले में ग़ालिब का स्वाभिमान और आत्मसम्मान हमेशा खतरे में रहता था।

इन बारीकियों को ध्यान में रखते हुए, दोनों रईसों—सैफुद्दीन हैदर खान और यूसुफ अली खान—ने बातचीत को शत्रुतापूर्ण होने से रोकने के लिए सचेत प्रयास किया और चतुराई से, गुप्त रूप से, प्रेम कविताओं और प्रेमिका की सुंदरता पर लिखी कविताओं में अपनी निपुणता का प्रदर्शन करना शुरू कर दिया। कुछ लोग लगभग सांकेतिक भाषा में हुई इस बातचीत को समझ गए, कुछ नहीं। लेकिन नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान और मिर्ज़ा ग़ालिब दोनों ने विषय परिवर्तन में छिपे अर्थ को तुरंत भांप लिया और इसे अपने दिलों में स्वीकार किया। इस प्रकार, मिर्ज़ा ग़ालिब के होठों पर एक हल्की मुस्कान खिल उठी और उनकी आँखों तक पहुँच गई, जिससे उनका चेहरा और भी अधिक उज्ज्वल और आकर्षक हो गया। मिर्ज़ा सैफुद्दीन हैदर के हाथों के सूक्ष्म इशारे ने ग़ालिब का ध्यान वज़ीर खानम की ओर आकर्षित किया। विलियम फ्रेज़र की बात करें तो, वह चोरी-छिपे

वज़ीर के चेहरे को देख रहे थे और मन ही मन आनंदित हो रहे थे: यदि किसी शाम की शोभायात्रा में प्रकाश का मुख्य स्रोत होना चाहिए, तो वह वज़ीर खानम ही होनी चाहिए, या उनके जैसी ही कोई और।

शम्सुद्दीन अहमद खान ने थोड़ा मुड़कर वज़ीर खानम की ओर देखा और उन्हें लगा मानो एक झनझनाहट सी उनके पूरे शरीर में दौड़ गई हो। उस क्षण वज़ीर की निगाहें मिर्ज़ा ग़ालिब और नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान के बीच कहीं टिकी थीं। ऐसा लग रहा था मानो वह दोनों को देख रही हों, लेकिन केवल इसलिए कि वे सभा का हिस्सा थे, न कि इसलिए कि वे उनसे कोई विशेष ध्यान या सम्मान चाहते थे। वास्तव में, वज़ीर की निगाहें ग़ालिब की चौड़ी कलाइयों और उनकी लंबी, कोमल और नुकीली उंगलियों पर थीं, और उनके कान आम बातचीत पर लगे हुए थे, लेकिन उनका गुप्त ध्यान नवाब शम्सुद्दीन अहमद के सुंदर और प्रभावशाली व्यक्तित्व पर केंद्रित था, एक ऐसा व्यक्तित्व जो राहगीरों को भी अपनी ओर आकर्षित कर लेता था। उन्हें नवाब की आत्मा की गहराई में कहीं कड़वाहट, बेचैनी और अलगाव का भाव भी महसूस हुआ।

जब शम्सुद्दीन अहमद खान ने वज़ीर खानम पर सरसरी नज़र डाली, तो उन्हें अपने भीतर एक अजीब सी अनुभूति हुई, मानो उनके बीच कुछ हो रहा हो: एक विचित्र लौ प्रज्वलित हो उठी हो, जो दोनों को छू रही हो। या शायद सच यह था कि नारीत्व का एक अत्यंत प्रभावशाली लेकिन बेहद रहस्यमय एहसास, एक चुंबकीय तरंग, वज़ीर खानम के शरीर से लहराती, सम्मोहक लहरों की तरह उनकी ओर आ रही थी। उन्हें ऐसा लगा मानो वे यमुना नदी के बीचोंबीच एक पतली नाव में बैठे हों, जहाँ नदी सबसे गहरी और सबसे तेज़ बहती है, और पवित्र नदी की लहरें दूर किनारे और अथाह गहराई से उठकर उनकी नाव को छू रही हों, उसे गीला कर रही हों...

क्या उसका शरीर नदी के ठंडे पानी की फुहार से कांप रहा था, या उस अजीब, ठंडी हवा से जो उसकी छोटी नाव को हिला रही थी? उसे डूबने का डर था; लेकिन साथ ही वह पूरी तरह भीगने की तीव्र इच्छा से भीगा हुआ था। एक पल के लिए उसे यकीन हो गया कि उस कमरे में उसके और वज़ीर खानम के अलावा कोई और नहीं है; और उनके अस्तित्व की गहराई में, अनेक भयों और अज्ञात समुद्री लहरों के प्रहारों से नींव हिल रही थी।

शराब का प्रभाव फिर से दिखने लगा था, या यूँ कहें कि कुछ समय के लिए नए आए लोगों के आकर्षक व्यक्तित्वों के जटिल, मोहक, लेकिन कुछ हद तक रहस्यमय मोड़ों में खो गया था और अब वह जाग उठी और अपनी आँखें खोल दीं। फ्रेजर के मुख्य शराब परोसने वाले ने मिर्ज़ा ग़ालिब के सामने एक सीलबंद बोतल पेश की, जिस पर फ़िरंगी लिपि में लिखावट थी और कुछ सजावटी डिज़ाइन भी बने हुए थे। शराब परोसने वाले ने बोतल को हंस के आकार के कांच के बर्तन में रखा था, और बर्तन को नक्काशीदार और अलंकृत चांदी की ट्रे पर रखा गया था, जिसके साथ एक मैचिंग कप भी था।

'नवब साहब, बिस्मिल्लाह,' फ्रेजर ने ग़ालिब से कहा, और उस खुशी से मुस्कुराया जैसे कोई मेज़बान अपने मेहमान को कोई दुर्लभ व्यंजन परोस रहा हो।

ग़ालिब भी सुखद आशा से मुस्कुराए। उन्होंने बोतल को अपने हाथों में लिया, सील तोड़ी और

कहा: “असल बात तो यह है कि मेरे मुँह में पानी आ रहा है, लेकिन मैं बोतल को थोड़ी देर के लिए छोड़ देता हूँ ताकि हवा के संपर्क में आ सके। हालाँकि, फ़ारसी में “हवा के संपर्क में आना” शब्द का अर्थ उस शराब से है जो नम हवा के संपर्क में आने से खराब हो गई हो; आपकी कुछ शराबें, जैसे यह वाली, को हवा के संपर्क में आने की ज़रूरत होती है, ताकि पीने से पहले वे साँस ले सकें।”

‘वाह, मिर्ज़ा नौशाह, आपकी इन्हीं बारीकियों के लिए तो मैं जान भी देने को तैयार हूँ!’ फ्रेज़र हँसते हुए बोला। ‘लोगों को आपसे शराब पीने की कला सीखनी चाहिए! लेकिन हे प्रभु, ईश्वर आपकी रक्षा करे, शराब के संदर्भ में “साँस लेना” शब्द आपको कैसे पता चला? यह मुहावरा अंग्रेज़ी का है और कुछ ऐसी शराबों के लिए इस्तेमाल होता है जिन्हें पीने से पहले खुला छोड़ दिया जाता है ताकि उनकी भाप निकल जाए।’

ग़ालिब ने अपने हिंदी छंदों में से एक का अंश उद्धृत किया, लेकिन इस तरह नहीं जैसे वे कविता का पाठ कर रहे हों, “महोदय, ये वही विचार हैं जो हमें अदृश्य से प्राप्त होते हैं।” क्या आपने अरबी कहावत नहीं सुनी कि “कवि…”

‘जी हाँ, बिलकुल,’ फ्रेजर ने कहावत के शेष भाग को पूरा करते हुए तुरंत कहा, “…वे ईश्वर के शिष्य हैं।” लेकिन महोदय, आप इस विचित्र मुहावरे तक कैसे पहुँचे, इस रहस्य से पर्दा उठने दीजिए!’

“ओह, मेरे कुछ और दोस्त भी हैं जो मेरे प्रति अच्छे हैं। आपने शायद एलेक साहब के बारे में सुना होगा, जिनका उपनाम आज़ाद है, यानी कैप्टन अलेक्जेंडर हीदरली। लेकिन चलिए इन छोटी-मोटी बातों को छोड़ते हैं,” उन्होंने वज़ीर खानम की ओर हल्के से इशारा करते हुए कहा। “आपने मुझे एक सदाबहार शराबखाने का पड़ोसी होने का सौभाग्य दिया और यह बोतल मेरे हाथ में थमा दी… इस तरह आपने मेरी एक कविता को झूठा साबित कर दिया!”

‘मिर्ज़ा नौशाह, आपकी कविता—जैसे कि वह झूठी साबित हो सकती है!’ मिर्ज़ा सैफुद्दीन हैदर खान ने ग़ालिब के कंधे पर थपथपाते हुए कहा। ‘खैर, चलिए इसे सुनते हैं और खुद फैसला करते हैं।’

'जी हां, मिर्जा साहब, मुझे भी उन लोगों में गिनिए जो आपकी कविता के प्रति उत्सुक हैं,' नवाब यूसुफ अली खान ने कहा, जो स्वयं एक कवि थे लेकिन अभी तक किसी गुरु के शिष्य नहीं बने थे।

“जी हां, वास्तव में मैं एक और छंद प्रस्तुत करूंगा जो उस छंद के साथ अच्छी तरह मेल खाता है,” यह कहते हुए, मिर्ज़ा ग़ालिब ने विशेष रूप से विलियम फ्रेज़र को संबोधित किया: “कृपया इन्हें देखें, आदरणीय गुरु और मार्गदर्शक।”

नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान को इस बात से बेहद आपत्ति थी कि एक नाज़रीन, और वह भी एक अंग्रेज, को 'गुरु और मार्गदर्शक' यानी पीर-ओ-मुर्शिद की उपाधि से संबोधित किया जाए। मुहम्मद रौशन अख्तर मुहम्मद शाह बादशाह गाज़ी (जो अब स्वर्ग में विराजमान हैं) के समय तक, सांसारिक लोगों में केवल बादशाह को ही 'गुरु और मार्गदर्शक' कहा जाता था, यह उपाधि

आमतौर पर केवल किसी सूफी के लिए ही प्रयोग की जाती थी, जो किसी का आध्यात्मिक गुरु होता था। उस बादशाह के देहांत के बाद, क्षेत्रीय सरदारों, महाराजाओं और नवाबों के चापलूसों ने भी उन्हें इसी तरह संबोधित करना शुरू कर दिया। लेकिन एक काफिर, और वह भी एक अंग्रेज, को 'पीर-ओ-मुर्शिद' कहना एक नई तरह की कुटिल बात थी।

“अब तो बात इस हद तक पहुँच गई है कि नास्तिक ईसाइयों को भी ऐसे शब्द बोलने का अधिकार समझ लिया गया है,” उसने अपने बगल में बैठे आदमी से धीमी आवाज़ में कहा, लेकिन आवाज़ इतनी धीमी नहीं थी कि फुसफुसाहट जैसी लगे। “और ये फिर से एक अजीब बात है, शराब की बोतल खुली छोड़ देना। ये लोग जो कुछ भी करते हैं, सब उल्टा-पुल्टा करते हैं। ये बाएँ से दाएँ लिखते हैं, सम्मान दिखाने के लिए अपनी टोपी उतार देते हैं, बाएँ हाथ से खाते हैं... और पूरे हिंद में चीनी तीतरों की तरह इतराते फिरते हैं।”

शम्सुद्दीन अहमद खान ने ये शब्द जिस व्यक्ति को संबोधित किए थे, वह लखनऊ का निवासी था। उसने सफेद रंग की कढ़ाईदार सूती कपड़े की हल्की टोपी पहन रखी थी, जिसकी कढ़ाई बारीक और सफेद सूती कपड़े की थी। लखनऊ में उस समय के रिवाज के अनुसार उसने टोपी को थोड़ा तिरछा पहना हुआ था, और उसके सटे हुए बाल टोपी के नीचे से साफ दिखाई दे रहे थे। थोड़े मोटे शरीर वाले उस व्यक्ति ने टोपी के ही कपड़े का कुर्ता पहन रखा था, और उसके ऊपर हल्के ऊनी प्रिंटेड कपड़े की नीमा और उसी कपड़े की जमाह पहन रखी थी।

उसने जो ढीली पतलून पहनी थी, वह दिल्ली में उस समय प्रचलित शैली की थी, लेकिन औरंगाबाद में बनने वाले सूती और रेशम मिश्रित कपड़े, जिसे मशरू कहते हैं, की बनी थी। इसकी खासियत यह थी कि इसमें न तो धारियां थीं और न ही फूलों की बुनाई, बल्कि रेशम से कढ़ाई की हुई छोटी-छोटी टहनियां थीं। युवक ने सफेद मोतियों का लंबा हार पहना था और बाएं हाथ की सभी पांचों उंगलियों में रत्न जड़ित अंगूठियां पहनी थीं। दिल्ली और लखनऊ की शैलियों का उसका यह मिश्रण देखने में आकर्षक और मनमोहक था।

पता नहीं क्यों, सब लोग उन्हें ‘जनरल साहब’ कहकर पुकारते थे। उनका नाम अशरफ-उद दौला नवाब अहमद अली खान बहादुर था, जो अवध राज्य के पूर्व मुख्यमंत्री मुंतजिम-उद दौला हकीम महदी अली खान बहादुर के पुत्र थे। वे और उनके पिता फतेहगढ़ में रह रहे थे। वे फ्रेजर से मिलने के लिए कुछ दिनों के लिए दिल्ली आए थे। उन्होंने शम्सुद्दीन अहमद खान की बात से सहमति जताते हुए सिर हिलाया।

वज़ीर शम्सुद्दीन अहमद खान की बात साफ़-साफ़ नहीं सुन पाई थी, लेकिन चूंकि उसका पूरा ध्यान उन्हीं पर था, इसलिए उसने शम्सुद्दीन अहमद की बातों का सार उनके शारीरिक हाव-भाव और शब्दों के कुछ अधूरे अंशों से समझ लिया। नवाब की ओर देखते हुए उसने सिर हिलाया और एक अंतरंग गोपनीयता का भाव लिए मुस्कुराई, मानो वह अपनी सहमति जता रही हो। मार्स्टन ब्लेक के साथ वज़ीर के बीते जीवन के संदर्भ में, शायद उसकी सहमति भरी मुस्कान का कोई अर्थ था, या शायद अर्थ से भी कहीं अधिक।

इस दौरान हुक्के के लंबे पाइप से धीरे-धीरे कश ले रहे मिर्ज़ा ग़ालिब ने अपना सिर उठाया, श्रोताओं पर एक नज़र डाली और आदेश दिया: 'मैं पहला श्लोक प्रस्तुत करता हूँ। फिर वह

श्लोक आएगा जिसका मैंने वादा किया था।'
हॉल में हर तरफ से आवाजें आ रही थीं:
'कृपया अपनी इच्छा अनुसार आदेश दें!'
हम इस विशेषाधिकार की प्रतीक्षा कर रहे हैं!
'महोदय, कृपया देखें,' उन्होंने कहा और अपनी फ़ारसी ग़ज़ल की पहली पंक्ति सुनाई। कविता सुनाने का उनका अंदाज़ उनकी सामान्य आवाज़ की तरह ही लचीला और परिष्कृत था। ऐसा लगता था मानो इस व्यक्ति को कभी अपनी आवाज़ ऊँची करने या ज़ोर से बोलने की ज़रूरत ही न पड़े: उनकी सामान्य आवाज़ उतनी ही प्रभावशाली थी जितनी कि उसकी लय स्पष्ट और परिष्कृत थी।

यह एक ही बात है: दोनों में से कोई भी दूसरे से अलग होना स्वीकार नहीं करता— हृदय से आपका तेजस्वी प्रकटीकरण, और शराब के गिलास से शराब।
नवाब यूसुफ अली खान ने तुरंत फारसी में उत्साहपूर्वक उत्तर दिया: 'बहुत सही कहा, मिर्ज़ा साहब! प्रेमी के हृदय में प्रेमिका की सुंदरता की चमक और उसके प्याले में शराब की लहर एक ही स्तर और एक ही दर्जे की हैं!'
गंभीर भाव से, मिर्ज़ा ग़ालिब ने सिर झुकाकर प्रशंसा स्वीकारते हुए सलाम किया। चारों ओर से 'वाह! वाह!' और इसी तरह की प्रशंसाओं के बीच वे थोड़ा और सतर्क होकर बैठ गए। जब शोर थोड़ा कम हुआ, तो अशरफ़-उद दौला ने ऊँची लेकिन स्पष्ट आवाज़ में कहा: 'मिर्ज़ा साहब, मैं आपकी इस बात की प्रशंसा करता हूँ कि आपने पहली पंक्ति में 'शैली' के लिए 'गुणा' जैसे दुर्लभ शब्द का प्रयोग किया है, क्योंकि कोई कमतर कवि 'तर्ज' जैसा घिसा-पिटा शब्द इस्तेमाल कर लेता। सचमुच, ऐसे शब्द का प्रयोग करना आपके लिए शोभा देता है।'
फ्रेजर अभी कुछ कहने ही वाले थे कि फैनी पार्क्स, जिन्हें फारसी का ज्ञान नहीं था और जो ग़ालिब की कविता से कुछ समझने की कोशिश कर रही थीं, ने ध्यान से सुना जब अशरफ-उद-दौला ने 'लफ़्ज़' के लिए स्त्रीलिंग शब्द का प्रयोग किया। वह उन्हें अच्छी तरह जानती थीं, इसलिए उन्होंने बिना किसी झिझक के उनसे पूछा: 'जनरल साहब, आपने... ओह, 'स्त्रीलिंग' के लिए हिंदी शब्द क्या है? मुझे याद नहीं आ रहा।'
'मुआनास,' फ्रेजर ने तुरंत यह शब्द बताया।
"ओह, जी हाँ, बहुत-बहुत धन्यवाद, कर्नल फ्रेजर। तो, जनरल साहब, आपने हिंदी शब्द 'लफ्ज़' का प्रयोग स्त्रीलिंग के रूप में किया है, जबकि मैंने इसे हमेशा पुल्लिंग ही सुना है। ऐसा क्यों? या मैंने गलत सुना?"
नहीं, फैनी मेमसाहिब, आपने गलत नहीं सुना। आप इलाहाबाद में रहती हैं जहाँ लफ्ज़ शब्द को पुल्लिंग माना जाता है, लेकिन हम लखनऊ वाले अलग हैं। हम इस शब्द का प्रयोग हमेशा स्त्रीलिंग के रूप में करते हैं। शायद दिल्ली में नियम अलग हो। आपका क्या कहना है, प्रिय मिर्ज़ा साहब?
'आपका आदेश बिल्कुल सही है। हमारे लिए, 'लफ्ज़' शब्द का पुल्लिंग अर्थ पूरी तरह से स्थापित

है और सर्वत्र स्वीकार्य है।'
फ्रेजर ने कहा, “हिंदी शब्दों के लिंग का मामला वाकई पेचीदा है। उदाहरण के लिए, 'रथ' शब्द को ही ले लीजिए; कुछ लोग इसे स्त्रीलिंग मानते हैं, तो कुछ पुल्लिंग। अब, मिर्ज़ा साहब, इस मामले पर आपका क्या फैसला होगा?”
ग़ालिब हँसे। 'खैर, यह तय करना मुश्किल नहीं है। अगर कोई महिला इस पर सवार है, तो रथ स्त्रीलिंग है, अन्यथा यह पुल्लिंग है।'

इस पर सब लोग ठहाकों से हंस पड़े। वज़ीर रथ में सवार होकर रेजिडेंट साहब के घर आई थी, इसलिए उसे थोड़ी शर्मिंदगी महसूस हुई, लेकिन फिर भी वह दूसरों के साथ हंस पड़ी। ग़ालिब के चेहरे पर हल्की सी मुस्कान थी, मानो उन्हें अपने मज़ाक पर मिली खुशी का आनंद आ रहा हो। उनका तरीका कभी भी अपने चुटकुलों पर हंसना नहीं था, बल्कि वे ऐसे बेफिक्र बैठे रहते थे जैसे उन्होंने कुछ कहा ही न हो।
हंसी अभी पूरी तरह शांत भी नहीं हुई थी कि फ्रेजर ने कहा, 'देखिए, मिर्जा साहब, इस बात को मजाक में मत लीजिए। आपको अभी हमें एक और श्लोक देना बाकी है।'
जी जी महोदय, निःसंदेह। मैं इसे अभी प्रस्तुत करता हूँ। कृपया इसे सुनिएगा।
यह कहते हुए ग़ालिब ने वज़ीर की ओर देखा और कहा:
ग़ालिब, मैं आपको सराय के बगल में जगह देने को तैयार हूँ, बशर्ते आप केवल शराब की सुगंध से ही संतुष्ट रहें।
सभी ने प्रशंसा और सराहना की गड़गड़ाहट से उनका अभिनंदन किया। ग़ालिब ने वज़ीर की ओर हल्के से इशारा करते हुए कहा, “विलियम फ्रेज़र बहादुर, आपने मेरे बगल में सदाबहार, चलती-फिरती शराब की दुकान पर बैठाया और उसके ऊपर मेरे कमज़ोर होठों पर फिरंगों के शराबखाने की यह पेरी परोस दी। ऐसे में मेरी कविता झूठी क्यों न साबित हो? लेकिन इस बोतल को हाथ में लेते ही मुझे अपनी एक पुरानी हिंदी कविता याद आ गई।”
फिर उन्होंने उसी आत्मविश्वास के साथ पाठ किया, जैसा उन्होंने फारसी कविता के साथ दिखाया था:
शराब के संचलन से उसे उलझन और ध्यान भटकने की समस्या होती है: इसे एक बार करो, पूरे बर्तन को मेरे होठों से लगा दो।
‘खैर, अगर यह पूरा बर्तन नहीं है, तो कम से कम पूरी बोतल तो है। असर के लिहाज से तो कोई खास फर्क नहीं पड़ता,’ ग़ालिब ने निष्कर्ष निकाला।
वज़ीर खानम के कान लाल हो गए। शर्म से चूर होकर उसने अपना सिर नीचे कर लिया, लेकिन तिरछी नज़र से शम्सुद्दीन अहमद को देखते हुए उसने पाया कि वह थोड़ा नाराज़ है। क्या उसके मन में उसके लिए कुछ सच्ची भावनाएँ जाग उठी थीं? जहाँ तक उसे समझ आ रहा था, विलियम फ्रेज़र उसे चाहता था और अपने इरादे ज़ाहिर करने के लिए सही मौके की तलाश में था, लेकिन क्या अब वह दुविधा में था क्योंकि उसे शम्सुद्दीन अहमद एक संभावित प्रतिद्वंद्वी के रूप में नज़र आ रहा था?

वह फ्रेजर को साफ-साफ 'ना' कह देगी, चाहे परिणाम कुछ भी हो। लेकिन शम्सुद्दीन अहमद खान उसे जिस नजरिए से देखते थे, उसका क्या मतलब था? और उसके दिल में कुछ फुसफुसाहटें चल रही थीं। वे कहां से आ रही थीं और उससे क्या कह रही थीं?

इन विचारों में मग्न रहते हुए, उन्होंने नवाब शम्सुद्दीन अहमद में एक प्रकार की बेचैनी महसूस की, मानो वे जाने की जल्दी में हों, लेकिन शिष्टाचार का भी ध्यान रख रहे हों, और शायद वज़ीर खानम का भी। फ्रेज़र ने भी युवा नवाब की थोड़ी बेचैनी और असंयम को भांप लिया और उन्हें लगा कि सुलह की दिशा में प्रयास करना उचित होगा। नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान और मिर्ज़ा ग़ालिब को एक साथ बिठाने का उनका जो भी कुटिल उद्देश्य था, वह शायद पूरा हो चुका था। वे अपनी जगह से उठे और नवाब के पास गए। वज़ीर पर सरसरी नज़र डालते हुए उन्होंने कहा, 'दिलावर-उल मुल्क बहादुर, कृपया इधर आइए, मेरे बगल में बैठिए।'

निजी मुलाकातों के दौरान, शम्सुद्दीन अहमद खान फ्रेजर को 'चाचा' कहकर संबोधित करते थे, लेकिन उनके संबंधों में खटास आने के बाद से ऐसी मुलाकातें लगभग बंद हो गई थीं। औपचारिक अवसरों पर, वे उन्हें 'नवाब रेजिडेंट बहादुर' या 'नवाब सीनियर साहिब बहादुर' कहकर संबोधित करते थे। फ्रेजर उन्हें औपचारिक रूप से 'नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान बहादुर' कहकर संबोधित करते थे, और जब वे उनसे विशेष रूप से प्रसन्न होते थे, तो उन्हें 'दिलावर-उल मुल्क' कहकर पुकारते थे। निस्संदेह, शम्सुद्दीन अहमद खान के पिता के पास 'फखर-उद दौला दिलावर-उल मुल्क' की आधिकारिक उपाधि थी, लेकिन अंग्रेजों ने इसे पुत्र को प्रदान नहीं किया था। इस प्रकार, फ्रेजर द्वारा शम्सुद्दीन अहमद खान को 'दिलावर-उल मुल्क' कहकर संबोधित करना विशेष स्नेह का प्रतीक था। शम्सुद्दीन अहमद खान फ्रेजर का निमंत्रण अस्वीकार करना चाहते थे, क्योंकि उन्हें संदेह था कि यह उन्हें वज़ीर से दूर करने की एक चाल है। वह मना करने ही वाला था कि फ्रेजर ने आगे कहा, 'और, कृपया यह भी बताएं कि क्या हम अभी मेरा यह साधारण भोजन खा लें, या पहले मिर्जा नौशाह साहब को अपनी कविता सुनाने की जहमत उठानी चाहिए?'

इस विशेष ध्यान ने शम्सुद्दीन अहमद खान के दिल में उबल रहे गुस्से को शांत करने में मदद की, और उन्होंने इस विराम को वज़ीर से सीधे बातचीत करने के अवसर के रूप में भी लिया। फ्रेज़र का हाथ अपने हाथ में लेते हुए उन्होंने स्नेहपूर्वक कहा, 'इस सेवक को कोई विशेष पसंद नहीं है, नवाब निवासी बहादुर, आपकी जो भी उच्च इच्छा हो। लेकिन... इससे शायद वज़ीर खानम साहब से मिलने में देरी हो सकती है।'

नवाब द्वारा उसका नाम लेते हुए सुनकर, और वह भी ऐसे संदर्भ में जिससे यह आभास होता था कि उसकी इच्छाओं का उनके लिए विशेष महत्व है, वज़ीर ने अपना चेहरा गंभीर बनाए रखने की कोशिश के बावजूद मुस्कुरा दिया। वह उठी, तीन सलाम किए और बोली, 'यह सेविका अपनी आँखों और हृदय से आपकी सेवा में तत्पर है। परम पूज्य के सेवक अपनी इच्छानुसार निर्देश दे सकते हैं। विलंब की आशंका का कोई महत्व नहीं है।' उसने यूसुफ अली खान की ओर देखते हुए कहा, 'मैं परम पूज्य के सेवकों की कृपापूर्ण छत्रछाया में सुरक्षित यात्रा करूंगी।'

उनकी मधुर आवाज कानों में ऐसे गूंज रही थी मानो किसी बेहतरीन साल की उत्तम शराब का

मखमली स्वाद गले से उतरकर सीने तक पहुँचता हो और स्वाद कलियों, नाक और जीभ को तरोताजा कर देता हो। उनके व्यक्तित्व से नारीत्व की गर्म लेकिन कोमल किरणें निकल रही थीं, जिससे उनका चेहरा सौंदर्य की चमक से दमक रहा था। यूसुफ अली खान जवाब देने ही वाले थे कि शम्सुद्दीन अहमद खान ने वज़ीर की ओर आधा मुड़कर कहा, 'मैं इस कार्य के लिए तैयार हूँ। और यदि मेरे उच्च वंश के भाई नवाब यूसुफ अली खान साहब से अनुमति की आवश्यकता हो, तो आशा है कि वह मिल जाएगी।'

यूसुफ अली खान ने कहा: 'निस्संदेह। और वैसे भी, हमारे और दिलावर-उल-मुल्क के रास्ते लगभग एक जैसे ही हैं। कोई समस्या नहीं होगी।'

उन्होंने यह बात महज़ शिष्टाचारवश कही थी और शम्सुद्दीन अहमद खान को निराश न करने के लिए कही थी। दरअसल, दोनों के गंतव्य अलग-अलग दिशाओं में थे। शम्सुद्दीन अहमद खान की एक हवेली चांदनी चौक के पीछे बल्लीमारान में थी और दूसरी लाल किले के पास दरियागंज में। यूसुफ अली खान की हवेली पुल बंगश में मस्जिद के पास, तिराहा बैरम खान के नजदीक थी। खैर, किसी ने भी इस मामले की विस्तृत चर्चा नहीं की और मामला सौहार्दपूर्ण ढंग से सुलझ गया।

फ्रेजर को इस बात पर थोड़ी झुंझलाहट हुई कि शम्सुद्दीन अहमद खान ने किस तरह सीधे वज़ीर का ध्यान अपनी ओर खींच लिया था। लेकिन इस छोटी सी बात पर परेशान होने का कोई फायदा नहीं था। फ्रेजर को पूरा भरोसा था कि वैभव, शक्ति, सम्मान, प्रशंसा, अधिकार और सबसे बढ़कर अनुभव और राजनीतिक प्रभाव के मामले में वह शम्सुद्दीन अहमद से कहीं आगे थे। और यह तो बस शुरुआत थी, पहले दिन की पहली किरण। उनके पास अभी बहुत समय था।

उन्होंने ग़ालिब की ओर मुड़कर कहा, 'मिर्ज़ा साहब, क्या मैं अब आपसे निवेदन कर सकता हूँ कि आप हमारे सामने अपनी कविताएँ सुनाएँ? हम सब आपको सुनने के लिए उत्सुक हैं।'

'बिस्मिल्लाह!', 'हम सब समान रूप से उत्सुक हैं!', 'कृपया हमें अपनी ग़ज़ल सुनाइए!' की आवाज़ें अभी पूरी तरह शांत भी नहीं हुई थीं कि मिर्ज़ा साहब ने कहा: 'मैं पहला श्लोक प्रस्तुत करता हूँ।' सब सन्नाटा छा गया। नौकर अपनी जगह पर जड़वत खड़े रह गए। हुक्कों की लंबी पाइपों की गड़गड़ाहट थम गई। ग़ालिब की आवाज़ में अब एक नई गहराई, एक नया भाव था, मानो वे किसी रहस्यमय, निराकार सत्ता को संबोधित कर रहे हों। उनकी फ़ारसी ग़ज़ल का पहला श्लोक था:

तुम्हारे दर्शन के लिए मेरी तीव्र लालसा है, आओ, और देखो; मैं पलक से गिरते आंसू की तरह बहने वाला हूँ, आओ, और देखो।

वाह! वाह!, बहुत बढ़िया! की तालियों की गड़गड़ाहट के बीच सैफुद्दीन हैदर की आवाज सुनाई दी, जिन्होंने कहा, "मैं अल्लाह का नाम लेता हूँ! क्या शानदार आरंभिक छंद है! मेरी आँखों से आँसू बहने ही वाले हैं, आइए, एक नज़र डालिए। कृपया इसे फिर से अपनी आवाज़ में हमें प्रदान कीजिए!"

फ्रेजर अचानक अपनी जगह से उठ खड़ा हुआ और फारसी में बोला: 'मिर्ज़ा साहब! कृपया फिर से बोलने की जहमत उठाइए! आपने बहुत सुंदर भाषण दिया, मैं कसम खाता हूँ!'

ग़ालिब ने बिना उठे सलाम किया और अन्य सभी तालियाँ बजाने वालों की अनदेखी करते हुए कहा, 'अब शुरुआती आयत के बाद वाली आयत', और अगली आयत कहने लगे:
तुम मुझसे दूर रहते थे: मेरा गुनाह बस इतना था कि मैं छटपटाता और हाथ-पैर मारता रहता था, बेचैन रहता था;
श्रोताओं में से जो उसके पास थे, उन्होंने परंपरा के अनुसार उस पंक्ति को दोहराया। किसी ने कहा, 'केवल ईश्वर ही सभी दोषों से मुक्त है!' एक और आवाज़ उठी, 'वाह, कितना अच्छा!' 'कितना उचित! तुम मुझसे बचते थे, और 'अपराध छटपटाना, बेचैन होना' वास्तव में मानवीय प्रशंसा से परे है।'
अब ग़ालिब ने आयत की दूसरी पंक्ति कही:
अब मैं मर चुका हूँ और आराम कर रहा हूँ, मैं कितना अच्छा आराम कर रहा हूँ, आओ और देखो।
अब ऐसा लग रहा था मानो छत, गिलास, बोतलें, झूमर, शराब के जग, सब कुछ भूकंप की तरह हिल रहा हो। किसी को भी इस बात का एहसास नहीं था कि उनके पड़ोसी या बाकी लोग किस तरह तालियाँ बजा रहे थे। शोरगुल से पूरी तरह बेखबर, सिर झुकाए और धीमी लय में बार-बार हाथ से अपनी कमर थपथपाते हुए, मानो किसी समाधि में हों, अपने आप से दोहरा रहे थे: 'मैं अब मर चुका हूँ और आराम कर रहा हूँ, कितना अच्छा आराम कर रहा हूँ, आओ और देखो।' कभी-कभी वे बस शब्दों को गुनगुनाते थे, या उन्हें धीमी आवाज़ में कहते थे, सारे शब्द स्पष्ट रूप से नहीं बोलते थे। फिर अचानक, उन्होंने अपनी आँखें उठाईं, पूरी सभा को देखा और धीमी आवाज़ में कहा:
तुम मुझसे बचते थे, मेरा गुनाह छटपटाना और बेचैन रहना था; अब मैं मर चुका हूँ और शांति में हूँ, मैं कितना आराम कर रहा हूँ, आओ और देखो।
श्रोताओं के अपेक्षाकृत शांत हो जाने के बाद, ग़ालिब ने अगली आयत पढ़ी:
मुझे दूसरों से ईर्ष्या होती है; मैं उनके सामने क्षीण हो जाता हूँ; थोड़ी शर्म करो! हम साथ हैं, अकेले हैं, फिर भी मुझे स्वयं दिखाई नहीं देता, बस एक नज़र डालो!
तालियों की गड़गड़ाहट शांत होने से पहले ही, मिर्ज़ा साहब ने दोनों हाथ उठाकर विनती की कि पूरी ग़ज़ल सुनी जाए: 'जब हर एक आयत को इतनी देर तक सराहना मिल रही है, तो मैं कैसे समाप्त करूँ?' फिर भी, मिर्ज़ा साहब के पाठ के दौरान श्रोताओं की ओर से 'उत्कृष्ट!', 'अल्लाह का शुक्र है, क्या शक्ति है, क्या ताजगी है!', 'कितने अनोखे तुकबंदी हैं!' जैसी दबी हुई प्रशंसाएँ और पंक्तियों का दोहराव जारी रहा।
मैंने सुना है कि तुम किसी को नहीं देखते, लेकिन मुझे उम्मीद है। खैर, मैंने तुम्हारे किसी को न देखने के बारे में सुना है; तो मैं इसे कैसे समझूँ? आओ, और देख लो।
बीज अंकुरित हुआ, बड़ा हुआ, घोंसला बनाने वाले पक्षियों का घर बन गया; मैं, अभी भी फीनिक्स की उम्मीद में, अपना जाल बिछाए हुए हूँ— बस आओ, और एक नज़र डालो।
इस श्लोक ने भी श्रोताओं को आनंदमय उन्माद में डुबो दिया। लखनऊ के कवियों और वक्ताओं में प्रचलित शैली में, मिर्ज़ा साहब ने कृतज्ञता और विनम्रता का भाव व्यक्त करते हुए हाथ जोड़े और फ़ारसी में कहा: 'क्षमा करें; इस दुर्बल सेवक का गला सूख गया है। बार-बार श्लोक दोहराने

की शक्ति मुझमें नहीं है।'
फिर भी, श्रोतागण, उस कविता द्वारा उत्पन्न हानि और निराशा की भावना में पूरी तरह डूबे हुए, मन ही मन दोहराते रहे: मैं अब भी फीनिक्स की आशा में अपना जाल बिछाता हूँ—बस आओ, और देख लो। 'आह! कितना दर्द! कितना दुख!' बीज अंकुरित हुआ, बड़ा हुआ, और पक्षियों के लिए घर बन गया। 'अल्लाह की कसम, मिर्ज़ा साहब, क्या अद्भुत बात कही है!'
फैनी पार्क्स अवाक रह गईं। कविता सुनने और उसकी जमकर प्रशंसा करने का यह भी एक तरीका है! मेरे देश में तो शेक्सपियर भी रंगमंच के दर्शकों को इस तरह के आनंद से नहीं भर पाते। वास्तव में, हिंदुस्तान की सभ्यता ही उसकी कविता पर टिकी है।
जब तालियों की गड़गड़ाहट थोड़ी धीमी हुई, तो मिर्ज़ा ग़ालिब ने फिर से बोलना शुरू किया:
तुम्हें अंदाजा भी नहीं है कि तुम्हारे लिए व्यथित इच्छा से आहें भरने वाले कितने विनम्र होते हैं। मेरी आँखें बनो और देखो कि मैं कितनी छुपकर तुम्हें देखता हूँ: आओ, एक नज़र डालो।
अगर आपका मन गुलाब के बगीचे के नज़ारों का आनंद लेने का हो, तो मेरे छटपटाने और मेरे ज़ख्मों से बहते खून में रंगों की एक दुनिया छिपी है— आइए, एक नज़र डालिए!
तड़पने और छटपटाने का विषय ग़ज़ल के एक पहले के, बेहतर छंद में पहले ही इस्तेमाल हो चुका था। इसलिए इस छंद से श्रोताओं को असाधारण तालियाँ बजाने की उम्मीद कम ही थी। लेकिन इस छंद में थोड़ी सी 'काव्यात्मक चालाकी' थी, क्योंकि वक्ता अपने प्रियतम को यह कहकर लुभा रहा था कि अगर तुम्हें गुलाब के बगीचे का नज़ारा देखना हो, तो मैं लहूलुहान होकर यहाँ हूँ; प्रियतम के लिए यह दृश्य किसी गुलाब के बगीचे से कम रंगीन नहीं होना चाहिए, क्योंकि उसके द्वारा दिए गए घावों के कारण ही उसका खून बह रहा है।
वज़ीर को आयत का भाव तुरंत समझ आ गया, लेकिन वह खुलकर उसकी प्रशंसा करने में संकोच कर रही थी; उसने बस दबी आवाज़ में कहा, 'बहुत अच्छा।' नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान भी आयत का अप्रत्यक्ष अर्थ समझ गए थे, लेकिन उन्होंने भी खुलकर प्रशंसा करना उचित नहीं समझा। उन्होंने वज़ीर की ओर देखा, मुस्कुराए और कहा, 'तुम्हें तो महबूब को बुलाने के ऐसे सारे तरीके पता ही होंगे, है ना?'
वज़ीर ने शर्माते हुए मुस्कुराया और अपना सिर झुका लिया, लेकिन अब नवाब की टिप्पणी से आस-पास मौजूद अन्य लोगों को भी अप्रत्यक्ष अर्थ स्पष्ट हो गया। अब वे भी तालियाँ बजाने लगे।
मिर्ज़ा ग़ालिब ने अगला श्लोक प्रस्तुत किया:
कंघी कितनी निर्दयी है, जिसने उसके बालों में से एक बाल तोड़ दिया; मैं दुःख में अपने हाथ के पिछले हिस्से को काटती हूँ, उसे कंघी जैसा दिखाने की कोशिश करती हूँ: आओ, और देखो।

इसकी केवल हल्की-फुल्की प्रशंसा हुई, क्योंकि अधिकांश श्रोता जानते थे कि मिर्जा साहब ने अतीत में कई बार इस विषय का उपयोग किया था और यह कोई नई बात नहीं थी।
मिर्ज़ा ग़ालिब ने अगले श्लोक की ओर रुख किया:
मेरे लिए बसंत ऋतु बनो और देखो मैं कैसे खिलता और फूलता हूँ— मुझे अकेले अपने दरबार में

आने दो, पीने के लिए; मैं पीऊंगा, और पीता रहूंगा, और तुम देखते रहोगे!
'मेरे लिए बसंत बनो' इस वाक्यांश की बहुत सराहना हुई और श्रोताओं ने इसे बार-बार दोहराया। किसी ने कहा, 'मिर्ज़ा साहब, केवल ईश्वर ही हर दोष से मुक्त है! हमारे अतीत के महान गुरु मीर ताकी साहब ने प्रियतम के लिए "खिलते-फूलते" वाक्यांश का प्रयोग किया था, लेकिन आपने इसे अपने लिए इतने अनोखे ढंग से लागू किया है। बहुत बढ़िया!'
वक्ता की सूझबूझ पर ग़ालिब प्रसन्नता से मुस्कुराए और बोले, 'आपने बिल्कुल सही बात कही है, राय प्राण किशन साहब। "वसंत ऋतु" शब्द भी उसी स्रोत से आया है। हममें से प्रत्येक उस खुले भोज से अपना हिस्सा पाता है।'
राय प्राण किशन दिल्ली के सबसे धनी और सम्मानित रईसों में से एक थे, और यह केवल हिंदुओं तक ही सीमित नहीं था। उनकी कविता की बारीकियों को समझने और सराहने की विलक्षण क्षमता सर्वमान्य थी। दिल्ली में लगभग हर प्रभावशाली व्यक्ति उन्हें संगीत, विशेष रूप से पूर्व-मुगल शैली के ध्रुपद संगीत में उनकी विशेषज्ञता के कारण जानता था। अकबर शाह द्वितीय के पूर्व प्रधानमंत्री सैयद ख्वाजा फरीद के पुत्र नवाब ज़ैन-उल आबिदीन खान के साथ उनकी मित्रता जगजाहिर थी।
'जी हाँ, आप बिल्कुल सही हैं,' राय प्राण किशन ने कहा और महान कवि मीर की हिंदी कविता सुनाई।
शराब ने उसे खिलने और कलियों से भर दिया है, बस देखो; मित्रों, उसे एक और घूंट पीने दो, फिर वसंत की सच्ची भव्यता देखो!
उत्साह और प्रशंसा से भरी आवाज में राय प्राण किशन ने कहा, 'मिर्ज़ा साहब, आपने कितनी खूबसूरती से नए विषय रचे हैं! केवल ईश्वर ही हर तरह के दोष से मुक्त है!'
ये शब्द युवा कवि और वरिष्ठ कवि दोनों पर लागू होते थे, और इन्हें इसी रूप में सराहा गया। संयोगवश, ग़ालिब की अगली कविता को उनकी कविता की सराहना और उसके प्रशंसक दोनों के प्रति श्रद्धांजलि के रूप में लिया जा सकता है।
आपने मेरी सराहना नहीं की, मेरे साथ न्याय करने की जहमत भी नहीं उठाई और उस पीड़ा ने मुझे मार डाला; मैंने आपकी उदासीनता के अंदाज की सराहना की और उसके साथ न्याय किया, और देखिए कैसे!
"ईश्वर की कसम, नए विषयों की आपकी खोज प्रशंसनीय है," फ्रेजर ने कहा। "एक की उदासीनता और दूसरे की भावनात्मक शक्ति बराबर और विपरीत हैं। लेकिन मिर्ज़ा साहब, हमने आपकी सराहना की और आपके साथ न्याय किया। आपको हमसे कोई शिकायत नहीं होनी चाहिए।"
हिंदी के प्रथम पुरुष बहुवचन का प्रयोग वहाँ उपस्थित सभी लोगों को भलीभांति समाहित कर रहा था, लेकिन संभवतः यह फ्रेज़र का जानबूझकर किया गया प्रयोग था ताकि वे स्वयं को अभिव्यक्त कर सकें। ग़ालिब के उत्तर ने इसे स्पष्ट कर दिया: 'महोदय, निःसंदेह! और यही कारण है कि मैं आपके ऊँचे द्वार पर अपना माथा रगड़ता हूँ।' फिर उन्होंने शीघ्र ही अंतिम छंद प्रस्तुत किया, जो एक प्रकार से उस भोज और उसके मेज़बान पर उनकी टिप्पणी थी। इसका अप्रत्यक्ष

अर्थ यह था कि यदि आप मुझे वह सम्मान नहीं देंगे जिसके मैं योग्य हूँ, तो मैं आपके आस-पास कहीं भी नहीं मिलूँगा।
ग़ालिब, मैं तब तक नहीं झुकता जब तक दूसरा भी न झुके: मैं उसके तलवार के घुमावदार हिस्से की छाया में अपना सिर झुकाता हूँ, बस आकर देख लो!
सूक्ष्म भावों को समझने में माहिर फ्रेजर ने तुरंत कहा, 'मिर्ज़ा साहब, यह आयत आपके व्यक्तित्व को कितनी खूबसूरती से दर्शाती है! आपका आत्मसम्मान कितना प्रशंसनीय है, और अपनी परंपराओं को कायम रखने और दूसरों के दुर्व्यवहार से अपनी आत्मा की रक्षा करने की आपकी चिंता कितनी अद्भुत है!'
एक बार फिर, प्रशंसा और समर्थन की गूंज सुनाई दी, लेकिन इस बार कुछ प्रशंसा फ्रेजर की वाक्पटुता के लिए भी थी। फिर भी, कुछ भारतीयों ने यह भी महसूस किया कि नवाब रेजिडेंट बहादुर ने अपनी बात को इतनी अच्छी तरह से समझा तो लिया, लेकिन उन्होंने यह आश्वासन नहीं दिया कि मिर्ज़ा ग़ालिब के आत्मसम्मान और गौरव को कभी ठेस नहीं पहुंचेगी। वज़ीर ने मन ही मन सोचा, ये लोग अब राजाओं की तरह व्यवहार करने लगे हैं।
विलियम फ्रेजर के मुख्य शराब परोसने वाले ने मिर्ज़ा साहब को एक और गिलास पेश किया; उनकी ओर से हुक्का लाने वाले ने हुक्के के पाइप का चांदी का मुखपत्र पेश किया। मिर्ज़ा साहब ने एक ही बार में पूरा गिलास खाली कर दिया। ग्यारह आयतों की ग़ज़ल, और हर आयत को बार-बार दोहराना, और प्रशंसा की लगातार गूंज, इन सबमें आधे घंटे से ज़्यादा का समय लग गया और किसी को इसका एहसास भी नहीं हुआ। मेहमान अभी भी संतुष्ट नहीं थे और और चाहते थे, लेकिन मिर्ज़ा साहब में अब कोई ऊर्जा नहीं बची थी। ग्यारह आयतों की रचना में भी उन्हें उतनी ऊर्जा नहीं लगी होगी जितनी उन्हें इस प्रशंसापूर्ण सभा में प्रस्तुत करने में लगी।
कविता सत्र के समापन के लिए, उन्होंने एक फ़ारसी रुबाई भेंट की; बोतल और शराब के गिलास की ओर इशारा करते हुए उन्होंने कहा:
जब तक गिलास के तल में शराब की तलछट बची रहती है, मैं गर्व से कहता हूँ कि खसखस के फूल का वसंत भी शेष रहता है: जो लोग ईश्वर पर भरोसा रखते हैं, उनके लिए कल की चिंता करना विश्वासघात के समान है, दो साल पुरानी उत्तम शराब, जो एक दिन के लिए पर्याप्त है, शेष रहती है।
इस अवसर के लिए बिल्कुल उपयुक्त इस रुबाई ने एक बार फिर वाहवाही बटोरी। फ्रेजर के इशारे पर, उनके बटलर ने अंग्रेज़ी में घोषणा की कि भोजन परोसा जा चुका है। फ्रेजर ने प्रत्येक अतिथि से व्यक्तिगत रूप से भोजन कक्ष में जाने का अनुरोध किया। भोजन कक्ष, ड्राइंग रूम की तरह, ऊँची छत वाला और विशाल था। वज़ीर खानम यह देखकर थोड़ा आश्चर्यचकित हुए कि यद्यपि भोजन मेज पर, उपयुक्त छुरी-कांटे के साथ परोसा जा रहा था, फिर भी व्यंजन पूरी तरह से भारतीय था। फ्रेजर अविवाहित थे, लेकिन उनकी चार, या शायद छह, पत्नियाँ थीं। हालाँकि, उनमें से कोई भी मेज पर उपस्थित नहीं थी।

Navab Shamsuddin Ahmad Khan pays a visit to Wazir Khanam

रात के कई पहर बीत चुके थे जब फ्रेजर हवेली से गाड़ियाँ निकलने लगीं। नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान की बंद गाड़ी के साथ चार सशस्त्र सवार, फिर दो लाठीधारक, और उनके पीछे सिर पर बंद दीपक लिए दो मशालधारी चल रहे थे। इन रोशनी के अलावा, नवाब की गाड़ी बग्गी चालक के डिब्बे के दोनों ओर लगे नीले बल्बों से भी रोशन थी। नवाब की बग्गी के पीछे वज़ीर खानम के लाठीधारक और फिर उनका रथ था। काफिला धीरे-धीरे ढलान से उतरकर बारा हिंदू राव की ओर बढ़ा। नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान के मन में वज़ीर को अपने साथ बग्गी में बैठाने की तीव्र इच्छा थी, लेकिन वे ऐसा नहीं कर पाए, शायद उनकी सुंदरता से मुग्ध होने के कारण या फिर संकोच के कारण; विलियम फ्रेजर देख रहे थे; वे मन ही मन पछता रहे थे कि उन्होंने वज़ीर को बिना कोई स्पष्ट संकेत दिए जाने दिया।

हल्की धुंध छाई हुई थी; सड़कें और गलियाँ सुनसान थीं। ख्वाजा बाकी बि-अल्लाह का मज़ार अभी भी चहल-पहल से भरा था, लोग नमाज़ पढ़ रहे थे और कव्वाली गायक दिन की अपनी आखिरी संगीतमय प्रस्तुति दे रहे थे। शहर के वे इलाके जो बादशाह के सीधे प्रशासन के अधीन थे, अच्छी तरह से रोशन थे; खासकर चांदनी चौक में विशाल फतेहपुरी मस्जिद से हवेली तक, अली मरदान खान की नहर के दोनों किनारों पर चमकदार दीपक जल रहे थे, जिसे उन दिनों सआदत खान की नहर के नाम से जाना जाता था। पहाड़गंज से निकलने के बाद, उन्होंने थोड़ा घुमावदार रास्ता लिया और तुर्कमान गेट की ओर बाईं ओर मुड़ने के बजाय, वे फतेहपुरी मस्जिद के ठीक पीछे दाईं ओर आ गए। इस बिंदु से रास्ता काफी सुरक्षित था, लेकिन शम्सुद्दीन अहमद खान और उनके साथी वज़ीर के साथ तब तक रहे जब तक वे सिरकी वालन और वज़ीर के साधारण से घर के दरवाजे तक नहीं पहुँच गए।

जब वज़ीर रथ से बाहर आने की तैयारी कर रहे थे और एक लाठीधारी ने उनके दरवाजे पर दस्तक दी, तो नवाब साहब के एक घुड़सवार ने अपने घोड़े से उतरकर उनके पास आया। इससे पहले कि वह दस्तक पर दरवाजा खोल पातीं, घुड़सवार ने झुककर सलाम किया और कहा, 'नवाब साहब, अल्लाह की तरफ से एक संदेश है। क्या मैं निवेदन कर सकता हूँ, यदि इसे अनुचित न समझा जाए?'

वज़ीर का दिल ज़ोर से धड़कने लगा। 'कृपया आदेश दीजिए,' उसने कहा।

'माननीय नवाब दिलावर-उल मुल्क का आदेश है। क्या अगले एक-दो दिनों में उनसे आपकी दोबारा मुलाकात का कोई रास्ता निकाला जा सकता है?'

इस पूछताछ का अंतर्निहित अर्थ वज़ीर को स्पष्ट था। नवाब यह जानना चाहता था कि क्या वज़ीर औपचारिक रूप से किसी से जुड़ा हुआ है।

मुझे अपने सौभाग्य पर गर्व होगा। आदरणीय महोदय को अपने इस महान व्यक्तित्व को कष्ट देने का विचार कब आता है?

'क्या कल ऐसा संभव हो सकता है?'

'सूर्यास्त से लगभग डेढ़ घंटा पहले, यदि माननीय महोदय के पास समय हो।'
‘बहुत खूब। कल सुबह तक आपको सूचना मिल जाएगी,’ यह कहकर घुड़सवार ने सलाम किया और वापस मुड़ गया, लेकिन इससे पहले कि वज़ीर का दरवाजा खुल जाता। वह सीधे अपने शयनकक्ष में चली गई, उसका दिल भविष्य में मिलने वाली संभावनाओं की कल्पनाओं से भरा हुआ था।
अगली सुबह, वज़ीर ने सबसे पहले अपना घर साफ-सुथरा किया। उसका अगला काम नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान के बारे में विभिन्न स्रोतों से यथासंभव जानकारी जुटाना था।
यह वह समय था जब नवाब और विलियम फ्रेजर के बीच संबंध पूरी तरह से कटु हो चुके थे। नवाब ने अपने दो सौतेले भाइयों, अमीनउद्दीन अहमद और जियाउद्दीन अहमद से, फ्रेजर से मतभेद शुरू होने से पहले ही, लगभग संबंध तोड़ लिए थे। वे अपनी दो पत्नियों से भी खुश नहीं थे, जिनसे उन्होंने कुछ ही समय के अंतराल में विवाह किया था। राज दरबार में उनका कोई प्रभाव या उपस्थिति नहीं थी, क्योंकि उनके दोनों राज्य उन्हें राजा द्वारा नहीं, बल्कि अंग्रेजों द्वारा और अलवर के दिवंगत महाराजा बख्तावर सिंह द्वारा दिए गए थे। इस प्रकार, वे अपने जीवन के राजनीतिक और घरेलू दोनों क्षेत्रों में कुछ हद तक अकेले थे। सबसे बढ़कर, वे आवेग में आकर, जल्दबाजी में निर्णय लेने के लिए प्रवृत्त थे। वे स्वभाव से अभिमानी थे, भले ही वे अहंकारी न हों। यही कारण था कि वे अपने समकक्षों के साथ कभी भी सच्चे मैत्रीपूर्ण संबंध स्थापित करने में सफल नहीं हुए। फिर भी, दूसरी ओर, वे अपनी उदारता, अच्छे काम को पुरस्कृत करने की तत्परता और व्यक्तिगत वीरता के कारण अपनी प्रजा के बीच अत्यंत लोकप्रिय थे।
लॉर्ड लेक ने नवाब अहमद बख्श खान की उत्कृष्ट सेवाओं को मान्यता देते हुए और उनकी प्रतिष्ठा को बढ़ाते हुए उन्हें भरपूर पुरस्कार दिए थे। नवाब को जो क्षेत्र दिया गया था, वह आधुनिक हरियाणा में स्थित फिरोजपुर झिरका था। यह क्षेत्रफल और समृद्धि के मामले में एक पूर्ण राज्य के बराबर था। महाराजा बख्तावर सिंह ने पहले ही अहमद बख्श खान को आधुनिक राजस्थान में स्थित लोहारू का छोटा लेकिन महत्वपूर्ण क्षेत्र प्रदान कर दिया था। इन सबसे बढ़कर, महाराजा ने उन्हें अपनी प्रिय और प्रिय रखैल मूसी की बहन मुद्दी का विवाह कराया था। सम्राट शाह आलम द्वितीय ने उनके पिता को फखर-उद दौला रुस्तम जंग की वंशानुगत उपाधि प्रदान की थी; महाराजा ने उन्हें दिलावर-उल मुल्क की उपाधि दी। इन सभी बातों ने नवाब अहमद बख्श खान को उच्च कुलीन वर्ग में शामिल होने में योगदान दिया, जिनके अंग्रेजों के साथ संबंध लगभग मित्रता और समानता के थे।
मूसी और मुद्दी निम्न जाति और सामाजिक स्थिति की स्त्रियाँ थीं। उनके धर्म के बारे में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता, सिवाय इसके कि वे संभवतः हिंदू थीं, क्योंकि मूसी के बारे में कहा जाता है कि उन्होंने अपने कुलीन प्रेमी की चिता पर सती प्रथा का पालन किया था। स्पष्ट है कि दोनों ही सौंदर्य, शालीन व्यवहार और विवेक में अद्वितीय थीं, और अपने पुरुष का पूर्ण प्रेम पाने और उसे बनाए रखने की क्षमता रखती थीं।
मुद्दी ने कुछ ही समय के अंतराल में शम्सुद्दीन अहमद खान और इब्राहिम अली खान को जन्म दिया, और फिर दो बेटियों को। इब्राहिम अली की शैशवावस्था में ही मृत्यु हो गई। इसी बीच,

अहमद बख्श खान ने एक प्रसिद्ध मुगल परिवार की खूबसूरत लड़की बेगम जान से विवाह किया। यह परिवार बरलास नामक तुर्की जनजाति से था, जो अहमद बख्श खान के पिता की तरह मध्य एशिया से थे। बेगम जान ने दो बेटों, अमीनउद्दीन अहमद और जियाउद्दीन अहमद, और पांच बेटियों को जन्म दिया।

शम्सुद्दीन अहमद न केवल सबसे बड़े बेटे थे, बल्कि अपने पिता की तरह सुंदर और आकर्षक भी थे; पढ़ाई में बेहद प्रतिभाशाली, शासन कला और विज्ञान को सीखने और उसमें महारत हासिल करने में अतुलनीय रूप से तेज, धन और कुलीनता की जीवनशैली के लिए स्वभाव से पूरी तरह अनुकूल; ईश्वर ने उन्हें सब कुछ दिया था। इन सबके बावजूद, उनके लिए अपने पिता के राज्य का उत्तराधिकारी बनना संभव नहीं था: उनकी माता न केवल पूरी तरह से विदेशी और निम्न पृष्ठभूमि से थीं, बल्कि उनके पिता से विवाहित भी नहीं थीं। पूरा परिवार उनके खिलाफ था। लेकिन मुद्दी ने, अपनी स्वाभाविक मिलनसारिता और चतुराई व बुद्धिमत्ता से व्यवहार करने की क्षमता और अहमद बख्श खान को नापसंद आने वाली किसी भी बात को न मानने के अपने अथक परिश्रम के कारण, सभी विरोधों को रोक दिया। नवाब अहमद बख्श खान ने उनसे विधिवत इस्लामी विवाह किया, उन्हें बहू खानम नाम दिया और उन्हें अपनी पत्नी घोषित किया। उसी समय, उन्होंने शम्सुद्दीन अहमद को फिरोजपुर झिरका के नवाब के पद पर अपना उत्तराधिकारी नियुक्त किया।

इस प्रकार शम्सुद्दीन अहमद और उनकी माता पलक झपकते ही धरती की गहराइयों से आकाश के शिखर तक पहुँच गए। इससे स्वाभाविक रूप से बेगम जान और उनकी संतान का क्रोध कई गुना बढ़ गया। बेगम जान के कड़े विरोध के बावजूद, अहमद बख्श खान ने फरवरी 1825 में एक औपचारिक वसीयत तैयार की और उस पर जनरल ओचटरलोनी और सर चार्ल्स मेटकाफ जैसे प्रतिष्ठित व्यक्तियों के हस्ताक्षर करवाए। उन्होंने दो उत्तराधिकारियों को नियुक्त किया: शम्सुद्दीन अहमद खान को फिरोजपुर झिरका की गद्दी और अमीनउद्दीन अहमद खान को लोहारू की गद्दी। दुर्भाग्यवश, इस फैसले से न तो शम्सुद्दीन अहमद और न ही बेगम जान संतुष्ट हुए। शम्सुद्दीन अहमद का मानना था कि उत्तराधिकार के नियम (या कानून) के अनुसार, दोनों गद्दी पर उनका ही अधिकार है। दूसरी ओर, बेगम जान और उनके पुत्र शम्सुद्दीन अहमद को नाजायज मानते थे क्योंकि अहमद बख्श खान ने उनके जन्म के बाद मुद्दी से विवाह किया था। बेगम जान के अनुसार, शम्सुद्दीन अहमद न केवल एक निम्न जाति की महिला से पैदा हुए थे, जो परिवार की परंपराओं से पूरी तरह अलग थी, बल्कि उन पर एक कथित इस्लामी नियम का भी उल्लंघन हुआ था, जिसके अनुसार बच्चा उसी स्त्री का होता है जिसके बिस्तर पर वह पैदा होता है; इस प्रकार शम्सुद्दीन अहमद की कोई वैधता नहीं थी।

यह एक अलग बात थी कि अंग्रेजी कानून के अनुसार, वैधता के बजाय ज्येष्ठाधिकार सर्वोपरि था: जन्म लेने वाला पहला पुरुष ही सब कुछ प्राप्त करता था। दूसरी ओर, इस्लामी या मुगल प्रथा के अनुसार उत्तराधिकार को नियंत्रित करने वाला कोई कानून या परंपरा भी नहीं थी।

अहमद बख्श खान इस विचार से व्याकुल थे, जो नाखून में चुभते छोटे कांटे की तरह बार-बार उनके मन में उठता था, कि उनका अभिमानी और मनमानी करने वाला बड़ा बेटा अपने सौतेले

भाइयों को चैन से नहीं रहने देगा, और न ही वे उन्हें वह भाईचारा और स्नेह देंगे जिसका वे अपने पुत्र होने के नाते हकदार थे। वे अभी इस समस्या का समाधान खोजने से बहुत दूर थे, यह सुनिश्चित करने की कोशिश कर रहे थे कि उनके पुत्रों की जन्मजात प्रतिभा, धन और सम्मान किसी भी तरह स्वामित्व और सत्ता के विवादों में उलझने से नष्ट न हो जाए, तभी उन्हें सर डेविड ओचटरलोनी की मृत्यु का समाचार मिला (जुलाई 1825)। सर डेविड ओचटरलोनी ही एकमात्र अंग्रेज थे जिन पर अहमद बख्श खान को अपने परिवार के सच्चे शुभचिंतक, संरक्षक और निस्वार्थ मित्र होने का पूरा भरोसा था।

यह एक भयानक झटका था, क्योंकि यद्यपि अहमद बख्श खान के चार्ल्स मेटकाफ के साथ भी अच्छे और सौहार्दपूर्ण संबंध थे, नवाब को उनसे ओचटरलोनी के वास्तविक प्रतिस्थापन की उम्मीद नहीं थी। ओचटरलोनी, जैसा कि अंग्रेजों ने बाद में भारतीय जीवनशैली अपनाने वाले व्यक्तियों के लिए अपमानजनक रूप से इस्तेमाल किया, 'पूरी तरह से भारतीय' बन चुके थे। वे भारत की संस्कृति में पूरी तरह से घुलमिल गए थे; वे दिल्ली के रईसों, धनी और विद्वान पुरुषों के आचरण और शिष्टाचार की बारीकियों को समझ सकते थे। इसके विपरीत, चार्ल्स मेटकाफ अंग्रेजों की 'नई पीढ़ी' से थे, वह पीढ़ी जो इस बात से आश्वस्त थी कि भारत के कल्याण और विकास को सुनिश्चित करने के लिए उन्हें उस पर शासन करना होगा। पुरानी और नई पीढ़ी के स्वभाव में इस अंतर और नई पीढ़ी के भारत में अंग्रेज के मिशन में विश्वास के कारण, नई पीढ़ी में शायद ही कोई ऐसा था जो यह कल्पना कर सकता था कि भारतीय और फिरंगी किसी प्रकार के भाईचारे के संबंध में सह-अस्तित्व में रह सकते हैं।

अंग्रेज़ शासकों की नई पीढ़ी से होने के बावजूद, फ्रेज़र उनसे अलग थे, शायद वरिष्ठ शासक ओचटरलोनी और 'ईस्ट इंडियन' जेम्स स्किनर के साथ उनकी मित्रता के कारण। चार्ल्स मेटकाफ और विलियम फ्रेज़र एक-दूसरे को पसंद नहीं करते थे; मेटकाफ फ्रेज़र को बहुत ही गंवार मानते थे, जबकि फ्रेज़र मेटकाफ को 'अशिष्ट' बताते थे।

जिस प्रकार दिल्लीवासियों की ज़ुबान पर जनरल सर डेविड ओचटरलोनी 'अख्तरलोनी साहब' बन गए, उसी प्रकार स्किनर 'सिकंदर साहब' के नाम से मशहूर हो गए। उस समय अक्सर 'मिश्रित नस्ल' के कहे जाने वाले स्किनर अंग्रेजों के बहुत करीब हो गए और उन्होंने अनियमित सैनिकों की एक बटालियन की कमान संभाली, जिसे 'स्किनर हॉर्स' के नाम से जाना जाता था, जिसके बारे में हम पहले भी सुन चुके हैं। अपनी पृष्ठभूमि के बावजूद, स्किनर ने भारतीय (विशेषकर मुस्लिम) और अंग्रेज़, दोनों ही दुनियाओं के बीच सहजता से तालमेल बिठाया। उनके बेटे, अलेक्जेंडर स्किनर ('एलेक साहब') वज़ीर खानम की बेटी सोफिया के पति बनने वाले थे, लेकिन उस समय यह घटना बहुत दूर थी।

अंग्रेजों द्वारा मूल रूप से 'पूर्वी भारतीय' के रूप में वर्णित, जेम्स स्किनर जैसे व्यक्तियों को जल्द ही 'यूरेशियन', फिर 'इंडो-एंग्लियन' और बहुत बाद में 'एंग्लो-इंडियन' कहा जाने लगा। उस समय, अंग्रेजों की नई पीढ़ी के बीच 'हाफ-कास्ट' जैसे अपमानजनक शब्द का प्रयोग तेजी से बढ़ रहा था।

फ्रेजर की जीवनशैली आंशिक रूप से ओचटरलोनी के प्रभाव और स्किनर के साथ उनकी मित्रता

के कारण थी, और निश्चित रूप से इससे कहीं अधिक उनके अपने स्वभाव के कारण थी, जो भारतीय कुलीन वर्ग के समान था और उस समय के अंग्रेजी शासक वर्ग से भिन्न था। नवाब अहमद बख्श खान के बच्चे उन्हें चाचा जान कहकर पुकारते थे, लेकिन चार्ल्स मेटकाफ उनसे बिल्कुल अलग थे। ओचटरलोनी के निधन के बाद, अहमद बख्श खान के पुराने डर और भी बढ़ गए। उन्हें इस बात की बहुत कम उम्मीद थी कि शम्सुद्दीन अहमद का महत्वाकांक्षी स्वभाव उन्हें अपने भाई-बहनों के साथ पूरा न्याय करने देगा। न ही अहमद बख्श खान को पूरा भरोसा था कि चार्ल्स मेटकाफ, डेविड ओचटरलोनी की तरह, अपनी वसीयत में लिखी बातों के अनुसार अपनी संपत्ति का निपटारा करने के उनके इरादे और निर्णय को लागू करने में पूरी तरह से सक्षम होंगे। इसलिए, अक्टूबर 1826 में अपनी अंतिम बीमारी के दौरान, अहमद बख्श खान ने चार्ल्स मेटकाफ और दिल्ली स्थित रेजिडेंसी के अन्य प्रतिष्ठित व्यक्तियों के लिए एक भोज का आयोजन किया। उन्होंने औपचारिक रूप से अपने पद त्याग दिए और उनकी उपस्थिति में फिरोजपुर झिरका के नवाब का पद शम्सुद्दीन अहमद को तथा लोहारू और पहासू नामक एक छोटे से क्षेत्र का पद अमीनउद्दीन अहमद को सौंप दिया। उन्होंने चार्ल्स मेटकाफ से यह वचन लिया कि नवाब अहमद बख्श खान के बाद भी यह व्यवस्था जारी रहेगी।

इस समझौते के लगभग एक वर्ष बाद, फखर-उद दौला दिलावर-उल मुल्क नवाब अहमद बख्श खान रुस्तम जंग ने विरोध और असंगतता के इस सदन को छोड़कर प्रतिशोध और परिणाम के सदन की यात्रा की। शम्सुद्दीन अहमद खान ने अपने पिता के लिए निर्धारित शोक के नियमों और शिष्टाचारों का पालन किया और कुछ समय तक शोक मनाने के बाद माननीय कंपनी बहादुर को एक याचिका सौंपी। उन्होंने कहा कि उनके पिता ने राज्य को दो भागों में बाँटकर उचित नहीं किया; वास्तव में, सबसे बड़े पुत्र होने के नाते उन्हें अपने पिता द्वारा शासित संपूर्ण क्षेत्र का उत्तराधिकार मिलना चाहिए। उन्होंने ज्येष्ठाधिकार के सिद्धांत का हवाला देते हुए तर्क दिया कि चूंकि यह शासक वर्ग में प्रचलित है, इसलिए इसे शासित वर्ग पर भी लागू न करने का कोई कारण नहीं है। इस तर्क को सिरे से खारिज कर दिया गया।

शुरुआती असफलता के बावजूद, शम्सुद्दीन अहमद खान ने कंपनी को याचिकाएँ भेजना जारी रखा और अंग्रेजों से व्यक्तिगत संपर्क और मुलाकातों के माध्यम से भी अपने मामले को आगे बढ़ाया। अंततः, चार्ल्स मेटकाफ के बाद तीसरे रेजिडेंट फ्रांसिस हॉकिन्स ने शम्सुद्दीन अहमद का समर्थन किया और कलकत्ता को उनकी याचिका स्वीकार करने की सिफारिश की। परिणामस्वरूप, अमीनउद्दीन अहमद को उनके राज्य से बेदखल कर दिया गया और शम्सुद्दीन अहमद एकमात्र शासक बन गए।

अमीनुद्दीन अहमद खान और उनकी माता ने भी इस फैसले के खिलाफ याचिका दायर की और लगातार ऐसा करते रहे। अब जब विलियम फ्रेजर रेजिडेंट बने, तो उन्हें सभी मामलों की प्रत्यक्ष जानकारी थी, इसलिए उन्होंने अमीनुद्दीन अहमद खान की याचिका को सकारात्मक रूप से देखा और कलकत्ता को एक रिपोर्ट भेजी जिसमें पूर्व निर्णय को रद्द करने और यथास्थिति बहाल करने का आदेश दिया गया था। शम्सुद्दीन अहमद को लगा था कि फ्रेजर, जिन्हें वे 'चाचा' कहते थे,

उनका समर्थन करेंगे। परिणाम स्पष्ट था: चाचा और भतीजे के बीच संबंध बेहद तनावपूर्ण हो गए। मिर्ज़ा ग़ालिब को अहमद बख्श खान से अपनी शिकायत थी। यह एक लंबी कहानी है, जिसका सार इस प्रकार है। कंपनी के निर्देश पर, नवाब अहमद बख्श खान ने ग़ालिब के विस्तारित परिवार के लिए अपनी जागीर से पाँच हज़ार रुपये की वार्षिक पेंशन आवंटित की थी। मिर्ज़ा ग़ालिब इसे बहुत कम मानते थे। उनका दावा था कि इस छोटी सी राशि में से नवाब अहमद बख्श खान ने ख्वाजा हाजी नामक एक महत्वहीन व्यक्ति को दो हज़ार रुपये का वार्षिक हिस्सा भी दे दिया था, जो ग़ालिब के अनुसार उनके पिता या चाचा का कोई रक्त संबंधी नहीं था; रिश्ता केवल वैवाहिक था और वह भी बहुत कमज़ोर। ग़ालिब के अनुसार, ख्वाजा हाजी एक मामूली व्यक्ति था। ग़ालिब के दादा मिर्ज़ा कुकान बेग की पत्नी की एक विधवा बहन थी; ख्वाजा हाजी उसी बहन का पोता था। मिर्ज़ा ग़ालिब के वृत्तांत के अनुसार, एक अज्ञात माता-पिता का व्यक्ति नवाब अहमद बख्श खान के अस्तबल में अस्तबल के रखवाले और भार ढोने वाले के रूप में कार्यरत था। अपनी पत्नी की विधवा बहन की बेटी पर दया करते हुए, मिर्ज़ा कुकान बेग ने उस अनाथ लड़की का विवाह उस गुमनाम व्यक्ति से करवा दिया। ख्वाजा हाजी का जन्म उसी विवाह से हुआ था।

मिर्ज़ा ग़ालिब की नाराज़गी की जड़ें गहरी थीं और इसके उद्भव की खोज करने पर कहानी और भी पेचीदा हो जाती है। ग़ालिब के पिता की कम उम्र में ही कंपनी की सेवा में एक युद्ध में मृत्यु हो गई। उनकी जागीरें, जिनमें पहासू भी शामिल था, जो अंग्रेजों ने उन्हें उनकी उत्कृष्ट सेवाओं के सम्मान में प्रदान की थी, उनके छोटे भाई नसरुल्लाह बेग खान को इस शर्त पर मिलीं कि वे ग़ालिब और उनके विस्तारित परिवार का भरण-पोषण मुगल कुलीनता के अनुरूप सदा करते रहेंगे। नसरुल्लाह बेग खान की कुछ समय बाद ही एक दुर्घटना में मृत्यु हो गई। अंग्रेजों ने पहासू राज्य को वापस ले लिया और इसे अहमद बख्श खान को इस शर्त पर दे दिया कि वे दोनों भाइयों के विस्तारित परिवारों के उत्तराधिकारियों को सदा के लिए दस हजार रुपये प्रतिवर्ष की पेंशन प्रदान करेंगे।

मिर्ज़ा ग़ालिब के अनुसार, युद्ध के मैदान में नसरुल्लाह बेग खान की अचानक हुई आकस्मिक मृत्यु के तुरंत बाद, दुष्ट ख्वाजा हाजी ने उनके सभी तंबू, घोड़े, पालकी, कालीन, बर्तन और अन्य संपत्ति लूट ली और नवाब अहमद बख्श खान के पास जाकर शिविर की सारी संपत्ति नवाब को सौंप दी। यहीं से अन्याय की असली जड़ शुरू हुई। अहमद बख्श खान ने जब दोनों भाइयों के परिवारों के बीच पेंशन को बराबर बाँटने का फैसला किया, तो उन्होंने यह मान लिया कि ख्वाजा हाजी वास्तव में ग़ालिब के परिवार का सदस्य है, और ग़ालिब के पिता के उत्तराधिकारियों के हिस्से के रूप में निर्धारित पाँच हज़ार रुपये में से उसे सालाना दो हज़ार रुपये की अच्छी-खासी रकम आवंटित कर दी। दूसरे शब्दों में, हाजी को उसके राजद्रोह के लिए एक अच्छा-खासा मुआवज़ा दिया गया।

ग़ालिब का बचपन एक कुलीन परिवार में बीता, साथ ही वैवाहिक संबंध भी उनके लिए बहुत समृद्ध थे। उनके चाचा नसरुल्लाह बेग खान का विवाह अहमद बख्श खान की बहन से हुआ था। ग़ालिब की पत्नी अहमद बख्श खान के छोटे भाई नवाब इलाही बख्श खान की पुत्री थीं। अहमद बख्श खान और बाद में शम्सुद्दीन अहमद खान के प्रति ग़ालिब की नाराज़गी इस बात से और बढ़

गई कि उन दोनों ने ही उनके इस घनिष्ठ संबंध को कोई महत्व नहीं दिया, जबकि उस समय के रिवाज़ के अनुसार दामाद को विशेष सम्मान मिलना चाहिए था। उन्होंने कलकत्ता में बार-बार अपील की, लेकिन उन्हें कोई सफलता नहीं मिली। अपनी एक याचिका में उन्होंने शम्सुद्दीन अहमद खान पर भी कई आरोप लगाए थे।

दोनों परिवारों के बीच, विशेषकर उत्तराधिकार के बाद शम्सुद्दीन अहमद खान और ग़ालिब के बीच, दूरदर्शिता की कमी और यहाँ तक कि शत्रुता भी पनप गई। न तो किसी पक्ष से और न ही दिल्ली के अभिजात वर्ग से किसी ने भी संबंधों को सुधारने और इस विषैली गांठ को सुलझाने का कोई प्रयास किया। ग़ालिब द्वारा अंग्रेजों से अपनी पेंशन बहाल करने की लगातार गुहार शम्सुद्दीन अहमद खान के लिए कोई खास चिंता का विषय नहीं थी, लेकिन लोहारू को लेकर फ्रेजर के साथ उनका मतभेद बिलकुल अलग बात थी।

शम्सुद्दीन अहमद खान के लिए यह समय हृदय रोग को अपने ऊपर हावी होने देने का नहीं था, ताकि वे अधिक महत्वपूर्ण मामलों से विचलित न हों। लेकिन जैसा कि फारसी कवि ने कहा: प्रेम ने इन सबसे कहीं अधिक किया है, और वास्तव में हमेशा करता रहता है।

वज़ीर अपने ही विचारों के भंवर में खोई हुई थी। शायद, उसके जीवन के शतरंज के बोर्ड पर, एक नया राजकुमार सूर्य की तरह उदय होने वाला था; शम्स नाम का अर्थ सचमुच 'सूर्य' होता है। मार्स्टन ब्लेक ने उसे बोर्ड पर एक अकेली मोहरे के समान छोड़ दिया था। अपनी जगह पर बने रहना असंभव था, और ऊपर उठना भी उतना ही असंभव था। अपने बच्चों का ख्याल उसकी आत्मा को तेज लोहे की चक्की की तरह चुभ रहा था। मैं उनका पालन-पोषण कैसे करूँ, उन्हें अपनी संस्कृति की आवश्यक नींव कैसे दूँ, ताकि वे सच्चे मार्ग से न भटकें? खैर, वे फिरंगी बनकर बड़े होंगे, लेकिन उन्हें मुझे अपनी सच्ची माँ मानना चाहिए, अपनी भूमि की सुगंध और दृश्यों को जानना चाहिए, ताकि अगर वे सात समुद्र पार अपने देश में जाकर बस भी जाएँ, तो भी वे अपनी जड़ों को न भूलें।

और कौन जाने? क्या नवाब मुझे स्थायी रूप से रखना चाहता है, या यह महज़ एक मनोरंजन है जिसकी उसे चाहत है? नहीं, लेकिन मैं कुछ दिनों के लिए मात्र खिलौना बनकर नहीं रहूंगी।

उस समय किसी को भी शम्सुद्दीन अहमद खान के जीवन के भविष्य और अंत का जरा भी अंदाजा नहीं था। फिलहाल, वह फिरोजपुर झिरका और लोहारू के एकमात्र शासक थे। यह सच है कि उनके और अंग्रेज ग्रैंड साहब के बीच अच्छे संबंध नहीं थे, और ग्रैंड साहब ने कलकत्ता में उनके खिलाफ शिकायत दर्ज कराई थी। लेकिन ये राज्य के मामले थे: सत्ता और शासन के क्षेत्र में चीजें हमेशा बदलती रहती हैं। आखिरकार, कोलब्रुक साहब ने नवाब के खिलाफ लिखा था, लेकिन अंततः इससे क्या फर्क पड़ता है? हॉकिन्स साहब के आने पर सब कुछ ठीक हो गया। ठीक है, मान लेते हैं कि फ्रेजर साहब ने उनके खिलाफ लिखा था; लेकिन फ्रेजर साहब हमेशा के लिए तो नहीं रहेंगे। शायद कोई और आएगा और फिर से सही काम करेगा। और फिर... और फिर, हमारे ऊपर राजा हैं। कौन जानता है, शायद कल या कुछ ही समय में, मराठों की सहायता से सर्वशक्तिमान अपनी शक्ति को हर जगह पुनः प्राप्त कर लें। सर्वशक्तिमान के लिए कुछ भी कठिन नहीं है; शायद अंततः वह हम पर दया करेगा।

नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान का आकर्षक व्यक्तित्व, उनका शाही आचरण और व्यवहार, उनकी परिष्कृत शिष्टाचार, इन सबने छोटी बेगम पर अपनी छाप छोड़ी थी; क्या उनका दिल भी कहीं न कहीं उनसे जुड़ा हुआ था? उन्हें नहीं पता था। उन्हें नहीं पता था कि ब्लेक साहब के लिए उनका प्यार कितना गहरा था। बेशक वह उनके लिए बार-बार रोईं, लेकिन वह सिर्फ मार्स्टन ब्लेक के लिए नहीं रोईं। उनका दुर्भाग्य, उनके बच्चे, दिल्ली में उनका घर जिसे अब वह घर नहीं कह सकती थीं: वह इन सब चीजों के लिए शोक मना रही थीं।

फिर भी, बल्क साहब इतने प्रिय और लाडले थे। उन्हें शम्सुद्दीन अहमद से कुछ डर सा लगता था। बल्क साहब के प्रति उनके मन में कभी कोई श्रद्धा नहीं थी। यह सच था कि नवाब साहब उनके अपने ही समुदाय के थे, लेकिन किसी अज्ञात कारण से, उन्हें उनसे थोड़ी घबराहट होती थी। उन्होंने मन ही मन कहा, "अगर मुझे उनसे किसी भी प्रकार का संबंध स्थापित करना है, तो मुझे अपने मन से यह श्रद्धा निकालनी होगी।"

अगली सुबह नवाब की ओर से एक राजदंड लेकर आया और बताया कि नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान साहब दोपहर की नमाज़ के बाद अपने घर की शोभा बढ़ाएंगे और उम्मीद है कि वज़ीर खानम साहब के पास उस समय उनसे मिलने का समय होगा। वज़ीर ने जवाब भेजा कि नवाब को अवश्य आना चाहिए; उनकी सेविका की आँखें और हृदय उनके स्वागत के लिए पहले से ही खुले हैं।

वज़ीर द्वारा उचित इनाम दिए जाने के बाद, राजदंड धारण करने वाले ने सलाम किया और चला गया। शम्सुद्दीन अहमद खान के करिश्मा से प्रभावित न होने के अपने दृढ़ संकल्प के बावजूद, उसका दिल चिंता से धड़कने लगा: मैं उनसे कैसे पेश आऊं ताकि उन्हें अपमानित महसूस न हो और मैं अपनी गरिमा भी बनाए रखूं? खैर, चिंता के हावी होने से पहले ही, वह यात्रा की तैयारियों और अपने श्रृंगार में इतनी व्यस्त हो गई कि उसे पता ही नहीं चला कि समय कितनी जल्दी बीत गया। उसे थोड़ा अफसोस हुआ कि वह मंझली से कुछ उपयोगी सलाह ले सकती थी।

निर्धारित समय से कुछ ही मिनट बाद सिरकी वालन में 'हटो, हटो!', 'रास्ता दो!' की आवाज़ें सुनाई देने लगीं। नवाब चार अरबी घोड़ों द्वारा खींची जा रही अंग्रेज़ी शैली की बंद गाड़ी में सवार थे। लाल रंग की हल्की ऊनी वर्दी और उपयुक्त चिह्नों से सुसज्जित कोचवान अपनी गाड़ी के डिब्बे पर सीधा बैठा था, जाहिर तौर पर अपने घोड़ों पर गर्व महसूस कर रहा था, जिनके मुकुट चांदी से जड़े मोर पंखों के थे, मुंह रेशम का बना था और पूंछ पर सोने के धागे का आभूषण था। कोचवान के एक हाथ में एक कोमल चाबुक थी और दूसरे हाथ में घोड़ों की लगाम थी।

रथ के आगे और पीछे चार-चार सशस्त्र घुड़सवार चल रहे थे, और दो लाठीवाहक दुगनी गति से रथ के साथ-साथ चल रहे थे। नवाब पूरे सम्मान के साथ रथ से उतरे और मुख्य द्वार पर वज़ीर ने उनका स्वागत किया। उन्होंने झुककर सलाम किया और नवाब का अभिनंदन करते हुए कहा कि नवाब का अपने घर आना उनके लिए सौभाग्य की बात है। चांदी के एक फव्वारे से उन्होंने नवाब के वस्त्रों पर हल्के से गुलाब जल छिड़का। उनके गले में गुलाबों की माला पहनाते हुए उन्होंने कहा, 'आपका यहाँ आना मेरे हृदय को प्रसन्न करता है!' उन्होंने यह बात फ़ारसी में कही और फिर हिंदी में कहा, 'मुझे अपने सौभाग्य पर गर्व है कि आपके कदम मेरे इस छोटे से, जूते के डिब्बे

जैसे घर तक पहुँचे! हम अकेले रहने वालों का सोया हुआ सौभाग्य आखिरकार जाग उठा है। बिस्मिल्लाह, कृपया इस द्वार को सुशोभित करें।'
नवाब ने अपने गले से मोतियों का हार उतारकर धीरे से वज़ीर के सिर पर लपेट दिया। फिर मुस्कुराते हुए कहा, 'इसी प्रकार, यहाँ आकर मुझे भी बहुत प्रसन्नता हो रही है।'
नवाब का हाथ थामकर वह उन्हें अपने छोटे से दीवान-खाने में ले गईं। नवाब ने साज-सज्जा पर ध्यान से नज़र डाली, मानो उनकी कीमत और घर की मालकिन के सलीके और अच्छे प्रबंधन का आकलन कर रहे हों। वज़ीर को निस्संदेह मार्स्टन ब्लेक से कई अच्छी चीज़ें विरासत में मिली थीं, लेकिन उन्हें उन्हें आकर्षक ढंग से सजाने और रखने की कला भी आती थी। इस मामले में उन्होंने मार्स्टन ब्लेक और अबी मेमसाहिब दोनों से ही सीखा था, क्योंकि समृद्ध, उच्च-मध्यम वर्ग के अंग्रेज़ लोग आम तौर पर अपने रहने के कमरों को खूबसूरती से सजाने में माहिर होते थे।
वज़ीर के घर में हर चीज़ में एक सहज शालीनता, स्वच्छता और किसी भी प्रकार की अनावश्यक वस्तु का अभाव था, चाहे वह संग्रह करने का उत्साह हो या प्रदर्शन करने की ललक। सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि उन्होंने अपने घर को इस तरह व्यवस्थित किया था कि फूलदान से लेकर दीवार पर लगे दर्पण या लटकन तक, हर चीज़ उस स्थान के लिए बिल्कुल उपयुक्त प्रतीत होती थी जहाँ उसे रखा गया था। कुछ अंग्रेज़ महिलाओं में वास्तव में संग्रह करने और अपने घरों को अपनी पसंद की चीज़ों से भरने का शौक होता था, भले ही घर में उनके लिए कोई उपयुक्त स्थान हो या न हो। कुछ भारतीय महिलाएं और पुरुष, विशेषकर लखनऊ के, अंग्रेजों की नकल करते हुए अपने घरों को विविध वस्तुओं के संग्रहालय जैसा बना लेते थे। विडंबना यह है कि अंग्रेज ही मन ही मन ऐसे घरों का उपहास करते थे, यह जाने बिना कि फालतू सामान जमा करने का यह शौक उन्होंने अंग्रेजों से ही सीखा था। अशरफ-उद दौला और उनके पिता मुंतज़िम-उद दौला के बारे में बात करते हुए, फैनी पार्क्स ने वज़ीर से कहा था कि फतेहगढ़ में उनका आलीशान महल इतनी चीज़ों से भरा हुआ था, और वो भी इतनी बेमेल विविधता वाली कि वहाँ खड़े होने की भी जगह मुश्किल से मिलती थी। खैर, वज़ीर का घर हर चीज़ में अच्छे प्रबंधन और उत्तम रुचि को दर्शाता था।
घर का निर्माण और व्यवस्था कुछ इस प्रकार थी: सामने का दरवाजा एक छोटे से हॉल में खुलता था। घर में प्रवेश करते ही दोनों ओर बरामदे और सामने एक आंगन था। बरामदे के अंत में एक कमरा था जिसकी लंबाई उसकी चौड़ाई से थोड़ी अधिक थी। कमरे में चमकदार सफेद कपड़े से ढका हुआ कालीन था, और कुछ चुनिंदा जगहों पर सफेद चादर के ऊपर छोटे-छोटे कालीन भी बिछे थे; इसमें चार दरवाजे और दो खिड़कियां थीं। दोनों खिड़कियां और दो दरवाजे पूर्व दिशा की ओर थे। प्रत्येक खिड़की पर बांस की सुंदर जाली लगी थी जिससे रोशनी अंदर तो आती थी, लेकिन अंदर का दृश्य दिखाई नहीं देता था।
छत से एक बड़ा कांच का झूमर लटका हुआ था; रात में शायद फर्श पर गोल गुंबद होते होंगे, लेकिन दिन के उस समय उनकी ज़रूरत नहीं थी। कमरा अभी भी रोशन था, हालाँकि सूरज कुछ देर पहले ही पश्चिम की ओर ढलने लगा था। कमरे के पश्चिमी छोर पर, यानी मुख्य द्वार के सामने, दो मोटी रजाईयों से बना एक नीचा चबूतरा था, जो कमरे की पूरी चौड़ाई में फैला हुआ था, और

उस पर दो कश्मीरी कालीन बिछे थे। दीवार के सहारे दो बड़े बेलनाकार तकिए रखे थे, जिनके सामने एक चांदी का थूकदान था, और उसके पास ही शंकु के आकार का एक गुंबदनुमा चांदी का पानदान था। एक छोटी चांदी की थाली में इत्र की छोटी कांच की शीशियाँ रखी थीं, और एक बड़ी थाली में चांदी के छोटे प्याले रखे थे जिनमें बादाम, अखरोट, किशमिश, चिलगोज़ा (मध्य एशियाई चीड़ का बीज), पिस्ता और इलायची जैसे सूखे मेवे चांदी की पन्नी में लिपटे हुए थे। पश्चिमी दीवार पर उपयुक्त स्थानों पर गुलाब की मालाएँ लटकी हुई थीं, और ताजे फूलों के गुलदस्ते अलावों की शोभा बढ़ा रहे थे।

वज़ीर का हाथ अभी भी नवाब के हाथ में था, वह उन्हें दीवान-खाना में ले गईं, उन्हें कमरे के सिरहाने पर बिठाया और उनके सामने खड़ी हो गईं, दोनों हाथों को छाती के ठीक नीचे एक दूसरे पर रखकर, समर्पण और सेवा की तत्परता का पारंपरिक मौन भाव व्यक्त किया। दिन के उजाले में नवाब पिछली रात की तुलना में और भी अधिक सुंदर और आकर्षक लग रहे थे। पिछली शाम लगभग पूरी रात उनके चेहरे पर जो तनाव और बेचैनी झलक रही थी, वह गायब हो गई थी। उनका पहनावा लगभग एक जैसा ही था, लेकिन नीमा के ऊपर उन्होंने पिस्ता रंग का जामवार लबादा ओढ़ा हुआ था। उनका चेहरा इतना ताजगी भरा और वसंत ऋतु की इतनी झलक लिए हुए था कि मानो नवंबर की शाम में दूर क्षितिज तक फैले हुए पीले-पीले फूलों से लदे सरसों के खेत की याद आ गई हो। पिस्ता रंग का फूलों वाला लबादा भी उनके गोरे चेहरे पर खूब जंच रहा था, जो इस समय हल्की मुस्कान से जगमगा रहा था।

नवाब एक उच्च शिक्षित व्यक्ति की तरह बोलते थे; लेकिन उनकी भाषा, जो हमेशा परिष्कृत और अक्सर फारसी लहजे वाली होती थी, कभी-कभी अनजाने में बोले गए शब्दों से अटपटी हो जाती थी। ये शब्द या अभिव्यक्ति अनैच्छिक रूप से बोली जाती है, और हालांकि अर्थहीन नहीं होती, लेकिन अक्सर बहुत तेज़ी से बोली जाती है। नवाब के मामले में, यह शब्द था 'भाई वल्लाह', जिसका मोटे तौर पर अनुवाद 'भाई, खुदा की कसम!' होता है। ऐसे शब्द आज भी उर्दू बोलने वालों में काफी आम हैं।

‘भाई वल्लाह, वज़ीर खानम, दिल के आकर्षण की कितनी ज़बरदस्त परीक्षा थी जिसने मुझे आपके दरवाज़े तक खींच लाया, बल्कि यूँ कहूँ कि मुझे घसीटकर ले आया,’ उसने कहा। वह शिष्टाचार के अनुसार अपने पैर जांघों के नीचे दबाकर बैठा था। लेकिन उसके लहजे में न तो विनम्रता थी और न ही विनती। बल्कि, एक अनकही नज़दीकी, यहाँ तक कि आत्मीयता का भाव था। वज़ीर के शरीर से निकलती गर्माहट उसे मदहोशी का सुखद एहसास करा रही थी। जब वज़ीर ने उसका हाथ अपने हाथ में लिया, तो उसे वहीं रुककर उसे गले लगाने, अपनी बाहों में उठाने, अपनी गाड़ी में बिठाने और चले जाने का मन हुआ। लेकिन उसने ऐसा नहीं किया, क्योंकि यह उसके अपने शिष्टाचार के नियमों के विरुद्ध होता। वह अब भी उसका हाथ पकड़कर उसे अपने पास बिठाना चाहता था, लेकिन यहाँ भी, पहल वज़ीर को ही करनी थी।

उन्होंने कहा, ‘नवब साहब,’ फारसी कविता की वह प्रसिद्ध पंक्ति—“किसान की टोपी का कोना सूरज को छू गया”—शायद ऐसे ही मौकों के लिए रची गई होगी। मुझे आश्चर्य हो रहा है कि क्या मुझे अपनी आँखों पर विश्वास करना चाहिए कि दोपहर का सूरज मेरे दरवाजे को रोशन कर रहा

है।'
लेकिन तुम्हारा चेहरा ही तो उगता हुआ सूरज है। भाई, तुम्हारा सुनहरा दुपट्टा तुम्हारे चेहरे के चारों ओर प्रभामंडल की तरह लिपटा है। काश, ये बादल छंट जाएं और तुम्हारे चेहरे और गर्दन पर पड़ने वाली सूर्योदय की रोशनी मेरी आंखों को रोशन कर दे।
वज़ीर ने नवाब यूसुफ अली खान से भी ऐसी वाक्पटुता, ऐसे सटीक वाक्य और ऐसे मनमोहक शब्द-क्रीड़ा कभी नहीं सुनी थी; वैसे भी मार्स्टन ब्लेक की भाषा तो इससे बहुत दूर थी। नवाब की आवाज़ में उनकी माँ के मेवाती समुदाय की कर्कश खुरदरीपन का ज़रा भी अंश नहीं था। शायद इसका एक कारण यह था कि उनकी माँ राजपूताना के उस हिस्से से थीं जो ब्रज भाषा के क्षेत्र से सटा हुआ है। उस क्षेत्र की राजपूतानी भाषा में, कहीं अधिक कोमल और मधुर ब्रज भाषा के रंग गहरे पानी में तैरती सुनहरी मछली की तरह चमकते थे। दूसरा कारण नवाब की दूध पिलाने वाली दासी और दाई खिलाई थीं: दोनों सहारनपुर और मुजफ्फरनगर के सभ्य लेकिन गरीब मुस्लिम परिवारों की बेटियाँ थीं, जहाँ केवल ब्रज और हिंदी बोली जाती थी। बहुत छोटी उम्र में ही डाकुओं ने उनका अपहरण कर लिया था और उन्हें नवाब अहमद बख्श खान के कारखाने में बहुत कम दामों पर बेच दिया था।
'माननीय महोदय की दृष्टि इतनी तीक्ष्ण है कि वे जहाँ कुछ भी अच्छा नहीं देखते, वहाँ भी अच्छाई देख लेते हैं। नवाब की अपने गरीब प्रजाजनों का भला करने की इच्छा के अलावा मैं इसे और क्या नाम दूँ?'
'तुम पूरे घर को चाँद की तरह रोशन कर देती हो। यहाँ दृष्टि की तीक्ष्णता जैसी कोई आवश्यकता नहीं है। जो तुम्हारी उत्कृष्ट सुंदरता को न देख पाए, वह वास्तव में एक अंधा ही होगा। अगर मैं कर पाता, तो मैं तुम्हें चाँदनी के चादर की तरह अपने शरीर में लपेटकर सो जाता।'
'माननीय महोदय, आपने मुझे चंद्रमा कहा है, वास्तव में आपने मुझे सम्मानित किया है। परन्तु परम आदरणीय ईश्वर स्वयं शासन का सबसे चमकीला तारा और शक्ति एवं समृद्धि का सूर्य है। परम आदरणीय ईश्वर ने अरबी कहावत अवश्य सुनी होगी, "चंद्रमा का प्रकाश सूर्य से प्राप्त होता है।" सूर्य अपने गंतव्य की ओर अग्रसर होगा और चंद्रमा का चादर उपयोग के बाद तह करके पीछे छूट जाएगा।'
शम्सुद्दीन अहमद खान सच्ची खुशी से हँसे। 'भाई, आप कितने सुंदर शब्दों का प्रयोग करते हैं! ये महज़ शब्द नहीं हैं, आप इन्हें चिड़ियों के तीर-कमान की तरह उड़ाते हैं! मुझे डर है कि कहीं मुझे भी उड़ जाना पड़े!'
'माननीय न्यायाधीश, मैं तो बस घास का एक तिनका हूँ। मैं आपकी करुणा की शीतल सुबह की हवा का इंतजार कर रहा हूँ जो मुझे उठाकर मेरे गंतव्य तक ले जाए।'
लेकिन आपकी मंजिल कहां है? आपने तो उसका नाम ही नहीं बताया।
'घास के एक तिनके का क्या अंजाम हो सकता है? अगर वह हरा है, तो उसका इस्तेमाल फूलों का गुच्छा बांधने के लिए किया जा सकता है; अगर पतझड़ में मुरझा गया है, तो उसे भट्टी में डाल दिया जाएगा।'
'तुम न तो घास का तिनका हो, न ही पतझड़ से प्रभावित कोई चीज। वास्तव में, तुम तक अभी

पूरी तरह से वसंत का आगमन नहीं हुआ है।'
वज़ीर ने शरमाते हुए मुस्कुराया। उसने अपनी नज़रें झुका लीं और फ़ारसी कवि तालिब अमूली की एक पंक्ति बोली:
फूलों के लिए बगीचे में आपका अतिक्रमण करना वसंत ऋतु के लिए एक तरह की भलाई है: क्योंकि गुलाब आपके हाथों में अपनी मूल शाखा की तुलना में अधिक समय तक खिलता है।
नवाब बेहद प्रसन्न, बल्कि आनंदित हो उठा। और ज़ाहिर है, वज़ीर इससे ज़्यादा खुला निमंत्रण नहीं दे सकता था; न ही नवाब इसे स्वीकार करना चाहता। दोनों एक-दूसरे के भाव को भलीभांति समझ चुके थे। नवाब ने अपने गले से मोतियों का लंबा हार उतारकर वज़ीर खानम की ओर बढ़ा दिया।
'छोटी बेगम, केवल भगवान ही सभी दोषों से मुक्त हैं! आपका उत्तर कितना सूक्ष्म और कोमल था। आइए, इसे मुझसे स्वीकार कीजिए।'
नवाब यह देखने के लिए इंतज़ार कर रहा था कि वज़ीर जवाब में क्या करेगा या कहेगा। उसे 'छोटी बेगम' कहकर संबोधित करके नवाब ने आत्मीयता की ओर एक कदम बढ़ाया था। उसे यकीन नहीं था कि वज़ीर इसमें छिपे अर्थ को समझ पाएगी। अगर वज़ीर सोच रही थी कि उसे नवाब के थोड़ा उठकर आगे बढ़ने का इंतज़ार करना चाहिए, तो वह घोर गलती कर रही थी। नवाब के लिए ऐसा इशारा करना असंभव था। लेकिन अगर वह सचमुच ऐसा होने का इंतज़ार कर रही थी, तो इसका मतलब था कि उस शाम उनके बीच जो कुछ भी हुआ था, उसे अस्वीकार करना और रद्द करना: इसका मतलब था कि वज़ीर केवल दोस्ताना मज़ाक और हल्की-फुल्की, सारहीन छेड़छाड़ कर रहा था और वह किसी स्थायी संबंध की कल्पना नहीं कर रही थी। अगर वज़ीर ने हार को उसकी ओर उछालने का इशारा किया, तो इसका मतलब था कि वह नवाब की रखैल बनने से ज़्यादा कुछ नहीं चाहती थी, कुछ समय के लिए उससे 'जुड़ी' रहने वाली कोई। अगर वज़ीर नवाब की ओर बढ़ा और हार स्वीकार कर लिया, तो इसका मतलब यह होना चाहिए कि...
नवाब आखिरी पहेली सुलझाने से पहले ही वज़ीर घुटनों के बल बैठ गई, पैर नीचे करके बैठी, झुकी और नवाब के हाथ से हार ले लिया। उसने उसे अपनी आँखों से लगाया और अपने गले में पहन लिया। अब वह पहले से थोड़ा और करीब आ गई थी, लेकिन यह स्पष्ट था कि वह और करीब नहीं जाने वाली थी। नवाब ने उसे ध्यान से देखा; अब उसकी बारी थी उसके भावों को समझने की। यह शतरंज का खेल था, नाजुक संतुलन वाला, हर चाल पूरी सोच-विचार के बाद चली गई: फिर भी दोनों एक ऐसा अंत चाहते थे जो उनके लिए उपयुक्त हो। लेकिन संकेतों में जरा सी भी गलती, बातचीत को बेवजह लंबा खींचने का जरा सा भी संकेत, दोनों के लिए खेल बिगाड़ सकता था।
नवाब ने अपना हाथ आगे बढ़ाया और वज़ीर के कंधे पर धीरे से हाथ रखते हुए कहा, 'इधर आओ, मेरे पास आओ। मुझे करीब से देखने दो कि हार तुम पर कैसा लगता है।'
'महामहिम, मैं कैसे और करीब आ सकती हूँ?' उसने एक फ़ारसी कहावत दोहराई: 'प्रेम के लिए आदर जीवन का जल है।' अपनी जगह से उठे बिना, वज़ीर थोड़ा आगे बढ़ी। अब वह नवाब से

बस दो-तीन फ़ीट या उससे भी कम दूरी पर थी, लेकिन दोनों के चेहरों पर इच्छा की गहरी लालिमा की लहरें साफ़ दिखाई दे रही थीं। फ़ारसी कहावत में 'प्रेम' शब्द के कई अर्थ हैं; जहाँ इसका एक अर्थ 'घनिष्ठ संबंध' है, वहीं दूसरा अर्थ 'तैरना' है। इस प्रकार 'प्रेम' के मुख्य अर्थ में इस शब्द ने शम्सुद्दीन अहमद के लिए एक नया द्वार खोल दिया था। उन्होंने वज़ीर की ठुड्डी को धीरे से, लगभग प्यार से छुआ, फिर उसका चेहरा थोड़ा ऊपर उठाया और कहा: 'क्या 'तैरना' शब्द प्रेम के सागर में तैरने का निमंत्रण नहीं है? तो फिर 'आदर' का सवाल ही कहाँ उठता है?' उन्होंने एक फ़ारसी आयत की एक पंक्ति दोहराई: 'पहला कदम उठाने के लिए पहली शर्त है मजनून की तरह दीवाना होना।' और मेरा मानना है कि बिना सोचे-समझे भंवर में कूद जाना चाहिए।'

फिर उन्होंने फारसी की निम्नलिखित आयतें पढ़ीं:
यदि तुम्हारी सुंदरता इसी गति से बढ़ती रही, तो हर कोई पागल होने की कला के अलावा और कुछ नहीं करेगा; तुम्हारे दुःख के सागर में, सौ नूहों की बुद्धिमत्ता वाली नाव बुलबुलों की तरह उलट जाएगी।
अब फैसला तुम्हारा है, भाई! मैं डूबूं या तैरूं?
वज़ीर मुस्कुराया और हिंदी कवि मीर की एक अद्भुत रहस्यमयी पंक्ति सुनाई:
हे भगवान! ये कैसा कोलाहल, कैसी बेचैनी! सागर में किसका रहस्य छिपा है?
नवाब ने फिर से उनके चेहरे और होठों को कोमलता से छुआ और कहा, 'यह सब तुम्हारा है। तुम रहस्य हो और जो इस रहस्य को धारण करती है, वह भी तुम्हारी ही है। मेरे लिए, तुम रहस्यों की एक रहस्यमयी नदी हो, वज़ीर खानम। मैं बिना पतवार के बहता चला जाता हूँ, अपनी इच्छाओं की नदी में असहाय, तुम्हारी सुंदरता की नदी में निराश।' फिर उन्होंने एक हिंदी श्लोक सुनाया:
ओह, मैं एक नदी की बाढ़ में बहता जा रहा हूँ जिसमें न कोई नाव है, न कोई पहाड़ी है, न ही कोई छोटा द्वीप है।
'हे महान और आदरणीय महोदय, आप ही हैं जो नदी भी हैं और उसमें स्थित द्वीप भी।'
दरअसल, एकमात्र ऐसी जगह जहां मुझे खो जाने का कोई डर नहीं है, वह जगह आप ही हैं।
शम्सुद्दीन अहमद ने वज़ीर को इस तरह देखा कि उनकी निगाहें उसकी गर्दन और उसके उभरे हुए स्तनों पर टिक गईं। भारी चोली और बेहद महीन कुर्ते के गले से उसके कोमल, उभरे हुए स्तन झलक रहे थे, जो गुलाबी रंग से खिले हुए थे, मानो हरियाली के मौसम में दूर से दिखाई देने वाली गुलाबी पहाड़ियों की तरह खिले हों। दो बार बच्चे को जन्म देने के बावजूद, वज़ीर के शरीर की युवावस्था वाली कसावट बरकरार थी। उसके कूल्हे और स्तन थोड़े बड़े और भारी हो गए थे, लेकिन उसकी आकृति में कोई बदलाव नहीं आया था, और नवाब की उपस्थिति में, वज़ीर ने अपने शरीर को इस तरह सिकोड़ लिया था कि शालीनता का आभास होता था, फिर भी वह अपनी उन्नीस साल की उम्र से छोटी दिखती थी। और उसके उभरे हुए स्तनों की एक झलक भी कठोरतम दृष्टि को भी व्याकुल करने के लिए काफी थी।

नवाब की निगाह का अर्थ वज़ीर से छिपा नहीं था। उसके दिल में भी शम्सुद्दीन अहमद के लिए एक खिंचाव सा था। लेकिन वह अब भी अनिश्चित थी: उसे लग रहा था कि उसे और सोचने-समझने की ज़रूरत है, और आत्म-मंथन करने की। जुनून की हवाओं में बह जाने के दिन अब बीत चुके थे। मार्स्टन ब्लेक के साथ जीवन और उसकी अचानक और क्रूर हत्या ने वज़ीर को यह सबक सिखाया था कि जीवन केवल निर्णय लेने और उसे तुरंत अमल में लाने तक ही सीमित नहीं है। न ही निर्णय लेना उतना आसान था जितना उसे मार्स्टन ब्लेक के साथ अपने जीवन का बंधन जोड़ते समय लगा था। न ही यह सच था कि किसी संभावित निर्णय को वास्तविक क्रिया में बदलना भाग्य के शाश्वत वितरक द्वारा निर्धारित किसी अचूक ज्ञान या अटल नियम के कारण होता है, जैसे रात के बाद हमेशा सुबह आती है।

अब उसे यह भी विश्वास नहीं रहा कि अमूर्त विचारों से व्यवहार में उतारे गए निर्णय एक निश्चित मार्ग पर चलते हैं, एक ऐसा मार्ग जिसके उतार-चढ़ाव, भले ही पहले से ज्ञात और नियोजित न हों, कम से कम अनुमान तो लगाया जा सकता है, और उस अनुमान के आधार पर, चाहे अपूर्ण रूप से ही सही, उनका समाधान किया जा सकता है। एक बड़े शहर की गलियों में भटकते अधमरे कुत्ते; घरों की छतों और छज्जों पर तथा ऊंचे, घने नीम और पीपल के पेड़ों पर घंटों तक स्थिर बैठे पक्षी, जो मृत्यु को दूर रखने के लिए भोजन के एक टुकड़े की प्रतीक्षा करते हैं; गौरैया, कबूतर, फाख्ता और मैना जो कुछ दानों से आकर्षित होकर सावधानी से जमीन पर उतरते हैं, और फिर किसी वास्तविक या काल्पनिक खतरे से रोमांचित होकर फड़फड़ाते हुए उड़ जाते हैं: शायद इन पक्षियों का अपने जीवन पर अधिक नियंत्रण और अपनी स्थिति पर अधिक अधिकार था।

वज़ीर को यह भ्रम था कि निर्णय लेना उसका अधिकार है। लेकिन वह यह भी जानती थी कि यह महज़ एक भ्रम था। वह जानती थी कि किसी निर्णय के सभी संभावित परिणामों और निहितार्थों की कल्पना करना और उन पर विचार करना संभव भी हो, तो भी इससे कोई सकारात्मक लाभ नहीं मिलेगा। इन परिस्थितियों में, उसके पास अपने निर्णय के संभावित परिणामों का विश्लेषण करने का समय नहीं था। नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान की आँखों में वासना झलक रही थी, लेकिन शायद उनके हृदय में उसके लिए थोड़ी सी भी ईमानदारी और स्नेह था।

क्या नवाब को ठुकराने पर उसके पास कोई और विकल्प था? अगर हाँ, तो वह क्या था? क्या वह विलियम फ्रेजर था? मैं ईश्वर से क्षमा माँगती हूँ! क्या मेरे रास्ते इतने अवरुद्ध हैं, क्या यह धरती मेरे लिए इतनी छोटी और संकीर्ण है? लेकिन मुझे दो बच्चों का पालन-पोषण करना है और जीना भी है। आखिर मैं भीख माँगकर तो नहीं जी सकती...

'तो आप कहाँ खो गए हैं, वज़ीर खानम?'

वह चौंक गई। नवाब की आवाज़ ने उसे उसकी तल्लीनता से बाहर निकाल दिया था। उसने देखा कि उसकी आँखों में अब केवल शारीरिक इच्छा से कहीं अधिक भाव था। यदि वह चाहे तो इसे हृदय की प्रेरणा मान सकती है।

'सर? ओह, कुछ नहीं... बिलकुल कुछ नहीं। मैं... दरअसल मैं आपकी खोज में ही खो गया था।'

‘मुझे ढूंढ रहे हो? उस युवती को देखो! मैं यहीं नहीं हूँ, भाई!’ वज़ीर के जवाब की गंभीरता को कम करने की कोशिश करते हुए वह हँस पड़ा।
'हां, लेकिन... मैं जीवन की यात्रा में कई पड़ावों आगे जाकर तुम्हारी तलाश कर रहा था, यह देखने के लिए कि क्या इस अनाम व्यक्ति का नाम कहीं खोजा जा सकता है।'
नवाब चुप हो गए। उनकी आँखों में उत्साह और इच्छा की चमक फीकी पड़ गई, मानो वे गहरी सोच में डूब गए हों। उन्होंने अपना सिर झुकाया और एक क्षण के विराम के बाद बोले, “वज़ीर खानम, जीवन की लहर और प्रवाह को रोकना या नियंत्रित करना किसी के बस की बात नहीं है। कौन जाने, शायद मेरा गंतव्य आपके गंतव्य से पहले हो।”
‘इस सेवक के माता-पिता आपके लिए अपने प्राणों का बलिदान दें। कृपया ऐसे शब्द न बोलें।’
नवाब मुस्कुराते हुए बोले, ‘इस बारे में चुप रहने से जो होना तय है, वह नहीं बदल सकता। और यही कारण है कि आज जीवन के इस पड़ाव पर मुझे आगे के रास्ते और आने वाले पड़ावों की धुंधली सी झलक ही दिखाई देती है। मैं आज से कल का अनुमान नहीं लगाता, बल्कि आज के सुखों को मोर के अंडे की तरह मानता हूँ, जिसके खोल में कई रंगों वाले पक्षियों के जन्म की संभावना छिपी होती है, जिनके रंग भविष्य के धुंधलेपन में झिलमिलाते हैं और जिनकी गूंजती हुई आवाज दूर-दूर तक सुनाई देती है। जो होगा, वही होना तय है। फिर भी, कहीं न कहीं, किसी जगह और किसी समय थोड़ा भरोसा तो रखना ही पड़ता है, वरना जीवन की नाव पल भर में तूफानों में बह जाएगी।’
तो क्या माननीय न्यायाधीश का आदेश यह है कि व्यक्ति को दिन-प्रतिदिन जीना चाहिए? कि व्यक्ति को हर रात को अपनी आखिरी रात और हर सुबह को अपनी पहली सुबह समझना चाहिए?
नहीं, बिलकुल नहीं, भाई! लेकिन अपने हृदय को इच्छा और आशा से भर लो, और आज के हर पल को एक अधिक सुखद कल के खुलने की शुरुआत समझो।
‘महामहिम, आप एक प्रतिष्ठित परिवार से हैं। आप अपने स्वयं के संप्रभु राज्य पर शासन करते हैं; आपके पास धन और शक्ति है। सबसे बढ़कर, आप कुलीन कुल के हैं और एक प्रभावशाली व्यक्तित्व के स्वामी हैं। जीवन रूपी शतरंज की बिसात पर जो भी मोहरा आप रखना चाहें, वह रानी बन सकता है। लेकिन मैं तो बस एक टूटे पैर वाला प्यादा हूँ, जो बिसात पर पीछे छूट गया है और समय का घोड़ा उसे अपने विशाल खुरों से कुचलने के लिए बेचैन है।’

‘हर प्यादा रानी बन सकता है, और रानी के पैर काटने और धूल भरी मौत के खंजर से उसकी छाती में वार करने के लिए सिर्फ एक प्यादा ही काफी है। भाग्य और नियति के अधिकारियों को अपनी शक्ति प्रकट करने के लिए किसी की मदद की आवश्यकता नहीं है।’
वज़ीर ने अपना सिर उठाया और नवाब ने देखा कि उसकी आँखें अनबहे आँसुओं से चमक रही थीं और आँसुओं को बहने से रोकने के प्रयास में उसका चेहरा लाल हो गया था।
‘अरे, ये क्या है भाई! क्या मैंने कुछ ऐसा कह दिया जिससे तुम्हारा कोमल हृदय आहत हो गया?’
नवाब झट से आगे बढ़ा और अपने रुमाल से उसके आंसू पोंछे।

‘इसमें कोई शक नहीं कि माननीय महोदय ने मुझे काफी हौसला दिया है, लेकिन मेरी भुजाओं में ताकत नहीं है, और मिट्टी से भरी मेरी टोकरी पल-पल भारी होती जा रही है। मैं ईश्वर से क्षमा मांगता हूँ। बेसहारा गरीबों के प्रति उनकी उदारता सर्वविदित है...’

अब वह खुलकर सिसक रही थी और रो रही थी, बड़ी मुश्किल से उसने अपने आँसू रोके और कहा: 'आपकी करुणा के बादलों से बरसते मोतियों की बारिश ने मुझे किसी तरह ख्वाजा मीर दर्द साहब की हिंदी कविताएँ याद दिला दीं।'

भावुकता से कुछ हद तक रुंधी हुई आवाज में, लेकिन अत्यंत आकर्षक ढंग से उन्होंने अठारहवीं शताब्दी के कवि की निम्नलिखित दो पंक्तियाँ सुनाईं:

मेरी आँखें क्यों अपनी सीमाएँ तोड़कर इतना बह रही हैं, मुझे नहीं पता। वे क्यों फूट पड़ीं, रोने पर आमादा, मुझे नहीं पता। मेरी आँसू भरी आँखें, दृष्टि के धागे से बंधी नाव की तरह, बंधन तोड़कर फूट पड़ी हैं।

फिर उसने निम्नलिखित श्लोक का पाठ किया, और ऐसा करते समय, मानो एक छोटी मोमबत्ती से निकलती कोमल मुस्कान की हल्की रोशनी उसके होठों पर प्रकट हुई, और केवल होठों पर ही नहीं बल्कि उसकी आँसुओं से भरी आँखों में भी।

किसकी तेजस्वी उपस्थिति ने मेरी आंखों को इतना समृद्ध कर दिया है कि वे एक नदी की तरह मेरे साधना कार्य पर बह निकली हैं, मुझे नहीं पता।

नवाब, जो सिर झुकाकर और कभी-कभी वज़ीर के चेहरे की ओर आँखें उठाकर हर पंक्ति पर उत्साहपूर्वक ताली बजा रहा था, अब अपना आपा खो बैठा और वज़ीर को अपनी ओर खींचकर उसका सिर अपने सीने से लगा लिया। दूसरे हाथ से उसका सिर सहलाते हुए उसने कहा, ‘मैं तुम्हारी भुजाओं की शक्ति बन सकता हूँ! मैं अपने अस्तित्व से उस बांध की तरह खड़ा रहूँगा जो आँसुओं की उस अनियंत्रित बाढ़ के विरुद्ध खड़ा रहेगा जो तुम्हारे धैर्य की फसल को नष्ट कर देती है और तुम्हारे जीवन को अंधकारमय कर देती है। इस रात के बाद, आँसू तुम्हारी आँखों में नहीं आएँगे, बल्कि तुम्हारे शत्रुओं के घरों और संपत्तियों को नष्ट कर देंगे।’

‘आप अपनी उदारता से मेरा पोषण और स्नेह करते हैं। ईश्वर ने आपके सीने को हवेली की प्राचीरों की तरह विशाल और आकाश को छूने वाला बनाया है,’ वज़ीर ने सिर उठाकर और अपने आँसू पोंछते हुए कहा। नवाब ने उसका चेहरा अपने हाथों में लेकर चूमने की कोशिश की, लेकिन वज़ीर उनकी बाहों से निकल गई और अपनी साँसों और उमड़ती भावनाओं को काबू में रखते हुए बोली, ‘महोदय, शाम की रोशनी क्षितिज से गायब हुए काफी समय हो गया है। आप किस समय भोजन करना चाहेंगे? यदि आप चाहें, तो भोजन परोसा जा सकता है, या यदि आपका उच्च कोटि का मन हो, तो हम ग़ज़ल या शास्त्रीय संगीत का आनंद ले सकते हैं।’

उसका दुपट्टा उसके सिर से फिसल गया था, जिससे चोली के नीचे का उभार और भी अधिक दिखाई दे रहा था, लेकिन जाहिर तौर पर उसे इसकी परवाह नहीं थी।

‘वाह, ये तो बहुत अच्छा विचार है, भाई! मेरा मन ग़ज़ल सुनने का कर रहा है। लेकिन आप गाएंगे नहीं, या गाएंगे?’

नवाब के अवलोकन में इस बात का संकेत मिला कि वह इस बात से अवगत था कि वज़ीर एक

नाचने वाली लड़की नहीं थी, और उसने उसके बारे में पूछताछ करवाई थी।
'जी नहीं, महोदय। लेकिन मैंने कुछ व्यवस्था की है, शायद पूज्य सेवकों को संगीत पसंद आए। वह एक नई गायिका है, जो अभी हाल ही में जालंधर से आई है।'
'बहुत बढ़िया, बहुत बढ़िया। तो चलिए अब और इंतजार नहीं करते।'
'महोदय, वह अभी आती हैं,' यह कहते हुए वज़ीर ने उस दासी की ओर इशारा किया जो नवाब को मोर पंखा चला रही थी। कुछ ही पलों में, वादक और उनके वादक अंदर आए, तीन सलाम किए और अपनी-अपनी जगह पर बैठ गए। नसीम जालंधरी सबसे आखिर में आईं: थोड़ी भरी-पूरी सी दिखने में सुंदर, वह जवानी पार कर चुकी थीं, लेकिन उनके हाव-भाव और शारीरिक मुद्रा में सहजता और शालीनता थी। उन्होंने सात सलाम किए, फिर नवाब के दाहिने हाथ को चूमने के लिए आगे बढ़ीं और बोलीं, 'मैं परम पूज्य को क्या अर्पित करूँ? फ़ारसी में कुछ सूफी कविताएँ, या शायद हिंदी में कोई ग़ज़ल?'
'दिल्ली के हिंदी कवियों ने अपने नाम के दीपक यहाँ से लेकर ईरान और दक्कन तक प्रज्वलित किए हैं। मैं हिंदी में कुछ सुनना चाहूंगा।'
"बहुत खूब, महोदय। मैं यहाँ आपकी उच्च कोटि की इच्छा पूरी करने के लिए उपस्थित हूँ। मैं दिल्ली के मीर हसन की ग़ज़ल प्रस्तुत करता हूँ, अल्लाह उनकी प्रतिष्ठा बढ़ाए।"
वज़ीर ने राहत की सांस ली। उसका दिल इस डर से बेतहाशा धड़क रहा था कि कहीं नसीम जालंधरी मिर्ज़ा ग़ालिब की ग़ज़ल न चुन लें। उसने पहले ही उन्हें इसके खिलाफ चेतावनी दे दी थी, लेकिन भला इन गायिकाओं के मन में क्या चल रहा होता है?
नसीम जालंधरी ने अन्य वाद्ययंत्रों के साथ ताऊ वाद्ययंत्रों को सुर में सेट किया और राग चारु केशी में गाना शुरू किया, जो अपेक्षाकृत दुर्लभ राग है, लेकिन गहरी होती रात के लिए खूबसूरती से उपयुक्त है।
आज उसने अपनी आँखों से मुझे इशारा किया, क्या वह सपना था? आज क्या हुआ? आज मैं तुम्हें ठीक से देख भी नहीं सका; आज इसे मुलाक़ात मत समझना। मैंने मन ही मन कहा, चलो एक दौर शराब पीते हैं, और ऐसा ही हुआ; सचमुच तुमने आज चमत्कार कर दिया। ऐसे शब्द पहले कभी हमारे बीच नहीं बोले गए; ऐसे शब्द जो तुमने आज कहे। हसन, अगर मैं आज रात सुरक्षित गुज़र-बसर कर पाया, तो कल तुम मुझे वहाँ ज़रूर देखोगे।
नसीम जालंधरी ने अपनी कला के पूरे जोश के साथ गाया, निर्धारित हाव-भाव और हाथों की हरकतों का कुशलतापूर्वक और बेहतरीन इस्तेमाल किया। ऐसा लग रहा था मानो वह अपनी ग़ज़ल सुना रही हों, और यह एक सुखद संयोग था या शायद उनकी अपनी इच्छा थी कि पाँचों छंदों को उस शाम के अवसर से संबंधित समझा जा सके। थोड़ी देर बाद, वज़ीर भी गायन (और शायद शब्दों) से इतनी प्रभावित हुईं कि उन्होंने धीरे से अपनी जांघ पर थपथपाकर ताल मिलाना शुरू कर दिया; फिर उन्होंने भी गाना शुरू कर दिया, हालांकि धीमी आवाज़ में, अधिक परिपक्व गायिका के साथ पूर्ण सामंजस्य बनाए रखते हुए। उनकी आवाज़ में अभी भी किशोरावस्था की मधुरता और खनक थी।
वज़ीर का अचानक नसीम के साथ शामिल हो जाना उस शाम एक अनोखा माहौल बना गया। वे

काफी देर तक गाते रहे। जब संगीत बंद हुआ, तो नवाब ने अपने राजदंड धारक को एक छोटा सा इशारा किया, जो उनके सामने दरवाजे पर सम्मानपूर्वक खड़ा था। राजदंड धारक ने तुरंत वज़ीर को सौ-सौ रुपये से भरे दो थैले दिए, जो उसने अपनी कमरबंद के नीचे बांध रखे थे। वज़ीर ने पैसे नसीम के सामने रख दिए। नसीम खड़े हुए, फिर से सात सलाम किए और चले गए, लेकिन जाने से पहले उन्होंने नवाब का तहे दिल से शुक्रिया अदा किया और उनकी सदा की खुशकिस्मती और समृद्धि के लिए दुआ की।

जब नवाब से दोबारा खाने के बारे में पूछा गया, तो उन्होंने इशारा किया कि वे अब तैयार हैं। वज़ीर ने खाना दूसरे कमरे में मंगवाया। मार्स्टन ब्लेक के साथ रहने से उन्हें कई बातें सीखने को मिली थीं, जिनमें भोजन कक्ष को बैठक कक्ष से अलग रखने का महत्व भी शामिल था। फिर भी, फिरंगी रीति-रिवाज के विपरीत, वे नवाब के साथ मेज़पोश पर नहीं बैठीं। हालाँकि शम्सुद्दीन अहमद खान ने संकेत दिया कि वे चाहते हैं कि वज़ीर उनके साथ भोजन करें, लेकिन वज़ीर ने चुपचाप उन संकेतों को नज़रअंदाज़ कर दिया, और नवाब ने भी अपनी इच्छा को शब्दों में व्यक्त नहीं किया, क्योंकि उन्हें लगा कि वज़ीर को यह पसंद नहीं आएगा। वे यह तो जानते ही थे कि सभी उच्च कुल के या सभ्य हिंदू और मुस्लिम परिवारों में, महिलाएं पुरुषों से अलग बैठकर ही भोजन करती हैं।

खाना पूरी तरह से भारतीय था और शहर के कुशल रसोइयों द्वारा पकाया गया था। वज़ीर द्वारा स्वयं बनाए गए अंग्रेज़ी शैली के केक को छोड़कर, बाकी सब कुछ पेशेवर रसोइयों ने तैयार किया था; उनके रसोइए ने अचार और चटनी घर पर ही बनाई थी। वज़ीर नवाब के सामने भोजन करते समय खड़ी नहीं हुईं; वह उनके थोड़ा पीछे दाहिनी ओर खड़ी रहीं और वहीं से सेवा का प्रबंध करने के साथ-साथ नवाब को और खाने के लिए प्रेरित भी करती रहीं। उनकी उम्मीद के विपरीत, नवाब ने कम खाया, लेकिन विभिन्न तरीकों से यह स्पष्ट कर दिया कि खाना उन्हें पसंद आया था, और अगर वह ज्यादा नहीं खा रहे थे, तो बस यही कि वह कम खाने वाले थे। वज़ीर द्वारा नवाब को किसी विशेष व्यंजन का स्वाद चखने के लिए कभी-कभार टिप्पणी या आग्रह करने के अलावा कोई बातचीत नहीं हुई। भारतीय शिष्टाचार के अनुसार, खाना खाते समय बात करना साथ-साथ नहीं चलता।

भोजन के बाद हुक्का और पान परोसा गया। वज़ीर ने खास तौर पर बेहतरीन जयपुरी तंबाकू से बने पान के कोन तैयार करवाए थे, हर कोन सोने की पत्ती से लिपटा हुआ था और परतों को जोड़ने के लिए उसमें चांदी की पिन लगी हुई थी। नवाब हर छोटी-छोटी बात पर प्रसन्न हुए और नौकरानियों को इनाम देते रहे, साथ ही अपनी बातचीत में हल्के-फुल्के मज़ाक भी करते रहे। नौकरानियों में से एक, जो बाकियों से थोड़ी ज़्यादा साहसी थी, बोली, 'महामहिम ने भोजन तो बहुत कम खाया, लेकिन हमें अपने शब्दों का स्वाद चखाने से नहीं थके!'

नहीं, ऐसा नहीं है भाई। मैं जल्दी खाता हूँ। याद रखना, हम भले ही हाल ही में तुर्किस्तान से आए हों, लेकिन असल में हम अरब के हैं। अरब लोग जल्दी खाते हैं। वज़ीर खानम, क्या आपने अरब बद्दू और उसके सूप की कहानी नहीं सुनी?

नवाब की चंचल बातचीत से थोड़ा उत्साहित होकर वज़ीर मुस्कुराया और बोला, "महामहिम, हम

ईरान या तुरान, अरब या मिस्र के बारे में क्या जानते हैं? हम तो जहानाबाद की तंग गलियों के ही रहने वाले हैं, हम अपने ही सुर में गाते हैं, बस इतना ही।"
'जी हां, बिल्कुल यही बात है। और इसीलिए आपके तोते की आवाज बाकी सब आवाजों से ऊपर सुनाई देती है!'
सभी नौकरानियां और अन्य महिला नौकरानियां खिलखिलाकर हंस पड़ीं, लेकिन बहुत जोर से नहीं।
'माननीय महोदय, अरबों के सूप की कहानी...' उनमें से एक ने संकोच से कहा, लेकिन इस बात का ध्यान रखते हुए कि वह बहुत ज्यादा बेबाक न लगे।
"ओह, हाँ। बात कुछ इस तरह हुई: एक ईरानी ने एक अरब से पूछा, "अरे, ठंडे सूप के लिए तुम्हारा क्या शब्द है?" अरब ने जवाब दिया..." नवाब ने प्रभाव डालने के लिए एक पल रुककर कहा, "हम अपने सूप को ठंडा नहीं होने देते, हम उसे तुरंत पी जाते हैं।"
नौकरानियों ने खुलकर खिलखिलाकर इसका स्वागत किया। वज़ीर भी अपने लबादे के पीछे से धीरे से हँसी। ऐसा लग रहा था मानो पूरा माहौल उनके साथ हँस रहा हो।
नवाब के सभी कर्मचारियों को भोजन कराया जा चुका था, लेकिन नवाब स्वयं शाम समाप्त करने के मूड में नहीं लग रहे थे। वज़ीर अब उनके सामने, काफी करीब, लेकिन उनके दाहिनी ओर बैठे थे। उनके बीच की दूरी कम से कम एक फुट या डेढ़ फुट थी। नवाब ने कई बार वज़ीर के चेहरे की ओर देखा और हर बार उन्होंने नज़रें फेर लीं, मानो कुछ कहना चाहते हों, लेकिन किसी कारणवश अपना मुंह खोलने से हिचक रहे हों।
अपनी तमाम विनम्रता के बावजूद, वज़ीर के व्यक्तित्व में एक अनोखी शक्ति, एक विस्मयकारी चमक थी, और शम्सुद्दीन अहमद खान इतनी दूरी से भी इसे ऊर्जा की लहरों की तरह महसूस कर सकते थे। उन्हें ऐसा भी लग रहा था कि उनके शरीर से उनके शरीर तक एक दीप्तिमान ऊष्मा प्रवाहित हो रही है। यह एक ऐसा अनुभव था, बुद्धि और आत्मा का एक ऐसा सम्मोहन, जिसका उन्होंने पहले कभी सामना नहीं किया था।
सामान्यतः, जो होना चाहिए था वह यह था कि वह वज़ीर से सीधे बात करता, या यदि पूर्ण प्रोटोकॉल का पालन करना आवश्यक होता, तो वह अपने प्रबंधक या किसी वरिष्ठ महिला नौकरानी के माध्यम से उसे संदेश भेज देता कि वह रात के खाने के बाद रुकेगा। शम्सुद्दीन अहमद खान, किसी अज्ञात कारण से, ऐसा करने से इसलिए नहीं रुका क्योंकि उसे यह गलत या अनुचित लगा। उसने सोचा कि एक बार उसके घर में प्रवेश करने के बाद, वह किसी सूक्ष्म संकेत के माध्यम से वज़ीर को अपनी इच्छा बता देगा। फिर भी, जैसे-जैसे शाम ढलती गई और रात होती गई, वज़ीर से निकलने वाली शक्ति का उसका अहसास घंटों के बीतने के साथ बढ़ता गया। अब उसकी मनःस्थिति ऐसी थी कि रात रुकने की इच्छा व्यक्त करने की तो बात ही छोड़िए, उसे वज़ीर से अनुमति लेना आवश्यक लग रहा था; लेकिन ऐसे शब्द भी उसके होठों से नहीं निकल रहे थे, और न ही निकलते रहे। समय बीतता जा रहा था। अब मामला सुलझाना अनिवार्य था, या विदाई उपहार के रूप में पान का एक कोन स्वीकार करके चले जाना था।
वज़ीर को शायद अपने मेहमान के मन में चल रहे संघर्ष का एहसास था, लेकिन वह अपनी ओर

से ज़रा सा भी निमंत्रण या इच्छा ज़ाहिर नहीं करना चाहती थी। पहली बात तो यह थी कि वह खुद से क्या उम्मीद रखती है और नवाब से उसके दिल में क्या आशाएँ हैं, इस बारे में वह अभी भी स्पष्ट नहीं थी। उसे यह भी डर था कि अगर नवाब के साथ उसके किसी भी तरह के रिश्ते में ज़रा सी भी कमज़ोरी दिखाई दी, तो वह इसे अधीरता या आत्मसम्मान की कमी समझ सकता है और इससे उनके बीच का नाज़ुक संतुलन बिगड़ सकता है। लेकिन यह आपसी सहमति से चुप रहना अनुचित था और वास्तव में बेचैनी और उलझन का कारण बन रहा था। आख़िरकार, वे वहाँ सिर्फ़ एक-दूसरे को देखने के लिए तो नहीं आए थे।

'यदि महोदय चाहें, तो हम ख्याल की नई संगीत शैली का एक छोटा दूसरा सत्र आयोजित कर सकते हैं,' उन्होंने अंततः झुकी हुई निगाहों से चुप्पी तोड़ी। 'या आप कॉफ़ी पीना चाहेंगे?' उन्होंने मुस्कुराते हुए कहा, उनकी मुस्कान किसी विशेष रुचि रखने वाली व्यक्ति की बजाय एक अच्छी मेज़बान की तरह लग रही थी। एक शिष्ट, औपचारिक शाम, शायद अपने समापन की ओर अग्रसर।

'न... नहीं, वज़ीर खानम, मुझे अब आपसे विदा लेनी चाहिए।' उसने वज़ीर को कुछ गौर से देखा; उनकी आँखें एक पल के लिए मिलीं, फिर वज़ीर की नज़र पहले नीचे झुक गई। उसे प्रबल अहसास था कि नवाब उससे किसी न किसी तरह का पहला कदम उठाने की उम्मीद कर रहा था, चाहे वह कितना भी छोटा क्यों न हो। और अगर उसने वही किया जो वह चाहता था, तो उन्हें फिर से उतनी ही दूरी तय करनी पड़ेगी जितनी उन्होंने उस शाम तय की थी।

'मैं ईश्वर का नाम लेता हूँ! वह शुभ और सौभाग्यशाली क्षण कब आएगा जब यह अंधकारमय झोपड़ी आपके चरणों की धूल से फिर से प्रकाशित होगी?'

उस समय वज़ीर की मुस्कान उसकी खास मुस्कान थी: आत्मा के उस पहले भाव की झलक, जब एक युवती किसी को नए नजरिए से देखती है। ऐसा लग रहा था मानो उसे अपने सामने आने वाले जीवन के उतार-चढ़ाव का कोई ज्ञान ही न हो। उसकी मुस्कान ने अनायास ही उसकी आँखों को चमका दिया और उसके होठों और चेहरे पर उतर आई, जो अब सोने की तरह दमक रहा था।

नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान के मन में यह कहने की तीव्र इच्छा हुई: 'मैं कहीं नहीं जा रहा, क्या आपको पता नहीं था? इसलिए हमारे बीच फिर से मिलने की कोई गुंजाइश ही नहीं है।' लेकिन जाहिर है, अब इस बात का समय बीत चुका था, अगर कभी था भी। वह उठे, वज़ीर के चेहरे को धीरे से छुआ और दरवाजे की ओर बढ़े। उनके पीछे खड़ी लड़कियाँ उनके पैरों में जूते पहनाने के लिए आगे बढ़ीं, लेकिन वज़ीर तुरंत उठ खड़े हुए और नवाब के चरणों में झुक गए, उनके हाथ में उनके जूते थे।

शम्सुद्दीन अहमद खान ने तुरंत अपने पैर पीछे खींच लिए और चिल्लाकर कहा, 'नहीं, वज़ीर खानम। ऐसा कभी नहीं हो सकता! मुझे शर्मिंदा मत करो, भाई!'

तब तक नौकरानी जल्दी से आगे बढ़कर वज़ीर के हाथ से नवाब के जूते ले आई थी। उसी क्षण, नवाब के किसी इशारे पर, उनका लाठीवाहक एक बड़ी थाली लेकर प्रकट हुआ, जिस पर

जामवार की दोहरी शॉल, बनारस का रेशमी कपड़ा और रुपयों से भरे कई थैले रखे थे। शम्सुद्दीन अहमद खान ने शॉल वज़ीर के कंधों पर डाल दी और रेशमी कपड़े और पैसों के बारे में जिज्ञासा भरी निगाहों से उसकी ओर देखा। वज़ीर की आँखों में छिपे संकेत को समझते हुए, नौकरानी ने लाठीवाहक से थाली लेकर अपने सिर पर रखी और किसी अंदर के कमरे में चली गई।
वज़ीर ने शॉल को उसके सिर और कंधों पर लपेटा और नमाज़ पढ़ते समय मुस्लिम महिलाओं की तरह उसके सिर और चेहरे पर शॉल का किनारा खींच लिया। वज़ीर ने उपहार के लिए आभार और प्रशंसा व्यक्त करने के इस सूक्ष्म तरीके को नवाब ने बखूबी समझ लिया। वह कुछ कहने ही वाला था कि वज़ीर ने झुककर सलाम किया और कहा, “अपने प्रजाजनों का पालन-पोषण करने के लिए अल्लाह के इज्जत से भरे रहने की ख्याति पूरे हिंद में गूंजती है; जब तक हम जीवित रहेंगे, हम आपकी प्रशंसा करते रहेंगे।” उसने थोड़ी नज़ाकत और निमंत्रण भरे अंदाज़ में मुस्कुराते हुए कहा, “लेकिन मेरा सवाल कुछ अलग था।”
शम्सुद्दीन अहमद के भीतर मानो उमंग उमड़ उठी, मानो उनके पैर कांप रहे हों। उनका मन किया कि सबके सामने कालीन पर लेटकर गिड़गिड़ाएं, ‘छोटी बेगम, मैं बहुत थका हुआ महसूस कर रहा हूं। कृपया थोड़ी देर के लिए मेरी पीठ थपथपा दीजिए।’ उनके स्वभाव को देखते हुए यह बिल्कुल असंभव था; इसके बजाय, उन्होंने विनम्रता से उत्तर दिया, ‘जल्द ही, बहुत जल्द, जैसे ईश्वर चाहेगा। हम फिर मिलेंगे। और सचमुच, यदि आप कभी मेरे दरवाजे को, जिसका भाग्य केवल एकांत ही रहा है, अपने मिलन के गुलाबी रंग से रोशन करें, तो यह कितना अद्भुत होगा!’
‘आपकी सेविका कभी भी आज्ञाकारिता की सीमा से बाहर नहीं हो सकती। आप ही सच्चे जीवन का स्रोत हैं। मैं तो बस वह पीला पत्ता हूँ जिसे आपके महान कदमों ने फिर से जीवन दिया है। ऐसे मसीहा-संरक्षक के प्रति निष्ठावान होना मेरे भाग्य को गहरी नींद से जगाने जैसा है।’
शम्सुद्दीन अहमद खान ने गौर किया कि शॉल के उभरे हुए किनारे के पीछे, वज़ीर के चेहरे पर एक ऐसी पवित्रता और आकर्षण था जो नवविवाहित दुल्हन के लिए गर्व और आकांक्षा का स्रोत होता। उसकी आवाज़ सुस्पष्ट थी, उच्चारण साफ और परिष्कृत था; मानो कोई महान कवि अपनी कविता सुना रहा हो।
‘बहुत अच्छा, हम जल्द ही फिर मिलेंगे। लेकिन जाने से पहले, जैसा कि आप जानते ही होंगे, मैं सम्राट अकबर के राजकवि उर्फी की एक कविता सुनाना चाहता हूँ।’
‘कृपया आदेश दीजिए। नौकरानी ध्यान से सुन रही है।’
नवाब थोड़ी देर रुका, गला साफ किया, मानो वह आयत को लेकर थोड़ा झिझक रहा हो। फिर उसने कहा, 'मैं यह आयत तुमसे इसलिए कह रहा हूँ क्योंकि मुझे इसे कहने की विशेष आवश्यकता महसूस हो रही है।'
‘ऐसी सभी चीजों को त्याग दो। तुम्हें किसी भी चीज की आवश्यकता क्यों होनी चाहिए! लेकिन कृपया यह श्लोक प्रदान करें।’
The Navab spoke:
मुझे प्रेम पर गर्व है, और मुझे सौंदर्य पर गर्व है। वे पूर्ण सामंजस्य के मदिरा प्याले से मदहोश हैं, फिर भी शर्मिंदगी उन्हें नहीं छोड़ती।

ताली बजाते हुए वह एक शब्द भी कह पाती, उससे पहले ही नवाब ने बोलना जारी रखा, ‘छोटी बेगम, सद्भाव का मदिरा पियो, और भी पियो। प्रेम को भी इसे पिलाओ। लेकिन... पर्दा तो पर्दा ही होता है, चाहे वह शर्म से ही क्यों न बना हो। और यह नखरे का भी एक तरीका है... नखरे के आदेशों का पालन करना आनंददायक है, लेकिन—’

अब वज़ीर खुद को रोक नहीं पाई और बीच में टोकते हुए बोली, 'ईश्वर करे कि ऐसा दिन कभी न आए जब मैं आपके साथ नखरे दिखाऊं! काश मेरे जैसी और भी हों जो आपके चरणों में कुर्बान हो जाएं। आपके प्रेम रूपी सितारे की चमक मुझे चकाचौंध कर देती है। बस इतना ही। अगर शर्म एक पर्दा है, तो उसे उठाने वाला भी कोई है।'

नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान अब समझ गए थे कि उनका उद्देश्य स्पष्ट हो गया है। उन्होंने मुस्कुराते हुए कहा, 'बहुत अच्छा। अब कृपया मुझे जाने की अनुमति दें। आप लोगों से मिलकर मेरा मन प्रसन्न हो गया।'

नवाब के पैरों में जूते पहनाए गए। एक बुजुर्ग दासी आई और उसने अपने हाथों को उनके चेहरे पर फेरा और फिर उन्हें अपने चेहरे के किनारों से दबाया: यह कहने का पारंपरिक तरीका था, 'तुम्हारी सारी परेशानियाँ मेरे सिर पर आ जाएँ।' उसने एक प्रार्थना की और उन पर फूँक मारी। वज़ीर ने उसके दोनों हाथों से एक फूलदान बनाया और नवाब को एक लंबे डंठल वाला लाल गुलाब भेंट किया। उन्होंने उसके दोनों हाथों को अपने हाथों में लिया और उसकी प्रत्येक उंगली को अलग-अलग चूमा और एक फ़ारसी कविता के माध्यम से उसे उत्तर दिया।

आपकी मेहंदी लगी उंगलियों के सिरे चूमने के लिए उपयुक्त स्थान हैं; छोटा फूल पूरी तरह खिल गया क्योंकि आपके द्वारा इस फूल को चुनना उचित है।

उन्होंने आगे कहा, “तुम्हारा यह उपहार और इसकी सुंदरता मुझसे कुछ कहती है। मेरा हृदय मेरे हृदय से निकलकर किसी अज्ञात स्थान पर चला गया है। तुम्हारा यह उपहार कहता है कि यदि हृदय घर लौट आए तो दरवाजा न खोले। उसे बताया जाना चाहिए कि वहां कोई नहीं है।”

वज़ीर की आँखें आँसुओं से भर उठीं। अपने सिसकियों को रोकते हुए उसने कहा, “महामहिम, आपका हृदय चाहे जहाँ कहीं भी हो, आपका ही है और चाहे जिस भी भूमि में हो, वह भूमि आपके शासन के अधीन है। अब आपको जाना होगा; और आज जिस तरह आप पीठ फेर रहे हैं, उस तरह आपका चेहरा मुझे देखने दीजिए।”

नवाब ने धीरे से अपनी उंगलियों से वज़ीर के आंसू पोंछे और अपना दाहिना हाथ सीने पर रखकर झुक गए। सिर उठाकर उन्होंने वज़ीर के सिर पर हाथ फेरा और अत्यंत कोमल स्वर में बोले, 'तुम सही हो,' फिर उन्होंने एक अरबी कहावत कही, 'हर चीज़ अपने घटित होने के समय से बंधी होती है।'

वह मुड़ा, छोटी सी कोठरी को तेजी से पार किया और चला गया।

वज़ीर ने उचित पारिश्रमिक और टिप देकर बाहर से रखे अपने नौकरों को विदा कर दिया; उसने अपनी निजी नौकरानी से कहा कि वे खाना खाकर रसोई बंद कर दें, क्योंकि उसे भूख नहीं थी। फिर वह सिर झुकाए, मानो किसी बोझ से दबी हो, अपने कमरे में गई और पलंग पर लेट गई। उसका शरीर कांप रहा था, मानो उसे बुखार हो, हालांकि रात बिल्कुल भी ठंडी नहीं थी। कंपकंपी के बावजूद वह बिना ओढ़े लेटी रही। अचानक, उसकी आँखों से अपने आप आँसू बहने लगे। फिर वह सिसकने लगी। अंत में, सिसकते-रोते उसे नींद आ गई।
रात के काफी देर हो जाने पर वह उठी, ठंड से कांप रही थी और थरथरा रही थी। उसे ऐसा लग रहा था जैसे वह जम गई हो, बर्फ की तरह। उसने जैसे-तैसे अपने ऊपर एक हल्की रजाई ओढ़ी और खाली आँखों से छत को घूरने लगी। नींद उसका पीछा छोड़ चुकी थी। शक्तिशाली, आकर्षक, मोहक शम्सुद्दीन अहमद खान, उनकी परिष्कृत वाणी, उनका लहजा: इन सबने उसके दिल में चाहत की एक तीव्र पीड़ा पैदा कर दी थी, लेकिन उसकी आँखों के सामने वे दिन और रातें थीं जो उसने मार्स्टन ब्लेक के साथ बिताई थीं। जब भी वह ब्लेक साहब के बारे में सोचती, उनकी असमय और अकेलेपन में हुई मृत्यु पर उसका दिल दुख से भर उठता, लेकिन उस दर्द से भी कहीं अधिक, उसके दिल में उनके लिए उमड़ती हुई चाहतों, सफलताओं और प्रेम की गर्म लहरें, जो फिरंगी और हिंदुस्तानी दोनों थे, उसके भीतर एक शारीरिक अनुभूति की तरह उमड़ने लगीं, मानो किसी ने तालाब में एक कंकड़ फेंक दिया हो और लहरें फैलती जा रही हों, एक चक्र में लगातार चौड़ी होती जा रही हों, मानो किसी अदृश्य शक्ति द्वारा संचालित हों।
बलक साहब जैसा प्रेमी—उनका जोशीला प्रेम, उनके लिए उनका कभी न खत्म होने वाला उत्साह, वज़ीर के लिए उनकी प्रेममयी महत्वाकांक्षाएँ, उनके शरीर के रहस्यों के प्रति उनकी ऐसी जागरूकता मानो उनकी सहज प्रवृत्ति उनके साथ इतनी सहानुभूति रखती थी कि उनका संपूर्ण अस्तित्व उनके शरीर और आत्मा की हर नस और हर वाहिनी में समा गया हो—ऐसा दूसरा कहाँ मिलेगा? क्या दुनिया में कोई और इतना भाग्यशाली हो सकता है?

मेहरौली के उस पवित्र गाँव से लौटते समय की उस रात, तूफ़ान, सड़क के डर और जोखिम, बैलगाड़ी का पर्दा हवा में लहरा रहा था... और किसी की निगाहें—मेरे शरीर पर नहीं, बल्कि मेरे जीवन और मेरे दिल की भूलभुलैया में कहीं खोई हुई थीं—कौन जानता था कि एक दिन मैं उसके साथ घर बसाऊँगी, और कौन जानता था कि जयपुर में मेरा घर उसकी कब्रगाह बन जाएगा?... आपको बिल्कुल भी डरने की ज़रूरत नहीं है, मैं रेजीडेंसी में पूरी तरह सुरक्षित रहूँगी। मैं बहुत जल्द लौट आऊँगी और हम अपने घर को फिर से आबाद करेंगे... यह ज़रूरी नहीं है कि मैं उस आदमी को चाहूँ जो मुझे चाहता है। लेकिन नवाब?
उसकी आँखें मानो अपने आप बंद हो गईं। उसे लगा कि वह बस एक मिनट सोई है, लेकिन जब उसने बाहर देखा तो सूरज आसमान में ऊँचा था। उसके छोटे से आँगन में लगे नींबू के पेड़ पर

गौरैया चहचहा रही थीं। एक बड़े पिंजरे में, जयपुर से लाए गए उसके अमदावत पक्षी, भारतीय मोमचोन पक्षी, चहचहा रहे थे, आपस में जोश से बातें कर रहे थे और सीटी बजा रहे थे। काली आँखों वाले, भूरे लाल रंग के शरीर और गहरे लाल सिर और छाती वाले, जिन पर जगह-जगह छोटे-छोटे सफेद बिंदु बिखरे हुए थे, वे सनबर्ड से बड़े थे, लेकिन बहुत ज्यादा बड़े नहीं थे। हाल की बारिश के कारण उनकी लाल छाती और सिर का रंग गहरा हो गया था, लगभग काले गुलाब जैसा। उनकी सीटियाँ ऐसी लग रही थीं मानो घर को हवा में उठा लेंगी और उन्हें अपने साथ उड़ा ले जाएँगी।

वज़ीर ने स्नानगृह में अपने दाँत साफ़ कर लिए थे और अब चेहरा धो रही थी कि तभी उसे सूचना मिली कि फ़िरोज़पुर से एक गदाधारी द्वार पर उसका इंतज़ार कर रहा है। उसे अंदर आने के लिए कहा गया, और वज़ीर ने जल्दी से स्नान पूरा करके एक मुलायम कपड़े से अपना चेहरा पोंछा, अपनी चादर ठीक की और स्नानगृह से बाहर आ गई। गदाधारी के साथ एक कुली था, जिसके सिर पर एक बड़ी टोकरी थी।

पर्दे के पीछे से वज़ीर की एक झलक पाकर, राजदंड धारण करने वाले ने झुककर सम्मानपूर्वक सलाम किया और कहा, 'आदरणीय बीबी साहब, मैं आपके समक्ष निवेदन करता हूँ। नवाब साहब, ईश्वर ने एक पत्र भेजा है; कुली आपकी इच्छा की प्रतीक्षा कर रहा है। ईश्वर ने एक पत्र भी लिखा है जो मेरे पास है।'

'मैं अभी घर में पर्दा करवा देता हूँ; चौकीदार को अंदर आने दो,' वज़ीर ने कहा। राजदंड धारण करने वाला, जिसे नवाब की एक झलक पाने की उम्मीद थी, थोड़ा निराश हुआ, लेकिन उसने उत्तर दिया, 'ठीक है, आदरणीय बीबी साहब,' और नौकरानी को नवाब का संदेश सौंप दिया, जो एक छोटे रेशमी थैले में रखा था, जिसकी गाँठ मोम से सील की गई थी और जिस पर नवाब की निजी मुहर लगी थी, और चौकीदार को निर्देश दिया, 'अरे, बदमाश, टोकरी जल्दी अंदर ले जाओ। जल्दी करो। अगर देर हुई तो आदरणीय नवाब नाराज़ हो जाएँगे।'

'अभी लाता हूँ, महोदय। मैं इसे तुरंत अंदर ले जाता हूँ!' यह कहकर, कुली एक नौकरानी के साथ घर में गया और टोकरी को लकड़ी के चबूतरे पर रखकर तुरंत वापस मुड़ गया। वज़ीर ने गदाधारी को पाँच रुपये और कुली को एक रुपया दिया, और नवाब को प्रणाम और सलाम कहकर उन्हें जाने की अनुमति दी। अब उन्होंने सुबह मिले उपहारों को देखा। बेंत की टोकरी अंबरी किस्म के लाल कश्मीरी सेबों से भरी थी। रेशमी पर्स में केसर के इत्र की एक छोटी कांच की शीशी थी, और इत्र के समान नारंगी-पीले रंग के सुगंधित नोटपैड पर एक संदेश था; इस तरह के कागज़ का उपयोग औपचारिक संदेशों के लिए किया जाता था। अनौपचारिक संदेशों के लिए प्रयुक्त शिकस्तह लिपि में उस पर निम्नलिखित फ़ारसी श्लोक अंकित था। नवाब की लिखावट साफ-सुथरी और परिष्कृत थी:

वृक्ष नन्हे फूलों से भर गया, नन्हे फूल खिलकर पूर्ण रूप से खिल गए; और खिलकर फल पककर फल बन गए। कृपया आइए, ताकि बाग की मेहनत व्यर्थ न जाए।

वज़ीर का पूरा शरीर आनंद से भर उठा। मार्स्टन ब्लेक की समझ से परे ऐसी सूक्ष्मताएँ थीं।

लेकिन अगले ही पल वह भय से काँप उठी। यहाँ क्या हो रहा है? मैं कहाँ जा रही हूँ? क्या मैं जा रही हूँ... या मुझे ले जाया जा रहा है?

उसी शाम उन्होंने अपनी दासी को मंझली खानम में उनसे मिलने के लिए भेजा। अगले दिन, जब सूरज पूरी तरह से निकल चुका था, वे नवाब यूसुफ अली खान के महल में पहुँचीं। औपचारिक शिष्टाचार निभाने के बाद, उन्होंने मंझली बेगम को नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान के साथ हुई बातचीत के बारे में बताया।

क्या आपको लगता है कि इस मामले में माननीय भाई नवाब यूसुफ अली खान साहब से परामर्श करना मेरे लिए उचित होगा?

'प्यारे बच्चे, इसमें उचित या अनुचित का सवाल ही क्या उठता है? तुम्हें तो यह सवाल जरूर पूछना चाहिए। मैं तुम्हारे साथ हूँ, और अगर मुझे जरूरत महसूस हुई तो मैं बातचीत में दखल दूँगा। आओ, बिस्मिल्लाह! तुम पान के शंकुओं का आनंद लो, मैं नवाब से थोड़ी देर के लिए अंदर आने का अनुरोध करता हूँ।'

कुछ ही देर में नवाब यूसुफ अली खान महिलाओं के कमरे में पहुँच गए। विलियम फ्रेजर के यहाँ पार्टी के बाद वज़ीर से उनकी यह पहली मुलाकात थी। उनके मुखबिरों ने उन्हें नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान और छोटी बेगम की मुलाकात के बारे में बता दिया था, लेकिन उन्होंने उमदा खानम को यह बात न बताना ही उचित समझा, ताकि वह उन्हें अपनी बहन की जासूसी करने वाला न समझ लें।

'माननीय महोदय के सामने सब कुछ स्पष्ट है, लेकिन मुझे एक और चिंता भी है। क्या मुझे बारी बाजी या बाबा जान से पूछना चाहिए कि वे इन घटनाओं के बारे में क्या सोचते हैं? या क्या मुझे उन्हें कुछ बताना भी चाहिए?'

'छोटी बेगम, यह मामला पूरी तरह से आपसे संबंधित है। इस मामले में मेरा चुप रहना ही बेहतर होगा। लेकिन मुझे याद आ रहा है कि जयपुर से लौटने पर आपकी और अनवरी बेगम की बातचीत हुई थी। क्या मैं सही कह रही हूँ?'

जी हां, माननीय न्यायाधीश, और मैंने उनसे कहा था कि मैं...

'तो, आपने खुद ही अपने लिए वह दरवाजा बंद कर लिया है।' नवाब कुछ पल रुके और सोचने लगे। 'इसलिए, हमारे विचाराधीन मामले में, मैं कहूंगा कि निर्णय आपके हाथ में है। लेकिन मैं यह भी निश्चित रूप से कह सकता हूं कि नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान के साथ हमारे संबंध मैत्रीपूर्ण हैं और हम उन पर भरोसा करेंगे।'

लेकिन रेजिडेंट बहादुर...?

अरे, रेजिडेंट बहादुर की चिंता मत करो! क्या यहाँ उनकी तैनाती पक्की है? आज यहाँ, कल कहीं और, कंपनी उन्हें जहाँ चाहे भेजती है। या फिर वो किसी दिन देश लौट भी सकते हैं। ये लोग थोड़े समय के लिए ही हैं। नवाब और उनकी प्रजा बहुत लंबे समय तक टिके रहेंगे।

आपका आदेश बिल्कुल सही है।

इसलिए, यदि शम्सुद्दीन अहमद की शर्तें आपकी स्थिति के अनुकूल हैं, और उनका आचरण और व्यवहार आपको स्वीकार्य लगता है, तो बिस्मिल्लाह, अपनी सहमति दें।

‘ईश्वर आपकी किस्मत चमकाए। आपने इस सेविका के दिल से बहुत बड़ा बोझ उतार दिया है।’
वज़ीर उठे और नवाब को सलाम किया।
मंझली बेगम अत्यंत प्रसन्न हुईं और मुस्कुराते हुए बोलीं, “हम, आपकी दासियाँ, आपके उत्तम परामर्श के लिए आपके लिए बलिदान होने को तैयार हैं! ईश्वर ने आपके हृदय को जमशेद के मदिरा प्याले के समान बनाया है, जिसमें संसार की हर चीज प्रतिबिंबित होती है। आपका हृदय सत्य को पल भर में देख लेता है!”
मंझली बेगम की मुस्कान उनके बेदाग रंग-रूप से और भी खिल उठी थी, उनकी कोमल, सुडौल गर्दन के ऊपर का चेहरा उगते सूरज की तरह लग रहा था। नवाब न सिर्फ उनकी खूबसूरती से मोहित हो रहे थे, बल्कि वज़ीर का मन कर रहा था कि उन्हें गले लगा लें और उनके चेहरे पर ढेर सारे चुंबन बरसा दें। काफी समय बाद—उन्हें याद नहीं था कितना समय—उन्हें ऐसा महसूस हो रहा था कि उनका शरीर उनका अपना है, उनके भाव और दिल उनके वश में हैं। यह पहली बार था जब उन्हें लग रहा था कि जीवन के फैसले लेने में वह अकेली और असहाय नहीं हैं।

मंझली और यूसुफ अली खान से विदा लेकर वह सीधे अपने घर लौट गई। पालकी में पूरे सफर के दौरान और घर पहुँचने पर भी, उसने दिनभर कुछ नहीं किया, बस एक कमरे से दूसरे कमरे में घूमती रही और खुद को निहारती रही। और जब वह इससे ऊब गई, तो उसने नवाब के शब्दों पर विचार करना शुरू किया। उन्होंने 'शर्तों' की बात की थी, और कहा था कि वे शर्तें मेरी स्थिति के अनुकूल होनी चाहिए। तो उन शब्दों का असल अर्थ क्या था?
ज़ाहिर है, नवाब ने विवाह की बात नहीं की; उन्होंने यह नहीं कहा: अगर शम्सुद्दीन अहमद खान विवाह का प्रस्ताव रखे तो उसे स्वीकार कर लो। मामला उस पर निर्भर था; अगर वह चाहती, तो विवाह की शर्त रख सकती थी। या, अगर उस तरफ से विवाह का कोई प्रस्ताव नहीं होता, तो वह यह कहकर अपना उद्देश्य बता सकती थी कि वह केवल विवाह के लिए ही उपलब्ध है। या, अगर वह तुरंत वैवाहिक मुद्दों को नहीं उठाना चाहती, तो भी ठीक था: उसके साथ उसकी इकलौती पत्नी बनकर रहने का विकल्प भी रखा जा सकता था। वास्तव में, वह अपने छोटे से घर में रहकर केवल नवाब के प्रति वफादार रहने का प्रस्ताव भी रख सकती थी। लेकिन फिर वह अपना जीवन यापन कैसे करती? क्या उसे नवाब के राज्य में खुलेआम जाने की अनुमति मिलती? क्या कभी विवाह की कोई संभावना होती, चाहे वह औपचारिक ही क्यों न हो? और वहाँ वह दबंग, हट्टा-कट्टा, मूंछों वाला, बूढ़ा फिरंगी, फ्रेजर साहब था—ईश्वर उसे मृत्यु दे! न जाने कितनी बीबी और कितने समलैंगिक उसके बुढ़ापे में उसकी पूंछ से बंधे हुए थे; यह अजीब बात है कि अंग्रेज सिर्फ एक ही औरत से शादी कर सकते हैं, लेकिन जितने चाहें उतने स्थायी या अस्थायी संबंध रख सकते हैं। मैं उस कमीने को अपने शौचालय में भी अपना चेहरा नहीं देखने दूँगा। लेकिन आखिर मालिक तो वही है, है ना? उसके पास मल्टन ब्लैक साहब जैसे कई अधीनस्थ होंगे। मुझे पता है कि कलकत्ता के महान लॉर्ड साहब के दरबार में उनका बहुत सम्मान है। फिर भी नवाब यूसुफ अली खान साहब सही कह रहे हैं। उनकी दोस्ती की क्या कीमत है, और यह कब तक चलेगी? वे जल्द ही अपने देश भाग जाएँगे, या उन्हें यहाँ से भगा दिया जाएगा। खैर, अगर जल्द नहीं तो वह

दिन जरूर आएगा। मिर्जा नौशाह उन्हें अपना सच्चा दोस्त हजार में से एक, लाखों में से एक मानें। वह तो दिल्ली का भी नहीं है। तो फिर यहाँ के बादशाह के लिए उसका दिल क्यों दुखता है? अगर वह किसी विदेशी, फिरंगी ईसाई की सत्ता और धन के बंधन में बंधना चाहता है, तो उसे ऐसा करने दो। हम हिंदुओं को ऐसे मामलों में क्या दिलचस्पी हो सकती है? लेकिन यह सच है कि वह एक महान कवि हैं: जो भी उनके साथ रहेगा, उसका नाम अमर हो जाएगा। लेकिन नहीं, यह हमेशा सच नहीं है। खुसरो या हाफ़िज़ की पत्नियों या प्रेमिकाओं के बारे में किसने सुना है या पूछा है? क्या किसी ने उनके नाम, उनके जन्मस्थान, उनके जीवन और उनकी मृत्यु के बारे में जानना चाहा है? वास्तविक दुनिया में केवल पुरुष ही हैं: वही शासन करते हैं, वही दुनिया का कामकाज संभालते हैं। हम बस इतना ही कर सकते हैं कि किसी तरह उन्हें अपने पास रखें और उन्हें हमसे दूर न जाने दें। नवाब, उनकी प्रजा और उनका राज्य: यही चीजें हमेशा रहेंगी। ये कवि भी फिरंगी मक्खियों की तरह हैं: जो चीनी के एक टुकड़े से दूसरे टुकड़े पर मंडराती रहती हैं। वे मधुमक्खियां नहीं हैं। वे उस मक्खी की तरह हैं जो दूध के जग में गिरकर डूब जाती है—न तो वह तैरकर दूसरे छोर तक जा सकती है और न ही एक छोर पर तैरती रह सकती है। लेकिन मेरे पास और भी बहुत से मुद्दे हैं जिन्हें सुलझाने की ज़रूरत है। और मेरे बच्चों का क्या होगा: आमिर मिर्ज़ा, जो मेरे दिल का एक टुकड़ा है, बादशाह बेगम, जो मेरी आँखों की रोशनी है? हाँ, वे अबी मेमसाहिब के साथ थे, लेकिन उनके पालन-पोषण का खर्च उन्हीं को उठाना था... और नहीं, वे उनसे अलग नहीं थीं, बिलकुल भी नहीं। मुलाक़ातें, अनौपचारिक मुलाकातें, ये सब तो होनी ही चाहिए, भले ही कभी-कभार ही क्यों न हों। काश आमिर मिर्ज़ा जल्दी से पढ़ना-लिखना सीख लें! फ़ारसी ही न हो, हिंदी ही सही, लिखना सीख लें। आमिर खुसरो के ये शब्द कितने सुंदर हैं: न तो वह मेरे पास आता है, न ही लिखता है। जीवन में प्रियतम ही सब कुछ नहीं होता, बिलकुल नहीं! एक स्त्री अपने बच्चों के चेहरे से जीती है। पुरुष उसके माथे का सिंदूर और उसके जीवन का मुकुट हो सकता है, लेकिन एक जवान, हट्टे-कट्टे बेटे से बढ़कर कोई दौलत नहीं। जवान बेटा तो मौत को भी अपना शिकार बना सकता है। सचमुच, घर का मुखिया तो बेटे को ही मानना चाहिए। ये मर्द कितने मूर्ख और अविश्वसनीय हैं; उनमें बुद्धि की कमी होती है, लेकिन उम्र लंबी होती है। कुछ वर्षों बाद उनके शरीर की तंदुरुस्ती भी कम हो जाती है; आनंद भी स्पष्ट रूप से घट जाता है। ओह, मेरे अमीर मिर्ज़ा! कितना सुंदर, कितना दिलकश युवक होगा वो! वो मतन बल्क साहब से भी थोड़ा लंबा होगा। लेकिन मैं उसे कहाँ और कैसे देख पाऊँगी? मुझे उसके विकास को देखकर अपने दिल को खुश करने का मौका कहाँ मिलेगा? मैं खुद बेघर हो जाऊँगी, तो उसके स्वागत के लिए दहलीज और दरवाजा कहाँ और कैसे बनाऊँगी? मैं बेघर भिखारी की तरह घर-घर भटक सकती हूँ, लेकिन मेरे दिल के उन टुकड़ों को—ईश्वर उन्हें सुरक्षित रखे—एक अच्छे खानदान में घर चाहिए, भले ही महल या किला न मिले। क्या उन्हें नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान के घर से बेहतर घर मिल सकता है? मुझे उनसे शर्तों पर चर्चा और निर्णय लेना चाहिए... या मुझे उनके प्रस्ताव का इंतजार करना चाहिए? खैर, उनका दिल आग से जल रहा है, उन्हें खुद संदेश भेजना चाहिए... मीर मुहम्मद ताकी साहब ने कितनी अद्भुत पंक्ति रची थी!

मैं अपना सिर काट लूंगा, उसे अपने हाथ में लूंगा और मैं खुद, अकेले ही वहां जाऊंगा।

ओह, ये कवि सचमुच! यह देखना अद्भुत है कि वे कैसे नए विषय, नए विचार खोजते और पाते हैं! वे किन-किन क्षेत्रों का अध्ययन करते हैं, किन-किन गहराइयों में उतरते हैं ताकि ऐसे अनमोल रत्न खोज सकें?
और यह श्लोक भी उन्हीं का है, जो उनके बारे में बिल्कुल सही है, और शायद अन्य महान कवियों के बारे में भी।
सचमुच, कवि कितने अद्भुत हैं! मुझे उनका समूह बहुत पसंद है; वे पूर्ण सभा में, निडर होकर, सभी रहस्यों, सभी गुप्त बातों को प्रकट करते हैं।
बड़ा अफसोस है कि निज़ाम-उल-मुल्क—अल्लाह उनकी आत्मा को शांति दे—ने मेरे प्यारे उस्ताद शाह नासिर साहब को दक्कन बुला लिया, वरना मैं नवाब को एक कविता लिखकर शाह साहब को सुधार के लिए दिखा देती। शायद कविता उनके इरादों को समझने का ज़रिया बन जाती; या कम से कम मैं अपने बारे में उन्हें कुछ बता पाती। उस अभागी मेमसाहिब ने तो मुझे कई हफ़्तों से मेरे बच्चों की कोई खबर नहीं भेजी है। मैं उनके बिना यहाँ बिलकुल अकेली हूँ और जयपुर वापस जाने की तो मेरी कोई इच्छा ही नहीं। अब मैं बस यही दुआ कर सकती हूँ कि मैं दिल्ली की उस मिट्टी में मिल जाऊँ जहाँ से मेरी जन्मभूमि है।
क्या कोई उनके रूप-रंग, उनके शरीर का वर्णन कर सकता है? तो मैं एक अजनबी को अपने दिल की बात कैसे बता सकता हूँ? लेकिन मतन बल्क साहब भी अजनबी ही थे। वास्तव में, वे अजनबियों में भी सबसे अजनबी थे: एक ईसाई, जिनके बीच हमें जोड़ने वाली कोई चीज नहीं थी, न शिष्टाचार, न तौर-तरीके, न समुदाय, न रीति-रिवाज। ओह, मैं उनके बारे में कैसे बताऊँ? शायद ईश्वर ने उन्हें किसी विशेष गुण वाली मिट्टी से गढ़ा था। उनका शरीर कितना सुगठित, कितना तेजस्वी, कितना शानदार था! और अब, हमारे नवाब शम्सुद्दीन अहमद के बारे में...
ऐसा लगा जैसे वह अचानक रुक गई हो, मानो उसके सामने कोई कुआँ या पहाड़ी की तलहटी आ खड़ी हो। हे हमारे नवाब! किस अधिकार या मजबूरी से मैं उनके बारे में ऐसा सोच रही हूँ? क्या उन्होंने मेरा दिल अपने वश में कर लिया है? या मैं अपनी मर्ज़ी से उन्हें अपना दिल सौंप रही हूँ?
विदाई के समय नवाब के कहे शब्द उसे याद आए: 'मेरा दिल मेरा साथ छोड़कर कहीं चला गया है। अगर वह लौटकर दरवाज़ा खटखटाए, तो दरवाज़ा मत खोलना; कहना कि घर पर कोई नहीं है।' लेकिन उसने भी तो जवाब में कुछ कहा होगा, है ना? क्या उनके बीच कुछ हुआ नहीं था? क्या उनके बीच कोई बंधन नहीं बना था? पहला कदम आखिर होता क्या है?

क्या मुझे अपने हाथ से जवाब लिखना चाहिए, या मुझे उसकी तरफ से किसी उचित संदेश का इंतज़ार करना चाहिए? लेकिन अब इसके लिए क्या बहाना या अवसर हो सकता है? क्या मुझे शगुन जानने के लिए हाफ़िज़ के दीवान में खोजबीन करानी चाहिए? या मुझे खुद ही करनी चाहिए? लेकिन क्या मैंने यह नहीं सुना कि संबंधित व्यक्ति को स्वयं शगुन नहीं खोजना चाहिए? इसके विपरीत, संबंधित व्यक्ति को इस्तिखारा करना चाहिए, वह प्रार्थना जो किसी कार्य के लिए

'हाँ' या 'ना' का उत्तर पाने के लिए की जाती है। तो मुझे किससे पूछना चाहिए? क्या मुझे अपनी किसी भरोसेमंद नौकरानी को यह पता लगाने के लिए भेजना चाहिए कि क्या कोई शगुन जानने वाला आस-पास कहीं रहता है, और क्या वह आ सकता है?

वह अपने दिमाग में बार-बार उन्हीं सवालों और विचारों के घूमने से थक चुकी थी और निराश हो चुकी थी; लेकिन कोई हल नहीं निकल रहा था। दिन बीत गया, शाम रात में बदल गई, लेकिन उसे कोई ऐसा रास्ता नज़र नहीं आ रहा था जिससे कोई समाधान निकल सके।

उसने बहुत कम खाया, कुल्ला किया और बिस्तर पर लेटने ही वाली थी कि उसे पंडित नंद किशोर की याद आ गई। पंडित जी पुराने ज़माने के व्यक्ति थे। निर्विवाद ख्याति प्राप्त, वे भविष्यवक्ता, ज्योतिषी, स्वप्न-संकेतों के व्याख्याकार थे। वे कभी-कभी छोटी बेगम की नानी के घर जाते थे, लेकिन कई बार अनुरोध और निमंत्रण के बाद ही। अब वे बहुत बूढ़े हो गए होंगे, शायद उनका निधन भी हो गया हो। खैर, कम से कम मैंने कुछ तो सोच लिया। रात में लिए गए संकल्पों को अमल में लाना उचित नहीं होता। इसलिए अभी मैं कुछ नहीं करूंगी। सुबह होने पर इस पर और विचार करूंगी। यदि आवश्यक हुआ तो मैं स्वयं नानी के पास जाऊंगी।

वज़ीर खानम पंडित नंद किशोर से सलाह लेते हैं, और एक विकट दुविधा को सुलझाने के लिए ख्वाजा हाफ़िज़ का दीवान पढ़ा जाता है।

उसकी किस्मत अच्छी थी। अगले दिन, वह बिना किसी कठिनाई के पंडित नंद किशोर के पास पहुँच गई। दरअसल, वह कई साल पहले दिल्ली छोड़कर अपने बेटे के साथ हांसी हिसार में बस गए थे। उनकी पत्नी की मृत्यु और उनके खुद के लगातार पीठ दर्द ने उन्हें काफी लाचार बना दिया था। अकेलेपन ने उन्हें अंततः खानम का बाजार स्थित अपना घर अपनी बेटी और दामाद को देने और हांसी हिसार में अपने बेटे और बहू के घर में बसने के लिए मजबूर कर दिया था। उनके पास साधनों की कोई कमी नहीं थी और उनका बेटा भी, ईश्वर की कृपा से, काफी समृद्ध था, लेकिन पंडित किसी पर जरा सा भी बोझ डालने को तैयार नहीं थे। बेटे ने लगभग घुटने टेककर उनसे निवेदन किया कि वे उनके साथ मुफ्त में रहें, लेकिन पंडित अपनी बात पर अड़े रहे। बेटे ने विनती की कि परमेश्वर ने उन्हें किसी भी तरह की कमी में नहीं डाला है, और वैसे भी, बाबूजी का खर्च न के बराबर ही होगा, लेकिन पंडित यथासंभव अपना खर्च खुद ही उठाते थे। वे अपना खाना अलग से बनवाते थे; वह अपने बेटे के घर में ऊपरी कमरे और छत पर रहता था, और हालांकि वह कोई किराया नहीं देता था, उसने अपने कमरे तक जाने के लिए अलग सीढ़ियाँ बनवा रखी थीं। परिवार के लोग जब भी मिलना चाहते थे या जब वह अपने बेटे, पोते या बहू से उनके घर में मिलना चाहता था, तो अंदर वाली सीढ़ी का इस्तेमाल करते थे।

वज़ीर के लिए यह एक बड़ा सौभाग्य था कि पंडित नंद किशोर खानम का बाज़ार स्थित अपने पुराने घर में ही थे, जब अकबरी बाई का दूत उनके ठिकाने का पता लगाने वहाँ गया। उन्होंने अगले दिन सुबह वज़ीर से मिलने की सहर्ष सहमति दे दी और स्पष्ट किया कि उन्हें किसी वाहन या मार्गदर्शक की आवश्यकता नहीं है, और वे स्वयं आसानी से वहाँ पहुँच जाएँगे।

वज़ीर ने राहत की एक छोटी सी साँस ली। वह तुरंत पंडित जी के स्वागत के लिए उपयुक्त कमरा तैयार करने और घर की सामान्य साफ-सफाई में जुट गई। उसने वह कमरा चुना जहाँ पंडित जी बैठेंगे और उनका स्वागत किया जाएगा; बाद में, उसी कमरे का उपयोग पंडित जी के ज्योतिष अनुष्ठानों के लिए किया जा सकता था। यह कमरा प्रवेश कक्ष के ठीक दाहिनी ओर था। उसने इसे सबसे उपयुक्त समझा क्योंकि यह कुछ हद तक अलग था, और फिर भी नौकर आसानी से उपलब्ध रहेंगे। इसमें एकांत का माहौल था और इससे आदरणीय अतिथि को घर के अंदर तक आने-जाने की परेशानी से भी मुक्ति मिल जाएगी।

लेकिन अचानक उसे ख्याल आया कि पंडित जी को कमरा एकांत में पसंद नहीं आएगा और शायद उन्हें बुरा भी लग सकता है कि उन्हें घर के बिल्कुल बाहर, इतने छोटे कमरे में ठहराया गया है। इसलिए उसने अब उन्हें उसी कमरे में बुलाने का फैसला किया जहाँ नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान को ठहराया गया था। कमरे की अच्छी तरह से धूल झाड़ी गई, फिर झाड़ू लगाई गई, और फिर फर्श को गुलाब जल से धोकर पंखा चलाकर जल्दी से सुखाया गया। कमरे में दीवार से दीवार तक भारी सूती कालीन बिछाई गईं; फिर कालीनों को दूधिया सफेद चादर से ढक दिया गया। इसके बाद पकी हुई मिट्टी के छोटे-छोटे चूल्हों में आंवला, लोबान और अगरबत्ती जलाकर

कमरे में धुआं किया गया। फिर कमरे को ताला लगा दिया गया।
अगली सुबह, पंडित नंद किशोर के खानम का बाजार से रवाना होने से काफी पहले, फर्श पर मोटी कालीनें बिछाई गईं और उनके एक सिरे पर एक बड़ा तकिया रखा गया। पानदान और हुक्का लगाया गया, और पूरे कमरे में गुलाब जल छिड़कने के बाद उसे फिर से बंद कर दिया गया।
सुबह की रोशनी गलियों और संकरी सड़कों पर फैल गई, जिससे उन पर सुनहरी, सुगंधित धूल के कण बिखर गए। शाही सफाईकर्मियों ने अपने द्वारा उड़ाई गई धूल को मिठाई बनाने वालों के लकड़ी और कोयले के चूल्हों से उठते सुगंधित धुएं के साथ मिला दिया। सच्ची भोर की गुलाबी रोशनी की लहरें एक छलनी की तरह थीं, जिससे घी में तली हुई मिठाइयों की गर्म, मुंह में पानी लाने वाली सुगंध छनकर वातावरण को मित्रता के संदेशों से भर रही थी, जो मस्जिदों से सुबह की नमाज अदा करके बाहर आ रहे लोगों की नाक, आंखों और गले को महका रही थी। वज़ीर की गली में, मीठे दूध के विक्रेता मलाई की गाढ़ी परतों को फेंट रहे थे, जिन्हें चाकू से काटकर चम्मच से खाया जा सकता था, और दूध, अंडे और चिकन के विक्रेता अपने सामान बेचने के लिए आवाज लगाने लगे।
जहानाबाद में एक नए दिन की शुरुआत हुई, वह शहर जहाँ का वातावरण भी स्वर्गिक था। वह शहर जो बीते हुए दुखों को पल भर में भुला देता था, अंधकार से बाहर निकला और अपनी अमर युवावस्था और सुंदरता का ऐलान किया, गर्व से उठते, हृदय को तृप्त करने वाले, आत्मविश्वास से भरे और कोमल कुतुब साहब के ऊँचे शिखर के माध्यम से; तुगलकाबाद में मुहम्मद तुगलक के मकबरे की शक्ति और भव्यता के माध्यम से; दिल्ली के सबसे प्रिय संत निजामुद्दीन औलिया के तेजस्वी मकबरे से सटे सभा भवन से जुड़ी प्राचीन मस्जिद में कुरान या आस्था की प्राथमिक घोषणा के पाठ करने वालों की मधुर ध्वनियों के माध्यम से; शाहजहाँ की मस्जिद के दो रंगों वाले गुंबद पर बसेरा करने वाले धूसर-नीले कबूतरों के बीच से, जो फिर मस्जिद के विशाल प्रांगण के केंद्र में स्थित वज़ू के कुंड में बहते पानी में अपनी चोंच भिगोने के लिए नीचे उड़ते हैं, और फिर किसी दूर स्थित जंगली, फूलदार झाड़ी की याद में गुटरगू करते हैं जो शायद कभी उनका घर रहा होगा; हवेली में स्थित विशाल छह-पहलू वाले कुंड, सावन भादों में फव्वारे के अचानक चालू होने के बीच से; विभिन्न प्रकार के वाद्ययंत्रों की कंपकंपी भरी ध्वनियों और तबला नामक दोहरे ताल वाद्ययंत्र पर जटिल हाथ और उंगलियों के प्रहारों की गूंज के बीच से।
इन सबके बीच, वज़ीर के गली वाले दरवाजे की कुंडी की हल्की सी खड़खड़ाहट सुनाई दी: पंडित नंद किशोर आ चुके थे। वज़ीर की नौकरानी ने झट से दरवाजा खोला और झुककर सलाम करते हुए उन्हें उस कमरे में ले गई जो अब गुलाबों की खुशबू से महक रहा था। उसने उन्हें पूरे आदर के साथ तकिये पर बिठाया, पान का डिब्बा उन्हें दिया, फिर हुक्का, जो पहले से तैयार था; हुक्के में सुलगते फैजाबादी तंबाकू की खुशबू से पूरा घर महक रहा था। लंबे हुक्के के पाइप का चांदी का मुख उनके हाथ में रखते हुए उसने कहा: 'कृपापूर्वक एक-दो पल हुक्के का आनंद लें; बीबी साहब आपके आने का इंतजार कर रही थीं। वह पलक झपकते ही आ जाएँगी।'
पंडित नंद किशोर ने सौम्य मुस्कान के साथ कहा, “सब ठीक है। उसे आराम से रहने दो और

अपना समय लेने दो। मैं कहीं भाग नहीं रहा।" उनकी आवाज़ धीमी और गंभीर थी, लेकिन मर्दाना अंदाज़ में मधुर थी। स्वर में बहुत कम उतार-चढ़ाव था, मानो वक्ता पूर्ण बौद्धिक आत्मविश्वास और हृदय की संतुष्टि की स्थिति में हो, और कोई भी चीज़ उसे डरा या चौंका नहीं सकती थी। वे लंबे, पतले और गोरे रंग के थे। चित्रकारों और मूर्तिकारों की तरह उनकी उंगलियां लंबी और शंकु के आकार की थीं, बाएं हाथ की अनामिका को छोड़कर उन पर कोई अंगूठी नहीं थी। उस उंगली पर उन्होंने एक बड़ी, हरे और भूरे रंग की, चिड़िया के अंडे जितनी बड़ी कैट्स आई पहनी हुई थी; उसमें प्रकाश की ढाई रेखाएं थीं। नाव के आकार की अंगूठी में कैट्स आई शुक्र ग्रह के आकाश में उगते सूरज की तरह उभरी हुई थी। उसकी प्रकाश रेखाएं मध्य एशियाई शहर खट्ट में बने स्टील के भालों की तरह चमक रही थीं, जो सदियों से अपनी अत्यधिक तन्यता और तीक्ष्णता के लिए प्रसिद्ध थे।

जैसा कि ऊपर बताया गया है, बिल्ली की आँख में ढाई रेखाएँ प्रकाश की चमक थी। सामान्यतः, एक अच्छी बिल्ली की आँख में एक या अधिक से अधिक डेढ़ रेखाएँ होती हैं। दो रेखाएँ दुर्लभ होती हैं, और ढाई रेखाओं वाली बिल्ली की आँख का मूल्य पूरे राज्य के कर के बराबर होता है। रईसों और धनी व्यक्तियों ने लालसा भरी निगाहों से बिल्ली की आँख को देखा, लेकिन किसी ने भी पंडित नंद किशोर से यह पूछने का साहस नहीं किया कि वह अनमोल रत्न उनके हाथ में कहाँ और कैसे आया।

पंडित नंद किशोर पूरी तरह सफेद वस्त्र पहने हुए थे; यहाँ तक कि उनकी पगड़ी भी, जो ब्राह्मण शैली में बंधी थी, सफेद थी, जबकि ज्योतिषी और समारोहों में अनुष्ठान करने वाले आमतौर पर केसरिया रंग की पगड़ी पहनना पसंद करते हैं। पंडित जी का पुराने जमाने का, काफी चौड़ा मलमल का लबादा रंगहीन तो नहीं था, लेकिन वह हल्का पीला, लगभग मलाई जैसा सफेद था, इतना कि उसके नीचे पहनी हुई सफेद पतलून ने लबादे के पीले रंग को लगभग ढक लिया था। उनकी पतलून दिल्ली शैली में कटी हुई थी, बहुत चौड़ी, इतनी चौड़ी कि उसके किनारे अक्सर चप्पलों को छूते थे या उनमें फंस जाते थे, जिनकी उंगलियां पतली और चोटी की तरह उठी हुई थीं। पतलून संगी नामक कपड़े की थी, जो रेशम और कपास का मिश्रण होता है, जिसमें बहुत बारीक बुनी हुई धारियां होती हैं और उनके बीच काफी सफेद जगह छोड़ी जाती है। वे आमतौर पर लेंगक्लट या उससे भी मोटे सूती कपड़े पहनना पसंद करते थे, लेकिन उस दिन उन्होंने वज़ीर खानम की यात्रा के सम्मान में संगी पहना था।

पंडित साहब के चेहरे पर झुर्रियाँ न के बराबर थीं। बुढ़ापे का कोई स्पष्ट संकेत नहीं था, लेकिन उनकी दाढ़ी लंबी और पूरी तरह सफेद थी, यहाँ तक कि उनकी भौहें भी सफेद थीं। उनके बाएँ हाथ में एक साँप की तरह मुड़ी हुई आबनूस की छड़ी थी, जिस पर वे मजबूती से टिके हुए थे। उनके दाहिने हाथ में चंदन की एक बहुत लंबी माला थी। उनके गले में एक सफेद रुमाल ढीला-ढाला लिपटा हुआ था, और उसके नीचे रुद्राक्ष के सूखे भूरे दानों की माला दिखाई दे रही थी, जिसे कई भारतीय पवित्र और स्वास्थ्यवर्धक मानते हैं। उनकी उपस्थिति का संपूर्ण प्रभाव रुई के फूल की तरह कोमल और सौम्य था।

उन्होंने अभी हुक्का पीना शुरू ही किया था कि वज़ीर ने पर्दा हटाया और अंदर प्रवेश किया। पंडित

साहब के सम्मान में उन्होंने सजने-संवरने का कोई प्रयास नहीं किया था और दिखावटीपन का आभास देने वाले किसी भी वस्त्र या आभूषण से परहेज किया था। फिर भी, सुनहरे सूती कपड़े का उनका प्रिय दुपट्टा, महरमट नामक धारीदार हल्के रेशम के मध्यम चौड़ाई वाले पतलून पर बेहद आकर्षक लग रहा था। उन्होंने नाक, कान और कलाई में कोई आभूषण नहीं पहना था, और गले में नीलम के लटकन और चारों ओर छोटे-छोटे हीरों से जड़े एक छोटे हार के अलावा कुछ भी नहीं था। उन्होंने झुककर सलाम किया और कहा, 'पंडित जी, आप अपनी इस तुच्छ नौकरानी के प्रति कितने दयालु और उदार रहे हैं...'

पंडित नंद किशोर ने अपना दाहिना हाथ उठाकर उसे रुकने का इशारा किया और कहा, “बच्ची, ये दया और उदारता की बातें क्या हैं? मैं किसके प्रति दयालु हो रहा हूँ, सिवाय अपनी प्यारी बच्ची के? और अपने बच्चों की सेवा करना कोई दया नहीं है। तुम्हें देखकर मेरी आँखों को ठंडक का सुकून मिलता है। लेकिन बताओ, तुम्हें इस बूढ़े व्यक्ति की याद कैसे आई जो इतने लंबे समय से एकांत में रह रहा है? तुम्हारी प्यारी दादी ने मुझे बताया था कि तुम मेरे पास आने के लिए अपने पैरों को कष्ट देने को तैयार थी। लेकिन मैंने कहा, नहीं, प्यारी बहन, मैं इतना बड़ा पाप नहीं करूँगा। मैं अपनी प्यारी छोटी बच्ची से मिलने जाऊँगा।”

‘मैं ईश्वर का नाम लेती हूँ! आपने मेरी ज़बान पूरी तरह बंद कर दी है! अब अगर मैं धन्यवाद दूँगी तो आप नाराज़ होंगे; और अगर नहीं दूँगी तो मैं अपनी ही नज़रों में दोषी हो जाऊँगी,’ वज़ीर ने कहा। उसकी आँखें झुकी हुई थीं, लेकिन उसके होठों पर हल्की सी मुस्कान थी।

‘ठीक है। तो मैं आपका धन्यवाद स्वीकार करता हूँ,’ पंडित जी ने मुस्कुराते हुए कहा। ‘अब बताइए कि अचानक आपको मेरी याद कैसे आई? ... या मैं आपको बताऊँ?’

पंडित जी की सशक्त लेकिन हृदयस्पर्शी आवाज वज़ीर के कानों में मानो ईश्वर की दया के किसी देवदूत की तरह थी, जो कमजोर और पापी लोगों को सम्मान और सुरक्षा की ओर बुला रही हो। पंडित साहब के सामने वह खुद को एक नन्हे बच्चे के समान तुच्छ महसूस कर रही थी। वह घुटने मोड़कर और पैर जांघों के नीचे रखकर प्रार्थना की मुद्रा में बैठी और सिर झुकाकर धीमी आवाज में बोली, “ईश्वर की उपस्थिति में सब कुछ खुला और स्पष्ट है। मैं वही कह सकती हूँ जो ईश्वर के हृदय में पहले से ही प्रतिबिंबित है।”

पंडित जी मुस्कुराए और बोले, 'तो बस किसी भी फूल का नाम बता दीजिए, कोई भी फूल।'

‘सफेद चमेली,’ उसने अनायास ही कहा।

पंडित नंद किशोर ने अपनी आँखें बंद कीं, अपनी माला पर कुछ गिना और फिर क्षण भर में बोले, “दिल्ली के उत्तर-पश्चिम में, यहाँ से कुछ ही दूरी पर, एक नवाब द्वारा शासित एक राज्य है। शासक का नाम है...” वे एक क्षण रुके, “शम्सुद्दीन अहमद खान।”

वज़ीर का चेहरा गुलाबी पड़ गया; उसने सिर झुकाकर फिर से एक फ़ारसी कहावत का प्रयोग करते हुए कहा: “महामहिम, आपके लिए तो ऐसा है जैसे ‘जो पहले से ही स्पष्ट है, उसका वर्णन करने की कोई आवश्यकता नहीं है’, परन्तु मेरा हृदय भय से भरा हुआ है।”

डरने की कोई बात नहीं है। लेकिन आप और क्या जानना चाहते हैं? क्या आप इस सब के अंत को लेकर चिंतित हैं?

नहीं, महोदय। मुझे भविष्य में झाँकने से डर लगता है। मुझे ऐसा लगता है जैसे मैं खोया हुआ व्यक्ति हूँ, सही रास्ता खोजने के लिए भटक रहा हूँ। ईश्वर कृपा करके मेरा मार्गदर्शन करें।
'क्या वे आपको यह मार्गदर्शन देंगे कि अब आपको क्या करना चाहिए? क्या ऐसा नहीं है? क्या आप नवाब के पहल करने का इंतजार करेंगे?'
'सर, वो तो हो चुका है। लेकिन अब मैं क्या करूँ? क्या मुझे और इंतज़ार करना चाहिए, या उसके साथ कदम मिलाकर चलना चाहिए? मेरा दिमाग काम नहीं कर रहा।' ये कहते हुए उसकी आँखें अपने आप नम हो गईं।
'तो चिंता की क्या बात है, नन्ही बच्ची? जवाब तो यहीं हमारे सामने है। लेकिन चलिए, आपकी तसल्ली के लिए हम ख्वाजा साहब से सलाह ले लेते हैं।'
वज़ीर का चेहरा खुशी से खिल उठा। उसने मन ही मन पूछा, पंडित जी ने मेरे दिल की इच्छा कैसे जान ली?
'सर, आपके शब्द अत्यंत शुभ हैं। क्या मैं जाकर उनका दीवान ले आऊं?' उसने उत्सुकता से पूछा।
जी हां, करो। लेकिन ध्यान रहे, अपने हाथ साफ और शुद्ध कर लो, और इसे पवित्र पुस्तकों के लिए बने स्टैंड पर रखो, क्या तुम मेरी बात समझ रहे हो? साथ ही एक साफ कागज, साफ स्याही से भरी एक स्याही की दवात और एक नया सरकंडा भी ले आओ।
'साफ और पवित्र हाथों' का अर्थ वज़ीर से छिपा नहीं था। 'महोदय, मैं नहा चुकी हूँ और नमाज़ से पहले ज़रूरी वज़ू भी कर चुकी हूँ। मैं अभी दीवान लाती हूँ।' उसने ख्वाजा हाफ़िज़ के दीवान से पहले ही स्याही, कागज़ और अनुमान लगाने के लिए ज़रूरी सरकंडा ले लिया था। इसलिए उसे कोई समस्या नहीं थी। वह बाहर गई और थोड़ी देर में अखरोट की लकड़ी के स्टैंड पर रखे कवि के सुलेख और काले, सुनहरे और नीले रंग से सजे हुए दीवान की हस्तलिखित प्रति लेकर लौटी। उसके पीछे एक नौकरानी कागज़ और स्याही का स्टैंड लेकर आ रही थी।
वज़ीर ने पुस्तक को पुस्तक-स्टैंड के साथ पंडित नंद किशोर के सामने रख दिया, लेकिन उसे खोला नहीं। स्याही और कागज़ भी उनके पास ही, आसानी से पहुँचने योग्य जगह पर रखे थे। अब पंडित नंद किशोर ने अपना मुख पश्चिम की ओर, यानी मक्का के काबा की ओर कर लिया, जैसा कि मुसलमान नमाज़ से पहले करते हैं। वे भी निर्धारित तरीके से ही बैठे, अपने पैरों को जांघों के नीचे रखकर। उन्होंने कुछ शब्द धीरे से कहे और फिर आदेश दिया: 'थोड़ा सा गुलाब जल फिर से छिड़का जाए, और लोबान, अगरबत्ती और बडेलियम से एक बार फिर थोड़ी देर के लिए धूनी दी जाए। यद्यपि यह कमरा पहले ही सुगंधित और शुद्ध हो चुका है, फिर भी इस समय यह आवश्यक है। क्या आप समझ रहे हैं?'
गुलाब जल छिड़कने और धूपदानों से धुआं करने के दौरान पंडित नंद किशोर आंखें बंद करके चुपचाप बैठे रहे। यह सब समाप्त होने पर उन्होंने हाथ उठाकर कोई प्रार्थना की जिसे वज़ीर समझ नहीं पाए। प्रार्थना के बाद उन्होंने ज़ोर से 'आमीन' कहा और वज़ीर को भी ऐसा ही करने को कहा। उन्होंने निर्देश दिया, 'अब सभी दरवाजे और खिड़कियां बंद कर दो।' जब कमरा पूरी तरह बंद और सुरक्षित हो गया, तो उन्होंने आदेश दिया: 'अब तुम मेरे सामने बैठो, ताकि दीवान हम

दोनों के बीच रहे और मैं अपने दाहिने हाथ से किताब खोल सकूं। तुम मेरे दूसरी ओर बैठो और एकाग्र होकर कल्पना करो कि ख्वाजा साहब की पवित्र आत्मा हमारे बीच मौजूद है। समझे?'
'जी सर। लेकिन... लेकिन मुझे नहीं पता कि ध्यान कैसे केंद्रित करूं और कल्पना कैसे करूं...' वज़ीर ने घबराते हुए कहा।
'अरे, यह कुछ भी नहीं है। बस कल्पना कीजिए कि आप यहाँ हैं, उनका दीवान पढ़ रहे हैं, और अदृश्य की ज़ुबान अपनी किसी यात्रा के दौरान अनायास ही अंदर आ गई है।'
'लेकिन क्या वह सदियों पहले सर्वशक्तिमान ईश्वर के साथ नहीं मिल गया था?' वज़ीर ने भय और आश्चर्य से पूछा।
जी हाँ, बिलकुल। फिर भी वे हमारे बीच मौजूद हैं। वे अपने शब्दों के माध्यम से उपस्थित हैं। यदि आप उनकी कविता को यह कल्पना करते हुए पढ़ें कि वे शब्द अभी-अभी उनके द्वारा कहे गए हैं, और केवल आपके लिए कहे गए हैं, तो उनकी छवि आपके मन में सहजता से अंकित हो जाएगी। कवि कभी नहीं मरता। वे अपने शब्दों के माध्यम से उपस्थित रहते हैं: बस इतना ही है कि वे अपने शब्दों को एक विविध अस्तित्व में बोलते हैं। वे हमसे टहनी और शाखा में, बगीचे, पार्क और घास के मैदान में, महल और सबसे गरीब गली में, किले और तम्बू में बात करते हैं... चलो, जल्दी करें। अन्यथा, शुभ क्षण बीत जाएगा।
कांपते हुए वज़ीर पंडित नंद किशोर के सामने बैठ गई, अपनी आँखें कसकर बंद कर लीं और दीवान के पहले श्लोक पर ध्यान केंद्रित किया। पंडित जी की आवाज़ उसके चारों ओर गूंजती हुई प्रतीत हो रही थी, और ऐसा लग रहा था मानो वह कुछ दूरी से आ रही हो।
हे मेरी आँखों की रोशनी, कृपया ध्यान दें कि अदृश्य की वाणी से भविष्यवाणी करने के अनेक तरीके हैं। परन्तु सबसे पहले विधिपूर्वक शुद्ध होना और फिर प्रार्थना से पहले आवश्यक स्नान करना आवश्यक है। इसके बाद यह निर्धारित करना है कि दिन या रात का कौन सा समय है। आप देख सकते हैं कि दिन का दूसरा समय प्रारंभ होने वाला है। हम दूसरा समय प्रारंभ होने के बाद अपना कार्य शुरू करेंगे। फिर भी, प्रारंभ करने से पहले, हमें शुक्र ग्रह के बारे में पता लगाना होगा, जो आकाश की नर्तकी है और सभी कवियों की संरक्षक है। हमें यह जानना होगा कि वह इस समय राशिचक्र की किस स्थिति में है और कितने समय तक वहाँ रहेगी। अत: मैं आपको अभी बता देता हूँ कि शुक्र इस समय बुध ग्रह की स्थिति में है, जो आकाश का सचिव और लेखन स्वामी है। अत: यह समय हमारे उद्देश्य के लिए और भी उपयुक्त है। क्या आप समझ रहे हैं?
वज़ीर ने कोई जवाब नहीं दिया। अचानक, उसे लगा जैसे उसने एक लंबे, असाधारण रूप से प्रतिष्ठित, प्रभावशाली व्यक्तित्व वाले व्यक्ति को देखा—जिसके सिर पर विद्वानों द्वारा पहनी जाने वाली पगड़ी थी, उसकी आँखें सम्मोहक थीं फिर भी मानो किसी विचार में डूबी हुई थीं—वह कमरे की दीवार से होकर गुजरा और गर्व भरी चाल से उसके सामने से निकल गया। वह नहीं जान सकी कि वह कैसे अंदर आया और कैसे बाहर गया। क्या वह किसी दीवार से होकर गुजरा? क्या दीवार में कोई गहरी दरार थी? क्या वह कोई परछाई थी? वह एक पल के लिए कांप उठी और ठंड से कांप उठी, लेकिन पंडित नंद किशोर की आवाज किसी तरह जैविक जीवन की गर्माहट और उत्साह तथा अदृश्य वाणी की पवित्रता में परिवर्तित हो गई थी, और कमरे में, और

वास्तव में उसके पूरे निवास में, हवा में लहराते रेशमी धागों और लटों की तरह बह रही थी।
ठीक है, अब हम दूसरे चरण में हैं। कवियों के मृत शब्दों में जान फूंकने वाली देवी अब भी आकाश के सचिव के साथ इश्कबाज़ी कर रही हैं। हमारे पास अपने काम के लिए पर्याप्त समय है, बल्कि बहुत समय है। और मेरे सामने आज के दूसरे चरण की पंचांग है। मैं शुक्र देवी के सामने नतमस्तक होकर प्रणाम करता हूँ और ख्वाजा हाफ़िज़ का दीवान खोलता हूँ। मेरा उद्देश्य उनसे यह जानना है कि नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान के मामले में वे मुहम्मद यूसुफ, जो सादे सोने के आभूषण बनाने वाले थे, की पुत्री वज़ीर खानम के बारे में क्या आदेश देना चाहते हैं। मैं अपने सामने रखी शगुन चार्ट में किसी भी बॉक्स पर अपनी उंगली रखता हूँ। मुझे पता चलता है कि मेरी उंगली फारसी वर्णमाला के दसवें अक्षर "दाल" पर है।
‘बीबी, अपनी आँखें खोलो, कलम और कागज लो और “दाल” अक्षर लिखो।’
कांपते हुए उसने जैसे-तैसे 'दाल' अक्षर लिखा और अपनी बड़ी-बड़ी, गहरी और सुनहरी आँखों से पंडित जी को देखा, मानो वह गहरे रंग का गुड़हल हो। अब उन्होंने कुछ अंक गिने और थोड़ा सोचा, फिर आदेश दिया, 'अब 'रा' लिखो, जो वर्णमाला का बारहवाँ अक्षर है। इससे 'दार' शब्द बनता है। समझ में आया?'
'जी हां, माननीय न्यायाधीश, मैं समझ गया।'
पंडित साहब ने कुछ आंकड़े फिर गिने, थोड़ा और सोचा और कहा, 'अब लिखो; यह बारहवां अक्षर "रा" फिर से है।'
'जी हां, मैंने लिख दिया है।' उसे ऐसा महसूस हुआ जैसे कलम उसके हाथ में है; मानो वह अपना भाग्य खुद लिख रही हो।
इसी बीच पंडित नंद किशोर ने आदेश दिया, 'अब वर्णमाला का पहला अक्षर "अलिफ़" लिखो। क्या तुमने लिखा?'
जी हाँ, मैंने किया।
कुछ क्षण बाद पंडित जी ने कहा, ‘अब वर्णमाला का अंतिम से एक पहले वाला अक्षर “हा” लिखिए। इससे हमें “राह” शब्द मिलता है, और हमें “दार राह” वाक्यांश मिलता है। समझ रहे हैं?’
अब वज़ीर का हाथ इतना कांप रहा था कि उसे डर लग रहा था कि कहीं स्याही की एक बूंद कागज़ पर गिरकर उसकी शुद्धता को बिगाड़ न दे या लिखावट को खराब न कर दे। पंडित नंद किशोर ने तुरंत उसकी घबराहट और उलझन को भांप लिया और अत्यंत कोमल स्वर में उसे प्रोत्साहित करते हुए कहा, ‘बस लिखते रहो। लिखते रहो। अक्षरों के टेढ़े-मेढ़े होने से बिल्कुल मत डरो। अब ‘ऐन’ अक्षर लिखो। समझ में आया? ‘घैन’ से पहले आने वाला ‘ऐन’ अक्षर लिखो।’
जी हाँ, मैंने लिख दिया है।’ बिना किसी समझ में आए, उसे रोने का मन हुआ। वह रुक-रुक कर बोली: ‘महोदय, क्या मैं जाकर अपने लिए एक गिलास पानी ले आऊँ?’
‘पानी? पानी मंगवाओ। एक जग भरकर पानी ले लो। घबराओ मत, सब ठीक है।’
वज़ीर ने एक बार ताली बजाई। उनकी निजी नौकरानी ने दरवाज़ा खटखटाया और अंदर झाँककर आदेश जानने की उत्सुकता से देखा। वज़ीर ने पानी का इशारा किया, जिसे नौकरानी पीतल के

जग और एक प्याले में लेकर आई। वज़ीर खानम ने बिना साँस लिए पूरा बड़ा प्याला पानी पी लिया।

'कैसा महसूस कर रही हो? डरने की कोई बात नहीं है, मेरी प्यारी बेटी। ठीक है, अब 'sin' के बाद आने वाला अक्षर 'shin' लिखो।'

'मैंने इसे लिख दिया है, महोदय।'

पंडित जी कुछ पल रुके, फिर बोले, 'अब "क़ाफ़" लिखो। सुना? अब "क़ाफ़" लिखो, जो "काफ़" से पहले आता है।' उनकी आवाज़ में हल्की सी मुस्कान थी। 'तो अब पूरा वाक्य "दार राह-ए इश्क़" हो जाता है, जिसका अर्थ है, जैसा कि आप जानते ही होंगे, "प्रेम के मार्ग में"। समझे?'

जी हां, माननीय न्यायाधीश महोदय। मैं समझ गया।

इस प्रकार, एक-एक अक्षर जोड़ते हुए, पंडित नंद किशोर ने लगभग आधे घंटे में कविता की निम्नलिखित पंक्ति की रचना की:

Dar rah-e ishq farq-e-ghani o faqir nist (प्रेम के मार्ग में धनी और भिखारी में कोई भेद नहीं होता)

ईश्वर की कृपा से, हमने कितनी सुंदर कविता लिखी! बीबी, बधाई हो!

'पर मैं इसका असली अर्थ नहीं समझ पा रहा।' वज़ीर का माथा पसीने से भीगा हुआ था। 'हे ईश्वर, यह मुझे क्या संदेश देना चाहती है?'

"मेरी प्यारी बेटी, तुम कितनी भोली और सरल हो! यह तो बस एक पंक्ति है, दो पंक्तियों के श्लोक की पहली पंक्ति, मेरी प्रिय। अदृश्य की उपस्थिति, उसकी वाणी, अगली पंक्ति की पुष्टि करे, तभी हमें ज्ञान प्राप्त होगा। अभी तो शिराज के एक अन्य शेख की एक पंक्ति है: "जीवन की धारा का जल अंधकार में गहराई में है।" फिर भी, जो पंक्ति हमने बनाई है, वह निश्चित रूप से उपयुक्त प्रतीत होती है। तो अब हम दूसरी पंक्ति की खोज करें। कलम और कागज फिर से उठाओ और जैसा मैं कहूँ वैसा लिखो।"

लगभग आधे घंटे या उससे कुछ अधिक समय की मेहनत के बाद, वे कविता की निम्नलिखित पंक्ति पर पहुँचे:

Ay badshah-e husn sukhan ba gada bigo (O sovereign of beauty, speak to the beggar.)

वज़ीर का दिल ज़ोर-ज़ोर से धड़कने लगा, मानो उसे टैकीकार्डिया हो गया हो। ऐसा लग रहा था मानो दिल कई गज ऊपर-नीचे हो रहा हो। वह बेचैनी से उठकर पंडित साहब के चरणों में सिर झुकाना चाहती थी। वह ऐसा करने ही वाली थी कि पंडित जी बोले: 'केवल अल्लाह ही हर दोष से मुक्त है! हमें अपने प्रश्न का उत्तर मिल गया है। लेकिन पहले यह सुनिश्चित कर लें कि यह आयत सचमुच अदृश्य की ज़बान से निकली है।' यह कहकर उन्होंने दीवान खोला, उचित पृष्ठ पर गए और प्रसन्नता से हँसे। 'जी हाँ! यह ग़ज़ल दीवान में ही है। अल्लाह ने, अल्लाह ने, इस आयत का पहला भाग इस प्रकार लिखा है:'

हे सत्य और धर्म के दूत, हमें हमारे चलते-फिरते सरू के पेड़ का समाचार दो, गीत गाने वाली

बुलबुल को बताओ, कि गुलाब के साथ उसका क्या रिश्ता है।
उसने आनंद और प्रसन्नता से अपनी जांघ थपथपाई। 'शिराज के ख्वाजा ने तुम्हें सौंदर्य का सम्राट घोषित किया है, और उसे भिखारी बताया है। यह केवल इतना ही नहीं है कि तुम उससे बात करो। बल्कि यह है कि तुम उससे वैसे ही बात करो जैसे संसार के राजा दान मांगने आने वाले भक्तों से करते हैं। तुम चाहने वाले नहीं, बल्कि चाहे जाने वाले हो। बधाई हो!'
उन्होंने प्रार्थना में हाथ उठाए। प्रार्थना समाप्त होने पर उन्होंने प्रेमपूर्वक वज़ीर के सिर पर हाथ फेरा और जाने की अनुमति मांगी। वज़ीर ने तुरंत उन्हें रुपयों से भरा एक थैला, एक बड़ा रेशमी रुमाल, जौनपुर के दोहरी चमेली के इत्र की एक छोटी बोतल और उनकी पगड़ी के लिए बुलबुल चश्म सूती कपड़े का एक थान भेंट किया। उन्होंने प्रार्थना की कि वे उनकी इस तुच्छ भेंट को स्वीकार कर लें। पंडित नंद किशोर ने कुछ भी स्वीकार करने से इनकार कर दिया।

जब अल्लाह तआला तुम्हारी इच्छा पूरी कर दे और तुम्हें तुम्हारा लक्ष्य हासिल करा दे, तो मुझे अपनी दुआओं में याद करना। मैं अपने बेटों या बेटियों से कुछ भी लेना हराम समझता हूँ। समझे?
'मैं ईश्वर का नाम लेती हूँ! ईश्वर न करे, मैं कोई भी ऐसी आपत्तिजनक वस्तु जैसे कि सेवाओं के बदले भुगतान नहीं कर रही थी। मैं होश में भी न होती तो भी ऐसा अनादर नहीं करती। मैं तो बस आपकी उपस्थिति के चरणों को स्पर्श करने के लिए एक तुच्छ भेंट चढ़ा रही थी। लेकिन शायद मैं कभी इतनी भाग्यशाली न हो पाऊँ।' उसकी आवाज आँसुओं से भीगी हुई थी।
'अरे! देखो तो सही! वो परेशान है! मेरी बच्ची, ऐसी छोटी-मोटी बातों पर हिम्मत नहीं हारनी चाहिए। ठीक है, मैं ये इत्र की बोतल ले आता हूँ।' इतना कहकर उसने बोतल उठाई, लकड़ी का ढक्कन खोला और इत्र की खुशबू सूंघी। उसे खुशबू अच्छी लगी, क्योंकि वो मुस्कुराया, अपनी दुपट्टे पर कुछ बूँदें मलीं और बोला, 'लो, अब खुश हो?' जाने से पहले उसने चुपचाप नौकरों के लिए हॉल में बने आले में पाँच शाह आलमी के चाँदी के रुपये रख दिए और ये कहते हुए, 'समय आने पर मुझे याद रखना', वो बिना किसी औपचारिक विदाई के पलक झपकते ही बाहर निकल गया। वज़ीर को लगा जैसे घर अचानक शांत हो गया हो, मानो उसके घर से कोई बहुत कीमती और महत्वपूर्ण वस्तु ले जाई गई हो।

पंडित नंद किशोर के जाने के बाद, वज़ीर लंबे समय तक चिंतन में डूबी रहीं, उनकी बातचीत, उनके स्नेहपूर्ण व्यवहार और उनके तेजस्वी चेहरे को याद करने की कोशिश करती रहीं। उन्हें आनंद की लहर दौड़ गई, नवज्ञान का रोमांच महसूस हुआ, और इससे उनके शरीर को जीवन की एक अनूठी गर्माहट मिली, और उनकी आत्मा को ग्रीष्म ऋतु की पहली वर्षा की तरह नई ताजगी प्राप्त हुई।

उसका मन सामान्य होने में काफी समय लगा और जब उसकी नौकरानी घर के कामकाज के बारे में पूछने आई, तो उसे याद आया कि पंडित जी ने उसे नवाब को पत्र लिखने की पहल करने की सलाह तो दी थी, लेकिन वह उनसे पत्र के शब्दों और शैली के बारे में पूछना भूल गई थी। वह अपनी मूर्खता पर बहुत क्रोधित थी और अब यह महसूस करके कि उसने यह सवाल नहीं पूछा, वह इतनी कमजोर साबित हो रही थी कि इस मामले में अपना निर्णय स्वयं नहीं ले पा रही थी। वास्तव में, इसमें कुछ भी मुश्किल नहीं है। मैं अभी कलम उठाऊंगी और अपना पत्र लिखूंगी। लेकिन पूरा दिन बीत गया। वह अभिवादन भी तय नहीं कर पा रही थी, पत्र की विषयवस्तु तो दूर की बात थी। क्या लिखूँ? क्या कहूँ कि तुम्हें बहुत याद करती हूँ? ओह, कितनी मूर्खता है, उसने शर्म से सोचा, कागज़ पर ये शब्द कितने सस्ते और कितने खोखले लगेंगे। क्या मैं कभी ऐसा लिख भी पाऊँगी? और अगर लिख भी दिया, तो वो मेरे बारे में क्या सोचेगा? तो फिर? क्या कहूँ, हम कब मिलेंगे? हाँ, यह अनुचित नहीं लगता; लेकिन मैं कौन से शब्द इस्तेमाल करूँ? ऐसा नहीं लगना चाहिए कि यह नेक महिला बिल्कुल अधीर है। दादी माँ ऐसे मौकों पर क्या मुहावरा इस्तेमाल करती थीं? हाँ... यह छोटी सी बदचलन लड़की इसे अपने हाथ में लिए घूमती है! इस विचार मात्र से ही उसका चेहरा लाल हो गया और वह पूरी तरह से गर्म हो गई। शर्म की एक लहर उसके शरीर में दौड़ गई। मैं और नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान... और मैं, परदे से मुक्त, और आँखों में एक निमंत्रण, एक मोहकता? मैं अल्लाह से क्षमा माँगती हूँ, मैं एक अच्छे परिवार की लड़की हूँ। या मैं शैतान की बेटी हूँ? इसे हथेली पर लेकर घूमना... हे भगवान, यह तो इशारा करने या बोलने से भी बदतर है।

दुबली-पतली, छरहरी, हिरण के बच्चे जैसी, औसत से थोड़ी ऊंची, मोर जैसी गर्वित गर्दन, सुडौल और भारी-भरकम लेकिन बड़ी नहीं, पतली कमर, बड़ी-बड़ी गहरी भूरी आंखें जिनमें काजल की हल्की सी झलक थी, चेहरे पर एक अलग ही मिठास और मिठास झलक रही थी, हर हावभाव और हरकत किसी उच्च कुल की बेगम जैसी थी, और फिर भी, हर एक क्रिया—उसका पूरा शरीर एक आनंदित युवती की भाषा बोल रहा था—हर शब्द आवेशित था... ऐसी दिखने और बोलने वाली कौन है? नवाब शम्सुद्दीन अहमद ने आश्चर्य से सोचा। उन्हें नींद नहीं आ रही थी, हालांकि उस रात वे सामान्य से जल्दी सो गए थे। उनके शरीर को धीरे से दबाने और थपथपाने, उनके घने बालों में कोमल उंगलियां फेरने और कनपटी सहलाने का काम कर रही लड़कियां थक रही थीं। लेकिन नवाब की आंखों में नींद नहीं थी।

वज़ीर खानम अचानक चौंककर उठीं, उनका दिमाग जैसे किसी उन्माद में था। मैंने अभी क्या देखा या कहा? मैं कहाँ हूँ? मैं कहाँ थी? मुझे नहीं पता, और मुझे नवाब शम्सुद्दीन अहमद के मेरे बारे में विचारों और उनकी कल्पनाओं में मैं कैसी दिखती हूँ, इस बारे में क्यों सोचना चाहिए? मुझे इन सब बातों से क्या लेना-देना है?

लेकिन ये लोग कौन हैं जो शराब के नशे में चूर हैं? और किसने कहा, आज जिस तरह तुम पीठ फेरे हो, मुझे तुम्हारा चेहरा देखने दो? गर्दन और कॉलर पसीने से भीगे हुए हैं, ऊपरी शरीर पर लिपटा कपड़ा लगभग टपक रहा है, सांसें अनियमित और तेज़ हैं, शरीर ऐसा लग रहा है जैसे चींटियाँ उस पर दौड़ रही हों और काट रही हों। मैं अपने साथ क्या कर रहा हूँ? अगर मैं ऐसे ही चलता रहा तो जल्द ही पागल हो जाऊँगा। पागल नहीं तो विक्षिप्त ज़रूर हो जाऊँगा। मैंने सुना है कि विक्षिप्त किसी बात पर अड़ जाते हैं और उसी के बारे में लगातार बोलते रहते हैं। नवाब शम्सुद्दीन अहमद को मुझसे जुड़ने की प्रेरणा कहाँ से मिली, उनकी नज़र मुझ पर क्यों पड़ी जो अपनी ही परेशानियों में डूबा हुआ हूँ? वे यहाँ क्यों आए? उन्होंने मेरी तन्हाई क्यों भंग की?

अचानक उसके होंठों और आँखों में मुस्कान छा गई, मानो शाम के समय बादलों से घिरे लंबे, काले क्षितिज को अचानक एक तेज रोशनी ने भेद दिया हो, जो पूरे क्षेत्र में फैल गई हो; प्रकाश, या उसकी आभा, हवा में व्याप्त हो गई, पौधों और पेड़ों के झुके हुए पत्तों के नीचे से प्रकाश की अजीब किरणें फूट रही थीं; शाम के आगमन से भयभीत पक्षी और जानवर फिर से सक्रिय और फुर्तीले हो गए। उसे ऐसा लगा जैसे शम्सुद्दीन अहमद अचानक कहीं से प्रकट हुए हों और उन्हें अपनी बाहों में भर लिया हो और वह अपना सिर उनकी चौड़ी छाती पर टिकाकर, प्रेम भरे स्वर में उनसे शिकायत कर रही हों।

कुछ क्षणों के लिए मुझसे मिलने आकर, तुमने अकेले रहने के मेरे शौक को भंग कर दिया।

ओह! हे भगवान! क्या स्वर्गिक मीर हसन साहब ने इसे सिर्फ मेरे लिए और इसी अवसर के लिए रचा था, या ऐसी बातें दूसरों के साथ भी होती हैं? कितना नाजुक पल था और कितना अद्भुत संयोग था कि मुझे इस उत्कृष्ट कविता की याद आ गई! अब मुझे और कुछ करने की ज़रूरत नहीं है: बस इस कविता को कागज़ पर लिखकर उन्हें भेज देना है, और मेरा काम हो जाएगा। नहीं, क्या मुझे सिर्फ कविता ही भेजनी चाहिए? यह असभ्य लगेगा, जैसे मैं उन पर कोई पत्थर लुढ़का रहा हूँ। लेकिन कहने के लिए बचा ही क्या है? फिर भी, मुझे कुछ तो लिखना ही होगा, अभिवादन, शुभकामनाएँ। क्या पत्र का कोई विषय नहीं होना चाहिए? क्या मुझे उस व्यक्ति को यह नहीं बताना चाहिए कि मैं उन्हें पत्र क्यों लिख रहा हूँ?

नहीं, मैं अब और कुछ नहीं कहूँगा, बस कविता सुनाऊँगा। मेरे ईश्वर को मेरा इरादा पता है, अब उन्हें ही इसका अंदाज़ा लगाने दीजिए। नहीं, रुकिए, मेरे मन में एक विचार आया है। यह छंद तो बस दो पंक्तियों का है। शायद मैं इसमें तीन और पंक्तियाँ जोड़ दूँ, जिससे एक पाँच पंक्तियों का छंद बन जाए, कविता में पूर्णता का भाव आ जाए, और शायद मेरा इरादा भी स्पष्ट हो जाए?

उसने एक क्षणिक रूप से इस विचार को सोचा था, जब उसने अनायास ही एक पंक्ति की रचना की, जो पूरी तरह से छंदबद्ध थी और अठारहवीं शताब्दी के उस्ताद की मूल कविता के विषय को थोड़ा आगे ले जाती थी:

आपने मेरे घर की हालत बदल दी
नहीं, यह ठीक नहीं है। मेरे घर की स्थिति बदलना: यह कुछ हद तक अनुचित है, बल्कि निरर्थक है। इसके बजाय यह क्यों न कहें:
तुमने मेरे दिल की हालत बदल दी
नहीं, नहीं, यह तो बहुत ही नीरस है। ओह, क्यों नहीं:
तुमने मेरे दिल की सारी स्थिति ही बदल दी।

यह बिल्कुल सही है, उसने मन ही मन कहा। अब आइए इस विषय पर विस्तार से चर्चा करें। उसका मूड अब इतना खुशनुमा था कि खुशी के मारे उसने लगभग पलक झपकते ही अगली दो पंक्तियाँ लिख डालीं:
तुमने मेरे आत्म-संयम के आवरण को चूर-चूर कर दिया; तुमने मेरे धैर्य के संकरे मार्ग को रौंद डाला; तुमने मेरे हृदय की स्थिति को ही बदल दिया; कुछ क्षणों के लिए मुझसे मिलने आकर, तुमने अकेले रहने की मेरी इच्छा को भंग कर दिया।
वाह, ये तो कमाल की बात है! मैंने पाँच पंक्तियों का एक सुंदर छंद लिखा है, मेरी सभी पंक्तियाँ अर्थपूर्ण हैं और पुराने कवि की मूल दो पंक्तियों से अच्छी तरह जुड़ी हुई हैं। अब क्या मुझे इसे खुद नोटपैड पर लिखना चाहिए, या किसी सुलेखक की मदद लेनी चाहिए? नहीं, किसी और से लिखवाने की कोई ज़रूरत नहीं है। मैं उन्हें किसी पेशेवर सुलेखक की कला का कोई उत्कृष्ट नमूना जैसा औपचारिक उपहार नहीं भेज रहा हूँ; मैं कलम की नोक पर वो बात उतार रहा हूँ जो मेरे दिल में छिपी है। मुझे ही लिखना होगा; चाहे अच्छा हो या बुरा, शब्दों में मेरा ही प्रतिबिंब होना चाहिए।
निर्णय लेते ही उसने तुरंत जामी मस्जिद के पूर्वी द्वार पर स्थित मीना बाज़ार से नई कलमें मंगवाईं। उसने प्रत्येक कलम के एक सिरे को चाकू से सावधानीपूर्वक छीलकर तीन नई कलमें बनाईं: पतली, मध्यम और मोटी। फिर उसने उन्हें पास की मस्जिद के मौलवी साहब के पास दो रुपये भेंट के साथ भेजा और उनसे निवेदन किया कि वे कलमों की नोक को चिकना और दो भागों में बाँट दें तथा उन्हें उचित कोण पर काटें। मौलवी साहब ने कृपापूर्वक ये कार्य शीघ्रता से किए, प्रत्येक कलम को अपनी संतुष्टि के अनुसार परखा और शुभकामनाओं के साथ उन्हें वापस भेज दिया तथा आश्वासन दिया कि कलमों की नोक लंबे समय तक मज़बूत बनी रहेगी।
यह सब काम खत्म होते-होते दोपहर हो चुकी थी। वज़ीर थक चुकी थी और कुछ अस्वस्थ भी महसूस कर रही थी। उसने मन ही मन सोचा कि रात में लिखने का अभ्यास कर ले और कल पत्र भेज दे। उसने नारंगी-केसरिया रंग का नोटपैड और एक छोटी सी जटा तैयार कर ली थी। अब बस पत्र लिखना और भेजना बाकी था।
रात भर में, संतुष्ट होने से पहले उन्होंने कई पन्ने इस्तेमाल कर लिए। उन्होंने मध्यम कलम से, अपनी सर्वोत्तम संभव शैली में, मानक नस्तालीक़ लिपि में कविता लिखी, जो औपचारिक संचार के लिए पसंदीदा शैली है। हालाँकि, इसके शीर्ष पर, उन्होंने सर्वशक्तिमान के निन्यानवे नामों में से एक नाम लिखने के लिए एक प्राचीन अरबी सचिवीय लिपि का प्रयोग किया: हू अल वदूद

('वह सबसे प्रेममय है')। विदाई में, उन्होंने पतली कलम से लिखा:
वज़ीर खानम द्वारा लिखित और प्रस्तुत।
वह जवाब की प्रतीक्षा कर रही है। ईश्वर उसके पापों को क्षमा करे।
उसने कागज को बेलन की तरह लपेटकर मोम के कपड़े में लपेट दिया। फिर उसने लिपटे हुए पत्र को एक हल्की सुगंध वाली थैली में रखा, उसकी डोरी बांधी और उसे सील कर दिया। काम खत्म करने में उसे काफी रात हो गई, लेकिन उसे देर तक काम करना पसंद था क्योंकि तब उसके पास रात और सुबह का समय अपने फैसले और कार्रवाई पर विचार करने और समीक्षा करने के लिए होता था। अभी तक तो सिर्फ शब्द ही थे, लेकिन एक बार पत्र उसके घर से निकल गया तो मानो धनुष से छूटा तीर था, जिसे कभी वापस नहीं बुलाया जा सकता था। इसलिए मुझे रात और सुबह का कुछ और समय चाहिए यह तय करने के लिए कि पत्र भेजना है या नहीं।
भोर से पहले ही पक्षियों की चहचाहट से उसकी नींद खुल गई। उठते ही उसके मन में ख्याल आया कि पत्र तो भेजना ही है, लेकिन साथ में कोई छोटा सा उपहार भी भेजना है। पर क्या उपहार? अभी तो मैं उससे इतनी घुल-मिल नहीं पाई हूँ कि उसे अपने हाथों से कढ़ाई किया हुआ रूमाल या इत्र की शीशी जैसी कोई निजी चीज़ भेज सकूँ। जहाँ तक कीमती सांसारिक वस्तुओं की बात है, नवाब को किसी चीज़ की कमी नहीं है, दुर्लभ से दुर्लभ वस्तुएँ भी उसके घरों में बहुतायत में होंगी। दुनिया में ऐसी कोई चीज़ नहीं होगी जो मैं दे सकूँ और जो उसके पास पहले से न हो। दरअसल, मेरा सबसे अच्छा उपहार वह होगा जो भले ही महंगा न हो, लेकिन दुनिया के इस हिस्से में आम न हो।
उसे याद आया कि कुछ सप्ताह पहले पूर्वोत्तर के पहाड़ी राज्य गढ़वाल के एक व्यापारी ने उसे चमड़े की बोतल में भरा पहाड़ी शहद बेचा था। शहद कोई इतनी खास चीज नहीं है कि उसे उपहार में भेजा जाए, लेकिन इस शहद की खासियत यह थी कि इसका छत्ता लीची के पेड़ पर था और सारा शहद लीची के फूलों से इकट्ठा किया गया था। इसलिए शहद में लीची की हल्की सी खुशबू थी। यह वाकई दुर्लभ बात होगी, क्योंकि दिल्ली के आसपास कहीं भी लीची नहीं उगती थी। उसने अलमारी से बोतल निकलवाई, उसे साफ किया और धूल झाड़ी। उसने लकड़ी का ढक्कन खोला। लीची की खुशबू वैसी ही थी और शहद का रंग भी नहीं बदला था: हल्का पीला जो लगभग सफेद और बारीक दानेदार था, जैसे गाय के मक्खन से बना शुद्ध घी।
बोतल को ऊपर से सील कर दिया गया, मोम के कागज में लपेटा गया और फिर से सील कर दिया गया। इतना सब करने के बाद, उसने अब पूरी दृढ़ता से निश्चय कर लिया कि वह पत्र और उपहार भेजने के बाद ही विश्राम करेगी। उसने तुरंत अपने पड़ोस के पहरेदार के माध्यम से एक दूत को बुलाया और उसे व्यक्तिगत रूप से निर्देश दिया: 'ध्यान रखना कि नवाब साहब के दो महल हैं: एक बल्लीमारान में है, जो यहाँ से बहुत दूर नहीं है, और दूसरा दरियागंज में है। तुम्हें पहले यह पता लगाना होगा कि नवाब साहब किस हवेली में विराजमान हैं। वहीं जाओ और कहीं और मत जाओ, और सलाम के सभी नियमों का पालन करते हुए उनसे मिलो; फिर अपना सिर झुकाओ, अपना दाहिना हाथ अपने हृदय के ठीक ऊपर रखो। तभी इन वस्तुओं को उनके चरणों में अर्पित करो।'

‘मैं समझ गया, बीबी साहब। मैं पूरी तरह समझ गया। मैं आपके निर्देशों का अक्षरशः पालन करूंगा... और क्या मुझे उत्तर की प्रतीक्षा करनी चाहिए?’ उन्होंने आदरपूर्वक सलाम किया और प्रतीक्षा करने लगे।

नहीं। बस माननीय महोदय को सूचित कर दीजिए कि वज़ीर खानम साहब उन्हें सलाम और ये दो पैकेट भेज रहे हैं। कह दीजिए कि उत्तर देने की आवश्यकता नहीं है।

जी हाँ, आपके निर्देश बहुत अच्छे और शुभ हैं। ईश्वर की कृपा से सब कुछ वैसा ही होगा जैसा आपने निर्देशित किया है।

‘ठीक है, अब जाओ। जल्दी वापस आना। मैं तुम्हारे लौटने का इंतजार करूंगा और अगर तुमने अपना कर्तव्य अच्छे से निभाया तो तुम्हें भरपूर इनाम दूंगा।’

दूत ने फिर सलाम किया और चला गया। बाहरी तौर पर शांत और गंभीर दिखने के बावजूद, उसका हृदय उथल-पुथल से भरा था। वह बीमार और कमजोर महसूस कर रही थी। वह अपने मन ही मन जानती थी कि इस कदम का परिणाम उसके भविष्य के जीवन का फैसला तय करेगा। अगर मुझे मनचाहा जवाब नहीं मिला, तो मुझे अपने जीवन का खेल फिर से शुरू करना होगा। मेरा यह कदम मेरे दिल के मामलों और मेरे आने वाले दिनों-रातों से जुड़ा है। क्या मैंने सही किया या गलत? क्या मेरे पास कोई और विकल्प था? इंतजार करना मेरी हैसियत के विरुद्ध है, लेकिन क्या मेरे लिए बोलना सही था? क्या नवाब ने ही बातचीत शुरू नहीं की थी? मैंने बस उसे अपना जवाब दिया। तो फिर इसमें क्या गलत था?

और अगर वहाँ कुछ कुकर्म हुआ भी तो उसे नवाब यूसुफ अली खान की सलाह, पंडित साहब के प्रोत्साहन और सबसे बढ़कर ख्वाजा साहब के सकारात्मक संकेत का समर्थन प्राप्त था। क्या इन बातों का कोई महत्व नहीं था?

अचानक, मार्स्टन ब्लेक के लिए उसका दिल दुख से भर गया। काश, वह इतनी जल्दी न गया होता... और मैं कितनी खुशी से, कितनी बेफिक्री से उसके साथ चली गई होती! मुझे अपने माता-पिता की नाराज़गी का कोई डर नहीं था; न ही मुझे धर्म के नियमों और उपदेशों की परवाह थी। न ही मुझे अपने साथियों या पड़ोसियों की संभावित आलोचना या अस्वीकृति की कोई चिंता थी। लेकिन उस समय मैं बहुत कम समझती थी और मेरे सपने बहुत ऊँचे थे। मैं उफनती पवित्र यमुना नदी की तरह थी, जो ऊपर की ओर बह रही थी और अपना रास्ता खुद बना रही थी। कोई बच्चे नहीं थे, किसी बात की चिंता या परवाह नहीं थी। लेकिन अब मुझे दो नन्हे-मुन्नों का पालन-पोषण करना है, चाहे जैसे भी हो।

उसके दिमाग में उमड़ रहे विचारों ने उसे चक्कर और बेचैनी का एहसास कराया। यह अकेला घर —एक अभिशाप जैसा—ऐसा लगता है मानो मुझे काट खाएगा।

उसने पालकी मंगवाई और सीधे मंझली बेगम के घर चली गई। उसने हाल की सारी घटनाएँ विस्तार से बताईं और कहा कि जब तक शम्सुद्दीन अहमद खान की ओर से कोई जवाब नहीं आता, वह मंझली के घर में अतिथि बनकर रहेगी।

उस समय नवाब दरियागंज स्थित अपनी हवेली में थे। जैसे ही उन्हें सिरकी वालन के वज़ीर खानम के एक दूत के आने की सूचना मिली, जो उनसे मिलने की विनम्र विनती लेकर आया था,

उन्होंने तुरंत उसे उस कमरे में बुलाया जहाँ वे दोपहर में मित्रों से मिलते थे। हालाँकि वह कमरा केवल उनके करीबी लोगों के लिए था, शम्सुद्दीन अहमद वज़ीर से मिलने के लिए इतने उत्सुक और भावुक थे कि वे दूत से तुरंत मिलने के लिए बेचैन थे। दूत नवाब के राजदंड वाहक के पीछे आदरपूर्वक चलते हुए, दरवाजे पर अपने जूते उतारे और दहलीज पार करते ही सात बार झुककर उन्हें सलाम किया। फिर उन्होंने आगे बढ़ने की अनुमति का इंतजार किया। राजदंड वाहक ने झुककर सलाम किया और कहा: 'वज़ीर खानम साहब का दूत आदरणीय महोदय की सेवा में उपस्थित है।'

नवाब ने दूत को आगे बढ़ने का इशारा किया। पास आकर दूत ने एक बार फिर सलाम किया और कहा, "अल्लाह की रहमत हमेशा बुलंद रहे। वज़ीर खानम साहब ने अल्लाह के इबादत में भेंट चढ़ाने का हुक्म दिया है। अगर इजाज़त हो तो क्या मैं उसे पेश कर सकता हूँ?"

नवाब के चेहरे पर अनायास ही मुस्कान आ गई, लेकिन उन्होंने समय रहते खुद को रोक लिया और गंभीरता से कहा, 'बहुत बढ़िया। बेगम साहब कैसी हैं?'

'माननीय न्यायाधीश महोदय, वह बिल्कुल स्वस्थ हैं।'

नवाब की आँखों में छिपे सूक्ष्म संकेत को समझते हुए, राजदंड धारण करने वाला आगे आया। पास ही हाथीदांत से बनी एक छोटी मेज़ थी। राजदंड धारण करने वाले ने उस पर रखी कुछ चीज़ें हटाईं और दूत को इशारा किया कि वह नवाब को भेंट करने के लिए जो कुछ भी लाना हो, उसे मेज़ पर रख दे। दूत ने अपनी कमरबंद ढीली की और उसके नीचे से पत्र वाली थैली और शहद की बोतल वाला थैला निकाला और दोनों वस्तुएँ मेज़ पर रख दीं। फिर वह सलाम करते हुए पीछे की ओर दरवाजे की तरफ चला गया। राजदंड धारण करने वाले ने नवाब के अस्पष्ट इशारे को फिर से सही ढंग से समझा और कक्ष से बाहर जाकर कुछ ही क्षणों में नवाब के सहायक के साथ लौट आया। सहायक भी नवाब के छिपे हुए संकेत को समझने में उतना ही निपुण था और उसने तुरंत दूत को इनाम के तौर पर पाँच रुपये दिए।

नवाब ने फिर कहा, 'ठीक है। मुझे खुशी है, भाई। बेगम साहब को मेरा प्रणाम और अभिवादन पहुंचा दीजिए।'

'महामहिम, आपका भाग्य सदा चमकता रहे और आपका सितारा बुलंद रहे।' दूत ने फिर सात सलाम किए और कमरे से पीछे की ओर चलते हुए बाहर निकल गया। प्रबंधक और राजदंडवाहक भी चले गए, क्योंकि उन्हें लगा कि अब उनके लिए कुछ और करने को नहीं है। नवाब का धैर्य टूट रहा था और वे अकेले रहना चाहते थे ताकि वे अपने उपहार देख सकें। वे जानते थे कि छोटी थैली में कुछ लिखा हुआ होगा। थैली में कोई उपहार जरूर होगा, लेकिन फिलहाल उन्हें उसमें कोई दिलचस्पी नहीं थी। जब प्रबंधक बाहर गया, तो उसने अपनी आँखों के कोने से देखा कि नवाब का हाथ थैली उठाने के लिए बढ़ रहा है।

हाथ इतने सलीके से, इतने सुंदर ढंग से बने हुए हैं, मानो मोतियों की माला हो। और कविता कितनी सूक्ष्म, कितनी अर्थपूर्ण थी! शम्सुद्दीन अहमद तुरंत समझ गए कि आखिरी दो पंक्तियाँ मीर हसन की थीं, और उससे पहले की तीन पंक्तियाँ निश्चित रूप से वज़ीर ने स्वयं लिखी थीं। अगर वह मुझसे पहले यहाँ होतीं, तो मैं उनके हाथों को चूमता... और सिर्फ हाथों को ही क्यों, मैं

और भी बहुत कुछ चूमता! मैं हर शब्द की एक नई तरह से प्रशंसा करता।
और ये शहद कितना शुद्ध दिखता है... ओह, इसमें लीची की हल्की लेकिन स्पष्ट सुगंध है! लीची तो हमारे यहाँ उगती नहीं है, तो इसका पेड़ कहाँ मिला होगा और मधुमक्खियों ने पेड़ के फूलों से शहद कैसे इकट्ठा किया होगा? भाई, वाह, ऐसे अच्छे स्वाद और उत्तम चयन की तारीफ किए बिना रहा नहीं जा सकता। अब मैं कैसे जवाब दूं? लेकिन सबसे बड़ी बात ये थी कि उसकी आशा पूरी हो गई: छोटी बेगम ने अगला कदम उठा लिया था। यानी, उस तरफ भी कुछ झुकाव, कुछ प्रवृत्ति थी। और निश्चित रूप से, ये धन, शान-शौकत और विलासितापूर्ण जीवन, या दुनिया में शक्ति और सम्मान पाने की प्रवृत्ति नहीं थी; या अगर ऐसा कोई भाव था भी, तो मामूली ही था। अगर उसे ये सब चाहिए होता, तो वो दूसरे तरीके अपना लेती। लगता है उसकी अपनी भावनाओं में उथल-पुथल मची हुई है, जो मुझसे संपर्क करने की कोशिश कर रही है।
तो मुझे जवाब में क्या कहना चाहिए? क्या मुझे कहना चाहिए: कृपया आइए, ओह, कृपया मेरी बाहों में आइए? ओह, कितना मूर्खतापूर्ण और कितना भद्दा! फिर क्या मुझे वहाँ जाकर कहना चाहिए, आइए, मैं आपको अपनी बाहों में घर ले चलता हूँ? नहीं, नहीं, बिलकुल नहीं। ऐसे शब्द तो पेशेवर लड़कियों के साथ भी इस्तेमाल नहीं किए जाने चाहिए। मेरी समस्या छोटी बेगम का दिल जीतना है, और यह सबसे महत्वपूर्ण है कि मैं अपनी उत्सुकता और इच्छा को सर्वोत्तम संभव तरीके से व्यक्त करूँ, और उनका दिल इस तरह जीतूँ कि उसमें उनकी स्वयं की सहमति का संकेत हो।
उन्हें एक कविता की पंक्ति याद आई: 'केवल एक ही तेजस्वी उपस्थिति है, और वह आप हैं।' उन्हें उस व्यक्ति की याद आई जो एक-दो दिन पहले उनकी खिड़की के पास से गुजर रहा था और मीर असर की ग़ज़ल गा रहा था; यही वह पंक्ति थी जो उसके होठों पर थी:
वह मेरी जिंदगी की स्थिति पर बिल्कुल ध्यान नहीं देती; वह कभी मेरे रास्ते से भी नहीं गुजरती।
उन्हें ऐसा लगता था मानो ग़ज़ल, या गायक, वही कह रहे हों जो उनका दिल हमेशा कहता रहता था। और अब उन्होंने अपनी लाइब्रेरी से असर का दीवान मंगवाया। यह बहुत छोटा दीवान था; उन्हें ग़ज़ल आसानी से मिल गई।
बस एक ही तेजस्वी उपस्थिति है, और वो तुम हो; कितना दुख की बात है, मुझे कुछ पता नहीं था, कुछ भी अंदाजा नहीं था। उसे मेरी हालत की कोई परवाह नहीं; वो कभी मेरे रास्ते से भी नहीं गुजरती। क्या मुझे अपना दिल दे देना चाहिए, न ही अपने जिगर को चोट पहुँचाना चाहिए? खैर, मेरे पास उस तरह का दिल नहीं है, उस तरह का जिगर नहीं है। मुझे चले जाना चाहिए, अपने दिल के दर्द को पीछे छोड़कर, लेकिन कहाँ? मेरे लिए यहाँ से निकलने का कोई रास्ता नहीं है। तुम्हारे दुख ने उसे किसी और में बदल दिया: जब मैंने उसे आज देखा, तो वो पहले वाला असर नहीं था।
केवल ईश्वर ही समस्त दोषों से मुक्त हैं! यह कविता कितनी सुंदर और मनमोहक है! वास्तव में, मुझे और कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है; केवल ये पंक्तियाँ ही पर्याप्त हैं। गुरु के चमत्कारिक शब्दों से श्रेष्ठ भाषा क्या हो सकती है, और इन शब्दों में निहित संदेश से अधिक सूक्ष्म संदेश क्या हो सकता है? मेरी सारी इच्छाएँ यहाँ व्यक्त हैं, और वह भी बिना अपनी गरिमा और आत्मसंयम

का उल्लंघन किए। शम्सुद्दीन अहमद अपने पुस्तकालय में गए और उन्होंने नारंगी-पीले रंग के कागज पर गहरे काले रंग की स्याही से पूरी छोटी ग़ज़ल लिख डाली। उन्होंने कोई अभिवादन नहीं जोड़ा, लेकिन कुछ विचार करने के बाद उन्होंने निश्चय किया कि कम से कम कुछ तो ऐसा होना चाहिए जिससे यह संकेत मिले कि यह केवल एक ग़ज़ल नहीं बल्कि एक संदेश है। इसलिए उन्होंने अपनी लिखी हुई रचना के ऊपर फ़ारसी में निम्नलिखित शब्द लिखे:
'ग़ज़ल ऑफ़ द प्रेज़ेंस, ख्वाजा मीर असर साहब, अल्लाह उनका दर्जा बुलंद करे, मुहम्मद शम्सुद्दीन अहमद की ओर से, जो आपके दर्शन के लिए तरसते हैं।'
अब तक तो सब ठीक है। मैंने अपने दिल की हालत के बारे में लिख दिया। अब क्या? क्या अब मैं अपनी शारीरिक स्थिति के बारे में कुछ कहूँ? फिर से, कौन से शब्द उपयुक्त होंगे? क्या कोई ऐसा तरीका है जिससे मैं कह सकूँ कि मेरी आँखें तुम्हारे आने की प्रतीक्षा में बेचैन हैं; मेरी बाहें तुम्हें गले लगाने के लिए व्याकुल हैं; मेरा मुँह तुम्हारे होंठों को छूने तक चैन से नहीं बैठेगा? कितने मनमोहक, कितने प्यारे होंठ होंगे... उन्हें देखकर ही मुंह में पानी आ जाता है!
मेरा शयनकक्ष शोक में डूबा हुआ है, क्योंकि वह तुम्हारे चेहरे की रोशनी से वंचित है... लेकिन इन सब बातों को कागज़ पर कैसे उतारूँ? और क्या मैंने ये सब बातें हमारी पिछली मुलाकात में पहले ही नहीं कह दी थीं? नहीं, ऐसे शब्दों को बार-बार दोहराना ठीक नहीं है। यह कोई कलाबाज़ी का प्रदर्शन नहीं है, जिसमें दर्शकों की इच्छा के अनुसार बार-बार पलटी मारी जाए। कितना अच्छा हुआ कि शब्दों में, चाहे लिखकर या बोलकर, अपनी तड़प को ज़ाहिर करने के मंच पर न रहना पड़ा। उसे बिना कुछ कहे ही सब समझ जाना चाहिए था, वरना मैं खामोश जुनून में जलता रहता। उसे एक अरबी कहावत याद आई: जिसने प्रेम किया, पवित्र रहा, अपने प्रेम को छुपाया और मर गया, वह शहीद की मौत मरा। हमारे पूर्वजों द्वारा गढ़ी गई यह कहावत कितनी सच है। और शायद फ़ारसी कवि ने तो इससे भी आगे बढ़कर कहा था:
पतंगा तेजी से अंदर आया और मोमबत्ती के सामने जल गया; बेचारा, उसे पता ही नहीं था कि छुपकर जलना कितना सुखद होता है।
मैं यह सब मानता हूँ। लेकिन हम जो दिखावे की पूजा करते हैं, हमें किसी भी चीज़ में तब तक कुछ नहीं दिखता जब तक वह कोई मूर्त, स्पर्श करने योग्य आकृति न हो। अमीर खुसरो ने कितनी सटीक बात कही है:
यदि हाजी के लिए भी काबा की तरह अनुग्रह का कोई भौतिक प्रतीक होना ही है, तो बेचारा खुसरो, वह मूर्तियों की पूजा करता है— उसके हिस्से में चेहरे और उसके सौंदर्य चिह्न के अलावा और क्या आना चाहिए?

हम जैसे लोगों को चैन, चैन नहीं मिल सकता, जब तक हम चेहरे और उसके सौंदर्य को स्पर्श, स्पर्श और श्रद्धापूर्वक निहार न दें। इसलिए मैं कुछ और छंद लिखता हूँ, उनसे विनती करता हूँ कि वे अपने सौंदर्य के सूर्य की किरणों से मेरे छोटे से घर को रोशन कर दें।
कुछ देर सोचने के बाद, शम्सुद्दीन अहमद ने नोटपैड के दूसरे पन्ने पर कासिम बेग हलाती की एक फारसी चौपाई लिखी। यह उनकी चिरस्थायी पसंदीदा चौपाइयों में से एक थी:

मैं बीमार हूँ, पर तुम्हारा मन बीमार से मिलने का नहीं है; एक बार भी आस्था रखने से मत डरो, यह कोई आदत नहीं है। और बीमार से मिलने आने से तुम्हारी सुंदरता कम नहीं होगी। और मुझसे दूर रहने से तुम्हारी सुंदरता नहीं बढ़ेगी।

खैर, मैंने चौपाई लिख ली है, और अब बस: अब आगे क्या? मुलाकात के लिए अपनी निजी विनती को शब्दों में कैसे बयां करूं? यह आग्रहपूर्ण नहीं लगना चाहिए, फिर भी यह स्पष्ट होना चाहिए कि मेरा शरीर और आत्मा दोनों प्रेम की ज्वाला से जल रहे हैं। अरे, इन सब बातों की क्या ज़रूरत है? भगवान कसम, मुझे सीधे-सादे शब्दों में लिखना चाहिए। मुझे कहना चाहिए, कृपया अभी आओ और मुझे अपनी बाहों में भर लो। बस बहुत हो गया। क्या सच में मुझे यही लिखना चाहिए? बेशक, यही निर्विवाद सत्य है, लेकिन क्या उसे आने और मिलने के लिए कहने का कोई बहाना नहीं होना चाहिए? ठीक है, लेकिन बहाना ऐसा होना चाहिए जिससे मेरे असली इरादे में कोई संदेह न रहे।

एक छोटा सा नोट लेकर, शम्सुद्दीन अहमद ने आखिरकार एक प्रेम पत्र लिखा, या यूँ कहें कि उनसे अगले दिन शाम को अपने महल में भोजन करने का अनुरोध किया। उन्होंने स्पष्ट किया कि किसी और को आमंत्रित नहीं किया गया है, लेकिन यदि उनका शुभ स्वभाव ऐसा चाहे, तो उनके द्वारा बताए गए नामों को निमंत्रण भेजा जा सकता है। यदि वे चाहें, तो उन्हें लाने के लिए एक सुसज्जित गाड़ी उनके घर तक भेजी जा सकती है।

पत्र और कविताओं के साथ निम्नलिखित उपहार भी भेजे गए थे: कश्मीर से दो डबल शॉल; बुंदेलखंड के महोबा से सफेद पान के दो पैकेट; नजीबाबाद के जंगलों से लगभग आधा पौंड से थोड़ा अधिक शुद्ध कत्था (कत्था पान के साथ खाया जाता है, लेकिन अगर इसे काफी देर तक पानी में भिगोकर रखा जाए तो यह धीरे-धीरे घुलता है और कहा जाता है कि पानी हल्का नशीला हो जाता है); और मुर्शिदाबाद में बना एक बड़ा तांबे का पान का डिब्बा, जिसके विभिन्न आंतरिक पात्र पान चबाने से संबंधित सामग्री से भरे हुए थे।

एक गदाधारी, एक लाठीधारी और एक भालाधारी को सिरकी वालन जाकर वज़ीर खानम को भेंट प्रस्तुत करने का आदेश दिया गया। उन्हें यह भी निर्देश दिया गया कि वे उत्तर के बारे में एक शब्द भी न कहें, परन्तु यदि कोई उत्तर प्राप्त हो तो उसे पूरे सम्मान के साथ वापस लाएँ।

मंझली बेगम के घर पर, दोपहर के भोजन के बाद वज़ीर आराम करने ही वाले थे कि उनकी निजी नौकरानी बी वफ़ादार हांफती हुई और सांस फूलती हुई पहुंची, क्योंकि वह पूरे रास्ते लगातार चलती रही थी। उसने बताया कि लोहारू परिवार से उपहारों से भरा एक संदेश आया है।

उम्दा खानम ने वज़ीर के चेहरे पर हाथ फेरते हुए और फिर अपने सिर पर हाथ रखते हुए कहा, “ईश्वर करे यह आपके लिए शुभ हो, बीबी। लगता है आपका तीर निशाने पर लगा है। देखिए, आपने कितनी आसानी से इतने बड़े शिकार को मार गिराया!”

‘आओ, मंझली बाजी, आगे बढ़ो! ईश्वर का नाम लो! किसने तीर चलाए और निशाना क्या था? मुझे दिन में दो साधारण भोजन चाहिए, सम्मान के साथ। मैं किसी की रखैल या देहधारी बनकर नहीं रहना चाहती। आपकी प्रार्थनाएँ और सर्वशक्तिमान की कृपा मुझ पर सदा बनी रहे, मुझे इससे अधिक कुछ नहीं चाहिए।’

मैं नलकी को मुख्य द्वार पर भिजवा दूँगा। ईश्वर का नाम लेकर उसमें प्रवेश करो। अपने घर जाओ। ईश्वर की कृपा से तुम रानी बनोगी और रानी की तरह शासन करोगी।
उमदा खानम ने वज़ीर को गले लगाया और चूमा तथा उसे नलकी में बैठने में मदद की। तिराहा बैरम खान से सिरकी वालन ज़्यादा दूर नहीं था; नलकी उसे पल भर में घर ले आई। बी वफ़ादार सबसे पहले उतरी और दरवाज़ा खुलवाया। हॉल में नवाब शम्सुद्दीन अहमद का राजदंड धारक बैठा था, जो एक छोटा हुक्का पी रहा था, उसके सामने चायदानी पर ठंडे पेय का गिलास रखा था। उसके सामने भाला धारक और लाठी धारक हाथों में ठंडे पेय के प्याले लिए खड़े थे। हॉल में एक चादर फैलाकर अस्थायी पर्दा बनाया गया था। सभी से सलाम स्वीकार करके वज़ीर अपने घर में दाखिल हुई। नवाब के उपहार पहले ही अंदर भेज दिए गए थे, अब उनका पत्र कुछ रस्मों के साथ अंदर लाया गया। इसे एक चांदी की थाली में रखा गया था और वफ़ादार इसे अपने सिर पर रखकर अंदर ले गई।
वज़ीर मंत्रमुग्ध हो गई। लेखन का प्रत्येक अक्षर कितना सुगठित और संतुलित था, संदेश और कविताएँ कितनी प्रेमपूर्ण और मनमोहक थीं! उसका हृदय गहराई तक पिघल उठा। लेकिन उस रात्रिभोज के निमंत्रण का क्या मतलब था? वह कहता है कि इसमें केवल हम दोनों ही होंगे, जब तक कि मैं कुछ मेहमानों का नाम न बताऊँ। तो यह वास्तव में दो पहलुओं वाला मामला है: 'हाँ' कहना जोखिम भरा है, लेकिन 'ना' कहना भी कम जोखिम भरा नहीं है।
मुझे जाना ही होगा, उसने मन ही मन कहा, और कुछ देर सोचने के बाद उसे पता चला कि वह चाहती है कि केवल वे दोनों ही मौजूद रहें। उसने खुद को और समय नहीं दिया: और समय का मतलब टालमटोल करना था। उसने कुछ पंक्तियाँ लिखकर 'हाँ' कहा और किसी अन्य अतिथि का नाम नहीं लिया। उसने पत्र पर अपनी मुहर लगाई, राजदंड धारण करने वाले को पाँच रुपये और बाकी सेवकों में से प्रत्येक को दो रुपये दिए।
नवाब के नौकर अपना इनाम और उसका जवाब लेकर तुरंत चले गए। वज़ीर ने मन ही मन सोचा कि कल की तैयारियों में मग्न होने से पहले उसे मंझली को पत्र लिखकर खबर दे देनी चाहिए। जब वह लिखने बैठी, तो उसे इस बात का ज़रा भी अंदाज़ा नहीं था कि नवाब यूसुफ अली खान का मुखबिर शाम की रिपोर्ट में उसे यह खबर सौंप देगा। उसे विलियम फ्रेज़र के जासूसों के बारे में भी कोई जानकारी नहीं थी, जो उसके घर और नवाब के महल में होने वाली हर गतिविधि की खबर हर घंटे उसे भेज रहे थे। वज़ीर खानम को इस बात का ज़रा भी अंदाज़ा नहीं था कि उस रात और अगले दिन फ्रेज़र को सौंपी जाने वाली ये रिपोर्टें ऐसी घटनाओं की एक श्रृंखला को जन्म देंगी, जो दूर भविष्य में उसके लिए विनाशकारी और लगभग दुखद साबित होंगी, और उसका भविष्य उतना सुरक्षित नहीं होगा जितना उसने सोचा था।

An exquisitely attired Wazir Khanam pays a visit to Navab Shamsuddin Ahmad Khan's imposing and splendid residence in Daryaganj

अगर उस रात किसी ने वज़ीर की एक झलक भी देख ली होती, तो वो पागल होकर अपने कपड़े फाड़ देता; या फिर उसके दरवाजे पर लेट जाता, द्वारपाल का शुक्रिया अदा करते हुए कि उसने उसे वहाँ लेटने दिया। लेकिन उस रात वो चमकीली नज़र केवल शम्सुद्दीन अहमद खान के सौभाग्यशाली खजाने की शोभा बढ़ाने के लिए ही बनी थी। और उसने इसके लिए काफी हद तक तैयारी भी कर ली थी। लेकिन असल नज़ारा उसकी उम्मीदों से भी परे था, यहाँ तक कि उसके सपनों से भी।

जैसे ही उन्हें सूचना मिली कि वज़ीर खानम की गाड़ी उनके परिसर में आ गई है, उनके मन में तीव्र इच्छा हुई कि वे दौड़कर बाहर आएं, गाड़ी को अपने निवास के मुख्य द्वार तक ले जाएं, स्वयं उन्हें गाड़ी से उतारें और उनके साथ दीवान-खाना में चलें। जाहिर है, यह सब असंभव था; फिर भी, कमरे से बाहर बरामदे में आकर उनका स्वागत करना उचित होता।

दरियागंज स्थित नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान की हवेली अंग्रेजी शैली में बनी थी: एक चारदीवारी से घिरा परिसर, जिसमें केवल एक ही प्रवेश द्वार था। परिसर को एक छोटे पार्क की तरह सजाया गया था, जिसके एक हिस्से में गुलाब और मौसमी फूल लगे थे। लाल बजरी से भरा एक चौड़ा मार्ग मुख्य द्वार तक जाता था। यह मार्ग इतना चौड़ा था कि इसमें एक बड़ा रथ, घोड़ागाड़ी या हाथी भी आसानी से गुजर सकता था। यह रास्ता ऊँची सीढ़ियों तक जाता था, जो एक चौड़े बरामदे तक पहुँचती थीं। बरामदा हवेली के चारों ओर प्राचीन किलों या महलों के चारों ओर बनी खाई की तरह बनाया गया था।

बरामदे के बीचोंबीच एक विशाल मुख्य द्वार था; इसके दोनों ओर दो और द्वार थे, जो शायद नवाब के सचिवालय और प्रांगण में खुलते थे। मुख्य द्वार दीवान खाना में खुलता था, जिसे अंग्रेज़ी में ड्राइंग रूम कहते हैं। कुल मिलाकर, हवेली का बाहरी हिस्सा विलियम फ्रेज़र की हवेली जैसा दिखता था, लेकिन आकार, भव्यता और ऊँचाई के मामले में फ्रेज़र का घर कहीं अधिक प्रभावशाली था। यहाँ नौकरों की चहल-पहल भी काफी कम थी, और वैसे भी, परिचारकों और अन्य मेहमानों की गाड़ियों की अनुपस्थिति में, नवाब की हवेली अपेक्षाकृत सुनसान लग रही थी।

बैठक कक्ष में प्रवेश करते ही आपको तुरंत एहसास हो गया कि आप अंग्रेज़ी वास्तुकला, जीवनशैली, शिष्टाचार, और हर उस चीज़ को पीछे छोड़ आए हैं जो आपको किसी पराई दुनिया की याद दिला सकती थी। सबसे पहले, मेहराबदार मुख्य द्वार एक भीतरी द्वार की ओर खुलता था, जो भी मेहराबदार था, लेकिन उसका डिज़ाइन अर्ध-गुंबद जैसा था, और इस प्रकार वह अपने तकनीकी नाम—ताजदार दरवाजा—के अनुरूप था, जिसे बिल्डर और इंजीनियर इसी नाम से जानते थे। दोनों ओर द्वारपाल के लिए एक आसन था, जो संगमरमर के समान एक दुर्लभ फ़िरोज़ी रंग के पत्थर से बना था। इसकी दीवारें और दरवाज़े के पल्ले मुगल शैली में घनी नक्काशी और जड़ाई से सजे थे। दरवाज़े के पल्लों में लकड़ी के कोई सहारे या छड़ें नहीं थीं। जड़ाई में इतने सारे रंग थे—हरा, नीला, सुनहरा, सफ़ेद—कि ऐसा लगता था मानो यह किसी

दरवाज़े की दीवारें और पल्ले नहीं हैं; बल्कि यह एक विशाल पत्थर का टुकड़ा है जिसमें प्रकृति की किसी चमत्कारिक प्रक्रिया से रंग समा गए हैं।
दरअसल, दरवाज़े के पल्ले भारतीय गुलाब की लकड़ी और चंदन की लकड़ी के बने थे, और उन पर हाथीदांत के टुकड़ों को टाइलों जैसा दिखाने के लिए रंगा या नक्काशी की गई थी। इन 'टाइलों' को इस तरह लगाया गया था कि उनमें ज़रा भी जगह या दरार न हो। यह तय करना मुश्किल था कि किसकी कला और कारीगरी ज़्यादा बेहतर थी: हाथीदांत के टुकड़ों को टाइलों जैसा दिखाने वाले चित्रकार और नक्काशी करने वाले कारीगर, या उन बढ़ईयों की जिन्होंने हाथीदांत के टुकड़ों को दीवार और दरवाज़ों पर अविश्वसनीय रूप से नर्मता से जड़ा था। काम इतना अद्भुत और साफ-सुथरा था कि बंद होने पर दरवाज़ा दीवार का ही हिस्सा लगता था।
दहलीज काफी ऊंची थी, और दरवाजा लंबा और चौड़ा था, लेकिन उसकी दीवारें और मेहराब उससे भी ऊंचे थे। यही कारण था कि टाइलों पर फूलों के पैटर्न की सघनता के बावजूद, पूरी इमारत अनावश्यक भव्यता या भारी सजावट का आभास नहीं देती थी। दरवाजे के पीछे का फर्श दहलीज से लगभग एक फुट नीचे था, जिससे एक भव्य प्रवेश द्वार का आभास होता था। इस प्रकार, केवल एक सतर्क और फुर्तीला आगंतुक ही कमरे में प्रवेश करते समय अपना कदम फिसलने की गलती से बच सकता था। दरवाजे के सामने मोटा मखमल बिछा था जिस पर एक सरकंडे की चटाई बिछी थी, जो पैरों के लिए चटाई का काम करती थी।
दीवान खाना में प्रवेश करते ही आगंतुक का ध्यान सबसे पहले फैली हुई रोशनी की ओर आकर्षित हुआ। ऐसा न केवल बड़ी संख्या में झूमरों और फर्श पर लगे बल्बों से रोशन होने के कारण था, बल्कि प्रवेश करते ही दाईं और बाईं ओर दो लंबी खिड़कियाँ थीं जिन पर महीन मलमल के पर्दे लगे थे जो हल्की हवा से लहराते थे। खिड़कियों पर कोई सलाखें या जालीदार पर्दे नहीं थे; उनमें भी अलंकृत दरवाज़े के पल्ले थे जो मुकुटनुमा दरवाज़े के पल्लों से मिलते-जुलते थे। आगंतुक के ठीक सामने एक और दरवाज़ा था। यह दरवाज़ा मेहराबों पर टिकी तीन दीवारों को हटाकर बनाया गया था। मेहराबों को बरकरार रखा गया था, लेकिन ध्वस्त दीवारों से खाली हुई जगह को जालीदार संरचना से भर दिया गया था। हालाँकि, सबसे दिलचस्प हिस्सा जालीदार संरचनाएँ नहीं बल्कि मेहराब थे, क्योंकि प्रत्येक मेहराब का डिज़ाइन अलग था। बीच वाला और सबसे चौड़ा मेहराब शाहजहानी शैली का था; दाईं ओर वाले मेहराब में तीन छोटे मेहराब मिलकर एक बड़ा मेहराब बनाते थे; बाईं ओर वाला घोड़े की नाल के आकार का था, लेकिन उसमें हिंदू या बौद्ध शैली की हल्की सी झलक थी।
मेहराबों पर बनी जालीदार नक्काशी अहमदाबाद की मशहूर जाली मस्जिद (असल में, सिदी सईद मस्जिद) की शैली में थी। यानी, हालांकि नक्काशी संगमरमर से की गई थी, लेकिन देखने वाले को ऐसा लगता था मानो वह लकड़ी की बनी हो। जालीदार नक्काशी के डिज़ाइन और पैटर्न में इतनी विविधता थी कि कोई भी दो अगल-बगल की जाली एक जैसी नहीं थीं। इन्हें देखे बिना इनके नाम से इनकी आकृति का अंदाजा लगाना नामुमकिन है। फिर भी, यहाँ कुछ नामों का अनुवाद दिया गया है: तुर्की, समांतर चतुर्भुज, मछली के शल्क, अनंत श्रृंखला। इनमें से प्रत्येक को असाधारण सफाई और कुशलता से बनाया गया था। जालीदार नक्काशी के पीछे एक

आंतरिक उद्यान, या चमन की झलक दिखाई देती थी, न कि बाहर से दिखने वाले पार्क और उद्यान की।
हालांकि रात हो चुकी थी, फिर भी भीतरी बगीचे को रोशन किया गया था ताकि उसकी विशालता और सुंदरता का आभास हो सके। वास्तव में, जालीदार संरचना, आगंतुक को बगीचे की झलक दिखाने के अलावा, उसकी सुंदरता को और भी बढ़ा देती थी, क्योंकि पीछे से आती रोशनी और रंगों के साथ, जालीदार संरचनाएं रंगीन कांच का भ्रम पैदा करती थीं।
बड़े हॉल के भीतर, केंद्रीय मेहराब के सामने, एक अंडाकार फव्वारा था जिसकी लंबाई लगभग मेहराब के बराबर थी। गुलाबी संगमरमर से तराशा गया यह फव्वारा आगरा के लाल किले के निजी दरबार हॉल में स्थित इसी तरह के एक फव्वारे की तर्ज पर बनाया गया था। उस हॉल के फव्वारे की तरह ही उथला और फूल की पंखुड़ी के आकार में तराशा हुआ, जिसके किनारों पर फूलों और पत्तियों की नक्काशी थी, मुगल किले के फव्वारे की तर्ज पर ही बनाया गया था। इसकी जलधारा इतनी नीची थी कि इसकी फुहार से कक्ष का फर्श गीला न हो। फव्वारे के बेसिन को अलग-अलग जगहों पर अलग-अलग तरह से तराशा गया था, यानी उभरी हुई और धंसी हुई दोनों तरह की नक्काशी में। इसे अत्यंत सावधानीपूर्वक साफ रखा जाता था, इसलिए कहीं भी काई या लाइकेन का जरा सा भी निशान नहीं था।

हॉल का फर्श काशान, तुर्की और कश्मीर के कालीनों से ढका हुआ था। उत्तर-पश्चिम दिशा में फर्श का एक हिस्सा दहलीज के बराबर एक फुट ऊंचा किया गया था। इस ऊंचे हिस्से पर भी कालीन बिछे थे, लेकिन दो परतों के बीच मुलायम रजाईयां रखी गई थीं ताकि और भी ज्यादा मुलायम और थोड़ा ऊंचा लगे। मखमल से ढके तकिये ऊंचे हिस्से के पीछे वाली दीवार के पास रखे थे। हॉल के कुछ अन्य हिस्सों में भी रजाईयां थीं, लेकिन वे ऊनी कालीनों से नहीं बल्कि मिर्जापुर और आगरा में बनी हल्की, रेशमी कालीन जैसी चादरों से ढकी थीं। इन हिस्सों में तकिये नहीं थे। हॉल की छत संभवतः लकड़ी की थी, क्योंकि उस पर जिस प्रकार की जटिल और सूक्ष्म कलात्मकता प्रदर्शित की गई थी, वैसी नक्काशी, जड़ाई या रंगाई किसी पत्थर से नहीं की जा सकती थी। दीवारों और छत पर प्रयुक्त रंगों में कोई अंतर नहीं था, सिवाय इसके कि एकरसता को तोड़ने के लिए विभिन्न विधियों—या तरकीबों—का प्रयोग किया गया था। उदाहरण के लिए, वास्तविक छत से लगभग चार फीट नीचे, चारों दीवारों की पूरी लंबाई में सफेद जड़ाई वाली लाल बलुआ पत्थर की चार इंच चौड़ी पट्टी लगाई गई थी; पत्थर की पट्टियों को दीवार में आधा इंच गहरा खांचा खोदकर और उसमें बलुआ पत्थर जड़कर लगाया गया था। भारतीय वास्तुकार इसे कांगनी कहते थे, संभवतः कंगन से, जो सोने से बना एक मोटा, अलंकृत कंगन जैसा आभूषण होता था और धनी वर्गों में बहुत लोकप्रिय था। कांगनी या कंगन के लिए अंग्रेजी में कोई शब्द नहीं है।
उस अत्यंत अलंकृत कलाकृति से संतुष्ट न होकर, वास्तुकार ने कांगनी के लगभग छह इंच नीचे एक और पत्थर की पट्टी लगाई, जिसे इस प्रकार रंगा गया था कि वह हाथीदांत से जड़ी लकड़ी का आभास देती थी। फिर, छत के ठीक नीचे, एक अलग प्रकार के पुष्प और अलंकृत डिज़ाइन

चित्रित किए गए थे। ट्यूलिप, खसखस, वाइन ग्लास और कैराफ़ के स्थान पर, हिंदू शैली के कमल की कलियों और फूलों को विभिन्न रंगों में चित्रित किया गया था, लेकिन केवल उन्हीं रंगों में जो कमल के रंग होते हैं: लाल, गुलाबी, नीला, सफेद, बैंगनी-धूसर। वास्तविक छत और कांगनी के उभरे हुए पत्थर के काम के बीच एक चित्रित कॉर्निस बनाया गया था, लेकिन इस तरह से नहीं कि कांगनी की भव्यता कम हो जाए।
रंगी हुई दीवारों की एकरसता को तोड़ने के लिए सतह को वर्ग, आयत और समांतर चतुर्भुज में विभाजित किया गया था, और प्रत्येक भाग को रंग और डिज़ाइन दोनों के संदर्भ में अलग-अलग रंगा गया था। प्रत्येक भाग में प्रमुख डिज़ाइन एक मेहराब या गुंबद था, जिसे दीवार की सतह के वर्ग या अन्य भाग में बनाया गया था। मेहराब भी अलग-अलग शैलियों के थे। कुछ हिस्सों को इस तरह रंगा गया था कि वे गुंबद के भीतर खुली खिड़कियों की तरह दिखें।

जैसा कि ऊपर बताया गया है, छत देखने में लकड़ी की बनी हुई प्रतीत होती थी, लेकिन यह भी एक तरह का भ्रम था। वास्तव में यह सीप-चूना, भारतीय सीमेंट और मोटे रेत से बने गारे से बनी थी, जिस पर फिर से सीप-चूना का लेप किया गया था। इसका तकनीकी नाम गच या रेख्ता था, और यह बिना किसी खंभे या घुमावदार संरचना के, कम ऊँचाई वाले मेहराबों द्वारा समर्थित थी। रंगों, आकृतियों और यूक्लिडियन आकृतियों की इतनी अधिकता के बावजूद, हॉल घुटन भरा या भारी-भरकम नहीं लगता था। इसका एक कारण इसका विशाल आकार और ऊंची छत थी, लेकिन मुख्य रूप से वास्तुकार और कारीगरों की आकृतियों और रंगों के बीच अनुपात और समरूपता की अद्भुत समझ थी। कोई भी रंग या चित्र अपने पड़ोसी से बेमेल नहीं था।
हॉल के ठीक बीचोंबीच हरे रंग का एक छोटा सा हिस्सा था; यह असली हरी घास थी जिस पर एक मध्यम आकार का अनार का पेड़ उगा हुआ था। पेड़ के नीचे दो काले हिरण बैठे थे, ठीक उसी तरह जैसे ऐसे हिरणों में आम तौर पर होता है: चारों पैर शरीर के नीचे समेटे हुए, आराम से जुगाली कर रहे थे। पेड़ के सामने हरे रंग के जेड पत्थर से बना एक चीनी शैली का फर्श का गोला था जिसमें चौबीस मोमबत्तियाँ जल रही थीं। बड़ी मोमबत्तियों से निकलने वाली रोशनी इतनी तेज़ थी कि जेड का हरा रंग कुछ सफेद और कुछ गहरे लाल रंग के साथ मिला हुआ प्रतीत हो रहा था।
यह स्पष्ट था कि कक्ष में प्रवेश करने वाला कोई भी नया व्यक्ति इतना स्तब्ध रह जाता कि वह यह तय नहीं कर पाता कि वह हॉल की प्रशंसा करे या बैठने के लिए जगह ढूंढे। नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान, और उनसे पहले नवाब अहमद बख्श खान, अतिथि का स्वागत करने के लिए हॉल के उत्तर-पश्चिम में बने ऊंचे स्थान पर खड़े होते थे। विशेष अतिथियों के लिए, वे वहां से नीचे उतरकर कुछ कदम चलकर उनका स्वागत करते थे। इससे अधिक सम्मान किसी को नहीं दिया जाता था, न तो फिरंगी अधिकारियों को और न ही नवाब सीनियर साहिब बहादुर को। लेकिन वज़ीर खानम के आगमन की रात, शम्सुद्दीन अहमद खान ने मुकुटधारी द्वार को ही अपना स्थायी स्थान बना लिया था, और उनका हृदय उन्हें उससे भी आगे जाने के लिए प्रेरित कर रहा था।
वज़ीर खानम ने शाम के लिए तुर्की शैली के परिधान पहने थे। उनके पैरों में शिराज़ी जूते थे—

वास्तव में सिराजी, क्योंकि इन्हें दिल्ली के एक कलाकार सिराजुद्दीन ने डिज़ाइन किया था; फैशन की दुनिया में सिराजी को शिराजी का दर्जा मिल गया—आसमानी नीले काशानी मखमल और सफेद हिरण की चमड़ी से बने, पतली एड़ी और लंबे ऊपरी हिस्से वाले, बेहद नीची दीवारों वाले और एड़ी के लिए कोई सहारा नहीं देने वाले। पैर की उंगलियां लंबी और नुकीली थीं और सूर्यपक्षी की चोंच की तरह थोड़ी ऊपर की ओर मुड़ी हुई थीं, और मखमली भृंग के लाल रंग में जंगली मुर्गे के पंखों से सजी थीं। जूतों के किनारों पर एक पतली लेस थी, जिस पर सफेद और सुनहरे पुखराज जड़े हुए थे।

जूतों की भव्यता और सुंदरता देखने वाले को स्तब्ध कर देती, लेकिन नज़र जूतों से ऊपर उठाने के लिए किसी को बाघ जैसी निडरता या पैंथर जैसी दिलेरी चाहिए होती। पैंट बेहद महीन ढाका मलमल से बनी थी, इतनी महीन कि कूल्हों और नितंबों की गोलाई और जांघों की रेखाएं साफ दिखाई दे रही थीं। अगर देखने वाले में और देखने का हौसला या मौका होता, तो वह कभी-कभी नितंबों के बीच की पतली दरार को भी देख सकता था—जिसे फारसियों ने 'काले सूरज की जोड़ी' कहकर बखूबी बयान किया है।

लेकिन नहीं, अगर पैंट इतनी खुली हुई थी, तो सामने से देखने वाले को कम से कम जांघों और गुप्तांगों की हल्की सी झलक, शुक्र पर्वत की कोमल ऊँचाई और ढलान (जिसे फारसी लोग प्यार से 'ताजे पानी के कुएँ के चारों ओर लिपटी चप्पल' कहते थे) क्यों नहीं दिखाई दी? लेकिन सामने का हिस्सा बिल्कुल सादा दिखाई दे रहा था। केवल पेट (जिसे फारसी लोग प्यार से 'मखमली घेरा, या मेष राशि का चिन्ह' (अरबी और फारसी में 'हमाल', जिसका अर्थ 'गर्भावस्था' भी हो सकता है) कहते थे) कभी-कभी छिपी हुई चीजों का अस्पष्ट संकेत देता था।

स्पष्टतः, केवल नौ या दस वर्ष की लड़की के लिए ही संभव था कि उसके आगे और पीछे का हिस्सा इतना स्पष्ट और सपाट हो। असल बात यह थी कि वज़ीर ने मांस के रंग का लंबा अंडरवियर पहना हुआ था, जो इतना कसा हुआ था कि मानो उसके शरीर पर पेंट किया गया हो। लेकिन यह इतना भी खुला नहीं था कि उसके शरीर के कुछ, या सभी, उभारों को दर्शा सके। अंडरवियर के ऊपर उसने जो पतलून पहनी थी, वह थोड़ी ऊंची और संकरी थी, इस अर्थ में कि उससे टखने और पैर दिखाई दे रहे थे, और टखनों के ऊपर पतलून का निचला हिस्सा - मखमल का बना हुआ, लगभग उसके अंडरवियर की तरह मांस के रंग का - पट्टियों की तरह कसा हुआ था। उस पर लेस जैसी कढ़ाई भी थी, जिससे रंगीन पट्टियों का भ्रम और भी बढ़ जाता था। फीते के ऊपर से जांघों तक पहुँचने वाली ये पतलूनें—फ़ारसी लोग इन्हें प्यार से 'वाइन-रेड बॉज़' कहते थे—इतनी ढीली और सिलवटों से भरी थीं कि इनकी तुलना हल्के, प्याज के आकार के चित्रित गुंबदों या गुब्बारों से की जा सकती थी। बीच में, घुटनों से काफी ऊपर, पतलून को फिर से चौड़े, कढ़ाईदार फीते से कसा गया था, जिसका पैटर्न टखनों के ऊपर वाले फीते जैसा ही था, लेकिन अंतर यह था कि अब यह फीता सुनहरा और ब्रोकेड था, और इसके ऊपर और नीचे मोटे काले-सुनहरे धागे से बॉर्डर बनाया गया था: इतना मोटा कि ऐसा लगता था मानो जांघों पर काले रंग से बनी सोने की चूड़ियाँ पहनी हों।

सुनहरी फीती और जांघों के मध्य भाग के ऊपर कसी हुई पतलून, ऊपर की ओर बढ़ते हुए फिर से ढीली होने लगी, और जब तक वह लजीज, मानो कभी न छुई हुई पीठ तक पहुँची—यहाँ फिर से कथाकार को फ़ारसी विद्वान का सहारा लेना पड़ा और कूल्हों और पीठ का वर्णन 'जंगली, भूरे-बैंगनी जंगली बेलेंटाइन का भंडार' या 'जादूगरों के जादुई गोलों की एक जोड़ी' के रूप में करना पड़ा—तब तक प्रभाव जादुई था। क्योंकि, फ़ारसी कवि द्वारा वर्णित 'आप हमें झलकियाँ दिखाते हैं और आप हमसे बचते भी हैं' वाली स्थिति फिर से स्पष्ट थी, क्योंकि यह बताना असंभव था कि पतलून का ऊपरी भाग कहाँ समाप्त होता है; जबकि पतलून के ऊपरी भाग के अंदर पतलून की डोरियाँ कमर को शराब के गिलास के अंदर की पतली रेखा की तरह उभार रही थीं—जो गिलास को भरने की सीमा को दर्शाती है; और अंगरखा और पतलून बिल्कुल एक ही रंग के थे।

मलमल की पतलून हल्के नारंगी और गहरे लाल रंग की थी, और ट्यूनिक उससे थोड़े मोटे मलमल की थी, हल्के नारंगी रंग की। जैसे फूलों का गुच्छा बाँधने के लिए इस्तेमाल होने वाली घास की डंडी पत्तियों के बीच चतुराई से छिपी होती है, वैसे ही पतलून की डोरी और ट्यूनिक का किनारा नीले मखमल की तंग जैकेट के नीचे छिपा हुआ था। जैकेट के नीचे कोई चोली नहीं थी, और इसका गला इस तरह से डिज़ाइन किया गया था कि सामने से ऊँचा और लगभग बंद होने के बावजूद, पीछे से इतना नीचा था कि कंधों से पीठ तक फैली घाटी किसी आदमकद बैंगनी-भूरे पुखराज के टुकड़े पर खुदी हुई लकीर जैसी लग रही थी।

दरअसल, वेस्टकोट ट्यूनिक का ही एक हिस्सा था, क्योंकि दोनों को एक साथ सिला गया था और ट्यूनिक वेस्टकोट की लाइनिंग का काम करती थी। इस तरह ऊपरी शरीर बिना किसी अंडरवियर के ढका हुआ था और वेस्टकोट की आस्तीनें इतनी छोटी थीं कि वे कंधे के जोड़ से ऊपर नहीं जाती थीं। इस तरह गर्दन, क्लीवेज और ऊपरी पीठ का उभार स्पष्ट रूप से दिखाई देता था और गर्दन को किसी भी तरह के आभूषण से मुक्त रखा गया था ताकि उसकी सुडौल वक्रता और ऊंचाई पर जोर दिया जा सके। ट्यूनिक की आस्तीनें लंबी थीं और अंत की ओर पतली होती जा रही थीं, जो बांहों और अग्रबांहों को पूरी तरह से ढकती थीं और कलाई पर कसकर समाप्त होती थीं। दाहिनी आस्तीन पर लेस लगी थी, जो टखनों और जांघों पर लगी लेस से मेल खाती थी, लेकिन उससे भी अधिक उभरी हुई और मखमली थी। लेस के काम से बने डिज़ाइनों में कोई स्पष्ट पैटर्न या संतुलन का प्रयास नहीं था।

बाएँ बाजू पर सूती कपड़े से कढ़ाई की हुई एक लंबी ब्रोकेड लेस थी, जिस पर छोटे-छोटे फूलों के डिज़ाइन बने हुए थे। यह कलाई की हड्डी से लेकर कोहनी तक फैली हुई थी। बीच में थोड़ी चौड़ी और भारी लेस थी, जो बाजूबंद जैसी दिखती थी। इस पर छोटे-छोटे चौकोर कटे हुए गार्नेट और गहरे लाल रंग के हिमालयी पुखराज जड़े हुए थे। बाजू के कंधे से जुड़ने वाले बिंदु के ठीक नीचे नारंगी-लाल रंग की तीन पतली मखमली पट्टियाँ थीं। बाजू के बाकी हिस्से पर पतलून के मलमल के रंग से मिलते-जुलते छोटे-छोटे डिज़ाइन बने हुए थे। इन छोटे लाल डिज़ाइनों के चारों ओर छोटे-छोटे गोले बने हुए थे और गोलों के अंदर तीन छोटे-छोटे बिंदु थे, जिनसे एक मुस्कुराते हुए इंसान के चेहरे का हल्का सा आभास होता था।

इसके विपरीत, दाहिनी आस्तीन पर ऊपरी बांह पर कोई फीता या पट्टी नहीं थी, लेकिन उस पर

ऊपर वर्णित टहनियों और बिंदुओं से घिरे वही गोलाकार पैटर्न बने हुए थे। हालांकि, अग्रबाहु और कलाई पर एक नए पैटर्न की पट्टियाँ थीं, जिन्हें टखने की फीती और बाईं आस्तीन की फीती के पैटर्न को मिलाकर बनाया गया था। कोहनी के ठीक नीचे, जहाँ पट्टियों की श्रृंखला शुरू होती थी, वहाँ तीन लड़ियों वाला एक छोटा मूंगा हार लटका हुआ था, जो गहरे लाल और पीले रंग का था और देखने में बिल्कुल न खिले फूलों की माला जैसा लग रहा था। इसे इस तरह लटकाया गया था कि इसकी एक लड़ी कलाई तक आती थी और हाथ और कलाई के ठीक बीच में बंधी हुई थी। कलाई, गर्दन की तरह, आभूषणों से रहित थी।

वज़ीर ने अपने दाहिने अंगूठे में इरावदी नदी घाटी (अब म्यांमार का हिस्सा, जिसे हाल ही में अंग्रेजों ने जीता था) से प्राप्त हल्के गुलाबी रंग के मटर के दाने जितने छोटे तारे के आकार के रूबी रत्न से जड़ी अंगूठी पहनी थी। उसी हाथ की अनामिका उंगली में उन्होंने दो पन्ना की अंगूठियां पहनी थीं, जिनमें आयताकार आकार के पन्ने थे और उनके किनारे बहुत ही चमकदार थे। उनकी नाक पर कोई आभूषण नहीं था, लेकिन उनके कानों में सोने के दो लंबे, कई लड़ियों वाले लटकन थे, जो नाजुक गुच्छों जैसे दिखते थे, प्रत्येक गुच्छा अलग-अलग लंबाई का था, हालांकि उनकी लंबाई का कोई निश्चित पैटर्न नहीं था। ऐसा लग रहा था मानो किसी कुशल कारीगर ने उन्हें बड़ी ही सहजता से एक साथ जोड़ दिया हो।

वज़ीर ने अपने लंबे बालों को जूड़े में बाँध रखा था, लेकिन वह ज़्यादा दिखाई नहीं दे रहा था, क्योंकि उसने अपने सिर पर आसमानी नीले मखमल की एक छोटी पगड़ी पहन रखी थी जो ढीली-ढाली लग रही थी; उसका एक सिरा उसके माथे और चेहरे के कुछ हिस्से पर लटक रहा था, जिससे ऐसा लग रहा था मानो चेहरे पर लापरवाही से घूंघट डाल दिया गया हो। ढीली पगड़ी को टिकाए रखने के लिए उसने उसके किनारे और माथे के ऊपरी हिस्से पर रेशम की एक चौड़ी लेस बाँध रखी थी। यह लेस कुछ हद तक उसकी बाईं आस्तीन पर लगी लेस जैसी थी, लेकिन पूरी तरह नहीं।

सिर के पिछले हिस्से को पगड़ी से मुक्त रखने से उसके बालों की वास्तविक लंबाई का हल्का सा आभास होता था, लेकिन पगड़ी में एक जालीदार कपड़ा जैसा कुछ लगा हुआ था, जिसे पतले रिबन से सिर के पिछले हिस्से पर बांधा गया था। इसी में से लाल और काले पंखों से बना एक आभूषण निकला हुआ था, जिससे वह थोड़ी लंबी दिखने वाली लड़की और भी लंबी और प्रभावशाली लग रही थी।

इन विवरणों को देखते हुए, ऊपरी शरीर के लिए दुपट्टे या शॉल की कोई आवश्यकता नहीं थी। फिर भी, उसने एक क्रीम रंग की पतली कश्मीरी शॉल, कमरबंद जैसी, एक कंधे पर बड़ी सहजता से डाली हुई थी, लेकिन इस तरह कि उसका दूसरा सिरा दूसरे कंधे को छू रहा था, मानो कोई बेपरवाह लहर हो। जैसा कि हमने ऊपर बताया, सामने के शरीर पर नग्नता का कोई संकेत नहीं था। एक बिना म्यान वाली कटार, पतली, चमकदार और बिजली की चमक की तरह थोड़ी मुड़ी हुई, उसकी कमर पर लटकी हुई थी, मानो वस्त्रों की बहुतायत के नीचे छिपे शरीर की नग्नता का पूर्वाभास दे रही हो।

वज़ीर ने इस अवसर के लिए एक बार फिर एक बग्गी उधार ली थी: यह नवाब यूसुफ अली खान की निजी बग्गी थी। इरावदी नदी घाटी से आयातित सागौन की लकड़ी से बनी इस बग्गी को दो सफेद घोड़े खींच रहे थे। इसके दरवाजे हल्के नीले रंग से रंगे थे और पर्दा प्रथा के उल्लंघन की किसी भी संभावना को पूरी तरह से खत्म करने के लिए, उन पर मोटे ब्रोकेड के पर्दे लगे थे और वे पूरी तरह से बंद थे। छत और पहिए क्रीम सफेद रंग से रंगे थे। घोड़ों को शुतुरमुर्ग के पंखों और मोनाल नामक रंगीन हिमालयी तीतर के पंखों से बने पंख पहनाए गए थे। उनके मुंह में सुनहरे रेशमी जाली के मुखपत्र थे, उनकी पूंछों पर सुनहरे रेशमी गुच्छों के आभूषण थे और उनकी आंखों पर सफेद हिरण की खाल की पट्टियां लगी थीं। गैंडे की खाल की पट्टियों को एक मजबूत रस्सी की तरह मोड़कर उनकी लगाम बनाई गई थी।

कोच बॉक्स में, वज़ीर के साथ एक लाठीधारक कोचवान के बगल में चल रहा था। जब बग्गी नवाब की हवेली के बाहरी बरामदे की ओर जाने वाली सीढ़ियों पर रुकी, तो लाठीधारक फुर्ती से नीचे कूदा और बग्गी के दरवाजे पर धीरे से दस्तक दी। जैसे ही दरवाजा खुला और पर्दा हटा, लाठीधारक ने तुरंत दरवाजे की चौखट पर लकड़ी की सीढ़ियाँ लगा दीं। वज़ीर नीचे उतरीं, दाएं या बाएं देखे बिना, और बरामदे की सबसे निचली सीढ़ी पर पैर रखा। वह धीरे-धीरे और सावधानी से ऊपर चढ़ीं, उनकी नज़रें सीढ़ियों पर टिकी थीं, मानो वह संभलकर चल रही हों। उन्होंने मुश्किल से तीसरी सीढ़ी पर पैर रखा ही था कि नवाब के द्वारपाल ने सधे हुए स्वर में कहा: 'वज़ीर खानम साहब के पवित्र चरण यहाँ आ पहुँचे हैं।'

अब तक वज़ीर आखिरी कदम पार कर चुके थे। नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान, और इंतज़ार न कर पाने के कारण, अंदर के दरवाज़े से बाहर निकले और बड़े बाहरी दरवाज़े को खोलकर उन्हें गले लगाने के लिए अपनी बाहें फैला दीं। वज़ीर ने अपनी नज़रें थोड़ी ऊपर उठाईं; उनके होंठों और चेहरे पर एक हल्की सी मुस्कान आ गई। वहीं रुककर, उन्होंने झुककर सलाम किया। फिर उन्होंने बड़ी मुश्किल से उनकी ओर देखा, लेकिन शर्माते हुए बोलीं, 'अल्लाह नवाब साहब की रक्षा करे और उन्हें हमेशा सुरक्षित रखे। आपके सम्मान ने मेरे लिए इतनी मेहनत की, जबकि मैं आपके सामने कुछ भी नहीं हूँ। मुझे शर्म से पसीना आ रहा है।'

यह कहकर उसने अपनी नज़रें फिर से नीचे कर लीं। लोगों से बात करते समय उनकी आँखों में देखना एक कला थी जो मार्स्टन ब्लेक ने उसे सिखाई थी। कई गलतफहमियों और चिड़चिड़ी बातों के बाद, उसे आखिरकार समझ आया कि फिरंगी लोगों में, जो लोग आपकी ओर नहीं देखते या बात करते समय अपनी नज़रें फेर लेते हैं, उन्हें आम तौर पर धोखेबाज या जालसाज माना जाता है। इसके विपरीत, उसकी संस्कृति में यह नियम था कि बड़ों, करीबी रिश्तेदारों या अजनबियों से बात करते समय उनकी ओर नहीं देखना चाहिए। धीरे-धीरे, और काफी मानसिक पीड़ा के बाद, उसने खुद को यह सिखाया कि बात करते समय किसी की ओर देखना शायद उचित न हो, लेकिन शाही उपस्थिति में भी सीधे सामने देखना अनिवार्य था। इसलिए, कभी-कभी

सामने वाले के चेहरे की ओर नज़र उठाने में कोई नुकसान नहीं था, खासकर जब विषय महत्वपूर्ण और गंभीर हो।
हालाँकि नवाब को यह एहसास था कि वज़ीर के लिए अपनी निगाहें न झुकाना उसकी समानता और स्वतंत्रता का प्रतीक था, फिर भी वह उसकी निडरता और स्वेच्छाचारी गर्व की सराहना करता था और किसी न किसी रूप में उसका आनंद लेता था। नवाब ने उसमें एक प्रकार का आत्मविश्वास और आत्मसम्मान का भाव देखा, और एक गरिमामय उदासीनता का आभास दिया जो केवल उसकी सुंदरता के गर्व या आकर्षण की भावना से ही नहीं उपजता था। यह संसार से अलगाव का भी संकेत देता था, एक ऐसा रवैया जो किसी न किसी रूप में एक फकीर के रवैये जैसा था। उसे यह आभास था कि वज़ीर प्रेम करने से विमुख नहीं थी। यदि वह किसी से प्रेम करती, तो वह अपनी सुंदरता के धन को देने में जरा भी कंजूसी नहीं करती। लेकिन बात यह थी कि यदि वह किसी से प्रेम करती, और वह उसे नहीं चाहता (जो कि शम्सुद्दीन अहमद के अनुसार लगभग असंभव था), तो वह उसके पीछे पागलों की तरह नहीं भागती, न ही वह कभी किसी याचक की तरह उसके चारों ओर घूमकर उसकी कृपा की भीख मांगती।
बारह से पंद्रह फीट चौड़े बरामदे को पार करने में वाकई कुछ समय लगेगा। और इस बार नवाब ने यह भी महसूस किया कि वज़ीर की चाल पंख की तरह हल्की और सुरुचिपूर्ण थी, फिर भी इतनी प्रभावशाली और राजसी लग रही थी कि मानो ज़मीन भी उनके सामने समर्पण भाव से फैल रही हो। तब तक शम्सुद्दीन अहमद बाहरी द्वार के पास अपनी जगह से पूरी तरह हट चुके थे और बीच रास्ते में उनसे मिलकर उन्होंने उनकी कमर में हाथ डाला और उन्हें मुकुट वाले द्वार की ओर ले गए।

उन्होंने कहा, 'तुम्हें चलना सिखाने के लिए भगवान ने ज़रूर कोई फ़रिश्ता भेजा होगा। हम जैसे साधारण इंसान इतनी सहजता से नहीं चल सकते।' निमत खान अली ने कितनी अच्छी बात कही है:
जिस तरह से वह चीजों को देखती है, उसकी निगाहें जहां भी जाती हैं, वहां बगीचों की नींव रखती हैं; उसके पैरों के निशान उसके रास्ते में ताजे गुलाब बिखेर देते हैं।
‘नव साहब, हे प्रभु, आप मुझे कांटों पर घसीट रहे हैं। कृपया मुझे अपनी दासी से अधिक कुछ न समझें। मैं इस स्थान पर सांस लेने के लिए हांफ रही हूँ। मैं ईश्वर का नाम लेती हूँ! मैं और यह भव्य और आलीशान महल! मैं यहाँ कैसे समा सकती हूँ? यह विचार मुझे मृत्यु तक भयभीत कर देता है।’
अब तक वे भव्य द्वार की दहलीज पार कर दीवान-खाना में पहुँच चुके थे, और सभी नवागंतुकों की तरह, वज़ीर भी इसकी शान-शौकत देखकर अचंभित थी। उसे समझ नहीं आ रहा था कि कहाँ कदम रखे। अपनी स्तब्धता में, वह नवाब को अपनी कमर पर हाथ रखे और उसे ऊँची कुर्सी तक ले जाने देने में प्रसन्न थी। मन ही मन उसने अपनी समस्या सुलझाने के लिए ईश्वर और नवाब का धन्यवाद किया। नवाब ने उसे बीच में बैठाया और स्वयं उसके सामने, थोड़ा दाहिनी ओर बैठ गए—ठीक उसी तरह जैसे नवाब के आने पर वह अपने घर पर बैठती थी।

वज़ीर नवाब के दरवाज़े पर मिलने और बैठने के तरीके के सांकेतिक अर्थ को भलीभांति समझ गई थी। वह कुछ कहने ही वाली थी कि नवाब ने उसे रोकने के लिए अपना दाहिना हाथ उठाया और कहा, 'वज़ीर खानम, भाई वल्लाह, आपका यहाँ आने की कृपा मेरे लिए सौभाग्य की बात है। आपकी इस मेहनत के लिए मैं आपकी हर इच्छा पूरी करने के लिए तैयार हूँ। यकीन मानिए, मैं कोई कसर नहीं छोड़ूँगा।'

'परमेश्वर, जो उदारता का भंडार है, उससे कोई सेवा नहीं माँगी जा सकती। न ही यह मेरा अधिकार है। लेकिन वास्तव में, मैं आपके साथ अपने जीवन के मार्ग पर चलकर कुछ ऐसे स्थानों की यात्रा करना चाहती हूँ जहाँ दया और आतिथ्य सत्कार मिले।' वज़ीर ने नवाब की ओर मुस्कुराते हुए देखा।

लेकिन अगर मुझे कारवां का नेता या ऊंट चालक भी बनना पड़े, तो मेरी मजदूरी कौन देगा?

वज़ीर ने हिम्मत जुटाकर कहा, 'मांगो, और तुम्हें दिया जाएगा।' वह मन ही मन थोड़ी भयभीत थी, लेकिन उसे पूरा भरोसा था कि नवाब जवाब में कुछ भी अनुचित नहीं कहेंगे।

शम्सुद्दीन अहमद को मिर्ज़ा नौशाह की एक आयत याद आई। हालाँकि उन्हें मिर्ज़ा नौशाह की ज़्यादा परवाह नहीं थी, फिर भी वह आयत इतनी प्रासंगिक थी कि उन्होंने उसे वज़ीर को सुनाना ज़रूरी समझा। उन्होंने भीख मांगने वालों की तरह अपना दाहिना हाथ और हथेली फैलाई और कहा:

हे दृष्टि की ज्योति, अपनी सुंदरता से निर्धारित दान का दसवां हिस्सा दान करो, ताकि सूर्य के समान यह भिखारी के कटोरे को प्रकाशित करे और उसके घर को रोशन करे।

अपनी प्रतिक्रियाओं पर पूर्ण नियंत्रण रखने के हज़ार संकल्पों के बावजूद, वज़ीर के चेहरे पर गुलाबी मुस्कान खिल उठी, लेकिन तुरंत ही शर्मिंदगी और लज्जा की लाली छा गई। फिर भी, यह लज्जा में डूबने का समय नहीं था, क्योंकि तब बातचीत पर से उसका नियंत्रण छिन सकता था। इसलिए उसने नवाब की ओर थोड़ी शरारत भरी नज़र से देखा और कहा, "वह पुरानी कहावत शुभ कानों तक पहुँच गई होगी। 'देने वालों में तीन गुण होते हैं: वे दे भी सकते हैं, नहीं भी दे सकते, और देने के बाद वापस भी ले सकते हैं!'"

'हां, लेकिन यह बेसहारा भिखारी ऐसी चीज मांग रहा है, जो एक बार दे दी जाए तो वापस नहीं ली जा सकती।'

वज़ीर के पास इसका कोई जवाब नहीं था। समय पाने के लिए, उसने विषय बदल दिया। 'क्या आपको मिर्ज़ा नौशाह की कविताएँ बहुत पसंद हैं?'

नहीं, भाई, सालों पहले मैं मीर तकी मीर साहब की शायरी का दीवाना हो गया था। हालांकि खूबसूरत औरतें सभी मिन्नतों से बेअसर होती हैं, फिर भी मीर साहब की बात एक पल के लिए सुन लीजिए।

फिर उन्होंने उद्धृत किया:

नरगिस का फूल आंख जैसा दिखता है, लेकिन उसमें देखने की शक्ति नहीं होती; मैं भी नरगिस की तरह, एक झलक पाने के लिए गिड़गिड़ाता फिरता रहा, मेरी आंखें एक खाली कटोरे की तरह थीं, दृष्टिहीन।

‘निःसंदेह, महोदय। परन्तु आपका भिक्षापात्र ईश्वर के राज्य के समान अनंत और अनादि है। परन्तु मीर तकी मीर साहब के कथनों पर गौर करें तो विनती करने वाले भिखारी को सबसे अच्छा उत्तर उसी प्रकार की निर्दयी उदासीनता है।’
वज़ीर के जवाब में कवि की एक प्रसिद्ध कविता का अप्रत्यक्ष संकेत था। अब नवाब के पास कोई जवाब नहीं था; उसने विषय बदल दिया। 'क्या हमारे धर्म के नियमों के अनुसार, जो लोग निर्धारित दर पर दान देने में सक्षम हैं, उन पर यह अनिवार्य नहीं है?'
‘आपका आदेश बिलकुल सही है,’ वज़ीर ने प्रसन्नता से हंसते हुए कहा, क्योंकि अब उसका संकोच दूर हो रहा था और वह साहसी हो रही थी। ‘लेकिन आपके धर्म में घूरने का क्या महत्व है? महान सेवकों ने अवश्य ही मिर्ज़ा जलाल असिर का आदेश सुना होगा।’
सूर्य से भेंट लेना उचित है, क्योंकि मैंने उससे उसके चेहरे की एक झलक दान के रूप में प्राप्त की है।
“कृपा करके, वज़ीर खानम, हमें महज़ शब्दों से बहलाएँ नहीं। क्या यह वाकई उचित है कि धन-दौलत का सागर उफान पर हो और गरीब भिखारी को केवल बहाने और ढोंग दिखाए जाएँ? भाई वल्लाह, हमारी वाणी शिराज के बुलबुल की आवाज़ है। कृपया सुनिए।”
आपकी सुंदरता ने आपको दान देने की योग्यता के चरम पर पहुंचा दिया है: कृपया दान दीजिए, क्योंकि मैं बिल्कुल निर्धन हूँ।
'बिल्कुल सही, महोदय। लेकिन मैंने, माननीय न्यायाधीश, एक अलग सबक सीखा है:
सुंदरता के लिए सबसे अच्छा दान है अपनी आँखों पर नियंत्रण रखना: मेरी ये बातें याद रखना।
‘भाई, भगवान ही जाने तुम्हारा शिक्षक कितना कंजूस और कृपण था! क्या तुमने नहीं सुना कि कंजूस का सबसे अच्छा गुण कर्मों का त्याग करना है, और उदार का सबसे बुरा गुण कर्मों का त्याग करना है?’
'जी हां, महोदय, जी हां! जिनसे अपेक्षाएं हों, उनकी बुराई करने का तरीका तो आपको आपसे ही सीखना चाहिए।'
‘भाई, मैं आपको ईश्वर के प्रति अपना ऋण चुकाने के लिए मनाने की कोशिश कर रहा हूँ। जहाँ तक मेरी बात है, मुझे किसी बात का डर नहीं है। आपको ही उनके सामने जवाब देना होगा। वैसे भी, वंचितों के पाप क्षमा कर दिए जाते हैं।’
‘सर, आप बिल्कुल सही कह रहे हैं।’ वज़ीर ज़ोर से हँस पड़ा। ‘तो वंचित ही रहिए।’
नहीं। नहीं। मैं भी इतना बड़ा पापी नहीं हूँ।
लेकिन तुम ही मेरे कसूरवार हो, इसमें कोई शक नहीं।

'तो ऐसा ही हो। यह अपराधी आजीवन कारावास की सजा भुगतने के लिए तैयार है।'
वज़ीर कुछ देर रुकी और हल्के से सोचने लगी। उम्रकैद? या फिर ये वही कहानी है जो बल्क साहब के साथ हुई थी? उसके होंठों पर कई तीखे जवाब आ गए, लेकिन उसने खुद को रोक लिया। शायद ये सब बातें करने का समय नहीं था। उसने खुद को संभाला और बातचीत को हल्के-फुल्के मज़ाकिया अंदाज़ में मोड़ने का सोचा। लेकिन—अचानक ये विचार उसके मन में दूर

से आती गूंज की तरह आया—मैं अभी फैसला क्यों नहीं कर पा रही? क्या मुझमें इस मामले को सुलझाने की इच्छाशक्ति की कमी है और इसीलिए मैं बातचीत को अपनी मनचाही दिशा में जाते देखकर घबरा रही हूँ? या फिर मैं नवाब के साथ वैसा रिश्ता नहीं रखना चाहती जैसा उनका मकसद है? लेकिन नवाब का मकसद क्या है? ये तो मुझे ठीक से समझ नहीं आ रहा।
अपने मन में, उसने ईश्वर से मार्गदर्शन के लिए प्रार्थना की और शेख अब्दुल कादिर जिलानी की पवित्र आत्मा का आह्वान किया, जिन्हें एशियाई इस्लाम में संकट के क्षणों में सहारा और सहायता देने वाले के रूप में पूजा जाता है। उसने किसी तरह अपने होठों पर मुस्कान लाई, अपनी नज़रें झुका लीं और कुछ कहने ही वाली थी कि नवाब ने शायद उसकी झिझक को भांपते हुए बोलना शुरू किया। उन्होंने उसे कुछ न कहने का इशारा किया और कहने लगे: 'छोटी बेगम, कोई भी सौदा ऐसा नहीं है जो समय के आरंभ से अंत तक मीठा बना रहे।'
बोलने से पहले वह एक पल रुका। “कठोर और नरम, सूखा और गीला, मीठा और कड़वा, ये सब किसी भी यात्रा में, किसी भी यात्रा में, अनुभव होता है। लोग चीजों को समग्र रूप से देखकर निर्णय लेते हैं। इसीलिए मैं कहता हूँ: कम से कम कुछ समय के लिए मुझे आजमा कर देखिए। निःसंदेह, मैं आपकी इच्छाओं से बंधा नहीं हूँ, लेकिन निश्चित रूप से मैं खुद को इतना सक्षम भी नहीं पाता कि आपकी इच्छाओं से परे जा सकूँ।”
एक बार फिर, वज़ीर के मन में विद्रोह की लहर दौड़ गई। उसे ज़ोर से यह पूछने का मन हुआ: 'हाँ, लेकिन कब तक? उसके बाद मेरा क्या होगा?'
बहुत जल्द ही, उसके विचारों के सागर का जल उथल-पुथल से शांत हो गया, या कहें कि पूरी तरह शांत तो नहीं, लेकिन उन छोटी-छोटी लहरों जैसा शांत हो गया जो गहरे पानी में उठती हैं। अब तल में तूफान और बाढ़ थी, और सतह पर चमकती, आनंदित होकर उछलती-कूदती लहरों की छोटी-छोटी श्रृंखलाएँ थीं। यह बात उससे छिपी नहीं थी कि उस शाम उनकी मुलाकात में नवाब किसी स्थिर, दीर्घकालिक आधार पर मामलों का निपटारा करने के लिए बेहद उत्सुक था। शायद उसे लगता था कि वज़ीर के और भी चाहने वाले हैं और उसे डर था कि अगर वह उसे जल्दी अपने शयनकक्ष में नहीं लाया, तो आगे का रास्ता उतार-चढ़ाव और अनिश्चितताओं से भरा हो सकता है। कौन जाने, वज़ीर का दरवाज़ा किसी और के लिए खुल जाए, चाहे दबाव में या उसकी सहमति से।

वज़ीर खुद को दोहरी दुविधा में फंसा हुआ पा रही थी। वह अब छह साल पहले वाली चौदह साल की खूबसूरत लड़की नहीं थी, जो बेपरवाह और परिणामों की परवाह किए बिना, प्यार पाने की चाह में डूबी हुई थी और प्रेम और रोमांच की भावनात्मक लहर में बह रही थी। न ही शम्सुद्दीन अहमद—वज़ीर के लिए अपने शारीरिक और मानसिक आकर्षण और अपने व्यवहार से वज़ीर के दिल को सुकून देने के बावजूद—प्यार का वह अनोखा, रहस्यमय सागर था जिसकी लहरों ने वज़ीर को पहले दिन से ही फिरंगी मार्स्टन ब्लेक के इशारों और संकेतों के रूप में भिगो दिया था। घर छोड़ने के बाद से उसने जीवन के कई उतार-चढ़ाव देखे थे, रिश्ते बनाए थे, घर बसाया था और परिवार संभाला था। अब वह प्यार और प्रेम के सागर में, चाहे आँखें बंद हों या खुली, डुबकी

लगाने को तैयार नहीं थी, चाहे असल में ऐसा करने से पहले वह उसे कितना भी आसान और सहज क्यों न लगता हो।

लेकिन सबसे ज्वलंत प्रश्न, सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न, वही था जो वज़ीर के दिल ने उससे सबसे पहले पूछा था: शम्सुद्दीन अहमद के लिए 'आजीवन कारावास' शब्दों का क्या अर्थ था?

नवाब धैर्य और आशा भरी निगाहों से उसे देख रहा था। पिछले आधे घंटे में, एक दरवाजे का पर्दा एक-दो बार थोड़ी देर के लिए हिला था। शायद नौकर यह जानना चाहते थे कि भोजन परोसने का आदेश कब दिया जाएगा। लेकिन मेज़बान और मेहमान, दोनों ही अपनी-अपनी दुनिया में खोए हुए थे। दोनों को ही इस कैद से निकलने का कोई रास्ता नहीं सूझ रहा था। वज़ीर ने मन ही मन कहा, 'वज़ीर, प्यारी, अपने उद्देश्य की ओर कुछ करो; यह तो हर किसी की अपनी-अपनी दुनिया है।' उसके दिल की आवाज़ इतनी तेज़ थी कि वह एक पल के लिए पीली पड़ गई, इस डर से कि कहीं नवाब ने उसे सुन न लिया हो।

उसने अचानक फैसला लिया और उठ खड़ी हुई। नवाब एक पल के लिए अपना आपा और सोचने-समझने की शक्ति खो बैठा। ये क्या हो रहा है? यहाँ क्या हुआ? और फिर, उसके भीतर आक्रोश की एक तीखी लहर दौड़ गई। क्या छोटी बेगम बिना अनुमति लिए या बातचीत पूरी किए इस तरह उठ खड़ी होगी? वह अपनी जगह से हिलने और उठने ही वाला था, या कुछ कहने ही वाला था, कि वज़ीर खानम ने लखनऊ के लोगों की तरह विनम्रता दिखाने के लिए हाथ जोड़कर कहा, 'उसी दिन, पहले ही दिन, मैंने आपको अपने हृदय में अपना स्वामी, अपना राजकुमार, अपना मित्र स्वीकार किया था; लेकिन आपको किसी चीज की जरूरत नहीं है और मैं एक भिखारी हूँ। यह आपकी असीम उदारता और मेरे प्रति आपका प्रेम ही है कि आप मुझे मेरे ही स्वरूप से मांगते हैं, और वह भी मुझे धनी घोषित करके और मेरी ओर भिक्षापात्र बढ़ाकर। पुरस्कार देने वाले होते हुए भी आप मेरे सामने भीख मांगने वाले के वेश में प्रेम का खेल खेलते हैं।' यह सेविका पहले ही नि:शुल्क आपको समर्पित है और अपना सारा जीवन आपकी माला जपते हुए बिताने को तैयार है, लेकिन...

नवाब अब अपनी जगह से आधा उठकर चिल्लाया, “लेकिन? लेकिन क्या? वज़ीर खानम, आप मुझसे और क्या चाहते हैं? क्या आपके मन में मेरे प्रति कोई झिझक या बाधा है? क्या आपको मुझ पर किसी तरह का संदेह है? यदि नहीं, तो आपके इस कथन का क्या अर्थ है कि आप अपना पूरा जीवन केवल मेरा नाम लेकर व्यतीत करेंगे? और क्या आपको यह नहीं सोचना चाहिए कि कोई व्यक्ति कितना लंबा जी सकता है और हमें जो थोड़े से दिन जीवन के लिए दिए गए हैं, उनकी वास्तविक अवधि कितनी हो सकती है?”

नवाब अब पूरी तरह से खड़े हो गए, वज़ीर खानम के करीब आए और धीरे से अपना दाहिना हाथ उनकी कमर में डाल दिया। उतनी ही कोमलता से उन्होंने उन्हें अपनी ओर खींचने की कोशिश की और उन्हें चूमने ही वाले थे कि वज़ीर एक कदम पीछे हट गईं, अपने हाथों को अपनी छाती पर रखकर बोलीं, 'महाराज, मेरे पास जो कुछ भी है, वह आपका है। अगर मुझसे कहा जाए कि मैं आपके लिए अपना सब कुछ, यहाँ तक कि अपना प्राण भी कुर्बान कर दूँ, तो मैं मुस्कुराते हुए और दिल में खुशी लिए उस नदी को पार कर जाऊँगी। मैं आपकी हो सकती हूँ, भले ही हम दोनों

अपना जीवन अकेले और अलग-अलग बिताएँ। अगर महाराज मुझे अपनी सुनहरी छाँव में लेना चाहें, तो मैं अपने सौभाग्य पर गर्व करूँगी। फिर भी, अगर महाराज थोड़ा रुककर इस मामले पर विचार करें, तो मैं इसे सबसे बड़ा एहसान मानूँगी।'
उस समय नवाब ने एक ऐसी चमक, एक प्रकार का गर्व और आत्म-संयम देखा, जिसे उन्होंने अपने मन में उनकी आत्मा की शक्ति न सही, बल्कि उनकी आंतरिक शक्ति के रूप में वर्णित किया। उन्होंने वज़ीर की आँखों में देखने की कोशिश की, लेकिन उनके चेहरे से निकलती उस प्रज्वलित रोशनी को सहन नहीं कर सके। उन्होंने अपनी नज़रें झुका लीं और कहा, 'छोटी बेगम, मुझे नहीं लगता कि अब विचार करने के लिए कुछ बचा है। फिर भी, कृपया आदेश दीजिए। मैं सुनने के लिए तैयार हूँ।'
‘मेरी कहानी और मेरी वर्तमान स्थिति परम पूज्य से छिपी नहीं है। एक समय मैं कुछ था, लेकिन... मेरे भाग्य ने, या शायद मेरे हृदय ने, मुझे कुछ और बना दिया, मुझे कहीं और ले गया, किसी ऐसी जगह जहाँ मैं नहीं जानता था। अपने आप को और अपने अभिमान को देखते हुए, मैं कुछ था, और दूसरों की दृष्टि में काफी महत्वपूर्ण था। लेकिन इन सबके बावजूद, आकाश के जल्लाद ने मेरे साहब का सिर काट दिया और उसे राजपूताना के मृत्यु-गृह में फेंक दिया और मेरे बच्चों को मुझसे छीन लिया। यह न तो आपकी गलती थी और न ही मेरी, बस यही हुआ। मेरा भाग्य अब मेरे काफिले को—थका हुआ और रास्ते में पीछे छूटा हुआ—आपके उच्च द्वारों तक ले आया है, इसलिए अब इसे ठहरने और आराम करने के लिए स्थान चाहिए।’

नवाब के चेहरे पर हल्की सी स्वीकृति भरी मुस्कान खिल उठी; उसकी आँखों में स्नेह की झलक दिखाई दी। वह फिर से थोड़ा आगे बढ़ना चाहता था और इस बार वज़ीर को अपनी बाहों में लेने में असफल नहीं होना चाहता था; लेकिन वज़ीर दृढ़ता से अपनी जगह पर डटी रही, मानो उसे हतोत्साहित करने के लिए ऐसा कर रही हो। फिर भी, उसने अपना हाथ बढ़ाया और वज़ीर के वस्त्र के किनारे को छूते हुए कहा, 'प्रिय महिला, आपने मुझे किसी चीज़ की ज़रूरत नहीं और खुद को भिखारी बताया है। क्या आपने फ़ारसी कवि को यह कहते नहीं सुना:
हे स्वामी, आपको अपने चांदी और सोने पर गर्व है, आप अत्यंत कंगाल हैं, वास्तव में स्वामी वही है जो प्रेम और निष्ठा में कंगाल नहीं होता।
ईश्वर की कृपा से, आप मुझे प्रेम और निष्ठा में कंजूस नहीं पाएंगे। जीवन और मृत्यु ऐसी चीजें नहीं हैं जिनके बारे में निश्चितता हो सकती है। मैंने यह पहले भी कहा है और मैं यह भी जानता हूँ कि... भाई वल्लाह, आप मीर साहब की एक महान आयत से तो परिचित होंगे ही?
नवाब शम्सुद्दीन अहमद कुछ देर रुके, मानो किसी जवाब की प्रतीक्षा कर रहे हों। वज़ीर पहले की तरह ही खड़ी थीं, उनकी बांहें छाती पर थीं, उनकी नज़रें ज़मीन पर टिकी थीं, लेकिन जैसे ही नवाब ने उनके वस्त्र के किनारे को छुआ, अनजाने में ही वह उनके और करीब आ गईं। अब दोनों एक-दूसरे के काफी करीब खड़े थे।
‘मीर साहब की कौन सी आयत के बारे में आप जानना चाहते हैं? भले ही मैंने इसे पहले सुना हो, लेकिन उनके पवित्र मुख से इसे सुनना बिलकुल अलग अनुभव होगा।’

इस बार नवाब ने अपने हाथ सीने पर रखे और प्रार्थना की मुद्रा में जोड़ लिए। फिर उन्होंने एक मधुर स्वर में पाठ किया जिसमें हल्की सी गहरी झंकार थी:
हे भगवान, यह संसार एक जुआघर है; यहाँ जो प्रकट होता है, वह वास्तव में अप्रकट है; यदि तुम यहाँ आओगे, तो पासे की पहली ही चाल में अपना अस्तित्व खो दोगे।
नवाब कुछ पल के लिए चुप हो गए, मानो चिंतन में डूबे हों। 'वज़ीर खानम, आपने पासा फेंका और शुरुआत में आपके मोहरे बहुत अच्छे से चले। अगर वे बीच में कहीं अटक गए और रुक गए तो क्या हुआ? कृपया आइए और सार्वभौमिक जुआघर में एक और पासा फेंकिए। फ़ारसी कहावत के अनुसार, "अब लक्ष्य साधने की बारी लीजिए, क्योंकि आपका मोहरा अब अंतिम से पहले वाले घर में है।" ईश्वर समस्याओं को हल करने में सबसे कुशल हैं।'
वज़ीर के भीतर क्रोध की लहर उठ रही थी, मानो सिसकियों से उसका गला भर आएगा। तो नवाब को विवाह की स्थायीता की इच्छा नहीं थी। वह तो केवल फल का खरीदार था, पेड़ का नहीं। लेकिन इस बात पर इतनी निराशा और नाराज़गी क्यों? आशा और निराशा तो हमेशा साथ-साथ चलती हैं। नवाब अपनी अरबी और फ़ारसी शैली में जो कह रहा था, वह उससे कुछ अलग नहीं था जो मैं जानती थी। ये तो खरीद-फरोख्त का मामला था, आत्म-समर्पण या सच्चे मिलन का नहीं।
शम्सुद्दीन अहमद ने वज़ीर की चुप्पी को सहमति मान लिया। उन्होंने सोचा कि अब वज़ीर को मेरे सामने मौजूद सवालों से कोई परेशानी नहीं है। मैंने अपना मन स्पष्ट कर लिया है और वज़ीर को इस बारे में कुछ और नहीं कहना है। हालांकि अभी तक पूरी बात मेरे सामने नहीं आई है, अगर वज़ीर मेरा प्रस्ताव मान भी लेते हैं, तो मुझे चिंता करने की कोई ज़रूरत नहीं है। समय आने पर सब कुछ स्पष्ट हो जाएगा। इसलिए इस पर और सोचने की कोई ज़रूरत नहीं है।
उसने वज़ीर की ओर देखते हुए कहा, 'तो महोदया, क्या हम भोजन परोसें? आप किस समय भोजन करना चाहेंगी?'
वज़ीर को लगा जैसे नवाब से उसका पर्दा हट गया हो। पर उसे आश्चर्य नहीं हुआ। वह भली-भांति जानती थी कि शरीर और आत्मा की एकता से औपचारिक, भले ही सुखद, परिचय के बीच अनेक अंधकार और अनेक अवस्थाएँ और स्तर के अलगाव छिपे होते हैं। शोक करना स्वाभाविक था, क्योंकि शोक जीवन का अभिन्न अंग है। पर यहाँ आश्चर्य का कोई कारण नहीं था, विशेषकर उसके जैसी महिलाओं के लिए जो हमेशा अपने निर्णय स्वयं लेती थीं।
'जब भी माननीय महोदय चाहें, हमें भोजन दे सकते हैं,' उसने व्यंग्य भरे लहजे में कहा। 'मैं तो यहाँ बस एक भिखारी हूँ।'
नवाब के माथे पर थोड़ी सी नाखुशी झलकी, लेकिन वह तुरंत गायब हो गई। उन्होंने ताली बजाई, और जब राजदंड धारण करने वाला अंदर आया और उसने सलाम किया, तो उन्होंने भोजन कक्ष में भोजन परोसने का आदेश दिया।

33

वज़ीर खानम अपनी निराशा को स्वीकारने की कोशिश करती है, जबकि नवाब उसे रात वहीं रुकने का सुझाव देता है।

वज़ीर और शम्सुद्दीन अहमद दोनों को बाद में याद नहीं रहा कि उस रात उन्होंने खाने में क्या खाया था। मार्स्टन ब्लेक से मिली ट्रेनिंग की बदौलत, वह बातचीत करने, हल्के-फुल्के मज़ाक करने और खाने के दौरान दोस्ताना बातचीत करने की कला में पूरी तरह माहिर हो चुकी थीं। उन्हें यह भी अच्छी तरह पता था कि भारतीय शिष्टाचार के अनुसार, भोजन के प्रति सम्मान दिखाने के लिए खाते समय ज़्यादातर चुप रहना ज़रूरी है, सिवाय कभी-कभार भोजन की तारीफ़ करने के। शम्सुद्दीन अहमद अक्सर प्रेम और लालसा से भरी निगाहों से उसे देखते और उसे कुछ बेहतरीन पकवान और खाने के लिए प्रेरित करते। शायद उन्हें लगा कि अब बात करने के लिए कुछ नहीं बचा है और रात से संबंधित मामलों पर भोजन के बाद जल्द ही चर्चा हो जाएगी। इसलिए उन्होंने उसे खिलाने पर ध्यान केंद्रित किया, लेकिन जब उन्होंने उसकी थाली में केसर के रंग और सुगंध से भरपूर पुलाव के बड़े-बड़े चम्मच परोसे, जिस पर तरह-तरह के मेवों के टुकड़े डाले गए थे, तो उसने विरोध किया, 'बस कीजिए, कृपया बस कीजिए! महाराज, आप तो अत्याचार पर अत्याचार कर रहे हैं! मैं इतना कैसे खा सकती हूँ?'

नवाब चिल्लाया, ‘भाई, सारे पकवान वैसे ही रखे हैं जैसे परोसे गए थे, मानो चखे ही न हों।’ ‘मुझे कहना पड़ेगा कि खाना तुम्हें बिल्कुल पसंद नहीं आया! तुम तो नन्हे पक्षियों की तरह खाने को चोंच मार रहे हो। माना कि तुम बेहद दुबले-पतले हो, लगभग चावल के छिलके जैसे, लेकिन तुम्हें भी शरीर और आत्मा के रिश्ते को समझना चाहिए!’

‘आपसे जुड़ा कोई भी रिश्ता आपकी नौकरानी के लिए बहुत प्यारा है, चाहे वह उसकी जान ही क्यों न हो। लेकिन मैं यह कैसे बर्दाश्त कर सकती हूँ कि आप खाली पेट मेज़पोश से उठें और मुझे बार-बार खाने के लिए मजबूर करें?’

‘ओह, स्वामिनी, मैं आपको भला कैसे विवश कर सकता हूँ? मैं तो बस प्रसन्न हृदय से निवेदन कर सकता हूँ और नेक इरादे से प्रार्थना कर सकता हूँ।’

नवाब की टिप्पणी का अंतर्निहित अर्थ वज़ीर से छिपा नहीं था, लेकिन उन्होंने उसकी सूक्ष्मता को न समझने का नाटक करते हुए एक फ़ारसी कहावत उद्धृत की, 'जी महोदय। हम सभी जानते हैं कि प्रसन्न मन वाला मजदूर अधिक काम करता है।' शम्सुद्दीन अहमद ने भी वज़ीर के छिपे अर्थ को अनदेखा करते हुए कहा, 'महोदया, आपके विपरीत, मैं शरमाया नहीं हूँ। आपको देखना ही मेरे लिए भोजन के समान है, इसलिए मैं खुलकर आपके दर्शन का आनंद ले रहा हूँ और ऐसा महसूस कर रहा हूँ जैसे मेरा पेट भर गया हो।' फिर उन्होंने अठारहवीं शताब्दी के फ़ारसी कवि दराब बेग जुया की एक कविता बड़े चाव से उद्धृत की।

तुम्हारा शरीर, सिर से पैर तक, खाने में स्वादिष्ट लगता है; तुम्हें आँखों से ही चखा जा सकता है।

वज़ीर शरमा गया, लेकिन नवाब रुका नहीं। शर्म और शरारत से भरी हल्की सी हंसी के साथ वह आगे बोला, 'हालाँकि मैंने तुम्हारा चेहरा, हाथ-पैर बस थोड़ा सा ही देखे हैं, हम जैसे हमेशा भूखे रहने वालों के लिए कुछ और देखना ज़रूरी था। लेकिन... भाई, जितना मैंने चखा है, मेरा पेट भर

गया है, हालाँकि मुझे तृप्ति का एहसास नहीं है।'
वज़ीर को एक अंग्रेज़ी कहावत याद आई जो अबी मेमसाहिब अक्सर तब इस्तेमाल करती थीं जब बच्चे रात के खाने में या किसी और मौके पर अपने हिस्से से ज़्यादा कुछ माँगते थे। उन्होंने उस कहावत का अपनी हिंदी में अनुवाद किया और मुस्कुराते हुए कहा, 'महोदय, आपकी पवित्र आँखों में आपके पवित्र पेट से कहीं ज़्यादा क्षमता है।'
शम्सुद्दीन अहमद को उसकी बात समझने में थोड़ा समय लगा। फिर वह खुशी से हँस पड़ा और बोला, 'भाई वल्लाह! क्या गजब का जवाब है! ऐसा लग रहा है जैसे तुम्हारे होंठों को चूम लूँ।'
शाम की कड़वाहट वज़ीर के दिल से काफी हद तक दूर हो चुकी थी। रात के खाने के दौरान, वह अपने दिल को नवाब के महल के दरवाजे पर जो कुछ भी पेश किया जा रहा था, उसे स्वीकार करने के लिए तैयार कर रही थी। नवाब की इच्छाओं की सुनहरी, भले ही क्षणिक छतरी, अकेले और बेसहारा होकर बूढ़े होने की लंबी छाया से हमेशा बेहतर थी। उसका दिल तब हल्का हुआ जब उसने यह फैसला किया कि पचीसी की तरह घर-घर भटकना (यहाँ वह अनजाने में ग़ालिब का हवाला दे रही थी) उस स्थिति से किसी भी तरह बेहतर नहीं था जहाँ उसके सभी मोहरे (अब वह मीर की बात दोहरा रही थी) असुरक्षित घरों में थे और घर का सहारा बहुत दूर था। उसके मोहरे अभी अपनी मंजिल के करीब नहीं थे, लेकिन कम से कम सातवें घर में तो थे, और ग्यारह या सत्रह तक पहुँचने की संभावना भी थी। यह सत्रह से अठारह में गिरने और खेल के उसके खिलाफ खत्म होने जैसा नहीं था।

उसने नवाब की ओर कामुक उदासीनता से भरी एक विशेष दृष्टि से देखा और कहा, 'माननीय महोदय, इस मामले से अपना हाथ धो लीजिए, इससे कुछ नहीं होने वाला।'
शम्सुद्दीन अहमद फिर से हर्ष और प्रसन्नता से हँसे। ‘मित्र, अगर मैं तुम्हें पा लूँ, तो मुझे यकीन हो जाएगा कि मैंने गंगा में स्नान कर लिया है और मेरे सारे दुख दूर हो गए हैं।’ फिर, कुछ गंभीरता से, उन्होंने आगे कहा, ‘इस समय मेरे सिर पर तड़प भरे आँसुओं का घड़ा है। बूँदें छिटक रही हैं, मेरा चेहरा धो रही हैं और मेरी आँखों को नम कर रही हैं।’
‘महामहिम, आपका नाम और आपका राज्य एक दूसरे के पूर्णतया अनुरूप हैं। आपका नाम शम्स है, और सूर्य की आँखों में कभी आँसू नहीं आते...’ यहाँ वे शायद जानबूझकर अठारहवीं सदी के कवि ख्वाजा मीर दर्द की एक उर्दू कविता का जिक्र कर रही थीं। ‘वास्तव में, सच्चाई यह है कि यदि आप न होते, तो वर्षा न होती। आप ही गीले और सूखे दोनों के स्वामी हैं।’
‘भाई! ये चुटीले शब्दों का आदान-प्रदान तो आनंददायक है—लेकिन साथ ही रोमांचक भी। क्या हमें हमेशा ऐसे ही रहना चाहिए, हंसते-बोलते, लेकिन मुंह सूखा हुआ?’
इससे पहले कि वज़ीर कुछ जवाब दे पाते, एक नौकर अंदर आया और पूछा कि क्या महज़ साहब और खानम साहब के लिए फल, हुक्का और पान दीवान-खाने में रखे जाएँ, या फिर इन्हें यहीं भोजन कक्ष में परोसा जाए? वज़ीर ने इस मौके का फायदा उठाकर इस विषय पर आगे की बात टाल दी और कहा, ‘महान सेवकों की थाली खाली रह गई है। अच्छा होगा अगर आप कम से कम कुछ मिठाई और फल खा लें।’

अगर मेरा भिक्षापात्र भर जाए तो मैं तुम्हारी भलाई के लिए दुआ करूंगा। अब हुक्का और मिठाई की बात हो, तो मुझे लगता है कि हमें दीवान-खाने चलना चाहिए। मैं पर्दे उठवा दूंगा ताकि माहौल और भी खुशनुमा हो जाए।

दोनों ऊंचे कक्ष में लौट आए। ताजे और सूखे मेवों और तरह-तरह के सूखे हलवे से भरी थालियां लाई गईं। एक हुक्का लाने वाले ने नवाब को हुक्का भेंट किया; दूसरे ने चांदी की थाली में बनारस के सफेद पान के पत्ते रखे, जिन्हें शंकु के आकार में लपेटकर सोने की पत्ती में लपेटा गया था। नवाब ने खाने-पीने की चीजें तो नहीं लीं, लेकिन हुक्का का आनंद बड़े ही प्रसन्नतापूर्वक लेने लगे।

वज़ीर ने हुक्का पीने से इनकार कर दिया, यह कहते हुए कि उन्हें इसमें कोई रुचि नहीं है, लेकिन उन्होंने पान का कोन स्वीकार कर लिया। जब वह छोटी थीं, तब उन्हें कभी-कभार हुक्का पीने में कोई आपत्ति नहीं थी। लेकिन जब उन्हें मार्स्टन ब्लेक से पता चला कि साहिबों में महिलाओं द्वारा हुक्का पीना अनुचित माना जाता है, तो उन्होंने स्वेच्छा से इसे छोड़ दिया और फिर कभी इसकी इच्छा नहीं की। शम्सुद्दीन अहमद चुपचाप हुक्का पीते रहे। वास्तव में, दोनों कुछ देर तक चुप रहे, लेकिन यह उस तरह की चुप्पी थी जो पुराने दोस्तों की शांत संतुष्टि को दर्शाती है, जिन्हें किसी विषय पर बात करके या हल्की-फुल्की हंसी-मजाक करके दिखावा करने की कोई ज़रूरत नहीं थी, क्योंकि उन्हें अपने आपसी विश्वास और स्नेह को साबित करने की कोई आवश्यकता नहीं थी।

ओस की लगातार बूंदों से रात में नमी छा रही थी; काफी रात हो चुकी थी और वज़ीर यह तय नहीं कर पा रही थी कि जाने का समय हो गया है या नवाब के इशारे का इंतज़ार करना चाहिए। या क्या कोई ऐसा तरीका था जिससे वह यह बता सके कि वह रात यहीं रुकना चाहती है? सन्नाटा असहनीय रूप से लंबा होने ही वाला था कि नवाब ने ज़ोर से ताली बजाकर उसे तोड़ दिया। तुरंत ही एक राजदंडधारी अंदर आया और ऐसा लगा मानो वह अपने बुलावे का मकसद जानता हो। बिना किसी आदेश के ही वह नवाब के पास पहुँचा, झुककर सलाम किया और उनके कान में कुछ फुसफुसाया।

नवाब ने एक संक्षिप्त इशारे से नौकर को विदा किया और वज़ीर से धीरे से कहा, “आपके सभी नौकरों ने भोजन कर लिया है।” उन्होंने अपनी प्रसिद्ध, आकर्षक मुस्कान बिखेरी। “यदि आप अब जाना चाहें, तो आपको अनुमति है, लेकिन मेरी ओर से नहीं। मेरा हृदय कहता है कि अब रात काफी ढल चुकी है, और यद्यपि आप यहाँ से ज्यादा दूर नहीं रहते, और मेरे लाठीवाहक निश्चित रूप से आपके साथ जाएंगे, फिर भी जब कोई वास्तविक आवश्यकता नहीं है तो रात में बाहर जाने का जोखिम क्यों उठाना?”

वज़ीर निमंत्रण स्वीकार करने को तैयार भी थी और अनिच्छुक भी। उसके मन पर छाए उदासी के बादल अब छंट चुके थे। वह यह भी जानती थी कि देर-सवेर, और संभवतः जल्द ही, उसे नवाब से ऐसा निमंत्रण मिलना ही पड़ेगा। लेकिन हवेली के महिलाओं वाले हिस्से में कदम रखना उसे बिल्कुल पसंद नहीं था। वह ज़नाना के तौर-तरीकों और व्यवस्था से अनभिज्ञ थी। और अगर उसकी शादी नवाब से नहीं होनी थी, तो वह परिसर से दूर रहना ही बेहतर समझती थी।

नवाब ने शायद उसके चेहरे पर दिख रहे संदेह को भांप लिया; उन्होंने कहा, 'हमारा अतिथिगृह हवेली से पूरी तरह अलग है। यह अपने ही परिसर में बना है और हर तरह से सुरक्षित है। इसमें सभी सुख-सुविधाएं मौजूद हैं, और आपके कर्मचारी रात भर आपके पास ही रहेंगे।'
वज़ीर ने कोई जवाब नहीं दिया। उनके चेहरे पर राहत और सुकून के भाव छा गए, और यही काफी था। बड़े सोच-विचार के साथ उन्होंने पान के डिब्बे की ओर हाथ बढ़ाया, एक पान निकाला और उसे मुंह में डालते हुए कहा, 'यह बहुत अच्छा है। आपकी दिव्य प्रकृति जो चाहे, वही हो। बिस्मिल्लाह।'
वह उठीं; अब नवाब को कुछ पल रुककर यह सोचना पड़ा कि क्या 'आपके परम स्वभाव की जो इच्छा हो' इस वाक्यांश के दो अर्थ हो सकते हैं। उन्होंने निर्णय लिया कि हाँ, हो सकते हैं, लेकिन उन्होंने इसे ज़ाहिर नहीं किया। उन्होंने गदाधारी और मशालधारी को बुलाने के लिए ताली बजाई और निर्देश दिया कि खानम साहब को पूरे सम्मान और सुरक्षा के साथ अतिथिगृह तक ले जाया जाए।
वज़ीर झुके, तीन सलाम किए और बोले, 'आज इस सेविका का भाग्य ऐसा था कि उसे आज के भोज में उपस्थित होने की अनुमति मिली। अल्लाह मुझे ऐसे भोज और ऐसी संगति लाखों बार प्रदान करे।'
अगली मुलाकात के समय या ऐसी किसी संभावना के बारे में उन्होंने कोई संकेत नहीं दिया। गंभीर भाव से शम्सुद्दीन अहमद ने अपना दाहिना हाथ अपनी बाईं छाती पर रखा, अपना सिर थोड़ा झुकाया और कहा, 'मेरा दिल खुश हो गया।' फिर उन्होंने एक फ़ारसी कहावत कही, 'आपका भी अच्छा समय आए, क्योंकि आपने मुझे अच्छा समय दिया। ईश्वर की कृपा से, हमारी ऐसी और भी मुलाकातें होंगी।'
इस आखिरी वाक्य में प्रश्नवाचक भाव का हल्का सा संकेत था, और इस बार वज़ीर ने अपना इरादा स्पष्ट कर दिया। उतने ही गंभीर भाव से उसने फिर सलाम किया और कहा, 'महामहिम, इससे मेरा महत्व बढ़ जाता है। सब कुछ आप पर निर्भर करता है। मैं आपकी इच्छा के विरुद्ध नहीं जा सकती।'
इसके बाद, आगे स्पष्टीकरण और व्याख्याएँ अनावश्यक हो गईं। वज़ीर खानम कुछ कदम पीछे हटीं, फिर मुड़ीं और अपने खास, सहज अंदाज़ में चलने लगीं—जैसे कि बहुत सावधानी से चल रही हों, लेकिन इतनी सहजता से कि मानो पानी पर चल रही हों—वे मुकुट वाले द्वार की ओर बढ़ीं। द्वार के पास पहुँचकर वे फिर मुड़ीं। नवाब शम्सुद्दीन अहमद उन्हें एक विशेष तल्लीनता से देख रहे थे। जब उन्होंने वज़ीर को मुड़ते देखा, तो उन्होंने अपना दाहिना हाथ फिर से अपनी बाईं छाती पर रखा और जहाँ थे वहीं से बोले: 'मैं तुम्हें अल्लाह की देखरेख में सौंपता हूँ।'

हबीब-उन निसा, वज़ीर खानम को रात की तैयारी में मदद करते हैं, और नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान उनके शरीर और आत्मा को अभिमान और संयम के सभी संभव पाठ पढ़ाते हैं।

वज़ीर भव्य ढंग से अतिथिगृह पहुँचीं: उनके दाहिनी और बाईं ओर मशालें लिए दो मशालधारी थे, और उनसे थोड़ा आगे एक लाठीधारी था। इसी प्रकार, उनके पीछे, थोड़ा बाईं ओर एक और लाठीधारी था। सभी नौकरों ने सलाम किया और द्वार पर पहुँचते ही चले गए।

हालांकि इसे गेस्ट हाउस कहा जाता था, लेकिन वास्तव में यह एक भव्य हवेली की तरह थी, फर्क सिर्फ इतना था कि यह चारदीवारी से घिरी नहीं थी और इसके सामने कोई बगीचा नहीं था। यहाँ बस एक रोशन फव्वारा था, और उसके चारों ओर तारे के आकार में फूलों की क्यारियाँ थीं, जो लाल बलुआ पत्थर की सीमाओं से एक-दूसरे से अलग थीं। सभी क्यारियाँ मौसम के फूलों और कुछ बारहमासी पौधों से पूरी तरह खिली हुई थीं।

अंदर से रोशनी छनकर आ रही थी, लेकिन अतिथिगृह का दरवाजा बंद था। जैसे ही वज़ीर का जुलूस पहुँचा, दरवाजा बिना आवाज़ किए खुल गया, जिससे दहलीज और उसके पार काफी रोशनी फैल गई। वज़ीर ने दरवाजे के ठीक अंदर एक महिला को खड़ा पाया। चूंकि रोशनी महिला के पीछे थी, इसलिए वज़ीर उसके चेहरे की विशेषताओं को नहीं पहचान सके, लेकिन वह सभ्य मुस्लिम महिलाओं की तरह कपड़े पहने हुए थी और उसकी उम्र लगभग युवावस्था और मध्य आयु के बीच लग रही थी। महिला एक कदम आगे बढ़ी, वज़ीर के सामने झुकी और तीन सलाम करते हुए बोली, 'खानम साहब, आपका हार्दिक स्वागत है, अहलान व सहलान।' उसने औपचारिक अरबी वाक्यांश का प्रयोग किया, जो आज भी मुस्लिम जगत में प्रचलित है; जिसका शाब्दिक अर्थ है: 'आप हमारे परिवार के समान हैं; इसलिए निश्चिंत और सहज महसूस करें।' उसने आगे कहा, 'कृपया अंदर आइए। यह सेविका आपकी सेवा में है।'

वज़ीर समझ नहीं पा रही थी कि इतनी देर रात किस सेवा की ज़रूरत होगी या क्या सेवा दी जा सकती है, लेकिन जल्द ही उसे एहसास हुआ कि यह नवाब की सूझबूझ और कुशल प्रबंधन का उदाहरण था: उन्होंने एक बुद्धिमान, भरोसेमंद और घरेलू स्वभाव वाली महिला को वज़ीर की साथी के रूप में नियुक्त किया था, ताकि वज़ीर नए माहौल में ऊब या बेचैनी महसूस न करे, और अगर रात को सोने से पहले उसकी कोई दिनचर्या हो या उसे अचानक किसी चीज़ की ज़रूरत पड़े, तो वह उस महिला को खुलकर बता सके। उसने महिला का सलाम मुस्कुराते हुए स्वीकार किया और उसके पीछे-पीछे अतिथिगृह में चली गई। जिस शयनकक्ष में वज़ीर को ले जाया गया, वह अच्छी तरह से रोशन था, लेकिन दिखावटी नहीं। अब उसने देखा कि वह महिला मुग़लानी कहलाती थी: एक वरिष्ठ महिला की नौकरानी या परिचारिका। मुग़लानी ने गुलबदन नामक फूलों वाले रेशम की संकरी पतलून पहनी हुई थी, और उसका कुर्ता लंबा और सादा था, जो संगी कपड़े का बना था, वही कपड़ा जो पंडित नवल किशोर अपनी पतलून के लिए इस्तेमाल करते थे। उसका दुपट्टा हल्के हरे सूती कपड़े का था। उसके गले में सोने की एक चेन थी, जिसमें कोई रत्न या लटकन नहीं था, और कानों में सोने के सादे छल्ले थे। उसकी हथेलियों और नंगे पैरों के तलवों पर गहरे लाल रंग की मेहंदी से नाजुक फूलों की आकृतियाँ बनी हुई थीं। उसके दोनों पैरों

की दो-दो उंगलियों में चांदी की अंगूठियाँ थीं, जिनके सिरे बिच्छू के डंक की तरह मुड़े हुए थे—इसीलिए इसका नाम बिच्छुआ पड़ा, जो बिच्छू शब्द से लिया गया है—और चांदी का रंग मेहंदी के गहरे लाल रंग पर अद्भुत लग रहा था। पान खाने की आदत के कारण उसके होंठ भी गहरे लाल रंग के थे; उसके दांत मिसी नामक गहरे रंग के पाउडर से रंगे हुए थे।

कुल मिलाकर, मुग़लानी महिला बेहद खूबसूरत थी और उसके कपड़े उस पर बहुत जंचते थे। उसका चेहरा सौम्य और शालीन था, जो उसके अच्छे संस्कारों का संकेत देता था। उसकी उम्र लगभग चालीस रही होगी, लेकिन उन्नीस वर्षीय वज़ीर की नज़रों में वह काफी उम्रदराज़ लग रही थी। 'आपकी दासी का नाम हबीब-उन निसा है, लेकिन बेगमें मुझे हबीबा कहती हैं। आप मुझे मेरे पूरे नाम से पुकारिए, या हबीबा कहिए, या कोई और प्यारा नाम रख दीजिए जो आपको पसंद हो। मुझे सब चलेगा।' उसकी आवाज़ परिष्कृत और सुस्पष्ट थी, जिसमें मेवाड़ की झलक थी, साथ ही ब्रज की मिठास भी थी।

वज़ीर ने कहा, 'हबीबा एक अच्छा नाम है। मैं तुम्हें हबीबा कहकर बुलाऊंगा।'

हबीबा ने एक बड़ी कुर्सी की ओर इशारा करते हुए कहा, 'अगर आप थोड़ी देर यहाँ बैठना चाहें, तो मैं आपके जूते उतार दूंगी और आपके पैरों के तलवों और हथेलियों को धीरे से मल दूंगी और थपथपाऊंगी।'

वज़ीर एक पल के लिए असमंजस में पड़ गई। किसी को सुलाने या आराम दिलाने के लिए थपथपाना और मालिश करना जयपुर में भी प्रचलित था, लेकिन उसने इस काम के लिए कोई पूर्णकालिक नौकर नहीं रखा था। और ज़ाहिर है, हबीबा की तरह विनम्र और सौम्य स्वभाव वाला कोई वहाँ था ही नहीं। वज़ीर को अचानक एहसास हुआ कि वह बहुत थक चुकी है और उसका शरीर सुस्त पड़ गया है। उसे याद आया कि नवाब के साथ बिताई शाम, चाहे कितनी भी सुखद रही हो, आंतरिक तनावों से भरी हुई थी—कम से कम उसके लिए—और ये तनाव शारीरिक और मानसिक दोनों थे। अब जब शाम बीत चुकी थी, तो अत्यधिक थकान और खालीपन का एहसास उस पर एक गिरती हुई दीवार की तरह हावी हो गया था।

उसने कमरे पर एक नज़र डाली। कमरा मध्यम आकार से थोड़ा बड़ा था। उसके एक कोने में एक विशाल आबनूस का पलंग था, जिसके मोटे पैर भारतीय गुलाब की लकड़ी से बने थे और उन पर पीतल और चांदी की हल्की फूलों की नक्काशी की गई थी। इसके चारों सिरों पर आबनूस के खंभे थे और उसी लकड़ी के डंडे थे जिनका उपयोग पलंग को चारपाई में बदलने के लिए किया जाता था। आबनूस की पट्टियों पर हरे रेशमी पर्दे लटके हुए थे। राजपूतानी शैली में डिज़ाइन किया गया यह पलंग सामान्य से ऊँचा था। पलंग पर चढ़ने के लिए एक छोटा लेकिन चौड़ा स्टूल था, जो गद्देदार और साटन से ढका हुआ था।

कमरे के बीचोंबीच, दीवार से सटाकर, वह बड़ी पालकी रखी थी जिस पर उन्हें बैठने के लिए आमंत्रित किया गया था। यह पालकी मिश्रित शैली में बनी थी, जिसमें कुछ भारतीय और कुछ अंग्रेज़ी शैली की झलक थी। इसमें मखमली गद्दी लगी थी और इसके पैर भारी लेकिन सादे थे। इसकी लंबी भुजाएँ इतनी चौड़ी थीं कि उन पर प्याला, गिलास या थाली रखी जा सकती थी। बैठने वाला व्यक्ति अपने पैरों को फैलाने के लिए पालकी की भुजाओं का सहारा ले सकता था।

पालकी के बगल में दो छोटी चायदानियों पर एक थूकदान और एक धोने का तवा रखा था। कमरे में पूरे में नीले-हरे रंग का कालीन बिछा हुआ था और उसमें हरे रंग के झूमर और बल्ब लगे हुए थे; जिससे रोशनी ठंडी और आंखों को सुकून देने वाली थी। गर्म मौसम में इस्तेमाल होने वाले अंबरग्रीस के इत्र की हल्की खुशबू ने इस सुकून को और बढ़ा दिया था। सितंबर की शुरुआत थी और मौसम थोड़ा ठंडा हो रहा था। फिर भी, अतिरिक्त आराम के लिए पंखे की ज़रूरत थी। इसलिए कमरे के बीचोंबीच छत से दो मखमली पंखे लटकाए गए थे, जो मज़बूत लकड़ी के बीमों पर टिके हुए थे। पंखे को खींचने के लिए एक पहिया और पुली की व्यवस्था की गई थी, जो कमरे के बाहर लगी हुई थी।

पलंग के दूसरी ओर एक लंबी और नीची मेज थी। उस पर कुछ किताबें, कुछ ठंडे पेय, एक चांदी का पानदान और एक चांदी का मोमबत्ती स्टैंड रखा था। मोमबत्तियां बुझी हुई थीं, लेकिन मोमबत्ती स्टैंड के पास माचिस की डिब्बी थी। पालकी और पलंग के बीच एक और मेज थी, जिस पर एक और पानदान, सोने की परत चढ़ी एक छोटी सी ट्रे जिसमें सोने की पत्ती से ढके हुए तैयार पान के कोन रखे थे, रखी थी। एक लंबी ट्रे भी थी, जो मौसम के फलों से लदी थी, जिनमें एक भूरा काबुली खरबूजा प्रमुख था। ट्रे के बगल में कुछ छोटे चांदी के कटोरे और एक फल काटने वाला चाकू था जिसका हैंडल सोने की जड़ाई से सजा हुआ था। फर्नीचर या सजावट के नाम पर दो सादी लेकिन सुंदर कुर्सियों के अलावा और कुछ नहीं था।

वज़ीर जैसे ही कुर्सी पर बैठी, उसका ऊपरी शरीर कुर्सी की पीठ से छू गया। बिना सोचे-समझे ही वह उस बड़ी कुर्सी पर बैठ गई और अपनी बाहों को उसकी चौड़ी भुजाओं पर फैला दिया। विशाल पालकी में वह किसी गुड़िया जैसी लग रही थी और उसके चेहरे पर वही कोमल भाव था। अब वह हबीबा को ध्यान से देख रही थी और उसे महसूस हो रहा था कि उसके शरीर से गर्म और सुखद लहरें निकल रही हैं। इन लहरों में सुगंधों का एक मदहोश कर देने वाला मिश्रण था: वज़ीर के प्रति आदर, हार्दिक स्वागत, सम्मान के रीति-रिवाज, लेकिन साथ ही प्रेम और यहाँ तक कि अपनापन भी, मानो उसकी नज़रों में वज़ीर कोई अजनबी नहीं थी, रात भर या कुछ रातों के लिए मेहमान नहीं थी। बल्कि, वह हबीब-उन निसा की अपनी बेटी थी, जिसे अत्यंत प्रेम और समर्पण के साथ पाला-पोसा गया था, और वज़ीर का यह वर्तमान दर्जा हबीबा को अत्यंत प्रसन्न कर रहा था। वह वज़ीर को ऐसी आँखों से देख रही थी, जिनके हर कण में प्रेम, गर्व और उसके साथ एकात्मता की भावना जगमगा रही थी।

ऐसा क्यों? वज़ीर ने खुद से पूछा। मैंने हबीबा को आज ही देखा था; आज शाम से पहले तो मुझे उसके होने का भी पता नहीं था। शायद उसने हवेली में मेरे बारे में कुछ सुना होगा। और अगर नवाब मुझसे एक-दो हफ्ते के लिए अस्थायी व्यवस्था करना चाहता है, तो उसने मेरी सेवा के लिए एक वरिष्ठ नौकरानी को क्यों भेजा, जो मुझे इतनी स्नेह भरी नजरों से देखती है मानो मैं उसकी कोई करीबी रिश्तेदार हूँ? वज़ीर अचानक बेचैन और घबराई हुई महसूस करने लगी। आखिर यहाँ क्या हो रहा है? मैं आज रात यहाँ क्यों आई हूँ?

हालाँकि वज़ीर के माथे पर चिंता और तनाव की लकीरें हल्की थीं, हबीबा उसे मानो भली-भांति पढ़ लेती थी। वह हल्की सी शरमाई, आगे बढ़ी और अपने हल्के ऊपरी दुपट्टे से वज़ीर के चेहरे पर

पसीने की बूँदें पोंछीं, अपने हाथों से उसके सिर के दोनों ओर हाथ फेरे, अपनी सभी उंगलियों को अपने सिर और चेहरे के किनारों से छुआ और बोली, 'तुम्हारे लिए मेरी जान। मेरी बेगम को किस बात की चिंता है? मैं तो यही कहूँगी कि कुछ नहीं; तुम बहुत थकी हुई हो, बस। मुझे लगता है कि अगर तुम अंबरग्रीस का रस मिला हुआ पान चबा लो, तो तुम्हारा मन और मन तुरंत शांत हो जाएगा।'

हबीबा ने डिब्बे से पान का एक कोन निकाला और वज़ीर के विरोध के बावजूद उसे उसके मुंह में डाल दिया। जैसे ही उसने ठंडा कोन चबाना शुरू किया, उसे अंबरग्रीस की ठंडी खुशबू अपने पूरे शरीर में महसूस हुई। वह अनायास ही मुस्कुरा उठी। हबीबा पास आई और फिर से वज़ीर के चेहरे पर हाथ फेरने का अपना रिवाज पूरा किया और बोली, 'उस सबसे सुंदर चेहरे पर अचानक मुस्कानों की लहर दौड़ गई! ओह, कितना प्यारा चेहरा है! चांद में कुछ मिलावट हो सकती है, इसमें तो बिलकुल नहीं!'

वज़ीर की आवाज़ स्वभाव से ही धीमी और थोड़ी कर्कश थी। वह शर्माते हुए, लगभग फुसफुसाते हुए बोली, 'चली जा, मैडम हबीबा! आप मेरा मज़ाक उड़ा रही हैं, है ना? मैं कौवे की तरह काली हूँ, न मेरी नाक सुंदर है और न ही मेरे बाल लंबे हैं। सिर्फ़ आप जैसी औरतें ही मेरी तारीफ़ कर सकती हैं। कहावत है: एक आँख वाली औरत की तारीफ़ कौन करता है? उसका पति।'

हबीबा ने विनम्रतापूर्वक हाथ जोड़कर कहा, 'अल्लाह की कसम, हमारे बीच तीस प्रवचनों की कसम, क्या मैंने कभी इतना मोहक, मनमोहक चेहरा देखा है!'

वह वज़ीर के पीछे गई और धीरे-धीरे अपनी उंगलियों को उसकी पलकों और माथे पर फेरने लगी। ऐसा लगा मानो तितलियाँ अपने मुलायम पंख फड़फड़ा रही हों, या कोई चिड़िया अपने छोटे-छोटे पंख तेज़ी से फड़फड़ाते हुए फूलों का रस पी रही हो। वज़ीर को असाधारण सुकून और राहत का एहसास हुआ। उसकी आँखें बंद होने लगीं। थोड़ी देर बाद, उसे अपनी गर्दन और कंधों पर भी वैसी ही झनझनाहट महसूस हुई।

वह हल्की नींद में सो गई और उसे पता ही नहीं चला कि कब हबीबा की उंगलियों ने उसकी कमर, जांघों पर वही हरकतें कीं, उसके पैरों के तलवों तक गईं और फिर वापस उसकी बाहों और उंगलियों तक आ गईं। थोड़ी देर बाद, उसने हल्की चटकने की आवाज़ें सुनीं—उसकी उंगलियों के मखमली झटके—और वह जाग गई।

अब घुटन भरा कमरा उसे अपने घर जैसा परिचित लग रहा था, और हबीबा का चेहरा किसी नर्स की तरह दयालु, और किसी कुशल मध्यस्थ या माहिर दुल्हन-सजावट विशेषज्ञ की तरह विचारशील और पेशेवर था। उसकी मुस्कान इतनी घरेलू, किसी विश्वासपात्र की तरह, और इतनी दिल को छू लेने वाली थी कि वज़ीर ने सहज ही हाथ बढ़ाकर उसे अपनी ओर खींच लिया और अपने साथ कुर्सी पर बैठा लिया। लेकिन जैसे ही हबीबा ने देखा कि वज़ीर जाग गई है, वह किसी पर्दे के पीछे गायब हो गई। वज़ीर को एहसास हुआ कि उसके कमरे से लगा हुआ एक शौचालय और शौचालय ज़रूर होगा। शायद हबीबा वहीं हो।

कुछ मिनटों बाद जब हबीबा लौटी, तो वज़ीर ने देखा कि उसका अनुमान सही साबित हो रहा है: हबीबा दो गीले, गर्म तौलिये लिए हुए थी। उसने बड़ी सहजता से वज़ीर के चेहरे, गर्दन, कंधों,

हाथों और पैरों को उन गुनगुने तौलियों से रगड़ा, जिससे उसकी मांसपेशियों की जकड़न दूर हो गई और पसीने का कोई भी निशान या धूल मिट गई। वज़ीर को तौलियों में बडेलियम के इत्र की हल्की सी खुशबू महसूस हुई। पहले तो यह थोड़ी भारी लगी, लेकिन जल्द ही हल्की और ताजगी भरी हो गई। उसके शरीर में नई ताजगी आ गई।

'उस दरवाजे के पीछे वॉशरूम है,' हबीबा ने इशारा करते हुए कहा। 'और उससे लगा हुआ है... शौचालय। अगर आप उसका इस्तेमाल करना चाहें, तो मैं आकर आपकी पीठ मल सकती हूँ। आपकी पीठ बहुत नाजुक है!'

मार्स्टन ब्लेक के साथ बिताए समय ने उन्हें कुछ बातें सिखाईं या उनकी कद्र करना सिखाया। उदाहरण के लिए, कभी-कभी वह दरवाजा खटखटाकर बाथरूम में आ जाते थे जब वज़ीर वहाँ नहा रही होती थीं। कभी-कभी वह नहाते समय उनके हाथ-पैर या पीठ सहलाते थे और ऐसे समय में उनकी संपूर्ण सुंदरता की अत्यधिक प्रशंसा करते थे या विशेष रूप से उनके किसी अंग की तारीफ करते थे। वह जानती थीं कि फिरंगी जोड़े कभी-कभी साथ नहाते हैं, लेकिन यह आम तौर पर स्वीकृत या वांछनीय प्रथा नहीं थी।

भारत के उच्च वर्ग की महिलाओं को स्नान के समय उनकी निजी नौकरानी या दुल्हन की सजावट करने वाली महिला सहायता करती थीं। लेकिन वज़ीर ने इस मामले में बेगमों का रिवाज़ नहीं अपनाया। वह अकेले स्नान करती थीं और हमेशा हल्के वस्त्र पहनती थीं, जैसे ऊपरी शरीर पर महीन मलमल की चोली और निचले अंगों पर ढीली पतलून या चौड़ी राजपूतानी स्कर्ट। किसी का पानी के कमरे में वज़ू का बर्तन रखना या यहाँ तक कि हाथ धोने में मदद करना भी उन्हें कतई पसंद नहीं था। और शौचालय में बैठे हुए किसी का पीठ मलना... उफ़! हे भगवान! मैंने तो फिरंगियों में भी ऐसी प्रथाएँ कभी नहीं देखीं। वाकई, भारतीय कुलीन वर्ग के इन अभिजातों के तौर-तरीके अजीब हैं। खैर, वज़ीर को तब या शायद बाद में भी स्नान करने की ज़रूरत नहीं पड़ी। भारत के सभी अच्छे परिवारों की लड़कियों की तरह, उन्हें भी लंबे समय तक ऐसे कार्यों से दूर रहने का कठोर प्रशिक्षण दिया गया था।

'नहीं, नहीं, हबीबा, मैं अपना चेहरा धो लूँगी। आपको बिल्कुल भी चिंता करने की ज़रूरत नहीं है।' वज़ीर का इनकार दृढ़ था, लेकिन उनकी उस मशहूर मुस्कान के साथ था जिसने फैनी पार्क्स, विलियम फ्रेज़र और मिर्ज़ा ग़ालिब जैसे लोगों के दिलों को भी पिघला दिया था। वह मुस्कान इतनी मोहक थी कि हबीब-उन-निसा लगभग बेहोश ही हो गईं।

ठीक है, तो कृपया वॉशरूम तक जाइए। मैं कपड़े धोने का बर्तन पकड़ कर रखूंगा, आप चाहें तो दोनों हाथों से अपने चेहरे पर जितना चाहें पानी छिड़क सकते हैं।

'प्रिय मैडम हबीब-उन निसा, अपने शब्दों पर ध्यान दें,' वज़ीर ने हंसते हुए कहा। 'अगर आप हद से ज्यादा बोल गईं, तो प्याला आपके हाथों से फिसल सकता है और आपको दंडित होना पड़ सकता है!'

ऐसा लगता है कि बीबी साहब भाषा के प्रयोग में विशेष निपुणता रखती हैं। और क्यों नहीं? वह रानी की तरह दिल जीतने की अपनी शक्ति का प्रयोग करने में भी निपुण हैं।

'रानी वह होती है जिसके पास शासन करने के लिए एक देश हो, जिसके साथ एक राजा हो। कुछ फटे-पुराने वस्त्र और कुछ अंधेरी और तंग झोपड़ियाँ ही मेरे अधिकार में हैं।'
‘मैं ईश्वर का नाम लेता हूँ! आपकी वाणी देश-विदेश में सम्मानित हो। आपके शब्दों का खजाना अनंत प्रतीत होता है!’
हंसते हुए वज़ीर उठी और हबीबा के चेहरे पर हल्के से थप्पड़ मारा, मानो प्यार से थपथपा रही हो। किसी तरह, उस समय हबीबा उसे ज़्यादा उम्र की नहीं लग रही थी। बल्कि वह बारी बेगम की सहेली और खेलकूद की दोस्त लग रही थी। उसके चेहरे पर स्नेह का भाव किसी शुभचिंतक वरिष्ठ मित्र जैसा था। उसने वज़ीर का हाथ अपनी छाती से लगाया और फिर बोली, 'हे सर्वशक्तिमान! मैंने इतनी हिम्मत कैसे की कि आपका हाथ अपनी छाती से छुआ! मुझे क्षमा कर दीजिए।' ये कहते हुए उसने धीरे से अपने चेहरे पर भी एक थप्पड़ मारा।
“अच्छा, अगर आप इसी तरह बकबक करती रहीं और शब्दों की लंबी-चौड़ी लड़ी बोलती रहीं, महोदया, तो आपको और थप्पड़ खाने को मिलेंगे! ठीक है, मैं अब जाकर अपने दांत साफ करती हूँ और चेहरा धोती हूँ। मैं अभी वापस आती हूँ।” रात को सोने से पहले दांत साफ करना उनकी एक आदत थी जो उन्होंने मार्स्टन ब्लेक के मार्गदर्शन में सीखी थी।
वज़ीर अभी बाथरूम की तरफ मुड़ी ही थी कि किसी ने धीरे से उसके दुपट्टे का किनारा खींच लिया। उसने पीछे मुड़कर देखा तो हबीबा की विनती भरी निगाहें उसके चेहरे पर टिकी थीं।
‘तो अब क्या बात है?’ उसने तीखे स्वर में कहा। उसे शक था कि हबीबा उसके साथ वॉशरूम जाना चाहती है, और यह बात वज़ीर को बिलकुल भी मंज़ूर नहीं थी।
‘खानम साहब,’ उसने विनम्रता से कहा। ‘क्या मैं आकर कपड़े बदलने में आपकी मदद करूं?’
वज़ीर असमंजस में थी। क्या कोई मुझे कपड़े बदलने में मदद करेगा? मार्स्टन ब्लेक के साथ रहने से उसे यह तो पता चल ही गया था कि फिरंगी समुदाय में औरतें सोने के लिए अलग वस्त्र पहनती हैं। वह जानती थी कि इसे 'नाइटगाउन' कहते हैं (वह इसे 'नट गाउन' बोलती थी)। यह एक लंबा वस्त्र होता था जो अक्सर टखनों तक आता था और मौसम के अनुसार ऊन या सूती कपड़े का बना होता था। इसमें बटन होते थे, और कभी-कभी नहीं भी होते थे (वह इन्हें 'बुतम' कहती थी, जो उस समय की हिंदी में आम शब्द था, हालांकि उसे यह नहीं पता था कि यह फ्रांसीसी शब्द 'बुटन' से आया है)। खैर, बटन हों या न हों, नट गाउन सामने से खुला होता था। कभी-कभी इसे उसी कपड़े की बेल्ट से लपेटकर कस लिया जाता था। नट गाउन के नीचे कुछ भी नहीं पहना जाता था। वज़ीर इस प्रथा को बेहद बेशर्म मानती थी, लेकिन मार्स्टन ब्लेक के आग्रह पर उसने इसे स्वीकार कर लिया था।
भारत में, उच्च वर्ग की महिलाएं दिन-रात एक ही वस्त्र पहनती थीं, सिवाय विवाह जैसे विशेष अवसरों के, जब विशेष रूप से बने महंगे वस्त्र पहने जाते थे और अक्सर रात को सोने के लिए साधारण वस्त्रों से बदल लिए जाते थे। साधारण, रोजमर्रा के वस्त्र दो या तीन दिन पहने जाते थे और फिर धोने के लिए दे दिए जाते थे, ज्यादातर घर पर ही। कुलीन वर्ग में, महिलाएं अपने महंगे वस्त्र चार या पांच या अधिकतम सात दिनों तक दिन-रात पहनती थीं। हर वस्त्र नया पहना जाता था। एक बार पुराना हो जाने पर, उसे नौकरों को दे दिया जाता था। फिर बेगम नए वस्त्रों का एक

और सेट पहनती थीं जब तक कि वह 'पुराना' न हो जाए और दान करने योग्य न हो जाए। उनके वस्त्र कभी भी धोबी या कपड़े धोने के लिए नहीं दिए जाते थे।
मार्स्टन ब्लेक के बार-बार आग्रह के आगे झुकते हुए, वज़ीर ने सचमुच नाइटड्रेस पहनना शुरू कर दिया, लेकिन वह नाइटगाउन नहीं थी। उन्होंने सामान्य भारतीय शैली की लंबी ट्यूनिक और पैंट पहनी, लेकिन सामान्य से अधिक ढीली, और मौसम के अनुकूल, जो हल्की या भारी हो सकती थी, लेकिन उन्होंने दुपट्टा नहीं पहना।
वज़ीर ने शाम के लिए जो बेहद महंगी और जटिल पोशाक पहनी थी, उसे पहनकर सोना नामुमकिन था। सोते समय करवट बदलते ही एक या दो कपड़े फट जाते, जिससे फटे कपड़ों के साथ घर लौटना असंभव हो जाता। लेकिन सोने से पहले बदलने के लिए साधारण कपड़े लाने का भी कोई सवाल ही नहीं था। खुलेआम बेशर्मी के अलावा, इससे नवाब की नज़र में उसकी इज़्ज़त भी गिरती, क्योंकि इसका मतलब यह होता कि उसने रात वहीं रुकने की योजना बनाई थी।
अब जब अतिथिगृह में सोने और संभवतः नवाब के साथ बिस्तर साझा करने का निर्णय लिया गया था, तो उसके कपड़ों के खराब होने का पूरा खतरा था। इसलिए उसने अनिच्छा से अपने अंतर्वस्त्रों में ही सोने का फैसला किया था। अतः हबीब-उन निसा को कपड़े बदलने की बात करते सुनकर वज़ीर थोड़ा चौंक गया। क्या वह वज़ीर को पहनने के लिए अपने कपड़े देने वाली थी, और क्या उसे पहले से पता था कि वज़ीर रात बिताने आ रहा है? यदि नहीं, तो वज़ीर के लिए कुछ सोने के वस्त्रों का प्रबंध करना उसकी बुद्धिमत्तापूर्ण पहल थी।
‘तो क्या... क्या कपड़े बदलने का कोई इंतजाम है?’ उसने अपनी चुप्पी तोड़ते हुए पूछा।
जी हां, महोदया। यदि आप बाथरूम तक जाने की जहमत उठाएं, तो मैं आपको दिखा दूंगी कि वहां कपड़ों के क्या-क्या विकल्प उपलब्ध हैं।
'ठीक है, लेकिन मैं खुद ही बदल जाऊंगी।'
‘ठीक है, जैसा आपने आदेश दिया,’ हबीबा ने हल्की सी मुस्कान के साथ कहा। वह जानती थी कि वज़ीर जिस तरह के जटिल वस्त्र पहनता था, उन्हें निजी नौकरानी की सहायता के बिना सुरक्षित रूप से उतारना और तह करके रखना संभव नहीं था। उसने सोचा कि फिलहाल चुप रहना ही बेहतर है, और चुपचाप वज़ीर के पीछे-पीछे वॉशरूम में चली गई।
कमरे के एक कोने में नहाने के लिए एक छोटा, नीचा लकड़ी का चबूतरा था, और लकड़ी के स्टैंड पर पानी से भरे मिट्टी के ताज़े घड़े रखे थे। उससे नीचे वाले स्टैंड पर नए सिरे से धुले और चमकाए हुए पीतल के घड़े जगमगा रहे थे, जिन पर से रोशनी हल्की चमक रही थी। वहाँ धातु की मिश्रधातु से बना एक बड़ा चम्मच और नक्काशीदार चांदी से बना एक छोटा चम्मच भी था। लकड़ी के चबूतरे के बगल में, ज़मीन पर, मिश्रधातुओं से बना एक बड़ा, कुछ उथला कुंड था, शायद गर्म पानी के लिए। वहाँ एक चौड़ा स्टूल था जिस पर चंदन पाउडर का एक डिब्बा, भुने हुए चने के पाउडर से बनी टिकिया, विभिन्न प्रकार के हर्बल पाउडर और साबुन, साथ ही कुछ अंग्रेज़ी साबुन की टिकिया रखी थीं। उसने कुछ डिब्बे भी देखे - धिक्कार है - अंग्रेज़ी पाउडर के। चमड़े की छोटी, चपटी तली वाली बोतलों में सुगंधित तेल और इत्र रखे थे। दीवार की कुछ अलमारियों

में फूलों के गुलदस्ते भी रखे थे। इससे अलग एक छोटा पत्थर का चबूतरा था जिस पर एक भारी पानी का बर्तन और भुने हुए चने के पाउडर से बना साबुन एक छोटे से डिब्बे में रखा था। इनका उपयोग औपचारिक स्नान के लिए किया जाता था।

एक कोने में, एक पर्दे के पीछे, शायद मूत्रालय था, हालाँकि वहाँ किसी प्रकार की गंध नहीं थी, न क्षारीय और न ही कोई अन्य। इसके बजाय, एक हल्की सी सुगंध फैली हुई थी—शायद एलोवेरा के इत्र की—जो कमरे के वातावरण में गूंज रही थी। कमरा इतना बड़ा था कि उसमें पीने के पानी के लिए दो मिट्टी के घड़े रखने के लिए एक और लकड़ी का स्टैंड, ठंडे पेय बनाने के लिए सिरप की बोतलों वाली एक मेज, चांदी के पीने के कप और अंग्रेजी शैली के गिलास रखे जा सकते थे; एक कोने में एक बड़ा लकड़ी का बक्सा था, जो पैरों की अलमारी जैसा था। यह बक्सा नमी से बचाने के लिए एक लकड़ी के चबूतरे पर रखा था।

बड़े बक्से के सामने राजपुतानी शैली की दो संकरी कुर्सियाँ थीं, जो कपड़े उतारने और पहनने में आसानी के लिए सामान्य से थोड़ी ऊँची थीं। बक्से और कुर्सियों के सामने वाली दीवार पर एक लंबा, पूर्ण आकार का दर्पण लगा था, जिसके चौड़े किनारों पर फूलों, पक्षियों, सुंदर महिलाओं और साकी लड़कों के चित्र बने थे। दर्पण इतना बड़ा था कि कमरे का एक बड़ा हिस्सा उसमें प्रतिबिंबित होता था और देखने वाले की छवि जरा भी विकृत नहीं होती थी।

वज़ीर के कपड़ों को गीला होने से बचाना नामुमकिन था, अगर वह उन्हीं कपड़ों में चेहरा धोने की कोशिश करती। बेहतर यही था कि वह सारे ऊपरी वस्त्र उतार दे और सिर्फ़ अंतर्वस्त्रों में पानी के पास जाए। हबीब-उन निसा आगे बढ़ी और कमरे के कोने में रखा लकड़ी का बक्सा खोला। सबसे पहले उसने पीले रंग के रेशमी मलमल का एक भारी दुपट्टा निकाला, जिसकी लंबाई पूरे छह गज थी। इसके बाद उसने भागलपुरी रेशम से बनी एक ढीली, हल्के बैंगनी रंग की पैंट निकाली। वज़ीर ने पैंट को हाथ में लिया तो पाया कि उसका वज़न लंबे मलमल के दुपट्टे से ज़्यादा नहीं था। अंत में, उसे फूलम का एक लंबा, ढीला कुर्ता दिया गया, जो रेशम के मिश्रण से बना फूलों वाला सूती कपड़ा था। हल्के पीले-हरे रंग के फूल पूरे कुर्ते पर बने हुए थे, हालांकि घने नहीं थे, और कुर्ते का गला ऊंचा था; कॉलर खुला था और उसमें कोई बटन नहीं थे।

वज़ीर के मुंह में उन कपड़ों को देखकर पानी आ गया। भला ऐसे कपड़ों में सोना किसे पसंद नहीं होगा! वह बार-बार एक-एक कपड़ा उठाकर अपने शरीर पर लगाकर देखती कि वह उस पर कैसा लग रहा है।

'क्या आप चाहेंगे कि मैं अंडरगारमेंट्स भी दिखाऊं?' हबीबा ने कहा।

वज़ीर के यह कहने पर कि छोटे कपड़ों की ज़रूरत नहीं है, हबीबा ने अर्थपूर्ण निगाहों से वज़ीर की ओर देखा और पूछा कि क्या वह कपड़े उतारने में उसकी मदद कर सकती है। या, हबीबा को उम्मीद थी कि अगर वज़ीर को पर्दे के पीछे जाना पड़े, तो उसे उसके सामने अपने कपड़े उतारने ही पड़ेंगे।

वज़ीर की झिझक साफ़ दिख रही थी, लेकिन उसने तुरंत फैसला कर लिया। कुर्सी पर बैठते हुए उसने कहा, 'तो, हम शुरुआत कहाँ से करें?'

निर्णय ले लिया गया था, लेकिन उसके चेहरे पर हल्की सी मुस्कान के साथ-साथ झुंझलाहट के

भी संकेत स्पष्ट थे। यह साफ था कि उसे यह विचार पसंद नहीं था कि कोई, भले ही वह हबीबा ही क्यों न हो, कपड़े उतारने, धोने, नहाने या शौचालय पर बैठने जैसी गतिविधियों में उसकी मदद करे।

बड़ी धीमी गति से सोच-विचार करते हुए हबीबा ने अपने सारे ऊपरी वस्त्र उतार दिए, जिनमें से कुछ को वह बड़ी मुश्किल से मोड़कर लॉकर में रख सकी। बाकी वस्त्र आसानी से नहीं मुड़ रहे थे, शायद उन्हें मोड़ने के लिए बनाया ही नहीं गया था। इन वस्त्रों को उसने बड़ी सावधानी से संभाला और दीवारों पर लगे पीतल के खूंटों पर टांग दिया। फिर उसने वज़ीर का चेहरा, हाथ और पैर धोए और उन्हें एक बड़े, सुगंधित रुमाल से सुखाया। वज़ीर की पतली कमर, भारी कूल्हे और उभरे हुए स्तन अब और भी उभरे हुए लग रहे थे। हबीबा ने सोचा, मानो कूल्हों का भार ही स्तनों को ऊपर की ओर सहारा दे रहा हो। या फिर यह नन्ही सी बच्ची चलते समय अपना संतुलन खो देगी। अपने मन की गहराई में, हबीबा को किसी अस्पष्ट इच्छा की गूंज सुनाई दे रही थी। उसने खुद को सख्ती से नियंत्रित किया और अपने चेहरे या इशारों से कुछ भी ज़ाहिर नहीं होने दिया। उसे यह भी लग रहा था कि अगर वह ज़्यादा देर तक रुकी तो वज़ीर नाराज़ हो सकता है।

'मैं बाहर इंतजार करूंगी। जब आपको मेरी जरूरत हो, आप मुझे बुला सकते हैं,' उसने कहा। वज़ीर के माथे पर पल भर के लिए थोड़ी सी नाराज़गी झलक उठी। उसने कुछ नहीं कहा, लेकिन मन ही मन सोचा कि हबीब-उन निसा का पानी के कमरे में अब कोई काम नहीं रह गया है, तो फिर वो उसे दोबारा भर्ती करने का इशारा क्यों कर रही है? वैसे भी, वो अपनी सच्ची भावनाओं को छिपाने में हबीब-उन निसा से भी ज़्यादा माहिर थी: अगर हबीब-उन निसा ने नौकरानी के रूप में अपने करियर के दौरान ये सीखा था, तो वज़ीर ने हर तरह के भावनात्मक हालात झेले थे—प्यार और जुनून; ऐसे मौके जब उसे किसी के प्रति घृणा महसूस हुई; और अस्वीकृति के मौके—और उसने खुद को ये अच्छी तरह से सिखा लिया था कि जो दिखाना ज़रूरी है उसे दिखाओ और बाकी सब अंदर ही बंद रखो।

उसने आसानी से अपनी झुंझलाहट को दूर कर दिया और संक्षेप में और सीधे-सादे ढंग से जवाब दिया: 'बहुत अच्छा,' और अपना ध्यान रात के कपड़ों और कमरे के फर्नीचर पर केंद्रित कर लिया।

जैसे ही हबीब-उन निसा चले गए, वज़ीर ने अपने सारे अंतर्वस्त्र उतार दिए और पर्दे के पीछे जाने ही वाली थी कि उसकी नज़र आदमकद दर्पण में अपने प्रतिबिंब पर पड़ी: बिल्कुल वैसे ही जैसे वह थी, बिना किसी आवरण के। वह चौंक गई, लेकिन फिर अपनी छवि को देखकर स्तब्ध रह गई। दर्पण में सब कुछ स्पष्ट था, यहाँ तक कि शुक्र पर्वत की हल्की सी ऊँचाई और उस पर फैली थोड़ी सी गहरी घास का हल्का सा धब्बा भी। वह सब कुछ स्पष्ट रूप से देख सकती थी, मानो प्रकाश की किरणें उसके शरीर से धीरे-धीरे निकल रही हों और दर्पण की चमक को और बढ़ा रही हों।

उसके शरीर पर दो बार मां बनने का कोई निशान नहीं था। उसका पेट, अधिकांश महिलाओं की तरह, गर्भावस्था के दौरान और बाद में त्वचा और मांसपेशियों के खिंचाव और संकुचन से पड़ने

वाली सिलवटों को नहीं दर्शाता था। उसकी जांघें इतनी सुगठित और चिकनी थीं मानो किसी कुम्हार ने उन्हें अभी-अभी चाक से उतारकर धूप में सुखाया हो; एड़ियों और तलवों का गुलाबी रंग, पैर की उंगलियों और पैरों पर लगी गहरे बैंगनी रंग की मेहंदी की सुंदरता को और भी निखार रहा था, जिसमें गुलाबी रंग की झलक थी। उसका पेट बिल्कुल सपाट था, और गर्दन का सुंदर घुमाव शक्ति और गर्व का भाव प्रकट कर रहा था। उसकी बड़ी, गहरे भूरे रंग की आंखों में दर्पण से चमकती रोशनी ऐसी लग रही थी मानो गहरे लाल रंग की शराब से भरे साफ कांच के छोटे प्याले मोमबत्तियों के सामने रखे हों और उनकी लौ उन पर प्रतिबिंबित हो रही हो।

अचानक, उसका गला आँसुओं से भर गया। बल्क साहब के सिवा किसी ने भी उसे नग्न अवस्था में नहीं देखा था, और शायद उन्होंने भी उसे उस तरह नहीं देखा था जिस तरह दर्पण उसे अब देख रहा था। और आज... आज कोई और उसे देखेगा। वह उसके दिल को हज़ार तरह से सुकून दे सकता है, लेकिन वह पहला नहीं था। उसकी आँखें भर आईं। उसे ऐसा लगा जैसे हबीब-उन निसा की देखभाल और ध्यान से उसके भीतर जो ऊर्जा और सुरक्षा की भावना उत्पन्न हुई थी, वह सब एक कुएँ की गहराई में समा गई हो। वह कुर्सी पर ऐसे गिर पड़ी जैसे उसमें कोई ताकत ही न बची हो, और एक पैर दूसरे पर रखकर अपने पहले से ही सपाट पेट को अंदर की ओर दबाया, जांघों के जुड़ने से एक छोटा, लगभग सपाट त्रिकोण बन गया, जिसका आधार उसका श्रोणि था।

उसने अपना सिर झुका लिया। अब वह आईने में नहीं देख रही थी: वह अपने हृदय में स्वयं को देख रही थी। वह उस अनुभवहीन लेकिन दृढ़ निश्चयी लड़की को देख रही थी, जिसके शरीर के सारे रहस्य—और उसकी आत्मा के भी कुछ हिस्से—उसके सामने एक नास्तिक, नाज़ारेथ के निवासी और फिरंगी द्वारा उजागर कर दिए गए थे। उसने उन रहस्यों को इस तरह प्रकट किया मानो वे उसे दैवीय दर्शन के माध्यम से प्राप्त हुए हों, और फिर उसका सारा अस्तित्व उसके लिए देखने का सत्य बन गया, जैसे देखने का तरीका ही विश्वास करना है। वह मार्स्टन ब्लेक के लिए रोई, क्योंकि आज उसे अटल विश्वास के साथ पता चल गया था कि कोई भी जीवन अमर नहीं होता, और मरे हुए लोग कभी वापस नहीं आते। उसकी आँखों से आँसू बहने लगे। वह सिर झुकाए रोती रही, और उसके आँसू उसकी छाती की ढलानों से रिसकर उसकी बंद जांघों और श्रोणि के बीच बने उस छोटे से गड्ढे में जमा हो गए।

हबीब-उन निसा वॉशरूम के दरवाजे के पास जड़वत खड़ी थी, वज़ीर के न आने से चिंतित थी और इस बात से भी डरी हुई थी कि अगर उसने आवाज़ लगाई या कमरे में गई तो कहीं वज़ीर नाराज़ न हो जाए। यूरिनल के पीछे, स्क्रीन के पीछे एक दरवाजा था। वह शौचालय में खुलता था (वह इसे सेहत खाना कहती थी - दिल्ली के संभ्रांत लोगों के रिवाज के अनुसार आराम का घर)। शायद वह शौचालय में हो। पता नहीं वहाँ रोशनी है या नहीं... कोई बात नहीं, वह मोमबत्ती जला सकती है, ज़रूर। इस समय उसे परेशान करना ठीक नहीं है। उसका व्यक्तित्व कितना प्यारा है! लेकिन वह बहुत स्वाभिमानी है। अगर कोई बात उसे परेशान कर दे, तो वह तुरंत डांट देगी। नहीं, वह शायद शब्दों में डांट नहीं देगी, लेकिन उसकी भौंहें तन जाएँगी। इतना तो हम जैसे अच्छे-अच्छे लोगों को भी हतोत्साहित करने के लिए काफी है।

कुंडी और जंजीरों की हल्की सी खड़खड़ाहट के साथ शौचालय का दरवाजा खुला और वज़ीर खानम बाहर आईं। वह थकी हुई और उदास लग रही थीं। हबीब-उन निसा तुरंत समझ गईं कि कुछ अनहोनी हुई है, लेकिन पूछने की हिम्मत नहीं कर पाईं। वज़ीर ने वे रात्रि वस्त्र पहन रखे थे जो हबीब-उन निसा ने डिब्बे से निकाले थे। शयनकक्ष की हरी रोशनी में वे वस्त्र उन पर बेहद खूबसूरत लग रहे थे, मानो सुनहरे मोमबत्तीदान में रखी मोमबत्ती पर नारंगी-पीली आभा हो।
हबीब-उन निसा ने मौखिक प्रेम कहानियों में अक्सर 'दुखी सुंदरियों' या 'शोकग्रस्त युवतियों' के बारे में सुना था, लेकिन उन्होंने कभी कल्पना नहीं की थी कि एक दुखी सुंदरी का चेहरा इतना आकर्षक, इतना गर्वित हो सकता है, जिसका सांवला रंग बड़े नारंगी-पीले गुड़हल के फूलों के साथ मिले गुलाब के पत्तों के कालेपन जैसा लग रहा था, और मानो बादलों के पीछे डूबते सूरज की धुंधली रोशनी बिखेर रहा हो।
हबीब-उन निसा उसके पास आईं, धीरे से उसका कंधा छुआ और बोलीं, 'तुम थकी हुई लग रही हो। अगर तुम लेटना चाहो, तो मैं थपथपाकर हल्के से मालिश कर दूंगी।' वज़ीर के मन में कृतज्ञता का भाव जागा, लेकिन साथ ही उसे थोड़ी झुंझलाहट भी हुई, भले ही गुस्सा न आया हो। ये कौन औरत है जो हर मौके पर मेरे सामने चटाई की तरह बिछड़ जाती है? चाहे वो कोई वरिष्ठ दासी हो, या दुल्हन को सजाने वाली हो, या कुछ भी हो, पर आखिर वो नौकरानी ही है। क्या उसे ये समझ नहीं आती कि मैं ठीक नहीं हूँ? ... नहीं, मैं ठीक नहीं हूँ, लेकिन किसी तरह ये कमरा अब पहले जैसा सुखद नहीं लगता।
थके हुए पैरों से वह बिस्तर के पास पहुँची और अपने पैरों को पायदान पर मजबूती से टिकाने का सचेत प्रयास करते हुए, वह ऊपर चढ़ी और बेसुध होकर बिस्तर पर बैठ गई। हबीब-उन निसा ने तुरंत वज़ीर के जूते उतारे और धीरे से, लगभग कोमलता से, उसके पैरों को बिस्तर पर उठा दिया ताकि अब वज़ीर आराम से उस पर लेट सके।
'कृपया कुछ देर के लिए लेट जाइए। मैं आपके बालों में तेल लगाऊंगी और कंघी करूंगी। उसके बाद थपथपाना शुरू कर दूंगी।'
वहाँ मुलायम तकिए थे और चेहरे को टिकाने के लिए कुछ छोटे, गोल मखमली कुशन भी थे। हर चीज़ से हल्की-हल्की फूलों और चमेली के इत्र की खुशबू आ रही थी। वज़ीर तकिए के सहारे सटकर बैठ गई और अपनी आँखें बंद कर लीं।
'आप कौन सा तेल पसंद करेंगे? जौनपुर का फूलों का तेल, काबुल का बादाम का तेल, बंगला का नारियल का तेल, जिसमें कपूर और अदरक की थोड़ी मात्रा भी होती है, या...'
'बस करो, महोदया, क्या आप इत्र की पूरी पेटी ढोती फिरती हैं? ठीक है, जौनपुर का फूलों का तेल ही सही।' वज़ीर का ललक कठोर नहीं, बल्कि उदार था।
हबीबा झटपट पानी के कमरे में गई और पलक झपकते ही तेल की एक छोटी चमड़े की बोतल लेकर लौट आई। उसने एक हाथ की हथेली पर कुछ बूँदें डालीं, फिर हथेलियों को आपस में रगड़ा और दाहिने हाथ की उंगलियों से धीरे-धीरे, एकसमान गति से वज़ीर के सिर को छुआ। तेल को उसके बालों पर फैलाने या कंघी करने के बजाय, उसने अपनी उंगलियों को उसके घने बालों में फेरना शुरू कर दिया। वज़ीर को सुकून का एहसास हुआ; उसकी आँखें बंद होने लगीं। दस

मिनट भी नहीं बीते थे कि वज़ीर का आंतरिक तनाव घुलने लगा, जैसे रेशम के उलझे हुए धागे खुल जाते हैं। उसने सुख और सुकून की आह भरी और बिस्तर पर लेट गई।
वह सोने ही वाली थी कि अचानक झटके से जाग उठी... मैं यहाँ कैसे आ गई? क्या यह लोहारू के नवाबों की हवेली नहीं है? इस तरह यहाँ सोना ठीक नहीं है। उसने नींद से भरी आँखें खोलीं, हबीब-उन निसा को देखा और उनसे पूछना चाहा: आप यहाँ कब से काम कर रही हैं? आप कहाँ से आई हैं? आप नवाबों की बेगमों में से किसी की नौकरानी तो नहीं हो सकतीं। शायद आप उनकी माँ की सेवा में थीं, और अभी भी यहाँ इसलिए हैं क्योंकि नवाबों को आप पर भरोसा है और वे आपको पसंद करते हैं, और इसीलिए उन्होंने आपको मेरी सेवा में लगाया है।
नहीं, पहली मुलाकात में ऐसे सवाल पूछना उचित नहीं है। अगर हमारा रिश्ता कायम रहता है, तो मुझे ये बातें समय आने पर पता चल जाएंगी। और अगर रिश्ता कायम नहीं रहता, तो मुझे पता हो या न पता हो, कोई खास फर्क नहीं पड़ेगा।
हबीब-उन निसा ने देखा कि वज़ीर के चेहरे पर अब संयम और प्रसन्नता के भाव दिखाई दे रहे थे। उन्होंने कहा, 'यदि आप अब विश्राम करना चाहें, तो बिस्मिल्लाह, मैं आपसे अनुमति मांगूंगी।' वह कुछ क्षण रुकीं, फिर बोलीं, 'नवब साहब से मिलने का समय आपके लिए सुविधाजनक रहेगा? क्या मैं उन्हें बता सकती हूं?'
यह सवाल सुनते ही वज़ीर के दिल में एक रोमांच, या यूँ कहें कि एक झुनझुनी सी दौड़ गई। यह वही पल था जिसका वह इंतज़ार कर रही थी; शायद उसने इसकी उम्मीद नहीं की थी, लेकिन उसे इसकी उम्मीद ज़रूर थी। हालाँकि उसने नवाब का रात्रिभोज का निमंत्रण सहर्ष स्वीकार कर लिया था और शम्सुद्दीन अहमद के बारे में उसके मन में कुछ उम्मीदें भी थीं, और सच कहूँ तो, वह जानती थी कि उसका दिल उन्हीं की तरफ झुका हुआ है, फिर भी उसने अंतिम निर्णय के क्षण का सामना करने से परहेज किया था।
अब बचने के सारे मौके खत्म हो चुके थे। वह कुछ पल चुप रही, फिर मुस्कुराई, हबीबा की आँखों में आँखें डालकर बोली, 'जब भी वह आना चाहे, समय अनुकूल होता है। मैं यहाँ मेहमान हूँ... और अब मेरा हाथ एक भारी पत्थर के नीचे दब गया है।'
वज़ीर के शब्दों में छिपे दो अर्थों की संभावना हबीब-उन निसा से छिपी नहीं थी। वह तय नहीं कर पा रही थी कि वज़ीर गंभीर है या हल्के-फुल्के अंदाज़ में बोल रही है। वह कुछ देर रुकी, यह सोचने के लिए कि उसे क्या कहना चाहिए और कैसे कहना चाहिए। फिर उसने स्पष्ट रूप से, किसी भी अस्पष्टता से बचते हुए, कहा, 'तुम कोई मेहमान नहीं हो। मैं तुम्हारा शासन हर जगह फैलते हुए देख रही हूँ। और नवाब, मुझे ऐसा लगता है, अपने दिल के घमंड भरे धन को तुम्हारे हवाले करने की तैयारी कर रहा है ताकि तुम उसे मुफ्त में खरीद सको।'
‘हबीब-उन निसा, फिर से शुरू हो गए अपने मज़ाक और शिष्टाचार के!’ वज़ीर ने बनावटी झुंझलाहट के साथ कहा। ‘मान लिया कि मैंने उसे गुलाम की तरह खरीद लिया है। लेकिन अभी और यहीं मुझे ऐसा लग रहा है जैसे मैं फिरंगी की बेड़ियों में जकड़ा हुआ हूँ।’
‘महोदया, ईश्वर का नाम लो!’ हबीबा ने पश्चाताप का प्रतीक दिखाने के लिए अपने कानों को छुआ। ‘यह अंग्रेजों का देश नहीं है! बिलकुल नहीं!’

‘खैर, ऐसा न हो, लेकिन हबीबा, आजकल मेरी आत्मा बेवजह ही विचलित और उदास सी लगती है।’ वह रुक गई। ऐसा लगा जैसे वह आगे बोलना चाहती थी, लेकिन अपने स्वाभिमान या विवेकपूर्ण आचरण की भावना से रुक गई। हबीबा को लगा कि वह वज़ीर की मनोदशा समझ गई है, या शायद नहीं भी समझी। फिर उसने स्पष्ट रूप से उत्तर दिया, इस बात का ध्यान रखते हुए कि वह कोई टालमटोल न करे: ‘ईश्वर सबसे महान हैं, खानम साहब। हमेशा उन पर भरोसा रखें।’ वह आगे बढ़ी और वज़ीर के चेहरे पर हल्के से हाथ फेरते हुए, फिर अपनी उंगलियों को छूकर और चटकाते हुए, बार-बार किसी प्रियजन की विपत्तियों को अपने ऊपर लेने की पारंपरिक क्रिया की। ‘यह सेवक अब जाने की अनुमति चाहता है। मैं नवाब साहब को सूचित कर दूंगी। अलविदा।’ हबीबा ने बड़ी कुशलता से वज़ीर के बालों में उंगलियाँ फिराईं। उसकी घनी चोटी खुल गई और उसके लंबे बाल कंधों और पीठ पर फैल गए। फूलों के तेल की हल्की सी खुशबू वज़ीर की नाक में पहुँची और उसके दिल में एक हल्कापन सा महसूस हुआ। झुककर हबीबा ने जल्दी से दो सलाम किए और पीछे हट गईं।

वज़ीर के मन में हबीबा को धन्यवाद देने की इच्छा थी, जैसे अंग्रेज आपस में करते थे। वह जानती थी कि वे अपने नौकरों को, विशेषकर देशी नौकरों को, जिन्हें मुश्किल से इंसान समझा जाता था, कभी धन्यवाद नहीं देते थे। भारतीयों में बड़े नौकरों का आदर और सम्मान करने की परंपरा थी। आम तौर पर ऐसे नौकरों को 'दादाजी' या 'चाचा' कहकर संबोधित किया जाता था; इसी तरह, उन्हें सम्मानपूर्वक बहुवचन 'आप' कहकर संबोधित करना आम था, न कि एकवचन 'तुम' कहकर। लेकिन वज़ीर हबीबा को न तो बूढ़े नौकरों में, न ही रिश्तेदारों में रख पा रही थी। उसे संदेह था कि पहली ही मुलाकात में हबीबा को धन्यवाद देना उसके लिए उचित होगा या नहीं। फिर भी, उसने सभी नियमों और सिद्धांतों को दरकिनार करते हुए आवेग में कहा, 'अलविदा, हबीबा। मैं सचमुच आपकी आभारी हूँ।'

हबीबा पानी के कमरे की ओर तेज़ी से बढ़ रही थी; तभी वह अचानक रुक गई, मानो आश्चर्यचकित हो गई हो। उसके चेहरे पर अविश्वास के भाव थे। वह मुड़ी और बोली, 'आप, और हमारे आभारी! ईश्वर आपको सलामत रखे, कृपया ऐसी बातें न कहें। हम आपके नमक के स्वामी हैं, हम आपके एहसानों का बदला अपनी जान देकर भी नहीं चुका सकते।'

‘अच्छा, अब जब मैंने ये काम कर ही दिया है,’ वज़ीर ने व्यंग्य करने की कोशिश करते हुए कहा, हालाँकि उसकी आँखों में अनसुने आँसू चमक रहे थे। ‘तुम्हें ये बात नहीं भूलनी चाहिए। मैं तो बिल्कुल नहीं भूलूँगी।’

यह कहते हुए वज़ीर ने अपने पैर जांघों के नीचे दबा लिए, जिससे उसके ऊपरी शरीर की सुडौल आकृतियाँ उसके ढीले कपड़ों के पीछे थोड़ी छिप गईं। लेकिन जब उसने अपनी पीठ गद्देदार तकिए से टिकाई, तो उसकी गर्दन और स्तनों की उभरी हुई रेखाएँ फिर से स्पष्ट हो गईं। उसके माथे पर सजी कुछ छोटी लटें; एक कंधे से धीरे-धीरे गिरती चोटी की चमकदार घुंघराली लटों का कालापन; लंबी पलकों के पीछे छिपी गहरी भूरी आँखें, हालाँकि लैंप की रोशनी पलकों से छनकर आँखों की सतह पर लुका-छिपी खेल रही थी; एक हाथ उसकी गोद में और दूसरा हाथ नाइटस्टैंड पर रखी किताब की ओर बढ़ा हुआ था। गला और कलाई अभी भी आभूषणों से रहित थे, सिवाय

उनके दाहिने अंगूठे पर लाल रंग की अंगूठी और दाहिनी तर्जनी उंगली पर हरे रंग के पन्ना रत्नों के, जो उनके ऊपरी लबादे के पीले रंग और लंबे कुर्ते के हल्के पीले-हरे रंग के बीच चमक रहे थे: कमरे की छत ने शायद ही कभी रंगों का ऐसा मनमोहक, शांत और इंद्रधनुषी नजारा देखा होगा। यह हबीब-उन निसा के अनुभव से बिलकुल परे था।

स्तब्ध होकर हबीब-उन निसा उसे लंबे समय तक बिना पलक झपकाए देखती रही, मानो उसे विश्वास ही न हो रहा हो कि उसके सामने बिस्तर पर लेटी लड़की हाड़-मांस की बनी है। वज़ीर ने एक बार फिर 'अलविदा' कहा और किताब में मग्न हो गई। हबीब-उन निसा ने फिर से झुककर सलाम किया और कुछ कदम पीछे हटकर शौचालय में चली गई।

शौचालय के अंतिम छोर पर स्थित एक दरवाजा एक संकरे गलियारे में खुलता था। गलियारे में प्रवेश करते ही, बाईं ओर शौचालय का पिछला दरवाजा था; दाईं ओर गलियारा एक बरामदे पर समाप्त होता था, जिसके सामने एक आंगन था जिसे एक अनौपचारिक आंतरिक उद्यान की तरह बनाया गया था: इसमें नीम के कुछ पेड़, खजूर के कुछ पेड़, एक प्राचीन, फूलदार मौलसरी का पेड़ और कई छोटे फूलदार पौधे और झाड़ियाँ थीं। बरामदे से मुख्य हवेली के नौकरों के क्वार्टर तक भी पहुँचा जा सकता था।

वज़ीर इन विवरणों से अनभिज्ञ थी, और न ही उसे जानने की आवश्यकता थी। वह जानती थी कि नवाब जब प्रवेश करेंगे, तो सामने के दरवाज़े से प्रवेश करेंगे और एक राजदंड धारक द्वारा उनकी घोषणा की जाएगी। अब जब रात की योजना उसके दिमाग में लगभग बन चुकी थी, तो वह संतुष्ट थी। उसने नाइटस्टैंड से जो किताब उठाई थी, वह हाफ़िज़ का दीवान निकला। चमड़े की जिल्द वाली यह किताब काफी पुरानी थी; इसके आगे और पीछे के सुनहरे हाशिये फीके पड़ गए थे। हालांकि, यह स्पष्ट था कि किताब का बहुत उपयोग हुआ था, क्योंकि कई पन्नों के कोने मुड़े हुए थे या उनमें दरार पड़ गई थी। उसने कल्पना की कि नवाब ने इसे उसके पढ़ने के लिए वहाँ रखा होगा। उसने बड़ी सहजता से किताब खोली और पाया कि दाहिने पृष्ठ पर पहला श्लोक यह था: यह टूटा हुआ दिल खुद को कैसे छुड़ा पाएगा? तुम्हारे बालों की हर लट में पचास से कम फंदे नहीं हैं।

'कितना अच्छा!' वह मन ही मन मुस्कुराई, हालांकि उसके चेहरे पर व्यंग्य का भाव भी था। खैर, शायद उस श्लोक में भी कोई अपशगुन छिपा था, उसने सोचा, और माथे पर बिखरे बालों को पीछे किया। वह दूसरा पृष्ठ खोलने ही वाली थी कि बाहर पत्थर के फर्श पर भारी गदा की आवाज सुनाई दी। उसने दीवान वापस रखा और अपने सिर को चादर से ढक लिया।

दरवाजा बिना आवाज किए खुला; नवाब अकेले ही अंदर दाखिल हुए। उनके साथ कोई नौकर या नौकरानी नहीं थी। राजदंड धारण करने वाले व्यक्ति द्वारा जमीन पर की गई दस्तक स्पष्ट रूप से अतिथिगृह में रहने वालों को नवाब के आगमन की सूचना देने के उद्देश्य से थी।

वज़ीर ने अपने शरीर को थोड़ा और सिकोड़ा और अपनी निगाहें अपने घुटनों पर टिका लीं। शयनकक्ष के अनौपचारिक माहौल में नवाब का व्यक्तित्व और भी आकर्षक लग रहा था। उन्होंने वही पोशाक पहनी हुई थी जो वे आमतौर पर घर के अंदर पहनते थे: बेहद मुलायम, सफेद मलमल का ढीला कुर्ता, जिसके कंधों और गर्दन पर आसमानी नीले रंग की लेस लगी थी, और

उसी कपड़े की चौड़ी दिल्ली शैली की पतलून, बस फर्क इतना था कि पतलून के मलमल पर हल्के हरे रंग की एक चौथाई इंच चौड़ी धारियाँ थीं। उन्होंने हरे रंग की पगड़ी पहनी हुई थी, जो कुछ हद तक राजपूती शैली की थी लेकिन थोड़ी ऊंची थी। उनके पैरों में हरे रंग की लेस से सजे भारी ब्रोकेड के जूते थे, जो सामान्य से थोड़े चौड़े थे और जिन पर अंगूर की टहनी और फल बने हुए थे। एक स्वतंत्र शासक के रूप में अपनी स्थिति का प्रतीक उन्होंने कुछ भी नहीं पहना था, सिवाय पाँच लड़ियों वाले मोतियों के हार और दाहिनी तर्जनी उंगली में एक अंगूठी के, जिसका बड़ा माणिक उनकी मुहर के रूप में इस्तेमाल करने के लिए तराशा गया था।

वह थोड़ा आगे बढ़ा, लेकिन ज्यादा अंदर नहीं गया, उसने अपना गला साफ किया और कहा, 'शुभ संध्या, वज़ीर खानम।'

अब वज़ीर ने अपनी आँखें ऊपर उठाईं और नवाब की ओर देखा। उसने अपनी वही मशहूर या कुख्यात मुस्कान बिखेरी, जिसे देखकर हर कोई मोहित हो जाता था। शम्सुद्दीन अहमद के घुटने काँपने लगे। हालाँकि वज़ीर ने अपने स्तन और कमर के नीचे का शरीर अच्छी तरह से ढक रखा था, फिर भी नवाब को अपने सामने खड़ी उस लड़की के पूरे व्यक्तित्व से कामुक आमंत्रण महसूस हो रहे थे। जब वज़ीर ने सलाम करने के लिए उठकर उसे अभिवादन किया, तो उसने खुद को रोका और धीरे से उसके चेहरे को थपथपाते हुए उसके माथे को चूमा, फिर उसकी आँखों को और अंत में उसके होंठों को।

नवाब ने उसकी कमर में हाथ डालकर उसे पलंग तक ले गया। उसे बिठाकर वह उसके सामने पालथी मारकर बैठ गया। इस बार वह तकिये पर आधा नहीं झुकी; वह घुटनों के बल बैठी थी, लेकिन उसने अपना सिर घुटनों पर नहीं रखा, बल्कि दोनों हाथों को घुटनों और जांघों के चारों ओर लपेट लिया। यह मुद्रा कुछ हद तक अनौपचारिक अंतरंगता दर्शाती थी, लेकिन उसके शरीर का अधिकांश भाग पूरी तरह से ढका हुआ था।

वज़ीर ने मुस्कुराते हुए नवाब की ओर देखा। नवाब ने एक हाथ उसके घुटने पर और दूसरा कंधे पर रखा। इस दौरान वज़ीर का दुपट्टा उसके सिर से फिसल गया, जिससे उसकी पतली गर्दन की कोमलता झलक उठी। नवाब ने अपने दाहिने हाथ की उंगलियाँ उसके बालों में फिराईं और अपना दूसरा हाथ उसकी पतलून के नीचे डालने ही वाले थे, शायद वहाँ ऊपर या नीचे कुछ और भी आनंद लेने के लिए। वज़ीर के दिल में इच्छाओं की लौ धीरे-धीरे फूटने लगी, लेकिन वह इतनी आसानी से खुद को प्रकट नहीं करना चाहती थी। ठीक उसी क्षण जब नवाब ने अपना हाथ उसकी टांग पर ऊपर बढ़ाया और उसके घुटने पर चुंबन किया, और आगे बढ़ने का इरादा किया, वज़ीर ने अपने पैर फैलाए, अपनी पतलून को ठीक किया और कहा, 'हाँ, लोगों ने सुना है कि साहसी लोग उंगलियों से सहलाते हुए कलाई तक पहुँच जाते हैं, लेकिन यह मेरे लिए बिल्कुल नया है, घुटने की ऊँचाई से नीचे गहराई तक जाने की आपकी इच्छा।' वह हँसी। 'महाराज, आपने कलाबाज़ों के ये तरीके कहाँ से सीखे?'

वह हँसी, लेकिन वह यह भी नहीं चाहती थी कि नवाब को लगे कि वह उसका मज़ाक उड़ा रही है। उसने उसका हाथ अपने सीने से लगाया और कहा: 'ज़रा देखो, तुम्हारे अत्याचारों की वजह से मेरे दिल की क्या हालत हो गई है! यह इतनी तेज़ी से धड़क रहा है! मुझे डर है कि मैं बेहोश हो

जाऊँगी।'
नवाब ने उसके पूरे शरीर को अपनी बाहों में लेने की कोशिश करते हुए कहा, 'देखो, मैं तो तुम्हें देखकर ही बेहोश होने लगा हूँ। अगर तुम बेहोश हो जाओ तो मैं तुम्हें सहारा दे दूँगा। आख़िरकार, भगवान ने बाँहें और हाथ क्यों बनाए?'
इस बार वज़ीर नवाब की बाहों में समा गई और अपना सिर उनके कंधे पर रखकर बोली, 'ओह! आपकी खुशबू कितनी मीठी है, आपकी महक में मदहोश होकर कोई भी गिर सकता है।' उसने अठारहवीं सदी के हिंदी कवि सौदा की ये पंक्तियाँ दोहराईं: मेरे हाथों से शराब का प्याला ले लो, क्योंकि मैं जाने ही वाला हूँ!

'तुम कभी फिसल नहीं सकते कि मैं तुम्हें सहारा देने के लिए वहां मौजूद न रहूं। थोड़ा सा कदम भटकने दो। मैं तुम्हें गले लगाने के लिए बेताब हूं!'
यह कहते हुए उसने वज़ीर का शॉल एक तरफ़ खींचा और उसके कॉलर को खोलने के लिए हाथ बढ़ाया, तो देखा कि उसने अपनी कमीज़ के नीचे कुछ नहीं पहना था। वज़ीर झट से एक तरफ़ हट गई और बोली, 'अरे, आप ये क्या कर रहे हैं? सारी बत्तियाँ जल रही हैं!'
'इन सब बातों की परवाह मत करो। अगर मोमबत्तियां जल रही हैं, तो उन्हें जलने दो।'
नहीं, नहीं! मेरा मतलब वो नहीं था! मेरा और प्रकाश की भव्यता का कोई संबंध नहीं है। मेरा मतलब था कि प्रकाश में...
हाँ, बिल्कुल। दीपों की इस तेज रोशनी में। तुम्हारी सुंदरता के प्रकाश के सामने, ये दीप जल्द ही मंद पड़ जाएँगे... कृपया। अब और क्रूरता मत करो। रात भी, मेरे आँसुओं में भीगी हुई, मंद पड़ने और समाप्त होने वाली है।
'ठीक है।' वज़ीर ने अपना सिर और चेहरा फिर से अपने लबादे से ढक लिया, मानो वह खुद को घूंघट में छिपा रही हो। 'कृपया थोड़ी दूरी बनाए रखें,' उसने नवाब का चेहरा धीरे से अपनी ओर धकेलते हुए कहा। 'कृपया मत देखिए। और अगर आपकी आंखें बंद हों, तो और भी अच्छा।'
शम्सुद्दीन अहमद के उचित जवाब सोचने से पहले ही, वज़ीर ने अपने दोनों वस्त्र उतार दिए और चादर की तरह अपने पूरे शरीर पर लपेट लिया। 'लो। अब तुम अपना चेहरा दूसरी तरफ कर सकती हो। अब छिपाने के लिए कुछ नहीं बचा।'
दुपट्टे के नीचे से वज़ीर का शरीर धुंधला सा दिखाई दे रहा था, लेकिन उसने चादर को इतने सलीके से पहना था कि वह फिर भी बिना कपड़ों के नहीं लग रही थी। उसकी आँखें, जो थोड़ी शर्मीली और थोड़ी खिलखिलाती हुई थीं, मानो प्रेम के द्वार पर दस्तक दे रही हों।
नवाब संदेश को अच्छी तरह समझ गया, लेकिन उसे यह उम्मीद नहीं थी कि वज़ीर खुद अपने कपड़े उतार देगी। उसके दिल में घृणा की एक छोटी सी लहर उठी। अंग्रेजों की संगति ने उसकी शर्म को छीन लिया था। उसने ही उसे खुद कपड़े उतारना सिखाया होगा... लेकिन अगले ही पल, उसे अपनी घिनौनी कल्पनाओं पर शर्म आ गई, क्योंकि उसे मीर की एक पंक्ति याद आ गई: उसने अपने कपड़े उतार दिए और मैंने अपना सिर कफ़न के नीचे छिपा लिया।
तो जो बात दो सौ साल पहले मीर साहब के ज़माने में सही थी, वो आज भी सही होनी चाहिए।

धीरे से उसने उसका चादर हटाया। उसने पहले की तरह अपने शरीर को समेट लिया था, लेकिन इस बार नग्नता ने हर मोर्चे पर छिपाव को हरा दिया था। उसे अपनी हर नस में झनझनाहट महसूस हुई और जैसे ही उसके पूरे शरीर में, आँखों से झलकती हुई, कामवासना की रोशनी जाग उठी, उसे एक अजीब से ज्ञानोदय के साथ मीर साहब की पूरी आयत याद आ गई:
उसके नग्न शरीर को देखकर मेरी हजार बार मृत्यु हो गई: उसने अपने कपड़े उतार दिए और मैंने अपना सिर कफ़न के नीचे छिपा लिया।
इस समय मेरी हालत बिल्कुल यही है, या शायद इससे भी बदतर। उसका शरीर मानो मर्यादा की सारी सीमाओं को तोड़ रहा था। मन ही मन दांत पीसते हुए उसने पल भर में अपने शरीर और आत्मा को अभिमान और संयम के सारे सबक सिखा दिए।
अपने संक्षिप्त लेकिन व्यस्त जीवन में, शम्सुद्दीन अहमद ने अनगिनत नग्न स्त्री शरीर देखे थे: सड़कों पर रहने वाली स्त्रीएँ; या घर में छिपकर प्रेम-प्रसंग करने वाली स्त्रीएँ; कामुक आवेग, प्रेम की इच्छा या कर्तव्यबोध से प्रेरित बेगमें। फिर भी, यहाँ की दुनिया बिल्कुल अलग थी। वज़ीर औसत से लंबी थी, फिर भी वह अपने शरीर को इतनी कुशलता से छिपाती थी कि पूरे कपड़े पहने होने पर भी वह बेहद नाज़ुक दिखती थी—जैसे चावल के दाने का छिलका या पान का पत्ता —और बिना कपड़ों के, वह न केवल नाज़ुक और सुडौल दिखती थी, बल्कि कामुकता, यहाँ तक कि वासना का भंडार भी लगती थी।
माथे से लेकर आँखों, नाक और होंठों तक; ठोड़ी से लेकर गर्दन तक; हंसली से लेकर भुजाओं और अग्रभुजाओं तक; हथेलियों से लेकर उंगलियों तक; कंधों से लेकर स्तनों तक; पेट से लेकर नाभि तक; नाभि के नीचे से लेकर कूल्हों तक; नितंबों से लेकर जांघों और पिंडलियों तक; टखनों से लेकर पैरों के तलवों और अंगुलियों तक; बालों से लेकर गुप्तांगों और उन पर मौजूद कोमल, सुगंधित गहरे रोएँ तक; उसके शरीर का कोई भी अंग ऐसा नहीं था जो अपनी स्थिति के अनुसार पूर्ण रूप से आनुपातिक, सुडौल, भारी, पतला या संकरा न हो। और उसकी सुंदरता में भी कोई कमी या खामी नहीं थी।
शम्सुद्दीन अहमद ने पाया कि वह स्वाभाविक रूप से सांस नहीं ले पा रहा था। या शायद उसकी दुनिया में उथल-पुथल मची हुई थी, इतनी तेज़ी से घूम रही थी कि उसके शरीर का हर हिस्सा मानो टूटकर बिखरने वाला था। वज़ीर का शरीर किसी मूर्ति जैसा था, मानो गहरे क्रिस्टल से बना हो, जिसे किसी कुशल मूर्तिकार ने इस उम्मीद में तराशा और सहेजा हो कि सर्वशक्तिमान प्राण की शक्ति उसमें जीवन का संचार कर देगी। और शायद यही हुआ था। शम्सुद्दीन अहमद खान उसे छूने से डर रहा था, और साथ ही साथ उसे छूने के लिए बेताब भी था।

वज़ीर ने नवाब की कमीज़ के बटन खोलने के लिए हाथ बढ़ाया। लेकिन नवाब ने उसके दोनों छोटे-छोटे हाथों को, जिन पर मेहंदी से फूलों के डिज़ाइन बने थे, अपने एक हाथ में ले लिया और उसकी दसों उंगलियों को चूमा। फिर उसने अपना चेहरा उसकी जांघों पर रख दिया और आंखें बंद करके लेट गया।

रात भर वज़ीर थोड़ी देर के लिए जागती और शम्सुद्दीन अहमद को अपने बगल में लेटे देखकर लगभग तुरंत सो जाती। वह उन्हें छूती और हर बार छूने पर उसके पूरे शरीर में सुकून और कृतज्ञता की लहर दौड़ जाती। उसे इस बात पर कोई शक नहीं था कि नवाब उसके प्रति सदा वफ़ादार रहेंगे। अपने दिल के बारे में तो वह और भी आश्वस्त थी कि नवाब के लिए उसकी भावनाएँ किसी भौतिक लाभ की सोची-समझी इच्छा का परिणाम नहीं थीं। वह नवाब के व्यक्तित्व और उनके कुलीन और बेदाग सज्जनतापूर्ण गुणों को बहुत पसंद करती थी, बल्कि यूँ कहें कि उनसे प्रेम करती थी। समय के साथ, वह उनसे प्रेम करने लगेगी; इस बात का भी उसे पूरा यकीन था।

वह शम्सुद्दीन अहमद के साहस का सम्मान करती थीं: फ्रेजर जैसे शक्तिशाली और अभिमानी फिरंगी को चुनौती देने के लिए हमेशा तत्पर रहना आसान नहीं था। प्रेम की कला और रीति-रिवाजों में शम्सुद्दीन अहमद किसी भी तरह बल्क साहब से कम नहीं थे। उनकी तरह नवाब भी ज़बरदस्ती, अनुचित आग्रह या प्रेमिका की मनोदशा या तत्परता की अनदेखी करने में विश्वास नहीं रखते थे। इच्छा और अभिलाषा को प्रेरित करना और दोनों को समान संतुष्टि प्रदान करना: बल्क साहब और नवाब दोनों ही इन कलाओं में समान रूप से निपुण और कुशल थे।

वहाँ सब ठीक था। फिर भी वज़ीर को ठीक से नींद नहीं आ रही थी। यह सच था कि किसी पुरुष से बातचीत के बाद स्त्रियाँ सोती नहीं थीं, और निश्चित रूप से जल्दी तो बिल्कुल नहीं, चाहे वे प्रेम-प्रसंग से कितनी ही थकी हुई क्यों न हों। जबकि पुरुष आमतौर पर तुरंत सो जाते थे; या ज़्यादा से ज़्यादा, वे एक मिनट बात करते, स्त्री के हाथ या शरीर से खेलते, शायद उसे चूमते, और फिर जल्दी से सो जाते। यह बात बल्क साहब और नवाब दोनों पर लागू होती थी।

लेकिन वज़ीर की नींद न आने का एक और कारण था। उसका दिल हरे-भरे खेत की तरह था, नवाब की कृपा के लिए कृतज्ञता की हवा के झोंकों से इधर-उधर झूम रहा था। फिर भी, उसके प्रेम के प्रति आश्वस्त होने के बावजूद, वह कहीं न कहीं असुरक्षित महसूस कर रही थी: क्या उसके दिल में प्रेम का पौधा समय के साथ और बढ़ेगा और फलेगा-फूलेगा, या जल्दी ही मुरझाकर मर जाएगा?

वह रात के बहुत देर तक ही चैन से सो पाती थी। शायद तीन या चार बज रहे होंगे। रात में शम्सुद्दीन अहमद एक-दो बार जागा और मुस्कुराते हुए उसकी ओर देखा, मानो यह सोच रहा हो कि बातचीत वहीं से शुरू की जाए जहां रात में रुकी थी। लेकिन नींद उस पर हावी थी और थकान उस पर।

दोनों भोर होने से काफी पहले एक ही समय पर जाग गए, और फिर मीठे शब्दों और प्यारी मुस्कानों के साथ जीवन के पाठ को दोहराने लगे। अप्रत्याशित रूप से, वज़ीर को नींद आने लगी और वह गहरी नींद में डूब गई। पिछली रात जब उसकी गाड़ी नवाब की हवेली के लिए रवाना हुई थी, तब से शुरू हुई नीरसता, तनाव, अनिश्चितता, आशा और भय की अवस्थाएँ, मन की उलझन,

विचारों की असंगति, अब सुबह की ठंडी, धुंधली सुगंध में घुलने लगी, जो धीरे-धीरे रात के अंतिम पहर के गहरे भूरे, धुएँ वाले कोहरे से अपना सिर बाहर निकाल रही थी। पिछले कुछ घंटों की सारी बुरी बातें पिघल गईं, और एक ऐसी नींद में बदल गईं जो सुबह की हवा की तरह सौम्य और स्फूर्तिदायक थी।

वज़ीर सपने देख रहा था जब ज़ीनत-उन निसा बेगम मस्जिद के मीनार से अज़ान की आवाज़ गूंजी और मस्जिद के पीछे नवाब अहमद बख्श खान के बगीचे में पक्षी चहचहाने लगे। मैं जयपुर में हूँ; बच्चे मेरे साथ हैं और हम बल्क साहब से मिलने जा रहे हैं जो राजपूताना में रहते हैं, लेकिन जयपुर से काफी दूर। मेरे शयनकक्ष में एक एल्बम है। एल्बम में मुगल शैली में बने चित्र हैं। हर चित्र चमक रहा है, मानो कुछ ही मिनट पहले बनकर तैयार हुआ हो। रंगों की भरमार: आसमानी नीला, नीलम, नीला, समुद्री हरा, गहरा हरा और हरे रंग के कई अन्य शेड्स—चावल जैसा हरा, पिस्ता जैसा हरा, गहरा भूरा, पीला हरा, अंगूर जैसा हरा। सुंदर चेहरे, कोमल अंग, लेकिन कोई भी चित्र स्पष्ट नहीं है। पता नहीं कहाँ से हवा चल रही है, एल्बम के पन्ने ऐसे फड़फड़ा रहे हैं कि किसी एक पर नज़र टिक नहीं पा रही।

एक पल के लिए हवा थम गई, जिससे उसकी नज़र उस दृश्य पर पड़ी... वह बनिथानी का चित्र था। उसकी आँखें झट से खुल गईं। नींद अब सूरज में कपूर की तरह गायब हो गई थी। फिर भी, उसने अपनी आँखें फिर से बंद कर लीं। मुझे उठने की कोई जल्दी नहीं है, उसने खुद से कहा। लेकिन वह सपना क्या था? उसने उसे समझने की कोशिश की। क्या उसका कोई अर्थ था? उसने सुना था कि सुबह के सपने हमेशा सच होते हैं। लेकिन बलक साहब इस दुनिया में नहीं हैं, तो मैं अपने बच्चों के साथ उनसे मिलने कहाँ जाऊँगी? क्या इसका मतलब है कि हम बहुत जल्द परलोक में उनसे मिलेंगे? क्या ईश्वर ने हमारे भाग्य में पुनर्मिलन लिखा है? या इसका मतलब यह है कि शम्सुद्दीन अहमद अब तुम्हारे लिए वही हैं जो पहले बलक साहब थे? क्या यहीं मुझे अपने अस्तित्व का केंद्र, अपना घर और शरण मिलेगी? तो क्या मेरे प्यारे मुझे वापस मिल जाएँगे? और इस संदर्भ में बनिथानी के चित्र का क्या अर्थ है? उस महिला को किसी ने कभी नहीं देखा, वह तो बस कल्पना की उपज है, एक देवी जिसे मनुष्य मान लिया गया है। लोग उसे खोजते हैं, चित्रकार उसकी तस्वीर बनाते हैं, लेकिन वह कहीं नहीं मिलती।

आँखें बंद किए वज़ीर अपने विचारों में खोई हुई थी। ज़ीनत-उन निसा बेगम की मस्जिद के मुअज़्ज़िन की आवाज़ बेहद सुरीली, खुली, शांत और संतुलित थी, बनावटीपन या दबाव से रहित। उसकी अज़ान अभी खत्म ही हुई थी कि रौशन-उद-दौला की मस्जिद के मुअज़्ज़िन ने अपनी अज़ान शुरू कर दी, थोड़ी गहरी और भारी, मानो देर रात के राग की गहरी धुनें हवा के झोंकों पर बह रही हों, शाही दूतों की तरह सहजता से। और भी मुअज़्ज़िन अपनी अज़ान देने लगे, मानो घटते अंधेरे में प्रकाश की किरणें फूट रही हों।

वज़ीर करवट बदलकर दूसरी तरफ़ मुड़ी, उसकी आँखें अभी भी बंद थीं। उसने नवाब को महसूस करने के लिए हाथ बढ़ाया, मानो खुद को तसल्ली दे रही हो कि वह सचमुच वहीं है। लेकिन उसकी मुट्ठी में हवा के सिवा कुछ नहीं था। उसका दिल ज़ोर से धड़क रहा था, वह आधी उठी और अपनी आँखों से नींद हटाने की कोशिश करने लगी। उसने चारों ओर देखा, लेकिन शम्सुद्दीन

अहमद कहीं नज़र नहीं आया। शायद वह बाथरूम में हो? लेकिन मैं बाथरूम में कैसे झाँक सकती हूँ? क्या मुझे उसे आवाज़ देनी चाहिए? चुप रहो, यह कितना बेवकूफी भरा विचार है! अरे मूर्ख, अगर वह अंदर है तो क्या वह कभी बाहर नहीं आएगा? यकीनन वह घंटों तक वहाँ नहीं रहेगा। ओह, शायद वह सुबह की नमाज़ के लिए चला गया हो? छोटी बेगम दिन की पाँचों नमाज़ें अदा करने के बारे में ज़्यादा गंभीर नहीं थीं, हालाँकि वह संतों और ईश्वर के मित्रों के मकबरों पर जाने का कोई भी मौका नहीं छोड़ती थीं।

उन्हें बताया गया था कि नवाब शायद ही कभी सुबह की नमाज़ छोड़ते थे। तो क्या वे आज रात भी नमाज़ पढ़ेंगे? भला क्यों नहीं? जिन्हें नमाज़ पढ़नी होती है, वे पढ़ते ही हैं, चाहे बारिश हो या धूप, चाहे वे अपने रोज़ाना के बिस्तर पर सोएं या किसी नए बिस्तर पर। महान लोगों के काम करने के तरीके भी महान होते हैं।

उसे अचानक चिंता सताने लगी। आखिर सुबह कब होगी? मेरे कर्मचारी प्रस्थान के लिए कब तैयार होंगे? मुझे यकीन नहीं है कि नवाब दिन के दौरान लौटेंगे। लेकिन वे यहाँ नहीं हैं, तो मुझे कैसे पता चलेगा कि आगे क्या होगा?

पानी के कमरे के दरवाजे पर हल्की सी खटखटाहट हुई। वज़ीर खानम चौंक गया। हे भगवान, नवाब आ गए! जागते हुए और बिना कपड़ों के मुझे देखकर वो क्या सोचेंगे! ज़रूर, वो मुझे बेशर्म वेश्या समझेंगे। क्या मुझे रजाई ओढ़कर सोने का नाटक करना चाहिए? पर वो मूर्ख नहीं हैं, वो दिखावा और झूठ को अच्छी तरह पहचानते हैं। तो उन्हें सोचने दीजिए। कम से कम मुझे अपना फर्ज तो निभाना ही चाहिए।

यह जयपुरी रजाई थी, हल्की और दुगुनी, जिसमें बेहद मुलायम रुई भरी हुई थी और उच्च गुणवत्ता वाली फूलों वाली रेशमी चादरें थीं, और पूरी रजाई पर करीने से सिलाई की गई थी। दो लोगों के लिए यह काफी आरामदायक थी, लेकिन एक अकेली महिला, और वज़ीर जैसी हल्की-फुल्की महिला के लिए इसे अपने चारों ओर लपेटना मुश्किल था। उसने जैसे-तैसे इसे अपने ऊपर फैलाया और इसे पूरी तरह से अपने शरीर में लपेटने की कोशिश नहीं की, सिवाय इसके कि वह आधी करवट लेकर लेट गई और रजाई से अपना सिर और चेहरा ढक लिया; उसकी खुली हुई लटें उसके आधे छिपे हुए कंधों और रजाई के किनारे पर फैली हुई थीं।

उसे अपनी पीठ पर एक छोटे, कोमल हाथ का स्पर्श महसूस हुआ, लेकिन रजाई के नीचे से नहीं। वह अभी तय नहीं कर पा रही थी कि इस स्पर्श का क्या अर्थ निकाले और यह हाथ किसका है, तभी उसने पाया कि उसके पैर रजाई की तहों से बाहर निकल आए हैं। उस कोमल छोटे हाथ का हल्का स्पर्श अब उसके पैरों के तलवों को गुदगुदा रहा था। हाथ की कोमलता, उसका छोटा आकार और उसकी हल्की गर्माहट ने उसे आश्वस्त कर दिया कि यह नवाब नहीं हो सकता।

वह मुड़ी, अपना माथा आगे किया और रजाई के नीचे से झाँका। उसकी बड़ी-बड़ी आँखें चौड़ी हो गईं। चौदह-पंद्रह साल की एक लड़की पलंग के पास बैठी वज़ीर के पैरों के तलवों पर धीरे-धीरे उंगलियाँ फेर रही थी। वह मन ही मन मुस्कुरा रही थी, मानो उसे यह काम बहुत अच्छा लग रहा हो। जैसे ही उसे वज़ीर की नज़र अपने ऊपर महसूस हुई, वह सहजता से, बिना किसी बनावट या जल्दबाजी के, नीचे कूद गई और पलंग के पास खड़ी हो गई। और भी मनमोहक मुस्कान के

साथ, उसने झुककर वज़ीर को सलाम किया और कहा, 'सुप्रभात, खानम साहब। मैं आपको प्रणाम करती हूँ।'

उसकी आवाज़ में एक सहज, खुलापन और मधुरता थी, जो पूरे कमरे में दूर तक साफ़ सुनाई दे सकती थी, और सर्दियों के अंत में बुलबुल की चहचहाहट जैसी थी। वज़ीर, जिसकी अपनी आवाज़ कर्कश, मीठी और फुसफुसाहट जैसी धीमी थी, और जिसमें ज़ोर या कर्कशता की कोई क्षमता नहीं थी, उस लड़की की मधुर और अपनी आवाज़ से बिल्कुल अलग आवाज़ पर तुरंत मोहित हो गई। अगर उसे यह डर न होता कि उसके कपड़े उतर जाने से सब कुछ ज़ाहिर हो जाएगा, तो वह अपनी लेटी हुई स्थिति से उठकर लड़की को अपने पास बिठा लेती।

'मैं तुम्हें जगाने आई थी,' लड़की ने कहा। 'लेकिन देखो, तुम खुद ही जाग गए हो। मुझे उम्मीद है कि इस दासी ने तुम्हें परेशान नहीं किया। क्या तुम अच्छे से सोए?'

वज़ीर खानम ने रजाई को थोड़ा और कसकर गले लगाया और उसे ऊपर खींचकर अपनी पीठ को पलंग के सिरहाने से टिका लिया। अब उसने अपनी जगाने वाली को ध्यान से देखा। वह लगभग पंद्रह साल की थी, न ज़्यादा लंबी न ज़्यादा छोटी, उसका शरीर थोड़ा गोल-मटोल था, जो भारीपन की बजाय बचपन की चर्बी जैसा लग रहा था। उसका रंग बेहद गोरा था, जो वज़ीर को इस मामले में मिर्ज़ा ग़ालिब की याद दिलाता था। उसकी नाक थोड़ी दबी हुई थी, लेकिन बिल्कुल भी भद्दी नहीं थी, और उसका छोटा सा मुँह था, जिसके होंठ नाजुक थे, बिना पान के भी स्वाभाविक रूप से गुलाबी थे, सुडौल थे और कभी-कभी फड़कते थे, जो मुस्कुराने या मज़ाक करने की स्वाभाविक इच्छा को दर्शाते थे, मानो वह बस खुशी से हँसने ही वाली हो। उसकी आँखें, काजल की हल्की सी झलक के साथ काली थीं, बड़े बादाम जैसी थीं, और उनमें भी हल्की सी मुस्कान झलक रही थी। उसके बाल घने, चमकदार और काले थे, सामने की छोटी लटें छोटी-छोटी चोटियों में गुंथी हुई उसके माथे पर लटक रही थीं। लंबे बालों को दो भागों में गूंथा गया था, एक भाग पीठ पर पीछे की ओर लटक रहा था और दूसरा भाग कंधे से आगे की ओर लहरा रहा था।

उसने हल्के नीले रंग का महमूदी का लंबा कुर्ता पहना था, जो एक सादा सूती कपड़ा होता है और जिसे सादगी पसंद या गरीब वर्ग के लोग बहुत पसंद करते हैं। उसके ऊपर उसने बैंगनी रंग की मखमली जैकेट पहनी थी। उसकी पतलून भी उसी रंग की थी, लेकिन साटन की बनी थी, जिस पर सोने और चांदी की हल्की कढ़ाई थी। उसके कानों में सोने के छोटे-छोटे छल्ले थे, जिनमें से प्रत्येक में एक छोटा हीरा जड़ा था, लेकिन उसकी नाक और गर्दन पर कोई आभूषण नहीं था। उसकी दोनों कलाइयों पर हैदराबादी शैली के चौड़े कंगन थे, जो चमकीले और सुंदर थे, लेकिन सीप से बने थे और उनमें कृत्रिम रत्न जड़े थे। उसका दुपट्टा ढाई गज लंबा था, जो मलमल का था और घर पर ही हरी धारियों से रंगा हुआ था और धारियों को और भी आकर्षक बनाने के लिए उसमें सिलवटें डाली गई थीं। उसने एड़ी से खुले हल्के, सादे जूते पहने थे। कुल मिलाकर, उसके व्यक्तित्व से दोस्ताना, सभ्य और घरेलू सा आभास होता था। और उसकी आवाज़ ने वज़ीर का दिल जीत लिया था, जिसने अपनी मनमोहक मुस्कान बिखेरते हुए कहा: 'नहीं, आपने मुझे बिल्कुल भी परेशान नहीं किया। लेकिन हमें अपने बारे में कुछ बताइए।' आप कौन हैं, और इतनी

सुबह-सुबह आप यहाँ कैसे आ गए?
जी जी, मैडम,' उसने शर्माते हुए कहा। 'मुझे आपको जगाने के लिए भेजा गया था। मैं यहीं हवेली में रहती हूँ। मेरा नाम राहत अफजा है।'
'ओह, कितना प्यारा नाम है!' वज़ीर ने कहा। उसे लगा कि लड़की नवाब की रिश्तेदार तो नहीं हो सकती, पर वह नौकरानी जैसी भी नहीं दिखती थी। अगर मैं उसके माता-पिता के बारे में पूछूँ तो शायद उसे बुरा लग जाए। फिर भी मुझे उसके बारे में और जानना चाहिए, ताकि मैं नवाब के ठिकाने और मेरे जाने के समय का पता लगा सकूँ। उसने बड़ी सावधानी से कहा, 'तो नवाब कहीं चले गए हैं और मेरी देखभाल करने के लिए आपको छोड़कर चले गए हैं। क्या ऐसा ही है?'
नहीं, महोदया। ऐसा नहीं था।' वह पास आकर बिस्तर पर बैठ गईं और वज़ीर के पैर और पिंडली दबाने लगीं। 'बात यह है...' उन्होंने 'बात' शब्द पर ज़ोर देते हुए कहा, 'नवाब साहब सुबह होने से पहले नमाज़ के तुरंत बाद पहासू निरीक्षण के लिए चले गए और हमें, माँ-बेटी को, कुछ कर्तव्य निभाने का आदेश दिया। इसलिए हम यहाँ उन्हें पूरा कर रहे हैं।'
वज़ीर को हल्का दर्द महसूस हुआ, जो तुरंत तीव्र झुंझलाहट में बदल गया। अगर वह मेरे जागने का इंतज़ार नहीं कर सकता था, तो जाने से पहले मुझे जगा सकता था। मुझसे बात किए बिना ही चला गया, मानो मैं कोई नौकरानी हूँ और विदाई के शब्द कहने की ज़रूरत ही नहीं। लेकिन ये बातें मुझे इस प्यारी बच्ची के सामने नहीं कहनी चाहिए।
फिर उसकी झुंझलाहट दर्द और गहरे शोक में बदल गई। इसलिए मेरे जीवन की नाव हमेशा एक कप्तान और एक लंगर की तलाश में रहेगी... उसे एहसास हुआ कि राहत अफजा फिर बोल रही हैं। 'आप हबीब-उन निसा से परिचित हैं, वह मेरी माँ हैं। वह सुबह की नमाज़ के बाद कई विशेष दुआएँ पढ़ती हैं और इसके अलावा वह पवित्र प्रवचन भी पढ़ती हैं। इसलिए उन्होंने मुझसे कहा, "राहत अफजा, नमाज़ के बाद आपको मेरा बूढ़ा चेहरा देखने की ज़रूरत नहीं है। सीधे खानम साहब के पास जाइए—"'
राहत अफजा के अपनी बात पूरी करने से पहले ही वज़ीर ने अधीरता से बीच में ही टोकते हुए लगभग अनजाने में ही कहा, 'लेकिन नवाब साहब ऐसे क्यों चले गए? क्यों...?'
राहत अफ़ज़ा समझ गई कि नवाब की अनुपस्थिति से वज़ीर मन ही मन परेशान है। उसने जवाब देने में जल्दबाजी न करने का फैसला किया और वज़ीर के पैर दबाती रही। शायद वह वज़ीर के गुस्से को शांत करने का इंतज़ार कर रही थी, लेकिन वज़ीर को भी एहसास हो गया कि अब चुप रहना ही बेहतर है।
काफी देर चुप रहने के बाद राहत अफजा ने कहा, "जी महोदया, असल बात यह है कि नवाब साहब अज़ान की अज़ान से पहले उठ गए और पुरुषों के कमरे में चले गए। पहासू से आए एक ऊंट सवार ने समाचार पत्र पेश किया और बताया कि डाकुओं के एक गिरोह ने कल रात हमला किया था और जब नवाब के सैनिकों ने उन्हें खदेड़ दिया, तो उन्होंने कस्बे से कुछ मील दूर जंगल में एक पुराने किले में शरण ली..."
'ओह! कितना भयानक! मुझे उम्मीद है कि किसी की जान नहीं गई होगी?'
"नहीं महोदया, जहाँ तक मुझे पता है, किसी की जान नहीं गई, लेकिन उन्होंने काफी कीमती

सामान लूट लिया और साहूकारों से उनका सामान छीनने के लिए उन्हें गर्म लोहे से भी मारा और एक-दो जवान लड़कियों को भी अगवा कर लिया।" राहत अफजा की आँखों में आँसू भर आए और उनका चेहरा पीला पड़ गया। "उनमें से एक स्थानीय न्यायाधीश की बेटी थी। उसका एक पैर खराब है, लेकिन वह सूर्य और चंद्रमा की तरह सुंदर है। बेचारी, वह दौड़ भी नहीं सकती थी। एक दरिंदे ने उसे अपने फंदे से पकड़ा और अपने घोड़े पर बिठा लिया।"

राहत अफजा बुरी तरह कांप रही थी, उसका चेहरा पीला पड़ गया था। उसकी आवाज सिसकियों से भर उठी थी। वज़ीर को समझ नहीं आ रहा था कि वह इस दुखी लड़की को कैसे दिलासा दे। अपनी चिंताओं को किनारे रखकर वह रोते हुए बोली, 'हे प्रभु, हे प्रभु! वह बेचारी बच्ची कैसे बच पाई होगी? उन दरिंदों ने उस बच्ची को भी नहीं छोड़ा! बीबी साहब, हिम्मत मत हारिए। प्रभु दया करेंगे। नवाब साहब पूरी तेजी से वहां गए हैं। वे उस बेचारी को जरूर बचा लेंगे।'

वज़ीर ने राहत अफ़ज़ा के सिर और चेहरे को सहलाया और उन्हें शांत करने के लिए चुंबन जैसी आवाज़ निकालते हुए कहा: 'जाओ, पानी पी लो, या कुछ ऐसा पी लो जिससे तुम्हें सुकून मिले। इससे तुम्हारा मन शांत होगा। ऐसे मौकों पर रोना नहीं चाहिए। हिम्मत रखनी चाहिए और प्रार्थना करनी चाहिए।'

राहत अफजा ने अपने रुमाल से अपने आंसू पोंछे और कहा, 'पानी... नहीं... नवाब साहब ने आपके लिए एक संदेश और एक उपहार छोड़ा है और आदेश दिया है कि चेहरा धोने के बाद इन्हें आपको भेंट किया जाए।'

वज़ीर का दिल ज़ोर से धड़कने लगा। तो नवाब ने मेरे लिए कुछ छोड़ा है! उत्सुकता न दिखाते हुए, उसने बनावटी उदासीनता से कहा, 'ठीक है, लेकिन राहत अफ़ज़ा, आपको जाकर पानी पी लेना चाहिए। आपका हौसला बुलंद रहे और आपका दिल मज़बूत रहे। अल्लाह की मर्ज़ी से सब ठीक हो जाएगा। मैं अब उठकर चेहरा धोकर तैयार हो जाती हूँ। आप थोड़ी देर में लौट सकती हैं, ठीक है?'

दरअसल, मैं आपके लिए बादाम और शहद का एक ठंडा पेय लाया हूँ। साल के इस समय में इसे खाली पेट पीना बेहद फायदेमंद होता है।

'ठीक है, बेटा, अपना पेय लाओ। दरअसल, मुझे जागने के तुरंत बाद कुछ भी खाने-पीने की आदत नहीं है, लेकिन अब मैं खाऊंगा, क्योंकि तुमने कहा है। लेकिन ध्यान रखना, मेरे लोगों को नाश्ते के साथ थोड़ा दूध जरूर दे देना।'

राहत अफजा जल्दी से पानी के कमरे में गईं और एक चांदी की ट्रे लेकर लौटीं जिस पर एक लंबा, नक्काशीदार चांदी का गिलास रखा था; गिलास पर रेशम का ढक्कन था जिस पर बारीक, रंगीन मोतियों की एक माला लगी थी। उन्होंने कहा, 'लीजिए, खानम साहब, कृपया इसे धीरे-धीरे पीजिए। मैं आपको विश्वास दिलाती हूं, ईश्वर की कृपा से आपका हृदय और मन अत्यंत प्रसन्न हो जाएगा। यह पेय हकीम अहसानुल्लाह खान साहब के नुस्खे के अनुसार तैयार किया गया है; वे वरिष्ठ नवाब साहब के निजी चिकित्सक थे, जो अब स्वर्ग में विराजमान हैं।'

यह एक सच्चाई थी कि वज़ीर आमतौर पर जागने के तुरंत बाद कुछ भी खाती-पीती नहीं थी। उसने कुछ हिचकिचाहट के साथ ढक्कन हटाया और पाया कि पेय का रंग गुड़हल जैसा लाल था,

जिसमें कस्तूरी और केसर की हल्की सी खुशबू आ रही थी। उसने एक घूंट धीरे से पिया: यह ठंडा नहीं था, बल्कि बहुत ठंडा था, बस हल्का ठंडा था, लेकिन इसमें कई सुखद स्वाद थे, जिनमें कुछ मसाले भी शामिल थे। जैसे ही वह पेय उसके गले से नीचे उतरा, उसे खुशी का एहसास हुआ, मानो वह खुशी से झूम उठी हो। ऐसा लगा जैसे वह पेय सीधे उसके दिल को छू गया हो, मानो सुबह की गुलाबी आभा उसकी रगों में दौड़ रही हो।

'राहत अफजा, यह वाकई एक शानदार पेय था, क्या इसे आपने बनाया था?'

'ओह नहीं, महोदया। यह तो पहले से ही एक बोतल में था। मैंने बस उसमें से थोड़ी मात्रा निकाली और उसे ताजे पानी में घोल दिया। अगर आपको यह पसंद आ जाए तो यह मेरा सौभाग्य है।'

'तो मुझे यकीन है कि इसे मिलाने में कोई जादू जरूर होगा। ठीक है, अब आप जाइए। कृपया अपनी माँ से कहिएगा कि थोड़ी देर बाद अंदर आ जाएँ।'

'क्या मुझे उसे अभी नहीं भेजना चाहिए?' राहत अफजा ने थोड़ा संशय से पूछा। 'वह तुम्हारा चेहरा धोने और कपड़े बदलने में तुम्हारी मदद करेगी।'

हे भगवान, फिर वही झंझट! इस लड़की से बहस करने का कोई फायदा नहीं। बड़ी मशक्कत और मनाने के बाद ही मैं उसकी माँ से छुटकारा पा सकी थी। 'ठीक है, जब चाहे आ सकती है।'

राहत अफजा के बाथरूम में कदम रखते ही वज़ीर झटपट उठी और पिछली रात के अपने सोने के कपड़े पहन लिए। फिर उसने चादर को जहां-जहां सिलवटें थीं, सीधा किया और किताब लेकर शालीनता से बैठ गई, मानो वह पूरी रात पढ़ाई कर रही हो।

जब वह अज़ान के बाद पहली बार उठी, तो बेडरूम की सारी बत्तियाँ बुझी हुई थीं। बाथरूम के दरवाज़े के पास केवल एक छोटा सा मोमबत्ती स्टैंड था, और एक आले में अंग्रेज़ी शैली का एक मोमबत्ती स्टैंड था। अंग्रेज़ इसे 'लंप' (दीपक) कहते थे और इसमें सरसों या तिल का तेल जलता था। भारतीय लोग जलने की तेज़ गंध को कम करने के लिए मुख्य ईंधन के नौ भागों में एक भाग फूलों का तेल मिलाते थे। जाने से पहले, राहत अफ़ज़ा ने कुछ और बत्तियाँ जला दी थीं, जिससे बेडरूम में काफ़ी रोशनी हो गई थी। रोशनदानों से आती थोड़ी सी धूप से लग रहा था कि सूरज आसमान में ऊपर चढ़ गया है और शहर की कई हवेलियों की चोटियों को रोशन कर रहा है। उसने अभी किताब खोली ही थी कि पानी के कमरे के दरवाजे पर हल्की सी दस्तक हुई और हबीब-उन निसा अंदर आ गया।

'सुप्रभात, खानम साहब। क्या आपने अच्छी नींद ली?'

'हां, रात तो ठीक-ठाक गुज़री, लेकिन अब मुझे नवाब की चिंता सता रही है।'

'खानम साहब, वास्तव में चिंता की कोई बात नहीं है। ईश्वर की कृपा से, वह सूर्यास्त से पहले की नमाज़ से पहले यहाँ पहुँच जाएँगे। तब तक वहाँ सब शांत और स्थिर हो जाएगा, लुटेरों को फाँसी दी जा चुकी होगी।'

और वो छोटी बच्ची जिसे...?

"ओह, प्रिय महिला, क्या आपका दिल उसके लिए दुखी है? मैं आपके लिए अपनी जान कुर्बान कर दूँ, अब तक वह अपने पिता और भाइयों की शरण में पहुँच चुकी होगी। बीबी, जीत अल्लाह

का इनाम है, कोई इसे नियंत्रित नहीं कर सकता, लेकिन हमारे नवाब को ऐसे किसी भी अभियान में कभी हार नहीं मिली। अल्लाह उन्हें सलामत रखे; बताया जाता है कि उनके सैनिकों ने उस किले को बड़ी कुशलता से घेर लिया था। कोई भी बदमाश बचकर नहीं निकल सका।"
ऐसा ही हुआ होगा; ऐसा ही होना चाहिए था, वज़ीर ने उदास मन से सोचा, लेकिन पुरुषों द्वारा अत्याचार की शिकार लड़की के लिए एक घंटा या उससे भी कम समय कयामत के दिन के बराबर है। नवाब की घुड़सवार सेना के आने तक उसका सब कुछ खत्म हो चुका होगा। विषय बदलने के लिए, और हबीब-उन निसा के बारे में और जानने के लिए, उसने कहा, 'हबीबा, तुमने मुझे कल रात यह नहीं बताया था कि तुम्हारी इतनी प्यारी बेटी है!'
'आप सदा सुखी रहें, खानम साहब, एक गरीब औरत या उसकी बेटी की क्या कीमत है? लेकिन असल बात यह है कि कल रात इन बातों को बताने की कोई ज़रूरत नहीं थी। कृपया आप स्वयं पानी के कमरे में जाइए और मुझे आपका चेहरा धोने और कपड़े बदलने में मदद करने दीजिए। फिर हम नवाब द्वारा आपके लिए छोड़ी गई भेंट आपको दिखाएंगे।'
वज़ीर का मन हुआ कि वह पलटकर जवाब दे: ये शर्त क्यों? क्या नहाने से पहले तोहफ़ा नहीं दिया जा सकता? कम से कम वे मुझे बता तो सकते हैं कि क्या है। इतनी बातें तो इधर-उधर हो रही हैं, लेकिन असली मुद्दा अनसुलझा ही है। हालांकि, वह जानती थी कि ऐसी स्थितियों में संयम और सावधानी बरतना ज़रूरी है, इसलिए उसने अपनी बेचैनी और जिज्ञासा दोनों को दबा लिया और चुपचाप कपड़े बदलने और तैयार होने की लंबी प्रक्रिया पूरी की।
कपड़े बदलते समय हुई बातचीत से वज़ीर को पता चला कि हबीबा के पति, जिनका नाम गुलाम नबी था, दिल्ली के पास स्थित मेराठ इलाके से आए थे और नवाब अहमद बख्श खान के दरबार में सिपाही के रूप में काम करते थे। उन्होंने उसी तरह के एक अभियान में लड़ते हुए अपनी जान गंवाई, जिसमें नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान इस समय लगे हुए थे। उस समय हबीब-उन निसा गर्भवती थीं और जल्द ही उन्होंने एक बेटी को जन्म दिया। नवाबी अहमद बख्श खान ने उनकी प्रसव और देखभाल का पूरा खर्च उठाया और बाद में हबीबा को बहू खानम की दासी नियुक्त कर दिया, जो शम्सुद्दीन अहमद खान की माता थीं। तब से माता-पिता और पुत्री नवाब की हवेली में स्थायी नौकरानियां बन गईं। हबीबा अब वरिष्ठ दासी थीं और राहत अफजा उनकी सेविका।
हवेली में हबीबा के साथ संबंध बनाने या उसे रखैल या उपपत्नी बनाने के इच्छुक पुरुषों की कोई कमी नहीं थी। कुछ तो उसके साथ जबरदस्ती करने से भी नहीं हिचकिचाते थे, लेकिन नवाब के प्रति हर कोई इतना भयभीत था कि किसी की भी उस पर नज़र उठाने की हिम्मत नहीं होती थी। अल्लाह उन्हें सलामत रखे, हमारे वर्तमान नवाब भी अपने सेवकों के लिए उतने ही उदार और दयालु थे। अब माता-पिता दोनों की सबसे बड़ी इच्छा खानम साहब की सेवा में स्थायी रूप से काम करना थी। उन्हें नियमित वेतन की भी उम्मीद नहीं थी: हबीबा को अपने पति की पिछली सेवाओं के लिए नियमित रूप से पेंशन मिलती थी और इसके अलावा उचित अवसरों पर उन्हें उपहार, इनाम और कपड़े भी मिलते थे।
श्रृंगार और सजने-संवरने में लगा समय आराम से बीत गया क्योंकि हबीबा अपने बारे में बातें करती रही। पूरी तरह से सज-धज और मेकअप करने के बाद, वज़ीर अब उस बड़ी, आरामदायक

कुर्सी पर बैठ गई जिस पर वह पिछली रात पहली बार अंदर आई थी। लगभग उसी क्षण, राहत अफ़ज़ा अपने हाथ में एक छोटा लकड़ी का बक्सा लिए वहाँ पहुँची।

राहत अफजा ने कुर्सी की चौड़ी भुजाओं में से एक पर डिब्बा रखते हुए कहा, "बधाई हो, खानम साहब, आप दीर्घायु और सुरक्षित रहें। हमारे पूज्य नवाब की ओर से यह उपहार शुभ हो!"

'और ईश्वर करे कि आपको सदा और भी अधिक आशीर्वाद प्राप्त हों!' हबीबा ने अपनी शुभकामनाएँ देते हुए कहा। उसने देखा कि वज़ीर डिब्बा खोलने में कुछ हिचकिचा रही थी, इसलिए उसने उससे आग्रह किया: 'आओ, कृपया इसे खोलो। तुम्हें संकोच नहीं करना चाहिए। इसे खोलो और काम खत्म करो।'

वह यह भी कहना चाहती थी, 'खोलिए, ताकि हम भी आपके उपहार देख सकें।' लेकिन उसने अपनी ज़बान पर लगाम लगाई। नौकरानी होने के नाते, उनके बीच इतनी आत्मीयता नहीं थी कि वे थोड़ी शरारत कर सकें। इस मामले में पहल करने का अधिकार वज़ीर को ही था।

लगभग आठ इंच लंबा और चार इंच ऊंचा यह डिब्बा भारी कश्मीरी अखरोट की लकड़ी का बना था, जिस पर चीनी पैटर्न उकेरे गए थे। इसका भीतरी भाग मखमल से ढका हुआ था और इसके केंद्र में सूखे पीपल के पत्ते के आकार का एक छोटा चांदी का डिब्बा रखा था, जिस पर इतनी बारीक नक्काशी की गई थी कि पतली से पतली नस भी दिखाई दे रही थी और ऐसा लग रहा था मानो यह बेहतरीन चांदी की जाली हो। शुद्ध और प्राचीन होने के कारण चांदी पर कुछ कालापन आ गया था, जिससे सूखे पत्ते का आभास और भी पुख्ता हो गया था। वज़ीर कटक से आने वाली चांदी की नक्काशी से परिचित था, लेकिन उसने कभी ऐसी कारीगरी नहीं देखी थी जो इतनी परिष्कृत और इतनी नाजुक हो कि उसे छूने से भी डर लगे।

डिब्बे की जालीदार डिज़ाइन के नीचे एक मुड़ा हुआ कागज़ का टुकड़ा और एक अंगूठी साफ़ दिखाई दे रही थी। वज़ीर को यह देखकर खुशी हुई कि यह कोई जादुई डिब्बा नहीं था और इसे सामान्य तरीके से खोला जा सकता था, वरना उसकी चतुराई की परीक्षा हो सकती थी। उसने सबसे पहले कागज़ का टुकड़ा निकाला, और हबीबा और राहत अफ़ज़ा तुरंत एक तरफ हट गईं और कमरे के अन्य कामों में लग गईं। राहत अफ़ज़ा ने चादर को सीधा करना और बड़े रजाई को ध्यान से मोड़ना शुरू किया। हबीबा ने मोमबत्ती स्टैंड और मोमबत्ती स्टैंड में जमे हुए मोम को खुरचना शुरू किया।

वज़ीर ने संदेश खोला। देखने में तो वह सामान्य चार तहों में लिपटा हुआ था, लेकिन खोलने पर वह एक छोटे चार पंखुड़ियों वाले फूल जैसा बन गया। मेहंदी की कोमल और गर्म सुगंध की एक हल्की लहर ने उसकी नाक को छू लिया। वज़ीर को ऐसा लगा मानो वह ठंडी हवा से अंदर आई हो और शम्सुद्दीन अहमद की उंगलियों ने उसके गालों को छू लिया हो। यह हल्के नीले रंग का कागज था, जिस पर केसरिया-सुनहरी स्याही से निम्नलिखित फ़ारसी छंद लिखा हुआ था:

कल रात, मेरी खूबसूरत, जीवंत प्रेमिका ने मेरे साथ नग्न अवस्था में शराब पी: ऐसा लग रहा था मानो मोमबत्तियों से भरा एक झूमर सीधे मेरी बगल में जगमगा रहा हो।

वज़ीर को अपने कानों के लोब, फिर माथे और फिर गालों पर लाली महसूस हुई। वह उस श्लोक की सुंदरता और प्रासंगिकता से मंत्रमुग्ध हुए बिना नहीं रह सकी। उसने जल्दी से कागज को

मोड़कर एक छोटी सी गोली बना ली और उसे अपने कॉलर के नीचे दबा लिया, लेकिन फिर भी कागज के दिखने या पतले चोली के नीचे से फिसलने की संभावना थी, इसलिए उसने उसे अपने क्लीवेज में सुरक्षित रख लिया और मन ही मन प्रार्थना की कि घर पहुँचने तक वह सुरक्षित रहे।
राहत अफजा ने थोड़ी नखरेबाजी के साथ साहस दिखाते हुए कहा, 'कृपया खानम साहब, अंगूठी पर भी एक नजर डालिए! हम सभी यह देखने के लिए बेताब हैं कि यह कैसी दिखती है।'
वज़ीर ने डिब्बी के अंदर हाथ डाला और दंग रह गई। शुद्धतम सोना, छूने पर लगभग लचीला, कम से कम पाँच ग्राम वज़न का; पहला रत्न गहरे हरे रंग का पन्ना था जिसे अंगूर के पत्ते के आकार में तराशा गया था, एक सिरे पर आधे चने के आकार का माणिक था, जिसे अंगूर के गुच्छे की तरह तराशा गया था और उस पर एक छोटा पत्ता लगा हुआ था। पत्ते और फल की बारीकियाँ स्पष्ट थीं और ऐसा लग रहा था मानो दोनों एक ही पत्थर से बने हों। पन्ने की गहरी हरी चमक माणिक पर हल्की पड़ रही थी और माणिक का गुलाबी लाल रंग पन्ने के हरेपन को थोड़ा कम कर रहा था। पन्ने के पत्ते और माणिक के फल के नीचे सरसों के दाने के आकार के चार छोटे हीरे जड़े थे, लेकिन हीरों को इस तरह से काटा गया था कि प्रत्येक बेज़ल से प्रकाश परावर्तित हो रहा था, जिससे एक छोटे स्पार्कलर का आभास हो रहा था।
अपने स्वभाव से न तो माणिक और न ही पन्ना अत्यधिक चमकदार रत्न थे, और पन्ना, चाहे कितना भी महंगा हो, उसमें कुछ छोटे-मोटे दोष अवश्य होते थे। इन रत्नों का मूल्य उनके रंग और तराशने की शैली में निहित था, लेकिन चमक की कमी को शुद्ध पीले सोने की दमक और हीरे की चमक से पूरा किया गया था, मानो किसी सुंदर वस्तु पर सोने की परत चढ़ाई गई हो।
‘अरे बाप रे!’ राहत अफजा ने अनजाने में खुशी की आह भरी। ‘इसकी कीमत दो रही होगी...’
वह कहना चाहती थी कि अंगूठी की कीमत दो या ढाई हजार रुपये होगी, लेकिन हबीब-उन निसा ने उसे घूरकर चुप करा दिया। उपहार की कीमत का आकलन करना, खासकर उस्तादों के सामने, शिष्टाचार नहीं माना जाता था। राहत अफजा ने लड़खड़ाते हुए कहा, 'मुझे यकीन है कि इसे बनाने में दो या ढाई दिन की मेहनत लगी होगी और दो या तीन कारीगरों की जरूरत पड़ी होगी।'
हबीबा ने कहा, 'निस्संदेह, यह अंगूठी आभूषणों के लिए वही महत्व रखती है जो हमारी खानम सुंदरता के लिए और हमारा नवाब कुलीनता के लिए रखती है।' उन्होंने 'नवब' शब्द का उच्चारण अरबी लहजे में किया, ताकि इस पर और जोर दिया जा सके।
‘देखो, हबीबा, ये तो हद से ज़्यादा हो गया! तुम मुझे नवाब से कुचल रही हो!’ वज़ीर मुस्कुराया। ‘लेकिन असल बात तो ये है कि इस तरह की अंगूठियाँ सिर्फ राजकुमारियों और कुलीन वर्ग को ही शोभा देती हैं।’
हबीबा के कुछ कहने से पहले ही मुख्य द्वार पर हल्की सी दस्तक हुई। राहत अफजा झट से उठीं, दरवाजा थोड़ा सा खोला और बाहर देखा। सुबह की हल्की रोशनी, ताज़ी धुली चादर की तरह सुहावनी, फव्वारे की कलकल ध्वनि के साथ कमरे में प्रवेश कर रही थी। उन्होंने दरवाजे पर मौजूद व्यक्ति से धीमी आवाज़ में बात की और दरवाजा बंद करने के बाद मुड़ते ही देखा कि वहाँ मौजूद महिलाओं की निगाहें उन पर टिकी हुई हैं। उनके कुछ कहने से पहले ही राहत अफजा बोलीं: 'खानम साहब, आपके नौकरों से पूछा गया है कि क्या वे हवेली की रसोई में नाश्ता करना

चाहेंगे या वे स्वयं खाना पकाने के लिए सामग्री लेना पसंद करेंगे।'
वह सांस लेने के लिए रुकी, और वज़ीर ने पूछा, 'अच्छा। तो फिर उन्होंने क्या पसंद किया?'
'महोदया, उन्होंने बताया कि नौकरों की रसोई में जलाने की लकड़ी और बर्तन सब उपलब्ध हैं, इसलिए यदि उन्हें उनका राशन दिया जाए तो वे अपना खाना खुद बनाना पसंद करेंगे।' वह फिर रुक गईं, शायद यह याद करने की कोशिश कर रही थीं कि वास्तव में क्या-क्या सामान दिया गया था। फिर उन्होंने जल्दी से बोलना शुरू किया जैसे कोई सूची पढ़ रही हों: 'गेहूं का आटा, एक सेर; चना या हरे छिलके वाला चना, चौथाई सेर; सूजी, एक सेर का आठवां हिस्सा; घी, एक सेर का सोलहवां हिस्सा; सरसों का तेल, एक सेर का सोलहवां हिस्सा; सफेद चीनी, एक सेर का दसवां हिस्सा, और काली चीनी, एक सेर का चौथाई हिस्सा; और नकद, दो राजपैसे। यह यहाँ उन सभी नौकरों को दिया जाने वाला दैनिक राशन है जो महाराज की रसोई में भोजन नहीं करते हैं।'
'अच्छा। बहुत अच्छा,' वज़ीर ने कहा। 'तो क्या उन्होंने खाना खत्म कर लिया?'
जी हां, खानम साहब... मुझे खेद है, मैं कुछ भूल गया था। परम पूज्य खानम के आदेशानुसार, प्रत्येक सेवक को एक लीटर भैंस का दूध और दो चम्मच भूरी चीनी भी दी गई थी।
'अल्लाह की मर्ज़ी! हबीबा, तुम्हारी ये जवान लड़की तो बहुत ही अच्छी मैनेजर है। कितनी कुशलता से अपने सारे काम करती है!' वज़ीर ने राहत अफ़ज़ा को प्रशंसा और स्नेह भरी नज़रों से देखा, और राहत अफ़ज़ा का चेहरा खुशी और शर्म से गुलाबी हो गया।
'प्यारी बेटी, तुमने नौकरों के क्वार्टर में नाश्ता खत्म हुआ या नहीं, यह नहीं बताया। और क्या तुम खानम साहब को भी खाना खिलाने वाली हो, या उन्हें भूखा रखोगी?' हबीबा ने उससे पूछा।
राहत अफजा ने तुरंत जवाब दिया, "खानम साहब के नौकरों ने नाश्ता कर लिया होगा। खानम साहब के लिए, अम्मा जी ने पहले ही सारी व्यवस्था कर दी है। मैं आदेशों की प्रतीक्षा कर रहा हूँ।"
वज़ीर को माँ-बेटी की जोड़ी को लेकर थोड़ी शर्मिंदगी महसूस हुई, बल्कि शर्मिंदगी ही महसूस हुई; वे दोनों उसकी देखभाल में व्यस्त थीं, इधर-उधर भाग-दौड़ कर रही थीं। अच्छा होगा कि मैं उन्हें और ज़िम्मेदारी से बचा लूँ। उसे नवाब के कार्यक्रम को लेकर भी थोड़ी चिंता थी। कहीं ऐसा न हो कि वह शाम को सिरकी वालन में मुझसे मिलने आ जाएँ और मैं यहाँ असमंजस में समय बिता दूँ? और अगर रात के खाने को देखें तो नाश्ता दोपहर से पहले खत्म नहीं होगा।
इन सब बातों पर विचार करते हुए, उसने प्रसन्नता से मुस्कुराते हुए कहा, 'मेरी प्यारी हबीबा, अगर आप मुझे अभी जाने दें तो मैं सचमुच आपकी आभारी रहूंगी। बेहतर होगा कि आप मुझे नाश्ता कराने की असुविधा न उठाएं। मेरे घर पर कोई नहीं है; मैं इसे और अधिक समय तक खाली नहीं छोड़ सकती।'
'आपका हुक्म सही है, लेकिन नवाब साहब को अगर पता चल गया कि मैंने आपको खाली पेट जाने दिया, तो वो मुझे नाश्ते में खा जाएंगे। कृपया मेरी विनती मान लीजिए: बस थोड़ा सा खा लीजिए, फिर जाइए। इससे मेरी नाक और सिर के बाल झड़ने से बच जाएंगे।'
यह तर्क शायद पूरी तरह सत्य पर आधारित नहीं था, लेकिन वज़ीर को इतनी ज़ोरदार दलील को

नकारने का कोई रास्ता नज़र नहीं आया। उसने कहा, 'ठीक है, मेज़पोश बिछा दो। लेकिन मैं तुमसे विनती करती हूँ कि हमारे बीच बड़ी रोटी रखकर, मेरे लिए पूरा नाश्ता मत लगाओ।'
कुरान से प्रार्थना करने के बावजूद, और वज़ीर के लगातार कम खाने से इनकार करने के बावजूद, नाश्ता खत्म होने से पहले ही सूरज दोपहर के करीब आसमान में पहुँच चुका था। हबीब-उन निसा और राहत अफ़ज़ा ने नम आँखों से विदाई ली और उन्हें अतिथिगृह के द्वार से उनकी गाड़ी में बिठाया, न कि उस मुख्य द्वार से जिसका इस्तेमाल उन्होंने पिछली रात किया था, इस प्रकार उनकी पहचान गुप्त रखी गई।
सिरकी वालन तक ज़्यादा दूरी नहीं थी, और घोड़े और सेवक सभी तरोताज़ा और आराम कर चुके थे। वे सरपट दौड़ पड़े और लगभग आधे घंटे में अपने गंतव्य पर पहुँच गए। चांदनी चौक में खरीदारों और विक्रेताओं की भीड़ पल-पल बढ़ती जा रही थी, और वहाँ चमकीली बैलगाड़ियों, नालकियों, टॉमजॉन, पालकियों और सेडानों की कोई कमी नहीं थी, जो टूटते तारों की तरह हर दिशा में तेज़ी से जा रही थीं। ऐसे माहौल में, एक बग्गी, चाहे वह वज़ीर की बग्गी जितनी ही शानदार क्यों न हो, किसी का ध्यान आकर्षित नहीं करती। वज़ीर को लगा कि वह सुरक्षित है, लोगों की नज़रों से बची हुई है और भीड़ में किसी का ध्यान उस पर नहीं गया है।
उन्हें यह नहीं पता था कि विलियम फ्रेजर के जासूस हर जगह मौजूद थे। शम्सुद्दीन अहमद खान की हवेली में कम से कम दो नौकर थे, जो नवाब सीनियर साहिब बहादुर को स्वतंत्र रूप से रिपोर्ट करते थे। एक ही जगह पर दो जासूस होने का फायदा स्पष्ट था: एक द्वारा दी गई जानकारी की दूसरे से तुलना करके झूठ, अधूरी सच्चाई, जानबूझकर या अनजाने में की गई चूक या अतिशयोक्ति का पता लगाया जा सकता था। दूसरा फायदा यह था कि दोनों को लगता था कि वे नवाब रेजिडेंट बहादुर की ओर से जासूसी करने वाले अकेले व्यक्ति हैं और इसलिए वे अपनी वफादारी को पूरी तरह साबित करने के लिए उत्सुक थे।
शम्सुद्दीन अहमद खान के पहासू से लौटने से पहले ही पिछली रात और उस सुबह की सारी घटनाओं का विस्तृत विवरण विलियम फ्रेजर तक पहुँच गया था। दूसरी ओर, नवाब यूसुफ अली खान के मुखबिरों ने उन्हें पिछली रात की घटनाओं की सूचना दी थी। यूसुफ अली खान घटनाओं के क्रम से पूरी तरह संतुष्ट थे, लेकिन फ्रेजर इस खबर से बेहद परेशान हो गए। ऐसा लगा मानो उनके सीने की भट्टी से काले धुएँ के घने गुच्छे उठ रहे हों और उनके दिमाग तक पहुँच गए हों। अब उनके लिए शम्सुद्दीन अहमद को, और यदि संभव हो तो छोटी बेगम को भी, उचित दंड देना अत्यंत आवश्यक हो गया था।

हकीम अहसानुल्लाह खान अनिच्छा से विलियम फ्रेजर से मिलते हैं और बाद में नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान को फ्रेजर के नापाक इरादों के बारे में चेतावनी देते हैं।

वज़ीर खानम और शम्सुद्दीन अहमद खान के गठबंधन की खबर मिलते ही दो-तीन दिन के भीतर फ्रेज़र ने अपनी तैयारियाँ शुरू कर दीं। सबसे पहले, उन्होंने कलकत्ता को पहासू में हुई डकैती की रिपोर्ट भेजी, जिसमें उन्होंने अपराधियों से निपटने में शम्सुद्दीन अहमद खान की तेज़ी और कुशलता का संक्षिप्त उल्लेख किया। नवाब ने गिरोह का सफाया कर दिया था, उनके दो सरगनाओं को सार्वजनिक रूप से फाँसी दे दी थी और अपहृत दो लड़कियों तथा डाकुओं द्वारा लूटी गई अधिकांश संपत्ति बरामद कर ली थी। फ्रेज़र ने इन बातों को मुख्यतः अफवाहें बताया और संकेत दिया कि लुटेरों के विरुद्ध अभियान की सफलता, चाहे वह कितनी भी सफल रही हो, नवाब की रणनीति, नेतृत्व या व्यक्तिगत वीरता पर बहुत अधिक निर्भर नहीं थी। वास्तव में, उन्होंने इस घटना को नवाब की अपने क्षेत्रों पर कमज़ोर पकड़ के प्रमाण के रूप में प्रस्तुत किया। फ्रेजर ने अपने इस विचार को दोहराया कि पूर्व रेजिडेंट, श्री हॉकिन्स ने शम्सुद्दीन अहमद के अपने पिता नवाब अहमद बख्श खान द्वारा शासित संपूर्ण क्षेत्र पर निर्विवाद अधिकार को मान्यता देने में गलती की थी। उन्होंने लिखा:

अतः मैं गवर्नर जनरल इन काउंसिल के समक्ष अपनी सिफारिश पुनः प्रस्तुत करता हूँ कि दिलावर-उल मुल्क नवाब अहमद बख्श खान द्वारा सर चार्ल्स मेटकाफ की उपस्थिति में किए गए राज्य के विभाजन को बहाल किया जाए ताकि दिवंगत नवाब के अन्य दो अनाथ बच्चों, अर्थात् अमीनउद्दीन अहमद और जियाउद्दीन अहमद को उनका उचित हक मिल सके और वे अपनी माता और बहन का उनकी स्थिति के अनुरूप भरण-पोषण कर सकें।

फ्रेजर द्वारा 'गवर्नर जनरल इन काउंसिल' शब्द का प्रयोग एक सोची-समझी रणनीति थी। हालांकि उन्हें यह उम्मीद नहीं थी कि नवाब गवर्नर जनरल लॉर्ड विलियम बेंटिंक बहादुर कुछ बहुमूल्य और महंगे उपहारों के बदले शम्सुद्दीन अहमद खान के पक्ष में फैसला करेंगे, और न ही यह मामला इतना महत्वपूर्ण था कि इसे परिषद के समक्ष रखा जाए, फिर भी उन्हें आशा थी कि उनके शब्दों से राइटर्स बिल्डिंग स्थित राजनीतिक विभाग इस मामले को परिषद के समक्ष प्रस्तुत करने के लिए प्रेरित होगा। यदि मामला परिषद के समक्ष जाता, तो गवर्नर जनरल अपनी मर्जी से कोई निर्णय नहीं लेते, भले ही वे शम्सुद्दीन अहमद खान का समर्थन करने के इच्छुक हों। इसके अलावा, उन दिनों परिषद आम तौर पर 'देशी' नवाबों और राजाओं के विरुद्ध थी और कंपनी के अधिकारियों, अर्थात् सर डेविड ओचटरलोनी और सर चार्ल्स मेटकाफ के कार्यों का समर्थन करने के लिए लगभग निश्चित थी।

फ्रेजर ने अपनी रिपोर्ट भेजी, एक और दिन के लिए विचार किया और आदेश दिया कि हकीम अहसानुल्लाह खान को रेजिडेंसी में बुलाया जाए।

हकीम अहसानुल्लाह खान मूल रूप से कश्मीर के निवासी थे। वे इस्लाम के प्रथम खलीफा अबू बक्र सिद्दीक के वंशज थे। मुइज़-उद दुनिया व अल-दीन अबू नस्र मुइन-उद दीन मुहम्मद अकबर शाह द्वितीय के दरबार से उन्हें उमदत-उल मुल्क हाज़िक-उज़ ज़मान की उपाधि प्राप्त हुई थी।

भविष्य में उन्हें खान-ए-सामन (प्रशासक जनरल), प्रधानमंत्री और सम्राट के निजी चिकित्सक के पद तथा अबू ज़फर मुहम्मद सिराजुद्दीन बहादुर शाह द्वितीय के दरबार से इहतराम-उद दौला उमदत-उल हुकामा मुतमद-उल मुल्क साबित जंग जैसी और भी महान उपाधियाँ प्राप्त हुईं।
जब यह लेख लिखा जा रहा था, तब दिल्ली शहर में हकीम का नाम और प्रसिद्धि गूंज रही थी। वे एक विद्वान और अत्यंत कुशल चिकित्सक थे। उनकी तुलना अक्सर राज़ेस और अविसेना से की जाती थी। यह भी सर्वमान्य था कि चिकित्सक के रूप में उनकी अद्वितीय उत्कृष्टता के अलावा, वे राजनीतिज्ञता की कला में भी निपुण थे और अत्यंत समृद्ध और ज्ञानवान व्यक्ति थे।
उस युग की संस्कृति के अनुरूप, हकीम कविता और अन्य साहित्यिक कलाओं में भी पारंगत थे। दिल्ली के प्रमुख फ़ारसी और हिंदी कवि, कुशल चिकित्सक, ज्योतिषी और शतरंज के उस्ताद हकीम मोमिन खान मोमिन उनके करीबी चचेरे भाई थे। उनके प्रिय मित्रों में मिर्ज़ा असदुल्ला खान ग़ालिब, शेख मुहम्मद इब्राहिम ज़ौक़, नवाब मुहम्मद मुस्तफ़ा खान शेफ़्ता, महान विद्वान फ़ज़ल-ए-हक़ खैराबादी, इमाम बख्श सहबाई और कई अन्य प्रख्यात कवि और विद्वान शामिल थे। यही कारण था कि चितली क़ब्र स्थित उनकी हवेली का सभा कक्ष न केवल बीमारों और दुर्बलों के लिए, बल्कि कुलीन वर्ग, कवियों और विद्वानों के लिए भी आकर्षण का केंद्र था।
उन दिनों, चितली क़ब्र से लेकर आज के दिल्ली गेट तक अनगिनत हवेलियाँ, आलीशान घर, साधारण मकान और गरीबों के छोटे-छोटे घर फैले हुए थे। इसी इलाके में महान सूफी और इस्लामी विद्वान शाह अब्दुल अजीज की हवेली और मदरसा, दबीर-उद-दौला सैयद फरीद खान (जो बाद में सैयद अहमद खान के नाम से राष्ट्रीय स्तर पर प्रसिद्ध हुए) की हवेली, साथ ही कवि और चिकित्सक हकीम सनाउल्लाह खान की हवेली भी स्थित थी। चितली क़ब्र से कुचा चेलान तक का इलाका दुकानों, कार्यशालाओं और मोचियों, सिलाई करने वालों और अन्य अनेक कारीगरों के घरों की एक अलग ही दुनिया थी। हकीम अहसानुल्लाह खान की विशाल हवेली उस भरे-पूरे परिसर का केंद्र प्रतीत होती थी।
शहर में हकीम की कई हवेलियाँ थीं, लेकिन वे अपनी सुबह की चिकित्सा चितली क़ब्र स्थित हवेली में करते थे। इसका कारण यह था कि वह इलाका घनी आबादी वाला था, और जैसा कि ऊपर बताया गया है, उस क्षेत्र में कई अन्य प्रतिष्ठित विद्वान और विधि एवं धर्म के विशेषज्ञ रहते थे। वे सुबह लगभग आठ बजे नमाज़ अदा करने के बाद क्लिनिक में आते और दोपहर की नमाज़ तक वहीं रहते। यहाँ तक कि सबसे खराब मौसम या कोई अप्रिय घटना भी उनके इस कार्यक्रम को बाधित नहीं कर सकती थी। उन्होंने अभी तक सिरकी वालन में स्थित विशाल और भव्य बादल बेग हवेली नहीं खरीदी थी, जो उनके रचनात्मक डिजाइन और वास्तुकला एवं इंजीनियरिंग विशेषज्ञता से किए गए कई परिवर्तनों और सुधारों के बाद पर्यटकों और अन्य लोगों के लिए एक दर्शनीय स्थल बन गई थी।
हकीम अहसानुल्लाह खान काफी युवा थे जब नवाब अहमद बख्श खान रुस्तम जंग ने उन्हें अपना निजी चिकित्सक नियुक्त किया और बल्लीमारन स्थित अपनी हवेली का एक बड़ा हिस्सा उनके निवास के लिए उपलब्ध कराया। जैसा कि ऊपर बताया गया है, नवाब अहमद बख्श खान की 1827 में मृत्यु के समय शम्सुद्दीन अहमद (जन्म 1810) वयस्क हो चुके थे। उनके अन्य दो पुत्र

अमीनउद्दीन अहमद (जन्म 1814) और जियाउद्दीन अहमद (जन्म 1821) उस समय नाबालिग थे। हमने यह भी देखा कि शम्सुद्दीन अहमद ने अपने पिता द्वारा किए गए राज्य विभाजन को अस्वीकार कर दिया था और अपने पिता की विशाल संपत्ति के तीनों हिस्सों, अर्थात् फिरोजपुर झिरका, लोहारू और पहासू पर कब्जा कर लिया था।

शम्सुद्दीन अहमद खान ने हकीम अहसानुल्लाह खान को अपना निजी चिकित्सक बनाए रखने का प्रस्ताव दिया था, लेकिन हकीम की दूरदर्शिता और सूझबूझ ने शायद यह भांप लिया था कि शम्सुद्दीन अहमद ने अपने भाइयों को उनका उचित हिस्सा न देकर अपने घराने में कलह का जहर बो दिया है, जो आगे चलकर मतभेद और फूट के भयंकर वृक्ष में तब्दील हो जाएगा। इसलिए उन्होंने विनम्रतापूर्वक इस प्रस्ताव को ठुकरा दिया और कुछ ही समय बाद बल्लीमारान स्थित नवाब की हवेली खाली कर दी।

कुछ ही समय बाद, झज्जर के नवाब फैज़ मुहम्मद खान ने हकीम अहसानुल्लाह खान को अपना निजी चिकित्सक नियुक्त किया। दिल्ली का प्रसिद्ध इलाका कलां महल, जो कि काला महल के नाम से जाना जाता है, पूरी तरह से फैज़ मुहम्मद खान की संपत्ति थी। उन्होंने हकीम को उसी इलाके में रंग महल नामक एक हवेली उनके निवास के लिए आवंटित की। उस समय, हकीम इमामउद्दीन को ईश्वर के साये, अकबर शाह द्वितीय के निजी चिकित्सक होने का गौरव प्राप्त था। हकीम इमामउद्दीन न केवल दिल्ली के प्रमुख चिकित्सकों में गिने जाते थे, बल्कि उन्हें ईश्वर का सच्चा भक्त भी माना जाता था। संयोगवश, सम्राट अकबर शाह द्वितीय को एक ऐसी स्वास्थ्य समस्या हो गई, जिसका हकीम इमामउद्दीन अपने ज्ञान और अनुभव के बावजूद निदान नहीं कर सके, और न ही उसका सफलतापूर्वक इलाज कर सके।

इसके बाद हकीम अहसानुल्लाह खान को दूसरी राय के लिए बुलाया गया और अल्लाह की मर्ज़ी से उन्होंने थोड़े ही समय में बादशाह का इलाज कर उन्हें ठीक कर दिया। इनाम और कीमती तोहफ़ों के अलावा, अल्लाह की रहमत ने हकीम को खान, मुल्क और ज़मान की तीनों उपाधियाँ प्रदान कीं। इस प्रकार हकीम अहसानुल्लाह को उम्दत-उल मुल्क हाज़िक-उज़ ज़मान हकीम अहसानुल्लाह खान घोषित किया गया। कुछ हफ़्तों बाद, बादशाह ने हकीम इमामउद्दीन को अपना पद छोड़ने की अनुमति दी और उनकी जगह अहसानुल्लाह खान को नियुक्त किया।

अपने अत्यंत विनम्र स्वभाव, सौम्य वाणी और निदान एवं उपचार में निपुणता के कारण हकीम अहसानुल्लाह खान दिल्ली के चहेते थे। रईस हो या आम आदमी, चाहे हिंदू हो या मुसलमान, सभी उन पर भरोसा करते थे। हकीम लंबे और सुगठित थे, लेकिन भारी शरीर वाले नहीं थे। उनकी आंखें छोटी लेकिन चमकीली थीं और उनका रंग सांवला था, चेहरे पर बचपन में हुए चेचक के हल्के निशान थे। उनकी घनी, काली दाढ़ी थी, जो ज्यादा लंबी नहीं थी, चिकित्सकों और विद्वानों की शैली में गोलाकार रूप से कटी हुई थी, और वे हमेशा सफेद वस्त्र धारण करते थे। उनका क्लिनिक दीवान खानाह में था: एक बहुत लंबा और थोड़ा कम चौड़ा हॉल। इसकी पूर्वी दीवार के पास एक विशाल लकड़ी का चबूतरा था, जिस पर गद्दी बिछी हुई थी और उसके ऊपर बर्फ़ जैसी सफ़ेद चादर बिछी थी, जिसके बीच में सफ़ेद, हरे और नीले रंग का रेशमी कालीन बिछा था। हकीम उस पर पैर मोड़कर बैठे थे, मानो किसी सिंहासन पर बैठे हों। चबूतरे पर उनके

दोनों ओर पर्ची लिखने वाले बैठे थे। मरीज़ लकड़ी के चबूतरे के सामने दाईं और बाईं ओर दो पंक्तियों में लंबी बेंचों या छोटी कुर्सियों पर बैठे थे।

हकीम साहब दाहिनी ओर से शुरू करके बाईं ओर बारी-बारी से मरीजों की जांच करते थे। चाहे वे एक बार में कितने ही मरीजों को देखते हों, उनके व्यवहार में कभी तनाव या नीरसता का कोई संकेत नहीं दिखता था। वास्तव में, मरीज को अपनी बीमारी या लक्षणों का वर्णन करने की शायद ही कभी आवश्यकता पड़ती थी। हकीम साहब उनकी दाहिनी नाड़ी जांचते थे और ज्यादातर मामलों में यही पर्याप्त होता था। कभी-कभी वे दोनों कलाइयों की नाड़ी जांचते थे, खासकर तब जब मरीज किसी ऐसी स्थिति के बारे में बताता था जिसकी हकीम साहब को उम्मीद नहीं होती थी। आमतौर पर, दाहिनी कलाई की नाड़ी से ही उन्हें सब कुछ पता चल जाता था। कभी-कभी वे स्वयं मरीज के चिकित्सीय इतिहास का कुछ हिस्सा सुना देते थे: 'आपने काफी देर से शादी की, है ना?' या, 'आपके परिवार में खाना पकाने में सरसों के तेल का बहुत इस्तेमाल होता था।' या, 'आपके दाहिने गुर्दे में सूजन है। पहली बार होने पर आपको बुखार आया होगा। क्या आपने तब किसी चिकित्सक से परामर्श नहीं लिया?'
निदान हो जाने के बाद, हकीम साहब नुस्खे लिखने वाले को उचित पृष्ठ पर नुस्खे लिखवाते थे। वे बहुत तेज़ी से और लगभग फुसफुसाते हुए बोलते थे। फिर नुस्खा लिखने वाला मरीज़ को उपचार के बारे में समझाता था, और यदि स्पष्टीकरण की आवश्यकता होती, तो मरीज़ भी लगभग फुसफुसाते हुए एक-दो प्रश्न पूछ सकता था। परामर्श कक्ष लगभग हमेशा शांत रहता था; वातावरण में श्रद्धा और गरिमा का भाव होता था।
परामर्श शुल्क नहीं लिया जाता था। हवेली के पास एक दवाखाना था जो अनौपचारिक रूप से दवाइयाँ बेचता था और उचित कीमत वसूलता था। मरीज़ के लिए दवाखाने से दवा खरीदना ज़रूरी नहीं था। कभी-कभी हकीम साहब, कुछ ऐसे कारणों से जो केवल उन्हें ही पता होते थे, पर्ची पर एक रहस्यमयी निशान लगा देते थे जिससे पता चलता था कि इस पर्ची पर कोई शुल्क नहीं लिया जाना चाहिए, या आधी कीमत ही ली जानी चाहिए।
विलियम फ्रेजर द्वारा नियुक्त एक राजदंड धारक और एक भाला धारक दोपहर के करीब हकीम के कक्ष में दाखिल हुए। नए आने वालों को खाली सीटों की ओर इशारा किया गया जहाँ उन्हें बैठकर अपनी बारी का इंतजार करना था, लेकिन वे निडर होकर आगे बढ़े और हकीम के सामने रुक गए। राजदंड धारक ने सलाम किया और कहा: 'वरिष्ठ साहिब बहादुर आपको याद करते हैं।' प्रतीक्षा कर रहे कई मरीज़ों के माथे पर शिकन आ गई। उनकी नाराज़गी का एक कारण यह था कि उन्हें विश्वास नहीं था कि रेजिडेंट को सम्राट के निजी कर्मचारी को बुलाने का अधिकार है। कुछ लोग इस बात से भी नाराज़ थे कि हकीम साहब अब उठेंगे और उन्हें उस दिन उनसे परामर्श करने का अवसर नहीं मिलेगा। हकीम अहसानुल्लाह खान ने अपनी सामान्य, शांत आवाज़ में पूछा, 'क्या बात है? क्या उनकी तबीयत खराब है?'

‘हमें कुछ नहीं पता, माननीय महोदय। हमें बस आदेश दिया गया था कि हम जाकर ग्रैंड साहब का

अभिवादन हकीम साहब तक पहुंचाएं और उनके साथ निवास स्थान पर वापस आ जाएं।'
मैं इस समय मरीजों को देख रहा हूँ। मैं दोपहर की नमाज से थोड़ा पहले उठूंगा और नमाज खत्म होने के बाद आपके साथ आऊंगा।
लेकिन ग्रैंड साहब...
हकीम साहब ने राजदंड धारण करने वाले को दृढ़ता से टोका, लेकिन बिना किसी अप्रियता या चिड़चिड़ेपन के। 'मैं इतने सारे मरीजों को यहाँ अकेला नहीं छोड़ सकता जो मुझसे मिलने का इंतजार कर रहे हैं। अगर आप चाहें तो नवाब रेजिडेंट बहादुर के पास वापस जाकर उन्हें मेरी बात बता सकते हैं।'
स्पष्टतः दोनों नौकरों के पास कोने में चुपचाप बैठकर प्रतीक्षा करने के अलावा कोई विकल्प नहीं था। हकीम अहसानुल्लाह अपने नियमित समय पर उठे, नमाज़ अदा की और अपनी खुली पालकी में बैठकर निवास स्थान की ओर चल दिए। दोनों संदेशवाहक उनके पीछे-पीछे तेज़ी से चलने लगे।
शाम के लगभग चार बजे हकीम की पालकी रेजीडेंसी के द्वार पर पहुंची। समय बताने वाले ने कहा कि वरिष्ठ साहिब बहादुर उठ गए होंगे और हकीम साहब अंदर जा सकते हैं, शायद उन्हें उनसे मिलने का मौका मिल जाए।
फ्रेजर और हकीम अहसानुल्लाह खान के बीच बातचीत विशाल बैठक कक्ष में नहीं, बल्कि फ्रेजर के निजी कार्यालय में हुई, जिसे दरबार कक्ष के नाम से जाना जाता था। दीवारों पर छत तक ग्रीक, लैटिन, अंग्रेजी और फारसी पुस्तकों से भरी अलमारियां सजी हुई थीं। बीच में एक बड़ी और प्रभावशाली मेज थी, जिसके पीछे विलियम फ्रेजर पूरी आधिकारिक पोशाक में बैठे थे। उनके पीछे एक राजदंड धारक और एक चंवर धारक, उनके दाहिनी ओर एक राजदंड धारक, कागजों का एक बंडल और मेज पर फैले कई कागज थे, जिससे वे काफी प्रभावशाली दिख रहे थे। फ्रेजर की नजर कागजों पर थी, तभी द्वारपाल-सह-राजदंड धारक ने पुकारा: 'उमदत-उल मुल्क हकीम अहसानुल्लाह खान बहादुर।'
फ्रेजर ने ऊपर देखा। इससे पहले कि वह हकीम साहब को बैठने का इशारा कर पाते, हकीम अहसानुल्लाह ने अभिवादन में अपना दाहिना हाथ उठाया और मेज के सामने एक कुर्सी पर बैठ गए। फ्रेजर हकीम का अभिवादन करने के लिए आधा उठे, नौकरों को जाने का इशारा किया और कहा, 'उम्दत-उल मुल्क, आपने अपनी गरिमामय उपस्थिति यहाँ भेजी है, मैं आपका बहुत आभारी हूँ।'
हाकिम साहब ने कोई जवाब नहीं दिया, सिवाय इसके कि उन्होंने सिर को थोड़ा झुकाकर स्वीकृति दी, मानो फ्रेजर को यह संकेत दे रहे हों कि वह बुलावे पर उनके सामने उपस्थित हैं। फ्रेजर ने एक क्षण के लिए प्रतीक्षा की, मानो किसी उत्तर की अपेक्षा कर रहे हों, लेकिन जब उन्होंने पाया कि हकीम नियमित बातचीत में समय व्यतीत करने के इच्छुक नहीं थे, तो उन्होंने कहा, 'उमदत-उल मुल्क, हर कोई आपके राजनेता जैसे गुणों और आपकी बुद्धिमत्ता को स्वीकार करता है।'
अब हकीम अहसानुल्लाह खान के पास बोलने के अलावा कोई चारा नहीं था। वे अपनी सीट से

थोड़ा उठे, दाहिना हाथ उठाकर एक और सलाम किया और कहा, 'यह नवाब रेजिडेंट बहादुर की असीम कृपा और उनके द्वारा मेरे महत्व में की गई वृद्धि के सिवा कुछ नहीं है।'
फ्रेजर मुस्कुराया। 'आपकी बुद्धिमत्ता ही वह कारण है जिसके चलते मैंने आपको यहां आने की परेशानी उठाई है।'
'मैं अपनी क्षमता के अनुसार कोई भी सेवा करने में जरा भी संकोच नहीं करूंगा।' हकीम का लहजा गंभीर था, लेकिन नीरस और भावुकता से रहित था।
हकीम साहब, कुल मिलाकर मुझे दिल्ली या दिल्ली के लोगों से कोई शिकायत नहीं है। लेकिन नवाब शम्सुद्दीन अहमद की अपने राज्य के प्रशासन में ढिलाई और अक्षमता देखकर मुझे खेद है। उनके कुछ कार्यों से मुझे व्यक्तिगत रूप से आहत किया है। मैं आपसे निवेदन करता हूँ कि आप उन्हें चेतावनी दें और उन्हें सलाह दें कि वे मुझे पहले की तरह ही अपना बड़ा और शुभचिंतक समझें और ऐसा कोई कार्य न करें जिससे मुझे दुख हो और उनके लिए मुसीबत खड़ी हो।
फ्रेजर एक पल के लिए रुका, मानो वह मन ही मन सोच रहा हो कि उसे यह तथ्य प्रकट करना चाहिए या नहीं, और फिर बोला, 'शम्सुद्दीन अहमद की गतिविधियों से नवाब गवर्नर जनरल बहादुर को भी परेशानी हो सकती है।'
अपनी बारी में, हकीम अहसानुल्लाह खान कुछ सेकंड के लिए चुप रहे। फ्रेजर का व्यवहार पूरी तरह से अनुचित था और उनकी रणनीति में कूटनीति का कोई अंश नहीं था। यदि उनके मन में युवा नवाब के प्रति कोई द्वेष था, तो यह पूरी तरह से उनकी समस्या थी, और उन्हें ही अपनी इस दुर्दशा का समाधान खोजना चाहिए था।
'वरिष्ठ साहिब बहादुर की विलक्षण बुद्धि को यह बात बिल्कुल स्पष्ट होनी चाहिए कि नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान पर, या वास्तव में नवाब अहमद बख्श खान की किसी भी संतान पर मेरा कोई प्रभाव नहीं है।'
लेकिन आप दिवंगत नवाब के निजी चिकित्सक रहे हैं। शम्सुद्दीन अहमद आपकी गोद में बैठकर खेल चुके हैं।
'बिल्कुल सही, महोदय। लेकिन अब न तो नवाब हैं, न ही उनके चिकित्सक के रूप में मेरा पद।'
फ्रेजर के चेहरे पर असंतोष की लहर दौड़ गई। ये भारतीय मुसलमान बेहद अशिष्ट और अभिमानी हैं। और यह व्यक्ति तो अपनी भलाई या बदहाली की परवाह भी नहीं करता। अब फ्रेजर ने कुछ ज़ोरदार लहजे में कहा, 'हाकिम साहब, हमें यहाँ की हर बात की भली-भांति जानकारी है। दिल्ली में ऐसी कोई बात नहीं है जो मुझसे छिपी हो। जिस काम के लिए मैंने आपको चुना है, उसके लिए आप ही सबसे उपयुक्त हैं।'
'बहुत अच्छा, मैं अपनी पूरी कोशिश करूंगा। मैं किसी भी तरह की कमी नहीं छोड़ूंगा।'
'आपको शम्सुद्दीन अहमद को चेतावनी देनी चाहिए कि छोटी बेगम पर किसी और की नजर है। इसलिए उसे बेगम को रिझाने का विचार छोड़ देना चाहिए। आप उसे सीधे शब्दों में बता सकते हैं: यह मेरा संदेश है और यह संदेश आपको बिना किसी मध्यस्थ के दिया गया है।'
'मैं वरिष्ठ साहिब बहादुर का आभारी हूं कि उन्होंने मुझ पर भरोसा जताया है, लेकिन शम्सुद्दीन अहमद को मनाने के लिए मुझ पर कोई दबाव या प्रभाव नहीं डाला जा सकता, और न ही यह

मेरा कर्तव्य है कि मैं आपका संदेश उन्हें पहुंचाऊं।'
'क्यों? यह आपका पद क्यों नहीं है?' फ्रेजर अब खुलकर क्रोधित हो गया था। 'क्या आप माननीय कंपनी बहादुर के प्रति वफादार नहीं हैं?'
'माफ़ कीजिएगा, लेकिन मुझे नहीं लगता कि इस मामले का माननीय कंपनी के प्रति निष्ठा के प्रश्न से कोई संबंध है,' हकीम अहसानुल्लाह खान ने ठंडे लहजे में उत्तर दिया। 'और अगर होता भी, तो मैं बादशाह का नमक खाता हूँ, कंपनी का नहीं।'
'और आपके बादशाह उमदत-उल मुल्क हकीम अहसानुल्लाह खान, माननीय कंपनी का नमक खाते हैं।'
"यह नजरिए की बात है, नवाब रेजिडेंट बहादुर," हकीम ने और भी रूखेपन और लगभग तिरस्कार भरे लहजे में कहा। "ईश्वर की छाया और उनके पूर्वज दो सौ वर्षों से अधिक समय से दिल्ली के सिंहासन पर शासन कर रहे हैं।"
'मैंने आपको यहाँ इतिहास का पाठ पढ़ाने के लिए नहीं बुलाया है, हाकिम साहब।'
जी हाँ, महोदय। बिलकुल। और न ही आपने मुझे यहाँ सांप के बगलोस के रस का नुस्खा लिखने के लिए बुलाया है। और मुझे बस ये दो बातें ही पता हैं। मुझे खेद है कि मैं आपके लिए बेकार साबित हुआ।
हकीम अहसानुल्लाह खान अपनी कुर्सी से उठे, पूरे सम्मान और गरिमा के साथ सलाम किया और कमरे से बाहर चले गए। बिना अनुमति के दरबार कक्ष छोड़ना घोर अपमानजनक था, लेकिन फ्रेजर ने इसे चुपचाप सहन कर लिया, क्योंकि वह जानता था कि हकीम पर कर लगाने से केवल उसका अपना ही उपहास होगा। लेकिन उस दिन हकीम और फ्रेजर के बीच एक खामोश जंग शुरू हो गई। दरअसल, केवल फ्रेजर ही नहीं, फ्रेजर के बाद आने वाले हर रेजिडेंट को हकीम से कोई न कोई शिकायत थी, या शायद रेजिडेंसी के रिकॉर्ड में कोई गुप्त नोट था जिसमें लिखा था कि हकीम अहसानुल्लाह खान के प्रति कोई दया या सम्मान नहीं दिखाया जाना चाहिए। एक बार, बहादुर शाह द्वितीय के शासनकाल के दौरान, हकीम अहसानुल्लाह खान ने रेजिडेंसी में अपने प्रति किसी भी प्रतिकूल भावना को दूर करने के लिए राजा से हस्तक्षेप की गुहार लगाई थी। राजा के प्रयास व्यर्थ गए और रेजिडेंसी की नजरों में हकीम अहसानुल्लाह खान हमेशा हाशिए पर ही रहे। विलियम फ्रेजर का महल शुभ हवेली से काफी दूर था, और हकीम को डर था कि वहाँ पहुँचने से पहले दोपहर की नमाज़ छूट न जाए। इसलिए उन्होंने फतेहपुरी की जामी मस्जिद में नमाज़ पढ़ने का फैसला किया और फिर लाहौरी दरवाज़े जाकर बादशाह से मुलाकात की, जिनकी शान जमशेद की शान के बराबर थी। उन्होंने दो कारणों से पूरी बातचीत बादशाह को बताना ज़रूरी समझा। पहला, नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान या किसी भी भारतीय सरदार के बारे में उन्हें जो भी जानकारी मिलती, उसे बादशाह तक पहुँचाना उनका कर्तव्य था। दूसरा, हकीम अहसानुल्लाह खान को सीधे राजघराने में बुलाकर फ्रेजर ने प्रोटोकॉल का उल्लंघन किया था। हकीम पर फ्रेजर का कोई अधिकार नहीं था। अगर उन्हें किसी भी कारण से उनसे सलाह लेनी थी, तो उन्हें बादशाह की अनुमति लेनी चाहिए थी।
शाम का दरबार शुरू हो चुका था। राजा भोजन के लिए जाने ही वाले थे कि हाकिम अहसानुल्लाह

खान को भी मिलने की अनुमति मिल गई। राजा ने हाकिम अहसानुल्लाह खान का कथन चुपचाप सुना। ज़ाहिर है, उन्हें फ्रेज़र की धृष्टता बिल्कुल पसंद नहीं आई, लेकिन हाकिम के सामने चुप रहना ही उचित था। क्योंकि राजाओं की नाराज़गी के परिणाम होते हैं, और अकबर शाह द्वितीय के पास रेजिडेंट के विरुद्ध कोई प्रभावी कदम उठाने की शक्ति नहीं थी। हिंदी में कहावत है, 'सच्ची शक्ति अपनी शक्ति में है, या तुम स्वयं चमकते रहो।' इसलिए अपनी भावनाओं को किसी भी प्रकार से व्यक्त करना राजसी विवेक के विरुद्ध था।

गवर्नर जनरल से शिकायत तो की जा सकती थी, लेकिन ऐसा करना भी उचित समय और अवसर पर ही संभव था। वैसे भी, परिणाम तो पहले से ही तय था। हालांकि अकबर शाह द्वितीय के समय तक राजा सीधे गवर्नर जनरल से पत्राचार कर सकते थे (बाद में यह विशेषाधिकार भी समाप्त हो गया, यदि इसे विशेषाधिकार कहा भी जा सकता था), फिर भी रेजिडेंट को शाही संदेश और उसकी सामग्री की जानकारी अवश्य मिल जाती थी। अक्सर शाही संदेश सीधे रेजिडेंट को ही उनकी रिपोर्ट के लिए या अभिलेखागार में जमा करने के लिए भेजा जाता था।

मंगल ग्रह के तंबू से भी भव्य तंबू वाले बादशाह से इजाज़त मिलने के बाद हकीम अहसानुल्लाह खान दीवान-ए-खास से रवाना हुए। मोती मस्जिद का मुअज़्ज़िन शाम की नमाज़ के लिए अज़ान दे रहा था; उन्होंने वहीं नमाज़ अदा की और उस समय की अपनी आदत के मुताबिक अतिरिक्त नमाज़ें टालकर दरियागंज स्थित शम्सुद्दीन अहमद खान की हवेली की ओर चल दिए। नवाब को वहाँ न पाकर उन्होंने द्वारपाल को निर्देश दिया कि नवाब को उनके आने की सूचना दी जाए और उनसे अनुरोध किया कि वे अपनी सुविधानुसार उनसे मिलने आएं।

फ्रेजर से मुलाकात और उनकी अनुचित और तर्कहीन मांगों ने हकीम अहसानुल्लाह खान को बेहद परेशान कर दिया था। उनकी इस नाराजगी का मुख्य कारण फ्रेजर का यह घमंडी विश्वास था कि उन्हें हिंदुस्तान के कुलीन वर्ग के निजी और घरेलू मामलों में हस्तक्षेप करने का अधिकार है। यह भारतीयों और भारत के लिए अच्छा संकेत नहीं था। यह सच है कि शम्सुद्दीन अहमद पर फ्रेजर का कुछ अधिकार था: शम्सुद्दीन अहमद उन्हें 'चाचा' कहकर पुकारते थे; लेकिन यह पूरी तरह से पारिवारिक मामला था। वास्तव में, शम्सुद्दीन अहमद के साथ फ्रेजर के संबंधों की प्रकृति ने उनके लिए उन मामलों को नजरअंदाज करना और अनदेखा करना और भी जरूरी बना दिया था जिनका राजनीति या शासन से कोई लेना-देना नहीं था।

लेकिन फिरंगी स्वभाव से ही अभिमानी, अत्याचारी और दबंग थे। हकीम को आशंका थी कि अंग्रेजों का अभिमान और भारतीयों के प्रति उनका तिरस्कारपूर्ण रवैया उनकी शक्ति में वृद्धि के साथ-साथ बढ़ता जाएगा। धनवानों की दौलत, उच्च कुल के लोगों का प्रतिष्ठित वंश, गरीब आदमी का सम्मान: सब कुछ एक ही तिरस्कार की तलवार से काट दिया जाएगा। और यदि ये लोग हिंद के शासक बन गए, तो वे दमन और रक्तपात में फिरौन और निम्रोदों को भी पीछे छोड़ देंगे।

अगली सुबह, शम्सुद्दीन अहमद हकीम से मिलने गए, जिन्होंने उन्हें विश्वास में लेकर फ्रेजर के साथ हुई सारी घटना का ब्योरा दिया। उन्होंने नवाब को यह भी बताया कि उन्होंने पहले ही इस तरह की खबर महज़ महज़ को दे दी है। हालांकि, हकीम साहब ने छोटी बेगम के बारे में कोई

जिज्ञासा नहीं दिखाई और न ही नवाब को उनके भविष्य के आचरण के बारे में कोई सलाह दी। नवाब, बादशाह के संयमी स्वभाव के विपरीत, फ्रेजर के प्रति अपनी नाराज़गी ज़ाहिर करने और तरह-तरह की धमकियाँ देने में ज़रा भी संकोच नहीं किया।

युवा नवाब के प्रति अपना कर्तव्य पूरा करने के बाद, हकीम ने अपना ध्यान अपने क्लिनिक पर लगाया, जहाँ किसी कारणवश सामान्य से अधिक मरीज़ों की भीड़ थी। शम्सुद्दीन अहमद बल्लीमारन स्थित अपनी हवेली लौट आए और तुरंत दो बलिष्ठ ऊँट सवारों को लोहारू भेजा और उन्हें निर्देश दिया कि वे लाठी-लड़ाई में कुशल आठ योद्धाओं के दल के साथ शीघ्र लौटें। यदि किले में अपेक्षित संख्या या गुणवत्ता वाले योद्धा न मिलें, तो स्थानीय लोगों में से तुरंत भर्ती की जाए। उन्हें किसी भी परिस्थिति में तीसरे दिन की सुबह तक दिल्ली में उनसे मिलना होगा। फिर उन्होंने अपने प्रबंधक को निर्देश दिया कि चार योद्धाओं को सिरकी वालन में वज़ीर खानम साहब के निवास पर दिन में और अन्य चार को उसी स्थान पर रात में तैनात किया जाए। उन्हें एक मिनट के लिए भी अपनी चौकी नहीं छोड़नी थी और यदि उनमें से कोई भी इस संबंध में दोषी पाया गया, तो उन्हें लोहारू वापस भेजने से पहले उनके हाथ-पैर तोड़ दिए जाएँगे। उन्होंने आगे आदेश दिया कि लोहारू से दल के आने तक, हवेली से उतने ही विश्वसनीय और दृढ़ कर्मचारी-वाहकों को इस कार्य के लिए नियुक्त किया जाए।

विलियम फ्रेजर ने सिरकी वालन स्थित वज़ीर खानम का दौरा किया, जिससे चिंता और भय की भावनाएँ भड़क उठीं।

मांझली बेगम का दिल छोटी के ख्यालों में डूबा हुआ था। नवाब शम्सुद्दीन अहमद के साथ क्या हुआ था? वह चिंतित और परेशान थीं। छोटी को जयपुर से लौटे लगभग छह महीने हो चुके थे। अब उसके लिए किसी संरक्षक या सहारा मिलना बेहद ज़रूरी था: ऐसा व्यक्ति जिसे वह स्वीकार करे। अगर शादी तुरंत मुमकिन न हो, तो कोई बात नहीं, लेकिन कोई ज़िम्मेदार और इज़्ज़तदार इंसान उसे अपने घर में लंबे समय के लिए अपना ले; इतना भी काफी होगा। अक्सर ऐसा होता है कि ऐसे कई रिश्ते महज़ शारीरिक दोस्ती या प्रेम प्रसंग से शुरू होकर एक ऐसे रिश्ते में बदल जाते हैं जो शादी के बराबर या उससे भी ज़्यादा मज़बूत होता है। वैसे भी, क्या सच में शादी और एक स्थिर रिश्ते में कोई फ़र्क होता है? आजकल कई मर्द अपनी पत्नियों को बिना सोचे-समझे तलाक़ दे देते हैं; और कुछ ऐसे भी हैं जो खुलेआम एक ही समय में कई महिलाओं के साथ रिश्ते रखते हैं। और कुछ ऐसे भी हैं जो शादी के बिना के रिश्तों को आम लोगों से कहीं ज़्यादा और लंबे समय तक इज़्ज़त देते हैं, जितना कि आम लोग अपने तथाकथित कानूनी जीवनसाथी को देते हैं। सचमुच, मानवीय संबंधों में भाग्य या नियति की भूमिका आम धारणा से कहीं अधिक महत्वपूर्ण प्रतीत होती थी। यदि विवाह और गृहस्थी का दर्जा आपके भाग्य में लिखा हो, तो वह आपको देर-सवेर अवश्य प्राप्त होगा। छोटी की उम्र वास्तव में अधिक नहीं थी; वास्तव में, वह अभी भी काफी युवा थी। लेकिन समय इतना प्रतिकूल था कि अनेकों युवतियों के लिए यौवन और बुढ़ापा एक साथ आते थे, या अधिक से अधिक एक या दो वर्ष के अंतराल पर। जाहिर तौर पर, नवाब शम्सुद्दीन अहमद छोटी के प्रति प्रेम भाव रखते थे। अब यदि उनका मिलन होना नियति में था, तो छोटी के लिए सौभाग्य के द्वार खुल जाते। प्रेम और स्नेह में कोई कमी नहीं, सामान्य, सम्मानजनक सुख-सुविधाओं की कोई कमी नहीं, नौकरों और घरेलू सहायता की कोई कमी नहीं... यदि किसी स्त्री का ऐसा भाग्य हो, तो वह जीवन भर प्रतिदिन ईश्वर का धन्यवाद करती रहेगी।

जीवन में सम्मान सबसे महत्वपूर्ण था। हमारे बड़ों ने इसे कितनी सटीक तरह कहा था: 'सम्मान करो, सम्मान पाओ।' और किसी कुलीन व्यक्ति की वफादारी की सुरक्षा गरिमापूर्ण जीवन जीने के लिए आवश्यक थी। यदि नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान छोटी का हाथ थामकर उसे एक ऐसा कोना प्रदान करें जहाँ वह सुरक्षित और सम्मानपूर्वक जीवन व्यतीत कर सके, तो छोटी को यह प्रस्ताव अवश्य स्वीकार करना चाहिए। लेकिन बेचारी भोली थी; वह प्रेम, दरबारी शिष्टाचार और प्रेम की बातें रोज़मर्रा की जिंदगी में करती थी। क्या तेरहवीं शताब्दी में कोमलता और स्थायी स्नेह की तलाश करना भोलापन नहीं था? भोली और अभी भी दुनियादारी से अनभिज्ञ, वह प्रेम के लिए तड़प रही थी, जबकि असली चीज़ सुरक्षा और सम्मान थी।

प्यार की क्या कीमत होती है, और वो कब तक टिकता है? ये बसंत ऋतु की तितली की तरह है, बेहद मनमोहक, रंगीन और रोमांटिक, लेकिन ये झटपट मुरझा जाती है! खैर, अब उसके लिए एक रास्ता खुलता दिख रहा है। बल्क साहब के देहांत के बाद वो अकेली रह गई थी, बारी बाजी

द्वारा सुझाए गए पारंपरिक विकल्पों को ठुकराने के बाद उसके पास जाने के लिए कोई जगह नहीं थी।

उम्दा खानम को वज़ीर खानम की सुरक्षित और खुशहाल वापसी की खबर मिलते ही उन्होंने अपनी गाड़ी बुलाई और सीधे सिरकी वालन के लिए रवाना हो गईं। वज़ीर का चमकता हुआ चेहरा देखकर उनके दिल की चिंता शांत हो गई। दोनों बहनें कई मिनट तक एक-दूसरे को गले लगाती रहीं और इससे पहले कि उम्दा नवाब द्वारा दिए गए किसी उपहार के बारे में पूछतीं, वज़ीर ने उन्हें अंगूठी दिखाई। फिर उन्होंने उस रात की संक्षिप्त कहानी सुनाई।

"छोटी राजकुमारी, अल्लाह आपके लिए इसे शुभ बनाए। आपकी निःसंकोच सहनशीलता का आपको उचित प्रतिफल मिल चुका है। अब आप एक राजकुमारी की तरह शासन करेंगी! नवाब के पास अपार धन है, वह दिखने और उम्र में आपसे मेल खाते हैं, और सबसे बढ़कर, वह आप पर मोहित हैं। अब सब कुछ ठीक हो जाएगा!"

उम्दा खानम ने विलियम फ्रेजर के मामले पर ज़रा भी ध्यान नहीं दिया था। न ही फ्रेजर ने कभी नवाब यूसुफ अली खान से वज़ीर खानम से कुछ पाने की इच्छा ज़ाहिर की थी। उम्दा खानम और यूसुफ अली खान दोनों को ही इस बात का पता नहीं था कि फ्रेजर की नज़र वज़ीर खानम पर है। चूंकि फ्रेजर ने उन्हें न तो आमंत्रित किया था और न ही उनसे दोबारा मिलने गया था, इसलिए उन्होंने इसे वज़ीर में उनकी अरुचि समझा, जबकि वास्तव में फ्रेजर स्थिति पर बड़ी उत्सुकता से नज़र रख रहे थे।

जब उनके जासूसों ने उन्हें बताया कि उनके भोज के ठीक अगले दिन शम्सुद्दीन अहमद छोटी बेगम से मिलने गए थे, तो वे बहुत नाराज़ हुए। फिर भी, उन्होंने खुद को यही यकीन दिलाया कि नवाब का उनके प्रति आकर्षण महज़ कुछ दिनों का ही प्रेम प्रसंग था; उनका जुनून जल्द ही ठंडा पड़ जाएगा और प्रेम-प्रसंग का बुखार भी जल्द ही थम जाएगा। जब उनके जासूसों ने उनके बीच संदेशों और उपहारों के आदान-प्रदान की सूचना दी, तो उन्हें एहसास हुआ कि मामला काफी आगे बढ़ चुका है, या शायद काफी आगे बढ़ चुका है। इससे पहले कि वे वज़ीर को अपने पास बुलाने या उनसे मिलने जाने की कोई योजना बना पाते, उन्हें पता चला कि वज़ीर ने दरियागंज की हवेली में नवाब के अतिथि गृह में रात बिताई है। अब वे सचमुच गुस्से से आग बबूला हो गए थे, लेकिन उमदा खानम और नवाब यूसुफ अली खान को इन बातों की कोई जानकारी नहीं थी। उमदा को पूरा यकीन था कि शम्सुद्दीन अहमद खान और छोटी के बीच प्रेम कहानी को रोकने के लिए अब कुछ भी नहीं बचा था, और वास्तव में, वज़ीर को भी फ्रेजर से मंडरा रहे खतरे का जरा भी अंदाजा नहीं था।

'बाजी, आपकी सच्ची प्रार्थनाओं और नवाब यूसुफ अली खान साहब के सौभाग्य से ही मेरे मामले सही दिशा में आगे बढ़ रहे हैं। लेकिन... लेकिन मुझे अभी भी एक उलझन है।' वज़ीर ने हिचकिचाते हुए कहा।

'अचंभा, उलझन? क्यों और क्या है? क्या नवाब ने कुछ ऐसा कहा या इशारा किया है जिससे आपको संदेह हो गया है?'

'नहीं, ऐसी बात नहीं है,' वज़ीर ने 'नहीं' शब्द को लंबा खींचते हुए कहा, मानो वह अपनी परेशानी

ज़ाहिर नहीं करना चाहती थी। वह कुछ पल चुप रही। फिर, सिर झुकाकर और दुपट्टे का एक कोना मरोड़ते हुए बोली, 'नहीं। मेरे मन में कोई डर नहीं है, सच में। लेकिन नवाब ने बात साफ़ नहीं की है।'

'उस लड़की को देखो! अब वह चीजों की स्पष्टता को लेकर परेशान है! क्या कोई बिना किसी कारण के इतनी महंगी अंगूठी दान कर देगा? क्या कोई बिना किसी वजह के इतना समर्पण करेगा?'

'यह सब तो ठीक है, बाजी, लेकिन उसने सिर्फ इशारों और अस्पष्ट सुझावों में ही बात की। मुख्य मुद्दे अनसुलझे हैं। वह यह स्पष्ट नहीं करता कि वह मुझसे वास्तव में क्या चाहता है।'

मंझली ने पूछना चाहा, 'और उस मत्टन ब्लैक फिरंगी ने—खैर, वह अपनी मौत का हकदार था—तुम्हारे साथ कौन से समझौते और अनुबंध किए थे? अगर वह तुम्हें अपने साथ ले गया, तुम्हें अपने पैरों से उठाकर ले गया, तो वह तुमसे शादी भी कर सकता था! ठीक है, वह इस्लामी विवाह तो नहीं कर सकता था, लेकिन उसे दीवानी अदालत में कागजात पंजीकृत करने और हस्ताक्षर करने से किसने रोका? बेशक, किसी को भी जीवन और मृत्यु पर अधिकार नहीं है। लेकिन चाहे जिंदा हो या मुर्दा, उस नाज़ारेथ के रहने वाले ने तुम्हारे लिए कोई इंतजाम नहीं किया!'

ज़ाहिर है, वह ये बातें कह नहीं सकती थी, लेकिन उसे यह भी एहसास हुआ कि छोटी की दुविधा इसी वास्तविकता से उपजी थी: बल्क साहब चले गए, और अपने पीछे एक बेहद असुरक्षित घर छोड़ गए। दुनिया में बिल्कुल अकेली रह गई छोटी को अपनी ही परछाई से डरना उसका जायज़ था। उसका दिल छोटी के लिए स्नेह से भर उठा, और उसकी अपनी असलियत भी उसके सामने कौंध गई। निःसंदेह, नवाब यूसुफ अली खान ने उसका पूरा ख्याल रखा और उसे हर संभव आराम दिया, लेकिन शादी का एक शब्द भी उनके मुंह से नहीं निकला था। दुनिया की नज़रों में वह भले ही बहुत कुछ हो, लेकिन ईश्वर की नज़रों में, और नवाबों के असली घर में, वह कुछ भी नहीं थी।

उसकी आँखों में आँसू आ गए, लेकिन उसने खुद को संभाला और कहा, 'एक तरह से देखा जाए तो तुम बिल्कुल सही हो, प्यारी बच्ची। लेकिन हमारे पास और क्या विकल्प है? हमें अपना जीवन और अपना पूरा अस्तित्व भाग्य द्वारा तय की गई परिस्थितियों के अनुसार जीने और उन्हें यथासंभव बेहतर ढंग से संभालने में समर्पित करना चाहिए। हमारी धार्मिकता इसी में निहित है।'

वज़ीर की आँखों में भी आँसू आ गए। उसने अपने शॉल के एक कोने से उन्हें पोंछा और फिर हिम्मत जुटाकर पूछा, 'बताइए, बाजी, अपने नवाब साहब के लिबास से खुद को बाँधने से पहले आपके मन में क्या विचार थे?'

मंझली अवाक रह गई। वह लगभग छह साल से यूसुफ अली खान के साथ थी। इस दौरान उसने किसी दूसरे पुरुष की ओर देखा तक नहीं था; किसी दूसरे पुरुष के बारे में सोचना उसके लिए वर्जित था। आखिर, वह नवाब के साथ किसी व्यापारिक सौदे के लिए तो नहीं थी: नहीं, वह उनके साथ पवित्रता के सभी नियमों का पालन करते हुए और शालीनता के सभी सिद्धांतों का अनुपालन करते हुए रहती थी... तो क्या नवाब के प्रस्ताव से पहले ही वह उनसे मोहित हो गई

थी? क्या यही कारण था कि उसने नवाब की इशारों भरी तारीफों का तुरंत जवाब दिया और अपने माता-पिता का घर छोड़कर नवाब की हवेली को अपने जीवन का अंतिम ठिकाना बना लिया?

वह धीरे-धीरे बोली, हर शब्द पर पूरा ध्यान देते हुए, 'सच कहूँ तो, छोटी, अब इतना समय बीत चुका है कि मुझे ठीक से याद नहीं कि उस समय मेरे मन में क्या विचार चल रहे थे... शायद मुझे उनके लिए कुछ महसूस हुआ हो, वह वहाँ अक्सर आते थे... और वह अस्पष्ट भावना प्रेम या स्नेह में बदल गई, जो भी हो। लेकिन ईश्वर की कसम, नवाब साहब ने कभी मेरे साथ छल नहीं किया। उन्होंने कभी झूठे वादों से मेरी उम्मीदें नहीं बढ़ाईं।'

वज़ीर ने कहा, 'अल्लाह आप दोनों को एक-दूसरे के प्रियतम के रूप में सुरक्षित रखे। अब तक तो शिकायत करने लायक कुछ भी नहीं हुआ है।'

'हाँ, और ना,' मंझली बेगम ने एक गहरी साँस ली। 'लेकिन ये वस्त्र मैंने खुद पहने हैं, और लगता है कि भाग्य के दर्जी ने मेरे लिए कोई दूसरा वस्त्र नहीं सिला। अब अगर यही वस्त्र मेरा कफ़न बन जाए, तो मैं ईश्वर का धन्यवाद करूँगी कि उन्होंने मुझे दुनिया के उपहास का पात्र बनाकर शर्मिंदा नहीं किया।'

'हां, मेरे लिए भी, मेरी समस्या का समाधान अल्लाह के सिवा कोई नहीं कर सकता—' वज़ीर कुछ और कहने ही वाली थी कि मंझली ने उसे बीच में ही रोक दिया। 'अल्लाह का नाम लो, छोटी! तुम्हारी समस्या क्या है? तुम किस विकट परिस्थिति में फंसी हो? अपने दिल को टटोल कर देखो। क्या वह नवाब शम्सुद्दीन अहमद से जुड़ा हुआ है या नहीं?'

'मुझे नहीं पता।' वज़ीर की आँखें फिर से आँसुओं से लाल हो गईं। 'जहाँ तक मैं समझ सकता हूँ, मुझे यही लगता है, लेकिन...'

लेकिन क्या? अगर आप अपने कर्मों पर विश्वास करते हैं, और अगर नवाब भी आपकी ओर झुकाव रखते हैं, तो आपको नए सिरे से जीवन जीना शुरू करना होगा। अब तक जो कुछ भी हुआ है, उसे शुभ संकेत समझिए।

'लेकिन...' वह फिर रुक गई। 'बाजी, आपकी बात अच्छी लग रही है, लेकिन मेरे बच्चे...'

अरे, इस नन्हे बच्चे की बात तो सुनो! इतनी जल्दी बच्चों की चिंता करना! तुम्हें हर जगह छोटी-छोटी बातों पर नुक्ताचीनी करने का मौका मिल ही जाएगा।

वज़ीर ने मन ही मन सोचा, 'बाजी, आपके तो बच्चे ही नहीं हैं। भला आप अपने बच्चों को छीन लिए जाने का दर्द कैसे समझ सकती हैं?' लेकिन ऐसे शब्द बोलना तो दूर, सोचना भी ना था। और उसे हल्का सा शक था कि बाजी ने जानबूझकर बच्चे पैदा नहीं किए... या शायद नवाब ने उन्हें ऐसा करने से मना किया था। उसने शांत स्वर में कहा, 'नहीं, बाजी, प्लीज़। मैं छोटी-छोटी बातों पर बहस नहीं करना चाहती। लेकिन क्या बलक साहब के रिश्तेदारों ने मेरे साथ धोखा नहीं किया?'

"अच्छा। लेकिन सोचो, तुमने उन्हें अकेले कैसे पाला-पोसा, जबकि वे परदेसी वंश के हैं? तुम्हें लगता है कि वे तुमसे प्यार करेंगे? क्या नाज़ारेथ के निवासी और मुसलमान के बीच कोई प्रेम

बचा है? और क्या तुम्हारे पास इतना धन है कि तुम उनकी परवरिश, शिक्षा, विवाह और अन्य खर्चों को वहन कर सको? अब जब नवाब शम्सुद्दीन अहमद से उम्मीद जगी है, तो देखते हैं क्या होता है। तुमने तो बस बीज बोया है, और अभी से फसल काटने के सपने देखने लगे हो!"
वज़ीर के चेहरे पर हल्की सी मुस्कान आ गई। 'बाजी, आप जानते हैं कि मैं हमेशा से ही जल्दबाजी करने वाला इंसान रहा हूँ!'
और तुम भली-भांति जानते हो कि बेवजह की जल्दबाजी शैतान का मार्ग है। ज़रा देखो, तुम्हारे इरादों में कितनी उलझनें और पेचीदगियाँ थीं, और सही समय पर समस्त उलझनों को सुलझाने वाले ने उन्हें तुम्हारे लिए कितनी कुशलता से सुलझा दिया! क्या तुम नहीं जानते कि प्रतीक्षा का तनाव बच्चों को भी मानसिक रूप से बूढ़ी चुड़ैल बना देता है?
ये कहते हुए मंझली अपनी जगह से उठी, बार-बार वज़ीर के चेहरे पर हाथ फेरा और अपने चेहरे पर उंगलियां चटकाती रही। फिर उसने वज़ीर को प्यार से गले लगाया और कहा, 'मुझे अब जाना चाहिए, लेकिन अगर कुछ भी हो तो मुझे तुरंत बता देना।'
'बाजी, क्या आप रात के खाने के लिए नहीं रुकेंगी?'
अरे नहीं। शाम को नवाब साहब अक्सर मेरा हालचाल पूछते हैं और कभी-कभी खाने के लिए ज़नाना में भी आते हैं। हिम्मत रखिए, मैं नवाब साहब को भी सब कुछ बता दूँगा। अल्लाह की मर्ज़ी से सब ठीक होगा। अब मैं चलता हूँ। मैं आपको अल्लाह की हिफ़ाज़त में छोड़ता हूँ!
उम्दा खानम को उठते देख, एक दासी ने उन्हें ढकने के लिए एक चौड़ा रेशमी चादर लाकर दिया, जिससे उनका शरीर और चेहरे का काफी हिस्सा पूरी तरह से छिप गया। दासी उम्दा खानम की पालकी दरवाजे पर लाने के लिए बाहर गई। वफ़ादार और वज़ीर की एक अन्य दासी मुबारक कदम ने पालकी के सामने एक बड़ी चादर इस तरह डाली कि पालकी गली से पूरी तरह अलग हो गई। पालकी में पैर रखने से पहले, मंझली ने फिर से वज़ीर के चेहरे पर हाथ फेरा और अपनी उंगलियों को आपस में चटकाया, और उन्हें फिर से गले लगा लिया। छोटी, सिर झुकाए और बायां हाथ दाहिनी छाती पर रखे, बार-बार कहती रही: 'बाजी, अल्लाह माकुम; बाजी, मैं आपके सामने नतमस्तक होती हूँ; बाजी, अल्लाह आपकी रक्षा करे।'
फ्रेजर छोटी बेगम के बारे में रणनीति तय नहीं कर पा रहा था: सफलता सुनिश्चित होनी चाहिए और शहर में रेजिडेंट की मनमानी के बारे में कोई अफवाह नहीं फैलनी चाहिए। अन्यथा, उसे उसके घर से लाना कोई समस्या नहीं थी; या उसे रात के खाने पर आमंत्रित किया जा सकता था और फिर उसकी इच्छा के विरुद्ध उसे हिरासत में रखा जा सकता था। (जैसे कि उसे पूरा विश्वास था कि यदि आमंत्रित किया जाए, तो छोटी बेगम निमंत्रण को अस्वीकार नहीं करेगी।)
फ्रेजर जानता था कि देशी राज्यों के कई भ्रष्ट या अत्याचारी शासक खुलेआम ऐसे कृत्य करते थे, और महिलाओं, विशेषकर समाज के गरीब और दबे-कुचले वर्गों की महिलाओं का सम्मान उनके शासन में कभी सुरक्षित नहीं था। रेजीडेंसी में नियमित रूप से कई संदिग्ध या आपराधिक चरित्र वाले व्यक्तियों को नियुक्त किया जाता था, या ऐसे लोगों को नियुक्त किया जाता था जिनकी पहुँच कुछ ऐसे कबीलों तक थी जिनके सदस्य पारंपरिक रूप से अपराध का जीवन जीते थे। वास्तव में, फ्रेजर के बारे में यह अफवाह थी कि वह कमजोर समुदायों की लड़कियों और लड़कों

का अपहरण करके उन्हें अपने मनोरंजन के लिए रेजीडेंसी में लाने से भी पीछे नहीं हटता था। यह शायद सच नहीं था, लेकिन अकल्पनीय भी नहीं था: पेशेवर महिलाओं, या यहाँ तक कि निजी घरों की महिलाओं को भी जबरन ले जाया जा सकता था, या पेशेवर पुरुष या महिला तस्करों के माध्यम से अपहरण किया जा सकता था और शक्तिशाली लोगों के मनोरंजन के लिए इस्तेमाल किया जा सकता था।

हकीम की हठधर्मिता स्पष्ट होने के बाद समस्या ने एक नया रूप ले लिया था। अब शम्सुद्दीन अहमद खान को यह जानकारी अवश्य मिल गई होगी कि रेजिडेंट बहादुर छोटी बेगम के प्रति आसक्त हैं। इसलिए यह स्पष्ट था कि शम्सुद्दीन अहमद को निवारक और रक्षात्मक उपाय करने का आदेश देना चाहिए था, जिसमें छोटी के दरवाजे पर चौबीसों घंटे सुरक्षा गार्ड की नियुक्ति भी शामिल थी। यह भी संभव था, हालांकि इसकी संभावना कम ही थी, कि बादशाह ने फ्रेजर की कार्रवाई को दमनकारी या मनमानी बताते हुए अपनी नाराजगी व्यक्त की हो।

इसलिए बल प्रयोग करना उचित नहीं था। छोटी बेगम जाकर सीधा और शांतिपूर्ण आक्रमण करना निश्चित रूप से संभव था—बल्कि वांछनीय भी था—विशेषकर तब जब नवाब की सुरक्षा व्यवस्था अभी तक पूरी तरह से तैयार नहीं थी। वास्तव में, अगर ऐसा संभव भी होता, तो भी ग्रैंड साहिब बहादुर के आगमन को रोकने की हिम्मत कोई नहीं कर सकता था। फ्रेजर ने शायद कुछ समय तक इस बारे में विचार किया होगा, लेकिन एक बार निर्णय लेने के बाद, इसे बिना और विलंब किए लागू करने का कोई कारण नहीं था।

शहर में उनकी शाम की सैर का समय नजदीक आ रहा था, इसलिए उनके पसंदीदा हाथी सूरत सुंदर को उनके लिए सवारी के लिए लाना बिल्कुल उचित था। उनके पीछे दो अन्य हाथियों पर आठ निशानेबाज और आगे कार्बाइन लिए चार घुड़सवार थे, और वे शहर की ओर चल पड़े।

शहर में हर शाम टहलने की प्रथा डेविड ओचटरलोनी ने शुरू की थी। वे पहले व्यक्ति थे जिन्होंने उस पुराने नियम को तोड़ने का साहस किया, जिसके अनुसार सम्राट के अलावा किसी को भी शहर की सीमा के भीतर हाथी की सवारी करने की मनाही थी। हाथी की सवारी की शान-शौकत के अलावा, ओचटरलोनी अपने लिए सोने का हौदा और अपने हाथी के लिए जकूज़ी का वस्त्र भी इस्तेमाल करते थे। हौदे के ऊपर बने चंदोवे का इस्तेमाल किसी को भी करने की अनुमति नहीं थी; यह विशेषाधिकार केवल सम्राट के लिए आरक्षित था। यहां तक कि महादा जी सिंधिया—जिनके पास प्रिय पुत्र, पूर्णाधिकार प्राप्त प्रतिनिधि और मुख्य मंत्री जैसे पद थे—और गद्दार गुलाम कादिर रोहिल्ला ने भी चंदोवे का इस्तेमाल नहीं किया। ओचटरलोनी ने शाही शैली के चंदोवे के बजाय अंग्रेजी शैली के छाते का इस्तेमाल करके इस नियम को तोड़ा। उनके सिर पर हौदे के पीछे खड़ा एक सेवक छाता पकड़े रहता था।

ओचटरलोनी के अनधिकृत आविष्कार रेजीडेंसी की परंपराओं और विशेषाधिकारों का हिस्सा बन गए, और हौदा और छाते से सुसज्जित सजे-धजे हाथी पर प्रतिदिन शाम को होने वाली सैर झरोका दर्शन का एक अनौपचारिक विकल्प बन गई। झरोका दर्शन सम्राट अकबर द्वारा शुरू की गई एक प्रथा थी, जो लगभग एक अनुष्ठान बन गई थी। सम्राट प्रतिदिन एक निश्चित समय पर खिड़की पर प्रकट होते थे, जब लोग उन्हें देखने के लिए एकत्र होते थे, इसे एक पुण्य कार्य मानते

हुए, और साथ ही यह सुनिश्चित करने के लिए कि सम्राट जीवित और स्वस्थ हैं।
फ्रेजर को पता था कि मुहियुद्दीन औरंगजेब आलमगीर ने अपने लंबे शासनकाल का दूसरा आधा हिस्सा दक्षिण में युद्ध अभियानों में बिताया था, और उन वर्षों में से पाँच या छह वर्ष वास्तव में सक्रिय युद्ध मोर्चों या सैन्य शिविरों में व्यतीत हुए थे। ऐसी परिस्थितियों में झरोका दर्शन असंभव था, इसलिए औरंगजेब ने इसकी जगह एक वैकल्पिक व्यवस्था की। वह प्रतिदिन एक निश्चित समय पर अपने दरबारी मंडप से बाहर निकलते और मौसम के अनुसार खुली पालकी या नलकी में बैठकर कई वर्ग मील में फैले विशाल सैन्य शिविर का चक्कर लगाते। इस यात्रा में एक या दो घंटे लगते थे। औरंगजेब के हाथों में एक किताब होती थी और वह हर समय उस पर ही नजर रखते थे, ऊपर या किसी भी दिशा में नहीं देखते थे।
सम्राट के भव्य काफिले के गुजरते ही सभी लोग अपने-अपने काम छोड़कर खड़े हो गए। उन्होंने तीन बार सलाम किया, सिर झुकाया और तब तक वैसे ही खड़े रहे जब तक कि वह शुभ रथ आंखों से ओझल नहीं हो गया। औरंगजेब ने हावभाव या आंखों की हरकत से कुछ भी नहीं दिखाया। वह एकदम गंभीर और स्थिर रहा, मानो उसके पूरे शरीर में गहन श्रद्धा का भाव व्याप्त था, मानो वह किसी दरबार में किसी विदेशी राजकुमार के राजदूत का स्वागत कर रहा हो।
सम्राट की शारीरिक और दृष्टिहीनता केवल मुगल दरबार के शिष्टाचार का हिस्सा नहीं थी: यह इस बात का भी प्रतीक थी कि राज्य के कार्य और सैन्य गतिविधियाँ सुचारू रूप से और सतर्कता के साथ चलती रहें, चाहे वह देख रहे हों या नहीं। लगभग छियासी वर्ष के, सादे लेकिन महंगे वस्त्र पहने, लंबे और बेहद दुबले-पतले, चील जैसी आँखों वाले, शिकारी जैसी नुकीली नाक वाले और शानदार आभूषण से सजी शाही पगड़ी के नीचे चौड़े और उभरे हुए माथे वाले, धँसे हुए गालों में दुर्बलता का कोई निशान नहीं, लंबे और तीखे चेहरे वाले जो लंबी, बर्फ़ जैसी सफ़ेद दाढ़ी से और भी लंबे लगते थे: ऐसे समय में औरंगज़ेब सचमुच विश्व विजेता आलमगीर की तरह दिखते थे।
विलियम फ्रेजर झरोका दर्शन के एक नए और शायद अधिक सुरुचिपूर्ण रूप को सृजित करने में औरंगजेब की शैली और गरिमा से अत्यंत प्रभावित थे। उनका मानना था कि यदि शक्ति, सामर्थ्य और वैभव में नहीं तो ज्ञान और गंभीरता में वे स्वयं को औरंगजेब के समकक्ष मानते थे। उनका यह भी मानना था कि कंपनी का सार तत्व शीघ्र ही उसी पद पर आसीन होगा जिस पर औरंगजेब ने आधी शताब्दी तक आसीन रहा था। जिस प्रकार औरंगजेब ने पूरे हिंद, कामरूप और बंगले को, और फिर दक्कन के पूरे क्षेत्र को अपने अधीन कर लिया था, उसी प्रकार, फ्रेजर के सपनों में, कंपनी बहादुर एक दिन इस असीम भूभाग पर अपना वर्चस्व और प्रभुत्व स्थापित कर लेगी।
इस वृत्तांत में एकमात्र अंतर यह था कि जहाँ औरंगज़ेब की प्रजा उसे ईश्वर की छाया और दिव्य प्रतीक मानती थी, वहीं फ्रेज़र के लिए, परम सत्ता का स्वरूप, कंपनी बहादुर, इंग्लैंड के राजा की छाया और पवित्र त्रिमूर्ति के आदर्श स्वरूपों की विस्तारित छाया था, जो इंग्लैंड के राज्य को ऐसी चमक और महिमा से प्रकाशित कर रहा था कि ऑस्ट्रेलिया से चीन तक और अफ्रीका से अमेरिका तक, पूरी पृथ्वी का चेहरा चकाचौंध से जगमगा रहा था। पूरे विश्व का धन और खजाना इंग्लैंड में समा रहा था, और गणित, दर्शन, विज्ञान, खगोल विज्ञान और चिकित्सा जैसे ज्ञान के शाश्वत स्रोत इंग्लैंड की धरती से फूट रहे थे, पृथ्वी के चारों ओर फैल रहे थे और ग्रह की पूरी

सतह को प्रकाशित और सिंचित कर रहे थे।
इस प्रकार, फ्रेजर के अनुसार, दिल्ली की सड़कों पर औरंगजेब की तरह शान-शौकत से घूमने का उसे पूरा अधिकार था, चाहे वह युद्ध के मैदान में हो या राज शिविर में, ताकि वह अपनी प्रजा को अपनी उपस्थिति, शक्ति और शासन करने की क्षमता का प्रमाण दे सके। हाथी की सवारी के दौरान भी फ्रेजर के हाथ में एक खुली किताब थी। फिर भी, अपने सर्वोत्तम प्रयासों के बावजूद, वह अब तक अपने शरीर को स्थिर रखने और अपनी नज़रें किताब पर टिकाए रखने में सफल नहीं हो पाया था। उसने मन ही मन सोचा, जब कोई लगातार आसपास की गतिविधियों पर नज़र न रखे तो सैर का क्या लाभ? और यद्यपि उसके पास अभी उतने लोग नहीं थे जो उसे सलाम करते थे जितने आलमगीर के पास आसानी से उपलब्ध थे, फिर भी बहुत से लोग उसे प्रणाम करते थे और वह उनकी अधीनता को स्वीकार करना पसंद करता था। व्यक्ति की सामाजिक स्थिति का पूरा सम्मान करते हुए, वह कुछ लोगों को देखकर केवल मुस्कुरा देता था, कुछ को अभिवादन के शब्द कहता था—ये शब्द भी व्यक्ति के अनुरूप ही होते थे—और कुछ विशेष भारतीयों को वह 'शुभ संध्या महोदय' कहता था। वह उच्च पदस्थ श्वेत महिलाओं को छोड़कर किसी के भी सामने अपना सिर नहीं झुकाता था।

उस शाम जब फ्रेजर का दल सिरकी वालन पहुँचा, तो उन्हें यह देखकर कुछ आश्चर्य हुआ कि मोहल्ले में जाने वाला मुख्य द्वार बंद था और पैदल यात्रियों के लिए केवल छोटा द्वार ही खुला था। गाड़ियों को रुकना पड़ता था और द्वार खोलने से पहले उनकी पहचान और उद्देश्य की पुष्टि करनी पड़ती थी। एक लाठीधारी व्यक्ति द्वार के पीछे से झाँकता था और नए आने वाले व्यक्ति की प्रामाणिकता से संतुष्ट होने पर ही द्वार खोलता था।
एक पालकी को अंदर आने देने के बाद जब लाठीधारी फाटक बंद कर रहा था, तभी उसकी नज़र फ्रेज़र के दल पर पड़ी। उसने न तो फाटक बंद किया और न ही उसे पूरी तरह खोला, जिससे यह स्पष्ट हो गया कि नए आने वाले को भी अंदर आने से पहले अपना काम बताना होगा। फ्रेज़र का हाथी और बाकी दल को रुकना पड़ा। आसपास के राहगीर, दुकानदार और खरीदार अभी पूरी तरह समझ नहीं पा रहे थे कि क्या हो रहा है या क्या होने वाला है, लेकिन दिल्लीवासियों की गर्दन उठाकर देखने और किसी भी दिलचस्प घटना के होने पर इकट्ठा होने की स्वाभाविक प्रवृत्ति हमेशा की तरह सक्रिय थी, और कुछ ही क्षणों में दर्शक जमा होने लगे। यह दिल्ली थी, जहाँ नरसंहार भी एक तमाशा होता था। हिंदी कवि हकीम मोमिन खान ने उस भीड़ की उपमा का कितना सटीक वर्णन किया है जो उस प्रेमिका के लिए उमड़ती है जो पल भर में दर्जनों लोगों को मार डालती है:
तुमने एक नजर डाली और पूरी दुनिया को तबाह कर दिया; उस एक नजर से कोई भी दूसरे के मारे जाने का तमाशा नहीं देख सका!
और यहाँ एक अद्भुत नज़ारा था, कुछ हद तक डरावना भी; यानी एक ही कीमत में दो रोमांच। नवाब रेजिडेंट बहादुर अपने पसंदीदा हाथी पर सवार होकर रंगारंग जुलूस के साथ सिरकी वालन के द्वार की ओर बढ़ रहे थे, जिसके पीछे प्रसिद्ध छोटी खानम स्थित थी, और लोहारू राज्य के

शक्तिशाली लाठीधारी प्रवेश द्वार की रक्षा कर रहे थे: यह निश्चित रूप से एक मसालेदार दृश्य होने वाला था। आखिर लाठीधारियों को किसकी प्रगति रोकने के लिए नियुक्त किया गया था? यह एक ऐसा प्रश्न था जिसमें सनसनीखेज और थोड़ी सी रोमांचकारी झलक थी। ग्रैंड साहब दिल्ली की भाषा में धाराप्रवाह बोलने के लिए प्रसिद्ध थे, और यह एक और आकर्षण था; क्योंकि वहाँ उपस्थित अधिकांश लोगों ने उन्हें कभी देखा भी नहीं था, और न ही उनकी बातें सुनी थीं।

इसलिए दर्शकों की कोई कमी नहीं थी: बच्चे और यहाँ तक कि कुछ पर्दा प्रथा का पालन करने वाली महिलाओं की निगाहें भी बाँस की पर्दों या अस्थायी पर्दों के पीछे से झाँकती हुई देखी जा सकती थीं। फ्रेजर का भारतीय पहनावा, उनका फिरंगी रूप-रंग, उनके पीछे हाथी पर बैठा हुआ राजदंड धारण करने वाला व्यक्ति, जो हुक्का और उसके लंबे पाइप को सावधानी से पकड़े हुए था: इनमें से प्रत्येक चीज़ दर्शकों के लिए अपने आप में अनोखी थी।
बाधा का सामना करते हुए फ्रेजर ने अपना संयम बनाए रखा। उन्होंने कुछ नहीं कहा, लेकिन उनके इशारे को भांपते हुए एक घुड़सवार ने अपने घोड़े को आगे बढ़ाया, अपनी कार्बाइन को आधे खुले गेट की ओर निशाना साधते हुए लाठी चलाने वाले पर गुर्राया: 'अरे, तू! अपनी ही माँ का लिंग फोड़ने वाला! क्या तूने अपने हाथ-पैर खो दिए हैं? क्या तू सीनियर साहिब बहादुर के हाथी को रास्ता देने की हिम्मत नहीं करता?'
लाठीधारी एक सच्चा मेवाती था, लंबा, बलवान और कठोर। उसने सफेद ड्रिल रंग की तंग पतलून और उसी कपड़े का लंबा हरा कुर्ता पहना हुआ था, जिसकी कमर पर लाल कमरबंद कसकर बंधा था, जिससे एक लंबा खंजर लटका हुआ था। सिर पर उसने एक छोटी काली पगड़ी पहनी हुई थी। उसकी दोनों कलाइयों में लोहे की चूड़ियाँ थीं और उसने लगभग छह फुट लंबी एक भारी और मजबूत लाठी पकड़ी हुई थी, जो कई वर्षों तक बारिश में भीगने और फिर कई वर्षों तक गाढ़े सरसों के तेल में डूबे रहने के कारण और भी भारी और मजबूत हो गई थी, जिसके परिणामस्वरूप यह एक असाधारण रूप से भारी, लचीली और मजबूत मारक हथियार बन गई थी। एक कुशल व्यक्ति के हाथों में, ऐसी लाठी तलवार से भी अधिक घातक हो सकती थी। एक सिरा पीतल की चादरों से मोटा किया गया था, जिसके ऊपर लोहे का सिरा लगा हुआ था। दूसरा सिरा लोहे की फेरूल से जड़ा हुआ एक मोटा नुकीला सिरा था।
लाठी चलाने वाले ने आधे खुले फाटक से लाठी अंदर डाली और उसका सिरा सवार के घोड़े की गर्दन पर, फेफड़ों के पास रखकर, ठंडे और संयमित स्वर में कहा, 'तेलंगा साहब, अपनी ज़बान पर लगाम कस लीजिए, और अपने बूढ़े घोड़े को भी थोड़ा लगाम दीजिए। अगर आपने इसे एक हाथ की दूरी तक भी आगे बढ़ाया, तो इस लाठी का सिरा इसके थके हुए जिगर में धंस जाएगा।' उसकी आवाज़ और लहजा इतना कठोर था कि तलवार भी उस पर निशान नहीं छोड़ सकती थी। 'तेलंगा' शब्द जानबूझकर अपमान के तौर पर इस्तेमाल किया गया था, क्योंकि यह दक्षिण के अपेक्षाकृत छोटे कद के, काले रंग के सैनिकों के लिए प्रयोग किया जाता था, जो असभ्य और कुछ हद तक कायर माने जाते थे। फ्रेजर के घुड़सवार ने दहाड़ते हुए कहा, 'अरे नीच आवारा! क्या मैं तुम्हें तेलंगाना जैसा दिखता हूँ? हम बरुज़ई जनजाति के पठान हैं। एक शब्द भी बोला तो मैं

तुम्हारी जीभ काट दूँगा!'
मामले के बढ़ने की आशंका से बाकी तीन लाठीधारी भी आगे आ गए, लेकिन उन्होंने बहस में हिस्सा नहीं लिया। फ्रेजर समझ गया कि गरमागरम बहस को झगड़े में बदलने देना ठीक नहीं होगा: इससे देखने वालों को हंसी आएगी और उसकी बेइज्जती होगी। उसने अपने पीछे वाले हाथी पर सवार एक व्यक्ति से धीरे से अंग्रेजी में कुछ कहा। हाथी के सवार ने तुरंत अपने हाथी को आगे बढ़ाया और उसे पीछे कर दिया। उसने गंभीरता से कहा, 'मियां खान, वरिष्ठ साहिब बहादुर को रास्ता न देना उचित नहीं है।'
लाठीधारी के लहजे और शब्दों में भी नरमी आ गई, हालांकि उसका उच्चारण अभी भी बेहद कठोर था। 'क्यों नहीं? हम उसे रास्ता कैसे नहीं दे सकते? लेकिन वह कहाँ जा रहा है? कम से कम हमें इतना तो पता होना चाहिए।'
हाथी सवार ने जिज्ञासा भरी निगाहों से फ्रेजर की ओर देखा। फ्रेजर ने कुछ इशारा किया, जिसे उसके सेवक ने सही ढंग से समझा और कहा, 'महामहिम, समृद्धि और शक्ति के केंद्र, वरिष्ठ साहिब बहादुर का आदेश है कि वे खानम साहिब से मिलने आकर उन्हें सम्मानित करना चाहते हैं।'
चारों लाठीधारी दुविधा में थे। खानम साहब के दरवाजे पर पहरेदारी और सुरक्षा के लिए तैनात होने के कारण, स्पष्ट रूप से उनका काम अवांछित व्यक्तियों को प्रवेश से रोकना था, और यदि आवश्यकता पड़े तो उनकी रक्षा करना था। लेकिन वरिष्ठ साहिब बहादुर का क्या? वे इस बात से अनजान थे कि नवाब ने उन्हें वरिष्ठ साहिब बहादुर की किसी भी हरकत को रोकने के लिए वहाँ तैनात किया था। निश्चित रूप से, जब यह ज्ञात था कि नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान साहब खानम साहब की ओर आकर्षित थे, तो किसी और के लिए, यहाँ तक कि रेजिडेंट बहादुर के लिए भी, खानम साहब में रुचि लेने का कोई सवाल ही नहीं था। लेकिन... वरिष्ठ साहिब बहादुर को अनुमति न देना भी जटिलताएँ पैदा कर सकता था, है ना?
उनके बीच कुछ देर मौन विचार-विमर्श के बाद, चार लाठी-वाहकों में से एक, जो उम्र में बड़ा और गंभीर स्वभाव का था, आगे आया और बोला, 'बहुत अच्छा। पूरी तरह समझ गया, महोदय। लेकिन मुझे जाकर पता लगाने दीजिए कि क्या खानम साहब इस समय वरिष्ठ साहिब बहादुर से मिलने के लिए सहमत होंगे।'
उनकी आवाज़ न केवल गंभीर थी, बल्कि कुछ हद तक परिष्कृत और शहरी भी थी; शायद वे मूल रूप से दिल्ली के रहने वाले थे। लेकिन उनके आपात रूप से तर्कसंगत अनुरोध ने फ्रेज़र के लिए एक वास्तविक दुविधा खड़ी कर दी। यह अपने आप में असामान्य था: कि रेजिडेंट किसी से मिलने आए, और वह व्यक्ति उनका अत्यंत उत्साह और सम्मान के साथ स्वागत करने के बजाय, मुलाकात की उपयुक्तता और समय के बारे में सोचने लगे! यदि वज़ीर खानम उनसे मिलने से इनकार कर देते, तो वे न केवल पूरे शहर में हंसी का पात्र बन जाते, बल्कि कंपनी बहादुर की प्रतिष्ठा और सम्मान को भी गंभीर रूप से ठेस पहुँचती।
लाठी-धारक के जवाब में निहित अस्वीकृति को स्वीकार करके चुपचाप चले जाना, वज़ीर खानम के घर में जबरदस्ती घुसने जितना ही बुरा होता। फ्रेज़र ने अपने जीवन में पहली बार इतनी बड़ी

गलती की थी। उसे रेजिडेंसी में बुलाना कहीं बेहतर होता। कंपनी की पूरी शक्ति और वैभव को देखकर वह निश्चित रूप से भयभीत और निराश हो जाती। वहाँ यह कहीं अधिक व्यावहारिक होता: उसे उनके सामाजिक स्तर के विशाल अंतर से अवगत कराना, ऊँच-नीच के भेद को व्यवहार में लाना। अब, बिगड़े हुए सौदे में ही समझौता करना था।

उन्होंने बस हल्के से सिर हिलाया, और हाथी सवार ने पहरेदारों से कहा, 'ठीक है। वरिष्ठ साहिब बहादुर यहाँ ठहरने की कृपा कर रहे हैं। अब तुरंत जाओ और खानम साहब को सूचित करो।' फ्रेजर के आने की खबर सुनकर वज़ीर को आश्चर्य तो हुआ, लेकिन वह घबरायी या चिंतित नहीं थी। फ्रेजर का बिना सूचना दिए उसके साथ ऐसा व्यवहार करना उसकी गरिमा का अपमान था; क्योंकि इसका अर्थ यह था कि फ्रेजर की नज़र में वज़ीर महज़ एक नाचने वाली लड़की थी, जिसे दिन-रात किसी भी समय किसी भी ग्राहक को सौंपा जा सकता था। वज़ीर इस मामले की बारीकियों से भलीभांति परिचित थी, लेकिन उसने फ्रेजर के इस कृत्य को अंग्रेजों के विशिष्ट अहंकार और भारतीयों के प्रति उनके तिरस्कारपूर्ण, अत्याचारी रवैये का परिणाम माना। फिर भी, वह फ्रेजर के अनुरोध को अस्वीकार करने का कोई उचित बहाना नहीं सोच पाई।

निःसंदेह, मन ही मन वह मानती थी कि वह शम्सुद्दीन अहमद खान से जुड़ी हुई है, लेकिन उसे यह विश्वास नहीं था कि नवाब से उसका संबंध इतना मजबूत है कि वह फ्रेजर को अपने घर में आमंत्रित करने से उचित रूप से इनकार कर सके। उसे यह ठीक से पता नहीं था कि नवाब और फ्रेजर के बीच उसके लिए एक प्रकार की प्रतिद्वंद्विता विकसित हो गई थी, या वास्तव में मौजूद थी। इसलिए उसने विवेक और बुद्धिमत्ता को यही उचित समझा कि वह फ्रेजर को अपने घर में आमंत्रित करे और उसे आवश्यक सम्मान प्रदान करे। किसी भी स्थिति में, नवाब शम्सुद्दीन अहमद को प्रशासनिक और आधिकारिक मामलों में फ्रेजर की इच्छाओं का उचित सम्मान करना ही था, इसलिए उसे रोकना उचित नहीं था।

‘ठीक है,’ उसने वरिष्ठ लाठीवाहक को निर्देश दिया। ‘वरिष्ठ साहिब बहादुर को पूरे सम्मान और विधिपूर्वक यहाँ लाया जाए।’ फिर वह चेहरा धोने और बाल संवारने के लिए पानी के कमरे में चली गई। उसने वफादार को कमरा खोलने और उसमें थोड़ा इत्र छिड़कने का निर्देश दिया। यही वह कमरा था जहाँ उसने नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान और पंडित नंद किशोर का स्वागत किया था। दूसरी दासी, मुबारक कदम को उसने रसोई में मिठाई और पान लाने और चाय बनाने के लिए भेजा।

पानी के कमरे में, उसने जल्दी से अपने चेहरे पर पानी के छींटे मारे, लेकिन उसने और कोई श्रृंगार नहीं किया, सिवाय इसके कि उसने अपने सामान्य दुपट्टे को छह गज के एक दुपट्टे से बदल दिया, जो एक्वामरीन मलमल का बना था और पतले सोने के धागे से बुने हुए सितारों से सजा हुआ था। जब वज़ीर पानी के कमरे से बाहर आया, तो मुबारक कदम मिठाई और पान का डिब्बा लेकर तैयार था। वफ़ादार ने फ्रेज़र का स्वागत करते हुए उसे निर्धारित कमरे में बैठाया और उसके पीछे मोर पंख से बने पंखे से हवा करने के लिए खड़ा रहा। फ्रेज़र ने कमरे का चारों ओर निरीक्षण किया और सादगी, अच्छे स्वाद और महंगे फर्नीचर की सूक्ष्म गुणवत्ता से बेहद प्रभावित हुआ। उसे थोड़ा आश्चर्य भी हुआ, क्योंकि उसका हमेशा से मानना था कि भारतीय महिलाएं अपने घरों को

अच्छे ढंग से नहीं रखतीं। शायद उसने यह सब मार्स्टन ब्लेक की संगति में और उनकी शिक्षा के कारण सीखा होगा, उसने सोचा।
फ्रेजर इस बात से भी हैरान था कि उसे कहीं भी ऐसा कुछ नहीं मिला जिसे नाचने वाली लड़की के पेशे से जोड़ा जा सके, जबकि उसे बताया गया था कि वज़ीर का पेशा यही था। न कोई वाद्य यंत्र, न कोई पेशेवर संगीतकार जैसा दिखने वाला व्यक्ति, और न ही ऐसी कोई महिला परिचारिका जो ऐसे संस्थान में अपेक्षित हो। अपने विशाल अनुभव और सूक्ष्मताओं को समझने की स्वाभाविक क्षमता के बावजूद, फ्रेजर ने वज़ीर को पूरी तरह गलत समझा और यह नहीं समझा कि वह स्वयं को एक सभ्य, अच्छे परिवार की महिला मानती थी, हालांकि उसके विचार स्पष्ट रूप से उदार थे।
वज़ीर ने मुबारक कदम को इशारा किया कि वह सूखे मेवों की थाली और पान की डिब्बी लेकर आगे बढ़ें। मुबारक कदम द्वारा पान की डिब्बी और मिठाई की थाली को फ्रेज़र के दाहिनी ओर एक छोटी सी मेज पर रखने के बाद, वज़ीर स्वयं अंदर आईं और सलाम करने के बाद उनके पीछे खड़ी हो गईं। वज़ीर ने झुककर एक औपचारिक सलाम किया और चेहरे पर स्वागत भरी मुस्कान लाते हुए बनावटी खुशी से कहा, 'आपकी दासी आपको सलाम करती है। मैं कितनी भाग्यशाली हूँ कि मेरे निर्धन घर के द्वार ने वरिष्ठ साहब बहादुर के चरणों को चूमा है!'
निस्संदेह, वज़ीर के शब्द और बोलने का लहजा कुछ हद तक चापलूसी भरा था, लेकिन उसके चेहरे पर न तो चापलूसी का कोई भाव था और न ही उस अवसर की अभिभूतता का। फ्रेज़र ने ऊपर देखा और पहली बार उसे पूरी तरह से उसके वास्तविक रूप में देखा। वह लगभग अचंभित रह गया: वज़ीर वैसी नहीं दिख रही थी जैसा उसने कल्पना की थी। वह और भी सुंदर थी और उसका व्यक्तित्व कहीं अधिक प्रभावशाली था। उसका शरीर भारी भरकम लबादे से शालीनतापूर्वक ढका हुआ था, लेकिन नारी शरीर की कोमल सुंदरता और आकर्षण उसके वस्त्रों के पीछे मोमबत्ती की लौ की तरह चमक रहा था।
‘छोटी बेगम, मैं वास्तव में आपसे और बेहतर तरीके से परिचित होना चाहता था। मेरे घर पर आयोजित रात्रिभोज में आपने सभी मेहमानों पर अच्छा प्रभाव डाला।’

फ्रेजर की हिंदी आम तौर पर काफी धाराप्रवाह थी और दिल्ली के परिष्कृत लहजे के अनुरूप थी, लेकिन वजीर की सुंदरता के प्रभाव या शायद संरक्षणवादी लहजे को अपनाने के अतिरिक्त प्रयास ने उनकी हिंदी को बनावटी और अंग्रेजी लहजे वाला बना दिया।
वज़ीर कमरे में और अंदर आई और रुक गई। वह फ्रेज़र से थोड़ी दूरी पर, अपने पैरों को जांघों के नीचे दबाकर बैठना चाहती थी, लेकिन फ्रेज़र आधा उठा और अपना हाथ बढ़ाया, शायद उसका हाथ पकड़कर उसे धीरे से अपने पास खींचना चाहता था। बड़ी फुर्ती से, लेकिन बिना किसी ज़ाहिरी कोशिश के, वज़ीर ने थोड़ी दूरी पर एक जगह चुन ली। उसे फ्रेज़र की यह हरकत बिल्कुल पसंद नहीं आई, लेकिन उसने इस मामले को आगे न बढ़ाने का फैसला किया।
चाय लाई गई, साथ में कुछ और नाश्ते और मिठाइयाँ भी। चाय भारतीयों में, विशेषकर उन लोगों में जो अंग्रेज़ जीवनशैली का अनुकरण करना चाहते थे, और ईसाइयों में, विशेष रूप से जिनके

माता-पिता में से कोई एक अंग्रेज़ था, लोकप्रिय हो रही थी। हालाँकि, भारतीय अपनी तरह से चाय बनाते थे, जिसमें भरपूर दूध और मलाई होती थी, और कुछ लोग उसमें थोड़ा सा केसर भी डालते थे। अंग्रेज़ों में, चाय बिना दूध या चीनी के प्यालों में परोसी जाती थी। कुछ लोग इसे थोड़ी चीनी या थोड़े दूध के साथ पीते थे—कभी भी दोनों एक साथ नहीं। वज़ीर के यहाँ परोसी गई चाय को देखकर फ्रेज़र को बहुत प्रसन्नता हुई क्योंकि वह बिल्कुल उनके स्वाद के अनुरूप थी। वज़ीर को बातचीत का कोई विषय सूझ नहीं रहा था; न ही वह फ्रेज़र के आने का असली कारण जान पाई। इतना तो वह आसानी से समझ गई: फ्रेज़र उसे महज़ एक नाचने वाली लड़की समझता था, जो आम वेश्या से कुछ बेहतर तो थी, लेकिन किसी शौकीन के लिए आसानी से उपलब्ध थी। इसलिए उसे यह स्पष्ट था कि वज़ीर के घर में अलग तरह का माहौल देखकर फ्रेज़र को थोड़ी असहजता ज़रूर हुई होगी, भले ही निराशा न हुई हो। लेकिन वह फ्रेज़र की तीव्र प्रतिद्वंद्विता और उससे भी बढ़कर उसके घायल स्वाभिमान को नहीं समझ पाई, जिसने एक बुझती हुई मशाल की तरह, जो रोशनी से ज़्यादा धुआँ देती है, उसके पूरे अंतर्मन को झुलसा कर काला कर दिया था।

'छोटी बेगम, आपने चाय का इंतज़ाम बहुत अच्छे से किया।' वज़ीर को चुप देखकर फ्रेज़र थोड़ा चिढ़ गया और असमंजस में पड़ गया, इसलिए उसने महज़ बातचीत शुरू करने के लिए बोलना शुरू कर दिया।

'महामहिम मेरी प्रतिष्ठा बढ़ाते हैं,' वज़ीर मुस्कुराया। 'लेकिन...'

वह कहना चाहती थी, 'लेकिन आप मेरी चाय पीने के लिए यहाँ नहीं आए हैं।' लेकिन आखिरी क्षण में उसने अपनी ज़बान रोक ली। अंग्रेजों के बीच किसी के आने का उद्देश्य सीधे पूछना अनुचित नहीं था, लेकिन भारतीयों के बीच यह बेहद आपत्तिजनक और वास्तव में घोर अपमान माना जाता था। दूसरा मुद्दा यह था कि यदि वरिष्ठ साहिब बहादुर वज़ीर के विषय में बातचीत शुरू करने और किसी समझौते पर पहुँचने के उद्देश्य से यहाँ आए थे, तो पेशे से जुड़ी महिलाओं के समुदाय में शिष्टाचार यह था कि पुरुष पहले अपना उद्देश्य बताए और फिर यदि महिला की प्रतिक्रिया प्रस्ताव देने की अनुमति दे, तो प्रस्ताव रखे।

मन ही मन वह चिंतित और अनिश्चित थी। उसे स्थिति को हाथ से निकलने से रोकने का कोई रास्ता निकालना था; लेकिन अगर साहब कोई प्रस्ताव रख दें तो वह क्या जवाब देगी? इसलिए वह बातचीत की दिशा पर किसी तरह का नियंत्रण रखना चाहती थी। हालाँकि, फ्रेजर चतुर और उत्सुक था। उसने वज़ीर की झिझक को भांप लिया। उसने कहा, 'हाँ, लेकिन क्या? क्या मैं समझूँ कि आप मेरे यहाँ होने से खुश नहीं हैं? दरअसल, मैं आपसे मिलने, आपसे बातचीत करने और आपके करीब आने के लिए काफी उत्सुक था।'

फ्रेजर ने 'निकटता' के लिए जिस शब्द का प्रयोग किया था, वह अपने मूल अरबी अर्थ में काफी हानिरहित था, लेकिन हिंदी में इसका प्रयोग बहुत कम होता था, सिवाय 'यौन संबंध' के अर्थ में। यह असंभव था कि फ्रेजर केवल दिखावा कर रहे हों और भारतीय साहित्यिक संस्कृति में इस शब्द के विशिष्ट अर्थ से अनभिज्ञ हों। खैर, वज़ीर इतनी भोली तो बिल्कुल नहीं थीं कि 'बातचीत' और 'निकटता' दोनों के वास्तविक अर्थ को न समझ पाएं। उन्हें यह नहीं पता था कि अंग्रेजी में

‘बातचीत’ का अर्थ ‘यौन क्रिया’ भी होता है, लेकिन वे यह अवश्य जानती थीं कि हिंदी में ‘बातचीत’ का एक अर्थ ‘यौन संबंध’ भी होता है।

इसलिए वह फ्रेजर के शब्दों के संभावित अर्थ को भलीभांति समझ सकती थी, और अचानक उसके भीतर क्रोध की ज्वाला भड़क उठी, मानो आग का पहिया घूम रहा हो। लेकिन उस क्षण भी वह समझ गई कि वह अपने जैसे लोगों से, अपनी दुनिया से भी क्रोधित थी, और इस बात से दुखी थी कि उसकी दुनिया उसे एक वस्तु की तरह देखती है। और यह घिनौना अंग्रेज—उसे मृत्यु ही प्राप्त हो—मुझसे अपेक्षा रखने वाला कौन होता है? क्या मैं उसकी ऋणी हूँ या उसकी प्रजा? और यह किस प्रकार का सभ्य व्यवहार है? बाज़ारों से, या कहीं से भी, कोई भी व्यक्ति किसी स्त्री पर अपना अधिकार जताने का अधिकार क्यों रखता है, और स्त्री को विरोध में भी मुँह खोलने की अनुमति क्यों नहीं है? क्या स्त्रीयाँ बकरियाँ और भेड़ें हैं जिन्हें मनचाहे कहीं भी ले जाया जा सकता है?

अब तक उसने विनम्रतापूर्वक अपना सिर झुका रखा था, लेकिन अब उसने अपना सिर उठाया और सीधी होकर फ्रेजर की आँखों में देखते हुए, ठंडे और कठोर स्वर में बिना आवाज उठाए बोली, 'नवव रेजिडेंट बहादुर, कृपया उन रागों को बजाने का प्रयास न करें जिनके लिए आपके पास आवश्यक वाद्ययंत्र नहीं हैं।'

फ्रेजर वज़ीर के शब्दों का भाव पूरी तरह समझ नहीं पाया। वह बस एक सामान्य सा जवाब देने ही वाला था कि अचानक वज़ीर का असली मतलब उसे समझ आ गया और वह जैसे किसी मधुमक्खी के डंक से भड़क उठा। उसने एक पल के लिए अपने होंठ कसकर बंद कर लिए और फिर व्यंग्य से बोला, "कल्पना की ये ऊँची उड़ानें वाकई सराहनीय हैं, लेकिन मैं ऊँची उड़ान भरने वाले पक्षी के पंख बाँधकर उसके पर नोचकर उसे सामान्य स्तर पर उड़ाने की कला से परिचित हूँ।"

“उड़ने में उन पक्षियों को कोई दिलचस्पी नहीं है जिनके पैर पहले से ही धागे से बंधे हैं, नवाब निवासी बहादुर। लेकिन हम हाफ़िज़ की इस बात पर भी विश्वास करते हैं कि हर शब्द का एक अवसर होता है और हर बिंदु का एक स्थान होता है।” वह एक पल के लिए रुकी और फिर बोली: “लेकिन शायद आप मूल्य को पहचानने की अपनी क्षमता को नकारने और उससे भटकने का मन बना रहे हैं?”

यह बात भी फ्रेजर के लिए बहुत सूक्ष्म थी और जवाब देने से पहले उसे रुककर सोचना पड़ा। सोचने की इस ज़रूरत ने उसे और भी ज़्यादा उत्तेजित और शर्मिंदा कर दिया। लेकिन वह जानता था कि अगर उसने उस समय अपनी नाराज़गी ज़ाहिर की तो उसकी विश्वसनीयता और प्रतिष्ठा को और भी ज़्यादा ठेस पहुँचेगी। उसने महसूस किया कि उसे बहुत सावधानी से आगे बढ़ना होगा। 'मैं आपका बहुत सम्मान करता हूँ, छोटी बेगम। शायद आप ही रत्नों की पारखी नहीं हैं।' एक फारसी कहावत का अप्रत्यक्ष संदर्भ देते हुए—"केवल एक राजा या रत्न-शिल्पी ही रत्न का मूल्य जान सकता है"—वज़ीर ने जानबूझकर झूठी विनम्रता दिखाते हुए उत्तर दिया, "हम जैसे लोग राजा या रत्न-शिल्पी होने से बहुत दूर हैं। नवाब निवासी बहादुर की अपेक्षाएँ हम जैसे दरिद्र और निर्धन लोगों द्वारा शायद ही पूरी की जा सकेंगी।"

'मैं अपेक्षाओं में विश्वास नहीं करता,' फ्रेजर ने टेढ़ी मुस्कान के साथ कहा। 'मैं इरादे और परिणाम के बीच पूर्ण सामंजस्य में विश्वास करता हूं।'
वज़ीर थोड़ा पीछे हट गई, मानो उठने का इरादा कर रही हो, लेकिन उसने अपना इरादा बदल लिया और कहा, 'जी जनाब। अगर आप पूर्ण एकता में इतने दृढ़ विश्वास रखते हैं... तो शायद आपको आईने में देखना ही नहीं चाहिए था। अगर आप देखते तो आपके लिए बेहतर होता।'
फ्रेजर ने अपनी समझ के अनुसार कुछ गहरा और अनुत्तरित कथन कहा था। लेकिन उसने वज़ीर जैसी लड़की से कभी सामना नहीं किया था। न ही उसने कभी किसी भारतीय लड़की को इतनी जल्दी नाराज़ होते और अंग्रेज के सामने भी इतनी जल्दी नरम से कठोर होते देखा था। वह स्तब्ध रह गया। भारतीय शिष्टाचार, घुमावदार भाषा, शालीनता का आवरण, सब कुछ उसके चेहरे से ऐसे उतर गया मानो तेजाब से नष्ट हो गया हो। उसने मेज पर मुक्का मारा, जिससे मेज और उस पर रखी चीजें उलट गईं। वह सीधा और अकड़ा हुआ खड़ा हो गया, मानो किसी परेड का निरीक्षण कर रहा हो।
'छोटी बेगम, इस सौदे की तुम्हें भारी कीमत चुकानी पड़ेगी।'
'मेरे और आपके बीच कोई सौदा नहीं है। वैसे भी मैं सस्ते सौदों में विश्वास नहीं करती। मैं सबसे पहले खरीदार के स्वभाव और मिजाज को परखती हूँ।' वज़ीर सीधी खड़ी हुई, दरवाजे की ओर इशारा करते हुए बोली, 'दरवाजा रहा, सीनियर साहब बहादुर।'

फिर वह झुकी, विधिपूर्वक सलाम किया और फिर एक गर्वित और उपहासपूर्ण मुस्कान बिखेरी। फ्रेजर वहीं स्थिर खड़ा रहा, उसका चेहरा पहले गहरा हुआ, फिर पीला पड़ा और फिर गर्म तांबे की तरह लाल हो गया। उसने अपने जबड़े इतनी जोर से भींचे कि उसकी गाल की हड्डियाँ बेहद उभर आईं।
मेहमान और मेज़बान दोनों को बेहद परेशान देखकर मुबारक कदम चुपचाप बाहर गए और वरिष्ठ लाठी-चालक और एक अन्य को अंदर आने का इशारा किया। दोनों वज़ीर खानम के हॉल में सतर्क और तैयार खड़े थे। फ्रेज़र के कर्मचारी अन्य लाठी-चालकों के साथ व्यर्थ की बातचीत और खबरों के आदान-प्रदान में व्यस्त थे, इसलिए वे फ्रेज़र के तुरंत बुलावे पर उपलब्ध नहीं थे।
फ्रेजर की दुविधा पल-पल बढ़ती जा रही थी। अगर मुमकिन होता, तो वो या तो खुद को चबा जाता या फिर चीख-पुकार, गालियों और धमकियों से छत गिरा देता। कुछ ही पलों में घर के अंदर का माहौल गर्माहट से गिरकर लगभग जमने की कगार पर पहुँच गया था। वफ़ादार ने पंखा चलाना बंद कर दिया था और वज़ीर को ध्यान से देख रहा था, मानो किसी खास आदेश की उम्मीद कर रहा हो। फ्रेजर ने मन बना लिया और कुछ कदम आगे बढ़कर कालीन के किनारे पर खड़ा हो गया। एक मिनट पहले उसके और वज़ीर के बीच जो कुछ भी हुआ था, उसके बावजूद उसे उम्मीद थी कि कोई नौकरानी आगे आकर उसके जूते पहनाने में मदद करेगी। लेकिन वहाँ मौजूद किसी ने भी ज़रा सी भी हरकत नहीं की।
मुबारक कदम ने मेज और उस पर रखी चीजों को उलटा हुआ देखकर तुरंत हॉल की ओर जाने वाला दरवाजा खोल दिया। इस तरह लाठी चलाने वाले दोनों लड़ाके साफ दिखाई देने लगे और

मुबारक कदम की निगाहें उन पर टिकी हुई थीं, मानो उन्हें सामने हो रही घटनाओं की कोई परवाह न हो और फ्रेजर के जल्द ही चले जाने का उन्हें कोई आभास न हो।
कोई चारा न होने के कारण, फ्रेज़र को अपने जूते खुद ही पहनने पड़े। कमरे में कुर्सी या लकड़ी का चबूतरा जैसी कोई चीज़ नहीं थी। इसलिए उसे घुटनों के बल बैठकर अपने पैरों को जूतों में धकेलना पड़ा, या फिर एड़ियों के जूतों में फिट होने की परवाह किए बिना किसी तरह से उन्हें जूतों में डालना पड़ा और लगभग लंगड़ाते हुए बाहर निकलना पड़ा। सौभाग्य से, उसने पेटेंट लेदर की हील वाले जूते पहने हुए थे और बिना झुके या घुटनों के बल बैठे ही वह अपने पैरों को उनमें किसी तरह सफलतापूर्वक डाल पाया। वज़ीर के घर से बाहर निकलते हुए उसने ईश्वर का धन्यवाद किया कि उसकी इज़्ज़त को कोई खास नुकसान नहीं हुआ।
जैसे ही फ्रेजर का दल सिरकी वालन से निकला, वज़ीर ने अपने वरिष्ठ अधिकारी, अमीर गुलाम को आदेश दिया कि वह नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान को ढूंढें, चाहे वह उस समय कहीं भी हों, और उनसे अनुरोध करें कि वे तुरंत सिरकी वालन आकर वहां उत्पन्न हुए एक मामले की जांच करें, या यदि ऐसा न हो पाए, तो उन्हें, वज़ीर खानम को, वहां जाने की अनुमति दें जहां नवाब मौजूद हों ताकि वह उन्हें घटना की सूचना दे सकें। वज़ीर को ठीक से पता नहीं था कि नवाब के आदमियों को उनके घर क्यों भेजा गया था, इसलिए उन्होंने फ्रेजर के आने को नवाब द्वारा महसूस किए गए किसी खतरे से नहीं जोड़ा, फिर भी, उन्होंने फ्रेजर के आने और उनके अमित्रतापूर्ण, बल्कि असभ्य व्यवहार के बारे में उन्हें सूचित करना आवश्यक समझा।
वज़ीर बड़ी बेसब्री से नवाब के जवाब का इंतज़ार कर रही थी; उसने दुआ की कि वे आने की जहमत उठाएँ और उसके दिल को तसल्ली दें। उसे अब भी नहीं लगता था कि फ्रेज़र से उसे किसी तरह के नुकसान का कोई ठोस कारण है, लेकिन मन ही मन वह असहज महसूस कर रही थी, और वास्तव में उसे कुछ शर्म भी आ रही थी कि फ्रेज़र उसे सड़क पर चलने वाली एक आम औरत या घर से छुपकर काम करने वाली वेश्या समझ रहा था। उसे यह भी डर था कि नवाब शम्सुद्दीन अहमद वज़ीर के बारे में कोई गलत धारणा बना लें; इससे भी बुरा यह हो सकता था कि वे इस घटना से इतने नाराज़ हो जाएँ कि उससे मुँह मोड़ लें और उसे अधर में छोड़ दें।
अमीर गुलाम को मार गिराने के बाद भी वज़ीर बेचैन और दुखी महसूस कर रही थी: मैं और क्या कर सकती थी? मैं अपने दिल का बोझ किससे बाँटूँ? फ्रेज़र के यहाँ आने से उसकी बदनामी ज़रूर हो सकती थी, भले ही उसने ऐसा कुछ न किया हो। लेकिन क्या कभी किसी ने लोगों की ज़ुबानों को काँपने से रोका है? दुनिया में कोई भी तिल का ताड़ बनाने या किसी अच्छे इंसान को बुरा साबित करने में शर्म महसूस नहीं करता।
उसने मांझली को बुलाने या उससे मिलने जाने के बारे में सोचा। लेकिन इसमें कुछ दिक्कतें थीं: उसे एक और सुरक्षा गार्ड या कम से कम एक नौकरानी को हटाना पड़ता, और वह ऐसा नहीं कर सकती थी; क्योंकि, भले ही उसे कोई खतरा न दिख रहा हो, फिर भी उसे बेचैनी का कारण जरूर था। दरअसल, उसका मन कर रहा था कि वह अपने मुख्य दरवाजे को मजबूती से बंद कर दे और फिर खुद को घर के सबसे दूर वाले कमरे में बंद कर ले। अगर वह ऐसा न भी करे, तो भी वह अपने आसपास जाने-पहचाने चेहरे चाहती थी, और अगर जाने-पहचाने नहीं तो भरोसेमंद

चेहरे तो जरूर चाहती थी। दूसरी समस्या यह थी कि अगर वह मांझली के घर चली जाती, और नवाब उसकी गैरमौजूदगी में वहाँ पहुँच जाता, तो वह स्वाभाविक रूप से परेशान हो जाता यह देखकर कि उसे सिरकी वालन आने के लिए कहने के बावजूद वज़ीर वहाँ से गायब हो गया है। बारी बाजी या अपने पिता से सलाह लेने का तो सवाल ही नहीं उठता था।

शाम ढलने लगी और देखते ही देखते अंधेरा छा गया। वज़ीर के भीतरी आंगन में, उसके पालतू पक्षियों ने शाम के गीत गाकर समाप्त कर दिए थे, और छोटे रॉबिन, गौरैया और घास के पक्षी, भोजन की तलाश में अपनी यात्रा और भटकन पूरी करने के बाद, आंगन की शोभा बढ़ाने वाले दो पीले चमेली के पौधों और अनार के पेड़ पर वापस आ गए थे। सिरकी वालन बाजार में, और उससे आगे चिटली कब्र तक, जगमगाती रोशनी, खरीदारों की भीड़, पैदल चलने वालों की भीड़, प्यासे लोगों को आकर्षित करने के लिए पानी बेचने वालों की खनक, बेफिक्र, बेरोजगार युवाओं और मेहनती कारीगरों की भीड़, सभी बाज़ार सीताराम और कुचा चेलन के नज़ारों और आवाज़ों का आनंद ले रहे थे, जिससे चारों ओर उत्सव का माहौल बन गया था। लेकिन वज़ीर का दिल हर गुजरते पल के साथ भारी होता जा रहा था। ऐसा नहीं था कि दूत को भेजे हुए बहुत समय बीता था, लेकिन यह अरबी कहावत की तरह था: प्रतीक्षा करना मृत्यु से भी कठिन है।

अंततः अमीर गुलाम अपने मिशन से लौट आए, लेकिन उनकी रिपोर्ट बिल्कुल भी उत्साहजनक नहीं थी: नवाब दोनों हवेलियों में से किसी में भी नहीं थे। वे कुतुब साहिब में कुतुबुद्दीन बख्तियार साहिब काकी की पवित्र समाधि पर दर्शन करने गए थे और वहीं रात बिताने का प्रस्ताव रखा था। अमीर गुलाम ने दोनों हवेलियों के द्वारपालों को स्पष्ट और विस्तृत भाषा में निर्देश दिया था कि नवाब के लौटते ही उन्हें सिरकी वालन की घटनाओं की सूचना दी जाए और साथ ही खानम साहब का संदेश भी उन तक पहुँचाया जाए। वज़ीर के मन में अब और भी अधिक उलझन और चिंता थी, और उनके पास प्रतीक्षा करने के अलावा कोई विकल्प नहीं था। मंझली जाने का भी काफी समय हो चुका था। उन्होंने चारों सुरक्षाकर्मियों को पूरी रात सतर्क और जागृत रहने और किसी भी संदिग्ध व्यक्ति को अपनी गली में प्रवेश न करने देने का निर्देश दिया।

किसी अनजान रेगिस्तान में खोए हुए यात्री की तरह, वज़ीर ने वह रात बढ़ते हुए डर और अनिश्चितता में बिताई। जब सूर्योदय हुआ और उसके लिए खुशखबरी लेकर आया, तब तक वह लगभग अधमरी महसूस कर रही थी। सूर्योदय के बाद की नमाज़ अदा करने के लिए पास की मस्जिद में रुके हुए लोग अभी भी अपना काम कर रहे थे, तभी नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान घोड़े और साजो-सामान की खड़खड़ाहट के साथ सिरकी वालन की गली में दाखिल हुए।

चार अबीसीनियाई महिला परिचारिकाएँ, सुगठित शरीर और लंबी कद-काठी वाली, चार भूरे मारवाड़ी घोड़ों पर सवार होकर उनका नेतृत्व कर रही थीं। उनके काले शरीर स्वास्थ्य से दमक रहे थे; उनके बाएँ हाथ में भाला था और कमर के दोनों ओर पिस्तौलें थीं। सीधे सिर पर राजपूताना कपड़े की पगड़ी थी, जिस पर हल्के आभूषण और जंगली मुर्गे के लाल-काले पंख लगे थे। प्रत्येक के पास भारतीय इस्पात की तलवार थी जो सोने और नीले रंग के लेपित म्यान में मजबूती से रखी थी, जिसका सुनहरा हैंडल उगते सूरज की रोशनी में चमक रहा था। उनके सीने ऊँचे और उभरे हुए थे, हालांकि भारी कुर्ते से पूरी तरह ढके हुए थे; उनकी कमर पतली, कूल्हे भारी लेकिन

सुगठित और आकर्षक थे, गर्दन गर्व से भरी हुई थी; और उनके बैंगनी-काले रंग का चेहरा उनके रक्त के स्वास्थ्य से उबलता हुआ प्रतीत हो रहा था। उनके चेहरे वीरता की एकाग्रता से भरे हुए थे, प्रत्येक पचास, या शायद सौ, तेलंगाना या बक्सरिया सैनिकों को हराने में सक्षम प्रतीत हो रही थी। उनके हावभाव से साहस और निडरता झलक रही थी, मानो शाम के समय घने बादलों के अंधेरे को भेदती हुई सूर्य की किरणें फूट रही हों।

अबीसीनियाई महिलाओं के पीछे गुजराती घोड़ों पर सवार दो पुरुष थे, जिनकी कार्बाइनें गोली चलाने के लिए तैयार थीं। उनके घोड़े आराम से चल रहे थे और नवाब के घोड़े से उचित दूरी बनाए हुए थे, ताकि नवाब को चलने-फिरने की स्वतंत्रता और दोनों ओर से सुरक्षा मिल सके। नवाब के पीछे एक हाथी पर सवार दो बंदूकधारी थे, जिनकी बंदूकें दाएं और बाएं ओर तनी हुई थीं। इस जुलूस का अंतिम हिस्सा एक पालकी थी, जिसके फ्रेम पर सोने का काम और भारी ब्रोकेड के पर्दे लगे थे। दो लाठीधारी दाएं और बाएं चलते हुए 'सावधान!', 'रास्ता दो!', 'कृपया घूरना मना है!' के नारे लगा रहे थे।

सिरकी वालन के द्वार के भीतर शम्सुद्दीन अहमद खान के कमरे के खुलते ही चारों ओर सन्नाटा छा गया और अब तक हर जगह उमड़ी भीड़ गायब हो गई या तितर-बितर हो गई। हालांकि सभी जानते थे कि नवाब के दल से उन्हें कोई खतरा नहीं है, और सभी को यह भी भली-भांति पता था कि वे अपने दल के साथ इतने असामान्य समय पर वहां क्यों आए हैं, फिर भी उस कमरे की भव्यता ने सभी को, चाहे वे पैदल हों या सवार, अपने रास्ते पर रुकने और नवाब के काफिले को यथासंभव अधिक से अधिक जगह देने के लिए विवश कर दिया। यहां तक कि रोजी-रोटी कमाने निकले मजदूर भी दुकानों के दरवाजों के पीछे शांत कोनों में शरण लेने लगे। सुबह के नाश्ते में मिलने वाले सामान - मक्खन, मलाई, दूध, अलग-अलग रंगों की मलाई और दूध, नाश्ते में पसंद किए जाने वाले भारी पैनकेक, कबाब, बकरी का भुना हुआ कलेजा - लगभग नाश्ते की मेज पर मौजूद सभी सामान बेचने वाले फेरीवाले और विक्रेता - अपने सामान की आवाज लगाना भूल गए और मौके का इंतजार करते हुए चुपचाप खड़े रहे। दुकानदारों ने अपने दुकान के लड़कों को कुशलतापूर्वक झाड़ू लगाने और धूल साफ करने के लिए डांटना बंद कर दिया और चुपचाप अपनी सीटों पर बैठ गए।

नवाब का दल, अपने द्वारा उत्पन्न सनसनी से बेखबर, पलक झपकते ही आगे बढ़ गया; और उससे भी कम समय में, नवाब घोड़े से उतरकर वज़ीर खानम के घर के संकरे गलियारे में प्रवेश कर गया। उसके प्रवेश करते ही दरवाजा अंदर से बंद था।

वज़ीर, जो नवाब का बेसब्री से इंतज़ार कर रही थी, जिसने अपना सारा जीवन और आत्मा उस गौरवशाली क्षण पर केंद्रित कर दिया था जब वह आएगा, अब नए भय और पीड़ाओं से घिर गई थी। वह नवाब का सामना करने से कांप रही थी, इस डर से कि कहीं नवाब उसके व्यवहार को अस्वीकार न कर दें। बेशक, मेरी कोई गलती नहीं थी, लेकिन क्या यह बहुत बुरा नहीं था कि एक बाहरी व्यक्ति, और वह भी एक अंग्रेज, को मेरे दरवाजे से अंदर आने दिया गया? ऐसे मामलों में हर कोई महिलाओं को दोष देने में जल्दी करता है, और मैं यहाँ खुद को दोषी ठहरा रही हूँ... ओह, क्या मैं पुलिस प्रमुख हूँ जो हर आने-जाने पर कर्फ्यू लगा दूँ? लेकिन दुनिया न्यायपूर्ण जगह

नहीं है। हर कोई अपने स्वार्थ में डूबा है। क्या किसी को सच्चाई की परवाह है? ईश्वर के सत्य को बोलने वाला कोई नहीं है, हर कोई शक्तिशाली लोगों की इच्छाओं के आगे झुक जाता है... एक चींटी भी अगर बहुत ज्यादा परेशान की जाए तो काट लेगी, लेकिन महिलाएं... महिलाओं में न तो ताकत है, न ही साहस।

शम्सुद्दीन अहमद को उसी कमरे में ठहराया गया जहाँ वज़ीर ने पिछली बार उनका स्वागत किया था। मुबारक कदम पीछे खड़े होकर उन्हें पंखा कर रहे थे। वफ़ादार ने जल्दी से पान के कोन तैयार किए, डिब्बा नवाब को दिया और दरवाज़े से लगकर खड़ी हो गई, यह कहते हुए कि खानम साहब एक-दो पल में आ जाएँगी: दरअसल, वह रात भर उनके आने का इंतज़ार कर रही थीं।

शम्सुद्दीन अहमद को भी चिंता सता रही थी: वज़ीर खानम क्यों नहीं आ रही हैं? क्या वो मुझसे नाराज़ हैं, या उनकी तबीयत ठीक नहीं है? लेकिन नौकरानियों ने उनके अस्वस्थ होने की कोई खबर नहीं दी है, और चूंकि वफादार ने मुझे बताया है कि खानम साहब जल्द ही बाहर आ जाएंगी, इसलिए आगे पूछताछ करना ठीक नहीं होगा। लेकिन ये दूरी क्यों?

शम्सुद्दीन अहमद को पूरा यकीन था कि कल की घटनाओं से वज़ीर बहुत नाराज़ हुई होंगी और उन्हें जाकर व्यक्तिगत रूप से उन्हें शांत करना चाहिए। यह प्रक्रिया शायद उचित हो या न हो, लेकिन यहाँ अकेले बैठकर उनका इंतज़ार करने से कोई लाभ नहीं था।

उन्होंने कहा, 'भाई, अगर खानम साहब यहाँ आने की ज़हमत नहीं उठाना चाहतीं, तो कोई बात नहीं। अगर वो मुझसे नाराज़ हैं, तो मैं जाकर उन्हें मना लूँगा।'

वह उठा; मुबारक कदम ने जूते पहनाने में उसकी मदद करने के लिए झट से हाथ बढ़ाया और कहा, 'महामहिम, कृपया अपने कदमों से हमें गौरवान्वित करें,' और वह उससे एक कदम आगे बढ़कर हाथ से इशारा करते हुए आगे बढ़ने का रास्ता बताने लगी। वफ़ादार लगभग दौड़ते हुए वज़ीर के कमरे में पहुँचा और हाँफते हुए बोला, 'खानम जी... नवाब साहब... वह आपके कमरे में प्रवेश करने ही वाले हैं!'

वज़ीर बिस्तर पर भ्रूण की तरह सिकुड़ी हुई लेटी थी, खुद को गले लगाए, सिर तकिए के नीचे दबाए। वह घबराहट में बिस्तर से उछल पड़ी। हे अल्लाह! कितनी विपत्ति! मुझे इस हालत में देखकर वह क्या कहेंगे? मेरा चेहरा सूजा हुआ है, बाल बिखरे हुए हैं, मैं यहाँ मातम में लेटी हूँ। मैंने न चेहरा धोया है, न दांत साफ किए हैं। जल्दी से उसने पान के डिब्बे से दो इलायची निकालीं और उन्हें मुंह में डालकर तुरंत चबा लिया ताकि उनका तीखा और सुगंधित तेल निकल आए। फिर उसने इत्र के डिब्बे से गुलाब के इत्र की एक बूंद निकाली और उसे अपनी कॉलरबोन पर मल लिया, और दूसरी बूंद अपने दुपट्टे पर लगा ही रही थी कि उसे वफ़ादार की आवाज़ सुनाई दी: 'महामहिम, आ गए हैं!'

वज़ीर पलंग से नीचे उतरी और नंगे पैर दरवाजे की ओर भागी। तब तक नवाब भी भीतरी आंगन पार करके बरामदे में आ चुके थे। अपने शरीर पर चादर को सावधानी से लपेटते हुए वज़ीर उनका अभिवादन करने के लिए बाहर आई। आशंका, उलझन, शर्म, उत्साह, ये सभी भावनाएँ उसके मन में प्रबलता और अभिव्यक्ति के लिए होड़ कर रही थीं, जिसके कारण वह लड़खड़ा रही थी और लगभग डगमगा रही थी। बरामदे में उनकी मुलाकात हुई। शम्सुद्दीन अहमद गंभीर मुस्कान के

साथ उसके पास आए, लेकिन वज़ीर लगभग दौड़कर उनके पास पहुँची और उनके वस्त्र का किनारा पकड़कर रुंधी हुई आवाज़ में बोली: 'आपकी दासी अपना समर्पण करती है... महाराज, आप अत्यंत...' वह वाक्य पूरा नहीं कर सकी और फूट-फूटकर रोने लगी।
शम्सुद्दीन अहमद समझ गए कि उनका मतलब था कि उन्हें 'बहुत देर हो गई थी'। उन्होंने अपना हाथ उनकी कमर में डाला और उन्हें प्यार से अपनी ओर खींच लिया। उनका सिर अपनी छाती से लगाकर, और उनके जल्दी से कंघी किए हुए बालों में प्यार से उंगलियां फेरते हुए उन्होंने कहा: 'नहीं, मुझे लगा कि मुझे इतनी देर नहीं हुई थी। आपका संदेश मिलते ही मैं दौड़कर आ गया।' उनकी आवाज़ में मेवाती हिंदी के कठोर स्वर के ऊपर राजपुतानी ब्रज की मधुरता साफ झलक रही थी।
वज़ीर के मुरझाए चेहरे पर एक फीकी सी मुस्कान चमक उठी। 'महामहिम, मैं आपके लिए अपनी जान कुर्बान कर दूँ! क्या मैंने कभी कहा था कि आपने देरी की?'
छोटे-छोटे, कोमल कदमों से चलते हुए वे दोनों साथ में कमरे में दाखिल हुए। पर्दा बंद करते हुए शम्सुद्दीन अहमद ने वज़ीर की आँखों और होंठों पर खूब सारे चुंबन दिए और कहा: ‘चलो, अभी शिकायतें छोड़ देते हैं। पहले मुझे बताओ कि तुम बाहर आकर मुझसे मिलने से क्यों कतरा रहे थे?’ उन्होंने मज़ाक में कहा। ‘या तुम चाहते थे कि मैं यहीं, तुम्हारे अपने कमरे में आऊँ?’
वज़ीर शर्म से लाल हो गई। शम्सुद्दीन अहमद के दाहिने हाथ की उंगलियों से खेलते हुए उसने सिर झुकाकर कहा, 'मुझे बहुत शर्म आ रही है, महाराज।'
'शर्मिंदा? शर्मिंदा क्यों और किसलिए? भाई, यह वाकई खेदजनक है, और मुझे इस बात का खेद है कि आपको इतनी कठिनाई सहनी पड़ी लेकिन मैं आपके साथ नहीं था!'
‘एक आदमी, वो भी बेशर्मी से बेशर्म अजनबी, मेरे घर में घुस आए और मैं उसे जूते से थप्पड़ मारकर बाहर न निकाल दूं... मैं शर्म से पसीने से भीग गई थी। महाराज क्या सोचेंगे... भगवान न करे, कहीं वो मुझे उन अभागी दौलत के पीछे भागने वाली पेशेवर महिलाओं में से एक न समझ लें...’ वज़ीर गंभीर और थोड़ी चंचल होने की कोशिश कर रही थी, लेकिन उसका चेहरा पीला पड़ गया था और ऐसा लग रहा था कि वो फूट-फूट कर रो पड़ेगी।
अरे वज़ीर खानम! भाई, मुझे जो जानकारी मिली है, उससे तो यही लगता है कि तुमने उस व्यभिचारी के बेटे को जूतों से तो नहीं मारा, लेकिन उससे भी कहीं बुरा किया है। अब उसे सबक मिल जाएगा कि परदेसियों को बुरी निगाहों से नहीं देखना चाहिए, और न ही दक्कन के असभ्य भाड़े के सैनिकों की तरह उनकी निजता में दखल देना चाहिए।
शम्सुद्दीन अहमद ने वज़ीर की ठोड़ी पर अपनी तर्जनी उंगली रखी, उसका चेहरा थोड़ा ऊपर उठाया और मुस्कुराते हुए उसी तर्जनी और अंगूठे से उसके गाल को हल्के से काटा। फिर उन्होंने कहा, 'कृपा करके अब अपनी नाराज़गी छोड़ दो; थोड़ा हंस लो; मुझसे बात करो। तुम्हें चिंता करने या डरने की कोई ज़रूरत नहीं है। मैं फ्रेज़र को 'चाचा' कहकर पुकारता था। आज से ऐसे सारे रिश्ते खत्म हो जाएंगे। मैं भी एक दिन उसे उन्हीं रिश्तेदारों की तरह दफना दूंगा।'
नहीं, नहीं। कृपया ऐसी बातें न कहें। आपके परम पूज्य पिता उन्हें अपने मित्रों में गिनते थे। आपको उनके कुकर्मों को भुला देना चाहिए। जो हो गया सो हो गया। मेरी चिंता यह थी कि कहीं

आप जो हुआ उसके लिए अपनी नौकरानी को दोषी न ठहरा दें।
‘भाई! उस प्यारी नौकरानी ने ऐसा क्या किया था कि उसे लगा कि उसे फटकार की ज़रूरत है? जहाँ तक उस फ्रेज़र की बात है, वह रिश्तेदार नहीं था; हमारे बीच दोस्ताना संबंध थे। मैं उसे दोस्त कैसे मान सकता था जब वह दोस्ती के नियमों का पालन नहीं करता था?’
वज़ीर ने कोई जवाब नहीं दिया। नवाब ने स्नेह और दया भाव से उसके कंधे पर हाथ रखा और कहा, 'ठीक है, इन बातों को यहीं छोड़ते हैं। लगता है तुम रात भर सोई नहीं हो। चलो अब उठो और खुश रहो। अगर तुम बदलना चाहो तो बदल लो। अगर नहीं, तो मेरे साथ बैठक कक्ष में बैठो। मुझे तुमसे कुछ ज़रूरी बातें कहनी हैं।'
यह कहकर वह उठा और दरवाजे की ओर चल दिया।
उस समय वज़ीर का चेहरा वसंत ऋतु में खिले गुलाबों के बगीचे जैसा था। वह मुश्किल से सोई थी और रात भर कई बार उसकी आँखों से आँसू बहे थे। इस वजह से उसकी आँखों की कुछ सबसे कोमल नसें गुलाबी दिखाई दे रही थीं, मानो किसी नशे में हों। देखने वाला व्याकुल हो जाता, और साथ ही प्रार्थना भी करता—हालाँकि यह प्रार्थना अनुचित होती—कि उसकी वे बड़ी, भावपूर्ण आँखें हमेशा इतनी लाल रहें मानो लाल शराब से भरे नाज़ुक क्रिस्टल के प्याले हों। शम्सुद्दीन अहमद का मन हुआ कि वह उसे बाहों में भर ले और अंदर से दरवाज़ा बंद कर ले। लेकिन वह जानता था कि ऐसा करना वज़ीर का अपमान होगा और उसके लिए अनुचित होगा, और इससे वज़ीर की नज़रों में उसकी इज़्ज़त भी गिर सकती है।
‘कृपया, नवाब साहब, आप मुझे एक बेहद लापरवाह और बेशर्म औरत समझ रहे होंगे, क्योंकि मैं आपके सामने बिना छंटे पेड़ की तरह सिर और झगड़ालू औरत की तरह मुंह खोले पेश हुई हूँ!’ वज़ीर ने अपने दुपट्टे से अपने ऊपरी शरीर को ठीक से ढकने की कोशिश करते हुए कहा।
‘नहीं, बिलकुल नहीं! जिस तरह से तुम इस कमरे को रोशन करती हो, मणि और बहज़ाद जैसे महानतम चित्रकार भी तुम पर मोहित हो जाएँगे।’ शम्सुद्दीन अहमद ने उसकी दुपट्टे के किनारे पर एक सरसरी लेकिन कामुक नज़र डाली, जो अभी भी उसके स्तनों को पूरी तरह से नहीं ढक रहा था, और उसकी ढीली कमीज़ पर भी, जिसके ऊपर के बटन खुले हुए थे। ‘मुझे लगता है कि इस महिला को आईने में खुद को देखने की कोई इच्छा नहीं है। क्योंकि सच्चाई तो यह है,’ उसने एक फ़ारसी श्लोक पढ़ा:
आपके खुले कॉलर आपके शरीर की सुंदरता को दर्शाते हैं; आपके शरीर के कारण, आपका वस्त्र वसंत के आनंद से सराबोर है।
वज़ीर ने अपना हल्का कंबल ऊपर खींचा और अपने शरीर को पूरी तरह से ढकते हुए, उसने अपना चेहरा दूसरी ओर मोड़ लिया और कहा, 'बस करो! बस करो। अब और कविता और काव्यात्मकता नहीं!'
‘छोटी लड़की, हम इंसानों की तो बात ही छोड़ो, पेड़-पौधे, चट्टानें और पत्थर भी कवि बन जाते अगर उनके पास आंखें होतीं और वे तुम्हें देख पाते।’ फिर उन्होंने एक और फ़ारसी कविता कही: मैं जिधर भी देखूं, हर जगह तुम्हारी उपस्थिति है: घास हरी-भरी और घनी है; और गुलाब सुंदर है।
‘ओह! काश मेरी जुबान और याददाश्त तुम्हारी तरह होती! और अगर होती भी, तो शर्म और

संकोच मुझे अपने होंठ खोलने से रोकते।'
वज़ीर चाहती थी कि हंसी-मज़ाक और रोमांटिक बातें चलती रहें, लेकिन वह यह भी चाहती थी कि नवाब जल्दी कमरे से चले जाएं ताकि वह थोड़ा-बहुत तैयार होकर एक सामान्य इंसान की तरह सज-धज कर खुद को पेश कर सके। नवाब दरवाजे पर खड़े थे, फ्रेम से टिके हुए, और उनके पीछे वज़ीर मुबारक कदम को मिठाई और मसालों की थाली लिए देख सकती थी। वज़ीर को जाने का अच्छा बहाना मिल गया: 'महामहिम, आपने नाश्ता नहीं किया होगा। मुबारक कदम मिठाई और ठंडे पेय परोसने के लिए उत्सुक हैं, और जो कुछ भी आप चाहें। बस आपको आदेश देना है: चाय, कॉफी, कबाब, भरपेट पैनकेक, सब कुछ यहीं उपलब्ध है।'
शम्सुद्दीन अहमद हँसे। 'भाई! यहाँ आकर मेरी किस्मत चमक उठी। लेकिन मेरी भूख तो उड़ गई! आप आराम से समय बिताइए। मैं ठंडी शरबत का आनंद लूंगा, पान के कोन खाऊंगा और हाफ़िज़ के दीवान में मजे करूंगा।'
'बिल्कुल सही। आपकी नौकरानी पलक झपकते ही लौट आएगी।'
नवाब कमरे से बाहर निकले और घर के बाहरी हिस्से की ओर मुड़ गए। मुबारक कदम उनके पीछे-पीछे गए, तभी एक और नौकरानी ने बैठक कक्ष का पर्दा हटाने के लिए फुर्ती दिखाई और नवाब के अंदर आते ही उनके पीछे पंखा लेकर खड़ी हो गई। वफ़ादार, वज़ीर के कमरे में दाखिल होकर, अंदर से दरवाजा बंद कर दिया और वज़ीर को उपयुक्त पोशाक चुनने और पहनने में मदद करने के लिए अपनी मालकिन की अलमारी खोली।
वज़ीर को अपना श्रृंगार पूरा करने में मुश्किल से पंद्रह मिनट लगे, लेकिन जब वह अपने कमरे से बाहर आई, तो उसके आँगन में चहचहाते पक्षियों और गुटरगू करते कबूतरों का उसके अद्वितीय सौंदर्य और शालीनता को देखकर मन ही मन अल्लाह की प्रशंसा करना स्वाभाविक था। उसके चेहरे पर पिछली रात की थकान और चिंता के लगातार चुभने के निशान अभी भी थे, लेकिन मुरझाने से ठीक पहले खिले हुए गुलाब की तरह, उसके चेहरे पर एक उदासी भरा आकर्षण था जो उसकी ताजगी की कमी को पूरा कर रहा था। उसकी आँखों में काजल नहीं था और होंठों पर कोई बनावटी चमक नहीं थी; गले में उसने केवल एक सोने की चेन पहनी थी जिसमें एक बड़ा नीलमणि का झुमका था, और दोनों कलाइयों में दो पतली सोने की चूड़ियाँ थीं जिनमें छोटे-छोटे सोने के गोले जड़े हुए थे। नाक में उसने एक साधारण हीरे की पिन पहनी थी, और कानों में नाजुक लेकिन रत्नजड़ित झुमके थे। उनके पूरे व्यक्तित्व पर मानो सुरुचिपूर्ण सादगी की वर्षा हो रही थी।
वह एक साधारण युवती जैसी दिखती थी जो अचानक स्त्री बन गई हो, पर उस अद्भुत घटना से पूरी तरह अनभिज्ञ। उसका सुगठित और सुडौल शरीर, अनुपात में पूर्णता का चमत्कार था, लेकिन उसमें वह दिव्य परिपक्वता बिल्कुल नहीं थी जो प्रेम पा चुकी और उस प्रेम का फल भोग चुकी सुंदर युवतियों में पाई जाती है। वज़ीर के शरीर की हर आकृति, हर वक्र और उभार, खुले तौर पर आमंत्रित किए बिना स्पष्ट थे, लेकिन ऐसा बिल्कुल नहीं था कि उसके शरीर का संतुलन और शुद्ध सौंदर्य उन छिपे रहस्यों की ओर इशारा न करता हो।

शम्सुद्दीन अहमद, हमेशा की तरह, वज़ीर को बाहर आते देख अवाक रह गए। वे बस उन्हें देखते रहे और अपने आने का मकसद और उनसे जो कहना चाहते थे, वो सब भूल गए। वज़ीर अंदर आईं, सलाम किया और उनके सामने, थोड़ा दाहिनी ओर बैठ गईं, जैसा कि वे पहले भी बैठती थीं। शम्सुद्दीन अहमद को लगा कि उनकी सांसें तेज़ चल रही हैं; उन्होंने बड़ी मुश्किल से खुद को संभाला। और बड़ी मुश्किल से उन्होंने वज़ीर को अपनी ओर खींचने, नौकरों को दरवाज़ा बंद करने का इशारा करने और अकेले में उनके साथ समय बिताने की इच्छा को भी रोका।

जिस स्त्री ने दरियागंज स्थित उनकी हवेली के अतिथिगृह में उनसे मिलने के दौरान धीरे-धीरे, लेकिन मोहक ढंग से अपने आप को उनके सामने प्रकट किया था, और फिर इतनी सहजता से अपनी इच्छाओं की बाहें फैला दी थीं कि शम्सुद्दीन अहमद को ऐसा लगा मानो वह सुंदरता के सागर में उछल-कूद रहे हों, और जहाँ तक उनकी अपनी इच्छा का सवाल है, उनका शरीर भी उसके साथ बहता हुआ प्रतीत हो रहा था, चुंबनों और आलिंगनों का सैलाब तूफानी लहरों की तरह उठ रहा था: वही स्त्री अब उन्हें गरिमामय शर्म की साक्षात मूर्ति लग रही थी। शम्सुद्दीन अहमद को उचित शब्द न मिलने के कारण अपने मुँह में पानी सा महसूस हो रहा था।

वज़ीर ने नवाब की ओर एक शर्मीली लेकिन स्नेह भरी नज़र डाली और कहा, 'महामहिम, आप कुछ सोच रहे हैं?'

सबसे उपयुक्त शब्द खोजने की कोशिश करते हुए, शम्सुद्दीन अहमद ने कहा, 'मैं क्या सोच रहा हूँ?' वे रुके। 'दरअसल, मैं असली वज़ीर को खोज रहा था। आपको यह शर्म कहाँ से मिली या क्या आपको यह शर्म दी गई थी? और यह शर्म कैसे इतनी दूर, कहीं उड़ जाती है? मैं यह भी समझना चाहता हूँ कि अगर आप उतावलेपन और शर्म के इस अनोखे मेल से युक्त न होते तो आप कैसे होते? क्या आप वही वज़ीर खानम होते जो आप अभी हैं? ... भाई वल्लाह, मेरे मन में कितना उपयुक्त छंद आ गया! ऐसा लगता है मानो कवि ने इसे इसी अवसर के लिए रचा हो।'

इसके बाद उन्होंने फारसी कवि मिर्जा रफी वैज की एक कविता पढ़ी:

यदि नखरे, उदासीनता, तेज चाल, चंचलता और गरिमापूर्ण आत्म-संयम एक ही समूह में समाहित हों, तो उस समूह का मुखिया लज्जा है।

‘यह तो बस महाराज की प्रेम भरी और दयालु दृष्टि है जिसके कारण वे मुझे विनम्र और संकोची समझते हैं। मुझे अपने आप में कोई गुण नजर नहीं आता। शायद यही संकोच महाराज को इस दास के चेहरे की ओर आकर्षित करता है। मैं तो बस अपने सौभाग्य की उन्नति पर गर्व कर सकता हूँ।’

“ओह, तो क्या यह सिर्फ आपके सितारों की ऊँचाई है जिसके कारण मैं आपको चाहता हूँ? लेकिन फिर भी, आपकी बातों में सच्चाई है। यदि आपका व्यक्तित्व, आपका व्यक्तित्व, आपका शरीर सिर से पैर तक, ये सब इतने प्रियतम गुणों से परिपूर्ण हैं, तो इसका एक कारण यह अवश्य है कि आप विनम्रता का सर्वोत्तम उपयोग करती हैं।”

फिर उन्होंने उसी कवि की एक और कविता उद्धृत करते हुए कहा कि यह अवश्य ही वज़ीर जैसे किसी व्यक्ति के लिए लिखी गई होगी:

वैज़, तुम्हारी नज़रें उसके कद, उसके चेहरे, उसके बालों पर टिकी हैं; तुम्हारे लिए यही सुंदरता के

गुण हैं। मेरे लिए सुंदरता का गुण है शर्मीलापन।
'सच तो यह है, भाई, कि मैं वास्तव में आपकी सुंदरता के उन गुणों को गिन भी नहीं सकता जिन्होंने मुझे पूरी तरह से मोहित कर लिया है।'
वज़ीर के दिल में झुंझलाहट का एक छोटा सा काला कांटा चुभ गया। अब तक तो बस बातें ही बातें थीं। क्या कुछ और होगा? या कम? और कब? जहाँ तक मेरी बात है, मैं तो उसे अपना शरीर और अपना दिल दे चुकी हूँ।
शम्सुद्दीन अहमद को आभास हुआ कि वज़ीर की चुप्पी उनकी सामान्य झिझक के कारण नहीं थी। उन्होंने पूछा, 'वज़ीर खानम, आप चुप क्यों हो गईं? क्या मेरी बातों से आपको कुछ बुरा लगा?'
वज़ीर ने अपनी आँखें ऊपर उठाईं; वह फीकी मुस्कान के साथ बोली, “जब आप बोलते हैं, तो आपके होठों से फूल और उनकी पंखुड़ियाँ गिरती हैं। मैं बस सुनती रहती हूँ, अवाक और जवाब देने में असमर्थ। लेकिन... मेरा यह भी मानना है कि फूल गिरने के बाद ही फल लगते हैं।”
नवाब वज़ीर का अर्थ तुरंत समझ गया। उसने कहा, 'फूलों से लदी शाखा झुकती है। यदि तुम अपना हाथ बढ़ाओगे, तो फूल और फल दोनों तुम्हारे हो जाएँगे।'
वज़ीर हँसा। ‘गरीबों के लिए आपके मीठे शब्द सबसे बड़ा खजाना हैं। मैं कहना चाहूँगा, अगर फूल नहीं तो कम से कम कुछ पंखुड़ियाँ हमारे लिए ही क्यों न हों, जो आपके बगीचे में फूलों की क्यारियों के किनारे अकेले पड़े हैं, जिनके वस्त्रों का किनारा किसी भिखारी के फटे हुए लबादे की तरह फैला हुआ है।’
तो आओ। अपने वस्त्र के किनारे को पूरी तरह से भर लो। अपने लबादे को पीछे मत खींचो।
'माननीय न्यायाधीश महोदय, मुझे समझ नहीं आया।'
अब नवाब गंभीर और संयमित स्वर में बोले; उनका हल्का-फुल्का मज़ाकिया अंदाज़ अचानक गायब हो गया था। “चांदनी चौक के खानम का बाज़ार में एक तीन मंज़िला मकान। ऊपर की दो मंज़िलें आपके रहने के लिए, भूतल पर चार दुकानें, जिनका किराया आपको हमेशा मिलता रहेगा। तो इस पर आपका क्या कहना है?”
वज़ीर के चेहरे पर हल्की लालिमा छा गई, लेकिन उसकी गहरी भूरी आँखों में गहन प्रश्नबोध झलक रहा था। उसने नवाब को उन्हीं प्रश्नप्रवचन दृष्टियों से देखा, पर नवाब ने बोलना जारी रखा: “घर के कागजात और हस्तांतरण विलेख आज शाम तक तैयार हो सकते हैं। आप चाहें तो आज ही या कल, अपने शुभ चरणों से इस घर को पवित्र कर सकती हैं। इस घर के सभी सामानों को पैक करके खानम का बाज़ार स्थित घर में आज रात तक पहुँचाना मेरी ज़िम्मेदारी है। जीवन भर यह घर आपकी संपत्ति रहेगा, उसके बाद यह आपके वंशजों को मिल जाएगा।” नवाब हल्के से हँसे, शायद थोड़ा संकोच करते हुए, और फिर बोले, “मेरी बस एक शर्त है: मुझे घर में पूरी तरह से प्रवेश करने की अनुमति होनी चाहिए और मेरे अलावा किसी और को अंदर आने की अनुमति नहीं होनी चाहिए।”
‘महामहिम अपनी दासी को भी लज्जित कर देते हैं। जब मेरे हृदय में तुम्हारे सिवा कोई नहीं है, तो किसी और के मेरे घर में प्रवेश करने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। यदि यह घर मेरा है, तो यह

तुम्हारा भी है, क्योंकि मैं तुम्हारा हूँ। तुम्हारे लिए द्वार सदा खुला रहेगा।'
'और आप?' नवाब ने अर्थपूर्ण ढंग से पूछा।
वज़ीर ने चतुराई से सवाल को टाल दिया। 'माननीय, मेरी कोई अहमियत नहीं है। अपने प्रियतम के चरणों में सिर रखना, उनके पदचिन्हों पर माथा टेकना, बस यही कला मुझे आती है। मैं तो आपके दरवाज़े की चटाई के बगल में रखे जाने से ही प्रसन्न हो जाऊँगा।'
चुप रहो! ऐसे आत्म-अपमानजनक शब्द कभी नहीं बोलने चाहिए! भाई, मैं तुम्हारे पास ऐसे कदमों से आऊंगा जैसे कोई राज़ सीने में उतर रहा हो। मैं तुम्हारे दिल, तुम्हारी आत्मा या तुम्हारे शरीर पर बोझ नहीं बनूंगा। बेशक, अगर तुम मुझे अपने सुंदर गले में हार की तरह संजो कर रखोगे, तो मैं खुशी-खुशी तुम्हारे वस्त्र के किनारे और कॉलर को अपना सुरक्षित घर और अपना स्थायी निवास बना लूंगा।
मैं यह सेवा स्वीकार करता हूँ। मैं हर सेवा स्वीकार करता हूँ!
आपके घरेलू खर्च और नौकरों के वेतन का ध्यान मैं रखूंगा। आपके पानदान और अन्य छोटे-मोटे खर्चों के लिए आपको हर महीने पांच सौ रुपये दिए जाएंगे। एक साल के अग्रिम भुगतान के तौर पर, एक-एक हजार रुपये के छह थैले आपकी सुविधा के लिए तैयार हैं।
वज़ीर दंग रह गया, आश्चर्य से उसकी सांसें भी रुक गईं। इतना कुछ, और वो भी इतनी उदारता से! क्या कोई कभी इसका एक अंश भी उसे दे सकता है, या किसी और को? और मैं बदले में कुछ नहीं देती, सिवाय उसके घर में राज करने और उसकी औरत बनने के! इससे आसान कुछ नहीं हो सकता... लेकिन वो एक सवाल? अगर मैं अभी नहीं पूछूंगी, तो मामला अनसुलझा ही रह जाएगा... नहीं। अब मेरे पास अपने सवाल को कहने के लिए शब्द ही नहीं हैं...
हे परम पूज्य, आप मुझ पर मेरी अपेक्षा से कहीं अधिक कृपा करते हैं। यहाँ तक कि पौराणिक कथाओं के प्राचीन राजा भी इतने उदार नहीं रहे होंगे। मैं, धूल का एक तुच्छ कण, आपके प्रेम के दिव्य गोले की एक ही दृष्टि से पूरे घर की रोशनी और शयनकक्ष की मशाल बन गया हूँ। मेरे पास शब्द नहीं हैं, और ऐसे क्षणों में तो महानतम गुरु भी शब्दों की कमी से चुप हो जाते।
नवाब ने व्यंग्यात्मक मुस्कान के साथ कहा, 'तो बस इतना ही है? सिर्फ उदारता और दान-पुण्य?'
"माननीय महोदय, मैं इसे केवल उदारता ही समझता हूँ जब आप मेरे कुरूप स्वरूप में सुंदरता देखते हैं और उस चीज़ को भी मूल्यवान समझते हैं जिसका कोई मूल्य नहीं है। अल्लाह आपको क़यामत तक सलामत रखे। और क्या है, सिवाय मन की उदारता के जो निर्गुणों में भी अच्छाई और अंधकार में भी प्रकाश देखता है?"
'पुराने जमाने में इसे प्रेम कहते थे, दान नहीं।' नवाब ने फिर एक फीकी मुस्कान दी। 'ठीक है, इस बात को यहीं छोड़ देते हैं। अगर आप मेरे साथ थोड़ी उदारता दिखाएँगे, तो शायद मुझे अपने परिश्रम का कुछ फल मिल जाए।'
'मैंने सब कुछ खो दिया। मैंने तुम्हारे लिए सब कुछ खो दिया। यहाँ कुछ भी नहीं है, केवल तुम ही हो, मेरे शरीर और आत्मा के गुप्त कक्षों में।'
शम्सुद्दीन अहमद वज़ीर की आवाज़ में थकान और उदासी का भाव स्पष्ट रूप से महसूस कर सकते थे, लेकिन उन्होंने इस पर और चर्चा न करने का निर्णय लिया। कुछ देर रुकने के बाद

उन्होंने आगे कहा, “आपके इस प्रतिष्ठित द्वार के कामकाज को सुचारू रूप से चलाने और उसकी देखरेख के लिए मुगलानी हबीब-उन निसा सदा आपकी सेवा में तत्पर रहेंगे, और आपका मनोरंजन करने के लिए राहत अफ़ज़ा मौजूद रहेंगी, जो वास्तव में आपकी सहेली से कहीं अधिक होंगी। मेरा मानना है कि ये व्यवस्थाएं आपके सुखमय जीवन की इच्छा को पूर्ण रूप से संतुष्ट करने के लिए पर्याप्त होंगी।”

'हे मेरे प्रभु, सुखमय जीवन की मेरी इच्छा की पूर्ण पूर्ति के लिए इतना ही पर्याप्त है कि मुझे आपके चरणों के नीचे एक छोटा सा स्थान मिल जाए।'

वज़ीर फिर मुस्कुराई, थोड़ा रहस्यमय ढंग से, लेकिन उसका भाव नवाब से छिपा नहीं था। उसने फिर से वहाँ न जाने का फैसला किया। मन ही मन वह थोड़ा निराश ज़रूर था कि वज़ीर भी आम महिलाओं की तरह शादी की चाह रखती थी, और शायद शादी से मिलने वाले पद और प्रतिष्ठा की भी। उसने मन ही मन कहा, "सचमुच, मेरी माँ बेहतर थीं। वह पढ़-लिख नहीं सकती थीं, और ज़ाहिर है, ऊँचे खानदान की बेगमों के तौर-तरीकों से बिल्कुल अनभिज्ञ थीं; उन्हें बस मेरे पिता को खुश करने की चाह थी, ईश्वर उनकी आत्मा को शांति दे। बाद में वह उनकी विवाहित पत्नी, उनकी नवाब बेगम, उनके घर की मालकिन और सब कुछ बनीं, लेकिन उनका जीवन केवल अपने पति और बच्चों के लिए ही था। उन्हें धन-दौलत, यश या सत्ता की ज़रा भी परवाह नहीं थी।"

वज़ीर ने गौर किया कि शम्सुद्दीन अहमद अब पहले की तरह खुलकर बात नहीं कर रही थीं। उन्हें भी तुरंत समझ आ गया था कि उनके आखिरी भाषण में छिपा संदेश समझ लिया गया था और कुछ हद तक नाराज़गी का कारण बना था। लेकिन उन्होंने इसकी भरपाई के लिए कुछ नहीं किया। वह जानती थीं कि नवाब को यह विश्वास नहीं था कि वह विवाह की इच्छुक हैं क्योंकि वह विवाह को शक्ति और अधिकार की दहलीज मानती थीं, बल्कि उनके कुछ और गहरे कारण थे। फिर भी, हालांकि वह देख सकती थीं कि नवाब उनकी बातों का उनकी मंशा से कहीं अधिक अर्थ निकाल रही थीं, उन्होंने अपने अर्थ को स्पष्ट करने की परवाह नहीं की। शायद यह उनके लिए भी शब्दों में व्यक्त करना बहुत जटिल था। किसी भी हालत में, वह जानती थीं कि ईमानदारी, निष्ठा और प्रेम के मामले केवल बातचीत या सौदेबाजी से हल नहीं होते।

उनके बीच की खामोशी गहरी होती जा रही थी। वज़ीर इसे कलह के रूप में देखे जाने से पहले ही तोड़ना चाहती थी। इसलिए उसने दृढ़ता से कहा, 'जो नीचे, सबसे निचले पायदान पर पड़ा रहता है, उसका कोई मूल्य नहीं होता। फिर भी मैं आपके चरणों में लेटने में प्रसन्न रहूंगी, और हमेशा वहीं प्रसन्न रहूंगी। आप बहुत कुछ देते हैं, तो मैं आपकी उदारतापूर्ण दयालुता के गौरव और आनंद को अपने भीतर कैसे समाहित कर सकती हूं? वास्तव में, यदि मैं अत्यधिक प्रसन्न न होऊं तो यह मेरा दुर्भाग्य होगा।'

नवाब के चेहरे पर राहत की लहर और खुशी की मुस्कान दौड़ गई। 'ठीक है। अब मुझे राज्य से जुड़े कुछ महत्वपूर्ण काम निपटाने हैं,' उन्होंने उठते हुए कहा। 'सामान पैक करने वालों की एक टीम जल्द ही यहाँ पहुँच जाएगी ताकि आपको यहाँ से चांदनी चौक ले जाया जा सके, या जब भी आप आदेश दें।'

वज़ीर ने खुले दिल से खुशी जताते हुए जवाब दिया, ‘मेरा दिल चाहता है कि मैं अभी उड़कर

अपने घर पहुँच जाऊँ, लेकिन मुझे लगता है कि कल सामान लेकर जाना सबके लिए सुविधाजनक रहेगा।' 'पर महाराज, आप इस समय क्यों जा रहे हैं? दोपहर का भोजन होने वाला है। जाने से पहले आपको खाना खा लेना चाहिए। हमारा खाना आपके लिए जैसा होना चाहिए था वैसा तो बिल्कुल नहीं होगा, लेकिन चलिए आज हम अलफ लैलाह की तरह बरमेसाइड की दावत करते हैं!'

शम्सुद्दीन अहमद इन खुशनुमा शब्दों से प्रसन्न तो हुए, लेकिन उन्हें वास्तव में कुछ महत्वपूर्ण काम निपटाना था। उन्होंने एक कदम आगे बढ़ाया, वज़ीर के गाल पर प्यार से थपथपाया, माथे पर चुंबन किया और कहा, 'शुक्रिया, वज़ीर खानम। लेकिन आज नहीं। अल्लाह की मर्ज़ी से, आप जल्द ही चांदनी चौक में अपना घर बसा लेंगी। तब मैं वहाँ आपके साथ बड़े आनंद से दावत करूँगा... और देखिए, ये सुरक्षाकर्मी यहाँ रहेंगे, लेकिन चांदनी चौक में भी आपके पास सुरक्षाकर्मी होंगे, जहाँ वैसे भी पूरी सुरक्षा है।'

जब तक शम्सुद्दीन अहमद कालीन के अंत तक पहुँचे, नवाब के विरोध के बावजूद वज़ीर ने झटपट उनके जूते उठाए और उन्हें पहनने में मदद की। हालाँकि, शम्सुद्दीन अहमद का ध्यान जूतों को ठीक से पहनने पर नहीं था। वज़ीर खानम की लंबी लटें उनके लबादे से निकलकर उनकी गर्दन और कंधों पर आ गई थीं। उनकी पतली गर्दन और कमर की सुशोभित सुंदरता अब पहले से कहीं अधिक आकर्षक लग रही थी।

वज़ीर खानम चांदनी चौक के रंगीन और रमणीय इलाके में एक घर में रहने लगती हैं; उनके और नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान के यहाँ एक सांवला, सुंदर लड़का पैदा होता है।

अक्टूबर 1830 की शुरुआत: उस दौर में घर, यहाँ तक कि आलीशान घर भी, जितनी आसानी से बन जाते थे, उतनी ही आसानी से नष्ट भी हो जाते थे। खासकर दिल्ली में, आसमान छूती हवेलियाँ महीनों में, बल्कि हफ़्तों में ही बनकर तैयार हो जाती थीं और उनमें लोग बस जाते थे। चांदनी चौक स्थित तीन मंजिला मकान के भूतल पर दुकानें थीं; ऊपर की दोनों मंजिलों पर एक विशाल आंगन, तीन बरामदे, तीन बड़े कमरे, एक भंडारगृह, एक वस्त्र कक्ष, एक पानी का कमरा और एक शौचालय था। रसोई, भंडारगृह, राशन कक्ष और नौकरों के कमरे, जो अक्सर साझा होते थे, निचली मंजिल पर थे। हबीब-उन निसा के पास अपने लिए दो छोटे कमरे थे: एक ऊपरी मंजिल पर और दूसरा निचली मंजिल पर। ऊपरी मंजिल का सबसे बड़ा कमरा शयनकक्ष के रूप में इस्तेमाल होता था, लेकिन उसमें अन्य फर्नीचर के साथ-साथ किताबों से भरी दो अलमारियाँ भी थीं। कुछ किताबें वज़ीर की पसंदीदा थीं और कई अन्य वे थीं जिन्हें शम्सुद्दीन अहमद समय मिलने पर पढ़ना पसंद करते थे। कुछ अंग्रेजी किताबें भी थीं, लेकिन उन्हें शायद ही कभी खोला जाता था।

ऊपरी मंजिलों के दोनों आंगनों के बीचोंबीच संगमरमर का एक छोटा फव्वारा लगा था; आंगन के दूसरे छोर पर, सड़क की ओर, फूलों की क्यारियां थीं जिनमें कुछ फूलदार झाड़ियां लगी थीं। ऊपरी मंजिल पर कबूतरों के पिंजरे के अलावा, वज़ीर के पालतू पक्षियों के लिए जालीदार तार का एक बड़ा पिंजरा भी था। घर और उसके साज-सामान को तैयार करने और उसे चालू करने में केवल तीन दिन लगे।

चौक और छोटे बाज़ारों में नीचे की ओर, सूर्योदय से ही चहल-पहल मची रहती थी और देर रात तक जारी रहती थी। खरीदारों, पर्यटकों और दर्शकों के अलावा, कई मौज-मस्ती करने वाले या खाली बैठे नौजवान—और कुछ बड़े-बुजुर्ग भी—सादत खान की नहर के दोनों किनारों और चौक की पूरी लंबाई में रोशनी और फूलों से सजी झाड़ियों का आनंद लेते हुए टहलते नज़र आते थे। वे इस मौके का फायदा उठाकर कविताएं और गपशप करते थे और किसी प्रेमिका या जानी-मानी सुंदरी की झलक पाने की कोशिश करते थे। टहलने वालों में कई ऐसे भी थे जिन्हें आजकल समलैंगिक समझा जाता, लेकिन उस समय वे उस जीवंत माहौल का अभिन्न अंग थे।

हालात को देखते हुए, वज़ीर या उसके घर पर कब्ज़ा करने की हिम्मत करना किसी भी धूर्त बदमाश की सोच से कहीं ज़्यादा दुस्साहस का काम होता। फिर भी, नवाब ने उसकी सुरक्षा के लिए कई इंतज़ाम किए। दो सिपाही दिन के शुरू होने से लेकर आधी रात तक आस-पास के इलाके में गश्त लगाते थे। उनका काम घर के पास किसी भी संदिग्ध व्यक्ति या गतिविधि पर नज़र रखना था।

दुकानों के सामने से ऊपरी मंज़िलों तक जाने का कोई रास्ता नहीं था। अजनबियों को पूछना पड़ता, और इस तरह वे अपनी पहचान उजागर कर देते। ऊपर जाने का रास्ता दुकानों के पीछे वाली गली से होकर जाता था। भूतल पर बने दरवाज़े के ठीक अंदर एक संकरा गलियारा था,

जहाँ चौबीसों घंटे तीन तगड़े और अनुभवी कर्मचारी तैनात रहते थे, जिनमें से प्रत्येक आठ घंटे की शिफ्ट में काम करता था। पहली मंज़िल का बरामदा ज़्यादा खुला था, तीन तरफ से दीवारों से घिरा हुआ था, और चौथी तरफ एक भारी दरवाज़ा था। भारतीय प्लेन लकड़ी से बना मज़बूत और टिकाऊ दरवाज़ा फूलों की डिज़ाइन वाली पीतल की प्लेटों से सजा और मज़बूत किया गया था, और आगंतुक के लिए एक मज़बूत पीतल की चेन भी लगी थी। बरामदे पर एक छोटा लकड़ी का चबूतरा था और उस पर कालीन बिछा हुआ था।

जब कोई अजनबी जंजीर खड़काता, तो पूरी तरह से हथियारों से लैस और पुरुषों की युद्ध वेशभूषा में एक लंबी, शक्तिशाली मध्य एशियाई तुर्क महिला प्रकट होती और आगंतुक के नाम और व्यवसाय के बारे में विस्तृत जानकारी मांगती। यह स्पष्ट था कि परिचितों या जान-पहचान वालों को छोड़कर, कोई भी उस सशस्त्र महिला द्वारा पूछताछ किए जाने की स्थिति तक नहीं पहुंच सकता था। कभी-कभार आने वाले व्यापारी और महिलाएं, और मुहर्रम, राम लीला या बसंत के दिनों में जुलूस देखने वालों को केवल तभी प्रवेश दिया जाता था जब वे कोई परिचय पत्र प्रस्तुत करते थे। आंतरिक मंडली में, उमदा खानम और उनके सेवक सबसे अधिक बार आते-जाते थे। वज़ीर खानम शायद ही कभी बाहर जाती थीं; उनकी यात्राओं के सबसे महत्वपूर्ण गंतव्य मंझली का महल, संतों के मकबरे, विशेष रूप से शहर के ठीक बाहर स्थित निज़ाम-उद-दीन औलिया का मकबरा, और महरौली में स्थित ख्वाजा कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी का मकबरा थे - गांव को महरौली के बजाय ख्वाजा साहिब कहा जाता था। ये सभी यात्राएँ हमेशा बंद वाहन में और शम्सुद्दीन अहमद के साथ होती थीं। जब शम्सुद्दीन अहमद चांदनी चौक के पीछे बल्लीमारान स्थित अपनी हवेली में रहते थे, तब राज्य के अधिकारियों का अक्सर आना-जाना लगा रहता था और महिला गार्ड उनके चेहरों से परिचित हो गई थीं; फिर भी, उन्हें सभी आवश्यक पूछताछ के बाद ही अंदर जाने की अनुमति दी जाती थी।

उन दिनों सुरक्षा गार्ड या अंगरक्षक के रूप में कार्यरत अधिकांश महिलाएं सिंध और काठियावाड़ के स्वतंत्र राज्यों से आती थीं, जिन पर अंग्रेजों का कब्जा नहीं हुआ था। उनके शरीर अत्यंत सुगठित थे, उनकी पीठ और भुजाएं जंगली टट्टुओं जैसी मजबूत थीं। ये महिलाएं चाकू फेंकने और सामान्य युद्ध में चाकू से लड़ने में माहिर थीं, और प्राकृतिक और मानव निर्मित सुरागों की मदद से भागे हुए घोड़ों, फरार अपराधियों और कैदियों का पता लगाने में भी कुशल थीं।

कुछ हवेलियों में तुर्की मूल की महिलाओं को काम पर रखा जाता था, जैसा कि वज़ीर की हवेली में था। जो महिलाएं स्त्री वस्त्र पहनती थीं, उन्हें उरदाबेगनी कहा जाता था; कुलमाक़िनी पुरुष वस्त्र पहनती थीं। दोनों का काम एक ही था: सुरक्षा और अंगरक्षक। बेहद लंबी और तगड़ी, बिना किसी चर्बी के, गुलाबी रंगत वाली, काले या सुनहरे बालों वाली और बादाम जैसी मुस्कुराती आंखों वाली ये महिलाएं जितनी बहादुर थीं, उतनी ही क्रूर और रक्तपिपासु भी थीं। कहा जाता था कि इनमें से एक महिला आसानी से दस पुरुषों को हरा सकती थी, और वे कभी किसी को बंदी नहीं बनाती थीं: एक बार जब वे अपने शिकार को निहत्था या अपंग कर देती थीं, तो वे उसका बेरहमी से वध कर देती थीं।

शम्सुद्दीन अहमद के दादा आरिफ जान, जब अठारहवीं शताब्दी में वर्तमान उज़्बेकिस्तान से भारत

आए थे, तो अपने साथ निजी अंगरक्षकों के रूप में उज़्बेक लड़ाकू महिलाओं की एक टुकड़ी लाए थे। इन महिलाओं ने केवल उज़्बेकों और कोसैकों में ही विवाह किया था; यही कारण था कि कई पीढ़ियों के बाद भी उन्होंने अपना रूप-रंग और मूल स्वभाव बरकरार रखा था। वज़ीर के साथ मौजूद महिलाएं मूल उज़्बेकों की संतान थीं।

सुरक्षा के व्यापक इंतज़ाम मुख्य रूप से फ्रेज़र या उसके एजेंटों को हतोत्साहित करने के लिए किए गए थे। फ्रेज़र ने वज़ीर खानम में जल्द ही रुचि खो दी: आंशिक रूप से कड़ी सुरक्षा के कारण, लेकिन मुख्य रूप से इसलिए कि अक्टूबर 1830 के अंत में, उसके जासूसों ने वज़ीर के घर पर असामान्य रूप से अधिक संख्या में दाइयों के आने की सूचना दी। जाहिर तौर पर, वज़ीर गर्भवती थी। इसकी पुष्टि जल्द ही उसकी एक महिला मुखबिर ने कर दी। अब फ्रेज़र की सारी उम्मीदें टूट गईं। शम्सुद्दीन अहमद और वज़ीर खानम के बीच जल्द ही संबंध टूटना, या यहाँ तक कि कभी भी संबंध टूटना, असंभव सा लग रहा था। इसके अलावा, फ्रेज़र के लिए एक गर्भवती महिला से दोस्ती करने की कोशिश करना उचित नहीं था; उसके पास वज़ीर के गर्भावस्था और प्रसवोत्तर अवधि के बीतने का इंतज़ार करने का धैर्य भी नहीं था, ताकि वह फिर से कार्रवाई शुरू करने के बारे में सोच सके।

नवाब अब चांदनी चौक स्थित आवास पर इतनी बार आने लगे थे कि दरियागंज और बल्लीमारान में स्थित उनकी दोनों हवेलियाँ लगभग अनुपयोगी ही रह गईं। अक्सर, अपनी जागीरों से लौटते समय, वे किसी हवेली में जाने के बजाय चांदनी चौक स्थित आवास पर ही रुक जाते थे। उनके और वज़ीर के बीच स्नेह, सहज आत्मीयता और विचारों का लगभग मेल दिन-प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा था, इतना कि वज़ीर केवल रखैल होने और बेगम न होने के दर्द को पूरी तरह से भूल गईं, या कम से कम दबा लिया। उन्होंने शम्सुद्दीन अहमद की खुशियों, उनकी पसंद-नापसंद को अपने जीवन का केंद्र बना लिया था। शम्सुद्दीन अहमद भी हमेशा उन पर उपहारों की वर्षा करने के लिए उत्सुक रहते थे, न केवल भौतिक रूप से, बल्कि सच्चे प्रेम भरे शब्दों और मूल्य बोध कराने वाले भावों के रूप में भी।

हबीब-उन निसा अक्सर कहती थीं कि उन दोनों के बीच का एकत्व उन्हें पौराणिक और प्रेम कहानियों की याद दिलाता था, ऐसा कुछ जो उन्होंने वास्तविक जीवन में देखने की कभी उम्मीद नहीं की थी। वे कहानियों में वर्णित हंसों के जोड़े की तरह थे, जो एक-दूसरे को अपना साथी चुन लेने के बाद कभी अलग नहीं होते। एक दूसरे के बिना संतुष्ट नहीं होता था; अगर उनमें से किसी एक को जरा सा भी अस्वस्थता महसूस होती, तो दूसरा उसे तुरंत भांप लेता था।

एक बार ऐसा हुआ कि शम्सुद्दीन अहमद फिरोजपुर झिरका में थे और पूरे पखवाड़े तक कहीं नहीं लौटे। दिल्ली से फिरोजपुर झिरका की आने-जाने में छह दिन लगते थे। लोहारू के लिए यह आने-जाने का सफर पाँच दिन का था; इस प्रकार, दोनों में से किसी भी स्थान पर केवल चार दिन रुकने पर नौ या दस दिन की अनुपस्थिति हो जाती थी। वज़ीर को दस दिन की अनुपस्थिति की इतनी आदत हो गई थी कि नौवें दिन तक वह बेचैन होने लगी। इस बार, जब नवाब तय दिनों के बाद भी नहीं लौटे और कोई संदेश भी नहीं भेजा, तो वज़ीर इतनी व्याकुल और चिंतित हो गईं कि राहत अफजा और हबीबा जब उन्हें देखतीं तो वे खुद को मुश्किल से ही शांत रख पातीं।

राहत अफजा और वज़ीर अब इतने अच्छे दोस्त बन चुके थे और एक-दूसरे के तौर-तरीकों से इतने परिचित थे कि नवाब की अनुपस्थिति में राहत अफजा वज़ीर के शयनकक्ष में सोती थीं, और नवाब की अनुपस्थिति में सुबह उठते ही वज़ीर को सबसे पहले राहत अफजा का ही चेहरा दिखाई देता था। और यहाँ तक कि जब नवाब रात वहीं बिताते थे, तब भी सुबह उठते ही वज़ीर को राहत अफजा ही दूसरे व्यक्ति के रूप में दिखाई देती थीं।
शम्सुद्दीन अहमद हर दिन सूर्योदय से काफी पहले उठ जाते थे। उठकर वे वज़ीर को सोते हुए छोड़कर, स्नान करके तैयार होते और नीचे की मंजिल पर स्थित बैठक कक्ष में जाकर अपने राजकीय दस्तावेज़ों का अध्ययन करते या महत्वपूर्ण मुद्दों पर निर्णय लेते। कुछ ही समय में एक छोटा दरबार सक्रिय हो जाता। नाश्ते के समय तक शम्सुद्दीन अहमद उन अधिकांश आधिकारिक मामलों को निपटा चुके होते जिन पर उन्हें ध्यान देने की आवश्यकता होती थी।

तब तक वज़ीर के उठने का समय हो जाता था। राहत अफ़ज़ा उनके लिए मौसम के फूलों की एक छोटी टोकरी और ठंडे पेय की एक छोटी ट्रे लेकर आतीं। वह दबे पांव अंदर आतीं और, जैसा उन्होंने हवेली के गेस्ट हाउस में उस पहली सुबह किया था, धीरे से वज़ीर के पैरों के तलवों को गुदगुदी करतीं। जब वज़ीर अपनी आँखें खोलतीं, तो वह उसी पुराने दिल को छू लेने वाले अंदाज़ में मुस्कुरातीं और कहतीं, 'सुप्रभात, खानम साहब।' राहत अफ़ज़ा सुबह उठने से लेकर दिन के कपड़े पहनने तक, वज़ीर की हर दिनचर्या में उनकी मदद करती थीं।
इतनी मित्रता, सौहार्द और लगभग समान उम्र होने के बावजूद, राहत अफजा, शम्सुद्दीन अहमद की असामान्य रूप से लंबी अनुपस्थिति के दौरान वज़ीर के उदास मिजाज को कम करने में असमर्थ रहीं। वज़ीर को यह आशंका सता रही थी कि फ्रेजर नवाब के साथ कुछ गलत कर सकता है, या उसे रास्ते में रोककर उसकी हत्या करवा सकता है। राहत अफजा ने उसे समझाने की पूरी कोशिश की कि ऐसा होना असंभव है, लेकिन वज़ीर टस से मस नहीं हुईं।
अंततः, सोलहवें दिन की शाम, जब पूरी तरह से अंधेरा छा चुका था, शम्सुद्दीन अहमद के आगमन की सूचना मिली। वज़ीर दौड़कर नीचे सीढ़ियों पर गई और तेज़ी से उनका हाथ अपने दोनों हाथों में थाम लिया, मानो उसे डर हो कि कहीं वे अचानक गायब न हो जाएँ। यात्रा कैसी रही और क्या शम्सुद्दीन अहमद को कोई ठंडा पेय चाहिए या वे तरोताज़ा होना चाहेंगे, इस बारे में अपनी सामान्य पूछताछ किए बिना, वह बिना रुके बोलने लगी: 'नवाब साहब, आप इतने समय से कहाँ थे? आप जानते हैं कि जब मैं आपको देखती हूँ तभी मुझे जीवन मिलता है। अगर मैं आपको एक घंटे के लिए भी न देखूँ, तो मुझे घुटन महसूस होती है। अगर आप इतनी लंबी अवधि के अंतराल पर यहाँ आते हैं, तो मैं जल्द ही अपनी जान गंवा दूँगी!' यह पहली बार था कि वज़ीर ने शम्सुद्दीन अहमद के लिए - या किसी के लिए भी - अपने प्रेम को व्यक्त करने के लिए इतने खुले उत्साह और तीव्र भावनाओं वाले शब्दों का प्रयोग किया था, और वह भी दूसरों की उपस्थिति में। उनकी सांस्कृतिक परंपरा में बातों को बढ़ा-चढ़ाकर कहना आम बात थी, खासकर प्रेम की अभिव्यक्ति में; उस संस्कृति में आम तौर पर सामान्य मित्रता के लिए अत्यंत गर्मजोशी और भावुकतापूर्ण—वास्तव में, लगभग रोमांटिक—भाषा का प्रयोग किया जाता था। लेकिन ऐसे संबंधों में दोनों पक्ष

यह अच्छी तरह जानते थे कि कौन से शब्द और स्वर केवल औपचारिक थे—भले ही वे पूरी तरह से सच्चाई से रहित न हों—और कौन से शब्द और स्वर हृदय की सच्ची भावनाओं को व्यक्त करते थे।

उस अवसर पर उसके भावों की सच्चाई स्पष्ट और तीव्र रूप से प्रकट हुई। वहाँ उपस्थित सभी लोगों को ऐसा लगा मानो प्रेम की तीव्र भावना और बिछड़ने के भय ने शब्दों की एक ऐसी ज्वाला का रूप ले लिया हो, जो वज़ीर की स्वाभाविक चुप्पी और विनम्रता को भस्म कर देने को तैयार थी।

नवाब, हालांकि वज़ीर के आत्मसमर्पण और विजय की विभिन्न अवस्थाओं से भलीभांति परिचित थे, फिर भी अचंभित रह गए। उन्होंने वज़ीर का हाथ अपने हाथ में लिया, उसे कोमलता से दबाया, चूमा और धीमी आवाज़ में बोले, 'बहू खानम, मेरी भी जान बस तभी तक है जब तक मैं आपको देख न सकूँ। अगर कुछ समय तक मैं आपको न देखूँ तो मेरी साँसें मानो रुक जाती हैं। लेकिन कभी-कभी... आख़िरकार यही दुनिया है। अगर मीर नहीं आए, तो ज़रूर उन्हें कोई ज़रूरी काम रहा होगा।'

मीर की डेढ़ पंक्ति पढ़ने के बाद, शम्सुद्दीन अहमद के होठों पर हल्की सी मुस्कान आ गई, मानो वह माफी और शर्मिंदगी जता रहे हों। वज़ीर ने शम्सुद्दीन अहमद के हाथ से अपना हाथ छुड़ाया और अपनी आँखें पोंछने लगीं। यह पहली बार था जब उन्होंने उन्हें 'बहू खानम' कहकर संबोधित किया था। दरअसल, यही उपाधि अहमद बख्श खान (अल्लाह उन्हें जन्नत में जगह दे) ने शम्सुद्दीन अहमद की माँ को शादी के बाद दी थी। वज़ीर के आँसू आने का एक कारण नवाब का उन्हें 'बहू खानम' कहकर संबोधित करना था, और वह भी सबके सामने। इसमें कोई छिपा हुआ अर्थ हो सकता है, या नहीं भी, लेकिन उस पल से किसी को भी इस बात पर शक नहीं रहा कि प्रेमियों का यह जोड़ा कभी अलग नहीं हो सकता।

हालांकि वज़ीर का यह तीसरा गर्भधारण था, और उनका सामान्य स्वास्थ्य अत्यंत उत्तम था, और सभी दाइयों का इस बात पर पूर्ण मत था कि खानम साहब का प्रसव पूरी तरह से सुरक्षित और सहज होगा, और बच्चा बिना किसी देरी के या समय से पहले ही पैदा होगा, और बिल्कुल स्वस्थ होगा, फिर भी वज़ीर का मन अनेक प्रकार के भय से घिरा हुआ था। जैसे-जैसे मौसम ठंडा होता गया, उनके हृदय में भय की लहर और भी ठंडी और भयावह होती गई... उनके सबसे भयानक विचारों में से एक यह था कि कहीं वह एक लड़की को जन्म न दे दें, और नवाब को यह पसंद न आए, क्योंकि उनके पास पहले से ही दो-तीन बेटियाँ थीं। इसके अलावा, अपने अच्छे स्वास्थ्य और आशाजनक पूर्वानुमान के बावजूद, वह गर्भपात की संभावना से व्याकुल थीं।

वज़ीर को कुछ हद तक यह जानकारी थी कि नवाब पुत्र प्राप्ति की हार्दिक कामना करते थे। उन्हें यह भी पता चला था—अधिकतर गपशप के माध्यम से, न कि प्रत्यक्ष जानकारी से—कि नवाब की दूसरी पत्नी किसी स्वास्थ्य समस्या के कारण गर्भ धारण करने में असमर्थ थीं। उनका नाम हुसैनी बेगम था और विवाह के बाद उन्हें अमीर बहू की उपाधि दी गई थी। उनके पिता दिल्ली के एक छोटे रईस वली मुहम्मद खान थे। शम्सुद्दीन अहमद की बड़ी पत्नी अफजल-उन निसा बेगम, जिन्हें आमतौर पर जानी बेगम कहा जाता था, से उनकी पहले से ही दो बेटियाँ थीं। 1828 में

शम्सुद्दीन अहमद से विवाह करने वाली वह दिल्ली के वरिष्ठ रईस मिर्ज़ा मुगल बेग खान की पुत्री थीं।

उस समय वज़ीर खानम को यह जानकारी नहीं थी, लेकिन शम्सुद्दीन अहमद की एक गरीब वर्ग की रखैल से एक और पुत्री थी। उसका नाम चंपा था और पुत्री का नाम रहमत-उन निसा रखा गया था। अफ़ज़ल-उन निसा बेगम से उनकी पुत्रियों के नाम अहमद-उन निसा बेगम और शम्स-उन निसा बेगम रखे गए थे। उस समय की अस्थिरता और सौतेले भाइयों और उनके परिवारों के साथ विवाद को देखते हुए, शम्सुद्दीन खान के लिए एक पुरुष उत्तराधिकारी की आवश्यकता अत्यंत महत्वपूर्ण और अनिवार्य थी। अपनी वैध पुत्रियों का नाम अहमद-उन निसा बेगम और शम्स-उन निसा बेगम रखना शम्सुद्दीन अहमद की अपने पूर्वजों के नाम को अमर रखने की प्रबल इच्छा को दर्शाता है।
...और अगर बेटा हो, लेकिन जन्म के समय ही मृत पैदा हो, या उसमें कोई जन्मजात दोष हो? मान लीजिए कि मैं शारीरिक रूप से पूरी तरह स्वस्थ हूँ, और नवाब की छवि समाज में सुंदरता और शारीरिक शक्ति दोनों के लिए प्रसिद्ध है... लेकिन कौन जानता है? कोई हकीम, वैद्य या दाई इन रहस्यों की गहराई तक नहीं पहुँच सकती। यह देखा गया है कि पूर्ण रूप से सुगठित और स्वस्थ माता-पिता की संतानें भी दोषपूर्ण हो सकती हैं। और अगर बच्चे में कोई विकृति हो, तो हमेशा माँ को ही दोषी ठहराया जाता है।
वज़ीर के सभी चिकित्सकों ने बार-बार पुष्टि की थी कि उन्हें अतिरिक्त दवाओं या 'ताकत बढ़ाने वाले' भोजन की कोई आवश्यकता नहीं है। उन्होंने कहा कि उनका सामान्य आहार और सावधानियां बिल्कुल सही थीं। गर्भवती मां की नाड़ी, मूत्र और अन्य सभी लक्षण स्पष्ट रूप से एक स्वस्थ बच्चे और आसान, सामान्य प्रसव का संकेत दे रहे थे। फिर भी, वज़ीर ने चिकित्सकों और यहां तक कि शम्सुद्दीन अहमद को भी बिना बताए, हबीबा के प्रभाव का इस्तेमाल करते हुए, या उन्हें मध्यस्थ बनाकर, गुप्त रूप से सभी प्रकार के ताबीज, कवच और 'आध्यात्मिक सलाह' वाली दवाएं प्राप्त कर ली थीं। उन्होंने दिल्ली में दफन इतिहास के बाईस प्रमुख सूफी संतों के तीर्थस्थलों का एक-एक करके दौरा किया - इन तीर्थस्थलों के कारण ही दिल्ली को 'बाइस ख्वाजा की चौखट' के नाम से जाना जाता है - और अल्लाह से उनके द्वारा की गई सिफारिश के लिए प्रार्थना की कि उन्हें एक स्वस्थ और दोषरहित पुत्र का जन्म हो।
उन्हें ठंडे पानी से नहाना बेहद पसंद था, बल्कि लगभग ठंडे पानी से नहाना अच्छा लगता था। लेकिन जैसे ही शुरुआती सर्दियों में सुहावनी ठंडी सुबह और शामें शुरू हुईं, उन्होंने आधा ठंडा और आधा गर्म पानी पीना शुरू कर दिया। साथ ही, वे गर्म पानी से नहाने लगीं और थोड़ी देर बाद ही गर्म पानी से नहाने लगीं, ताकि उन्हें सर्दी न लग जाए और उसका असर गर्भ में पल रहे शिशु पर न पड़े। खाने-पीने को लेकर उनकी दुविधा यह थी कि वे उन चीजों को खाने से डरती थीं जिन्हें यूनानी-इस्लामी चिकित्सा पद्धति में 'सूखा और गर्म' बताया गया था। उन्हें डर था कि गर्म और सूखे तरल पदार्थों से गर्भ में पल रहे शिशु के मस्तिष्क पर बुरा असर पड़ सकता है।

समस्या यह थी कि जैसे-जैसे सर्दी बढ़ती गई, बाज़ारों में हकीमों और कुछ वैद्यों द्वारा 'गर्म और नम' बताई जाने वाली चीज़ें कम होती गईं। उन्होंने हर तरह का मांस खाना छोड़ दिया क्योंकि लाल मांस उन्हें 'सूखा और गर्म' लगता था। जब उनका जीवन सामान्य और चिंतामुक्त था, तब उन्हें हिरण का मांस बहुत पसंद था; लेकिन हिरण का मांस भी सुरक्षित नहीं था, आखिर वह मांस ही तो था। फिर भी, कभी-कभी वह हिरण का सूप या थोड़ा सा मांस मिला हुआ पतला शोरबा पी लेती थीं। उन्हें जलपक्षी कभी पसंद नहीं थे, लेकिन चूंकि जलपक्षी स्वभाव से 'गर्म और नम' होते हैं, इसलिए कभी-कभी मेज़पोश पर भुनी हुई बत्तख परोसी जाती थी।
मछली की बात करें तो, अफसोस की बात है कि उनमें से लगभग सभी 'ठंडी और गीली' थीं, इसलिए उन्हें खाना मना था। झींगे, खासकर भारतीय नदियों में पाए जाने वाले छोटे झींगे, अपनी तेज़ गंध के बावजूद स्वीकार्य थे, क्योंकि सभी झींगों को 'गर्म और गीला' माना जाता था। वज़ीर ने चावल खाना छोड़ दिया, क्योंकि इसके बारे में दो मत थे—एक मत के अनुसार, सभी चावल 'गर्म और सूखे' होते हैं। उसे सलाद पत्ता और सभी प्रकार की हरी सब्जियां पसंद थीं। समस्या यह थी कि पालक और पर्सलेन दोनों 'ठंडी और गीली' थीं, और चौलाई (अमरंथस पॉलीगैमस) भी 'ठंडी और सूखी' थी। इसलिए सभी हरी सब्जियां खाने के लिहाज से अनुपयुक्त थीं। खीरनी (मिमोसुप्स कौकी), जो पतली, चमकीली पीली, मीठी लेकिन थोड़ी कसैली होती है, और गाजर, 'गर्म और गीली' होने के कारण, उसे पसंद थीं, लेकिन वे हमेशा उपलब्ध नहीं होती थीं।
सबसे पसंदीदा खाद्य पदार्थ बादाम, अंगूर और शकरकंद थे: ये सभी 'गर्म और नम' थे और कई बीमारियों से बचाव भी करते थे। हल्दी, काली मिर्च (बड़ी और छोटी दोनों), पुदीना, जीरा जैसे मसाले 'गर्म और सूखे' होने के कारण लगभग वर्जित थे, भले ही इसका मतलब यह हो कि मसालों और मौसमी खाद्य पदार्थों की कमी के कारण उनका भोजन फीका और कुछ अटपटा लगता था। दालों में, उन्होंने उड़द (डेलिचोस पिलोसस) को प्राथमिकता देना शुरू कर दिया; हालांकि यह कब्ज पैदा करने वाली थी, फिर भी यह 'गर्म और नम' थी।
सर्दी लगने और उसे अपने बच्चे तक पहुँचाने के डर से, उसने ठंडे पेय, विशेषकर सुबह के समय, पीना छोड़ दिया और कॉफ़ी तथा कभी-कभार चाय पीने लगी। वह इन पेय पदार्थों का सेवन बहुत कम और अनिच्छा से करती थी, मानो दवाइयों की तरह, और इसका मुख्य कारण यह था कि चाय ('गर्म और सूखी') पाचन में सहायक मानी जाती थी और कॉफ़ी एक उत्तेजक तथा सिरदर्द का इलाज थी।
किसी भी खाद्य पदार्थ का चुनाव करते समय एक और शर्त, जिसका हमेशा ध्यान रखना आवश्यक था, वह थी ज्योतिषीय अनुकूलता सुनिश्चित करना। वह जानती थी कि सभी खाद्य पदार्थ एक या अधिक ग्रहों और राशि चक्र में उनकी स्थिति से प्रभावित होते हैं या उनके गुण उनसे नियंत्रित होते हैं। उसके पास अपनी कोई कुंडली नहीं थी, और न ही शम्सुद्दीन अहमद के लिए कभी कोई कुंडली बनाई गई थी। इसलिए वह निश्चित नहीं हो सकती थी कि उदाहरण के लिए, बादाम उसके और उसके बच्चे के लिए उपयुक्त होंगे या नहीं। वह जानती थी कि बादाम 'गर्म और नम' होते हैं और लगभग हर तरह से अच्छे होते हैं। उसे पता चला कि बादाम बृहस्पति ग्रह द्वारा शासित होते हैं! तो फिर, इससे बेहतर क्या हो सकता है, क्योंकि बृहस्पति सबसे

शक्तिशाली ग्रह है। इसी प्रकार, जलपक्षी चंद्रमा द्वारा शासित होते हैं और उनका मांस 'गर्म और नम' होता है, इसलिए इससे बेहतर क्या हो सकता है, क्योंकि चंद्रमा और बृहस्पति घनिष्ठ मित्र हैं।

इस प्रकार वज़ीर की गर्भावस्था ने उन्हें एक तरह से शौकिया और वास्तव में, गर्भवती महिलाओं के लिए एक भोली-भाली आहार विशेषज्ञ बना दिया था। शम्सुद्दीन अहमद मन ही मन मुस्कुराए, लेकिन कुछ नहीं बोले। हबीब-उन निसा और राहत अफ़ज़ा, ज़ाहिर तौर पर, वज़ीर के आहार संबंधी दर्शन के सबसे उत्साही समर्थक थे। अन्य मायनों में भी, राहत अफ़ज़ा सच्ची सांत्वना का स्रोत थीं। उन्हें कविता से प्रेम था, और यद्यपि उन्होंने संगीत का कोई प्रशिक्षण नहीं लिया था, फिर भी उनकी आवाज़ सुरीली थी, और बचपन से ही विवाह या धार्मिक अवसरों पर होने वाले गायन समारोहों में भाग लेने के कारण वे गायन में काफी निपुण हो गई थीं, जहाँ कविताएँ, और कभी-कभी बहुत उच्च कोटि की कविताएँ भी पढ़ी या गाई जाती थीं।

उन दिनों राहत अफजा कभी-कभी वज़ीर की पसंदीदा हिंदी और फारसी कविताओं के कुछ अंश गुनगुनाती या गाती थीं। वह अक्सर एकल गायन करती थीं, हालांकि कभी-कभार वह एक छोटा तानपुरा भी साथ में बजाती थीं। सम्राट अकबर के राजकवि फैज़ी की एक ग़ज़ल वज़ीर को बेहद प्रिय थी। वह राहत अफजा से उसे यथासंभव बार-बार गाने के लिए कहती थीं।

हे प्रेम जगाने वाली, चंचल तुर्किक सुंदरी, जो हमारे साथ इस सभा में उपस्थित हैं; आपने मेरी आँखों में गहरी छाप छोड़ी है और मेरे हृदय में बस गई हैं।

शम्सुद्दीन अहमद तुर्की मूल के थे, इसलिए वज़ीर को ग़ज़ल की शुरुआत वाली यह आयत विशेष रूप से प्रिय थी। 'तुर्क-ए ग़म्ज़ा ज़ान' शब्द, जिसका यहाँ अपर्याप्त अनुवाद 'प्रेम जगाने वाली, नखरीली तुर्किक सुंदरी' है, कभी-कभी उन्हें रुला देता था। ग़ज़ल की अन्य आयतें भी उन्हें बहुत पसंद थीं। इसके अलावा, वज़ीर को इस ग़ज़ल में शम्सुद्दीन अहमद के प्रति उनके प्रेम और तल्लीनता का सच्चा चित्रण दिखाई देता था।

अफसोस की बात है कि मैं, जिसका खून बहना तय था, आज यहाँ नहीं हूँ; जबकि तुम सभा में बैठे हो, हाथ में खंजर और गले में तलवार लटकी हुई।

सभी सुंदरियाँ लज्जित खड़ी हैं, उनका रंग फीका पड़ गया है: क्योंकि तुम ही हो, हर जगह, सूर्य के समान उज्ज्वल।

कुछ दिन ऐसे भी थे जब उसे लगता था कि उसके हृदय में ईश्वर के पैगंबर के प्रति प्रेम उमड़ रहा है। शायद वह पैगंबर को समस्त अस्तित्व का आदर्श मानती थी; शायद वह पैगंबर के प्रति अपने प्रेम का आह्वान करके अपनी गहरी अनिश्चितताओं को दूर करना चाहती थी। ऐसे क्षणों में पंद्रहवीं शताब्दी के फारसी कवि शेख जामी की वे पंक्तियाँ, जिनमें उन्होंने पैगंबर के प्रति अपने प्रेम का बखान किया है और पैगंबर की आत्मा की विशिष्टता और सार्वभौमिकता का गुणगान किया है, उसे शक्ति से भर देती थीं, लगभग परमानंद की तीव्रता से।

और ईश्वर की ओर से सभी को शुभकामनाएं, उस प्रकाश के लिए जिससे अनेक प्रकाश उत्पन्न हुए। पृथ्वी, उनके प्रेम की तीव्रता में स्थिर; सदा विचरण करने वाला आकाश, उनके प्रेम में मदहोश।

उनकी काजल से सजी आंखों की प्रशंसा, जो नरगिस के फूल के समान हैं, जिन्हें ईश्वर ने 'अविचल' बताया है; उनके सुगंधित बालों की प्रशंसा, जो 'रात के समान हैं जब वह (दुनिया को) छुपा लेती है'।

जामी ने उनके हृदय के रहस्यों के बारे में पढ़ा: 'क्या हमने तेरे लिए तेरा हृदय नहीं खोला?' उनके स्वर्गारोहण की प्रशंसा क्या की जा सकती है, सिवाय कुरान के: 'अल्लाह की महिमा हो, जिसने अपने सेवक को पवित्र स्थान से सुदूरतम मस्जिद तक की यात्रा कराई।'

जामी की यह कविता वज़ीर को पैगंबर मोहम्मद के समस्त विश्वासियों के प्रियतम होने का सार और निचोड़ प्रतीत हुई। उन्हें लगा कि समस्त संसार, सृष्टि के समस्त रहस्य और कारण, चंद्रमा और तारे, आकाशगंगा, जंगल, पहाड़ और नदियाँ, मनुष्य और जिन्न: सब उनके स्वामी, उनके प्रभु के प्रेमी, निष्कलंक और सेवक हैं। उन्हें विश्वास था कि जो कोई भी उनसे सच्चे मन से प्रेम करेगा, उसे भी वही प्रियतम होने का गुण और महिमा प्राप्त होगी।

उन्हें पूर्ण विश्वास था कि नौ आकाश, अठारह हजार लोक उनके पैगंबर से प्रेम करते हैं, और संसार में जो कुछ भी हृदय को मोह लेता है और इंद्रियों को मंत्रमुग्ध कर देता है, वह उसी प्रेम के फूल हैं जिससे वास्तविकता के बाग को संभावनाओं के संसार को रोशन करने की अनुमति मिली है। उन्होंने राहत अफजा से बार-बार वे छंद गवाए, और तब भी उन्होंने स्वयं को यह विश्वास दिलाया कि उन्होंने उन्हें अपने हृदय से तृप्त नहीं किया है, और वे कविता गातीं या सुनातीं, और उनकी आँखें आँसुओं से भर आतीं। उन्होंने प्रार्थना की कि उनके पुत्र का भाग्य सबसे उज्ज्वल हो —उन्हें विश्वास था कि उन्हें पुत्र होगा—दो लोकों के स्वामी की पावनियों की धूल की कृपा और कवि के पवित्र शब्दों के प्रकाश से। उन्होंने ईश्वर से प्रार्थना की कि बालक इतना भाग्यशाली हो कि उसे व्यक्तिगत पराक्रम का अपना हिस्सा मिले—मिर्ज़ा की शैली और प्रतिभा के साथ सांसारिकता से परे रहने का साहस—और लोगों के दिलों और विचारों को जीतने का वरदान मिले।

जैसा कि हमने पहले बताया था, वज़ीर को संगीत का थोड़ा-बहुत ज्ञान था और उनकी आवाज़ सुरीली थी। राहत अफ़ज़ा को संगीत का कोई ज्ञान नहीं था, फिर भी उनकी आवाज़ उत्कृष्ट थी, भले ही अभी पूरी तरह निखरी न हो। राहत अफ़ज़ा के साथ वज़ीर के सहज संबंध और शम्सुद्दीन अहमद के प्रति उनके प्रेम ने वज़ीर के भीतर ऐसा रोमांच भर दिया था कि उन्होंने अपने गायन में पूरी भावना का समावेश करना शुरू कर दिया। हमने जामी की पैगंबर पर लिखी कविता का ज़िक्र किया था, लेकिन फ़ारसी कविताओं के अलावा, वज़ीर को सोलहवीं शताब्दी की हिंदू संत और कृष्ण भक्त मीरा बाई के कई गीत कंठस्थ थे। इसी तरह, उन्होंने प्रसिद्ध नेत्रहीन कवि सूरदास द्वारा रचित कृष्ण के कई प्रेम गीत भी सीखे थे।

अब, संगीत और भक्ति के प्रति उनके मन में जागृति लाने वाले इतने सारे प्रोत्साहनों के साथ, वज़ीर को वे सभी गीत तुरंत याद आ गए और वे राहत अफ़ज़ा के साथ मिलकर उन्हें अक्सर गाती थीं। अब उन्होंने पेशेवर महिला गायिकाओं को अपने घर बुलाकर उनसे अमीर खुसरो की कव्वालियाँ गवाने की भी आदत बना ली थी।

उन दिनों चांदनी चौक वहीं से शुरू होता था जहाँ सादुल्लाह खान चौक खत्म होता था। चौक के

पश्चिम में खास बाजार, दक्षिण में कश्मीरी कटरा, पूर्व में नाविकों का मोहल्ला और असद अली हजारी की हवेली थी। उत्तर से चौक में प्रवेश करते ही सबसे पहली इमारत जैन मंदिर थी, जिसे लाल मंदिर भी कहा जाता था। यह मंदिर शाहजहाँबाद शहर की स्थापना से भी पहले का था, जिसे शाहजहाँ ने मंदिर के लिए भूमि दान में दी थी। यह दान आज भी कार्यरत था और मंदिर का भरण-पोषण करता था। मंदिर से आगे बढ़ते ही आप मुख्य चौक में पहुँच जाते थे, और यहाँ सबसे पहली उल्लेखनीय इमारत गौरी शंकर मंदिर थी, जिसके बारे में कहा जाता है कि इसका निर्माण सम्राट औरंगजेब (स्वर्गवासी) के दान से हुआ था। गौरी शंकर मंदिर से थोड़ा आगे सिखों के लिए पवित्र गुरुद्वारा सिसगंज की भव्य इमारत थी।

तीनों पूजा स्थलों पर हमेशा की तरह आज भी श्रद्धालुओं और उपासकों की भारी भीड़ रहती है; फर्क सिर्फ इतना है कि अब भीड़ कई गुना अधिक और विविधतापूर्ण है। जिस समय की हम बात कर रहे हैं, उस समय हिंदू, सिख और जैन धर्म के भक्ति और प्रार्थना गीत भोर से ही शुरू हो जाते थे और चौक बंद होने तक, आधी रात के बाद तक, लगातार गाए जाते थे। ये आवाजें न केवल चौक की जीवंतता और उत्साह को बढ़ाती थीं, बल्कि उस लगभग उन्मादपूर्ण स्थान में हर जगह प्रार्थनापूर्ण वातावरण का निर्माण करती थीं।

सिख गुरुद्वारे से थोड़ा आगे, चौक सदुल्ला खान से प्रवेश करते ही दाहिनी ओर, फाव-वराह नामक एक स्थान हुआ करता था, जिसे बाद में फाउंटेन कहा जाने लगा, लेकिन वज़ीर खानम के समय में इसका कोई भी अवशेष नहीं बचा था। दाहिनी ओर दुकानें थीं जिनकी ऊपरी मंजिलें आवासीय थीं। दुकानों के सामने वह प्रसिद्ध मस्जिद थी जिसे सुनहरी मस्जिद कहा जाता था। इसी मस्जिद के प्रांगण में नादिर शाह ने अपनी तलवार निकाली थी, जो 1739 में दिल्ली के भयानक नरसंहार और लूटपाट का संकेत था। अनुमान के अनुसार, कुछ ही घंटों के भीतर तीस हजार लोगों की मौत हुई थी।

वज़ीर का घर ऐसी जगह पर स्थित था जहाँ से लाल किले का उत्तरी द्वार दिखाई देता, लेकिन असंख्य घरों और खानम का बाज़ार के कारण दृश्य अवरुद्ध था। खानम का बाज़ार का सुहावना शोर और चहल-पहल चांदनी चौक की रंगीन, सुखद और जीवंत दुनिया में घुलमिल जाती थी। जो लोग इलाहबास (जैसा कि अकबर कभी-कभी इसे कहते थे, अन्यथा इलाहाबाद, और फिर जैसा कि अंग्रेज इसे कहते थे) को जानते थे, वे इसे बेहतर ढंग से समझ सकते थे, क्योंकि इसी पवित्र शहर में पवित्र गंगा का हल्का, विस्तृत और धीमा जल पवित्र यमुना के गहरे, तेज और हरे जल को गले लगाता था।

वज़ीर के घर के ठीक सामने एक मस्जिद थी, जिसका नाम भी सुनहरी था। इस मस्जिद का चबूतरा बहुत ऊँचा था और वज़ीर अपने घर की ऊपरी मंज़िल से इसकी मेहराबें और बालकनी देख सकती थी। 1747 में नवाब बहादुर खान की उपाधि प्राप्त जावेद खान ख्वाजा किन्नर द्वारा निर्मित यह मस्जिद दिल्ली की अन्य कई मस्जिदों से इसलिए अलग थी क्योंकि यह 'संग-ए-बसी' नामक पत्थर से बनी थी। काले रंग की हल्की सी झलक वाला यह लाल बलुआ पत्थर आमतौर पर बड़ी और भारी इमारतों के लिए इस्तेमाल नहीं किया जाता था, लेकिन इस मस्जिद के निर्माण में इसे बड़ी कुशलता से इस्तेमाल किया गया था।

कहा जाता है कि जब अमीनउद्दीन अहमद खान, जो उस समय बहुत छोटे थे, अपने पिता अहमद बख्श खान के साथ एक बग्गी में सवार थे, तभी एक विशालकाय मस्त हाथी ने उनकी बग्गी पर हमला कर दिया। घोड़ा और कोचवान मौके पर ही मर गए और बग्गी चकनाचूर हो गई। जब अहमद बख्श खान और अमीनउद्दीन अहमद खान बग्गी से गिर गए, तो अहमद बख्श खान ने तुरंत अपने बेटे को उठाया और यह देखकर कि सामने सुनहरी मस्जिद की ऊंची सीढ़ियाँ हैं, वह हाथी की पहुँच से बाहर सीढ़ियों पर कूद गए और इस तरह मस्जिद के अंदर सुरक्षित पहुँच गए। अक्सर कहा जाता है कि अल्लाह ने नवाबों की निस्वार्थ सेवा के बदले उन्हें जीवनदान दिया। जिस इमारत में वज़ीर अब रहते थे, उसे नवाब अहमद बख्श खान ने लगभग 1816 में खरीदा था। उसी समय से उन्होंने मस्जिद के रखरखाव, आवश्यक मरम्मत और प्रकाश व्यवस्था की जिम्मेदारी भी संभाली, साथ ही कर्मचारियों को वेतन भी दिया। अब यह जिम्मेदारी शम्सुद्दीन अहमद खान ने निभाई।

अब फरवरी का महीना था, सन् 1831, और मुसलमानों का पवित्र रमज़ान का महीना शुरू हो चुका था। मौसम बेहद सुहावना था, आसमान में बादल बिल्कुल नहीं थे और हवा धूल रहित थी, और स्वच्छ वातावरण में आवाज़ दूर तक सुनाई देती थी: अगर वज़ीर शाम को थोड़ा ध्यान देती, तो वह सुनहरी मस्जिद में नमाज़ पढ़ाने वाले को रमज़ान की विशेष नमाज़ों के दौरान सुरीली आवाज़ में कुरान के लंबे-लंबे अंश पढ़ते हुए सुन सकती थी। इन नमाज़ों को तरावीह कहा जाता था और आम तौर पर रमज़ान के पूरे महीने में पढ़ी जाने वाली इन नमाज़ों के दौरान कम से कम एक बार पूरा कुरान पढ़ा जाता था। वज़ीर तरावीह की नमाज़ के दौरान शोर मचाने या ज़ोर-ज़ोर से बात करने से बचने का खास ध्यान रखती थी। शायद हर कोई ऐसा नहीं करता था, लेकिन वज़ीर निश्चित रूप से तरावीह पढ़ाने वाले की आवाज़ को ध्यान से सुनने के लिए पूरी कोशिश करती थी। मियां जाफर हुसैन अपनी स्पष्ट आवाज, गंभीर और संतुलित उच्चारण, कुरान की अरबी के उच्चारण के सभी नियमों का पूर्ण पालन करने और किसी भी प्रकार के बनावटीपन से बचने के लिए पूरे दिल्ली में प्रसिद्ध थे। वज़ीर के घर में कई लोग रोज़ा रखते थे; यहाँ तक कि जो लोग (वज़ीर की तरह) रोज़ा नहीं रखते थे, वे भी इस महीने की पवित्रता का पूरा सम्मान करते थे।

रमज़ान का महीना किसी निरंतर उत्सव की तरह बीत गया। रोज़ों के अंत का प्रतीक ईद के त्योहार से ठीक पहले, वज़ीर और उनके होने वाले बच्चे को उपहारों से नवाजा गया: वस्त्र, आभूषण, खिलौने, धन। कई मेहमानों के लिए विशेष मिठाइयाँ बनाई गईं, लेकिन नवाब यूसुफ अली खान और उमदा खानम विशेष अतिथि थे। शम्सुद्दीन अहमद की बहनें, नवाब बेगम और जहांगीर बेगम, ईद के कुछ दिनों बाद आईं, जो और भी दिलचस्प और सुखद आश्चर्य था। नवाब की दोनों पत्नियों ने स्वाभाविक रूप से वज़ीर के प्रति उदासीन व्यवहार किया।

नवाब बेगम और जहांगीर बेगम काफी समय तक वहीं रहीं। वे न केवल बेहद मिलनसार थीं, बल्कि बेहद शालीन भी थीं। उनके हर शब्द और हावभाव से उच्च संस्कार और भव्य जीवनशैली की झलक मिलती थी। दोनों औसत से लंबी, गोरे रंग की, कोमल काया वाली, बादाम के आकार की हरी लंबी आंखें और लंबे सुनहरे बाल वाली थीं। नवाब बेगम के लिए कई विवाह प्रस्ताव आए

थे, लेकिन अभी तक कोई बात तय नहीं हुई थी। देखते ही देखते वे वज़ीर की सहेलियों जैसी बन गईं।

ज़िल-हिज्जा 12, 1246 (25 मई 1831) की दोपहर लगभग दो बजे, वज़ीर खानम के घर एक पुत्र का जन्म हुआ। पुत्र के जन्म पर खुशी के गीत गाने में माहिर महिला गायिकाओं, अन्य कई मेहमानों और हबीब-उन निसा और राहत अफ़ज़ा की आवाज़ों से वज़ीर का घर बधाई के शब्दों से गूंज उठा।

यह ईद-अल-अज़हा का तीसरा और आखिरी दिन था, जो पैगंबर इब्राहिम के बलिदान की याद में मनाया जाने वाला त्योहार है। अपनी आदत के अनुसार, शम्सुद्दीन अहमद खान ने ईद का दिन फिरोजपुर झिरका में बिताया और अगले दिन लोहारू के लिए रवाना हुए। उनका पहला पड़ाव तिजारी था, जो मात्र आठ मील दूर था, लेकिन वहाँ तक कोई पक्की सड़क नहीं थी। पूरा रास्ता संकरे पैदल रास्तों और पलाश, जंगली बेर और कुछ फूलदार लेकिन कांटेदार झाड़ियों के जंगलों से होकर गुजरता था। नवाब का पूरा दल ऊंटों पर सवार था और उन्होंने इस कठिन यात्रा को बिना किसी कठिनाई के, लेकिन धीमी गति से तय किया। तिजारी से लोहारू तक का रास्ता हर तरह के वाहनों से भरा हुआ था, इसलिए उसकी अच्छी तरह से देखभाल की गई थी। तिजारी से कुछ मील आगे एक रास्ता लोहारू की ओर जाता था, और मुख्य सड़क फरीदाबाद और सोहना से होते हुए दिल्ली की ओर जाती थी।

सूर्यास्त से पहले शम्सुद्दीन अहमद खान लोहारू स्थित किले में दाखिल हुए। उनके आगमन पर रस्मों के मुताबिक कुर्बानियां दी गईं; कुर्बान किए गए जानवरों के मांस का एक बड़ा हिस्सा गरीबों में बांट दिया गया। रिश्तेदारों और राज-कर्मचारियों को इनाम और धन-सामान के उपहार दिए गए। किसी कारणवश, शायद अंतर्ज्ञानवश, शम्सुद्दीन अहमद खान ने अचानक अपनी सौतेली माँ बेगम जान के सामने औपचारिक रूप से उपस्थित होकर उन्हें प्रणाम करने का फैसला किया। उन्होंने अपने सौतेले भाइयों को ईद के उपहार के रूप में एक-एक हजार रुपये दिए; उनकी पाँच बहनों को नए महंगे वस्त्र और सवा सौ रुपये मिले। उन्होंने विधवा माँ को पाँच लड़ियों वाला मोतियों का हार भेंट किया। उन्होंने ईद के विशेष पकवानों का सेवन किया और दीवानखाना में बैठ गए, जो उनका औपचारिक बैठक कक्ष और दरबार कक्ष भी था। दिन भर वे अपनी प्रजा से उपहार लेते और बदले में उपहार देते रहे, लेकिन उनका मन राज-कार्य में नहीं लगा था; उनका मन दिल्ली और आने वाले बच्चे के जन्म की खबर की ओर भटकता रहा।

ज़िल-हिज्जा की 12 तारीख की शाम तक बच्चे के जन्म के बारे में कोई जानकारी नहीं मिली थी। शम्सुद्दीन अहमद खान अगले दिन सुबह दिल्ली के लिए रवाना हुए और ज़िल-हिज्जा की 15 तारीख (28 मई) को दिल्ली पहुंचे। वहां उनका स्वागत एक खुशखबरी से हुआ। हबीबा द्वारा दिल्ली से भेजा गया दूत 26 मई को रवाना हो गया था, और यह महज़ संयोग था कि नवाब के दल की उनसे यात्रा के दौरान कई पड़ावों में से किसी एक में मुलाकात नहीं हुई।

जब वज़ीर खानम ने पहली बार अपने बच्चे को देखा, तो उन्हें लगा मानो उनका दिल रुक जाएगा: यह अनुभव इतना चौंकाने वाला था। बच्चा काफी स्वस्थ था, और बड़े होकर अच्छी लंबाई का होने की उम्मीद जगा रहा था, उसके चेहरे की हड्डियाँ सुंदर थीं, नाक और मुँह का अनुपात भी

सही था, लेकिन उसका रंग गहरा था... नहीं, सिर्फ गहरा नहीं। बच्चा बिल्कुल काला था, लगभग किसी अबीसीनियाई जैसा। हालाँकि, जैसा कि हमने कई बार उल्लेख किया है, वज़ीर का रंग हल्के भूरे रंग के अलावा कुछ और नहीं कहा जा सकता, फिर भी इतने गहरे रंग के बच्चे को जन्म देना उनकी कल्पना से परे था। नवजात शिशु न केवल बहुत गहरा था, बल्कि उसके बाल भी काले, घने और घुंघराले थे; वे वज़ीर के मुलायम और चमकदार बालों से बिल्कुल अलग थे।
शिशु की विशेषताओं का पता लगाने के उद्देश्य से सावधानीपूर्वक जांच करने और उसे कई बार पालने में उठाकर चारों ओर से देखने पर निम्नलिखित बातें सामने आईं: अबीसीनियाई लोगों के विपरीत, शिशु की नाक सीधी और उभरी हुई थी, इतनी कि उसके गोल-मटोल गालों के बावजूद, चेहरे पर सबसे पहले नाक ही नज़र आती थी; फिर, उसका माथा काफी ऊंचा था, और उसकी आंखें असाधारण रूप से बड़ी थीं जिन पर लंबी पलकें नाजुक परदे की तरह गिरती थीं; अंत में, उसकी उंगलियां लंबी और नुकीली थीं, उसकी कलाई चौड़ी और मजबूत थी, और यहां तक कि उसके पैर की उंगलियां भी सुगठित और सामान्य से कुछ लंबी थीं।
शिशु चौकन्ना लग रहा था और अपनी झुर्रीदार छोटी गर्दन उठाकर चारों ओर देखकर अपने परिवेश में रुचि दिखा रहा था। अन्य नवजात शिशुओं के विपरीत, माँ के गर्भ से बाहर आने के कुछ ही घंटों के भीतर, शिशु अपनी आँखें खोलकर उस व्यक्ति को देखने लगा जिसने उसे पालने या पलंग से उठाकर गोद में रखने की कोशिश की, मानो वह हलचल का कारण जानने की कोशिश कर रहा हो। प्रेमपूर्वक स्तन से लगा रहने पर, उसका सांवला रंग वास्तव में आकर्षक लगने लगा, क्योंकि उसके नन्हे चेहरे पर एक अनोखी जीवंतता थी, मानो एक चुंबकीय आकर्षण हो। वह आसानी से शांत हो जाता था और रोने के बजाय अपने खिलौनों से खेलना पसंद करता था। हबीब-उन निसा को उससे तुरंत स्नेह हो गया; वह हमेशा कहती थीं कि वह खानम साहब का सबसे सच्चा बच्चा है और हर महत्वपूर्ण मामले में उन्हीं की तरह है। वह शिशु से प्यार जताने, उसे लोरी सुनाने, उसे चूमने और यह कहने से कभी नहीं थकती थीं कि वह अपनी माँ की तरह सुंदर, लेकिन मर्दाना व्यक्तित्व वाला युवक बनेगा।
वज़ीर को दिली उम्मीद थी कि उसके पिता और बारी बेगम कुछ पलों के लिए ही सही, उससे मिलने आएँ, शायद उसके लिए दुआ करें और प्रसव से पहले उसे कोई सुरक्षा कवच या ताबीज़ दे दें। लेकिन बार-बार संदेश भेजने और विनती करने का कोई असर नहीं हुआ। वज़ीर के पिता ने आने की ज़हमत तक नहीं उठाई, जबकि वज़ीर से उनकी पहली मुस्लिम पोती थी। वज़ीर का दुखी होना स्वाभाविक था, लेकिन उसने खुद को यह कहकर तसल्ली दी कि चूंकि न तो उसके पास और न ही उमदा के पास अच्छे परिवार की लड़कियों के लायक कोई सम्मानजनक या आचरण दिखाने के लिए था, इसलिए उसके लोगों का उनसे दूर रहना कोई असामान्य बात नहीं थी।
वज़ीर ने एक मुअज़्ज़िन को बुलाया जिसे कुरान कंठस्थ था, ताकि वह शिशु के दाहिने कान में अज़ान और बाएँ कान में ईमान की घोषणा करे। उन्होंने नवाब की प्रतीक्षा की, उसके बाद ही शिशु का नामकरण किया गया। फिलहाल, आम सहमति से, सभी उसे बच्चे मियां ('सम्मानित शिशु') कहकर पुकारते थे: 'सम्मानित शिशु भूखा है', 'सम्मानित शिशु जाग गया है' इत्यादि। वे

हमेशा उसके बारे में आदरपूर्वक दूसरे या तीसरे पुरुष बहुवचन में बात करते थे, मानो वह शिशु न होकर कोई आदरयोग्य वरिष्ठ व्यक्ति हो। यह प्रथा स्थायी रूप से जारी रही।

जब 'आदरणीय शिशु साहब' अपने पालने में सो नहीं रहे होते थे, तो वे हमेशा किसी न किसी की गोद में पाए जाते थे, और सामने बैठे व्यक्ति को ध्यान से देखते रहते थे। स्वाभाविक रूप से, जन्म के महज दो-तीन दिनों के भीतर ही वज़ीर ने मन ही मन कह दिया कि बच्चे मियां दुनिया का सबसे प्यारा, दुलारा और सबसे सुंदर बच्चा है। हालाँकि उन्होंने एक दाई (दूध पिलाने वाली नौकरानी) रखी थी, फिर भी वे चुपके से अपना दूध उन्हें पिलाती थीं, भले ही इससे उन्हें अधिक दूध पिलाने का खतरा रहता था, और हर तरह की प्रार्थना करती थीं ताकि दूध से बेचारे बच्चे को कोई परेशानी न हो। अंततः नवाब 15 ज़िल-हिज्जा को दिल्ली पहुँचे और सीधे खानम का बाज़ार स्थित घर में उतरे। यह बात पूरी तरह से भूलकर कि उसका अपना रंग गोरा नहीं था, और नवाब की माँ किसी भी तरह से गोरी नहीं हो सकती थी, वज़ीर का दिल काँप रहा था, उसे डर था कि तुर्किस्तानी परिवार (और विशेष रूप से शम्सुद्दीन अहमद खान), जो अपनी भूमि के सेबों की तरह गुलाबी और सुंदर थे, कहीं उसके बच्चे मियां को बहुत सांवला होने के कारण अस्वीकार न कर दें।

नवाब शम्सुद्दीन अहमद अपने पहले बेटे को देखकर बेहद खुश हुए। वज़ीर की आशंकाओं के बिल्कुल विपरीत, नवाब ने लड़के के रंग-रूप के बारे में एक शब्द भी नहीं कहा। बल्कि उन्होंने कहा कि वह दिखने में बहू खानम जैसा है। उन्होंने तुरंत वज़ीर के पलंग के चारों ओर 2100 रुपये का घेरा बनवाया और फिर उस पैसे को गरीबों और जरूरतमंदों में बांट दिया। इस रस्म के बाद, उन्होंने खानम का बाज़ार में मौजूद सभी दाइयों, नौकरों और वहाँ से किसी भी तरह से जुड़े हर व्यक्ति को मुट्ठी भर रुपये दिए। उन्होंने बच्चे के कानों में फिर से अज़ान दी और कहा, 'मैं अपने इस पहले बेटे का नाम अपने प्यारे भाई इब्राहिम अली खान के नाम पर रखता हूँ, जिनकी बचपन में ही मृत्यु हो गई थी; अनौपचारिक रूप से मैं उसका नाम नवाब मिर्ज़ा रखता हूँ, क्योंकि मुझे उसमें नवाब और मिर्ज़ा दोनों की शान और गरिमा दिखाई देती है।'

नवाब मिर्ज़ा नाम इतना लोकप्रिय और प्रिय हो गया कि जल्द ही सभी लोग इब्राहिम अली खान को भूल गए और नवाब मिर्ज़ा नवजात शिशु का वास्तविक नाम बन गया।

कुछ सुखद वर्ष बीत जाते हैं, नवाब शम्सुद्दीन अहमद के परिवार में शादी का जश्न मनाया जाता है, लेकिन क्षितिज पर संकट के बादल मंडरा रहे होते हैं।

दो साल बीत गए। ये दो साल शम्सुद्दीन अहमद खान के जीवन के सबसे अच्छे साल थे। राज्य पर उनका नियंत्रण पहले से कहीं अधिक मजबूत था। फसलें अच्छी हुई थीं; व्यापारी बड़ी संख्या में उनके क्षेत्रों में आने लगे थे। उनके सशक्त और न्यायपूर्ण शासन में उनकी भूमि बदमाशों, लुटेरों और डाकुओं से मुक्त हो गई थी। उनके पिता के समय में वार्षिक राजस्व तीन लाख से पाँच लाख रुपये के बीच था, जो बढ़कर सात लाख से दस लाख रुपये हो गया। वज़ीर खानम के प्रति उनका प्रेम तेजी से बढ़ता गया। नवाब मिर्ज़ा की बुद्धिमत्ता, हाजिरजवाबी और समझदारी, और हंसमुख चंचल स्वभाव ने न केवल उनके माता-पिता का, बल्कि उन्हें देखने वाले सभी लोगों का दिल जीत लिया। ग्यारह महीने की उम्र तक नवाब मिर्ज़ा बोलने लगे थे और अपने आसपास की बातचीत को समझने लगे थे। दो साल की उम्र तक उन्हें कई श्लोक और छोटे गीत कंठस्थ हो गए थे। ताल और स्वर की उनकी समझ इतनी प्रबल थी कि वे ताल और धुन के साथ सरल गीत गा सकते थे।

तीन साल की उम्र में ही उन्होंने अपने पिता की बातचीत से फारसी भाषा काफ़ी हद तक सीख ली थी और धीमी गति से बोली जाने वाली भाषा को समझ भी लेते थे। कुछ ही समय बाद वे फारसी में बोलने लगे, हालांकि उनकी बोलने की क्षमता उतनी ही तेज़ी से बढ़ी। अपने साथियों के बीच वे न केवल अपने अच्छे रूप और मधुर स्वभाव के लिए, बल्कि अपने सुविकसित, संतुलित और औसत से बड़े शरीर के लिए भी जाने जाते थे। अब सभी को विश्वास था कि बहुत जल्द शम्सुद्दीन अहमद अपनी प्रिय बहू खानम से विवाह करेंगे और अलवर और कलकत्ता के दरबारों से नवाब मिर्ज़ा के उत्तराधिकार को मंज़ूरी दिलवाएंगे।

इसी दौरान शम्सुद्दीन अहमद खान की बहन नवाब बेगम का विवाह समारोह बड़े धूमधाम से संपन्न हुआ। विवाह समारोह फिरोजपुर झिरका में हुआ, लेकिन सात दिनों तक दिल्ली के गरीबों को भोजन दिया गया और सभी मित्रों और रिश्तेदारों के घरों में तोराह नामक भोजन से भरी बड़ी-बड़ी थालियाँ भेजी गईं।

दूल्हा ज़ैन-उल आबिदीन खान आरिफ था, जो उन्नीस वर्षीय कुलीन और कवि था; वह बेहद सुंदर था, लेकिन उसका चेहरा कुछ पीला और मुरझाया हुआ था, बाद में उसे तपेदिक हो गया। उसके पिता, शरफ-उद दौला नवाब गुलाम हुसैन खान मसरूर, शरफ-उद दौला नवाब फैजुल्लाह खान बहादुर सुहराब जंग के पुत्र थे, जो शम्सुद्दीन अहमद खान के करीबी रिश्तेदार थे। नवाब गुलाम हुसैन खान की पत्नी और दूल्हे की मां, बुनियादी बेगम, नवाब अहमद बख्श खान के छोटे भाई नवाब इलाही बख्श मारूफ की बेटियां थीं। इस प्रकार, बुनियादी बेगम शम्सुद्दीन अहमद खान की चचेरी बहन थीं, और उनका पुत्र, दूल्हा, उनका भतीजा था।

दोनों परिवारों के बीच एक और पुराना संबंध भी था: आरिफ के परदादा कासिम जान थे। उनके नाम पर बनी गली कासिम जान आज भी दिल्ली में मौजूद है। बिहार प्रांत में एक युद्ध में उनकी वीरता के सम्मान में मुगल राजकुमार अली गौहर ने उन्हें शरफ-उद-दौला की उपाधि प्रदान की

थी। अली गौहर, जिन्हें प्यार से लाल मियां और मिर्जा बुलाकी भी कहा जाता था, 1759 में सम्राट शाह आलम बहादुर शाह द्वितीय बने और उन्होंने आदेश दिया कि शरफ-उद-दौला की उपाधि कासिम जान के परिवार में वंशानुगत रूप से बनी रहे। कासिम जान के छोटे भाई आरिफ जान थे, जिनके पुत्र अहमद बख्श खान थे, जो शम्सुद्दीन अहमद खान के पिता थे।
दुर्भाग्यवश, अपने कुलीन जन्म और प्रतिष्ठित वंश के बावजूद, आरिफ आर्थिक रूप से मजबूत नहीं थे। अहमद बख्श खान ने उन्हें ढाई सौ रुपये की मासिक पेंशन दी थी; जिसे शम्सुद्दीन अहमद ने जारी रखा, और यही दूल्हे के जीवनयापन का मुख्य स्रोत था। शादी का भोज, जो आमतौर पर दूल्हे के परिवार द्वारा दिया जाता था, वास्तव में शम्सुद्दीन अहमद खान ने दिया था। शरफ-उद दौला ने भोज में समय से काफी पहले पहुंचकर दिखावा किया, मानो वही सब कुछ संभाल रहे हों। विलियम फ्रेजर को शादी और भोज में आमंत्रित किया गया था, लेकिन वे नहीं आए। वज़ीर खानम को समारोहों में कोई स्थान नहीं दिया गया, हालांकि दूल्हा और दुल्हन ने शादी के कुछ दिनों बाद खानम का बाज़ार में उनसे व्यक्तिगत रूप से मुलाकात की।
बुनियादी बेगम का पति शराफ-उद दौला नवाब गुलाम हुसैन खान से असंगतता के कारण अलग हो गया था। अलग होने पर उनके पति ने बुनियादी बेगम को कुछ संपत्ति दी थी; उन्हें उनके बेटे की अभिरक्षा भी दी गई थी। तनावपूर्ण बचपन और आर्थिक तंगी के कारण ज़ैन-उल आबिदीन खान आरिफ एक कमज़ोर और अनियमित शिक्षा प्राप्त युवक के रूप में बड़े हुए। स्वभाव से वे अत्यंत प्रतिभाशाली थे और इसलिए उन्होंने अपनी लगन से ही फ़ारसी और अरबी, खगोल विज्ञान, दर्शनशास्त्र और इतिहास का पर्याप्त ज्ञान प्राप्त कर लिया था। अपने पूर्वज की स्मृति में उन्होंने आरिफ उपनाम अपनाया।
यहां यह उल्लेख करना उचित होगा कि बुनियादी बेगम की छोटी बहन उमराव बेगम का विवाह कुलीन कवि मिर्ज़ा असदुल्ला खान ग़ालिब से हुआ था। उमराव बेगम की सिफ़ारिश के कारण ही आरिफ़ ने मिर्ज़ा ग़ालिब से कविता की शिक्षा प्राप्त की। उमराव बेगम आरिफ़ के इतने करीब थीं कि आरिफ़ की असामयिक मृत्यु के बाद उन्होंने उनके दो बच्चों को गोद लिया और उनका पालन-पोषण अपने बच्चों की तरह किया।
यह विवाह आरिफ की व्यक्तिगत सामाजिक स्थिति या धन-संपत्ति के बजाय दोनों परिवारों के बीच पारिवारिक संबंधों के आधार पर तय किया गया था। यह उम्मीद की जा रही थी कि शम्सुद्दीन अहमद के घर में विवाह के बाद, अहमद बख्श खान द्वारा दी जाने वाली पेंशन के अतिरिक्त, उन्हें शम्सुद्दीन अहमद से कुछ और संपत्ति और सहायता प्राप्त होगी। आखिरकार, उन्हें अपनी पत्नी का भरण-पोषण करना था, और संभवतः जल्द ही बच्चों का भी, इसलिए उनसे यह अपेक्षा की जा रही थी कि वे अपने नए संबंध के अनुरूप जीवन शैली अपनाएंगे।
नवाब मिर्ज़ा अब तीन साल के हो चुके थे (मई 1834), और उनका जन्मदिन बड़े ही प्यार और धूमधाम से मनाया गया। फिर भी, यह जन्मदिन वज़ीर खानम और शम्सुद्दीन अहमद खान के जीवन में एक नए अध्याय की शुरुआत का संकेत भी दे रहा था। अप्रत्याशित परेशानियाँ, उथल-पुथल और संघर्ष हर जगह अपना कुरूप रूप दिखाने लगे। शुरुआत में, सभी को लगा कि यह जीवन में होने वाले उन सामान्य दौरों में से एक है जो हमेशा आते हैं और फिर जल्दी ही बीत

जाते हैं, कोई निशान नहीं छोड़ते और कोई स्थायी नुकसान नहीं पहुँचाते। लेकिन ऐसा लग रहा था कि सब कुछ तेज़ी से एक भयंकर ट्यूमर में बदल रहा है, जो दंपति के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य की जड़ों को खोखला कर रहा है।

शुरुआत में तो कुछ खास नहीं हुआ: नवाब बेगम बीमार पड़ गईं। वैसे तो देखने में कुछ भी गलत नहीं लग रहा था, लेकिन बेहतरीन चिकित्सा देखभाल के बावजूद उनकी तबीयत में सुधार नहीं हुआ। शादी के दूसरे महीने में ही वे गर्भवती हो गई थीं, लेकिन दाइयों को इसमें कुछ भी असामान्य या चिंताजनक नहीं लगा। कई सप्ताह बीत गए, तब जाकर पता चला कि उन्हें टीबी की बीमारी है। अब आशंका थी कि भ्रूण नष्ट हो सकता है, या अगर बच भी गया तो जन्म से पहले ही टीबी से प्रभावित हो सकता है, या फिर किसी गंभीर शारीरिक विकलांगता के साथ पैदा हो सकता है। एक और अधिक गंभीर आशंका यह थी कि इस बीमारी के कारण नवाब बेगम की श्रोणि की हड्डियां कमजोर और खोखली हो गई थीं। प्रसव के दौरान मां और बच्चे दोनों की मृत्यु हो सकती थी।

इस घटना में, नवाब बेगम की गर्भावस्था गर्भ के परिपक्व होने से पहले ही समाप्त हो गई। सात महीने पूरे होने ही वाले थे कि उन्हें प्रसव पीड़ा शुरू हो गई और अत्यधिक रक्तस्राव होने लगा। एक दिन और एक रात के दर्द और रक्तस्राव के बाद दोनों जीवन समाप्त हो गए। उस समय मां की उम्र मुश्किल से अठारह वर्ष थी।

अपनी एक बहन के निधन से दुखी शम्सुद्दीन अहमद खान अब अपनी दूसरी बहन की शीघ्र शादी करवाने के अपने कर्तव्य को पूरा करने के लिए और भी अधिक चिंतित हो गए। अनेक रिश्ते आए, पर कोई भी उन्हें पसंद नहीं आया। प्रतिष्ठित विवाह घरों में पेशेवर दुल्हन-सज्जाकारों और विवाह मध्यस्थों को भेजने में व्यस्त, मन ही मन ईश्वर से प्रार्थना करते हुए कि उनकी बहन को उनकी हैसियत के अनुरूप शीघ्र ही एक पति मिल जाए, वे अन्य मामलों पर थोड़ा कम ध्यान दे रहे थे।

शम्सुद्दीन अहमद खान को यह उम्मीद नहीं थी कि फ्रेजर उनके प्रति अपनी दुश्मनी को दबा लेगा और उन्हें नुकसान पहुंचाने की कोई योजना नहीं बनाएगा। फ्रेजर दिल्ली दरबार में रेजिडेंट होने के साथ-साथ कंपनी द्वारा 'दिल्ली' घोषित किए गए विशाल क्षेत्र का कमिश्नर भी था, और कंपनी के इस बहादुर के पास नवाब शम्सुद्दीन अहमद के प्रशासन में हस्तक्षेप करने और उन पर कड़ी निगरानी रखने के कई मौके और बहाने मौजूद थे। फ्रेजर के पास चार प्रकार की शक्तियां थीं: राजनीतिक, न्यायिक, आपराधिक और दीवानी। इस प्रकार, फ्रेजर के पास 'देशी राज्यों' पर अपना अधिकार जमाने के अवसरों की कोई कमी नहीं थी, और नवाब शम्सुद्दीन अहमद उस समय भारतीय व्यवस्था में एक मामूली शासक मात्र थे।

वे सामाजिक अवसरों पर अवश्य मिलते थे, यदि ऐसा मिलना अपरिहार्य होता था, हालांकि शम्सुद्दीन अहमद अक्सर उन पार्टियों से दूर रहने में कामयाब रहते थे जहाँ फ्रेजर के आने की संभावना होती थी। उन्होंने इंग्लैंड के महान दिवस पर उपहारों की अनिवार्य दाली भेंट की, हालांकि फ्रेजर की ओर से दिया गया उपहार हमेशा मामूली होता था। शम्सुद्दीन अहमद को इस अप्रत्यक्ष अपमान को सहना पड़ता था।

एक दिन अचानक उन्हें सूचना मिली कि कलकत्ता स्थित महान लॉर्ड साहिब बहादुर के दरबार द्वारा फिरोजपुर, झिरका और लोहारू के क्षेत्रों के उत्तराधिकार के मुद्दे पर निर्णय देने में हो रही देरी से अधीर होकर नवाब रेजिडेंट बहादुर ने उत्कृष्ट कार्यवाहक नवाब गवर्नर जनरल साहिब बहादुर सर चार्ल्स मेटकाफ को एक व्यक्तिगत लेकिन आधिकारिक पत्र भेजा है, जिसमें लोहारू के शम्सुद्दीन अहमद खान को बेदखल करने और फखर-उद-दौला दिलावर-उल मुल्क नवाब अहमद बख्श खान रुस्तम जंग की अंतिम वसीयत के अनुसार राज्य के वितरण को बहाल करने की सिफारिश को दोहराया गया है, जिस पर स्वयं सर चार्ल्स मेटकाफ साहिब बहादुर ने गवाही दी है। इस सूचना के तुरंत बाद एक और रिपोर्ट आई कि वरिष्ठ साहिब बहादुर, उपर्युक्त पत्र लिखने से संतुष्ट नहीं हुए, बल्कि उन्होंने नवाब अमीनउद्दीन अहमद खान बहादुर, जो अब वयस्क हो चुके थे, को सभी कागजातों की प्रतियां लेकर कलकत्ता जाने के लिए राजी किया ताकि वे व्यक्तिगत रूप से अपना पक्ष रख सकें और मामले पर शीघ्र निर्णय के लिए प्रयास कर सकें।

कुछ दिनों बाद उन्हें एक और सूचना मिली। उसमें बताया गया था कि नवाब मिर्ज़ा असदुल्ला खान बहादुर ग़ालिब ने कलकत्ता में अपने महत्वपूर्ण मित्रों और परिचितों को कई पत्र लिखकर

सलाह दी थी और उनसे आग्रह किया था कि वे उत्तराधिकार के मामले का फैसला नवाब अमीनउद्दीन अहमद खान के पक्ष में करवाने के लिए अपने प्रभाव का इस्तेमाल करें। शम्सुद्दीन अहमद को इस बात से बहुत आहत हुए कि मिर्ज़ा ग़ालिब ने उनके पिता के परिवार के साथ उनके संबंधों पर कोई ध्यान नहीं दिया—आखिरकार, ग़ालिब का विवाह शम्सुद्दीन अहमद के चाचा की पुत्री से हुआ था—और उन्होंने पारिवारिक विवाद को शत्रुता का रूप दे दिया, इस प्रकार परिवार के अंदरूनी कलह को सार्वजनिक रूप से उजागर करने का प्रयास किया।
शम्सुद्दीन अहमद का मानना था कि चूंकि मिर्ज़ा ग़ालिब की पेंशन का मामला उनके जन्नत में रहने वाले पिता (जो अमीनुद्दीन अहमद और ज़ियाउद्दीन अहमद के भी पिता थे) ने स्वयं सुलझाया था, इसलिए मिर्ज़ा ग़ालिब को उन दोनों के विरुद्ध उतना ही आपत्ति करने का अधिकार था जितना कि शम्सुद्दीन अहमद के विरुद्ध। वास्तव में, अमीनुद्दीन अहमद ने कभी भी मिर्ज़ा ग़ालिब के उस दावे को स्वीकार करने का ज़रा सा भी संकेत नहीं दिया था जिसमें उन्हें और उनके छोटे भाई को लोहारू वापस मिलने की स्थिति में उच्च पेंशन देने की बात कही गई थी। मिर्ज़ा ग़ालिब भी एक बार अपना पक्ष रखने के लिए कलकत्ता गए थे, लेकिन उन्हें कुछ नहीं मिला।
अब, शम्सुद्दीन अहमद ने सोचा, केवल वही बता सकता है कि मेरा विरोध करके और मेरे खिलाफ दोनों भाइयों को उकसाकर और उनका समर्थन करके उसे क्या लाभ मिलने की उम्मीद है। लेकिन अपनी नाराजगी मिर्ज़ा साहब के सामने रखने से कोई फायदा नहीं था; दरअसल, अगर शम्सुद्दीन अहमद कुछ बोलता तो उसकी बेइज्जती ही होती। और मिर्ज़ा साहब तो वैसे भी अपनी बात कह चुके थे।

यह पूरी तरह संभव था कि फ्रेजर द्वारा कलकत्ता भेजे गए नवीनतम संदेश और फिर नवाब रेजिडेंट बहादुर के समर्थन और मार्गदर्शन में अमीनउद्दीन अहमद के कलकत्ता जाकर अपनी शिकायत दर्ज कराने की खबर फ्रेजर ने शम्सुद्दीन अहमद को अप्रत्यक्ष रूप से सार्वजनिक रूप से अपमानित करने के उद्देश्य से लीक की हो। इस अनुमान को इस तथ्य से बल मिला कि उस समय शहर में, विशेषकर अय्याशों और अय्याशों के बीच, यह अफवाह फैली हुई थी कि वरिष्ठ साहिब बहादुर ने जहांगीर बेगम से विवाह का प्रस्ताव भेजा था और संकेत दिया था कि यदि विवाह उनकी इच्छा के अनुसार संपन्न हो जाता है, तो कंपनी के बहादुर शम्सुद्दीन अहमद के उत्तराधिकार के संबंध में उनके पक्ष में विचार कर सकते हैं।
ज़ाहिर है, ये अफवाहें शम्सुद्दीन अहमद को अंदर तक झकझोर रही थीं। वो न तो इन्हें दबा सकते थे और न ही फ्रेज़र को रोक सकते थे, क्योंकि यह कभी साबित नहीं हो सकता था कि ये अफवाहें फ्रेज़र से ही फैली थीं। दिल्ली छोड़कर फिरोज़पुर झिरका जाना भी कोई समाधान नहीं था; इससे भी उनकी इज़्ज़त को ठेस पहुँचती। शम्सुद्दीन अहमद के लिए यह मुमकिन था कि वो फ्रेज़र को कहीं सार्वजनिक रूप से अपमानित करें और खुलेआम उसकी निंदा करें। इससे उन्हें एक तरह की नैतिक जीत मिल जाती और उनका गुस्सा भी कुछ हद तक शांत हो जाता। लेकिन यह कोई दीर्घकालिक समाधान नहीं था, बल्कि अल्पकालिक भी नहीं। इससे थोड़ी सनसनी तो मच सकती थी और दिल्ली के आवारा युवाओं को अपने अड्डाओं - कॉफी हाउस, कॉकपिट, बटेर

के अखाड़े और जुआघरों - में गपशप और चुगली के लिए एक बढ़िया विषय मिल जाता। यह भी मुमकिन था कि अपमान और आक्रामकता से आहत फ्रेज़र अपने भरोसेमंद गार्डों को हरकत में लाकर शम्सुद्दीन अहमद को गोली मरवा दें या तलवारों से उन पर हमला करवा दें।

अफवाहों के चरम पर होने के दौरान हुई एक अन्य घटना ने शम्सुद्दीन अहमद की आंखों के सामने आग और खून का पर्दा डाल दिया, जिससे वह लगभग फ्रेजर के खिलाफ अपनी तलवार निकालने के लिए उकसा गया था।

यह जुलाई 1834 का मध्य था। उस मौसम में भारी बारिश हुई थी। पूरा शहर छतों, पहाड़ियों और प्राचीन इमारतों पर लहराते हरे रिबन, झालरों और गुब्बारों से जगमगा रहा था, जो बारिश की तेज हवाओं में लहरा रहे थे। गलियाँ, रास्ते और दरवाजे छोटे-बड़े पौधों से भरे हुए थे, जो गमलों और बड़े-बड़े बर्तनों में लगे थे। यह ठीक वैसा ही था जैसा मिर्ज़ा ग़ालिब ने अपनी युवावस्था की एक हिंदी ग़ज़ल में कहा था:

क्या ही अद्भुत मौसम है, बारिश का यह मौसम! अगर जीवन की लहर शराब की लहर में बदल जाए तो आश्चर्य की कोई बात नहीं। इस मौसम का मिजाज हर जगह एक जैसा है: तूफानी, उमंग भरा, प्राकृतिक; हवा में लहराती नई उगी घास से लेकर शराब की लहर तक।

विलियम फ्रेजर का जुलूस बल्लीमारन से होते हुए गली कासिम जान की ओर बढ़ा। शायद यह संयोगवश नहीं था: हो सकता है यह योजनाबद्ध था, संभवतः फ्रेजर के मन में शम्सुद्दीन अहमद खान से जुड़ी कोई घटना रही हो क्योंकि वह जानते थे कि शम्सुद्दीन अहमद खान दिल्ली में अपनी बल्लीमारन हवेली में ठहरे हुए थे। खैर, जब फ्रेजर का हाथी गली कासिम जान में हुसामुद्दीन हैदर की हवेली के विशाल द्वार के सामने पहुँचा, तब नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान अपने मित्र मुजफ्फर-उद-दौला मिर्जा सैफुद्दीन हैदर खान सैफ जंग, जो नवाब हुसामुद्दीन हैदर खान के दूसरे पुत्र थे, के साथ हाथ में हाथ डाले हवेली से बाहर निकले और कुछ दूरी पर खड़ी अपनी गाड़ी को बुलाने ही वाले थे।

फ्रेजर का हाथी, साढ़े तीन गज ऊंचा, जिसके ऊपर डेढ़ गज ऊंचा हौदा था, आम राहगीरों को ऐसा लग रहा था मानो आसमान का एक टुकड़ा उनके बीच उतर आया हो, और फ्रेजर किसी महान हस्ती के साथ उस पर सवार हों। शम्सुद्दीन अहमद काफी लंबे थे, सैफुद्दीन हैदर उनसे भी लंबे थे; फिर भी, हाथी के सामने दोनों बौने लग रहे थे। सामान्य परिस्थितियों में भी, बैठे हुए व्यक्ति के सामने खड़े होने पर व्यक्ति खुद को छोटा महसूस करता है।

अपने हाथी को रुकने का आदेश देने के बाद, फ्रेजर ने बनावटी गर्मजोशी और मित्रता के साथ कहा, 'मुजफ्फर-उद-दौला, दिलावर-उल मुल्क। मैं आपको नमस्कार करता हूँ।'

शम्सुद्दीन अहमद खान को स्वीकार करने से पहले मुजफ्फर-उद-दौला को संबोधित करना एक अप्रत्यक्ष अपमान था, क्योंकि यद्यपि मुजफ्फर-उद-दौला अपने वंश की प्राचीनता और पैगंबर के तत्काल परिवार से अपने माता-पिता दोनों के घोषित 'पवित्र' वंश के मामले में श्रेष्ठ थे, शम्सुद्दीन अहमद के पिता भी उसी पैगंबर वंश से थे; इसके अलावा, शम्सुद्दीन अहमद तीन स्थानों में स्थित एक विशाल राज्य पर शासन करते थे, जबकि मुजफ्फर-उद-दौला की संपत्ति अब देश में कुछ जमीन और शहर में कुछ दुकानों तक सीमित थी।

शम्सुद्दीन अहमद ने मानो खून का घूंट निगल लिया हो, औपचारिक सलाम किया और ठंडे स्वर में उत्तर दिया, 'नवब रेजिडेंट बहादुर, अल्लाह आपको सलामत रखे। मैं अपनी अधीनता प्रस्तुत करता हूँ।'

फ्रेजर के चेहरे पर अब भी बनावटी मुस्कान थी, लेकिन उसका लहजा पहले जैसा स्पष्ट और मानक नहीं था, उसमें अंग्रेज़ीपन साफ झलक रहा था। उसने कहा, 'तो, दिलावर-उल मुल्क, जहांगीराह बेगम कैसी हैं? मैंने सुना है—उनके दुश्मनों का यही हश्र हो—कि आजकल उनकी तबीयत ठीक नहीं है। नूर बाग में झूले और खेलने की दूसरी चीज़ें तुरंत लगाई जा सकती हैं। वह वहां जाकर आनंद ले सकती हैं। बेशक, उन्हें अच्छा लगेगा।'

ऐसा लग रहा था मानो पूरी दुनिया सांस रोककर सुन रही हो। नवाब शम्सुद्दीन अहमद की आंखों से आग बरस रही थी, लेकिन उनका पूरा शरीर सुन्न पड़ गया था, मानो अगर उन्हें चोट भी लगे तो खून बहना बंद हो जाए।

दिल्ली से कुछ मील पश्चिम में स्थित नूर बाग नामक उद्यान-सह-बाग, कभी नवाब अहमद बख्श खान की संपत्ति हुआ करता था। उन दिनों, अलवार रियासत के उत्तराधिकार को लेकर दो गुटों के बीच संघर्ष चल रहा था, एक गुट का नेतृत्व विनय सिंह और दूसरे का बलवंत सिंह कर रहे थे। अहमद बख्श खान बलवंत सिंह का समर्थन कर रहे थे। विनय सिंह के समर्थकों को आशंका थी कि अहमद बख्श खान की शक्ति और प्रतिष्ठा बलवंत सिंह के पक्ष में पलड़ा झुका सकती है, इसलिए उन्होंने अहमद बख्श खान की हत्या करके उन्हें हटाने की योजना बनाई।

विनय सिंह ने अहमद बख्श खान की हत्या के लिए कुछ मेवाती भाड़े के सैनिकों को भेजा था। संभावित हत्यारों ने नूर बाग में उनका पीछा किया, जहां अहमद बख्श खान कुछ दिनों के लिए शांतिपूर्वक विश्राम कर रहे थे। दोपहर के सन्नाटे में, हमलावरों में से एक ने पार्क की दीवार फांदकर नवाब पर हमला कर दिया, जब वह आराम कर रहे थे। सौभाग्य से, पहला वार मात्र था, जिससे नवाब की छोटी उंगली कट गई, क्योंकि उनके अंगरक्षकों ने हमलावर और उसके साथियों को काबू कर लिया।

इस घटना से अहमद खान इतने दुखी हुए और बाग से उन्हें इतनी घृणा हुई कि उन्होंने उसे डेविड ओचटरलोनी को उसकी वास्तविक कीमत के एक अंश से भी कम दाम में बेच दिया। ओचटरलोनी की मृत्यु के बाद, उनकी 'मुसलमान बेगम' मुबारकुन्निसा बेगम ने उसे विलियम फ्रेजर के चचेरे भाई साइमन फ्रेजर को और भी कम कीमत पर बेच दिया। साइमन फ्रेजर उस समय दिल्ली के नगर मजिस्ट्रेट और विलियम फ्रेजर के भरोसेमंद सहयोगी थे।

जहांगीर का नाम इतनी आत्मीयता से लेना, और वह भी सार्वजनिक रूप से, एक ऐसा अपमान था जिसके लिए तलवारें भी खींची जा सकती थीं। उच्च कुल की पर्दा प्रथा का पालन करने वाली महिला का नाम किसी ऐसे पुरुष द्वारा लेना जो उसका करीबी रिश्तेदार न हो, अत्यंत अपमानजनक माना जाता था: वास्तव में, यह उसके और उसके पूरे परिवार के लिए एक जानलेवा अपमान था, क्योंकि इससे लड़की और उसका नाम लेने वाले व्यक्ति के बीच किसी प्रकार की घनिष्ठता का संकेत मिलता था। भले ही घनिष्ठता का संकेत न हो, फिर भी लड़की का नाम इस तरह सार्वजनिक रूप से लेना सभ्य व्यवहार के मानदंडों के विरुद्ध और लड़की एवं उसके

परिवार की गरिमा का अपमान था। किसी अजनबी द्वारा, और वह भी महिलाओं के मामले में फ्रेजर जैसी कुख्यात फिरंगी द्वारा, किसी लड़की का नाम लेना लगभग उसके अभिभावक या पिता के लिए आत्महत्या करने का कारण बन सकता था। शम्सुद्दीन अहमद खान की बहन के बारे में पूछताछ करना भी बेहद गंभीर अपराध था; उसका नाम लेना तो और भी बुरा था।
जहांगीराह बेगम को नूर बाग में मनोरंजन और विश्राम के लिए आमंत्रित करना अपने आप में कई अपमानों और तिरस्कारों से भरा था, निमंत्रण देने का तरीका भी उतना ही धृष्ट था: ऐसा लग रहा था मानो जहांगीराह या शम्सुद्दीन अहमद के परिवार की अन्य महिलाओं के लिए वहां जाना और मौज-मस्ती करना एक आम बात हो। विशेष रूप से उस लड़की को नूर बाग आने के लिए कहना शम्सुद्दीन अहमद की प्रतिष्ठा और रुतबे पर एक गहरा प्रहार था: फ्रेजर यह कहना चाह रहा था कि नूर बाग शायद अतीत में कभी तुम्हारे पिता की संपत्ति रही हो; अब यह हम फिरंगियों की है; तुम और तुम्हारे लोग केवल हमारी अनुमति से ही वहां जा सकते हो। जिस स्थान पर उसके पिता पर जानलेवा हमला हुआ था, अब वही स्थान जहांगीराह बेगम को मौज-मस्ती करने और सामान्य रूप से आनंद लेने के लिए आमंत्रित किया जा रहा था। शायद एक और संकेत यह था कि शम्सुद्दीन जैसे परिवारों की महिलाओं के लिए शहर या किले में घूमने-फिरने और मनोरंजन के लिए कोई जगह नहीं थी। यदि वे चाहें तो वे गुप्त रूप से किसी फिरंगी के बगीचे में जा सकते हैं।
शम्सुद्दीन अहमद खान के चेहरे का रंग हर पल बदल रहा था: गुस्से से लाल, दहाड़ते काले, और फिर सांस फूलने से नीला पड़ रहा था। वह अपनी तलवार की मूठ पर हाथ रखे फ्रेजर के हाथी की ओर बढ़ा। सैफुद्दीन हैदर ने उसकी कोहनी कसकर पकड़ ली और धीमी आवाज़ में कहा, 'रुको! मूर्ख मत बनो।'
शम्सुद्दीन अहमद ने गहरी साँस ली, धीरे से साँस छोड़ी, जिससे एक दबी हुई सिसकी जैसी आवाज़ निकली। उन्होंने बड़ी सावधानी से पीठ फेरी और हुसामुद्दीन हैदर की हवेली के विशाल द्वार की ऊँची सीढ़ियाँ चढ़ने लगे, मानो फ्रेज़र, उनका दल, जहाँगीराह के बारे में उनकी पूछताछ, ये सब कुछ अस्तित्वहीन हो। फ्रेज़र को जानबूझकर पीठ दिखाना एक असभ्य हरकत थी, लेकिन शम्सुद्दीन अहमद खान को दी गई बेइज्जती के आगे इसका कोई महत्व नहीं था। फ्रेज़र ने एक फीकी और कटु मुस्कान दी। अपना फिरंगी लहजा पूरी तरह छोड़कर, उन्होंने स्पष्ट दिल्ली लहजे में कहा: 'मुजफ्फर-उद-दौला अल्लाह की मर्ज़ी से बड़ी सूझबूझ और व्यावहारिक ज्ञान के धनी हैं। मैं अपनी बात रखता हूँ।' उन्होंने अपने दल को उसी रास्ते वापस जाने का इशारा किया। जैसे ही वे गली कासिम जान से निकले, ऐसा लगा मानो न केवल वहाँ मौजूद उत्सुक श्रोताओं ने, बल्कि दीवारों, दरवाजों, ऊँची इमारतों, छतों और गलियों ने भी सामूहिक रूप से राहत की साँस ली हो। शम्सुद्दीन अहमद ने अपनी गाड़ी को घुमाने का अनुरोध किया और कोचवान को खानम का बाज़ार जाने का आदेश दिया।
शम्सुद्दीन अहमद का लाल और झुलसा हुआ चेहरा और उसके शरीर में हो रही हल्की कंपकंपी वज़ीर को स्पष्ट रूप से संकेत दे रही थी कि कुछ अप्रिय घटना घटी है। अपनी अंतरात्मा की आवाज़ से उसने अनुमान लगाया कि फ्रेज़र इसमें शामिल है।
‘क्या सब ठीक है?’ उसने नवाब का दाहिना हाथ अपने हाथों में लिया। ‘क्या रेजिडेंट साहब के

साथ कुछ हुआ?' उसने नवाब के हाथ को धीरे से सहलाया। 'मैं अल्लाह की रहमत मांगती हूँ! आपके हाथ तो बर्फ जैसे ठंडे हैं! तो आप इन छोटी-छोटी बातों को दिल पर क्यों लेते हैं? कृपया, जो हुआ सो हुआ।'

मैं ऐसा कैसे कर सकता हूँ? मैं अंदर से आग बबूला हूँ; मेरी तीव्र इच्छा है कि मैं अभी इसी क्षण जाऊं और उस कमीने का सिर काट दूं!

वज़ीर अब स्पष्ट रूप से परेशान था। 'अरे! क्या बात है? कृपया मुझे बताइए। इतना क्रोधित होना ठीक नहीं है। शांत हो जाइए। नवाब मिर्ज़ा अपनी नौकरानी के साथ बाहर गया है। मैं उसे अभी बुला लेता हूँ। आप उससे बात करके और खेलकर अपना समय बिताइए।'

'ये छोटे-मोटे मनोरंजन काम नहीं आने वाले, छोटी बेगम। जब तक मैं इस घिनौने मामले का अंत नहीं कर देती, तब तक मुझे चैन नहीं आएगा।'

अरे वाह, मुझे बताओगे क्या हुआ जिससे तुम इतने परेशान हो? आओ, एक ठंडा पेय पी लो। उसने राहत अफजा को अनार के रस में अन्य ताजगी लाने वाली सामग्री मिलाकर एक गिलास परोसने का आदेश दिया।

'थोड़ी देर के लिए मैं आपको पंखा कर देती हूँ। कृपया इस बड़ी आरामकुर्सी पर आराम से पैर फैला लें। मुझे आपके जूते उतारने दीजिए और आपके कोट के बटन ढीले करने दीजिए।'

वज़ीर ने नवाब की ओर देखते हुए सिर उठाया और उनकी आँखों में आँसू देखकर दंग रह गई। वह पूरी तरह से स्तब्ध थी, उसे समझ नहीं आ रहा था कि उन्हें कैसे दिलासा दे। जब शम्सुद्दीन अहमद कुर्सी से टिककर बैठ गए, तो वज़ीर ने जल्दी से अपने शॉल के किनारे से उनका चेहरा पोंछ दिया, जिससे नवाब के आँसू पोंछने का इशारा छिप गया। उसने उन्हें ठंडे पेय के कुछ घूंट पिलाए और कहा, 'अब बताइए, क्या बात है?'

'कुछ नहीं हुआ,' उसने निराशा भरी गहरी आह भरी, 'मेरे भाग्य ने मेरा साथ छोड़ दिया है, मानो वह रास्ता भटक गया हो। उस कमीने दलाल ने आज रात भीड़भाड़ वाले बाज़ार में मेरी बेइज्जती कर दी!'

भगवान आपकी रक्षा करें! ऐसा कैसे हो सकता है! मुझे यकीन है कि वह ऐसा करने की हिम्मत नहीं कर सकता।

"खैर, ऐसा हो ही गया। क्या मैंने नहीं कहा था कि मेरे सितारे अपने सही रास्ते से भटक रहे हैं? जब ऐसा होता है, तो अच्छी चीजें भी बुरा नतीजा देती हैं। आज शाम मैं सैफुद्दीन हैदर से मिलने गया था, क्योंकि मैंने सुना था कि वह बीमार हैं। सौभाग्य से, उनकी तबीयत ठीक थी। उन्होंने मेरा हाथ पकड़कर मुझे अपनी हवेली के गेट तक पहुंचाया, तभी यह घटना घटी।"

शम्सुद्दीन अहमद ने पूरी कहानी धीमी आवाज़ में सुनाई और अंत में कहा, 'तुम्हें याद है मैंने एक बार तुमसे कहा था कि मैं उसे उसी तरह दफ़नाऊँगा जैसे मैं अब चाचा-भतीजे के रूप में अपने नाममात्र के रिश्ते को दफ़ना रहा हूँ? अब मुझे लगता है कि वह दिन आ गया है। मैं उसे फाँसी देने से पहले इस मामले को यूँ ही नहीं छोड़ूँगा।'

"माननीय महोदय, मैं आपसे ईश्वर और उसके पैगंबर के नाम पर विनती करता हूँ, ऐसे शब्द न

बोलें! ऐसे विचार न करें। कृपया, सबसे पहले, आज की घटना की जड़ में निहित मामले पर विचार करें।"
'तुम्हारा क्या मतलब है? क्या उस नीच कुत्ते के घटिया, नीच स्वभाव के अलावा और कुछ भी मूल कारण हो सकता है?'
'माननीय महोदय, आप बिलकुल सही हैं। लेकिन इस दासी को आपको यह बताना होगा कि जहांगीराह बीबी का मामला सर्वोपरि है। उनकी इज्जत की रक्षा सर्वोपरि है।'
शम्सुद्दीन अहमद ने भौंहें चढ़ाते हुए कहा, 'तो? आपका कहने का मतलब क्या है?'
मेरी आपसे यही गुजारिश है कि आप जहांगीराह के लिए कोई उपयुक्त वर ढूंढकर उनका विवाह संपन्न कराएं। इसे जल्द से जल्द करें। संभव हो तो इस शुभ अवसर को इसी महीने संपन्न कराएं। कृपया इस बात को समझें कि सब कुछ जहांगीराह की वैवाहिक स्थिति से ही उत्पन्न हुआ है। अगर वह आज अपने घर में होतीं, तो क्या आपको लगता है कि वह सूअर खाने वाला, वह खूंखार और हट्टा-कट्टा आदमी ऐसी कोई बात कह पाता? पूरी दुनिया जानती है कि फरिश्ते भी जहांगीराह की पवित्रता और शुद्धता की कसम खाते हैं। और एक बार उनका विवाह हो जाए, तो सभी तरह के दुष्प्रचार हमेशा के लिए बंद हो जाएंगे।
नवाब ने एक-दो मिनट सोचा और चिंता से भरे स्वर में उत्तर दिया, 'आपकी बात में कुछ सच्चाई तो है, लेकिन विवाह के प्रस्ताव कहाँ हैं?'
'अरे वाह, भला उसके जैसी खूबसूरत लड़की के लिए, जो सूरज और चांद की तरह है, शादी के प्रस्तावों की कमी कैसे हो सकती है! बस ध्यान से देखो।'
'हां, मैं समझ गया कि आप क्या कहना चाहते हैं। मैं बहुत जल्द जहांगीराह के लिए कुछ आयोजन करूंगा। लेकिन इससे पहले, मुझे उस निकम्मे को सबक सिखाना होगा। मैं अभी रेजिडेंसी जा रहा हूं।'

यह कहते हुए शम्सुद्दीन अहमद खान ने अपने जूते पहने, कोट के बटन लगाए और सीढ़ियों से नीचे उतर गए। वज़ीर लगातार पुकारते रहे, 'वहाँ मत जाओ। मैं तुमसे अल्लाह और उसके पैगंबर के नाम पर विनती करता हूँ। कृपया वहाँ मत जाओ। अपने बच्चों की खातिर मत जाओ।' लेकिन नवाब ने उनकी बात नहीं मानी और जल्द ही उनके कदमों की आवाज उनके कानों तक पहुँचना बंद हो गई।

उसने कोचवान को आदेश दिया, 'रहने की जगह। अभी!'
कोचवान हिचकिचाया, ‘हे परम पूज्य, क्या हमें कुछ लाठी-कमान ले लेने चाहिए?’ वह रुक-रुक कर बोला। ‘हम उन्हें बल्लीमारन से तुरंत ले आएंगे।’
शम्सुद्दीन अहमद का मन किया कि वह कोचवान से चाबुक छीनकर उसे ही मार दे और कहे कि उसका काम गाड़ी चलाना है, सलाह देना नहीं। लेकिन उसने अपना हाथ रोक लिया, क्योंकि वह उस तरह का रईस नहीं था जो अपने नौकरों को पीटता हो। क्रोध पर तर्क की जीत हुई। कुछ क्षण चुप रहने के बाद उसने कहा, 'ठीक है, लेकिन जल्दी करो। समय कम है।'
शम्सुद्दीन अहमद पर मानो दुर्भाग्य की वर्षा हो रही थी। वह एक ऐसे तंबू की तरह थे जिसका कपड़ा उखड़ गया हो। अरबी कहावत के अनुसार, जब नियति का समय आता है, तो धरती भी सिमटने लगती है। दिल्ली की जगह उनके लिए सिकुड़ने ही वाली थी। अगर वह उस समय रेजीडेंसी न भी गए होते, तो भी परिणाम कुछ अलग नहीं होता। वहाँ जाकर उन्होंने नियति को और भी शीघ्र करने की दिशा में एक कदम आगे बढ़ा दिया था।
लगभग आधे घंटे के भीतर, शम्सुद्दीन अहमद खान रेजीडेंसी पहुँच गए; उनके आगे दो सशस्त्र घुड़सवार और उनके दाएं और बाएं दो-दो भालाधारी सैनिक थे। उन्होंने द्वार बंद पाया। अपनी नासमझी में, शम्सुद्दीन अहमद खान को अब भी विश्वास था कि वह खुले द्वार से बिना किसी रोक-टोक के प्रवेश कर सकते हैं, और यदि द्वार बंद हुआ तो वे पहरेदारों को डांटकर या अपने व्यक्तित्व के बल पर उसे खुलवा सकते हैं। लेकिन फ्रेजर उस उग्र स्वभाव वाले युवक की सोच से कहीं अधिक चतुर थे। वे शम्सुद्दीन अहमद को उनके बचपन से जानते थे; वे भली-भांति जानते थे कि शम्सुद्दीन अहमद जितने साहसी और युद्ध कौशल से परिपूर्ण थे, उतने ही आवेगी, जिद्दी और जल्दबाज़ भी थे। इसलिए, अगर शम्सुद्दीन अहमद अचानक रेजीडेंसी में प्रकट होकर फ्रेजर को किसी तरह चुनौती देते, तो उन्हें आश्चर्य नहीं होता।
रेजिडेंसी लौटते ही फ्रेजर ने शम्सुद्दीन अहमद को किसी भी प्रकार की गड़बड़ी करने से रोकने के लिए आवश्यक कदम उठाए और जरूरत पड़ने पर उसे और भी अपमानित करने की योजना बनाई। इस तरह शम्सुद्दीन अहमद को सात सलाखों वाले द्वार के पीछे दो दोहरी नाल वाली तोपों से लैस दो सैनिक मिले; द्वार बंद था और पहरेदारों के साथ फ्रांसीसी कार्बाइन से लैस चार बक्सरिया सैनिक भी तैनात थे। इस प्रकार छह सैनिकों ने द्वार की पूरी चौड़ाई को घेर लिया था। अब, अगर द्वार जबरदस्ती भी खोला जाता, तो आगंतुक को उन छह सैनिकों के बीच से होकर गुजरना पड़ता।
नवाब के सशस्त्र अंगरक्षकों में से एक आगे आया और दृढ़ लेकिन विनम्र स्वर में बोला, 'क्या बात है? द्वार क्यों नहीं खोला जा रहा है? क्या आप नहीं देख रहे हैं कि महाराज दर्शन करने आए हैं?'
गेट पर तैनात किए जाने से पहले उन सभी छहों को पूरी तरह से प्रशिक्षित किया गया था। उनमें

से एक ने अर्थपूर्ण मुस्कान के साथ कहा, 'गेट न खोलें? हम गेट न खोलने की हिम्मत कैसे कर सकते हैं? लेकिन सीनियर साहिब बहादुर आराम से हैं।'

'सुख कर जाना' का अर्थ था 'सोने के लिए बिस्तर पर चले जाना'; यह मुहावरा केवल बादशाह के लिए इस्तेमाल होता था और वास्तव में राजमहल के बाहर इसका कोई उपयोग नहीं था। फिरंगी के लिए इसका प्रयोग शम्सुद्दीन अहमद खान के कानों में तेजाब डालने जैसा था। एक मामूली खानदान का मामूली फिरंगी अपने लिए इस मुहावरे का प्रयोग करने की हिम्मत कैसे कर सकता है! वे पहले से ही हमारे देश को लूट रहे थे, अब वे हमारे विशेष शब्दों और रीति-रिवाजों को अपने उपयोग के लिए हथिया रहे थे। लेकिन इस तरह के, या किसी भी तरह के झगड़े करने का यह कोई अवसर नहीं था।

'शाहबाज खान, इस आदमी से कहो कि वह अंदर जाए और सूचना दे कि हम यहां हैं।'

'जी श्रीमान।'

शाहबाज खान ने संतरी गार्ड को अपने स्वामी की इच्छा से अवगत कराया कि उनके आगमन की सूचना दी जाए और उनके लिए द्वार खोला जाए।

बक्सारिया ने फिर से एक रहस्यमयी मुस्कान दी, मानो उन्हें कोई ऐसा राज़ पता हो जिसके बारे में किसी और को, यहाँ तक कि नए आए मेहमान को भी, पता न हो। 'जी हाँ, ठीक है' कहते हुए वे धीरे-धीरे, आराम से कदम बढ़ाते हुए मुख्य भवन की ओर मुड़ते ही नज़रों से ओझल हो गए। थोड़ी देर बाद वे लौटे और शाहबाज़ खान को बताया, 'कान साहब, साहब ने हुक्म दिया है कि नवाब साहब अकेले और पैदल आ सकते हैं।'

एक बार फिर मध्यस्थ की भूमिका निभाते हुए, शाहबाज खान ने हिचकिचाते हुए और नरम शब्दों में शम्सुद्दीन अहमद खान को सूचना दी। शम्सुद्दीन अहमद खान ने कुछ क्षण सोचा और फिर ऊँची आवाज़ में, ताकि बक्सारिया उन्हें सुन सकें, कहा, 'नवाब रेजिडेंट को सूचित किया जाए कि मैं पैदल चलने के लिए सहमत हूँ, लेकिन मैं न्यूनतम संख्या में अंगरक्षकों के बिना कहीं नहीं जाता। दो भालाधारी मेरे साथ चलेंगे।'

पहरेदार वापस गया और तुरंत लौट आया। 'ठीक है। नवाब साहब दो भालाधारियों के साथ अंदर आ सकते हैं।'

उन्होंने द्वार खोलने के लिए पहरेदारों के कमांडर को इशारा किया। नवाब नीचे उतरे और तेज़ी से, दृढ़ कदमों से प्रवेश द्वार में दाखिल हुए। पहरेदारों और सैनिकों ने झुककर उन्हें सलाम किया और दो समूहों में बँट गए ताकि उन्हें पर्याप्त जगह मिल सके। उनके दाहिनी ओर खड़े उनके एक भालाधारी के एक हाथ में नंगा भाला और दूसरे हाथ में मशाल थी। दूसरे भालाधारी के दोनों हाथों में नंगा भाला था।

फ्रेजर के आदमियों द्वारा नवाब पर घात लगाकर हमला किए जाने का या अंधेरे, बादलों से घिरे आसमान, बढ़ती रात और सड़क के दोनों ओर घनी झाड़ियों और पेड़ों के हरे-काले रंग का फायदा उठाकर किसी अज्ञात, लापता भाड़े के सैनिकों द्वारा हमला किए जाने का कोई खतरा नहीं था। फिर भी, नवाब के भालाधारी कोई जोखिम नहीं लेना चाहते थे। वे नवाब के बहुत करीब, लगभग उन्हें छूते हुए चल रहे थे, मशालधारी उनसे कुछ इंच आगे दाहिनी ओर और दूसरा

उनसे कुछ इंच पीछे बाईं ओर था। मशालधारी ने मशाल को इस तरह झुकाया कि नवाब तुलनात्मक रूप से अंधेरे में थे और मशाल आगे की सड़क को रोशन कर रही थी।

शम्सुद्दीन अहमद खान सिर ऊंचा करके और सीना फुलाकर चल रहे थे। हालांकि पहला दौर फ्रेजर के पक्ष में गया था, नवाब निराश नहीं थे। उन्हें विश्वास था कि उनके पास अभी भी कई अन्य, और विजयी, रणनीति मौजूद हैं। घर की ओर बढ़ते हुए वे सोच रहे थे कि जब वे और फ्रेजर आमने-सामने आएंगे तो बातचीत की शुरुआत कैसे करेंगे।

अब वे रेजीडेंसी के बाहरी, ऊँचे बरामदे पर थे, जिसकी सीढ़ियाँ कई और कुछ हद तक खड़ी थीं। वहाँ न तो कोई दीपक जला था और न ही कोई नौकर मौजूद था जिसे नवाब के स्वागत की सूचना देने के लिए कहा जा सके। फ्रेजर या कम से कम उसके प्रबंधक के नवाब के स्वागत के लिए उपस्थित होने का प्रश्न ही नहीं उठता था।

मशाल लिए भालाधारी नवाब से आगे सीढ़ियाँ चढ़ गया, उसका इरादा बड़े मुख्य द्वार पर दस्तक देने का था। दूसरा भालाधारी अब बरामदे के नीचे, अँधेरे खुले आकाश में अकेला था, जो तारों की अनुपस्थिति के कारण और भी गहरा अँधेरा लग रहा था। अचानक, कहीं से दो लंबे और शक्तिशाली मेवाती प्रकट हुए और उसे पीछे से पकड़ लिया। एक ने उसे बांहों से जकड़ लिया और दूसरे ने अपनी एक टांग उनके चारों ओर लपेटकर उसके पैरों को जकड़ लिया। भालाधारी ने जमीन पर टिके रहने की बहुत कोशिश की, लेकिन उसके विरोधी इतने बलवान थे कि वह हिल भी नहीं सका। उन्होंने उसकी टांगों की पकड़ तोड़ दी और उसे जमीन से कुछ इंच ऊपर उठा लिया; उनमें से एक ने ठंडी, सपाट आवाज में कहा, 'कन साहब, अगर आपको अपनी जान प्यारी है, तो अब चुपचाप हमारे साथ मुख्य द्वार तक चलें।'

नवाब और उसका मशालवाहक चौंककर पीछे मुड़े। इससे पहले कि वे कुछ प्रतिक्रिया कर पाते, एक और मेवाती ने मशालवाहक पर झपट्टा मारा और निहत्थे युद्ध की अपनी कला का प्रयोग करते हुए, अपनी लाठी से उसकी कोहनियों पर वार किया, जिससे वे लकवाग्रस्त हो गईं। घायल अंगों को सहलाने की कोशिश करते हुए मशालवाहक के होंठों से अनायास ही सिसकी निकल गई, और इस प्रक्रिया में भाला और दीपक धड़ाम से गिर पड़े। असहाय होकर उसने अपनी उंगलियों को हिलाने की कोशिश की, लेकिन उनमें कोई ताकत नहीं थी। बड़ा सामने का दरवाजा खुला और दो तेलंगाना प्रकट हुए, जिन्होंने उसे आसानी से काबू कर लिया। हाथ में पकड़ी मशाल का कांच का आवरण कई टुकड़ों में टूट गया; एक हल्की हवा के झोंके ने मशाल को बुझा दिया।

नवाब अब उस अंधेरे, शत्रुतापूर्ण वातावरण में अकेला और लगभग असहाय था। उसके भालाधारी सैनिकों को जानवरों की तरह घसीटते हुए मुख्य द्वार की ओर ले जाया जा रहा था, जैसे उन्हें किसी दौड़ में गिरा दिया गया हो। वे जानते थे कि प्रतिरोध का कोई भी प्रयास व्यर्थ था। उन्होंने शर्म से अपनी आँखें बंद करके नवाब से अपना चेहरा फेरने की कोशिश की।

शम्सुद्दीन अहमद को अब समझ आ गया था कि जिस विकट परिस्थिति में वह फंसा हुआ था, उसमें फ्रेजर ने बड़ी चतुराई से सारी चालें चली थीं। उसकी गाड़ी छीनकर उसे पैदल चलने पर मजबूर करने के पीछे मकसद उसे निहत्था करना और बेबस बनाना था। इसके बाद आगे जो भी योजना बनाई गई थी, उसे अंजाम देना आसान हो जाता। उसे गोली भी मारी जा सकती थी।

फ्रेजर के आदमी यह दिखावा कर सकते थे कि उन पर हथियारबंद घुसपैठियों या डाकुओं ने हमला किया है।
नवाब के अंगरक्षक, जिन्हें घसीटा और धकेला जा रहा था, एक-दो बार 'मदद! मदद!' चिल्लाए, इस उम्मीद में कि उनकी आवाज़ नवाब के घुड़सवारों और फाटक के बाहर इंतज़ार कर रहे अन्य दो अंगरक्षकों तक पहुँच जाए। लेकिन यह व्यर्थ प्रयास था: उनकी कर्कश, दबी हुई आवाज़ें इतनी दूर तक नहीं पहुँच सकती थीं, और अगर पहुँच भी जातीं, तो नवाब के आदमियों को उन छह सशस्त्र गार्डों को पार करना पड़ता जिन्होंने ठीक इसी तरह की कार्रवाई की आशंका में तुरंत फाटक बंद कर दिया था।
शम्सुद्दीन अहमद खान ने अपनी तलवार निकाली, अपनी सुरक्षा के लिए बरामदे के विशाल स्तंभों में से एक के सामने तैनात हो गए और सबसे बुरे की प्रतीक्षा करने लगे। जब नवाब के आदमियों को घसीटकर ले जाने की आवाज़ बंद हो गई, तो बड़े ड्राइंग रूम की बत्तियाँ जल उठीं। उसका दरवाजा शोर के साथ खुला और फ्रेजर अपने ड्रेसिंग गाउन में प्रकट हुए।
‘भतीजे, ये तो तुम हो! तलवार खींचे हुए और अंधेरे बरामदे में! अगर मैं तुम्हें चोर या डाकू समझकर गोली चला दूं तो... नहीं, मैं गोली नहीं चलाऊंगा, लेकिन मेरे सारे पहरेदार हद से ज्यादा बेवकूफ हैं।’ वह हल्की हंसी हंसा। ‘लेकिन रात के इस समय तुम यहां कैसे हो?’
उन्होंने औपचारिक 'आप' के बजाय अनौपचारिक 'तुम' का प्रयोग किया, जैसा कि शिष्ट समाज में एक युवा व्यक्ति के लिए भी मानक प्रथा थी।
शम्सुद्दीन अहमद मुस्कुराया। 'क्या मुझे अंकल विलियम फ्रेजर से मिलने के लिए अपॉइंटमेंट लेने की ज़रूरत है?'
‘क्यों? क्या शाम को हुई हमारी मुलाकात पर्याप्त नहीं थी?’
‘मैं उस बैठक का हिसाब-किताब पूरा करने आया हूँ।’ शम्सुद्दीन अहमद खान ने अपनी खींची हुई तलवार को फ्रेजर की ओर इशारा करते हुए आगे बढ़ते हुए कहा।
फ्रेजर ने ताली बजाई। छह सशस्त्र सैनिक प्रकट हुए जो जाहिर तौर पर संकेत की प्रतीक्षा कर रहे थे। दो सैनिक आगे बढ़े और नवाब की बाहों को मजबूती से पकड़ लिया। दो सैनिक नवाब के आगे और पीछे खड़े हो गए, उन्हें चारों ओर से घेर लिया। एक तेलंगाना सैनिक ने अपना हाथ आगे बढ़ाते हुए कहा, 'नवाब साहब, कृपया अपनी तलवार इस गुलाम को सौंप दें।'
हथियारबंद होने के बावजूद, शम्सुद्दीन अहमद खान ने तुरंत पलटकर बिजली की तेज़ी से तलवार वाला हाथ उठाया और तेलंगाना के कंधे पर वार किया। तलवारबाज़ी में असाधारण निपुणता और सटीक निर्णय क्षमता का प्रदर्शन करते हुए, उन्होंने अंतिम क्षण में अपने वार को रोक लिया, जिससे तलवार तेलंगाना के कंधे में कम से कम दो इंच गहरी धंसने के बजाय, तितली की तरह उस पर आ गिरी। तलवार की तेज धार ने तेलंगाना के कुर्ते को चीर दिया, जिससे खून की एक पतली लकीर बन गई।
नवाब ने ठंडे गुस्से से कहा, “एक और बार ऐसा अपमान किया तो मैं तुम्हारी जीभ काट कर टुकड़े-टुकड़े कर दूंगा और तुम्हारे गले में ठूंस दूंगा।” तेलंगा डर से कांप उठा और एक कदम पीछे हट गया। हाथ जोड़कर उसने सिर झुकाया और कांपते हुए कहा, “महाराज, मैं ही स्वामी हूं।”

‘बहुत बढ़िया, नौजवान!’ फ्रेजर ठहाका लगाकर हँसा। ‘और क्यों नहीं? आखिर तुम दिलावर-उल मुल्क रुस्तम जंग की संतान हो।’ अब उसका लहजा गंभीर और कठोर हो गया। ‘लेकिन यह खेल पल-पल नीरस होता जा रहा है। सही तरीका तो यह था कि मेरे कुछ गार्ड तुम्हारी गर्दन और कंधों पर बाहें कसकर रखकर तुम्हें बाहर निकाल दें, लेकिन मैं स्वभाव से शांतिप्रिय हूँ और अतीत का भी ध्यान रखता हूँ। इसलिए, मेरे गार्ड तुम्हारे चारों ओर सुरक्षा घेरा बनाकर तुम्हें गेट तक ले जाएँगे। वहाँ मौजूद अन्य गार्ड तुम्हारी बाहें पकड़कर तुम्हें गाड़ी में बिठाएँगे। यही अधिकतम शिष्टाचार है जो मैं तुम्हारे साथ बरत सकता हूँ। अब निकल जाओ।’
फ्रेजर ने उसकी ओर पीठ फेर ली। सिपाही शम्सुद्दीन अहमद के और करीब आ गए, इस तरह कि वे चारों ओर से उससे एक हाथ की दूरी पर थे।
जैसे ही फ्रेजर ड्राइंग रूम में जाने ही वाला था, शम्सुद्दीन अहमद खान दहाड़ते हुए बोला, 'रुको!'
फ्रेजर ने घृणा और उदासीनता का दिखावा करते हुए हाथ हिलाया, लेकिन फिर मुड़कर व्यंग्य से कहा, 'तो? अब भी तुम्हें कुछ चाहिए?'
‘विलियम फ्रेजर, तुमने आज दो बार मेरा अपमान किया। मैंने आज के लिए अपनी तलवार म्यान में रख दी है, लेकिन जल्द ही तुम्हारा शरीर ही उसका म्यान होगा और तुम्हारा खून ही उसका विवाह वस्त्र होगा।’
फ्रेजर, बेफिक्र होकर, जोर से हँस पड़ा। 'जहाँ तक दुल्हन के परिधान की बात है, मुझे जहाँगीराह बेगम का परिधान पसंद है...'
शम्सुद्दीन अहमद खान तेंदुए की तरह गुर्राया। उसने अपनी धधकती तलवार लहराई और अपने चारों ओर घेरा डाले हुए आदमियों को तितर-बितर कर दिया। उसका अगला वार फ्रेजर को गिरा सकता था या घायल कर सकता था, लेकिन फ्रेजर ऐसी किसी भी स्थिति के लिए तैयार था।
कमरे में वापस भागते हुए, फ्रेजर ने अंदर से चिल्लाकर कहा, 'मदद करो! मदद करो! हत्या! यह आदमी मुझे मार डालेगा! चुपचाप खड़े मत रहो, तुम निकम्मे लोग! इसे अभी मेरे घर से बाहर निकालो!'
कई बंदूकधारी और लाठीधारी, जो स्पष्ट रूप से ऐसे आह्वान की प्रतीक्षा कर रहे थे, मधुमक्खियों के झुंड की तरह चारों ओर से प्रकट हुए और नवाब को चींटियों की तरह घेर लिया। नवाब ने अपनी तलवार चलाने के लिए जगह बनाने के लिए थोड़ा पीछे हटने की कोशिश की, लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ। फिर भी, उन्होंने हमलावरों में से एक को घायल कर दिया और भीड़ पर अंधाधुंध तलवार चलाने ही वाले थे कि एक लाठीधारी ने कुशलता से नवाब के तलवार वाले हाथ पर प्रहार किया। उनकी मुट्ठी अनायास ही खुल गई और तलवार उनके पैरों पर गिर गई। झुककर बाएं हाथ से तलवार उठाने के लिए न तो समय था और न ही जगह।
शम्सुद्दीन अहमद खान से तुरंत ही उनका खंजर छीन लिया गया और हमलावरों ने उनके शरीर के अलग-अलग हिस्सों को पकड़कर उन्हें घसीटना शुरू कर दिया। इस हाथापाई में उनकी एक आस्तीन दो-तीन जगहों से फट गई और उनका एक जूता खो गया। आधे उठाकर और आधे घसीटते हुए, धक्के खाते हुए शम्सुद्दीन अहमद खान को फ्रेजर की हवेली के मुख्य द्वार तक ले जाया गया और अंत में उन्हें बाहर धकेल दिया गया।

वे खुशी की कामना करते हैं, लेकिन दुख उनका इंतजार कर रहा है: वज़ीर खानम भय की भयानक गिरफ्त में आ गया है और नवाब ने प्रतिज्ञा की है।

शम्सुद्दीन अहमद को बिल्कुल भी याद नहीं था कि उनकी यात्रा कब समाप्त हुई और उन्हें वज़ीर खानम के घर कैसे लाया गया। उन्हें यह भी याद नहीं था कि चांदनी चौक जाने के लिए गाड़ी का आदेश उन्होंने स्वयं दिया था या यह निर्णय उनके अंगरक्षकों के कमांडर ने लिया था।

उसका शरीर तख्ते की तरह अकड़ा हुआ था, उसकी आँखें मानो पत्थर की बनी हों; उसकी गर्दन लटकी हुई थी और एक तरफ झुकी हुई थी। उसे देखकर वज़ीर ने घबराहट और सदमे से अपना माथा पीट लिया। उसे समझ नहीं आ रहा था कि क्या करे और उसे होश में लाने का कोई उपाय भी सूझ नहीं रहा था। किसी हकीम, यहाँ तक कि हकीम अहसानुल्लाह खान को भी बुलाकर उसका इलाज करवाना उचित नहीं था, क्योंकि इससे खबर—या अफवाहें—और भी तेज़ी से और दूर-दूर तक फैल जाएँगी, भले ही हकीम किसी को कुछ भी न बताए।

यह स्पष्ट था कि नवाब को कोई चोट नहीं आई थी, न ही उनकी नब्ज़ कमज़ोर या धीमी थी। निवास स्थान पर कुछ ऐसा घटित हुआ होगा जो उनके स्वभाव के विपरीत था, फिर मामला बिगड़ गया होगा, जिससे उनका गुस्सा भड़क उठा होगा, और फिर किसी भयानक घटना ने उन्हें सदमे से बेहोश कर दिया होगा। इसलिए, आवश्यकता थी कि उनके हृदय पर उस सदमे के प्रभाव को कम किया जाए।

किसी तरह वज़ीर, हबीबा और वफ़ादार की मदद से, शम्सुद्दीन अहमद को उनके बिस्तर तक ले जाने में कामयाब रहे। उन्होंने उनकी टोपी और कोट उतारे और उनके हाथ, पैर और चेहरा साफ किया। नरम मलमल के रुमालों को हल्के गर्म पानी में भिगोकर उनके शरीर के खुले हिस्सों को धीरे से पोंछा गया। वफ़ादार और मुबारक कदम ने उनके तलवों और हथेलियों की कोमल मालिश शुरू की। वज़ीर ने एक अन्य नौकरानी की मदद से उनके कसकर बंद जबड़े को थोड़ा सा खोला और धीरे-धीरे, बूंद-बूंद करके उनके मुंह में एक ताज़गी देने वाला ठंडा पेय डाला।

जब शम्सुद्दीन अहमद के शरीर का तनाव कुछ कम हुआ और उनकी आँखें सामान्य हो गईं—हालाँकि अभी भी बंद थीं—तो उन्होंने उनके पैरों को बिस्तर के किनारे तक खींचा और उनके पैरों को धीरे-धीरे और काफी देर तक गर्म पानी से धोया। इसके बाद, उनके पैरों को एक नरम लेकिन कुछ भारी चादर से ढक दिया गया ताकि वे कुछ समय तक गर्म रह सकें।

धीरे-धीरे शम्सुद्दीन अहमद नींद और बेहोशी के बीच की अवस्था में चले गए। कुछ समय बाद उनका शरीर शांत हुआ और यह स्पष्ट हो गया कि वे गहरी नींद में सो रहे हैं। पूरा घर सन्नाटे में डूबा हुआ था, मानो ऊपर से कोई विपत्ति आने वाली हो, और हर कोई अपने मन में उस विपत्ति को टालने का उपाय खोजने या आने वाली विपत्ति को रोकने के लिए कोई कारगर प्रार्थना करने में मग्न था।

नवाब मिर्ज़ा को सुलाने के बाद, हबीबा नमाज़ की चटाई पर बैठ गईं और लगातार अपनी माला

जपती रहीं और बचपन से ऐसे मौकों के लिए सीखी हुई दुआएँ पढ़ती रहीं। राहत अफ़ज़ा बार-बार पैगंबर मुहम्मद पर अल्लाह की सलाम के अरबी शब्दों का पाठ करती रहीं, क्योंकि ऐसा माना जाता था कि इससे ऐसी परिस्थितियों में कुछ मदद मिल सकती है। वफ़ादार और मुबारक कदम, जो कुरान को पढ़ने में सक्षम थे, भले ही रुक-रुक कर ही सही, अपनी पवित्र पुस्तक को एक लकड़ी के स्टैंड पर रखकर उसके सामने बैठ गए, सिर और शरीर को अपने लबादों से पूरी तरह ढककर, और कुरान के प्रसिद्ध अध्याय, पचपनवें अध्याय, जिसे अल-रहमान (सबसे दयालु) कहा जाता है, का एक-एक शब्द पढ़ते रहे। यह अध्याय पुस्तक के सबसे मधुर और प्रभावशाली अध्यायों में से एक माना जाता है और ऐसा माना जाता है कि इसका पाठ घर में शांति और कृपा लाता है।
पृथ्वी पर जो कुछ भी है, वह सब नाश हो जाएगा: परन्तु तुम्हारे प्रभु का चेहरा, जो महिमा, उदारता और सम्मान से परिपूर्ण है, सदा के लिए अडिग रहेगा।
वरिष्ठ दासियों में से एक, कुंवर रानी नाम की एक हिंदू महिला ने पारंपरिक हिंदू विधि का पालन किया। यह विधि मुसलमानों में भी बहुत लोकप्रिय है और इसका उद्देश्य बुरी नज़र या किसी भी प्रकार की बुराई, यहाँ तक कि काले जादू को भी दूर करना है। उसने अपने हाथ में कुछ लाल मिर्चें लीं, नवाब के सिर के ऊपर धीरे-धीरे तीन बार गोला बनाया और मिर्चों को आग में फेंक दिया। फिर उसने अपने हाथ में काले मसूर के कुछ दाने लिए और वही क्रिया दोहराई। वह तीखे धुएं को ध्यान से देखती रही, मानो कुछ पल के लिए ही सही, उसमें दुष्ट की आकृति घूमती हुई दिखाई दे रही हो।

एक और नौकरानी, जिसका गोरा रंग—जिसमें हल्की पीली सुनहरी झलक थी—बादाम जैसी आंखें और छोटी चपटी नाक उसे कुछ-कुछ मध्य एशियाई जैसी लगती थी, हालांकि उसकी लंबाई औसत से कम और शरीर थोड़ा मोटा था, और जो अपने मिलनसार स्वभाव और सरल व्यवहार के कारण बहुत लोकप्रिय थी, कमरे के एक कोने में जाकर बैठ गई, जितना हो सके खुद को समेट लिया और अपनी नदी देवियों, वृक्षों में रहने वाली आत्माओं और पहाड़ों में रहने वाले जंगली, देवतुल्य अलौकिक प्राणियों के नाम जपने लगी और लगातार उनकी प्रार्थना करती रही। वह कामरूप के एक दूरदराज इलाके से आई थी और अंगामी नामक जनजाति से संबंध रखती थी। उसका नाम वनिसी था; जब वह छोटी बच्ची थी, तब कलकत्ता के किसी इलाके से महिलाओं और लड़कियों का अपहरण करने वाले एक पेशेवर अपहरणकर्ता ने उसका अपहरण कर लिया था। अपहरणकर्ता उसे बेचने के लिए दिल्ली ले आया था। यह नवाब मिर्जा के जन्म के तुरंत बाद की बात है और जब बच्चा अपनी मां के साथ नहीं होता था, तब उसकी देखभाल के लिए एक युवा, आकर्षक महिला की आवश्यकता थी। शम्सुद्दीन अहमद खान के प्रबंधक ने उसे अच्छी कीमत पर खरीदा था और तब से वह वजीर के घर में रह रही थी।
वज़ीर नवाब के बिस्तर के पास उदास और चुपचाप बैठी थी, अपने मन के डर को कम करने के लिए वह एक प्रसिद्ध अरबी प्रार्थना पढ़ रही थी—जो शिया समुदाय में तो लोकप्रिय है ही, साथ ही सुन्नियों में भी प्रचलित है—जिसमें पैगंबर के दामाद अली से मदद की गुहार लगाई जाती है।

उसे पूरा विश्वास था कि नवाब ठीक हो जाएंगे। लेकिन उसके मन में एक डर बैठा हुआ था, मानो उसके पंजे गहरे तक गड़ाए हुए हों, कि उनके ठीक होने से उन पर मंडरा रही बुराई का अंत नहीं होगा; बल्कि, ऐसे बदलाव आएंगे जो उनके जीवन में क्रांति ला देंगे। उसे इस बात पर कोई संदेह नहीं था कि नवाब हमेशा उसके प्रति वफादार रहेंगे; न ही उसे इस बात का डर था कि फ्रेजर उनके साथ कुछ घिनौना करेगा। लेकिन कहीं न कहीं कुछ ऐसा हुआ था, जो उनकी सुरक्षा की दीवार को उसी आसानी से और लगातार खोखला कर देगा, जैसे दीमक दरवाजों और खिड़कियों को खा जाते हैं। सारी शक्ति और धन, सारी सुंदरता और शान, प्रेम का सारा लेन-देन, सारी आशाएँ और महत्वाकांक्षी इच्छाओं का सारा उल्लास कुछ ही दिनों में हमेशा के लिए गायब हो जाएगा।

उन्हें मार्स्टन ब्लेक की याद आई, वह अद्भुत नौजवान। उन्होंने भी लगभग इसी तरह उनसे विदा ली थी: इस विश्वास के साथ कि वे जल्द लौटेंगे; आपको कभी कोई हानि नहीं होगी; मैं आपके लिए पूरी सुरक्षा व्यवस्था करके जा रहा हूँ। तब उन्हें कोई पूर्वाभास नहीं हुआ था, कोई डर नहीं था, कोई भयानक कल्पनाएँ नहीं थीं। फिर ब्लेक साहब मुझसे और मेरे जीवन से बिछड़ गए, और यह कितना क्रूर बिछड़ना था। फिर मेरे बच्चे... और अब—ईश्वर उन्हें सलामत रखे—मेरे साथ नवाब मिर्ज़ा हैं। मैं अपने दो बच्चों को लगभग रो-रोकर खो बैठी। मुझे कभी-कभार उनकी खबर मिलती थी, लेकिन मैं देख सकती थी कि उनके दिलों में अपनी माँ के लिए कोई जगह नहीं थी। न ही उनके वर्तमान अभिभावकों ने कभी चाहा कि वे अपनी माँ से मिलें, कम से कम छह महीने में एक बार, या उससे भी अधिक बार।

और मैं? क्या मुझे उनके दर्शन के लिए वैसी ही तड़प, वैसी ही पीड़ादायक बेचैनी है जैसी नवाब मिर्ज़ा के लिए है? अल्लाह उन्हें सलामत रखे। क्या यह इसलिए है कि वे परदेसी हैं, वे ईसाई हैं, वे फिरंगी हैं? लेकिन बल्क साहब तो ये सब थे, फिर भी मुझे वे याद हैं। मुझे वे एक ऐसे घाव की तरह याद हैं जो भर तो गया है, लेकिन जिसका निशान उस दर्द की दुखद याद दिलाता है जो उसने दिया था, और साथ ही उस दिवंगत व्यक्ति की एक मार्मिक निशानी भी है।

मुझे विशेष प्रार्थनाओं, मौन या मौखिक मंत्रों के बारे में कुछ नहीं पता, जिनसे लिखी हुई बात को मिटाया जा सके... पंडित नंद किशोर... जी हाँ, पंडित नंद किशोर! अगर वे अभी शहर में होते तो मैं उनसे मदद मांग सकता था... लेकिन मैंने सुना है कि वे बहुत बीमार और कमजोर हैं, और चल-फिर नहीं सकते। उन्होंने मेरा संदेश स्वीकार किया और मेरी सफलता की सूचना दी, लेकिन उसके बाद से उनसे कोई संपर्क नहीं हुआ। वह फिरंगी कमीना! मेरे नवाब ने फिरंगी की दोस्ती की कीमत पर सम्मान खरीदकर गलत किया। लेकिन वह क्या कर सकता था, आखिर वह जैसा है वैसा ही है? बात सिर्फ मेरी नहीं है; इससे कहीं ज्यादा महत्वपूर्ण है उसकी अपनी बहन, उसका और उसके परिवार का सम्मान। मैं तो एक तुच्छ, तुच्छ चींटी के समान हूँ, जिसकी कोई हैसियत नहीं है, और ये लोग सत्ता के नशे में चूर तूफान की तरह हैं, जो किसी को भी अपने रास्ते में आने नहीं देते।

कौन जाने, शायद जन्नत में रहने वाले नवाब अहमद बख्श खान साहब की विधवा, बड़ी बेगम साहब, या उनके आसपास के प्रभावशाली लोग, मेरे नवाब साहब के पतन के लिए कोई विशेष

प्रार्थना करवा रहे हों, कोई सफेद या काला जादू करवा रहे हों, ताकि उनके गिरने पर वे उठ खड़े हों। मैं जानता हूँ कि लोहारू के किले में रहने वाले लोग मेरे नवाब साहब को नीची जाति का समझते हैं और खुद को शुद्ध जाति का मानते हैं। बड़े नवाब साहब ने जन्नत जाने से पहले उनका हिस्सा बाँट दिया था। काश मेरे नवाब साहब ने अपने पिता की वसीयत को ठुकराया न होता... क्या भाग्य के लिखे को मिटाया या बदला जा सकता है? मुझे लगता है कि अगर यह वर्तमान स्थिति न होती, तो कोई और ऐसी ही स्थिति उत्पन्न हो जाती। अगर मेरे घर को गिराया और तोड़ा जाना तय है; अगर मेरे रक्षक, मेरे उत्तराधिकारी को मुझसे छीन लिया जाना है; अगर मेरे शरीर को अकेले ही कब्र तक जाना है, तो कोई न कोई और चीज़ इसे ज़रूर अंजाम दे देगी। ये बातें विलियम फ्रेजर या लोहारू के किले में रहने वालों की शक्ति से परे हैं। अगर मेरे पास मेरा रूप न होता... लेकिन मेरा रूप कितने दिनों या हफ्तों तक रहता? और अच्छे रूप का होना तो वास्तव में देखने वाले की नज़र का खेल है... असल में, यही असली मुद्दा है और यहीं असली समस्या है। पुरुष? उन्हें खिलौनों के अलावा और क्या चाहिए, जिनसे वे खेल सकें, तोड़-फोड़ सकें, त्याग सकें, भूल सकें और छोड़ सकें? और साथ ही, उन्हें नौकरानियाँ, नौकरानियाँ, घर में उनके आदेशों का पालन करने वाली औरतें भी चाहिए।

लेकिन मेरे पास सहारा लेने के लिए कोई जगह नहीं है। अगर मैं सच्चाई का सामना करूँ, तो मुझे पता चलेगा कि अब मेरा कहीं कोई ठिकाना नहीं है। लेकिन क्या मैं बेवजह कल्पनाओं के लंबे और उलझे हुए जाल में उलझकर मूर्खता नहीं कर रही हूँ, सिर्फ इसलिए कि कुछ हुआ है, जबकि वह घटना शायद बहुत छोटी सी ही होगी? इस समय तो मुझे यह भी नहीं पता कि मेरे नवाब और रेजिडेंट के बीच असल में क्या हुआ था। यह ज़रूरी नहीं कि फ्रेजर साहब से पूरी तरह से अनबन ही हुई हो; यह कोई छोटी बात भी हो सकती है, या कुछ और ही बात हो सकती है।

वह 'अली को पुकारने' की दुआ धीरे-धीरे, रुक-रुक कर, बार-बार पढ़ती थी। कभी-कभी वह कुरान के दो सबसे छोटे अध्यायों को बार-बार पढ़ती थी—जिनका पाठ और पीड़ित व्यक्ति पर फूंक मारना, धर्मपरायण लोगों में बुराई के प्रभावों को दूर करने या उनसे छुटकारा पाने की सबसे शक्तिशाली दुआ मानी जाती थी। उनमें से एक पूरा अध्याय इस प्रकार था:

कहो: मैं भोर के स्वामी की शरण लेता हूँ, सृष्टि की वस्तुओं के उत्पात से, अंधकार के प्रकोप से, गांठों पर फूँक मारने वालों के उत्पात से, ईर्ष्यालु व्यक्ति के उत्पात से, जो ईर्ष्या करता है।

कभी-कभी उसके मन में एक भयानक विचार आता था: शायद फ्रेजर सशस्त्र सैनिकों के साथ उसके घर पर हमला करने और नवाब को अगवा करने के लिए आ रहा हो? जाहिर है, यह एक बेतुकी बात थी, और वैसे भी उसका घर काफी सुरक्षित था।

नवाब के दल में शामिल लोग जा चुके थे, शायद बल्लीमारन के लिए, लेकिन नवाब के जासूस ज़रूर वहाँ मौजूद होंगे और वे समय रहते ही सूचना दे देंगे। वैसे, नवाब के दल के लोगों ने कुछ कहा तो नहीं, लेकिन उनके चेहरे पीले और मुरझाए हुए थे; उनमें से दो के हथियार छीन लिए गए थे। फिर भी, अगर रेजीडेंसी में कुछ अप्रिय घटना घटी होती, तो उनमें से कोई भी एक शब्द भी नहीं बोलता, चाहे उन्हें पीटा जाए और उल्टा लटका दिया जाए। लेकिन वह अप्रिय घटना क्या हो सकती थी? नवाब ने अपने गहने या तलवार नहीं खोई थी, और उन पर कोई ज़ाहिर चोट भी नहीं

थी। उन पर डाकुओं या फ्रेज़र के सिपाहियों द्वारा हमला होना मुमकिन ही नहीं था।
लेकिन क्या यह संभव नहीं था कि फ्रेजर ने नवाब के सामने जहांगीराह के बारे में कुछ अनुचित शब्द कहे हों? आखिर, वह जहांगीराह के कारण ही वहाँ गया था; और फ्रेजर अपने भाड़े के सैनिकों से उस पर हमला करवा सकता था। बेशक, यह संभव है, लेकिन इसका यह मतलब नहीं है कि फ्रेजर के आदमी या कंपनी के सिपाही मेरे घर पर हमला कर देंगे। और अगर ऐसा होता भी है, तो क्या कोई यह सोच सकता है कि हम नवाब को, या खुद को, आसानी से मर जाने देंगे? मुझे जान लेना नहीं आता, लेकिन जान देना आता है। और मेरी महिला रक्षक न केवल तलवार और पिस्तौल से, बल्कि अपने हाथों, पैरों और दिमाग से भी लड़ना जानती हैं।
... नवाब मिर्ज़ा? क्या उन्हें यहाँ से हटाना ही समझदारी नहीं होगी? लेकिन कहाँ? मैं उन्हें मंझली बाजी के यहाँ भेज सकती हूँ, लेकिन उनकी सुरक्षा कौन करेगा? और कौन जाने, बाहर की गलियाँ सुरक्षित न हों... मैं एक महिला गार्ड और एक वरिष्ठ नौकरानी को सुरक्षा के लिए तैनात कर सकती हूँ, लेकिन इससे यहाँ सुरक्षा व्यवस्था कमज़ोर हो जाएगी। हे भगवान, क्या मैं मूर्खता नहीं कर रही हूँ, उन्हें एक सुरक्षित घर से अनजान लोगों के साथ सड़कों और बाज़ारों में भटकने के लिए भेजने के बारे में सोचकर? और जब नवाब को होश आएगा और वे अपने बेटे के बारे में पूछेंगे, तो मैं उन्हें क्या जवाब दूँगी? अल्लाह मेरे उत्तराधिकारी, मेरे वारिस, मेरे रक्षक को जल्द ही बेहतर करे और उन्हें आगे की विपत्तियों से बचाए। अगर वे यहीं रहें तो सब कुछ संभव है... यहाँ तक कि वे चीज़ें भी हो जाएँगी जो अभी नहीं हो रही हैं...
उसे अपने आखिरी विचार का छिपा हुआ अर्थ समझ में आ गया और उसका चेहरा लाल हो गया। उसने शम्सुद्दीन अहमद को प्रेम भरी निगाहों से देखा। वह अब अपनी बाईं ओर लेटे हुए थे, एक हाथ तकिए पर फैला हुआ था, मानो कुछ खोज रहे हों। वज़ीर ने एक मुलायम कपड़े से फैले हुए हाथ की हथेली को धीरे से सहलाना शुरू किया, अपने परेशान करने वाले विचारों को किनारे रखकर फिर से 'अली को पुकारने' की दुआ पढ़ने लगी।
किसी को नहीं पता था कि रात कितनी देर में गुज़री; शायद वज़ीर भी सो गया था। राहत अफ़ज़ा, जो नवाब के पलंग से चिपकी हुई पैगंबर पर अल्लाह की दुआएँ पढ़ रही थी, निश्चित रूप से वहीं लेटकर सो गई थी। हबीबा और कुरान पढ़ने वाली अन्य महिलाएं अब अपनी नमाज़ की चटाइयों पर भ्रूण की मुद्रा में सो रही थीं। कुंवर रानी, वनिसी और महिला पहरेदार बिल्कुल नहीं सोई थीं।
सुनहरी मस्जिद और आसपास की अन्य मस्जिदों से मुअज़्ज़िन की आवाज़ सुनकर वज़ीर अचानक जाग उठा। जैन मंदिर, गौरी शंकर मंदिर और सिख गुरुद्वारा घंटियों, शंखों, ढोल और झांझों की आवाज़ से गूंजने लगे। घर में धीरे-धीरे रोशनी फैल रही थी। आंगन में अमदावाद, स्टोनचैट और भूरे रॉबिन चहचहाने लगे। आंगन की दीवारों पर बैठी सतर्क कबूतर और फाख्ता नीचे उतरने से पहले अपनी चोंच से गुटरगू करने लगे। इन पंछियों के आने से पहले ही, आंगन में खुली रसोई के खुलने से गौरैया, हूपो, मैना, बब्बलर और कबूतर सतर्क हो गए थे। उनमें से अधिकांश चुपचाप उतर गए, कुछ चहचहा रहे थे, खासकर बब्बलर, एक बड़ा समूह बनाकर। कुछ कौवे और कुछ भूरे चील आंगन के ऊपर आकाश में चक्कर लगाने लगे।

इतने सारे प्यारे और जीवंत प्राणियों की उपस्थिति से, रात भर जलती हुई और बुझी न गई बत्तियाँ टिमटिमाने लगीं और फीकी पड़ने लगीं, लेकिन उनकी फीकी रोशनी उदासी भरी नहीं लग रही थी। वज़ीर को, और वास्तव में उस घर में रहने वाले सभी लोगों को, ऐसा लग रहा था कि पिछली रात उन पर मंडरा रहा बुरा साया अब छंट गया है।

घर में मानो नई जान आ गई थी, क्योंकि नीचे का बाज़ार पानी ढोने वालों, फेरीवालों, कबाब और तीखे मसालों से भरे गरमागरम पैनकेक बेचने वालों और मक्खन व गाढ़ी मलाई बेचने वालों की आवाज़ों से जाग उठा था। ऐसा लग रहा था मानो पूरा शहर जाग उठा हो। सआदत खान की नहर पर हवाएं चलने लगीं और फूलों से लदी झाड़ियों की छाया पानी पर लहराने लगी। उस समय शहर की हवा में एक सुकून भरी संतुष्टि, एक ऊर्जा और एक ऐसी शक्ति का संचार हो रहा था, मानो शहर अभी भी भारत और दक्कन के सम्राट मुहीउद्दीन औरंगजेब के शासन में हो, और उनका भव्य दल दक्कन के औरंगाबाद से अभी-अभी आया हो, और विशाल दिल्ली गेट के नीचे से गुज़रकर अब इस शुभ हवेली की सुंदरता और चमक को और बढ़ाने वाला हो। यह शांत प्रकाश, यह शांति, यह मौन सुख, यह चहल-पहल और चमक, सब कुछ महाबली की छाया के कारण था जो पूरी दुनिया पर छाई हुई थी। मराठा, दुर्रानी और अब्दाली के हमलावर पठान, फिरंगी: दूर कहीं भी उनका कोई अँधेरा सा भी निशान नहीं था। दिल्ली आज भी भारत का हृदय और दुनिया की जान थी, जैसा कि मिर्ज़ा ग़ालिब ने एक फ़ारसी कविता में कहा था:

मैंने पूछा: अब मुझे बताओ दिल्ली क्या है? मेरे गाइड ने कहा: यह आत्मा है, और संसार उसका शरीर है।

शम्सुद्दीन अहमद खान जब जागे तो उन्होंने देखा कि वज़ीर खानम उनके ऊपर झुकी हुई हैं और कोमल, नम रुमाल से उनका चेहरा धीरे-धीरे पोंछ रही हैं। उनके दूसरे हाथ में गुलाब जल से भरी एक छोटी चमड़े की बोतल थी। कुछ ही क्षण पहले उनकी बड़ी-बड़ी आँखें चिंता से घिरी हुई थीं; अब यद्यपि उनके चेहरे पर थकावट झलक रही थी, शम्सुद्दीन अहमद को आँखें खोलते देख उनके चेहरे पर खुशी की एक हल्की सी चमक आ गई।

मैं सलाम करता हूँ। अल्लाह का हज़ार शुक्र है कि आखिरकार तुमने अपनी आँखें खोल दीं।

नवाब ने एक छोटी सी जम्हाई ली और उठ बैठे। राहत अफजा ने झट से उनकी पीठ पर दो मुलायम तकिए रखे, झुककर सलाम किया और वहां से चली गईं।

'क्यों?' उसने पूछा। 'क्या चिंता की कोई बात थी?'

वज़ीर खानम थोड़ी अनिश्चितता में डूब गया: क्या नवाब रात की घटनाओं को पूरी तरह से भूल गया था, या वह ऐसा दिखाना चाहता था जैसे कुछ हुआ ही न हो।

'सर, नहीं, वास्तव में कुछ खास नहीं है। बस जब आप अंदर आए तो आप कुछ थके हुए लग रहे थे। आपने रात का खाना भी नहीं खाया और तुरंत सो गए।'

'जी हाँ... जी हाँ...' शम्सुद्दीन एक पल रुका, फिर बोला, 'जी हाँ, कल मैं काफी थका हुआ महसूस कर रहा था।' उसने अपनी मनमोहक मुस्कान बिखेरी। 'इसीलिए मैं सीधे यहाँ आया हूँ, क्योंकि यहीं मेरी आत्मा को शांति मिलेगी।'

"जाओ, नवाब साहब, आप और आपके ये अतिशयोक्तिपूर्ण शब्द! आपने मुझे अंदर तक

झकझोर दिया। आप आए और सीधे बिस्तर पर लेट गए... हबीबा ने कई बार खाने के बारे में पूछा, लेकिन आपने एक शब्द भी नहीं बोला।"
'ठीक है, खाना छोड़ो। मैं अब भरपेट नाश्ता करूँगा; तुम्हारी सारी शिकायतें गायब हो जाएँगी। और हाँ, हमारे नवाब मिर्ज़ा कहाँ हैं? वो तो सो ही गए होंगे?'
यह याद रखना चाहिए कि नवाब मिर्जा के बारे में बात करते समय सभी लोग द्वितीय पुरुष बहुवचन या तृतीय पुरुष बहुवचन का प्रयोग करते रहे।

'सर, मैं उसे तुरंत जगा दूँगा। आपको देखकर वह फूल की तरह खिल उठेगा।'
'नहीं, उसे अपने तय समय तक सोने दो।' नवाब ने वज़ीर को प्यार से देखते हुए कहा, 'और तुम भी। तुम्हें अब सोना चाहिए। अभी काफी सुबह है, और तुम कुछ थके हुए लग रहे हो। दरअसल, मेरे उठने का समय हो गया है, वरना मैं...'
वज़ीर ने तुरंत बीच में टोकते हुए कहा, 'लेकिन मैं तो उठ चुका हूँ। अब मुझे नींद नहीं आने वाली। बस आप अपने पैरों और पीठ पर थपथपाहट और मालिश करवा लीजिए, फिर नहा लीजिए। इस बीच मैं नाश्ते का इंतज़ाम कर देता हूँ।'
नवाब ने अपनी शॉल का किनारा पकड़ने की कोशिश की। 'अरे, सुनो, बस सुनो!' लेकिन वज़ीर शर्मीली मुस्कान लिए वहाँ से चली गई।
नवाब को अपने शरीर पर थपथपाहट और मालिश इतनी अच्छी लगी कि वह सो गया, एक सुखद और हल्के नशे वाली नींद। जब वह दूसरी बार जागा, तो सूरज आसमान में काफी ऊपर था; नीचे, बाज़ार में चहल-पहल पूरी तरह से थी, जिसमें जानी-पहचानी आवाज़ें, बातचीत और फेरीवालों की आवाजें गूंज रही थीं। शम्सुद्दीन अहमद ने खुद को काफी हद तक तरोताज़ा पाया: पिछली रात की पीड़ादायक गांठें लगभग खुल चुकी थीं, और उसका दिल अपेक्षाकृत शांत और स्थिर था।
नहाने, नाश्ता करने और कपड़े पहनने के बाद, शम्सुद्दीन अहमद को नवाब मिर्ज़ा के साथ खेलने का भरपूर समय मिल गया, जिसकी प्यारी-प्यारी बातें सुनकर उनका दिल खुश हो गया। दरअसल, नवाब मिर्ज़ा अब छोटे-छोटे वाक्य और कविताएँ भी बोल सकते थे, हालाँकि वे अभी भी कठिन व्यंजन और कुछ संयोजनात्मक वाक्यांशों का उच्चारण नहीं कर पाते थे, इसलिए उनकी बातें और भी आनंददायक थीं। वज़ीर बार-बार नवाब से जहाँगीर के लिए उनकी योजनाओं के बारे में पूछने का सोचती रही। लेकिन नवाब लगातार मज़ाक और हँसी-मज़ाक करते रहे और कभी भी उनके साथ अकेले नहीं रहते थे ताकि वज़ीर उनसे खुलकर बात कर सकें।
वज़ीर ने हाल ही में नवाब मिर्ज़ा को महान ख्यातिप्राप्त हिंदी कवि मियां मुशफ़ी की कुछ पंक्तियाँ सुनाना सिखाया था। शम्सुद्दीन अहमद खान उस बच्चे से बार-बार उन पंक्तियों को पढ़वाते और उसे बार-बार इनाम भी देते; कभी-कभी वे मिठाई या फल मंगवाकर वहाँ मौजूद लोगों में बाँट देते थे। ये पंक्तियाँ प्रेम और प्यार के बारे में थीं, लेकिन उनकी कोमल चंचलता और कविता के भाव में व्याप्त उदासी का हल्का सा साया नवाब मिर्ज़ा के मासूम चेहरे और आवाज़ के साथ बेहद मेल खाता था और श्रोताओं में एक अनोखा आनंद उत्पन्न करता था।

मुसीबतों और आंसुओं से घिरी हुई, मैं उसके रास्ते में दिन-रात ऐसे ही गुजारती हूँ जैसे बारिश के मौसम में यात्री कीचड़ भरे, फिसलन भरे रास्तों पर चलते हैं।

मैंने तलवार के साये में अपना जीवन जीया, ठीक उसी तरह जैसे मोमबत्ती का सिर सुबह होने से पहले कई बार बुझाने वाले द्वारा काट दिया जाता है।

नवाब मिर्ज़ा ने हर शब्द का उच्चारण बिल्कुल सही किया, सभी विरामों का पूर्ण ध्यान रखा और चारों पंक्तियाँ छंदों का पूरा ख्याल रखते हुए बोलीं; उनकी आवाज़ कभी-कभार रुकती थी, लेकिन बचकानी बड़बड़ाहट से मुक्त थी। तीन साल के उस नन्हे बच्चे की इस प्रतिभा ने शम्सुद्दीन अहमद खान और वज़ीर खानम को चांदनी रात की तरह आनंदित कर दिया। हबीब-उन निसा बार-बार बच्चे से दुर्भाग्य और विपत्ति को दूर करने के लिए निर्धारित इशारे करती थीं। अन्य दासियाँ, उसे बुरी नज़र से बचाने के लिए, उसके सिर के चारों ओर सरसों के तेल और काली दाल की कुछ बूँदें घुमातीं और फिर उन्हें आग में फेंक देतीं। कभी-कभी वे अपने ऊपरी दुपट्टे अपने हाथों पर फैलाकर अल्लाह से अपने बच्चे मियां को बुरी नज़र से बचाने और उसे लंबी आयु प्रदान करने की प्रार्थना करतीं।

इन सबमें पूरी सुबह बीत गई, और दोपहर के भोजन के बाद भी शम्सुद्दीन अहमद खान अपना मनोरंजन जारी रखे रहे, वज़ीर और नवाब मिर्ज़ा को अपनी नज़रों से ओझल नहीं होने दिया। दोपहर ढलते-ढलते नवाब मिर्ज़ा अपनी दासी की बाहों में सो गए, पूरी तरह थके हुए लेकिन संतुष्ट, और नौकरों का दोपहर का भोजन भी समाप्त हो चुका था। अब शम्सुद्दीन अहमद को एकांत चाहिए था। वज़ीर को शयनकक्ष में ले जाकर उन्होंने दरवाज़ा बंद कर लिया। वज़ीर बार-बार विरोध करते रहे: दिन दहाड़े इस तरह के इश्कबाज़ी और मौज-मस्ती का समय नहीं है; लेकिन नवाब ने उनकी बात पर ज़रा भी ध्यान नहीं दिया। वास्तव में, उस समय वज़ीर को उनके इस व्यवहार से कोई आपत्ति नहीं थी।

शम्सुद्दीन अहमद ने उसे अपनी बाहों में भर लिया और उसके चेहरे, होंठों, आंखों और स्तनों पर गर्मजोशी भरे चुंबनों की बौछार कर दी, जिससे उसका पूरा अस्तित्व चुंबनों की बारिश में विलीन हो गया और शम्सुद्दीन अहमद की हर नस और धमनी में समा गया।

काफी देर बाद, जब शाम की परछाइयाँ दरवाजों और खिड़कियों की दरारों से झाँकने लगीं और शयनकक्ष लगभग अँधेरा हो गया, तब शम्सुद्दीन अहमद की नींद खुली। वज़ीर का सिर उनकी छाती पर था और उसका एक हाथ उनकी बगल में दबा हुआ था। शम्सुद्दीन अहमद के सोते रहने के पूरे समय में, वह न सोई थी, न हिली थी, न ही अपने हाथ पर से दबाव कम करने की कोशिश की थी। उसकी आँखें उनके कंधे, छाती और गर्दन की कोमल और सुडौल गर्माहट में डूबी हुई थीं। वह पूरी तरह होश में थी, लेकिन फिर भी उसे हल्का नशा सा महसूस हो रहा था। जब शम्सुद्दीन अहमद की नींद खुली, तो उन्होंने उसका चेहरा छुआ और आश्चर्य से कहा, 'अरे, तुम तो पूरी रात जागती रही!' वह उठ बैठे। 'मुझे बहुत अफ़सोस है। तुम्हारा हाथ मेरे नीचे था। भाई! बहुत दर्द हुआ होगा। तुमने कुछ कहा क्यों नहीं?'

मुझे क्या कहना चाहिए था? मैं तो पूरी तरह सहज महसूस कर रहा था।

‘भाई! आप तो वाकई कमाल के हैं! मैं तो सचमुच बहुत खुश हो गया था... लेकिन आप थोड़ा सा प्रोत्साहन और प्रोत्साहन दे सकते थे।’
वज़ीर ने शम्सुद्दीन अहमद के गले में अपनी बाहें डाल दीं और अपना चेहरा थोड़ा सा दूसरी तरफ़ करके, शरमाते हुए लेकिन दृढ़ स्वर में बोली, 'क्या आपने नहीं सुना?' उसने एक फ़ारसी कविता पढ़ी, लेकिन बातचीत के लहजे में:
वह रात कितनी सुखद होगी जब मैं तुम्हें भोर होने तक अपनी बाहों में थामे रखूंगा; और तुम्हारी बगल में दबी हुई मेरी बाहें सो जाएंगी।
शम्सुद्दीन अहमद खुशी से झूमते हुए अपनी जगह से उछल पड़े और चिल्लाए, 'ओह! हे क्रूर, अद्भुत महिला! यह छंद मेरे द्वारा बोले जाने के योग्य था, और मेरे होंठ ही इसके लिए सबसे उपयुक्त थे! भाई वल्लाह! ऐसा लगता है कि उन होंठों को चूम लूँ जिन्होंने ये शब्द कहे!'
पहले की तरह अपना चेहरा दूसरी तरफ रखते हुए वज़ीर ने जवाब दिया, "लेकिन ताली एक हाथ से नहीं बजती।" उसकी आवाज़ में शर्म या झिझक का कोई निशान नहीं था, मानो वह कोई फैसला सुना रही हो।
‘तुम अपना दर्जा कम कर लेते हो। मैं ही खोजी हूँ। तुम ही खोजे जाने वाले हो।’
अब उसने अपना चेहरा उसकी ओर घुमाया और अपने बिखरे हुए कपड़ों को समेटा। ‘खोजने वाला और खोजे जाने वाला, दोनों ही समान दर्जे के क्यों न हों? मुझे खोजे जाने वाला बनने के लिए दृढ़ संकल्पित क्यों होना चाहिए? क्या ऐसा नहीं है कि कभी-कभी खोजे जाने वाला भी खोजने वाला बनने के लिए दृढ़ संकल्पित हो सकता है?’
‘ऐसा कैसे?’
वज़ीर पलंग से उठी, अपने हाथों को अपनी छाती पर रखा, अपना सिर झुकाया और फ़ारसी की यह आयत पढ़ी:

खुशियों भरा समय जब खूबसूरत लोग शहर में उत्पात मचाते हैं; तुम मुझे पकड़ लेते हो और कहते हो: यह मेरा कैदी है!
श्लोक समाप्त करते ही उनकी आवाज़ थोड़ी भर्रा गई। उन्होंने अपने अंगूठे और तर्जनी से बड़ी कोमलता से अपने आँसू पोंछे, मानो पसीने की नमी पोंछ रही हों। शम्सुद्दीन अहमद कुछ कहना चाहते थे, लेकिन वज़ीर ने खुद को थोड़ा संभाला और आगे कहा, 'अब क्या तुम्हें समझ नहीं आ रहा? जिसकी तलाश है वही तलाशने वाला है। कैदी वही है जो कैदी बनाता है।' वह धीरे से हँसीं, लेकिन उनके शब्दों पर आँसुओं की कुछ बूँदें पड़ गईं।
शम्सुद्दीन अहमद का पूरा शरीर कांप रहा था। वह वज़ीर द्वारा उद्धृत शाहिदी क़ुमी की आयत को जानता था, लेकिन उसने कभी उस परिप्रेक्ष्य से उस पर विचार नहीं किया था। 'वज़ीर खानम, मैं हमेशा आपके सामने असहाय महसूस करता था। लेकिन मुझे लगता था कि यह मेरी ही बेबसी थी, क्योंकि खोज तो मैं ही कर रहा था।'
'माननीय महोदय, आपकी लाचारी किसी न किसी शक्ति से ही उत्पन्न हुई होगी। लेकिन शायद मैं भी लाचार था।'

‘अब शायद ऐसा है कि न तो मैं तुम्हें रिहा कर सकता हूँ, न ही तुम मुझे रिहा कर सकते हो…’
शम्सुद्दीन अहमद की आवाज में कंपन थी।
इससे पहले कि वह अपनी बात पूरी कर पाते, वज़ीर खानम ने एक हल्की सी आह भरी और कहा, "और अब खुद को मुक्त करना आपके बस में नहीं है। मैं भी अपने बंधनों से मुक्त नहीं हो सकता, और शायद आप भी नहीं..."
नहीं, नहीं। यह “शायद” की बात नहीं है। यह तो बिल्कुल निर्विवाद है, इसमें कोई संदेह नहीं। बहू खानम, मैं चाहकर भी आपसे अलग नहीं हो सकती।
वज़ीर ने प्रार्थना समाप्त करने के बाद चेहरे पर हाथ फेरा। वह नवाब के पास गई और ऐसा इशारा किया मानो उसने उसकी मुसीबतों को खुद पर ले लिया हो। फिर दरवाजे की ओर बढ़ते हुए उसने कहा, 'अब मोमबत्तियाँ जला दीजिए; यहाँ बहुत अंधेरा है।'
शम्सुद्दीन अहमद ने कहा, 'मोमबत्तियां जलने दो। अंधेरे में तुम्हारे चेहरे की रोशनी आंखों को सुकून देती है।'
'कृपया। आप वाकई हास्यप्रद बातों के उस्ताद हैं! क्या यह अन्याय नहीं है कि मुझे आपका तेजस्वी चेहरा न दिखे और आपको मेरे चेहरे पर भोर की गुलाबी आभा दिखे, जबकि मेरा रंग शाम की तरह गहरा है?'
‘जो भी हो। लेकिन कृपया आइए, मेरे पास बैठिए।’ उसका चेहरा अचानक उदास हो गया। वज़ीर का दिल एक पल के लिए रुक गया, लेकिन उसने अच्छे हास्य के साथ कहा, ‘सुनना ही आज्ञा मानना है। कृपया आदेश दीजिए।’
वह दरवाजे से वापस आई और शम्सुद्दीन अहमद के पास बिस्तर पर बैठ गई, जिनका चेहरा अब भी उदासी से भरा हुआ था। शायद यह कुछ भी नहीं था, बस रात की छायाएँ थीं जो छा रही थीं; या क्या यह बीती रात का असर था और उसके भयानक कदम अब भी मेरे दरवाजे पर थे? वज़ीर के दिल में डर की एक लहर दौड़ गई, लेकिन उसने कुछ नहीं कहा, शम्सुद्दीन अहमद के चेहरे को प्यार भरी निगाहों से देखती रही। उसने अपना हाथ उसके चारों ओर लपेट लिया और उसे इतना करीब खींच लिया कि वे लगभग एक-दूसरे को छू रहे थे, सचमुच एक-दूसरे की बाहों में समाए हुए थे।
‘Bahu Khanam.’
‘महोदय, कृपया आदेश दीजिए।’
मैंने कुछ फैसले लिए हैं और मैं उन्हें आप लोगों को भी बताना चाहता हूं।
'बहुत अच्छा, महोदय। मैं अपनी क्षमता के अनुसार हर संभव सेवा प्रदान करने के लिए तैयार हूं।'
‘आपकी सेवा…’ वह वाक्य पूरा किए बिना ही रुक गए, फिर थोड़ी देर बाद बोले। ‘अभी आपको मेरी दलीलें ध्यान से सुननी होंगी और आने वाले दिनों में नवाब मिर्जा का पूरा ख्याल रखना होगा।’
वज़ीर अचंभित रह गया। 'मुझे समझ नहीं आ रहा। महाराज का क्या आदेश है?'
“कुछ नहीं। बस सुनिए। मैं आज रात बल्लीमारन में रुकूंगा। कल सुबह बहुत जल्दी फिरोजपुर के लिए रवाना हो जाऊंगा। जहांगीराह के बारे में आपने जो कहा वह बिल्कुल सही और सटीक है।

मेरे मन में उससे शादी का प्रस्ताव आया है। मैं इसकी और जांच करवाऊंगा और अगर संभव हुआ तो बारिश खत्म होने के तुरंत बाद फिरोजपुर से उसकी शादी और विदाई की रस्में पूरी करूंगा, वो भी रीति-रिवाजों के अनुसार।"

'माननीय महोदय, आपके शब्द अत्यंत उपयुक्त हैं। अल्लाह आपकी योजनाओं को सफलता और समृद्धि प्रदान करे और आपके सभी कार्य उत्कृष्टता और शालीनता के साथ पूर्ण हों।'

'महोदया, जैसा अल्लाह चाहेगा। और उसके बाद... हम वही देखेंगे जो अल्लाह हमें दिखाएगा।'

वज़ीर के मन में फिर से उलझन छा गई। 'अरे, मुझे समझ नहीं आ रहा। क्या महाराज शादी और दुल्हन की विदाई के बाद दिल्ली लौटेंगे? मुझे कब आपके दर्शन करने का सौभाग्य मिलेगा?'

शम्सुद्दीन अहमद कुछ देर तक चुप रहे; वज़ीर में उन्हें चुप कराने या अपने सवाल का जवाब पूछने की हिम्मत नहीं हुई। डरते-डरते उसने नवाब की ओर देखा। कमरा लगभग पूरी तरह अंधेरा था। दरवाजों और खिड़कियों की छोटी-छोटी दरारों से छनकर आती हल्की-हल्की हरी रोशनी से उनका चेहरा पीला और अस्वस्थ सा लग रहा था। उनके गाल पिचके हुए लग रहे थे; उनकी हड्डियाँ पहले से कहीं ज़्यादा उभरी हुई लग रही थीं; सीधी और सुडौल नाक लंबी और पतली लग रही थी। उनकी गर्दन अभी भी सीधी थी, लेकिन तनावग्रस्त लग रही थी, जिससे दुबले-पतले चेहरे पर कुछ नसें उभरी हुई दिख रही थीं। वज़ीर ने चुपके से नवाब के शरीर को देखा। हल्के कंबल से ढके होने के कारण उनके पैर दिखाई नहीं दे रहे थे, लेकिन उनके हाथ कंबल के ऊपर से दिख रहे थे: उनकी मुट्ठियाँ बंधी हुई थीं।

वज़ीर को ठंडे पसीने आने लगे। हिंदी कवि मोमिन की एक पंक्ति उसके दिमाग में कौंध गई: ये कैसी हवा है जो मेरे दिल में डर की सिहरन पैदा कर रही है? क्या वो रात फिर आ गई है...? वह शम्सुद्दीन अहमद को कंधे से पकड़कर झकझोरना चाहती थी, लेकिन फिर से उसका साहस जवाब दे गया। क्या मैं बाहर जाकर किसी बाहरी गार्ड को बुलाऊं? नहीं, ये तो और भी गुस्ताखी होगी। अनायास ही उसने अपना हाथ शम्सुद्दीन अहमद की गर्दन में डाल दिया और अपना गाल उनके गाल से छू लिया। जाहिर है, उसके स्पर्श की गर्माहट से कहीं ज़्यादा, उसके स्पर्श की गर्माहट ने शम्सुद्दीन अहमद के शरीर का तनाव कम कर दिया। उन्होंने प्यार से वज़ीर की ठोड़ी ऊपर उठाई, मुस्कुराए और बोले, 'इतनी देर चुप रहने के लिए माफ़ करना... खैर, अब मैं सब कुछ साफ़ कर देता हूँ। जहाँगीर में अपना फर्ज अदा कर चुका हूँ, अब मैं फ्रेज़र से हिसाब चुकता कर लूँगा।'

वज़ीर ने आवेग में आकर बीच में टोकने की कोशिश की, लेकिन नवाब ने उसका मुंह हाथ से बंद करते हुए उसे चुप करा दिया। 'कृपया बस सुनिए। बीच में मत टोकिए। मैं अभी यह नहीं कह सकता कि इस मामले का निपटारा कैसे होगा। लेकिन उसे उसकी हद से ज़्यादा अकड़ और बदतमीज़ी के लिए ज़रूर सज़ा मिलनी चाहिए।'

लेकिन... लेकिन महाराज उसे क्या दंड देंगे? और क्या यह कर्तव्य केवल महाराज पर ही आबंटित है? आख़िरकार, अन्य कुलीन, अन्य सरदार भी तो हैं; और फिर महाराज हैं, ईश्वर उनकी रक्षा करें।

उसने नाक सिकोड़ते हुए कहा, 'खैर, मेरा इन सबसे वास्ता रहा है। हर कोई सिर्फ अपने आराम,

अपने पलंग, अपने खान-पान, अपनी वासनाओं और वासनाओं में ही रुचि रखता है। हर कोई जीवन को और अपनी संपत्ति को अपनी ही नजरों से देखता है। हमें दूसरों से कोई मतलब नहीं रखना चाहिए।'

'तो फिर मैं तुम्हें कब देख पाऊंगी?' वह विलाप करते हुए बोली। उसकी आँखों से बड़े-बड़े आँसू तेजी से उसके चेहरे पर टपकने लगे, लेकिन उसे इसका एहसास नहीं था।

मुझे नहीं पता। हम तभी मिलेंगे जब बिछड़े हुए को जोड़ने वाला हमें मिलाएगा। मुझे यह भी नहीं पता कि मेरी महत्वाकांक्षा पूरी होगी या नहीं। कृपया धैर्य रखें। दुनिया शायद हमारी इच्छा के अनुसार न चले, लेकिन हम खुद को अपनी इच्छा के अनुसार चला सकते हैं।

शम्सुद्दीन अहमद उठे, अपने कपड़े समेटे, अपना लबादा ओढ़ा और दरवाज़ा थोड़ा सा खोलकर धीरे से ताली बजाई। जब हबीबा अंदर आईं, तो उन्होंने शयनकक्ष में दीपक जलाने का आदेश दिया; घर के बाकी हिस्सों में पहले से ही बत्तियाँ जल रही थीं, भोजन परोसने की तैयारियाँ चल रही थीं। शम्सुद्दीन अहमद ने नवाब मिर्ज़ा को बुलवाया। उन्होंने वज़ीर और नवाब मिर्ज़ा के साथ फिर से काफी समय खेल-खेल में और हंसी-मज़ाक में बिताया।

अब नवाब मिर्ज़ा के सोने का समय हो गया था और रात की नमाज़ का समय भी नज़दीक था। शम्सुद्दीन अहमद ने नवाब मिर्ज़ा को अपनी बाहों में उठाया, उन्हें खूब चूमा, वज़ीर के सिर पर प्यार से हाथ फेरा और 'सर्वशक्तिमान की शरण में' का आशीर्वाद देते हुए सीढ़ियों से नीचे उतर गए। उनकी पीठ सीधी थी और उनके कदम दृढ़ और सधे हुए थे। जैसे ही नवाब ने उनसे पीठ फेरी, वज़ीर ने उनकी नमाज़ की चटाई बिछाई और उनके लबादे का किनारा उनकी बाहों पर फैलाकर, वे नम आँखों, कांपते हाथों और दबी हुई आवाज़ में काफी देर तक नमाज़ पढ़ती रहीं। किसी को पता नहीं था और न ही किसी ने हिम्मत की कि वे पूछें कि वे किस लिए नमाज़ पढ़ रही थीं। न ही कोई उन्हें यह याद दिलाने के लिए अपने होंठ खोल सका कि खाना ठंडा हो रहा था।

पुस्तक 5

फ़िरोज़पुर झिरका में, नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान अकबरबाद से अपनी बहन जहांगीर बेगम का हाथ मांगने का प्रस्ताव स्वीकार कर लेते हैं; लेकिन उन्हें एक और मोर्चे पर चौंकाने वाली खबर मिलती है।

फिरोजपुर झिरका की तीन दिन की यात्रा बिना किसी घटना के सुखद और शांतिपूर्ण रही। बरसात के मौसम में सभी सड़कें कीचड़ से भर गई थीं और सभी सूखे जलमार्ग उफान पर थे, लेकिन नवाब के हाथी और ऊंट अच्छी तरह से प्रशिक्षित थे। तंबू और अन्य सामान का एक सेट उनके काफिले से आगे चला गया, जबकि एक सेट नवाब के साथ था। इस प्रकार, यदि निर्धारित चरण से पहले कहीं डेरा डालना आवश्यक हो जाता, तो नवाब के लोग किसी उपयुक्त स्थान पर तंबू और मंडप लगा सकते थे। आगे भेजे गए सामान की सुरक्षा के लिए घोड़ों पर सवार कैराबीनियर और ऊंटों पर सवार तोपची तैनात थे। प्रत्येक ऊंट पर ज़ंबुरक नामक दो पोर्टेबल तोपें थीं, जिनके गोले और बारूद तिरपाल के नीचे सुरक्षित रूप से रखे गए थे। ज़ंबुरक तोपची के दोनों ओर एक-एक करके लगाए गए थे; तोपों को इस प्रकार डिज़ाइन किया गया था कि एक ही तोपची उन्हें एक साथ चला सके। एक छोटे से युद्ध क्षेत्र में रक्षा का इससे बेहतर हथियार कोई नहीं था। ज़म्बुरकची जनजाति के अधिकांश लोग दक्कन क्षेत्र से थे और दुश्मन की गोलीबारी का सामना करने में अपनी दृढ़ता के लिए प्रसिद्ध थे।

दिलावर-उल मुल्क अहमद बख्श खान के समय से पहले, फिरोजपुर में कोई उचित किला नहीं था; यहाँ केवल एक गढ़ी थी—अर्थात् एक किलेबंद निवास—जिसका उपयोग नवाब नजीब-उद-दौला के शासनकाल के अंत तक शाही फौजदार द्वारा किया जाता था। 1770 में नजीब-उद-दौला की मृत्यु के बाद इस क्षेत्र पर दिल्ली का अधिकार कमज़ोर पड़ गया, इतना कि जब 1803 में शाह आलम बहादुर शाह द्वितीय ने लॉर्ड लेक को पूर्णाधिकार प्राप्त प्रतिनिधि नियुक्त किया, तो हांसी-हिसार तक का एक विशाल क्षेत्र अंग्रेजों के अधीन आ गया। फिरोजपुर झिरका का राजनीतिक और सैन्य महत्व उस समय धूमिल हो गया जब हांसी में एक अंग्रेज राजस्व कलेक्टर और मजिस्ट्रेट का मुख्यालय स्थापित किया गया, और चूंकि रेजिडेंट उस विशाल क्षेत्र का अंग्रेज आयुक्त भी था जिसे मोटे तौर पर दिल्ली कहा जाता था, इसलिए अंग्रेजों का शासन दिल्ली के उत्तर-पश्चिम में हांसी-हिसार तक के पूरे क्षेत्र में व्याप्त था।

फिरोजपुर की स्वतंत्र सरदारी जीतने के बाद अहमद बख्श खान ने एक वर्ष के भीतर गढ़ी का जीर्णोद्धार, विस्तार और सुदृढ़ीकरण करके उसे एक उचित किले में बदल दिया। इमारत के पुराने हिस्से में उनका कार्यालय, बैठक कक्ष, अदालत कक्ष और पुरुषों के सोने का स्थान था। दो नई हवेलियाँ पुरानी संरचना से सटी हुई और उससे अविभाज्य रूप से जुड़ी हुई थीं, जिन्हें हरम सरा —निषिद्ध क्षेत्र—के रूप में नामित किया गया था, जो किले की महिलाओं के लिए ही आरक्षित था। एक सुरक्षित क्षेत्र, जिसे कुचा-ए सलामत ('सुरक्षित गली') कहा जाता था, नए किले के दोनों हिस्सों को जोड़ता और अलग करता था।

एक हल्की किलेबंदी वाली चारदीवारी से घिरा हुआ एक पार्क और बगीचा पूरे निर्माण को घेरे हुए था। इसके अतिरिक्त, एक अधिक सुरक्षित आंतरिक बगीचा भी था, जो किले के पीछे के दो हिस्सों को जोड़ता था। एक नहर पूरे घेरे के चारों ओर घूमती हुई किले और उसके सभी

निवासियों को पानी उपलब्ध कराती थी। परिसर के अंदर औपचारिक मंडपों के साथ-साथ कई फव्वारे भी स्थापित थे। पार्क और बगीचे को सम्राट जहांगीर द्वारा 1620 के दशक में सरहिंद के पास निर्मित बगीचे की तर्ज पर डिजाइन किया गया था; इस बगीचे की मुख्य विशेषता यह थी कि यह एक सजावटी पार्क होने के साथ-साथ एक फलों का बगीचा भी था।

अहमद बख्श खान के शासक बनने के बाद फिरोजपुर झिरका समृद्धि और जनसंख्या में वृद्धि करने लगा। बहुत जल्द ही, यह एक छोटा कस्बा नहीं बल्कि एक हलचल भरा प्रांतीय शहर बन गया, जिसमें शहरी जीवन की सभी आवश्यक सुविधाएं मौजूद थीं। दो निःशुल्क अस्पताल, कई सराय, सार्वजनिक उद्यान, प्रत्येक प्रमुख व्यवसाय के लिए स्थायी बाजार और उनके आवासीय क्षेत्र, हिंदू और मुस्लिम दोनों के लिए खुले कई माध्यमिक विद्यालय, एक जामी मस्जिद और कई छोटी मस्जिदें, मुहर्रम के शोक माह में शिया समुदाय द्वारा प्रयुक्त एक कर्बला, दशहरा और अन्य हिंदू त्योहारों के लिए एक राम लीला मैदान, कई हिंदू मंदिर, एक सिख गुरुद्वारा और यहां तक कि एक मेथोडिस्ट चर्च भी अस्तित्व में आ गए। मेथोडिस्ट चर्च का निर्माण अंग्रेजों ने सम्राट की अनुमति से उनके शासनकाल के अंतिम वर्ष में करवाया था।

फिरोजपुर के बाज़ार सामान और खरीदारों से भरे हुए थे। अनाज व्यापारियों के गोदाम खाद्य तेल, तिलहन, अनाज, चीनी, घी, मोटी चीनी और गुड़ से लदे हुए थे। दूर-दूर से व्यापारी तेज़ी से वहाँ अपने कारखाने स्थापित कर रहे थे। आस-पास के बड़े बाज़ार लगातार फिरोजपुर झिरका को अपना माल, विशेषकर अनाज और पशुधन, निर्यात कर रहे थे। शम्सुद्दीन अहमद ने शहर की समृद्धि और व्यापार के स्तर को और बढ़ाने के लिए काम किया था। वास्तव में, अब कुछ उच्च पदों पर बैठे अंग्रेज इस बात पर अफसोस जताने लगे थे कि इतने समृद्ध और उत्पादक क्षेत्र पर एक देशी शासक का राज होना कितना बुरा है।

फ़िरोज़पुर पहुँचने के कुछ ही दिनों के भीतर, शम्सुद्दीन अहमद खान ने जहाँगीराह के लिए आए सभी विवाह प्रस्तावों की समीक्षा की। अकबरबाद (आगरा) में रहने वाले कई प्रतिष्ठित मिर्ज़ा परिवारों में से एक परिवार से उन्हें एक आकर्षक प्रस्ताव मिला। लेकिन वे केवल एक आकर्षक प्रस्ताव की तलाश में नहीं थे: वे इससे भी बेहतर, बल्कि सर्वश्रेष्ठ की कामना करते थे। वे जानते थे कि अच्छा, सर्वश्रेष्ठ का शत्रु होता है। इसलिए उन्होंने अपनी स्वीकृति तो नहीं दी थी; लेकिन अस्वीकार भी नहीं किया था।

अब उन्होंने अकबरबाद में अपने दूत को मामले की गहन जांच करने का आदेश दिया। दूत ने बताया कि यह परिवार मूल रूप से ईरानी था, वंश से सैयद था और सुन्नी धर्म का अनुयायी था —अर्थात नवाब के अपने धर्म का—और उनके पूर्वज आगा मिर्ज़ा मुहम्मद अहसान अली 1750 के दशक में मध्य एशिया के शिराज से आए थे। अहसान अली के दो पुत्र थे; एक ने रामपुर के एक शिया परिवार में विवाह किया और शिया बन गया। अब उस परिवार के सभी सदस्य शिया थे और उस परिवार के एक प्रमुख सदस्य आगा मिर्ज़ा तुराब अली थे, जो अच्छे व्यवहार, उत्कृष्ट शिक्षा और परिष्कृत वाणी वाले एक युवा थे। वे रामपुर के नवाब के घोड़े-हाथी अस्तबल और तंबू के सामान के प्रबंधक थे।

परिवार की अकबरबाद शाखा सुन्नी बनी रही। आगा मुहम्मद अहसान अली के दूसरे पुत्र शाह

आलम बहादुर शाह द्वितीय के शासनकाल में अकबरबाद के लाल किले में पुस्तकालयाध्यक्ष थे। शाह आलम बहादुर शाह द्वितीय अब स्वर्ग सिधार चुके हैं। उन्हें इतिबार-उल मुल्क और खान की उपाधियाँ प्राप्त थीं और आधिकारिक तौर पर वे इतिबार-उल मुल्क आगा मिर्ज़ा अमजद अली खान के नाम से जाने जाते थे। जब अंग्रेजों ने किले पर कब्ज़ा कर लिया, तो पुस्तकालयाध्यक्ष का पद समाप्त कर दिया गया। सम्राट की सेवा करने के बाद किसी भी अन्य नौकरी को अपने लिए कमतर समझते हुए, इतिबार-उल मुल्क मेवा कटरा स्थित अपनी हवेली में स्थायी रूप से बस गए और अपनी संपत्ति का प्रबंधन करने लगे। कभी-कभी, अपने खाली समय में, वे अपने कुछ कुलीन मित्रों के पुत्रों को दर्शनशास्त्र और तर्कशास्त्र की शिक्षा देते थे।

कवि असदुल्ला खान ग़ालिब के दादा मिर्ज़ा कुक़ान बेग, आगा मिर्ज़ा मुहम्मद अहसान अली के लगभग उसी समय ट्रांसोक्सियाना से आए थे। इन दोनों की हवेलियाँ एक-दूसरे के नज़दीक स्थित थीं। धीरे-धीरे दोनों परिवारों के युवाओं के बीच मित्रता विकसित हुई, और उनमें से एक युवा इतिबार-उल मुल्क के पुत्र मिर्ज़ा मुहम्मद मुअज़्ज़म अली खान थे, जिनके छोटे भाई मिर्ज़ा मुहम्मद आज़म अली खान, जहांगीर बेगम के भावी दूल्हे थे। यह प्रस्ताव ग़ालिब के ससुर और नवाब अहमद बख्श खान के छोटे भाई मिर्ज़ा इलाही बख्श खान मारूफ के माध्यम से प्राप्त हुआ था।

शम्सुद्दीन अहमद खान के एजेंट ने बताया कि मिर्ज़ा आज़म अली खान सत्रह या अठारह वर्ष के थे, सुंदर और सुशिक्षित थे। वे हनफ़ी संप्रदाय के सुन्नी मत के पक्के अनुयायी थे, लेकिन आध्यात्मिक और सांस्कृतिक रूप से ईरान से इतने जुड़े हुए थे कि घर में हिंदी के बजाय फ़ारसी बोली जाती थी, हालाँकि मिर्ज़ा कुक़ान बेग के परिवार ने अपनी दूसरी पीढ़ी में हिंदी अपना ली थी।

ये लोग सांसारिक अर्थों में धनी नहीं थे, लेकिन हर कोई उनके वंश और विद्या की शुद्धता की कसम खाता था; और उनकी महिलाओं की धर्मपरायणता, पवित्रता, सुंदरता और कुशल गृहस्थी प्रबंधन क्षमता स्थानीय अभिजात वर्ग में सर्वविदित थी। वे समृद्ध थे, धनी नहीं। परिवार के सम्मान में हाल ही में एक और उपलब्धि जुड़ गई जब मिर्ज़ा आज़म अली खान को आगरा प्रांत के नवाब लाफतेन (लेफ्टिनेंट) गवर्नर बहादुर के कमिशनरी कार्यालय में नायब मीर मूनशी (सहायक मुख्य सचिव) के पद पर नियुक्त किया गया।

बहुत विचार-विमर्श के बाद नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान ने प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। 12 सितंबर 1834 को शुक्रवार की नमाज़ के बाद जहांगीर बेगम का विवाह मिर्ज़ा मुहम्मद आज़म अली खान से संपन्न हुआ। दूल्हा और उनके साथी अकबरबाद से फ़िरोज़पुर झिरका के लिए रवाना हुए; उनके आगमन के तीसरे दिन विवाह की घोषणा और विधि संपन्न हुई—यह स्पष्ट रूप से एक हिंदू प्रथा थी, लेकिन उस क्षेत्र के मुस्लिम अभिजात वर्ग में आम थी। सातवें दिन दुल्हन को विदाई दी गई। विवाह के लिए एक लाख मुगल रुपये दिए गए; विवाह अनुबंध के अनुसार, राशि का एक चौथाई भाग तुरंत देय था; यह राशि अकबरबाद के लिए रवाना होने से काफी पहले ही अदा कर दी गई थी।

दूल्हे की बारात का पूरा खर्च—यात्रा, शादी का सामान, दूल्हे और उसके परिवार के सभी सदस्यों

के लिए औपचारिक पोशाकें, जिसे आम तौर पर घोड़े और पोशाक का खर्च कहा जाता है—नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान ने उठाया। यह स्पष्ट रूप से एक हिंदू प्रथा है, लेकिन दिल्ली के मुस्लिम उच्च वर्गों में भी प्रचलित थी। यह दुल्हन के वास्तविक दहेज के अतिरिक्त था। यह भी उल्लेखनीय है कि दूल्हे के परिवार ने दुल्हन के लिए महंगे कपड़े और गहने तथा उसके परिवार के सदस्यों के लिए औपचारिक उपहार लाने में कोई कसर नहीं छोड़ी।

फिरोजपुर झिरका शहर के सभी लोग दूल्हे के बाराती के घर लौटने तक सातों दिन और सातों रात नवाब की रसोई या मेज पर भोजन करते रहे।
जहांगीर बेगम का दूल्हे के परिवार में खुले दिल से स्वागत किया गया। बहुत जल्द ही उनकी शारीरिक सुंदरता, शाही शिष्टाचार, शालीनता और गरिमा ने सभी का दिल जीत लिया। उन्हें जहांगीर दुल्हन की उपाधि दी गई। अपने नए परिवार के साथ सहजता और आराम से घुलमिलकर, जहांगीर बेगम ने अकबरबाद में शांतिपूर्ण सुख के साथ अपना जीवन शुरू किया और धीरे-धीरे उस संतोष को प्राप्त किया, जो उस असीम धन को दर्शाता है जिसे बहुत से लोग पाना चाहते हैं लेकिन कुछ ही लोग हासिल कर पाते हैं। जब शम्सुद्दीन अहमद खान को अपनी बहन के नए घर में इस सौभाग्य के बारे में पता चला, तो उन्होंने ईश्वर का धन्यवाद किया और अपने भाग्य में भी अच्छे दिनों की कामना की। उन्हें यह जानकर गर्व हुआ कि उनकी बहन के पति को अकबरबाद में उनके नेक आचरण और अपनी युवा पत्नी के प्रति प्रेमपूर्ण व्यवहार के लिए सम्मान प्राप्त था। अब केवल विलियम फ्रेजर का मामला ही उनके ध्यान का केंद्र था। उन्हें ऐसा लग रहा था कि वह दिन दूर नहीं जब वह उस एक गांठ को खोलने में सफल हो जाएंगे जिसने उनकी प्यारी बहन के इतने अच्छे वैवाहिक बंधन को बांधने के बाद उनके दिल को जकड़ रखा था। लेकिन उन्हें इस बात का पता नहीं था कि उनके लिए पहले से ही विशेष योजनाएँ बनाई जा रही थीं:
समय मेरे दिल की एक भी गांठ तब तक नहीं खोलता जब तक वह किसी पैंथर के पंजे से कील उधार लेकर उस काम को पूरा न कर दे।
4 अक्टूबर 1834: शनिवार का दिन था; मौसम सुहावना हो गया था। उत्तर से ठंडी हवाएँ चलने लगी थीं और पश्चिम में राजपूताना से आने वाली अभिमान से भरी कठोर गर्म हवाएँ शांत हो गई थीं। फ़िरोज़पुर झिरका किले का पार्क तीतर और बटेरों की तीखी, लगातार आवाज़ों से गूंज रहा था। शाम के समय काले रंग की, मायावी शमा, जिसे कभी-कभी भारतीय बुलबुल भी कहा जाता है, की आवाज़ भी सुनाई देती थी। बड़े और छोटे तोतों के झुंड आकाश या पेड़ों में लगातार चहचहाते रहते थे।
शम्सुद्दीन अहमद खान आज सामान्य से कहीं अधिक प्रसन्न थे। अकबरबाद से जहांगीराह का पत्र आया था, साथ ही उनके ससुर का उपहार भी था: यमुना नदी के किनारे उगाई गई ताजी सब्जियों की एक बड़ी खेप। नवाब, नियमानुसार, शनिवार को हरम सारा में महिलाओं के साथ दोपहर का भोजन करते थे। सुबह का दरबार समाप्त करके, उन्होंने जहांगीराह का पत्र एक बार फिर पढ़ने का आनंद लिया; उन्होंने अकबरबाद से आए दूतों के ठहरने, भोजन और आतिथ्य

सत्कार के निर्देश दिए, दरबार हॉल से निकले और सुरक्षित क्षेत्र में जाने ही वाले थे कि किले के मुख्य द्वार पर कुछ आवाज सुनाई दी, मानो कोई प्रवेश की अनुमति मांग रहा हो।
नवाब वहीं रुक गए; पहरेदारों में से दो लाठी-कमान वाले दौड़ते हुए आए और सूचना दी कि दिल्ली से आया एक ऊंट सवार संदेशवाहक महाराज के समक्ष प्रवेश की अनुमति मांग रहा था, लेकिन दरबार से उठ जाने के कारण उसे पहरेदारों के सामने ही रोक दिया गया था। नवाब ने एक क्षण सोचा और फिर संदेशवाहक को प्रवेश की अनुमति देने का आदेश दिया।
अनिया नाम का वह ऊंट सवार, जिसे आम तौर पर अनिया मेवाती के नाम से जाना जाता था, नवाब के दल में लंबे समय से ऊंट सवार के रूप में कार्यरत था और सड़क पर अपनी गति, सहनशक्ति और कठिनाइयों को सहने की क्षमता के लिए प्रसिद्ध था। उसने अपने ऊंट को द्वार पर छोड़कर दौड़ते हुए नवाब के सामने आकर सात बार सलाम किया और कहा, 'महामहिम के मुख्तार-ए-कार (मुख्य अधिकृत प्रतिनिधि) बहादुर ने अपनी याचिका भेजी है।'
नवाब के मन में तुरंत यह विचार आया कि कुछ अप्रिय घटना घटित हुई है, हालांकि किसी भी तरफ से ऐसी किसी घटना का कोई संकेत या अफवाह नहीं थी।
उन्होंने अपनी सहमति जताते हुए कहा, 'आपने बहुत अच्छा समय निकाला है और बहुत जल्दी में आए हैं। चलिए देखते हैं आप क्या लाए हैं। क्या कुछ खास है?'
‘महामहिम को ही सर्वोत्तम जानकारी है। मुझे कल रात दीवान साहब ने बुलाया था और उन्होंने आदेश दिया था कि यह सेवक सूर्योदय के समय प्रस्थान करे और कल दोपहर के भोजन से पहले यह याचिका उनके समक्ष प्रस्तुत करे।’
‘बहुत खूब। तो भाई, तुमने ये लगभग अस्सी मील का सफर बड़ी जल्दी तय कर लिया।’ उन्होंने पत्र लाने का इशारा किया। अनिया ने अपनी पगड़ी खोली और उसकी तहों के बीच से एक सीलबंद रेशमी थैली निकाली, उसे अपनी हथेलियों पर रखा, एक कदम आगे बढ़ा और नवाब की ओर हाथ बढ़ाया। शम्सुद्दीन अहमद के थोड़ा पीछे और दाहिनी ओर खड़ा एक मस्केटियर ने अपना दाहिना हाथ बढ़ाकर थैली ले ली। अपने मालिक के बेहद धुंधले इशारे को सही ढंग से समझते हुए, उसने सील तोड़ी और एक बेलनाकार मोटा कागज निकाला। मस्केटियर ने उस कागज को अपने हाथों में लिया और नवाब को सौंप दिया।

जैसे ही वह कागज़ शम्सुद्दीन अहमद के हाथों में आया, उन्हें लगा मानो उसमें कोई बहुत बुरी खबर छिपी हो। अगर ऐसा करना सार्थक होता तो वे उसे आग या नदी में फेंक देते, लेकिन ऐसा करने से उन्हें कोई लाभ नहीं होता: चाहे वे चाहें या न चाहें, उस पत्र में मौजूद जानकारी सार्वजनिक हो ही जाएगी।
कागज़ को सावधानी से खोलते हुए नवाब ने उस पर सरसरी नज़र डाली और उसे ऐसा लगा जैसे किसी ने उसके पैरों पर भारी कुल्हाड़ी से वार किया हो, जैसे चारा काटने वाली कुल्हाड़ी, जिससे उसके दोनों पैर कट गए हों और वह ज़मीन पर गिर पड़ा हो। वह हवा के झोंके की तरह लड़खड़ाया और सहारा लेने के लिए मस्कटियर का कंधा पकड़ने का सोचा; लेकिन उसने जल्दी से संभलकर खुद को संभाला और किसी को भी अपने सदमे का एहसास नहीं होने दिया। उसने

चिट्ठी को फिर से ध्यान से पढ़ा, मानो पहली बार पढ़ते समय उससे कुछ छूट गया हो।
किसी की मृत्यु या किसी गंभीर हानि की खबर मिलने पर मुसलमानों में सर्वत्र प्रयुक्त कुरान का यह वाक्य उनके मुख से निकला: 'इन्ना लि'अल्लाही व इन्ना इलैही राजि'उन' (निःसंदेह हम अल्लाह के हैं और उसी के पास लौटेंगे)। बिना कुछ और कहे, वे मुख्य बैठक कक्ष में वापस गए और अपनी पसंदीदा आरामकुर्सी पर चुपचाप बैठ गए। उन्होंने पानी का गिलास लाने का इशारा किया और गिलास से पानी पीते हुए तीसरी बार पत्र पढ़ा। यह अठारहवीं शताब्दी में विकसित हुई मानक आधिकारिक फ़ारसी में लिखा गया था। इसमें बहुत से आधिकारिक शब्द और भारतीय अभिव्यक्तियाँ थीं जो पूर्व के युगों की फ़ारसी में नहीं मिलती थीं। यह कुछ हद तक बनावटी और प्रोटोकॉल-उन्मुख अभिव्यक्तियों से भी भरपूर थी।
हालाँकि अंग्रेजी में उस प्रकार की फ़ारसी भाषा का भाव व्यक्त करना असंभव है जिसकी हम बात कर रहे हैं, फिर भी नीचे उन्नीसवीं शताब्दी के आरंभिक अंग्रेजी में इसका लगभग शाब्दिक अनुवाद दिया गया है। जबकि कुरान में लगभग एक हजार वर्षों से विराम चिह्नों का कड़ाई से और सावधानीपूर्वक प्रयोग किया जा रहा था, भारतीय भाषाओं और भारत में लिखी गई फ़ारसी में विराम चिह्नों का प्रयोग बहुत बाद में शुरू हुआ। सुगम्यता के लिए एकमात्र रियायत—जो उन्नीसवीं शताब्दी के आरंभ से अस्पष्ट रूप से प्रचलित थी—अनुच्छेदों को चिह्नित करने के लिए उस शब्द के ऊपर एक छोटा चिह्न बनाना था जिससे एक नया अनुच्छेद शुरू होना था। आधुनिक अरबी से लिया गया एक समान चिह्न (हालाँकि वहाँ इसका प्रयोग किसी अन्य उद्देश्य के लिए किया जाता है) यहाँ अनुच्छेदों को चिह्नित करने के लिए प्रयोग किया गया है; विराम चिह्न रहित पाठ में भी हल्के विराम चिह्न लगाए गए हैं।

हे परम पूज्य, कृपालु प्रभु, आप सदा सुरक्षित रहें: सादर प्रणाम के बाद यह निवेदन किया जाता है। सूचना प्राप्त हुई है कि नवाब गवर्नर जनरल बहादुर के कार्यालय से इस मामले में निर्णय सुनाया जा चुका है और इसकी प्रमाणित प्रति निवास कार्यालय को भेज दी गई है, जो आज सुबह वहाँ पहुँच गई। आशा है कि दो-तीन दिनों में नवाब रेजिडेंट बहादुर इस निर्णय को लागू करने का आदेश जारी करेंगे। यह सेवक इस निवेदन को लिखते हुए अत्यंत दुःख और पीड़ा महसूस कर रहा है: यह निर्णय इस सेवक के पालनहार (वे सदा सुरक्षित रहें) के उद्देश्य के अनुरूप नहीं है। नवाब गवर्नर जनरल बहादुर ने आदेश दिया है कि लोहारू क्षेत्र और उससे जुड़ी अन्य भूमि को परम पूज्य की देखरेख और संरक्षण से मुक्त कर दिया जाए और उपरोक्त सभी भूमि का शासन अमीनउद्दीन अहमद खान बहादुर को सौंप दिया जाए। आगे यह आदेश दिया गया है कि उपरोक्त निर्णय का अनुपालन बिना समय गंवाए किया जाए। लोहारू के दीवान और उनके अधीनस्थ पदाधिकारियों से अनुरोध है कि वे तुरंत माननीय महोदय के समक्ष उपस्थित हों और अमीनउद्दीन अहमद खान बहादुर के नाम पर लोहारू के प्रशासन से संबंधित सभी दस्तावेजों, प्रपत्रों, वित्तीय पत्रों और लेखा-पुस्तकों को अपने कब्जे में ले लें। दिल्ली नगर में स्थित हवेलियों में से बल्लीमारन गली कासिम जान में स्थित हवेली अमीनउद्दीन अहमद खान बहादुर की संपत्ति रहेगी और दरियागंज में स्थित दूसरी हवेली माननीय महोदय के स्वामित्व में रहेगी, और फिरोजपुर

झिरका और उसके अंतर्गत आने वाले सभी उप-मंडल, क्षेत्र, स्थान और वार्ड पहले की तरह माननीय महोदय के शासन के अधीन रहेंगे। यह समझते हुए कि इस याचिका को प्रस्तुत करना आवश्यक था, मैंने यह विस्तृत पत्र भेजा। दीवान अब्दुल्ला खान द्वारा विनम्रतापूर्वक प्रस्तुत। दिनांक सत्ताईस जुमाद-अल अव्वल, 1250, शुक्रवार के दिन, यानी तीस सितंबर 1834 को शाहजहानाबाद XII शहर में सूर्यास्त की नमाज़ के समय कागज़ पर अंकित।
जुमाल नामक अंकशास्त्र प्रणाली के अनुसार, अंक 'XII' अरबी शब्द 'हद्द' के मान को दर्शाता है; फारसी और हिंदी (जिसे अब उर्दू कहा जाता है) में भी प्रयुक्त इस शब्द का अर्थ 'सीमा', 'चरम सीमा' या 'सीमा रेखा' होता है। किसी संदेश के समापन का संकेत देने के लिए इसे अक्सर संदेश के अंत में जोड़ा जाता था। यह संभवतः यह सुनिश्चित करने का एक तरीका भी था कि बाद में उसमें कुछ भी जोड़ा न जा सके।
यह स्पष्ट है कि उस पत्र में कुछ भी अस्पष्ट या संदिग्ध नहीं था; इसलिए यदि शम्सुद्दीन अहमद ने उसे बार-बार पढ़ा, तो इसका कारण यह था कि वह उस पर कोई निर्णय नहीं ले पा रहे थे। यह भी संभव था कि उन्हें अपनी आँखों पर विश्वास नहीं हो रहा था और उन्होंने पत्र को बार-बार पढ़ा, ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि उन्होंने उसे सही पढ़ा है और उसमें ऐसा कुछ भी नहीं है जो उनके लिए थोड़ा सा भी अनुकूल हो।
हर बार पढ़ने पर शम्सुद्दीन अहमद को पत्र का अर्थ और भी स्पष्ट होता गया, और हर बार पढ़ने पर उनका असंतोष, क्रोध और दुख बढ़ता गया, साथ ही उनकी बेबसी भी बढ़ती गई, क्योंकि आखिर वे इसके बारे में क्या कर सकते थे? वे पूरी तरह असहाय, शक्तिहीन और गवर्नर जनरल के फैसले का विरोध करने में असमर्थ थे। अलवार के महाराजा भी उनकी कोई मदद नहीं कर सकते थे। पृथ्वी पर ईश्वर की साक्षात उपस्थिति तो और भी कम सहायता कर सकती थी।
आग फ्रेजर ने लगाई थी और नवाब की प्रतिशोध की जलती हुई इच्छा को केवल फ्रेजर के खून से ही बुझाया जा सकता था। उस नीच, सूअर जैसे नाज़रीन ने उसके सिर पर जो कलंक और अपमान डाला था, उसका कुछ प्रतिफल शायद मिल पाता... लेकिन इससे लोहारू वापस नहीं आता। और मेरे पास इतनी शक्ति और धन नहीं है कि मैं फिरंगी को अदालत में ले जाऊं और अपने हक वापस पाने के लिए लड़ता रहूं। उसके खिलाफ हथियार उठाना किसी भी हालत में विकल्प नहीं था। गवर्नर जनरल बहादुर कलकत्ता में हैं। यहां से उनके खिलाफ विद्रोह का नेतृत्व करना मेरे लिए असंभव है: मैंने क्षेत्र खो दिया है, मैं अपनी जान भी गंवा दूंगा। नहीं, अगर उनके खिलाफ विद्रोह करना संभव और व्यावहारिक हो तो मैं अपनी जान गंवाने को तैयार हूं...
...परन्तु मुझे उस अभिमानी लंपट को दंडित करना ही होगा। बाकी सब—कायर—चुपचाप और हाथ बंधे रहें; मैं वही करूँगा जो मुझे करना है। मैं दुनिया को दिखाऊँगा कि मैं उसका जल्लाद हूँ, उसे उसकी दुष्टता के अनुरूप दंड दूँगा, उसे मेरे और मेरे सम्मान के विरुद्ध उसकी धृष्टता का स्वाद चखाऊँगा। फिरंगी का घमंड उफनती नदी, उमड़ते तूफान के समान है। यह अपने रास्ते में आने वाली हर चीज को उखाड़ फेंकने और नष्ट करने पर तुला हुआ है... काश, हमारा अपना सम्राट इतना निष्प्रभावी न होता... कोई बात नहीं, चाहे कुछ भी हो जाए, मैं अपना छोटा सा योगदान जरूर दूँगा।

हर पल बीतने के साथ, शम्सुद्दीन अहमद के दिल में दर्द और गुस्सा और भी भड़कता जा रहा था। चिट्ठी उसके हाथ से गिर गई थी। उसकी आँखें लाल थीं और ऊपर की ओर उठी हुई थीं, मानो वह पूरी रात जागा रहा हो और भ्रमित हो गया हो। उसके शरीर में हल्की कंपकंपी दौड़ रही थी, जिसे वह जबड़े और मुट्ठियाँ भींचकर और पीठ सीधी करके नियंत्रित करने की कोशिश कर रहा था; उसकी साँसें तेज़ और उथली थीं, उसकी भौंहें सिकुड़ी हुई थीं मानो उसे बहुत दर्द हो रहा हो। अगर किसी हकीम ने उसे इस हालत में देखा होता, तो वह घबरा जाता और कहता कि उसे मेनिन्जाइटिस होने वाला है या उसे टिटनेस हो गया है।

दरबार कक्ष में तैनात अनिया मेवाती, मस्कटियर, द्वारपाल और लाठीवाहक, सभी भय से व्याकुल होकर, पत्थर की तरह स्थिर खड़े थे।

जब नवाब हरम सारा में नहीं पहुँचे, तो वरिष्ठ बेगम अफजल-उन निसा ने अपनी निजी दासी सुभ दौलत को, जो उन्हें और नवाब दोनों को बहुत प्रिय थी, यह पता लगाने के लिए भेजा कि उन्हें देरी क्यों हो रही है। पीछे के आंतरिक बगीचे से होते हुए, वह एक सुरक्षित द्वार तक पहुँचीं, जहाँ से वह एक ऐसे गलियारे में गईं जिसका उपयोग कम ही होता था और जो दरबार हॉल में जाकर समाप्त होता था।

भारी पर्दे के पीछे से नवाब की एक झलक ने उसे भयभीत कर दिया; वह मुड़ी और तुरंत अफजल-उन-निसा के कमरे में वापस भागी। उसने बताया कि—ईश्वर न करे—ऐसा लगता है कि महाराज को कोई सदमा लगा है, या—ईश्वर उन्हें कभी न सताए—राज्य में कुछ अप्रिय घटना घटित हुई है। महाराज कमरे में बिल्कुल चुपचाप और खोए हुए बैठे हैं। उनका चेहरा असंतोष से लाल और काला पड़ रहा है; उनका शरीर बिल्कुल अकड़ा हुआ और गतिहीन है।

अफजल-उन निसा ने लगभग खुद जाकर पता लगाने का फैसला कर लिया था कि क्या गड़बड़ है और अगर संभव हो तो नवाब को होश में लाने की कोशिश करे या तुरंत कोई इलाज करवाए। लेकिन वह कभी किले के पुरुषों वाले हिस्से में नहीं गई थी; उसका पालन-पोषण इस तरह हुआ था कि उसे हवेली के हरम सारा और भीतरी बगीचे की दीवारों के अंदर घूमने-फिरने और अपनी जीवनशैली, जिसमें आनंद और शिक्षा भी शामिल थी, को जीने की पूरी आजादी थी, लेकिन कोई भी बाहरी आदमी उसकी आवाज या कदमों की आहट भी नहीं सुन सकता था। वे सभी क्षेत्र जहाँ किसी बाहरी आदमी की आहट तक का आभास हो सकता था, उसके लिए वर्जित थे। पुरुषों के क्वार्टर में जाना भी उसके लिए प्रोटोकॉल के घोर विरुद्ध था। कोई विकल्प न होने पर, उसने दोपहर का भोजन स्थगित कर दिया और सुभ दौलत को बाहर की गतिविधियों पर ध्यान देने और यह पता लगाने का आदेश दिया कि नवाब को इतनी गंभीर बीमारी किस बात से हुई है, और क्या किसी हकीम या वैद्य (यानी हिंदू चिकित्सा पद्धति का अभ्यास करने वाला ब्राह्मण) या सियाना (तांत्रिक विद्या का अभ्यास करने वाला) को बुलाया गया है।

ये निर्देश देने के बाद, अफ़ज़ल-उन निसा अपनी प्रार्थना की चटाई पर हाथ में माला लिए बैठ गईं और चुपचाप उन प्रार्थनाओं का पाठ करने लगीं जो उन्हें बचपन में ऐसे अवसरों के लिए कारगर मानी जाती थीं। उनकी दोनों बेटियों की सहेलियाँ उन्हें अपने कमरे में ले गईं और उन्हें शांत करने

और कुछ खाना खिलाने की कोशिश करने लगीं। दोनों बच्चियाँ निराश थीं और अपने पिता से शिकायत कर रही थीं कि उन्होंने उन्हें अपने साथ और अपने प्यार भरे और मनोरंजक संवादों से वंचित कर दिया है। शम्सुद्दीन अहमद खान रोज़ाना पूरा दिन और ज़्यादातर रातें हवेली के पुरुषों के कमरे में बिताते थे। इसलिए, उनके साप्ताहिक दोपहर के भोजन के लिए आने को छोटी बच्चियाँ बहुत महत्व देती थीं और उसके बारे में खूब बातें करती थीं।

कुछ ही समय में, छोटी बेगम अमीर बहू और नवाब की रखैल चंपा को भी नवाब की दुखद स्थिति का पता चल गया। अब पूरा हराम सन्नाटे में छा गया। केवल चंपा से नवाब की बेटी रहमत-उन निसा, जो लगभग ढाई साल की थी, रोती-बिलखती और पूछती कि उसके नब शब क्यों नहीं आए। अपनी माँ की नकल करते हुए, वह 'नवाब साहब' कहने की कोशिश करती, लेकिन उसका मुँह केवल 'नब शब' ही बोल पाता। यह नाम, या उपाधि, शम्सुद्दीन अहमद को अत्यंत प्रसन्न करती थी: जब भी वह उसे देखते, वह उसे बार-बार 'नब शब' बोलने के लिए प्रेरित करते और हर बार उसे कोई न कोई ऐसी चीज़ देते जिसे वह संजो कर रख सके।

शिकार के प्रमुख करीम खान अपने संरक्षक नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान से मिलते हैं।

किले के मुख्य द्वार के बाहर, पुरुषों की हवेली में घोड़े के खुरों की आवाज सुनाई दी। नए आए व्यक्ति ने घोड़े की लगाम पहरेदार को सौंप दी, अपनी कमरबंद में लटकी पिस्तौल को सीधा किया और काठी के पीछे लगे थैले से एक मलमल का रुमाल निकालकर सावधानी से अपना चेहरा पोंछा, जूतों से धूल झाड़ी, पहरेदारों को देखकर मुस्कुराया और कहा, 'प्रिय मियां साहब, मेरे घोड़े पर नजर रखिएगा।'

‘अंदर जाते समय सावधान रहें, भरमारू जी,’ एक लाठीवाहक ने कहा।

‘क्यों? क्या बात है?’ उसने मुड़कर पहरेदारों को गौर से देखा। उनमें हमेशा की तरह जोश और उत्साह की कमी लग रही थी।

'माननीय महोदय... कुछ हद तक क्रोधित हैं।'

लेकिन क्यों? क्या उन्हें दोपहर का भोजन पसंद नहीं आया?

‘कान जी, मैं कसम खाता हूँ कि उन्होंने एक निवाला भी नहीं खाया है। वास्तव में, वे अभी तक हरम सरा में प्रवेश भी नहीं कर पाए हैं। वे दीवान खाना में रेत के टीले पर मगरमच्छ की तरह शांत और स्थिर पड़े हैं।’

नवागंतुक के माथे पर चिंता की लकीरें उभर आईं। 'ठीक है, मुझे देखने दो' कहते हुए वह किले के भीतरी द्वार की ओर बढ़ा, लेकिन उसके हाव-भाव में वही आत्मविश्वास झलक नहीं रहा था। वह लंबा-चौड़ा, गठीला और मजबूत सीना वाला युवक था। उसके आसपास की हवा में भी एक अलग ही शक्ति का आभास था। उसकी आंखें तेज और काली थीं और उसके लंबे, चमकदार बाल कंधों तक घने गुच्छों में लटके हुए थे। उसकी थोड़ी घनी मूंछें और राजपूती शैली में छोटी-छोटी कटी दाढ़ी उसके युवा, ऊर्जावान चेहरे पर आकर्षक लग रही थीं। उसने राजपूती शैली की पगड़ी और अंग्रेजी शैली की घुड़सवारी की पैंट और जूते पहन रखे थे।

लगभग चौबीस वर्ष की आयु के, एकदम सीधी कमर वाले, उनका शरीर गठीला और शक्तिशाली था; उनके पेट, कमर और जांघों पर जरा भी अतिरिक्त मांसपेशियाँ नहीं थीं, शरीर के किसी भी अन्य हिस्से में चर्बी का नामोनिशान नहीं था। ये थे करीम खान, शम्सुद्दीन अहमद खान के शिकार प्रमुख; उनकी सहज चाल और व्यवहार, उनकी मर्दाना सुंदरता, हल्के लेकिन दृढ़ कदम और आत्मविश्वास से भरी आँखें, उन्हें देखकर मानो एक चीता की याद आती थी, जो शक्ति और यौवन से परिपूर्ण होकर घने हरे जंगल में शान से चल रहा हो। कहा जाता था कि वे बिना रुके तीस मील तक पैदल ही शिकार का पीछा कर सकते थे। पीछा करने और जानवरों का पता लगाने में उनका कोई सानी नहीं था: जानवरों के चलने या रुकने पर बने सबसे धुंधले निशान, जिस घास या झाड़ी से वे गुज़रे थे उसकी स्थिति और उनके गुज़रने का समय, पक्षियों की आवाज़ें, विभिन्न प्रकार के खुर वाले जानवर, बंदर, मांसाहारी जानवर, सब कुछ उनके लिए मातृभाषा जैसा था।

वह अचूक निशानेबाज और स्नाइपर थे, जो अलग-अलग तरह की बंदूकों को चलाने में माहिर थे

और पैदल चलते हुए, घोड़े, हाथी या मचान (एक ऊंचा और छिपा हुआ चबूतरा जहां से शिकार किए जा रहे जानवर को देखा जाता है) की ऊंचाई से निशाना लगाने में भी उतने ही सहज थे। चाहे रोशनी कैसी भी हो, शिकार किए जा रहे जानवर की गति कितनी भी हो, या घोड़े पर उनकी अपनी गति कितनी भी हो, उनका निशाना कभी नहीं चूकता था। इन्हीं गुणों के कारण उन्हें भारमारू उपनाम मिला था।

जैसा कि नाम से पता चलता है, भारमार ('भरकर गोली चलाना') एक मुख से लोड होने वाली तोप थी। ऐसी तोपों को तोरेदार और टोपीदार भी कहा जाता था। आधुनिक और पारंपरिक तोपों में अंतर यह था कि पारंपरिक तोपों के निप्पल के नीचे एक छोटी सी जगह होती थी, जिसमें बारीक बारूद भरा जाता था। तोप को चलाने के लिए जलती हुई माचिस या फ्यूज, जिसे शिताबा कहते थे, को बारूद से छुआया जाता था, जिससे तुरंत आग लग जाती थी और तेज लपटें उठती थीं। यह लपटें कोठी नामक एक छोटे छेद से तोप के मुख में प्रवेश करती थीं और तोप तुरंत चल जाती थी। आधुनिक तोपों में शिताबा नहीं होता था; इसके बजाय, तोप के लॉक में लगा हथौड़ा निप्पल पर ज़ोर से प्रहार करता था, जिससे दबाव बनाकर अंदर का बारूद जल उठता था। हथौड़े और लॉक के कारण, ऐसी तोपों को टोपीदार भी कहा जाता था। इस बंदूक के नवीनतम संस्करण को पत्थर की टोपी या फ्लिंटलॉक कहा जाता था क्योंकि इसमें बंदूक की नोक में बारूद के बजाय चकमक पत्थर का एक छोटा टुकड़ा इस्तेमाल किया जाता था।

इन सभी तोपों में मुंह से गोलियां भरी जाती थीं; अंग्रेज इन्हें 'मज़ल लोडिंग' कहते थे। भारतीय मज़ल बंदूकें अधिकतर एक बैरल वाली होती थीं, लेकिन अंग्रेजों ने दो बैरल वाली बंदूक को भी लोकप्रिय बनाया था जिसे डीबीएमएल (डबल-बैरल मज़ल लोडिंग) कहा जाता था। करीम खान न केवल सभी प्रकार की मज़ल-लोडिंग बंदूकों के उपयोग में माहिर थे, बल्कि वे क़राबीन और बेधर्मी का भी अच्छा ज्ञान रखते थे। क़राबीन वास्तव में फ्रांसीसी कार्बाइन थी, जिसका उपयोग फ्रांसीसी और अंग्रेज दोनों करते थे। भरमार की तुलना में छोटी बैरल वाली कार्बाइन पिस्तौल की तुलना में लंबी बैरल वाली होती थी और इसलिए घुड़सवार सेना इसे बहुत पसंद करती थी। इसका मुंह बैरल से थोड़ा चौड़ा होता था, जिससे गोलियां अच्छी तरह से फैलती थीं। कभी-कभी भारत में इस्तेमाल होने वाली दो बैरल वाली इस बंदूक में बट और बैरल के बीच एक छोटा आयताकार स्थान होता था जिसे तोसदान कहा जाता था और गोलियां तोसदान के माध्यम से बंदूक में डाली जाती थीं।

क़राबिन तोप भारतीय सैनिकों के बीच आमने-सामने की लड़ाई और रक्षात्मक उद्देश्यों के लिए बहुत लोकप्रिय थी, क्योंकि इसकी मारक क्षमता अपेक्षाकृत कम होने के बावजूद यह हल्की थी और इसकी छोटी बैरल की मदद से घोड़े या ऊंट पर सवार होकर भी तेज़ी से और लगातार गोलीबारी की जा सकती थी। यह अन्य तोपों की तुलना में भारी गोले का उपयोग करती थी और इसमें निप्पल या फ्यूज की आवश्यकता नहीं होती थी, जिससे अधिकांश पारंपरिक तोपों की तुलना में इसे चलाना आसान था।

जिस क़राबीन से ट्रिगर को बार-बार खींचने पर एक से अधिक गोले दागे जा सकते थे, उसे चांद ज़रबी (बहु-गोला) कहा जाता था, हालांकि अधिकांश क़राबीन एक बार में केवल एक ही गोला

दागती थीं। क़राबीन और बेधर्मी में फायरिंग के लिए हथौड़ा और ट्रिगर का उपयोग होता था, इसलिए वे कहीं अधिक कुशल थीं। अंग्रेजों द्वारा ऐसी सभी तोपों को एसबीबीएल या एकल-बैरल ब्रीच-लोडिंग तोप कहा जाता था। इन तोपों में गोला-बारूद बैरल के सिरे से नहीं, बल्कि बैरल के ऊपरी भाग से डाला जाता था। इन तोपों में एक सपोर्टिंग स्टॉक होता था, जिसे हिंदी में पालकी और एक पिन (मगज़ किल) कहा जाता था; पिन हटाने पर स्टॉक बैरल से अलग हो जाता था, जिससे बैरल का ऊपरी भाग दिखाई देता था; फिर गोला-बारूद को ऊपर से तोप में डाला जा सकता था और प्रक्रिया पूरी होने के बाद स्टॉक को वापस लगा दिया जाता था। ऐसी तोपों में यदि दो बैरल होते थे, तो उन्हें डीबीबीएल (दो-बैरल ब्रीच लोडिंग) कहा जाता था। हिंदी में इन्हें दो नाली क़राबीन (दो-बैरल कार्बाइन) या दुगरा (दोहरा) कहा जाता था।
अपनी अधिक दक्षता के बावजूद, ब्रीच-लोडिंग तोपों में से कोई भी भारतीयों को ज्यादा पसंद नहीं आई। बेधर्मी एक लंबी दूरी की, एकल-बंदर वाली राइफल थी जिसका आविष्कार अंग्रेजों ने किया था और वे इसका व्यापक रूप से उपयोग करते थे। इनके अंग्रेजी मूल के कारण ही इन्हें 'बेधर्मी' या 'नास्तिक' कहा जाता था। जिस समय करीम खान इन तोपों में विशेषज्ञता हासिल कर रहे थे, उस दौरान 'बेधर्मी' शब्द अप्रचलित होता जा रहा था और 'राइफल' शब्द तेजी से इसका स्थान ले रहा था, जैसा कि हम लखनऊ के हिंदी कवि अताश की लगभग 1830 में रचित इस कविता में देख सकते हैं:
संसार के शिकारगाह में मेरी बस एक ही इच्छा है: मैं आपकी नज़र में रहूँ और आपकी राइफल से गोली चले।

राइफल चलाने में निपुण होने के बावजूद—नवाब के शस्त्रागार और उनके स्वयं के संग्रह में कई राइफलें थीं—करीम खान ने कभी भी राइफल का इस्तेमाल शिकार के लिए नहीं किया। उनका हमेशा कहना था कि सौ-डेढ़ सौ गज की दूरी पर छुपकर शिकार करना या हाथी की ऊँचाई से तीर चलाना वीरता के नियमों के विरुद्ध है। पत्थर कुल्हाड़ा या भारमार तो अपने आप में ही शिकारी को बहुत अधिक श्रेष्ठता और लाभ प्रदान करते हैं, राइफल की तो बात ही छोड़िए, जो कायरों का हथियार है। उनका यहाँ तक कहना था कि सर्वश्रेष्ठ शिकारी वह है जो केवल तलवार या भाले के साथ पैदल शिकार करता है और बाघ या हाथी का आमने-सामने सामना करता है।
करीम खान का जन्म और पालन-पोषण फिरोजपुर के किले में हुआ था। शम्सुद्दीन अहमद से दो-तीन साल छोटे करीम खान बचपन से ही उनके साथी और बाद में मित्र बन गए थे। दोनों ने एक ही गुरु से शस्त्र और निहत्थे युद्ध कलाएं सीखीं। अरबी और फारसी के लिए भी शुरुआती कुछ वर्षों तक उनका एक ही शिक्षक था। अपने आकर्षक रूप, हास्यबोध और वाक्पटुता के कारण वे जहाँ भी जाते, उनका स्वागत होता था। दिल्ली के नौजवानों ने उन्हें गुल-ए सुर्ख (लाल गुलाब) उपनाम दिया था। कई घरों से विवाह के अच्छे प्रस्ताव मिलने के बावजूद, करीम खान ने लगातार विवाह से इनकार कर दिया। उनका कहना था कि जंगल के फूलदार पौधे मेरी रानी हैं और ऊंचे, घने पेड़ मेरी बारात हैं, तो मैं किसी और से शादी करने के बारे में क्यों सोचूं?
करीम खान ने देखा कि दरबार कक्ष के मुख्य द्वार पर कुछ सैनिक तैनात थे। उन्होंने जिज्ञासावश

अपनी भौंहें उठाईं; सैनिकों ने उन्हें अंदर जाने का इशारा किया, लेकिन उनके हाव-भाव में कुछ झिझक, बल्कि डर का भाव भी झलक रहा था। ऐसा लग रहा था मानो वे यह संकेत दे रहे हों कि करीम खान को अपने जोखिम पर ही अंदर जाना चाहिए और यदि उनका स्वागत अच्छा न हो तो उन्हें इसके लिए उन्हें दोष नहीं देना चाहिए।

मुख्य द्वार से प्रवेश करते ही करीम खान कक्ष के सामने स्थित विशाल प्रांगण में पहुँच गए। प्रांगण हरा, सुनहरा और लाल रंग से रंगा हुआ था, जिसमें मौसम के अनुसार फूलदार झाड़ियाँ और पौधे खिले हुए थे। हरे-भरे मैदानों के बीच कोटा पत्थर से बने रास्ते थे, और उनके चारों ओर एक छोटी सी धारा कलकल करती बह रही थी। प्रांगण के अंतिम छोर पर एक ऊँचा चबूतरा था, जिसके ऊपर एक छोटी सी छतरी बनी हुई थी। प्रांगण के जहाँ घास और क्यारियाँ नहीं थीं, वहाँ रास्ते सफेद संगमरमर से बने हुए थे। प्रांगण के अंत में, और इसके बाईं ओर भी, संगमरमर से बने चौड़े बरामदे थे। दरबार कक्ष प्रांगण के पश्चिमी छोर पर स्थित था।

करीम खान दरबार कक्ष की ओर बढ़ ही रहे थे कि बाईं ओर के बरामदे के एक दरवाजे के पर्दे के पीछे हलचल हुई। कोई उन्हें इशारा कर रहा था। करीम खान ने ऊपर देखा तो पाया कि सुभ दौलत नवाब का हालचाल पूछने फिर बाहर आई थीं, लेकिन कक्ष में प्रवेश करने की हिम्मत न जुटा पाने के कारण वे किसी वरिष्ठ पुरुष से मदद मांगने नौकरों के कमरे की ओर जा रही थीं। सुभ दौलत और करीम खान एक-दूसरे को अच्छी तरह जानते थे, और कभी-कभी सुभ दौलत उन्हें किसी खास अंदाज में देखती थीं, हालांकि करीम खान को इसमें कोई दिलचस्पी नहीं थी। इस बार भी उन्होंने सोचा कि यह लड़की एकांत का फायदा उठाकर उनसे बात करना चाहती है। उन्होंने भौंहें चढ़ाईं, लेकिन लगभग फुसफुसाते हुए, अपने परिचित तु शब्द का प्रयोग करते हुए कहा, 'क्या बात है? तुम यहाँ पुरुषों के कमरे में क्यों घूम रही हो?'

“कृपया करीम खान जी, क्या आपने नहीं सुना? महाराज को कुछ खास तरह का दौरा पड़ गया है! सभी बेगम साहबें परेशान और घबराई हुई इधर-उधर भाग रही हैं। हर कोई व्याकुल है। किसी को समझ नहीं आ रहा कि क्या करें।”

‘यह वाकई चिंता का विषय है। क्या वह बेहोश है? लेकिन आप यहां क्या कर रहे हैं?’

‘वरिष्ठ बेगम साहब लगातार पूछती रहती हैं: “क्या हो रहा है? क्या हकीम साहब आ गए हैं?” लेकिन अंदर कोई खबर नहीं भेजी जा रही कि उनका हालचाल क्या है।’

खैर, मैं तो वैसे भी माननीय के अंतिम संस्कार में जा रहा हूँ। तुम यहाँ से जल्दी निकलो। मैं वहाँ जो भी पता लगाना है, पता लगाऊँगा और हालात सुधारने का कोई तरीका निकालूँगा। मैं अंदर एक रिपोर्ट भी जमा करवाऊँगा।

यह कहते हुए करीम खान तेजी से अंदर चले गए। सुभ दौलत वहीं रुक गए, खुद को असहाय महसूस करते हुए, और इस उम्मीद में कि शायद करीम खान पीछे मुड़कर देख लें।

कक्ष में नवाब की हालत धीरे-धीरे सामान्य हो रही थी। वे अब भी अपनी लंबी कुर्सी पर आधे लेटे हुए थे, लेकिन उनके शरीर में ऐंठन नहीं थी; ठंडे मौसम के बावजूद उन्हें पसीना आ रहा था। एक निजी सेवक उनके माथे को मुलायम रुमाल से पोंछ रहा था; दो अन्य सेवक कुछ दूरी पर पीछे खड़े होकर ताड़ के पत्तों से बने बड़े पंखे धीरे-धीरे हिला रहे थे। एक गदाधारी एक ऊंचे,

नक्काशीदार गिलास में ठंडा पेय लेकर एक तवे पर खड़ा था। नवाब ने जाहिर तौर पर उनमें से किसी पर ध्यान नहीं दिया; उनकी आंखें अब भी खाली थीं, छत पर टिकी हुई थीं। एक महिला परिचारिका अपने मलमल के ओढ़नी से उनके पैरों के तलवों को कोमलता से मल रही थी। करीम खान संभलकर कक्ष में दाखिल हुए; उन्होंने राजदंड धारण करने वाले को इशारा करके पूछा कि क्या किसी हकीम या वैद्य ने नवाब को देखा है। जवाब नकारात्मक मिलने पर वे नवाब के चरणों में बैठ गए और उनके घुटनों को हल्के से छूते हुए अत्यंत मधुर और विनम्र स्वर में बोले, "मेरे बादशाह को क्या हुआ? किसने उन्हें नाराज़ किया? किसने इतनी धृष्टता की है?"

नवाब ने छत से अपनी निगाहें हटाईं और उसी खाली निगाहों से करीम खान को देखा। करीम खान को देखते ही उनका चेहरा हमेशा फूल की तरह खिल उठता था, लेकिन इस बार वह भावहीन, निर्जीव सा लग रहा था।

'कृपया कुछ कहिए, मेरे स्वामी,' करीम खान ने नवाब के घुटने को धीरे से हिलाया, मानो उन्हें जगाने की कोशिश कर रहा हो। 'यह आपके आदेश का अधिकार है। यहाँ हर कोई मौजूद है, आपके लिए अपनी जान देने को तैयार है। आपको बस एक शब्द कहना है; वह पूरा हो जाएगा।'

अब नवाब ने करीम खान को आश्चर्य भरी निगाहों से देखा, मानो उसे उसके आने का एहसास अभी-अभी हुआ हो।

'करीम खान, अब और कुछ नहीं बचा है,' उसने कर्कश आवाज में कहा। 'अब मारने और मरने का समय है।'

करीम खान ने हल्की सी हंसी हंसी, लेकिन उसके व्यंग्यपूर्ण हास्य में धमकी का भाव झलक रहा था: 'महामहिम को कम से कम यह आदेश तो देना चाहिए कि किसे मौत की सजा दी जानी है। मैं तो उन्हें मारने आया हूँ!'

'लोहारू खो गया है, उस पर कब्ज़ा कर लिया गया है। यह उस दलाल, उस दलाल की साजिशों की वजह से हुआ है! मुझे उसी दिन उसका काम तमाम कर देना चाहिए था।'

'महामहिम पहेलियों में बात करते हैं,' करीम खान ने एक पुराने दोस्त के अंदाज में कहा।

शम्सुद्दीन अहमद खान ने उस कागज की ओर इशारा किया जो अभी भी वहीं पड़ा था जहाँ उन्होंने उसे गिराया था। 'क्यों न आप उसे उठाएँ और पढ़ें? सब कुछ उसमें लिखा है।'

करीम खान ने जैसे ही अखबार पढ़ा, सारे तथ्य एकदम स्पष्ट हो गए। उनके चेहरे पर दुख और पछतावे के बादल छा गए, लेकिन जल्द ही उनकी जगह गंभीरता और कार्रवाई करने का दृढ़ निश्चय आ गया।

मैं माननीय न्यायाधीश के आदेश की प्रतीक्षा कर रहा हूँ। क्या मुझे दिल्ली जाना चाहिए या कलकत्ता? क्या अब अपील फिरंगी बादशाह के पास होगी?

शम्सुद्दीन अहमद ने लगभग फुसफुसाते हुए कहा, 'कैसी अपील, कैसी याचिका? अब कुछ नहीं बदला जा सकता। उनसे बदला तो अल्लाह ही लेगा। वही सबसे शक्तिशाली और सबसे बड़ा बदला लेने वाला है।'

'माननीय न्यायाधीश महोदय, हम भी बदला ले सकते हैं।'

नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान ने अपनी मुट्ठी कुर्सी के आर्मरेस्ट पर जोर से पटकी और चिल्लाकर

कहा, 'क्या कोई ऐसा नहीं है जो उस नीच काफिर फ्रेजर का अंत कर दे, ताकि कम से कम मेरे दिल को कुछ तसल्ली तो मिल सके?'
चारों ओर सन्नाटा छा गया। कुछ देर की खामोशी के बाद करीम खान बोले, “महामहिम ने अभी तक अपना भोजन नहीं किया है। हवेली के अंदर बहुत चिंता और अफरा-तफरी का माहौल है। कृपया बताएं कि आप उन्हें और छोटे बच्चों को कब तक इंतजार करवाएंगे?”
शम्सुद्दीन अहमद खान ने कुछ हैरानी से करीम खान की ओर देखा। विषय में अचानक आए इस बदलाव का कोई कारण तो होगा ही? पर कारण क्या हो सकता है? वह कुछ कहना चाहते थे, लेकिन करीम खान ने बीच में ही बोलते हुए कहा, 'दरअसल, मैं समृद्धि के केंद्र, भगवान से अनुमति लेने आया हूँ।' वह कुछ देर रुके, मानो कोई सामान्य और रोज़मर्रा की बात कर रहे हों, जिसे ज़ोर देकर या जल्दी में कहने की ज़रूरत न हो, और फिर बोले, 'मुझे एक ज़रूरी काम है और मैं अभी दिल्ली के लिए रवाना होने वाला हूँ। परम पूज्य को दोपहर का भोजन करना चाहिए। लगता है उनकी तबीयत ठीक नहीं है। उन्हें थोड़ी देर आराम करने दीजिए, फिर मैं अपने कुछ सुझाव विचार के लिए रखूँगा।'
उन्होंने नवाब के घुटने को फिर छुआ, उठे और सलाम में सात बार झुके।
नवाब ने लगभग दबी हुई आवाज़ में कहा, 'जाओ। मैं तुम्हें ईश्वर की देखरेख में सौंपता हूँ।'
करीम खान शांत भाव से पीछे हटते हुए कक्ष से बाहर चले गए। कुछ मिनटों तक फिर सन्नाटा छा गया। राजदंड धारण करने वाले ने नवाब को फिर से ठंडे पेय का गिलास दिया; उन्होंने फिर से मना कर दिया। कुछ देर तक फिर कोई हलचल या गतिविधि नहीं हुई। हालाँकि, शम्सुद्दीन अहमद खान अब अधिक संयमित प्रतीत हो रहे थे; वे तुरंत उठ बैठे और अपना चेहरा धोने के लिए ताज़ा पानी और वाशबेसिन लाने का अनुरोध किया। नवाब द्वारा चेहरा धोने और सुखाने के बाद, एक सेवक ने उनके चेहरे, हाथों और पैरों पर गुलाब के इत्र से हल्का सुगंधित जल छिड़का। नवाब ने अब कक्ष में चारों ओर देखा और सुभ दौलत को एक कोने में खड़े देखा, जो करीम खान को बाहर जाते देख चुपके से अंदर आ गई थी, अपने चादर में शालीनता से लिपटी हुई। शम्सुद्दीन अहमद ने उनसे विनम्रतापूर्वक, लेकिन परिचित तु का प्रयोग करते हुए पूछा, 'तो, सुभ दौलत, आप इस समय यहाँ कैसे उपस्थित हैं? क्या सब ठीक है?'
सुभ दौलत ने फिर तीन बार जल्दी से सलाम किया और पूछा, “अब महाराज कैसा महसूस कर रहे हैं? बेगम साहब जानना चाहती हैं कि क्या हकीम साहब को बुलाने की राय नहीं बनी थी? क्या अब महाराज बेहतर महसूस कर रहे हैं?”
शम्सुद्दीन अहमद खान ने एक गहरी, सर्द आह भरी और, कुछ स्वयं को संबोधित करते हुए, कुछ उपस्थित लोगों को संबोधित करते हुए, ईरानी कवि सैदी तेहरानी की एक कविता पढ़ी:

दुनिया का मुझसे कोई लेना-देना नहीं है, सिवाय मुझे जलाकर राख कर देने के; मोमबत्ती की तरह, मेरे अनाज के दानों में आंसुओं के सिवा कोई दाना नहीं है।
अपनी आवाज़ को सामान्य करने की कोशिश करते हुए, उन्होंने सुभ दौलत से विनम्रतापूर्वक कहा, 'हकीम की कोई ज़रूरत नहीं है। मैं ठीक हूँ। अंदर जाइए और दोपहर का भोजन तैयार

करवाइए। मैं अभी आता हूँ।'
तीन सलाम करते हुए, सुब्ह दौलत पीछे की ओर चलते हुए कमरे से बाहर निकल गए। नवाब ने उनके लिए एक हल्की, खुली पालकी तैयार करने का आदेश दिया ताकि वे हरम सारा जाने से पहले थोड़ी देर ताज़ी हवा ले सकें।
7 अक्टूबर 1834 की मंगलवार की शाम को करीम खान और अनिया मेवाती दिल्ली से बारह मील दूर गुड़गांव पहुंचे और एक स्थानीय सराय में रात बिताई। अगले दिन दोपहर तक वे दिल्ली में थे और दरियागंज हवेली में ठहरे। चूंकि वे अक्सर वहां आते-जाते रहते थे, इसलिए किसी को आश्चर्य नहीं हुआ और न ही किसी ने उनसे पूछा कि वे वहां क्यों आए हैं। चूंकि नवाब इन महीनों के दौरान अपने क्षेत्रों में निरीक्षण के लिए निकलते थे, इसलिए किसी ने यह नहीं पूछा कि नवाब कब और क्या वहां आने वाले हैं।
करीम खान को जल्द ही पता चल गया कि फ्रेजर उस समय दिल्ली में नहीं थे, क्योंकि वे भी शीतकालीन निरीक्षण पर निकले हुए थे। अंग्रेजों के नियंत्रण वाला 'दिल्ली' क्षेत्र अपने आप में विशाल था, लेकिन उन दिनों इसका विशेष महत्व था क्योंकि फिरंगी साहबों की निगाहें पंजाब पर टिकी हुई थीं; इसलिए पंजाब से सटे और दिल्ली से सबसे दूर स्थित क्षेत्रों को साहिबों के निरीक्षण कार्यक्रमों में हमेशा प्राथमिकता दी जाती थी। फ्रेजर उन दिनों दिल्ली लौटते तो थे, लेकिन बहुत कम। उनका शाम का भ्रमण बंद हो गया था; और वे अपना अधिकांश समय रेजिडेंसी के अंदर ही बिताते थे। कुछ दिनों बाद खबर आई कि देश के उस हिस्से में शांति भंग होने के कारण वरिष्ठ साहिब बहादुर ने करनाल को अपना शिविर मुख्यालय घोषित कर दिया है और वे जल्द ही नहीं बल्कि देर से दिल्ली लौटेंगे।
करीम खान को दिल्ली में बैठे हुए लगभग तीन महीने हो चुके थे। इस दौरान उनकी फ्रेजर से मुलाकात तो दूर, एक-दो बार ही हुई थी। उनके भरोसेमंद मुखबिर और जासूस, जिन्हें दिन-रात फ्रेजर पर नजर रखने के लिए तैनात किया गया था, मानो वेतन लेकर छुट्टी पर थे। नवंबर का महीना बीतकर अब दिसंबर का मध्य आ चुका था। साहिबों के शिविरों और महलों में उस महान दिन की तैयारियों की गहमागहमी शुरू हो गई थी।
करीम खान को पता चला कि विलियम फ्रेजर दिल्ली लौटकर महान दिवस और फिरंगी नव वर्ष मनाने वाले हैं। उन्हें अब प्रबल आशा थी कि एक सप्ताह या दस दिन से अधिक समय में उनका तीर फ्रेजर की छाती को भेद देगा। उन्होंने अपनी टीम को निर्देश दिया कि वे सामान्य से अधिक सतर्क रहें और फ्रेजर की गतिविधियों की जानकारी उन्हें पल-पल, या कम से कम अंतराल पर, मिलती रहे।
फ्रेजर के दिल्ली लौटने की खबर उन तक पहुँचने से पहले ही, एक संदेशवाहक ने उन्हें शम्सुद्दीन अहमद खान का एक पत्र पहुँचाया। फारसी में लिखा गया यह पत्र, उस समय की आधिकारिक फारसी की तुलना में कम औपचारिक और जटिल था, जिसका शाब्दिक अनुवाद नीचे दिया गया है:
महान खान, वीरता के प्रतीक, शिकार के सरदार, मुहम्मद करीम खान भरमारू: ईश्वर उनकी रक्षा करें। यह पत्र लिखने का कारण: आप शुभ आधारशिला की राजधानी में लगभग तीन महीने से

रह रहे हैं, लेकिन आपने अभी तक शिकार के लिए कुत्ते खरीदने का महत्वपूर्ण काम पूरा नहीं किया है और न ही इस संबंध में कोई रिपोर्ट या सूचना पत्र प्रस्तुत किया है। इसलिए मुझे यह विचार आ रहा है कि आप शिकार के लिए कुत्ते खरीदने जैसे महत्वपूर्ण कर्तव्यों का निर्वहन करने में पूरी तरह असमर्थ हैं। अतः, इस निर्देश को देखते ही आपको तुरंत किले में लौट आना चाहिए। विलंब करना बिल्कुल भी उचित नहीं है। चालू वर्ष के शाबान माह की पंद्रहवीं तिथि को, मंगलवार को, सुबह के उत्तरार्ध में लिखा गया।

यह पत्र अनौपचारिक शिकस्तह लिपि में शम्सुद्दीन अहमद खान द्वारा उनकी बेहद सुरीली लिखावट में लिखा गया था। हालांकि, इस पर हस्ताक्षर नहीं थे, न ही नवाब की मुहर थी, बल्कि कोई और मुहर भी नहीं थी। जिस कागज पर यह लिखा गया था, वह नवाब के कार्यालय में इस्तेमाल होने वाले उच्च गुणवत्ता वाले मोटे कागज जैसा नहीं था। करीम खान को इसमें कोई संदेह नहीं था कि इस निर्देश के लेखक उनके मालिक ही थे। अगली सुबह, उन्होंने फिरोजपुर झिरका के लिए अपना सामान पैक किया। निकलते समय उनके मन में यह विचार आया कि इस निर्देश को हवेली में छोड़ना उचित नहीं होगा; वास्तव में, इसे जलाकर नष्ट कर देना ही उचित होगा। उनका विवेक, या कहें कि स्वभाव, उनके नवाब की लिखावट वाले कागज को फाड़ने या जलाने को तैयार नहीं था, इसलिए कुछ सोचने के बाद उन्होंने उस कागज को दरियागंज स्थित हवेली के सामने एक कुएं में डाल दिया।

दुगनी रफ्तार से सफर करते हुए करीम खान दूसरे दिन दोपहर को फिरोजपुर के किले पर पहुंचे। सूर्यास्त से पहले की नमाज के बाद उन्हें नवाब से मिलने का मौका मिला, जो कुछ वरिष्ठ सलाहकारों और साथियों के साथ भोजन करने बैठे थे। नवाब ने करीम खान को उनके साथ बैठने का इशारा किया। भोजन के दौरान औपचारिक अभिवादन और अभिवादन के अलावा कोई बातचीत नहीं हुई, लेकिन यह स्पष्ट था कि नवाब का चेहरा हमेशा की तरह खुशमिजाज नहीं था। भोजन के बाद हुक्का पीते समय, करीम खान ने एक सलाहकार की किसी बात का जवाब देते हुए कहा कि अगर उनके मालिक, उनके आश्रय और उनके सच्चे घर को किसी दुश्मन से किसी भी तरह का नुकसान पहुंचता है, तो वे चुप नहीं बैठेंगे और तभी चैन की सांस लेंगे जब वे उस दुश्मन को उसके अंतिम विश्राम स्थल पर पहुंचा देंगे।

नवाब ने हल्की मुस्कान के साथ कहा, 'निस्संदेह। पेट भरने वाले लोग इसी तरह लंबी-चौड़ी कहानियां गढ़ते हैं।'

करीम खान को किसी स्पष्टीकरण या व्याख्या की आवश्यकता नहीं थी; यह स्पष्ट था कि वही उस तीखे व्यंग्य का निशाना थे। यह बात उन्हें और भी अधिक चुभी क्योंकि यह अन्यायपूर्ण नहीं थी। शम्सुद्दीन अहमद खान और करीम खान बचपन से दोस्त थे, इसलिए नवाब की टिप्पणी करीम खान के दिल में एक लंबी सुई के चुभने की तरह चुभी, लेकिन उस समय चुप रहना ही सबसे अच्छा था। कुछ देर बाद उन्होंने जाने की अनुमति ली।

जब वह किले के एक सुनसान कोने में स्थित अपने अपार्टमेंट में पहुँचे, तो उन्हें बताया गया कि रेजीडेंसी के कुछ 'स्थानीय' लेखाकार—जिन्हें तब मूटसुड्डी कहा जाता था और अब क्लर्क कहा जाता है—साथ ही राज्य के मुख्य कोषाध्यक्ष और लोहारू के दीवान पिछले दो महीनों से लोहारू

को मुख्य राज्य से अलग करने के लिए कागजात तैयार करने में लगे हुए हैं। पिछले दो महीनों से लोहारू से कोई राजस्व राज्य के मुख्य कोषाध्यक्ष को नहीं भेजा गया था। कई साल पहले, जब उत्तराधिकार को लेकर विवाद उठा था, तब फिरंगी ने फैसला सुनाया था कि लोहारू अमीनउद्दीन अहमद खान और जियाउद्दीन अहमद खान की साझा संपत्ति होगी। उस समय लोहारू से प्रति वर्ष 25,000 शाही रुपये का राजस्व प्राप्त होता था। फिरंगी ने आगे यह निर्णय लिया कि राज्य के प्रशासन के खर्चों को पूरा करने के लिए राजस्व से 15,000 रुपये की कटौती की जाएगी और 10,000 रुपये दोनों भाइयों के बीच समान रूप से विभाजित किए जाएंगे, इस शर्त के साथ कि चूंकि जियाउद्दीन अहमद खान उस समय नाबालिग थे, इसलिए उनके बालिग होने तक उनके खर्चों की जिम्मेदारी अमीनउद्दीन अहमद खान की होगी और उनका हिस्सा हर महीने हिसार स्थित अंग्रेजी खजाने में जमा किया जाएगा।

जब वह व्यवस्था रद्द कर दी गई, तो लोहारू का अतिरिक्त राजस्व फिरोजपुर के मुख्य खजाने में जमा होने लगा और वहीं से दोनों छोटे भाई-बहनों को भुगतान किया जाने लगा। अब स्थिति उलट गई थी और पहले जैसी स्थिति बहाल हो गई थी। रेजीडेंसी के विद्वान हर एक पैसे का हिसाब रखने में जुटे थे ताकि पता चल सके कि लोहारू के राजस्व का कहीं कोई दुरुपयोग तो नहीं हुआ है। जले पर नमक छिड़कते हुए, दोनों भाई-बहन अपने पिता द्वारा छोड़ी गई नकद संपत्ति और आभूषणों में, साथ ही फिरोजपुर किले में मौजूद फर्नीचर, कांच के बर्तन, कालीन आदि में भी हिस्सा मांग रहे थे। इसलिए फिरोजपुर किले के अंदर मौजूद सभी कीमती सामानों की सूची बनाई जा रही थी ताकि भाई-बहनों को उनका हिस्सा रसीद के तहत दिया जा सके।

करीम खान के लिए लोहारू उतना ही घर था जितना फिरोजपुर; दोनों शहरों के किले उनके बचपन की यादों से रंगे हुए थे। अब लोहारू की घेराबंदी और संपत्ति के क्रूर बंटवारे की सच्चाई ने उन्हें बुरी तरह से आहत किया। उन्हें लगा जैसे उनका अपना घर न केवल विभाजित हो रहा है, बल्कि किसी तरह उजाड़ भी हो रहा है। अन्याय का बदला लेने का उनका इरादा और भी मजबूत हो गया; अब इसमें शर्म और पसीने की अनुभूति भी शामिल हो गई थी।

उसने सोचा कि उसे तुरंत हवेली लौटकर नवाब से प्रवेश की विनती करनी चाहिए और अत्यंत विनम्रतापूर्वक क्षमा मांगते हुए यह वादा करना चाहिए कि वह अपना वचन निश्चित रूप से और शीघ्रता से पूरा करेगा। लेकिन उसे यह विचार आया कि ऐसे विषय पर चर्चा करना जहाँ कोई सुन सकता है, विवेक के विरुद्ध होगा। उसने धैर्य बनाए रखा और उपयुक्त अवसर की प्रतीक्षा की।

कुछ दिनों बाद, जब वह नवाब के साथ शिकार अभियान पर गया, तो उसे उसके साथ अकेले रहने का मौका मिला और उसने कहा, 'मैं महामहिम के सामने शर्मिंदा हूं।'

‘मुझे खुद अपनी नजरों में शर्म आती है, करीम खान।’

मैं अपने पेट को लेकर लापरवाह नहीं हूँ; मैं अपने गुरु को आदर्श मानता हूँ और उनकी पूजा करता हूँ।

‘और मैं कोई मनमानी करने वाला तानाशाह नहीं हूँ। लेकिन मैं गंभीर प्रयास और उस प्रयास से अच्छे परिणाम की उम्मीद करता हूँ।’

‘प्रयास में कभी कोई कमी नहीं आएगी। कभी कोई कमी नहीं आई है। मैंने माननीय महोदय का

नमक खाया है और हमेशा खाता रहूंगा। मैं एक रोहिल्ला हूं, शराब बनाने वाला या बेचने वाला नहीं। सच्चे व्यक्ति का वचन जीवंत होता है।'
क्या एक सच्चे आदमी को एक नीच लोमड़ी में बदलने में लंबा समय लगता है?
करीम खान ने अपनी कमरबंद से अपना शिकार करने वाला चाकू निकाला और उसकी नोक से अपने गले की त्वचा को छेदते हुए कहा, 'क्या तुम मुझसे यह कह रहे हो?'
नवाब ने अपना हाथ आगे बढ़ाया और धीरे से करीम खान की गर्दन से चाकू हटा दिया। चाकू को अपनी गर्दन के नीचे रखते हुए नवाब ने कहा, 'तुम्हारे सम्मान और शौर्य को मुझसे बेहतर कोई नहीं जानता। तुम बचपन से मेरे साथी रहे हो। तुम्हें भी मुझे अच्छी तरह जानना चाहिए।'
मैं तुम्हारे दिल की गहराई को भली-भांति जानता हूँ। जब तक मैं तुम्हारे दिल की इच्छा पूरी नहीं कर लेता, तब तक मुझे चैन की नींद नहीं आएगी। पहले दिन से ही मेरे मन में बस एक ही भूख है, जो मुझे पीड़ा देती है।
नवाब करीम खान के पास गए और उनके कंधे पर थपथपाते हुए बोले, 'मुझे तुम पर पूरा भरोसा है।'
दोनों अपने-अपने विचारों में खोए हुए लग रहे थे, क्योंकि करीम खान ने कोई जवाब नहीं दिया।
कुछ मिनट बाद, नवाब ने धीरे से, मानो खुद से ही कहा, 'मार्च में हालात बेहतर हो सकते हैं।'
'सर, बिल्कुल उपयुक्त। मैं मार्च की शुरुआत में दिल्ली जाऊंगा।'
उस समय या भविष्य में भी उन दोनों के बीच इस विषय पर कोई बातचीत नहीं हुई। खबर मिली थी कि शहर के ठीक बाहर स्थित खेतों में काले हिरणों का एक बड़ा झुंड घुस आया था, जिससे काफी नुकसान हुआ था। दोनों शिकारी एक-दो हिरणों को मारने और बाकी को भगाने के लिए निकले। हालांकि, काफी बड़े इलाके में घूमने के बावजूद उन्हें कोई काला हिरण नहीं मिला। वैसे भी, दोनों शिकारी काले हिरणों को नुकसान पहुँचाने के इच्छुक नहीं थे, इसलिए वे किले में वापस आ गए, इस बात से संतुष्ट होकर कि जानवरों से कोई खतरा नहीं है।

जनवरी का महीना बीत गया, फिर फरवरी, मानो पलक झपकते ही आ गया। सोमवार का दिन था और तारीख थी 3 मार्च, जब करीम खान और अनिया मेवाती फिर से दिल्ली में थे और उन्हें यह खबर मिली कि फ्रेजर साहब दिल्ली में हैं। करीम खान ने तुरंत अपने जासूसों को उनके पुराने काम पर लगा दिया। नियमित जासूसों से संतुष्ट न होकर, उन्होंने अनिया को भी अपने साथ शामिल कर लिया और वे पहाड़ी पर स्थित फ्रेजर की हवेली और अलीपुर रोड पर लुडलो कैसल स्थित कमिश्नर कोर्ट पर नजर रखने लगे।

उन्हें जल्द ही फ्रेजर के कार्यक्रम के बारे में सब कुछ पता चल गया, लेकिन यह जानकारी किसी काम की नहीं थी। फ्रेजर दिन में शायद ही कभी अकेले बाहर जाते थे, और न ही उनके नियमित रास्ते ऐसे थे जहाँ कम से कम पंद्रह मिनट तक यातायात न हो। फ्रेजर की मुलाकातें ज्यादातर थॉमस मेटकाफ या उनके दूर के रिश्तेदार साइमन से मिलने तक ही सीमित थीं, और कभी-कभी सिकंदर साहब (यानी जेम्स स्किनर) से भी। मेटकाफ का घर, जिसे तब और अब भी मेटकाफ हाउस (उस समय ज्यादातर स्थानीय लोगों के लिए मटका कोठी) कहा जाता है, अलीपुर रोड के बिल्कुल आखिरी छोर पर स्थित था। साइमन फ्रेजर और जेम्स स्किनर कश्मीरी गेट से थोड़ा आगे सिविल लाइंस में रहते थे। केवल मेटकाफ हाउस ही फ्रेजर के घर से काफी दूरी पर था; बाकी दोनों घर उससे कुछ मील की दूरी पर थे।

शाम को, फ्रेजर हमेशा सूर्यास्त से पूरे दो घंटे पहले घर लौट आता था, और देर रात भी जिन सड़कों से वह गुजरता था, वे हमेशा अच्छी तरह से रोशन और व्यस्त रहती थीं। उसके घर जाने के लिए, मुख्य सड़क छोड़कर पहाड़ी पर स्थित उसकी निजी सड़क पर जाना पड़ता था। यह सड़क लगभग हर समय शांत और सुनसान रहती थी, इसलिए घात लगाकर छिपने के लिए उपयुक्त नहीं थी। रणनीति के अनुसार, फ्रेजर को किसी एक अकेले स्थान पर ढूँढ़कर वहीं पर उसे मार देना चाहिए था।

अक्सर यह कहा जाता है कि फ्रेजर का महल बारा हिंदू राव में स्थित था। यह पूरी तरह सही नहीं है। महल निश्चित रूप से आधुनिक दिल्ली के पड़ोस में था, जिसे बारा हिंदू राव कहा जाता है; वास्तव में, उस समय बारा हिंदू राव नाम का कोई स्थान नहीं था। किशनगंज और पहाड़ी के बीच तब कुछ ही दुकानें और छोटे-छोटे घर थे; बाकी का क्षेत्र घनी झाड़ियों और छोटे फूलों वाले पेड़ों से आच्छादित था। ज़मीन कंकड़-पत्थर वाली थी। एक सड़क किशनगंज को पहले बताई गई दुकानों और घरों से जोड़ती थी। पहाड़ी की चढ़ाई वहीं से शुरू होती थी जहाँ सड़क समाप्त होती थी; जैसा कि पहले बताया गया है, यह फ्रेजर की निजी सड़क थी, संकरी, और लाल कंकड़ और मटर के आकार के सफेद पत्थरों से ढकी हुई थी। फ्रेजर ने अपनी सड़क के दोनों ओर एक छोटा सा क्षेत्र साफ करवाया था और उसमें सदाबहार या मौसमी फूल वाले झाड़ियाँ और पौधे तथा कुछ फलदार पेड़ लगवाए थे।

जैसे-जैसे हम सड़क पर आगे बढ़ते गए, फ्रेजर की हवेली का पहला द्वार दिखाई दिया। इसके

आगे सड़क घुमावदार होकर ऊपर की ओर जाती थी, जिसके दोनों ओर एक ही प्रकार के पेड़-पौधे थे। इस प्रकार, सड़क देखने में तो कुछ हद तक मनमोहक लग रही थी, लेकिन बाकी का इलाका और पहाड़ी घने पत्तों के कारण बेहद डरावने और अंधेरे में डूबे हुए लग रहे थे। जैसा कि पहले बताया गया है, इस वन क्षेत्र का कोई नाम नहीं था, सिवाय इसके कि पहाड़ी को हिंदी में 'पहाड़ी' कहा जाता था और आसपास के इलाके को फ्रेजर साहब की कोठी के नाम से जाना जाता था। फ्रेजर की मृत्यु के बाद उनकी संपत्ति की बिक्री में, हिंदू राव नामक एक धनी जमींदार ने सारी जमीन और हवेली खरीद ली, और इसीलिए इसका नाम 'बारा हिंदू राव' पड़ा, जो आज भी प्रचलित है। फ्रेजर की हवेली का अधिकांश भाग अब एक खंडहर है, क्योंकि 1857 में अंग्रेजी सैनिकों द्वारा इस पर भारी गोलाबारी की गई थी, क्योंकि यह विद्रोही सैनिकों का एक महत्वपूर्ण सामरिक मुख्यालय था। उस कभी गौरवशाली इमारत का केवल एक छोटा सा हिस्सा ही बचा है, जो अब हिंदू राव अस्पताल का एक भाग है।

22 मार्च 1835 को जब फ्रेजर की बग्गी किशनगंज से निकली, तो काफी देर हो चुकी थी। वह किशनगढ़ के राजा कल्याण सिंह (राजपुताना के किशनगढ़ से अलग) द्वारा आयोजित भोज में अतिथि थे। भोज के बाद नृत्य-नाच और शराब पीने का सिलसिला काफी देर तक चला और फ्रेजर ने सामान्य से कहीं अधिक शराब पी ली। लगभग बेहोशी की हालत में, उनके अंगरक्षकों और कल्याण सिंह के नौकरों ने उन्हें उनकी गाड़ी तक पहुँचाया। एक घुड़सवार लालटेन लेकर आगे चल रहा था और चार अन्य बग्गी के पीछे-पीछे आ रहे थे। उन सभी पाँचों ने राजा के सौहार्दपूर्ण व्यवहार का भरपूर आनंद लिया था, जिसके कारण उनकी प्रतिक्रियाएँ काफी धीमी हो गई थीं। और यद्यपि सड़क सुनसान थी, फिर भी उसे बिल्कुल जोखिम रहित माना गया।

दिल्ली में इस बार असामान्य रूप से ठंडी सर्दी पड़ी थी; मार्च का महीना भी बेहद सर्द था, और घनी वनस्पति और ओस के कारण वातावरण धुंध से भरा हुआ था। इतना अंधेरा था कि दृश्यता लगभग दस कदम तक ही सीमित थी। फ्रेजर की गाड़ी पर लगे लैंपों के अलावा कोई रोशनी नहीं थी। ये अंग्रेजी डिज़ाइन के कोच लैंप थे; काफी सजावटी, नीले या हरे रंग के शेड वाले। फ्रेजर के आगे चल रहे घुड़सवार के घोड़े की लगाम पर एक शक्तिशाली लालटेन थी, लेकिन उसकी रोशनी दिखाई नहीं दे रही थी: या तो लालटेन बुझ गई थी, या घुड़सवार इतनी दूर निकल गया था कि फ्रेजर की गाड़ी उसकी रोशनी की सीमा से बाहर हो गई थी। वह काले वस्त्र पहने हुए था और एक विशाल काले अरबी घोड़े पर सवार था जो परिचित सड़क पर अपने कदमों में स्थिर और सहज था: घोड़ा और घुड़सवार दोनों ही अंधेरे में घुलमिल गए प्रतीत हो रहे थे।

फ्रेजर ने दरबारी पोशाक पहनी हुई थी: तंग ऊनी पतलून; बेहतरीन गुणवत्ता वाली मलमल की सफेद कमीज जिसकी आस्तीन और गर्दन पर रेशम की कढ़ाई थी; कमीज के ऊपर काली ब्रोकेड की जैकेट, जिसमें सोने की घड़ी की चेन दिखाई दे रही थी; जैकेट के ऊपर एक छोटा कोट, कमर पर एकदम कसा हुआ और छोटी आस्तीनों वाला, ताकि कढ़ाई और लटकन दिखाई दें; गले में फूलों वाली रेशमी टाई; एक लंबा, भारी कोट जिसे टॉपकोट कहते थे; और एक ऊँची, काली, सख्त रेशमी टोपी जिसे 'टॉप हैट' कहते थे, जो उस समय फैशन में आई थी, ने उनके पहनावे को पूरा किया। वह लगभग बेहोश थे, उनकी आँखें बंद थीं, गर्दन ढीली और एक तरफ झुकी हुई थी।

वह खर्राटे ले रहे थे लेकिन कभी-कभी अचानक चौंककर चुप हो जाते थे।
बग्गी की छत चमड़े और कैनवास से बनी थी और लोहे के स्प्रिंग और सपोर्ट से कसकर खींची हुई थी। इसमें दोनों तरफ आधे दरवाजे थे, जिन्हें बाहर या अंदर से बंद किया जा सकता था। पिछली सीट पर आराम से लेटा हुआ फ्रेजर, बग्गी की बत्तियों की रोशनी में आसानी से दिखाई दे रहा था। गाड़ी अब फ्रेजर की निजी सड़क की ओर जाने वाले मोड़ पर थी। हवा इतनी अंधेरी थी कि गहरे काले रंग के घोड़े पर सवार (जो वास्तव में गहरे लाल-भूरे रंग का था और अंधेरे में काला दिख रहा था) जरा सी भी लापरवाही से मोड़ चूक सकता था। सवार ने कुशलता और सहजता से अपने घोड़े को मोड़ पर मोड़ दिया, और कुछ मिनट बाद फ्रेजर की बग्गी भी उसके पीछे-पीछे आ गई। उसका आगे वाला सवार कहीं दिखाई नहीं दे रहा था, या शायद कोचवान ने काले घोड़े को ही आगे वाला सवार समझ लिया था। जैसे-जैसे बग्गी मोड़ में और अंदर जाती गई, पीछे के चारों सवार कुछ क्षणों के लिए ओझल हो गए।
अचानक काले घोड़े का सवार धीमा हो गया। उसके और बग्गी के बीच की दूरी कम होने लगी; काले घोड़े का सवार और धीमा हो गया, लेकिन कोचवान, जिसका नशा ठंडी रात की हवा से और गहरा हो गया था, ने इस पर ध्यान नहीं दिया। अब काला घोड़ा और बग्गी संकरी सड़क पर समानांतर चल रहे थे। अपने घोड़े को उसके हाल पर छोड़कर, सवार ने अपनी काठी के आगे रखी तोप को उठाया। फ्रेजर का दाहिना हिस्सा ठीक उसी जगह था जहाँ उसे होना चाहिए था। लगभग बिना किसी अंतराल के तीन गोलियां चलाई गईं। पहली गोली फ्रेजर के पेट में लगी। फेफड़ों से गुज़रते हुए, गोली ने उनके जिगर को झुलसा दिया और दो पसलियों को तोड़ते हुए बाहर निकल गई। दूसरी गोली ने उनके दिल में छेद कर दिया और बाईं ओर की दो पसलियों के बीच फंस गई। तीसरी गोली छाती की हड्डी से टकराई, नीचे की ओर गई, पेट को चीरती हुई तिल्ली में जा घुसी। फ्रेजर की मृत्यु तुरंत हो गई: पहली गोली ने ही उन्हें समाप्त कर दिया था। कोचवान को कुछ समझ ही नहीं आया कि क्या हुआ था। काले रंग के घुड़सवार ने घोड़े को एड़ी मारी और बिजली की तेज़ी से किशनगंज की ओर मुड़ गया। उसकी गति और अंधेरी रात ने उसे इतना तेज़ कर दिया कि वह पीछे के पहरेदारों के देखने से पहले ही गायब हो गया। गोलियों की आवाज़ सुनकर वे तेज़ी से यह देखने गए कि बग्गी और उसका सवार सुरक्षित हैं या नहीं। इसी बीच, काले रंग का घुड़सवार संकरी सड़क छोड़कर झाड़ियों और पेड़ों की ओट में छिप गया था। जब तक पीछे के पहरेदार कोचवान के पास पहुँचे, तब तक उसे समझ आ गया था कि इतनी तेज़ी से गायब होने वाला वह काला घुड़सवार फ्रेज़र का आगे का पहरेदार नहीं, बल्कि कोई और था, और शायद उसी ने गोलियाँ चलाई थीं। वह रोने लगा और मदद के लिए चिल्लाने लगा, अपना सीना पीटते हुए। पीछे के चार पहरेदारों में से एक बिना रुके आगे बढ़ गया, असली आगे के पहरेदार को पीछे छोड़ते हुए, और वे मदद मांगने और और रोशनी लाने के लिए हवेली की ओर दौड़ पड़े। बाकी तीन बग्गी के पास रुक गए, हैरान और असमंजस में।
कुछ ही मिनटों में, फ्रेज़र के आदमियों का एक समूह प्रकट हुआ, उनकी मशालें, संगीनें और भाले नंगी स्टील पर चमकते हुए रोशनी का एक छोटा सा जंगल बना रहे थे। फ्रेज़र गहरी नींद में सो रहा था, उस रहस्यमयी घुड़सवार के कारण पैदा हुए डर और सनसनी से बेखबर। उसका मुंह

खुला रह गया था और चेहरा ढीला पड़ गया था; धुंधली, लगभग मंद रोशनी में उसके पीले दांत और भी गंदे और पीले दिखाई दे रहे थे।

फ्रेजर के डिप्टी थॉमस मेटकाफ और नगर मजिस्ट्रेट साइमन फ्रेजर कुछ ही देर में आ पहुँचे, उनके चेहरे थके हुए और सदमे से भरे थे। वे अभी भी अपनी नाइट ड्रेस में थे, लेकिन उनके साथ उनके अपने सैनिक भी थे। कोचवान और फ्रेजर के सभी पाँचों घुड़सवारों को तुरंत गिरफ्तार कर लिया गया, हथकड़ी पहनाई गई और अलीपुर जेल ले जाया गया, जहाँ सैनिकों की एक पलटन ने सुरक्षा घेरा बना रखा था। कंपनी के सर्जन डॉ. मैकनॉटन और उनके सहायक डॉ. चमन लाल कुछ मिनट पहले ही पहुँच चुके थे और थॉमस मेटकाफ और साइमन फ्रेजर के आने तक वे शव की संक्षिप्त जाँच लगभग पूरी कर चुके थे। हालाँकि, शव सर्जनों की हिरासत में ही रहा, जिन्होंने उसे पूरे सम्मान के साथ फ्रेजर के महल तक पहुँचाया।

सार्वजनिक दर्शन और अंतिम संस्कार की तैयारियां तुरंत शुरू हो गईं। भोर होने से पहले ही यह खबर दिल्ली और आसपास के कस्बों में फैल गई थी। अफवाहों का गढ़ माने जाने वाले दिल्ली में सुबह की नमाज अदा होने से पहले ही अफवाहें फैलने लगीं।

शव को तैयार करके अगले दिन सुबह 10 बजे दर्शन के लिए मुख्य बैठक कक्ष में रखा गया। कंपनी बहादुर ने एक घोषणा जारी की और दर्शन के समय से काफी पहले ही उद्घोषकों की एक सेना के माध्यम से पूरे शहर में इसका प्रसार करवाया। घोषणा हिंदी में थी; इसका शाब्दिक अनुवाद नीचे दिया गया है:

यह भूमि अल्लाह की छाया में है, और यहाँ का हुक्म अंग्रेज़ कंपनी के बहादुरों का है। सभी, चाहे कुलीन हों या आम नागरिक, को सूचित किया जाता है कि आज दोपहर साढ़े तीन बजे, अलीपुर के गोरा कब्रिस्तान में, लुडलो महल और नवाब रेजिडेंट बहादुर के दरबार एवं सचिवालय के पास, उच्च पोर्टल के नवाब, जो शासक और सरदार के पद पर आसीन थे, मुअज़्ज़म-उद-दौला (साम्राज्य के सबसे सम्मानित), अमीन-उल मुल्क (देश के विश्वसनीय संरक्षक), विलियम फ्रेजर सीनियर साहिब बहादुर, शहीद, जिनका अल्लाह की रहमत है और जिन्हें अल्लाह की क्षमा प्राप्त है, का अंतिम संस्कार होगा। नगर में रहने वाले जो भी नागरिक अंतिम दर्शन और शोक संवेदना के लिए आना चाहते हैं, वे मुअज़्ज़म-उद-दौला अमीन-उल मुल्क, सीनियर साहिब बहादुर, शहीद, के निवास पर उपस्थित हों।

घोषणा होने से काफी पहले ही, बड़ी संख्या में दर्शक और शोक व्यक्त करने वाले लोग फ्रेजर हवेली और अपराध स्थल पर इकट्ठा होने लगे थे।

शहर में फैली अफवाहों में से दो सबसे प्रबल थीं। इनमें से कमज़ोर अफवाह यह थी कि विलियम फ्रेज़र शम्सुद्दीन अहमद खान के शासन से लोहारू को हटाने के लिए ज़िम्मेदार था; साथ ही, उसने जहांगीर बेगम के लिए अनुचित और अपमानजनक भाषा का प्रयोग किया था। यह सिद्धांत था कि शम्सुद्दीन अहमद खान ने इन अपराधों का बदला लेने के लिए फ्रेज़र की हत्या करवा दी। दूसरी प्रबल अफवाह यह थी कि इस हत्या के पीछे एक महिला या एक युवक (पेशेवर या गैर-पेशेवर) का हाथ था। ऐसा प्रतीत होता था कि फ्रेज़र साहब ने अपनी पसंद की किसी महिला का अपहरण कर लिया था; उस महिला के मौजूदा प्रेमी ने बदला लेने के लिए हत्या की साजिश रची

थी। काबुली गेट और शालीमार गार्डन के बीच स्थित दिल्ली के विभिन्न उद्यानों - जैसे रौशन आरा बाग, बाग महलदार खान, बाग पटनी मल - में उमड़ने वाले आवारा और लापरवाह लोगों का, जिनमें से अधिकांश समलैंगिक थे, यह मानना था कि इस घटना के पीछे कोई महिला नहीं बल्कि एक लड़का था: यह भी संभव था कि फ्रेजर के किसी अनुचित आचरण या कृत्य से आहत होकर उस लड़के ने ही उसकी हत्या करवा दी हो।

अंग्रेज़ इन और अन्य अफवाहों से भलीभांति अवगत थे: उनके जासूस शहर में हर जगह मौजूद थे, हत्यारे के बारे में छोटी से छोटी जानकारी जुटाने की कोशिश कर रहे थे। अंग्रेजों के मन पर केवल फैली अफवाहें ही नहीं, बल्कि यह संभावना भी हावी थी कि यह हत्या किसी विद्रोह की साजिश का पहला कदम हो सकती है और इसमें राजनीतिक या कम से कम प्रशासनिक पहलू भी शामिल हो सकता है।

बरेली, जो कभी रोहिल्लाओं के अधीन एक महत्वपूर्ण शहर था, में घटी घटनाओं की यादें कंपनी के प्रशासकों के बीच अनुभवी अधिकारियों के मन में ताज़ा थीं। लगभग बारह वर्ष पहले ही प्रसिद्ध रोहिल्ला सरदार हाफ़िज़-उल मुल्क हाफ़िज़ रहमत खान के पोते नवाब मुस्तफा खान ने बरेली में इस्लामी कानून के प्रमुख मध्यस्थ मुफ्ती मुहम्मद इवाज़ के साथ मिलकर अंग्रेज़ शासन के विरुद्ध सशस्त्र विद्रोह का नेतृत्व किया था। यह विद्रोह अल्पकालिक और रक्तपातपूर्ण था, लेकिन जब तक चला, इसने दिल्ली से कलकत्ता तक कंपनी सरकार की नींव हिला दी थी। आयुक्त एडवर्ड कोलब्रुक और कलेक्टर फ्रांसिस लोव की सूझबूझ और दृढ़ संकल्प ने अंततः विद्रोही बलों पर विजय दिलाई, जिन्हें बेरहमी से कुचल दिया गया। बरेली पर दो सप्ताह तक कब्ज़ा रखने वाले विद्रोहियों को उनकी हार के बाद गिरफ्तार कर लिया गया और उन्हें सबसे क्रूर दंड दिए गए।

यदि ऐसी घटना दिल्ली में घटी होती, तो इसके प्रभाव न केवल दूरगामी होते, बल्कि दीर्घकालिक भी हो सकते थे। दिल्ली में इसी तरह की अशांति की आशंका से घबराकर, मेटकाफ और साइमन फ्रेजर ने रेजिडेंसी के पास गोरा कब्रिस्तान में पुलिस और सैन्य बल की पूर्ण उपस्थिति में एक साधारण अंतिम संस्कार का निर्णय लिया। यह उपस्थिति सम्मान के लिए नहीं, बल्कि किसी भी अप्रिय घटना को रोकने के लिए थी। फ्रेजर को फिलहाल एक अज्ञात कब्र में चुपचाप दफनाया जाना था। बाद में, जब जांच से हत्यारे की गिरफ्तारी और किसी भी प्रकार की साजिश का खुलासा हो जाएगा, तब उनका पूर्ण और औपचारिक अंतिम संस्कार किया जाएगा।

हवेली में अंतिम दर्शन और शोक संवेदना व्यक्त करने के लिए सबसे पहले आने वालों में मिर्ज़ा असदुल्ला खान ग़ालिब और शम्सुद्दीन अहमद खान के रक्त संबंधी फ़तुल्लाह बेग खान शामिल थे। फ़तुल्लाह बेग के दादा आरिफ़ जान और शम्सुद्दीन अहमद के दादा कासिम जान भाई थे। फ़तुल्लाह बेग खान की हवेली भी बल्लीमारन में, कटरा और अदीना बेग खान की मस्जिद के सामने थी। ये चचेरे भाई कभी घनिष्ठ मित्र थे, लेकिन घोड़े को लेकर उनके बीच हुए एक छोटे से मज़ाकिया विवाद ने उनके बीच गहरी कड़वाहट और शत्रुता को जन्म दिया।

उस सुबह जब मिर्ज़ा ग़ालिब और मिर्ज़ा फ़तुल्लाह बेग़ फ़्रेज़र हवेली पहुँचे, तो उन्होंने देखा कि पहाड़ी की चढ़ाई से लेकर हवेली के भीतरी द्वार तक गाड़ियों और पैदल लोगों की एक लंबी

कतार लगी हुई थी। अंतिम दर्शन के लिए निर्धारित नियम के अनुसार, फ़्रेज़र के ताबूत को बड़े ड्राइंग रूम में रखा गया था, जिसमें शव को शाही पोशाक में रखा गया था और सभी पदक, निजी हथियार और सम्मान प्रदर्शित किए जा रहे थे; पत्थर के ताबूत को लकड़ी के चबूतरे पर इस तरह रखा गया था जैसे वह शवयात्रा का मंच हो। कंपनी की सेना के चार अंग्रेज़ सैनिक, पूरी वर्दी और हथियारों से लैस, शवयात्रा के मंच के आगे स्थिर खड़े थे, और उनका कमांडिंग अंग्रेज़ सार्जेंट सैनिकों की ओर मुख करके, मंच के पीछे सावधान मुद्रा में खड़ा था। दर्शनार्थियों और शोक व्यक्त करने वालों को अंदर प्रवेश करना, शवयात्रा के चारों ओर एक चक्कर लगाना और फिर दूसरे दरवाजे से बाहर निकलना आवश्यक था। किसी को भी वहाँ रुकने की अनुमति नहीं थी। इस प्रकार, अंतिम दर्शन कक्ष हमेशा लोगों से भरा रहता था।

जैसे ही मिर्ज़ा ग़ालिब और मिर्ज़ा फ़तुल्लाह बेग कक्ष में दाखिल हुए, बेग ने कतार तोड़ दी और ताबूत पर कूद पड़े। उन्होंने शोक में चीख मारी, ताबूत पर गिर पड़े और मानो होश खो बैठे हुए रोते हुए कहा, 'हाय! हाय! शम्सुद्दीन ने तुम्हें नहीं बख्शा!'

एक अंग्रेज ने उन्हें कंधे से पकड़कर हिलाया और बिना किसी औपचारिकता के कमरे से बाहर धकेल दिया। मिर्ज़ा ग़ालिब को फ़तुल्लाह बेग के इस बेतुके और अर्थहीन तमाशे पर शर्मिंदगी महसूस हुई। दरअसल, फ़तुल्लाह बेग ने न केवल उपस्थित भारतीयों का ध्यान शम्सुद्दीन अहमद की संलिप्तता की संभावना की ओर अनावश्यक रूप से आकर्षित किया, बल्कि साइमन फ्रेज़र जैसे अंग्रेजों ने भी इस आरोप पर तुरंत ध्यान दिया।

पानीपत के मजिस्ट्रेट और विलियम फ्रेजर के घनिष्ठ मित्र जॉन लॉरेंस, लगभग पचास मील की बिना रुके यात्रा करते हुए, फ्रेजर के महल में पहुँचे ही थे कि उन्हें फतुल्लाह बेग के नाटक की सूचना मिली; उन्होंने पाया कि थॉमस मेटकाफ इस घटना को ज्यादा महत्व नहीं दे रहे थे। मेटकाफ का मानना था कि यह महज एक घटिया तमाशा था और इसका मुख्य उद्देश्य फतुल्लाह बेग द्वारा शम्सुद्दीन अहमद के प्रति अपनी दुश्मनी को सार्वजनिक रूप से प्रकट करना और संभव हो तो उन्हें अपमानित करना था। लेकिन लॉरेंस और साइमन फ्रेजर इस बात पर पूरी तरह सहमत थे कि इस मामले की जांच होनी चाहिए। अंततः साइमन फ्रेजर ने बहस जीत ली।

अगले दिन साइमन फ्रेजर ने सबसे पहले फतुल्लाह बेग खान को जिला अदालत में बुलाया और उनसे कड़ी पूछताछ की। स्पष्ट था कि फतुल्लाह बेग को कुछ भी पता नहीं था और वे अपने आप पर क्रोधित और शर्मिंदा थे। अब वे केवल यही कह सकते थे कि उन्हें खेद है, उन्हें कुछ नहीं पता। दोनों अंग्रेजों की लंबी और कठोर पूछताछ निष्फल रही। फिर भी, अंग्रेज शासकों ने न केवल फतुल्लाह बेग खान को गिरफ्तार किया, बल्कि शम्सुद्दीन अहमद खान के ससुर, मिर्जा मुगल बेग खान को भी केवल इस आधार पर गिरफ्तार कर लिया कि वे शादुल खान की हवेली में रहते थे, जो फतुल्लाह बेग के घर के पास ही थी।

अंग्रेज़ हलकों में, मिर्ज़ा मुग़ल बेग को एक धूर्त और चालाक व्यक्ति माना जाता था, जिसकी कंपनी बहादुर के प्रति वफ़ादारी संदिग्ध थी। इन घटनाओं का समकालीन विवरण लिखने वाले थॉमस बेकन ने तो स्पष्ट रूप से मिर्ज़ा मुग़ल बेग को इस मामले की शुरुआत से ही जानकारी होने और इसमें शामिल होने का आरोप लगाया है।

लेकिन सच्चाई यह है कि मिर्ज़ा मुग़ल बेग को जुलाई में बल्लीमारन में शम्सुद्दीन अहमद खान और फ्रेज़र की मुलाकात की ज़रा भी जानकारी नहीं थी। लोहारू के मुख्य राज्य से अलग होने की खबर सार्वजनिक होने से बहुत पहले से ही मिर्ज़ा मुग़ल और शम्सुद्दीन अहमद खान की मुलाकात नहीं हुई थी। इस प्रकार, मिर्ज़ा मुग़ल बेग की गिरफ्तारी उतनी ही निष्फल साबित हुई जितनी फतुल्लाह बेग खान की गिरफ्तारी। लेकिन इससे शम्सुद्दीन अहमद खान की छवि को नुकसान ज़रूर पहुँचा, क्योंकि अफवाहों का बाजार गर्म हो गया: शम्सुद्दीन अहमद खान किसी न किसी तरह इस मामले में शामिल थे।

मिर्ज़ा ग़ालिब से भी पूछताछ की गई, लेकिन ज़्यादा नहीं। इससे एक और अफ़वाह फैल गई: मिर्ज़ा नौशाह (ग़ालिब का लोकप्रिय नाम) ने पहले ही दिन सारी जानकारी दे दी थी; अब उनसे और कुछ पूछने की ज़रूरत नहीं थी। यह सच है कि उन दिनों मिर्ज़ा ग़ालिब की थियोडोर प्रेस्कॉट नाम के एक फ़िरंगी अधिकारी से गहरी दोस्ती हो गई थी। लेकिन इसके अलावा, नवाब अहमद बख्श खान के परिवार के साथ अपने लंबे रिश्ते और वैवाहिक संबंध के दौरान, इस कुलीन कवि की कलम से शम्सुद्दीन अहमद खान के पक्ष में एक भी शब्द नहीं निकला था। यह आश्चर्यजनक था, क्योंकि उनका उदार स्वभाव और जीवनशैली, और सभी के साथ शांतिपूर्ण संबंध रखने की उनकी इच्छा, चाहे वह हिंदू हो, मुसलमान हो या नाज़रीन, को देखते हुए यह बात हैरान करने वाली थी। जब शम्सुद्दीन अहमद खान सत्ता में आए, तो ग़ालिब ने फ़ारसी में एक पत्र लिखा, जिसमें उन्होंने कहा कि अब नीच और दुष्ट लोग हावी होंगे, और छोटी मानसिकता वाले लोग राज करेंगे।

नवाब अहमद बख्श खान की मृत्यु के बाद से ही ग़ालिब की शम्सुद्दीन अहमद खान से नाराज़गी की चर्चा पूरे शहर में थी, और फ्रेज़र की हत्या के बाद तो शहर में यह अफवाह फैल गई कि शम्सुद्दीन अहमद खान के खिलाफ मुखबिर फतुल्लाह बेग खान नहीं बल्कि मिर्ज़ा ग़ालिब थे। यह 'खबर' इतनी लोकप्रिय हो गई कि मिर्ज़ा ग़ालिब को उस समय अपने कई पत्रों में अपनी बेगुनाही साबित करनी पड़ी। उन्होंने कहा कि वे केवल प्रेस्कॉट साहब के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध रखने के दोषी थे।

फिर भी, उन दिनों लिखे गए उनके कई पत्रों में कुलीन कवि मिर्ज़ा ग़ालिब की शम्सुद्दीन अहमद के प्रति घृणा और द्वेष स्पष्ट रूप से झलकता है। उदाहरण के लिए, लखनऊ के प्रसिद्ध हिंदी कवि शेख नासिख को फ़ारसी में लिखे एक पत्र में, मिर्ज़ा ग़ालिब ने शम्सुद्दीन अहमद को 'प्राप्त उपकारों के प्रति कृतघ्न और न्यायप्रिय का हत्यारा' बताया। उसी पत्र में, मिर्ज़ा ग़ालिब ने फ्रेज़र के हत्यारे को शाप देते हुए ईश्वर से प्रार्थना की कि 'उस क्रूर, ईश्वर-विहीन व्यक्ति को अनन्त यातना मिले'। फ्रेज़र के निधन के कुछ समय बाद, उन्होंने एक फ़ारसी ग़ज़ल लिखी, जिसका अंतिम छंद इस प्रकार था:

ग़ालिब, ज़रा देखो, कितना अत्याचार, कितना अन्याय! विलियम फ्रेज़र जैसे व्यक्ति को अपने शत्रुओं के दुस्साहस के कारण मरना पड़ा।

निश्चित रूप से, इससे यह साबित नहीं होता, और न ही यह संकेत मिलता है, कि मिर्ज़ा ग़ालिब शम्सुद्दीन अहमद खान के विरुद्ध अंग्रेजों को सूचना दे रहे थे। उस समय दिल्ली के एक अन्य

प्रसिद्ध कवि घनश्याम लाल असी थे। उन्होंने इस घटना की स्मृति में दो फ़ारसी कालक्रम लिखे। उनमें से एक यह था:

देवदूत ने पीड़ा और शोक से भरे चेहरे के साथ कहा: हाय! विलियम फ्रेजर की हत्या के लिए!

मिर्ज़ा ग़ालिब शम्सुद्दीन अहमद के विरुद्ध सक्रिय रहे हों या न रहे हों—और प्रबल संभावना यही है कि वे सक्रिय नहीं थे—भले ही उन्होंने अक्सर शम्सुद्दीन अहमद के विरुद्ध घृणा से भरे भड़काऊ बयान दिए हों। लेकिन उस समय के संदेह भरे माहौल ने यह सुनिश्चित कर दिया कि दिल्ली के महानतम समकालीन कवि और एक प्रसिद्ध कुलीन व्यक्ति पर संदेह के कुछ छोटे-छोटे धब्बे लग ही गए। यह बिल्कुल संभव है कि मिर्ज़ा ग़ालिब को हत्या के मामले में शम्सुद्दीन अहमद खान पर संदेह रहा हो, लेकिन यह भी स्पष्ट है कि उन्होंने अपने संदेह को शब्दों में व्यक्त करने के लिए कुछ नहीं किया।

फतुल्लाह बेग से जुड़ी घटना को नजरअंदाज करते हुए, और मिर्ज़ा ग़ालिब के खिलाफ संदेह को खारिज करते हुए—और हमें ऐसा करना ही होगा—शम्सुद्दीन अहमद खान पर शक करने वाला कोई सबूत सामने नहीं आया। अपराध स्थल पर उस काले घोड़े के खुरों के निशान बेहद भ्रामक थे। जांचकर्ता यह भी पता नहीं लगा पाए थे कि वह रहस्यमयी घुड़सवार फ्रेज़र की गाड़ी तक जाने और वहां से वापस आने के लिए किस रास्ते से गुजरा था।

फिर भी, साइमन फ्रेजर के दिल में बदले की आग धधक रही थी, और शायद जॉन लॉरेंस के दिल में यह और भी ज़्यादा भड़क रही थी। साइमन फ्रेजर को शम्सुद्दीन अहमद खान पर गहरा शक था: इसके पीछे एक नहीं, बल्कि दो मकसद थे। और साइमन को दोनों के बारे में पूरी जानकारी थी। उनका यह भी मानना था कि दिल्ली में अफवाहों का जाल अक्सर ऐसी बातें फैलाता है जिनमें कम से कम सच्चाई की झलक तो होती ही है। स्वाभाविक रूप से, दोनों अधिकारियों ने इस तथ्य को पूरी तरह से नज़रअंदाज़ कर दिया कि उन्हीं के कार्यों—फतुल्लाह खान और मिर्ज़ा मुगल बेग की गिरफ्तारी—ने संदेह की आग को इतना भड़का दिया था कि अब धुआं आसमान तक पहुंच गया था।

उन्होंने आपस में बहस की और उपलब्ध सीमित तथ्यों की जांच की। यह कहना आवश्यक है कि उन्होंने कोई भी निर्णय जल्दबाजी में नहीं लिया। साइमन फ्रेजर और जॉन लॉरेंस को थॉमस मेटकाफ को यह समझाने में पूरे तीन दिन लग गए कि अगले दिन सुबह 4 बजे दरियागंज स्थित शम्सुद्दीन अहमद की हवेली पर छापा मारा जाए। पहले सभी निकास द्वार बंद कर दिए जाएं, फिर हर कोने-कोने की पूरी तरह से तलाशी ली जाए, हालांकि यह स्पष्ट नहीं था कि वहां क्या मिलेगा। यदि वहां छापा न पड़े, तो बल्लीमारान स्थित हवेली के साथ भी ऐसा ही किया जाए। लेकिन बाद वाली हवेली पर अचानक हमला करने से हरम सारा की पवित्रता भंग होने, यहां तक कि नष्ट होने की भी आशंका थी। यह तय किया गया कि जब ऐसी स्थिति आएगी तब इस पर विचार किया जाएगा।

इन फैसलों की जानकारी किसी भी भारतीय कर्मचारी को नहीं दी गई थी।

हत्या की खबर मिलते ही साइमन फ्रेजर ने शहर से बाहर जाने वाले सभी रास्तों को बंद करने का आदेश दिया। जब उन्हें सूचना मिली कि कश्मीरी गेट के पास से एक काले वस्त्रधारी घुड़सवार दरियागंज की ओर तेजी से भागता हुआ देखा गया है, तो उन्होंने आदेश दिया कि शहर में कहीं भी निकले किसी भी घुड़सवार को तुरंत रोका जाए, उसकी पहचान की जाए और उससे उसकी गतिविधियों का ब्योरा मांगा जाए। कंपनी के पुलिसकर्मी, घुड़सवार और अनियमित सैनिक पूरे शहर में फैल गए और इस आदेश का फायदा उठाकर निर्दोष नागरिकों को परेशान करने लगे, यहां तक कि पैदल चलने वालों को भी। लेकिन अनिया इतना चतुर और अनुभवी धावक था कि वह उन आलसी, शहर में बंद अधिकारियों के हाथों पकड़ा नहीं जाना चाहता था। वह पहाड़गंज की विशाल ईद मस्जिद के पीछे की गलियों और उपगलियों के जाल में गायब हो गया और अपेक्षाकृत कम आबादी वाले और अंधेरे इलाकों से होते हुए बुलबुली खाना के पास पहुंचा। फिर तुर्कमान गेट की ऊंची दहलीज फांदकर मेनहदियां के कब्रिस्तान में घुसना आसान था, जो पास ही था, हालांकि वहां रोशनी कुछ कम थी।

वह कब्रिस्तान का चक्कर लगाते हुए फिरोज शाह के कोटला के पास पहुँचा, और लौह स्तंभ के चारों ओर जर्जर इमारतों में टटोलते हुए, तथा अब्द-उन नबी की मस्जिद और खैर-उल मनाज़िल मस्जिद में रोशनी और छाया का लाभ उठाते हुए, वह बारहवीं शताब्दी की महान महिला संत बीबी फातिमा सैम के दरगाह पर पहुँच गया। सौभाग्य से, उनके वार्षिक उर्स के अवसर पर दूर-दूर से आए श्रद्धालुओं की भीड़ वहाँ एकत्रित थी। अनिया आसानी से उनके बीच घुलमिल गया और तीर्थयात्रियों के लिए लगाए गए तंबू के नीचे गुमनामी में सो गया।

वह भोर से पहले उठे और चुपके से फिरोजपुर झिरका की ओर तेजी से बढ़ते हुए, 24 मार्च 1835 की सुबह तड़के किले की प्राचीरों के नीचे पहुँच गए। नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान अभी तक नहीं उठे थे, लेकिन उनके इस निर्देश के मद्देनजर कि जब भी करीम खान या अनिया किले में आएँ, उन्हें अंदर आने दिया जाए और नवाब के समक्ष उपस्थित होने की अनुमति दी जाए, उनके निजी राजदंड धारक ने द्वार पर सूचना भेजी कि अनिया मेवाती द्वार पर उपस्थित हैं और अपनी बात रखने की अनुमति की प्रतीक्षा कर रहे हैं। नवाब अपने शयनकक्ष से बाहर आए और भीतरी उद्यान में खड़े होकर उनका स्वागत किया। जैसे ही अनिया की नजर नवाब पर पड़ी, वह अत्यंत प्रसन्नता से चिल्लाए, 'महामहिम का सौभाग्य सदा बुलंद रहे!'

फिर वह दौड़कर नवाब के पास गया, उनके पैर छुए और इससे पहले कि वह कुछ कह पाता, नवाब ने पूछा, 'तो आप यहाँ किसलिए आए हैं? क्या सब ठीक है?'

‘महामहिम की कृपा से हमारा उद्देश्य पूरा हो गया है!’ अनिया ने झुककर सलाम किया और कहा, ‘दुश्मन का रास्ता साफ हो गया है।’

‘अरे वाह! बहुत बढ़िया! क्या आपने अपनी आँखों से देखा?’

नहीं, माननीय महोदय। लेकिन मैंने स्वयं क़राबीन से तीन गोलियों की आवाज़ सुनी। उसके तुरंत

बाद हर जगह शोर और चीख-पुकार मच गई। वरिष्ठ साहिब बहादुर के निधन की खबर पूरे शहर में बिजली की गति से फैल गई।

और करीम खान?

'महामहिम, मुझे कोई जानकारी नहीं है। करीम कान साहब दुश्मन का पीछा कर रहे थे। तोप की आवाज सुनते ही मैं तुरंत रवाना हो गया ताकि अपने आदरणीय स्वामी को यह खुशखबरी सबसे पहले दे सकूँ। आदरणीय स्वामी जानते हैं कि कान साहब का निशाना कभी नहीं चूकता। इसलिए संदेह की कोई गुंजाइश ही नहीं थी।'

शम्सुद्दीन अहमद खान की रगों में मानो नई ऊर्जा दौड़ उठी। लेकिन उन्होंने खुद पर पूरा नियंत्रण रखा और किसी भी तरह की उत्तेजना या खुशी जाहिर नहीं होने दी। उन्होंने राजदंड धारण करने वाले के लिए ताली बजाई और आदेश दिया कि अनिया को तुरंत दस सोने के मोहर दिए जाएं। फिर उन्होंने कहा, 'अनिया, तुम फिरोजपुर में ही रहो। मैं तुमसे बहुत प्रसन्न हूं, भाई, और तुम्हारे लिए अभी बहुत कुछ तय है।'

नवाब के शब्दों में निहित वादा यह था कि अनिया को पुरस्कार के रूप में बहुत कुछ दिया जाएगा, लेकिन उस समय उसे विशेष दर्जा देना उचित नहीं होगा। अनिया नवाब का अर्थ तो समझ गया, लेकिन पूरी तरह से नहीं; वह झिझका और सात सलाम करने के बाद कुछ अनिश्चितता के साथ नवाब के समक्ष से चला गया। शायद नवाब ने अनिया की आँखों में अविश्वास की झलक देखी, क्योंकि अनिया के जाते ही नवाब ने पुलिस प्रमुख को बुलाया और निर्देश दिया कि अनिया पर गुप्त रूप से नज़र रखी जाए और उसे शहर छोड़ने की अनुमति न दी जाए।

अनिया पीछा करने और गुप्त रूप से निगरानी करने में माहिर था; उसे हर जगह एक कुशल संदेशवाहक और संदेशवाहक के रूप में जाना जाता था और वह घात लगाने, गुप्त निगरानी करने और किसी व्यक्ति का चुपचाप पीछा करने के बारे में सब कुछ जानता था। या शायद पुलिस प्रमुख द्वारा नियुक्त जासूस इस काम के लिए उपयुक्त नहीं थे, क्योंकि अनिया ने बहुत जल्द ही जासूसों को पहचान लिया। स्वाभाविक रूप से, उसने सोचा कि चूंकि उसे नवाब के एक बड़े रहस्य की जानकारी थी, इसलिए नवाब का उसे रास्ते से हटाना और उसके साथ ही रहस्य को दफना देना असंभव नहीं था। अगले दिन, अनिया का संदेह पक्के यकीन में बदल गया।

सुबह-सुबह वह जंगल में शौच करने गया और उसने एक पथरीली पहाड़ी के पीछे छिपने का फैसला किया। जैसे ही वह बैठने वाला था, एक बड़ा पत्थर पहाड़ी से लुढ़कता हुआ आया और लगभग उसके पैरों को कुचल ही डाला, शायद पूरे शरीर को भी। अनिया ने मन ही मन सोचा कि पत्थर उसे कुचलने के इरादे से ही फेंका गया था और यह भावी हत्यारे की एक छोटी सी चूक थी कि वह बच गया। वह पहाड़ी पर चढ़कर दुश्मन के पदचिह्न या निशान ढूंढने लगा, लेकिन उसे कुछ नहीं मिला। इससे उसका डर और बढ़ गया: दुश्मन ऐसे मामलों में बेहद माहिर था; अब फिरोजपुर में रहना निश्चित मौत को गले लगाना था। उसे यह बात समझ नहीं आई कि पुलिस प्रमुख को किसी अवांछित व्यक्ति को खत्म करने के लिए ऐसे क्रूर और जोखिम भरे तरीकों का इस्तेमाल करने की ज़रूरत क्यों थी।

ऐसा कहा जाता है कि कुछ लोगों ने बताया कि जब अनिया हवेली से बाहर आ रहा था, तो उसने

सुना कि नवाब को सलाह दी गई है कि अनिया को, जो एक नीच कुल का व्यक्ति है और जिसके पास इतना घातक रहस्य है, मार डाला जाए। अब जब उसे एहसास हुआ कि जासूस उसका पीछा कर रहे हैं, तो उसे पूरा यकीन हो गया कि उसके पास जीने के ज्यादा दिन नहीं बचे हैं। अनिया ने अपने बड़े भाई से अपनी परेशानी बताई और उसे समझाया कि अब अपनी जान बचाने का सबसे अच्छा तरीका यही है कि वह भेष बदलकर गायब हो जाए। कंपनी के क्षेत्र में सुरक्षा की अधिक संभावना होने के कारण, अनिया उसी दिन रात के अंधेरे में आगरा के लिए निकल पड़ा। वह एक अनुभवी और कुशल धावक था, इसलिए रात उसके लिए कोई समस्या नहीं थी। पुलिस प्रमुख ने इस सूचना को दबा दिया और नवाब को अनिया के गायब होने की जानकारी नहीं दी, जाहिर है इसके कारण। वैसे भी, वह अनिया के महत्व से अवगत नहीं था, इसलिए उसने सोचा कि कर्तव्य से उसका यह चूकना मामूली अपराध है।

अनिया के लापता होने के चौथे दिन फिरोजपुर में फ्रेजर की हत्या की खबर फैल गई। यह अफवाह भी फैली कि फिरंगी साहबों ने गहन जांच के बाद यह निष्कर्ष निकाला है कि हमारे नवाब के शिकार प्रमुख करीम खान भारमारू इस अपराध के लिए जिम्मेदार हैं और इसलिए उन्हें जेल में डाल दिया गया है ताकि उन पर अंग्रेजी अदालत में मुकदमा चलाया जा सके। नवाब की अधिकांश प्रजा स्तब्ध, चुप और असमंजस में थी कि इस स्थिति में फिरोजपुर के लोगों की क्या भूमिका होनी चाहिए। क्या हमें नवाब को बधाई देनी चाहिए क्योंकि उनके शत्रु की हत्या कर दी गई है? या हमें उनके मुख्य सेवक की गिरफ्तारी और हत्या के आरोप पर शोक व्यक्त करना चाहिए? शम्सुद्दीन अहमद खान की बात करें तो वे बिल्कुल अप्रभावित दिखे। शायद उन्हें विश्वास था कि उन्हें कोई खतरा नहीं है। एक जिम्मेदार शासक के रूप में, वे हमेशा की तरह अपना काम करते रहे।

28 मार्च 1835 की सुबह ढोल-नगाड़े बजने से बहुत पहले ही, दरियागंज की मुख्य सड़क और गलियाँ घोड़ों के खुरों की आहट, अंग्रेज़ अधिकारियों के आदेशों और सैनिकों व पुलिसकर्मियों के बूटों की धमक से गूंजने लगीं। इन लोगों और उनकी अनगिनत रोशनी ने अंधेरी गलियों में भी दिन का भ्रम पैदा कर दिया, मानो किसी रईस के इकलौते बेटे का विवाह जुलूस निकल रहा हो। साइमन फ्रेज़र और जॉन लॉरेंस के नेतृत्व में, कंपनी बहादुर की एक बड़ी टुकड़ी ने दरियागंज में शम्सुद्दीन अहमद खान की हवेली को घेर लिया। जैसे ही फ्रेज़र, लॉरेंस और अन्य फिरंगी अधिकारी हवेली में दाखिल हुए, उसके सभी दरवाजे और फाटक अंदर से बंद थे। जाहिर है, उन्हें प्रतिरोध का कोई डर नहीं था। साइमन फ्रेज़र सीधे दीवान-खाना में गए; जॉन लॉरेंस ने घोड़ों और हाथियों के अस्तबल और शस्त्रागार जैसी बाहरी इमारतों की तलाशी शुरू की और लगभग तुरंत ही उन्हें सफलता मिल गई।

बहुत बड़े अस्तबल में, गहरे लाल-भूरे रंग का एक लंबा, ताकतवर घोड़ा (जिसका रंग तेलियान (यानी सरसों के तेल जैसा लाल-भूरा) कहलाता है) एक कोने में अकेला खड़ा था, उसका सिर झुका हुआ था और आँखें कुछ धुंधली थीं। पूछने पर पता चला कि वह कुछ दिनों से बीमार था और खाना नहीं खा रहा था। लॉरेंस ने जिज्ञासावश घोड़े के पसंदीदा भोजन से भरी टोकरी उसके मुँह के पास रख दी। जैसे ही खाने की टोकरी उसके मुँह से छूई, वह एक सामान्य घोड़े की तरह

खाने लगा।

लॉरेंस सोच रहा था कि उस घोड़े के बारे में एक बेबुनियाद झूठ क्यों बोला गया, तभी उसकी नज़र उस खूबसूरत भूरे-काले घोड़े के खुरों और उन पर लगे नालों पर पड़ी। वे कुछ अजीब से लग रहे थे। उसने एक सहायक से घोड़े का एक पैर उठाकर करीब से देखने को कहा। जब पैर उठाकर दिखाया गया, तो उसके शरीर में एक सिहरन दौड़ गई। नाल उल्टा लगा हुआ था। उसने जल्दी से बाकी तीन खुरों की भी जाँच की और पाया कि उन पर भी उसी तरह नाल लगे हुए थे। उसका दिल ज़ोर से धड़कने लगा। एकदम सटीक निशाना! उसने मन ही मन कहा। जब घोड़े के सारे नाल गलत लगे थे, तो कंपनी के आदमियों का घटनास्थल पर खुरों के निशानों को न समझ पाना स्वाभाविक था।

अचानक उसके दिमाग में एक और विचार कौंधा। उसे पिछली सदी में अपने देश में मशहूर डाकू डिक टर्पिन की कहानियां याद आ गईं। उसका तरीका भी एक जैसा था: उसके घोड़ों के खुरों में नालें उल्टी बंधी होती थीं, और इस तरह वह लंबे समय तक अपने पीछा करने वालों को चकमा देकर भागने में कामयाब रहता था। उसे याद आया कि डिक टर्पिन को आखिरकार उत्तर में पकड़ा गया और फांसी दे दी गई। लॉरेंस को पूरा यकीन था कि उसे अपने आदमी का हत्यारा मिल गया है, और वह यह सुनिश्चित करेगा कि उसे उसकी करनी का फल मिले और उसे फांसी दी जाए। हवेली के अंदरूनी हिस्से में छानबीन और तलाशी में कुछ भी हासिल नहीं हुआ, हालांकि साइमन फ्रेजर ने अपनी खोजी जिज्ञासा के चलते दस्तावेज़ों या हथियारों की बरामदगी की उम्मीद में हवेली के कुछ हिस्सों की खुदाई करवाई। खैर, एक और अहम सुराग तब मिला जब अपराध स्थल पर मिले कई घोड़ों के खुरों के निशान नापने पर संदिग्ध घोड़े के खुरों के आकार से मेल खाते पाए गए। अस्तबल के प्रबंधक और सभी सहायकों को गिरफ्तार कर लिया गया।

अब ऐसा लग रहा था कि करीम खान की बदकिस्मती उसका पीछा कर रही थी, या यूं कहें कि उससे आगे बढ़कर जांचकर्ताओं को उसी तक ले जा रही थी। अनिया के घटनाक्रम की रिपोर्ट देने के लिए पहुंचने से पहले ही, शम्सुद्दीन अहमद खान, चिंता से घिरे हुए, वसील खान को खबर की पुष्टि करने के लिए दिल्ली भेज दिया। वसील खान, करीम खान की बहन से विवाहित था और चूंकि दोनों आपस में काफी अच्छे दोस्त थे, इसलिए यह उम्मीद की जा सकती थी कि करीम खान वसील खान को जानकारी देने से नहीं कतराएगा। अब यह वसील खान, सामान्य तरीके से यात्रा करते हुए, हवेली पर छापे से एक रात पहले दिल्ली पहुंचा। पूछताछ करने पर, उसने बेझिझक स्वीकार किया कि वह करीम खान का बहनोई है, लेकिन उस समय दिल्ली में होने का कोई ठोस कारण नहीं बता सका। वसील खान को भी गिरफ्तार कर लिया गया।

वासिल खान का अंत में क्या हुआ, यह कोई निश्चित रूप से नहीं जानता। एक अंग्रेज लेखक ने अनुमान लगाया है कि वासिल खान—जिसका नाम उन्होंने वसाइल खान बताया है—इस मामले में पूरी तरह से शामिल था और शायद वही असली हत्यारा था। खैर, उसके बाद से वासिल खान का इतिहास में कोई ज़िक्र नहीं मिलता। यह संभव है कि वह कई वर्षों तक बिना मुकदमे के जेल में पड़ा रहा और अंततः एक कैदी के रूप में उसकी मृत्यु हो गई, जिसके खिलाफ सबूत जुटाए जा रहे थे।

कंपनी के जासूसों ने सूचना दी कि करीम खान को अक्सर उसी तेलियन घोड़े पर सवार देखा जाता था, जिस पर अपराध करने में इस्तेमाल होने का संदेह था। हथियारों के इस्तेमाल में उनकी सर्वत्र उच्च प्रतिष्ठा और दक्षता को देखते हुए, करीम खान तुरंत ही संदिग्ध बन गए। एक अन्य जासूस ने सूचना दी कि करीम खान को दिल्ली के एक प्रसिद्ध हथियार व्यापारी श्री विलियम मैकफर्सन के घर पर देखा गया था। साइमन फ्रेजर तुरंत पुलिसकर्मियों के एक दल के साथ मैकफर्सन के घर गए और करीम खान को वहां तेलियन घोड़े की बिक्री के बारे में बातचीत करते हुए पाकर प्रसन्न हुए। साइमन फ्रेजर ने यह निष्कर्ष निकालते हुए कि बातचीत कार्रवाई को उचित ठहराती है, करीम खान को तुरंत गिरफ्तार कर लिया।

करीम खान को लुडलो कैसल के एक सुरक्षित पूछताछ कक्ष में ले जाया गया और उनसे लंबी और गहन पूछताछ की गई। लेकिन पूछताछ करने वालों के पास अपने सवालों का कोई आधार नहीं था, न ही करीम खान को फंसाने वाला कोई सबूत था, नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान को फंसाने का तो सवाल ही नहीं उठता था। उनके पास बस संदिग्ध रूप से खुरों में जकड़ा हुआ घोड़ा और अफवाहें ही थीं। करीम खान लगातार इस बात से इनकार करते रहे कि उन्होंने ही घोड़े को उस अजीब तरीके से खुरों में जकड़ा था। उन्होंने यह स्वीकार किया कि वे कभी-कभार उस घोड़े की सवारी करते थे, लेकिन जब भी वे सवारी करते थे, उसके खुरों में कोई खराबी नहीं होती थी।

तो आपने घोड़े के नाल कब उल्टे लगवाए थे?

'महामहिम, यह बात केवल घोड़े का मालिक ही बता सकता है। मैं, एक मामूली कर्मचारी, इस बारे में क्या कह सकता हूँ?'

'क्यों नहीं? क्या आप नवाबों के शिकार प्रमुख नहीं हैं?'

'माननीय महोदय, मैं अस्तबल का प्रबंधक तो नहीं हूँ, है ना?' करीम खान मुस्कुराया।

'तो इसमें हंसी की क्या बात है? तमीज़ से बात कीजिए, वरना ये साहब,' उन्होंने जॉन लॉरेंस की ओर इशारा करते हुए कहा, 'आपसे अपने जूतों से बात करेंगे।'

'स्वर्ग तो ईश्वर हैं। लॉरेन साहब और साइमन साहब दोनों मुझे अच्छी तरह जानते हैं। मैं इन महानुभावों के विरुद्ध भला क्या कर सकता हूँ?'

लॉरेंस ने उसकी बात काटते हुए कहा, 'ये मीठी-मीठी बातें अपने वेश्याओं और लबादों के लिए ही रखो। तुम भारतीय तो सिर्फ लाठियों और डंडों की भाषा समझते हो। तुम्हें इतनी मार पड़ेगी कि तुम अपनी माँ को पुकारोगे।'

साइमन फ्रेजर ने जॉन लॉरेंस के कान में फुसफुसाते हुए कहा, 'लॉरेंस, ज़रा सावधान रहो। तुम्हें कंपनी के आदेश पता हैं: मूल निवासियों को पीटा जा सकता है, लेकिन सावधानी से। उनकी हड्डियाँ नाजुक और शरीर दुर्बल होते हैं। ऐसा कुछ मत करो जिससे कैदी की मौत हो जाए। इससे हमारी बदनामी होगी और सबूत भी नष्ट हो जाएँगे। उसे मारो, लेकिन ध्यान रखना कि उसकी हड्डियाँ न टूटें।'

जॉन लॉरेंस मुस्कुराया। 'चिंता मत करो। मैं इस दुष्ट नीग्रो की हड्डियाँ नहीं, बल्कि उसका मनोबल तोड़ूँगा।'

'उसे कुछ दिनों के लिए अंधेरी कोठरी में भूखा रखना बेहतर होगा।'

जॉन लॉरेंस ने कुछ क्षणों तक इस पर विचार किया और फिर सहमति जताते हुए कहा, 'हां, यह एक अच्छा विचार है, फ्रेजर।'
जिस कोठरी में करीम खान को कैद किया गया था, उसमें सरकंडे की खुरदरी रस्सियों से बुनी हुई एक जर्जर चारपाई के सिवा कुछ नहीं था। चारपाई को हटा दिया गया और कोठरी की खिड़की और दरवाज़े बंद करके काले कैनवास की चादरों से ढक दिए गए। चार स्थानीय सिपाहियों ने करीम खान को काबू में कर लिया और उसके सारे कपड़े फाड़ दिए। उसे लातों से पीटते हुए कोठरी के एक कोने में धकेल दिया गया। उनमें से एक ने चेतावनी दी, 'सावधान रहो और यहाँ से हिलना मत। अगर हिले तो लाठियों से पीटे जाओगे।'
कई घंटों बाद दरवाजा खुला। हालांकि शाम ढल चुकी थी, फिर भी अंदर कोई रोशनी नहीं आ रही थी। जॉन लॉरेंस अंदर आया और उसने करीम खान को ठंड से कांपते हुए एक कोने में पाया, जो अपने ही पेशाब से भीगा हुआ था। लॉरेंस ने पूरी ताकत से उसकी पिंडलियों और पैरों के तलवों पर बार-बार वार किए। वह करीम खान को एक सिसकी या आह भी नहीं भरवा सका।
आखिरकार, लॉरेंस को पूछना पड़ा, 'हत्या के समय तुम कहाँ थे? उस समय तुम क्या कर रहे थे?'
'माननीय न्यायाधीश महोदय, जब मुझे पता ही नहीं कि हत्या किस समय हुई थी, तो मैं कुछ कैसे कह सकता हूँ?'
लॉरेंस ने एक स्थानीय जमादार (कॉर्पोरल) को इशारा किया, जो दृढ़ता से आगे बढ़ा और दो-दो सेकंड के अंतराल पर एक मजबूत, लचीली लाठी से करीम खान की गर्दन, सिर और पीठ पर लगातार वार किए। करीम खान का धड़ खून से लथपथ हो गया। लॉरेंस ने ठंडे स्वर में कहा, 'कुत्ते, व्यभिचारी, बदतमीजी मत करो, वरना हम तुम्हारे साथ इससे भी बुरा करेंगे। 22 मार्च की देर शाम से लेकर अगले दिन सुबह तक तुम कहाँ थे?'
‘माननीय न्यायाधीश महोदय, मैं अपनी छोटी सी कोठरी में सो रहा था।’
‘क्या किसी ने आपको वहां देखा? क्या आपके पास कोई गवाह है?’
मुझे बहुत तेज बुखार था, जिससे मेरी हालत खराब हो गई थी। मैंने खुद को अच्छे से लपेट लिया और बिस्तर पर ही पड़ा रहा। मैंने कुछ खाया तक नहीं।
‘तुम झूठ बोल रहे हो! उस रात तुम्हें सीनियर साहिब बहादुर के महल के पास देखा गया था।’
'संभव नहीं है, महोदय।'

जमादार ने फिर से करीम खान को अपनी लाठी से मारा। उसने अपमानजनक शब्दों का प्रयोग करते हुए गुस्से से कहा, 'मादरचोद, क्या साहब बहादुर झूठ बोल रहे हैं? नीच आदमी, सच क्यों नहीं बताते?'
‘जमादार जी, आप जो चाहें कह सकते हैं। मैं केवल वही कह सकता हूँ जो—’
लॉरेंस ने करीम खान को वाक्य पूरा नहीं करने दिया। वह उसके पास गया और उसके पेट और पैरों के तलवों पर कुछ जोरदार प्रहार किए।
'अच्छा, अब तुम बताओ। तुमने आखिरी बार उस घोड़े की सवारी कब की थी?'

करीम खान एक मिनट तक चुप रहे, मानो कुछ याद करने की कोशिश कर रहे हों। फिर उन्होंने कहा, 'मुझे याद नहीं है, माननीय न्यायाधीश।' इसके बाद वे हल्के से मुस्कुराए। 'मैं कोई डायरी नहीं रखता, माननीय न्यायाधीश।'
करीम खान की मुस्कान व्यंग्यात्मक थी, या शायद नहीं। लॉरेंस को निश्चित रूप से लगा कि वह तुच्छ, कम वेतन वाला देसी चमचा उसका मज़ाक उड़ा रहा है। उसने सिपाहियों की ओर इशारा किया। करीम खान को फिर से लाठी के बारह कोड़े मारे गए। लॉरेंस ने एक और तरीका सोचा।
'तो क्या आपको यह संदिग्ध नहीं लगा कि आप उसी घोड़े की बिक्री के लिए बातचीत कर रहे थे जो हत्या में शामिल है?'
जी जनाब, यह वाकई संदिग्ध है... क्या हत्यारे ने कबूल किया है कि उसने...'
लॉरेंस ने करीम खान को बेरहमी से हिलाया और उसकी मूंछों से मुट्ठी भर बाल खींच लिए। फिर उसने अपने भारी जूते से उसे लात मारी और चिल्लाया, 'तुम ही हत्यारे हो!'
करीम खान ने अपना हाथ अपने चेहरे पर फेरा, फिर हाथ हिलाया, मानो किसी चीज़ से धूल झाड़ रहे हों। उन्होंने कहा, 'महामहिम ही स्वामी हैं।' उनकी आवाज़ में ज़रा भी विनम्रता नहीं थी। वे ऐसे बोल रहे थे मानो किसी क्रोधित बच्चे को शांत कर रहे हों।
‘तुम उस घोड़े को क्यों बेचना चाहते थे, और खासकर अभी क्यों बेचना चाहते थे?’
'महोदय, मैं अपने नवाब साहब के आदेशों का पालन कर रहा था। उनका आदेश था कि उस घोड़े को अलग कर दिया जाए क्योंकि वह जिद्दी था और आदेशों का पालन नहीं करता था।'
‘इसका क्या सबूत है?’ लॉरेंस दहाड़ते हुए बोला।
'माननीय न्यायाधीश अस्तबल के प्रबंधक से पूछताछ कर सकते हैं।'
‘हम वो तब करेंगे जब हम चाहेंगे। अभी तो तुम यहाँ हो, कमीने। शैतान के बेटे, मुझे बताओ! क्या पिछली बार जब तुमने इस पर सवारी की थी तो इसके पहिए ठीक से नहीं लगे थे?’
‘जूते बिलकुल ठीक थे, महाराज। मैं शपथ लेकर इसकी पुष्टि कर सकता हूँ।’
‘अगर आप बीमार थे तो हकीम के पास क्यों नहीं गए?’

‘महोदय, हम जैसे कंगाल और एक हकीम? हम तो बस तड़पते-दर्द से कराहते हुए ठीक हो जाते हैं,’ उसने मुस्कुराते हुए कहा।
लॉरेंस को ऐसा लगा मानो उसके पूरे शरीर में आग सी दौड़ गई हो। वह करीम खान पर झपटा और उसके चेहरे पर ज़ोरदार प्रहार किया। उसके माथे से खून बह निकला और ठुड्डी तक एक मोटी लाल लकीर बन गई।
“साला कमीना सूअर,” लॉरेंस बड़बड़ाया और पुलिसकर्मियों की ओर इशारा किया, जिन्होंने करीम खान पर लाठियाँ बरसाना शुरू कर दिया; उसके मुँह से कोई आवाज़ नहीं निकली, बस उसने अपना सिर घुटनों के बीच दबा लिया। कुछ मिनट तक पिटाई के बाद, लॉरेंस ने उसकी पसलियों में लात मारी और चिल्लाया, “खूनी नीग्रो, अपना सिर उठा और बोल!’
करीम खान ने अपना सिर उठाया। उसकी एक आंख गार्नेट की तरह फीकी लाल थी, दूसरी सूजी हुई थी और बंद थी।

‘आपने घोड़े के खुरों में उल्टे नाल कब लगवाए?’
‘मैंने उस घोड़े को नाल नहीं लगवाई। यकीन मानिए, माननीय न्यायाधीश। मैं कभी झूठ नहीं बोलता।’
'धोखेबाज कमीने! तुमने इस घोड़े को अभी बेचने का फैसला क्यों किया?'
‘मैकफर्सन साहब शहर से बाहर थे। वे एक दिन पहले ही लौटे थे।’
जॉन लॉरिंस को अंदर ही अंदर बहुत बुरा लग रहा था; यह एक सच्चाई थी कि मैकफर्सन शहर से बाहर गया हुआ था।
तो ये जूते किसने लगवाए थे? क्या तुम उस घोड़े के सवार नहीं थे?
‘महोदया, मैं अस्तबल का प्रबंधक नहीं हूँ।’ उसने गला साफ किया और खून से सना बलगम इस तरह थूका कि वह लॉरिंस के पास ही गिरा। ‘यह सच है कि मैंने एक-दो बार उस घोड़े की सवारी की है। लेकिन मेरे साहब को इसके बारे में पता है। उन्होंने मुझे कभी सज़ा नहीं दी।’
'देशद्रोही नीच! हत्या के समय तुम कहाँ थे?'
'महामहिम, मुझे हत्या का समय नहीं पता।'
‘तुम झूठे हो, दुष्ट। हत्या वाली रात तुम्हें फ्रेजर साहब के बंगले के पास देखा गया था। झूठ बोलने का कोई फायदा नहीं। हम सब जानते हैं।’
करीम खान ने अंगड़ाई ली और अपने शरीर को इस तरह सिकोड़ा जैसे वह जम्हाई ले रहा हो।
'माननीय न्यायाधीश महोदय, मैं वहां नहीं था। लेकिन अगर मैं वहां था भी, तो इसका यह मतलब नहीं है कि मैंने हत्या की है।'
लॉरिंस उस जिद्दी देसी कुत्ते का सिर अपने जूते के नीचे कुचलना चाहता था। लेकिन उसे फ्रेजर की सलाह याद आई और उसने अपना इरादा बदल दिया। उसने कुछ देर रुककर खुद को शांत किया, फिर शांत और सहज लहजे में बोला, 'तो आपने सीनियर साहिब बहादुर को आखिरी बार कब देखा था?'
करीम खान भी कुछ पल चुप रहे, मानो उस घटना को याद करने की कोशिश कर रहे हों। ‘मुझे अब याद नहीं आ रहा, महोदय। बहुत समय बीत गया है... और हम स्थानीय लोग वैसे भी फिरंगी साहबों के सामने पेश होने से बचते हैं।’ बोलते-बोलते उन्होंने बड़ी सहजता से पेशाब किया, मानो किसी एकांत स्थान पर पेशाब कर रहे हों। लॉरिंस और वहाँ मौजूद सभी लोगों ने पेशाब की आवाज़ सुनी। लॉरिंस कुछ नहीं कह सके, क्योंकि उन्होंने ही करीम खान को कपड़े उतारकर अंधेरे एकांत में बंद करने का आदेश दिया था। उन्होंने अपनी शर्मिंदगी छुपाने के लिए पहले से भी अधिक कठोर स्वर में चिल्लाते हुए कहा, ‘इसे और मारो, और मारो।’
इस आदेश का पूरी तरह पालन किया गया। करीम खान ने एक शब्द भी नहीं कहा। लॉरिंस ने ठंडे लहजे में पूछा, 'अब तुम सच बताओगे। हत्या वाली रात तुम कहाँ थे?'
‘दर्यागंज की हवेली में, माननीय।’
लॉरिंस ने मन ही मन दांत पीसे और वही सवाल दोबारा पूछने लगा। यह सिलसिला पूरी रात चलता रहा। लॉरिंस ने एक पल भी आराम नहीं किया, न ही उसके आदमियों ने। वह नियमितता से अपने सवाल दोहराता रहा, लेकिन बीच-बीच में कोई बेतुका या अप्रत्याशित सवाल भी पूछ

बैठता था। कभी-कभी वह करीम खान के जवाब को बीच में ही रोककर लगभग अर्थहीन सवाल पूछ लेता था। उसका प्रयास था कि किसी तरह करीम खान को विरोधाभास में फंसा ले। लेकिन करीम खान के जवाब हमेशा एक जैसे ही होते थे: संक्षिप्त और सटीक। उसकी आवाज धीमी और कर्कश हो गई थी; लगातार और कठोर दंड के कारण ऊर्जा और शरीर की गर्मी कम हो गई थी और वह पूरी तरह से थक चुका था। फिर भी, सिर झुकाए और आवाज धीमी होती जा रही थी, वह वही जवाब देता रहा। अब वह लगभग अर्धचेतन अवस्था में था। लॉरेंस की आंखें धुंधली थीं और आवाज कर्कश थी।

अंततः, भोर होने से ठीक पहले पूछताछ रोक दी गई। लॉरेंस को नहाने और आराम करने की सख्त ज़रूरत थी, जिसके बाद उन्हें अच्छा नाश्ता चाहिए था। उन्होंने कैदी पर दो-तीन घड़े ठंडा पानी डालने का आदेश दिया; फिर करीम खान को एक सस्ते सूती कुर्ते और पैंट पहनाकर दूसरी कोठरी में भेज दिया गया। उन्हें कम खाना दिया जाना चाहिए और सोने नहीं दिया जाना चाहिए। लॉरेंस यह कहकर चले गए कि वे शाम को लौटेंगे।

जब लॉरेंस लौटा तो रात हो चुकी थी, लेकिन इस देरी ने कैदी के लिए उसकी उम्मीद से कहीं अधिक विकट परिणाम उत्पन्न किए (यदि उसने किसी चीज की उम्मीद की भी हो)। दिन के दौरान एक ऐसा सबूत मिला था जिसने जांच में शामिल सभी फिरंगी वरिष्ठ अधिकारियों और उच्च पदस्थ अंग्रेजों को आश्वस्त कर दिया कि अब उनके पास ऐसे साधन हैं जिनसे वे न केवल करीम खान को, बल्कि नवाब को भी अपने शिकंजे में ले सकते हैं।

छापेमारी वाले दिन किसी समय दरियागंज की हवेली के सामने वाले कुएँ में किसी की चमड़े की बाल्टी गिर गई। एक गोताखोर बाल्टी निकालने के लिए नीचे गया। जब वह बाल्टी लेकर ऊपर आया, तो उसे एक कटी हुई बैरल वाली पत्थर की तोप भी मिली। इसके अलावा, उसे कुएँ के एक कीचड़ भरे कोने में फंसी बाल्टी के तल पर चिपका हुआ एक कागज का टुकड़ा भी मिला। जब उसने बाल्टी को खींचने के लिए थोड़ा बल लगाया, तो उसे उसके तल पर एक आधिकारिक दिखने वाला कागज चिपका हुआ मिला। उसने दोनों वस्तुएँ हवेली में तैनात पुलिसकर्मी को सौंप दीं, जिसने तुरंत उन्हें थॉमस मेटकाफ साहिब बहादुर को रिपोर्ट के साथ भेज दिया।

मेटकाफ ने दोनों वस्तुओं को माननीय कंपनी बहादुर के पक्ष में जब्त करने का आदेश दिया; फिर उसने कागज को साइमन फ्रेजर के पास व्याख्या के लिए भेजा, और कटी हुई बंदूक को जॉन लॉरेंस के पास उसके मालिक का पता लगाने और उससे पूछताछ करने के लिए भेजा।

कागज लगभग लुगदी बन चुका था और उस पर लिखा हुआ पाठ बहुत धुंधला हो गया था। हालांकि, सूखने के बाद जब उस पर कुछ रसायन लगाए गए, तो यह स्पष्ट हो गया कि यह पत्र नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान द्वारा करीम खान को शिकार के कुत्तों की खरीद के संबंध में लिखा गया था। पत्र पर कोई मुहर या हस्ताक्षर नहीं थे, लेकिन गवाहों ने दृढ़ता से गवाही दी कि यह नवाब द्वारा स्वयं लिखा गया प्रतीत होता है। पत्र पर कोई तिथि या दिन नहीं था, लेकिन इसमें लिखा था कि करीम खान शिकार के कुत्तों की खरीद के उद्देश्य से तीन महीने से दिल्ली में थे। करीम खान के दिल्ली प्रवास के बारे में साधारण जांच से यह स्पष्ट हो गया कि पत्र 1834 या 1835 में लिखा गया था, और 'शिकार के कुत्तों की खरीद का व्यवसाय' शब्दों को विलियम

फ्रेजर की हत्या के लिए सांकेतिक भाषा के रूप में समझा गया।
लेकिन कंपनी के अधिकारी यह साबित नहीं कर पाए कि अक्टूबर 1834 से करीम खान के दिल्ली में रहने का असली मकसद फ्रेजर की हत्या करना था। करीम खान द्वारा फ्रेजर की गतिविधियों पर नज़र रखने और रिपोर्ट करने के लिए नियुक्त किए गए जासूस और मुखबिर पूरी तरह से करीम खान के प्रति वफादार थे और उनमें से कोई भी गवाही देने के लिए आगे नहीं आया; न ही कंपनी के मुखबिर उन लोगों की पहचान कर सके। लेकिन सबूतों में मौजूद इस कमी को जांचकर्ताओं ने बंदूक के सबूत से आसानी से भर दिया।
साइमन फ्रेजर के आदमियों ने कुछ ही घंटों की खोज में एक लोहार को ढूंढ निकाला, जिसने बंदूक की पहचान की और बताया कि उसने करीम खान के कहने पर उसकी नली काट दी थी। जॉन लॉरेंस और साइमन फ्रेजर अब शपथ लेकर गवाही देने को तैयार थे कि हत्या का अपराध न केवल करीम खान पर, बल्कि शम्सुद्दीन अहमद खान पर भी सिद्ध हो चुका है। वे इस निष्कर्ष को लेकर इतने आश्वस्त थे कि उन्होंने मेटकाफ को यह सुझाव भी दिया कि फतुल्लाह बेग और मिर्जा मुगल को अब और हिरासत में रखने की कोई आवश्यकता नहीं है। लेकिन मेटकाफ एक अधिक शांत, सतर्क और अनुभवी अधिकारी थे। उन्होंने इस सुझाव को यह कहकर अस्वीकार कर दिया कि जब तक मिर्जा मुगल जेल में रहेंगे, शम्सुद्दीन अहमद खान पर दबाव बना रहेगा; फतुल्लाह बेग खान के मामले में, उनके जैसे मामूली व्यक्ति के जेल में होने या न होने से कोई फर्क नहीं पड़ता था। इस प्रकार वे दोनों अलीपुर जेल में ही रहे, साथ ही शम्सुद्दीन अहमद खान के अस्तबल का प्रबंधक, उसका चरवाहा और विलियम फ्रेजर का कोचवान भी।
इस तरह मामले को सुलझाने के बाद—कम से कम अपनी संतुष्टि के अनुसार—लॉरेंस और फ्रेजर रात होने पर अलीपुर जेल पहुँचे। इस बार, करीम खान से उसकी कोठरी में मिलने के बजाय, लॉरेंस ने आदेश दिया कि कैदी को जेल के प्रांगण में एक कुर्सी से बाँध दिया जाए और उसके कपड़े उतार दिए जाएँ। उसकी आँखों को चौंधियाने के लिए उसके सामने तेज़ मशालें जलाई गईं। साइमन फ्रेजर ने कुएँ से बरामद कागज़ लहराते हुए करीम खान से पूछा, 'क्या आप इस कागज़ को पहचानते हैं?'
‘महामहिम, इतनी दूरी से मैं कुछ कैसे देख सकता हूँ? यदि कागज़ मेरे हाथ में होता, तो मैं इसे बेहतर ढंग से देख पाता और अपना निवेदन प्रस्तुत कर पाता।’
करीम खान को वह कागज देने का तो सवाल ही नहीं था; फ्रेजर ने उसे रुक-रुक कर पढ़ा, जितना वह स्पष्ट रूप से पढ़ा जा सकता था, फिर एक लंबे और हट्टे-कट्टे पुलिसकर्मी को आदेश दिया कि वह कागज को करीम खान की आंखों के पास लाए, बिना उसे छूने का मौका दिए।
‘तो क्या हुआ? आपने सुना भी, देखा भी। अब मुझे बताइए।’
'माननीय न्यायाधीश महोदय, मैं आपको क्या बताऊं? मैंने यह पत्र कभी नहीं देखा, और न ही मैं बता सकता हूं कि इसे किसने लिखा है।'
‘अरे नीच! क्या तुझे अपने नवाब की लिखावट भी नहीं पता?’
‘मुझे पता है, हे प्रभु, लेकिन इस कागज पर मेरे गुरु की मुहर या उनके हस्ताक्षर नहीं हैं।’
साइमन फ्रेजर ने औपचारिक पूछताछ का दिखावा छोड़ दिया और सीधे 'तू' कहकर बात शुरू कर

दी। 'क्या यह लिखावट उसकी नहीं है? आप स्पष्ट रूप से क्यों नहीं बताते कि इसे किसने लिखा है?'

'महामहिम, मुझे कैसे पता चलेगा कि इसे किसने लिखा है? किसी ने जरूर जालसाजी या धोखाधड़ी की होगी।'

फ्रेजर ने स्पष्ट बल और दृढ़ विश्वास के साथ कहा, 'मैं कहता हूं कि यह शम्सुद्दीन अहमद द्वारा लिखा गया था और शिकार करने वाले कुत्तों की खरीद का मतलब विलियम फ्रेजर की हत्या है। मैं कहता हूं कि आपने नवाब के आदेश पर यह कार्य किया।'

'महोदय, आप स्वामी और शासक हैं, आप जो चाहें कह सकते हैं। लेकिन मुझे यह पत्र कभी नहीं मिला, और न ही मैं यह स्वीकार करता हूँ कि नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान बहादुर—'

फ्रेजर ने उसे वाक्य पूरा नहीं करने दिया। वह लगभग करीम खान पर झपटा और उसके पेट में लात मारते हुए चिल्लाया, 'तुम उस लुटेरे और हत्यारे को नवाब और खान बहादुर कहते हो! तुम और तुम्हारा कृतघ्न नवाब मेरे जूतों की नोक पर हो!'

लेकिन करीम खान ने शांत भाव से अपना वाक्य पूरा किया मानो उन्हें किसी ने बाधित न किया हो। '... ऐसा पत्र लिख सकते थे।'

'सीनियर साहिब बहादुर और आपके उस डाकू नवाब के बीच की दुश्मनी किसी से छिपी नहीं है।'

'महामहिम,' करीम खान ने एक बार फिर वही मुस्कान बिखेरी जो उसके पूछताछकर्ताओं को दुष्ट और कटु प्रतीत होती थी, 'महान लोगों के मामले केवल महान लोग ही समझ सकते हैं। मैं तो बस एक तुच्छ सेवक हूँ, आपकी दृष्टि में एक कीड़े से भी बदतर।'

फ्रेजर ने खुद को काबू में रखने की पूरी कोशिश की। 'क्या आप शम्सुद्दीन अहमद के साथ पले-बढ़े और तरक्की नहीं की?'

'माननीय महोदय का कुत्ता भी आपके बाबाओं और बच्चों (लड़के और बच्चियों) के साथ पला-बढ़ा है।' करीम खान ने विनम्रता और आज्ञाकारिता भरे स्वर में ये बात कही, लेकिन बदले में उन्हें आधा दर्जन और लाठियाँ खानी पड़ीं।

'तुम पागल कुत्ते से भी बदतर मौत मरोगे।' इस बार साइमन फ्रेजर ने तीखी मुस्कान के साथ कहा, 'मैं तुम्हें सूअर की खाल में सिलवाकर जमुना नदी में फेंकवा दूंगा।'

'माननीय महोदय, इन रस्सियों को हटवा दें और मेरे हाथों में तलवार थमा दें।'

"मैं तुम्हें इस तरह मारूंगा कि तुम खुद अपनी छाती में तलवार घोंप लोगे," फ्रेजर गुर्राया। "तुम इस पत्र के बारे में सच क्यों नहीं बताते?"

'हे परम पूज्य, कागज पानी से बहुत प्रभावित है। क्या यह कहीं पानी में मिला था?'

हम सवाल पूछ रहे हैं। ज्यादा होशियार बनने की कोशिश मत करो। सवाल का जवाब दो।

'महोदय, अगर यह पत्र मेरे अपने साहब ने लिखा होता, और अगर यह मेरे हाथ में आ जाता, तो क्या आपको लगता है कि मैं इसे पानी में फेंक देता?' करीम खान ने फिरंगी साहबों की ओर ऐसे देखा मानो उन्हें उनकी बुद्धिमत्ता पर दया आ रही हो।

आधी रात से ज़्यादा समय बीत गया; पूछताछ करने वालों को कुछ हासिल नहीं हुआ: सवाल दोहराते रहे, निराशाजनक जवाब या इनकार मिलते रहे, करीम खान को अपमानित करते रहे; यह

सिलसिला चलता रहा, लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ। आखिरकार, फ्रेज़र ने लॉरेंस की ओर देखा, फिर कोने में छिपी बंदूक की ओर। लॉरेंस ने एक पुलिसकर्मी को इशारा किया, जो आगे आया और करीम खान के सामने बंदूक रख दी। करीम खान ने देखा कि बंदूक का बैरल आरी से काटा गया था। टॉर्च की रोशनी में बंदूक साफ दिखाई दे रही थी। एक पल के लिए वह सदमे से स्तब्ध रह गया।

‘करीम खान, क्या आप इस बंदूक को पहचानते हैं?’

‘मैं कैसे कह सकता हूँ, माननीय न्यायाधीश? इतनी दूरी से तो मैं केवल इतना ही कह सकता हूँ कि यह एक बंदूक है।’

‘यह बंदूक तुम्हारी है!’

‘महामहिम, मुझे सचमुच नहीं पता,’ वह रुका, मानो किसी संभावना पर विचार कर रहा हो, फिर उसने मासूमियत से कहा, ‘क्या इस पर मेरा नाम लिखा है?’

'तू कमीनी वेश्या, तू अब भी अपनी पुरानी चालें चल रही है? मैं जानना चाहता हूँ कि क्या यह बंदूक तेरी है!'

‘माननीय न्यायाधीश को सबसे बेहतर जानकारी है।’

करीम खान के पीछे खड़े एक पुलिसकर्मी ने उसके चेहरे पर जूता मारा। 'भाड़ में जाओ, तुम्हारी ये बदतमीज़ी और बेशर्मी भरी बातें बंद करो,' उसने गुस्से से कहा। जूते की चोट से करीम खान के चेहरे पर दर्द और घृणा की हल्की सी लकीरें दिखाई दीं, लेकिन वह चुप रहा।

'अपना जुर्म कबूल करो, वरना तुम्हारी जान चली जाएगी,' लॉरेंस ने बातचीत के लहजे में कहा, मानो वह मौसम के बारे में बात कर रहा हो।

करीम खान ने बनावटी सी आह भरी और कहा, 'माननीय न्यायाधीश, मैं तो वैसे भी लगभग मर ही चुका हूँ।' इस पर उसकी गर्दन पर एक और वार हुआ और फिर उसके सिर पर। वार इतने ज़ोरदार थे कि करीम खान का सिर एक तरफ झुक गया, लेकिन उसने कुछ नहीं कहा। कुछ देर रुकने के बाद, लॉरेंस ने धीमी आवाज़ में, लगभग फुसफुसाते हुए पूछा, 'करीम खान, क्या आप लोहार जुमा दीन को जानते हैं?'

करीम खान के सिकुड़े और धंसे हुए चेहरे पर एकाग्रता और सोच की कुछ लकीरें झलक रही थीं। 'क्या यह वही जुमा दीन है जिसकी दुकान कुचा बुलाकी बेगम में, लाला पुरान मॉल की हवेली के पीछे है?'

'आप जो चाहें सोच सकते हैं,' लॉरेंस ने कहा, मानो उसे कोई परवाह न हो।

‘माननीय न्यायाधीश महोदय, यदि यह वास्तव में वही जुमा दीन हैं, तो मैं उन्हें जानता हूँ।’

लॉरेंस और फ्रेजर ने विजयी मुस्कान बिखेरी। लॉरेंस ने कहा, 'इस जुमा दीन ने शपथ लेकर कहा है कि यह बंदूक आपकी है, और उसने आपके कहने पर इसकी नली काट दी।'

करीम खान फिर सोच में पड़ गया। आखिरकार वह धीरे-धीरे बोला, मानो उसे खुद यकीन न हो कि वह क्या कह रहा है। 'जुमा दीन ने अगर ऐसा कहा है, तो वह सच ही कह रहा होगा। यह मेरी ही बंदूक होगी और मैंने ही इसकी नली कटवाई होगी।'

लॉरेंस उत्साहित होकर कुछ कहने ही वाला था कि करीम खान ने बात जारी रखते हुए कहा,

'लेकिन अगर यह वही बंदूक है, तो यह कुछ समय से मेरे पास नहीं है। मैंने इसे कुछ समय पहले खो दिया था।'
'तुमने बंदूक नहीं खोई। तुम फिर झूठ बोल रहे हो, कोढ़ी ऊंट के बेटे। लेकिन तुमने इसकी नली क्यों कटवाई?'
'सूअरों को मारने के लिए, उपस्थिति।' उसने 'सूअर' शब्द का उच्चारण इस प्रकार किया मानो वह कोई हास्यपूर्ण बात कह रहा हो।
करीम खान के पास खड़े एक मुस्लिम जमादार ने उस पर थूका और चिल्लाकर कहा, 'तू नीच है, तू मुसलमान है और तू सूअर का शिकार करता है!'
'मैं उनका शिकार नहीं करता, जमादार जी। मैं बस उन्हें झटपट निपटा देता हूँ।'
इस बार लॉरेंस खुद को रोक नहीं पाया। उसने हिंदी में प्रचलित अपशब्द 'मादरचोद' का प्रयोग करते हुए चिल्लाकर कहा, 'तुम पहेलियों में क्यों बात करते हो? सीधे-सीधे क्यों नहीं बोलते?'
'महामहिम, आप बंदूकों के बारे में अच्छी तरह जानते हैं,' उसने छात्रों की कक्षा को पढ़ाते हुए कहा। 'बंदूक की नली छोटी करने का फायदा यह है कि हालांकि उसकी मारक क्षमता कम हो जाती है, लेकिन गोलियां बिखरती नहीं हैं, बल्कि लगभग एक जगह पर ही गिरती हैं। इसलिए कटी हुई बैरल वाली बंदूक नज़दीकी लड़ाई का हथियार है। अगर ऐसी बंदूक किसी पर कुछ कदमों की दूरी से चलाई जाए, तो फिर...' उसने वही मुस्कान बिखेरी जिसे फिरंगी लोग नापसंद करते थे, '... वो दो टुकड़ों में बिखर जाएगा!'
उसने अपनी दो उंगलियों को आपस में मिलाया और चटकाते हुए साइमन फ्रेजर को अर्थपूर्ण निगाहों से देखा। फ्रेजर को लगा जैसे उसकी रीढ़ की हड्डी में एक ठंडी सिहरन दौड़ गई हो। करीम खान को चुप देखकर लॉरेंस ने उससे पूछा, 'तो फिर?'
तो जैसा कि महाराज को ज्ञात है, अरब सराय के बाद ख्वाजा साहिब जाने वाले रास्ते में जंगली सूअरों के कई झुंड हैं। एक बार उन्होंने उस पालकी पर हमला कर दिया जिसमें मेरे साहब यात्रा कर रहे थे। सौभाग्य से उनके साथ चल रहे भालाधारी सतर्क थे, अन्यथा एक भयानक दुर्घटना हो सकती थी। इसलिए मैंने यह तोप तैयार रखी थी, क्योंकि इसे पालकी में आसानी से ले जाया जा सकता था और जरूरत पड़ने पर मेरे साहब इसे पल भर में इस्तेमाल कर सकते थे।
अतः आप स्वीकार करते हैं कि बंदूक आपकी थी और आप उसका उपयोग कर रहे थे।
'निस्संदेह, उपस्थिति... लेकिन मैंने इसे बहुत पहले खो दिया था। एक बार शिकार के दौरान मैंने इसे अपने कंधे से उतारकर एक धारा के किनारे एक चट्टान पर रख दिया था। लेकिन जब मैं उस जगह से निकला तो इसे वापस लेना भूल गया।'
'क्या आपने इसकी सूचना शम्सुद्दीन अहमद को दी थी?'
'नवाब साहिब बहादुर स्वयं शिकार में मौजूद थे। वे मुझसे बहुत नाराज थे।'
'कब की बात है ये?'

करीम खान ने अपनी उंगलियों पर गिनती की, अपने अनुमान पर विचार किया और उत्तर दिया, 'अगले महीने तक नौ महीने हो जाएंगे, महोदय।'

'दरियागंज की हवेली के सामने वाले कुएं तक बंदूक कैसे पहुंची? क्या आपने उसे कहीं जंगल में खो नहीं दिया था?'
'माननीय न्यायाधीश महोदय, क्या मैं एक प्रश्न पूछ सकता हूँ?'
'सवाल तो हम पूछ रहे हैं, कमीने। तुम्हारा काम तो जवाब देना है।'
'महामहिम, जुमा दीन ने अपने बयान में अवश्य ही खुलासा किया होता जब बंदूक की नली मेरे हाथ में थी—'
'हमारे सवालों का जवाब दो। कुत्तों की तरह भौंको मत।'
परम पूज्य गुरुओं के प्रबुद्ध मतों से यह स्पष्ट होना चाहिए कि गोली चलाने वाली बंदूक दूर से निशाना लगाने के लिए बेकार है। गोलियां दूर-दूर तक बिखर जाती हैं। उनमें से केवल एक या दो ही लक्ष्य तक पहुँच पाती हैं, यदि पहुँच भी पाती हैं तो। और यदि इसकी नली छोटी कर दी जाए, तो इसकी मारक क्षमता और भी कम हो जाती है। कृपया कृपा करके—
'अरे गंदे सूअर! पागल कुत्ते की तरह फिर भौंक रहे हो!' लॉरेंस ने अपने स्वर में अत्यधिक दृढ़ निश्चय के साथ कहा। 'घटनास्थल से बरामद गोलियां इसी बंदूक से चलाई गई थीं। यही बंदूक तुम्हें फांसी देगी।'
उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर तैयार किए गए मामले में दो बड़ी खामियाँ थीं। पहली, जुमा दीन यह मानने को तैयार नहीं था कि बंदूक की नली को आरी से काटने की घटना हाल ही में हुई थी। गहन पूछताछ के बावजूद वह अपनी बात से पीछे नहीं हटा। उसने कहा कि घटना काफी समय पहले हुई थी, लेकिन उसे तारीख या महीना याद नहीं था। दूसरी, यह स्पष्ट था कि गोलियाँ राइफल या कम से कम स्टोनकैप गन से चलाई गई होंगी। घटनास्थल से बरामद ग्रैपनेल जैसी गोलियों का अध्ययन किया जा रहा था ताकि यह पता लगाया जा सके कि पीड़ित के शरीर से बरामद गोलियाँ घटनास्थल पर मिली गोलियों से मेल खाती हैं या नहीं। चूंकि स्टोनकैप गन की नली के अंदर राइफलिंग या सर्पिल खांचे नहीं होते, इसलिए इस सवाल का संतोषजनक जवाब मिलना असंभव था कि गोलियाँ एक ही बंदूक से चलाई गई थीं या नहीं।
इस प्रकार, यद्यपि उनका मामला स्पष्ट रूप से कमजोर था, लॉरेंस और फ्रेजर को यह सोचकर डर लग रहा था कि करीम खान का कोई भी जवाब मामले को और नुकसान पहुंचा सकता है। इसलिए उन्हें उससे पूछताछ करते समय अत्यंत सावधानी बरतनी पड़ी।
एक और रात बीत गई। भोर की धुंधली सफेदी में करीम खान का चेहरा लगभग काला, धंसा हुआ और मुरझाया हुआ लग रहा था। उसका मुंह ढीला था और उसके चेहरे और शरीर पर उसके और पूछताछ करने वालों के थूक के कई धब्बे थे। उसकी आंखें उनके चारों ओर फैली नीली-काली सूजन के पीछे छिप गई थीं। रात भर की यातना, ठंड और रात की ठंडी हवा के संपर्क में रहने से उसका शरीर अकड़ गया था और मुड़ गया था। जब मार्च के अंत की ठंडी हवा उत्तर से चलने लगी और दिन का बढ़ता प्रकाश पूछताछ क्षेत्र में मशालों और तरह-तरह के दीपों की चमक को फीका करने लगा, तो फिरंगी साहब, जो कमजोर और अपनी सारी ऊर्जा खो चुके थे, ने एक आखिरी कोशिश की। फ्रेजर ने अधिकारपूर्वक कहा, 'करीम खान, क्या तुम सुन रहे हो?'
जब करीम खान ने कोई जवाब नहीं दिया, तो एक स्थानीय सिपाही आगे बढ़ा और उसे कंधे से

जोर से हिलाते हुए चिल्लाया, 'क्या तुम सुन नहीं रहे हो, कमीने? हमारे साहिब बहादुर कुछ आदेश दे रहे हैं।'
करीम खान ने अपनी गर्दन सीधी की, चारों ओर देखा और बनावटी जम्हाई ली। 'महोदय, मैं उपस्थित हूँ।'
'करीम खान, तुम्हारे खिलाफ अपराध पूरी तरह साबित हो चुका है। तुम्हें निश्चित रूप से फांसी दी जाएगी... लेकिन अगर तुम सच बता दो और स्पष्ट रूप से स्वीकार करो कि तुमने यह काम शम्सुद्दीन अहमद के कहने पर किया था, तो तुम्हें कंपनी का गवाह बनाया जाएगा। इस तरह तुम अपनी जान बचा लोगे... और नवाब को उसके अपराध की सजा मिलेगी।'
करीम खान ने अपना सिर उठाया, फ्रेजर की ओर बेजान आँखों से देखा और खोखली, कमजोर आवाज में बोला, 'माननीय महोदय। झूठ बोलने से बेहतर है मर जाना।'
लॉरेंस और फ्रेजर ने लगभग हताशा से एक-दूसरे की ओर देखा। लॉरेंस ने कहा, 'इस आदमी को और कष्ट देना व्यर्थ है। हमें याद रखना चाहिए कि उस पर खुली अदालत में मुकदमा चलाया जाएगा... इस व्यभिचारी का बेटा निस्संदेह फांसी पर चढ़ेगा, लेकिन हमें शम्सुद्दीन के खिलाफ और सबूत जुटाने होंगे।'
लॉरेंस ने गंभीर स्वर में कहा, 'चिंता मत करो। उस घिनौने नवाब को फांसी पर चढ़ाना मेरा काम होगा।'
जब नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान को करीम खान की गिरफ्तारी और उसके बाद घोर कठिनाइयों के बावजूद उसके दृढ़ संकल्प की सूचना मिली, और इस बात की आशंका हुई कि उन्हें भी इस मामले में गिरफ्तार किया जा सकता है, तो उन्होंने कलकत्ता के गवर्नर जनरल को 11 अप्रैल और 27 अप्रैल 1835 को दो याचिकाएँ भेजीं। उन्होंने श्री मैकफर्सन के घर से अपने निर्दोष सेवक की गिरफ्तारी का विरोध किया। उन्होंने आगे आरोप लगाया कि यह सब गड़बड़ी फतुल्लाह बेग खान ने की है, जो रिश्तेदार होते हुए भी उनसे गहरी दुश्मनी रखता था। उसी ने शम्सुद्दीन अहमद को बदनाम करने की इच्छा से उनके खिलाफ मुखबिरी की और उनके सेवक करीम खान पर झूठा आरोप लगाया।
शम्सुद्दीन अहमद खान ने आगे कहा:

मुझे पता चला है कि फतुल्लाह बेग ने मेरे और करीम खान के खिलाफ सबूत देने वालों के लिए 16,000 रुपये का इनाम घोषित किया है। श्री फ्रेजर की दुखद मृत्यु के संबंध में, माननीय नवाब गवर्नर जनरल बहादुर को सूचित किया जाता है कि मैंने, शम्सुद्दीन अहमद खान ने, अपने प्रिय और सम्मानित चाचा विलियम फ्रेजर साहिब बहादुर के हत्यारे को ढूंढने में मदद करने वाले किसी भी व्यक्ति के लिए 2000 रुपये का इनाम घोषित किया है। पूज्य वरिष्ठ साहिब बहादुर मेरे संरक्षक थे और मेरे पिता, फखर-उद दौला दिलावर-उल मुल्क नवाब अहमद बख्श खान रुस्तम जंग के करीबी दोस्तों में से थे, जिन पर अल्लाह की रहमत हो और अल्लाह उन्हें क्षमा करे। इसलिए, मेरे द्वारा उन्हें किसी भी प्रकार का नुकसान पहुंचाने का कोई सवाल ही नहीं उठता।
शम्सुद्दीन अहमद खान ने निष्कर्ष निकाला:

चूंकि मेरा जीवन, मेरा राज्य, मेरा सम्मान, इन सबका अस्तित्व अंग्रेजी कंपनी की सरकार की देन है, इसलिए मैं यह याचिका इसलिए भेज रहा हूं ताकि मेरी स्थिति परम पूज्य नवाब, गवर्नर जनरल बहादुर, जो परोपकार के घर हैं, के समक्ष स्पष्ट हो सके।

यह कहना मुश्किल है कि इन याचिकाओं को गवर्नर जनरल के समक्ष प्रस्तुत किया गया था या नहीं। हमें केवल इतना पता है कि शम्सुद्दीन अहमद खान द्वारा इस मामले पर प्रस्तुत किए गए ये और अन्य दस्तावेज़ कंपनी प्रशासन के विधि विभाग में नहीं, बल्कि राजनीतिक विभाग में रखे गए हैं। इससे यह संकेत मिलता है कि कंपनी ने शुरुआत से ही इस मामले को कानून और न्याय के नजरिए से नहीं, बल्कि राजनीतिक दृष्टिकोण से देखा।

करीम खान पर हत्या का मुकदमा चलाने की तैयारियां तेजी से चल रही थीं। गुरुवार, 30 अप्रैल 1835 को, दिल्ली के पुलिस प्रमुख ने दिल्ली के नगर मजिस्ट्रेट साइमन फ्रेजर की अदालत में करीम खान और शम्सुद्दीन अहमद खान के खिलाफ आरोप दायर किए। शम्सुद्दीन अहमद खान के खिलाफ सबूतों का कोई नामोनिशान नहीं था। लेकिन जॉन लॉरेंस ने मेटकाफ के सामने यह तर्क दिया कि शम्सुद्दीन अहमद खान और करीम खान के बीच मालिक-नौकर का रिश्ता था, इसलिए अंग्रेजी कानून के अनुसार, मालिक को अपने नौकर के कृत्यों के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है। उनका दूसरा तर्क यह था कि नवाब के खिलाफ आरोप तय होने की खबर फैलते ही, उनके खिलाफ नए सबूत या गवाह सामने आ सकते हैं। यह भी संभव था कि कंपनी के खिलाफ नवाब को बुरी तरह फंसा देखकर कई लोग उनका साथ छोड़ दें और उनके खिलाफ गवाही भी दे दें।

यह दूसरा तर्क आंशिक रूप से सही साबित हुआ। जब करीम खान के खिलाफ आरोप दायर होने की खबर सार्वजनिक हुई, तो कई लोगों को यह कहते हुए सुना गया कि करीम खान अकेला अपराधी नहीं था: उसका साथी और नवाब का मुख्य संदेशवाहक भी इस अपराध में भागीदार था। इस मामले में पहली बार अनिया मेवाती का नाम सामने आया था। कंपनी के जासूसों ने तुरंत यह खबर फ्रेजर को पहुंचा दी। इसके अलावा, दिल्ली के किसी भी संभ्रांत व्यक्ति, यहां तक कि अमीनउद्दीन अहमद खान भी, शम्सुद्दीन अहमद खान के खिलाफ एक शब्द भी बोलने को तैयार नहीं थे। अंग्रेजों के पास केवल मिर्ज़ा ग़ालिब ही थे, लेकिन शम्सुद्दीन अहमद के प्रति उनकी शत्रुता किसी से छिपी नहीं थी। अंग्रेज लेखक थॉमस बेकन ने लिखा है कि शहर के कई संभ्रांत व्यक्ति शम्सुद्दीन अहमद खान के शुभचिंतक और मित्र थे।

जॉन लॉरेंस ने अनिया मेवाती की जांच शुरू की और लगभग तुरंत ही उन्हें यह जानकारी मिली कि दिल्ली की अपनी पिछली दो यात्राओं में अनिया करीम खान के साथ आई थी; और हत्या की रात के बाद अनिया को किसी ने नहीं देखा था। करीम खान से फिर से गहन पूछताछ की गई कि वह और अनिया लगातार दो बार दिल्ली क्यों गए थे। हमेशा की तरह, करीम खान के जवाब बिल्कुल भी संतोषजनक नहीं थे। लॉरेंस हताशा में अपने बाल नोचने के अलावा कुछ नहीं कर सके।

गतिरोध जारी रहता, लेकिन हमेशा की तरह करीम खान का दुर्भाग्य उसके शत्रुओं को उकसा रहा था और उन्हें उसके विरुद्ध वार करने का रास्ता दिखा रहा था। अनिया की गतिविधियों की जांच

तेजी से फलदायी होती गई: अनिया के अतीत और वर्तमान की छानबीन के लिए फिरोजपुर भेजा गया एक जासूस जल्द ही लौटकर रिपोर्ट लेकर आया कि अनिया हत्या के अगले दिन फिरोजपुर आई थी, लेकिन जल्द ही गायब हो गई और अब बरेली में होने की खबर है।
अभियोजन पक्ष की ओर से, अंग्रेजी आपराधिक प्रक्रिया कानून के आलोक में साक्ष्यों और आरोपपत्रों की जांच से यह सिद्ध हुआ कि अभियुक्त शम्सुद्दीन अहमद खान और करीम खान के विरुद्ध मामला परिपथ न्यायालय के न्यायाधीश को सौंपे जाने योग्य था। पूर्व में, अंग्रेजी सत्र न्यायालय को परिपथ न्यायालय कहा जाता था। बाद में, जब जिला प्रशासन पूरी तरह से कंपनी बहादुर के हाथों में चला गया, और फिर अंततः जब इसे इंग्लैंड की महारानी और भारत की साम्राज्ञी ने अपने अधीन ले लिया, तो परिपथ न्यायालय का नाम सत्र न्यायालय रखा गया, और उसके बाद जिला एवं सत्र न्यायालय। साइमन फ्रेजर केवल एक मजिस्ट्रेट थे, और इसलिए सत्र न्यायालय को सौंपे गए मामले की सुनवाई करने के लिए सक्षम नहीं थे। कुछ ही दिनों में थॉमस मेटकाफ ने एक वरिष्ठ और अनुभवी अंग्रेज जॉन अलेक्जेंडर कोल्विन को विशेष न्यायाधीश और आयुक्त के रूप में नियुक्त किया और उन्हें दोनों मामलों की सुनवाई करने का जिम्मा सौंपा। यह 1 मई 1835 का दिन था।
कहा जाता है कि जब नवाब और करीम खान पर चल रहे मुकदमे और उसके संभावित अंजाम की खबर फैली—जिसे कंपनी बहादुर के शुभचिंतकों ने बड़ी लगन से दूर-दूर तक फैलाया—तो अनिया ने अपने भाई धन्ने खान और एक अन्य मित्र को जॉन लॉरिंस के पास यह प्रस्ताव लेकर भेजा कि अगर कंपनी बहादुर उसे पूरी तरह से माफ करने का वादा करें तो वे सारा राज़ खोल देंगे। घटनाक्रम का एक अन्य संस्करण यह है कि लॉरिंस ने अपने प्रयासों से बरेली में अनिया का पता लगाया। फिर उसने उसे फांसी की धमकी दी और फिरंगी विचारधारा का पालन करने पर माफी का प्रलोभन भी दिया। अनिया विधिवत लॉरिंस के सामने पेश हुआ और उसे तुरंत जेल में डाल दिया गया।
अनिया से कई दिनों तक पूछताछ की गई, लेकिन वह किसी भी तरह से यह साबित नहीं कर सका कि उसके पास आरोपियों में से किसी को भी दोषी ठहराने वाला कोई प्रत्यक्ष या प्राथमिक सबूत है। वह नवाब और करीम खान के बीच हुई दो महत्वपूर्ण बातचीत में से किसी में भी मौजूद होने का दावा नहीं कर सका। और खुद नवाब के सामने जाने और हत्या की खबर देने के बावजूद, उसके पास नवाब के शब्दों या कार्यों का ऐसा कोई सबूत नहीं था जिससे नवाब को सीधे तौर पर इस मामले में फंसाया जा सके। कुएं से बरामद पत्र के बारे में उसने कहा कि कार्रवाई का आदेश नवाब से आया था, लेकिन उसने स्वीकार किया कि वह अनपढ़ था और केवल नवाब की मुहर पहचान सकता था। लेकिन पत्र पर कोई मुहर नहीं थी, इसलिए उसका सबूत बेकार था। बंदूक के बारे में उसका सबूत तो और भी महत्वहीन था, क्योंकि वह यह नहीं बता सका कि हत्या की रात करीम खान के पास कौन सी बंदूक थी, यदि कोई थी भी तो।
अनिया का करीम खान के विरुद्ध साक्ष्य घोड़े की नालों के संबंध में अधिक ठोस था। उसने बताया कि उसकी उपस्थिति में ही करीम खान ने नालों को घोड़े के खुरों में पीछे की ओर ठोंका था। बाद में, दोनों विलियम फ्रेजर की हत्या के लिए एक साथ निकले। अनिया ने गोलीबारी होते

हुए नहीं देखा, लेकिन उनके बीच पहले ही यह तय हो चुका था कि हत्या की खबर लेकर अनिया ही जल्द से जल्द फिरोजपुर भाग जाएगा। अनिया ने बताया कि उसने गोलियों की आवाज सुनी, फिर एक काले घोड़े पर सवार को तेजी से वहां से भागते देखा और यह निष्कर्ष निकाला कि विलियम फ्रेजर मर चुका है। उसने शपथपूर्वक कहा कि काले घोड़े पर सवार करीम खान था, हालांकि उसने उसे करीब से नहीं देखा था, और सवार सिर से पैर तक काले वस्त्रों में लिपटा हुआ था, और रात का अंधेरा था, साथ ही जंगल का भी अंधकार था।

अनिया के खुलासों से करीम खान के खिलाफ मामला कुछ हद तक मजबूत हुआ, लेकिन उसके मालिक को दोषी ठहराने के लिए कोई ठोस सबूत नहीं था। मेटकाफ की अध्यक्षता में और अन्य दो प्रमुख अंग्रेज अधिकारियों की सदस्यता में एक अनौपचारिक परिषद ने मामले की समीक्षा करने के लिए बैठक की और इस निष्कर्ष पर पहुंची कि दोनों आरोपियों के खिलाफ मामला पूर्ण माना जाना चाहिए। अब अभियोजक और जांच अधिकारियों का काम अदालत को अपने मामले की सच्चाई से अवगत कराना था। इसलिए नवाब को तुरंत गिरफ्तार करना और उससे विस्तार से पूछताछ करना उचित था। यह पूरी तरह संभव था कि नवाब, अपनी नासमझी के कारण, अनजाने में कुछ ऐसा खुलासा कर दे जिससे उसके खिलाफ मामला मजबूत हो जाए। परिषद सर्वसम्मति से इस बात पर सहमत थी कि नवाब की गिरफ्तारी और उस पर मुकदमा चलाने में और देरी से कंपनी के हितों को नुकसान पहुंच सकता है और गलतफहमियां पैदा हो सकती हैं, जिससे कंपनी की प्रतिष्ठा को ठेस पहुंच सकती है—स्थानीय लोग यह मान लेंगे कि नवाब रेजिडेंट जैसे कंपनी के इतने वरिष्ठ और महत्वपूर्ण अधिकारी के हत्यारे के खिलाफ फिरंगी कंपनी शक्तिहीन है।

यह देखा गया कि शम्सुद्दीन अहमद फिरोजपुर में थे और कंपनी के पुलिसकर्मियों के अधिकार क्षेत्र से बाहर थे। नागरिक अशांति और कंपनी के अधिकारियों के खिलाफ सशस्त्र विरोध प्रदर्शन का भी खतरा था: उन्हें विद्रोही भीड़ द्वारा घेर लिया जा सकता था और हिरासत में लिया जा सकता था या उनकी हत्या भी की जा सकती थी। इसलिए 2 मई 1835 को एजेंट द्वारा गवर्नर जनरल बहादुर और दिल्ली के कमिश्नर को नवाब को एक पत्र भेजा गया। उस समय की औपचारिक दरबारी फारसी में लिखे गए इस पत्र का उन्नीसवीं सदी के आरंभिक अंग्रेजी अनुवाद नीचे दिया गया है। पत्र में हमेशा की तरह विराम चिह्न नहीं थे और इसे पैराग्राफ में विभाजित नहीं किया गया था। अनुवाद में, पैराग्राफ को पहले इस्तेमाल किए गए चिह्न से चिह्नित किया गया है और बहुत कम विराम चिह्नों का प्रयोग किया गया है।

उच्च पदस्थ और अंग्रेज़ सरकार के विशेष मित्र, गवर्नर जनरल बहादुर, और नवाबी सर चार्ल्स मेटकाफ के प्रियतम, दिलावर-उल मुल्क नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान बहादुर, फिरोजपुर झिरका के सरदार, कृपया उनकी कुशलक्षेम के लिए प्रार्थना करने के बाद, इस बात पर ध्यान दें: चूंकि परम पूज्य के एक सेवक, करीम खान, को वरिष्ठ साहिब बहादुर की हत्या के अपराध में गिरफ्तार किया गया है और उन पर मुकदमा चलाया जा रहा है, जिन पर ईश्वर की कृपा है, जिन्हें अल्लाह की क्षमा प्राप्त हुई है और जिन्हें ईश्वर ने पवित्र किया है, और उसी महान व्यक्ति का एक अन्य सेवक भी उसी मामले में संदेह के घेरे में है, और उपरोक्त दोनों के बयानों से यह प्रतीत होता है

कि उस विपत्तिपूर्ण घटना से संबंधित कुछ महत्वपूर्ण मामले संभवतः उपरोक्त परम पूज्य के संज्ञान में हैं। अतः, हम आपसे विनम्रतापूर्वक निवेदन करते हैं कि इस मामले में जांचकर्ताओं और अभियोजकों की सहायता के लिए, जैसे ही यह याचिका आपके हाथ पहुंचे, आप यथाशीघ्र दिल्ली लौट आएं। बस इतना ही। आपकी सुरक्षा के लिए शुभकामना और प्रार्थना सहित, याचिकाकर्ता इख्तिसास यार खान (महामहिम के विशेष मित्र), थॉमस थियोफिलस मेटकाफ फिरोज जंग (युद्ध में विजयी), गवर्नर जनरल बहादुर के कार्यवाहक प्रतिनिधि और समृद्धि एवं शक्ति के केंद्र, कंपनी बहादुर के शासन से संबंधित मामलों में पूर्णाधिकार प्राप्त प्रतिनिधि, और शाहजहानाबाद और दिल्ली राजधानी क्षेत्र के कार्यवाहक आयुक्त साहिब बहादुर। दिल्ली नगर में गुरुवार, 2 मई 1835 को, हिजरी 1251 के मुहर्रम की 5 तारीख को अंकित।
कंपनी के दो भरोसेमंद संदेशवाहक, जो जासूस के रूप में भी काम करते थे, ने 3 मई 1835 को नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान को पत्र प्रस्तुत किया।

देखते ही देखते, पूरे शहर में यह खबर फैल गई: हमारे नवाब को फ्रेजर की हत्या के मामले में दिल्ली बुलाया गया है। उसी शाम, एक और अफवाह तेज़ी से फैली: कंपनी के बहादुर ने नवाब को स्पष्ट शब्दों में धमकी दी है कि अगर वे बुलावे पर दिल्ली स्थित रेजीडेंसी में हाज़िर नहीं हुए, तो फिरोज़पुर पर कंपनी का सैन्य आक्रमण होगा। शहर के कई साहसी और बेरोज़गार युवाओं ने तुरंत बचाव के उपाय शुरू कर दिए। शहर के आसपास के गांवों से समूह बाज़ार में इकट्ठा होने लगे और खुलेआम धमकी देने लगे कि अगर कंपनी की सेना हमारे शहर में आई, तो उन्हें सब्ज़ियों की तरह काट दिया जाएगा। उन्होंने ऐलान किया: कंपनी की सेना हमारे नवाब को ले जाने से पहले हम अपने खून की आखिरी बूंद तक बहा देंगे।
सुबह तक, न केवल ग्रामीण, बल्कि राज्य के पदाधिकारी और आसपास के इलाकों के जमींदार भी दो-तीन के समूहों में शम्सुद्दीन अहमद के सामने उपस्थित हो गए और उन्होंने आवश्यकता पड़ने पर कंपनी के खिलाफ प्रतिरोध और सशस्त्र संघर्ष का आश्वासन दिया। शम्सुद्दीन अहमद खान की जागीरों के मुख्य दीवान मलखान सिंह ने नवाबों को दिल्ली जाने से बार-बार मना किया; उन्हें लगा कि वहाँ कुछ छल या कपट चल रहा है। उन्होंने कहा, 'आप दिल्ली न जाइए। यहीं रहिए। हम आपको विश्वास दिलाते हैं कि हम कंपनी की सेना को पीछे हटने पर मजबूर कर देंगे। दुश्मन चाहे कितना भी शक्तिशाली क्यों न हो, जनता की शक्ति को कभी नहीं हरा सकता।'
एक ज्योतिषी ने आने की अनुमति मांगी और उन्हें प्रवेश मिल गया। उन्होंने नवाब को फिरोजपुर में कम से कम दो महीने रहने की सलाह दी; उन्होंने कहा कि चंद्रमा को वृश्चिक राशि (आठवीं राशि) से मुक्त होने में इतना समय लगता है। चंद्रमा के वृश्चिक राशि से बाहर निकलने के बाद सब कुछ ठीक हो जाएगा।
शम्सुद्दीन अहमद खान ने इन सभी आग्रहों पर जरा भी ध्यान नहीं दिया। कंपनी का पत्र मिलते ही उनकी पहली प्रतिक्रिया यही थी कि वे बुलावा अनदेखा कर फिरोजपुर में ही ठहरे रहें। लेकिन बाद में उन्होंने अपना इरादा बदल लिया। जल्द ही दिल्ली की औपचारिक यात्रा की व्यवस्था करने के आदेश जारी किए गए। उन्होंने अपने लोगों और आने वाले जमींदारों से कहा कि चिंता की कोई बात नहीं है, डरने की तो बिल्कुल भी नहीं। मैं जब चाहूँगा तब लौट आऊँगा; अंग्रेज मुझे रोक नहीं सकते, और न ही मुझे किसी तरह का नुकसान पहुँचा सकते हैं। जिस ज्योतिषी ने यात्रा न करने की सलाह दी थी, उसे अब यात्रा शुरू करने का सबसे अच्छा दिन निर्धारित करने का आदेश दिया गया। उन्होंने बड़ी सावधानी से गणना की और बताया कि रविवार को, यानी परसों, राहु काल के बाद, नक्षत्रों की स्थिति कुछ हद तक कम प्रतिकूल होगी, इसलिए यदि दिल्ली की यात्रा करनी ही है, तो रविवार को सुबह ग्यारह से बारह बजे के बीच शुरू करनी चाहिए।
अगले दिन, एक बुजुर्ग सिख नवाब से मिलने के लिए किले के द्वार पर पहुंचा। उसने अपना नाम उजागर सिंह बताया, जो पहले नवाब अहमद बख्श खान का मुख्य संदेशवाहक था। उसने कहा कि नवाब के स्वर्गवास से कुछ समय पहले ही वह पेंशन लेकर अपने पैतृक गांव लौट गया था।

घटनाक्रम की जानकारी मिलते ही वह बड़ी जल्दी में किले में आया था।
उन्होंने कहा, “महामहिम का भाग्य सदा बुलंद रहे। मेरा ऊँट कम से कम दो सौ मील की दौड़ लगाए बिना विश्राम नहीं करेगा। हे पूज्यवर, मैं आपसे निवेदन करता हूँ कि कुछ समय के लिए सिख वस्त्र धारण कर आज रात मेरे साथ सिख राज्य के लिए चलें। मैं परम पवित्र की शपथ लेता हूँ कि सीमा पर मेरे समुदाय के लोग आपका खुले दिल से स्वागत करेंगे और आपको लाहौर के किले में पूरे सम्मान के साथ प्रवेश कराया जाएगा।”
नवाब शम्सुद्दीन अहमद ने सुझाव की सराहना की, लेकिन कहा, ‘सरदार उजागर सिंह, मैं पंजाब के शेर महाराजा के सामने भगोड़ा नहीं दिखना चाहता और महाराजा, उनके साथियों और सबसे बढ़कर अपनी प्रजा की नज़रों में छोटा नहीं दिखना चाहता।’ उजागर सिंह ने पूरी निष्ठा से नवाब को आश्वासन दिया कि पंजाब के शेर महाराजा उन्हें प्रिय भाई की तरह मानेंगे: फिरंगी का शत्रु भी उनका प्रिय मित्र है। शम्सुद्दीन अहमद टस से मस नहीं हुए; उन्होंने उजागर सिंह को धन्यवाद दिया, उन्हें दस सोने के मोहर का इनाम दिया और उनकी उम्र और वफादारी का सम्मान करते हुए उन्हें विदा किया।
अगला दिन शनिवार था; दोपहर के लगभग समय, जब नवाब चांसरी में अपने मुख्य क्लर्क को कुछ निर्देश देने के बाद कुछ पत्र लिखवा रहे थे, तभी एक राजदंड धारण करने वाला व्यक्ति प्रकट हुआ और उसने बताया कि सुभ दौलत चांसरी के द्वार पर उपस्थित हैं और उनसे मिलने की अनुमति मांग रहे हैं।
नवाब ने कहा, 'मुझे उसके आने का मकसद पता है। सूचना भेजी जा सकती है कि मैं थोड़ी देर में हरम सारा आऊंगा और वहीं दोपहर का भोजन करूंगा।'
अफजल-उन निसा बेगम के हरम सारा वाले हिस्से में एक बड़ा सा मेज़पोश बिछा हुआ था। उस पर कुछ खाना पहले से ही रखा हुआ था। नौकरानियाँ व्यस्तता से इधर-उधर घूम रही थीं, लेकिन अभी तक दोपहर का भोजन परोसे जाने या जल्द ही खाए जाने के कोई संकेत नहीं थे। बेगम का मुख्य कक्ष, ऐवान, बड़ा और विशाल था, और उसमें चारों ओर कालीन बिछे हुए थे: कश्मीरी, तुर्की और भारतीय कालीन, जिनमें से अधिकांश भदोही में बुने गए थे, जो पूर्व में छह सौ मील से अधिक दूर एक ऐसे क्षेत्र में स्थित है जहाँ सोलहवीं शताब्दी में सम्राट अकबर द्वारा कालीन बुनने और डिज़ाइन करने वाले कुछ परिवारों को बसाया गया था।
गर्मी के असर को कम करने के लिए कमरे में अर्ध-अंधेरा था। चारों कोनों पर सफेद शेड वाले केवल चार फ्लोर लैंप जल रहे थे। कुछ हल्की हरी रोशनी 'खास' नामक अनोखी ठंडी खुशबू वाली घास की जड़ों से बनी स्क्रीन से छनकर आ रही थी (उन दिनों अंग्रेज इसे 'कस' या 'कस-कस' लिखते थे)। हल्के बांस के डंडों पर टिकी हुई कस-कस की मोटी स्क्रीन खुले स्थानों की ओर खुलने वाले दरवाजों और खिड़कियों पर लगी थीं। इन्हें लगातार गीला रखने से जगह ठंडी रहती थी और हल्की, गर्मी जैसी खुशबू भी आती थी। कभी-कभी बंद कमरे के अंदर पंखे चलाए जाते थे। गर्मी से राहत पाने की इस अनोखी तरकीब का श्रेय सम्राट अकबर को भी दिया जाता है।
सुगंधयुक्त शीतलता और अर्ध-अंधेरे का समग्र प्रभाव सुकून और शांति का था। लेकिन कक्ष में

बैठी तीनों महिलाओं के चेहरों पर तनाव, चिंता और उलझन के सिवा कुछ नहीं झलक रहा था। दूर की दीवार के पास, कालीन से ढके लकड़ी के चबूतरे पर अफजल-उन निसा बेगम बैठी थीं; उनकी दो बेटियाँ अहमद-उन निसा और शम्स-उन निसा पास ही छोटी कुर्सियों पर बैठी थीं। तीनों चुप थीं; छोटी बच्चियों का शरीर तनावग्रस्त था और उनके अचेतन हाव-भाव और शारीरिक गतिविधियों से पता चलता था कि वे तनावपूर्ण वातावरण में असहज थीं। पास ही एक अच्छी-खासी गद्देदार कुर्सी थी, जिस पर छोटी बेगम हुसैनी बेगम बैठी थीं। कुर्सी से थोड़ी दूर नवाब की रखैल चंपा बैठी थीं; उनकी बेटी रहमत-उन निसा, जो वहाँ मौजूद तीनों बच्चों में सबसे छोटी थीं, उनकी गोद में बैठी थीं, लेकिन बार-बार दूसरी दोनों बच्चियों के पास जाने की कोशिश करती थीं, और उन्हें अपने साथ खेलने के लिए मनाने में असफल रहती थीं।

छज्जों पर पानी छिड़ककर उन्हें नम रखा जा रहा था। बाहर से एक नौकर रेशम और ब्रोकेड से बने दो बड़े छत के पंखों को एक पुली से खींच रहा था। छज्जों की खुशबू बेगमों के सामने रखे दो हुक्कों की सुगंध के साथ मिलकर मनमोहक महक रही थी, जो कुछ करने के लिए एक-दो कश खींचने की कोशिश कर रही थीं। एक और हुक्का नवाब के आने का इंतज़ार कर रहा था।
सुब्ह दौलत के अलावा कोई भी दासी कक्ष में नहीं थी। नवाब के प्रवेश करते ही सभी उठ खड़े हुए और सलाम किया। सुब्ह दौलत ने सात सलाम किए; बेगमों ने तीन, चंपा ने पाँच; और बच्चों ने अपनी क्षमता के अनुसार दो सलाम किए। नवाब ने सभी को एक सलाम करके उत्तर दिया और फिर अपना दाहिना हाथ छाती के बाईं ओर, हृदय के पास रखा। सलाम करने का मानक तरीका थोड़ा झुकना, दाहिना हाथ हथेली ऊपर की ओर करके जमीन पर रखना, फिर उठकर हाथ को सिर पर रखना था। सलाम के दौरान बोलना मना था। सलाम के विपरीत, कुर्नीश केवल बादशाह को ही दी जाती थी। कुर्नीश करने का तरीका दाहिना हाथ माथे तक उठाना और फिर सिर झुकाना था। यह हमेशा सलाम के अतिरिक्त किया जाता था।
नवाब, सिर झुकाए हुए, कक्ष में आगे बढ़े और अफजल-उन निसा बेगम के पास चबूतरे पर पालथी मारकर बैठ गए, ताकि वे चंपा और छोटी बच्ची को देख सकें और वे उन्हें देख सकें। चंपा खुशी से उछल पड़ी और नवाब की गोद में बैठ गई। अहमद-उन निसा से बड़ी शम्स-उन निसा उठीं और फिर से सलाम किया, और नवाब के चरणों में आकर बैठ गईं, उनका एक पैर थाम लिया। नवाब ने दोनों को चूमा, और स्नेहपूर्वक अपनी उंगलियों से उनके बालों को सहलाते हुए मुस्कुराते हुए कहा, 'अच्छा, देवियों, सर्वोच्च न्यायालय की बैठक क्यों हुई है? क्या मैंने किसी तरह सभी न्यायाधीशों को नाराज कर दिया है? और छोटी अहमद-उन निसा अलग क्यों बैठी हैं? क्या वह अपने बिलावल के पास नहीं बैठना चाहतीं?'
प्रथा के विपरीत, अफ़ज़ल-उन निसा नवाब को 'नवाब साहब' या 'मिर्ज़ा साहब' कहकर संबोधित नहीं करती थीं; वह उन्हें 'दिलवार-उल मुल्क' कहकर पुकारती थीं। अपनी माँ की नकल करते हुए, छोटी अहमद-उन निसा भी ऐसा ही करना चाहती थीं, लेकिन उनकी बकबक करने वाली ज़बान से केवल बिलावल ही निकलता था और यही उनके पिता को पुकारने या संबोधित करने का तरीका बन गया। वह केवल पाँच वर्ष की थीं, शम्स-उन निसा उनसे अठारह महीने बड़ी थीं,

जबकि रहमत-उन निसा लगभग ढाई वर्ष की थीं। अफ़ज़ल-उन निसा ने अहमद-उन निसा के सिर पर हल्के से थपथपाया और दिल्ली के लोगों के रिवाज़ में परिचित 'तू' का प्रयोग करते हुए कोमल डांट के लहजे में कहा, 'तो अब तुम अपने बिलावल के पास क्यों नहीं जाती? तुम! अभी इसी वक्त तुम रो रही थीं और बड़बड़ा रही थीं कि उन्हें क्या रोक रहा है।'

अहमद-उन निसा ने शर्माते हुए नवाब को और सलाम किया और उठकर नवाब के घुटनों के पास बैठ गए। कोमलता से उनके ठुड्डी के नीचे हाथ रखकर उन्होंने उनका चेहरा ऊपर उठाया और उन्हें चूमा, और उन्हें ऐसा लगा जैसे किसी ने सीने में छुरा घोंप दिया हो; उनकी विशाल, हरी-भरी आँखें आँसुओं से भरी हुई थीं। वे झुके, उनकी आँखों को चूमा, उन्हें उठाया और गले लगाकर फारसी में पुकारा: 'अरे! अरे! भाई वल्लाह, जानी बेगम। ये क्या रहस्य है? मेरी आँखों की रोशनी नम हो गई है! अल्लाह न करे, क्या वो ठीक नहीं हैं? क्या आपने हकीम साहब को बुलाया?'
'दिलावर-उल मुल्क, आपकी लाडली बिल्कुल भी बीमार नहीं है,' अफजल-उन निसा ने फारसी में उत्तर दिया। वह आम तौर पर नवाब से फारसी में बात करती थी; नवाब आमतौर पर उससे हिंदी में बात करता था, लेकिन कभी-कभी तनाव या किसी भावना के दबाव में वह फारसी में बोलने लगता था। 'आपकी लाडली दुखी है कि आप उसे ऐसे बुरे समय में छोड़कर जा रहे हैं; आप दिल्ली जा रहे हैं, जिससे वह आपके साथ से वंचित हो जाएगी।'
शम्सुद्दीन अहमद एक-दो पल तक चुप रहे। मानो वे सोच में डूबे हुए थे। उन्हें हरम सरा में हालात की गंभीरता का अंदाज़ा था, लेकिन उन्होंने सोचा नहीं था कि हालात इतने बुरे होंगे। सब लोग चुप थे। शम्सुद्दीन अहमद ने लड़की को अपने कंधे पर बिठाया और उसकी गर्दन व पीठ को थपथपाते और सहलाते रहे। सब महिलाओं की निगाहें उन पर टिकी थीं। बाकी लड़कियाँ, मानो ऐवान के अंदर किसी नाटकीय घटना को भांपकर, एकदम शांत हो गई थीं।
नवाब ने कहा, 'जानी बेगम, कृपया ध्यान से सुनिए। और अमीर बहू, आप भी मेरी बात सुनिए... चंपा, अच्छा हुआ कि आप यहाँ हैं। आप भी मेरी बात सुनिए। मेरी बातें आप सबके लिए फायदेमंद होंगी।'
अहमद-उन निसा को अपनी गोद में उठाते हुए, उन्होंने अपने कंधे सीधे किए और कुछ अधिकारपूर्ण ढंग से बोले, 'मैं एक सिपाही हूँ। एक सिपाही का पैर, अगर आगे न बढ़े, तो उसे काट देना चाहिए... मैं अपनी इच्छा से जाता हूँ; मैं अपनी इच्छा से लौटूँगा। लेकिन अगर मैं नहीं लौटता, तो अल्लाह ही सबका स्वामी और पालनहार है।'
चंपा ने विनम्रतापूर्वक सिर झुकाकर नवाब की बातें सुनीं। वह पूछना चाहती थी, एक सिपाही अपने सम्मान का रक्षक होता है, लेकिन घर में छूटे सिपाही के सम्मान की रक्षा कौन करेगा? लेकिन वह जानती थी कि बहस करना या सवाल पूछना उसका काम नहीं था। समझने की भी कोई ज़रूरत नहीं थी।
'महोदय, माननीय महोदय,' उसने सिर उठाए बिना धीमी आवाज में कहा।
शम्सुद्दीन अहमद को अपनी बेगमों से थोड़ी और उम्मीद थी। उन्होंने उनकी ओर देखा और हल्की मुस्कान के साथ कहा, 'भाई साहब, आपमें कहीं अधिक समझ और बुद्धिमत्ता है। कृपया अपनी

वाणी और आदेश देने की शक्ति का प्रयोग करें।'

अमीर बहू के चेहरे पर रंग-बिरंगे भाव उभर रहे थे: क्रोध, चिंता, सदमा। यह स्पष्ट था कि उन्हें नवाब का तरीका पसंद नहीं आया था: उन्होंने खुद फैसला लिया था और अब हमसे इसकी पुष्टि चाहते थे। खुद को संभालते हुए, उन्होंने एक-दो पल तक कोई जवाब नहीं दिया। जब उन्होंने बोलना शुरू किया, तो उनकी आवाज या तो क्रोध से भरी हुई थी या चिंता के कारण कर्कश थी। 'सैनिक की दुनिया उसकी तलवार की नोक से आगे नहीं बढ़ती। हम, जो पर्दे के पीछे रहते हैं, हमारी कोई दुनिया नहीं है। हमारे पास केवल रास्ते हैं जिन पर हमें चलना है, चाहे स्वेच्छा से या अनिच्छा से। यदि पर्दे की रक्षा करने वाला कोई न हो, तो रास्ता फांसी का फंदा बन जाता है। आप हमें यहाँ घुटते हुए धीरे-धीरे मरने के लिए छोड़ देते हैं।'
अमीर बहू दुबली-पतली और छोटी कद-काठी की थी, उसका रंग चंपक के फूल की तरह सुनहरा भूरा था। उसकी सुंदरता इतनी बेबाक और ऐसी प्रतीत होती थी मानो उस पर किसी पुरुष का कोई प्रभाव न हो, कि उसकी उपस्थिति का प्रभाव किसी हिरणी जैसा था, न कि केवल स्त्रीत्व जैसा: बस देखो और निहारो। उसके स्तन और कूल्हे सुडौल थे, लेकिन इतने आकर्षक थे कि ढीली, हल्की गर्मियों की पोशाक में भी, उसके शरीर से संपूर्ण यौवन झलक रहा था। वह स्वभाव से थोड़ी चिड़चिड़ी थी, शायद इसलिए कि उसे अपनी सुंदरता पर गर्व था, लेकिन उस समय उसके शब्द उचित प्रतीत होते थे: इस अर्थ में कि दूसरी बेगम भी उसके जैसी ही महसूस करती होंगी, लेकिन जो उसने कहा, उसे कहने के लिए कम साहस की आवश्यकता नहीं थी।
शम्सुद्दीन अहमद के चेहरे पर थोड़ी सी नाराजगी छा गई। उन्होंने ठंडे स्वर में उत्तर दिया, “हम सब जन्नत की शतरंज की बिसात पर मोहरे हैं। कोई बिशप बनता है, कोई अश्व, और कोई महज़ प्यादा। किसी को नहीं पता कि खिलाड़ी का इरादा क्या है। समय आने पर सबको परिणाम स्वीकार करना ही पड़ता है।”
कमरे में सन्नाटा छा गया। अहमद-उन निसा ने अपने पिता की ओर देखा, मानो कुछ कहना चाहती हो। नवाब समझ गए और बोले, 'अहमदी बेगम, आप कुछ कहना चाहती थीं?' अफजल-उन निसा बेगम के विपरीत, नवाब हमेशा अपने बच्चों से आदरपूर्वक 'आप' (द्वितीय पुरुष बहुवचन) से बात करते थे।
अपने पिता की निगाहें खुद पर महसूस करते ही अहमद-उन निसा और भी ज्यादा शर्मा गई। अपने छोटे हाथों से अपना चेहरा छुपाते हुए वह रुक-रुक कर बोली, 'न... नहीं, कुछ नहीं। बस मैं कुछ कहना चाहती थी...' वह रुक गई।
‘चलो बोलो। तुमने “लेकिन” कहा और रुक गए। तो “लेकिन” के बाद क्या था?’
'सर, वह... वह तो कुछ भी नहीं है... लेकिन क्या आपने हमें यह नहीं बताया था कि शतरंज कोई अच्छी चीज नहीं है?'
'हां, यह बिल्कुल सच है। जो व्यक्ति शतरंज का आदी हो जाता है, वह अन्य चीजों के लिए बिल्कुल बेकार हो जाता है।'

'तो, बिलावल, तुम और हम सब किसी शतरंज के खेल में मोहरे क्यों बने हुए हो?'
शम्सुद्दीन अहमद के चेहरे पर एक फीकी सी मुस्कान थी। उन्होंने बच्चे के सवाल को हँसी में उड़ाने की कोशिश की, लेकिन सफल नहीं हो सके। इसके बजाय, वे दूसरी ओर मुड़ गए, 'साँप पकड़ने वाले का बच्चा साँपों से खेलता है। हम सैनिकों के बच्चे हैं, हम मौत से खेलते हैं। तुम हमारे बच्चे हो: राजाओं और सरदारों के बच्चों की नाव हर समय तूफान के खतरे का सामना करती है।'
यह बात उस नन्ही बच्ची की समझ से परे थी। वह एक और सवाल पूछने ही वाली थी कि अफजल-उन निसा बेगम ने अचानक बीच में दखल दिया। हमेशा की तरह उन्होंने फारसी में बात की। उनके शब्दों की तीक्ष्णता को अंग्रेजी में व्यक्त करना असंभव है: 'जिस नाव का नाविक, तुम्हारी तरह, किसी सैनिक का बच्चा हो, उसे निश्चित रूप से उफनते, तूफानी समुद्र की मार झेलनी पड़ेगी।'
शम्सुद्दीन अहमद के चेहरे पर एक बार फिर असंतोष और झुंझलाहट के भाव दिखाई दिए। उन्होंने सोचा कि जवाब में क्या कहें; फिर हिंदी में, बहुवचन पुरुषवाचक शब्द का प्रयोग करते हुए उत्तर दिया। उनकी आवाज़ दबी हुई थी, झुंझलाहट का नामोनिशान नहीं था। “शायद आप इसके परिणामों को पूरी तरह नहीं समझ पाए। अगर मैं कहीं और भी चला जाऊं, तो भी आप फिरंगियों के रहमो-करम पर ही रहेंगे। भारत की इस जन्नत जैसी धरती पर एक शैतानी साया मंडरा रहा है। यह साया मुझे हर जगह घेरे रहेगा। अगर मैं यहीं रहा, तो लुटेरे फिरंगी जल्द ही हम पर हमला कर देंगे। उन्होंने लोहारू पर कब्ज़ा कर लिया है; फिरोजपुर उनका विरोध करेगा, लेकिन कब तक? अंततः उन्हें आत्मसमर्पण करना ही होगा। उस दिन मैं आपके साथ नहीं रहूंगा, और आपको वह बर्ताव भी नहीं मिलेगा जो शहीद टीपू सुल्तान के परिवार को दिया गया था।”
अफजल-उन निसा कुछ कह नहीं पा रहा था। लेकिन आमिर बहू ने फिर से पलटवार करते हुए आरोप लगाते हुए कहा, 'क्या तुमने कभी यह कल्पना करने की कोशिश की है कि अगर तुम दिल्ली जाओगे तो तुम्हारा क्या होगा?'
मुझे किसी से भी किसी प्रकार की हानि की आशंका नहीं है, लेकिन मैं इस बात से भी अवगत हूं कि इसके विपरीत भी कुछ हो सकता है। मैं जा रहा हूं, लेकिन मैंने आप सभी के लिए पर्याप्त व्यवस्था कर ली है, निश्चिंत रहें।
‘अगर—भगवान न करे—आप नहीं हैं तो उन व्यवस्थाओं का क्या फायदा होगा...’
शम्सुद्दीन अहमद के कुछ कहने से पहले ही चंपा ने अफजल-उन निसा की ओर देखा, जो उसकी ओर मुड़ी। चंपा चुपचाप थोड़ा और पास आई और कोमल हाथों के इशारों से फुसफुसाते हुए उससे बोली। अफजल-उन निसा ने सिर हिलाया और शम्सुद्दीन अहमद से विनती भरे स्वर में कहा, 'महामहिम, महाराजा के बारे में प्रस्ताव...'

‘जानी बेगम, कृपया यह विचार अपने मन से निकाल दीजिए।’ अब शम्सुद्दीन अहमद की बारी थी विनती करने की। ‘किसी के एहसानमंद होकर आपको यहाँ छोड़ देना, यह सरासर अस्वीकार्य है। और मैं न तो राजपूत हूँ और न ही पठान, जो अपने सिर पर कफ़न लपेटकर, अपने परिवार को

तलवार से मार डालूँ और लड़ने के लिए निकल पड़ूँ।'
वह कुछ देर रुका, अपनी भावनाओं को संभालने की कोशिश करते हुए बोला, 'आपको यह भी सोचना चाहिए: इस दुनिया में महाराजा का शासन कब तक चलेगा? फिरंगी के दांत और पंजे एक दिन सिखों के खून से जरूर रंगेंगे।'
अफजल-उन निसा की आँखों में आँसू भर आए और बहने लगे। नन्ही शम्स-उन निसा जल्दी से अपनी माँ के पास गई और अपनी मलमल की ओढ़नी से उनके आँसू पोंछने लगी, उन्हें गले लगाकर चूमने लगी, मानो अफजल-उन निसा बच्ची हो और माँ।
सन्नाटा छा गया। शम्सुद्दीन अहमद ने गला साफ किया और सुलह भरे लहजे में बोले, "अमीर बहू, जीने का कोई विकल्प नहीं है। हममें से हर कोई अपना जीवन जीता है और अपनी मृत्यु मरता है। यह अल्लाह का हुक्म है, याद है? कोई बोझ उठाने वाला दूसरे का बोझ नहीं उठाएगा। आपको अच्छी उम्मीदें रखनी चाहिए और अच्छे विचार रखने चाहिए। दृढ़ निश्चय और मजबूत दिल रखें। अगर आज कल के लिए इंतजाम नहीं किए गए तो हम सब कुछ खो देंगे।"
उसने एक राजदंडधारी को बुलाने के लिए ताली बजाई और कोषाध्यक्ष से धन की थैलियाँ लाने का निर्देश दिया।
एक मिनट में, मोटे, मजबूत सूती कपड़ों से लदी एक बड़ी धातु की ट्रे लाई गई। शम्सुद्दीन अहमद ने कहा, 'अमीर बहू, आपका दहेज ढाई सौ सोने के मोहर तय किया गया था। एक तिहाई एकमुश्त देना था, जो मैंने विधिवत चुका दिया, है ना?'
अमीर बहू की ज़ुबान की कड़वाहट और गुस्से की तेज़ी सब गायब हो गई थी। उसके गले में दिल से उमड़ते हुए दुख के आँसू भर आए और उसने कहा, 'सर, बिलकुल सही।'
'तो अब, मैं पहले से चुकाई गई राशि वापस करता हूँ, और आपको पूरे ढाई सौ सोने के मोहर भेंट करता हूँ। कृपया स्वीकार करें।'
अमीर बहू अब खुलकर फूट-फूटकर रो रही थी, उसके पास इतने आंसू पोंछने की भी ताकत नहीं थी।
'माननीय न्यायाधीश महोदय, मैं आपको बरी करता हूँ, मैं आपको पूरी तरह से बरी करता हूँ।'
'महोदया, आपकी क्षमा का कोई मूल्य नहीं है। वास्तव में, आपके पास इस ऋण को क्षमा करने की शक्ति नहीं है। कृपया आइए और अपना हक प्राप्त कीजिए।'
शम्सुद्दीन अहमद पूरी तरह से खड़े हो गए। थाली को दोनों हाथों में लेकर उन्होंने औपचारिक भेंट चढ़ाते हुए अपनी भुजाएँ फैलाईं। अमीर बहू ने अपने सिर को अपने ऊपरी दुपट्टे से ढक लिया, सिर झुकाकर अपने पति के पास आईं, सलाम किया और थाली स्वीकार की। शम्सुद्दीन अहमद ने आशीर्वाद देते हुए अपना हाथ उनके सिर पर रखा और उन्हें अपने पास बैठाया। वह जितना हो सके सिकुड़कर बैठी थीं; वह अब भी धीरे-धीरे सिसक रही थीं।
उन्होंने कहा, 'हिम्मत मत हारिए। अभी कुछ भी नहीं खोया है। मैं जो कुछ भी कर रहा हूँ, वह इस्लाम में निर्धारित सामान्य सावधानी या ऐसी परिस्थितियों में की जाने वाली पूर्व-निवारणा मात्र है। मैंने कुछ मकान आपके नाम कर दिए हैं; उनके मालिकाना हक के कागजात कल आपके हाथ में होंगे।'

अमीर बहू अब निर्लज्ज होकर विलाप कर रही थी। शम्सुद्दीन अहमद ने उस समय हस्तक्षेप करना उचित नहीं समझा। इसलिए वह अफजल-उन निसा बेगम की ओर मुड़े और बोले, 'जानी बेगम, शाह आलमी मुद्रा में आपकी दहेज की राशि ढाई लाख रुपये तय हुई थी। मैंने अभी तक इसे अदा नहीं किया है। लेकिन जो अब जन्नत में हैं, उन्होंने फिरंगी कंपनी को डेढ़ प्रतिशत वार्षिक ब्याज पर इतनी ही राशि का ऋण दिया था। हमारे विवाह के समय यह अनुबंध हुआ था कि विधिवत सत्यापित और मुहरबंद ऋण दस्तावेज आपको दहेज के रूप में दिए जाएंगे। यह कार्य अभी तक नहीं किया गया है, और कागजात मेरे पास भी नहीं थे। वे राज्य के खजाने में सुरक्षित रखे गए थे, जिन पर ऋणदाता और ब्याज लाभार्थी के रूप में आपका नाम था।'

अफजल-उन निसा बेगम कुछ कहने ही वाली थीं कि शम्सुद्दीन अहमद ने उन्हें रोकने के लिए अपना हाथ उठा दिया।

क्षमा कीजिए, मेरी बात अभी पूरी नहीं हुई है। कृपया मेरी बात सुनिए। मैं यह निवेदन कर रहा था कि ऋण दस्तावेज, जो राजकोष में सुरक्षित रखा गया है, न्यायालय रजिस्ट्रार और दो स्वतंत्र गवाहों की उपस्थिति में आपको और आपके उत्तराधिकारियों को अनिश्चित काल के लिए पुनः आवंटित कर दिया गया है।

उन्होंने एक सेवक को बुलाने के लिए ताली बजाई और जब राजदंड धारण करने वाला आया, तो उन्होंने अनुरोध किया कि कोषाध्यक्ष को ऋण संबंधी कागजात लेकर ग्रैंड बेगम साहब के समक्ष उपस्थित होने के लिए कहा जाए। एक मिनट के भीतर, मुख्य कोषाध्यक्ष लाला प्रग नारायण कपड़े में लिपटे कागजातों का एक गट्ठा लेकर प्रकट हुए, मानो कोई पोर्टफोलियो हो। शम्सुद्दीन अहमद ने गट्ठे से एक सीलबंद थैली निकाली, सील तोड़ी, कागजात निकाले और उठकर उन्हें अफजल-उन निसा बेगम के चरणों में रख दिया।

'अफजल-उन निसा बेगम, कृपया मुझे वह सम्मान दें जो आपका हक है।' अचानक वह हिचकिचाए और रुंधी हुई आवाज में बोले, 'सौ अफसोस; इससे ज्यादा मैं नहीं कर सकता।'

अफजल-उन निसा बेगम ने अपने आंसू पोंछे; अपने पति का हाथ अपने हाथों में लेकर उसने विनती भरे स्वर में कहा, 'हे नवाब साहब, ईश्वर की खातिर, अपनी दासी को और अधिक शर्मिंदा न करें।'

सामान्य परिस्थितियों में, अफ़ज़ल-उन निसा बेगम के लिए दूसरों की उपस्थिति में अपने पति का हाथ पकड़ना या उन्हें छूना भी असंभव था। लेकिन आज किसी के पास अपने शब्दों, भावनाओं और कार्यों पर कोई नियंत्रण नहीं था। उन्हें सहज रूप से पता था कि एक आम औरत की तरह फूट-फूट कर रोने से बेहतर है कि वे कुछ पल के लिए अपने पति का हाथ थाम लें। फिर भी, नवाब पहले तो इस तरह की आत्मीयता देखकर अवाक रह गए, लेकिन जल्द ही उन्होंने इसके प्रतीकात्मक अर्थ को समझ लिया। उन्होंने अपना हाथ अत्यंत कोमलता और प्रेम से अफ़ज़ल-उन निसा बेगम पर रखा, मानो वह आशीर्वाद की साधिका हों और वे एक पूजनीय संत हों, और कोमल स्वर में बोले, 'अल्लाह सबकी रक्षा करता है और सबका सहारा है। अल्लाह की शरण से बढ़कर कोई शरण नहीं है।'

उनका कहने का तात्पर्य यह था कि भले ही मेरी सुरक्षा आपसे छीन ली जाए, लेकिन ईश्वर की

सुरक्षा हमेशा आपके साथ रहेगी। उन्होंने संयमित स्वर में बातचीत जारी रखते हुए समझौते के विषय पर चर्चा फिर से शुरू की।

'दोनों बेटियों के लिए भी मैंने इंतज़ाम कर दिए हैं। कोषाध्यक्ष कल आपको सब कुछ समझा देंगे। अगर यह हवेली मेरे भाइयों की संपत्ति बन भी जाए, तो भी मुझे लगता है कि आप यहाँ आराम से रह सकेंगी।' हल्के-फुल्के अंदाज़ में मज़ाक करते हुए उन्होंने अफ़ज़ल-उन निसा बेगम और अमीर बहू की ओर देखते हुए कहा, 'अगर कुछ और नहीं तो आप यहाँ किराएदार बनकर रह सकती हैं।'

दोनों बेगम सिर झुकाए खड़ी थीं, उनकी जुबानें बोलने में असमर्थ थीं। चंपा फूट-फूटकर रोना चाहती थी, पर बेगमों की मौजूदगी में वह ऐसा भी नहीं कर पा रही थी। वह कभी-कभार अपना सिर उठाकर नवाब को आँसुओं से भरी आँखों से देखती। अचानक, उसने नवाब को उससे बात करते सुना। उसे ऐसा लगा जैसे किसी ने उसकी कमर में सुई चुभो दी हो।

और चंपा बी!

'महोदय! माननीय महोदय।'

'मैंने चांदनी चौक वाले घर में संदेश भेज दिया है। वे तुम्हारा ख्याल रखेंगे। तुम वहाँ जब तक चाहो रह सकती हो। अगर चाहो तो वहाँ अपनी रसोई भी बना सकती हो। मैंने उसका भी इंतजाम कर दिया है... अरे रहमतुन निसा! क्या आज के अपने नब शब से तुम्हें कुछ सवाब नहीं मिलेगा?'

चंपा को संबोधित करते हुए उन्होंने हमेशा की तरह 'तुम' का प्रयोग किया, लेकिन विनम्र और दोस्ताना लहजे में। वहीं रहमतुन निसा के लिए उन्होंने 'तू' का प्रयोग किया, जो छोटे बच्चों के साथ कभी-कभी किया जाता है।

उन्होंने रहमत-उन निसा को फिर से उठाया, अपनी गोद में बिठाया और कहा, 'ठीक है, अगर तुम कुछ भी न कहो, तो भी मैं तुम्हें इनाम दूंगा, लेकिन इस बार इनाम तुम्हारी मां को तुम्हारे नाम पर दिया जाएगा।'

उन्होंने चंपा को हल्के से इशारा किया, जो लड़खड़ाते कदमों से आगे आई, सलाम करने की कोशिश कर रही थी और रोने से खुद को रोक रही थी। खुद को काबू में रखने की कोशिश में उसका चेहरा लाल हो गया था। वह धीरे-धीरे पास आई, फिर से दो बार सलाम किया, नवाब की गोद से बच्ची को लेने के लिए आगे झुकी और बोली, 'इस नन्ही बच्ची को उनके चरणों में कुर्बान कर दीजिए। कृपया मुझे इसे दे दीजिए। आप थक गए होंगे, इतनी देर तक इसे पकड़े रहे।' वह फिर से मुस्कुराने की कोशिश कर रही थी, मानो यह कोई सामान्य घरेलू स्थिति हो, लेकिन अपना सारा संयम खो बैठी, उसने अपना चेहरा दुपट्टे में छिपा लिया और जोर-जोर से रोने लगी।

शम्सुद्दीन अहमद ने बच्ची को नहीं छोड़ा, बल्कि बनावटी सख्ती से चंपा से बोले, 'बस करो! बहुत हो गया। अब और रोना-धोना नहीं। यकीन मानिए, मैं मरने वाला नहीं हूँ!'

फिर उन्होंने लाला प्रग नारायण को दोबारा अंदर आने और चंपा बी का धन-कोष उन्हें सौंपने का आदेश दिया। लाला ने मुख्य द्वार पर लगे पर्दे को हटाया और वहाँ इंतज़ार कर रहे राजदंडवाहक को इशारा किया। राजदंडवाहक मोटे लाल कपड़े से बने धन-कोष एक बड़े कैनवास के थैले में लेकर अंदर आया और सलाम करने के बाद एक तरफ खड़ा हो गया। लाला ने थैलों को दो ढेरों

में, एक बार में पाँच-पाँच करके गिना और चंपा को उन्हें स्वीकार करने का इशारा किया। चंपा ने अपना ऊपरी शॉल फैलाया, मानो किसी तरह बोझ उठाने की कोशिश कर रही हो, लेकिन नवाब ने कहा, 'नहीं, ऐसे नहीं। एक दासी को बुलाया जाए। वह थैलों को चंपा बी के कमरे में ले जाएगी।'

चंपा कुछ कहना चाहती थी, लेकिन शम्सुद्दीन अहमद ने चुप रहने का इशारा किया और फिर सभी को संबोधित करते हुए कहा, 'मैं आप सबको अल्लाह की हिफ़ाज़त में सौंपता हूँ। कृपया मेरे लिए दुआ करते रहिए। याद रखिए, मैं कोई साँप या बिच्छू नहीं हूँ जो अपना जीवन बिलों या अंधेरी जगहों में छिपकर बिताए और मौके का फ़ायदा उठाकर अचानक डंक मारे। हम पैगंबर के अनुयायी हैं जो अपनी जान को खतरे में भी अडिग रहे... अगर मैं नास्तिक फिरंगियों के डर से छिप जाऊँ, तो अपने मालिक को कैसा चेहरा दिखाऊँगा? और आप देखेंगे, कोई भी मुझे नुकसान नहीं पहुँचा पाएगा। आख़िरकार, मैं फ़िरोज़पुर झिरका का शासक हूँ।'

फिर उन्होंने एक-एक करके बच्चों को गले लगाया, उन्हें चूमा और फिर हर महिला को अलग-अलग सलाम किया। अफजल-उन निसा और अमीर बहू ने जल्दी से उनके दाहिने हाथ पर सुरक्षा के ताबीज़ बाँध दिए। इसके बाद अफजल-उन निसा ने नवाब के सिर के चारों ओर पानी का एक प्याला रखकर घेरा बनाया, थोड़ा पानी पिया और सिसकते हुए हिंदी में बोलीं, 'मुझे आपका चेहरा वैसे ही देखने दीजिए जैसे आपने आज मुझे अपनी पीठ दिखाई है। मैं आपको आठवें इमाम, हम सबके रक्षक, की सुरक्षा में सौंपती हूँ।' वह रुकीं, अपने चेहरे पर मुस्कान लाने की कोशिश की और फिर फारसी में बोलीं, 'हजारों जिंदगियां मेरी तरह आपके चरणों में कुर्बान हों; मैं ईश्वर से प्रार्थना करती हूँ कि आपका भाग्य आपके हर कदम के साथ और भी बुलंद होता जाए। आमीन, हे समस्त लोकों के स्वामी, समस्त नबियों के राजकुमार की महिमा के लिए।'

वहाँ मौजूद सभी लोगों ने ज़ोर से 'आमीन!' कहा। फिर हर कोई आगे आया, अपनी-अपनी प्रार्थनाएँ और आशीर्वाद पढ़े और नवाब के चेहरे और सिर पर फूँक मारी। जैसे ही शम्सुद्दीन खान जाने के लिए मुड़े, अफ़ज़ल-उन निसा बेहोश होकर लकड़ी के चबूतरे पर गिर पड़े। अमीर बहू ज़ोर-ज़ोर से सिसकते हुए ईश्वर से प्रार्थना करने लगीं। फिर बच्चों की आवाज़ें बाकी सबसे ऊँची उठ गईं, वे रोने-धोने लगे। अंत में, चंपा ने भी हिम्मत जुटाकर ज़ोर-ज़ोर से रोना-धोना शुरू कर दिया।

मुहर्रम का छठा दिन था, जो इमाम हुसैन (अली के पुत्र) की शहादत के शोक का महीना है। उनकी शहादत हिजरी के 61वें वर्ष (जो अंग्रेजी वर्ष के 10 अक्टूबर 680 के बराबर है) को कर्बला में हुई थी। छठा दिन विशेष शोक का दिन था, क्योंकि हुसैन के युवा पुत्र कासिम का विवाह हुआ था और अगले ही दिन उनकी शहादत हो गई थी। शहर की सड़कों, गलियों और घरों से रोने की आवाजें, उपदेशकों और धार्मिक नेताओं के प्रवचन और शोकगीतों के पाठ की आवाजें उठ रही थीं और शाम के आकाश में ऐसे घुलने लगीं जैसे रात के घने, अंधकारमय जंगल में खोए हुए यात्रियों की चीखें।

हाय! हाय! जिस प्यासे गले को पैगंबर चूमना पसंद करते थे, उस पर क्रूर शिमर ने अपना खंजर चला दिया। हे इमाम! हे इमाम! हाय, मेरे मित्र, हाय! आपकी आँखों के सामने, कूफ़ा की निर्दयी

सेना ने आपके दो पुत्रों, अली अकबर और अली असगर को मार डाला! हे इमाम! हे इमाम! हाय, मेरे मित्र, हाय! शोक की आग ने आकाश को जला दिया, तारे और नन्हे तारे अंगारों की तरह चमक रहे हैं। हे इमाम! हे इमाम! हाय, मेरे मित्र, हाय!

जब दिन निकला, तो कासिम के विवाह पूर्व और विवाह समारोहों का मातम और उनकी विधवा के लिए गाए जा रहे विलाप और शोकगीत, उगते सूरज की तपती गर्मी को चीरते हुए आगे बढ़ रहे थे। पश्चिम से बहने वाली गर्म हवा की सरसराहट सिसकियों में बदल गई। परदे में रहने वाली वे महिलाएं, जिनके घर दीवारों में बनी खिड़कियों से जुड़े हुए थे, शोकगीत गाते हुए एक बुजुर्ग महिला के घर पर इकट्ठा हुईं, जो शहीद इमाम की वंशज मानी जाती थीं। जैसे-जैसे सूरज ऊपर आया, उस महिला के घर का आंगन और ऊपर का आकाश, शोकगीत के औपचारिक पाठ या गायन से दबी और रुंधी हुई आवाजों से गूंज उठा।

लौट आओ, ओह लौट आओ, इस कत्लगाह से! मेरे स्वामी, मेरे साथी, मेरी इस युवावस्था की विधवापन में मेरा सहारा बनो; मुझे अपने माता-पिता के घर की कोई आशा नहीं है; मुझे अपने ससुराल वालों के सामने कोई शर्म नहीं है, मैं रोते हुए कहती हूँ: मुझे बताओ—मैं कहाँ जाऊँ, मेरा विश्राम स्थान कहाँ है?

जैसे ही शहर में शाम ढलने लगी, शहर के इमाम बराह में और अधिक विलाप और शोकगीतों का रस्मन शुरू हो गया:

उस समय दुल्हन, ओह! ओह! दुल्हन रोती है और स्त्रियों से कहती है: हाय! वह अकेले ही क्रूर लोगों का सामना करने जा रहा है, हाय! हम इस दुनिया में फिर कभी नहीं मिलेंगे। कासिम चला जाता है, दिन को शाम की तरह अंधकारमय कर देता है। हाय, मेरे दोस्त, हाय! सारा संसार तुम्हारे लिए दर्द और शोक में रो रहा है, पक्षी, जानवर, जिन्न, सब। कवि ने कहा: कोई भी विलाप से अछूता नहीं है, हाय! ओह, हाय! हाय! कासिम, हमेशा के लिए कासिम! हाय, मेरे दोस्त, हाय!

सभा समाप्त होने के बाद, सभी लड़के, युवक और कुछ वृद्ध पुरुष भी जुलूस बनाकर नौहे पढ़ते हुए घुमावदार रास्तों से शहर के ठीक बाहर स्थित कर्बला गए। वे दूसरे रास्ते से शहर लौटे और जामी मस्जिद के सामने फिर से एकत्रित हुए। काफी देर तक शोकगीत गाते और विलाप करते हुए वे धीरे-धीरे विदा हुए।

कासिम का विवाह सम्राट ने उस दिन संपन्न कराया जब उनके हाथों में कोई शक्ति शेष नहीं थी। जैसे ही रात हुई, फिरोजपुर झिरका के बाजार सुनसान हो गए। ऐसा लग रहा था मानो पूरा शहर किसी वीरान जगह पर निर्वासित हो गया हो।

रविवार, 6 मई 1835, जो पैगंबर मोहम्मद की हिजरी 1251 के मुहर्रम की सात तारीख के बराबर है: नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान सुबह 11 बजे दिल्ली के लिए रवाना हुए। उनके गुजरने के दौरान शहर और रास्ते में पड़ने वाले गांवों से मातम की गूंज सुनाई देती रही। उनके काफिले में दस सशस्त्र घुड़सवार, छह भालाधारी और बारह पालकी उठाने वाले थे, जो दो-दो घंटे की बारी में पालकी उठाते थे। जब भी वे किसी कस्बे या बड़े गांव से गुजरते, जमींदार और संभ्रांत परिवार के लोग तथा आम किसान उचित स्थानों पर सड़क पर जमा हो जाते और उनका स्वागत करते हुए उन्हें पान, ठंडे पेय और फूलों की मालाएं भेंट करते। फिर उन्हें जनता की दुआओं और शुभकामनाओं के साथ विदा किया गया। वास्तव में, यह किसी संदिग्ध व्यक्ति की मुकदमे की सुनवाई के लिए यात्रा से कहीं अधिक एक राजकीय जुलूस जैसा लग रहा था।
उन्होंने तेज़ गति से यात्रा की, लेकिन जल्दबाजी नहीं की, रास्ते में उन्होंने आराम या मनोरंजन के लिए समय नहीं निकाला। 8 मई 1835 की दोपहर को वे दिल्ली शहर के बाहरी इलाके में स्थित पालम गाँव में थे। उन्होंने पालम के पुराने और सुनसान, लेकिन उपयोगी किले में डेरा डाला, जहाँ उनके स्वागत और विश्राम की व्यवस्था की गई थी। उन्होंने तुरंत दो घुड़सवारों को दिल्ली में थॉमस मेटकाफ के पास भेजा और अपने आगमन की सूचना दी। सूर्यास्त के समय घुड़सवारों को मेटकाफ के समक्ष पेश किया गया। उन्हें दरियागंज की हवेली में आगे के आदेशों की प्रतीक्षा करने का निर्देश दिया गया।
कंपनी को नवाब की प्रगति की नियमित खबरें मिल रही थीं। फ्रेजर और लॉरेंस को हर जगह जनता द्वारा नवाब का गर्मजोशी से स्वागत और विदाई देखकर बहुत गुस्सा आया। वे जानते थे कि इस मामले में वे कुछ नहीं कर सकते। लेकिन उन्हें कुछ करने की ज़रूरत भी नहीं थी, क्योंकि उनका लक्ष्य स्वयं ही उनके दायरे में आ रहा था। शम्सुद्दीन अहमद खान की किसी भी आशंका को दूर करने के लिए, मेटकाफ ने मिर्ज़ा मुगल बेग के खिलाफ सभी आरोप खारिज कर दिए और उन्हें जेल से रिहा करने का आदेश दिया। पलाम में शम्सुद्दीन अहमद खान के आगमन की सूचना मिलते ही, मेटकाफ ने आगे की रणनीति पर विचार-विमर्श के लिए तुरंत फ्रेजर और लॉरेंस को बुलाया। लॉरेंस ने सबसे पहले यह सुझाव दिया कि कैप्टन जेम्स स्किनर, जिन्हें स्थानीय लोग सिकंदर साहब के नाम से जानते थे, को अनौपचारिक परामर्श समिति में शामिल किया जाए। स्किनर 'शुद्ध नस्ल' का नहीं था, लेकिन उसकी सबसे बड़ी खूबी यह थी कि एक 'आधे अंग्रेज' होने के नाते, वह स्थानीय लोगों, विशेषकर मुसलमानों की सोच-विचार शैली से भलीभांति परिचित था। उसकी एक और खूबी यह थी कि नवाब अहमद बख्श खान का घनिष्ठ मित्र होने के कारण, वह शम्सुद्दीन अहमद खान के स्वभाव से भलीभांति परिचित था और युवा नवाब का विश्वासपात्र था।
माननीय कंपनी की ओर से कुछ असाधारण सफलताओं के कारण—उनकी अनियमित रेजिमेंट को अंग्रेज़ 'स्किनर की घुड़सवार सेना' और भारतीय 'सिकंदर साहब के सवार' कहते थे—स्किनर

को कंपनी के अधिकारियों में बहुत सम्मान प्राप्त था, हालाँकि उनके साथ यूरोपियों के बराबर व्यवहार नहीं किया जाता था। स्वयं को लेफ्टिनेंट कर्नल कहने वाले स्किनर को कंपनी की सैन्य व्यवस्था में कार्यवाहक कप्तान का पद दिया गया, लेकिन यह पद कंपनी की ओर से काफी हिचकिचाहट और स्किनर द्वारा स्वयं किए गए कई अनुरोधों के बाद ही मिला। इतना भी कंपनी और भारतीयों दोनों की नज़र में एक असाधारण कृपा का प्रतीक था। उस समय, 'मिश्रित रक्त' वाले किसी भी यूरोपीय, और यहाँ तक कि किसी भारतीय को भी, कंपनी की सशस्त्र सेना में अधिकारी का पद प्राप्त करने की अनुमति नहीं थी। मरने वाले भारतीय थे, और कमान संभालने वाले अंग्रेज़ थे।

फिर भी, यह एक असामान्य कदम था: कई पहलुओं से भरे एक जटिल मामले की गुप्त चर्चाओं में एक 'मिश्रित नस्ल' के व्यक्ति को शामिल करना शायद कंपनी द्वारा स्किनर को दिया जा सकने वाला सबसे बड़ा सम्मान था। और इस कृपा से अच्छे परिणाम प्राप्त हुए।

स्किनर की विशाल हवेली रेजीडेंसी से ज़्यादा दूर नहीं थी; इसलिए बुलावा आने के आधे घंटे के भीतर ही वे वहाँ पहुँच गए। लंबे कद, मज़बूत लेकिन दुबले-पतले शरीर और बेहद फुर्तीले स्किनर अपनी साठ साल की उम्र से कहीं ज़्यादा जवान दिखते थे। उनका रंग गहरा, बल्कि काला था; उनके काले बाल, जिनमें सफ़ेद बाल भी थे, घुंघरालेपन को जितना हो सके छिपाने के लिए ब्रोसे स्टाइल में काटे गए थे। उनकी आँखें हल्के भूरे रंग की और चमकीली थीं, जो एक बुद्धिमान और शायद चतुर व तेज़ दिमाग़ का संकेत देती थीं। उनके रंग और कुछ हद तक उनके बालों को छोड़कर, उनके बारे में सब कुछ अंग्रेज़ों जैसा था: जीवनशैली, बोली, धर्म के प्रति दृष्टिकोण, पहनावा और व्यवहार, यहाँ के लोगों के प्रति उनका रवैया। वास्तव में, वे शायद उस समय के ज़्यादातर सेना में तैनात अंग्रेज़ों से भी ज़्यादा अंग्रेज़ थे। वहाँ मौजूद लोगों ने उनका गर्मजोशी से स्वागत किया और उन्हें समिति में मेटकाफ के बगल में एक कुर्सी दी गई।

उनके आगमन के समय विचाराधीन मुद्दा यह था कि शम्सुद्दीन अहमद खान को तुरंत शहर के अंग्रेजी हिस्से में जेल में डाल दिया जाए या शाहजहानाबाद की किसी हवेली में नजरबंद किया जाए। मेटकाफ को आशंका थी कि नवाब को गिरफ्तार करने पर दिल्ली में नागरिक अशांति, यहाँ तक कि दंगे भी हो सकते हैं, इसलिए उन्होंने सोचा कि अस्थायी उपाय के तौर पर उन्हें उनकी हवेली में नजरबंद रखना बेहतर होगा। आरोपी को जल्द से जल्द सुनवाई के बाद फांसी दी जानी थी। उन्होंने सुझाव दिया कि फांसी के लिए दिल्ली से बाहर कोई स्थान चुना जाए। उनका मानना था कि मुगल काल का एक सराय, जो अब उपयोग में नहीं है और पानीपत से कुछ मील दूर (दिल्ली से लगभग पचास मील दूर) स्थित है, इस उद्देश्य के लिए सबसे उपयुक्त स्थान है। सराय के अंदर फांसी का तख्ता तुरंत स्थापित किया जाना चाहिए और फांसी पर लटकाए गए दोनों अपराधियों का अंतिम संस्कार भी वहीं किया जाना चाहिए। चूंकि जॉन लॉरेंस पानीपत में मजिस्ट्रेट थे और उस क्षेत्र को अच्छी तरह जानते थे, इसलिए उन्होंने इस प्रस्ताव का समर्थन किया।

साइमन फ्रेजर के हृदय में प्रतिशोध की आग धधक रही थी; लेकिन उन्होंने अपने चचेरे भाई की हत्या को राजनीतिक और प्रशासनिक दृष्टि से सभी मूल निवासियों, यहाँ तक कि राजा को भी

एक कड़ा संदेश देने का अवसर समझा। यह संदेश एक चेतावनी थी: किसी अंग्रेज अधिकारी की जान लेना कोई मामूली बात नहीं थी। उनका दृढ़ विश्वास था कि भारत में अंग्रेजी सत्ता का अस्तित्व और निरंतरता अत्याचार और भय पर आधारित थी। यदि हमने भय के शासन में जरा सी भी नरमी बरती और प्रजाजनों के प्रति थोड़ी सी भी उदारता दिखाई, तो वे हम पर आक्रमण करेंगे, हमें नोंच डालेंगे और हमें निगल जाएँगे।
उन्होंने अपनी बात समझाने के लिए भालू और मधुमक्खियों का दृष्टांत दिया। हिमालयी भालू छत्ते को खरोंचता और नोचता है, छत्ते को तोड़ देता है, मोम फेंक देता है और शहद चट कर जाता है। मधुमक्खियाँ क्रोधित और उन्मादी होकर भालू पर टूट पड़ती हैं, उसके चारों ओर नाचती-नाचती हैं, लेकिन वे भालू का कुछ नहीं बिगाड़ सकतीं। उसके बाल मधुमक्खियों के सबसे बड़े झुंड से कहीं अधिक हैं। हमारे मामले में, हमारी सख्ती में ज़रा सी भी ढील हुई तो स्थानीय लोग हमारी कम संख्या के खिलाफ विद्रोह कर देंगे; हमारे मुट्ठी भर छावनियाँ, कारखाने, शस्त्रागार, गोदाम और अदालतें, हमारे पुलिसकर्मी और मुखबिर, सब कुछ पल भर में कुचल दिए जाएँगे, अनगिनत स्थानीय लोगों के नंगे पैरों तले धूल में मिल जाएँगे, जिनकी संख्या भालू के शरीर के बालों से कहीं अधिक है।

यह सोचकर वह कांप उठा: हमारी औरतें उस बर्बर अश्वेत के लिए वेश्यावृत्ति करेंगी, या मोटे, बदसूरत और व्यभिचारी जमींदारों और धनी व्यापारियों की रखैल बनकर रहेंगी। हिंदुस्तान की धरती पर, और यहाँ तक कि दक्कन में भी, ऐसे कई क्षेत्र थे जहाँ सैकड़ों वर्ग मील के क्षेत्र में केवल एक ही अंग्रेज अधिकारी होता था: केवल एक ही अंग्रेज घर, और उस घर के मुखिया का शासन अपनी व्यावहारिक बुद्धिमत्ता, विविध प्रजा पर शासन करने के अपने कुटिल तरीकों, अपनी बढ़ती हुई संपत्ति और अपने शासन में व्याप्त भय के बल पर प्रतिष्ठा और शक्ति में आसमान छूता था।
साइमन फ्रेजर ने देखा कि जॉन लॉरेंस अपराध की जांच और उसके दोषियों के खिलाफ मामला तैयार करने में पूरी तरह से तत्पर और उत्साही थे। इसलिए उन्होंने सोचा कि लॉरेंस माननीय कंपनी बहादुर की प्रतिष्ठा और गौरव को बनाए रखने और यहां तक कि बढ़ाने के लिए भी उतने ही उत्सुक और उत्साही होंगे। जब लॉरेंस ने सलाह दी कि अपराधियों को दिल्ली से दूर किसी एकांत स्थान पर फांसी दी जाए और दफनाया जाए, तो उन्हें निराशा हुई। फिर भी उन्होंने यह भी माना कि यह बैठक अपनी असंतोष व्यक्त करने का अवसर नहीं था; क्योंकि उनके साथी और उससे भी बदतर, अर्ध-अंग्रेज़ कैप्टन स्किनर, उनके विरोध से समझ जाएंगे कि वह, फ्रेजर, अपने चचेरे भाई के खून का बदला प्रशासन और राज्य के हितों से ऊपर रख रहे हैं। इसलिए उन्होंने अत्यंत तर्कसंगत लहजे में, सोच-समझकर बोलते हुए कहा: 'मुझे लगता है कि आरोपियों को दिल्ली में ही गिरफ्तार किया जाना चाहिए, और दोनों दोषियों को दिल्ली के अलावा कहीं और फांसी नहीं दी जानी चाहिए।' अगर हम ज़रा सी भी नरमी दिखाएँगे, तो देसी बदमाश—और लगभग सभी स्थानीय लोग उनसे बेहतर नहीं हैं—हमारी उदारता को कमज़ोरी की निशानी समझेंगे। इन लोगों के साथ मेरा अनुभव बताता है कि वे अपने वरिष्ठों के खिलाफ़ अफवाहें

फैलाने में बेहद माहिर होते हैं। जब उन्हें लगता है कि यह उनके लिए फ़ायदेमंद है, तो वे शेरों की तरह दहाड़ते हैं; उन्हें लगाम में रखना मुश्किल है, वरना वे कीचड़ में लोटते हुए भीगी बिल्लियों या कुत्तों की तरह हो जाते हैं।
मेटकाफ ने पूछा, 'तो फिर आप क्या सलाह देते हैं, मिस्टर फ्रेजर?'
मुझे मिली जानकारी के अनुसार, स्थानीय लोग शम्सुद्दीन अहमद और करीम खान के प्रति सहानुभूति रखते हैं। यह बात फैली हुई है कि...' उन्होंने गला साफ किया, '...दो दुस्साहसियों ने फिरंगी के चेहरे पर मशाल तान दी। इन परिस्थितियों में, हमारे लिए यह और भी जरूरी हो जाता है कि हम उनके खिलाफ कड़ी से कड़ी कार्रवाई करें, और वह भी खुलेआम।'
तो आपको लगता है कि इसके कोई परिणाम नहीं होंगे? क्या बरेली की घटनाएँ एक मिसाल नहीं बनतीं?
‘हमें बरेली की घटनाओं को भूल जाना चाहिए,’ फ्रेजर ने शांत भाव से कहा। ‘दिल्ली के विलासी और अय्याश मिर्जाओं का क्या?’ वह व्यंग्य से हँसा। ‘यदि हम उचित समय और उचित स्थान पर अपनी सच्ची शक्ति और दृढ़ निश्चय का प्रदर्शन करें, तो कोई भी अब या यहाँ, या किसी अन्य अवसर पर और किसी अन्य स्थान पर प्रतिशोध का सपना भी नहीं देखेगा। दिल्ली के रईस अब सुंदर लड़कों और चालाक वेश्याओं के लिए मरते हैं, सम्मान के लिए नहीं।’ फ्रेजर फिर हँसा। इस बार उसकी हँसी में तिरस्कार का कड़वा नशा था।
‘लेकिन राजा को मनाना तो पड़ेगा ही, है ना?’ मेटकाफ ने कहा। ‘साथ ही, मुझे लगता है कि कुछ प्रमुख मुल्ला भी गड़बड़ कर सकते हैं।’
‘मुल्लाओं की चिंता मत करो। सूफी शाह अब्दुल अजीज के बाद कोई भी ऐसा मुल्ला नहीं है जो उनके खिलाफ आवाज उठाए। मुल्ला वैसे भी बादशाह की अनुमति के बिना कुछ नहीं करेंगे, और बादशाह हमारी एक भी सलाह बर्दाश्त नहीं करेगा।’
स्किनर, जो अब तक ध्यान से सुन रहे थे, अब बोले, 'मैं श्री फ्रेजर से सहमत हूँ। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि हम शम्सुद्दीन को किसी राजनीतिक आधार पर गिरफ्तार नहीं कर रहे हैं। हम उन्हें जानबूझकर हत्या के आरोप में गिरफ्तार कर रहे हैं। देशी नागरिक हमारी इस नीति और व्यवहार की प्रशंसा करते हैं और आश्चर्यचकित भी हैं कि हम कानून के समर्थन के बिना कुछ नहीं करते।'
लॉरेंस ने पूछा, 'कैप्टन स्किनर, तो क्या आप सलाह देते हैं कि शम्सुद्दीन को दिल्ली में प्रवेश करते ही गिरफ्तार कर जेल भेज दिया जाए?'
'जी नहीं, महोदय।' स्किनर ने एक पल सोचा और फिर आगे कहा, 'हमें कुछ व्यावहारिक समझदारी दिखानी होगी। मैं इन लोगों को अच्छी तरह जानता हूँ। ये लोग दिखावे को बनाए रखने, स्थापित रीति-रिवाजों का पालन करने और अपने पूर्वजों की परंपराओं को बरकरार रखने के मामले में बहुत सतर्क रहते हैं।'
‘तो?’ मेटकाफ ने थोड़ी अधीरता से पूछा।
मैं आपके विचारार्थ एक प्रस्ताव रखना चाहता हूँ।
लॉरेंस ने बीच में टोकने की कोशिश की, लेकिन मेटकाफ ने आँख हिलाकर उसे रुकने का इशारा किया। जेम्स स्किनर ने मेटकाफ की आँखों में आँखें डालकर सधे हुए और सटीक ढंग से कहा:

'शम्सुद्दीन अहमद को शहर में प्रवेश करने से पहले ही गिरफ्तार कर लिया जाना चाहिए। इसका तरीका यह है कि मैं उससे पालम में मिलूँ और बिना उसे शक हुए उसके हथियार डाल दूँ। इसके तुरंत बाद, मजिस्ट्रेट फ्रेजर के नेतृत्व में कंपनी के सशस्त्र बलों का एक दल मौके पर पहुँचे और उसे गिरफ्तार कर ले। उसे हथकड़ी या बेड़ियाँ नहीं पहनाई जानी चाहिए। उसे हमारी सुरक्षा में, बंद पालकी में ले जाया जाना चाहिए।'

उन्होंने समिति के बाकी सदस्यों की प्रतिक्रिया जानने के लिए कुछ देर रुककर देखा। सभी ध्यान से सुन रहे थे। स्किनर ने आगे कहा, 'शम्सुद्दीन अहमद मुझ पर भरोसा करते हैं। वे मुझसे मिलने और मेरे अनुरोध पर अपने हथियार डालने के लिए तुरंत तैयार हो जाएंगे। स्थानीय लोगों को शिकायत करने का कोई कारण नहीं होगा, क्योंकि गिरफ्तारी दिल्ली के बाहर हुई होगी; स्वेच्छा से हथियार डालने से शम्सुद्दीन अहमद को स्वेच्छा से आत्मसमर्पण करते हुए देखा जाएगा। उन्हें उनकी बंद पालकी में शहर जाने की अनुमति दी जाएगी। इस प्रकार किसी भी तरह से उनका अपमान नहीं होगा।'

मेटकाफ और बाकी सभी लोग स्पष्ट रूप से प्रभावित थे। मेटकाफ ने मुट्ठी से मेज पर प्रहार किया और चिल्लाया, 'कैप्टन स्किनर, ये तो वाकई बेहतरीन सुझाव हैं। मानो मनचाही चीज़ पा भी लें और उसे बचा भी लें!'

हालांकि मेटकाफ ने स्किनर के सुझाव को पूरी तरह से स्वीकार कर लिया था, लेकिन बाद में साहबों के बीच कुछ आवाजें उठीं कि छल से शम्सुद्दीन अहमद को गिरफ्तार करना गौरवशाली फिरंगी साहबों के लिए उचित नहीं था।

स्किनर ने वहां मौजूद लोगों पर विजय भरी नजर डाली। कुछ ही मिनटों में कार्रवाई की पूरी योजना तैयार हो गई। थोड़ी देर में स्किनर को अपने घोड़े पर सवार होकर निकलते देखा गया, ऐसा लग रहा था जैसे वह अकेले ही निकले हों। फ्रेजर और उनके सैनिक कुछ सौ कदम की दूरी पर उनके पीछे-पीछे चल रहे थे। पालम किले पर पहुंचकर फ्रेजर और उनके सैनिक प्राचीर के विशाल द्वार से अंदर दाखिल हुए, लेकिन रिहायशी इलाके की ओर जाने वाले मुख्य द्वार के बाहर ही रुके रहे। स्किनर अकेले अंदर गए और उन्होंने एक पहरेदार के जरिए अपना नाम अंदर भिजवा दिया।

जैसा कि उम्मीद थी, शम्सुद्दीन अहमद तुरंत स्वागत के लिए बाहर आए और स्किनर को देखते ही उन्होंने प्रिय मित्रों के स्वागत में प्रयुक्त एक प्रसिद्ध फ़ारसी वाक्य कहा: ‘अरे, आपके आने से मेरा दिल खुश हो गया!’ ‘भाई वल्लाह, सिकंदर साहब, कितनी अप्रत्याशित खुशी! आप कैसे हैं?’ यह कहते हुए उन्होंने स्किनर का हाथ अपने हाथ में लिया और उन्हें किले के अंदर ले गए जहाँ शम्सुद्दीन एक बड़े कमरे में विराजमान थे, जिसे शायद मूल रूप से सार्वजनिक सभा कक्ष के रूप में बनाया गया था। शम्सुद्दीन अहमद को लगा कि सिकंदर साहब निवास से कोई संदेश लाए होंगे और उन्हें कुछ एकांत चाहिए होगा। उन्हें कालीन बिछे फर्श के शीर्ष पर बैठाते हुए उन्होंने कहा, ‘कृपया यहाँ बैठिए और इस ठंडे पेय पर एक नज़र डालिए। हुक्का अभी आपके सामने पेश किया जाएगा।’

उसने यह सुनिश्चित करने के लिए चारों ओर देखा कि वहां कोई और मौजूद तो नहीं है और जेम्स

स्किनर को उम्मीद भरी निगाहों से देखा।
'दिलावर-उल मुल्क, मैं तुमसे झूठ नहीं बोलूंगा और न ही तुम्हें गुमराह करूंगा,' स्किनर ने झुकी हुई निगाहों से कहा। 'लेकिन तुम बहुत बड़ी मुसीबत में हो।'
'सर, मैं समझता हूँ। लेकिन मेरे बारे में उन महानुभावों को कुछ गलतफहमी है। उनके पास मेरे खिलाफ कोई सबूत नहीं है, मैं कसम खाता हूँ। लेकिन अगर मामला "मुझे इसलिए मारा गया क्योंकि मैं निर्दोष था", जैसा कि कवि कहते हैं, तो मुझे नहीं पता कि मैं अपने बचाव में क्या दलील दूँ।'

'दिलावर-उल मुल्क, आप अभी बहुत युवा और अनुभवहीन हैं। राजकीय मामलों में कई तरह की जटिलताएं और बारीकियां होती हैं... कोई नहीं कह सकता कि किसे और कब आरोपी बनाया जा सकता है।'
शम्सुद्दीन अहमद का चेहरा पीला पड़ गया। 'महोदय, मैं आपकी बात समझ नहीं पाया।'
मेरी सलाह है कि आप श्री मेटकाफ की सुरक्षा में आत्मसमर्पण कर दें। अपनी तलवार और हथियार मुझे सौंप दें। मैं आपके साथ कंधे से कंधा मिलाकर चलूंगा।
स्किनर के चेहरे पर पूर्ण गंभीरता और प्रतिबद्धता के भाव थे, मानो उन्हें पूरा विश्वास हो कि शम्सुद्दीन अहमद का भविष्य उनके हाथों में पूरी तरह सुरक्षित है। उन्होंने सोच-समझकर 'श्री मेटकाफ' कहा, ताकि थॉमस और चार्ल्स मेटकाफ के बीच अस्पष्टता बनी रहे, क्योंकि चार्ल्स (थॉमस के बड़े भाई) उस समय कार्यवाहक गवर्नर जनरल थे। यह उनके लिए एक छोटा सा बचाव था, अगर परिस्थितियाँ उनकी योजना के अनुरूप न हों, या शम्सुद्दीन अहमद उन पर कपट का आरोप लगाएँ।
शम्सुद्दीन अहमद ने अपने बचपन को याद किया जब विलियम फ्रेजर और जेम्स स्किनर दोनों उनके पिता के घर अक्सर आते-जाते थे। विशेष रूप से, जेम्स स्किनर को स्वर्गीय नवाब अहमद बख्श खान का इतना स्नेह था कि जब उन्होंने बल्लीमारन में अपनी नई हवेली बनवाई, तो उन्होंने मुख्य द्वार के शीर्ष पर संगमरमर की पट्टिका पर अपना नाम नहीं बल्कि स्किनर का नाम खुदवाया। मानक फ़ारसी सुलेख में लिखी उस पट्टिका पर स्पष्ट रूप से लिखा था:
हवेली जेम्स स्किनर साहिब
वह पट्टिका अभी भी वहीं मौजूद थी, जिसे सभी लोग देख सकते थे।
शम्सुद्दीन अहमद ने मन ही मन कहा: मैं सचमुच अंग्रेजों के घेरे में हूँ। अपमानजनक गिरफ्तारी और अंग्रेजों की कैद में डाले जाने से बेहतर है कि मैं अभी अपने हथियार डाल दूं और सिकंदर साहब के साथ चुपचाप चला जाऊं। देखते हैं आगे क्या होता है। जैसा कि फारसी की आयत कहती है: जो होगा देखा जाएगा; मैंने अपनी नाव पानी में उतार दी है। वर्तमान स्थिति को स्वीकार करना मेरे लिए बेहतर होगा। कम से कम मुझ पर प्रतिरोध या विद्रोह का आरोप तो नहीं लगाया जा सकेगा।
शम्सुद्दीन अहमद ने अपनी सोने की मूठ वाली इस्फ़हानी तलवार, जिस पर सुनहरे अक्षरों में उसका नाम खुदा हुआ था, रत्नजड़ित मूठ वाला बिदारी खंजर और चांदी चढ़ी फ्रांसीसी पिस्तौल

निकाली। स्किनर को ये सब सौंपते हुए उसने कहा, 'इन्हें ले लो, ये तुम्हारे लिए धरोहर हैं। मैं तुम्हारा सेवक हूँ।'

स्किनर तुरंत उठ खड़ा हुआ। 'मैं इन्हें किसी भरोसेमंद रईस के पास सुरक्षित रखवा दूँगा। इस बीच, आप दिल्ली जाने की व्यवस्था कर लीजिए।' इतना कहकर वह कमरे से बाहर निकल गया। फ्रेजर और उसके आदमियों ने स्किनर को हथियारों से लदे हाथों के साथ बाहर आते देखा और नवाब के गार्डों के विरोध की परवाह किए बिना तुरंत कमरे में घुस गए। अचानक हुए इस घटनाक्रम से हैरान शम्सुद्दीन अहमद कुछ समझने की कोशिश कर ही रहा था कि फ्रेजर पिस्तौल हाथ में लिए आगे बढ़ा और ठंडे स्वर में बोला, 'नवाब शम्सुद्दीन अहमद, आप श्री विलियम फ्रेजर की हत्या के आरोपी हैं। मैं आपको कंपनी बहादुर के नाम पर हिरासत में लेता हूँ।'

शम्सुद्दीन अहमद को अपने कानों और आँखों पर विश्वास नहीं हो रहा था। 'सिकंदर साहब!' उन्होंने पुकारा, मानो उनसे मदद की गुहार लगा रहे हों, या शायद कहना चाहते हों, 'सिकंदर साहब, आपने मुझे धोखा दिया।' पलक झपकते ही कंपनी के सैनिकों ने उन्हें घेर लिया। निःसंदेह, स्किनर किले से बाहर आते ही एक पल भी नहीं रुके और दिल्ली की ओर तेज़ी से घोड़े दौड़ा दिए; युवा नवाब को जवाब देने का तो सवाल ही नहीं था, भले ही वह पास ही क्यों न होते। शम्सुद्दीन अहमद की स्किनर को पुकार सुनकर उनके सैनिक दौड़ते हुए आए, लेकिन बहुत देर हो चुकी थी। फ्रेजर को हथियारों से लैस कंपनी के साथ अंदर आने देना घातक साबित हुआ था। फिर भी, उन्होंने प्रतिरोध करने और हमला करने का प्रयास किया, लेकिन शम्सुद्दीन अहमद ने उन्हें कुछ न करने का आदेश दिया। फिर उन्होंने अपने सिख घुड़सवार सेनापति से कहा, 'गुरिंदर सिंह, अब यहाँ रुकने की कोई ज़रूरत नहीं है। हम दिल्ली जाएँगे। तुरंत प्रस्थान की व्यवस्था करो।'

गुरिंदर सिंह 'जैसा आपका आदेश' कहते हुए बाहर जाने ही वाले थे कि फ्रेजर ने उन्हें सख्ती से रुकने का आदेश दिया। 'नहीं! मैंने पालकी को यहाँ लाने का आदेश दिया है। आपको यहाँ से हिलना नहीं चाहिए।'

शम्सुद्दीन अहमद ने फीकी मुस्कान के साथ कहा, 'साइमन साहब, आप मुझे अपने दिवंगत भाई की बहुत याद दिलाते हैं, जिन पर अल्लाह की रहमत हो। अल्लाह उन्हें जन्नत नसीब करे, वे हमेशा मेरे प्रति बहुत दयालु थे।'

साइमन फ्रेजर मन ही मन असमंजस में था: क्या यह सच्ची संवेदना थी, या इसमें कोई व्यंग्य या कोई और छुपा हुआ अर्थ था? वह अभी सोच ही रहा था कि क्या कहे, तभी नवाब फ्रेजर के पास आया, उसके कंधे पर हाथ रखा और कुछ हद तक उपहास भरे लहजे में बोला, 'तो अब देरी क्यों, जब पालकी तैयार है?'

उस समय शम्सुद्दीन अहमद खान की आवाज और चेहरा इतना गरिमामय और श्रेष्ठ था, और उनके हाव-भाव इतने आत्मविश्वास से भरे हुए थे कि साइमन फ्रेजर अनजाने में पीछे हट गए। खुद को संभालते हुए उन्होंने एक क्रूर मुस्कान के साथ कहा, 'अब कोई देरी नहीं है। अंत बहुत निकट है, मेरे प्यारे नवाब।'

शम्सुद्दीन अहमद जोर से हँसे और कवि मीर की एक पंक्ति उद्धृत की: 'मैं अपना घर सौ मील दूर से देख सकता हूँ। तो चलिए शुरू करते हैं। यहाँ करने के लिए कुछ नहीं है। मैंने अपने घुटने के दर्पण में अपना अंत पहले ही देख लिया है!'

फ्रेजर और भी ज्यादा उलझन में पड़ गया; उसे मीर की पंक्ति का अर्थ समझ नहीं आ रहा था और वह 'दर्पण' और 'घुटने की हड्डी' के अर्थ को पूरी तरह से समझ नहीं पा रहा था। दरअसल, 'दर्पण' 'घुटने की हड्डी' का रूपक है। गहन चिंतन में, व्यक्ति अपनी ठुड्डी को घुटने की हड्डी पर टिकाकर बैठता है, जो दर्पण की तरह गोल होती है, और इस मुद्रा में बैठना यह दर्शाता है कि व्यक्ति अपने अंतिम लक्ष्य पर विचार कर रहा है।

फ्रेजर ने बड़ी ही ठंडी और घमंडी शैली में जवाब दिया, 'तुम हमेशा मेरे सैनिकों से घिरे रहोगे। अब जाओ। बस बहुत हो गया, जल्दी करो।'

नवाब शम्सुद्दीन अहमद अपनी पालकी में यात्रा कर रहे थे, जिसके दोनों ओर पर्दे लगे थे; किसी ने उन्हें शहर में प्रवेश करते नहीं देखा। मिर्ज़ा मुगल बेग को देर शाम उनके आदमियों ने सूचना दी कि उनके वरिष्ठ दामाद कंपनी की हिरासत में लुडलो किले में हैं। मिर्ज़ा मुगल बेग, जो स्वयं अपनी कैद से पहले ही निराश और हताश महसूस कर रहे थे, अब एक नई अनिश्चितता के घेरे में आ गए। जब स्थायी दीर्घकालिक राहत दूर-दूर तक दूर दिखाई दे रही थी, तो वे कम से कम अस्थायी राहत पाने के लिए क्या कदम उठा सकते थे?

बहुत सोच-विचार के बाद, उन्होंने मिर्ज़ा इस्फ़ंदियार बेग को बुलाया, जो फ़िरोज़पुर झिरका और लोहारू राज्य के लिए कंपनी के कार्यालयों से संबंधित कानूनी और प्रशासनिक मामलों में एक तरह के एजेंट-सलाहकार (पैरोकार) थे। उन्होंने उन्हें शम्सुद्दीन अहमद खान की स्थिति और उनसे मिलने का समय पता करने के लिए निवास स्थान भेजा। इस्फ़ंदियार बेग तुरंत रवाना हो गए, लेकिन कई घंटों बाद यह सूचना लेकर लौटे कि शम्सुद्दीन अहमद किले में पहरे में हैं; उनकी व्यक्तिगत प्रतिष्ठा को कोई ठेस नहीं पहुंची है: उन्हें पूरा सम्मान, आदर और सुख-सुविधाएं दी जा रही हैं। कानूनी तौर पर, वे एक कैदी, एक आरोपी, या यूं कहें कि एक अपराधी थे। उनसे मिलने की संभावना के बारे में, उस समय तक आपराधिक अदालत बहुत पहले ही बंद हो चुकी थी। अगले दिन सुबह 10 से 11 बजे के बीच मजिस्ट्रेट के समक्ष एक औपचारिक आवेदन प्रस्तुत किया जाना चाहिए ताकि संबंधित अधिकारियों द्वारा इस मामले पर विचार किया जा सके। मिर्ज़ा मुगल बेग खान ने इस्फ़ंदियार बेग के पक्ष में एक पावर ऑफ अटॉर्नी पर हस्ताक्षर किए और उन्हें अगले दिन एक बैठक सुनिश्चित करने के लिए हर संभव प्रयास करने का निर्देश दिया, जिसमें यह शर्त रखी गई कि बेग स्वयं नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान के कानूनी सलाहकार के रूप में बैठक में उपस्थित रहें।

अगले दिन मुहर्रम की दसवीं तिथि थी, जो मातम का मुख्य दिन होता है। इस्फ़ंदियार बेग ने पूरा दिन रेजीडेंसी, अंग्रेजी कार्यालय और मजिस्ट्रेट की अदालत के चक्कर लगाते हुए बिताया। उन्होंने शम्सुद्दीन अहमद खान और उनके कानूनी प्रतिनिधियों के बीच बैठक का अनुरोध करते हुए एक आवेदन प्रस्तुत किया; उन्होंने मजिस्ट्रेट के समक्ष नवाब के विरुद्ध दायर आरोप पत्र की एक प्रति भी मांगी। इसके अतिरिक्त, उन्होंने इलाहाबाद स्थित सुद्दर दीवानी अदालत (मुख्य सिविल

न्यायालय) में एक मूल आवेदन प्रस्तुत किया: दिल्ली, उस समय उत्तर पश्चिमी प्रांत (एनडब्ल्यूपी) के दीवानी और प्रशासनिक क्षेत्राधिकार में थी। उन्होंने नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान के विरुद्ध मामले का संक्षिप्त विवरण दिया और कहा कि वे नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान द्वारा नवाब गवर्नर जनरल बहादुर को दी गई याचिकाओं की स्थिति जानने के लिए शीघ्र ही कलकत्ता जा रहे हैं, इसलिए उन्होंने नागरिक अधिकारों के दृष्टिकोण से इस मामले की सुनवाई करना आवश्यक समझा। अतः याचिका दायर की गई कि माननीय मुख्य सिविल न्यायालय नवाब का बयान दर्ज करने के लिए तुरंत दिल्ली में किसी प्रतिनिधि को नियुक्त करे। याचिकाकर्ता का मानना था कि ऐसा बयान मामले से जुड़े कई महत्वपूर्ण बिंदुओं को उजागर करने में अत्यंत सहायक होगा। नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान और मिर्जा मुगल बेग खान के बीच मुहर्रम की 10 तारीख की रात को एक अनौपचारिक बैठक संभव हो सकती थी, लेकिन इलाहाबाद स्थित सदर दीवानी अदालत ने 'मुहर्रम की छुट्टियों' के अजीब कारण से मिर्जा इस्फ़ंदियार बेग की याचिका पर विचार करना उचित नहीं समझा।

दरअसल, शम्सुद्दीन अहमद खान के मामले में इस्फ़ंदियार बेग द्वारा गवर्नर जनरल को प्रस्तुत की गई किसी भी याचिका की जाँच नहीं की गई। जैसा कि ऊपर बताया गया है, मामले से संबंधित सभी कागजात राजनीतिक विभाग में रखे गए थे, और उनमें से किसी पर भी कंपनी बहादुर के किसी वरिष्ठ अधिकारी द्वारा देखे जाने का कोई संकेत नहीं है, नवाब गवर्नर जनरल बहादुर की नज़र पड़ने की तो बात ही दूर है।

मिर्ज़ा इस्फ़ंदियार बेग द्वारा कैदी से औपचारिक रूप से मिलने की अनुमति मांगने वाले आवेदन पर कोई औपचारिक आदेश पारित नहीं किया गया। उन्हें मौखिक रूप से 8 मई 1835 को दोपहर 12 बजे साइमन साहिब बहादुर के दरबार में उपस्थित रहने की सलाह दी गई। दरबार में, इस्फ़ंदियार बेग और मिर्ज़ा मुगल बेग ने नवाब को थका हुआ और नींद से वंचित पाया, हालांकि उन्होंने नवाबों की पारंपरिक पोशाक पहनी हुई थी। उन्होंने अपने ससुर और इस्फ़ंदियार बेग से केवल इतना कहा कि उन्होंने पहले ही इस्फ़ंदियार बेग को सभी स्तरों पर उनका प्रतिनिधित्व करने के लिए अधिकृत कर दिया है। फ़िरोज़पुर किले की महिलाओं के लिए उनका संदेश था कि उन्हें चिंता नहीं करनी चाहिए; उनके खिलाफ कोई मामला नहीं है, और उन्हें जल्द ही रिहा कर दिया जाएगा।

मजिस्ट्रेट की अदालत में अभियोजक के रूप में जॉन लॉरेंस ने प्रभावशाली भाषण दिया और दावा किया कि आरोपी और उसके नौकर के खिलाफ हत्या का अपराध पूरी तरह से सिद्ध हो चुका है। नौकर को पहले ही सत्र न्यायालय में भेज दिया गया था और सत्र न्यायालय के विशेष न्यायाधीश और न्यायाधीश जॉन कोल्विन की अदालत में उसका मुकदमा चल रहा था। इसलिए उन्होंने प्रार्थना की कि वर्तमान आरोपी के खिलाफ मामला भी उसी अदालत में भेजा जाए ताकि उसे निष्पक्ष और पूर्ण सुनवाई मिल सके। शम्सुद्दीन अहमद ने कोई बयान नहीं दिया और न ही उससे जिरह की गई। उससे केवल यह पूछा गया कि क्या वह अपना अपराध स्वीकार करता है या नहीं। शम्सुद्दीन अहमद ने स्पष्ट और निडर स्वर में कहा, 'मैं निर्दोष हूं। मेरे खिलाफ लगाया गया आरोप

झूठा है और मेरे खिलाफ रची गई साजिश का नतीजा है।'
इस्फ़ंदियार बेग को दलील देने की अनुमति नहीं दी गई, सिवाय इसके कि उन्होंने कहा कि इस मामले में उनकी याचिका, जो पहले ही प्रस्तुत की जा चुकी थी, पर सुदेर देवाउनी अदालत द्वारा विचार किया जाना था, इसलिए उस सम्मानित अदालत के फैसले से पहले कोई सुनवाई नहीं हो सकती थी। उस सम्मानित अदालत से कोई निर्देश न मिलने के कारण, मजिस्ट्रेट ने इस्फ़ंदियार बेग की दलील को अनसुना कर दिया। दो घंटे बाद, साइमन फ्रेजर ने सामान्य औपचारिकताओं का पालन करते हुए मामले को सत्र न्यायाधीश को सौंप दिया।
अभियुक्त को लुडलो कैसल में बनी उसकी अस्थायी जेल में वापस भेज दिया गया, इस्फ़ंदियार बेग के अलावा किसी को भी उससे मिलने की अनुमति नहीं थी। इस्फ़ंदियार बेग 8 मई 1835 को सूर्यास्त से पहले एक विशेष रूप से तैयार की गई तेज़ नाव से इलाहाबाद के लिए रवाना हुए। फर्रुखाबाद में नदी छोड़कर, उन्होंने अपनी 150 मील की शेष यात्रा तेज़ घोड़े और बैलगाड़ी से पूरी की। अपनी याचिका पर शीघ्र सुनवाई का आग्रह करने के लिए इलाहाबाद में कुछ घंटों के लिए रुकने के बाद, वे सबसे तेज़ डाक सवारी (मेल कैरिज) से कलकत्ता के लिए रवाना हुए, और अक्सर जब ज़मीनी मार्ग बहुत कठिन हो जाता था तो वे इसे घोड़े या बैलगाड़ी से बदल लेते थे।
इस्फ़ंदियार बेग 11 मई 1835 की मध्यरात्रि को कलकत्ता पहुंचे। उन्होंने तुरंत नवाब द्वारा पहले से ही चुने गए अंग्रेज वकील स्टैनफोर्ड थैकरे से अपने मामले की पैरवी करने के लिए मुलाकात की। शम्सुद्दीन अहमद की ओर से 11 मई 1835 की तिथि वाली एक याचिका फारसी में तैयार की गई और 12 मई 1835 की सुबह 8 बजे तक गवर्नर जनरल के सचिव के पास दाखिल कर दी गई।
दिल्ली में शम्सुद्दीन अहमद पर पाबंदियां और कठिनाइयां बढ़ने लगीं। शुरुआत में नवाब के अपने ही आदमियों को पहरे पर लगाया गया था। लेकिन 11 मई की देर रात उन्हें अचानक हटा दिया गया क्योंकि शम्सुद्दीन अहमद ने उनमें से एक से पूछा कि क्या आधी रात हो चुकी है। या शायद वह आधी रात से पहले का समय जानना चाहते थे। संभवतः अंग्रेजों को डर था कि यह कोई गुप्त संकेत है जिसके माध्यम से कैदी अपने समर्थकों से संपर्क स्थापित करने और कोई साजिश रचने की कोशिश कर रहा है। खैर, शम्सुद्दीन अहमद को तुरंत उनके परिचित पहरेदारों और निजी नौकरों से वंचित कर दिया गया, और पूरे शहर में यह घोषणा कर दी गई कि यदि शम्सुद्दीन अहमद का कोई रिश्तेदार या मित्र किसी भी समय, किसी भी कारण से शहर में फरार पाया जाता है, तो उसे तुरंत गिरफ्तार कर जेल में डाल दिया जाएगा। इस घोषणा का इच्छित परिणाम निकला: जल्द ही ऐसा प्रतीत होने लगा मानो दिल्ली में शम्सुद्दीन अहमद का कोई समर्थक या रिश्तेदार बचा ही न हो।
जॉन अलेक्जेंडर कोल्विन की अदालत में, शम्सुद्दीन अहमद के खिलाफ अभियोजन पक्ष का मामला पूरी तरह से अनिया के साक्ष्य पर आधारित था। जॉन लॉरेंस ने अदालत के समक्ष साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए नाटक और वाक्पटुता की हर संभव तरकीब का इस्तेमाल किया। फिर भी, साक्ष्य की बार-बार जांच करने और अनिया से कड़ा जिरह करने के बावजूद, लॉरेंस अनिया को

अपराध स्थल पर मौजूद साबित नहीं कर सके। वे अनिया से यह कबूल करवाने में भी सफल नहीं हुए कि उसने नवाब को फ्रेजर को फांसी देने का आदेश देते हुए सुना था; या यह कि नवाब ने अनिया की उपस्थिति में या उसके सुनने के दायरे में करीम खान या किसी अन्य को कोई निर्देश दिया था, जिसका अप्रत्यक्ष अर्थ यह हो सकता था कि नवाब विलियम फ्रेजर की हत्या करवाना चाहते थे; या यह कि नवाब ने उसे फ्रेजर की मृत्यु की घटना घटित होते ही उसे सूचित करने का निर्देश दिया था। अनिया ने केवल इतना ही कहा कि वह फ्रेजर की मृत्यु की घटना की सूचना नवाब को देने के लिए जितनी तेजी से हो सकता था दौड़ा था।

अभियोजन पक्ष ने इस बात पर विशेष बल दिया कि अनिया ने वह यात्रा मात्र एक दिन में पूरी कर ली, जिसमें सामान्यतः तीन दिन लगते थे। इसका कारण यह था कि नवाब ने उसे हत्या की घटना की सूचना यथाशीघ्र देने का आदेश दिया था। उसने अपनी कहानी दोहराई—जो संयोगवश बिल्कुल सच थी—कि उसे करीम खान का सख्त निर्देश था कि वह उसका अनुसरण करे और गोलीबारी की आवाज सुनते ही फिरोजपुर भाग जाए तथा नवाब को सूचित करे कि फ्रेजर साहब का निधन हो गया है।

चूंकि उस समय करीम खान से पूछताछ नहीं की गई थी, और नवाब ने बचाव पक्ष द्वारा पूछताछ किए जाने या अभियोजन पक्ष द्वारा जिरह किए जाने से इनकार कर दिया था, इसलिए नवाब के वकीलों के पास केवल यही तर्क और जोर देने के लिए था कि फ्रेजर की मृत्यु कोई साधारण घटना नहीं थी, और फ्रेजर स्वयं आरोपी के बहुत करीब थे, इसलिए विलियम फ्रेजर से संबंधित किसी भी घटना की जानकारी उन्हें तुरंत प्राप्त करने की इच्छा रखना उनके लिए बिल्कुल भी असामान्य नहीं था।

अदालत ने शम्सुद्दीन अहमद खान से कुछ सवाल पूछने की कोशिश की। लेकिन हत्या की रात उन्हें दिल्ली में मौजूद होने का कोई सबूत नहीं मिला, अपराध स्थल के आस-पास तो बिल्कुल भी नहीं। अभियोजन पक्ष द्वारा जिस बंदूक का ज़िक्र किया गया था, उसका शम्सुद्दीन अहमद से कोई संबंध साबित नहीं हुआ। घोड़े के खुरों का उल्टा लगा होना निश्चित रूप से संदेह पैदा करने वाला और महत्वपूर्ण सबूत था। लेकिन कोई भी यह साबित नहीं कर सका, या यह संकेत भी नहीं दे सका कि नवाब के अस्तबल में मिला घोड़ा वही घोड़ा था जिस पर हत्यारा अपराध करते समय सवार था। ऐसा कोई सबूत नहीं था जिससे यह पता चले कि करीम खान ने कभी कहा था कि वह विलियम फ्रेजर की हत्या करेगा, या वह नवाब के कहने पर यह काम करेगा।

नवाब के खिलाफ अभियोजन पक्ष का मुख्य तर्क संक्षेप में यह था: करीम खान के बयान और अनिया के साक्ष्य से करीम खान का अपराध सिद्ध हो जाता है। करीम खान ने नवाब का कर्मचारी होने की बात स्वीकार की थी। अंग्रेजी कानून के अनुसार, मालिक अपने नौकर के कार्यों के लिए उत्तरदायी होता था। अंग्रेजी कानून में इसे 'मालिक और नौकर' का सिद्धांत कहा जाता था। इसलिए, जब नौकर के खिलाफ अपराध सिद्ध हो गया, तो स्वतः ही मालिक के खिलाफ भी सिद्ध हो गया। पीड़ित के प्रति शम्सुद्दीन अहमद की पुरानी दुश्मनी को साबित करने वाले कई साक्ष्य मौजूद थे। इसका नवीनतम प्रमाण पीड़ित के शव को देखकर फतुल्लाह बेग खान की चीख थी। इस प्रकार, अब और कुछ सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं थी। मालिक और नौकर दोनों ही

पूर्णतः दोषी थे।
कुछ परिस्थितिजन्य साक्ष्य थे जिनसे अभियोजन पक्ष ने यथासंभव अधिक से अधिक जानकारी निकालने का प्रयास किया। इनमें सबसे महत्वपूर्ण वस्तु पानी से भीगा हुआ कागज का टुकड़ा था, जिसे शम्सुद्दीन अहमद द्वारा करीम खान को लिखा गया पत्र बताया गया था, जिसमें करीम खान को 'शिकारी कुत्ते' न खरीदने का कार्य पूरा न करने के लिए फटकार लगाई गई थी। लेकिन उस कागज या पत्र पर न तो नवाब के हस्ताक्षर थे और न ही उनकी मुहर। इसके अलावा, पत्र पर कहीं भी तिथि का उल्लेख नहीं था, यानी लिखने का वर्ष कहीं भी अंकित नहीं था। केवल एक संदेह था - जिसे अभियोजन पक्ष ने खूब उछाला - कि पत्र 1835 में लिखा गया था, लेकिन इसका कोई प्रमाण नहीं था। करीम खान ने, तमाम समझाने-बुझाने के बावजूद, यह स्वीकार नहीं किया कि पत्र के लेखक नवाब थे, या इसका हत्या से कोई संबंध था।
अभियोजन पक्ष ने कई गवाह पेश किए जिन्होंने गवाही दी कि वे आरोपी की लिखावट से परिचित थे और ऐसा कोई संकेत नहीं था जिससे यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि पत्र लिखने वाला आरोपी के अलावा कोई और था। नवाब ने अपनी लिखावट का नमूना देने से इनकार कर दिया। उनके वकील का तर्क था कि इस्लामी कानून और मुगल कानून दोनों के अनुसार पूरी कार्यवाही अवैध थी। इसलिए आरोपी द्वारा कोई सबूत पेश करने या उसके खिलाफ स्वीकार किए गए किसी भी सबूत का खंडन करने का कोई सवाल ही नहीं था।
इस्लामी या मुगल कानून के तहत कार्यवाही की वैधता से संबंधित इस अंतिम बिंदु ने अभियोजन पक्ष को थोड़ा चिंतित कर दिया। अंततः, स्थिति को उसी तरह से सुलझाने का निर्णय लिया गया: खारी बावली के एक मदरसे के मौलवी को अभियोजन पक्ष के गवाह के रूप में पेश किया गया। उनके विशेषज्ञ साक्ष्य के माध्यम से यह सिद्ध करने का प्रयास किया गया कि इस्लामी कानून और सम्राट औरंगजेब आलमगीर द्वारा फतवा-ए-आलमगिरी में स्थापित मुगल कानून के तहत, विलियम फ्रेजर को धिम्मी का दर्जा प्राप्त था, और इस्लामी कानून के अनुसार धिम्मी की हत्या के लिए दंड का प्रावधान था। इस प्रकार, शम्सुद्दीन अहमद और उनके सेवक करीम खान को फ्रेजर की हत्या का दोषी ठहराया जा सकता था, जो पहले ही सिद्ध हो चुकी थी।
इस पर उपस्थित लोगों ने उपहासपूर्वक हँसी नहीं उड़ाई, क्योंकि हर कोई अपनी जान से प्यार करता है, लेकिन अदालत में दबी हुई फुसफुसाहटें सुनाई दीं। कोल्विन ने गुस्से में अपना हथौड़ा पटका, लेकिन बचाव पक्ष के वकीलों में से एक ने जिज़िया करने की अनुमति मांगी। कोल्विन के पास अनुमति देने के अलावा कोई विकल्प नहीं था। वकील ने पूछा, 'मुल्ला जी, पीड़ित ने अपनी धिम्मी स्थिति बनाए रखने के लिए आखिरी बार जिज़िया कब अदा किया था?'
चूंकि मौलवी प्रश्न का उत्तर देने में असमर्थ थे, इसलिए बचाव पक्ष ने उनसे आगे पूछा, 'मुल्ला जी, यदि पीड़ित जिजिया अदा करने के कारण धिम्मी के रूप में राज्य संरक्षण का पात्र था, तो अल्लाह द्वारा अनिवार्य और शासक द्वारा अधिकृत कौन सा न्यायालय उसके हत्या के मामले की सुनवाई करने के लिए सक्षम होगा?'
कोई जवाब न मिलने के कारण गवाह को छुट्टी दे दी गई और न्यायालय ने सुनवाई स्थगित करने का आदेश दिया।

मुकदमा सात दिनों तक चला, जिसमें कई दिनों तक अदालत देर रात तक चली। आरोपियों का प्रतिनिधित्व मिर्ज़ा इस्फ़ंदियार बेग, उनके सहायक मिर्ज़ा भच्चू और शम्सुद्दीन अहमद खान के मुख्तार-ए-कार (मुख्य अधिकृत प्रतिनिधि) दीवान अब्दुल्ला खान ने किया। इन दोनों को गवाह से जिरह करने का अधिकार नहीं था; उनका अधिकार केवल गवाह के साक्ष्य के आधार पर, यदि कोई प्रश्न हो, तो उसे निर्धारित करने, उन प्रश्नों पर स्पष्टीकरण मांगने और उस पर औपचारिक बयान देने तक सीमित था। आम जनता में से किसी को भी कार्यवाही देखने की अनुमति नहीं थी; कंपनी के पदाधिकारी, चाहे वे स्थानीय हों या अंग्रेज, अनुमति लेकर उपस्थित हो सकते थे। शम्सुद्दीन अहमद खान के विपरीत, करीम खान ने स्वेच्छा से गवाह के रूप में गवाही देने पर सहमति जताई: अभियोजन पक्ष के लिए नहीं, बल्कि बचाव पक्ष के लिए। उन्होंने अभियोजन पक्ष द्वारा बार-बार जिरह किए जाने के लिए पूरी तरह से सहमति दी। अपनी प्रारंभिक परीक्षा में, उन्होंने केवल ज्ञात तथ्यों को बताया और बाकी सभी बातों से इनकार किया। उन्हें किसी भी हालत में नवाब के बचाव में कुछ भी कहने की अनुमति नहीं थी; प्रारंभिक परीक्षा का दायरा भी गवाह के व्यक्तिगत ज्ञान तक ही सीमित था। अभियोजन पक्ष द्वारा की गई कड़ी जिरह के दौरान, उन्होंने अभियोजन पक्ष द्वारा वर्णित घटनाओं के बारे में किसी भी जानकारी से इनकार किया; उन्होंने इस बात से इनकार किया कि नवाब ने उन्हें फ्रेजर की हत्या करने का कोई निर्देश दिया था; उन्होंने इस बात से इनकार किया कि संदिग्ध बंदूक या घोड़े का इस्तेमाल उन्होंने फ्रेजर को मारने के लिए किया था; उन्होंने अपने मालिक से शिकारी कुत्तों की खरीद के बारे में पत्र प्राप्त करने से इनकार किया, हालांकि उनके लिए शिकारी कुत्ते खरीदना सामान्य बात थी।

अंत में, गुस्से में आकर, अदालत ने उनसे पूछा कि क्या वे नवाब के आदेश पर किसी की हत्या करेंगे? उन्होंने उत्तर दिया, 'ईश्वर का नाम लो, साहब, और उनसे क्षमा मांगो। किसी निर्दोष की जान लेना! नहीं, माननीय न्यायाधीश, यह मेरे धर्म के बिल्कुल विपरीत है।'

अनिया के बयान को पुनर्प्रवेश के माध्यम से दोबारा पेश किया गया। लेकिन उससे उसके द्वारा पहले से कबूल किए गए गुनाहों से ज़्यादा कुछ नहीं निकल सका। इस प्रकार, मामला और उसका मुकदमा अब कानून, व्यवस्था और अनुशासन लागू करने या दोषियों को दंड देने का मुद्दा नहीं रह गया था। मानो अपनी ही शक्ति से, यह एक अलग क्षेत्र में प्रवेश कर गया था। यह अब शासन और सत्ता के प्रवर्तन के क्षेत्र में लोहे की छड़ की तरह गहराई से जड़ जमा चुका था, और कुछ ही वर्षों में इसकी नोक भारतीय साम्राज्य के हृदय में धंस जाएगी।

आठवें दिन, कोल्विन ने खुले न्यायालय में अपना पचास पृष्ठों का फैसला सुनाया। आरोपी शम्सुद्दीन अहमद खान और करीम खान को जानबूझकर हत्या का दोषी पाया गया। अंग्रेजी दंड संहिता के अनुसार, दोनों को फांसी की सजा दी जानी चाहिए थी। न्यायालय ने आगे निर्देश दिया कि उन्हें यथाशीघ्र सार्वजनिक रूप से फांसी दी जाए। फैसले की तारीख 8 अगस्त 1835 थी। मेटकाफ ने तुरंत अपनी अनौपचारिक समिति बुलाई ताकि इस प्रश्न पर विचार किया जा सके कि क्या दोषियों को गवर्नर जनरल बहादुर के समक्ष अपील करने की अनुमति दी जानी चाहिए। समिति के संज्ञान में यह बात लाई गई कि माननीय कंपनी बहादुर के मौजूदा कानूनों में ऐसा कोई प्रावधान नहीं था जो किसी दोषी अपराधी को गवर्नर जनरल बहादुर के समक्ष अपील दायर करने

में सक्षम बनाता हो। जॉन कोल्विन को विशेष रूप से इन दो मामलों की सुनवाई के लिए विशेष न्यायाधीश नियुक्त किया गया। इन दो अभियोगों के प्रयोजन के लिए, उनकी अदालत से ऊपर कोई ऐसी अदालत नहीं थी जिसमें अपील की जा सके। यह सत्य है कि कंपनी बहादुर द्वारा कलकत्ता में एक सर्वोच्च न्यायालय स्थापित किया गया था, लेकिन उसका अधिकार क्षेत्र एनडब्ल्यूपी (जिसका मुख्यालय आगरा में था) और दिल्ली आयुक्त कार्यालय की सीमाओं के भीतर उत्पन्न होने वाले मामलों तक विस्तारित नहीं था।
वास्तव में, इलाहाबाद में सदर दीवानी अदालत थी, जिसके पीठासीन अधिकारी का पद विशेष न्यायाधीश से ऊपर था, लेकिन आपराधिक मामलों पर उस अदालत का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था। तकनीकी कारणों से वह अदालत भी शम्सुद्दीन अहमद खान का बयान दर्ज करने में असमर्थ थी। इलाहाबाद स्थित सदर दीवानी अदालत द्वारा नियुक्त एक सदर अमीन, 14 जून 1835 को दिल्ली पहुंचे, ताकि आरोपी शम्सुद्दीन अहमद का बयान दर्ज किया जा सके। उन्हें दिल्ली के कमिश्नर ने बताया कि आरोपी के खिलाफ कुछ समय पहले ही आरोप दायर किए जा चुके हैं। इसलिए, अब उनका बयान दर्ज करने की कोई आवश्यकता नहीं है।
समिति ने सर्वसम्मति से निर्णय लिया कि दोषियों को अपील करने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। समिति ने यह भी गौर किया कि दोनों दोषियों में से किसी की भी ओर से अभी तक कोई अपील प्राप्त नहीं हुई है। और यदि सजा दिए जाने से पहले भविष्य में कभी ऐसी अपील प्राप्त होती है, तो विशेष न्यायाधीश के पास उसे खारिज करने का अधिकार होगा, क्योंकि इस मामले में उनसे ऊपर कोई अपीलीय प्राधिकारी नहीं है।
इस समय, समिति के एक सदस्य, शायद प्रेस्कॉट या स्वयं मेटकाफ ने यह प्रश्न उठाया कि क्या गवर्नर जनरल बहादुर से शम्सुद्दीन अहमद की दोषसिद्धि और सजा की पुष्टि या समर्थन प्राप्त किया जाना चाहिए, क्योंकि प्रश्न में शम्सुद्दीन अहमद एक स्वतंत्र देशी राज्य के शासक थे, जिन्हें कंपनी द्वारा औपचारिक उपाधियों से भी सम्मानित किया गया था। साइमन फ्रेजर और जॉन लॉरेंस ने इस सुझाव का कड़ा विरोध किया। जब बहस काफी गरमा गई, तो मेटकाफ ने फ्रेजर से यह प्रश्न पूछकर सबको चुप करा दिया: 'श्रीमान फ्रेजर, क्या आपको लगता है कि महामहिम द्वारा सजा की पुष्टि नहीं की जाएगी?'
साइमन फ्रेजर चिल्लाया, 'नहीं! इसकी पुष्टि होगी! भगवान की कसम, इसकी पुष्टि होनी ही चाहिए।'
‘श्रीमान फ्रेजर, कसम खाने का क्या कारण है?’ मेटकाफ ने कुछ चिढ़कर कहा। ‘कंपनी के सभी श्वेत अधिकारियों का यह कर्तव्य है कि वे हर समय शालीनता और संयम का पालन करें।’
फ्रेजर को तुरंत अपनी गलती का एहसास हो गया। उनका चेहरा अंग्रेजों की भाषा में 'चुकंदर जैसा लाल' हो गया। उन्होंने अपने रुमाल से चेहरा पोंछा, घूंट भरा और धीमी आवाज में कहा, 'माफ़ कीजिए, मैं भावनाओं में बह गया था। मुझे पूरा यकीन है कि ऐसा दोबारा नहीं होगा।'

प्रेस्कॉट ने यह कहकर माहौल को शांत करने की कोशिश की, ‘शायद श्री फ्रेजर को लगता है कि कलकत्ता से फैसला आने में कुछ समय लग सकता है,’ उन्होंने मुस्कुराते हुए कहा। ‘पहली बात

तो यह है कि इसकी कोई वास्तविक संभावना नहीं है; दूसरी बात, कैदी शम्सुद्दीन युवा और ऊर्जावान है। निश्चित रूप से, वह चार या छह हफ्तों में नहीं मरेगा।'

'ठीक है,' जॉन लॉरेंस ने कहा, 'लेकिन उसके गार्डों ने बताया कि जब उसे अपनी मौत की सजा के बारे में पता चला, तो उसने बार-बार अपना सिर अपनी कोठरी की दीवारों पर पटका, मानो वह खुद को मारने की कोशिश कर रहा हो।'

मेटकाफ के माथे पर झुंझलाहट की लकीरें उभर आईं। 'लेकिन, मिस्टर लॉरेंस, आप भली-भांति जानते हैं कि गार्डों ने उसे दोबारा ऐसा करने से रोकने के लिए तुरंत कदम उठाए थे। और अब तो, वास्तव में, उसका खाना भी एक अंग्रेज सार्जेंट की देखरेख में तैयार किया जाता है, ताकि जहर से मौत की संभावना को टाला जा सके।'

'तो, ऐसा लगता है कि वह तभी मर सकता है जब हम उसे मार डालें,' प्रेस्कॉट ने कुछ हास्य का प्रयास करते हुए मुस्कुराते हुए कहा। इसका वांछित प्रभाव पड़ा। समिति में सौहार्दपूर्ण माहौल लौट आया। अंततः सर्वसम्मति से यह निर्णय लिया गया कि मामले की पूरी रिपोर्ट और फैसले की एक प्रति उत्कृष्ट नवाब गवर्नर जनरल बहादुर को एक विशेष और विश्वसनीय संदेशवाहक के माध्यम से शम्सुद्दीन अहमद को सजा की पुष्टि के लिए भेजी जाए। करीम खान को फांसी देने की व्यवस्था तेजी से आगे बढ़ाई जानी चाहिए। सर्वसम्मति से यह भी निर्णय लिया गया कि करीम खान को 26 अगस्त 1835 को दोपहर बारह बजे चांदनी चौक के पश्चिमी छोर पर स्थित फतेहपुरी की जामी मस्जिद के सामने खुले मैदान में सार्वजनिक रूप से फांसी दी जाए।

जिस समय करीम खान को फांसी के तख्ते पर लाया गया, मैदान में एक विशाल जनसमूह चुपचाप इकट्ठा था; चार सौ सशस्त्र तेलंगाना सैनिक उन पर पैनी नजर रखे हुए थे। डॉक्टर के अलावा वहां कोई अंग्रेज मौजूद नहीं था। जब उनसे उनकी अंतिम इच्छा पूछी गई, तो करीम खान ने संयमित स्वर में, लेकिन इतनी ऊंची आवाज में कहा कि उनके सबसे करीबी लोग सुन सकें: 'मेरी कोई इच्छा नहीं है। मैं बस इतना चाहता हूं कि हिंद के लोग मेरे लिए प्रार्थना करें।'

लाल गुलाब का जीवन-फूल फांसी के फंदे की जानलेवा डाल पर पल भर में मुरझा गया। दोपहर की नमाज़ में, और फिर शाम की नमाज़ में, दिल्ली के सभी मुसलमान उनकी आत्मा की शांति के लिए प्रार्थना करते थे। शाम को, कालकाजी और जोग माया देवी के प्राचीन हिंदू मंदिरों में भक्ति संगीत बजाया और गाया जाता था। जैन धर्म के लाल मंदिर और सिसगंज के सिख गुरुद्वारे में भी प्रार्थना और भक्ति गीत गाए जाते थे।

करीम खान का शव उनके बहनोई वसाइल खान को सौंपा गया, जो उस समय जेल में थे। उन्हें निर्देश दिया गया था कि वे अंतिम संस्कार से पहले और बाद में किसी भी प्रकार की भारतीय-इस्लामी रस्मों का पालन न करें। उनका अंतिम संस्कार एक अज्ञात कब्र में होना था। न कोई जनाजा निकाला गया, न कोई प्रार्थना हुई, न कोई मातम मनाया गया। आज उनकी कब्र का कोई निशान नहीं मिलता, लेकिन माना जाता है कि जिस जगह को उन्होंने दफनाया था, वह दिल्लीवासियों के लिए, चाहे वे किसी भी धर्म के हों, एक तीर्थस्थल बन गया। उनकी कब्र पर फूल चढ़ाए जाते थे और दीपक जलाए जाते थे। दरअसल, कई वर्षों तक उनके उर्स (उनकी मृत्यु की तिथि, या शाश्वत सत्य से उनके विवाह की तिथि) का मेला उनकी फांसी की तिथि पर ठीक

समय पर आयोजित किया जाता था। कव्वालियां, जिनमें सामान्य भक्तिमय विषयों के साथ-साथ उनकी अच्छाई, पवित्रता और वीरता का भी वर्णन होता था, गाई जाती थीं।
दोषी शम्सुद्दीन अहमद को यह सूचना नहीं दी गई कि उनकी फाइल पुष्टि के लिए कलकत्ता भेजी गई है। उनके लोग, जो उनके मामले पर नज़र रख रहे थे, फैसले को लागू करने में देरी का कारण नहीं जान सके। इससे दिल्ली के अफवाह फैलाने वालों को, हमेशा की तरह, सबसे मनगढ़ंत अफवाहें फैलाने का मौका मिल गया। उदाहरण के लिए, यह कहा गया कि फिरंगी बादशाह ने लंदन में एक सभा बुलाई थी, जहाँ उन्होंने नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान को पूर्ण क्षमादान देने का फरमान जारी किया था। एक और कहानी यह थी कि पैगंबर के दामाद अली, जो अल्लाह के शेर थे और बार-बार आक्रमण करते थे और कभी पीछे नहीं हटते थे, अंग्रेज राजा के सपने में प्रकट हुए और उन्हें नवाब के खिलाफ किसी भी कार्रवाई के खिलाफ चेतावनी दी। उन्होंने राजा को बताया कि उनके पिता की ओर से शम्सुद्दीन अहमद खान उनकी संतान हैं; और इसलिए यदि उन्हें कोई नुकसान पहुँचाया गया, तो राजा की हड्डियाँ चूर-चूर कर दी जाएँगी। अंग्रेज राजा पूरी तरह से भयभीत हो गए और उन्होंने तुरंत शम्सुद्दीन अहमद को क्षमादान देने का आदेश जारी कर दिया।
रेजिडेंसी के जासूसों ने मेटकाफ को सूचना दी कि शहर में जश्न का माहौल था: लोगों को विश्वास था कि नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान जल्द ही एक स्वतंत्र व्यक्ति के रूप में फिरोजपुर लौटेंगे। इन अफवाहों को देखते हुए, फिरंगी शासकों ने आधिकारिक उद्घोषकों के माध्यम से पूरे शहर में यह सूचना फैलाने का निर्णय लिया कि दोषी अपराधी का मामला नवाब गवर्नर जनरल बहादुर के समक्ष अनुमोदन के लिए प्रस्तुत कर दिया गया है। इसके अलावा, 4 सितंबर 1835 को एक आधिकारिक राजपत्र प्रकाशित किया गया, जिसमें यही खबर दी गई थी।
राजपत्र में प्रकाशित अधिसूचना के बारे में जानने पर, मिर्ज़ा इस्फ़ंदियार बेग ने गवर्नर जनरल को एक याचिका तैयार की, जिसमें उन्होंने अधिसूचना को अपने मामले की स्थिति के बारे में पहली आधिकारिक जानकारी बताया।
अत: मैं अपने अधिकार पत्र धारक मिर्ज़ा इस्फ़ंदियार बेग को आपकी सेवा में नियुक्त करता/करती हूँ। उनके लिखित और मौखिक निवेदन आपके प्रबुद्ध विवेक को स्पष्ट कर देंगे कि दिल्ली की अदालत ने मेरी आपत्तियों, बयानों और मामले में मौजूद स्पष्ट साक्ष्यों पर बिल्कुल ध्यान नहीं दिया। मुझे एक स्पष्ट षड्यंत्र के तहत दोषी ठहराया गया है। अत: मैं अत्यंत विनम्रतापूर्वक और भावपूर्वक प्रार्थना करता/करती हूँ कि मेरे वकील को सहानुभूतिपूर्वक और ध्यानपूर्वक सुना जाए और उनके द्वारा प्रस्तुत दस्तावेजों का विधिवत अध्ययन किया जाए। इस विशाल संसार में, मुझे आपके सिवा कोई और नहीं दिखता जो मुझे न्याय दिला सके; और न ही मुझे किसी और से कोई संबंध है।
मिर्ज़ा इस्फ़ंदियार बेग ने श्री ठाकरे के माध्यम से 10 सितंबर 1835 को गवर्नर जनरल के कार्यालय में यह याचिका दायर की। उन्होंने 28 सितंबर 1835 को भी इसी तरह की एक याचिका प्रस्तुत की। अथक प्रयासों के बाद, वे और ठाकरे गवर्नर जनरल के सचिव से मिलने में सफल रहे। हालांकि, यह मुलाकात निरर्थक रही। गवर्नर जनरल की परिषद ने अभियुक्त को फांसी देने के फैसले की पुष्टि कर दी और यह 7 अक्टूबर 1835 को दिल्ली स्थित रेजीडेंसी में

प्राप्त हुई। आगे की देरी को अनुचित मानते हुए, अगले ही दिन, 8 अक्टूबर 1835 को, कश्मीरी गेट के सामने मैदान में सुबह नौ बजे सजा को क्रियान्वित करने का निर्णय लिया गया।
7 अक्टूबर की शाम को मशालों की रोशनी में एक मजबूत फांसी का तख्ता खड़ा किया गया। इसमें घुसपैठ और गड़बड़ी से बचाव के लिए सागौन की लकड़ी के ऊंचे और मजबूत खंभे और बाड़ लगाई गई थीं। मेरठ और कौल (आधुनिक अलीगढ़) से सैन्य टुकड़ियां पहले से ही तैनात थीं। 7 अक्टूबर की रात को देर से ही अनुभवी अंग्रेज अधिकारियों की कमान में एक हजार दो सौ गार्डों की एक टुकड़ी तैनात की गई थी, जिनमें से एक सौ अंग्रेज थे, ताकि किसी भी प्रकार की गड़बड़ी या सार्वजनिक प्रदर्शन को रोका जा सके।
मिर्ज़ा इस्फ़ंदियार बेग अपनी असफलता से इतने लज्जित और दुखी थे कि उन्होंने पगड़ी पहनना त्याग दिया। इसके बजाय, अपने शेष जीवन में वे एक बड़ा, खुरदुरा रुमाल या फेंटा नामक एक साधारण और सादा कपड़ा, जो गरीबों के रुमाल जैसा होता था, अपने सिर पर बांधे रहते थे। वे हर जगह मिर्ज़ा फेंटे बाज़ के नाम से जाने जाने लगे। उनकी असाधारण प्रतिभा ने उन्हें एक के बाद एक पदोन्नति दिलाई: वे सहायक दीवान बने, और फिर 1862 में अपनी मृत्यु से पहले अलवार की विशाल देशी रियासत के पूर्ण दीवान बने।
7 अक्टूबर की देर शाम साइमन फ्रेजर के मुखबिरों ने उन्हें सूचना दी कि रात भर या अगले दिन तड़के एक या अधिक बचाव प्रयास किए जाने की संभावना है। इसलिए मेटकाफ ने कैदी को लुडलो कैसल से कश्मीरी गेट के पास स्थित गोरा बैरक में स्थानांतरित करने का निर्णय लिया। इससे फांसी की सजा पाए कैदी की पालकी को फांसी के तख्ते तक ले जाने में दूरी और समय दोनों की बचत होगी—कश्मीरी गेट फांसी के स्थान के लुडलो कैसल की तुलना में कहीं अधिक निकट है। कम दूरी होने से स्थानीय लोगों द्वारा अशांति या आंदोलन का खतरा भी कम हो जाएगा।
शम्सुद्दीन अहमद रात्रि के लिए विश्राम कर रहे थे; वे सो रहे थे तभी उनके अंगरक्षक ब्रिगेडियर ने उन्हें जगाया और कश्मीरी गेट तक पालकी में चलने को कहा। नवाब ने विरोध किया और कहा कि उन्हें इस धरती पर अपनी अंतिम रात शांति से सोने दिया जाए, लेकिन वे कुछ नहीं कर सके। उन्हें कश्मीरी गेट स्थित गोरा बैरक में अंग्रेज अधिकारियों के छात्रावास में ले जाया गया।
जब शम्सुद्दीन अहमद वहाँ पहुँचे, तब अंग्रेज अधिकारी लेफ्टिनेंट थॉमस बेकन कई अन्य लोगों के साथ शयनकक्ष में ठहरे हुए थे। बेकन और उनके मित्र रात भर शयनकक्ष में सो रहे थे ताकि उन्हें फाँसी स्थल के यथासंभव निकट अच्छी जगह मिल सके। बेकन लिखते हैं कि उन्होंने और उनके मित्रों ने नवाब को पूरी निजता देने के लिए शयनकक्ष खाली करने की पेशकश की, लेकिन नवाब ने विनम्रतापूर्वक यह कहते हुए इनकार कर दिया कि वे अपना बिस्तर आराम से एक कोने में लगवा सकते हैं। कुछ ही क्षण बाद, नवाब के नौकर उनका भारी बिस्तर लेकर आ गए। नवाब ने थॉमस बेकन से पूछा कि क्या वे वह हरा वस्त्र पहन सकते हैं जो नवाब आमतौर पर रात में पहनते थे। बेकन ने क्षमा मांगते हुए कहा कि इस मामले पर केवल मेटकाफ ही कुछ कह सकते हैं।
शम्सुद्दीन अहमद अपने साधारण कपड़ों में अंग्रेज अधिकारियों की ओर पीठ करके लेट गए।

उनके नौकरों ने उन्हें नींद दिलाने के लिए धीरे-धीरे उनके शरीर को सहलाना और थपथपाना शुरू कर दिया। थॉमस बेकन बताते हैं कि शम्सुद्दीन अहमद, जिन्हें अगली सुबह फांसी पर अंतिम सांस लेनी थी, जल्द ही गहरी नींद में सो गए। बेकन कहते हैं कि नवाब के बैरक में आने के बाद उस रात उन्हें नींद नहीं आई।

शम्सुद्दीन अहमद सुबह बहुत जल्दी उठे और तड़के की नमाज़ अदा की। कुछ देर बाद एक मौलवी आए, जिन्होंने कुरान खोली और शम्सुद्दीन अहमद को अपने साथ यासीन पढ़ने को कहा: कुरान का छत्तीसवाँ अध्याय, जिसे मृत्यु के कष्ट को कम करने के लिए पढ़ा जाता है। फिर मौलवी ने स्वयं वह अध्याय पढ़ा और शम्सुद्दीन अहमद के सिर और चेहरे पर फूँक मारी। थॉमस बेकन ने मौलवी को 'पादरी' बताया है और लिखा है कि पादरी ने कुछ दुआएँ पढ़ीं और उन्हें शम्सुद्दीन अहमद से पढ़वाया।

नवाब का निजी नाई उनकी दाढ़ी, मूंछें और बाल काटने आया। जब नाई उनकी देखभाल कर रहा था, शम्सुद्दीन अहमद बार-बार आईने में अपना चेहरा देखते हुए बेकन से पूछ रहे थे कि क्या उन्हें धरती पर अपने अंतिम क्षणों में हरे रंग के वस्त्र पहनने की अनुमति मिलेगी। बेकन असहाय होकर चुप रहे।

थॉमस मेटकाफ सुबह लगभग साढ़े आठ बजे नवाब को फांसी के तख्ते तक ले जाने के लिए दो अधिकारियों और बीस सशस्त्र घुड़सवारों के साथ पहुंचे और नवाब को पूरी तरह तैयार पाया। उन्होंने सफेद वस्त्र पहने हुए थे। अक्टूबर की शुरुआत की हल्की ठंडी सुबह में, नवाब का लंबा और राजसी व्यक्तित्व, उनका चेहरा थोड़ा पीला था लेकिन बीमार नहीं, बल्कि थोड़ा सा चमकीला था, जो उन्हें बेहद आकर्षक और सुंदर बना रहा था। उनके नाई ने भी बेहतरीन काम किया था: उनकी दाढ़ी और मूंछों का हर बाल रत्न के बेज़ल की तरह करीने से काटा गया था। हरे रंग के बनारसी रेशम की एक शानदार पगड़ी, जिस पर सोने के धागे से छोटे-छोटे गुलाबी गुलाब की कलियों की कढ़ाई थी; उसी कपड़े का एक लंबा कुर्ता; हरे रंग के मलमल का एक छोटा ऊपरी कोट, जिसकी आस्तीनें ऊपर से कटी हुई थीं, जिससे वे लटक रही थीं और कुर्ते के सिरों पर सोने के धागे का काम दिखाई दे रहा था; औरंगाबाद से लाए गए हल्के हरे रंग के मशरू की पतलून; गहरे हरे चमड़े के हल्के शिराज़ी जूते: यही वो पोशाक थी जिसे नवाब को अपनी फांसी के दिन पहनना था। उन्होंने मेटकाफ से हिंदी में पूछा, 'वरिष्ठ साहब बहादुर, मैं अपने ईश्वर से इस साधारण पोशाक में नहीं मिलना चाहता। क्या आप मुझे ये हरे वस्त्र पहनने देंगे?'

मेटकाफ ने शम्सुद्दीन अहमद को ध्यान से देखा, कुछ आश्चर्यचकित भी थे। वे पोशाक के रंग के पीछे छिपे अर्थ या मकसद को समझने की कोशिश कर रहे थे। रात में उन्हें खबर मिली थी कि मौत की सजा पाए अपराधी को हरा रंग पहनने की इजाजत देने की गुहार लगा रहा है। अचानक उनके मन में आया कि मुसलमान खुद को हरे रंग से जोड़ते हैं... शायद इसका कोई धार्मिक महत्व भी हो। उन्हें आशंका थी कि अगर नवाब को हरे रंग की पोशाक में फांसी दी गई तो मुसलमान नाराज या भड़क सकते हैं: शांति भंग भी हो सकती है। उन्होंने फारसी में जवाब दिया, 'शम्सुद्दीन अहमद, यह रंग आपकी हैसियत और मौत की सजा पाने वाले व्यक्ति के लिए उचित नहीं लगता। मेरा सुझाव है कि आप कोई और रंग पहनें।'

शम्सुद्दीन अहमद के मन में एक विचार आया: मैं मना कर देता हूँ; आखिर यह मसखरा कर क्या सकता है? मुझे तो वैसे भी मरना ही है। लेकिन एक पल के विचार ने उन्हें एक बेहतर विकल्प सुझाया।

'हमें हमेशा यही बताया गया था कि सज़ा पाए अपराधी की आखिरी इच्छा हमेशा पूरी की जाती है,' उसने एक कसी हुई, ठंडी मुस्कान के साथ कहा। 'लेकिन अगर कंपनी बहादुर, मेरे जीवन वृक्ष की सारी हरियाली निचोड़ लिए जाने से संतुष्ट नहीं है और मुझे फकीर का हरा वस्त्र पहनने को बर्दाश्त नहीं कर सकता, तो ठीक है। मैं सफेद वस्त्र पहन लूंगा, उसे अपना कफ़न मानूंगा। मेरी पगड़ी हरी होगी।'

शम्सुद्दीन अहमद खान ने औपचारिक, अलंकारिक भाषा में फारसी बोली; मेटकाफ को बात समझ में आ गई, लेकिन वह यह तय नहीं कर सका कि पगड़ी का हरा रंग क्यों विशेष रूप से चुना गया था। उसने अपनी छोटी सी सामरिक जीत हासिल कर ली थी और वह इससे संतुष्ट था। शम्सुद्दीन अहमद खान ने तुरंत पगड़ी को छोड़कर सभी हरे वस्त्र दान में दे दिए; उसने उस समय पहनी हुई पगड़ी और कमरबंद भी दान कर दिया। वह अपनी सामान्य पालकी में अपने फांसी स्थल की ओर चल पड़ा; एक अंग्रेज अधिकारी उसके साथ था। मद्रास रेजिमेंट के चार सशस्त्र घुड़सवार पालकी के दोनों ओर चल रहे थे। मेटकाफ अपने घोड़े पर सवार होकर जुलूस का नेतृत्व कर रहा था; चार घुड़सवार अंग्रेज सैन्य अधिकारी उसके दोनों ओर चल रहे थे। दो घुड़सवार पालकी के पीछे चल रहे थे।

शम्सुद्दीन अहमद खान के भाषण या उनके व्यवहार में किसी प्रकार का तनाव या चिंता नहीं झलक रही थी। कश्मीरी गेट मैदान की ओर जाते समय उन्होंने एक गाँव के फल विक्रेता को कासेरू बेचते देखा, जो साइपरस ट्यूबरोसस नामक पौधे की जड़ थी। मध्यम आकार की बेर जैसी दिखने वाली, काली और थोड़ी कांटेदार त्वचा वाली यह जड़ अपने कुरकुरे, बर्फ जैसे सफेद गूदे और मीठे स्वाद के कारण फल के रूप में लोकप्रिय थी। नवाब ने पालकी रुकवाई और कुछ कासेरू खरीदी। उन्होंने कासेरू छीली और बड़े चाव से खाई; छिलके उन्होंने पालकी के दोनों ओर फेंक दिए, मानो राहगीरों को चिढ़ा रहे हों, मानो उन्हें दुनिया की कोई परवाह न हो। उन्होंने अंग्रेज को भी कासेरू देने की पेशकश की।

"आइए, नौजवान साहब, इनमें से कुछ खा लीजिए, सुबह के नाश्ते का आनंद क्यों न लें?" उन्होंने हल्की सी, मधुर हंसी हंसी। नौजवान ने मना कर दिया, नवाब की आंखों में आंखें मिलाने में असमर्थ था।

बैरक से फांसी के मैदान तक की दूरी ज़्यादा नहीं थी; फिर भी, मज़बूत कदमों वाले लोग एक-दो जगहों पर लड़खड़ा गए। नवाब ने बनावटी अंदाज़ में उन्हें फटकारा: 'अरे, साथियों! तेज़ी से और आराम से चलो। शराबियों की तरह लड़खड़ाओ मत!'

नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान को गुरुवार, 8 अक्टूबर 1835 को सुबह 9 बजे फांसी पर लटका दिया गया। अंग्रेजों के लिए, उनकी मातृभूमि में, फांसी का दृश्य देखना एक आम बात थी—भले ही वे इसका आनंद न लें। इसलिए अंग्रेजों को उम्मीद थी कि शम्सुद्दीन अहमद खान की फांसी भी

इसी तरह का एक सनसनीखेज अवसर होगा, हालांकि विरोध प्रदर्शन, यहां तक कि हिंसक विरोध प्रदर्शन की भी संभावना थी। ऐसी घटनाओं को रोकने के उद्देश्य से, गोरों और देशी सैनिकों से युक्त एक विशाल सैन्य बल सुबह से ही तैनात था। यह अनुमान लगाया गया था कि आसपास के राज्यों के नवाब और राजा भी उपस्थित होंगे और उनके साथ उनकी अपनी सेना भी होगी।
इस आयोजन में दिल्ली से बहुत कम आम लोग और रईस उपस्थित हुए। बाहर से आने वाले दर्शकों में राजा हिंदू राव और ग्वालियर, अलवर, नाभ और पटियाला के महाराजा प्रमुख थे।
फांसी के तख्ते पर पहुँचकर, जहाँ शम्सुद्दीन अहमद अंग्रेज़ अधिकारियों से घिरा हुआ था, मेटकाफ रुका, नवाब को आगे की ओर धकेलने का आदेश दिया और हिंदी में बुलंद आवाज़ में बोला: 'दोषी शम्सुद्दीन अहमद, श्री विलियम फ्रेजर, सीनियर साहिब बहादुर की हत्या का अपराध तुम्हारे विरुद्ध सिद्ध हो चुका है। क्या तुम अपना अपराध स्वीकार करते हो?'
शम्सुद्दीन अहमद ने पीठ सीधी और सिर ऊंचा करके उत्तर दिया, 'मैंने कोई अपराध नहीं किया है। मैं कुछ भी स्वीकार नहीं करता।'
मेटकाफ ने दो जल्लादों को आगे आने का इशारा किया। फांसी के तख्ते पर पैर रखने से पहले, शम्सुद्दीन अहमद खान ने पहले मुस्लिम धर्म की घोषणा और फिर धर्म की प्रतिज्ञा और गवाही पढ़ी। लकड़ी की सीढ़ियों पर कदम रखते ही उनके चेहरे पर हल्की सी मुस्कान आ गई। आगे बढ़ने से पहले, उन्होंने मुड़कर दोनों जल्लादों से फुसफुसाकर एक सवाल पूछा। शायद वे उनके धर्म या जाति के बारे में जानना चाहते थे। उन्हें उसी धीमी आवाज़ में जवाब मिला। फिर वे रुके और थोड़ा ज़ोर से बोले, मानो वे आधा खुद से और आधा पास खड़े डॉक्टर, दोनों जल्लादों और मेटकाफ जैसे आस-पास मौजूद लोगों के लिए बोल रहे हों, "मुझे नहीं पता कि मेरे शरीर को मुस्लिम रीति-रिवाजों से दफ़नाया जा सकेगा या नहीं। इसलिए मैं मृतकों के लिए अपनी प्रार्थना पढ़ लेता हूँ।"
उन्होंने अपना सिर झुकाया और दृढ़ एवं सशक्त स्वर में अरबी प्रार्थना पढ़ी, 'ईश्वर के नाम पर, और ईश्वर के लिए, और ईश्वर के पैगंबर मुहम्मद के मार्ग पर; उन पर और उनकी संतान पर ईश्वरीय आशीर्वाद और सुरक्षा हो।'
इसके बाद उन्होंने पैगंबर, उनकी संतान, उनके साथियों और उनकी पत्नियों के लिए औपचारिक अभिवादन पढ़ा और अपने जल्लादों की ओर मुस्कुराते हुए कहा, 'चलो चलें, मेरे प्यारे दोस्तों, मैं तैयार हूँ।'
जैसे ही शम्सुद्दीन अहमद फांसी के तख्ते पर पहुंचे, एक जल्लाद ने उनके गले में फंदा डालने की कोशिश की। शम्सुद्दीन अहमद ने हाथ बढ़ाकर फंदा पकड़ा और उसे अपने गले में डाल लिया। दूसरा जल्लाद आगे आया और शम्सुद्दीन अहमद खान के सिर पर फांसी की टोपी पहनाने लगा—जो किसी तरह काले की बजाय लाल रंग की थी। उसने टोपी भी ली और उनके सिर पर रख दी; टोपी उनकी ठुड्डी तक आ गई। उस समय उनकी उम्र छब्बीस साल और कुछ महीने थी।
जल्लाद का झटका और गर्दन का टूटना लगभग एक साथ हुआ। उसका शरीर एक पल के लिए भी नहीं हिला, न ही छटपटाया। यहाँ तक कि उसके जूते, जो मुगल जूतों की तरह बिना फीते वाले थे, भी उसके पैरों से नहीं गिरे। उसका चेहरा मानो स्वतः ही काबा की ओर मुड़ गया। यह

कुछ वैसा ही था, जैसा कि अठारहवीं शताब्दी के हिंदी कवि मीर हसन ने नौवीं शताब्दी के सूफी संत, कवि और कुछ लोगों के अनुसार क्रांतिकारी लेखक मंसूर-ए-हल्लाज की शहादत का गुणगान करते हुए कहा है:
मंसूर, प्रेम के प्रति कृतज्ञ रहो जिसकी शक्ति ने तुम्हें तुम्हारी निम्न स्थिति से उठाकर फांसी के फंदे की ऊंचाई तक पहुंचाया।
कई अंग्रेज शम्सुद्दीन अहमद खान की गरिमा, संयम और भावहीनता से चकित थे, साथ ही फांसी जैसी मौत के सामने भी उनके बेफिक्र रवैये से भी। थॉमस बेकन बताते हैं कि उनके बगल में खड़े अंग्रेज सेना अधिकारी ने कहा, "हे भगवान, यह दुष्ट इसे इतनी शांति से सह रहा है मानो वह जीवन भर हर सुबह फांसी के तख्ते पर जाने का आदी हो!" शव पूरे एक घंटे तक लटका रहा और उसे तभी नीचे उतारा गया जब फिरंगी डॉक्टर को यकीन हो गया कि जीवन का बंधन टूट चुका है।
शम्सुद्दीन अहमद खान का चेहरा काबा की ओर मुड़ा हुआ देखकर संदेह करने वालों को भी यकीन हो गया कि नवाब शहीद हुए हैं। शोक की गूंज पूरे शहर में फैल गई, जैसे बरसात के मौसम में बादल छा जाते हैं। फांसी पर लटकाए गए व्यक्ति के शरीर को काले कपड़े में लपेटकर उनके ससुर मिर्जा मुगल बेग को सौंप दिया गया। किसी अप्रिय स्थिति के उत्पन्न होने की आशंका से चिंतित साइमन फ्रेजर ने मिर्जा मुगल बेग से अंतिम संस्कार में यथासंभव शीघ्रता बरतने का आग्रह किया।
शव, जो अभी भी काले वस्त्र में लिपटा हुआ था, को ऊपर से खुले लकड़ी के बक्से में रखा गया —प्रतीकात्मक रूप से, इस बक्से को गहवारा कहा जाता था और आज भी कहा जाता है—और इसे दरियागंज स्थित हवेली ले जाया गया। वज़ीर को छोड़कर, पुरुष और महिला रिश्तेदार पहले से ही वहाँ शोक मनाने और शव को दफ़नाने की तैयारी करने के लिए एकत्रित थे। शव को शम्सुद्दीन अहमद खान के शयनकक्ष में विधिपूर्वक धोया गया। कफ़न के लिए विशेष शुद्ध सफेद मलमल का प्रयोग किया गया। प्रार्थनाएँ पढ़ी गईं, जिनमें कुरान का या-सीन अध्याय भी शामिल था, अगरबत्ती जलाई गई और शव पर चंदन की सुगंध छिड़की गई।
अंतिम संस्कार की यात्रा दोपहर के शुरुआती समय में शुरू हुई और शव को नोबल फुटप्रिंट ले जाया गया। अंतिम संस्कार की नमाज़ दिल्ली के सबसे सम्मानित सूफी और इस्लामी विद्वान शाह मोहम्मद इशाक ने पढ़ाई। समकालीन अनुमानों के अनुसार, इसमें आठ हजार लोग शामिल हुए थे।
दरअसल, नोबल फुटप्रिंट का इतिहास में कोई आधार नहीं है। दिल्ली के लोग इसे पैगंबर मुहम्मद का एक सच्चा, पवित्र अवशेष मानते थे। यहाँ वर्णित घटनाओं से कुछ वर्ष पहले लिखे गए एक वृत्तांत के अनुसार, यह माना जाता था कि महान सूफी, जिन्हें उपस्थिति, सेवक, विश्वयाजक के रूप में जाना जाता है, हजरत मखदूम जहानियन जहाँ गश्त, इसे पाँच सौ वर्ष पहले मदीना से दिल्ली लाए थे। कहानी कुछ इस प्रकार है:
जब हज़रत मखदूम ने पैगंबर मोहम्मद की कब्र में प्रवेश करने की इच्छा जताई, तो उन्हें वहां तैनात पहरेदारों ने रोक दिया। उन्होंने कहा कि दरवाजा केवल पैगंबर मोहम्मद की सच्ची संतान के

लिए ही खोला जा सकता है। 'आपको पहले यह साबित करना होगा कि आप पैगंबर मोहम्मद की संतान हैं।'
हज़रत मखदूम ने कहा, 'यहाँ उपस्थित सभी पवित्र पुरुष, धर्मनिष्ठ पुरुष, विद्वान पुरुष और सच्चे ईश्वर से डरने वाले लोग कब्र के सामने एकत्रित हों ताकि मैं दरवाजा खोलने का अनुरोध कर सकूँ।'
इस प्रकार सभी लोग एकत्रित हुए, और बारी-बारी से प्रत्येक ने अरबी में कहा: 'हे अल्लाह के पैगंबर, आप पर सलाम और सुरक्षा हो!'
किसी ने कोई जवाब नहीं दिया। जब हज़रत मखदूम की बारी आई, तो उन्होंने भी पुकार कर कहा: 'आप पर सलाम और सुरक्षा हो, ऐ अल्लाह के पैगंबर!'
इस पर कब्र से उत्तर आया: 'हे मेरे श्रेष्ठ पुत्र, तुम्हें शुभकामनाएं और सुरक्षा मिले!'
ताला अपने आप खुल गया और दरवाजा स्वतः खुल गया। हज़रत मखदूम के उच्च पद और पैगंबर मुहम्मद (अल्लाह के पैगंबर) के उनके प्रति इस आदर को देखकर वहाँ मौजूद सभी लोग आश्चर्य से अवाक रह गए। मुख्य रक्षक, कुछ लोगों का कहना है कि वह खलीफा थे, उन्हें पैगंबर मुहम्मद के शुभ पदचिह्न दिखाने के लिए भी ले गए। पैगंबर मुहम्मद के आदेशानुसार, हज़रत मखदूम ने खलीफा से पदचिह्न प्राप्त किया और उसे अपने सीने से लगाकर भारत ले आए।
उस समय फ़िरोज़ शाह खिलजी दिल्ली के सुल्तान थे। उन्होंने आदेश दिया कि पवित्र पदचिह्न फ़िरोज़ाबाद किले में रखा जाए और समय आने पर उन्हें दफ़नाने से पहले उनकी छाती पर रखा जाए।

अब संयोगवश, यह सौभाग्य सुल्तान के लिए नहीं, बल्कि उनके पोते फतह खान के लिए लिखा गया था, जब थोड़े समय की बीमारी के बाद फतह खान का निधन हो गया। फतह खान का पालन-पोषण उनके पिता की मृत्यु के बाद सुल्तान ने किया था। उस युवक के प्रति प्रेमवश, सुल्तान ने उसकी छाती पर पवित्र पदचिह्न अंकित करवाया और उसकी कब्र में कुछ अन्य पवित्र अवशेष भी स्थापित करवाए।
सुल्तान ने फतह खान की कब्र पर एक मस्जिद बनवाई, वहाँ एक मदरसा स्थापित किया और परिसर में एक कुआँ खुदवाया। उनके पास मक्का के पवित्र कुएँ ज़मज़म का कुछ पानी था। पानी को और अधिक पवित्र करने के लिए सभी पानी उसी कुएँ में डाल दिया गया। प्रतिदिन उस कुएँ से पानी निकाला जाता था, उसमें दस मन (लगभग 800 पाउंड) मिश्री मिलाई जाती थी और तीर्थयात्रियों को भोजन के साथ शरबत मुफ्त में बाँटा जाता था। सुल्तान ने पूरे परिसर के लिए कुछ भूमि दान में दी और उसे ज़रीह-ए-खास (विशेष समाधि) नाम दिया।
हमारी कहानी के समय, इस परिसर में फतह खान की कब्र थी, जिसमें पवित्र पदचिह्न अंकित थे, एक कुआँ, कुछ प्राचीन कब्रें और एक अन्य मकबरा था जिसके ऊपर एक इमली का पेड़ छाया देता था। महिलाएं इस मकबरे पर प्रार्थना करती थीं और यह प्रतिज्ञा लेती थीं कि यदि उनकी प्रार्थना स्वीकार हुई, तो वे मकबरे पर चावल से बना एक विशेष व्यंजन और कुछ कांच की चूड़ियाँ भेंट करेंगी - दोनों की मात्रा महिला अपनी क्षमता के अनुसार तय करती थी - और प्रतिज्ञा

के प्रतीक के रूप में, महिला अपनी एक चूड़ी इमली के पेड़ की शाखा पर लटका देती थी। परिसर के प्रांगण में एक सजावटी तालाब था, जिसे कदम शरीफ (पवित्र पदचिह्न) के नाम से जाना जाता था; तालाब हमेशा दूध, चीनी और पानी के मिश्रण से भरा रहता था। आगंतुक आशीर्वाद के स्रोत के रूप में इस पानी को पीते थे।

ऐतिहासिक सच्चाई चाहे जो भी हो, हर जगह के लोग इस कहानी को सच मानते थे और पैगंबर के पदचिह्न को उनका प्रामाणिक अवशेष समझते थे। उच्च परिवारों या धनी लोगों की इच्छा होती थी कि उन्हें इसी परिसर में दफनाया जाए और वे वहाँ दफनाने के लिए जगह पाने की तैयारी में जुट जाते थे। इसलिए, जब दिल्ली की जनता ने कंपनी के अधिकारियों को यह बात बिल्कुल पसंद नहीं आई कि शम्सुद्दीन अहमद खान शहीद हुए हैं और इसलिए उन्हें पैगंबर के पदचिह्न में दफनाया जाना चाहिए, तो उन्हें यह बात बिल्कुल भी अच्छी नहीं लगी। साथ ही, यह चिंता भी फिर से उभर आई कि नवाब का मकबरा नागरिक अशांति का केंद्र बन सकता है। जनता के मिजाज को भांपते हुए उन्होंने इस मामले को अनदेखा करने का फैसला किया।

कुछ साल बाद, मेटकाफ की बेटियों में से एक, एमिली बेली ने लिखा कि उस समय कदम शरीफ की पवित्रता इतनी हद तक भंग हो गई थी कि शम्सुद्दीन अहमद जैसे हत्यारों और बदमाशों को भी अब वहां दफनाया जा रहा था।

एमिली बेली की नज़र में भले ही कदम शरीफ की पवित्रता में गिरावट आई हो, लेकिन नवाब की कब्र लंबे समय तक बड़ी संख्या में तीर्थयात्रियों के लिए आशीर्वाद का एक प्रमुख स्थान बनी रही। वहां हर साल तय समय पर उर्स मनाया जाता था। यहां तक कि अन्य दिनों में भी, हिंदू, सुन्नी मुस्लिम, शिया मुस्लिम और नानकपंथी जैसे सभी धर्मों के श्रद्धालु शहीद नवाब की आत्मा की शांति के लिए अपने धर्मानुसार प्रार्थना करना अपना पवित्र कर्तव्य मानते थे।

पुस्तक 6

चिंताजनक अफवाहों से वज़ीर खानम को नवाब मिर्ज़ा के जीवन का डर सताने लगता है; जैसे बाढ़ आ गई हो, चारों ओर से भाग्य के संदेश उमड़ पड़ते हैं।

वज़ीर खानम शम्सुद्दीन अहमद खान के वार्षिक उर्स के दिनों में कभी उनकी कब्र पर नहीं जाती थीं। बाकी दिनों में, वह सूर्यास्त के बाद लगभग हर दिन जाती थीं। हबीब-उन निसा या राहत अफ़ज़ा, या दोनों के साथ, वह कब्र और उसके चारों ओर बने छोटे मकबरे की सफाई करतीं, कब्र पर मोमबत्तियाँ जलातीं और एक-दो घंटे ध्यान में बैठतीं। किसी को नहीं पता था कि उनके ध्यान का विषय या उद्देश्य क्या था। शायद वह किसी तरह अपने मृत प्रेमी से फिर से संपर्क स्थापित करना चाहती थीं। अपने मन में वह अक्सर सोलहवीं शताब्दी की फ़ारसी कवयित्री बिचा महसिती की एक कविता दोहराती थीं, जिनका उपनाम मह (चंद्रमा) था।

मेरे भाग्य का सितारा, जिसने आकाश को रोशन किया, देखो, हे चंद्रमा, अब यह धरती के नीचे पड़ा है, तुमसे मेरे बिछड़ने के कारण।

शम्स (सूर्य) नाम के अनुरूप समानता को और अधिक सटीक बनाने के लिए, उसने दूसरी पंक्ति को इस प्रकार संशोधित किया:

देखो, हे सूर्य, यह अब जमीन के नीचे पड़ा है।

सबसे बढ़कर, उनके पुराने प्रिय हाफ़िज़ शिराज़ी की ग़ज़ल अक्सर उनके होठों पर आ जाती थी। जो बात वे अपने शब्दों में नहीं कह पाती थीं, हाफ़िज़ (जिन्हें अक्सर लिसानुल ग़ैब कहा जाता था) के शब्द उनके लिए हज़ार गुना अधिक वाक्पटुता से कह देते थे।

मुझे उसके माणिक जैसे होठों का हल्का सा भी स्वाद नहीं मिला और वह चला गया। मैंने उसके चाँद जैसे चेहरे को ठीक से नहीं देखा और वह चला गया। ऐसा लगा जैसे वह मेरी संगति से थक गया हो और ऊब गया हो, उसने अपना सामान समेटा; मैं उसके पैरों की धूल भी नहीं पकड़ पाई और वह चला गया। उन्होंने मुझे धोखा दिया; उन्होंने कहा, वह मेरे पास से गुजर जाएगा। तो क्या तुमने देखा? मैं मूर्ख बन गई और वह चला गया। वह सुंदरता, शान और आकर्षण के बाग में इतराते हुए इधर-उधर चला, मुझे उसके साथ मिलन के बाग में चलने का मौका नहीं मिला और वह चला गया। हाफ़िज़ की तरह, मैं पूरी रात रोती और विलाप करती रही: हाय, हाय मुझ पर! मैं उसके साथ मिलन नहीं कर पाई और वह चला गया।

अपने नवाब की कब्र पर जाने के अलावा, वह कहीं बाहर नहीं जाती थीं; यहाँ तक कि मंझली भी नहीं जाती थीं। बारी बेगम और फिर उनके पिता आए और उन्होंने शोक व्यक्त किया। उन शब्दों की याद उनके लिए उतनी ही प्रिय थी जितनी शम्सुद्दीन अहमद की याद। उन्हें इस बात से और भी अधिक सांत्वना मिली कि उनकी बड़ी बहन और उनके पिता दोनों नवाब मिर्ज़ा के दीवाने हो गए थे, उनकी मासूमियत भरी चंचलता, उनकी छोटी-छोटी शरारतों और मस्ती पर। इससे वे अक्सर उनसे मिलने तो नहीं जाते थे, लेकिन मुहम्मद यूसुफ अक्सर उनके लिए छोटे-छोटे उपहार भेजते थे; कभी-कभी वे उन्हें एक दिन के लिए अपने घर बुला लेते थे और अनिच्छा से उन्हें उनकी माँ के पास इस वादे के साथ लौटा देते थे कि वे जल्द ही उन्हें फिर से एक दिन के लिए बुलाएँगे।

शोक संवेदना व्यक्त करने के बाद विदा होते समय, बड़ी बेगम ने छोटी बेगम को गले लगाया; उनकी आँखें आँसुओं से भर आईं और उन्होंने कहा कि अपनी जवानी और घर को तबाह देखकर उनका दिल खून के आँसू रो रहा है। आँसुओं से चेहरा बहते हुए उन्होंने कहा, 'काश मैं तुम्हारे लिए कुछ कर पाती।' छोटी को चुप देखकर, बड़ी बेगम ने पहले की तरह ही बेपरवाही से वहाँ से हट जाना बेहतर समझा। दूसरी ओर, मंझली ने अपने पुराने रिश्ते बनाए रखे; बल्कि, उसने वज़ीर के साथ अपने संबंध और भी मज़बूत कर लिए। नवाब मिर्ज़ा भी इस मज़बूत बंधन का एक कारण था। वह उस लड़के को अपने बेटे की तरह प्यार करती थी, और स्वयं निःसंतान होने के कारण, वह उस पर अपना मातृत्व स्नेह खुलकर लुटा सकती थी।

आर्थिक रूप से वज़ीर खानम पहले जितनी मजबूत नहीं थीं, लेकिन गरीब भी नहीं थीं। वास्तव में, उन्हें शम्सुद्दीन अहमद के जीवन में रही अन्य महिलाओं की तुलना में बेहतर स्थिति में कहा जा सकता है।

नवाब की मृत्यु के बाद, फिरंगियों ने तुरंत फिरोजपुर किले पर कब्जा कर लिया। अफजल-उन निसा और हुसैनी बेगम को विधवाओं के लिए पति की मृत्यु के तुरंत बाद घर में रहने के लिए निर्धारित वैधानिक अवधि पूरी किए बिना ही किला छोड़ना पड़ा। इसके अलावा, फिरंगियों ने शम्सुद्दीन अहमद पर लाखों रुपये के बकाया का दावा किया। उन्होंने तुरंत दरियागंज हवेली और उसके विशाल और असंख्य सामानों—यहां तक कि पर्दे, चादरें, रसोई के बर्तन—को उनकी कीमत के एक अंश में नीलाम कर दिया। इसके बावजूद, साहिबों ने दावा किया कि कर्ज अभी तक पूरी तरह से चुकाया नहीं गया है।

बकाया राशि की भरपाई के लिए, कंपनी ने अफजल-उन-निसा बेगम को दिए गए ढाई लाख रुपये के ऋण पर ब्याज को हमेशा के लिए गिरवी रखने वाले कागजात जब्त करने की कार्यवाही शुरू कर दी। कंपनी ने वज़ीर का घर भी जब्त करने और उन्हें वहां से बेदखल करने की कोशिश की। चूंकि उनके पास अपने स्वामित्व को साबित करने वाले सभी पुख्ता कागजात थे, इसलिए यह प्रयास सफल नहीं हुआ। लेकिन कंपनी ने फिर भी एकतरफा ज़ब्ती के आदेश जारी कर दिए थे, इसलिए वज़ीर को अदालत का रुख करना पड़ा और पुलिसकर्मियों और अन्य सरकारी अधिकारियों को रिश्वत देनी पड़ी, तब जाकर आखिरकार खतरा टला। अफजल-उन-निसा बेगम ने भी अदालत का रुख किया। अंततः फैसला उनके पक्ष में आया, लेकिन तब तक कई साल बीत चुके थे। इस दौरान उन्हें अपने पिता के साथ एक गरीब रिश्तेदार की तरह रहना पड़ा।

हुसैनी बेगम, जहांगीर बेगम के बार-बार आग्रह पर, अकबरबाद में उनकी स्थायी अतिथि बन गईं। कई वर्षों तक विधवा रहने और सादगीपूर्ण जीवन जीने के बावजूद उनकी सुंदरता और स्वाभिमान पर कोई असर नहीं पड़ा। अंततः उन्हें पुनर्विवाह के लिए राजी कर लिया गया। और अपने पुनर्विवाह के साथ ही, वे इतिहास के पन्नों से सम्माननीय गुमनामी में विलीन हो गईं।

नवाब के निर्देशानुसार चंपा और रहमत-उन निसा वज़ीर खानम के साथ रहने लगीं। वज़ीर ने चंपा को अपने खर्च पर खाने-पीने या रहने की अनुमति नहीं दी; उन्होंने चंपा को अपने घर के एक छोटे सदस्य की तरह माना। चंपा की सहमति से ही उन्होंने उसका विवाह मुहम्मद अली से करवा

दिया, जो झज्जर के नवाब के एक पुराने और सम्मानित निजी सेवक का पुत्र और विधुर था। इस प्रकार चंपा और उसकी बेटी को एक सुरक्षित घर मिल गया। यह ज्ञात नहीं है कि उसे अपने इस गहरे पतन और अपनी जड़ों से अलग होने का कितना गहरा आघात लगा होगा।

अफजल-उन निसा बेगम ने कंपनी के खिलाफ मुकदमा दायर किया। उन्होंने दावा किया कि शम्सुद्दीन अहमद खान ने अपने अपराध की सजा भुगत ली है, लेकिन उनकी दो छोटी बेटियां शम्स-उन निसा और अहमद-उन निसा निर्दोष हैं और इसलिए अपने पिता की वैध और निष्कलंक संतान होने के नाते उन्हें राज्य का उत्तराधिकार मिलना चाहिए। श्री थॉमस मेटकाफ, साहिब कमिश्नर बहादुर ने किसी को भी सबूत पेश करने या तर्क देने की अनुमति दिए बिना ही मुकदमे को खारिज कर दिया।
अब शहर में एक और अफवाह फैलने लगी: कंपनी के उच्च अधिकारियों और निर्णयकर्ताओं ने यह सुनिश्चित करने का निश्चय कर लिया है कि शम्सुद्दीन अहमद की संतान में से कोई भी जीवित न बचे जो भविष्य में उनकी संपत्ति पर दावा कर सके या नवाब की मृत्यु के लिए कंपनी से उचित मुआवजे की मांग कर सके। यह भी अफवाह फैली कि यद्यपि नवाब मिर्जा शम्सुद्दीन अहमद खान के वैध पुत्र नहीं थे और इसलिए इस्लामी कानून के अनुसार अपने पिता की संपत्ति पर उनका कोई दावा नहीं हो सकता था, फिरंगियों में, यदि कोई अन्य वैध उत्तराधिकारी न हो, तो मृतक की रखैल से जन्मे पुत्र को भी उत्तराधिकार का अधिकार था। अंग्रेजी कानून के तहत, रखैल से जन्मे पुत्र को 'नाजायज पुत्र' और उसकी माता को 'सामूहिक पत्नी' कहा जाता था।
अफवाहों के अनुसार, कंपनी बहादुर का गुप्त संकल्प नवाब मिर्जा को किसी तरह जहर देकर मार डालने का था; यदि यह योजना तुरंत सफल नहीं होती, तो एक पेशेवर बच्चे का अपहरणकर्ता किराए पर लिया जाएगा जो बच्चे को किसी दूरदराज के पैतृक राज्य में ले जाएगा, जहां उसे एक वफादार नौकर को सौंप दिया जाएगा जो उसे अपने बेटे की तरह पालेगा।
स्पष्टतः, इन अफवाहों का कोई आधार नहीं था। वज़ीर यह नहीं जानती थी, लेकिन वह दिल्ली और अफवाहें फैलाने में उसकी महारत से भली-भांति परिचित थी। फिर भी, उसने खुद को इस अफवाह की सच्चाई पर यकीन दिला दिया कि फिरंगी उसके बेटे की हत्या या अपहरण की गंभीर योजना बना रहा है। वह चिंता से अधमरी हो रही थी और लगातार इस बात की चिंता में डूबी हुई थी कि नवाब मिर्ज़ा को किसी सुरक्षित जगह पर कैसे ले जाया जाए।
नवाब मिर्ज़ा की सुरक्षा और संरक्षा के सवाल को सुलझाने की कोशिश में वह अभी भी लगी हुई थी कि कहीं उनकी जान को खतरा न हो या उनका अपहरण न हो जाए, तभी जयपुर से एक पत्र आया। फारसी में लिखे और टिंडेल परिवार के हस्ताक्षर वाले इस पत्र में उन्हें बताया गया कि वज़ीर खानम, जिन्हें छोटी बेगम के नाम से भी जाना जाता है, एक हत्या के दोषी अपराधी की रखैल के रूप में कुख्यात हो गई थीं। इन परिस्थितियों में, उन्हें यह बिल्कुल भी पसंद नहीं था कि एक कुलीन और उच्च पदस्थ अंग्रेज की संतान का नाम छोटी बेगम जैसी पतित स्त्री के साथ जोड़ा जाए। पत्र लिखे जाने की तिथि से दोनों बच्चों को औपचारिक रूप से प्रोटेस्टेंट चर्च में शामिल कर लिया गया है। अब से उन्हें छोटी बेगम से किसी भी प्रकार का संबंध रखने की

अनुमति नहीं होगी। फिलहाल, उन्हें हमारे प्रभु यीशु मसीह के धर्म में पाला-पोसा जाएगा और उनका पालन-पोषण पूरी तरह से फिरंगी रीति-रिवाजों के अनुसार होगा। समय आने पर वे अपनी इच्छा से, लेकिन हमारी अनुमति से विवाह करेंगे। वे अब पूरी तरह से आश्वस्त हैं कि अंग्रेज साहब भारतीयों से कई मायनों में श्रेष्ठ हैं। अंत में, चूंकि छोटी बेगम और दोनों बच्चों के बीच सभी संबंध पूरी तरह से और अंतिम रूप से टूट चुके हैं, इसलिए छोटी बेगम को उनके भरण-पोषण के लिए पैसे भेजने की आवश्यकता नहीं है।

वज़ीर स्तब्ध रह गई। काफी देर तक वह स्तब्ध और सदमे में बैठी रही, मानो किसी स्तब्धता में डूबी हो। उसके भीतर क्रोध, पीड़ा और विरोध उबल रहा था, पर अभिव्यक्ति का कोई रास्ता नहीं था। सौभाग्यवश, अचानक उसका आंतरिक तनाव टूट पड़ा और वह फूट-फूट कर रोने लगी। उसने रोते हुए पूछा, "क्या ईश्वर ने मेरे जीवन की पुस्तक में सारे दुख और सारी निराशाएँ लिख दी हैं?" वह बार-बार रोती और विलाप करती रही। हबीब-उन निसा और राहत अफजा ने उसकी देखभाल करने और उसे सांत्वना देने की पूरी कोशिश की। कुछ घंटों बाद, जब उसे थोड़ा बेहतर महसूस हुआ, तो वज़ीर को तुरंत जयपुर जाकर टिंडेल परिवार के खिलाफ मुकदमा दायर करने और फिर उनके घर जाकर उनसे झगड़ा करने, उन्हें समझाने की कोशिश करने, अपने बच्चों को, जो उसके दिल के टुकड़े थे, उनसे बलपूर्वक वापस लेने की तीव्र इच्छा हुई।

कुछ ही मिनटों में, जब उसका गुस्सा थोड़ा शांत हुआ, तो उसे एहसास हुआ कि इनमें से कुछ भी संभव या व्यावहारिक नहीं था। उसने देखा कि टिंडेल परिवार कानून की आड़ में और शासक वर्ग के रूप में अपनी शक्ति के बल पर सुरक्षित बैठा है। उसे याद आया कि मतन बल्क साहब के देहांत के तुरंत बाद, जब उसने टिंडेल परिवार से इस पूरे मामले पर बात की थी—अल्लाह, ऐसा लगता है जैसे तब से एक युग बीत गया हो—उन्होंने उसे स्पष्ट कर दिया था कि उनकी कानूनी स्थिति अभेद्य है: माननीय कंपनी के कानून की दृष्टि में छोटी बेगम का कोई दर्जा नहीं है। उन्होंने उससे कहा था कि उन पर मुकदमा करने से उसे कुछ नहीं मिलेगा। उसने कड़वाहट से सोचा: हाँ, ऐसा क्यों नहीं होना चाहिए? सबसे बढ़कर, उस पर फिरंगी का राज है, सेना की ताकत उसकी है, पुलिस उसके हैं; कानून वही बनाता है और उनसे लाभ भी वही उठाता है। सब कुछ उसका है, मैं अकेली हूँ, उस ताकतवर व्यक्ति के खिलाफ। मुझे कुछ हासिल नहीं होने वाला। वह देख सकती थी कि उसमें भंवर की गांठ को खोलने और उससे बाहर निकलने की क्षमता नहीं थी। फिर भी, वह बिना संघर्ष किए हार मानने वाली नहीं थी। अगले दिन, जब उसने पाया कि वह कुछ हद तक खुद पर काबू पा चुकी है, तो उसने मिर्ज़ा इस्फ़ंदियार बेग से सलाह-मशविरा करने का अनुरोध किया। शम्सुद्दीन अहमद खान के मामले में अपनी करारी हार के अनुभव से आहत और शर्मिंदा तथा किसी न किसी रूप में खुद को इसके लिए ज़िम्मेदार मानते हुए, मिर्ज़ा इस्फ़ंदियार तुरंत आ गए, लेकिन वज़ीर को स्पष्ट शब्दों में हतोत्साहित करने का उनका साहस नहीं हुआ। उन्होंने कलकत्ता में कंपनी के शासन की शक्ति और भयावहता को प्रत्यक्ष रूप से देखा था। वे जानते थे कि फिरंगी कानून की सीमा को एक इंच भी पार नहीं करना चाहता, लेकिन कानून फिर भी उसके पक्ष में ही झुका हुआ था। उन्होंने यह भी देखा कि फिरंगी को कानून लागू करने में कोई पछतावा या संकोच नहीं होता था, विशेषकर तब जब वह उसके हित में

हो। उन्होंने यह भी देखा कि जब फिरंगी देशी लोगों के साथ व्यवहार करता था तो उसका शासन निर्दयी और द्वेषपूर्ण होता था।

वह भली-भांति जानता था कि वज़ीर का मामला वैसे भी बेबुनियाद था। उसे ऐसी दीवार से सिर टकराने में कोई समझदारी नहीं दिखती थी जो टूटने पर भी नहीं गिरने वाली थी। इसलिए उसने वज़ीर को सलाह दी कि वह धैर्य रखे और हालात सुधरने का इंतज़ार करे, या देखे कि क्या टिंडेल परिवार दोनों बच्चों को गाँव ले जाने की कोशिश करता है।

अंग्रेजों द्वारा नवाब मिर्ज़ा के बारे में फैलाई जा रही साजिशों की अफवाहें, हालांकि पूरी तरह निराधार थीं, वज़ीर को लगातार परेशान और विचलित करती रहीं। अब जब इस्फ़ंदियार बेग की सलाह ने उनकी अपने पहले जन्मे पुत्र और पुत्र से दोबारा संपर्क स्थापित करने या कम से कम उनसे फिर से मिलने की पहले से ही कमजोर उम्मीद को भी खत्म कर दिया था, तो वज़ीर ने नवाब मिर्ज़ा को कंपनी के अधिकारियों के चंगुल में पड़ने से बचाने के लिए हर संभव प्रयास करने का निश्चय किया। कई दिनों तक गहन चिंतन और दिमाग खपाने के बाद, उन्होंने बड़ी अनिच्छा से और विश्वासघात और हार की भावना के साथ यह निर्णय लिया कि नवाब मिर्ज़ा के जीवन और भविष्य की सुरक्षा का एकमात्र उपाय उन्हें मंझली बेगम और उनके नवाब यूसुफ अली खान की देखरेख में सौंपना है।

अपना निर्णय लेने के बाद, उन्होंने अपना मन बदलने के डर से इसके कार्यान्वयन में देरी नहीं की। जब मंझली बेगम के माध्यम से नवाब के समक्ष प्रस्ताव रखा गया, तो उन्होंने तुरंत इसे स्वीकार कर लिया, मानो वे ऐसे ही प्रस्ताव की आशा और प्रतीक्षा कर रहे थे। अगले कुछ दिनों में, अत्यंत सौहार्दपूर्ण वातावरण में, सभी विवरणों पर चर्चा की गई।

यह तय किया गया कि हबीब-उन निसा नवाब मिर्ज़ा के मुख्य देखभालकर्ता और सेवक के रूप में उनके साथ रहेंगे। नवाब मिर्ज़ा का पालन-पोषण और शिक्षा प्रतिष्ठित परिवारों के बच्चों के अनुरूप ही होगी। उनका स्थान स्पष्ट रूप से उमदा खानम के भतीजे का होगा, क्योंकि वे उनकी बहन वज़ीर खानम के पुत्र थे। उन्हें नवाब यूसुफ अली खान या उमदा खानम का दत्तक पुत्र नहीं बनाया जाएगा। उन्हें हमेशा शहीद नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान और वज़ीर खानम के पुत्र के रूप में जाना जाएगा। वज़ीर खानम को नवाब मिर्ज़ा से हर समय मिलने का पूरा अधिकार होगा।

ये निर्णय फरवरी 1836 में लिए गए और लागू किए गए। अपने आँसू रोकते हुए, वज़ीर ने अपने बेटे को गले लगाया, उसकी सुरक्षा और कल्याण के लिए प्रार्थना की और उसके दाहिने हाथ पर कई सुरक्षा कवच बाँधे। घर के सभी लोगों द्वारा कई बार गले लगाए जाने के बाद, एक रात उस युवक को नीचे ले जाया गया और नवाब यूसुफ अली खान के विशेष रूप से नवाब के घर ले जाने के लिए भेजे गए रथ में बिठाया गया। उसके सभी कपड़े, खिलौने, फ़ारसी की प्राथमिक पुस्तक, लकड़ी की स्लेट और माला को बड़े प्यार से बक्सों में पैक किया गया। राहत अफ़ज़ा ने लड़के के सिर में तेल और आँखों में काजल लगाया। वज़ीर ने बुरी नज़र या ईर्ष्यालु दृष्टि से बचाव के लिए उसकी बाईं कनपटी के एक कोने में काला निशान लगाया।

उस छोटे लड़के की उम्र लगभग पाँच साल थी, लेकिन वह अपने पिता से काफी लंबे समय से अलग था। इस पूरे समय के दौरान, बच्चे ने कभी अपने पिता को याद नहीं किया और न ही उन्हें

पुकारा, जैसा कि बच्चे चोट लगने पर, अस्वस्थ महसूस करने पर या अपने से बड़े या ताकतवर साथियों द्वारा परेशान किए जाने पर करते हैं।

इसका कारण यह था कि शम्सुद्दीन अहमद खान की अनुपस्थिति के शुरुआती हफ्तों में, नवाब मिर्ज़ा के सामने सभी लोग यह दिखावा करते थे कि उनके पिता अपने राज्य का दौरा कर रहे हैं या फ़िरोज़पुर में डेरा डाले हुए हैं। कभी-कभी हबीबा उनसे कहती थीं: तुम्हारे पिता कल रात यहाँ आए थे; वे तब आए जब तुम बिस्तर पर थे, और बहुत सुबह तुम्हारे सोते ही चले गए। हम तुम्हारी नींद खराब नहीं करना चाहते थे और तुम्हें जगाना नहीं चाहते थे। कभी-कभी वह उन्हें कोई छोटा सा उपहार देती थीं—कोई खिलौना, कोई चिड़िया या मिठाई का डिब्बा—और कहती थीं कि उनके पिता ने यह उनके लिए उपहार के रूप में छोड़ा है।

ज़ाहिर है, इस तरह के बहाने लंबे समय तक नहीं चल सकते थे। एक बार, किसी दावत या त्योहार के अवसर पर, नवाब मिर्ज़ा रूठकर अपने पिता के पास ले जाने की ज़िद करने लगे, तो राहत अफ़ज़ा ने एक नई कहानी गढ़ दी: "बच्चे मियां, आपके पिता की तबीयत ठीक नहीं है। उनका इलाज एक बहुत ही महत्वपूर्ण हकीम साहब कर रहे हैं।" दरअसल, वे एक युद्ध में घायल हो गए थे और शहर के बाहर हकीम साहब के अस्पताल में उनका इलाज चल रहा है।

तो फिर वह वापस क्यों नहीं आता? वह कब सोता है? और कहाँ सोता है?

राहत अफजा ने मुंह फेर लिया, चुपके से अपने रुमाल से आंसू पोंछे और बोली, 'बच्चे मियां, तुम्हारे प्यारे पिता को किसी चीज की कमी नहीं है। वो वहां बिल्कुल आराम से हैं। अगर तुम्हें मेरी बात पर यकीन नहीं है, तो अपनी चाची या अपनी अम्मा जान से पूछ लो।'

उसके बाद से, अगर कोई इतना लापरवाह हो जाता कि नवाब मिर्ज़ा से उसके पिता के बारे में पूछ लेता, तो वह गंभीरता से और कुछ अस्पष्ट आशा के साथ, अपनी वाक्पटुता भरी बातों में तुरंत जवाब देता, 'वह क़म्मम शरीफ़ में सोते हैं। हकीम ज़ी उन्हें वहाँ दवाइयाँ पीने के लिए देते हैं।'

प्रश्नकर्ता के मन में यह सवाल नहीं आया कि छोटा बच्चा अपने पिता के कदम शरीफ में होने के बारे में इतना निश्चित कैसे था। घर में किसी ने भी उसे कदम शरीफ का नाम लेते नहीं सुना था, इसलिए किसी को भी यह एहसास नहीं हुआ कि बच्चे को अपने पिता के बारे में कुछ अंतर्ज्ञान था।

राहत अफजा और नवाब मिर्जा के बीच हुई बातचीत के कई सप्ताह बाद, जब शम्सुद्दीन अहमद खान के जीवन वृक्ष पर मृत्यु की बिजली गिरने के कई महीने बीत चुके थे और वे काफी समय से एक मौलसारी वृक्ष के नीचे अनंत नींद सो रहे थे, तब वज़ीर ने एक रात उनकी कब्र पर जाकर उन्हें गले लगाने और उस पर अपना सिर रखने का सोचा। यह सब जुलाई 1834 की उस रात की याद में था, जो प्रेम के रहस्यों और अपने ही नशे से भरी थी, जब वह और उनकी आत्मा का सहारा पहली बार एक-दूसरे के आलिंगन में थे। अप्रत्याशित रूप से, नवाब मिर्जा ने उनसे असामान्य हठपूर्वक आग्रह किया: चाहे देर हो जाए, वे अपनी अम्मा जान के साथ वहाँ जाएँगे जहाँ वे जा रही थीं। वज़ीर को झुकना पड़ा और वे, हबीबा के साथ, एक बंद पालकी में सवार होकर कदम शरीफ गए।

वे अभी उतरे ही थे कि अचानक नवाब मिर्जा ने कहा, 'अम्मा जान, मेरे पिता की देखभाल करने वाला हकीम जी कहाँ है?'
वज़ीर दंग रह गई। भला किस बात से बच्चे को अपने पिता के चिकित्सक के बारे में पूछने की ज़रूरत पड़ी? फिर उसे समझ आया कि नवाब मिर्ज़ा, घर में उसके और दूसरों द्वारा कभी-कभार क़दम शरीफ़ का ज़िक्र किए जाने से, अनजाने में यह जान चुका था कि क़दम शरीफ़ ही वह जगह है जहाँ उसके पिता मिलेंगे। उसे राहत अफ़ज़ा और दूसरों से पहले ही पता था कि उसके पिता बीमार हैं। इस प्रकार उसने अपनी सरल बुद्धि से सब कुछ समझ लिया।
उसने अपनी सिसकियों को रोकते हुए दृढ़ विश्वास के साथ कहा, 'वे दोनों यहीं हैं, मेरे प्यारे बच्चे, इस कब्र के नीचे। वहाँ एक सुंदर कमरा है जहाँ तुम्हारे पिता विश्राम करते हैं।'
'मैं भी जाऊंगा... अभी वहीं चलो, अम्मा जान!' उसकी आवाज में फिर से हठ का भाव आ गया था।
वज़ीर घबरा गई; अपने बेटे का ध्यान इस मुद्दे से हटाना एक कठिन काम था, लेकिन उसके भारतीय-मुस्लिम मन ने बच्चे की अपने पिता के पास जाने की इच्छा में अपशकुन देख लिया। वह जानती थी कि बुरी बातें, चाहे मासूमियत से या मज़ाक में ही क्यों न कही जाएं, सच होने की प्रवृत्ति रखती हैं।
"चुप रहो! ऐसी बातें मत कहो, जान। अल्लाह मियां तुमसे नाराज़ हो जाएंगे। हकीम साहब तुम्हारे पिता के ठीक होते ही उन्हें घर वापस भेज देंगे।"
वह यह नहीं जान सकीं कि वह बच्चे को अपनी बातों की सच्चाई के प्रति कितना आश्वस्त कर पाई थीं, और न ही यह कि बच्चे की कल्पना ने उसके मन में और उसकी आँखों के सामने उसके पिता की वास्तविकता की कितनी छवि बना दी थी। नवाब मिर्ज़ा कई वर्षों तक यही कहते रहे कि उनके पिता क़दम शरीफ़ में एक हकीम के साथ रह रहे हैं। धीरे-धीरे यह विश्वास—या आशा—उनके हृदय से मिटती चली गई। जब वे बड़े हुए, तो उन्होंने अनजाने में ही मिर्ज़ा फ़तहुल मुल्क बहादुर की छवि को अपने हृदय के उस कोने में बसा लिया जहाँ पहले उनके पिता थे। फिर भी, अपने जीवन के उत्तरार्ध में कई कठिन परिस्थितियों और क्षणों में, उनका मन अनजाने में ही एक सुंदर, गंभीर, ईमानदार और प्रभावशाली व्यक्तित्व की छवि बना लेता था, जिसके बारे में उन्हें पूरा विश्वास होता था कि वह क़दम शरीफ़ के हकीम साहब हैं, जो उन्हें उनके पिता का समाचार देने आए हैं।
अब फरवरी 1836 का कोई दिन था, और बेटा खुशी-खुशी अपनी माँ का साथ छोड़कर चला गया, इस उम्मीद में कि उसे खानम का बाज़ार वाले घर से भी ज़्यादा लाड़-प्यार मिलेगा। शाम होते-होते वज़ीर को बुखार चढ़ गया और जल्द ही वह बेहोशी की हालत में बिस्तर पर पड़ गई। वह राहत अफ़ज़ा को अपने पास बुलाती और उनसे ज़िद करती कि वह तुरंत तिराहा बैरम खान जाकर अपने बच्चे को उसके मामा-मामी से वापस ले आएँ। कभी-कभी वह अमीर मिर्ज़ा या बादशाह बेगम से गुहार लगाती कि वे आकर उसकी देखभाल करें या कम से कम उसे गले लगा लें। फिर भी उसने कभी मार्स्टन ब्लेक या शम्सुद्दीन अहमद खान का नाम नहीं लिया।
अपनी बीमारी के दौरान, जब अक्सर लोग उनके जीवन को लेकर चिंतित होते थे, तब राहत

अफजा और वनिसी उनकी देखभाल करते थे। मंझली, अकेले या यूसुफ अली खान के साथ, हर दूसरे दिन उनसे मिलने आते थे। दोनों उनका हाथ थामते, उनके माथे को सहलाते और उन्हें दिलासा देते। लेकिन यह आंत्र ज्वर था; इसे अपना निर्मम, विनाशकारी रूप धारण करना ही था। तेरहवें दिन, वज़ीर की छाती और पेट पर छोटे-छोटे उभरे हुए दाने और लाल चकत्ते दिखाई दिए —इसीलिए इस बुखार को हिंदी में मोती झारा कहा जाता है—जिससे उनका तापमान दो-तीन डिग्री कम हो गया, लेकिन वे और भी कमजोर हो गईं। लंबे समय तक, पूर्वी और पश्चिमी चिकित्सा पद्धतियों में इस बात पर सहमति थी कि बुखार—विशेषकर आंत्र ज्वर—में रोगी को भूखा रखा जाना चाहिए। ग्रीको-इस्लामिक चिकित्सा पद्धति में, रोगी को केवल औषधीय रस दिए जाते थे। बुखार की पूरी अवधि के दौरान, वज़ीर को उदाहरण के तौर पर मीठी सौंफ का रस और अदरक का पतला रस पिलाया गया, और बुखार शुरू होने के एक सप्ताह या दस दिन बाद अनार का मीठा रस पिलाया गया।

अंततः, बाईसवें दिन की सुबह वज़ीर का बुखार उतर गया। उसे दस दिनों तक कमज़ोर, तरल आहार पर रखा गया, उसके बाद उसे नरम भोजन दिया जाने लगा। उसकी बीमारी और पूरी तरह ठीक होने में लगभग दो महीने लग गए। यह सब, उसके छोटे बेटे का बिछड़ना, उसकी सुरक्षा को लेकर उसकी चिंता, और उसकी मानसिक स्थिति में आया बदलाव: इन सबने उसे चिड़चिड़ा और उदास बना दिया था, और उसे अपने मन और जीवन की इस पीड़ा से उबरने का कोई रास्ता नज़र नहीं आ रहा था।

दिसंबर 1835 तक, अंग्रेज़ों को अंततः यह विश्वास हो गया था कि शम्सुद्दीन अहमद खान की फांसी के विरोध में शांति भंग होने या हिंसक प्रदर्शन होने की कोई संभावना नहीं है। जासूसों ने लगातार रिपोर्ट दी कि लोग अब भी उन्हें शोक के साथ याद करते हैं, लेकिन वे भाग्य और सर्वशक्तिमान की इच्छा को स्वीकार कर चुके थे।

आम धारणा यही थी कि शम्सुद्दीन अहमद खान फ्रेजर की हत्या में शामिल हो भी सकता है और नहीं भी, लेकिन यह महज़ उसका दुर्भाग्य था कि उसके अपराध की ओर इशारा करने वाले कई अहम सुराग मिल गए। अनिया का आचरण स्पष्ट रूप से दुष्टतापूर्ण और विश्वासघाती था। यह भी अक्सर कहा जाता था कि गोली शम्सुद्दीन अहमद खान ने नहीं चलाई थी; तो उसे दोषी और अधिकतम सज़ा का हकदार कैसे माना जा सकता है? दूर इलाहाबाद में, फैनी पार्क्स ने अपनी डायरी में लिखा कि उस शहर में आम राय यह थी कि अगर करीम खान को फांसी देना जायज़ भी ठहराया जा सकता है, तो नौकर के अपराध के लिए मालिक को सज़ा देने का कोई कारण नहीं था।

खैर, अंग्रेजों का मन शांत हो जाने के बाद, मेटकाफ ने फ्रेजर की कब्र पर दफनाने और समाधि बनाने के बारे में अपनी अनौपचारिक समिति से सलाह ली। यह तय किया गया कि हालांकि उस समय उन्हें बिना किसी चिह्न वाली कब्र में चुपचाप दफनाना उचित था, लेकिन अब समय आ गया है कि उनके अंतिम संस्कार को उसी शान-शौकत और शक्ति एवं अधिकार के साथ निकाला जाए जैसा कि उनके जीवनकाल में था। उनकी कब्र पर एक उपयुक्त समाधि बनाई जानी चाहिए। जेम्स स्किनर ने प्रस्ताव दिया कि शव को कब्र से निकालकर कश्मीरी गेट स्थित उनके चर्च, सेंट

जेम्स के प्रांगण में एक उपयुक्त स्थान पर फिर से दफनाया जाए। उन्होंने कब्र पर एक उपयुक्त मकबरे के निर्माण के लिए आर्थिक सहायता देने की भी पेशकश की। दोनों प्रस्तावों को सहर्ष स्वीकार कर लिया गया।

जेम्स स्किनर ने पैसे की कोई कमी नहीं छोड़ी। उन्होंने संगमरमर से एक अष्टकोणीय मकबरा बनवाया, जो स्पष्ट रूप से फिरंगी शैली का था, लेकिन साथ ही यह मुगल काल की उस प्रथा की नकल करने का भी प्रयास था जिसमें संगमरमर की सुंदरता को कई रंगों के फूलों की नक्काशी से निखारा जाता था। प्राचीन यूनानियों की याद दिलाते हुए, इमारत संगमरमर के आठ डोरिक स्तंभों पर टिकी थी, लेकिन जिस चबूतरे पर संरचना खड़ी थी, जो इसके आधार का भी काम करता था, वह सादे लाल बलुआ पत्थर का था। छत को अधिक सहारा देने के लिए, स्तंभों को ऊपर से चौड़ा किया गया था, और एक सादे संगमरमर के कंगनी ने छत को एक और चबूतरा प्रदान किया था। ठीक नीचे के संगमरमर पर काले संगमरमर की नक्काशी की एक पट्टी थी। इमारत की सबसे प्रमुख विशेषता इसका ऊँचा, भारी और गोल शिखर था जो एक बड़े, निचले गुंबद के ऊपर स्थित था। शिखर और गुंबद दोनों संगमरमर के थे; उन्हें अस्पष्ट रूप से हिंदू शैली में, कुछ हद तक कमल के फूल की तरह तराशा गया था। कुल मिलाकर, यह एक विशाल मुकुट जैसा दिखता था।
स्किनर ने समाधि के पत्थर पर निम्नलिखित पाठ खुदवाया था:

अवशेष
इस स्मारक के नीचे दफनाया गया
कभी सजीव थे
बहादुर और ईमानदार के रूप में
एक आत्मा
जैसा कि किसी पुरुष को कभी भी प्रदान किया गया था
उसके द्वारा
निर्माता।
एक भाईचारा
इसके निर्माण का कारण यही है।
जब उसका अपना शरीर धूल में मिल जाएगा
यह बना रह सकता है
के तौर पर
शहीद स्मारक
जो लोग शोक व्यक्त करने में सक्षम हैं उनके लिए
अचानक और दुखद हानि
एक का
वह उसे अपनी जान से भी ज्यादा प्रिय था।

विलियम फ्रेजर
22 मार्च 1835 को निधन हो गया

इसमें कोई शक नहीं कि शब्द अत्यंत गरिमामय, हृदयस्पर्शी और शोक से परिपूर्ण थे। साथ ही, इन शब्दों ने यह सुनिश्चित किया कि आगंतुक के मन में फ्रेजर के चरित्र की सत्यनिष्ठा और एक बेदाग, लगभग आदर्श, व्यक्ति के रूप में उनकी सार्वभौमिक लोकप्रियता के बारे में कभी कोई संदेह न रहे। उनकी हत्या का कोई संकेत नहीं दिया गया। स्किनर ने कहीं भी अपना नाम नहीं लिया, लेकिन इशारों में बताया कि वह फ्रेजर के भाई के समान थे क्योंकि वह उनके बेहद करीबी दोस्त थे। यह भी संकेत दिया गया कि यद्यपि वह अपने मित्र के लिए जीवन भर शोक मनाएंगे, उनके बाद भी अन्य शोक मनाने वाले होंगे, और यह इमारत वास्तव में आने वाली पीढ़ियों के लिए एक स्मारक है।
इस रचनाकार ने शोक पर विशेष बल दिया; और शोक से भी अधिक, इस रचना में अंग्रेजों के नस्लीय गौरव पर बल दिया गया; सबसे बढ़कर, यह अंग्रेजी सत्ता की महिमा का एक अप्रत्यक्ष गुणगान था: एक ऐसी सत्ता जो निस्संदेह शाश्वत होने वाली थी। लेकिन इतिहास ने अपने गुप्त पाठों और भविष्य के अर्थों को अधिक समय तक छिपाए नहीं रखा। एक चौथाई सदी भी नहीं गुजरी थी कि विद्रोही लड़ाकों ने कंपनी की सेनाओं के विरुद्ध कश्मीरी गेट क्षेत्र की हर एक ईंट और पत्थर की रक्षा के लिए अपना खून बहा दिया। फ्रेजर का मकबरा भी गली-गली की लड़ाई का शिकार हो गया: सेंट जेम्स चर्च और फ्रेजर का शिलालेख तो खड़े रहे, लेकिन फ्रेजर के मकबरे के ऊपर स्थित गुंबदनुमा संरचना, जो प्रतीकात्मक मुकुट के समान थी, पूरी तरह से ध्वस्त हो गई।

धीरे-धीरे वज़ीर का दुख कम होने लगा। इसके साथ ही, कदम शरीफ़ जाना भी कम हो गया। अब उनकी दिनचर्या उर्स से एक दिन पहले तक ही सीमित हो गई थी: वे कुछ आँसू बहातीं, नवाब के नाम पर दान देतीं और सूर्यास्त से पहले घर लौट आतीं। नवाब मिर्ज़ा के पालन-पोषण और देखभाल का बोझ अब उन पर नहीं था, फिर भी उनके पास आराम से जीवन जीने के लिए पर्याप्त साधन नहीं थे। एक संभ्रांत महिला की तरह जीवन जीने के लिए कीमती गहने, महंगे कपड़े, कम से कम एक रथ और कई नौकरों की आवश्यकता होती है। सभी अतिरिक्त खर्चों में कटौती के बावजूद, उनकी नियमित आय इन चीजों के लिए पर्याप्त नहीं थी। उन्होंने चुपके से - और विशेष रूप से मंझली को बिना बताए - अपने कुछ महंगे गहने और भारी सोने या चांदी के काम वाले कपड़े बेचना शुरू कर दिया।
घर से बाहर उनका निकलना पहले से भी कम हो गया था: अब तो वह मांझली से भी छह-आठ हफ़्तों में एक बार या त्योहारों के दिनों में ही मिलने जाती थीं, और वो भी थोड़े समय के लिए। मांझली के अक्सर आने की वजह से उन्हें नवाब मिर्ज़ा को देखने की कमी नहीं खलती थी। उनके जीवन का एकमात्र आधार उस लड़के के लिए उनका प्यार ही था। उन्होंने बड़ी पीड़ा के साथ यह बात समझ ली थी कि उनके जीवन को जोड़े रखने वाला धागा शम्सुद्दीन अहमद के लिए उनका शोक था। अगर वह उस शोक को अपने हृदय में समाहित कर पातीं, तो शायद वह अपने शेष दिन शांति से नहीं, बल्कि दृढ़ मन से जी पातीं, उस हृदय के सहारे जो दुःख से भली-भांति परिचित था और मानव जगत में सार्वभौमिक क्षति की अनुभूति रखता था।
उसने खुद से दृढ़ता से कहा: मैं अब कहीं नहीं जा रही; मैं नवाब मिर्ज़ा से प्रेम करने और अपने करीबियों को संजोने के अलावा कुछ नहीं करूंगी। अपने अर्ध-अंधेरे शयनकक्ष में सिमटकर लेटी हुई, वह अक्सर सत्रहवीं शताब्दी के फ़ारसी कवि तेहरान के सैदी की एक कविता के बारे में सोचती और आशा करती कि उसका जीवन उस कविता की जीवंत व्याख्या बन जाएगा। कवि ने कहा था:

प्रेम के बिना, टूटे हुए दिल के टुकड़े बिखर जाते हैं; उनका प्रेम उस धागे की तरह था जिसने मेरी दुख भरी कहानी के पन्नों को एक साथ बांधे रखा।
उसे यह नहीं पता था कि भाग्य और निर्णय की अदालत के पदाधिकारियों ने शायद उसकी किस्मत का नक्शा पेंसिल (कलम-ए सुरमा) से बनाया था, और उसकी रेखाओं को आसानी से पुनर्व्यवस्थित, मिटाया या नए सिरे से बनाया जा सकता था।
रामपुर के नवाब अहमद अली खान का 20 जुलाई 1840 को निधन हो गया। उनकी एकमात्र संतान शम्सा खातून थीं। रोहिल्ला समुदाय एक महिला के शासन को पसंद नहीं करता था। इस गतिरोध को गवर्नर जनरल ने तुरंत सुलझा लिया, जिन्होंने पिछले नवाब के पुत्र नवाब मुहम्मद सईद खान को राज्य का कार्यभार संभालने के लिए आमंत्रित किया। मुहम्मद सईद खान उस

समय अवध के पास के जिले पीलीभीत में डिप्टी कलेक्टर के पद पर कार्यरत थे। उन्होंने तुरंत सहमति दे दी और 26 अगस्त 1840 को रामपुर के नवाब के रूप में पदस्थापित हुए। उन्होंने तुरंत अपने इकलौते पुत्र नवाब यूसुफ अली खान को रामपुर बुलाया और उन्हें उत्तराधिकारी घोषित किया। उन्होंने रामपुर का नाम बदलकर मुस्तफाबाद भी कर दिया, लेकिन यह नया नाम लोकप्रिय नहीं हुआ।

इस प्रकार दिल्ली में नवाब यूसुफ अली खान के एक रईस के रूप में जीवन का अंत हुआ और सत्ता, प्रभाव और धन के क्षेत्र में उनका सितारा चमकने लगा। वज़ीर के लिए इसका तात्कालिक परिणाम उमदा खान और नवाब मिर्ज़ा का रामपुर जाना था। उमदा खान ने नवाब मिर्ज़ा को साथ लेकर शाहजहानाबाद में यथासंभव बार-बार आने का वादा किया।

रामपुर के छोटे और व्यस्त शहर में हालात कुछ अलग थे। यूसुफ अली खान जल्दी ही राज्य के मामलों में सक्रिय हो गए। रामपुर दिल्ली से काफी छोटा था, इसलिए शासक और उनके प्रमुख लोगों को प्रजा आसानी से देख सकती थी और उनकी उपस्थिति का पता भी आसानी से चल जाता था; उनकी अनुपस्थिति का भी उतना ही आसानी से पता चल जाता था। नवाब मिर्जा, जो अब लगभग दस वर्ष के थे, को भारत-मुस्लिम अभिजात वर्ग की परंपरा में आगे बढ़ने के लिए औपचारिक और गहन शिक्षा की आवश्यकता थी। इसलिए उन्हें बहुभाषी, सभी पारंपरिक विषयों, धार्मिक और धर्मनिरपेक्ष, के विशेषज्ञ, शब्दकोशकार और कवि मौलवी ग़ियासुद्दीन इज्जत रामपुरी की देखरेख में रखा गया। नवाब यूसुफ अली खान के इकलौते बेटे, नवाब कलब-ए अली खान को भी उसी मौलवी ग़ियासुद्दीन रामपुरी के पास रखा गया; इस प्रकार वे खेल-कूद और सहपाठी बन गए। नवाब यूसुफ अली खान राज्य के मामलों में व्यस्त थे, उमदा खानम अपनी विशाल हवेली के अंदर नियमित और औपचारिक मामलों में व्यस्त थीं, और नवाब मिर्जा अपनी शिक्षा में व्यस्त थे: किसी के पास भी दिल्ली की छोटी लेकिन कुछ हद तक जोखिम भरी यात्रा करने का समय या अवसर नहीं था।

नवाब यूसुफ अली खान के रामपुर चले जाने का एक और परिणाम यह हुआ कि मुहम्मद यूसुफ और उनकी बेटी छोटी बेगम (नवाब मिर्जा) के बीच प्रेम और स्नेह का नया पुल अपनी नींव से उखड़ गया। संभवतः इसी कारण उनका अंत शीघ्र हुआ। उन्हें मसालेदार भोजन का बहुत शौक था। अकेले रहते हुए और पत्नी के बिना, जो उनके खान-पान पर नज़र रखती और उसे नियंत्रित करती, वे उन खाद्य पदार्थों के लगभग आदी हो गए, जिनके प्रति उनके चिकित्सक ने उन्हें बार-बार चेतावनी दी थी। उनका जिगर कमजोर था (ग्रीक-इस्लामिक चिकित्सा पद्धति के अनुसार, अधिक गरम हो गया था) और उनके पेट की परतें अम्लीय और अम्लता बढ़ाने वाले खाद्य पदार्थों से पूरी तरह से गल चुकी थीं, जिनका वे कभी विरोध नहीं कर पाए। उन्हें हर तरह के तले हुए व्यंजन, खट्टे व्यंजन, नमकीन और सरसों के तेल या घी में पका हुआ भेड़ का मांस बहुत पसंद था।

जिस समय की हम बात कर रहे हैं, उस समय दिल्ली में शाह आलम का 'सींग वाले जानवरों' (अर्थात 'गाय') के वध पर लगा प्रतिबंध, कम से कम सार्वजनिक रूप से, अभी भी माना जाता था। भेड़ और बकरी का मांस प्रचुर मात्रा में उपलब्ध था। बकरी का मांस सबसे पसंदीदा था।

अमीर और 'नाजुक' स्वभाव वाले लोग भेड़ का मांस पसंद नहीं करते थे, क्योंकि इसे बेस्वाद, बदबूदार, अम्लीय, रेशेदार और 'गर्म और गीला' माना जाता था। संयोगवश, उन दिनों, लोहारू के तत्कालीन शासक अमीनउद्दीन अहमद खान के सबसे बड़े पुत्र मिर्ज़ा अलाउद्दीन अहमद खान और मिर्ज़ा ग़ालिब के बीच मांस, सब्जियों और आमों पर कविताओं का आदान-प्रदान हुआ। ग़ालिब ने लिखा:

बरसाती मौसम आ गया है, साथ ही बढ़िया शराब पीने और आम खाने का आनंद भी। क्या मैं अंधा हूँ कि मौसम की शुरुआत में ही दिल्ली छोड़कर लोहारू चला जाऊँ? वहाँ अनाज के सिवा कुछ नहीं है, हालाँकि अनाज से ही जीवन चलता है: वहाँ न अंगूर हैं, न आम। रसोइयों को आदेश दिया गया: जाओ और पूछो, कल के लिए क्या बन रहा है? उन्हें इमली के फूल कहाँ मिलेंगे? और कड़वा करेला कहाँ मिलेगा? लोहारू में मेमने के रेशेदार मांस के सिवा कुछ नहीं है; कहो, इससे मुझे क्या आनंद मिलेगा?

स्वयं एक कवि रहे मिर्ज़ा अलाउद्दीन अहमद खान ने उसी छंद और शैली में उत्तर स्वरूप निम्नलिखित कविता लिखी:

कितना अच्छा होगा अगर परमपिता दिल्ली छोड़कर मौसम की शुरुआत में लोहारू आ जाएँ! हरे-भरे सरओली आम और अंगूर हर शाम डाक गाड़ी से यहाँ पहुँचते हैं। वे रसोइयों को आदेश दें: अरे, सब जल्दी पकाओ। बगीचे से इमली के फूल तोड़ लाओ, और जंगल से सबसे कड़वा करेला ले आओ। और बकरी का मुलायम, ताजा, रेशे रहित मांस भी ले आओ: ओह! उसे खाने में कितना आनंद आएगा!

मुहम्मद यूसुफ जानते थे कि उनका कमजोर पेट मेमने के सख्त, रेशेदार मांस को ठीक से पचा नहीं पाता था। तली हुई और खट्टी चीजों के प्रति उनके लगाव ने उनके जिगर को कमजोर कर दिया था, जिससे भूख कम हो गई, पेट में गैस बनने लगी और बार-बार उल्टी होने लगी। उनका वजन घटकर लगभग सौ पाउंड रह गया था; उनकी धंसी हुई आंखों के नीचे काले घेरे पड़ गए थे, जो शरीर में आयरन और अन्य पोषक तत्वों की कमी को दर्शाते थे, जो रक्त की गुणवत्ता और मात्रा को बढ़ाते हैं। जब तक वे नवाब मिर्जा के माध्यम से वजीर खानम के संपर्क में थे, वजीर उनकी खान-पान की आदतों पर कड़ी नजर रखते थे। अब वे फिर से अपने बचकाने तौर-तरीकों पर लौट आए थे।

नवंबर 1840 का आखिरी दिन था, जब मुहम्मद यूसुफ ने अचानक बहुत सारा खून उगला। उन्हें पता था कि उनका संसार का समय समाप्त हो गया है। उन्होंने किसी तरह खुद को साफ किया, नए कपड़े पहने और अपनी आत्मा और अपने बच्चों के लिए एक छोटी सी प्रार्थना की। वे नमाज़ की चटाई पर लेटे हुए कुरान पढ़ रहे थे। लेकिन कुरान पढ़ना शुरू करने से पहले, उन्होंने एक गली के बच्चे को बारी बेगम के घर भेजा और उनसे तुरंत आकर उनके अंतिम संस्कार की व्यवस्था करने को कहा। बारी बेगम जल्दी आईं, लेकिन छोटी के घर पर एक मिनट रुककर उन्हें बुरी खबर दी। वे अपने पिता के घर गईं और उन्हें नमाज़ की चटाई पर सिर झुकाए हुए पाया। उनके हाथों में कुरान बड़ी मुश्किल से थी, और वे लगातार थूक रहे खून से पवित्र पन्नों को बचाने की पूरी कोशिश कर रहे थे।

जैसे ही बारी अंदर आया, हकीम गुलाम नजफ खान आ गए; उन्होंने मरीज की नब्ज़ जाँची और पाया कि वह बेहद कमज़ोर, लगभग न के बराबर थी: हकीमों की भाषा में कहें तो, 'कीड़े की तरह रेंगती हुई'। उन्होंने मरते हुए प्राणों के प्रति सहानुभूति और सम्मान में अपना सिर झुकाया और बारी से कहा, 'अब कुछ नहीं किया जा सकता, मुझे खेद है। उन्हें काबा की ओर मुख करके लिटा दीजिए, पवित्र कुरान का सूरह यासीन पढ़िए और उनके अंतिम संस्कार की व्यवस्था कीजिए।'
जब वह बाहर जा रहा था, तब वज़ीर उससे हॉल में मिली। वह रोते हुए बोली, 'मेरे पिता कैसे हैं? हे हकीम साहब, कृपया उन्हें ईश्वर की कृपा से बचा लीजिए!'
'बीबी, अब सब कुछ अल्लाह के हाथ में है। हम यहाँ बेबस हैं।'
छोटी बेगम रोती-बिलखती, लड़खड़ाती, भय और दुःख से कांपती हुई घर में भागी। वह अपने पिता के पलंग के पास पहुँची। बड़ी बेगम उनके एक हाथ को धीरे से सहला रही थीं। आँसुओं से भीगा चेहरा लिए, उनके सामने वही कुरान की प्रति थी जिसे मुहम्मद यूसुफ पढ़ रहे थे। बड़ी बेगम के पति या-सीन का अध्याय पढ़ रहे थे। मुहम्मद यूसुफ की आँखें खुली थीं, लेकिन मानो उनमें कोई दृष्टि न हो, वे अंतर्मुखी हों। छोटी बेगम को किसी तरह लगा कि उनमें बुझती हुई रोशनी की एक छोटी सी किरण धुंधली सी दिखाई दे रही है। वह दौड़कर मुहम्मद यूसुफ के चरणों में सिर रखकर सिसकते हुए बोलीं, 'अब्बा जी, कृपया एक पल के लिए मेरी ओर देखिए और मुझे क्षमा कर दीजिए।'
मरणासन्न व्यक्ति का दूसरा हाथ काँप रहा था, मानो वह सांत्वना और आशीर्वाद देने के लिए उसे ऊपर उठाना चाह रहा हो। वज़ीर ने लगभग उसका हाथ झट से अपने हाथ में ले लिया। बारी ने कहा, 'ईमानदारी की प्रतिज्ञा और गवाही कहो। छोटी, अभी कहो। रोना मत।'
उसके होंठों से शब्द अभी निकले ही थे कि मुहम्मद यूसुफ को ज़ोरदार हिचकी आई और उसके मुँह से खून की बौछार निकल पड़ी। लड़कियों ने खून की बौछार रोकने के लिए हाथ बढ़ाए, लेकिन मुहम्मद यूसुफ की जीवन यात्रा को अज्ञात की ओर बढ़ने से रोकना अब संभव नहीं था।
जब मांझली को अपने पिता के निधन की खबर मिली, तो वह जितनी जल्दी हो सके वहाँ पहुँची और रोते-बिलखते उस घर में दाखिल हुई जिसे उसने बहुत पहले छोड़ दिया था। वह अपने पिता के पार्थिव शरीर के अंतिम दर्शन में तो उपस्थित नहीं हो सकी, लेकिन इस घटना ने बहनों को प्रेम और सहभागिता के बंधन में फिर से बाँध दिया। पुरानी झिझक, आपसी दुख और जीवन भर की दूरियों को भुलाकर, वे पहले जैसी हो गईं, एक-दूसरे की इच्छा और भावनाओं को सहज रूप से समझती थीं।
चालीसवें दिन की रस्मों, प्रार्थनाओं और गरीबों को भोजन बांटने के बाद, वे अपने पैतृक घर के बचे हुए हिस्से के बंटवारे पर चर्चा करने के लिए बैठ गए। सबसे बड़ी होने के नाते, अनवरी खानम ने चर्चा शुरू की और तुरंत प्रस्ताव रखा कि दोनों बड़ी बहनें छोटी के पक्ष में अपना दावा छोड़ दें: घर और उसमें जो कुछ भी है, सब कुछ छोटी को मिल जाना चाहिए। उमदा खानम तुरंत सहमत हो गईं, लेकिन छोटी बिल्कुल भी सहमत नहीं हुईं। उन्होंने कहा कि उन्हें यह सुझाव अच्छा लगा और वे आभारी हैं, क्योंकि यह बड़ों के दिलों में केवल प्रेम से प्रेरित था। लेकिन शायद उन्होंने

ऐसा इसलिए भी किया, क्योंकि वह दुनिया में अकेली रह गई थीं।
उन्होंने दृढ़तापूर्वक सुझाव दिया कि उनके पिता की सभी संपत्ति, जिसमें घर भी शामिल है, बेच दी जाए और उससे प्राप्त राशि फतेहपुरी स्थित रहिमिया मदरसा को शाश्वत दान के रूप में दे दी जाए, ताकि उस स्कूल का उपयोग हो सके। सभी ने इस सुझाव का समर्थन किया और फिर बारी बेगम के पति मौलवी नज़ीर अहमद के प्रयासों से इसे तुरंत लागू कर दिया गया।
लगभग दो सप्ताह बाद, बहनें अपना सामान्य जीवन फिर से शुरू करने में सक्षम हो गईं: अनवरी अपने पति और छोटी बच्ची के साथ फाटक हबाश खान में, उमदाह रामपुर में अपनी हवेली में और वज़ीर खानम चांदनी चौक में अपने घर में रहने लगीं।
पूरा एक साल शांति से बीत गया। दिल्ली में रहते हुए नवाब मिर्ज़ा फ़ारसी भाषा में काफ़ी निपुण हो चुके थे। अरबी में वे प्रारंभिक व्याकरण और वाक्य रचना की कुछ शुरुआती किताबें पढ़ चुके थे। गणित, तर्कशास्त्र, छंदशास्त्र, अलंकारशास्त्र और काव्यशास्त्र जैसे अन्य विषयों में भी वे कमज़ोर नहीं थे। सबसे बढ़कर, उन्हें शब्दों की अच्छी समझ थी और भाषा का अच्छा ज्ञान था। रामपुर में सभी विषयों में उनकी प्रगति संतोषजनक थी। अक्सर उन्हें अपनी माँ की कमी खलती थी, कभी-कभी गहरी यादों के साथ, लेकिन अब वे अपने साथियों और बड़ों से भी बातचीत का आनंद लेने लगे थे। वे बड़े होने का एहसास करने लगे थे और इस बात से अवगत होने लगे थे कि उनकी वास्तविक दुनिया में उनकी माँ, वे स्वयं और कुछ अन्य महिलाएँ ही शामिल हैं। वे इस बात की भी सराहना करते थे कि उनकी मौसी उनसे बहुत प्यार करती थीं; जब भी संभव होता, वे उनके साथ दिल्ली जाकर उनकी माँ से मिलने जाती थीं। दिल्ली में बार-बार न जा पाने को लेकर उनकी चिंता उनकी मौसी को शायद ही पसंद आती।
अब मई 1842 का महीना था। नवाब मिर्ज़ा की उम्र ग्यारह साल से थोड़ी कम थी, लेकिन इस्लामी चंद्र पंचांग के अनुसार वह अब सवा ग्यारह साल का हो चुका था। उसके ऊपरी होंठ पर बहुत बारीक रोएँ उगने लगे थे, हालाँकि गहरे रंग के कारण वे मुश्किल से ही दिखाई दे रहे थे। उमदा खानम ने रोएँ के स्वागत और उस लड़के की लंबी उम्र और समृद्धि के लिए प्रार्थना करने हेतु बड़े पैमाने पर समारोह आयोजित करने की योजना बनाई, जो अब वयस्कता की ओर कदम बढ़ाने वाला था। वज़ीर ने खुलेआम समारोह आयोजित करने के सभी प्रस्तावों को दृढ़ता से अस्वीकार कर दिया: वह अभी भी अंग्रेज़ी भाषा को लेकर आश्वस्त नहीं थी, और उसे समय की —या समय के बच्चों की—बुरी नज़र का भी डर था।
उम्दा खानम दृढ़ थीं, हालांकि उन्होंने वज़ीर की आशंकाओं को दूर करने के लिए अपनी योजनाओं में भारी कटौती की: नाचने वाली लड़कियों का कोई कार्यक्रम नहीं होगा; इस अवसर के लिए उपयुक्त गीत गाने वाली पेशेवर महिला गायिकाओं का कोई कार्यक्रम नहीं होगा, यानी एक लड़के के वयस्क होने की उम्मीद; मुल्लाओं द्वारा कोई प्रार्थना नहीं होगी; यहां तक कि कोई दावत भी नहीं होगी। लेकिन पारंपरिक समारोह अवश्य होगा: विशेष भोजन पकाया जाएगा जिसे इस अवसर के लिए विशेष रूप से पसंद किए जाने वाले मध्यम आकार के मिट्टी के बर्तनों में रखा जाएगा, इसके बाद परिवार द्वारा प्रार्थना और भोजन का वितरण होगा।
इस विषय पर लंबे समय तक पत्रों के आदान-प्रदान के बाद, वज़ीर समारोह को और भी छोटे

पैमाने पर आयोजित करने के लिए सहमत हो गए। वह जुलाई 1842 के अंतिम सप्ताह में रामपुर पहुंचीं और नवाब यूसुफ अली खान की हवेली के पास एक मध्यम आकार के आवास में ठहरीं। उमदा खानम ने घर को विशेष रूप से सुसज्जित करवाया और सभी आवश्यक सुख-सुविधाओं से युक्त करवाया। उनके आगमन के एक घंटे के भीतर ही नवाब मिर्ज़ा भी अपनी माता के ठहरने की अवधि के लिए वहां आ गए।

वज़ीर ने नवाब मिर्ज़ा के लंबे कद को सिर से पैर तक देखा, उन्हें गले लगाया और प्रतीकात्मक रूप से उनके कष्टों को अपने ऊपर लेने का संकेत दिया। आँखों में आँसू भर आए, उसने कहा, "अल्लाह, नवाब मिर्ज़ा, अल्लाह आपको सलामत रखे! आप इतनी जल्दी एक नेक नौजवान बन गए हैं!"

नवाब मिर्ज़ा के कुछ कहने से पहले ही राहत अफ़ज़ा ने बीच में टोकते हुए कहा, "जी हाँ! जी हाँ! और भला उससे क्या ही हो, वो बिलकुल सीनियर नवाब साहब जैसा दिखता है। उसका रंग बस थोड़ा सा गहरा है, पर उसका चेहरा... ऐसा लगता है जैसे सीनियर नवाब साहब का चेहरा हो..." अपनी अशिष्टता और युवावस्था के जोश को महसूस करते हुए वह असमंजस में पड़ गई और चुप हो गई।

उसने वज़ीर खानम की ओर देखा और मन ही मन कहा, 'काश, मुँह खोलने से पहले ही मेरी ज़बान काट दी जाती!' वज़ीर के चेहरे पर दर्द, दुःख, पीड़ा और क्रोध के भाव तेज़ी से बदल रहे थे। उसका जबड़ा भींच गया था, सिर झुका हुआ था, ऐसा लग रहा था मानो वह बस फूट-फूट कर रोने ही वाली हो और अपने गले को बंद रखने के लिए अपने शरीर और इच्छाशक्ति की पूरी ताकत लगा रही हो। पहले के दिनों में, नवाब मिर्ज़ा के लिए ऐसी स्थिति में अपनी माँ के गले में दोनों बाहें डालकर, थोड़ा झूलना-झूलना, उनकी गर्दन या छाती से सटकर, बिल्ली की तरह म्याऊँ-म्याऊँ करना और पल भर में उनका दुख दूर कर देना मुश्किल नहीं था। लेकिन अब वह खुद को किसी अजीब से बंधन में, यहाँ तक कि पाबंदी में भी पा रहा था। यह सिर्फ़ एक साल या उससे ज़्यादा समय तक दो अलग-अलग और दूर-दराज के स्थानों में रहने से पैदा हुई दूरी ही नहीं थी। नवाब मिर्ज़ा अब एक लंबा-चौड़ा, हट्टा-कट्टा लड़का था, उस ज़माने के हिसाब से लगभग एक आदमी। उसकी माँ हमेशा से परी की तरह दुबली-पतली थी और तीन बच्चों की माँ जैसी बिल्कुल नहीं लगती थी। अब जब छह-साढ़े छह साल से उसका किसी पुरुष से कोई संबंध नहीं था, तो उसका युवा और कोमल रूप लगभग कुंवारी जैसा दिखता था। वह अब इकत्तीस वर्ष की थी, लेकिन उसकी चाल-ढाल, उसके वस्त्रों का स्पर्श, दुपट्टे को संभालने में उसकी सहजता, ये सब कुछ यौवन की हल्की सी खुशबू बिखेरता प्रतीत होता था। यह बात विशेष रूप से उसकी आवाज़ पर लागू होती थी, जिसकी मधुरता और चूड़ियों व पायल की हल्की गूंज अभी भी बरकरार थी।

नवाब मिर्ज़ा आवेग में आकर आगे बढ़ा, उसका मन कर रहा था कि वह अपना सिर अपनी माँ की गोद में रख दे, उसका चेहरा अपने हाथों में थाम ले, उसे चूमे और चहचहाए, मानो माँ माँ हो—ठीक वैसे ही जैसे कभी उनके बीच हुआ करता था। लेकिन उसे सहज ज्ञान से पता था कि अब बहुत कुछ बदल चुका है, कई नए अनुभव और भावनाएँ बाधा बन रही हैं; पुराने दृश्यों को

दोहराना संभव नहीं था।
एक बात तो यह थी कि नवाब मिर्ज़ा ने अपनी माँ को अपने पिता के लिए कभी खुलेआम और आँसू बहाते हुए विलाप करते नहीं देखा था। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह थी कि अब उनके हृदय में शम्सुद्दीन अहमद खान की छवि में पहले जैसी ही उदासी थी, लेकिन ऐसा लग रहा था मानो वह किसी धुंध में घुलती हुई अतीत की यादों में खो गई हो। उस छवि की सुगंध और गर्माहट अब भी उनके भीतर गूंज रही थी, लेकिन अब यह बचपन के किसी सपने जैसी थी, जिसे बाद के वर्षों में याद तो किया जाता था, लेकिन पूरी तरह से याद नहीं किया जा सकता था। अब उन्हें ऐसा प्रतीत होता था कि उनके भीतर के सार का स्रोत शम्सुद्दीन अहमद नहीं, बल्कि उनकी माँ थीं। इसी प्रकार, उन्हें पूरा विश्वास था कि उनका बाहरी व्यक्तित्व, उनकी सामाजिक और रचनात्मक क्षमताओं का चित्रण और रंग, उनकी परिष्कृत और वाक्पटुतापूर्ण वाणी, कविताएँ रचने की उनकी क्षमता, सुंदर और शैलीबद्ध वस्तुओं के प्रति उनका आकर्षण: यह सब और भी बहुत कुछ उन्हें केवल वज़ीर खानम से ही प्राप्त हुआ था। उनका मानना था कि सुंदरता, परिष्कार और शालीनता में वह उसकी सबसे छोटी उंगली में समाहित आकृति से भी कम थे, लेकिन कम से कम वह उसका एक छोटा सा अंश तो थे ही।
वह अपने पिता के घर में किसी से भी परिचित नहीं था। सच कहें तो, उस घर में कोई ऐसा नहीं था जो उसे अपने पिता के बारे में कुछ जानकारी दे सके। न कोई चाचा, न कोई चचेरा भाई, जिनके साथ वह अपने पिता की प्रेमयोग्यता, लोकप्रियता, स्वभाव और रहन-सहन के बारे में तुलना कर सके; ये मापदंड उसके लिए अस्तित्वहीन थे। उसकी एक चाची जीवित थीं: जहांगीराह बेगम। लेकिन वह महज़ एक महिला थीं, जिनका विवाह उसके रिश्तेदारों और दृष्टिकोणों को समझने से बहुत पहले ही हो गया था। नवाब बेगम से वह कभी नहीं मिला; जहांगीराह बेगम कभी-कभार एक दूर स्थान पर रहने वाली रिश्तेदार के रूप में आती थीं। उसके मन में, जहांगीराह बेगम की छवि उन कई सुखद छवियों में से एक थी जो उसके जीवन के केंद्र से दूर मौजूद थीं, ऐसे लोग जिनका उससे कोई खास संबंध नहीं था।
दस वर्ष की आयु तक पहुँचते-पहुँचते उसने शिशुओं के बारे में कुछ बुनियादी तथ्य जान लिए थे, जैसे कि उनका जन्म कैसे होता है और वे इस दुनिया में कैसे आते हैं। उसके कई करीबी मित्र भी इस जानकारी के स्रोत थे। लगभग ग्यारह वर्ष की आयु तक आते-आते वह अपने शरीर और अंतर्मन में रहस्यमय और सुखद परिवर्तनों का अनुभव करने लगा था। अब वह अपने शरीर और उसके द्रव्यों के बदलते रंगों, अपनी कल्पनाओं और दुनिया को देखने के अपने नए दृष्टिकोण को अधिक स्पष्टता से समझ सकता था।
सात-आठ साल की उम्र तक नवाब मिर्ज़ा न केवल यह मानते थे कि उनके पिता नहीं हैं, बल्कि उन्हें पूरा यकीन था कि वे अपनी माँ की संतान हैं और उनके पिता का कोई योगदान नहीं है। अब जब उन्हें पता चला कि उनकी शक्ल-सूरत और यहाँ तक कि उनके चलने-फिरने का तरीका भी उनके और उनके पिता के बीच काफ़ी मिलता-जुलता है, और जब उनकी माँ के बारे में खुलकर बात की जाती थी तो वे बहुत दुखी हो जाते थे, तो उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि वे अपनी माँ के दर्द को कम करने के लिए क्या करें।

25 मई 1831 को जन्मे नवाब मिर्ज़ा अंग्रेज़ों की गणना के अनुसार ग्यारह साल से कुछ ज़्यादा उम्र के थे। लेकिन वे कम से कम चौदह साल के लगते थे, शायद पंद्रह साल के भी। लंबे कद के, अपनी लंबी माँ से थोड़े शर्मीले, मज़बूत मांसपेशियों वाली भुजाओं और चौड़ी कलाइयों वाले। उनका रंग सांवला था और चेहरा सौम्य और आकर्षक था। उनकी बड़ी, गहरे भूरे-काले रंग की आँखें उनकी माँ की हूबहू थीं, लेकिन उनकी लंबी, पतली और थोड़ी टेढ़ी तुर्किक नाक और ऊँची भौंहें उनके पिता से मिली थीं। नाक के नथुनों का हल्का सा फैलाव दृढ़ इच्छाशक्ति और शायद जल्दी गुस्सा आने का संकेत देता था, हालाँकि अब तक ऐसा कभी देखने को नहीं मिला था। उन्होंने आसमानी नीले रंग का एक बढ़िया मलमल का कुर्ता पहना था, जिसके ऊपर उन्होंने फूलम का एक आकर्षक लबादा ओढ़ा था। फूलम सूती कपड़े का एक स्टाइलिश, फूलों वाला कपड़ा था जिसमें थोड़ा रेशम मिला हुआ था। उनका छोटा ऊपरी कोट भी सूती कपड़े का था, हल्के नीले रंग का जिस पर गहरे नीले रंग की धारियाँ थीं, और उसकी आस्तीनें उस समय के फैशन के अनुसार ऊपर से कटी हुई थीं। उनकी पतलून दिल्ली के फैशन के अनुसार चौड़े तले वाली थी, जो रेशम और सूती कपड़े मशरू से बनी थी, हल्के गुलाबी रंग की। रामपुरी शैली की सख्त और ऊँची काली मखमली टोपी के बजाय, उन्होंने मखमली की एक ऊँची, पाँच नोक वाली काली टोपी पहनी थी, जिसके किनारों पर सोने का काम किया हुआ था। यह भी दिल्ली के फैशन के अनुसार ही था, सिवाय इसके कि सोने का काम इसे विद्वान प्रोफेसरों और सूफियों द्वारा पहनी जाने वाली इसी तरह की टोपियों से अलग करता था। ऊँची टोपी उनके सिर पर हल्की सी टिकी हुई थी, जिससे उनके चमकदार काले, लंबे और घने बाल सिर से कंधों तक लटकते हुए दिखाई दे रहे थे। थोड़ी तिरछी पहनी हुई टोपी उन्हें एक रईस के बेटे के रूप में दर्शाती थी, जिसका स्वभाव कलात्मक और आनंदप्रिय था।

नवाब मिर्ज़ा के व्यक्तित्व में यौवन का गंभीर भाव और उनके सांवले, तराशे हुए चेहरे का मनमोहक आकर्षण इस तरह समाहित था कि वे हमेशा लोगों के दिलों को छू लेते थे और सबका ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर लेते थे। उनकी माँ, चाची और सभी नौकरानियाँ उनसे बातें करना, उनके साथ हँसना और उन्हें दुलारना चाहती थीं। लेकिन उस नाजुक क्षण में कुछ ऐसा व्यवहार आवश्यक था जिससे माँ का दुख कम हो सके और लड़का भी उनके प्रति अपना असीम प्रेम व्यक्त कर सके। नवाब मिर्ज़ा की अद्भुत सूझबूझ और हर किसी को प्रसन्न करने की स्वाभाविक क्षमता ने ही उन्हें उस अवसर के लिए उपयुक्त कार्य करने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने एक छोटा कदम आगे बढ़ाया, अपनी माँ के चरणों में बैठ गए, उनके पैरों को, जूतों समेत, कोमलता से अपनी गोद में खींच लिया और कहा, 'अम्मा जान, मैं यहाँ हूँ, आपकी सेवा में हाज़िर हूँ। कृपया इन छोटी बच्चियों और उनकी बकवास बातों पर ध्यान न दें,' वे मुस्कुराए। 'राहत अफ़ज़ा मुझे एक उछलते-कूदते घोड़े के बच्चे की तरह समझती है, तो वह क्या है? एक घोड़ी जो अभी-अभी अपने दूध के दाँत निकाल रही है, है ना?' मैं तुम्हारा बेटा हूँ, न इससे अधिक, न इससे कम!

उम्दा खानम ने राहत अफजा के गुलाबी गाल पर हल्के से प्यार से थपथपाते हुए कहा, 'एक घोड़ी, जिसके मुंह में अभी दांत नहीं हैं। घोड़ी के अभी दांत नहीं निकले हैं, पर उसकी जीभ लंबी

है। लेकिन नवाब मिर्जा, कृपया उठ जाइए, जमीन पर मत बैठिए और नर्तक की तरह हाथ मत हिलाइए!'
उमदा खानम अपनी खास हंसी हंसी, एक धीमी, मीठी गड़गड़ाहट, जो उनके बीच दोस्ती का आभास देती थी, मानो नवाब मिर्जा अब मां-बेटे के रिश्ते में एक निश्चित समानता के हकदार थे, और मां को यह संकेत देती थी कि बेटा लगभग एक जवान आदमी बन चुका है: आपको उसके पिता को भूलकर बेटे को गले लगा लेना चाहिए।
'खाला जान, आप मुझे उठने का आदेश देती हैं, तो मैं तुरंत उठ जाता हूँ, जैसे खिलता हुआ चंपक पल भर में धरती से उग आता है। लेकिन अम्मा जान मुझसे बात करने को भी तैयार नहीं हैं।' नवाब मिर्ज़ा ने अपनी माँ का झुका हुआ सिर उठाने की कोशिश की। 'प्यारी अम्मा जान, ज़रा मेरी तरफ़ देखिए! या कम से कम मेरी बात सुनिए, मैं आपको मियां नज़ीर अकबराबादी की एक सुंदर कविता सुनाता हूँ।' फिर उन्होंने कविता सुनाई:

मैं कुछ भी नहीं था, बस चेरी बम या चांदनी रात के पटाखे की तरह, जब एक चिंगारी ने मुझे छुआ, तो मुझसे एक अद्भुत दृश्य उत्पन्न हुआ।
और ये रही मेरी प्यारी खाला जान, वो मुझे तमाशा बनाने के लिए दृढ़ संकल्पित है और साथ ही साथ इसकी निर्देशक भी!
शायद अठारहवीं शताब्दी के हिंदी कवि नज़ीर अकबराबादी को उद्धृत करते हुए नवाब मिर्ज़ा अनजाने में एक कवि और एक इंसान के रूप में अपनी क्षमता को प्रदर्शित कर रहे थे, या शायद वे अपनी माँ की कविता के प्रति रुचि को जानते हुए ध्यान भटकाने की कोशिश कर रहे थे। उन्होंने वांछित परिणाम प्राप्त कर लिया।
वज़ीर ने अपने आँसू पी लिए, अपने बेटे के संकटों को दूर करने का प्रयास किया और रोते हुए बोली, 'हे नवाब मिर्ज़ा! कृपया उठिए, आपके चरणों का आपकी गोद में होना कितना अशुभ है! आपको अपनी आँखों पर रखना या अपने हृदय में बसाना भी आपके महत्व के आगे कुछ नहीं होगा। कृपया उठिए। देखिए, मैं मुस्कुरा रही हूँ, है ना?'
उसने अपने पैर पीछे खींचे, नवाब मिर्ज़ा के हाथ अपने हाथों में लिए और लड़के को ऊपर उठाने की कोशिश की। नवाब मिर्ज़ा ने कहा, 'नहीं, नहीं। इससे काम नहीं चलेगा।'
'बच्चे मियां साहब, मुझे और शर्मिंदा मत कीजिए,' वज़ीर ने विनती की।
'इसमें शर्म की कोई बात नहीं है। बस बात ये है कि आपने बेवजह सबको रुला दिया, और उससे भी बड़ी बात ये है कि जब मैंने आपको "तमाशा" विषय पर इतनी खूबसूरत कविता सुनाई, तो आपने ताली तक नहीं बजाई। इसलिए, महोदया, आपको दो बातों के लिए दंडित किया जाना चाहिए। पहली बात, आपको वादा करना होगा कि जब तक मैं इस दुनिया में हूँ, आप नहीं रोएंगी।'
'अरे, नवाब मिर्ज़ा साहब, क्या आप अत्याचारी नहीं हो रहे हैं? क्या कभी किसी ने आँखों से या अपने दिल में रोने पर नियंत्रण पाया है?'
'ठीक है। लेकिन आपको यह बात माननी होगी: जो लोग पीछे रह गए हैं, उनके भी उतने ही

अधिकार हैं जितने कि जो लोग चले गए हैं।'
वज़ीर अवाक रह गई। नवाब मिर्ज़ा के व्यवहार में एक स्नेहपूर्ण अधिकार झलक रहा था, जो उसने पहले कभी नहीं देखा था। साथ ही, उसमें एक प्रकार की सांसारिकता भी थी। यह पहली बार था जब नवाब मिर्ज़ा ने खुले तौर पर अपने पिता की मृत्यु की वास्तविकता को स्वीकार किया था, और वह भी इस तरह से कि पिता के न होने की तुलना में माता का अस्तित्व अधिक अर्थपूर्ण और महत्वपूर्ण प्रतीत हो रहा था। वज़ीर ने अपने विचारों को समेटा और संभलकर बोली, 'निश्चित रूप से, न्याय आपके पक्ष में है।'

तो ठीक है। मेरी आपसे यही अपेक्षा है कि आप हमेशा खुश रहें। अब हम दूसरे मुद्दे पर आते हैं। 'ओह, तो अभी भी कुछ सुलझाना बाकी है? कृपया पहले अपनी अकड़ कम करें, तभी हम आपकी शिकायतें और दावे सुनेंगे।'
नवाब मिर्ज़ा मुस्कुराते हुए बोले, 'मैं हाज़िर हूँ, आपके आदेशानुसार खड़ा हूँ। लेकिन मैं अपना हर्जाना ज़रूर वसूलूँगा। कृपया मियां नाज़िर की पंक्तियों पर ताली न बजाने के लिए जुर्माना अदा कर दीजिए। तो चलिए, 'तमाशा' पर एक शानदार कविता सुनाते हैं; दुनिया को आपकी काव्य प्रतिभा के बारे में बताइए।'
इस बार वज़ीर ने नवाब मिर्ज़ा को कुछ ज़्यादा ज़ोर से अपनी ओर खींचा। दोनों ने अपनी पकड़ ढीली की और नवाब मिर्ज़ा अपनी माँ के कंधे पर हाथ रखकर खड़ा हो गया।
'केवल ईश्वर ही कलंक से मुक्त है! नवाब मिर्ज़ा रामपुर के प्रसिद्ध मुल्ला ग़ियासुद्दीन के साथ पढ़ते हैं, और एक बेचारी नौकरानी की परीक्षा होनी चाहिए!' वज़ीर मुस्कुरा रहा था, लेकिन मन ही मन चिंतित था। 'कृपया अपने मुल्ला साहब के साथ ऐसे छंदों को जोड़ने का खेल खेलें।'
ठीक है, लेकिन इस बार तुम्हें छूट नहीं मिलेगी। तुमने मुझे बचपन में ढेरों कविताएँ याद करवाई थीं। अब तुम्हारी बारी है। अगर तुम्हें हिंदी याद नहीं है, तो चलो फारसी सीख लेते हैं।
'अरे बाप रे, अरे बाप रे, मैं तो पागल बुढ़िया हो गई हूँ, अब मैं अपने बच्चों को खुश करने के लिए कविताएँ कैसे याद करूँ?' वज़ीर रुका, नाराज़गी जताते हुए बोला, 'तो ये लो ईरान के लाहिज के एक बूढ़े कवि नदीम की एक पुरानी कविता। अगर ये तुम्हें पसंद न आए तो मुझे दोष मत देना।'
'बहुत बढ़िया, सचमुच। कृपया कमान संभालें,' नवाब मिर्जा ने कहा।
वज़ीर ने इस आयत को सरल लेकिन आकर्षक ढंग से सुनाया:
मैंने इस प्राचीन स्थल पर कई गतिविधियों को देखा है, लेकिन बच्चों का खेल एक और अद्भुत दृश्य है।
'केवल ईश्वर ही दोषरहित हैं! अम्मा जान, क्या उत्कृष्ट श्लोक है! यह मुझ पर लगभग मादक प्रभाव डालता है।'
नवाब मिर्ज़ा ने दिल खोलकर प्रशंसा की, लेकिन उन्होंने इसमें एक अंतर्निहित अर्थ भी समझा: अम्मा जान मेरी अनुभवहीनता की ओर इशारा कर रही हैं; उन्हें मुझमें एक बच्चे की झलक दिखती है। नवाब मिर्ज़ा, जो अब खुद को एक परिपक्व व्यक्ति समझते थे, अपनी माँ की सरलता पर मन ही मन मुस्कुराए। उनके हृदय में स्नेह की लहर दौड़ गई: बेचारी छोटी अम्मा जान, कितनी

सरल आत्मा हैं! उन्होंने जवाब दिया, 'लेकिन अम्मा जान, "बच्चों का खेल" उचित नहीं है। ज़रा मिर्ज़ा बेदिल की बात सुनिए।' उन्होंने स्पष्ट आनंद के साथ और कांपती हुई आवाज़ में सुनाना शुरू किया:

एक और वसंत आ गया है; दुनिया बाहर निकलकर बगीचों में सैर का आनंद ले रही है; लेकिन हमारे जीवन और कर्म के इस अनोखे तरीके का अपना ही एक अलग नजारा है।

“वाह, क्या शानदार कविता है! और क्या बढ़िया विचार है, “परन्तु हमारी जीवनशैली और कर्मकांड का अपना ही एक तमाशा है”।” उम्दा और वज़ीर दोनों एक साथ बोले। नवाब मिर्ज़ा ने सलाम करते हुए सिर झुकाया, मानो यह उनकी अपनी कविता हो और प्रशंसा के पात्र वही हों।

‘मैं मानती हूँ, नवाब मिर्ज़ा, आप अब बच्चों के खेल के मैदान में नहीं हैं। मेरी बधाई स्वीकार कीजिए।’ वज़ीर ने नवाब मिर्ज़ा का हाथ फिर से अपने हाथ में लिया। ‘लेकिन क्या आप स्वयं कवि बनना चाहती हैं? क्या आप फ़ारसी में कविताएँ लिखेंगी या हिंदी में?’

‘मैं कवि बनना चाहता हूँ। वास्तव में, मेरी यह प्रबल इच्छा है,’ नवाब मिर्ज़ा ने कुछ संकोच के साथ कहा। ‘अगर मैं कभी कविता लिखूंगा, तो वह रेख़्ता में होगी, जैसा कि हिंदी को कभी-कभी कहा जाता है। फिलहाल मेरा कोई उपनाम नहीं है, कोई गुरु नहीं है।’

वज़ीर ने कहा, 'एक बार जब आप दृढ़ संकल्प कर लेते हैं, तो आपको उपनाम और मार्गदर्शक दोनों आसानी से मिल जाएंगे।'

‘मुझे तो ऐसा ही लगता है, लेकिन हमारे मुल्ला जी शायद इसे मंज़ूर न करें। उनका कहना है कि कविता लिखना आलसी लोगों का काम है।’ उन्होंने अपनी मासूम सी मुस्कान बिखेरी। अगले ही पल, उनकी मुस्कान और भी मनमोहक हो गई क्योंकि उसमें सच्ची शर्म झलक रही थी।

‘अम्मा जान, मैं आपकी शिष्या क्यों न बनूँ? यदि आप मुझे कोई अच्छा उपनाम सुझा दें, तो मैं सचमुच अपने सहपाठियों के बीच प्रतिष्ठित हो जाऊँगी।’

‘कौन, मैं? सचमुच, प्यारे बेटे, मैंने तो कविता की एक पंक्ति भी लिखे हुए सदियाँ बीत गईं। अल्लाह उन्हें जन्नत दे, अगर मेरे शाह साहब ज़िंदा होते, तो मैं तुम्हें खुशी-खुशी उनके पास ले जाता और उनके चरणों में बिठाता। मैं भी उनसे कुछ और सीखता। अल्लाह! अल्लाह! उनके जैसा गुरु कहाँ मिलेगा? लेकिन उन्हें दक्कन से इतना प्यार था, अल्लाह उन्हें शांति दे। और वह ज़मीन, एक प्रतिद्वंद्वी पत्नी की तरह, उन्हें हमेशा के लिए अपनी बाहों में समेटे हुए थी।’

यह भांपते हुए कि शायद वज़ीर को अपने गुरु की याद सता रही थी, नवाब मिर्ज़ा ने एक बच्चे की तरह उससे विनती की, 'नहीं! नहीं! मैं यह बर्दाश्त नहीं करूँगी! मुझे बताओ, तुम कब तक अतीत की मीनार में छिपी रहोगी? दुनिया बदल गई है; दुनिया के लोग बदल गए हैं।'

उमदा खानम ने नवाब मिर्ज़ा की ओर अर्थपूर्ण दृष्टि डाली, मानो कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार कर रही हों कि लड़के ने वही बात कह दी है जो एक वरिष्ठ होने के नाते वह कहने से हिचक रही थीं। राहत अफ़ज़ा ने तुरंत अपनी प्रिय मालकिन का बचाव करते हुए आधे मज़ाक और आधे नाराज़गी भरे लहजे में कहा, “अरे नवाब मिर्ज़ा साहब, आपकी ज़बान तो बेकाबू हो रही है! ज़रा संभलकर, कहीं आप उसे यहीं न छोड़ दें।” उन्होंने वज़ीर के गले में हाथ डाला और दूसरी दासी राम जियाई

को अपनी मालकिन के लिए अनार का रस लाने को कहा।
लेकिन नवाब मिर्ज़ा अब बच्चा नहीं था: वह जवानी की दहलीज पर था। वह उम्दा खानम की नज़र का मतलब भली-भांति समझ गया था। लड़कपन से जवानी की दहलीज पर पहुँचने की अनुभूति और जवानी की दहलीज के कुछ परेशान करने वाले अनुभवों ने उसे अपनी माँ की गोद में सिर रखकर उन्हें छेड़ने, गुदगुदी करने, उनका हाथ थामने और प्यार से सहलाने से रोक दिया था। साथ ही, अपने भीतर विकसित हो रहे एक नए अधिकार के एहसास ने उसे अपनी ज़ुबान पर लगाम कसने लगा दिया था। कुछ तीखे लहजे में उसने कहा, 'और बी राहत अफ़ज़ा, क्या तुम्हें पहले खुद को नहीं देखना चाहिए? तुम्हारी ज़बान इतनी लंबी और तीखी होती जा रही है कि आसमान में छेद कर दे और फिर उसे सिल भी दे! मेरी प्यारी अम्मा जान को ही अतीत की तंग गलियों में अकेले शोक में क्यों भटकने दिया जाए?' वह मुस्कुराया, अपने शब्दों से किसी भी तरह की चोट पहुँचाने की भावना को मिटाते हुए। 'अम्मा जान, मुझे लगता है कि आपको मुझे एक अच्छा उपनाम देना चाहिए। कृपया। धीरे-धीरे, हम एक गुरु ढूंढ लेंगे।'
‘ठीक है, मियां, मैं आपकी बात मान लूंगी। मंझली बाजी, क्या कहीं हाफ़िज़ की कोई प्रति मिल सकती है?’ वज़ीर को अतिरिक्त परेशानी उठाने पर थोड़ी नाराज़गी हुई, लेकिन मियां सहज और बातचीत के लहजे में बोलीं, ‘हम अदृश्य की ज़ुबान से मदद मांगेंगे। देखते हैं अदृश्य लोक से क्या संदेश आता है।’
‘माफ़ कीजिए, छोटी, लेकिन मेरे पास हाफ़िज़ के दीवान की प्रति अभी उपलब्ध नहीं है; मेरे पास ख्वाजा मीर दर्द के दीवान की एक उत्तम प्रति है। किसी ने इसे कल नवाब साहब को भेंट किया था। मैंने इसका अध्ययन शुरू किया और इसे अपने साथ यहाँ ले आया।’
‘वास्तव में कोई भी शगुन या सुराग के लिए मीर दर्द से सलाह नहीं लेता। लेकिन कोई बात नहीं, अगर हाफ़िज़ शिराज के शेख थे, तो मीर दर्द साहब जहानाबाद के शेख थे। तो फिर वे क्यों नहीं?’ वज़ीर ने कहा।
मीर दर्द पिछली सदी के महान हिंदी और फारसी कवि थे। उन्हें एक प्रमुख सूफी के रूप में भी पूजा जाता था। मीर दर्द साहब के दीवान को लाने के लिए किसी को भेजने से पहले ही एक फकीर भटकता हुआ आया। जैसे ही वह वज़ीर के घर पहुँचा, उसे सत्रहवीं सदी के भारतीय फारसी कवि निस्बती थानेसरी की ग़ज़ल सिह तार पर बजाते हुए सुना गया।

एक हृदय और अनगिनत इच्छाएँ: मैं अपना हृदय किस उद्देश्य के लिए समर्पित करूँ? मेरा पूरा शरीर अब केवल घावों से भरा है: मैं कहाँ पर मरहम लगाऊँ?
उनकी आवाज और उच्चारण स्पष्ट और गूंजदार थे, जिनमें दर्द की हल्की सी झलक थी। मंझली बेगम ने कहा, 'बच्चे मियां साहब, इसमें क्या खूबी है, बस देखिए, "मेरा पूरा शरीर अब घावों के सिवा कुछ नहीं है"।'
किसी ने ख्वाजा मीर दर्द साहब का दीवान निकाला। वज़ीर को वह समय याद आया जब पंडित नंद किशोर उनके घर आए थे ताकि वे ख्वाजा हाफ़िज़ के दीवान से अपने भविष्य के बारे में मार्गदर्शन प्राप्त कर सकें। सारे दृश्य, और उनसे भी बढ़कर, उनके डर, चिंताएँ, उनकी आशाएँ

और कल्पनाएँ, उनकी अंतरात्मा में एक तेज़ रोशनी की चुभन की तरह कौंध गईं, जो आँखों को चुभ रही थी। वे काँप उठीं और उस पतले से दीवान को ज़मीन पर गिराने ही वाली थीं कि उन्होंने खुद को संभाला, ठंडे पेय का एक घूँट पिया और कहा, 'कृपया सुनिए, आप सभी महिलाओं और नवाब मिर्ज़ा, हममें से किसी को भी भविष्यवाणी की कला नहीं आती। यह पंडितों और मुल्लाओं का काम है। मैं बस इतना कर सकती हूँ कि बिस्मिल्लाह पढ़ूँ और बेतरतीब ढंग से दीवान खोलकर पन्ने पलटूँ। जिस आयत पर मेरी नज़र रुकती है, उसमें शगुन छिपा होता है। क्या आप सहमत हैं?'

'महोदया, यह तो बिल्कुल उचित है,' नवाब मिर्ज़ा ने कहा। वज़ीर ने छोटी सी किताब को उनकी आँखों से लगाया, बिस्मिल्लाह कहा और जब उन्होंने किताब खोली तो उन्हें निम्नलिखित आयत मिली:

मैं अपने ही भाग्य से आहत हूँ: हे यीशु की साँस, मैं एक दीपक हूँ, तुम मुझ पर फूँक मारते हो, और मैं मर जाता हूँ।

'क्या गजब की कविता है!' मंझली ने कहा। 'हालाँकि यह इस अवसर के लिए पूरी तरह उपयुक्त नहीं है, पर अनुपयुक्त भी नहीं है। आखिर एक कवि करता क्या है, सिवाय भावनाओं की तीव्रता से पीड़ा में जलने के? मेरे नवाब साहब कहते हैं कि बिना हृदय में पीड़ा का भाव भरे कोई कवि नहीं हो सकता। क्या यही पीड़ा का भाव नहीं है जो मीर दर्द साहब की कविता को आज भी लोकप्रिय बनाए रखता है?'

'जी हां,' वज़ीर ने कहा, 'और "दर्द" शब्द का "दाग" या "दुःख" से गहरा संबंध है। अभी-अभी हमने "दाग" विषय पर एक सुंदर कविता पढ़ी है। यह एक प्रकार का शगुन भी हो सकता है। तो फिर नवाब मिर्ज़ा का उपनाम "दाग" क्यों न हो?'

जी हाँ, अम्मा जान। और "चिराग" (दीपक) का विषय, "यीशु की साँस" (नफ़स-ए इसावी) के साथ मिलकर, भारत के गायक पक्षी, परम पूज्य, अमीर खुसरो द्वारा समर्थित है, ईश्वर उनकी प्रतिष्ठा बढ़ाए। अमीर कहते हैं:

फूंक मारने से दीपक बुझ जाता है, चाहे वह यीशु की ही फूंक क्यों न हो।

तो आज से, अल्लाह आपको सलामत रखे, आप दिल्ली के नवाब मिर्ज़ा दाग़ और उसके बाद रामपुर के भी अगुआ हैं। शिष्यत्व का प्रश्न हम एक-दो दिन में तय कर लेंगे। दिल्ली में उस्ताद शेख इब्राहिम ज़ौक़ का नाम सबकी ज़बान पर है। मेरे शाह साहब के एक और प्रतिष्ठित शिष्य घनश्याम लाल असी हैं। जहाँ तक लखनऊ की बात है, शेख इमाम बख्श नासिख अब इस दुनिया में नहीं हैं, लेकिन वे अपने पीछे कई नामी शिष्य छोड़ गए हैं। फिर, हमारे पास नवाब सैयद मुहम्मद खान रिंद हैं।

'ये सभी शुभ नाम हैं। लेकिन, अम्मा जान, मैं रामपुरी के नाम से नहीं जाना जाना चाहता। मैं दिल्ली का सच्चा और ईमानदार सपूत हूँ। पूरा हिंद हमारी बोली से गूंजता है। "रामपुरी" शब्द में जीवंतता और जोश की कमी है।'

रामपुर पर की गई इस सीधी टिप्पणी पर मंझली बेगम एक पल के लिए घबरा गईं। कहीं ये बात

मेरे नवाब साहब तक न पहुँच जाए... ये नवाब साहब देखते नहीं, सिर्फ सुनते हैं। फिर उन्होंने सोचा, ये तो बस बचकाना मज़ाक है, बिलकुल हानिरहित। ऐसी बातों को कोई बुरा नहीं मानता। वह मुस्कुराईं, उनका चेहरा खुशी से खिल उठा: 'सहमत हूँ, नवाब मिर्ज़ा, आप दिल्ली की गलियों में लुढ़कते चिकने पत्थर की तरह हैं; हम रामगंगा के किनारे की खुरदरी, किरकिरी रेत की तरह हैं। दिल्ली के उस्ताद, दिल्ली में हमेशा खुश रहें!'

नवाब मिर्ज़ा ने कहा, 'मैं सुनता हूँ और आज्ञा मानता हूँ। अम्मा जान, चलिए कुछ छंद रचते हैं। आख़िरकार, मैं एक उत्तम उपनाम का स्वामी हूँ। मुझे अभी एक पंक्ति उदाहरण के तौर पर दीजिए; तब आप नए विषयों की मेरी खोज को देख पाएँगी।'

खैर, हाल ही में "तमाशा" की चर्चा हुई थी। तो यहाँ मीर तकी मीर साहब की "तमाशा" से संबंधित एक पंक्ति है। यह शुरुआती आयत से है। अब आपको अपनी खुद की एक शुरुआती पंक्ति बनानी होगी।

अपनी मधुर, औपचारिक आवाज और आकर्षक शैली में वज़ीर ने यह पंक्ति बोली:

जब मैंने गौर से देखा, तो मुझे पता चला कि दुनिया एक विचित्र दृश्य है!

ओह, अम्मा जान! ये तो हद हो गई! आप मुझे उस्तादों के उस्ताद की एक पंक्ति से परख रही हैं, और वो भी इतनी परिपूर्ण पंक्ति से। मुझे तो निराशा में हाथ मलने चाहिए। क्या कोई कभी ऐसी ही पंक्ति को लेकर शुरुआती छंद बना सकता है?

मंझली बेगम हंस पड़ीं। 'कोई आसान बहाने नहीं, कोई मीठी-मीठी बातें नहीं! बहाने बनाते हुए भी आप एक लाइन बना सकती हैं।'

'शुरुआती छंद जरूर लिखना, बच्चे मियां।' वज़ीर ने चंचल लहजे में आदेश दिया।

'महोदया, बहुत अच्छा,' नवाब मिर्ज़ा ने धीरे से कहा। लगभग उसी क्षण, उन्होंने पूरी दो पंक्तियों की कविता प्रस्तुत की:

यहां के सभ्य लोग असभ्यों का तमाशा देखते हैं, जब मैंने गौर से देखा तो पाया कि दुनिया एक विचित्र तमाशा है!

'अद्भुत!', 'अल्लाह की मर्ज़ी!' और 'केवल अल्लाह ही बेदाग है!' - ये वो शब्द थे जिनसे नवाब मिर्ज़ा का स्वागत हुआ। वज़ीर ने उनके माथे पर चुंबन किया और अपनी चादर फैलाते हुए, मानो विनती कर रही हो, प्रार्थना की: 'अल्लाह, मेरे बच्चे का नाम रोशन कर। दुनिया उसे "विश्व का उस्ताद" कहे।'

सभी ने इस पर 'आमीन' कहा। मंझली बागम ने तुरंत मिठाई मंगवाई और नौकरों समेत घर के सभी लोगों में बांट दी।

'बच्चे मियां, तुमने अपनी तात्कालिक पंक्ति से हम सबको सचमुच प्रसन्न कर दिया। अब अगर इसमें एक और जीवंत पंक्ति जोड़ दी जाए, तो मैं तुम्हें एक आदर्श शिष्य घोषित कर दूँगा, जिसे किसी गुरु की आवश्यकता ही नहीं होगी,' वज़ीर ने मुस्कुराते हुए कहा और स्वयं की एक पंक्ति बोली।

आकाशगंगा के निर्माण में एक भी मनुष्य नहीं है।

वज़ीर ने अभी अपनी कविता समाप्त ही की थी कि नवाब मिर्ज़ा ने अपनी कविता की एक पंक्ति

कह दी:
यह एक अर्थहीन तमाशा है, जिसे आकाश ने खड़ा किया है।
एक बार फिर तालियों की गड़गड़ाहट गूंजी। मुस्कुराते हुए नवाब मिर्ज़ा ने सलाम किया और कहा, 'मुझे नहीं लगता कि मुझे किसी गुरु की ज़रूरत है। मैं अपनी कविता में पूरी मेहनत करूंगा और कभी-कभार अम्मा जान से सलाह लूंगा, लेकिन मुझे पहले अपनी पढ़ाई पूरी करनी है। मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूं कि अम्मा जान की प्रार्थना सुनी जाए।'

एक बार फिर 'आमीन' की गूंज सुनाई दी। अब लगभग खाने का समय हो चुका था। मेज़पोश बिछा दिया गया था। खाना मंझली बेगम की रसोई से बड़े-बड़े बर्तनों में परोसा गया था।

नवाब मिर्ज़ा से परामर्श लिया जाता है; एक प्रस्ताव रखा जाता है: वज़ीर खानम के आंगन में एक बार फिर वसंत ऋतु का आगमन होता है।

रात के खाने के बाद, अपनी हवेली लौटने से पहले, मंझली बेगम ने एक बार फिर नवाब मिर्जा पर एक ऐसी नजर डाली जो देखने में सामान्य से कहीं अधिक गंभीर प्रतीत हो रही थी।

‘नवाब मिर्ज़ा, हमारी नई हवेली आपके मदरसे से ज़्यादा दूर नहीं है। अगर आप शाम को आ सकें तो अच्छा होगा।’

नवाब मिर्ज़ा को उसका इरादा पूरी तरह समझ नहीं आया। ज़ाहिर है, वह उससे कुछ खास कहना चाहती थी। उत्सुकता और थोड़ी घबराहट से उसका दिल धड़क रहा था, उसने कहा, 'जी हां, ज़रूर, मंझली खाला। कोई बात नहीं। मैं कल शाम आपके पैर चूमने आऊंगा।'

‘बहुत अच्छा। तब तक के लिए ईश्वर की कृपा में।’

मंझली बेगम अपनी पालकी में सवार होकर चली गईं। नवाब मिर्ज़ा और वज़ीर रात के लिए अपने कमरों में चले गए। अगली शाम, मंझली खाला के घर पर, उन्हें मुख्य द्वार पर एक सजी-धजी, आलीशान बैलगाड़ी और हॉल में कुछ नए नौकरों की चहल-पहल देखकर थोड़ा आश्चर्य हुआ। चूंकि उन्हें अभी भी इतना युवा माना जाता था कि उनके लिए पर्दा प्रथा का पालन करना आवश्यक नहीं था, इसलिए वे अपना नाम बताए बिना सीधे घर में चले गए।

जैसे ही वह हॉल पार कर रहे थे, उमदा खानम की वरिष्ठ दासी ने उनसे मुलाकात की और बताया कि बेगम साहब दीवान खान में उनकी उपस्थिति चाहती हैं। नवाब मिर्ज़ा दरवाजे पर ही रुक गए जब उन्होंने वहाँ एक अपरिचित महिला को देखा। उमदा खानम ने अभिवादन के रूप में प्रसिद्ध फ़ारसी मुहावरे का प्रयोग किया और उन्हें पुकारा, 'आइए, कृपया आइए। आप हमारी आँखों में चमक लाते हैं और हमारे दिलों को प्रसन्न करते हैं! क्या आप इस महिला को जानते हैं?'

अब जब नवाब मिर्ज़ा ने ध्यान से देखा, तो उन्हें चेहरा जाना-पहचाना लगा, पर नाम याद नहीं आया। लंबा, युवा, भरा-पूरा शरीर, सीधी नाक, लेकिन बीच में हल्की सी गोलाई, बादाम जैसी लंबी, चमकदार आँखें, कोमल गुलाबी होंठ; उनके दोनों हाथों की तीन-तीन उंगलियों में अंगूठियां थीं: हीरा, नीलम और माणिक। उनका पहनावा फैशन के हिसाब से सादा था, लेकिन महंगा था। उनके पूरे व्यक्तित्व से सुंदरता, यौवन और उत्तम स्वास्थ्य का आत्मविश्वास झलक रहा था। वह मुस्कुराईं, अपनी सीट से थोड़ा उठीं और बोलीं, 'अरे! नवाब मिर्ज़ा, आपने मुझे पहचाना नहीं, लेकिन मैंने आपको आपकी लंबी कद-काठी को देखते ही पहचान लिया!'

‘अहा! ये तो आप हैं, फूफी जहांगीराह! केवल ईश्वर ही हर दोष से मुक्त है... अब मुझे आप अच्छी तरह याद आ रही हैं। आप बिलकुल भी नहीं बदली हैं।’

नवाब मिर्ज़ा ने हाथ बढ़ाया और जहांगीराह के पास गए। जहांगीराह ने तुरंत देखा कि लड़के की चाल और आवाज़ अपने पिता से हूबहू मिलती-जुलती है। उनकी आँखों में आँसू आ गए और उनका पहला विचार था कि उन्हें गले लगा लें, अपने शहीद भाई की याद में। लेकिन नवाब मिर्ज़ा में थोड़ी झिझक महसूस करते हुए उन्होंने खुद को रोक लिया। उन्होंने दोनों महिलाओं को सलाम किया और उनके पैरों के पास मोटे कालीन पर बैठ गए।

‘नहीं, नहीं! वहाँ नहीं, नवाब मिर्ज़ा। आपको यहाँ मेरे बगल में होना चाहिए।’ उमदा खानम ने उनका हाथ पकड़ा और धीरे से उन्हें लकड़ी के चबूतरे पर अपने बगल में खींच लिया।
‘बताओ, नवाब मिर्ज़ा, तुम्हारी पढ़ाई कैसी चल रही है?’ जहांगीराह ने पूछा। ‘खास तौर पर तुम कौन सी किताबें पढ़ रहे हो?’
नवाब मिर्ज़ा मन ही मन चिढ़ गया। यह स्पष्ट था कि उसे बुलाने का उद्देश्य उसकी शैक्षणिक उपलब्धियों के बारे में हल्की-फुल्की बातचीत करना नहीं था। जहाँगीराह फूफी की यहाँ उपस्थिति के पीछे कोई गुप्त मकसद ज़रूर था। आखिर वह मुझसे किस बारे में बात करना चाहती है? जितनी जल्दी इस पहेली का हल निकल जाए, उतना ही अच्छा है।
थोड़ी ऊब भरी मुद्रा में, उसने संक्षेप में उन कुछ पुस्तकों और विषयों की सूची बताई जो उसे पढ़ाए जा रहे थे, और पूछा, 'आप अकबरबाद से कब आए? क्या चाचाजी ठीक हैं? आशा है सब ठीक होगा?'
‘भगवान की कृपा से सब कुछ ठीक है। आपकी माँ कैसी हैं? मुझे वापस जाने से पहले उनसे मिलना है। जब भी उन्हें फुर्सत मिले, मुझे बुला लें, मैं तुरंत आ जाऊँगा।’
जी जी महोदया। बहुत अच्छा। आप जब चाहें आ सकती हैं। कल कैसा रहेगा? क्या आप कुछ दिनों के लिए रामपुर में रुकेंगी?
'जी हां... जी हां, मुझे कुछ और दिन रुकना होगा। आप मेरे पति के बड़े भाई को तो जानते ही होंगे? मेरा उनके साथ एक छोटा-मोटा कारोबार है।'
'जी महोदया। आपका मतलब आगा मिर्जा तुराब अली से है? मैं उन्हें उनके प्रतिष्ठित नाम से तो जानता हूँ, लेकिन उनसे मिलने का अवसर नहीं मिला है।'
‘वह एक अच्छे परिवार से हैं, शुद्ध ईरानी मूल के हैं। वे कई पीढ़ियों से यहां रह रहे हैं, लेकिन आपस में केवल फारसी में ही बात करते हैं।’
नवाब मिर्ज़ा को हैरानी हुई, हालांकि उन्हें सच में गुस्सा नहीं आया। मुझे इस बेकार की जानकारी से क्यों परेशान किया जा रहा है? इसका भला मैं क्या उपयोग कर सकता हूँ? बड़े रिश्तेदारों के सम्मान में उन्होंने चुप रहकर धीरे से कहा, 'जी महोदया। बहुत अच्छा।'
‘वह आदरणीय नवाब साहब के घोड़े और हाथी के अस्तबल के साथ-साथ उनके शिविर के सामान के प्रबंधक हैं। अल्लाह की मर्ज़ी से, उनका पद काफ़ी महत्वपूर्ण है और उन्हें अच्छा वेतन मिलता है। हमारे नवाब साहब उनका बहुत सम्मान करते हैं।’
नवाब मिर्ज़ा ने कोई जवाब नहीं दिया। उमदा खानम और जहांगीराह बेगम ने एक-दूसरे को देखा। नवाब मिर्ज़ा और भी ज़्यादा हैरान हो गए। आख़िर चल क्या रहा है? क्या इस आगा साहब की कोई शादी लायक बेटी है जिससे ये औरतें मेरी शादी तय करने की बात कर रही हैं? वे एकदम चुप रहे; चुप्पी बढ़ती गई। आख़िरकार, जहांगीराह ने चुप्पी तोड़ी: 'मुझे लगा कि तुम्हारी माँ बहुत अकेली होंगी। खासकर अब जब तुम भी दिल्ली छोड़कर रामपुर आ गए हो। मैंने सुना है कि दिल्ली में भी वो ज़्यादा बाहर नहीं निकलतीं?'
जी महोदया। वह अकेली है। मेरा दिल उसके लिए तड़पता है। लेकिन... मैं चाहता हूँ कि वह रामपुर आकर मेरे साथ रहे। पर वह बिल्कुल नहीं चाहती। दरअसल, मेरा मानना है कि अतीत में

जीवन बिताना ठीक नहीं है...' नवाब मिर्ज़ा ने आगे कुछ कहने से खुद को रोका। मैंने अतीत में न जीने की बात क्या कह दी? जहाँगीराह फूफी को मेरा यह तरीका शायद पसंद न आए। वह मेरे पिता की सगी बहन हैं—अल्लाह उन्हें जन्नत में सबसे ऊँचा स्थान दे—वह भी उन्हें बहुत याद करती होंगी।

'हाँ, कितना अच्छा होगा...' जहाँगीराह धीरे-धीरे बोली, मानो हर शब्द को तौल रही हो। 'सुनो, एक स्थिति बन रही है... कौन जाने, शायद यह हम सबके भले के लिए हो।' उसने उमदा खानम की ओर देखा, मानो उससे आगे की बात करने की विनती कर रही हो। उमदा खानम ने गला साफ़ किया, अपना शॉल सिर पर सावधानी से रखा और उठ बैठी, मानो कोई बहुत महत्वपूर्ण बात कहने वाली हो: 'सुनो, नवाब मिर्ज़ा। मेरी सबसे बड़ी इच्छा है कि मेरी छोटी बहन के लिए जीवन का कोई उपयुक्त ढाँचा तैयार हो जाए... मैं... चाहती हूँ कि मैं उसे फिर से खुशहाल और सुरक्षित देख सकूँ, ताकि उसका अकेलापन दूर हो जाए... उसका दुख कुछ कम हो जाए।'

उम्दाह अपनी नज़रें ज़मीन पर टिकाए, सिर झुकाए बात कर रही थी, मानो वह नवाब मिर्ज़ा का सामना करने में असमर्थ हो। अब उसने अपना सिर उठाया और ध्यान से उसकी ओर देखा, मानो यह जानने की कोशिश कर रही हो कि उसके शब्दों का उस पर क्या असर हुआ है। शायद वह परेशान और नाराज़ था, क्योंकि उम्दाह खानम स्पष्ट रूप से जो प्रस्ताव रखने वाली थी, उससे वह नाखुश था? लेकिन नवाब मिर्ज़ा, जिसकी हैरानी अब कम हो रही थी, अब चुप था, उसका अपना सिर भी झुका हुआ था।

मैंने जहांगीराह बेगम से सलाह ली और यह जानकर मुझे बहुत खुशी हुई कि उनकी भी यही राय है। नवाब मिर्जा, क्या आप सुन रहे हैं?

जी हां, मंझली खाला। कृपया आगे बढ़ें।

तो अब मामला इस प्रकार है: आपकी मां के लिए आगा मिर्जा तुराब अली का संदेश है, जो आपकी जहांगीराह की फूफी के बहनोई हैं...

'माफ़ कीजिए। आपने क्या कहा? मुझे समझ नहीं आया।'

'कुछ नहीं... सिवाय इसके कि आगा साहब आपकी मां से शादी करना चाहते हैं।'

क्या उनकी अभी तक शादी नहीं हुई है?

'नहीं,' जहांगीराह ने बीच में दखल देते हुए कहा। 'उनकी बेचारी पत्नी कुछ समय पहले अल्लाह के पास चली गईं। उनके कोई संतान नहीं थी। आगा साहब की बड़ी हवेली बिल्कुल वीरान दिखती है... उन्होंने कई जगहों पर आपकी मां की तारीफ सुनी थी... उन्होंने और जानकारी जुटाई और मुझे अकबरबाद से खास तौर पर बुलाया ताकि मैं आपके लोगों से इस बारे में बात कर सकूं।'

'तो फिर आप मुझसे इस बारे में क्यों बात कर रहे हैं?' नवाब मिर्ज़ा स्पष्ट रूप से नाराज़ और शायद थोड़ा चिढ़े हुए भी थे। उन्हें लगा कि फैसला करने का अधिकार उन्हें नहीं है। उनकी मां के जीवन में एक अजनबी के प्रवेश को वे कैसे देखें: यह एक ऐसा विषय था जिसके बारे में उनका मानना था कि उन्हें कोई राय रखने या कुछ कहने का अधिकार नहीं है।

अपने पिता की मृत्यु, जिसे वे हमेशा शहादत मानते थे, उनके लिए प्रत्यक्ष स्मृति नहीं थी। लेकिन उस घटना के विवरण और परिस्थितियाँ अब उनके वास्तविक जीवन के अनुभव के हिस्से के रूप में उनकी स्मृति में समाहित थीं, घर और बाहर सुनी गई बातचीत, वृत्तांतों और कहानियों के कारण। यह कहानी अब उनके चेतन और अचेतन मन दोनों का हिस्सा बन चुकी थी। कभी-कभी वे बिस्तर पर जागते और अपने पिता को छूने के लिए हाथ बढ़ाते, क्योंकि उन्होंने सपने में उन्हें इसी रूप में देखा था: उन्होंने सपना देखा था कि वे अपने पिता की बाहों में नींद से जाग रहे हैं। उनके पिता ही थे जो उन्हें बुरे सपनों से, शत्रुतापूर्ण दुनिया से बचाते थे। उन्होंने कभी अपनी माँ के पुनर्विवाह की संभावना या किसी संरक्षक या अभिभावक की आवश्यकता के बारे में नहीं सोचा था। उनका मानना था कि जीवन में कोई नया कदम उठाते ही आध्यात्मिक या अमूर्त स्तर पर पिता की कमी महसूस करना स्वाभाविक था। लेकिन अपनी माँ के बिस्तर पर, या एक स्त्री के रूप में उनके सामान्य जीवन में, किसी दूसरे पुरुष की आवश्यकता महसूस करना बिलकुल अलग बात थी। सच कहें तो, नवाब मिर्ज़ा खुद को एक संपूर्ण व्यक्ति मानते थे, जिन्हें सार्वजनिक जीवन में किसी बाहरी संरक्षक या गारंटर की आवश्यकता नहीं थी। उन्होंने कभी सोचा भी नहीं था कि उनकी और उनकी माता की जीवनशैली किसी नई जीवनशैली को सहारा दे सकती है, और न ही उसे उसकी आवश्यकता हो सकती है। हालांकि वयस्कता के आगमन के हल्के संकेतों ने उन्हें अपने शारीरिक और मानसिक स्वरूप में होने वाले परिवर्तनों से अवगत करा दिया था, लेकिन उन्होंने कभी भी अपने शरीर की नई शारीरिक आवश्यकताओं को वास्तविक रूप देने की आवश्यकता या घर में किसी स्त्री की आवश्यकता के बारे में नहीं सोचा था, न ही यह सोचा था कि उनके लिए किसी प्रियतम की आवश्यकता हो सकती है। फिलहाल, वे अपने दोस्तों, सहपाठियों और अन्य बढ़ते लड़कों के साथ खेल-कूद में प्रतिस्पर्धा करने, गद्य या कविता पाठ करने, और यह देखने में आनंद लेते थे कि कौन बेहतर स्मृति का प्रदर्शन कर सकता है। कभी-कभी वे अपने किसी सुंदर सहपाठी के साथ छेड़छाड़ या हल्की-फुल्की कामुक बातों का आनंद लेते थे। इन चीजों को वे अपने बाहरी जीवन का सार, जीवनदायिनी मानते थे। उसके आंतरिक जीवन में निर्विवाद शासक उसके माता-पिता ही थे। जागते हों या सोते, वही थे, कोई और नहीं—भले ही उसे याद न हो कि उसके पिता कैसे दिखते थे या कैसे बोलते थे। उसकी कल्पना में कभी उसकी माँ, कभी कदम शरीफ़ में उसके पिता का मकबरा, कभी वह लंबा-चौड़ा, प्रभावशाली व्यक्ति, जिसे वह अपने पिता का हकीम समझता था, औपचारिक पोशाक पहने, स्वस्थ और शक्ति से भरपूर, ठीक वैसे ही जैसे किसी स्वास्थ्यवर्धक चिकित्सक को होना चाहिए, दिखाई देता था। उसके मृत पिता की छवि में किसी और के होने का कोई सवाल ही नहीं था। लेकिन इस विशाल, अजनबी दुनिया में उसकी अम्मा जान का अकेलापन और लगभग असहायता... इसका क्या? इससे कैसे निपटा जाए? बच्चे आम तौर पर अपने युवा माता-पिता को भी काफी बूढ़ा समझते हैं, उनकी वास्तविक उम्र से कहीं अधिक; खासकर जब बच्चे बड़े होने लगते हैं, तो वे अपने माता-पिता को न केवल पुराने ख्यालों का, बल्कि प्राचीन और किसी तरह से घिसा-पिटा भी समझने लगते हैं, भले ही माता-पिता के बूढ़े होने का एहसास बच्चों की आलोचना करने का मतलब न हो। लेकिन नवाब मिर्ज़ा के मन में अपने पिता और माता की छवि एक ही बिंदु पर

स्थिर हो गई थी, चाहे उनकी उम्र कितनी भी बढ़ गई हो या समय का उनके जीवन पर स्वाभाविक प्रभाव पड़ा हो। नवाब मिर्ज़ा को लगता था कि उनकी माता बहुत युवा हैं, शायद अविवाहित भी। जब भी वे अपनी माता के बारे में सोचते, उनका हृदय उन्हें समय के क्रूर हाथों और संसार के उस अन्याय से बचाने की इच्छा से भर उठता, जो उन पर हमेशा ज़ुल्म करता रहता था। उनका अपनी माता के प्रति प्रेम किसी न किसी रूप में पिता तुल्य था, वे हमेशा उन्हें अपनी सुरक्षा और बचाव की आवश्यकता महसूस करते थे। यह धारणा—कि वे हमेशा एक रक्षक की तरह उनकी हर संभव मुसीबत में उन्हें बचाएंगे—उनकी माता के प्रति अन्य सभी भावनाओं पर हावी थी। उन्होंने कभी यह नहीं सोचा था कि बड़े होकर उन्हें शादी करनी पड़ेगी: तब उनके अपने बच्चे होंगे; एक ऐसा गृहस्थ जीवन जिसमें उनकी माता के लिए शायद ही कोई जगह होगी। वे ऐसे भविष्य की कल्पना भी नहीं कर सकते थे जिसमें वे अपनी माता से अलग जीवन व्यतीत करें, यहाँ तक कि उनकी मृत्यु के बाद भी। लेकिन उनकी मां का अकेलापन, उनके जीवन में किसी पुरुष के बिना...? वह कभी-कभार इसके बारे में सोचते तो थे, लेकिन उन्होंने कभी इसके निहितार्थों और व्यापक परिप्रेक्ष्य में इसके अर्थ पर विचार नहीं किया। शायद उनके अवचेतन मन में यह विचार छिपा था कि अम्मा जान उन्हें अपने आध्यात्मिक और बौद्धिक जीवन का केंद्र बिंदु बना लें, कि वे किसी तरह उनके पिता का स्थान उन्हें आध्यात्मिक रूप से सौंप दें, और इस प्रकार हमारा जीवन सहजता और सरलता से चलता रहे। उन्होंने कभी यह नहीं सोचा कि जीवन वैसा नहीं होता जैसा उन्होंने कल्पना की थी। भले ही वह दिन आ जाए जब उनका विवाह हो जाए और उनका अपना परिवार हो जो किसी तरह उनकी मां के साथ खुशी से रह सके, एक दिन अवश्य आएगा जब उनकी मां इस दुनिया में नहीं रहेंगी और उन्हें मजबूरन अपने जीवन के केंद्र में मौजूद स्थान को छोड़ना पड़ेगा।

अब, जब जहांगीर बेगम और उमदा खानम ने उनके सामने उनकी माता के लिए गृहिणी और विवाहित महिला की तरह जीवन जीने की संभावना, बल्कि वांछनीयता भी रखी, तो उन्हें पीड़ा और बेचैनी का अनुभव हुआ। यद्यपि उन्होंने स्वयं कहा था कि अतीत में जीना उनकी माता के लिए अच्छा नहीं है, अब जब उनकी माता को अतीत से वर्तमान में लाने का एक व्यावहारिक सुझाव रखा गया, तो उन्होंने इसका विरोध किया; उन्हें उदासी, चिंता या शायद एक अवर्णनीय असंतोष का अनुभव हुआ। आख़िर इस झंझट की क्या ज़रूरत है? उनके सुचारू जीवन को क्यों बिगाड़ा जाए, खासकर तब जब इस बदलाव के लाभ स्पष्ट न हों?

जहांगीराह बेगम ने उनके विचारों के प्रवाह को बाधित करते हुए कहा, 'हम आपसे पहले बात कर रहे हैं क्योंकि...' वह रुकी, 'हम ऐसा कुछ भी नहीं करना चाहते जिसे आप स्वीकार न करें।'

'मेरी सहमति? इस सौदे में मैं कौन होता हूँ अपनी सहमति देने या न देने का? अगर अम्मा जान सहमत नहीं होतीं, तो फिर?' उसके दिल में एक हल्की सी मुस्कान आ गई, हालाँकि उसकी आवाज़ में वो भाव नहीं था।

उमदा खानम ने कहा, 'मैं छोटी से बात करूंगी। ज़ाहिर है, उसकी इच्छा के विरुद्ध कुछ नहीं हो सकता... लेकिन... पुरुष ही स्त्री का सबसे बड़ा सहारा और शक्ति होता है। उम्र बढ़ने के साथ जीवन की धूप और तेज़ होती जाती है। अगर बुढ़ापे में स्त्री के सिर पर कोई छाया न हो, तो

उसका सारा जीवन झुलस सकता है; वह सब कुछ खो सकती है।'
'मंझली खाला, यह तो ठीक है,' नवाब मिर्जा ने तर्कपूर्ण स्वर में कहा। 'लेकिन मैं इस मामले पर अम्मा जान से बात नहीं कर सकता।'
उम्दा खानम चिल्लाई, 'अल्लाह से क्षमा मांगो! कोई यह नहीं कह रहा कि तुम छोटी से बात करो। हम बस इतना कहना चाहते हैं कि हम अगला कदम तभी उठाएंगे जब हमें यकीन हो जाएगा कि तुम्हें प्रस्ताव पसंद आया है।'

नवाब मिर्ज़ा लगभग अपना आपा और धैर्य खो बैठे। 'प्रस्ताव पसंद आया? पसंद का यहाँ क्या लेना-देना, वो भी मेरी पसंद या नापसंद का? मैंने पहले ही कहा है कि फैसला अम्मा जान का है, मेरा नहीं।'
उम्दा खानम और बहस करना चाहती थीं, लेकिन जहांगीराह बेगम समझ गईं कि नवाब मिर्ज़ा पहले से ही भावनात्मक और मानसिक रूप से काफी बोझ तले दबे हुए हैं। यह स्पष्ट था कि वे इस विचार या विचाराधीन प्रस्ताव का घोर विरोध नहीं कर रहे थे; शायद फिलहाल उन्हें आगे बढ़ने के लिए मनाना संभव नहीं था। उन्होंने आंखों के इशारे से उम्दा खानम को रुकने का संकेत दिया। फिर उन्होंने विषय बदल दिया।
मन ही मन सुलगते और उबलते हुए नवाब मिर्ज़ा कुछ देर तक बाज़ारों में भटकते रहे, फिर घर लौटे। उम्दा खानम पहले से ही वहाँ मौजूद थीं, नवाब मिर्ज़ा के जाने के तुरंत बाद ही वह अपनी पालकी में बैठकर वज़ीर के घर पहुँच गई थीं। उन्होंने बिना किसी झिझक के वज़ीर के पुनर्विवाह का विषय उठाया और उन्हें जहाँगीराह के दूतों और आगा मिर्ज़ा तुराब अली के विवाह प्रस्ताव की सारी जानकारी दी।
देखो बीबी, इसमें नाराज़ या दुखी होने जैसी कोई बात नहीं है, लेकिन यह जीवन भर का सौदा है। तुम्हें इसे हर पहलू से देखना होगा। अगर तुम्हें यह विचार पसंद नहीं है तो कोई बात नहीं, हम...
वज़ीर के चेहरे पर एक उदास, कड़वी मुस्कान आ गई। 'बाजी, मैंने जीवन भर का, बल्कि अपने पूरे जीवन का सौदा कई बार किया है। अब मुझे इस अग्नि परीक्षा से कितनी बार और गुजरना पड़ेगा?'
भाग्य के लेखक के एक हाथ में कलम है और दूसरे में तलवार। कलम जो कुछ भी लिखे, तलवार उसे मिटा सकती है। हममें से कुछ लोगों का भाग्य कई बार लिखा जाता है और कई बार मिटाया जाता है। हमारे खेल बार-बार खेले जाते हैं और हारे या जीते जाते हैं।
'जीत का क्या फायदा जब खेल को बार-बार खेलना हो?'
'अगर आप खेलना नहीं चाहते, तो कोई और आपके लिए चालें चलेगा। यहीं मृत और जीवित मोहरों के बीच का अंतर निहित है।'
'क्यों? कोई अजनबी मेरे फैसले क्यों ले? और मेरा खेल कौन खेलेगा?' वज़ीर की आवाज़ में क्रोध, दुख और विरोध का मिलाजुला भाव था। 'हमारी जिंदगियों और हमारे खेलों, हमारे नुकसान और फायदे की क्या कीमत है? क्या ये सब किसी शरारती बूढ़े आदमी के कठपुतली शो से

ज्यादा कुछ नहीं हैं? मंझली बाजी, आपको ऐसे भाषण देने का कोई हक नहीं!'
'मैं क्या कह रही हूँ? मैं क्या कह रही हूँ?' उम्दा खानम ने कुछ हताशा और कुछ विनती भरे स्वर में कहा। 'लेकिन आप ही बताइए: जब प्रेम का हाथ किसी की ओर बढ़ाया जाए तो उसे दुनिया में अकेला क्यों रहना चाहिए?'

'प्यार में, या स्वार्थ में?' वज़ीर गुस्से से उबल रहा था।
'प्रेम भी एक प्रकार का स्वार्थ है, शायद सबसे अत्याचारी और सबसे दमनकारी। छोटी, तुम थोड़ी अक्ल क्यों नहीं बोलती? मैं और जहांगीरह तुम्हारे दुश्मन नहीं हैं।'
वज़ीर ने एक मिनट तक कोई जवाब नहीं दिया, फिर थकी हुई आवाज़ में बोला, 'ठीक है, मैं इस बारे में सोचूंगा,' और उमदा खानम की तरफ देखे बिना अपने शयनकक्ष में चला गया। उमदा इंतज़ार करती रही, इस उम्मीद में कि वज़ीर बाहर आ जाए या नवाब मिर्ज़ा आ जाए। कई मिनट तक कुछ नहीं हुआ; वह वापस अपनी हवेली लौट गई।
उस रात वज़ीर को बिल्कुल नींद नहीं आई। लेकिन क्या कोई ऐसा था जिससे वह अपने दिल की बात कह सके? मंझली थी, जो अपने जीवन के पुराने धागों को काटकर बाकी बचे धागों को नए, उतने ही उलझे हुए गांठों में पिरोना चाहती थी। नवाब मिर्ज़ा मेरा बेटा है; लेकिन मैं उससे इस बारे में कैसे बात करूँ? वह खुद एक नासमझ नौजवान है, लगभग एक लड़का... और अगर कोई और होता जो उससे इस विषय पर बात करता? तब वह क्या कहता? क्या वह यह नहीं सोचता कि अम्मा जान, बुढ़ापे में, अपनी खोई हुई जवानी को फिर से पाने की कोशिश कर रही हैं? ... इससे भी ज़्यादा ज़रूरी बात, उसे दुख हो सकता था। वह अपने पिता की याद को ज़िंदा रखने के लिए अपनी जान भी दे देता... और मैं? मैं क्या हूँ? उसके पिता की मेरी अपनी यादों का क्या? अगर कोई मेरा दिल खोलकर देखे, तो उसे पता चलेगा कि यह एक उजाड़, अकेली कब्र है जहाँ मेरे नवाब साहब की याद एक दीपक की तरह टिमटिमाती है। उस कमज़ोर रोशनी के बिना, मेरा जीवन अंधेरे में डूब जाएगा, हमेशा के लिए निशान खोकर। तो बल्क साहब और मेरे बच्चे कहाँ हैं? बल्क साहब मुझसे छीन लिए गए, फिर मेरे बच्चों को भी मुझसे बिना मेरी परवाह किए छीन लिया गया। फिर भी... अल्लाह, मैं उनका पालन-पोषण कैसे कर पाती, उनकी देखभाल कैसे कर पाती? नहीं, क्यों नहीं? मैं ज़रूर करती, जैसे मैं अपने नवाब की याद के वृक्ष को अपने आँसुओं से सींचकर हरा-भरा रखती आई हूँ। लेकिन अगर अमीर मिर्ज़ा और बादशाह बेगम मेरे साथ रहते, तो क्या मैं अपने नवाब का दिल उसी तरह जीत पाती? हर कोई दूसरों के बच्चों को शक की नज़र से देखता है। कृपा तो अपने बच्चों और दूसरों की पत्नियों पर ही होती है। यही नियम है।
और ये सज्जन कौन हैं? ये आगा साहब? ये मुझसे क्या चाहते हैं? मैंने सुना है कि ये शिया हैं। तो ये क्या चाहते हैं? क्या ये उनके बीच प्रचलित अल्पकालिक अनुबंध विवाह है? या फिर ये मुझसे विधिवत विवाह करेंगे? और फिर मेरे बच्चे का क्या होगा, और उन बच्चों का क्या होगा जिन्हें मुझसे छीन लिया गया है? मैं उनके लौटने की उम्मीद नहीं कर सकती। लेकिन कौन जानता है? वे लौट भी सकते हैं; इस दुनिया में कुछ भी संभव है। लेकिन अगर वे लौटना चाहें, तो ये

आगा साहब क्या प्रतिक्रिया देंगे?

वज़ीर के दो दिन उलझन सुलझाने, सवाल पूछने और जवाब देने में बीत गए। जहांगीराह को अब लौटने की जल्दी थी; लेकिन रामपुर छोड़ने से पहले वह अपने प्रस्ताव को सफल होते देखना भी चाहती थी। अब तक वह वज़ीर के स्वभाव का अच्छा आकलन कर चुकी थी: वह किसी से प्रभावित होने वाली नहीं थी। वज़ीर को उसके मोहक रूप का एहसास बचपन से ही था; वह अच्छी तरह जानती थी कि उसमें एक ऐसी शक्ति है जो बिना किसी प्रयास के किसी का भी दिल जीत सकती है। फिर, इतने वर्षों तक किसी की प्रेमिका होने के अनुभव ने उसे एक गर्व, लगभग अहंकार दिया था, जो उससे जुड़े हर व्यक्ति की नज़र में आकर्षक और वांछनीय था। आखिर, गर्वित, अहंकारी और बेपरवाह सुंदरता भारत-मुस्लिम प्रेम कविताओं में सबसे लोकप्रिय विषयों में से एक थी। जीवन के अनुभवों ने उन्हें यह समझने की शक्ति दी कि उनके लिए क्या अच्छा है और क्या नहीं, और साथ ही सभी संभावित प्रेमियों से स्वाभाविक रूप से दूरी बनाए रखने और गर्व करने की कला भी विकसित करने में मदद की। पुरुष की अनुपस्थिति ने उनके व्यक्तित्व में कोई कमी नहीं छोड़ी: वह जानती थीं कि वह स्वयं में पूर्ण हैं। उनकी एकमात्र इच्छा एक पुरुष के माध्यम से अपने अस्तित्व और व्यक्तित्व की पुष्टि थी। उनका मानना था कि यदि दुनिया में कहीं प्रेम है, तो वह उस स्त्री के लिए है जो उसे यह उपहार देती है। उन्होंने कहा कि पुरुष प्रेम नहीं करते: वे प्रेम किए जाने की भावना में लीन रहते हैं; यदि वे प्रेम किए जाने की अवस्था का आनंद लेने लगते हैं, तो वही उनका प्रेम है, या किसी से प्रेम करने का विकल्प है। उनका मानना था कि केवल एक स्त्री ही सच्चे प्रेम के योग्य है। लेकिन यदि स्त्री बुद्धिमानी से प्रेम न करे, या अपने अहंकार से धोखा खा जाए, तो उसे बहुत भारी कीमत चुकानी पड़ सकती है। फिर भी, उनका मानना था कि यदि वह पुरुष में प्रेम किए जाने की प्रबल भावना उत्पन्न कर सके, तो वह भारी कीमत भी स्वीकार्य है: इस प्रकार वह पुरुष की छवि में अपनी छवि देख सकती है।
एक रात वज़ीर को नींद से जागने का एहसास हुआ और वह सपने और जागने के बीच की अवस्था में थी। उसने खुद से कहा कि शायद महिलाओं की नियति प्रेम की तलाश में जीवन भर भटकना है। यह निराशा में लिया गया निष्कर्ष नहीं था, बल्कि एक प्रकार का आत्म-बोध था। सुबह उसने पालकी मंगवाई और सीधे मंझली बेगम के घर चली गई।
अपनी सामान्य गर्मजोशी भरी शुभकामनाओं के बिना या घुमा-फिराकर बात किए बिना, उन्होंने मांझली से सीधा सवाल पूछा: 'बाजी, मुझे साफ-साफ बताइए, इस प्रस्ताव में आपको मेरे लिए क्या लाभ दिखता है?'
उम्दा खानम ने स्नेह से हंसते हुए कहा, 'छोटी बच्ची, क्या तुम पागल हो गई हो? क्या अब मुझे यह समझाने की ज़रूरत है कि पुरुष स्त्री के शरीर पर चादर है, उसके सिर पर छत है, जवानी में उसका आश्रय है और बुढ़ापे में उसका सहारा है?'
‘सचमुच, मंझली बाजी, आपको तो किसी मस्जिद में मुख्य पुजारी या नमाज पढ़ाने वाला होना चाहिए था!’
'छोटी बेगम, कृपया इन मामलों को हंसी में मत उड़ाओ; यह समय और स्थान है जब आपको

रुककर विचार करना चाहिए।'
वज़ीर भड़क उठा और उसने तीखे शब्दों में जवाब दिया, 'मुझे अब तक पुरुषों से ऐसा कौन सा समर्थन मिला है कि अब भी मिलेगा?'
'शांत दिमाग से सोचने की कोशिश करें। नवाब मिर्ज़ा—ईश्वर के नाम पर—युवावस्था में प्रवेश करने वाले हैं। उनका घर-बार और परिवार होना तय है। कौन जाने वो कहाँ रहना पसंद करेंगे? शायद वो दिल्ली चले जाएँ, शायद कहीं और। आजकल युवा माता-पिता के घर से दूर रहना पसंद करते हैं, खासकर जब उनके सिर पर पिता न हों।'
'नहीं, मुझे पूरा यकीन है कि मेरे नवाब मिर्जा ऐसा कभी नहीं करेंगे!'
मंझली पलटकर जवाब देना चाहती थी, 'क्या बादशाह बेगम और अमीर मिर्ज़ा की तरह?' लेकिन उसने अपनी छोटी बहन को दुख न पहुँचाने के लिए खुद को रोक लिया। वह दिल से चाहती थी कि वज़ीर की नाव किसी सुरक्षित किनारे पर पहुँच जाए।
ठीक है। लेकिन आप उसे क्या खिलाएँगे? और अपना पेट कैसे भरेंगे? आपने अपने जीवन का बड़ा हिस्सा आराम से, बल्कि विलासिता में बिताया है। आपके पास नौकर, नौकरानियाँ, पहरेदार, द्वारपाल, पालकी, नलकी और न जाने क्या-क्या था। आपने नवाब मिर्ज़ा को सब कुछ दिया, यहाँ तक कि उसे लाड़-प्यार भी किया। क्या मुझे यह नहीं दिख रहा कि आपकी आर्थिक स्थिति दिन-ब-दिन कमजोर होती जा रही है?
वज़ीर, जो मंझली से इस मामले पर बहस करने के लिए तैयार थी, अचानक चुप हो गई। उसे यह बिल्कुल पसंद नहीं था कि कोई, यहाँ तक कि उसकी प्यारी बहन भी, उसकी आँखों के सामने खड़ी गरीबी पर टिप्पणी करे। उसके होंठ और जीभ सूख गए। वह जवाब देना चाहती थी, लेकिन उसे उचित शब्द नहीं मिल रहे थे। मंझली बेगम ने घबराकर अपनी नौकरानी चांदनी को बुलाया और उससे बिस्तर मिश्रण का ठंडा रस लाने को कहा, जो चिंता, निराशा या उलझन के लिए एक औषधीय पेय है। फिर उसने छोटी से अत्यंत कोमल स्वर में कहा, 'देखो, छोटी, मैं तुम्हें कुछ भी थोपने वाली नहीं हूँ। तुम निर्णय लेने वाली हो, अंततः फैसला तुम ही करोगी। न ही मैं तुमसे यह आग्रह कर रही हूँ कि तुम मेरे प्रस्ताव को स्वीकार करो। इस पर अच्छी तरह सोच लो। अगर तुम चाहो तो उससे आमने-सामने मिल भी सकती हो। अगर तुम चाहो तो प्रस्ताव स्वीकार कर लो; अगर नहीं, तो बिना किसी को ठेस पहुँचाए विनम्रता से मना कर दो... और देखो, इस प्रस्ताव का एक फायदा यह है कि तुम नवाब मिर्ज़ा से अलग नहीं होगी।'
'बाजी, ये कौन है? मुझे इनके बारे में कुछ भी पता नहीं है। इन्हें मेरे बारे में कैसे पता चला? या अगर इन्होंने मुझे कहीं देखा भी है, तो कैसे? इन्होंने इतने सारे लोगों में से मुझे ही क्यों चुना?'

वज़ीर सचमुच हैरान लग रही थी, हालाँकि उसे जहाँगीरह कनेक्शन के बारे में पता था। उमदा खानम, जो अपनी संकरी गली में वज़ीर के प्रशंसकों की भीड़ से भली-भांति परिचित थी, अपनी मशहूर मुस्कान के साथ मुस्कुराई। 'सचमुच! अब इस युवती को यह बताने की ज़रूरत है कि उसकी उपलब्धियों, उसकी जवानी और खूबसूरती की चर्चा हर जगह हो रही है! सच में, छोटी, तुम तो अभी भी बिल्कुल अविवाहित लगती हो।'

‘मंझली बाजी, कृपया मेरे साथ मजाक मत कीजिए। मुझे पूरी और सच्ची जानकारी दीजिए ताकि मैं इस सवाल पर विचार कर सकूं।’
खैर, अब और कुछ बताने को नहीं है। वह जहांगीराह के पति के बड़े भाई हैं। उन्होंने आपके बारे में जहांगीराह से सुना था... और वास्तव में... नवाब की शहादत के बाद शायद ही कोई ऐसा हो जिसने आपके बारे में न सुना हो। अब, जब आप रामपुर आए और यहाँ की बेगमों ने आपको देखा और आपसे व्यक्तिगत रूप से बात की, तो आपने उनकी सभी उम्मीदों को पार कर दिया। आगा साहब की पहली पत्नी का देहांत एक साल से थोड़ा अधिक समय पहले हुआ था। इसलिए उन्होंने जहांगीराह से पूछा कि क्या आपमें उनकी रुचि हो सकती है।
तो क्या वह एक औपचारिक विवाह चाहता है?
‘और क्या, लड़की? जहांगीराह तो बीच में है ही, है ना?’
नहीं, मुझे लगा कि शायद वह उन अस्थायी विवाहों में से एक करना चाहता है जो शियाओं में मान्य हैं।
‘मैं अल्लाह से क्षमा मांगता हूँ! बेशक, रामपुर का शासक शिया है, लेकिन उसका परिवार मूल रूप से सुन्नी था। रामपुर के लोग ऐसी प्रथाओं को अच्छा नहीं मानते।’
और अगर मेरे बच्चे उससे पैदा होते हैं, तो क्या उन्हें शिया के रूप में पाला जाएगा?
'बीबी, क्या हमें वाकई इतनी दूर तक देखने की जरूरत है? जब समय आएगा तब हम इस सवाल पर विचार करेंगे।'
नहीं, मैं चाहता हूं कि यह बात स्पष्ट रूप से समझ में आ जाए। अगर कोई बच्चा होता है, तो उसे हमारे धर्म के अनुसार पाला-पोसा जाएगा।
‘ठीक है, मैं जहांगीराह से बात कर लूंगा। और कुछ?’
वज़ीर खानम फिर सोच में पड़ गया। ‘मैंने इस आगा साहब को देखा तक नहीं है। ये किस तरह के इंसान हैं? इनका सामान्य जीवन कैसा है? क्या ये अपने व्यवहार में कठोर और सख्त हैं? मुझे उम्मीद है कि ये मेरे नवाब मिर्ज़ा से प्यार करने में कोई कसर नहीं छोड़ेंगे।’
अगर उनके चरित्र, वंश या स्वभाव की महानता पर जरा सा भी कलंक होता, तो जहांगीराह कभी इस प्रस्ताव के बारे में सोचता भी नहीं। न ही मैं सोचता। अगर आप चाहें तो आप उनसे मिल सकते हैं और बात कर सकते हैं।
नहीं, नहीं। बिलकुल नहीं। लेकिन... मैंने कभी अंधाधुंध संबंध नहीं बनाए हैं। मुझे डर और चिंता हो रही है।

अब उमदा खानम की बारी थी सोचने की। 'आगा साहब पुराने ख्यालों के सज्जन हैं। मुझे नहीं पता कि उनकी क्या प्रतिक्रिया होगी।'
‘इसमें आपत्ति करने जैसी कोई बात नहीं है। शरिया इसकी अनुमति देता है।’
“प्यारी बेटी, ऐसे मामलों में रीति-रिवाज और परंपराएँ ज़्यादा महत्वपूर्ण होती हैं, शरीयत बाद में आती है। खैर, तुम आज रात मेरे साथ रुक जाओ। मैं दिन में बाद में जहाँगीर जाऊँगा और हर मुद्दे पर चर्चा करूँगा। अगर इस मामले में आगे कोई कदम उठाना हो, तो यहीं से उठाएँ। मैं अपने

नवाब साहब से भी सलाह लूँगा।"
आगा मिर्ज़ा तुराब अली वज़ीर का दिल जीतने की तीव्र इच्छा से जल रहे थे। उमदा और वज़ीर की बातचीत के कुछ ही समय बाद, एक लाठी-कमान और दो कुली उमदा खानम के दरवाजे पर यह संदेश लेकर आए कि वे आगा साहब की ओर से हैं। उन्होंने बताया कि उन्होंने कुछ उपहार भेजे हैं। ये उपहार मुरादाबाद के पीतल के चार बड़े घड़े थे, जो सूखे मेवों से भरे थे। साथ ही, भारतीय गुलाब की लकड़ी से बना एक सुंदर लकड़ी का बक्सा भी था। ताले लगे बक्से की चाबी एक छोटी, सीलबंद थैली में थी। उमदा खानम ने लाठी-कमान और कुलियों को उचित इनाम देकर जाने दिया और पीतल के घड़ों को भंडारगृह में भिजवा दिया। उन्होंने लकड़ी का बक्सा वज़ीर को यह कहकर दे दिया कि यह उनकी निजी वस्तु है और इसे उन्हें ही खोलना है। वज़ीर शर्मा गए और बक्सा अपने कमरे में ले गए, यह तय नहीं कर पा रहे थे कि इसमें आखिर क्या हो सकता है। उमदा खानम ने कोई भी कीमती वस्तु न लेने का निश्चय कर लिया था, लेकिन फैसला बक्सा खोलने के बाद ही हो सकता था। उसने सील तोड़ दी, लेकिन चाबी उसकी लगभग बेजान उंगलियों से बार-बार फिसलती रही।
अंततः, उसने डिब्बा खोला और पाया कि उसमें मोटे कागज़ के दो रोल थे, जो अलग-अलग सोने के धागे से बंधे हुए थे। "हे भगवान, शुक्र है, यह कोई कीमती चीज़ नहीं है," उसने धीरे से कहा। एक कागज़ खोलते ही उसे महान फ़ारसी कवि सादी की एक ग़ज़ल मिली, जो आकर्षक लेकिन कुछ हद तक अनौपचारिक सुलेख शैली में लिखी गई थी, जिसे ईरानी उस्ताद मिर्ज़ा शफ़ी के नाम पर शफ़िया कहा जाता है, जिन्होंने इसे डिज़ाइन किया था। यह स्पष्ट था कि लिखने वाले ने कोई विशेष मेहनत नहीं की थी, लेकिन उसका हाथ इतना दृढ़, इतना साफ और इतना संतुलित था कि उसे मेहनत करने की ज़रूरत ही नहीं पड़ी होगी। उसने ग़ज़ल को बढ़ते हुए प्रशंसा के साथ पढ़ा, न केवल काव्य के लिए, बल्कि उसके चयन के लिए भी।

प्रेम का वृत्तांत लिखने के लिए कागज़ के बंडल पर्याप्त नहीं। प्रेम की कहानी सुनाने के लिए प्रवचन पर्याप्त नहीं। प्रेम का संगीत दीवानों को मदहोश कर देता है; इसे सुनने के लिए ज्ञानी पुरुषों के कान पर्याप्त नहीं। मैं आपकी वास्तविक सुंदरता की प्रशंसा नहीं कर सकता; मेरे गीत की लंबाई और चौड़ाई के लिए पूरा बाज़ार भी पर्याप्त नहीं। मैं सृष्टि के किसी और चेहरे को अपना हृदय नहीं दूंगा; आपके सामने दीवार पर बनी आकृतियाँ भी पर्याप्त नहीं। मैं आपको अपने हृदय की आँखों से देखता हूँ; आपकी दृष्टि की प्रज्वलित ज्वाला के लिए मेरी आँख पर्याप्त नहीं।
वज़ीर मंत्रमुग्ध और अचंभित थी। ऐसा लग रहा था मानो कवि ने यह कविता विशेष रूप से उसके लिए और विशेष रूप से इसी अवसर के लिए लिखी हो। प्रत्येक छंद में छिपे गहरे अर्थ उसे यह संदेश दे रहे थे: ये रहे तुम्हारे सारे उत्तर! क्या तुम्हारे कोई और प्रश्न हैं?
वज़ीर का आश्चर्य और आनंद कुछ कम होते ही, उसकी आँखों में अनकहे आँसू भर आए। शम्सुद्दीन अहमद के साथ भी ऐसा ही होता था। वे चिट्ठियों और बातचीत में कविताएँ साझा करते थे। उन दिनों और रातों की कोमल सुंदरता के लिए तरस, जो अब दुनिया के हाथों कुचल कर मिट गई है। दुनिया कभी पीछे मुड़कर नहीं देखती; दिनों का चक्र कभी पीछे नहीं चलता, पलक

झपकते ही नहीं रुकता। अब भी, नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान की छवि उसके दिल में धुंधली नहीं हुई थी, लेकिन किसी तरह उसकी आँखों के सामने उनकी छवि अमीर मिर्ज़ा, नवाब मिर्ज़ा और यहाँ तक कि उसके अपने पिता जैसी लगने लगी थी।

जीवन ने उसे यह अहसास करा दिया था कि चाहे वह कितनी भी स्वतंत्र, दृढ़ निश्चयी और जिद्दी क्यों न हो, कुछ भी अकेला नहीं होता, कुछ भी स्व-अस्तित्व वाला नहीं होता। नवाब मिर्ज़ा के अस्तित्व ने उसके मन में शम्सुद्दीन अहमद खान की छवि को कुछ हद तक बदल दिया था। यद्यपि अमीर मिर्ज़ा और बादशाह बेगम अब उससे अलग हो चुके थे, फिर भी मार्स्टन ब्लेक किसी न किसी रूप में उनके माध्यम से उसके रक्त में जीवित थे। तो अब... यह नई लहर मेरे जीवन के किनारे को सींचने और तबाह करने के लिए निकल पड़ी है, और इसके प्रभाव और अवशेष भविष्य में दूसरों में भी मिलेंगे; मैं अकेली प्रभावित नहीं होऊंगी। तो क्या मैं इसके लिए तैयार हूँ? उसने अपने शरीर पर एक नज़र डाली। वह अंदर से सचमुच टूटी हुई और उथल-पुथल से भरी थी, लेकिन उसका बाहरी रूप लगभग वैसा ही था जैसा उस समय था जब शहीद नवाब उसे अंतिम बार फिरोजपुर के लिए छोड़कर गए थे। क्या मेरी आत्मा के ये घाव किसी दिन उभरकर मेरे शरीर में नहीं समा जाएँगे? क्या यह सारी सुंदरता, सद्गुण और गरिमा, यह सादगी और मेकअप का अभाव, जो अपने अभाव में भी इतना आकर्षक है, यह सादगी और अलंकरण का अभाव, जो अपने अभाव में भी इतना मोहक है, सिकुड़कर कागज की तरह चूर-चूर नहीं हो जाएगा और पूरे शरीर पर झुर्रियों और सिलवटों का भोजन नहीं बन जाएगा?

उसे मंझली के शब्द याद आए: नवाब मिर्ज़ा की शादी होने और अपना घर बसाने में अब बस कुछ ही समय बाकी है। तब तुम बिल्कुल अकेली रहोगी, उसने कहा था। तुम और तुम्हारा कमज़ोर बुढ़ापा... इस प्रस्ताव में ज़रूर एक फ़ायदा है: मैं रामपुर में रहूँगी; नवाब मिर्ज़ा यहीं रहेंगे। मैं जहानाबाद की खामोशी से बच जाऊँगी, जो मेरे लिए वैसे भी प्यार की बंजर ज़मीन है। और अपने बेटे को एक तंदुरुस्त युवक बनते देखकर मुझे जीने की नई ताकत मिलेगी। क्या मेरी किस्मत में हमेशा यही लिखा है कि मैं जन्म दूँ और फिर अपने प्यारे बच्चों, अपने दिल के टुकड़ों से ज़बरदस्ती अलग हो जाऊँ? मेरा पेट चीरकर मेरे दिल और जिगर को तड़पाकर निकाल लिया जाए, क्या यही मेरी नियति है?

...अरे, मैं दूसरा कागज़ खोलना ही भूल गई! उसने अपने विचारों को समेटा, कागज़ खोला और सीधा किया, और देखा कि यह एक पूर्ण-चेहरे का चित्र था। प्रकाश और रंगों की चमक उसकी आँखों के सामने नाच उठी, जिससे वह थम सी गई। एक सुंदर, लेकिन कुछ उम्रदराज़ पुरुष, लगभग चालीस से पैंतालीस वर्ष का, गोरा रंग, जीवंत, चमकीली आँखें और एक गरिमामय माथा। उसका सिर एक छोटी, स्टाइलिश पगड़ी से ढका हुआ था, जिसे उसने कुछ बेपरवाह अंदाज़ में पहना था। पगड़ी आम के हरे रंग की थी, जिस पर बारीक पीली धारियाँ उसे एक विशिष्ट शैली दे रही थीं। उसकी दाढ़ी छोटी, बहुत पतली, ईरानी शैली में कटी हुई थी; मूंछें कुछ ज़्यादा उभरी हुई थीं। उसने हल्के, फूलों वाले मलमल का एक लंबा कुर्ता पहना था; कुर्ते के ऊपर उसने मुगल शैली का एक छोटा, आधी बाजू का कोट पहना था। चित्र की हर एक रेखा, हर एक बिंदु आडंबरहीनता का भाव प्रकट कर रहा था, जो केवल चित्र से ही नहीं, बल्कि चित्र में दिख रहे

व्यक्ति से भी संबंधित था: मिलनसार, सौम्य स्वभाव वाला, सहानुभूतिपूर्ण।
वज़ीर देखती रही, बार-बार देखती रही। कई मिनट बीत गए। उसने खुद को संभाला, मानो किसी हल्की नींद से जागी हो। उसने तस्वीर को थोड़ी दूरी पर, बेहतर रोशनी में रखकर फिर से देखा: तस्वीर वैसी ही थी, उतनी ही दोस्ताना, मुस्कुराती हुई नहीं, लेकिन एक प्यारी सी मुस्कान बिखेरने की तत्परता का भाव लिए हुए।
अचानक, वह क्रोधित हो उठी; यह बेबसी का क्रोध था, एक ऐसे बच्चे का क्रोध जो गुस्से से जल रहा हो लेकिन उसे व्यक्त करने के लिए शब्द न मिल रहे हों। क्या मैं अपनी इच्छा, अपनी पसंद को हर चीज़ पर हावी करने के लिए दृढ़ संकल्पित नहीं थी? फिर ऐसा क्यों हो रहा है? मंझली बाजी, जहांगीराह, यह आकर्षक, उच्च शिक्षित अजनबी जो खुद को आगा समथिंग कहता है... वे मुझे अपने वश में करने के अपने लक्ष्य की निरंतर खोज में लगे हैं। किसी के जीवन का नक्शा बनाने का उन्हें क्या अधिकार है? हम अपनी मर्जी से जी नहीं सकते, लेकिन क्या हम कम से कम अपनी मर्जी से मर नहीं सकते?
... फैसला मुझे ही लेना होगा... मंझली बाजी और जहांगीराह ने भले ही किसी योजना के तहत काम न किया हो, लेकिन ऐसा लगता तो है जैसे कोई योजना ही हो। और नवाब मिर्जा? उनका भी इसमें कुछ हाथ जरूर रहा होगा। अगर वो नहीं चाहते कि मैं दोबारा शादी करूं, तो मैं दोबारा शादी नहीं करूंगी। लेकिन अब मैं अपनी मर्जी की मालिक नहीं हूं। ये लोग मुझ पर दबाव डालते रहेंगे।
वह अपने कमरे से बाहर आई, मांझली को ढूंढा और उसे बरामदे में सुपारी काटते हुए पाया, मानो उसके सामने कोई मुद्दा ही न हो, कोई समस्या ही न हो।
'मंझली बाजी, क्या आपने... क्या आपने नवाब मिर्जा से बात की?'
'जी हां, बिल्कुल। निश्चिंत रहो, नन्हे बच्चे; मैंने और जहांगीराह ने उससे काफी देर तक बात की।'
तो उसने क्या कहा? मुझे उम्मीद है कि उसे बुरा नहीं लगा होगा?
अरे, मेरी प्यारी। उन्हें बुरा क्यों लगना चाहिए? उन्होंने कहा कि यह अम्मा जान को तय करना है। लेकिन ऐसा लगता है कि वे तुम्हारे एकांत और अकेलेपन को खत्म करने के विचार के पक्ष में थे।
'मैं अकेली नहीं हूँ!' उसने तीखे स्वर में कहा। 'मैं जैसी हूँ वैसी ही रहकर संतुष्ट हूँ।'

'बीबी, कोई भी अकेला नहीं होता। लेकिन कोई भी अकेले नहीं रह सकता। यह दुनिया है; यह समय है जो हमें अनगिनत तरीकों से बाध्य करता है। तुम कभी भी अच्छे अवसर को हाथ से जाने नहीं देती थीं। तुम जानती हो कि ज्यादातर चीजें दोबारा नहीं होतीं; कुछ होती हैं, खासकर बुरी चीजें।'
वज़ीर गुस्से में अपने कमरे में वापस गई और फूट-फूटकर रोने लगी। मंझली ने उसकी मनोदशा भांप ली और बिना पूछे ही अंदर जाकर उसके सिर पर हाथ रखकर उसे सहलाया और दिलासा दिया, और उसे पानी का एक घूंट पिलाया। जब वज़ीर के आंसू थम गए, तो उसने गहरी सांस ली और कहा, 'ठीक है। तो मैं अपने जीवन के साथ फिर से खेल खेलती हूँ।' उसने फ़ारसी कविता की प्रसिद्ध पंक्ति दोहराई: जो भी हो; मैं अपनी नाव पानी में उतारती हूँ। उसने अपने आंसू पोंछे,

आगा साहब के कागज़ों के पास लौटी, कलम उठाई और सादी की ग़ज़ल के नीचे सत्रहवीं शताब्दी के महान फ़ारसी कवि मिर्ज़ा साहब की यह पंक्ति लिखी:
इससे पहले, मैंने अपना खजाना एक जंगल में छिपाया था; अब, मैं जंगल को खजाने के भीतर छिपाता हूँ।
वज़ीर खानम और आगा मिर्ज़ा मौलवी तुराब अली का विवाह अगले महीने के पहले गुरुवार, 11 अगस्त 1842 को हुआ। विवाह समारोह पहले सुन्नी रीति-रिवाजों के अनुसार संपन्न हुआ, उसके बाद शिया रीति-रिवाजों के अनुसार एक और, कुछ अधिक विस्तृत, रस्म अदा की गई। दहेज ढाई सौ सोने के मोहर तय किए गए थे, जिन्हें मुगल टकसाल की मुहर के कारण मोहर कहा जाता था। उस समय प्रचलन में रहे अधिकांश सोने के मोहर 1760 के दशक में शाह आलम द्वितीय द्वारा ढाले गए थे; उनका सोना अंग्रेजी सोने से प्रति औंस पांच शिलिंग, यानी लगभग 6 प्रतिशत अधिक शुद्ध माना जाता था।
विवाह अनुबंध के अनुसार दहेज की आधी राशि तुरंत अदा कर दी गई। वज़ीर खानम दिल्ली नहीं लौटीं; उनकी औपचारिक विदाई उमदा खानम की हवेली से हुई। अनवरी खानम और उनके पति बड़े उत्साह और खुशी के साथ दूल्हा-दुल्हन के लिए उपहार लेकर दिल्ली से आए। अनवरी का मन शांत हो गया, क्योंकि उनकी पथभ्रष्ट बहन को अंततः पापों से दूर, मोक्ष के निकट एक उचित और स्थिर आश्रय मिल गया था। नवाब यूसुफ अली खान ने सभी खर्चों का भार स्वयं उठाया और यह सुनिश्चित किया कि सभी समारोह और रस्में भव्यता और सुरुचिपूर्ण ढंग से संपन्न हों। नवाब मुहम्मद सईद खान बहादुर ने नवविवाहित जोड़े के लिए मिठाई, वस्त्र और रत्नजड़ित अंगूठियां भेजीं।
वज़ीर ने दिल्ली स्थित अपने घर पर अपना कब्ज़ा बनाए रखा; उन्होंने उसकी चाबियाँ अनवरी खानम को सौंप दीं ताकि वह समय-समय पर कमरों में हवा आने दे सकें या आवश्यक मरम्मत करवा सकें। चौथे दिन की रस्मों के बाद वज़ीर आगा मिर्ज़ा तुराब अली की हवेली में रहने लगीं। उनके पति ने उन्हें प्यार, सुरक्षा और अपने घर का एहसास दिलाने में कोई कसर नहीं छोड़ी। वज़ीर ने एक लंबा समय बीत चुका था जब उन्होंने शांति और सुरक्षा के सुरक्षात्मक माहौल का अनुभव किया था; अब दुखों से दूरी ने उन्हें कई आभाओं की तरह घेर लिया था: बाहरी दुनिया का भयानक अंधकार अब कभी भी उनकी दहलीज पार नहीं कर पाएगा और न ही उन्हें या उनके बेटे को दूषित कर पाएगा।
अपनी विद्वत्ता के कारण आगा मिर्ज़ा तुराब अली को मौलवी के नाम से भी जाना जाता था, लेकिन उनका व्यक्तित्व आम तौर पर मौलवियों से जुड़े किताबी, नीरस और कठोर स्वभाव का नहीं था। न ही वे अपने पूर्वज ईरानी रईसों के बारे में कोई बड़ी-बड़ी धारणाएँ रखते थे; छोटी बेगम को अपने से कमतर समझने का तो कोई सवाल ही नहीं था। उनका स्वभाव वास्तव में काव्यात्मक और प्रेममय था। वे वज़ीर के प्रति अत्यंत स्नेहपूर्ण और आदरपूर्ण भाव रखते थे। उदाहरण के लिए, वे उन्हें कभी छोटी बेगम कहकर संबोधित नहीं करते थे, न ही उन्हें वज़ीर खानम कहते थे। इसके बजाय, वे हमेशा उनसे और उनके बारे में वज़ीर बेगम कहकर ही बात करते थे। वे आमतौर पर फ़ारसी बोलते थे, लेकिन वज़ीर से बात करते समय वे शुद्ध उर्दू-ए-

मुअल्लाह या हिंदी में बात करने का विशेष ध्यान रखते थे, जो उस भाषा का सबसे प्रचलित नाम था।

आगा मिर्ज़ा तुराब अली ने वज़ीर की कविता लेखन में भूली हुई रुचि को फिर से जगाने के लिए भी प्रयास किए। उन्होंने बड़े प्यार से और अपनी सच्ची रुचि दिखाते हुए ज़ोर देकर कहा कि ज़ुहरा दिहलवी उपनाम से कविता लिखने वाली वज़ीर खानम को अपनी यादों को खंगालना चाहिए और अपनी लिखी हुई जो भी कविताएँ मिलें, उन्हें निकाल लाना चाहिए। अगर उनके पास कोई पुरानी नोटबुक या कागज़ के टुकड़े हों जिन पर उन्होंने एक होनहार युवा कवयित्री के रूप में अपनी कविताएँ लिखी हों, तो उन्हें पूरी लगन से उनकी खोज करनी चाहिए। उन्होंने कहा, 'मैं रामपुर के लोगों को यह साबित करना चाहता हूँ कि मैं वज़ीर बेगम की सिर्फ़ शारीरिक सुंदरता का ही मुग्ध नहीं हूँ: मैं उनसे उनकी कविताओं के लिए भी प्रेम करता हूँ। उन्हें यह पता होना चाहिए कि मुझे सिर्फ़ एक खूबसूरती से रंगी हुई तीतर ही नहीं मिली है; मुझे उनमें मधुर गीत गाने वाली शमा चिड़िया भी मिली है! (यह बात वज़ीर को अच्छी तरह समझ में आ गई थी कि शमा चिड़िया के पंख गहरे भूरे रंग के होते हैं और शम का अर्थ 'काला' होता है।)

वज़ीर ने जवाब दिया, "बस करो, आगा साहब, बहुत हो गया! कृपया मुझे अपनी ज़िंदगी से संतुष्ट रहने दीजिए। अगर आप इसी तरह बोलते रहे, तो मुझे डर है कि लोग आप पर उस मशहूर कहावत को लागू कर देंगे जिसमें एक घमंडी आदमी को एक रंगा हुआ तीतर मिल जाता है और वह उसे दिखाने या छिपाने की चिंता में मर जाता है।"

आगा मिर्ज़ा तुराब अली खुशी से खिलखिला उठे। 'क्या आप जानती हैं, वज़ीर बेगम, कि शतरंज के जिस मोहरे को हम वज़ीर कहते हैं, उसे अंग्रेज़ी में क्वीन कहते हैं? इस तरह तो मैं दोनों तरह से मालामाल हूँ: आप क्वीन भी हैं और वज़ीर भी। तो फिर आपके मात्र चमड़ी के आवरण में होने का सवाल ही कहाँ उठता है?'

अल्लाह से माफ़ी मांगती हूँ! ज़रा गंभीरता से सोचिए। घरेलू जीवन हो या कविता, ये शतरंज या पचीसी के खेल नहीं हैं। मुझे देखिए, आपके हुक्के की गंध से मुझे जी मिचला रहा है; मैं ठीक से सांस भी नहीं ले पा रही हूँ, और आप यहाँ संगीत और कविता की सांसों की बातों में मग्न हैं!

आगा तुराब अली फिर हँसे। "अच्छा, यूनानी दार्शनिकों का मानना था कि आकाशीय पिंडों की परिक्रमा से ही संगीत उत्पन्न होता है, जो समस्त जीवन की साँस है।"

'उन धूर्त और निकम्मे लोगों का सत्यानाश हो!' वज़ीर की आवाज़ में अनकही चापलूसी भरी थी। 'तुम मुझे रटौल या गंगोह से मुट्ठी भर ताज़े हरे छोटे आम भी नहीं ला सकते।'

अरे, याद दिलाने के लिए धन्यवाद, मैं तो बताना ही भूल गया था। कल ही मैंने दो घुड़सवार भेजे थे, एक मुजफ्फरनगर और रटौल के लिए, और दूसरा सहारनपुर और गंगोह के लिए। आप देखेंगे कि कल शाम तक आपके सामने आमों की इतनी हरियाली होगी कि लालिमा भी ईर्ष्या से मर जाएगी।

कुछ ही समय बाद वज़ीर गर्भवती हो गईं। इस बार उन्हें पिछली गर्भावस्था की तरह कोई चिंता नहीं थी। फिर भी, दोनों गर्भधारण के बीच लंबे अंतराल के कारण हबीब-उन निसा ने उनका विशेष ध्यान रखा। हकीम और दाइयाँ लगातार उनसे परामर्श करती रहीं। आगा मिर्ज़ा तुराब अली

हमेशा की तरह, बल्कि पहले से भी अधिक, विचारशील और ध्यान देने वाले थे। इस सारी मेहनत का फल 28 जून 1843 को एक पुत्र के रूप में मिला। नवजात शिशु सुंदर, हष्ट-पुष्ट और अपने पिता की तरह गोरा था। वज़ीर के सुझाव पर बच्चे का नाम शाह मुहम्मद आगा मिर्ज़ा रखा गया। अपने सभी भाई-बहनों की तरह, वह भी कवि बने। उन्होंने हिंदी और फ़ारसी दोनों भाषाओं में लिखा; फ़ारसी में शैक़ और हिंदी में शघिल उपनाम से उन्होंने एक प्रख्यात कवि के रूप में ख्याति प्राप्त की।

बारिश जल्दी आ गई और जब तक वज़ीर ने छठे दिन, तीसवें दिन और बच्चे के सिर मुंडवाने की रस्म पूरी की, तब तक बारिश का मौसम अपने चरम पर था। मिर्ज़ा तुराब अली के आंगन और भीतरी बगीचे के सूखे हिस्से, जो गर्मी के अंतहीन दिनों में तेज़ पश्चिमी हवा से पूरी तरह सूख गए थे और इतने मुरझाए हुए और उदास दिखते थे मानो उन्होंने अपने दयनीय जीवन में कभी बारिश की एक बूँद भी न देखी हो, लगभग रातोंरात जाग उठे और नए पत्तों और शाखाओं से चमकते हुए, जीवन का एक नया दौर शुरू हो गया। रामपुर शहर में जहाँ भी विकास की कोई संभावना थी, सड़कें, गलियाँ, बगीचे, खुले स्थान प्रकृति और मानव कला से जीवंत हो उठे, आपस में बातें करते हुए, प्रतीकात्मक और शारीरिक रूप से एक-दूसरे की ओर बढ़ते हुए, मानो वे दोस्त आपस में फुसफुसा रहे हों, सिर एक-दूसरे के करीब रखे हुए, जैसा कि महान कवि मीर ने कहा है। बड़े और छोटे आमों के गुच्छों ने उन पेड़ों की पत्तियों और शाखाओं को लगभग ढक लिया था जिन पर वे मीठे आनंद के साथ पक रहे थे। कोसी नदी, जिसके किनारे रामपुर शहर बसा हुआ था, लगभग उफान पर आ गई थी।

बगीचों और बागों में, हरे-भरे और रंगीन खुले मैदानों में झूले लगाए गए थे। मौसमी व्यंजन, मसालेदार, तीखे, तले हुए, अपनी खुशबू चारों ओर फैला रहे थे; वातावरण एक शाही रसोई जैसा बन गया था। मोर की तीखी, शक्तिशाली, लंबी, मर्मस्पर्शी पुकार, कोयल की कूक-कू... ऊऊ... की आवाज़, बारिश के आगमन की घोषणा करती और और बारिश की गुहार लगाती पीविट की पुकार, अपने नवजात बच्चों को ढूंढती हुई, जिन्हें उसने अपनी सामान्य भूलभुलैया में अकेला और उपेक्षित छोड़ दिया था, और बहुत बाद में याद करके बेचैनी से उन्हें पुकारा, 'यहाँ! मैं यहाँ हूँ!' इन सबने रामपुर को सचमुच दारुस सुरूर (आनंद का घर) बना दिया था। वज़ीर के आँगन और उसके घर में भी बसंत का मौसम था। उसकी बाहें एक मजबूत, उज्ज्वल शिशु से भरी हुई थीं; उसका बिस्तर एक प्रेममय, प्यारे पुरुष की उपस्थिति से भरा हुआ था; उसका हृदय भय से मुक्त था; उसका प्यारा बेटा नवाब मिर्ज़ा एक सुंदर युवक और एक होनहार कवि के रूप में तेजी से बढ़ रहा था; अब वह और क्या मांग सकती थी? उसके लिए दिन ईद के दिन जैसे थे, रातें शब-ए-बारात की रात जैसी थीं, जब दुनिया भर में प्रार्थनाएं होती हैं, महंगे खाने होते हैं, शानदार रोशनी होती है और पटाखे फूटते हैं।

इसलिए यह बिलकुल उचित था कि जीवन के सभी पहलुओं में आरोहण के इस मौसम में वज़ीर का हृदय पुनर्जीवन की इच्छा से उमड़ उठा: उन्हें एक बार फिर कविता में हाथ आज़माना चाहिए था। मौलवी तुराब अली हमेशा की तरह उन्हें कविता की ओर लौटने के लिए मनाने में तत्पर थे। शहर में, भीषण गर्मी से उबर रहे कवि संगठित या अनौपचारिक मुशायरों के लिए साहित्यिक

सभाओं में एकत्रित होने लगे।

नवाब मुहम्मद सईद खान के शासनकाल में रामपुर, जो पहले से ही विद्या का एक महत्वपूर्ण केंद्र था, काव्य के लिए एक समृद्ध शहर के रूप में स्थापित होने लगा। नवाब यूसुफ अली खान स्वयं एक कवि थे, और वे केवल कभी-कभार कविताएँ नहीं लिखते थे। उनका उपनाम यूसुफ था; वे प्रख्यात कवि, ज्योतिषी और शतरंज खिलाड़ी हकीम मोमिन खान मोमिन के शिष्य थे। मोमिन का 1852 में निधन हो गया, इसलिए जब यूसुफ अली खान 1855 में शासक बने, तो वे मिर्ज़ा ग़ालिब के शिष्य बन गए। नए गुरु ने उन्हें नाज़िम उपनाम दिया, और आज वे इसी नाम से जाने जाते हैं। नवाब यूसुफ अली खान के चचेरे भाइयों में अब्बास अली खान बेताब, इनायत अली खान इनायत, हिदायत अली खान ग़ुरबत और अब्दुल वहाब खान सरोश जैसे कई लोग थे, जो मोमिन के शिष्य बने। ये सभी अब रामपुर में बस गए थे।

नवाब यूसुफ अली खान के बाद दिल्ली से रामपुर आने वालों में मुजीद रामपुरी, मीर तस्कीन दिहलवी और उनके पुत्र मीर ग़मगिन दिहलवी शामिल थे। इन दोनों को नवाब यूसुफ अली खान ने बुलाया था, जिन्होंने 1840 में रामपुर आने पर एक मासिक मुशायरा शुरू किया था। प्रसिद्ध अली बख्श बीमार के शिष्य मीर अहमद अली रसा उन दिनों नए विषयों और नई शब्दावली के लिए जाने जाते थे। इन्हीं कवियों में से एक, या शायद स्वयं यूसुफ अली खान, दक्कन के अठारहवीं सदी के महान कवि सिराज औरंगाबादी की कविताओं से परिचित हुए। वे तुरंत प्रसिद्ध हो गए; उनकी कविताओं की नकल की गई; उनके द्वारा प्रयुक्त तुकबंदी और अंत्यानुप्रास का अनुसरण करते हुए नई ग़ज़लें रची गईं। एक मुशायरे के लिए, यूसुफ अली खान ने सिराज की निम्नलिखित पंक्ति को 'आदर्श' पंक्ति के रूप में चुना। ग़ज़लें इसी आदर्श के समान छंद और तुकबंदी में लिखी जानी थीं।

मेरी प्रेमिका के बाल और माला की कड़ियां बिल्कुल एक जैसी हैं।

यह पंक्ति सहजता की शक्ति से इतनी परिपूर्ण थी और इसमें इतना प्रबल लयबद्ध प्रभाव था कि इसने अनेक कवियों को उस्ताद से प्रतिस्पर्धा करने और उन्हें मात देने के लिए प्रेरित किया। आगा मिर्ज़ा तुराब अली इस पंक्ति से उत्पन्न रुचि से इतने उत्साहित हुए कि उन्होंने वज़ीर से आग्रह किया कि वह आदर्श पंक्ति को पूरा करने के लिए कम से कम एक छंद या एक पंक्ति की रचना करें; इससे भी बेहतर, उन्हें पूरी ग़ज़ल लिखने का प्रयास करना चाहिए। उस शाम घर लौटते समय, आगा साहब सिराज औरंगाबादी की पूरी ग़ज़ल की प्रतिलिपि लेने के लिए राजकीय पुस्तकालय में रुके। अब उन्होंने वज़ीर से कहा:

मेरी प्रियतमा के बाल और माला की कड़ियाँ बिल्कुल एक जैसी हैं। उसकी भौंहें धनुष जैसी, उसकी पलकें तीर जैसी, बिल्कुल एक जैसी। मेरे हृदय के पन्ने पर जुदाई के घाव सुनहरे खून की लिखावट की तरह खुदे हुए हैं, बिल्कुल एक जैसे। सभी भारतीय बुलबुल एकमत हैं: तुम्हारी गली कश्मीर के बाग जैसी है, बिल्कुल एक जैसी। मैंने अपनी प्रियतमा का चेहरा देखा। वह भाग्य के लेखक द्वारा लिखे गए कुरान जैसा था, बिल्कुल एक जैसा। हे सिराज, आँख की मोमबत्ती से जलते अंगारों जैसे आँसुओं को छाँटने के लिए तुम्हारी पलकें मोमबत्ती काटने वाले औजार जैसी हैं, बिल्कुल एक जैसी।

जैसे-जैसे आगा साहब एक के बाद एक पंक्ति पढ़ते गए, वज़ीर उनकी सटीक छंद रचना और तुकबंदी तथा अंत्यानुप्रास के पूर्ण सामंजस्य से और भी अधिक प्रभावित होते गए। ग़ज़ल समाप्त करते ही वज़ीर ने कहा, 'वाह, वाह! केवल ईश्वर ही दोषरहित है! यह कविता नहीं है। यह शब्दों में चमत्कार है।'

'अच्छा, वज़ीर बेगम, अब आपको अपनी ग़ज़ल इसी शैली में रचनी होगी। मैंने आपको सिराज से प्रसन्न किया; अब आप मुझे अपनी कविता से प्रसन्न कीजिए!'

नहीं, नहीं! आप मुझे बहुत ज्यादा मजबूर कर रहे हैं, आगा साहब। मैं कोई पागल नहीं हूँ जो इस इलाके में अपने अंगों को हिलाने की कोशिश करूँ।

वज़ीर जितना अधिक प्रतिरोध करता, आगा साहब उतनी ही अधिक आग्रहपूर्वक विनती करते।

इस सौहार्दपूर्ण बातचीत के बीच, वज़ीर एक क्षण के लिए रुका और चिल्लाया:

भौंहें धनुष की तरह होती हैं, निगाहें तीर की तरह, बिल्कुल सही।

आगा तुराब अली ने पंक्ति के प्रवाह की प्रशंसा करने के लिए मुंह खोला, लेकिन वज़ीर ने उन्हें रोकते हुए कहा, 'नहीं। यह ठीक नहीं है। इसमें गुरु की पंक्ति बहुत अधिक है। आपके मित्र मुझ पर नकल का आरोप लगाएंगे,' वह मुस्कुराईं। 'मुझे फिर से कोशिश करने दीजिए।'

एक-दो मिनट के भीतर ही उसने कहा, 'अच्छा, अब यहाँ कुछ तो है:'

उसकी एक नजर में जादू जैसा असर होता है, बिल्कुल सही।

'बहुत बढ़िया, एकदम सही!' आगा तुराब अली ने कहा। 'यहाँ "प्रभाव" शब्द नया है।'

'अरे, मुझे मूर्ख मत समझो,' वज़ीर हँसा। 'यह उस्ताद की कृति के आस-पास भी नहीं है, लेकिन मॉडल लाइन के लिए एक पूरक के रूप में काम आ सकता है।'

उसकी एक निगाह में जादू सा असर होता है, बिलकुल सही। मेरी प्रेमिका के बाल और माला की कड़ियां, सब एक जैसी हैं, बिलकुल सही।

नहीं, यहाँ विचार की सूक्ष्मता है: पहले, आँखों का जादू दीवानगी में बदल जाएगा; फिर पागल प्रेमी बालों की लटों में जकड़ जाएगा। बहुत बढ़िया।

'कम से कम आपने मुझे एक शुरुआती पंक्ति तो लिखवाई! दिल्ली को शर्मिंदगी नहीं उठानी पड़ी।'

"माफ़ कीजिए, दिल्ली की महिलाओं को इतनी आसानी से बख्शा नहीं जा सकता। क्या यह मुशफ़ी ही नहीं थे जिन्होंने कहा था:

हे मुशफी, उनसे कभी प्रेम मत करना! दिल्ली की औरतें बेहद क्रूर और निर्दयी होती हैं।

अब जब आप रामपुर में हैं, तो उन सभी बुरी महिलाओं के बदले आपको जुर्माना भरना पड़ेगा। आपको पूरी ग़ज़ल सुनानी होगी!

'ठीक है, ठीक है! मुझे थोड़ा शांत होने दीजिए। आपको आपकी ग़ज़ल देर-सवेर मिल ही जाएगी।'

अगली शाम जब आगा तुराब अली खाने के लिए ज़नाना में आए, तो वज़ीर अपनी नई ग़ज़ल के साथ तैयार थीं। लेकिन उन्हें ग़ज़ल सुनाने के बजाय, उन्होंने शर्माते हुए कागज़ उन्हें थमा दिया।

फिर वह तुरंत बच्चे की देखभाल करने का बहाना बनाकर चली गईं। आगा साहब ने कागज़ खोला और वज़ीर की साफ़, लेकिन कुछ हद तक अटपटी लिखावट में ग़ज़ल देखी।
उसकी निगाहों में जादू सा है, बिलकुल। मेरी प्रेमिका के बाल और माला की कड़ियाँ एक जैसी हैं, बिलकुल। उसके चेहरे की सफेदी पर सुबह की किरणें जंगल के सफेद अमृत से बहते रंगों की तरह हैं, बिलकुल। उस छोटी सी गली में, जहाँ मैंने अपना दिल छोड़ा था, एक घर है, जन्नत जैसा, बिलकुल। अपनी आखिरी साँस लेते हुए, मुझे तकिए पर मेरी प्रेमिका के मोमबत्ती जैसे चेहरे की गर्माहट महसूस होती है: मेरी हकीकत मेरे सपने जैसी है, बिलकुल। रात के सन्नाटे में खोया हुआ: एक छोटी सी धारा मेरे सोए हुए भाग्य का चित्र है, बिलकुल। सुबह के बगीचे में, किसे देखने की शक्ति मिल सकती है? उसकी सुंदरता सूरज की बढ़ती रोशनी जैसी है, बिलकुल। यह उसके संगमरमर के पैर पर कुचले हुए गुलाब की पंखुड़ी का दाग नहीं है: यह किसी शाही घोषणा पर सुनहरे अक्षरों की तरह है, बिलकुल।
आगा तुराब अली कविता से इतने भावविभोर हो गए कि उन्होंने वज़ीर को ज़ोर से पुकारा, हालाँकि घर की मालकिन को इस तरह पुकारना कुछ अनुचित था, 'हे वज़ीर बेगम! तुम कहाँ हो? कृपया यहाँ आओ!'
वज़ीर ने बच्चे को उसकी दूध पिलाने वाली नौकरानी को सौंप दिया, अपने कपड़े ठीक किए और कुछ जल्दी से उसकी ओर चल दिया।
‘कृपया आदेश दीजिए,’ वह मुस्कुराई। ‘आपने सचमुच मुझे डरा दिया था, इतना जोर से चिल्लाकर। क्या सब ठीक है? आपको मेरी ग़ज़ल पसंद नहीं आई?’
पसंद आया? ज़रूर। वज़ीर बेगम, यह एक अद्भुत कविता है! अल्लाह की कसम, नए विचारों की आपकी खोज बेमिसाल है। केवल शेख नासिख या आपके उस्ताद शाह नासिर ही आपके इस प्रयास के साथ न्याय कर सकते हैं!
वज़ीर खुशी से लाल हो गई; विनम्रता दिखाने की कोशिश करते हुए उसने कहा, 'ईश्वर का नाम लो! तुम क्या कह रही हो? वे कविता की भूमि के निर्विवाद सम्राट हैं; मैं तो बस एक साधारण सी लड़की हूँ।'
‘ठीक है, वे भले ही संप्रभु हों, लेकिन आप भी वज़ीर हैं, और सिर्फ नाम के लिए ही नहीं!’

‘यह बिल्कुल फारसी कहावत की तरह है: “अबीसीनियाई को श्री कपूर कहा जाता है!” लेकिन आपको मेरा प्रयास पसंद आया और यही मेरे लिए काफी है।’
यह तो ज़ाहिर सी बात थी कि वज़ीर खुद यूसुफ अली खान के अगले मुशायरे में ग़ज़ल पेश नहीं करतीं, न ही किसी और से करवाई जाती। आगा तुराब अली ने इसे निजी तौर पर नवाब को दिखाया, जिन्होंने ग़ज़ल की तारीफ़ करने में मिर्ज़ा तुराब अली से पीछे नहीं रहे। दरअसल, उन्होंने एक गहरी बात कही: 'यद्यपि ग़ज़ल में बोलने वाले के मामले में लिंग का कोई भेद नहीं है—यहाँ तक कि महिला कवयित्री भी पुरुष स्वर का प्रयोग करती हैं—फिर भी आपको समझना चाहिए, मिर्ज़ा तुराब, कि रात के सन्नाटे में खोई हुई एक छोटी सी धारा का विचार केवल एक स्त्री के मन में ही आ सकता था। बहुत खूब, जैसा अल्लाह चाहता है। बेशक, केवल अल्लाह ही बेदाग है!'

ग़ज़ल की कलात्मकता का उच्च स्तर, फिर नवाब की प्रशंसा और 'छोटी नदी' के विषय को सूक्ष्मता से समझने की उनकी क्षमता ने जल्द ही वज़ीर की ग़ज़ल को रामपुर के सभी कविता प्रेमियों की ज़ुबान पर ला दिया। जब नवाब मिर्ज़ा ने ग़ज़ल सुनी और नवाब द्वारा महिला कवयित्री के बारे में कही गई बात को समझा, तो उन्होंने गौर किया कि कवयित्री ने किसी भी छंद में पुल्लिंग शब्द का प्रयोग नहीं किया था। उनके हृदय में अपनी माँ के प्रति आदर और प्रेम और भी प्रबल हो गया।

शाह मुहम्मद आगा अपने बड़े सौतेले भाई की तरह ही बड़े हो रहे थे। मिलनसार और चंचल स्वभाव के, वे पाँच-छह महीने की उम्र में ही कुछ अर्थपूर्ण शब्द बोलने की कोशिश करने लगे थे। उनकी खुशी भरी चीखों और चिल्लाहटों से पूरी हवेली गूंज उठती थी, जब तक कि उन्हें बिस्तर पर नहीं लिटाया जाता था या वे हँसी-खेल में थककर सो नहीं जाते थे। पहले, आगा मिर्ज़ा तुराब अली दिन में केवल एक बार, अधिमानतः भोजन के समय, ज़नाना में आते थे। अब वे अक्सर आने लगे और उनका छोटा बेटा उनसे इतना घुलमिल गया कि वह शायद ही कभी अपने पिता की गोद से उतरता था, यहाँ तक कि अपने गोल-मटोल छोटे हाथों को पिता की गर्दन के चारों ओर लपेटकर सोने की कोशिश करता था।

आगा तुराब अली गंडक नदी के किनारे बसे सोनपुर में लगने वाले वार्षिक पशु मेले के लिए रवाना हुए।

नवंबर 1843 की शुरुआत में, आगा मिर्ज़ा तुराब अली ने नवाबों के अस्तबल के लिए घोड़े और हाथी खरीदने के लिए बिहार के सोनपुर जाने का फैसला किया। सोनपुर दूर था, लेकिन यह पूरे हिंदुस्तान, या शायद हिंद और दक्कन दोनों का सबसे बड़ा वार्षिक पशु मेला था। यह मेला पूस की तीसरी तारीख से लेकर माघ माह के मध्य में मकर संक्रांति के महान स्नान दिवस तक आयोजित होता था—और वास्तव में आज भी होता है। घोड़ों, हाथियों, भार ढोने वाले पशुओं और बोझ ढोने वाले पशुओं के अलावा, यह मेला—छोटी लेकिन शक्तिशाली गंडक नदी के किनारे आयोजित होता था, जिसके किनारे सोनपुर शहर उत्तर-दक्षिण दिशा में फैला हुआ है—विदेशी पक्षियों और असामान्य पशुओं के व्यापारियों को भी आकर्षित करता था। कुछ अनोखे जीव-जंतुओं को भी, यदि संभव हो, प्रदर्शित किया जाता था, हालांकि बेचा नहीं जाता था। खेल, प्रतियोगिताएं, नृत्य, नृत्य नाटक, नाटक, कलाबाजी, कुश्ती के शो और प्रतियोगिताएं, धार्मिक प्रदर्शन: सब कुछ उपलब्ध था।

नवाब मुहम्मद सईद खान के सुझाव पर सोनपुर की खरीदारी यात्रा की गई और उनकी अनुमति से आगा तुराब अली 9 दिसंबर 1843 को रवाना हुए। उन्होंने शाह मुहम्मद आगा को खूब चूमा, नवाब मिर्जा को कई बार गले लगाया और शयनकक्ष के एकांत में वज़ीर को जी भर कर चूमा और गले लगाया। इसके बाद उन्होंने अपने साथ रहने वाली दो महिला रिश्तेदारों से विदा ली। हबीबा, राहत अफजा, मंजली बेगम और वज़ीर ने आगा तुराब अली के दाहिने हाथ पर इमाम मूसा काज़िम, आठवें इमाम, जिन्हें रक्षक और गारंटर के रूप में जाना जाता है, को समर्पित अलग-अलग सुरक्षा ताबीज़ बांधे। आगा साहब की महिला रिश्तेदारों ने भी इसी तरह के ताबीज़ बांधे। वज़ीर खानम ने आगा तुराब अली के सिर के चारों ओर एक प्याला पानी घुमाया, उसमें से एक घूंट पिया और उनके लिए दुआ की। सभी महिलाओं ने एक स्वर में कहा, 'जाइए, कृपया, और जैसे आज आपने अपनी पीठ दिखाई है, वैसे ही जल्द ही हमें अपना चेहरा दिखाइए।'

आगा तुराब अली ने सब कुछ अल्लाह के भरोसे छोड़ दिया और उनकी सुरक्षा के लिए दुआ करते हुए अपने बेटों के सिर और चेहरों पर फूँक मारी। वे तुरंत शहर के पूर्वी द्वार से निकल पड़े, उनका पहला पड़ाव 20 मील दूर मुरादाबाद था। रोहिलखंड और अवध के पूरे क्षेत्र को ज़मीन के रास्ते और कंपनी बहादुर के इलाके में इलाहाबाद से पानी के रास्ते पार करते हुए, वे 29 दिसंबर 1843 को देर शाम सोनपुर पहुँचे। उनके काफिले में चार निजी सेवक, बारह भालाधारी, चार साईस और दो महावत थे। यह यात्रा 20 दिनों तक चली।

मेले में जानवरों की भारी संख्या को देखते हुए, आगा तुराब अली ने अनुमान लगाया कि मनचाहे जानवरों को चुनने, मोलभाव करने और खरीदने में उन्हें एक सप्ताह लग जाएगा। वे मकर संक्रांति से जितना संभव हो सके उतने दिन पहले ही प्रस्थान करना चाहते थे, क्योंकि बाहर से व्यापारी और पर्यटक आमतौर पर मकर संक्रांति के तुरंत बाद बड़ी संख्या में अपना डेरा उठाते थे, जिससे

सभी विश्राम स्थलों, सराय और चमड़े के सामान की दुकानों में अत्यधिक भीड़ हो जाती थी और वे अक्सर अतिरिक्त मांग को पूरा करने में असमर्थ हो जाते थे। हालांकि सड़कों पर चहल-पहल बढ़ना अच्छा था, लेकिन विश्राम स्थलों की कमी से काफी कठिनाई होती थी, खासकर उनके जैसे बड़े दल के लिए।

रामपुर से आए खरीददार दल ने पाँचवें दिन के अंत तक अपना काम लगभग पूरा कर लिया था। अगले दिन नेपाल की तलहटी से कुछ और हाथी व्यापारियों के आने की उम्मीद थी; उनके द्वारा पेश किए गए हाथियों की जाँच के बाद ही यह तय किया जाना था कि किन हाथियों को खरीदा जाए। इस प्रकार, जब आगा तुराब अली ने 11 जनवरी 1844 को अपनी खरीद का जायजा लिया, तो उनके पास छह हाथी और आठ घोड़े थे। यात्रा के दौरान नियुक्त किए जाने वाले कुछ अतिरिक्त साईस और महावतों के वेतन सहित कुल कीमत 52,500 जॉन कंपनी रुपये थी (ये साईस और महावत रामपुर पहुँचने पर नवाब के प्रतिष्ठान में दीर्घकालिक रूप से नियुक्त होने की उम्मीद कर रहे थे)। भुगतान की कोई समस्या नहीं थी, क्योंकि आगा तुराब अली के पास नवाब का एक लाख रुपये का पे-ऑन-डिमांड दस्तावेज़ था, जो रामपुर राज्य के मुख्य धन प्रबंधक के साथ लेन-देन करने वाले किसी भी साहूकार द्वारा देय था।

आगा तुराब अली और उनका भारी काफिला 12 जनवरी 1842 को घर के लिए रवाना हुआ। काफिले में जानवरों की बड़ी संख्या के कारण, आगा तुराब अली ने नदी मार्ग से यात्रा करने से यथासंभव बचने का प्रयास किया, सिवाय उन स्थानों के जहाँ कोई सड़क नहीं थी या जहाँ घने जंगल के कारण मार्ग कठिन था। चूंकि कोई विशेष जल्दबाजी नहीं थी, और गंगा नदी इलाहाबाद से आगे चौड़ी और काफी शांत थी, इसलिए आगा तुराब अली ने जानवरों को फतेहगढ़ तक नदी मार्ग से ले जाने का आदेश दिया। यह धीमी गति से होगा, लेकिन जानवरों को किसी प्रकार की कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ेगा, और वास्तव में नदी मार्ग से यात्रा करना अधिक सुरक्षित भी था, सिवाय उस अत्यंत दुर्लभ घटना के जब कोई नाव नदी के किनारे की किसी पहाड़ी से टकराकर उथले पानी में डूब जाए। उन दिनों नदी लुटेरे या समुद्री डाकू जैसे अपराध प्रचलित नहीं थे।

20 जनवरी 1842 को, सड़क मार्ग से चलने वाला काफिला इलाहाबाद से छह मील उत्तर में स्थित फाफामऊ में नदी मार्ग से चलने वाले काफिले से अलग हो गया। आगा तुराब अली के नेतृत्व में, सड़क मार्ग से चलने वाले यात्री कारा मानिकपुर की ओर मुड़े। उनके साथ चार घोड़े, दो साईस (एक प्रकार का घोड़ा), दो भालाधारी सैनिक और चार टट्टू पर सवार निजी सेवक थे। उनका मार्ग कारा मानिकपुर और बिंदकी होते हुए कानपुर (उस समय आम बोलचाल में कम्पू कहा जाता था, जबकि कानपुर अब कानपुर है) तक जाता था। नदी मार्ग से चलने वाला काफिला भी बाद में कारा मानिकपुर होते हुए कानपुर पहुंचेगा। हालांकि कानपुर जाने का एक और जमीनी मार्ग था, लेकिन आगा तुराब अली ने अपने चुने हुए मार्ग को अधिक सुरक्षित माना, क्योंकि यह दिन के समय हमेशा व्यस्त रहता था। वैसे भी रात में यात्रा करना उचित नहीं था।

हिंद के उस हिस्से की सड़कों से भली-भांति परिचित एक अनुभवी जासूस ने दबे स्वर में आगा तुराब अली को उनके द्वारा चुने गए मार्ग पर बदमाशों से सामना होने की संभावना के बारे में

चेतावनी देने का प्रयास किया। लेकिन आगा तुराब अली ने उसकी बात को अनसुना कर दिया।
'कैंपेन बहादुर ने बदमाशों की कमर तोड़ दी है। वे जेलों में सड़ रहे हैं या उन्हें घसीटकर फांसी दे दी गई है। अब बदमाश कहां हैं, मुनीर खान? क्या तुम्हारा दिमाग खराब हो गया है?' उसने अपने शब्दों को आपत्तिजनक न लगने देने के लिए मुस्कुरा दिया।
'ईश्वर ही सर्वोपरि जानता है। लेकिन हमने सुना है कि ये बदमाश विषैले साँपों के समान हैं। जब तक उनका सिर नहीं काटा जाता, तब तक उनके पलटवार करने का खतरा बना रहता है।'

आगा तुराब अली की घर वापसी की यात्रा भयावह खतरों और शैतानी विश्वासघातों से भरी हुई है।

आघा मिर्ज़ा तुराब अली का स्वभाव दृढ़ता और हठधर्मिता से भरा था। रामपुर के उग्र पठानों के साथ रहने से उनकी यह दृढ़ता ज़रा भी कम नहीं हुई थी। अब वे सड़क मार्ग से, अपने चुने हुए रास्ते से ही अपनी यात्रा पूरी करने के लिए दृढ़ संकल्पित थे। हालांकि वे मुस्कुराते हुए बोलते थे, पर सभी जानते थे कि आघा साहब अपना इरादा कभी नहीं बदलेंगे। वे भली-भांति जानते थे कि हिंद के गुंडे आगाहन का पूरा महीना बनारस से कुछ ही दूरी पर स्थित विंध्याचल में अपनी देवी के मंदिर में पूजा-अर्चना करते हुए बिताते हैं। आगाहन समाप्त होते ही वे दूर-दूर तक फैल जाते हैं और मकर संक्रांति के स्नान दिवस के साथ ही ठगी का उनका मुख्य धंधा ज़ोरों पर आ जाता है। कंपनी बहादुर और उसके समर्थकों के बड़े-बड़े दावों के बावजूद, यह सच नहीं था कि गुंडे धरती से गायब हो गए थे। आगा तुराब अली ने सुना था कि फिरंगी अधिकारियों के लगातार दबाव के कारण, कई गुंडे परिवार पड़ोसी अवध राज्य में चले गए थे। इस प्रकार, अंग्रेज़ों और अवध के बादशाह के राज्य में स्थित क्षेत्र—जैसे कि वह क्षेत्र जिससे होकर वह यात्रा करने का प्रस्ताव कर रहे थे—विशेष रूप से खतरनाक थे क्योंकि गुंडे अक्सर एक क्षेत्र में अपराध करते और तुरंत दूसरे क्षेत्र में चले जाते थे।

आगा तुराब अली को इस बात का पता नहीं था, लेकिन कानपुर के पास कई ऐसे स्थान थे जिन्हें बदमाशों ने अपने पसंदीदा ठिकाने बना रखा था—उनकी गुप्त भाषा में 'बेल'—यानी, वे स्थान जिन्हें उन्होंने अपने अत्याचारों को अंजाम देने के लिए विशेष रूप से उपयुक्त माना था। चूंकि ये स्थान सुरक्षित और गुप्त थे, इसलिए बदमाश इनका बार-बार इस्तेमाल करते थे। जिस समय हम यह लिख रहे हैं, फतेहपुर और कानपुर के बीच चकतिया नाम का एक गाँव था, और कानपुर के ठीक पास चपरघाटा नाम का एक और गाँव था, जो 'बेल' के रूप में कुख्यात थे।

अगर आगा तुराब अली को इन जगहों के बारे में पता भी होता, तो भी उनकी अकड़ कभी कम नहीं होती और वे झुकते नहीं। उनकी आँखों में दिख रही नाराज़गी को देखकर नौकरों ने ठगों और ठगों के बारे में कुछ न बोलना ही बेहतर समझा। शेर शाह के शाही रास्ते से करा मानिकपुर और फिर फतेहपुर तक का सफर काफी आरामदायक, सुरक्षित और तेज़ गति वाला था। सड़क चौड़ी और अच्छी तरह से बनी हुई थी, और रास्ते में रुकने के लिए कई जगहें थीं। सड़क पर पानी की कोई कमी नहीं थी, और दोनों तरफ बड़े-बड़े पेड़ों की छाया रहती थी। एक बार तो उन्हें इंग्लिश डाक बंगले (डाकघर, विश्रामगृह) में रात बिताने का मौका भी मिला, जिसकी साफ-सफाई, बढ़िया व्यवस्था और प्रबंधक के विनम्र व्यवहार ने उनका दिल जीत लिया।

फतेहपुर से आगे बिंदकी पहुँचते-पहुँचते नज़ारा पूरी तरह बदल चुका था। अधिकांश क्षेत्र बंजर और वीरान था। सड़क के दोनों ओर प्राचीन, विघटित चट्टानों से बनी छोटी-छोटी पहाड़ियाँ और टीले थे। कहीं-कहीं सड़क के किनारे एक लंबी खाई थी। अधिकांश भूमि शुष्क, क्षारीय और जंगली बेर, काँटेदार झाड़ी, बबूल और मेहंदी से भरी हुई थी। कुछ जगहों पर यह सचमुच एक घना जंगल था, जहाँ कोई रास्ता नहीं था और सूखा पड़ा था। मिर्ज़ा तुराब अली के अनुभवी यात्री

और घोड़े वीरान रास्ते पर आराम से आगे बढ़ रहे थे, लेकिन उन्होंने कहीं भी रुकने की कोशिश नहीं की, क्योंकि वातावरण से ऐसा लग रहा था मानो वहाँ डाकुओं के अड्डे और चोरों के छिपने की जगह हो। हर मोड़ पर उन्हें किसी रहस्यमय जोगी या अपरिचित आकृति के मिलने की आशंका थी जो उनकी राह में बाधा डालेगी।

बिंदकी से काफी दूर आ जाने के बाद, कानपुर लगभग पाँच-छह मील ही दूर था, जब उन्हें यात्रियों का पहला बड़ा समूह दिखाई दिया। वे उनसे थोड़ा आगे थे, पैदल चलने वालों का एक समूह, जो उदास कदमों और झुके हुए सिर के साथ चल रहे थे, मानो वे बेहद थके हुए हों। आगा तुराब अली का काफिला जल्दी ही उनसे आगे निकल गया: लगभग बारह-पंद्रह पुरुष—कोई महिला या बच्चा नहीं—मध्यम आयु वर्ग या उससे अधिक उम्र के, जाहिर तौर पर वे विभिन्न जातियों के हिंदू थे; उन्होंने सादे, सस्ते कपड़े पहने थे, जो थोड़े गंदे थे, लेकिन फटे या पैबंद नहीं थे। करीब से देखने पर, मिर्ज़ा तुराब अली ने पाया कि उनमें से एक-दो उच्च जाति के थे; बाकी सभी अच्छे चरित्र और कानून का पालन करने वाले छोटे किसान, कृषि मजदूर और चरवाहे थे, जो ईमानदारी से मेहनत करके अपनी रोजी-रोटी कमाते थे।

पैदल चलने वालों में सबसे बुजुर्ग ने अपने साथियों को घुड़सवारों के लिए रास्ता बनाने का इशारा किया, लेकिन जब आगा तुराब अली का घोड़ा उनके पास पहुंचा, तो वे घुटनों के बल बैठ गए, लगभग रास्ता रोक दिया, और आगा तुराब अली के सामने झुकते हुए कहा, 'सलाम, माई-बाप! आपकी कृपा सदा बनी रहे!'

उनका स्वर गंभीर था, देहातीपन का कोई अंश नहीं था, और अत्यंत विनम्र और आज्ञाकारी था, जिससे पता चलता था कि उन्हें अक्सर उच्च या कुलीन व्यक्तियों से मिलने का अवसर मिलता था। उस बूढ़े व्यक्ति की विनम्रता ने आगा तुराब अली के हृदय को थोड़ा प्रभावित किया, लेकिन उन्होंने कठोर, यहाँ तक कि तिरस्कारपूर्ण ढंग से उत्तर देना बेहतर समझा और ऊँची, कुछ धमकी भरी आवाज़ में बोले, 'तुम लोग कौन हो? हमारा रास्ता क्यों रोक रहे हो?'

‘हम आपका रास्ता रोक रहे हैं! माननीय महोदय, हम इतनी बेइज्जती करने की हिम्मत नहीं कर सकते। हम तीर्थयात्री हैं, कन्नौज में हमारी देवी के दर्शन के लिए जा रहे हैं।’

‘तो जाओ!’ आगा मिर्ज़ा तुराब अली गुर्राए। ‘हमारा रास्ता मत रोको। हटो!’

अब बूढ़ा व्यक्ति और भी विनम्र और दयनीय हो गया। उसने गिड़गिड़ाते हुए कहा, 'हे प्रभु, हम अकेले हैं। अगर हमें यहाँ घेर लिया गया तो हमारी रक्षा के लिए कोई पुलिसकर्मी या सैनिक नहीं है।'

अब एक और बूढ़ा आदमी, जो स्पष्ट रूप से अधिक देहाती और दुर्बल था, पास आया। अपने साथी से भी अधिक कोमल और विनम्रता से बोलते हुए उसने कहा, “जी हां, महाराज, हममें से कुछ लोग भी दुर्बल और बीमार हैं। यदि हम इतने भाग्यशाली हों कि परम पूज्य महाराज की सुरक्षा में आ सकें, तो हमारी तीर्थयात्रा की सुरक्षा सुनिश्चित हो जाएगी।”

आगा तुराब अली ने दोनों बूढ़े आदमियों को गौर से देखा, उनकी निगाहें ज़मीन पर टिकी थीं, उनके शरीर सिकुड़े हुए थे ताकि वे छोटे दिखें—वे बेबस विनम्रता की साक्षात मूर्ति थे। लेकिन

उन्होंने यह भी महसूस किया कि बातचीत के दौरान, बूढ़े आदमियों के साथी किसी तरह आपस में और उनके भी करीब आ गए थे, मानो उनके चारों ओर आदमियों का एक ढीला घेरा बन गया हो। उनके शरीर में एक तेज़ सिहरन दौड़ गई। 'क्या ये गुंडे हैं?' यह सवाल उनके मन में तेजाब की तरह चुभ गया। 'नहीं, ये गुंडे कैसे हो सकते हैं? ये तो बिल्कुल सीधे-सादे हैं।' लेकिन क्या अब आदमियों का वह घेरा और भी करीब आ गया था?

उन्होंने मुनीर खान की ओर देखा, जिनकी आँखों में चिंता और शायद संदेह झलक रहा था। ‘नहीं। यह तो बस मेरी कल्पना है; मुनीर खान को इन कमज़ोर लोगों पर ज़रा भी शक नहीं लग रहा।’ लेकिन तभी उनकी नज़र बाईं ओर, बिल्कुल किनारे पर पड़ी: एक हट्टा-कट्टा नौजवान, जो बाकियों की तरह दुबला-पतला नहीं था। उसकी आँखों में एक क्रूर चमक थी, जो उम्मीद से भी भरी थी, मानो किसी सोते हुए बेचारे खरगोश को देखकर साँप की आँखें चौंधिया गई हों। आगा तुराब अली डर से काँव-काँव कर बैठे, ऐसा डर जो उन्होंने पहले कभी महसूस नहीं किया था। वे कुछ कहना ही चाहते थे कि तभी एक कौआ कर्कश आवाज़ में काँव-काँव करते हुए उनके ऊपर से उड़ गया। उन्होंने देखा कि तीर्थयात्री भले ही विनम्रता से उनके चरणों की ओर देख रहे थे, लेकिन असल में वे यह जानने के लिए उत्सुक थे कि कौआ उड़ जाएगा या पास की किसी डाल पर बैठ जाएगा। मुनीर खान ने धीरे से गला साफ़ किया, मानो उन्होंने हिम्मत जुटाकर बोलने की हिम्मत जुटाई हो। इससे पहले कि वे कुछ कह पाते, कौआ पहले की तरह काँव-काँव करते हुए दूर उड़ गया।

कौआ उनके ऊपर से उड़कर चला गया तो तीर्थयात्रियों के चेहरों पर उदासी छा गई। शायद उन्होंने यह उम्मीद खो दी थी कि यात्रा कर रहे उस रईस की सुरक्षा उन्हें भी मिलेगी; अब हमें अकेले ही अपने गंतव्य की ओर बढ़ना होगा। या इस निराशा का अर्थ कुछ और ही है? यह विचार अचानक आगा मिर्ज़ा तुराब अली के मन में आया। क्या ये बदमाश सचमुच गुंडे हैं? और अब उन्हें एहसास हो गया है कि मैं इनसे भली-भांति परिचित हूँ और इन मांसाहारी लोगों का शिकार नहीं बन सकता? उनके चारों ओर का घेरा कुछ ढीला पड़ गया, हालाँकि कोई भी तीर्थयात्री अपनी जगह से हिलने को तैयार नहीं था।

‘माननीय न्यायाधीश महोदय,’ मुनीर खान ने दबी हुई, घुटती हुई फुसफुसाहट में कहा। ‘माननीय न्यायाधीश महोदय, चलिए अब हम यहाँ से निकल चलते हैं।’

मुनीर खान की आवाज़ आगा तुराब अली के दिल में किसी विदा होते काफिले की घंटी की तरह गूंजी। उनका चेहरा भावहीन हो गया और उन्होंने कर्कश स्वर में कहा, 'अरे? हाँ, चलो चलते हैं।' उन्होंने गला साफ करने के लिए एक गहरी सांस ली और दोनों बूढ़े आदमियों पर चिल्लाते हुए कहा, 'निकल जाओ! मेरी नज़रों से दूर हो जाओ, अभी!'

धुंधलके में दोनों बूढ़े आदमियों के चेहरों पर मौजूद रहस्यमय भाव को वह पढ़ नहीं पा रहा था, लेकिन यह स्पष्ट था कि वे रास्ता देने में कोई जल्दी नहीं कर रहे थे। आगा तुराब अली ने अपने घोड़े को एक कदम पीछे किया; उसने चाबुक उठाया और हवा में एक भयानक प्रहार किया; अपनी जांघों को घोड़े के किनारों से कसकर दबाते हुए वह चिल्लाया, 'आओ, बेटे, पूरी ताकत लगा दो!' शक्तिशाली घोड़े ने अपनी भारी गर्दन उठाई और अपने दांत दिखाए, उसकी गहरे भूरे-

काले बाल हवा में लहराए; उसने अपने अगले पैरों को पेट से सटाकर उठाया और अपनी आगे और पीछे की मांसपेशियों से पूरी ताकत से धक्का दिया। उसके पिछले पैर अब उसकी कमर के नीचे थे, अगले पैर छाती के नीचे फंसे हुए थे, वह कई गज उछला और हवा में एक बड़े पत्ते की तरह हल्के से जमीन पर आ गिरा। आगे खड़े बूढ़े लोग इस घटना को पूरी तरह समझ भी नहीं पाए थे कि घोड़े के गुजरने से हुई जोरदार आवाज और चक्करदार ध्वनि ने उन्हें जमीन पर गिरा दिया। बाकी तीर्थयात्री माचिस की तीलियों की तरह इधर-उधर बिखर गए। कुछ ही सेकंडों में, आगा तुराब अली और उनका काफिला उस सुनसान सड़क पर गायब हो गया।

कुछ मील तक पूरी रफ्तार से दौड़ने के बाद, वे जानवरों को पानी पिलाने के लिए एक कुएँ पर रुके। मुनीर खान ने धीमी आवाज़ में कहा, 'माननीय, वे बदमाश थे... बेहतर होगा कि हम यहाँ ज़्यादा देर न रुकें।'

आगा तुराब अली का हठ फिर लौट आया। उन्होंने चिढ़कर पूछा, 'क्यों? इस जगह रुकने में क्या दिक्कत है? क्या यहाँ आसपास कोई गुंडे हैं भी?'

'महोदय, ये लोग अपने शिकार को काफी पहले से चुन लेते हैं, और दो या तीन छोटे समूहों में बंटकर उसका पीछा करते हैं और आगे-पीछे से निगरानी रखते हैं, और वहीं हमला करते हैं जहां जमीन उनके लिए सबसे अनुकूल होती है।'

‘मुनीर खान, मैं कहता हूँ, क्या तुम पठान हो, चरवाहे हो या घास काटने वाले? तुम बेवजह डरते हो, और मरने से पहले ही मर जाओ।’

‘महाराज,’ एक बूढ़े भालाधारी ने सीने पर हाथ रखकर कहा, ‘मैंने पहले भी इन रास्तों पर यात्रा की है। आपके ठीक सामने पांडु नदी है। मैंने अक्सर सुना है कि बदमाश गुंडे नदी के दर्रे में छिपते हैं और अपने अत्याचार करने के बाद पास के गाँव में छुप जाते हैं। वह गाँव यहाँ से एक मील से भी कम दूरी पर है।’

‘खैर,’ आगा तुराब अली ने स्वीकार किया, ‘वैसे भी मेरा यहाँ रात बिताने का कोई इरादा नहीं था। चलिए आगे बढ़ते हैं।’

सर्दी की शाम ढलते ही वे बिना किसी और घटना के कानपुर शहर में प्रवेश कर गए। अपने सभी लोगों के लिए पर्याप्त बड़ा सराय न मिलने पर, आगा तुराब अली को दुगनी गति से यात्रा करनी पड़ी और वे बिठूर के शांत गाँव से होते हुए बिल्हौर पहुँचे। ये दोनों स्थान, जो उस समय लगभग अज्ञात थे, 1857 के सशस्त्र संघर्ष के दौरान भयंकर लड़ाई और प्रतिरोध के स्थलों के रूप में प्रसिद्ध हो गए।

उन्होंने बिल्हौर में रात बिताई, देर तक सोए और सुबह जब सूरज कोहरे से झाँकने की कोशिश कर रहा था, तब धुंध भरी धूप से अपनी आँखों को ठंडक पहुँचाई। पास ही बहने वाली गंगा नदी से उठती ठंडी हवाओं ने एक अद्भुत ठंडक पैदा कर दी थी, जो एक ही समय में स्फूर्तिदायक और चुनौतीपूर्ण दोनों थी। जैसे ही वे संभल पाए, वे निकल पड़े। फिर भी, उनकी गति धीमी थी; शाम तेजी से ढलने लगी थी। कन्नौज मुश्किल से छह मील दूर था, लेकिन उन्होंने एक सुविधाजनक सराय में रात बिताना और अगली सुबह आराम से निकलना बेहतर समझा।

कन्नौज जाने वाली सड़क पर वे लगभग एक मील ही चले थे कि उन्हें बीस-बाईस यात्रियों का एक समूह मिला। वे स्पष्ट रूप से मुसलमान थे, क्योंकि उन्होंने चार-पाँच कोनों वाली मोटे कपड़े की टोपियाँ पहन रखी थीं, जो गरीब वर्ग के मुसलमानों में बहुत लोकप्रिय हैं। कुछ लोगों की दाढ़ी शरिया के अनुसार कटी हुई थी: एक मुट्ठी से लंबी, और होंठ लगभग पूरी तरह से मुंडे हुए। उनकी पतलून छोटी थी, जिससे टखने दिखाई दे रहे थे, जैसा कि शरिया ग्रंथों में बताया गया है। समूह में कोई महिला या बच्चा नहीं था। एक यात्री सड़क पर रुक गया, ठीक उसी तरह जैसे कुछ दिन पहले कानपुर जाने वाली सड़क पर एक बूढ़ा आदमी रुका था। उसने शरिया के अनुसार सलाम किया: हाथ या सिर हिलाए बिना, बस इतना कहा, 'अस्सलाम वालेकुम, महाराज। आप कहाँ जा रहे हैं?'

मिर्ज़ा तुराब अली उस व्यक्ति के शांत, गंभीर व्यवहार, उसके सादे लेकिन साफ-सुथरे कपड़ों और माथे पर नियमित प्रार्थना के प्रतीक भूरे निशान से बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने केवल उसी व्यक्ति को देखा, यह ध्यान दिए बिना कि सड़क पर बाकी यात्री भी किसी खास तरीके से बैठे हुए थे। लेकिन उनके स्वभाविक अभिजात्यवादी रवैये ने उन्हें रास्ते में रुककर उस व्यक्ति से बात करने की अनुमति नहीं दी, जो स्पष्ट रूप से कारीगर वर्ग से था।

‘अच्छे परिवार के लोग सड़क पर रुककर बातें नहीं करते। जल्दी करो। यहाँ मत रुको।’

“महामहिम, हम गरीब मुस्लिम कारीगर हैं। हमारे पास न तो धन है, न ही रक्षकों और संरक्षकों को आदेश देने की शक्ति। और यह मार्ग खतरों से भरा है। हम बहुत समय से अल्लाह से आपके जैसे वीर सज्जन को भेजने की प्रतीक्षा और आशा कर रहे हैं। हमें आपके पवित्र वस्त्र के लिबास से लिपटकर इस कठिन मार्ग को सुरक्षित रूप से पार करना चाहिए।”

मिर्ज़ा तुराब अली को हल्का सा आभास हुआ कि मुनीर खान और उसके वरिष्ठ साथी किसी तनाव में हैं और उनके शरीर से यह तनाव साफ झलक रहा था। मन ही मन वह चिढ़ गया: ये बेचारे लोग एक ऐसे डर से मर रहे हैं जिसका कोई कारण या स्रोत नहीं है। वह उन्हें डांटने ही वाला था कि तभी उसने अपने सामने खड़े मुस्लिम कारीगरों और कानपुर रोड पर चल रहे हिंदू तीर्थयात्रियों के बीच एक अजीब लेकिन अस्पष्ट समानता देखी और अंदर ही अंदर रोमांचित हो गया। उसने अपनी कमर में बंधी पिस्तौल पर हाथ रखा और ठंडे स्वर में कहा, 'तो तुम्हें लगता है कि तुम मुझे अपना रक्षक बना सकते हो? तुम्हारा नेता कहाँ है? मुझे उससे बात करने दो।'

अधेड़ उम्र के यात्री ने धमकी भरे इशारे को तुरंत भांप लिया; उसने पूरी तरह से समर्पण भाव से ज़मीन को छुआ और पीछे हट गया। उसने नम्र स्वर में कहा, “माननीय महोदय, हम कंबु में जॉन कंपनी बहादुर की सेवा करते हैं। सौभाग्य से हमें कन्नौज स्थित अपने घर जाने के लिए कुछ दिनों की छुट्टी मिली है। हम कारीगर हैं, न कि छोटे-मोटे चोर या नीच जाति के मजदूर।”

उन्होंने इतनी पीड़ा और विनम्रता से बात की कि आगा तुराब अली को उन पर दया आ गई। लेकिन फिर उन्हें अपने वरिष्ठ सरदार की बातें याद आ गईं: गुंडे अक्सर छोटे-छोटे समूहों में बंटकर शिकार करते थे। कुछ लोग अपने शिकार से आगे निकल जाते थे, जबकि कुछ पीछे से उसका पीछा करते थे। लेकिन नहीं, कानपुर रोड के वे गुंडे—अगर वे गुंडे थे भी—इतने बड़े इलाके में नहीं घूम सकते थे। फिर भी, सावधानी और विवेक ज़रूरी थे।

'ठीक है, तुम जो कहते हो वो हो सकते हो। लेकिन तुम हमारी संगति में नहीं रह सकते। मेरे रास्ते से हट जाओ, वरना मैं गोली चला दूंगा।'
उदासी और हताशा से भरी धीमी, हताश आवाज़ में उस व्यक्ति ने कहा, 'जैसा ईश्वर की इच्छा हो', और आगा तुराब अली से दूर हटकर वह अपने साथियों के साथ मिल गया। जब वे उन यात्रियों की नज़र और आवाज़ से ओझल हो गए, तो मिर्ज़ा तुराब अली के साथियों ने एक स्वर में कहा, 'आइए हम उनके सम्मान की बुद्धिमत्ता और दूरदर्शिता के लिए बलिदान हो जाएं! आपने हमें बदमाशों से बचाया!'
आगा तुराब अली ने मुंह बनाया। 'गुंडे, कैसे गुंडे? तुम लोग उन बेचारे मुस्लिम कारीगरों पर झूठे आरोप लगाते हो।'
किसी में भी पलटकर जवाब देने का साहस या हिम्मत नहीं थी। हर कोई अपने मन में ईश्वर का शुक्रिया अदा कर रहा था कि उन्हें हर हाल में मुक्ति मिली। भीतर से आगा तुराब अली खुद भी बहुत घबराए हुए थे: उनके दिल पर डर, भय और चिंता का एक धुंधला बादल छाया हुआ था। लेकिन दिन का उजाला था: सूरज की गर्मी थी, आसमान साफ था और रास्ता आसान और सुगम था। उन्होंने बहुत अच्छी गति से यात्रा की, कन्नौज से कुछ कदम आगे रुकते हुए; फतेहगढ़ लगभग पास ही था, बस दो-तीन मील दूर।
वे एक विशाल सराय में ठहरे। चहल-पहल, ऊंटों, घोड़ों, खच्चरों और उनके सेवकों की आवाज़, बड़ी रसोई में खाना पकाने के चूल्हों से उठती लकड़ी के धुएं की मनमोहक खुशबू, सराय के चारों ओर खुले मैदान में खेलते बच्चों की खुशी भरी आवाज़ें, मंदिर की घंटियों की जानी-पहचानी और सुकून देने वाली आवाज़ और अज़ान की आवाज़: इन सबने आगा तुराब अली के दिल को खुश कर दिया। उन्होंने दिन भर आराम करने का आदेश दिया। वे अगली सुबह गर्म पानी से स्नान और भरपेट नाश्ते के बाद अपनी यात्रा शुरू करेंगे।
सुबह हुई, चारों ओर धुंध छाई हुई थी; लेकिन सूरज और हल्की हवा धुंध और रसोई की आग के मीठे धुएं को तेजी से गायब कर रहे थे, साथ ही पानी के बर्तन गर्म करने के लिए जलाई गई आग के धुएं को भी। आगा मिर्ज़ा तुराब नाश्ते के लिए तैयार हो रहे थे, तभी मुनीर खान आए और उन्होंने झुककर सलाम किया। उन्होंने थोड़ी हिचकिचाहट और झिझक के साथ कहा, 'माननीय महोदय, मुझे एक निवेदन करना है।'
‘जी हां, क्या बात है, मुनीर खान?’
आगा तुराब अली को यह बात समझ में आई कि मुनीर खान के चेहरे पर वही उदास और मायूस भाव था, जो पिछले दिन सड़क पर चल रहे यात्रियों के चेहरे पर दिखाई देता था। लेकिन उसने जो कहा, वह बिलकुल अलग था: ‘माननीय, यह आदमी मेरे परिवार का है, मेरी माँ के भाई का बेटा।’ वह रुका, फिर जैसे पुष्टि करते हुए बोला, ‘जी जनाब। यह मेरी माँ की तरफ से मेरा चचेरा भाई है। इसका नाम सादिक खान है।’ इतना कहकर वह मुड़ा और दरवाजे के ठीक बाहर इंतज़ार कर रहे किसी व्यक्ति की ओर इशारा किया। वह तीस-पैंतीस साल का एक दुबला-पतला, कम कद का आदमी था। उसने सिर पर एक छोटी सी चिंट्ज़ की पगड़ी बाँध रखी थी; उसकी कुर्ती लंबी और हरे रंग की थी, जो मोटे सूती कपड़े की बनी थी; उसकी तंग पतलून भी उसी कपड़े की

थी, एकदम साफ, फटी हुई या पैच लगी हुई नहीं। ज़ाहिर है, वह एक गरीब लेकिन अच्छे परिवार से था।
'माननीय महोदय, मैं अपनी निवेदन प्रस्तुत करता हूँ।' उन्होंने झुककर दो सलाम किए और फिर एक तरफ खड़े हो गए, उनका शरीर सिकुड़कर खड़ा हो गया, मानो वे कम से कम जगह घेरने की कोशिश कर रहे हों। उनकी निगाहें अपने पैरों पर टिकी हुई थीं।
'आपका नाम क्या है? आप कहाँ से आए हैं?'
'माननीय महोदय, इस गुलाम का नाम सादिक खान है। हम कम्पू से आ रहे हैं।'
तो आप अकेले नहीं हैं?
'नहीं...नहीं, महाराज।'
आगा तुराब अली की रीढ़ की हड्डी में एक पल के लिए सिहरन दौड़ गई। 'आपमें से कितने लोग हैं?'
'हम पंद्रह-बीस लोग हैं, माननीय न्यायाधीश।'
'महिलाएं और बच्चे?'
'नहीं, महोदय। हम अपने सर्विस स्टेशन से घर लौट रहे हैं। हमारी महिलाएं गांव में हैं।'
मिर्ज़ा तुराब अली कुछ देर तक चुप रहे। फिर उन्होंने ठंडे स्वर में कहा, 'मुनीर खान।'
'जी हाँ, महोदय।'
'क्या यह आदमी तुम्हारी मां के सगे भाई का बेटा है?'
'महोदय, नहीं। नहीं, महोदय, विवाह के माध्यम से रिश्तेदार हैं, माननीय।'
क्या आप उसे पहले से जानते हैं?
इस पर, नवागंतुक ने अपने शरीर को और भी सिकोड़ लिया, मानो गायब होने की कोशिश कर रहा हो; फिर भी, वह इतना निर्भीक था कि उसने अपना मुंह खोल दिया, कुछ कहना चाहता था।
'मुनीर खान,' आगा तुराब अली ने सख्ती से कहा, 'मैंने तुमसे पूछा था।'
अब मुनीर खान और सादिक खान दोनों के चेहरे पर उलझन और डर साफ झलक रहा था। सादिक खान ने आँख के इशारे से मुनीर खान को कुछ कहने की कोशिश की, लेकिन आगा तुराब अली उनके इस नाटक को और बर्दाश्त नहीं कर पा रहे थे।
'अपना गंदा मुँह बंद रखो। मुनीर खान, लगता है अब तुम राजद्रोह करने को तैयार हो।' उसने मेज पर पड़ी पिस्तौल उठा ली। नया आया हुआ मुनीर खान झटके से पीछे हट गया और सुरंग में चूहे की तरह गायब हो गया। मिर्ज़ा तुराब अली उसका पीछा करने के लिए आगे बढ़ा, लेकिन फिर उसे एहसास हुआ कि मामला इससे कहीं ज़्यादा गंभीर है। उसने पिस्तौल मुनीर खान की छाती पर तान दी और दहाड़ा, 'कमीने, तूने मुझे गुंडों से सावधान रखा था, लेकिन तूने अपनी वफ़ादारी उन्हीं हत्यारों को बेच दी!' उसका शरीर गुस्से और डर से काँप रहा था। 'तूने मेरे दूध पीते बच्चे की भी परवाह नहीं की!'
मुनीर खान ने सीना फुलाकर, गर्दन सीधी और तनकर कहा, 'निस्संदेह, ईश्वर मुझे गोली मारकर मार डालेगा; मैं आपसे विनती करता हूँ कि मुझे मार डालिए। आप मेरे स्वामी हैं और मैं आपका नमक खाने वाला हूँ। मेरी वफादारी और निष्ठा पहले दिन से ही आपकी उपस्थिति के सामने

गिरवी रखी हुई है। मैं दोषी हूँ। उस आदमी के बारे में निर्णय लेने में मैंने बहुत बड़ी गलती की।'
'शैतान की औलाद! तुम्हारी मीठी-मीठी बातें बंद! मैं तुम्हारी सारी हड्डियाँ तोड़ दूँगा और तुम्हें जीवन भर के लिए अपाहिज कर दूँगा।'
'महामहिम, मैं मरने के लिए तैयार हूँ। यह मेरी गलती की उचित सजा है। लेकिन मैं देशद्रोही नहीं हूँ। मैं ईश्वर के वचन की कसम खा सकता हूँ।'
तो आप इसे भूल कहते हैं? दुनिया में इसके लिए केवल एक ही नाम है और वह है राजद्रोह। आपने एक अजनबी को अपना चचेरा भाई बताकर मेरा जाल बिछाया ताकि वह मेरी जान ले सके।
'माननीय न्यायाधीश महोदय, मैंने जानबूझकर उस अजनबी को अपना चचेरा भाई बताकर उसका परिचय नहीं कराया। मुझे धोखे से उसे स्वीकार करने के लिए मजबूर किया गया था।'
'कमीने, तुम कम से कम एक बुनियादी जांच तो कर ही सकते थे।'
'महामहिम, ऐसा लगा जैसे उन्होंने उल्लू की हड्डियों से मेरे दिमाग पर कोई जादू कर दिया हो... मुझे ज़रा भी आभास नहीं हुआ कि मेरे साथ धोखा हो रहा है।' मुनीर खान की आँखें अब धुंधली हो रही थीं, उनकी सीधी गर्दन अब पहले जैसी नहीं रही। मिर्ज़ा तुराब अली के बंदूक वाले हाथ का तनाव अब कम हो रहा था; उन्होंने लगभग अपनी बंदूक नीचे कर ली थी, लेकिन उन्होंने अपने दाँत भींच लिए और बंदूक को मुनीर खान की छाती पर ताने रखा। उन्हें यह जानने की भी जिज्ञासा थी कि एक अनजान व्यक्ति मुनीर खान जैसे अनुभवी और सचेत व्यक्ति को कैसे यह विश्वास दिला सका कि वह उनका करीबी चचेरा भाई है, या कम से कम चचेरा भाई तो है ही। मुनीर खान ने शायद मिर्ज़ा तुराब अली के मन में चल रही बातों को भांप लिया था। उन्होंने झुकी हुई आँखों और अनकहे क्षमादान के भाव से कहा, 'माननीय, वह आदमी और उसके एक-दो साथी इतनी सहजता और ज्ञान भरी बातें कर रहे थे... मैं बता नहीं सकता कि वे कितनी सहजता से बातें कर रहे थे।' उन्होंने हर तरह से और हर कोण से इतने विश्वासपूर्वक रिश्ते और रिश्तेदारी गढ़ी कि मुझे लगा जैसे मैं इस सादिक खान को बहुत पहले से जानता हूँ... अब मैं हाथ जोड़कर प्रार्थना करता हूँ... कृपया। आपकी गोली मेरे दिल में जा गिरे। मैं अल्लाह और दुनिया के सामने खुशी से मरूँगा, अपने पापों को अपने खून से धोकर।
तो क्या मैं तुम्हारी हत्या का दोषी हो जाऊँ? क्या तुम यही चाहते हो? मैं तुम्हारे परिवार, तुम्हारे लोगों को क्या जवाब दूँ? क्या तुम्हारे नाम से जुड़ा कलंक उन्हें ज़िंदा दफ़न नहीं कर देगा? अब मेरी नज़रों से दूर हो जाओ। जाओ। मैं तुम्हारी गलती माफ़ करता हूँ। तुम्हारे दिल की सच्चाई तो सिर्फ़ अल्लाह ही जान सकता है।
आगा तुराब अली बहुत दुखी और उदास थे। बाल-बाल मौत से बच जाने के बाद, मुनीर खान को बर्खास्त करने का उन्हें बहुत अफसोस था, जो उनके भरोसेमंद सेवक थे और उनकी सेवा में बूढ़े हो चुके थे। उन्हें इतने अशुभ और दुखद हालात में बर्खास्त करना पड़ा, यह जानते हुए कि उनके पास बर्खास्त करने के अलावा कोई चारा नहीं था। उनकी भूख और यात्रा का उत्साह दोनों ही खत्म हो गए। उन्होंने कुछ नहीं खाया, बहुत कम आराम किया और अगले पड़ाव के लिए निकल पड़े। अब उनके पास सिर्फ सात सेवक बचे थे: तीन निजी सेवक, दो भालाधारी और दो साईस,

यानी तीन लोगों की रक्षा टुकड़ी। मुनीर खान अपने अनुभव और बुद्धिमत्ता से बाकियों से कहीं अधिक प्रभावशाली होते। अगर उन्हें धोखा दिया जा सकता था, तो बाकी के बारे में कुछ कहा ही नहीं जा सकता था।

इन्हीं विचारों में खोए हुए, वे बार-बार दाएं-बाएं देखते हुए, अपने वस्त्रों का कुछ हिस्सा आगे और एक-एक नौकर को दोनों ओर रखते हुए, तथा दो नौकरों को अपनी पीठ पर बिठाकर, धीमी गति से यात्रा कर रहे थे। उनका उद्देश्य क़ैमगंज से होते हुए सूर्यास्त तक काकरालाह पहुंचना था। इसके बाद वे रोहिल्ला क्षेत्र में प्रवेश कर चुके थे। वे प्राचीन शहर बदाओं से होकर, आंवला और शाहबाद से गुज़रे; काकरालाह रामपुर से मात्र बहत्तर मील दूर था: सामान्य गति से चलने पर केवल साढ़े चार दिन का सफर। लेकिन उनकी यात्रा की गति, कम से कम अभी के लिए, उनके द्वारा बरती जा रही सावधानियों के कारण काफी धीमी हो गई थी।

नाव से यात्रा करने वाले यात्रियों को फतेहगढ़ में गंगा नदी छोड़नी थी और बीस मील पैदल चलकर क़ैमगंज पहुँचना था, फिर काकराला पहुँचना था। मिर्ज़ा तुराब अली को लगा कि गति धीमी करना शायद अच्छा होगा, क्योंकि इससे उन्हें बदाओं और आंवला के बीच कहीं नावों के दल से मिलने की उम्मीद हो सकती थी। इससे उनकी संख्या में वृद्धि होगी और उन्हें बहुत खुशी होगी। लेकिन आगा तुराब अली नाव यात्रियों से मिलने की उम्मीद में यात्रा रोकना नहीं चाहते थे। उन्होंने सोचा, और शायद सही ही सोचा, कि रोहिल्ला क्षेत्र के बाहर नावों के दल का इंतज़ार करने के लिए ज़रूरत से ज़्यादा रुकना अस्वीकार्य था। उनकी धीमी गति उचित नहीं थी, न ही उनकी मर्ज़ी से। अब वे किसी और कारण से खुद को और देर नहीं कर सकते थे।

वह चौंक गया और आसपास के वातावरण को देखने लगा। बिना पूरी तरह से महसूस किए ही वे काफी दूरी तय कर चुके थे, शायद इसलिए कि वे कहीं भी पानी पीने के लिए नहीं रुके थे। सूरज काफी ऊपर था; चूंकि वे पूर्व से उत्तर-पश्चिम की ओर बढ़ रहे थे, इसलिए सर्दियों के सूरज की पारदर्शी शक्ति उनके पीछे थी, जिससे उनकी परछाइयाँ विशालकाय हो रही थीं और उनके शरीर लगभग असहनीय रूप से गर्म हो रहे थे। रास्ते में न रुकने के कारण, वे निश्चित रूप से नहीं कह सकते थे कि क़ैमगंज से उन्हें कितनी मील की दूरी है। चारों ओर, उन्हें दूर तक फैले सूखे खेत दिखाई दे रहे थे, मानो ऊँघ रहे हों, और सड़क सूरज की गर्मी से धीमी हो गई थी। मैदान अंतहीन रूप से सुनसान, निर्जीव और जीवन से रहित लग रहे थे, सिवाय हवा के। नंगी सड़क पर रेंगती अपनी लंबी परछाइयों को देखते हुए, आगा तुराब अली अब अपने दिल में कुछ यात्रियों, एक बैलगाड़ी, घुड़सवारों, किसी भी चीज़ के लिए प्रार्थना कर रहे थे जो इस दमनकारी एकरसता को तोड़ सके। उन्हें हिंदी कविता की एक पंक्ति याद आई: 'जंगल कितना वीरान है; किसी न किसी चीज से सामना करने की इच्छा तो होती ही है, चाहे वो भेड़िया ही क्यों न हो।' यह सचमुच एक मूर्खतापूर्ण वाक्य था। सुरक्षा चाहिए, रोमांच नहीं।

या शायद सड़क इतनी डरावनी नहीं थी: यह उसकी कल्पना की ज्वर थी, उसके दिल में बैठा डर जो जंगल की बुरी आत्मा की तरह उसके आगे दौड़ रहा था, उसे घसीट रहा था; कभी-कभी वह उसकी ओर मुड़कर भयानक चेहरे बनाती। मिर्ज़ा तुराब अली ने अपने सामने टकटकी लगाकर देखा; उसे कुछ भी दिखाई नहीं दिया। लेकिन वास्तव में, आगे की सड़क अचानक मुड़ गई थी,

जिससे मोड़ के पार क्या है यह देखना असंभव हो गया था। शायद मोड़ के दूसरी ओर बदमाशों का एक गिरोह हमारा घात लगाकर इंतजार कर रहा हो? मिर्ज़ा तुराब अली का दिल गले तक आ गया। हम उस शैतानी गिरोह से कैसे निपटें? उसने सुना था कि दो या तीन बदमाश जंगली कुत्तों की तरह मिलकर घुड़सवार पर हमला करते हैं। एक लगाम इतनी मजबूती से पकड़ लेता है कि घोड़ा हिल भी नहीं पाता; दूसरा सवार को कमर से पकड़कर नीचे खींच लेता है; जैसे ही घुड़सवार गिरा, तीसरा गुंडा अपना पसंदीदा हथियार—एक सफेद और पीले रंग की धारीदार कपड़े की पट्टी, जो मफलर जैसी दिखती थी और जिसे गुंडे 'रुमाल' कहते थे—निकालकर पीड़ित का गला घोंट देता और कुछ ही सेकंड में दम घोंट देता। पीड़ित को संघर्ष करने या अपनी मृत्यु की पीड़ा में तड़पने का भी मौका नहीं मिलता... आगा तुराब अली ने सड़क पर अंधेरा या कुछ परछाइयाँ देखीं। शायद कोई झाड़ी हो, और शायद कोई घात लगाकर हमला हो रहा हो...?

'ला हौला व ला कुव्वता इल्ला बिल्लाह!' आगा तुराब अली ने मन ही मन यह पारंपरिक वाक्य दोहराया, जिसका प्रयोग भारत-मुसलमान असहमति या घृणा व्यक्त करने के लिए करते हैं, और आवश्यकता पड़ने पर ईश्वर से सहायता और समर्थन मांगने के लिए भी: ईश्वर के सिवा कोई शक्ति और कोई सामर्थ्य नहीं है। लेकिन मैं अनपढ़ औरत की तरह मूर्ख और अंधविश्वासी हो रहा हूँ! उन्होंने अपने मन में उठने वाले भय को झटक कर दूर कर दिया। फिर भी, यह विचार बार-बार उनके मन में आता रहा। वे नहीं चाहते थे कि उनके साथी उनकी घबराहट को समझें; उन्होंने खुद को संभाला और मन ही मन उस प्रार्थना का पाठ करने लगे जिसमें प्रथम इमाम अली से संकट में पड़े लोगों की सहायता करने का आह्वान किया जाता है: मैं अली से प्रार्थना करता हूँ... उन्होंने प्रार्थना पूरी की और फिर से शुरू किया। फिर उन्होंने मन ही मन निश्चय किया कि जब वे सुरक्षित रामपुर पहुँच जाएँगे, तो यथाशीघ्र शाह जमालुल्लाह के पवित्र मकबरे पर उपस्थित होकर उनकी कब्र के लिए एक औपचारिक चादर भेंट करेंगे और वहाँ उपस्थित सभी लोगों के लिए भोज का आयोजन करेंगे। इसके बाद वे अमरोहा जाकर मखदूम शाह-ए विलायत की पवित्र समाधि पर भी अपनी श्रद्धा अर्पित करेंगे।

प्रार्थनाओं और संकल्पों के बाद उनके हृदय को कुछ शांति और सुकून मिला; उन्हें एहसास हुआ कि सड़क के बीचोंबीच फैली छाया का वह समूह कोई झाड़ी नहीं था, और न ही कोई घात। दरअसल, वह आठ-दस यात्रियों का एक समूह था; उनमें से एक सड़क के किनारे चादर ओढ़कर सो रहा था। शायद कोई घायल या बीमार था, उन्होंने सोचा। दो-तीन आदमी उसके सिर और पैरों के पास बैठे धीरे-धीरे बातें कर रहे थे; शायद वे प्रार्थना कर रहे थे। बाकी तीन-चार लोग सड़क के बीचोंबीच खड़े थे, उनके सिर झुके हुए थे, कंधे झुके हुए थे: निराशा और हताशा का चित्र। उनमें से एक ने अपना सिर उठाया और आगा तुराब अली के काफिले को भय और आशा से भरी आँखों से देखा।

आगा तुराब अली के दल को यात्रियों के एक समूह की मदद करने के लिए रुकने के लिए राजी किया जाता है।

आगा तुराब अली के आगे चल रहे घुड़सवारों ने राहगीरों को वहीं रुकने का इशारा किया। आगा साहब के घुड़सवारों में से एक आगे बढ़ा और उसने दल का ध्यानपूर्वक निरीक्षण किया। वे सात या आठ लोग थे। उन्होंने सैनिकों के वस्त्र पहने हुए थे, लेकिन वे निहत्थे और विनम्र दिख रहे थे। जमीन पर लेटे हुए व्यक्ति के सिर और पैरों के पास खड़े तीन या चार लोग उदास और शोकग्रस्त लग रहे थे। वे उठे नहीं, बल्कि धीमी आवाज़ में प्रार्थना करते रहे। घुड़सवार उन्हें स्पष्ट रूप से नहीं सुन सका, लेकिन शब्द अरबी प्रार्थनाओं जैसे लग रहे थे जो दुनिया भर के सभी मुसलमान करते हैं। चार आदमी सड़क किनारे खड़े थे; उनके चेहरे दुख और पीड़ा से काले और धूल से सने हुए थे, उनके कंधे झुके हुए थे, उनके शरीर ढीले थे, मानो वे जीवन भर विनम्र रहे हों और सफलता की राह में अपने साथियों से पीछे छूट गए हों, वे थकावट की अंतिम अवस्था से गुजर चुके हों। उनका रंग सांवला था; उनके चेहरे से पता चलता था कि वे अवध के थे, न कि दक्कन जैसी किसी विदेशी भूमि के। वे भी निहत्थे थे; उनका सामान सड़क किनारे चार या पांच बड़े, बेढंगे बंडलों में रखा हुआ प्रतीत हो रहा था: उनके आकार से अंदाजा लगाया जा सकता था कि उनमें माचिस वाली बंदूकें या एसबीबीएल बंदूकें जैसे हथियार थे।

उन्होंने आशा भरी निगाहों से घुड़सवार को देखा। उनमें से एक ने झुककर विनती की और हताशा और पीड़ा से लगभग बेजान स्वर में कहा, 'कामिदान साहब, आपका यहाँ आना कितना सौभाग्य की बात है! हमने तो सारी उम्मीद ही खो दी थी...'

अन्य घुड़सवार पास आ गए, और उनमें से एक ने अजनबी की बात काटते हुए गुस्से से कहा, 'जी? क्या बात है? तुम कौन हो, नीच लोग, और यहाँ क्यों खड़े हो?'

वह विनम्र स्वभाव का व्यक्ति, जो अधेड़ उम्र का प्रतीत होता था, जिसके बाल और दाढ़ी कुछ हद तक बिखरे हुए थे और उनमें सफेदी आ गई थी, और जिसकी गर्दन कुछ पतली और झुर्रीदार थी, घुड़सवारों की ओर एक कदम बढ़ाने लगा, लेकिन घुड़सवार ने उसे सख्ती से फटकारा, 'नहीं! एक कदम भी आगे मत बढ़ाओ। वहीं खड़े रहो और जो कहना है कहो।'

‘कामिदान जी, मेरा नाम करीमुद्दीन है। हम चांदपुर के नवाब साहब के सिपाही हैं। हम मुसलमान हैं; हम काकराला में छुट्टी पर थे। हम वापस ड्यूटी पर लौट रहे हैं।’

अपने सवारों के मना करने के बावजूद, आगा साहब उस समूह के इतने करीब पहुँच गए थे कि वे उनके और अपने सवारों के बीच की बातचीत सुन सकते थे। उन्होंने गौर किया कि वे निस्संदेह सैनिक थे और निश्चित रूप से मुसलमान भी थे। उन्होंने गुज़ी की छोटी और तंग पतलून और नीले सूज़ी या महमूदी कपड़े की तंग, छोटी कुर्ती पहनी हुई थी—दोनों ही सूती, मोटे और टिकाऊ कपड़े, जो सैनिकों में बहुत पसंद किए जाते थे—और कुर्ती के ऊपर फूलों वाले लंबे कपड़े का मध्यम लंबाई का कोट पहना हुआ था। खुले कोट का बायाँ हिस्सा दाईं ओर लिपटा हुआ था, जो मुसलमानों की शैली थी। उनकी पगड़ी भी छोटी थी, लेकिन मुसलमानों के औपचारिक सिर के पहनावे की तरह, जिसका एक सिरा उनकी गर्दन और पीठ के ऊपरी हिस्से तक लटका हुआ था।

उन्होंने अपनी कमर पर सूती कमरबंद बांध रखा था, लेकिन उसमें कोई कटार या हथियार नहीं लटका था। उन्होंने ऊँची एड़ी और ऊँची एड़ी वाले जूते पहने हुए थे, जो उन्हें लंबी या तेज़ चाल के लिए उपयुक्त बनाते थे।

सिर से पैर तक, वे थके हुए, या यूँ कहें कि हारे हुए सैनिक लग रहे थे। उनके आस-पास कहीं भी हथियार या गोला-बारूद का कोई निशान नहीं था। आगा साहब का ध्यान अपनी ओर आकर्षित देखकर, सफ़ेद दाढ़ी वाले विनम्र व्यक्ति, जिसने अपना नाम करीमुद्दीन बताया, ने खुशी से चिल्लाते हुए कहा, 'शुक्रिया, और फिर से शुक्रिया, या अल्लाह! नवाब साहब स्वयं आ गए हैं! यह उनकी शान नहीं, बल्कि अल्लाह की रहमत का फरिश्ता है!' बोलते हुए वह ज़मीन पर सजदा करने लगा, जबकि बाकी तीनों ने झुककर सलाम किया और पुकारते हुए कहा, 'अल्लाह उनकी शान की रक्षा करे! अब हमारे मुर्दे ज़िंदा हो जाएँगे!'

'झगड़ा मत करो,' आगा तुराब अली ने रूखेपन से कहा, हालांकि उनका लहजा कठोर नहीं था। 'क्या बात है? यह एक मरे हुए आदमी के फिर से जीवित होने की क्या बात है?'

ढके हुए व्यक्ति के सिर और पैरों के पास खड़े चारों लोगों की आवाज़ अब सुनाई दे रही थी: वे कुरान के पहले और आखिरी से पहले के दो अध्यायों का पाठ कर रहे थे, जिनकी आवाज़ स्पष्ट रूप से अशिक्षित लोगों की थी। करीमुद्दीन, जो अभी भी ज़मीन पर लेटा हुआ था, ने अपना सिर उठाया और आँसुओं से भीगी आवाज़ में बोला, "हे आदरणीय महोदय, जो व्यक्ति ज़मीन पर लेटा है, वह हमारा भाई है। आज सुबह वह शौच के लिए मैदान में गया था। उसे साँप ने काट लिया।" वह ज़ोर-ज़ोर से विलाप करने लगा, "हाय हाय! वह बहुत कम उम्र में मर गया, बहुत कम उम्र में। वह एक मिनट के भीतर ही मर गया!"

करीमुद्दीन उठा और शव से चादर हटाई तो सामने एक युवक दिखाई दिया: उसका चेहरा नीला पड़ गया था और उसके मुँह से हरे रंग का झाग निकल रहा था। करीमुद्दीन ने अपना दुख भरा वृत्तांत सुनाना शुरू किया। 'तब से, महाराज, हम यहाँ फँसे हुए हैं, किसी विद्वान या कम से कम ऊँचे खानदान के शिक्षित मुसलमान का इंतज़ार कर रहे हैं जो दफ़नाने से पहले मृतक के लिए पढ़ी जाने वाली नमाज़ पढ़ाए। तब हम उसे एक सच्चे मुसलमान की तरह दफ़ना सकेंगे। हम मुसलमान हैं, महोदय, लेकिन हमें पाँचों निर्धारित नमाज़ों का थोड़ा-बहुत ही ज्ञान है... हमें न तो नमाज़ पढ़ाने का ज्ञान है और न ही दफ़नाने का।'

'मैं समझ गया। तो आप यहाँ आए कैसे?'

करीमुद्दीन के बगल में खड़ा सिपाही फिर से सलाम करते हुए धीमी, पतली आवाज में बोला, 'महामहिम, हम काकरालाह से हैं, हम चांदपुर जा रहे हैं जहाँ हम नवाब साहब की सेवा में हैं। हम काकरालाह स्थित अपने घर छुट्टी पर गए थे।'

मिर्ज़ा तुराब अली को पता था कि वास्तव में चांदपुर नाम का एक छोटा सा देशी राज्य था; यह बिल्हौर और कन्नौज के बीच स्थित था। वह नवाब को नहीं जानते थे, लेकिन उनका नाम उन्हें ज्ञात था।

उन्होंने पूछा, 'तुम्हारे नवाब का नाम क्या है?'

'अजीम-उद-दौला नवाब मुस्तकीम-उद दीन खान बहादुर, आपका सम्मान।'

यात्री द्वारा नवाब का नाम सही और सटीक रूप से उच्चारित करते हुए सुनकर आगा मिर्ज़ा तुराब अली को थोड़ी तसल्ली हुई। उन्होंने कहा, 'ठीक है, हम दुगनी गति से निकलेंगे और अगले गाँव से एक अच्छे मौलवी को आपके दिवंगत के लिए प्रार्थना करवाने भेजेंगे।'

'महामहिम, आस-पास कोई गाँव नहीं है। यहाँ तो बस एक छोटा सा गाँव है, जिसमें केवल मरे हुए जानवरों की खाल उतारने वाले और सड़े-गले शव हटाने वाले ही रहते हैं। यहाँ तक कि कोई उच्च जाति का हिंदू भी नहीं है।' करीमुद्दीन रुका, मानो सोच रहा हो कि उसे अपनी बात कहनी चाहिए या नहीं। 'माननीय महोदय, अगर हम और देर करेंगे तो शव के सड़ने की संभावना है। क्या आप...'

"जी हाँ, महाराज,' जुलूस के आगे कुरान की आयतें पढ़ रहे लोगों में से एक ने कहा। "यदि आप हम अजनबियों पर इतनी कृपा करें, यदि आप नमाज़ पढ़ाएँ, तो हम आपके कुलीन परिवार की सात पीढ़ियों के लिए अच्छी दुआएँ करेंगे। अल्लाह आपको इसका सवाब भी देगा।"

मिर्ज़ा तुराब अली असमंजस में थे और इस बात से अवगत भी थे। उन्होंने पूछा, 'क्या आप सुन्नी हैं?'

'माननीय न्यायाधीश महोदय, हम सभी सुन्नी हैं।'

लेकिन मैं शिया हूँ। क्या आपके लिए यह उचित होगा यदि मैं नमाज़ पढ़ाऊँ?

वे सोचने लगे। फिर करीमुद्दीन ने धीरे से कहा, "अल्लाह बहादुर की कामयाबी पर हमेशा रहम करे! आपके और हमारे अल्लाह और पैगंबर एक ही हैं। इसलिए आपकी दुआ अल्लाह की दुआ है। हम बस यही चाहते हैं कि हमारे भाई को मुसलमान रीति-रिवाजों के मुताबिक दफ़नाया जाए। उन्हें किसी काफ़िर की तरह आग में न झोंका जाए।"

आगा तुराब अली ने अपने साथियों की ओर देखा। उनके चेहरों पर उनकी आंतरिक उलझन और उदासी झलक रही थी। स्पष्ट था कि वे एक मिनट भी रुकना नहीं चाहते थे, मृतक के लिए प्रार्थना करना तो दूर की बात थी। आगा साहब का हठ और अड़ियलपन तुरंत सामने आ गया। उन्होंने ठान लिया, "मैं जनाज़े की प्रार्थना किए बिना नहीं जाऊँगा। इस बेचारे को कफ़न और दफ़नाने के बिना छोड़ना मानवता के विरुद्ध है।"

'साबिर बख्श,' उसने आदेश दिया, 'मुझे स्नान के लिए थोड़ा पानी दो। तुम सब पुरुष भी स्नान कर लो; अगर पानी कम पड़े तो मिट्टी के ढेर पर स्नान कर लो।'

उसने अपने हथियार उतारने शुरू कर दिए। 'तुम्हें भी अपने हथियार उतार देने चाहिए।' उसका लहजा आदेशात्मक था। 'जल्दी करो, क्या तुम्हें नहीं दिख रहा कि हमें अभी काफी दूर जाना है?' माथे पर उदासी और स्पष्ट अनिच्छा के साथ, साबिर बख्श और अन्य लोगों ने अपने हथियार उतार दिए। उन्होंने अपने चेहरे, हाथ और पैर धोए और एक सीधी पंक्ति में खड़े हो गए, मृतक का ढका हुआ शरीर आगे था, और उनके और शरीर के बीच नेता के लिए कुछ जगह छोड़ी गई थी। यात्री-सैनिक पहले से ही इसी तरह की पंक्ति में खड़े थे। अपने सामान की सुरक्षा के लिए, आगा तुराब अली के आदमियों ने यात्री-सैनिकों द्वारा बनाई गई पंक्ति के आगे खड़े होना सुनिश्चित किया, जिनमें से एक किसी कारण से अलग खड़ा था। उसकी ओर इशारा करते हुए करीमुद्दीन ने कहा, 'आदरणीय नवाब साहब के हथियार और सामान पूरी तरह सुरक्षित रहेंगे।

हमारे अपने हथियार इन बंडलों में हैं। यह आदमी, सर बुलंद खान, पहरा देगा। आदरणीय नवाब साहब, कृपया नमाज़ पढ़ाएँ।'

सर बुलंद खान का नाम सुनते ही आगा मिर्ज़ा तुराब अली को ऐसा लगा मानो जैसे यात्री सैनिकों के बीच बिजली सी दौड़ गई हो और उनमें नई जान आ गई हो। मानो उनका ढीलापन दूर हो गया हो; उनके झुके हुए सिर और कंधे सीधे हो गए हों—ऐसा लग रहा था जैसे वे किसी चीज़ के लिए तैयार और तत्पर हों। आगा मिर्ज़ा तुराब अली का दिल ज़ोर से धड़कने लगा, मानो किसी ने उनकी छाती पर ज़ोर से मुक्का मारा हो... नहीं, कुछ नहीं; शायद धूप का असर है। सर्दियों की धूप धोखेबाज़ होती है; देखने में तो सुहावनी लगती है, लेकिन बहुत तेज़ हो सकती है, उन्होंने मन ही मन कहा। वे उस जगह पर गए जहाँ उनके खड़े होने के लिए एक छोटी सी चादर बिछाई गई थी।

आगा तुराब अली ने 'अल्लाहु अकबर' कहकर नमाज़ शुरू की, शिया रीति के अनुसार उनके हाथ खुले थे। बाकी सबने सुन्नी रीति के अनुसार अपने हाथ सीने पर जोड़ लिए।

कुछ ही सेकंड बीते थे कि किसी ने हल्के, बातचीत वाले लहजे में कहा, 'इस तंबाकू को चबाओ।' शब्द अभी हवा में घुले भी नहीं थे कि सामने पड़ा मृत व्यक्ति पैंथर की तरह उछला और आगा तुराब अली के हाथों को लोहे की पकड़ से जकड़ लिया। उसके पीछे, करीमुद्दीन ने अपने कॉलर के पीछे से मोटे सूती कपड़े का एक पतला टुकड़ा निकाला, जिस पर पीली और सफेद धारियाँ थीं और जो लगभग पौने गज लंबा था। उसके एक सिरे पर एक गाँठ थी। नेवले या लिंक्स के हमले से भी तेज गति से उसने रुमाल को आगा तुराब अली की गर्दन के चारों ओर फेंका और एक ज़ोरदार झटका दिया। आगा तुराब अली बेबस हो गए और उनका दम घुटने लगा। उन्होंने साँस लेने के लिए अपना मुँह खोलने की कोशिश की, लेकिन उनका मुँह कसकर बंद रहा। एक पल के लिए उन्हें असहनीय दर्द हुआ और फिर वे ज़मीन पर गिर पड़े। उनका स्वरयंत्र कुचलकर उनकी गर्दन की रीढ़ की हड्डी के ऊपरी हिस्से में धंस गया था, जिससे वह सूखी टहनी की तरह टूट गई थी। एक मिनट या उससे भी कम समय में उसकी मृत्यु हो गई, बिना किसी संघर्ष या चीख के, उसे अपने शरीर में दर्द और सांस के रुकने का भी एहसास नहीं हुआ।

इसी बीच, बाकी यात्रियों ने आगा साहब के दल के बाकी लोगों के साथ भी ठीक वैसा ही बर्ताव किया। गुंडों ने बड़ी सहजता से काम किया, मानो किसी तयशुदा तरीके से हज़ार बार अभ्यास किया गया हो। हर पीड़ित की मौत में एक मिनट से भी कम समय लगा। पूरी कार्रवाई, जो सटीक और बेहद कम गतिविधियों के साथ की गई, छह मिनट में पूरी हुई।

हत्या की क्रिया के साथ-साथ ही बदमाशों ने शवों से सभी कीमती सामान निकाल लिए, मरते या मृत शरीर की मांसपेशियों की यांत्रिक, अनियंत्रित ऐंठन पर उन्होंने जरा भी ध्यान नहीं दिया। लूटे गए सामान को एक बेढंगे बंडल में लपेट दिया गया। जैसे ही वे अपने इस काम को पूरा कर रहे थे, उन्होंने पेड़ों की चोटियों पर गिद्धों की गंदी भूरी परछाइयाँ बनती देखीं। करीमुद्दीन ने संक्षिप्त लेकिन फिर भी बोलचाल के लहजे में आदेश दिया, 'कुल्हाड़ी निकालो।'

एक गुंडे ने एक गठरी खोली और बड़ी सावधानी और श्रद्धा से सफेद सूती चादर में लिपटी हुई एक कुदाल निकाली। गुंडे बारी-बारी से सड़क के ढलान के नीचे एक कब्रनुमा गड्ढे को चौड़ा और

गहरा करने लगे। गड्ढा पहले से ही ऐसी जगह खोदा गया था जहाँ से गुजरने वाला कोई भी यात्री उसे तब तक नहीं देख सकता था जब तक कि वह ठीक उसी जगह पर न रुक जाए। दस-बारह मिनट के भीतर गड्ढा इतना गहरा और लंबा हो गया कि उसमें भयानक शव समा सके। आठों शवों को गड्ढे में ठूंस दिया गया - एक सिर एक जोड़ी पैरों से और दूसरी जोड़ी पैर दूसरे सिर से इस तरह सटाए गए जैसे जूते एक डिब्बे में रखे हों।

कुछ ही मिनटों में, गड्ढा ढीली मिट्टी और पत्थरों से भर दिया गया और धीरे से दबा दिया गया। लगभग समतल सतह पर, उन्होंने झाड़ियाँ, कंकड़, कांटे और मिट्टी के ढेले फैला दिए; कुछ पौधे जो कम पानी के साथ भी जड़ पकड़ सकते थे, उन्हें झाड़ियों से कुछ दूरी पर उखाड़कर समतल किए गए गड्ढे पर बेतरतीब ढंग से लगा दिया गया ताकि प्रकृति की अनियंत्रित वृद्धि की नकल की जा सके। अब सफाई करने वाले जानवरों या मांसाहारी जीवों के लिए खोदने के लिए कुछ भी नहीं बचा था, न ही किसी खोज दल के लिए।

उन्होंने कुदाल को सावधानीपूर्वक धोया, लेकिन कब्र के पास ही, उस पर थोड़ा पानी छिड़का। उसे उसी सावधानी और श्रद्धा से सफेद कपड़े में फिर से लपेटा गया, जैसे लपेटते समय लपेटा गया था। फिर उन्होंने पश्चिम की ओर मुख किया और पुकारा, 'हमारी माता देवी की जय हो!' कुल्हाड़ी वाले पैकेट को बड़े प्यार से चूमा गया और सामान के गट्ठे में रख दिया गया। घोड़ों पर से काठी और अन्य सामान हमेशा की तरह कुशलता से उतार दिए गए। घोड़ों और टट्टुओं को खुला छोड़ दिया गया, ताकि वे भाग जाएं और जंगली बन जाएं, या पैंथर, चीता, जंगली कुत्ते या किसी भी अन्य शिकारी जानवर का शिकार बन जाएं। वे कुल नौ आदमी थे; आसानी से अपना बोझ उठाते हुए, वे तेज़ी से चले, हालांकि देखने में उनकी चाल धीमी लग रही थी, और कुछ ही मिनटों में वे नज़रों से ओझल हो गए।

महाकाली के भक्त और उन्हें खत्म करने में जॉन कंपनी की भूमिका और उद्देश्य

यह उन दिनों की कहानी है जब दुनिया युवा थी और देवी-देवता, जिन्न और परी, दानव और दानव स्त्रियाँ, राक्षस और शैतान, दक्षिणी ध्रुव की नरकीय आत्माएँ और दुष्ट आत्माएँ, पिशाच और बुरी आत्माएँ पृथ्वी पर स्वतंत्र रूप से विचरण करती थीं और कभी-कभी मनुष्यों को दिखाई देती थीं।

देवियों में भवानी भी थीं, जो शिव की पत्नी थीं और जिन्हें अक्सर देवी के नाम से पुकारा जाता था। एक बार पृथ्वीवासियों पर एक बड़ी विपत्ति आई: किसी भूमिगत क्षेत्र में एक विशाल राक्षस का जन्म हुआ और पृथ्वी पर प्रकट होकर उसने मनुष्य की सभी शक्तियों और सामर्थ्यों को पराजित कर दिया और सभी जीव उसके अधीन हो गए। वह जन्म लेते ही सभी मानव शिशुओं को खा जाता था, जिसके परिणामस्वरूप पृथ्वी पर मनुष्यों की जनसंख्या घटने लगी; जबकि पशु-पक्षी फलने-फूलने और बढ़ने लगे।

इससे एक और भयावह स्थिति उत्पन्न हुई: जब पृथ्वी पर उपलब्ध भोजन से मांसाहारी जीवों की संख्या अधिक हो गई, तो उन्होंने मनुष्यों पर ध्यान केंद्रित किया, जिससे ऐसी स्थिति उत्पन्न हुई कि राक्षस मानव शिशुओं को खाने लगे और वयस्क मनुष्यों के शरीर को चीर-फाड़ कर उनका खून बहाने लगे। कुछ ही दिनों में, पहले वीरान स्थान, फिर गाँव, फिर बड़े जनसंख्या केंद्र और शहर, और यहाँ तक कि राजाओं के महल भी बाघों, शेरों, तेंदुओं, चीतों, भेड़ियों, लिंक्स, लकड़बग्घों और सियार से भर गए।

लोग बड़ी संख्या में और सैन्य टुकड़ियों में उस राक्षस को मारने के लिए उमड़ पड़े। कुछ जगहों पर तो हाथियों, दरियाई घोड़ों और जंगली भैंसों को भी इस काम में लगाया गया। लेकिन सब व्यर्थ था। राक्षस को मारने के सारे प्रयास नाकाम रहे। वह इतना विशालकाय था कि गहरा समुद्र भी उसके पेट तक मुश्किल से ही पहुँच पाता था। चाहे इंसान हो या जानवर, उसके सामने आते ही वे बेहोश हो जाते थे, जिससे उसके लिए उन्हें पकड़ना और एक-एक करके निगल जाना और भी आसान हो जाता था।

इस कहानी का एक और संस्करण भी है जो कहता है कि वह कोई दानव नहीं था, बल्कि रकात बेज नामक एक नरकीय राक्षस था।

जब समस्त संसार शोक और पीड़ा से विलाप करने लगा, तब देवी भवानी, जिन्हें देवी, दुर्गा या काली भी कहा जाता है, ने मनुष्यों पर दया की। उन्होंने अपनी पवित्र कमर में लटकी स्वर्ण तलवार उठाई और राक्षस का सिर काट डाला। जैसे ही उसका सिर कटा, उसकी गर्दन से रक्त का फव्वारा फूट पड़ा और वर्षा की तरह गिरने लगा। पृथ्वी पर गिरती रक्त की प्रत्येक बूंद के साथ, एक नया राक्षस, या दानव, हूबहू उसी की प्रतिकृति के रूप में प्रकट हो उठा। अब भवानी वास्तव में क्रोधित हो उठीं। उन्होंने दोनों हाथों से तलवार उठाई और जैसे ही राक्षस प्रकट हुए, उन्हें मार गिराना शुरू कर दिया। मरते हुए राक्षसों की गर्जना और तुरही की आवाज से गूंजता

हुआ पूरा मैदान उनके विशाल शवों से भर गया।
जैसे-जैसे वह काटती और मारती गई, काटती और मारती गई, उसकी बाहें थकती गईं और पसीने से उसका पूरा शरीर, सिर से लेकर पैर तक, भीग गया।
फिर उसने अपने पसीने से भीगे हुए हाथों को सुखाया और युद्धभूमि पर पसीने की दो बूँदें गिरा दीं। जैसे ही बूँदें धरती पर गिरीं, धरती पिसी हुई मिट्टी की तरह नरम हो गई। उस मिट्टी से दो वीर और निडर योद्धा उभरे। माता भवानी ने अपनी पीली-सफेद धारीदार साड़ी के किनारे से दो पट्टियाँ फाड़ीं और एक-एक पट्टी दोनों योद्धाओं को दे दी। उसने आदेश दिया, 'इन निकम्मों और दुष्टों का एक-एक करके गला घोंट दो। सावधान रहो, खून की एक बूँद भी नहीं बहनी चाहिए!'
उन वीर योद्धाओं ने पल भर में ही राक्षसों का नाश कर दिया। भवानी प्रसन्न हुईं और उन्होंने योद्धाओं को कपड़े की दो पट्टियाँ देते हुए कहा, "आज से यही तुम्हारा धर्म होगा। इस पट्टी से मनुष्यों को मारो, पर रक्त मत बहाओ। जिन्हें तुम मारोगे, मैं उन्हें खा जाऊँगी, पर मारने के बाद पीछे मुड़कर मत देखना। क्योंकि तुम्हारे द्वारा मारा गया मनुष्य मेरे आदेश से मरेगा, वह प्रेत नहीं बनेगा; न ही उसके कर्मों का कोई हिसाब होगा: वह सीधे स्वर्ग जाएगा और उसे कभी भी नरक का सामना नहीं करना पड़ेगा।"
एक अन्य कथा के अनुसार, माता ने स्वयं अपने रुमाल से रकात बेज का गला घोंटकर उसकी हत्या कर दी। फिर उन्होंने वह रुमाल कचनी जाति के एक साधारण भिखारी को दान में दे दिया। उन्होंने उसे वरदान दिया कि वह उस रुमाल का उपयोग यात्रियों को मारने और इस प्रकार अपनी रोजी-रोटी कमाने के लिए कर सकता है। उन्होंने कहा, 'जिन लोगों को तुम मारोगे, उन्हें दफनाना मेरा कर्तव्य होगा; और तुम्हारी और तुम्हारे कबीले की रक्षा करना भी मेरा कर्तव्य होगा।'
उन्होंने कुछ प्रतिबंध भी लगाए और कुछ अपवाद भी रखे। उदाहरण के लिए:
महिलाओं की हत्या न करें। किसी रिश्तेदार की हत्या न करें। यदि भौतिक लाभ की कोई अपेक्षा न हो तो कभी हत्या न करें। मृत्यु के समय पूरी तरह से सचेत रहें।
लेकिन सबसे महत्वपूर्ण शर्त यह थी: हत्या का हथियार वह कपड़ा (या रूमाल) होना चाहिए जो मैं तुम्हें दूं; या उसी तरह के कपड़े का दूसरा टुकड़ा इस्तेमाल करो; गला घोंटकर मारो, और मारने के बाद कभी पीछे मुड़कर मत देखो।
भवानी के उपासक पूरी दुनिया में फैल गए और निर्भय होकर मनुष्यों का शिकार करने और उन्हें मारने लगे। भवानी पलक झपकते ही शिकार को निगल जाती थी; लापता व्यक्ति का रहस्य कोई नहीं सुलझा सका।
हजारों वर्ष बीत गए और कुछ भी अप्रिय घटना नहीं घटी। परन्तु मनुष्य को मूर्ख यूं ही नहीं कहा जाता। एक बार एक साहसी व्यक्ति के मन में यह विचार आया कि वह पीछे मुड़कर देखे कि माता ने उसके शिकार का क्या किया। इसलिए उसने एक राहगीर को मार डाला और भाग गया। भागते समय उसने पीछे मुड़कर देखा तो पाया कि माता बड़े चाव से उस मृत व्यक्ति को निगल रही थीं। एक अन्य परंपरा के अनुसार, जब उस साहसी व्यक्ति ने पीछे मुड़कर देखा, तो उसने देवी को पूर्णतया नग्न और अपने वास्तविक रूप में देखा। वह स्वयं शव को अपने रथ पर लाद रही थीं।

एक अन्य परंपरा के अनुसार, देवी चमत्कारिक रूप से अपने पैर की उंगलियों से शरीर को उठा रही थीं और उसे अपने जबड़ों में फेंक रही थीं।
एक और कथा यह भी है: देवी ने शरीर को इतनी आसानी से उठा लिया मानो वह कोई सूखा पत्ता हो। फिर उन्होंने उसे हवा में उछाला और पल भर में गायब कर दिया।
जब देवी ने उस उद्दंड दर्शक को देखा, तो वे क्रोधित हो गईं। उन्होंने कहा, "अब से शवों को हटाने में मेरा कोई हाथ नहीं होगा। तुम जो चाहो कर सकते हो। मुझे कोई परवाह नहीं।" इसके बाद वे और उनका रथ गायब हो गए। तब से देवी के भक्तों का यह कर्तव्य बन गया है कि वे कुदाल बनाएँ, समाधि गड्ढा खोदें और मारे गए लोगों को दफनाएँ।
एक अन्य कथा के अनुसार, जब उस दुस्साहसी ने रोते हुए देवी से अत्यंत दीनतापूर्वक क्षमा मांगी, तो देवी को उस पर दया आ गई। उन्होंने कहा, "मैं अब तुम्हारे मारे हुए लोगों को नहीं उठाऊंगी।" लेकिन उन्होंने अपना एक दांत निकालकर उसके सामने फेंक दिया और आज्ञा दी, "इसे ले लो और इससे एक खुदाई का औजार बनाओ और उसका नाम कस्सी रखो। जब तक तुम अपनी कस्सी का आदर और पूजा करोगे, वह तुम्हारी मित्र और सहायक रहेगी। वह तुम्हें तुम्हारे कर्तव्य का मार्ग दिखाएगी; वह तुम्हें गलतियों से बचाएगी। इससे तुम बहुत कम समय में कब्र खोद लोगे। जब तुम्हारा काम हो जाए, तो इसे कुएं में फेंक दो।" बाद में, जब भी तुम अपना काम करने जाओगे, जिसे जीताई कहा जाएगा, और वास्तविक गला घोंटने का काम, जिसे भनौती कहा जाएगा, तो तुम्हें उसी कुएँ पर जाकर मेरे नाम से कस्सी को बुलाना होगा: वह अपने आप तुम्हारे हाथ में आ जाएगी।
मेजर जनरल विलियम हेनरी स्लीमैन को कंपनी बहादुर की सेवा में दो यादगार और उत्कृष्ट उपलब्धियों के सम्मान में, अपने लंबे जीवन के अंत में कमांडर ऑफ द बाथ (केसीबी) की उपाधि से सम्मानित किया गया। उन्होंने अपने संस्मरणों में लिखा है कि कई गुंडों ने शपथपूर्वक उन्हें उस घटना का वर्णन किया, जिसमें गुंडों के एक गिरोह का जमादार (समूह नेता) एक कुएँ पर जाता था और माँ काली के नाम पर अपनी कसी को कुएँ के किनारे तक ऊपर लाने की प्रार्थना करता था, और कसी उसके आदेश का पालन करती थी। एक गुंडे ने तो यहाँ तक कहा कि यदि कुएँ में एक से अधिक कसी रखी हों, तो भी जमादार की अपनी कसी बिना किसी त्रुटि के ऊपर आ जाती थी।
भारत में ब्रिटिश सेना के इतिहास का एक रोचक, हालांकि कम ज्ञात तथ्य यह है कि ठगों के पराजय और ठग प्रथा के उन्मूलन के सात-आठ दशक बाद, प्रसिद्ध सर विलियम हेनरी स्लीमैन के पोते कर्नल जेम्स स्लीमैन ने भारतीय सेना के लिए मिट्टी काटने और खोदने के लिए एक कुशल उपकरण डिजाइन करने का विचार किया। उनके द्वारा तैयार किया गया अंतिम कुदाल का डिज़ाइन ठगों की कुदाल से आश्चर्यजनक रूप से मिलता-जुलता था, हालांकि कर्नल जेम्स स्लीमैन ने इससे पहले कभी ऐसी कुदाल नहीं देखी थी।
जब किसी गुंडे गिरोह का सरदार कसी बनाना चाहता है, तो वह शुभ और अनुकूल दिन चुनकर लोहार के पास जाता है। वह सुनिश्चित करता है कि कसी बनाते समय लोहार कोई और काम न करे। उस समय किसी अजनबी या परदेसी को भी वहाँ मौजूद रहने की अनुमति नहीं होती। कसी

बनाते समय, उसे धूप में रखने के लिए शुभ दिन चुना जाता है, ताकि उसमें स्नेह, समृद्धि और खुशहाली समाहित हो जाए। फिर, यदि गुंडे यात्रा पर नहीं होते, तो वे घर में बंद होकर अपने लोगों का जमावड़ा करते हैं। यदि वे यात्रा पर होते हैं, तो वे किसी गुप्त और सुरक्षित स्थान पर सभा आयोजित करते हैं। अपवाद यह है कि ऐसी सभा शनिवार या रविवार को आयोजित नहीं की जा सकती।

फिर एक साफ, चौकोर जमीन चुनी जाती है और उस पर गोबर और मिट्टी का लेप किया जाता है। यह इतना बड़ा चौकोर होता है कि एक आदमी आराम से बैठ या उकड़ू बैठ सके। होम (या हवन) की रस्मों में पारंगत एक व्यक्ति उस चौकोर जमीन पर बैठता है और बाकी लोगों को पास बैठने के लिए कहता है। फिर कस्सी को एक उथले, हाथ से पकड़े जाने वाले टब में रखे साफ पानी से धोया जाता है। धुले हुए पानी को पहले से खोदे गए एक छोटे गड्ढे में बहने दिया जाता है। इसके बाद कस्सी को गुड़ के मिश्रण से फिर से धोया जाता है, यह सुनिश्चित करते हुए कि पानी सीधे गड्ढे में ही जाए। इसके बाद कस्सी को दही से धोया जाता है; अंत में, कुदाल को किसी स्थानीय शराब या मादक पेय से धोया जाता है, और धुले हुए पानी को फिर से गड्ढे में इकट्ठा कर लिया जाता है। अब, जब कुदाल अभी भी गीली हो, तो लाल सीसा और सिंदूर के पाउडर के मिश्रण की सात बूँदें - जिसे पूरे भारत में शुभ माना जाता है और एक महिला की वैवाहिक स्थिति का प्रतीक है - कुदाल के हैंडल के किनारे से लेकर काटने वाले ब्लेड के किनारे तक कुदाल पर लगाई जाती हैं।

कस्सी का सिर उस उथले बर्तन के किनारे पर रखा जाता है जिसमें उसे नहलाया गया था। एक दूसरे उथले बर्तन में एक नारियल, पांच-छह पान के पत्ते, कुछ लौंग, कड़वे गोंद के टुकड़े, नीलगिरी के कुछ दाने, सफेद तिल और गुड़ का एक टुकड़ा रखा जाता है। एक छोटी कटोरी में थोड़ा घी डाला जाता है। फिर सूखे गोबर से आग जलाई जाती है। सौभाग्य और आशीर्वाद के लिए थोड़ी आम की लकड़ी और बेर की लकड़ी भी जलाई जाती है।

जब आग पूरी तरह से धधक रही होती है, तो जानकार ठग नारियल को छोड़कर बाकी सभी चीजों को एक-एक करके आग में फेंक देता है। हर बार फेंकने पर आग और भी भड़क उठती है। ऐसा करने पर, कस्सी को आग के ऊपर से सात बार घुमाया जाता है। अनुष्ठानकर्ता नारियल का रोएँदार छिलका उतारता है, फिर वहाँ मौजूद सभी लोगों से अनुमति लेता है, और कस्सी के उस हिस्से पर जहाँ हैंडल लगाने के लिए छेद होता है, नारियल के छिलके पर ज़ोर से प्रहार करता है। प्रहार इतना ज़ोरदार होता है कि नारियल का छिलका एक ही झटके में चकनाचूर हो जाता है। अब सभी ठग, चाहे हिंदू हों या मुसलमान, एक साथ चिल्लाते हैं: 'हमारी माता देवी की जय हो!' नारियल के गूदे का थोड़ा सा हिस्सा, उसका पूरा छिलका और भूसा आग में डाल दिया जाता है। अब सभी गुंडे पश्चिम की ओर मुख करके लेट जाते हैं और नारियल का गूदा खा जाते हैं।

किसी जमादार के अलावा किसी को भी कसी बनवाने का अधिकार नहीं है। रस्मों के अनुसार अशोभनीय अवस्था में कसी को छूना सख्त मना है, जैसे कि संभोग के तुरंत बाद या शौच करते समय। सामान्य अवस्था में भी कसी पर से कूदना या उसे पार करना घोर राजद्रोह माना जाता है। गुंडों का मानना है कि जब बाहर जाने का निश्चय कर लिया जाए, तो कसी को उस दिशा में गाड़

देना चाहिए जिस दिशा में जाना हो। यदि वह दिशा शुभ न हो, तो कसी अपनी दिशा बदलकर शुभ और मनचाही दिशा का संकेत देती है।
जब वे गश्त पर होते हैं और शिकार पर हमला करने का सही समय नजदीक आता है, तो जमादार या कोई अन्य वरिष्ठ व्यक्ति अपने समूह के सभी सदस्यों को सांकेतिक चेतावनी देता है। किसी विश्वसनीय बहाने का इस्तेमाल करते हुए, सर बुलंद खान, दिल्लर खान या सर मस्त खान का नाम लिया जाता है। अब गुंडे झिरनी के लिए सतर्क हो जाते हैं, जो असल में आदेश होता है। झिरनी एक देखने में सीधा-सादा शब्द या वाक्यांश होता है, जिसे धीमी आवाज़ में बोला जाता है, लेकिन वास्तव में यह हत्या शुरू करने का आदेश होता है। झिरनी के शब्द अत्यंत सामान्य होते हैं, उदाहरण के लिए:
tamakhu khalo (chew tobacco) surti khalo (eat a bit of tobacco granules) huqqa pi lo (smoke the hookah) tabak lao (bring some tobacco) pan do (give me/him a betel) kabit parh lo (read/say some poetry) aye ho to gahre chalo (now that you are here, finish him)
जैसे ही ऐसे शब्द बोले जाते हैं, नियुक्त गुंडा, जिसे भनोट कहा जाता है, पलक झपकते ही अपना काम कर देता है।
कुछ निश्चित दिनों और कुछ अपवादों के अलावा, सभी ठगों के समूह सता का पूर्ण पालन करते हैं। सता वे सात दिन होते हैं जो उनके कर्तव्य (जिताई) के लिए निकलने से पहले निर्धारित दिन से पहले आते हैं। इन सात दिनों के दौरान ठग और उसके घरवाले भी कुछ चीजों से सख्ती से परहेज करते हैं, जैसे कि दान देना। यह परहेज इतना कठोर होता है कि वे इस बात का भी ध्यान रखते हैं कि कहीं कोई बिल्ली या कुत्ता रोटी का टुकड़ा भी न चुरा ले जाए। सता के दौरान वे केवल मछली खाते हैं, मांस नहीं। वे अपना सिर नहीं मुंडवाते और अपने कपड़े धोने के लिए नहीं देते। जिन दिनों कोई ठग जिताई पर होता है, उन दिनों यदि किसी अन्य ठग का अपना ठग भी जिताई पर होता है, तो उस परिवार के सदस्यों को घर में प्रवेश नहीं दिया जाता, और यहां तक कि उन्हें मेजबान के घर की दहलीज पार करने की भी अनुमति नहीं होती।
कुछ ऐसे व्यक्ति और समूह हैं जिन पर हत्या का नियम लागू नहीं होता, जैसे: एक अतिथि; एक अंधा व्यक्ति; जिसके कान कटे हुए हों या जन्म से न हों; एक घुमंतू गायक; एक तेल व्यापारी; लंबे, उलझे बालों वाला एक शैव भिक्षु; एक सपेरा; मृत जानवरों की खाल उतारने वाला; एक धोबी; एक सुनार; एक महिला; एक भिखारी; एक दलाल; कायस्थ जाति का सदस्य (श्रेष्ठ, लेकिन न तो ब्राह्मण और न ही क्षत्रिय); एक पेशेवर गायक; एक निर्धन; एक कुष्ठ रोगी; एक लंगड़ा व्यक्ति; एक अपंग; एक नानक पंथी (एक सिख जो गुरु नानक की प्रतिमा की पूजा नहीं करता, बल्कि अदृश्य ईश्वर में विश्वास रखता है); और एक नाक कटी हुई महिला।
अब इताब के बारे में। यह कुछ निषेधों का समूह है, जैसा कि नीचे बताया गया है। निम्नलिखित दिन इताब के अंतर्गत आते हैं:
जब किसी गुंडे की पत्नी बच्चे को जन्म देती है, या उसकी पत्नी या बेटी पहली बार फूल खाती है; या यदि गुंडे की बेटी का विवाह होता है; या यदि उसके बेटे का खतना होता है: तो उसे इस

घटना के बाद बारह दिनों तक यात्रा नहीं करनी चाहिए; यदि वह पहले से ही यात्रा कर रहा है, तो उसे तुरंत लौट आना चाहिए।
यदि किसी गुंडे के घर में किसी की मृत्यु हो जाती है, तो वही प्रतिबंध लागू होता है, लेकिन अवधि दस दिन की होती है।
यदि किसी बदमाश का घोड़ा या घोड़ी मर जाती है तो भी यही प्रतिबंध (दस दिन) लागू होता है।
किसी गुंडे की गाय या किसी अन्य चार पैरों वाले जानवर की मृत्यु होने की स्थिति में, प्रतिबंध सात दिनों का होता है।
यदि किसी गुंडे की पत्नी सामान्य तरीके से फूल देती है, या उसकी बकरी, कुतिया या बिल्ली ने बच्चे दिए हैं, तो प्रतिबंध तीन दिन का है।
ऐसा नहीं है कि ऐसे मामलों में इताब केवल उस विशेष गुंडे पर ही लागू होता है। नहीं। यदि किसी गुंडे को चौबीस मील की दूरी पर स्थित किसी अन्य गुंडे के घर पर इताब लागू होने वाली किसी घटना के बारे में पता चलता है, तो इताब उस गुंडे पर भी लागू होगा।
यदि इताब के दायरे में आने वाला कोई गुंडा किसी दूसरे गुंडे को छूता है, या यहां तक कि उसका वस्त्र भी किसी दूसरे गुंडे को छूता है, तो भी इताब लागू हो जाता है; छुए गए गुंडे पर भी इताब लागू होगा।
उत्तर भारतीय गुंडे इसे इटक कहते हैं, इटैब नहीं।
लोगों का दावा है कि ठगों का यह समुदाय, जिसके हिंद और दक्कन के विभिन्न हिस्सों में अलग-अलग नाम थे, आम दिनों में सरल, सभ्य, मृदुभाषी, दयालु और दानशील धर्मनिष्ठ लोग थे। यह भी कहा जाता है कि स्लीमैन साहब ने केवल ऊपरी तौर पर ही इस गिरोह को साफ किया था। ठगों के समूह और परिवार आज भी बड़ी संख्या में गुप्त रूप से मौजूद हैं और अपने असली मकसद को पूरा कर रहे हैं।
यह भी कहा जाता है कि दक्कन की भूमि में गुंडे बहुत सक्रिय हैं। इसका कारण यह है कि औरंगाबाद से दौलताबाद तक का इलाका प्राचीन काल से ही उनका पसंदीदा अड्डा रहा है। एक गुंडे ने स्लीमन साहब से यह भी कहा कि शायद दूसरों ने देखा हो या न देखा हो, लेकिन औरंगाबाद के पास एलोरा की गुफाओं में मिली विभिन्न छोटी-छोटी मूर्तियां गुंडागर्दी की पूरी प्रक्रिया का विस्तृत वर्णन करती हैं, जिसमें दो गुंडे अपने शिकार को उसके हाथ-पैर बांधकर काबू में करते हैं, रुमाल से गला घोंटते हैं, कुल्हाड़ी से मारते हैं और फिर उसे दफना देते हैं।

यहां तक कि एक परंपरा यह भी है कि दुष्ट गुंडे अभी भी लंदन और अमेरिका में पाए जाते हैं और वहां वे एक दूसरे से संवाद करने के लिए अपनी विशेष गुप्त भाषा रामासी (अंग्रेजों में इसे रामासी लिखा जाता है) का उपयोग करते हैं।
एक अन्य, और आम तौर पर मौखिक वृत्तांत यह है कि स्लीमन साहब ने ठगों के खतरे को बढ़ा-चढ़ाकर बताया था - उनकी संख्या और उनके क्रूर अत्याचारों दोनों को। दरअसल, ठगी उतनी आम नहीं थी जितना माना जाता था। वास्तव में, कुछ दुर्भाग्यशाली पापी, चोर और ठग ही थे जो आदतन अपने शिकार का गला घोंट देते थे। वे विभिन्न आपराधिक गिरोहों के सदस्य थे, जिन्हें

कुछ क्षेत्रों में 'ठग' कहा जाता था। यह जॉन कंपनी बहादुर की कंपनी राज के आशीर्वाद और देश में लाई गई शांति का प्रचार करने की एक और चाल थी। शांति स्थापित करने के बहाने, हजारों लोगों को 'ठग' के नाम पर गिरफ्तार किया गया। सैकड़ों को फांसी दी गई; सैकड़ों को देश निकाला दिया गया। कुछ ने राजा के लिए गवाही दी; अनगिनत को शाहजहाँपुर, इंदौर, सागर, जबलपुर और लखनऊ की जेलों में सड़ने के लिए कैद कर दिया गया।

स्लीमन साहब के अभियान शुरू होने से पहले, कानून के अनुसार किसी आरोपी को मौत की सजा तभी दी जा सकती थी जब शहर का काज़ी इस सजा के समर्थन में फतवा जारी करता। ठगों को फांसी देने में आसानी के लिए, जॉन कंपनी ने एक कानून पारित किया जिसके तहत मौत की सजा के लिए काज़ी की स्वीकृति की आवश्यकता समाप्त कर दी गई: किसी अंग्रेजी अदालत द्वारा दी गई मौत की सजा ही काफी थी। ठग विरोधी अभियान, उसका प्रचार-प्रसार, गिरफ्तारियों, आरोपों, मुकदमों, सजाओं और फांसी की तांतारी मुख्य रूप से जॉन कंपनी की प्रतिष्ठा बढ़ाने के लिए थी।

अल्लाह ही सबसे बेहतर जानता है।

विशेषज्ञ खोजकर्ताओं ने आगा तुराब अली के दल के पदचिह्नों का पता लगाया; शोकयात्रा का काफिला अंततः रामपुर पहुंचा।
हत्याओं के सातवें दिन, आगा मिर्ज़ा तुराब अली का नदी-मार्गी दल फतेहगढ़ में उतरा और तुरंत अपने अंतिम गंतव्य के लिए रवाना हो गया। फतेहगढ़ और रास्ते में अन्य जगहों पर पूछताछ करने पर भी उन्हें ज़मीनी यात्रियों के बारे में कोई जानकारी नहीं मिली। उन्होंने अनुमान लगाया कि आगा साहब, उनके घोड़े और उनके बाकी साथी अब तक रामपुर पहुँच चुके होंगे।
क़ैमगंज में उन्हें एक परेशान करने वाली अफवाह सुनने को मिली कि रामपुर के एक रईस के नौकर को उसके मालिक का घोड़ा या कोई और जानवर बिना सवार और बिना लगाम के भटकता हुआ मिला। कहा जाता है कि वह उस भागे हुए जानवर को पकड़ने में भी कामयाब हो गया था। अब नदी के यात्री असमंजस और चिंतित हो गए। बेचैनी से भरे, खतरे के प्रति उनकी अंतरात्मा पूरी तरह जागृत हो गई, और उन्होंने मामले की जांच करने का फैसला किया। पहले उन्होंने उस लापता नौकर का पता लगाने की कोशिश की, और फिर इलाके से परिचित कुछ कुशल खोजकर्ताओं को काम पर रखा। ये लोग ज्यादातर काठियावाड़ के थे और मूल रूप से अबीसीनियाई थे; उनके पूर्वज कई सदियों पहले वहां सैनिक, अंगरक्षक और खोजकर्ता के रूप में काम करने के लिए बस गए थे। अबीसीनियाई होने के कारण, उन्हें सिदी कहा जाता था; यह शब्द अरबी शब्द 'सय्यिदी' ('मेरे मालिक') का बिगड़ा हुआ रूप था और वे अक्सर दूसरों को संबोधित करने के लिए भी इसका इस्तेमाल करते थे।
अपने पेशे के कारण, खोजी होने की वजह से उन्हें ‘खोजिया’ के नाम से जाना जाता था। गुजरात के सुल्तानों और मुगल गवर्नरों के दरबार में और उनके अधीन लंबे समय तक सेवा करने से उनकी स्वाभाविक खोज क्षमताएं निखर गई थीं, जिन्हें उन्होंने एक कला के रूप में निपुण बना लिया था। वे पैरों के निशान पहचान सकते थे, चाहे वे कितने भी धुंधले या घिसे हुए क्यों न हों; वे जंगल या मैदानों में सबसे सतर्क जानवरों या मनुष्यों द्वारा छोड़े गए सूक्ष्म संकेतों को भी देख सकते थे; उनकी सूंघने की शक्ति बहुत तीव्र थी। इन सब के अलावा, उनकी स्वाभाविक रूप से तेज इंद्रियों और सहज ज्ञान ने उन्हें खोई हुई संपत्ति, भगोड़े अपराधियों, भागे हुए राजनीतिक कैदियों की खोज करने और अपहृत महिलाओं और बच्चों को छुड़ाने में अनुकरणीय बना दिया था। सदियों से, उनकी प्रतिष्ठा और कार्यक्षेत्र उत्तर और पूर्व में दूर-दूर तक फैल गया, यहां तक कि रोहिलखंड और अवध तक भी, जहां उन्हें शहीद कहा जाता था।
वे भारत में स्वाहिली भाषा बोलते हुए आए थे, जो उनकी मातृभाषा थी। वे घर पर स्वाहिली ही बोलते थे, लेकिन दूसरों के साथ वे गुजरी और गुजराती का मिलाजुला रूप बोलते थे, गुजरी गुजरात में बोली जाने वाली प्रारंभिक हिंदी का नाम था। उनमें से कुछ लोग भारतीय तट पर आने पर मुस्लिम थे। धीरे-धीरे, वे सभी इस्लाम में परिवर्तित हो गए। उनके मुस्लिम धार्मिक नेताओं ने धार्मिक गीतों और समारोहों के लिए अपनी एक शैली विकसित की। इस शैली को ज़िक्र (स्मरण) कहा जाता था और इसकी भाषा स्वाहिली, गुजराती और हिंदी का मिश्रण थी। ये ज़िक्र गीत आज भी गुजरात के सिदी समुदाय में प्रचलित हैं; इन्हें अक्सर नृत्य के साथ गाया जाता है,

लेकिन यह नृत्य गुजराती नृत्य से बिल्कुल अलग होता है। यहाँ एक संक्षिप्त ज़िक्र दिया गया है: अमर को नश्वर संसार में कौन लाया? नश्वर संसार में अमर को किसने देखा? नश्वर संसार में अल्लाह का नाम अमर है, पैगंबर अमर नाम लेकर आए।

जिस समय की हम बात कर रहे हैं, उस समय सिदियों की संख्या घट रही थी, लेकिन महत्वपूर्ण शहरों में उनमें से कुछ हमेशा मिल जाते थे। फतेहगढ़ में, भले ही क़ैमगंज में न मिलें, लेकिन वहाँ निश्चित रूप से कुछ सिदी मिल जाते थे। इसलिए शाह नूर खान ने एक आदमी को क़ैमगंज और दूसरे को फर्रुखाबाद भेजा ताकि वे एक सिदी को ढूंढकर काम पर रख सकें। दोनों जगहों पर उन्हें सफलता मिली और जल्द ही उन्हें दो अनुभवी सिदी, सिदी इकराम और सिदी मुनीम, की सेवाएं मिल गईं। उन्होंने तुरंत जांच शुरू कर दी; उनका पहला काम रामपुर के उस कथित रईस और उसके भागे हुए घोड़े के बारे में सही जानकारी जुटाना और नौकर का पता लगाना था, यदि वह मौजूद था; उनका अगला लक्ष्य आगा मिर्ज़ा तुराब अली और उनके साथियों के बारे में पुष्ट और विश्वसनीय जानकारी प्राप्त करना और उनके वर्तमान स्थान का पता लगाना था। उस समय, किसी को भी उनकी मृत्यु का संदेह नहीं था, और न ही कोई उस संभावना पर विचार करने को तैयार था।

सिदी इकराम तुरंत फतेहगढ़ के लिए रवाना हो गए। कुछ दिनों की छानबीन के बाद सिदी मुनीम को पता चला कि रामपुर के उस अज्ञात रईस का भगोड़ा नौकर क़ैमगंज या उसके आस-पास ही कहीं छिपा हुआ है। आखिरकार उन्होंने उसे एक नर्तकी के यहाँ पकड़ लिया, जहाँ वह किसी भागे हुए कैदी की तरह छिपा हुआ था। उसने अपना नाम मुनीर खान बताया और यह भी स्वीकार किया कि उसके पास उसके मालिक का घोड़ा है, जिसे उसने संयोगवश एक खुले मैदान में चरते हुए पाया था। चूंकि उसका मालिक उससे नाराज़ था और घर लौटते समय उसे नौकरी से निकाल दिया था, इसलिए वह शर्मिंदा और अपमानित महसूस कर रहा था और घर लौटने की बात सोचकर घबरा रहा था, खासकर तब जब उसने अपने मालिक के घोड़े को भटकते हुए पाया। उसे शक था कि उसके मालिक का अंत दुखद हुआ होगा।

'और अब... अब तो मेरे लिए और भी बड़ा अपमान और खतरा मंडरा रहा है,' बोलते-बोलते उनकी आवाज़ लगभग रो पड़ी। 'रामपुर लौटकर बुरी खबर सुनाने की हिम्मत कैसे हुई? मेरे पास यहाँ छिपने के अलावा कोई चारा नहीं था, मैं अपने गुरु की किसी अच्छी खबर का इंतज़ार कर रहा था जिससे मुझे लौटने की हिम्मत मिल सके। अगर ऐसा जल्द नहीं हुआ, तो मैं या तो आत्महत्या कर लूँगा, या पहाड़ों में जाकर एक गुमनाम साधु की तरह जीवन व्यतीत करूँगा।'

सिदी ने नरमी और तर्कपूर्ण स्वर में बात की। उन्होंने कहा, "सबसे पहले, अपने गुरु का पता लगाओ। आत्महत्या करना या संन्यासी बनकर जीवन व्यतीत करना, ये सब बाद की बातें हैं। तुम्हें मेरे साथ चलना चाहिए। अभी तुम्हारे गुरु के बारे में तुमसे ज़्यादा जानकारी किसी के पास नहीं है। तुम्हारे पुराने साथी दारोगा हिमायत द्वारा संचालित सराय में ठहरे हुए हैं।"

'नहीं! नहीं! मैं सिर्फ आपके कहने पर आपके साथ नहीं चलूंगा,' मुनीर खान ने हताशा से कहा। 'मैं आपको नहीं जानता। अगर आप वाकई उन लोगों में से हैं जो हाल ही में नाव से इलाहाबाद से आए हैं, तो मुझे कोई संकेत दीजिए।'

सिदी मुनीम ने अपनी पगड़ी खोली और उसकी तहों से एक पीला कागज निकाला, जो अंग्रेजों द्वारा बंगला में स्थित उनके कारखानों में बनाए गए कागज जैसा था। कागज पर शाह नूर खान द्वारा हिंदी में एक संदेश लिखा था, जिसके नीचे उनकी मुहर भी थी, जिसका अर्थ था कि इसे धारण करने वाला व्यक्ति 'हमारे संस्थान का सदस्य' है, जिसे रामपुर के नवाब साहब की ओर से कोई कर्तव्य निभाने के लिए नियुक्त किया गया है, ईश्वर उनकी आत्मा को शांति प्रदान करें। बेहद अनिच्छा और दुःख से व्याकुल हृदय से, कमजोर आत्मा के साथ, लेकिन सफलता और पुनर्वास की एक धुंधली सी आशा लिए, मुनीर खान उस विचित्र दिखने वाले अजनबी के साथ चल पड़ा। शाह नूर खान के सामने आते ही वह बेहोश हो गया। उसे और उसके साथियों को लगा कि वह नाटक कर रहा है, लेकिन जब मुनीर खान पर खूब पानी छिड़कने और वहाँ मौजूद एक-दो लोगों द्वारा उसे जोर से चुटकी काटने के बाद भी होश नहीं आया, तो उन्हें मानना पड़ा कि यह नाटक नहीं था। उन्होंने एक वैद्य और एक तांत्रिक को बुलाया ताकि वे आगे की कार्रवाई के बारे में सलाह ले सकें। दोनों का मानना था कि यह कोई अलौकिक या रोग संबंधी समस्या नहीं थी; बस रोगी के हृदय पर अत्यधिक दबाव था।

उपचार करने और तांत्रिक द्वारा प्रार्थना करने के बाद मुनीर खान को होश आया, लेकिन वह बेहद कमजोर और पीला पड़ गया था। उसकी आँखें आँसुओं से भरी थीं और गाल पिचके हुए थे, मानो उसके सारे दाँत गिर गए हों। शाह नूर खान ने मुनीर खान से नरमी से बात करना और उसके साथ नरमी से पेश आना उचित समझा; उस समय डांट-फटकार या दंड देना उल्टा पड़ सकता था। काफी देर तक शांत, सहज और तनावमुक्त पूछताछ के बाद, शाह नूर खान मुनीर खान से पूरी कहानी निकलवाने में सफल रहे। मुनीर खान की मानसिक स्थिति का सबसे महत्वपूर्ण पहलू यह भय था कि यद्यपि आगा साहब ने उन्हें और उनके कथित चचेरे भाई को बुरी तरह से फटकारा था, फिर भी गुंडों द्वारा आगा साहब और उनके काफिले पर एक और हमले की पूरी संभावना थी; यह सोचकर कि यात्रा के ऐसे कठिन समय में वह आगा साहब की सहायता और रक्षा के लिए मौजूद नहीं होंगे, उनका दिल असहनीय रूप से भर गया था।

हालांकि अब उनके लिए आगा मिर्ज़ा तुराब अली के समक्ष पेश होना नामुमकिन था—जो कि उनके अपने विवेक के अनुसार पूरी तरह न्यायसंगत था—उन्होंने उनके पीछे-पीछे चलना ही बेहतर समझा, मजबूरी में पैदल ही, लेकिन इस बात का ध्यान रखते हुए कि वे ज़्यादा पीछे न रह जाएं और आगा साहब के दल के लिए किसी काम के न रह जाएं। इसलिए वे यथासंभव तेज़ी से चलने लगे, उनका दिल भारी था और उनके पैर आगा साहब से आगे निकलने को तैयार नहीं थे। उन्हें नहीं पता था कि वे आगा साहब के दल से कितनी दूर हैं, लेकिन जैसे ही वे क़ैमगंज के बाहरी इलाके में पहुँचे, उनके दिल में अत्यधिक बेचैनी और भय का भाव जागा। वे जानते थे कि वे उनसे ज़्यादा पीछे नहीं थे, लेकिन हाल ही में वहाँ से घुड़सवारों या यात्रियों के किसी बड़े दल के गुज़रने का कोई संकेत नहीं था। वास्तव में, उन्हें कुछ लोगों के होने का प्रबल आभास हुआ, वे यह नहीं कह सकते थे कि कितने लोग थे, जो उनसे कुछ ही गज पीछे चल रहे थे। उन्होंने दृढ़ निश्चय के साथ अपने दाँत भींचे और पीछे मुड़कर देखा: वहाँ कुछ भी नहीं था। फिर भी, वे लगभग दौड़ते हुए क़ैमगंज पहुँचे। जब उन्होंने दौड़ना शुरू किया तब सूरज डूबने ही वाला था।

वह बिना किसी घटना के क़ैमगंज पहुँच गया। सूरज डूब चुका था और छोटी सी मुख्य सड़क बंद होने ही वाली थी। उसने ठहरने के लिए किसी उपयुक्त सराय की तलाश नहीं की; इसके बजाय, उसने व्यापारियों, दुकानदारों और अस्तबल मालिकों से पूछना शुरू किया कि क्या उन्होंने आगा साहब या उनके दल के बारे में कुछ सुना है। उसे कोई जानकारी नहीं मिली; उसका दिल खून से लाल हो गया, और आगे खोज जारी रखने का उसका संकल्प कमजोर पड़ गया; उसने उस नदी-मार्गी दल के बारे में पूछा जो लगभग उसी समय फतेहगढ़ में उतरने वाला था। उनके बारे में भी कोई जानकारी नहीं थी।

शाह नूर खान के दल का फतेहगढ़ तक न पहुंच पाना तत्काल चिंता का विषय नहीं था। लेकिन आगा साहब और उनके आदमियों का न आना एक अलग ही बात थी। मुनीर खान यह भी समझते थे कि यात्रियों के एक समूह के बारे में पूछताछ करने वाला कोई अजनबी संदिग्ध लग सकता है और स्थानीय सराय मालिकों और व्यापारियों की शत्रुता को आमंत्रित कर सकता है। और रात का समय उनके लिए वापस लौटने का नहीं था। उन्होंने सड़क किनारे एक छोटी सी सराय में रात बिताई और सुबह बहुत जल्दी उठकर वापस उसी रास्ते पर चलने के लिए निकल पड़े। वे बिल्हौर तक वापस गए, लेकिन उन्हें कोई सफलता नहीं मिली। यहाँ भी वे केवल एक रात रुके और फिर क़ैमगंज की लंबी यात्रा पर निकल पड़े ताकि और पूछताछ कर सकें और शाह नूर खान के आने का इंतजार कर सकें।

क़ैमगंज से कुछ ही मील दूर जाकर उसे फिर वही भय और बेचैनी महसूस हुई जो दो रात पहले हुई थी। उसने सोचा कि उसे रुककर अपनी बेचैनी और भय के स्रोत का पता लगाना चाहिए। पर उसका साहस जवाब दे गया। कुछ मिनटों तक सरसरी नज़र डालने के बाद, उसने खुद को मजबूर करके क़ैमगंज की ओर वापस कदम बढ़ाए।

वह लगभग एक मील ही चला था कि उसे अपने बाईं ओर दूर मैदान में कुछ परछाइयाँ लहराती और हिलती हुई दिखाई दीं। उसका दिल बैठ गया: ज़रूर वे बदमाश होंगे, या शायद भूत-प्रेत या कोई और बुरी आत्माएँ। वह पागलों की तरह दौड़ना चाहता था... कहीं भी, किसी भी दिशा में, बस उस तरफ नहीं जहाँ वे परछाइयाँ थीं। लेकिन उसके पैर हिलने से इनकार कर रहे थे, पीछे की ओर भी नहीं।

वह सड़क पर बैठ गया, बुरी शक्तियों से लड़ने या उन्हें दूर भगाने के लिए जो भी प्रार्थनाएँ उसे याद थीं, उन्हें पढ़ा और महान मुस्लिम ईरानी-इराकी सूफी संत अब्दुल कादिर जिलानी (1078-1166) से प्रार्थना की, जिनके बारे में माना जाता है कि वे पुकारने पर विश्वासियों की सहायता के लिए आते हैं। शायद प्रार्थना ने अपना असर दिखाया, क्योंकि अंततः वह इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि इस्लाम में कोई भूत या बुरी आत्माएँ, चाहे पुरुष हों या स्त्री, नहीं होतीं। वे जिन्न हो सकते हैं... वे चोर नहीं हो सकते, क्योंकि ज़मीन समतल नहीं थी, वह चट्टानों और कंकड़ों से भरी थी और उसमें उथले या गहरे गड्ढे और दरारें थीं।

उन्होंने फिर से कुरान की आयत 'कुरान' पढ़ी, जिसमें अल्लाह की प्रशंसा की गई है, जो हर चीज़ को घेरे हुए है, और फिर से बगदाद के शेख से प्रार्थना की कि वे उन्हें दृढ़ रहने की शक्ति दें। अब उन्होंने देखा कि परछाइयाँ हिल रही थीं, सड़क किनारे जहाँ वे खड़े थे, वहाँ से उनके करीब आ

रही थीं...

हे भगवान! हे ईश्वर! उसने उन्हें जानवर के रूप में पहचान लिया, और वो भी उसके मालिक के काफिले के जानवर! दो घोड़े और एक टट्टू थे, जिनकी गर्दन और शरीर पर गहरे खरोंच के निशान थे, मानो वे घनी कंटीली झाड़ियों से लड़ रहे हों... या शायद उन पर किसी जंगली मांसाहारी जानवर ने हमला किया हो? मुनीर खान के रोंगटे खड़े हो गए। शायद जंगली जानवर यहीं कहीं घात लगाकर बैठे हों? लेकिन इस इलाके में बाघ तो नहीं होते, और चीते के पंजे नहीं होते। उसे एहसास हुआ कि यह पैंथर हो सकता है। पैंथर, सबसे क्रूर, चालाक और धैर्यवान जानवर: यह पूरी रात पेड़ के नीचे बिना हिले-डुले पड़ा रह सकता है, पेड़ पर बैठे बेचारे बंदर के थककर गिरने का इंतज़ार करता रहता है।

खैर, अभी काफी उजाला था। जानवर भी कुछ दूरी पर थे। मैं यहीं चुपचाप इंतज़ार करता हूँ। अगर वे मेरे आस-पास आ जाएँ, तो मैं उन्हें पकड़ने की कोशिश कर सकता हूँ, या शायद उन्हें आवाज़ दे सकता हूँ; हो सकता है वे मेरी आवाज़ पहचान लें। लेकिन अगर मिर्ज़ा साहब के दल पर जंगली जानवरों ने हमला किया होता, तो वे पूरे दल पर हावी नहीं हो सकते थे। आखिर कितने तेंदुए होते? शायद उन पर ढोल ने हमला किया हो, जो भारत का खूंखार जंगली कुत्ता है? वे झुंड में शिकार करते हैं। लेकिन मिर्ज़ा साहब के आदमियों के पास बंदूकें थीं: दो बैरल वाली बंदूकें, और दो भाले चलाने वाले भी। अगर जंगली जानवरों का हमला होता, तो ज़मीन में कुछ हलचल, कुछ खून, शायद कुछ जानवरों के शव ज़रूर होते। नहीं। ये ज़रूर उन कमीनों, उन बदमाशों ने किया होगा।

जानवर अब काफी करीब आ गए थे, और मुनीर खान ने उनमें से एक को आगा तुराब अली के निजी घोड़े के रूप में पहचान लिया। दूसरा घोड़ा और एक टट्टू सोनपुर से खरीदे गए थे; टट्टू कुछ साल का था, लेकिन चंचल और काबू में न आने वाला था। मुनीर खान सावधानी से आगे बढ़े और उन्हें अपनी बाहों में लेने की कोशिश की। लेकिन नया टट्टू झिझक कर भाग गया; बूढ़ा घोड़ा भी उससे भी तेज़ भागा। देखते ही देखते, दोनों घोड़े मुनीर खान से कुछ सौ गज दूर सरपट दौड़ पड़े। मिर्ज़ा साहब के घोड़े ने मुनीर खान को पहचान लिया; वह बिना झिझके उनके पास आया और स्नेह से उन्हें सहलाने लगा। मुनीर खान ने उसके सिर पर हाथ फेरा, प्यार भरी आवाज़ें निकालीं और उससे ऐसे बात की जैसे वह कोई इंसान हो; उन्होंने अपने थैले से गुड़ का एक टुकड़ा निकाला और घोड़े को चखने के लिए दिया। मुनीर खान को घोड़े की हालत देखकर साफ पता चल गया कि वह कम से कम दो दिन से भटक रहा था। उसने सोचा, अल्लाह ही सच्चाई जानता है, अगर यह बदमाशों का काम नहीं है, तो यह किसी दुष्ट जिन्न की शरारत जरूर होगी। मुनीर खान घोड़े को क़ैमगंज तक पैदल ले गया। उसे तुरंत यह डर सता रहा था कि अगर, न करे, मिर्ज़ा साहब का दल गुंडों का शिकार हो गया, तो मिर्ज़ा साहब के घोड़े पर उसका कब्ज़ा, उसकी बर्खास्तगी और उसके बच निकलने की स्थिति, उसके खिलाफ़ बहुत मज़बूत सबूत साबित हो सकती थी। इसलिए, सबसे पहले उसे घोड़े को किसी भरोसेमंद व्यक्ति के पास रखना था जहाँ उसकी देखभाल हो सके, और अपने लिए कोई सुरक्षित ठिकाना ढूँढ़ना था। कुछ खोजबीन के बाद, उसे एक साधारण सा अस्तबल का मालिक मिला, जिसे पैसों की बहुत ज़रूरत थी। मुनीर

खान ने उसे बताया कि घोड़ा अपने मालिक से डरकर भाग गया था, शायद साँप से डरकर।

“मैंने बड़ी मेहनत से खोजबीन करने के बाद घोड़ा ढूंढ लिया है, लेकिन मेरे मालिक शिकार पर गए हैं। वे कुछ दिनों में लौट आएंगे। कृपया उनके लौटने तक जानवर की देखभाल करना। आपको उचित इनाम मिलेगा।” उन्होंने कहा और चले गए, लेकिन जाने से पहले उन्होंने घोड़े के खान-पान और देखभाल के लिए निर्देश और पैसे दिए।

अपने लिए, मुनीर खान ने एक नाचने वाली लड़की के अड्डे में छिपने की आदर्श जगह ढूंढ ली, जिसे वह पहले से जानता था। उस जगह पर किसी को भी उससे बाहर जाने या अन्य आगंतुकों के साथ घुलने-मिलने की उम्मीद नहीं थी।

शाह नूर खान ने दो अनुभवी सिदियों की उपस्थिति में यह पूरी कहानी विस्तार से सुनी, जिसमें उन्होंने बीच-बीच में अपने प्रश्न भी पूछे। उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि मुनीर खान सच कह रहा था; यह तथ्य कि उसने स्वेच्छा से और अपनी मर्जी से घोड़ा पेश किया था, उसके पक्ष में काम आया। 'अगर साहब की हत्या बदमाशों ने की है, और अगर उन्हें उसी इलाके में दफनाया गया है जहां घोड़ा मिला था, तो मैं आपको यकीन दिलाता हूं, महोदय, कि हम उनकी कब्र दो, या ज्यादा से ज्यादा तीन दिनों में ढूंढ लेंगे,' सिदी मुनीम और सिदी इकराम ने पूरे विश्वास के साथ घोषणा की। शाह नूर खान ने कहा, 'लेकिन यह ख्याति प्राप्त है कि वे अपने शिकार को इतनी शातिर चालाकी से दफनाते हैं कि वे कब्र का या उस जगह का कोई निशान नहीं छोड़ते जहां उन्होंने अपना अपराध किया था।'

‘जी, यह बिल्कुल सही है। लेकिन हम भी अपने काम में काफी कुशल हैं। आप खुद देख लेंगे।’ उचित पारिश्रमिक तय किया गया; आधा अग्रिम भुगतान कर दिया गया, और शाह नूर खान के साथ सिदी तुरंत काम पर लग गए। सिदी पैदल ही चल रहे थे, उन्हें न तो किसी सवारी या रथ की आवश्यकता थी और न ही वे इसकी परवाह करते थे। शाह नूर खान को उनकी धीमी गति के साथ चलने में कोई कठिनाई नहीं हुई। उन्हें आश्चर्य हुआ—वास्तव में, वे दंग रह गए—यह देखकर कि सड़कें, मैदान, पेड़, झाड़ियाँ, अधखाए फली या बीज, यहाँ तक कि जानवरों और पक्षियों की बीट भी, जिन पर कोई यात्री ध्यान नहीं देता था, सिदियों के लिए बच्चों की प्राथमिक पुस्तक के समान थीं, जहाँ हर पृष्ठ पर एक बड़ा सा 'A', फिर 'B', और इसी तरह आगे लिखा होता था। वे प्रत्येक रेखा, प्रत्येक वृत्त और प्रत्येक कोण की सूक्ष्म से सूक्ष्म खुरदरापन और किनारों को अविश्वसनीय सहजता से पढ़ सकते थे। वे पिछले कुछ दिनों की घटनाओं को ऐसे सुना रहे थे मानो वे किसी अच्छी तरह से अभ्यास की गई कहानी का हिस्सा हों।

क़ैमगंज से बिल्हौर तक की उनकी पहली यात्रा अपेक्षाकृत तेज़ गति से पूरी हुई। फिर भी, जहाँ भी उन्हें लगा कि किसी स्थान की और जाँच की आवश्यकता है, वहाँ उन्होंने एक मज़बूत खंभे से लाल कपड़ा बाँधकर निशान लगा दिया। वापसी की यात्रा में, वे ऐसे प्रत्येक चिह्नित स्थान पर काफ़ी देर तक रुके और पैरों के निशान, घसीटने के निशान, गाड़ी के पहियों के निशान या पक्षियों की बीट की जाँच की, जो शाह नूर खान को या तो दिखाई नहीं दे रहे थे या उनके लिए महत्वहीन थे। इस प्रकार वे दो ऐसे स्थानों का पता लगाने में सफल रहे जहाँ मिर्ज़ा तुराब अली

और उनका काफिला थोड़े समय के लिए रुके थे।
'लेकिन आप ऐसा कैसे कह सकते हैं?' शाह नूर खान ने अपनी झुंझलाहट को काबू में रखने की कोशिश करते हुए कहा, लेकिन अपने गहरे संदेह को छिपाने में वह सफल नहीं हो सके।
'मियां जी, हम इस बात की कसम नहीं खा सकते, जाहिर है,' सिदी मुनीम ने शांत भाव से उत्तर दिया। 'लेकिन हमारा दर्शन कहता है कि कुछ समय पहले मनुष्यों और जानवरों का एक दल यहाँ रुका था: उसमें आठ पुरुष, चार टट्टू और चार घोड़े थे।'
'अरे, अब तो आप मनुष्य और पशु तथा घोड़े और टट्टू में अंतर कैसे कर सकते हैं?'
हर चीज़ की अपनी गंध और अपना आभा मंडल होता है। हर चीज़ का चलने, बैठने या कुछ करने का अपना तरीका होता है। देखो, यहाँ टट्टू के खुरों के निशान हैं, काफी हद तक मिट गए हैं, लेकिन फिर भी दिखाई दे रहे हैं। टट्टू यहाँ थोड़ी देर के लिए खड़े थे। यहाँ कोई अतिरिक्त पदचिह्न या खुर का निशान नहीं है। यह हमारा सौभाग्य है कि धरती नरम है और निशानों को आसानी से स्वीकार कर लेती है।
शाह नूर खान ने गौर से देखा। सचमुच कुछ निशान थे, काफी घिसे हुए, लेकिन थे ज़रूर। या फिर ये उनका वहम था? वो इस बात से इनकार नहीं कर सकते थे कि देखने लायक कुछ तो था। अब उनके दिल में एक छोटी सी उम्मीद जगी। शायद ये दोनों किसी तरह मेरे मालिक का पता लगा लें। लेकिन कहाँ तक? उन्होंने डूबते दिल से सोचा: अजनबियों का कब्रिस्तान?
क़ैमगंज लगभग छह मील दूर था जब वे अपने आखिरी खंभे तक पहुँचे, या यूँ कहें कि कई खंभों तक, क्योंकि वहाँ काफी सारे खंभे थे, जो अपेक्षाकृत छोटे से क्षेत्र में बिखरे हुए थे। यहाँ, सिदियों ने ज़मीन के एक बड़े टुकड़े पर एक वर्ग बनाया। फिर उन्होंने उस वर्ग को कई बराबर वर्गों में बाँट दिया। अब, एक सिदी एक तरफ और दूसरा दूसरी तरफ, वे पेट के बल लेट गए और अत्यंत सावधानी से प्रत्येक उप-वर्ग का निरीक्षण, गंध और अवलोकन करने लगे। जैसे शिकारी कुत्ते ज़मीन के नीचे शिकार की गंध सूंघने की कोशिश कर रहे हों, वैसे ही वे पेट के बल लेटे हुए, बड़ी धीमी गति से आगे बढ़ रहे थे। वे कभी-कभी एक छोटी, नुकीली छड़ी से ज़मीन को खरोंचते थे, लेकिन ज़्यादातर समय वे अपनी आँखों और नाक का इस्तेमाल करते थे, उनके शरीर एकाग्रता से तने और काँप रहे थे, उनकी भौंहें कसकर सिकुड़ी हुई थीं। कभी-कभी वे मिनटों तक स्थिर रहते थे, मानो उस निर्जीव, उदासीन धरती के नीचे छिपी किसी भी चीज़ की आत्मा को आत्मसात करने की कोशिश कर रहे हों।
लगभग ढाई घंटे या उससे कुछ अधिक समय बीतने के बाद, वे एक-दूसरे के सामने कुछ ही फीट की दूरी पर रुक गए और जोर से चिल्लाए: 'मिल गए! खान साहब, खुदाई यहीं से शुरू कीजिए!' शाह नूर खान और उनके साथियों ने अपने भाले और तलवारों से खुदाई शुरू कर दी। आधे घंटे से भी कम समय में गड्ढा-कब्र दिखाई देने लगी। एक या एक से अधिक शव भी दिखाई देने लगे। 'या अल्लाह!' वे चीखे, उनकी उल्टी की आवाज़ गूंज रही थी। वे अंधे लोगों की तरह पीछे हट गए और जल्द ही उनकी उल्टी एक धारा में बदल गई, जिससे उनके ऊपरी वस्त्र भीग गए। सिदी अपने भयानक काम में लगे रहे और जल्द ही उन्होंने आठ शवों को खोज निकाला, सभी लगभग नग्न थे, बाहरी वस्त्रों से रहित। बेचारे आगा मिर्ज़ा तुराब अली आठवें स्थान पर थे। शवों की

अकड़न बहुत पहले ही समाप्त हो चुकी थी; शरीर अब ढीले पड़ गए थे, लेकिन जगह की कमी और मृत्यु से पहले और बाद में हुई ऐंठन के कारण शवों पर गहरे घाव थे। कुछ के जबड़े टेढ़े-मेढ़े और विकृत हो गए थे, अकड़न के बाद अपनी मूल शिथिलता को पुनः प्राप्त नहीं कर पाए थे। कुछ की पीठ धनुषाकार और टेढ़ी हो गई थी; कुछ अन्य लोगों के हाथ-पैर मुड़े हुए थे। लगभग सभी की काली जीभें बाहर लटकी हुई थीं, जो उस देवी की भयावह याद दिला रही थीं जिसके नाम पर उन्हें मृत्युदंड दिया गया था। कुछ की नाक से खून बह रहा था, कुछ के कानों से, लेकिन दफन गड्ढा इतना गहरा था कि खून की दुर्गंध बाहर न फैल सके। लगभग सभी ने किसी न किसी समय अपने मूत्राशय और गुदाद्वार पर नियंत्रण खो दिया था।

शरीर के मल-मूत्र के साथ मिला हुआ कुछ खून सड़ने लगा था। इसके अलावा, शवों के तुरंत सड़ने का कोई खतरा नहीं था। फिर भी, कई गज के दायरे में मल-मूत्र, गैसों और खून की दुर्गंध असहनीय थी। चिंता और दुःख से लगभग पागल हो चुके शाह नूर खान ने उस भयानक कब्र को, जिसमें शव समाए हुए थे, बंद करने और उसे मजबूत तिरपाल या मोटे कपड़े से ढकने का फैसला किया। लेकिन सिदियों ने कुछ कहे बिना ही नहीं, बल्कि शवों को उचित स्थान पर ले जाने और दफनाने के बारे में उचित आदेश की उम्मीद भरी निगाहों से उनकी ओर देखते हुए ऐसा करने से मना कर दिया। उन्होंने दोनों में से बड़े सिदी मुनीम से सलाह मांगी।

क्या हमें उचित कब्रें खोदकर इन बेचारे शहीदों को यहीं दफना देना चाहिए?

मुनीम ने असहमति जताते हुए सिर हिलाया। “सिदी जमादार जी, शव अभी तक सड़े नहीं हैं। लेकिन अब हवा के संपर्क में आने से वे तेजी से खराब होने लगेंगे। उन्हें यहाँ दफनाना आपके लिए बहुत परेशानी का सबब बनेगा: पानी के कई बड़े प्याले, कफ़न के कई थान, एक से अधिक कब्र खोदने वाले, और एक ऐसा व्यक्ति जो मृतकों के लिए प्रार्थना पढ़ सके और उसका नेतृत्व कर सके। इतनी सारी व्यवस्था करने में घंटों लग जाएंगे। शव निश्चित रूप से सड़ जाएंगे।”

तो मुझे क्या करना चाहिए? क्या मुझे इन्हें अच्छे से लपेटकर वैसे ही रामपुर ले जाना चाहिए?

नहीं, नहीं, मेरा मतलब बिल्कुल भी यह नहीं है। अगर आप इन्हें रामपुर ले जाने की कोशिश करेंगे, तो वहाँ आपको साबुत शरीर नहीं, बल्कि सड़े-गले टुकड़े मिलेंगे। आपको अभी किसी को क़ैमगंज भेजना चाहिए। कई सारे बिना इस्तेमाल किए हुए लंबे कपड़े के थान और कम से कम पाँच पालकी तुरंत यहाँ मंगवाएँ। साथ ही, किसी को अलग से क़ैमगंज जाकर एक उचित कब्रिस्तान ढूँढ़ना चाहिए, कब्रें खुदवानी चाहिए और शवों को ठीक से धोना चाहिए। जब तक कब्रें लगभग तैयार हो जाएँ, तब तक आपका आदमी नमाज़ के लिए एक मौलवी को ढूँढ़ ले। यहाँ, आपको शवों को लंबे कपड़े की कई परतों में लपेटकर पालकियों में रखवाना चाहिए और क़ैमगंज ले जाना चाहिए।

शाह नूर के साथियों में से एक ने इस बात पर सहमति जताई कि अल्लाह की इच्छा से यह सब काम सूर्यास्त तक पूरा हो सकता है।

अब तक शाह नूर खान और उनके साथी यात्रियों ने खुद को संभाले रखा था, लेकिन शवों को कब्रों में उतारा जाने पर वे फूट-फूटकर रोने लगे। वे अपने साथियों की मृत्यु में असहायता पर, एक अनजान भूमि में उनकी क्रूर, अकेली और असमय मृत्यु पर, और अपने घर से दूर, एक

परदेसी भूमि में, एक ऐसे कब्रिस्तान में दफनाए जाने पर रो रहे थे, जहाँ वे पहले कभी नहीं गए थे। शाह नूर खान इस बात के लिए आभारी थे कि मौला की कृपा से आगा मिर्ज़ा तुराब अली के लिए एक शिया सज्जन मिल गए, जिन्होंने शव के साथ दफनाने के लिए निर्धारित प्रार्थनाओं वाला कागज उपलब्ध कराया। उन्होंने उस अवसर के लिए जो भी प्रार्थनाएँ उन्हें आती थीं, वे भी पढ़ीं। मुनीर खान दफनाने से पहले मृतकों की अंतिम झलक पाने के समय ज़ोर-ज़ोर से रोने लगे। शाह नूर खान अगले ही दिन रामपुर के लिए रवाना हो गए। उनके साथ आगा मिर्ज़ा तुराब अली का घोड़ा और वे जानवर थे जो आगा साहब ने सोनपुर से खरीदे थे। मुनीर खान चुपचाप उनके पीछे-पीछे चल रहे थे। प्रस्थान से पहले, शाह नूर खान ने क़ैमगंज के पुलिस प्रमुख को सारी जानकारी दी और मुनीर खान और दोनों सिदियों के विस्तृत बयान दर्ज करवाए। उन्होंने अपने मालिक और नौकरों के हत्यारों की जांच और उन्हें पकड़ने का औपचारिक अनुरोध किया; उन्होंने अपील की कि पकड़े जाने पर उन्हें सार्वजनिक रूप से फांसी दी जाए। शाह नूर खान ने यह भी कहा कि यदि चोरी की गई संपत्ति बरामद हो जाती है, तो उसे उन बहादुर पुलिसकर्मियों में बाँट दिया जाए जिन्होंने इन दुष्ट हत्यारों को खोजा और गिरफ्तार किया।

पुलिस प्रमुख ने यथासंभव कार्रवाई करने का वादा तो किया, लेकिन उनकी आँखों में दृढ़ विश्वास की कमी झलक रही थी। वास्तव में, यदि सिदी परिवार बेदाग प्रतिष्ठा वाले लोग न होते, तो वे शाह नूर खान, मुनीर खान और बाकी लोगों को गुंडागर्दी के संदेह में गिरफ्तार करने पर भी विचार कर सकते थे।

बदाओं और आंवला के कुछ इलाके उस समय अवध के बादशाह के नाममात्र के नियंत्रण में थे, जबकि कुछ अन्य दिल्ली के बादशाह के नाममात्र के शासन के अधीन थे। जमीनी हकीकत यह थी कि अंग्रेजों का दबदबा हर जगह कायम था और बरेली का कमिश्नर ही वास्तविक शासक था। अंग्रेज साहबों की पुलिस चौकियां पूरे इलाके में फैली हुई थीं। ऐसी ही एक चौकी पर शाह नूर खान ने अपनी रिपोर्ट उसी अनुरोध के साथ दोबारा दर्ज करवाई: जॉन कंपनी बहादुर से विनती की गई कि वे अपराधियों को जल्द से जल्द गिरफ्तार करें और उन्हें फांसी दें। अंग्रेज पुलिस बल के सदस्यों में से जो भी हत्यारों को पकड़ने में सफल होगा, उसे रामपुर के नवाब साहब बहादुर द्वारा भरपूर इनाम दिया जाएगा।

पाँचवें दिन मातम का काफिला रामपुर पहुँचा। रामपुर के कई घरों से देर रात तक विलाप और शोक की आवाज़ें गूँजती रहीं; कोई नहीं सोया। वज़ीर खानम भी दरवाजे की ओर देखती रहीं, इस उम्मीद में कि उनके आगा साहब जल्द ही आ जाएँगे। उन्हें पता ही नहीं चला कि कब उनकी चूड़ियाँ टूट गईं और कब उनके झुके हुए सिर और कंधों पर सफेद दुपट्टा ओढ़ दिया गया।

वज़ीर खानम और नवाब मिर्ज़ा पुरुषों की मान्यताओं पर बहस करते हैं; नवाब मिर्ज़ा के ससुराल वालों की नीचता और द्वेषपूर्ण मानसिकता वज़ीर को एक निर्णय लेने के लिए विवश करती है।

सन् 1844, रामपुर नगर। नवाब मुहम्मद सईद खान बहादुर के शासनकाल के वे दिन शुभ संकेतों और सौभाग्य से भरे हुए थे। अपनी परिष्कृत सजावट, फलते-फूलते व्यापार और बाज़ारों, गलियों और सड़कों की चहल-पहल और मधुर आवाज़ों, आध्यात्मिक पुरुषों की सभाओं, विद्या और चिंतन के विद्यालयों, निजी शिक्षण और शिक्षा केंद्रों, कवियों के परिष्कृत और सुंदर समूहों, और अमीर हमज़ा की मौखिक प्रेम कहानियों के प्रचुर वर्णनकर्ताओं के साथ, रामपुर दिल्ली और लखनऊ के लिए ईर्ष्या का विषय बनने की कगार पर था। शहरी जनसंख्या घनत्व के मामले में, लखनऊ निस्संदेह बहुत आगे था, जबकि दिल्ली अपने भव्य और सुंदर भवनों की विशाल संख्या में बेजोड़ था।

अठारहवीं शताब्दी के दौरान, कुछ इमारतें, विशेष रूप से नजीब-उद-दौला द्वारा निर्मित नजीबाबाद किला, फिर हाफ़िज़ रहमत खान द्वारा निर्मित कुछ अन्य इमारतें, और हाल ही में नवाब फैजुल्लाह खान द्वारा बरेली, बदाओं, बिजनौर, मीरानपुर, कटरा और सहसवान शहरों और कस्बों में निर्मित इमारतें—जिनमें से कई अब जीर्ण-शीर्ण अवस्था में हैं—आगंतुकों को अपने बीते वैभव की कहानी सुनाती थीं। फिर भी, इनमें से कोई भी ऐतिहासिक इमारत ऐतिहासिक दिल्ली की अविश्वसनीय भव्यता, सुंदरता और आकर्षण की तुलना नहीं कर सकती थी, भले ही उन्नीसवीं शताब्दी में इसकी कई इमारतें जर्जर हो गई थीं।

फिर भी, रामपुर जिस तरह से विकसित और समृद्ध हो रहा था, मुरादाबाद, बरेली, संभल और अमरोहा जैसे कहीं अधिक पुराने और बड़े शहर भी धन, शांति, सामाजिक व्यवस्था और जीवन स्तर की उत्कृष्टता के मामले में रामपुर की बराबरी नहीं कर सकते थे। नवाब फैजुल्लाह खान (1774-94) के समय से ही रामपुर शांति और ज्ञान के शहर के रूप में प्रसिद्ध हो गया था। इसने दूर-दराज के क्षेत्रों से विभिन्न विधाओं, कलाओं और शिल्पों के विशेषज्ञों को आकर्षित करना शुरू कर दिया था। उन्होंने रामपुर को अपना घर बनाया और जल्द ही रामपुर के पठानों की प्रसिद्ध विशेषताओं को अपना लिया।

रामपुर के प्रारंभिक इतिहासकार मुन्नू लाल बताते हैं कि नवाब फैजुल्लाह खान के शासनकाल में रामपुर में कम से कम पांच सौ विद्वान, सूफी और अध्यापक थे, जिन्हें नवाब द्वारा पर्याप्त वजीफा दिया जाता था, लेकिन रामपुर में उपस्थित रहने के अलावा उनका कोई कर्तव्य नहीं था। वे सरकार द्वारा स्थापित विद्यालयों में पढ़ाने या घर पर ही अपने शिक्षण और शिक्षा केंद्र स्थापित करने के लिए स्वतंत्र थे।

बाहर से आकर स्थायी रूप से बसने वाले प्रख्यात सूफियों में हाफ़िज़ जमालुल्लाह, शाह दरगाही, शाह बगदादी और शाह जमालुद्दीन शामिल थे; उन्होंने अपने पवित्र चरणों के स्पर्श से रामपुर को एक शुभ नगर बना दिया। नवाब द्वारा स्थापित पुस्तकालय और मदरसा, जिनका निवास अब सर्वोच्च तल पर है, सर्वत्र प्रसिद्ध हो गए और आज भी ज्ञान और विद्या के महत्वपूर्ण केंद्र हैं। पुस्तकालय बाद में रिज़ा पुस्तकालय के नाम से जाना जाने लगा और मदरसे का नाम मदरसा-ए

आलिया रखा गया। नवाब फैजुल्लाह खान ने लखनऊ से प्रख्यात विद्वान मुल्ला अब्दुल अली और कम प्रसिद्ध मुल्ला मुहम्मद हसन फिरंगी महली को आमंत्रित किया और उन्हें क्रमशः मदरसे का प्रमुख और उप-प्रमुख नियुक्त किया। जल्द ही, मदरसा विदेशों से भी छात्रों को आकर्षित करने लगा; रामपुर को भारत का बुखारा कहा जाने लगा।

नवाब फैजुल्लाह खान को कविता और कलाओं में विशेष रुचि नहीं थी, लेकिन इस कमी को उनके छोटे भाई नवाब मुहम्मद यार खान ने तांडा स्थित अपने छोटे लेकिन समृद्ध दरबार में पूरा कर दिया। कुछ समय के लिए क़ैम चांदपुरी, मुशफ़ी, कुदरतुल्लाह शौक़, फ़िदवी लाहोरी और कबीर अली कबीर जैसे प्रख्यात, यहाँ तक कि महान हिंदी कवि वहाँ एकत्रित हुए थे।

सम्राट शाह आलम द्वितीय द्वारा तांडा और आंवला की लूट और विनाश ने मुहम्मद यार खान के दरबार के प्रतिष्ठित सदस्यों को शरद ऋतु में गिरे पत्तों की तरह बिखेर दिया। मुहम्मद यार खान स्वर्गवासी नवाब के निमंत्रण पर रामपुर में बस गए। उनके साथ तांडा और आंवला के आकाश से कई सितारे रामपुर की शोभा बढ़ाने के लिए आए। इनमें क़ैम चांदपुरी और कबीर अली कबीर शामिल थे। इन विद्वानों के आगमन ने रामपुर में साहित्यिक संस्कृति की स्थापना को बहुत आवश्यक प्रोत्साहन दिया। नवाब अहमद अली खान के लंबे शासनकाल ने साहित्यिक गतिविधियों की लहर को जारी रखा, बल्कि इसे और भी आगे बढ़ाया और मजबूत किया। अवध में लंबे समय तक रहने के कारण, वर्तमान नवाब, मुहम्मद सईद खान, वहां के नवाबों और राजाओं द्वारा पालन किए जाने वाले शिया धर्म के अनुयायी थे, लेकिन रामपुर को लखनऊ का हिस्सा बनाने के बजाय, उन्होंने रामपुर की साहित्यिक संस्कृति को सक्रिय रूप से प्रोत्साहित किया। यह संस्कृति दिल्ली की औपचारिक शान, शक्ति और दृढ़ निश्चय को दर्शाती थी, न कि धार्मिक चिंताओं और कोमलता और सूक्ष्मता के प्रति प्रेम को, जिसके लिए लखनऊ पूरे हिंदुस्तान में प्रसिद्ध हो रहा था।

ये सब, हाँ, और इससे भी बहुत कुछ रामपुर में था। लेकिन वो जिसने आगा मिर्ज़ा तुराब अली की असमय मृत्यु पर विलाप किया, जिसने उन्हें बुलबुल की तरह गुलाब से प्रेम किया, वो, जो प्रेम के बाग़ का फूल थी, जिसकी सुगंध प्रेम के शयनकक्ष को महकाती थी, जिसकी मीठी सुगंध प्रेम और स्नेह के बाग़ की खुशबू थी, रामपुर में नहीं थी। आगा तुराब अली की हवेली, राज्य के एक उच्च पदाधिकारी के रूप में उनका आधिकारिक निवास, आगा साहब की मृत्यु के बाद राज्य द्वारा वापस ले ली गई थी। आगा तुराब अली के करीबी रिश्तेदारों में एक बहन और एक चाची थीं, दोनों विधवा थीं। वज़ीर अपने बच्चे के साथ उनके पीछे आगा साहब के पुराने घर गई। नवाब मिर्ज़ा चाहती थीं कि वो भी उनके साथ रहने लगे, लेकिन छोटे से घर को देखकर वज़ीर ने उसे मंझली बेगम की हवेली वापस भेज दिया।

यह पुराने ज़माने का मकान था, जो ज़्यादातर पतली ईंटों और प्लास्टर से बना था, जैसा कि अवध और फर्रुखाबाद के ऐतिहासिक भवनों में आम तौर पर देखने को मिलता है। एक छोटा सा हॉल एक आंगन में खुलता था, जिसके दोनों ओर दो-दो कमरे थे। आंगन के अंत में एक बरामदा था, और उसके पीछे एक बड़ा बरामदा था जिसे ज़रूरत पड़ने पर एक बड़े कमरे के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता था। सामने के हॉल के एक तरफ रसोईघर, एक शौचालय और एक

शौचालय था। घर में बस इतना ही था। इसमें कोई आंतरिक बगीचा या कृत्रिम तालाब नहीं था, न ही धूप या हवा का आनंद लेने के लिए कोई औपचारिक चबूतरा था। एक मज़दूर दिन में दो बार कोसी नदी से पानी लाता था।

वज़ीर के जीवन के रंग और स्वरूप पल भर में बदल गए। नौकरानियों, पालकियों और बैलगाड़ियों की वह भीड़ जो पहले हुआ करती थी, अब गायब हो गई थी। आगंतुकों का आना-जाना भी कम हो गया था, सिवाय शोक के तीसरे, दसवें और चालीसवें दिन से जुड़ी धार्मिक सभाओं के। अगर हबीबा और राहत अफ़ज़ा का सहारा और प्यार न होता, तो वज़ीर शायद कुएँ में कूदकर अपनी जान दे देती। यह सब असहनीय लग रहा था: आगा साहब की मृत्यु का शोक - और वह कैसी मृत्यु थी, मानो हत्यारों का कोई ईश्वर ही न हो, मानो मृत्यु उन्हें छू ही न सके - एक छोटे बच्चे की देखभाल की परेशानी और ज़िम्मेदारी, जिसके लिए अब वह नौकरानी रखने का खर्च भी नहीं उठा सकती थी; उसके ससुराल वालों, आगा साहब की चाची और बहन, दोनों विधवाएँ थीं और अकेलेपन के कड़वेपन और निराशा से भरी हुई थीं। उनके इशारों से यह स्पष्ट हो गया कि छोटी बेगम को आगा साहब की संविदात्मक, अस्थायी पत्नी का दर्जा भी प्राप्त नहीं था, विधिवत विवाहित पत्नी का दर्जा तो दूर की बात है। युवा विधवा के रूप में वज़ीर का जीवन पहले से ही कठिन था, और ये नए बोझ असहनीय प्रतीत हो रहे थे।

चाची और भाभी कभी-कभी अनिच्छा से ही सही, यह मान लेती थीं कि छोटी बेगम और आगा साहब का विवाह हुआ था, लेकिन जैसा कि चाची कभी भी यह बताने का मौका नहीं छोड़ती थीं, छोटी बेगम जैसी महिलाओं के लिए औपचारिक विवाह और विवाह की प्रतिज्ञाओं और बंधनों का कोई महत्व नहीं था। और बहू छोटी बेगम अस्थिर महिलाओं में एक अलग ही श्रेणी की थी—उन महिलाओं में जो धनी और अय्याशों के शयनकक्षों की शोभा बढ़ाती थीं—और साथ ही अशुभ भी: जो कोई भी उसका हाथ पकड़ता, उसका अंत शीघ्र ही मृत्यु के दूत के हाथों होता था।

वज़ीर को स्पष्ट रूप से पता था कि अब रामपुर में उसका रहना कठिन है। उसे यह भी समझ आ गया था कि राहत अफ़ज़ा से अपने अलगाव को वह और टाल नहीं सकती। वास्तव में, उच्च कुल की लड़कियों के मानकों के अनुसार, राहत अफ़ज़ा विवाह योग्य आयु पार कर चुकी थी। एक कनिष्ठ या वरिष्ठ दासी के रूप में, या यहाँ तक कि एक महिला की दासी के रूप में भी, वह विवाह की उपयुक्त आयु लगभग पार कर चुकी थी। वास्तव में, कुछ वर्षों में, अपने सुंदर रूप और मनभावन गुणों के बावजूद, उसे रखैल के रूप में भी शायद उपयुक्त न माना जाए। हबीब-उन निसा ने वज़ीर के प्रति प्रेम और सहानुभूति के कारण कभी भी अपनी बेटी के विवाह का विषय नहीं उठाया था; लेकिन अब, जब वज़ीर स्वयं लगभग बेघर हो चुकी थी, तो उसके लिए एक अच्छा पति ढूँढना आवश्यक और अत्यंत महत्वपूर्ण था।

राहत अफ़ज़ा के लिए एक अच्छा वर ढूँढना बिल्कुल संभव था। पहली शर्त तो राहत अफ़ज़ा की सहमति और हबीबा द्वारा प्रस्ताव को स्वीकार करना ही थी। इसके बाद नवविवाहित जोड़े के लिए एक अच्छा रहने का स्थान और घरेलू सामान का इंतज़ाम करना था। वज़ीर जानती थी कि अपनी मालकिन के प्रति सम्मान के कारण हबीबा राहत अफ़ज़ा की शादी के बारे में पहल कभी नहीं करेगी। इसलिए उसने हबीबा को सूचित किया कि विधवा के रूप में उसके एकांतवास की अवधि

समाप्त होते ही वह राहत अफ़ज़ा के लिए एक अच्छे पति की तलाश शुरू कर देगी।
उन्होंने कहा, 'अगर यह मेरे बस में होता, तो मैं राहत अफजा को कभी अपने से दूर नहीं जाने देती। मैं उसके पति को अपने घर के दामाद की तरह अपने साथ रखती। लेकिन...'
'खानम साहब,' हबीब-उन निसा ने अपने आँसू पोंछे और भारी, कर्कश आवाज़ में बोली, 'आपके साथ हमारे पहले दिन से ही, आप राहत अफ़ज़ा के लिए पिता, माता, दया के फ़रिश्ते, सब कुछ रहे हैं। काश, आपकी किस्मत टेढ़ी कलम से न लिखी होती... फिर भी, मैं हमेशा आपके साथ रहूँगी और अपने दिन आपके चरणों में सिमटकर बिताऊँगी... लेकिन, बुढ़ापे में राहत अफ़ज़ा के हमसे बिछड़ने का दर्द मैं कैसे सह पाऊँगी?' अब वह फूट-फूटकर रो रही थी, उन्हें पोंछने की भी परवाह नहीं कर रही थी।
'हिम्मत रखो, हबीबा,' वज़ीर ने उदास स्वर में कहा, लेकिन उसकी आवाज़ में एक छिपी हुई ताकत थी। 'अगर हमारी परिस्थितियाँ सामान्य होतीं, तो राहत अफ़ज़ा की शादी बहुत पहले हो चुकी होती। अब और देरी करना ठीक नहीं है। और तुम यहाँ के मिजाज और माहौल को समझ रही हो, है ना?'
'यह तेरहवीं शताब्दी है, खानम साहब, इस युग में कुछ भी असंभव नहीं है।'
'फिलहाल मैं घर में एक कैदी की तरह हूँ। जब तक मेरे दुख भरे दिन खत्म नहीं हो जाते, मैं हिल भी नहीं सकती। पता नहीं ये भली-भांति महिलाएं मुझे बाहर निकलने की इजाजत मिलने पर मेरे साथ क्या करेंगी।'
'अल्लाह सबसे बेहतर जानता है, लेकिन मुझे यकीन है कि इन संभ्रांत महिलाओं की आंखों में बसी बुराई ने हमारे बेचारे आगा साहब को निगल लिया।'
'हे हबीबा, पश्चाताप करो! अपने ही समर्थक और रक्षक को बुरी नज़र क्यों डालनी चाहिए, जो इस दुनिया में उनकी सारी संपत्ति का वारिस होगा? इस पूरी दुनिया में उनके अलावा कोई और नहीं था जो उन्हें जीवन की नदी में सहारा दे सके।'
'सच है। लेकिन अगर उन्हें आगा साहब से स्नेह था, तो वे आपसे क्यों नाराज़ होंगे? आख़िरकार, आप उनसे अलग तो नहीं थे।'
'मैं नहीं था, लेकिन था भी।' वज़ीर ने एक गहरी साँस ली। 'पहली बात तो यह है कि मैं उसी गोत्र का नहीं हूँ; फिर धर्म का अंतर है। और तो और, मैं रामपुर का भी नहीं हूँ, और मेरी एक प्रतिष्ठा भी है!'
'दाग-लटका या नाम, ये सब क्या मायने रखते हैं, खानम साहब? मैं इन महिलाओं को हमारे नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान के एक नाखून के लिए भी खुशी-खुशी कुर्बान कर दूंगा! जो लोग तुम्हें तिरछी नजरों से देखते हैं, उनकी आंखें फटी रह जाएं! नाम अच्छा हो या बुरा, उसके कर्मों से ही बनता है। और ये औरतें! ये तो उस कहावत की तरह हैं, "मैं किसी काम की नहीं, लेकिन दूल्हा मेरा भतीजा है!"'
वज़ीर खुद पर काबू न रख पाने के बावजूद हंस पड़ी। 'अरे, तुरान और ईरान की इन कहानियों को यहीं खत्म करते हैं। ज़रूरी काम हमेशा पहले! क्या आपने राहत अफ़ज़ा के लिए कोई दूल्हा सोचा है?'

हबीब-उन निसा सोच में डूब गई। वह कुछ मिनट चुपचाप बैठी रही, फिर उठी और चुपके से दरवाजे तक गई, उसे अंदर से मजबूती से बंद किया, वापस आई और वज़ीर खानम से सटकर बैठ गई।

'क्या बात है, हबीबा?' उसने फुसफुसाते हुए कहा।
'कुछ नहीं,' हबीबा ने फुसफुसाते हुए जवाब दिया। 'मुझे बस ऐसा लगा कि आपकी आदरणीय सास कहीं आस-पास ही थीं, दरवाजे पर कान लगाए हुए।'
'हबीबा, अल्लाह से माफ़ी मांगती हूँ! तुम सचमुच अंधविश्वासों से भरी हुई हो, ठीक उन हिंदुओं की तरह जो हर छायादार पेड़ में किसी राक्षस या शैतान की छाया देखते हैं! खैर, बताओ, क्या तुम्हारे मन में कुछ है?'
जी महोदया। आपको शाह नूर खान याद हैं? वही थे जो हमारे प्रिय, स्वर्गवासी आगा साहब द्वारा खरीदे गए जानवरों को सोनपुर से वापस लाए थे।
'हां फिर?'
'उसका मेरे दिवंगत प्रियजन से संबंध है। वह मेराथ से आया है; वह यहाँ का निवासी नहीं है।'
'इसका मतलब है कि वे भरोसेमंद लोग हैं। यह अच्छी बात है। तो क्या उनकी तरफ से कोई प्रस्ताव या संकेत है?'
'हां, एक बार उसकी चाची आई थीं, उन्होंने कुछ इशारे किए थे। लेकिन वो अलग दिन थे। इसलिए मैंने भी उन्हें अपनी अस्वीकृति का संकेत दे दिया था।'
हमें उस बातचीत को फिर से शुरू करना चाहिए। क्या आप यही चाहते हैं? और राहत अफजा के बारे में क्या?
'अल्लाह से क्षमा मांगो! उससे बात करने की क्या जरूरत है? जो आपको मंजूर है, जो मैं चाहता हूं, वही मायने रखता है!'
'नहीं। उसकी सहमति होना आवश्यक है!'
हबीबा की भौंहों पर एक हल्की सी शिकन आई, लेकिन वह तुरंत गायब हो गई। उसने चुपचाप विषय बदल दिया।
कुछ दिन पहले उमदा खानम साहब की हवेली में मेरी मुलाकात शाह नूर खान की बहन से हुई। उन्होंने बताया कि उनकी चाची उनके लिए एक अच्छी दुल्हन की तलाश कर रही हैं। तब मुझे लगा कि उनके मन में फिर से कुछ चल रहा होगा।
'हां, मुझे लगता है कि इसकी काफी संभावना है। तो क्या आपने कुछ और जानकारी जुटाई?'
नहीं, मैं आपकी अनुमति के बिना कुछ भी करने की हिम्मत नहीं कर सकता।
ठीक है। लेकिन अब और देर मत करो। जितनी हो सके उतनी जानकारी जुटा लो। मैं मंझली बाजी से बात करूँगा। वह सारी जानकारी जुटाने में मदद करेंगी।
उमदा खानम की मदद से अगले दस दिनों के भीतर सारी जानकारी जुटा ली गई। पता चला कि भावी दूल्हे शाह नूर खान का परिवार प्रतिष्ठित पठान था। दूल्हे के माता-पिता जीवित नहीं थे; वह अपने पिता की ओर से एक बूढ़ी चचेरी बहन और उसके अंधे बेटे का भरण-पोषण करता था।

शाह नूर खान की पिछली शादी से, जो तलाक में समाप्त हो गई थी, एक बारह से पंद्रह वर्ष की बेटी थी, जो उसके साथ रहती थी। पहली पत्नी को तलाक देने का कारण उसका गुस्सैल स्वभाव और तीखी जुबान थी। ऐसा प्रतीत होता था कि वह विधवा चचेरी बहन और उसके अंधे बेटे के प्रति विशेष रूप से कठोर थी: वह उन्हें निकम्मे और निकम्मे समझती थी।

खबरों के मुताबिक, शाह नूर खान की उम्र लगभग चालीस वर्ष थी और वे पिछले दो दशकों से नवाब साहब बहादुर के हाथी अस्तबल, 'प्रेजेंस' में सेवा कर रहे थे। उन्हें अच्छा वेतन मिलता था और उनके साथियों में उनकी अच्छी प्रतिष्ठा थी।

सब बातों पर गौर करें तो यह रिश्ता उचित, बल्कि वांछनीय प्रतीत होता था। परिवार और अच्छी तनख्वाह के अलावा, दूल्हे के पक्ष में किसी रिश्तेदार का न होना एक अतिरिक्त लाभ था: युवा दुल्हन पर अत्याचार करने वाली कोई सास नहीं होगी। जो दो रिश्तेदार थे, वे उसके साथ गरीब रिश्तेदारों की तरह रहते थे और उनसे किसी प्रकार की समस्या या विवाद उत्पन्न होने की कोई संभावना नहीं थी।

उम्दा खानम ने वज़ीर से कहा, “किसी व्यक्ति का वास्तविक स्वभाव उसके साथ दिन-प्रतिदिन रहकर और व्यवहार करके ही जाना जा सकता है। जैसा कि कहावत है, ‘मनुष्य की पहचान उसके अनुभव से होती है, सोने की पहचान उसकी गुणवत्ता से होती है।’ सभी प्रत्यक्ष संकेत अनुकूल हैं। बाकी सब ईश्वर के हाथ में है।”

शादी की बातचीत और प्रस्ताव चरित्र की खामियों की तरह होते हैं: चाहे उन्हें छिपाने की कितनी भी कोशिश की जाए, वे सामने आ ही जाते हैं। और शादी के प्रस्ताव की खबर, या अफवाहें भी, निश्चित रूप से उन लोगों तक पहुँच जाती हैं जो किसी भी कारण से दोनों पक्षों में से किसी एक या दोनों के विरोधी होते हैं। राहत अफजा के प्रस्ताव के मामले में भी ठीक यही हुआ। शाह नूर खान की ओर से रुचि की औपचारिक घोषणा के लगभग साथ ही, यह सूचना अमीर-उन निसा और नूर फातिमा तक पहुँच गई, जो मिर्ज़ा तुराब अली की विधवा चाची और बहन थीं, और वज़ीर की वास्तविक सास और भाभी थीं। अमीर-उन निसा ने तुरंत वज़ीर को अपने कमरे में बुलाया और बिना किसी शिष्टाचार के शुरू कर दिया, 'देखो, छोटी बेगम, तुम अभी भी कानूनी संयम की अवधि में हो। तुम्हारे लिए सगाई और शादी की बात शुरू करना उचित नहीं है।'

वज़ीर शर्म से लाल हो गई। उसने तीखे स्वर में उत्तर दिया, 'मुझे समझ नहीं आ रहा। किस सगाई और किसकी शादी को लेकर आपके मन में ये बेतुके विचार हैं?'

‘वो लड़की, राहत अफजा…’ अमीर-उन निसा ने तुरंत बीच में टोकते हुए कहा।

वज़ीर भी इतनी आसानी से रुकने वाली नहीं थी। वह चिल्लाई, 'इस तरह की बातें आपको शोभा नहीं देतीं, आंटी अमीर-उन निसा। कुछ पवित्र शब्द बोलकर एक अनाथ बच्ची को सुरक्षित आश्रय दिलाना... मुझे यकीन है कि यह आपके धर्म में भी एक पुण्य कर्म होगा।'

‘गुण-दोष के मामलों का निर्णय मुल्ला या विद्वान को करने दीजिए। मैं बस इतना ही कहता हूँ: अपने आप को देखो! तुम अपने त्याग के समय और विधवापन के जीवन को कैसे गुजारोगी?’

‘भगवान न करे। क्या मैं अपनी पुनर्विवाह और अपने लिए एक नए घर के बारे में कुछ कर रही हूँ? तुम्हें क्या हो गया है?’ खुद पर काबू न रख पाने के बावजूद, वज़ीर की आवाज़ में आँसू

झलक रहे थे।
‘अल्लाह मुझे झूठ से बचाए! क्या आप इन मामलों में भली-भांति पारंगत नहीं हैं और इन रास्तों पर अच्छी तरह से नहीं चल चुके हैं?’ ये नूर फातिमा थीं, जो आगा तुराब अली की इकलौती बहन थीं और अपने जीवनकाल में उनसे बहुत लाड़-प्यार पाती थीं। जब उनके भाई ने घर में एक नई पत्नी को लाया तो वह बेहद दुखी हुई थीं।
वज़ीर उठा और बाहर जाने लगा। 'तुम्हारे पास न तो शिष्टाचार है, न ही अक्ल।'
अमीर-उन निसा ने वज़ीर को जाने से रोकने के लिए अपनी आवाज़ ऊंची की। 'खैर, हम जो घर पर रहते हैं, आप जैसे घुमक्कड़ों की तरह शिष्ट नहीं हो सकते! लेकिन छोटी बेगम, आपको यह समझना होगा: इस दरवाजे पर कभी किसी मामूली हाथी चालक की शादी की बारात नहीं आई है, और न ही कभी आएगी।'
वज़ीर ने पलटकर जवाब दिया, 'क्या यह दरवाजा मेरा भी नहीं है?'
आह! केवल ईश्वर ही दोषरहित है! क्या आपने कभी अपना चेहरा पानी के घड़े में देखा है, प्रिय महोदया? मेरी माँ की संतान, दोनों माता-पिता से शुद्ध, बेदाग सैय्यद वंश की संतान, आपने उसे किसी छोटे-मोटे जादू से सम्मोहित कर दिया होगा। बेचारा नन्हा जीव, कुछ समय के लिए होश खो बैठा। मेरे भतीजे ने आपको अपने घर में लाया है, इसलिए अब आप पवित्रता की साक्षात मूर्ति होने का दिखावा कर रही हैं। आप और यह दहलीज! सचमुच!
जी महोदया, बिल्कुल। लेकिन मेरा यहाँ जन्म एक विधिवत विवाह के माध्यम से हुआ था। और आपके प्रिय भतीजे का पुत्र मेरी कोख से जन्मा है। यदि वह न होता, तो आपके उच्च कुल के सारे दावे इतिहास के पन्नों में दफ़न हो गए होते। यदि आपके पूर्वजों का नाम जीवित रहना है, तो वह केवल उसी के माध्यम से जीवित रहेगा।
हम उस मामले को किसी और मौके पर सुलझा लेंगे। पहले आपको विधवा के रूप में अपनी गतिहीनता की अवधि पूरी करनी होगी। हम हबीब-उन निसा को उसके सामान समेत यहाँ से बाहर निकाल देंगे। उसे यह भ्रम नहीं पालना चाहिए कि उसकी बेटी की शादी की पालकी इसी दरवाजे से रवाना होगी।
हबीब-उन निसा और उनकी बेटी के मामले में तुम्हें अपना दिमाग या ज़बान खपाने की ज़रूरत नहीं है। दिल्ली और रामपुर दोनों जगह मेरे घर हैं। तुम्हारी माँ के बेटे की औलाद मुझे यहाँ तक ला पाई, वो भी सैकड़ों बार गिड़गिड़ाने और मुझसे बड़ी विनम्रता से विनती करने के बाद। वरना, मेरी सबसे घटिया चप्पल भी यहाँ आने की जहमत नहीं उठाती।’ वज़ीर गुस्से से काँप रहा था।
‘और तुम! मैं तुम जैसे लोगों को अपने शौचालय में बर्तन तक लाने की इजाज़त नहीं दूँगा! अल्लाह तुम पर रहम करे! जिसका अपना घर टूटी डाल पर हो, वो दूसरे को बेघर करने की धमकी दे! अब सुनो, तुम दोनों। राहत अफ़ज़ा की बारात आएगी, और यहीं आएगी, कहीं और नहीं।’
वज़ीर क्रोध की आग में जल रही थी। उसने अपने दुपट्टे को कमर पर कसकर बांध लिया, मानो युद्ध के लिए तैयार हो रही हो। उसके चेहरे पर वही ऊर्जा और वही प्रभावशाली शक्ति झलक रही थी, जिसने नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान जैसे लोगों के हठधर्मिता को भी कुचल दिया था। वज़ीर

कमरे से चली गई, लेकिन काफी देर तक दोनों महिलाओं को लगा कि कमरा उसकी उपस्थिति से भरा हुआ है।

अमीर-उन निसा से अलग होने के तुरंत बाद, उन्होंने मंझली को एक पत्र भेजा और उनसे जल्द से जल्द मिलने आने का अनुरोध किया। जब मंझली आईं, तो उन्होंने अपने और अमीर-उन निसा के बीच हुई सारी बातें बताईं और फिर कहा, 'राहत अफजा के बारे में अभी तक कुछ भी तय नहीं हुआ है, लेकिन कोई न कोई फैसला लेना ही होगा, और जितनी जल्दी हो सके। मैं इन दो हताश विधवाओं को अपने बांझपन का कड़वाहट उस बेचारी लड़की पर उंडेलने की बिल्कुल भी इजाज़त नहीं दूंगी। मैं उन्हें उसका अपमान करने, उसे नीचा दिखाने और मुझे भी शर्मिंदा करने की अनुमति नहीं दे सकती।'

अपनी सामान्य शांत, संयमित और लगभग भावहीन बातचीत के विपरीत, वज़ीर ने दबी हुई उत्तेजना के साथ बात की, मानो वह उन दो महिलाओं द्वारा किए गए अपमान का बदला लेने के लिए दृढ़ संकल्पित हो। उसने घोषणा की, 'मैं इसी घर में शादी करवाऊंगी। यह मेरा भी घर है। लेकिन रस्मों के बाद मैं यहाँ एक मिनट भी नहीं रहूंगी!'

‘कोई बात नहीं, छोटी। जैसे ही तुम्हारी कैद की अवधि समाप्त हो जाएगी, तुम मेरे घर में आ जाओगी।’

नहीं, मंझली बाजी, मैं दिल्ली वापस जाऊँगा। आख़िरकार, वहाँ मेरा एक ठिकाना है। चाहे वह कितना भी जर्जर और वीरान क्यों न हो, पर वह मेरा घर तो है। एक फ़कीर के लिए मोटा कंबल भी कश्मीरी शॉल जैसा होता है। लेकिन ये सब बाद की बात है। सबसे ज़रूरी बात यह है कि मुझे आपके समर्थन की, आपके नवाबों के समर्थन की और ईश्वर के पवित्र सेवकों की सुरक्षा की ज़रूरत है।

‘निस्संदेह, मैं और मेरे नवाब साहब पहले की तरह ही आपके समर्थक और हिमायती हैं। मैं सर्वशक्तिमान ईश्वर की ओर से गारंटी तो नहीं दे सकता, लेकिन प्रयास में कोई कमी नहीं होगी। मैं आज ही अपने नवाब साहब को इन सब बातों का जिक्र करूंगा।’

अगले कुछ दिनों तक कुछ खास नहीं हुआ, सिवाय इसके कि राहत अफजा और शाह नूर खान की शादी की बातचीत लगभग पूरी हो चुकी थी। अब बस शादी की तारीख, दहेज की रकम, दूल्हे के पक्ष में लोगों की संख्या और इसी तरह की कुछ और बातें तय होनी बाकी थीं। अमीर-उन निसा और नूर फातिमा ने वज़ीर से पूरी तरह दूरी बना ली, यहाँ तक कि उन्होंने एक अलग रसोईघर भी बनवा लिया और रसोई के बर्तनों का इस्तेमाल भी नहीं करते थे। घर छोटा था, इसलिए उनके लिए एक-दूसरे के काम में दखल न देना लाज़मी था। लेकिन वज़ीर ने हमेशा विनम्र और सौम्य व्यवहार बनाए रखा; वज़ीर ने ससुराल में एक अच्छी बहू की तरह बर्ताव किया। इसके विपरीत, अमीर-उन निसा ने वज़ीर को चिढ़ाने का कोई मौका नहीं छोड़ा: वज़ीर का अस्तित्व उन्हें बिल्कुल भी स्वीकार्य नहीं था। चाहे कोई सांप वज़ीर को काट ले या बिजली गिरकर उसे राख कर दे, अमीर-उन निसा उत्सव के दीपक महंगे घी से जलवाएंगी, न कि साधारण सरसों या तिल के तेल से। सास और ननद ने इस बात को लेकर कोई संकोच नहीं किया: राहत अफज़ा के दूल्हे के दल का स्वागत चाहे ईश्वर के सिंहासन पर किया जाए या चौराहे

पर सार्वजनिक रूप से उनका स्वागत किया जाए। उन्हें इस बात की कोई परवाह नहीं थी, जब तक कि दल उनके घर को अपवित्र न करे।

वज़ीर पर कानूनी तौर पर लगाए गए प्रतिबंध की अवधि समाप्त हो गई; राहत अफ़ज़ा के विवाह की तिथि तय हो गई; विभिन्न समारोहों की तैयारियाँ लगभग पूरी होने वाली थीं। सब कुछ ठीक चल रहा था, लेकिन विवाह के निमंत्रण पत्र वितरित नहीं किए जा सके। उमदा खानम ने पुष्टि की कि नवाब यूसुफ अली खान ने ज़ोर देकर कहा था कि विवाह मिर्ज़ा तुराब अली के घर से ही होना चाहिए। उनका यह स्पष्ट मत था कि उस घर पर वज़ीर का अधिकार उसके ससुराल वालों के बराबर, बल्कि उससे भी अधिक था। आख़िरकार, वह उस घर की वैध बहू थी। लेकिन परम पूज्य ईश्वर ने इस मामले में अपना इरादा स्पष्ट नहीं किया। कम से कम, उन्होंने किसी भी तरह से अपने इरादे का कोई संकेत नहीं दिया था।

इसके बावजूद, वज़ीर आगा तुराब अली के घर में ही विवाह संपन्न कराने के अपने संकल्प पर अडिग थीं: असल में, यह उनका अपना घर था। और विवाह हबीब-उन निसा के दर्जे के अनुसार नहीं, बल्कि वज़ीर खानम के दर्जे के अनुसार होना था। उनका यह संकल्प व्यवहार में कैसे साकार होगा, यह उनके मन में स्पष्ट नहीं था। फिर भी, उन्हें किसी न किसी रूप में यह विश्वास था कि उनकी इच्छा उनके विरोधियों पर विजय प्राप्त करेगी। उन्होंने निश्चय किया कि यदि निर्धारित तिथि से ठीक एक सप्ताह पहले तक ईश्वर की ओर से कोई संकेत या आदेश न मिले, तो वे और मंझली बाजी नवाब यूसुफ अली खान के आधिकारिक निवास पर उपस्थित होकर उनके माध्यम से ईश्वर की उपस्थिति में प्रवेश पाने का प्रयास करेंगी।

शादी की तारीख से महज़ दस दिन पहले, वज़ीर अपने दृढ़ संकल्प के बावजूद चिंतित होने लगीं। उन्होंने फ़िरोज़पुर झिरका से बीस या उससे अधिक साहसी और निडर युवकों को बुलाने का विचार भी किया: भले ही वह राज्य अंग्रेज़ों के अधीन था, लेकिन वहाँ अनगिनत पुरुष और महिलाएं होंगी जो शहीद नवाब को स्नेह और सम्मान से याद करती होंगी। वह उनसे समारोह के आयोजन में मदद करने और किसी भी अप्रिय स्थिति से निपटने के लिए कह सकती थीं। लेकिन पुनर्विचार करने पर उन्होंने यह विचार त्याग दिया। यद्यपि यह अव्यावहारिक नहीं था, फिर भी यह एक समझदार व्यक्ति की नज़र में स्वीकार्य प्रस्ताव नहीं था। यह सच है कि वे आएंगे, और स्वेच्छा से आएंगे, और यह सुनिश्चित करेंगे कि सब कुछ ठीक से हो। लेकिन यदि किसी विदेशी राज्य से लाठी चलाने वाले युवकों को समारोह का प्रबंधक नियुक्त किए जाने की सूचना प्रभु तक पहुँचती, तो यह संभव था कि वे प्रसन्न न हों। नदी में रहना और मगरमच्छ की दुर्भावना मोल लेना बुद्धिमानों का काम नहीं होता। और उस शादी समारोह में क्या मजा था जिसमें शादी संपन्न कराने के लिए बाहर से गार्ड और बाहुबली बुलाने की जरूरत पड़ी?

वज़ीर ने अभी दोपहर की नमाज़ पूरी की थी और मंझली की हवेली जाने के लिए पालकी मंगवाने की तैयारी कर रही थीं, तभी उनके मुख्य द्वार पर हल्की सी हलचल या धीमी आवाज़ सुनाई दी। उन्हें कुछ ही क्षणों में सूचना मिली कि महाराज उन्हें अपने महल में बुला रहे हैं; उन्हें ले जाने के लिए पालकी द्वार पर खड़ी है। किले के द्वार तक पालकी की सुरक्षा और साथ देने के लिए दो लाठीवाहक और एक घुड़सवार तैनात थे।

वज़ीर अचंभित रह गई। उसे उम्मीद थी कि दरबार से कुछ संकेत मिलेगा कि अमीर-उन निसा बेगम को उचित निर्देश दिए जाएँगे। ज़्यादा से ज़्यादा, दूल्हे के दल के आने पर कुछ घुड़सवार सैनिक उसकी गली में तैनात किए जाएँगे और रस्मों के अंत तक वहीं रहेंगे। लेकिन बुलावा...? अल्लाह, मैं उनका सामना कैसे करूँगी? वहाँ महिलाओं के लिए क्या नियम हैं? सलाम करने का निर्धारित तरीका क्या है? क्या मुझे बैठने के लिए जगह दी जाएगी या मुझे खड़े रहना होगा? और मेरे विधवा के कपड़े... मैंने आज ही नए कपड़े बदले हैं, लेकिन ये बिल्कुल सादे हैं। ज़ाहिर है, मेकअप करने या बालों को सँवारने का तो सवाल ही नहीं उठता। बस चेहरे पर दो मुट्ठी पानी छिड़क लूँ, बिखरे बालों को ठीक कर लूँ और दुपट्टा सिर पर इस तरह डाल लूँ कि चेहरा छिप जाए। इतना ही काफी होगा।

कई सप्ताह बीतने के बाद उसने आईने में खुद को देखा। चेहरे पर कोई ताजगी या चमक नहीं थी, लेकिन झुर्रियाँ भी नहीं दिख रही थीं। बाल, हाथ और पैर सूखे, बेजान और उपेक्षित थे; लेकिन सिर में एक भी सफेद बाल नहीं था, और मांसपेशियों में कोई सिकुड़न नहीं थी जो बुढ़ापे के संकेत दे।

वह अपने अभी भी घने बालों में कंघी करना खत्म ही कर रही थी कि हबीबा ने आकर बताया कि घुड़सवार ने सुझाव दिया है कि उन्हें जल्दी करनी चाहिए, क्योंकि नवाब साहब बहादुर उनका स्वागत करने के लिए तैयार हैं।

'जाने से पहले बिस्मिल्लाह कहिए, खानम साहब,' हबीबा ने कहा। 'यह सभी कठिन मुद्दों पर निर्णय लेने का एक अत्यंत उपयुक्त समय है। जब आपको किले तक ले जाया जा रहा हो, तो अंदर जाते समय दरूद (अल्लाह और उसके बंदों द्वारा पैगंबर को दी जाने वाली सलाम) कहें और अल्लाह के पवित्र नाम या वदूद का उच्चारण करते हुए, उसकी प्रेममयी प्रकृति का आह्वान करें और अपने ऊपर फूंक मारें। और जब आप अल्लाह के सामने हों, तो अपने हृदय में अल्लाह के उन नामों का उच्चारण करना न भूलें जो उसकी सर्वव्यापी दया और कृपा को दर्शाते हैं।'

वज़ीर ने जल्दी से अपने बाल संवारे, कपड़ों की सिलवटें यथासंभव सीधी कीं, एक सादी सफेद चादर ओढ़ी और पालकी में बैठ गई। उसे सड़कों और रास्तों का ज़्यादा ज्ञान नहीं था, और पालकी के अंदर से उसे कुछ खास दिखाई भी नहीं दे रहा था। रास्ते में आ रही आवाज़ों से वह बस इतना ही अंदाज़ा लगा सकती थी कि शायद वह किसी व्यस्त बाज़ार से गुज़र रही है। वह तय की गई दूरी का अनुमान नहीं लगा सकती थी; पालकी उठाने वाले और लाठी उठाने वाले बिना आवाज़ किए, सुचारू रूप से कदम रख रहे थे; कभी-कभी उसे घुड़सवार के घोड़े की लयबद्ध टप-टप की आवाज़ सुनाई देती थी।

रामपुर कोई बड़ा शहर नहीं था; दूरी ज्यादा नहीं रही होगी, लेकिन वज़ीर को कभी-कभी यह बहुत ज्यादा लगती थी; कभी-कभी उसे लगता था कि उसे किसी भी क्षण किले में होना है।

पालकी कुछ सेकंड के लिए धीमी हुई, फिर रुक गई। उसने एक अधिकारपूर्ण आवाज़ सुनी: 'पालकी के दोनों ओर पर्दे लगाओ, अभी!'

वज़ीर ने ठीक उसी जगह का अंदाज़ा लगाने की कोशिश की जहाँ उसे उतरते समय ठोकर न लगे या उसका संतुलन न बिगड़े। एक मिनट से भी कम समय में उसने वही आवाज़ सुनी, जो अब

पहले से कहीं ज़्यादा नरम और विनम्र थी: 'सुरक्षा के लिए पर्दे लगा दिए गए हैं। अब आप कृपया उतरें।'

ठोकर लगने के डर से वज़ीर ने एक पैर, फिर दूसरा, फिर अपनी टांगें बड़ी धीमी गति से आगे बढ़ाईं। वह पूरी तरह से अपने चादर से ढकी हुई थी; उसके माथे का केवल एक छोटा सा हिस्सा दिखाई दे रहा था, लेकिन देखने वाला कोई नहीं था। उसने अपने चादर के किनारे को थोड़ा और नीचे खींच लिया, मानो कोई चादर ओढ़ ली हो। वह देख तो सकती थी, लेकिन मानो अदृश्य हो गई हो।

उन्हें यह देखकर थोड़ी हैरानी हुई कि वे किले के मुख्य द्वार या किसी भी सहायक द्वार पर नहीं थीं। वे एक तरह की चारदीवारी वाली गली में थीं, जैसे कोई सुरक्षा क्षेत्र हो। उनकी पालकी दोनों तरफ से सुरक्षित थी। घुड़सवार, लाठी-कमानधारी और पालकी के चारों ओर के लोग उस सुरक्षा घेरे के पीछे थे। उन्होंने एक ऊँचा द्वार देखा। उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि वे क्या करें और कैसे प्रवेश करें। द्वार पर पूरी तरह से हथियारों से लैस चार महिला रक्षक खड़ी थीं, जो स्पष्ट रूप से उनके आगे बढ़ने की उम्मीद कर रही थीं। वज़ीर ने देखा कि महिला रक्षक अपनी-अपनी जगह पर ही रहना पसंद कर रही थीं। उन्हें हिचकिचाते देख, उनमें से एक ने उनकी ओर एक कदम बढ़ाया, सलाम किया और कहा, 'कृपया अंदर आइए। बिल्कुल भी संकोच न करें। आदरणीय महाराज अंदर आपका इंतजार कर रहे हैं।'

वज़ीर ने राहत की सांस ली; उसने महिला पहरेदारों को अभिवादन और धन्यवाद का इशारा किया और दरवाजे से अंदर चली गई। उसने अभी कुछ ही कदम आगे बढ़ाए थे कि उसकी नज़र नवाब यूसुफ अली खान की एक वरिष्ठ दासी पर पड़ी, जिसने उसे सलाम किया और कहा, 'कृपया मुझे अपनी चादर दीजिए, खानम साहब, और मैं आपको मुख्य हॉल में ले जाऊंगी। नवाब साहब आपको वहां दर्शन देंगे।'

जैसे ही वज़ीर ने चादर हटाई, उसे लगा मानो उसका शरीर और आत्मा भोर की पहली गुलाबी रोशनी में खिल उठे हों। पालकी में बैठने के क्षण से ही वह अनिश्चितता और उलझन की अनेक भावनाओं से घिरी हुई थी। उसके शरीर में इतना तनाव था कि उसकी सामान्य हरकतें भी बनावटी और कृत्रिम लग रही थीं। अब जब उसका वातावरण हल्का और कम घुटन भरा लग रहा था, तो अनजाने में ही उसके मन में उत्साह का संचार होने लगा और उसका रक्त अधिक सहजता से प्रवाहित होने लगा। विधवा होने के कारण पहले से ही आहत उसकी आत्मा, और अब उसके पति के रिश्तेदारों के अनुचित हठ के कारण उस पर अतिरिक्त बोझ पड़ चुका था, वह जकड़ी हुई, सीमित और संकुचित थी, लेकिन अब दबाव कम लग रहा था, उसकी आंतरिक रोशनी कम धुंधली लग रही थी, कम से कम कुछ समय के लिए।

उसने अपनी निगाहें अपने पैरों पर टिकाए रखीं और नौकरानी के पीछे आराम से चलते हुए विशाल हॉल में प्रवेश किया। इसकी छत काफी ऊंची थी और लगभग झूमरों और मोमबत्ती स्टैंडों से लदी हुई थी, लेकिन केवल एक विशाल मोमबत्ती स्टैंड जल रहा था, जिसमें कम से कम तीन सौ दीपक थे; फर्श पर एक छोर से दूसरे छोर तक तुर्की और कश्मीरी कालीन बिछे थे, लेकिन बीच में एक छोटा सा हिस्सा कालीन रहित था; उसमें एक ट्यूलिप के आकार का लाल नसों

वाला संगमरमर का फव्वारा शांत भाव से बह रहा था। दीवारों के किनारे बड़े तकिये रखे थे, और प्रत्येक तकिये के सामने छोटी-छोटी मेजें थीं; मेजों पर चांदी की थालियां सूखे मेवों से भरी हुई थीं। हॉल में एक हल्की सी सुगंधित, कोमल हवा बह रही थी, जहां सादगीपूर्ण शालीनता और संयमित सुंदरता का बोलबाला था। हॉल वास्तव में बहुत बड़ा था; वह शालीनता से लेकिन स्थिर रूप से चल रही थी और ऐसा लग रहा था मानो हॉल और उसके कालीन वाले फर्श का कोई अंत नहीं है।

नौकरानी भी उसके साथ-साथ, बड़ी स्थिरता से, वज़ीर के थोड़ा दाहिनी ओर लेकिन उसके आगे चल रही थी। इसलिए उसे पूरा भरोसा था कि उसे पता होगा कि कहाँ रुकना है। उसने हॉल के बिल्कुल आखिरी छोर पर एक विशाल ब्रोकेड का पर्दा देखा। पर्दा छत से फर्श तक लटका हुआ था। पर्दे के पास पहुँचकर नौकरानी ने वज़ीर को बैठने का इशारा किया।
वह अभी तकिए के सहारे बैठी ही थी कि सीधी होकर और कुछ तनाव में बैठी थी, तभी पर्दा बीच से कुछ इंच हट गया। नौकरानी ने फुसफुसाकर उससे कहा, 'महान ईश्वर आ गए हैं। कृपया उन्हें सलाम करें।'
वज़ीर थोड़ी असहज होकर खड़ी हो गई, उसे डर था कि कहीं वह कोई प्रोटोकॉल न तोड़ दे। उसने झुककर तीन सलाम किए और पर्दे के बीच की खुली जगह की ओर मुंह किया, हालांकि उसे कुछ दिखाई नहीं दे रहा था।
‘महामहिम का भाग्य सदा उज्ज्वल रहे; उनके शुभ सिर पर सौभाग्य के पक्षी हुमा की छाया सदा बनी रहे।’
पर्दे के पीछे से उसने एक अत्यंत परिष्कृत, गंभीर और लगभग विस्मयकारी आवाज सुनी, 'वज़ीर खानम, आगा मिर्ज़ा तुराब अली एक निष्ठावान सेवक थे। हम सभी उनकी शहादत पर शोक व्यक्त करते हैं, लेकिन सर्वशक्तिमान ईश्वर की इच्छा सर्वोपरि है।'
'यह दासी उसके शोक में लगातार काले वस्त्र पहनती है और उसकी स्मृति को अपने सीने से लगाकर रहती है।'
मुझे पूरा यकीन है कि उन्होंने ईश्वर के शहीद का उच्च स्थान प्राप्त किया।
वज़ीर को लगा कि इस टिप्पणी में यह संकेत छिपा है कि दिवंगत आत्मा परम स्वर्ग में है, इसलिए उसे अब अपने वर्तमान और भविष्य पर ध्यान देना चाहिए। वह एक उपयुक्त उत्तर सोचने की कोशिश कर ही रही थी कि तभी आवाज़ फिर आई, "और मैं तुम्हारी सुरक्षा और कल्याण की भी कामना करता हूँ।"
‘आपकी समृद्धि और सौभाग्य दिन-प्रतिदिन और भी अधिक बढ़ता रहे। अपने प्रजाजनों के पालन-पोषण के प्रति आपका स्नेह और चिंता चारों दिशाओं में प्रसिद्ध है।’
‘तुम केवल हमारी प्रजा ही नहीं हो; तुम हमारी बहू भी हो। मैं कभी नहीं चाहूंगा कि तुम्हें अपने ससुराल में घर के सुख-सुविधाएं और सम्मान न मिलें।’
वज़ीर अब नवाब का इरादा स्पष्ट रूप से समझ गया था: अमीर-उन निसा और उसके साथियों की हर हाल में चलती रहेगी। वज़ीर को दूल्हे के पक्षकारों के स्वागत, विवाह समारोह और विवाह की

सभी पारंपरिक रस्मों का आयोजन ठीक उसी तरह करना चाहिए जैसा उसे आवश्यक लगे। कोई भी दखलंदाजी करने या बाधा उत्पन्न करने की हिम्मत नहीं करेगा।
वह अब भी पर्दे के पीछे किसी भौतिक उपस्थिति को नहीं पहचान पा रही थी, लेकिन अब कम से कम उसे आबनूस की कुर्सी के नक्काशीदार पैर दिखाई दे रहे थे। वह पूरी तरह खड़ी रही थी; अब, अपनी निगाहें अपने पैरों पर टिकाए हुए, उसने उत्तर दिया, 'यह दासी कभी भी ईश्वर की कृपा और उदारता का थोड़ा सा भी प्रतिफल नहीं दे पाएगी। अल्लाह आपके शासन को कयामत तक कायम रखे और आपके देश को सदा खुशहाल और समृद्ध बनाए रखे।'
वज़ीर ने तीन सलाम किए और पीछे हटने ही वाली थी कि तभी उसे नवाब की आवाज़ फिर सुनाई दी, "आप नवाब यूसुफ अली खान बहादुर, अल्लाह उन्हें सलामत रखे, को अपना संरक्षक मानिए। जब भी आपको कोई निवेदन करना हो, आप बेझिझक उनके माध्यम से कर सकती हैं। अब आप जा सकती हैं। अल्लाह आपकी रक्षा करे और आपकी मदद करे।"
'इस दासी के शरीर का प्रत्येक कण आपके लिए सदा प्रार्थना करेगा। यह दीन दासी अपनी अंतिम सांस तक आपकी स्तुति गाएगी। जनाब बीबी फातिमा और बारह निष्पापों का आशीर्वाद सदा आपके राज्य का हिस्सा बना रहे।'
शुभ किले से लौटते समय उनके मन में यह विचार आया कि उन्हें नवाब यूसुफ अली खान के माध्यम से आगा साहब की हवेली को अस्थायी रूप से उन्हें वापस सौंपने के लिए याचिका दायर करनी चाहिए। थोड़ा विचार करने के बाद उन्होंने ऐसा न करने का निर्णय लिया: यदि नवाब साहब चाहते तो वे उनकी विनती के बिना ही आदेश पारित कर देते। वास्तव में, मुझे जो मिला है वह काफी है, उन्होंने मन ही मन कहा।
राहत अफजा का विवाह निर्धारित तिथि पर धूमधाम और भव्यता के साथ संपन्न हुआ, जिसमें वज़ीर खानम के दर्जे के अनुरूप अतिथियों का जमावड़ा था। नवाब दरबार से औपचारिक पोशाक में सजे घुड़सवारों का एक दल उपस्थित था। नवाब यूसुफ अली खान ने दूल्हा-दुल्हन के लिए महंगे वस्त्र उपहार में भेजे। दुल्हन के दहेज के रूप में उन्होंने पीतल और तांबे के कई बर्तन भेजे। रामपुर के सम्राट, महज़ महज़ ने दूल्हे के स्वागत उपहार के रूप में दस सोने के मोहर भेजे। उन्होंने दूल्हे के सभी करीबी रिश्तेदारों के लिए भी वस्त्र भेजे। अमीर-उन निसा और नूर फातिमा भी उपस्थित थे, हालांकि उनकी उपस्थिति स्पष्ट रूप से छिपी नहीं थी।
विवाह की रस्मों के संपन्न होने के अगले दिन, राहत अफ़ज़ा को उनकी औपचारिक विदाई दी गई। पहली बार अपने पति के घर जाने से पहले दुल्हन के लिए स्वाभाविक रूप से होने वाली उदासी और आँसुओं से भरी उनकी आँखों में आँसू थे। नवाब मिर्ज़ा ने रोती हुई राहत अफ़ज़ा के सिर पर फूलों, जई और चाँदी के धागों से बनी पारंपरिक विवाह माला (सिहरा) बाँधी, क्योंकि दुल्हन के भाई के रूप में यह उनका कर्तव्य और अधिकार था। उन्होंने न केवल यह औपचारिक रस्म निभाई, बल्कि राहत अफ़ज़ा के लिए लिखी गई विदाई कविता (रुख़सती) में भी उन्हें अपनी बहन कहा। उनकी कविता में बहन के बिछड़ने का दुख, उनकी दयालुता, स्नेह और उनकी हर इच्छा पूरी करने की तत्परता का प्रेमपूर्ण आभार, और सुखद यादों की गुलाबी-बैंगनी रोशनी झलकती थी, क्योंकि वे राहत अफ़ज़ा की गोद में ही पले-बढ़े थे। हबीब-उन निसा और वज़ीर

खानम अपनी बेटी के गम को और न बढ़ाने के लिए रो नहीं रहे थे। वे चाहते थे कि खुलकर रोएँ और विलाप करें, लेकिन मजबूरी में चुप रहे, मानो दीवार पर बनी कोई तस्वीर हो। वे प्रबंधक और समस्या समाधानकर्ता थे और किसी भी तरह की भावना दिखाना उनके लिए संभव नहीं था।
चौथे दिन की रस्में, और उसके बाद की अन्य रस्में, पलक झपकते ही बीत गईं। अमीर-उन निसा और नूर फातिमा पहले की तरह ही उदास और मौन असहमति से भरे रहे। वज़ीर से उनके संबंध अच्छे नहीं थे, लेकिन अब वे शाह मुहम्मद आगा को अपने ध्यान और सेवा का केंद्र बनाने लगे थे। अब वह एक साल से थोड़ा अधिक उम्र का हो चुका था और अर्थपूर्ण शब्द बोलने लगा था। वह सरल शब्दों और वाक्यों को समझ सकता था और उन लोगों को पहचान सकता था जिन्हें वह अक्सर देखता था। नूर फातिमा उसे हज़ार बहाने बनाकर अपने कमरे में बुलाती और पूरे दिन अपने पास रखती। वह उसे खाना खिलाती, नहलाती, कपड़े बदलती और लोरी गाकर सुलाती, हर संभव तरीके से उसे उसकी माँ से दूर करने की पूरी कोशिश करती।
वज़ीर खानम के घर में जन्म के समय दूध बहुत कम था। वैसे भी, वह स्तनपान नहीं कराती थीं। अब जब उनके पास अच्छे खानदान की कोई दूध पिलाने वाली नौकरानी नहीं थी, तो उन्होंने शाह मुहम्मद आगा को अपनी क्षमता के अनुसार स्तनपान कराया, लेकिन बढ़ते-बढ़ते स्वस्थ बच्चे के लिए यह पर्याप्त नहीं था। इसलिए, जब शाह मुहम्मद आगा लगभग एक वर्ष के होने वाले थे, तब उन्हें दूध के साथ-साथ नरम, स्वादिष्ट और हल्का भोजन भी देना पड़ा। ज़ाहिर है, इसमें कुछ भी गुप्त नहीं था, लेकिन इससे अमीरुन निसा और नूर फातिमा को बच्चे को बाहर का खाना खिलाकर उसकी माँ पर निर्भरता कम करने का एक अच्छा बहाना मिल गया। उनका मानना था कि इससे बच्चे की माँ पर निर्भरता कम हो जाएगी और इस तरह माँ-बच्चे के बीच दूरी पैदा करने में मदद मिलेगी।
वज़ीर यह सब भली-भांति जानती थी, लेकिन वह अपने ससुराल वालों के साथ रहते हुए उनसे खुलेआम झगड़ा नहीं करना चाहती थी। राहत अफ़ज़ा का विवाह बिल्कुल अलग मामला था। वह नवाब का समर्थन मांगना अपने लिए उचित नहीं समझती थी, बल्कि कुछ हद तक अनुचित भी समझती थी, क्योंकि यह मामला बच्चे की अभिरक्षा या गोद लेने से संबंधित नहीं था।
वह उचित समय की प्रतीक्षा कर रही थी। रामपुर से हमेशा के लिए निकलकर दिल्ली में बस जाना उसके लिए कोई समस्या नहीं थी, लेकिन शाह मोहम्मद आगा का अपनी दादी और बुआ से घनिष्ठ संबंध उसे चिंतित कर रहा था। उनसे अचानक बिछड़ने से बच्चे के स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ सकता था। यह निश्चित था कि शाह मोहम्मद आगा को दिल्ली में कई महीनों तक उनकी कमी खलेगी। उसे यह भी डर था कि राहत अफजा की देखभाल उपलब्ध न होने के कारण वह बच्चे के पालन-पोषण की जिम्मेदारी ठीक से नहीं निभा पाएगी।
नवाब मिर्ज़ा इन बातों से अनजान नहीं थे। वे जानते थे कि उनकी माँ का आंतरिक जीवन समस्याओं और अनेक जटिलताओं से भरा हुआ था; इन्हें कोई देख नहीं पाता था, लेकिन वे जानते थे कि उनकी बेचैनी और अशांति ऐसे अजगरों की तरह थी जो उनके दिमाग में विषैली गैसें उगल रहे हों। उनकी माँ के चेहरे पर अब वह परिपूर्ण यौवन की चमक नहीं थी जो शाह मुहम्मद आगा के जन्म से ठीक पहले उन पर फैली हुई थी, और न ही वह समग्र सुख-शांति का भाव था

जो आगा मिर्ज़ा तुराब अली के स्नेह, आग्रह और अटूट, विनम्र व्यवहार से उनके व्यक्तित्व में उत्पन्न हुआ था।

नवाब मिर्ज़ा देख सकते थे, और महसूस भी कर सकते थे, कि उनकी माँ, जो हमेशा अपनी उम्र से कम उम्र की दिखती थीं, अब अपनी उम्र से ज़्यादा बूढ़ी लग रही थीं। ऐसा नहीं था कि वह बूढ़ी हो रही थीं, या सुबह की उदासी उनके चेहरे पर छाने लगी थी, बल्कि यह निश्चित था कि उनके मन को खाए जा रहे तनाव ने उन्हें हर समय थका हुआ और कमजोर महसूस कराया था।

नवाब मिर्ज़ा ने अपनी माँ को मज़बूत और बेहतर महसूस कराने के लिए काफ़ी समय और सोच-विचार किया। एक बात उन्हें बिल्कुल स्पष्ट लग रही थी: रामपुर में जीवन उनकी माँ को वह मानसिक शांति नहीं लौटा सकता था जो पिछले छह महीनों में उनसे छिन गई थी। वास्तव में, मानसिक शांति तो दूर की बात थी; रामपुर शहर में अब उन्हें बुनियादी सुरक्षा और भावनात्मक मज़बूती का एहसास भी नहीं हो सकता था। लेकिन, ज़ाहिर सी बात है—कम से कम उन्हें तो यही लग रहा था—उनकी माँ अपनी समस्याओं को दूर करने या उनका समाधान करने के मूड में नहीं थीं। हाँ, एक बार उन्होंने रामपुर छोड़ने की इच्छा ज़रूर जताई थी, लेकिन वह क्षणिक मनोदशा थी; उन्होंने फिर कभी इस विषय पर बात नहीं की।

कुछ देर सोचने के बाद नवाब मिर्ज़ा ने अम्मा जान को इसमें शामिल न करते हुए मंझली खाला से इस मामले पर बात करने का फैसला किया। वह अपनी मां के घर यह जानने गए कि वहां का माहौल कैसा है, लेकिन वहां जाकर उन्हें पता चला कि हालात पहले से भी बदतर थे: उनकी मां ने कल दोपहर के भोजन के बाद से कुछ नहीं खाया था; मुहम्मद आगा कल रात से उनके पास नहीं आए थे, उनकी चाची ने उन्हें खाना खिलाया, गीत गाए और अपने पास सुलाया, लेकिन उनकी मां का ज़िक्र तक नहीं किया। मुहम्मद आगा ने एक बार भी अपनी मां के पास ले जाने की गुहार नहीं लगाई। वज़ीर ने नवाब मिर्ज़ा के सामने आंसू नहीं बहाए, लेकिन उनकी आंखों की लाली और चेहरे की उदासी से साफ पता चल रहा था कि वह रोई थीं।

‘अम्मा जान, ये लोग मुहम्मद आगा को आपसे छीनने की योजना बना रहे हैं।’

वज़ीर की आँखों में आँसू भर आए। 'ऐसा लगता है कि मेरी किस्मत में बच्चों को जन्म देना और फिर उन्हें मुझसे छीन लिया जाना लिखा है।'

नहीं। अम्मा जान, कृपया। मैं भी तो आपसे ही उत्पन्न हुई हूँ, है ना? कोई भी मुझे आपसे अलग नहीं कर सकता।

वज़ीर ने अपनी आँखें कसकर बंद कर लीं, आँसू रोकने की पूरी कोशिश की, लेकिन फिर भी आँसू बह निकले। उसने अपना चेहरा दुपट्टे से ढक लिया और बोली, “माँ, वो तो अलग ही दिन थे। सब लोग फिरंगी से डरते थे, इसलिए किसी की हिम्मत नहीं होती थी आपको अपने साथ ले जाने की। कहा जाता था कि कंपनी के अधिकारी आपको जान से मारना चाहते थे। लोहारू के लोग तो आपके बारे में सुनना भी पसंद नहीं करते थे।”

ठीक है, मैं तुम्हारी ये सारी बातें मानता हूँ। लेकिन फिर भी, इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता: मैं तुम्हारा हूँ, और हमेशा तुम्हारा ही रहूँगा। जब तक तुम्हारी कृपा मुझ पर बनी रहेगी, मैं कामयाबी हासिल करूँगा और दुनिया के सामने खुद को ऐसे व्यक्ति के रूप में साबित करूँगा

जिसने शहीद नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान के खून को अपने अंदर व्यर्थ नहीं जाने दिया। मैं तुम्हारे और दुनिया की हर मुसीबत के बीच चीन की महान दीवार की तरह खड़ा रहूँगा। तुम्हें किसी बात का डर नहीं, किसी बात की चिंता नहीं।

नवाब मिर्ज़ा ने पहली बार अपनी माँ से इतनी स्पष्टवादिता और आत्मविश्वास से बात की थी। उनका मन प्रसन्न हो उठा और हृदय गर्व से फूल गया। उनके हृदय में कृतज्ञता और सांत्वना की एक क्षणिक लौ जल उठी, लेकिन उनके अंतिम शब्द उनके भीतर एक प्रकाशस्तंभ की तरह चमक उठे। उन्होंने गर्व से अपना सिर उठाया, लेकिन अपने बेटे की ओर कुछ विनती भरी निगाहों से देखा। 'शहीद आगा साहब की विरासत से मुझे कुछ नहीं चाहिए। लेकिन उनकी स्मृति, जिसे मैंने अपने गर्भ में पाला-पोसा, अपने गर्भ से बाहर लाया, और जिसकी मैंने एक नए खिले हुए गुलाब की तरह देखभाल की: मैं इसे क्यों छोड़ूँ, और ऐसा करने की हिम्मत कैसे जुटाऊँ? नवाब मिर्ज़ा, आप मुझसे क्या चाहते हैं?'

नवाब मिर्ज़ा को एहसास हुआ कि उन्होंने अपने निर्णायक शब्द बोलने में शायद थोड़ी जल्दबाजी कर दी थी। 'कुछ नहीं, मुझे कुछ नहीं चाहिए, अम्मा जान।' उन्होंने संकोच के साथ कहा, उस आत्मविश्वास के साथ नहीं जो एक मिनट पहले उनमें था। 'मैं आपकी मन की शांति चाहता हूँ। बस इतना ही। मैं आपको दुखी और शोकाकुल नहीं देख सकता।'

वज़ीर ने आह भरी। 'ऐसा लगता है कि अल्लाह मियां ने मुझे उस समय बनाया जब केवल दुर्भाग्यशाली और बदनसीब लोगों को ही बनाया जा रहा था।'

‘हर चीज़ के दो पहलू होते हैं, महोदया,’ नवाब मिर्ज़ा ने कुछ हल्के-फुल्के अंदाज़ और प्यार भरी शरारत का प्रयास किया। ‘आपको सौभाग्य तो नहीं मिला, लेकिन ज्ञान और सौंदर्य आपको उपहार स्वरूप मिले हैं!’

‘ऐसी बुद्धिमत्ता होने से बेहतर है मूर्ख होना, और ऐसी सुंदरता का नरक में जाना!’ उसकी सौम्य मुस्कान ने उसके शब्दों से जोश और तीव्रता छीन ली, लेकिन नवाब मिर्ज़ा समझ गया कि वह हर शब्द दिल से कह रही थी। ‘काश मैं अपने दिल के टुकड़ों को अपने सीने से न लगा पाती; काश मैं उस व्यक्ति के सहारे से वंचित हो जाती जिसने मुझे महत्व दिया। नवाब मिर्ज़ा, तुम मुझे बच्ची समझते हो, है ना?’

नवाब मिर्ज़ा के पास इसका कोई जवाब नहीं था। एक पल की चुप्पी के बाद, उन्होंने दूसरा तरीका आजमाया। ‘मैं अभी मंझली खाला के सामने पेश होने जा रहा था। अम्मा जान, आप भी क्यों नहीं आतीं? दरअसल, वह आपको याद कर रही थीं। क्या मैं अभी पालकी मंगवा लूँ?’

‘तो वहां और क्या नया होगा? मुहम्मद आगा तो यहां हैं; क्या मुझे उन्हें पीछे छोड़ देना चाहिए?’

'इसमें कोई नुकसान नहीं है - वास्तव में, यहां के संकीर्ण वातावरण से दूर जाना आपके लिए बहुत फायदेमंद साबित हो सकता है।'

‘जो चला गया, वह मुझे यहाँ अकेला छोड़ गया।’ वज़ीर का लहजा कड़वा था, मानो आगा मिर्ज़ा तुराब अली ने ही उसकी मृत्यु का कारण बनाया हो।

‘लेकिन आप जेल में नहीं हैं,’ नवाब मिर्जा ने थोड़ी तीखी प्रतिक्रिया दी।

वज़ीर ने कुछ नहीं कहा, बल्कि उसे कुछ रहस्यमयी अंदाज़ में फटकार भरी नज़रों से देखा, मानो

कह रहा हो, पर सीधे-सीधे यह कि हर किसी के लिए सब कुछ समझना मुमकिन नहीं है। नवाब मिर्ज़ा अंदर से हिल गया। वह कुछ उपयुक्त शब्द ढूंढने की कोशिश कर रहा था, तभी वज़ीर ने रूखेपन से कहा, 'आप मंझली बाजी से बात कर सकते हैं, लेकिन यह उम्मीद न करें कि मैं आपकी या मंझली बाजी की हर बात को मानने या उनके सुझाव देने के लिए बाध्य हूँ।'
नवाब मिर्ज़ा मन ही मन उलझन में पड़ गया। क्या अम्मा जान ने मेरे मन की बात जान ली है? क्या उन्हें किसी तरह पता चल गया है कि मैं उनसे क्या चाहता हूँ? लेकिन मुझे कभी न कभी तो खुलकर बोलना ही होगा। तो अभी क्यों नहीं? पर पहले मुझे खाला जान से सलाह लेनी चाहिए। या फिर अम्मा जान को कम से कम यह घर छोड़कर खाला जान के घर हमारे साथ रहना चाहिए? उन्होंने एक बार इसका ज़िक्र किया था... लेकिन क्या अम्मा जान हमारे छोटे भाई को पीछे छोड़ने के लिए राज़ी होंगी? मुझे लगता है कि उनके मन में जो भी दुविधा है, वह सिर्फ़ बच्चे की वजह से है। दादी और बुआ उस छोटे बच्चे को बहला-फुसलाकर अपना बच्चा बनाना चाहती हैं।

वह अपने विचारों में डूबा हुआ था कि वज़ीर ने आँसू और फटकार से लगभग काँपती हुई आवाज़ में उसे टोकते हुए कहा, 'नवाब मिर्ज़ा, आप जानते हैं कि मैं आपकी कही हर बात को अपने सिर और आँखों पर डालता हूँ। लेकिन कृपया यह मत सोचिए कि आप एक माँ की अपने बच्चे के लिए भावनाओं और उसे खोने के डर से होने वाले दर्द को समझ सकते हैं।'
'भगवान न करे! मैं कभी इतना दुस्साहसी नहीं हो सकता।'
ऐसा लगा मानो वज़ीर ने उसकी बात सुनी ही न हो। 'तुम मेरे दिल का एक टुकड़ा हो, लेकिन तुम सबसे पहले और अंत में एक पुरुष हो। पुरुषों का समुदाय मानता है कि दुनिया के सारे रहस्य, दिलों के सारे गुप्त कोने पुरुषों के लिए सुलभ हैं। और अगर कुछ सुलभ न भी हों, तो भी पुरुष मानते हैं कि उन्हें हर किसी और हर चीज़ के लिए निर्णय लेने की शक्ति प्राप्त है। पुरुष मानते हैं कि महिलाएं स्वभाव, पसंद और नापसंद में वैसी ही होती हैं जैसा वे उन्हें समझते हैं, और वे जानते हैं कि महिलाओं के बारे में उनकी मान्यताएं उनकी अपनी बेहतर समझ और समस्या सुलझाने की श्रेष्ठ क्षमता पर आधारित हैं।'
वह एक पल के लिए चुप हो गई, मानो उसे एहसास हो गया हो कि अब वह बातचीत के मूड में नहीं है। उसने आगे कहा: 'और अगर महिलाएं वैसी नहीं हैं जैसा पुरुष उन्हें मानते हैं या देखना चाहते हैं, तो गलती महिलाओं की ही है। उसे वैसा होना चाहिए था जैसा पुरुष उसे मानते हैं।'
नवाब मिर्ज़ा ने अब हिम्मत जुटाकर बीच में टोकना शुरू किया। उन्होंने धीमी लेकिन स्पष्ट आवाज़ में कहा, 'अम्मा जान, मुझे अल्लाह ने मर्द बनाया; शरीयत और रीति-रिवाज ने मुझे कुछ बातें सिखाईं। फिर भी, इन सबके विपरीत, मैं हमेशा समझता और मानता था कि मेरी माँ के शब्द, मेरी माँ के विश्वास, मेरी माँ के फैसले, सभी पुरुषों से श्रेष्ठ हैं। जब भी मंझली खाला या जहांगीर आंटी मुझसे आपके बारे में बात करती थीं... मेरा मतलब है आपके... आगा साहब के प्रस्ताव के बारे में, मैं हमेशा यही कहता था कि मेरी माँ का फैसला, चाहे जो भी हो, परिभाषा के अनुसार सही था।'

“बच्चे मियां, मेरे प्रति आपके शुभ प्रेम के कारण ही आप ऐसा सोचते हैं, परन्तु रीति-रिवाज, शरिया, या उसकी गलत व्याख्या, और उन गलत व्याख्याओं के अनुसार अडिग दृढ़ता और लापरवाही से कार्य करने वाले लोग हमारे बीच सर्वत्र मौजूद हैं। कृपया नाराज न हों; आप भी ऐसी धारणाओं से पूरी तरह मुक्त नहीं हैं। आख़िरकार—”

‘माफ़ कीजिए,’ नवाब मिर्ज़ा ने कुछ जल्दबाज़ी में बीच में ही टोकते हुए कहा। ‘मुझे आपको बीच में टोकना नहीं चाहिए, अम्मा जान…’

नहीं! मैं आपको बीच में ही रोककर पूछता हूँ: आपने यह निष्कर्ष कैसे निकाला कि मेरी कठिनाइयों को हल करना आपका कर्तव्य था?

नवाब मिर्ज़ा पूरी तरह से स्तब्ध थे; उनके विचार अस्त-व्यस्त थे, वे कुछ बोल नहीं पा रहे थे। उन्होंने बोलने के लिए मुंह खोला, लेकिन शब्द नहीं निकले। उन्होंने हथेलियों और माथे से पसीना पोंछा। फिर वे रुक-रुक कर बोले, 'अच्छा... असल में... मैं... मुझे खेद है कि मैंने आपको ठीक से नहीं समझा। क्या मैं यह समझ रहा हूँ कि किसी बेटे या बहन का यह कर्तव्य नहीं है कि वह ज़रूरत के समय अपनी माँ या बहन की मदद करे?'

नहीं, मुद्दा यह नहीं है। बेटे को माँ को अक्षम क्यों मानना चाहिए? यह क्यों माना जाना चाहिए कि चूंकि वह एक महिला है, इसलिए जरूरत पड़ने पर केवल एक पुरुष ही उसकी मदद करने का हकदार है?

नवाब मिर्ज़ा लगभग सदमे में थे। उन्होंने कभी इस मामले को इस नज़रिए से नहीं देखा था, कभी सोचा भी नहीं था कि इसमें कोई समस्या हो सकती है। आख़िर एक बेटे से क्या उम्मीद की जाती है? जब माँ का जीवन संकट में हो तो बेटे के अलावा और कौन उसका हाथ थाम सकता है?

वज़ीर ने शायद उसके मन की बात पढ़ ली थी। उसने निश्चित रूप से इस अप्रत्याशित स्थिति को लेकर उसकी उलझन को भांप लिया था। उसने बड़े सधे हुए अंदाज़ में बात की, मानो कोई शिक्षिका किसी होशियार छात्र को कोई कठिन प्रमेय समझा रही हो। 'अब इस समस्या को इस तरह समझो। अगर तुम्हारी माँ की जगह तुम्हारे पिता किसी विकट परिस्थिति में होते, तो क्या तुम सहज रूप से उनकी मदद के लिए हाथ बढ़ाते, यह मानते हुए कि अगर वे लड़खड़ा जाएँ तो उनका हाथ थामना तुम्हारा कर्तव्य है?'

उनकी प्रतिक्रिया पूरी तरह सहज थी, जो उनके जन्मजात विश्वासों से प्रेरित थी। 'नहीं, बिलकुल नहीं। एक आदमी पूरी तरह सक्षम है... निपटने में सक्षम है...'

उनकी आवाज़ धीमी पड़ गई। उन्होंने अपना मुंह कसकर बंद कर लिया, मानो जबड़े भींच लिए हों। हे भगवान, मुझे क्षमा करें, मैं क्या कह रहा हूँ? क्या अम्मा जान यही बात नहीं कह रही थीं? पुरुष एक स्वाभाविक पदानुक्रम में विश्वास करते हैं, खुद को महिलाओं से ऊपर मानते हैं। पुरुष मानते हैं कि दुनिया का कामकाज उन्हीं के हाथ में है, और सिर्फ उन्हीं के हाथ में।

‘तो तुमने देखा, बच्चे मियां,’ वज़ीर ने उदास होकर कहा। ‘प्यार से प्रेरित होकर तुमने मुझे योग्य और श्रेष्ठ भी घोषित कर दिया। लेकिन तुम्हारा विवेक कुछ और ही कहता है।’

‘लेकिन… लेकिन शरिया भी यही सिखाती है।’ नवाब मिर्ज़ा अपने विरोधाभासी रुख को सही ठहराने में असमर्थ महसूस कर रहे थे। ‘हमारी किताबें यही कहती हैं। हमारे बड़े-बुजुर्ग हमें यही

सिखाते हैं।'
'अगर पुरुषों ने नहीं तो वो किताबें किसने लिखीं? आपके काज़ी, आपके मुफ़्ती, आपके बड़े-बुज़ुर्ग, अगर पुरुष नहीं तो कौन हैं? मुझे नहीं पता शरीयत क्या कहती है, लेकिन मुझे बाबा फरीद की बीबी फातिमा सैम के बारे में कही बात याद है, जो दिल्ली में बाबा निज़ामुद्दीन के मज़ार से ज़्यादा दूर नहीं दफ़न हैं। किसी ने बाबा फरीद से पूछा कि वे बीबी फातिमा सैम का इतना आदर क्यों करते हैं, क्या वो महज़ एक औरत नहीं थीं? बाबा साहब ने कहा, "जब जंगल में कोई बाघ आता है, तो कोई नहीं पूछता कि वो नर है या मादा।" मैं आपसे पूछता हूँ, क्या महान सूफी राबिया बसरी महज़ एक औरत नहीं थीं?'

लेकिन वह वली-अल्लाह थीं, ईश्वर की एक सर्वमान्य मित्र थीं।
'हां, और मैं संसार की एक नास्तिक स्त्री हूं; मेरे सिर का हर बाल पाप से भरा हुआ है।'
'अम्मा जान, कृपया। भगवान के लिए, मेरे शब्दों और मेरे अर्थों को इस तरह तोड़-मरोड़कर पेश न करें, मैं आपसे विनती करता हूँ।' नवाब मिर्जा सदमे में और रोते हुए लग रहे थे।
वज़ीर में बैठी माँ तुरंत उत्तेजित हो गई। वह आँखों में पश्चाताप के आँसू लिए खड़ी हो गई और अपने बेटे पर आने वाली सारी विपत्ति को अपने ऊपर लेते हुए रोते हुए बोली, 'नवाब मिर्ज़ा, मुझे सचमुच बहुत अफ़सोस है। मेरा इरादा तुम्हें नीचा दिखाने का बिल्कुल नहीं था। मैं मरना पसंद करूँगी, लेकिन तुम्हें मुझसे नाराज़ नहीं होने दूँगी।'
नवाब मिर्ज़ा की आँखों में आँसू आ गए। 'अम्मा जान, मैं आपको छोटी से छोटी खुशी देने के लिए खुशी-खुशी अपनी जान दे दूंगा।'
'दुखी मत होइए। कुछ ही दिनों में सब ठीक हो जाएगा। अब आप अपनी मांझली खाला के पास जाइए; उन्हें बता दीजिएगा कि मैं जल्द ही उनसे मिलने आऊंगा।'
नवाब मिर्ज़ा अपनी माँ के सामने से बड़ी अनिच्छा से उठीं, उनके मन में अनेक शंकाएँ और अनिश्चितताएँ थीं। वज़ीर ने उनका चेहरा बड़े ध्यान से धोया और उसे अच्छी तरह मलकर रंगत लौटाने की कोशिश की, साथ ही उनके बालों को संवारा। उन्होंने साफ़-सुथरे सफ़ेद कपड़े पहने, हीरे की बालियाँ और उंगलियों में दो अंगूठियाँ पहनीं। संक्षेप में, विधवा होने के बाद पहली बार उन्होंने सलीके से दिखने का सचेत प्रयास किया। फिर उन्होंने हबीबा को अपनी चाची को यह सूचना देने के लिए भेजा कि खानम साहब मिलने आ रही हैं।
अमीर-उन निसा को वज़ीर की पहल की उम्मीद नहीं थी, इसलिए कुछ पलों के लिए उनकी घबराहट बढ़ गई। अब उन्हें पता चल गया था कि वज़ीर का राजमहल में काफी दबदबा था। वज़ीर के विधवा होने के शुरुआती दिनों में, उन्हें डर था कि कहीं वह अपने प्रभाव का इस्तेमाल अपने ससुराल वालों के लिए नुकसानदायक न कर दें; कम से कम, शाह मुहम्मद आगा पर अपना अधिकार जताने के लिए कड़े कदम न उठा लें। अमीर-उन निसा और नूर फातिमा ने ठान लिया था कि वे बच्चे को नहीं छोड़ेंगी। वे हर संभव कोशिश कर रही थीं कि मुहम्मद आगा का स्नेह और उनकी मां पर निर्भरता उनकी ओर मोड़ दें। वे राजमहल की कुछ महिलाओं से नवाब साहब को यह बताने की कोशिश कर रही थीं कि वज़ीर बच्चे को सच्चे शिया धर्म में पालने में असमर्थ हैं।

उनके संदेश को सकारात्मक रूप से लिया जा रहा था, इसके कुछ अस्पष्ट संकेत मिल रहे थे। उन्हें पूरा विश्वास था कि अंततः सफलता उन्हीं की होगी।

वज़ीर अमीर-उन निसा के कमरे में दाखिल हुए तो देखा कि उनका छोटा बेटा और नूर फातिमा साथ में खेल रहे थे। नूर फातिमा, यह जताने की कोशिश कर रही थीं कि मुहम्मद आगा अभी-अभी नींद से जागे हैं, और धीरे-धीरे उसकी पीठ थपथपा रही थीं, उसका सिर उनकी गोद में था। लेकिन बच्चा, जो अभी भी खेलने में मग्न था, बार-बार अपने आस-पास बिखरे खिलौनों को पकड़ने की कोशिश कर रहा था। वज़ीर तुरंत उसे गोद में उठाने के लिए आगे बढ़े; बच्चा खुशी से खिलखिला उठा, लेकिन उठा नहीं, और न ही अपनी माँ की बाहों में कूदने की कोशिश की। उसकी दिलचस्पी खिलौनों में थी, महिलाओं में नहीं। नूर फातिमा उसकी पीठ थपथपाती रहीं।
'शाह साहब, कृपया। आप थोड़ी देर और क्यों नहीं सो लेते? देखिए, सूरज अभी आसमान में ज्यादा दूर नहीं है, और नन्ही सी नींद आपकी आँखों में बैठी है; वह कहती है, "ओह, अगर ये प्यारी पलकें थोड़ी देर के लिए बंद हो जाएँ, तो मैं भी थोड़ी देर आराम कर लूँगी।"'
वज़ीर ने गौर किया कि बच्चा नूर फातिमा की मीठी बातों पर ध्यान नहीं दे रहा था और बार-बार खिलौनों की ओर भागने की कोशिश कर रहा था। 'वाह! मुझे नन्हे बच्चे को लुभाने और बहलाने के आपके नेक प्रयास पसंद आए!'
नूर फातिमा ने जवाब दिया, 'हाँ, बिल्कुल। कुछ ऐसी भी हैं जो ताकतवर पुरुषों को बहला-फुसलाकर अपने जाल में फंसा लेती हैं; कुछ ऐसी भी हैं जो नन्हे बच्चे का ध्यान भटकाने की कोशिश करती हैं।'
'निस्संदेह, कुछ बीबीएं किसी को लुभाने के लिए आशा के जाल बुनने में अपना पूरा जीवन व्यतीत कर देती हैं। लेकिन कोई आता नहीं।'
हाँ, जो लोग अपनी प्रतिष्ठा से प्रेम करते हैं, वे स्वयं को प्रभु के प्रति समर्पित कर देते हैं। जो लोग धन-संपत्ति से प्रेम करते हैं, उनकी जवानी लजीज दावतों से भरपूर होकर फलती-फूलती है।
वज़ीर ने एक प्रसिद्ध फ़ारसी कहावत उद्धृत करते हुए कहा, 'पवित्रता की परीक्षा तब होती है जब स्त्री के शरीर को ढकने के लिए चादर न हो। नूर फ़ातिमा, तुम्हारी इस छोटी सी अंधेरी कोठरी के बाहर भी एक दुनिया है। तुम्हारे पुराने घिसे-पिटे स्त्री-सुलभ प्रलोभन वहाँ काम नहीं आएंगे। लेकिन इन सब बातों को छोड़ दें, अगर तुमने मेरे बच्चे पर अपना जादू चला दिया है, तो उसे मुझे वापस दे दो ताकि बेचारा बच्चा जान सके कि माँ नाम की भी कोई चीज़ होती है।'
अब अमीर-उन निसा आगे बढ़ीं, उन्होंने नन्हे लड़के के सिर पर हाथ रखा और रोते हुए बोलीं, 'ईश्वर हमें इस स्त्री की ज़ुबान से बचाए! यह शब्दों को ऐसे घुमाती है जैसे विधवा चरखा धागे कातता है। सुनो, तुम। तुम भले ही इस बच्चे की माँ हो, लेकिन इसकी ज़िम्मेदारी हमारी है। हम ही इसके पालन-पोषण और देखभाल करने वाले हैं। यह हमारा वारिस और हमारा उत्तराधिकारी है।'
"सचमुच! केवल ईश्वर ही निष्कलंक है। आज तक हमें यही सिखाया गया है कि बच्चे का पालन-पोषण उसके माता-पिता ही करते हैं और बच्चा अपने माता-पिता से ही विरासत पाता है। अब

एक नई घटना सामने आई है: एक बूढ़ी औरत पैगंबर की पत्नी होने का दावा करती है और कहती है कि सभी अनाथ बच्चों की ज़िम्मेदारी उसी की है! जिसके पास खाने-पीने को कुछ नहीं है, वो मेरे उस बच्चे को छीनने की कोशिश कर रही है जिसे मैंने इस दुनिया में लाया और अपने खून से पाला-पोसा। क्या आपने नहीं सुना, महोदया: हाथी एक कस्बे से दूसरे कस्बे जाता है, लेकिन उसकी पहचान उसके मालिक की प्रसिद्धि से होती है?"

'छोटी, विनम्रता से बोलना सीखो। यह दिल्ली नहीं है; यह रामपुर है। तुम्हारे कसे हुए बालों को खोलने में एक पल भी नहीं लगेगा।'

मेरी कुंजी मेरे अल्लाह के पास है, और मेरे नवाब के हाथों में है।

'अरे सच में? प्यारी महिला, वो तुम्हारा नवाब कैसे है? तुम, गलत धर्म की, गलत समुदाय की महिला, जो भी तुम्हारे सामने कुछ सिक्के खनकते थे, तुम तुरंत उसे अपने आप को सौंप देती थी।'

'लाठी-पत्थर, प्यारी चाची। मैं अपनी जुबान के एक झटके से उन्हें रुई के गुच्छों में बदल दूंगी और उड़ा दूंगी। आपकी अश्लील, गंदी भाषा से मेरे बच्चे की कस्टडी आपको नहीं मिलेगी।'

इसलिए मुझे उसे आपकी दया पर छोड़ देना चाहिए ताकि आप उसे उसके पैतृक धर्म से निकालकर दोनों लोकों में बर्बाद कर दें। यही तो आपकी इच्छा है, है ना?

एक माँ का विश्वास केवल अपने बच्चे के प्रति उसका मातृ प्रेम होता है। और न्यायप्रिय शासक का विश्वास अपनी प्रजा के साथ न्याय करना होता है। भ्रम में मत रहो; क्या तुम सोचते हो कि चूंकि पूज्य नवाब साहब शिया धर्म के अनुयायी हैं, तो वे माँ और बच्चे को अलग कर देंगे, सिर्फ इसलिए कि बच्चे के पिता का भी वही धर्म है? तुमने राहत अफजा के अनुभव से कुछ नहीं सीखा।

ऊँची आवाज़ों से परेशान होकर शाह मुहम्मद आगा की नींद और खेल दोनों में ही रुचि खत्म हो गई। वह अपनी माँ के पास रेंगने की कोशिश कर रहा था। वज़ीर ने अचानक चिल्लाकर कहा, 'अरे, ध्यान रखो! शाह साहब ठोकर खाकर गिर सकते हैं!' माँ ने बच्चे को गोद में उठाया और कहा, 'मैं तुम्हारी असली मंशा अच्छी तरह जानती हूँ। तुम यह घर और मेरे शहीद पति की बाकी सारी संपत्ति चाहते हो। यह ज़्यादा तो नहीं है, लेकिन तुम जैसे दान के भूखे लोगों की नज़रों में तो पूरा राज्य है। मेरे जन्नत में रहने वाले पति ने तुम्हारे सारे बोझ उठाए।'

'और तुम्हारे पास क्या है, छोटी बेगम? क्या तुम भी एक और कंगाल नहीं हो, जो पूरी तरह से उसकी विरासत पर निर्भर हो?'

'मेरे पास कुछ नहीं है। लेकिन मैं अपने सम्मान को बहुत महत्व देता हूं और अपनी गरिमा को संजोकर रखता हूं।'

'तो क्या यही आपकी गरिमा है? आप यहीं रहेंगे और हमारे लिए लगातार परेशानी बने रहेंगे?'

वज़ीर ने व्यंग्य भरी मुस्कान के साथ अपनी श्रेष्ठता का भाव दिखाते हुए कहा, "तो अब तुम्हारा राज़ खुल गया! तुम तो मानो 'सास मिलने गई है, भूखी बहू पेट भरकर खा रही होगी' वाली कहावत का जीता-जागता उदाहरण हो।"

नूर फातिमा उठीं और वज़ीर की बाहों से बच्चे को लेने की कोशिश की। 'चुप रहो। हमारी एकमात्र चिंता इस मासूम बच्चे की है।'

वज़ीर ने मुहम्मद आगा को और भी कसकर अपने सीने से लगा लिया; फिर मुस्कुराते हुए बोली, 'भाभी, शायद आप ध्यान नहीं दे रही थीं। आपकी प्यारी चाची को सिर्फ मेरी ही चिंता है। वह बस यही चाहती हैं कि मैं अपना घर उन्हें सौंप दूं और जंगल में जाकर साधु की तरह जीवन व्यतीत करूं।'

नूर फातिमा ने तीखी आवाज में कहा, 'छोटी बेगम, तुम्हारा दिल बुराइयों का गड्ढा है, ठीक वैसे ही जैसे तुम्हारा नाम घोर बदनामी का पर्याय है।'

'नूर बीबी, अपने कान खोलो और जीवन की सच्चाई को सुनो। उस बूढ़ी औरत की किस्मत उस पर मेहरबान हुई जब उसके भतीजे को सर्वशक्तिमान ने स्वर्ग में बुला लिया। अब वह उस बेचारे आदमी की विरासत की इकलौती मालकिन बनने का सपना देख रही है, भले ही इसका मतलब उसकी पत्नी या विधवा बहन को वंचित करना ही क्यों न हो।'

'आप हमारे बीच फूट डालना चाहते हैं। ऐसा नहीं होने वाला। नूर फातिमा आपकी मानसिकता और सामाजिक क्षमता से भलीभांति परिचित हैं।'

'लेकिन बेचारी, उसे तुम्हारी मानसिकता और सामाजिक क्षमता का अंदाजा नहीं है।' वज़ीर ने तिरस्कार भरे लहजे में कहा। 'खैर, छोड़ो ये सब। काम की बात करो। अब ये बिल्कुल साफ है कि तुम्हें मुहम्मद आगा में कोई खास दिलचस्पी नहीं है।'

'क्यों नहीं? क्या हमें उसे उसके पूर्वजों की परंपराओं और मान्यताओं से वंचित कर देना चाहिए और इस प्रकार ईश्वर की दृष्टि में पापी बन जाना चाहिए?'

'मान्यताएं एक जैसी हैं। क्या इस्लाम हमारा धर्म भी नहीं है?'

नूर फातिमा ने फिर से बीच में बोलने की कोशिश की। 'लेकिन...'

'नूर फातिमा, थोड़ा सब्र रखिए। मुझे अपनी बात पूरी करने दीजिए,' वज़ीर ने गंभीरता से कहा। 'मैं कहता हूँ, धर्म एक ही है। बस तौर-तरीकों और रास्तों का फ़र्क है। इसलिए मैं यह ऐलान करता हूँ और यह प्रतिज्ञा करता हूँ तथा आपके धर्म निर्माता, इमाम जाफ़र सादिक़, जो एक महान इमाम हैं, को साक्षी मानकर कहता हूँ: शाह साहब का पालन-पोषण उनके पिता के तौर-तरीकों और रास्तों पर ही होगा।'

चाची और दादी सदमे से अवाक रह गईं। कुछ देर बाद, अमीर-उन निसा ने हारने वाले का तर्क दिया, 'क्या आपको अपनी प्रतिज्ञा तोड़ देनी चाहिए?'

पश्चाताप करो, कृपया। ऐसे शब्द मत बोलो! क्या मुझे इमाम साहब (उन पर शांति हो) को गवाह बनाकर अपने वचन से मुकर जाना चाहिए? क्या मैं नरक की आग का पात्र बनना चाहता हूँ?

'नहीं, हमें इससे कुछ अधिक चाहिए, शब्दों से परे कुछ।' अमीर-उन निसा सोच में पड़ गए। 'और उस दूसरे मामले के बारे में आपका क्या कहना है?'

'साफ़-साफ़ बोलो, जो तुम्हारे दिल में है वही कहो।' वज़ीर मुस्कुराया। 'ठीक है, मैं तुम्हारा राज़ नहीं खोलूंगा। अब सुनो: मैं अब यहाँ नहीं रहूंगा। मैं जहानाबाद में अपने दूसरे घर में जाकर बस जाऊंगा। यह छोटा सा घर, इसका सारा सामान, सब कुछ तुम्हारा है।'

चाची और भाभी दोनों ने कुछ बोलने के लिए मुंह खोला, शायद कोई आपत्ति जताने के लिए। लेकिन उनके मुंह से कोई शब्द नहीं निकला। वे एक-दूसरे को हताश होकर देखती रहीं। वज़ीर ने इस चुप्पी का फायदा उठाते हुए मुहम्मद आगा से बच्चों जैसी बातें कीं, उन्हें चूमने और सहलाने की कोशिश की। आखिरकार नूर फातिमा हिलीं, मानो जाग गई हों।

और शाह मुहम्मद आगा...?

"उसकी परवरिश शिया धर्म में होगी। उसे वो सब कुछ सिखाया जाएगा जो एक शिया सज्जन को सीखना चाहिए। मैं एक समझौते पर हस्ताक्षर करूँगा। यहाँ की संपत्ति आपकी होगी, इस शर्त पर कि बालिग होने पर उसे पूरी संपत्ति विरासत में मिलेगी। इस दस्तावेज़ पर आप दोनों के गवाह होंगे। क्या आप समझ रहे हैं?"

'हां, हमने सुन लिया।' दोनों महिलाओं ने बड़ी मुश्किल से ये शब्द कहे। लेकिन वज़ीर रुकी नहीं। 'ठीक है, तो अब मैं चलती हूँ' कहते हुए वह अपने बेटे को पहले की तरह गले लगाकर बाहर चली गई।

पुस्तक 7

अबू जफर मुहम्मद सिराजुद्दीन बहादुर शाह द्वितीय लाल हवेली में सात वर्षों से सिंहासन पर विराजमान थे: ये वे वर्ष थे जिन्हें अंग्रेज और उनके इतिहासकार 'अंग्रेज़ी शांति' कहते थे। सुंदरता और प्रेम, ज्ञान और आध्यात्मिक कृपा, खगोल विज्ञान और इंजीनियरिंग, तर्क और गणित, ज्योतिष और भूविज्ञान, कविता और साहित्य, धर्मपरायणता और सूफीवाद की रोशनी हर गली और मोहल्ले में जगमगा रही थी, जिससे दिल्ली बगदाद और कॉर्डोबा के लिए ईर्ष्या का विषय बन गई थी। मार्शल आर्ट और मनोरंजक खेलों के विशेषज्ञ, संगीत और नृत्य के उस्ताद, पाक कला के विशेषज्ञ, औषध विज्ञान के विशेषज्ञ, हर व्यापार और शिल्प में निपुण, हर उस शिल्प के अगुआ जिसमें हाथ की कुशलता और निपुणता की आवश्यकता होती थी, रत्नजड़ित या सादे चांदी और सोने के आभूषणों के डिजाइनर और निर्माता: दिल्ली का स्वर्गिक नगर, हजरत-ए-दिल्ली ('दिल्ली, उपस्थिति'), इन सभी और हर तरह के परिष्कृत लोगों से भरा हुआ था। आप एक की तलाश में जाते और चार को साथ लेकर लौटते। सैन्य अभियानों और युद्धों को छोड़कर, बलपूर्वक या कूटनीति द्वारा अपनी संप्रभुता स्थापित करने के अलावा, दिल्ली में ऐसा कुछ भी नहीं था जिसके स्वामी अज्ञात हों।

राज-प्रबंध सहित नागरिक विधाओं में, हाज़िक-उज़ ज़मान उमदत-उल हुकामा हकीम मुहम्मद अहसानुल्लाह खान का ऐसा रुतबा और बौद्धिक उपलब्धियों का भंडार था कि अगर उनके दुर्भाग्यशाली राजा सचमुच राजा होते और उनके वज़ीर सचमुच वज़ीर होते, तो जहाँगीर या शाहजहाँ के नहीं तो बहादुर शाह प्रथम के दिन दिल्ली के समकालीन जीवन की वास्तविकता बन सकते थे; दिल्ली का दुर्भाग्य पलट सकता था। लेकिन दिल्ली का भाग्य केवल तबाह और बर्बर होना ही नहीं था: उसे विधवा होना था, उसके स्वामी को कानपुर, फिर इलाहाबाद, वहाँ से कलकत्ता और अंत में रंगून तक एक गुलाम जहाज जैसी किसी चीज़ में खदेड़ दिया जाना था। खैर, वह घिनौना और अशुभ दिन बीस साल बाद आया जब बहादुर शाह द्वितीय ने इतिहास में अपना स्थान ग्रहण किया। उस समय किसी ने कल्पना भी नहीं की थी कि हिंदुस्तान की शक्ति पहले से ही एक अपरिवर्तनीय पतन की ओर अग्रसर थी। दिल्ली ने इससे भी बुरे हालात देखे थे और फिर भी मजबूत होकर उभरी थी। निश्चित रूप से, इस बार भी ऐसा ही होगा। दिल्ली ने अपने प्राचीन इतिहास में अनगिनत रक्तपात और दर्जनों सत्ता हस्तांतरण देखे थे। समय बदलता है, लेकिन व्यवस्था, समय के नियम कभी नहीं बदलते। विज्ञान और कला, शिल्प और शारीरिक या मानसिक अनुशासन: ये सब हमेशा से ही सीखने और अभ्यास करने के लिए मौजूद थे। क्योंकि ये चीजें इस बात का प्रमाण थीं कि मनुष्य एक आत्मा है; ये चीजें मनुष्य के लिए सांस लेने जितनी ही अपरिहार्य थीं।

दिल्ली कला और शिल्प, दर्शन, गणित और ज्योतिष जैसे विद्वतापूर्ण विषयों में अब भी सबसे आगे थी—कम से कम दिल्ली ऐसा मानती थी। उसके प्राचीन झूमरों और दीयों में भी नई रोशनी जगमगाने लगी थी; साधारण, तेल से जलने वाले छोटे मिट्टी के दीयों की लौ भी अंग्रेजी लालटेन

की रोशनी को सोखने या कम से कम उसमें समाहित करने में सक्षम प्रतीत होती थी। फिरंगी ग्रंथों को मूल अंग्रेजी में पढ़ने वाले लोग, या फिरंगी शैली और तौर-तरीकों पर अपना जीवन जीने वाले लोग; लोहे के औजार और मशीनें बनाने और उन्हें गर्म भाप से चलाने वाले लोग: दिल्ली का हृदय अब ऐसे लोगों पर भी गर्व करने लगा था। कश्मीरी गेट के पास सिकंदर साहब का गिरजाघर दशकों पहले बनी मस्जिदों को कड़ी टक्कर देता प्रतीत होता था।

ऐसा प्रतीत होता था कि हर कोई इस बात से पूरी तरह आश्वस्त था कि दिल्ली आज भी वही पुराना धातु-संग्रहालय है: सोना, चांदी, तांबा, लोहा, हर तरह की धातुएँ इसमें उबलती थीं, पिघलती थीं और पहले से ही ऊर्जा से भरपूर धातुओं के साथ मिलकर एक नई धातु का रूप ले लेती थीं, जो पहले से ही अधिक शक्तिशाली होती थी, लेकिन उसमें मौजूद सभी धातुओं के गुण समाहित होते थे, भले ही उनमें से अधिकांश धातुएँ संयोगवश या युद्ध के दौरान उसमें समा गई हों। किसी ने कल्पना भी नहीं की थी कि मात्र बीस वर्षों में दिल्ली पर बरसने वाला रक्त सभी धातुओं को पिघला देगा। लाल हवेली का लाल रंग उस वर्षा में सबसे पहले सफेद हो जाएगा।

30 अक्टूबर 1775 को जब शाह आलम द्वितीय के सबसे बड़े पुत्र मिर्ज़ा मुइनुद्दीन और उनकी हिंदू पत्नी लाल बाई के पुत्र मिर्ज़ा सिराजुद्दीन का जन्म हुआ, तब किसी को भी, यहाँ तक कि स्वयं मिर्ज़ा बुलाकी (जैसा कि शाह आलम द्वितीय को स्नेहपूर्वक कहा जाता था) को भी, नवजात पोते मिर्ज़ा सिराजुद्दीन (जिन्हें स्नेहपूर्वक मिर्ज़ा इब्बान के नाम से जाना जाता था) के भविष्य के बारे में कोई जानकारी नहीं थी। शाह आलम द्वितीय का राज्याभिषेक 1759 में दिल्ली से दूर हुआ था और 1764 में अंग्रेजों के हाथों पराजय के बाद वे इलाहाबाद में अंग्रेजों की 'संरक्षण' में थे। यद्यपि मुइनुद्दीन उनके सबसे बड़े पुत्र थे, लेकिन साम्राज्य का शासन और लाल किले तथा सम्राट की अन्य निजी संपत्तियों का प्रबंधन शाह आलम के दूसरे पुत्र मिर्ज़ा सुलेमान शिकोह के हाथों में था। इसलिए, कोई भी यह अनुमान नहीं लगा सकता था कि शाह आलम द्वितीय के बाद सम्राट कौन बनेगा।

अंततः, सम्राट 1771 की शुरुआत में दिल्ली लौट आए और लाल हवेली में सिंहासन ग्रहण किया। मिर्ज़ा गुलाम नजफ़ खान, फिर नजीबुद्दौला और अंत में महादा जी सिंधिया जैसे कुशल और सक्षम मंत्रियों ने प्रशासन संभाला, और अंततः 1803 में लॉर्ड लेक साहब सम्राट के 'संरक्षक' बन गए। (इसका कुछ विवरण हमने पहले के पृष्ठों में दिया था।) जॉन कंपनी के अधिकारियों ने मुइनुद्दीन के सिंहासनारोहण को सुचारू रूप से सुनिश्चित किया। शाह आलम द्वितीय की मृत्यु के बाद, अंग्रेज रेजिडेंट की देखरेख में, 1806 में उनका राज्याभिषेक मुइज़-उद-दुनिया व अल-दीन अबू नस्र मुइनुद्दीन मुहम्मद अकबर शाह द्वितीय के रूप में हुआ।

हालाँकि सिराजुद्दीन सबसे बड़े थे, सम्राट की कृपा दृष्टि उनके दूसरे पुत्र मिर्ज़ा जहाँगीर बख्त पर थी। सर्वशक्तिमान सम्राट ने मिर्ज़ा जहाँगीर बख्त के पक्ष में लंबे और गंभीर प्रयास किए। लेकिन वे एक उद्दंड, प्रतिभाशाली और मनमौजी युवक थे; फिरंगी लोगों के प्रति उनकी घृणा सर्वविदित थी। वे शराब के आदी भी थे। इसलिए अंग्रेजों ने उन्हें बनारस भेज दिया, जिसका अर्थ था कि वे व्यावहारिक रूप से निर्वासन में थे। उन्होंने उथल-पुथल भरा जीवन जिया और 1821 में बनारस में कम उम्र में ही उनका निधन हो गया। उनके पार्थिव शरीर को दिल्ली लाया गया और दिल्ली

शहर के बाहर सुल्तान-उल औलिया हज़रत निज़ामुद्दीन साहब की मस्जिद के प्रांगण में दफनाया गया।
कंपनी बहादुर के अधिकारियों ने तुरंत सिराजुद्दीन को उत्तराधिकारी घोषित कर दिया। इस प्रकार, चार भाषाओं के कवि, सूफी विद्वान, सादी शिराज़ी के टीकाकार, कुशल निशानेबाज, धनुर्धर, तलवारबाज और ख्यातिप्राप्त घुड़सवार सिराजुद्दीन 28/29 सितंबर 1837 को सम्राट बने। उन्होंने अल्लाह की उपस्थिति, निष्कलंक की छाया, सर्वशक्तिमान के खलीफा, जमशेद की शान के राजा, फरिश्तों की सेना के सेनापति, अल्लाह के शासक और छाया, मुहम्मद के मार्ग के आश्रयदाता और रक्षक, शुभ संयोग के स्वामी के घराने की उत्तम संतान, वैभवशाली सम्राट, सभी राजाओं के महान राजा, सम्राट, सम्राट के पुत्र, सुल्तान, सुल्तान के पुत्र, सम्मान और पवित्र युद्धों के स्वामी, सच्चे पालनहार, दिव्यता के प्रतीक, अबू अल-मुजफ्फर सिराज-उद दुनिया व अल-दीन मुहम्मद बहादुर शाह गाजी की उपाधियाँ धारण कीं। अल्लाह अपनी भूमि और अपने कानून को कायम रखे, उसकी कृपा और अच्छे कर्म सभी को लाभ पहुँचाएँ। इस प्रकार, दुनिया भर में फैलकर शाही सिंहासन की चमक को और बढ़ा देता है।

नवराज्याभिषेकित राजकुमार के दरबार के विद्वानों में से एक मौलवी इमाम बख्श सहबाई ने रुबाई की कुछ असामान्य शैली में तीन छंदों का एक फारसी कालक्रम रचा।
बहादुर शाह के राज्याभिषेक पर दिल्ली की महक आनंद से भर उठी। वे निरंतर सुख से परिपूर्ण सिंहासन पर विराजमान हुए; उनके कारण दिल्ली के उद्यान में सुगंध और भी बढ़ गई। बुद्धि के मुख से उस महान राजा के सिंहासनारोहण की तिथि का आह्वान हुआ: दिल्ली का प्रकाश। चिराग-ए-दिहली ('दिल्ली का प्रकाश') इन दो शब्दों का योग 1253 होता है, जो हिजरा पंचांग के अनुसार बादशाह के राज्याभिषेक की तिथि है।
इतिहासकारों ने बाद में इसे अंग्रेज़ सत्ता के आशीर्वादों में से एक बताया; कुछ ने इसे दिल्ली की लौ की अंतिम लौ कहा। कुछ ने इसे भारत की अमर-इस्लामी संस्कृति की लौ का जादुई प्रभाव माना। सच तो यह है कि बहादुर शाह द्वितीय के शासनकाल की दिल्ली में वह सब कुछ था जो उस समय किसी शहर में मिलना मुश्किल था, चाहे वह शहर कितना भी महान क्यों न रहा हो। सबसे बढ़कर, शहर लोगों से भरा हुआ था; प्रजा सुखी थी; धनी अपनी समृद्धि में डूबे हुए थे, भिखारी अपनी खुरदरी खाल में भी खुश था। दिल्ली सही मायने में दिव्य प्रकाश से परिपूर्ण हृदय थी।
लेकिन वज़ीर का दिल दुख से भरा हुआ था। वह नवाब मिर्ज़ा और शाह मुहम्मद आगा के साथ दिल्ली आई, इस उम्मीद में कि वह अपनी शांति की मालकिन बनेगी, लेकिन उसने पाया कि दिल्ली में उसका घर और वास्तव में पूरा शहर उसे चुभ रहा था और काट रहा था। माता-पिता की पुरानी यादें, बचपन के चिंतामुक्त दिन और रातें; उसके बड़े होने का समय, जो अपने साथ जवानी के एक अंतहीन, निरंतर बढ़ते और हमेशा खिलते वसंत की एक विशाल लहर लेकर आया था; उसके अपने नखरे, प्रशंसकों की भीड़ पर निर्दयी, और उनकी हार का आनंद, और उनके प्रति उसकी अपनी उदासीनता; और मतन बल्क साहब के देहांत के बाद, शम्सुद्दीन अहमद खान का

तन-मन उसके प्रति समर्पित होना, उसके प्रेम के लिए उसकी बेचैन लालसा और उसके लिए उसकी इच्छा का धीमा लेकिन निश्चित रूप से बढ़ता हुआ उत्साह; फिर नवाब की शहादत, उनकी आध्यात्मिक बेघरता और शारीरिक अकेलापन: बहुत कुछ था, अनगिनत चित्र और दृश्य, मानो शब्दों और चित्रों के एल्बम के चमकीले पन्ने हों। उन्होंने उनके हृदय को असफलता से बहने वाले रक्त के तीखे, तीखे स्वाद से भर दिया, और उनकी आत्मा को अतीत और भविष्य की यादों से झकझोर दिया। उन्होंने कभी नहीं सोचा था कि सुखद यादें इतने पछतावे, इतने दर्द, इतनी पीड़ा और असंतोष के साथ आ सकती हैं। अगर आप बिना सावधानी के गुलाब तोड़ते हैं, तो उसका कांटा आपको चुभता है, यह जताते हुए कि आपने उसकी सुंदरता छीनने में कितनी लापरवाही और बेपरवाही दिखाई। यहाँ, गुलाब ही कांटा था: उसकी हर पंखुड़ी अतीत की सुगंध से सराबोर थी, लेकिन वह बिच्छू के डंक की तरह चुभ रही थी। लेकिन क्या उन यादों को छूए बिना रहना संभव था? क्योंकि उनकी सुगंध सांस की तरह आपके भीतर आती-जाती थी, और उनके रंग आपकी हर पलक झपकने में समाए हुए थे।

वह दिल्ली में रहना नहीं चाहती थी; लेकिन क्या रामपुर बेहतर था? वह मांझली बाजी से अपने लिए कितना बोझ उठाने की उम्मीद कर सकती थी? उसका अपना बोझ भी कम नहीं था, और दो बच्चों का बढ़ता हुआ मन और शरीर भी था: वे नाज़ुक पौधों की तरह थे जो बड़े होकर शक्तिशाली और छायादार वृक्ष बनने वाले थे, लेकिन अभी दोनों को अपनी-अपनी तरह की देखभाल, पानी, निगरानी और छंटाई की ज़रूरत थी। वैसे भी, क्या रामपुर की यादें दिल्ली की यादों से अलग थीं? इतनी गहरी जड़ें और घनी पत्तियां तो नहीं थीं, लेकिन रामपुर की यादों के वृक्ष की जड़ें काफी मजबूत थीं, और उसका फल कड़वा-मीठा दोनों था। जब उसने रामपुर छोड़ा, तो वह एक जीवित, सांस लेते, घने पौधे की तरह थी जिसे अचानक गमले से उखाड़ दिया गया हो और पानी और छाया से वंचित कर दिया गया हो। लेकिन उस पौधे की छाया में सांपों के घर भी थे; ऐसे सांप जो काटने और डंक मारने का कोई मौका नहीं छोड़ते थे।

क्या यह सर्वशक्तिमान की शक्ति का प्रमाण नहीं था? कि एक ऐसा उद्यान जो पीले पत्तों से अछूता प्रतीत होता था, उस पर बार-बार सूखी मक्खियों की पीली-भूरी निगाहें पड़ रही थीं, जो उसकी हवा को विषैला बना रही थीं? हवाएँ, जिनके कंधों पर बुलबुल का गीत, एक बच्चे की अपनी माँ की ओर बढ़ती हुई चंचल या सहज गति की तरह, बगीचे के एक छोर से दूसरे छोर तक स्वतंत्र रूप से बहता था... अब वही हवाएँ विलाप और आहों की साँस बन गई थीं! दोहरे रंग का गुलाब; चमेली, बैंगनी या सफेद; नन्हा, शुरुआती कस्तूरी गुलाब, जिसका सूक्ष्म और कोमल खेल और हवा में लहराना जलधारा को पत्थर पर अपना सिर पटकने पर मजबूर कर देता था, और बगीचे की छोटी-छोटी धाराओं और नालों में लहरों को हमेशा बेचैन, इच्छा से भरा हुआ, गतिमान रखता था; अब वे फूल अपने सिर झुकाकर अस्तित्व की दुखद सच्चाई पर शोक मना रहे थे। क्या ये सर्वशक्तिमान की करतूतें नहीं थीं?

वज़ीर ने शीशे में खुद को देखना और अपने बालों को संवारना बहुत पहले ही छोड़ दिया था। तीस-बत्तीस साल की ज़्यादातर औरतें, विशेषकर वे जिन्होंने बच्चे पैदा किए हों, बूढ़ी औरतों जैसी दिखती और महसूस होती थीं। लेकिन वज़ीर का शरीर अब भी चुस्त-दुरुस्त था, मांसपेशियों में

ढीलापन या कोमलता में कमी का कोई निशान नहीं था। उसके चेहरे पर अब भी वही कोमल, अनुभवहीनता थी जो कुंवारी लड़कियों में देखी जाती है। उसके चेहरे या गर्दन पर एक भी शिकन नहीं थी। हालाँकि उसने अपने सभी बच्चों को स्तनपान कराया था, बहुत ज़्यादा नहीं, लेकिन हर बार कुछ महीनों तक, और मुहम्मद आगा के मामले में तो उससे भी ज़्यादा, फिर भी उसके स्तन ढीले या बहुत बड़े नहीं थे: उनमें कोई झुकाव नहीं था, इस्तेमाल होने का कोई निशान नहीं था। लेकिन अब उसे अपनी खूबसूरती से नफ़रत होने लगी थी, चाहे वह अब भी कितनी ही शानदार क्यों न हो: उसकी खूबसूरती ही थी जिसने उसके युवा जीवन की नाव को डूबने और चट्टानों से टकराने पर मजबूर कर दिया था; और अब उसे इस बात की कोई उम्मीद नहीं थी कि उसकी खूबसूरती उसके जीवन की नाव को किसी सुरक्षित जगह तक खींच लाएगी।

उन्होंने मीर साहब की उन पंक्तियों को याद किया जो उन्होंने कई दशक पहले लिखी थीं:

सौंदर्य और रहस्य कभी साथ-साथ नहीं चल सकते। ऐसा कोई नहीं जिसका सौंदर्य अपने उद्देश्य को पूरा न कर पाया हो: प्रकट होना। याकूब के पुत्र से लेकर गुलाब तक, गुलाब से लेकर मोमबत्ती तक; ऐसा कोई नहीं जिसका सौंदर्य बाज़ार तक पहुँचने में असफल रहा हो।

खैर, मीर साहब को चीज़ों के भाग्य और उनके बदलाव के बारे में क्या पता था? इन कवियों को किसी बात की परवाह नहीं; ये तो बस नई-नई चीज़ों और उन्हें कहने के नए-नए तरीकों की खोज में लगे रहते हैं। सच है, मैं छिपना नहीं चाहता था; लेकिन मैंने कभी भी भाग्य के बाज़ार में बिकने वाला सामान बनने की इच्छा नहीं की। सच में, मैं तो अपनी चप्पलें भी बाज़ार में नहीं जाने देता! लेकिन मैं उस बाज़ार में जाए बिना ही बेनकाब हो गया जिस पर केवल मनुष्य ही राज करते हैं।

शायद अंत हमेशा एक जैसा ही होता है। एक बार बल्क साहब ने मुझे बताया कि उनकी भाषा के एक महान कवि ने कुछ ऐसा कहा था, 'देवताओं के सामने मनुष्य नासमझ बच्चों के सामने तितलियों की तरह हैं।' कुछ और शब्द भी थे, जैसे कि वे हमें खेल-खेल में मार डालते हैं। वे उन्हें अपने मनोरंजन के लिए पकड़ते हैं, उनके रंगीन पंख खींचते हैं और इस प्रक्रिया में उन्हें मार डालते हैं। मैंने उनसे कहा कि हम मुसलमान ऐसी बकवास में विश्वास नहीं करते। हमारे कोई देवी-देवता नहीं हैं...

लेकिन अब मेरे मन में एक विचार आया: हिंदू धर्म में देवी-देवता होते हैं, है ना? शायद जब वे 'ईश्वर' या 'देवी' कहते हैं तो उनका तात्पर्य नियति और भाग्य से होता है? क्या मैंने जीवन भर अपना मार्ग स्वयं खोजने का प्रयास नहीं किया? क्या मैं अब भी अपने प्रकाश को खोजने की आकांक्षा नहीं रखती? नहीं, अब मुझे अपने इन दो बच्चों के लिए जीना चाहिए। यही सबसे सीधा मार्ग है और यही सच्चा आनंद है।

रास्तों और मार्गों के विचार ने स्मृति से मीर के एक और कथन को उजागर कर दिया:

हे आदम के पुत्र, मृत्यु के पैरों तले कुचले जाने के लिए; यही तुम्हारा पहला कदम है। अंत तक तुम्हारा क्या होगा? कौन जानता है?

हे भगवान! ये शब्द कहते ही मेरे रोंगटे खड़े हो जाते हैं! शायद वो सौंदर्य और सौंदर्य के उद्देश्यों के बारे में लिखी गई आयतों का जवाब लिख रहे थे? लेकिन जब हम मृत्यु के चंगुल में कुचल दिए जाएँगे, तो फिर क्या बचेगा? तो फिर निष्कर्ष के बारे में चर्चा करने के लिए क्या बचा है? शायद

जीवन जीने का दूसरा नाम या एकमात्र नाम यही है कि अपने अस्तित्व के हर पल को जियो और मरो? शायद जन्म लेना मृत्यु से भी बदतर है। क्योंकि, आप वास्तव में जन्म नहीं लेते; आप तो मर चुके होते हैं। लेकिन क्या वह मृत जीवन भी उतना ही सुख और उतना ही सुकून नहीं देता?
उसे एक बच्चे के रोने की आवाज़ सुनाई दी। शायद शाह मुहम्मद आगा दोपहर की नींद से जाग रहे थे। वह जल्दी से शयनकक्ष में गई। बच्चा गहरी नींद में सो रहा था। शायद उसने किसी और के बच्चे की आवाज़ सुनी हो... या शायद यह सिर्फ़ उसका वहम था। हबीब-उन निसा पास ही एक छोटी चारपाई पर सो रही थी। वज़ीर के पास आजकल सिर्फ़ एक नौकरानी थी। एक लड़का अंशकालिक रूप से सुबह और शाम के ज़रूरी बाहरी काम करता था। उसे वे दिन याद आए जब उसका घर नौकरों से भरा रहता था। उसे विलासिता और आरामदायक जीवन की रफ़्तार की उतनी याद नहीं आती थी, जितनी शम्सुद्दीन अहमद के प्रेम में मिले रोमांच और मदहोशी की याद आती थी। फिर वो चहल-पहल भरी खुशियाँ और उत्सव का माहौल था। हर दिन उगता सूरज सुख और आशा के एक नए अनुभव का पहला अध्याय लगता था। उसकी खुशियों की दौड़ कितनी जल्दी खत्म हो गई। उसके घर के पुरुष और महिलाएं कितनी जल्दी इधर-उधर बिखर गए और फिर कभी नहीं मिले।
क्या उसे नवाब मिर्ज़ा से अपने अकेलेपन को दूर करने, बुढ़ापे में सहारा बनने की उम्मीद थी? और शाह मुहम्मद आगा से? जब तक वह बड़े होंगे, तब तक तो मैं मर चुकी होंगी। उसके दिल से एक आवाज़ उठी: आज जो कुछ भी है, उसे नवाब मिर्ज़ा ने जीवन दिया है; भविष्य में जो कुछ भी होगा, वह फिर उन्हीं के द्वारा या उन्हीं की वजह से होगा... अब मेरे लिए, या मेरी किसी भी चीज़ के लिए, आगे बढ़ने या बनने के लिए क्या बचा है? क्या जीवन से मेरे लिए कुछ बचा है? क्या मुझे अब भी जीवन और उसके प्रेम-प्रसंगों, या प्रेम में विजय से कुछ उम्मीद रखनी चाहिए?
हकीम मोमिन साहब ने अपनी हाल की ग़ज़लों में से एक में कितनी खूबसूरती से कहा है:
कुछ लोग प्रेम के लिए, प्रेम करने के लिए तरसते हैं; और मैं यहाँ हूँ, अपने प्रेम करने के लिए असीम रूप से पश्चाताप कर रहा हूँ।
नहीं, नहीं, फिर से नहीं। क्या अतीत में जो कुछ भी हुआ, वह महज़ एक भूलभुलैया थी जिसे मैंने सपने में देखा था और जिसके जादू में मैं अब भी फंसी हुई हूँ? भला वह सब प्रेम और प्रेम पाने की भूलभुलैया कैसे हो सकती है? उसकी आँखों के सामने तस्वीरें कौंधने लगीं, सजीव, जीवंत चित्र, चमकीले रंगों और लय से भरपूर: ख्वाजा साहिब से हमारी वापसी की अँधेरी, तूफ़ानी रात, धूल भरी आंधी में घिर जाने का खौफ़नाक रोमांच; यह पहली बार था जब मैंने मतन बलक साहब को देखा था। उसे ऐसा लगा जैसे वह एक बच्ची हो, जो बचपन में मैजिक लैंटर्न नाम के उपकरण पर झुकी हुई थी। उसे केवल एक बार ही उसके बड़े काँच के छेद से देखने का सुख और रोमांच मिला था: यह उपकरण फिरंगी लोगों द्वारा लाया गया था और स्थानीय लोग इसे बहुत संदेह की नज़र से देखते थे। आप एक छेद से देखते थे; संचालक डिब्बे का हैंडल घुमाता था, और रंगीन, बड़ा चित्र दिखाई देता था, जिसमें इंग्लैंड के राजा और रानी, या ताजमहल, और इसी तरह की आकर्षक चीज़ें दिखाई देती थीं। ऑपरेटर ने एक विशेष प्रकार की लयबद्ध आवाज में एक के बाद एक तस्वीरें प्रस्तुत कीं।

आज, बड़े किए गए लेंस से अलग-अलग तरह की तस्वीरें बन रही थीं, जो दुख, अफ़सोस और खुशी के चटख रंगों से रंगी हुई थीं... मुझे यकीन है कि उसका इरादा मेरी आँखों में देखने का नहीं था। असल में, वह मेरी तरफ देख भी नहीं रहा था। मैं ही अपने चादर के पीछे से उसे देख रही थी। लेकिन उस धूर्त ऑपरेटर ने हैंडल फिर से घुमा दिया, जिससे मैं सबके सामने आ गई; मेरा चादर उड़ गया। मैं उलझन में ऊपर देखने लगी और एक पल के लिए उसकी नज़रें मुझ पर टिकी हुई थीं। अल्लाह, कितनी ज़िद्दी और आत्मविश्वास से भरी हुई थीं वो आँखें! उसी समय मुझे समझ आया: एक आदमी की आँख एक जगह टिकी रह सकती है और फिर भी, घूमती हुई लौ की तरह, एक औरत के शरीर का चक्कर लगा सकती है, मानो उसके चारों ओर एक दीवार खींच रही हो। तब मुझे पता चला कि एक आदमी की आँख एक ही समय में उदासीन लग सकती है और फिर भी एक निजी सवाल पूछ सकती है। यह जानने के लिए उत्सुक कि और क्या उजागर हो सकता है, और यह सवाल पूछ सकती है: जो कुछ उजागर हुआ है, या उजागर हो सकता है, उसका कितना हिस्सा देखने वाले आदमी का हो सकता है? मेरा शरीर गर्म महसूस हो रहा था, मानो वह मुझे सिर्फ देख ही नहीं रहा था, बल्कि मुझे छू भी रहा था। मैंने कहानियों में कई बार सुना था, लेकिन मुझे कभी पता नहीं था कि किसी पुरुष के लिए, और विशेष रूप से किसी पुरुष के लिए, इच्छा एक ही समय में किसी स्त्री में जन्म ले सकती है।

दरअसल, उस समय मेरे मन में जीवन के बारे में कोई विचार नहीं था। मैंने बारी बाजी से जो कहा, वह बस झगड़ा खत्म करने के लिए था। फिर भी, मुझे पूरा यकीन था कि कोई भी मेरी इच्छा के विरुद्ध मुझ पर शादी के बंधन नहीं डाल सकता... शायद मैं कभी शादी करना ही नहीं चाहती थी। तो फिर मैं क्या चाहती थी? क्या मेरे जीवन के लिए कोई योजना थी?

मुझे नहीं पता, उसने कुछ चिढ़कर अपने ही सवाल का जवाब दिया। या शायद मैं बस ऊब गई थी? क्या हर चीज़ का योजना के अनुसार होना ज़रूरी है? लेकिन मैं इतना जानती हूँ: किसी पुरुष की खिलौना, नौकरानी या रखैल बनना, ये सब 'इज्जत बेचना' नामक घृणित काम के ही रूप हैं। लेकिन क्या मैं इस बात पर यकीन नहीं करती थी कि मैं इस दुनिया में औरतों की इज्जत बचाने के लिए आई हूँ, और अपनी इज्जत की रक्षा करने के लिए भी? तो फिर बल्क साहब की एक नज़र ने मुझे आग की तरह क्यों जला दिया? क्या ऐसा इसलिए है कि मेरी बुद्धि ने मुझे ऐसी बातें सिखाईं जिन पर मुझे पूरा भरोसा था, लेकिन जब अमल करने की बारी आई, तो मैंने उन मंदबुद्धि औरतों की तरह काम किया, जो नीच और घटिया सोच वाली होती हैं, जो रात के बिस्तर के सुख और दिन भर के भुखमरी के आगे हर चीज़ को तुच्छ समझती हैं? जैसा कि कहावत है, मैंने पति इसलिए चुना ताकि मैं जीवन का आनंद ले सकूँ, न कि खुद को भूखा रखने के लिए। नहीं, मैं कुछ और थी, और मैं उन औरतों से अलग बनना चाहती थी। क्या मैं कह सकती हूँ कि बल्क साहब ने मुझे बहकाया? मुझे नहीं लगता, कम से कम उस समय तो नहीं। मैं उनके प्यार में पूरी तरह से डूब गई थी। या शायद हमारे बीच जो कुछ हुआ, वह कृतज्ञता की भावना का परिणाम था? क्योंकि यह बिल्कुल सच है: अगर वह उस रात हमें न पाते, तो हम सभी का अंत भयानक होता। मेरी उम्र की लड़कियाँ, अगर लुटेरों या डाकुओं के हाथों में पड़ जाएँ, तो पहले उनका बलात्कार किया जाता है, और फिर उन्हें मामूली पैसों में किसी वेश्यालय में बेच दिया

जाता है। और अगर आप मुझसे पूछें, तो वेश्यालय में बेची जाने वाली लड़कियाँ उन लड़कियों से बेहतर होती हैं जिन्हें दुष्ट डाकू अपने सुख के लिए रखते हैं। यह सच है कि वे उनके साथ सबसे नीच नौकरानी से भी बदतर व्यवहार करते हैं, और जैसे ही उस बेचारी लड़की का शरीर थोड़ा ढीला पड़ता है या उसकी आकर्षण शक्ति कम हो जाती है, उसे किसी बेकार भैंस या गाय की तरह भगा दिया जाता है। उसका 'आदमी' ज़ाहिर है, किसी दूसरी 'नौकरानी' की तलाश में लग जाता है, और फिर किसी और की। ऐसी कई कहावतें हैं जैसे, 'वह बीस साल की है: वह मुरझाई हुई है। साठ साल का पुरुष: वह जवान है!' ऐसी कहावतें तो पुरुषों ने ही बनाई हैं, और कौन बना सकता है?

सच है, मुझे और मेरे पिता को आभारी होने का पूरा कारण था। फिर भी, यह वास्तव में अनुचित था। एक अजनबी, एक तगड़े फिरंगी के हाथों में अपनी गरिमा, नाम, अपना धर्म, अपने रीति-रिवाज और परंपराओं को इतनी लापरवाही से सौंप देना, यह तो सरासर अनुचित था। खैर, यह सब सच हो सकता है, लेकिन मैं बल्क साहब के साथ जाने के लिए दृढ़ थी। और मेरे पास अपने पिता और बारी बाजी को यह बताने का और क्या तरीका था कि मैं कोई मशीनी गुड़िया नहीं हूँ? कि मैं अपनी इच्छाओं की स्वामी हूँ?

और सच तो ये है कि मैं उन्हें बहुत पसंद करती थी। खैर, मैं पहली मुसलमान लड़की नहीं थी जिसने किसी फिरंगी पुरुष से शादी की हो। क्या लोगों को फैज़-उन निसा बेगम याद नहीं हैं? परम पूज्य अली गौहर शाह, आलम बहादुर शाह, जो अब जन्नत में विराजमान हैं, ने उन्हें अपनी पुत्री घोषित किया था। बेगम ने अंग्रेज जनरल पामर से शादी की थी। वो कितनी खूबसूरत थीं, उनका व्यक्तित्व कितना अद्भुत था—सचमुच किसी सम्राट की पुत्री जैसी दिखती थीं। फिर दक्कन की वो बेगम थीं, मुझे उनका नाम याद आ रहा है... जी हाँ, खैर-उन निसा बेगम। कहा जाता है कि वो बिना शादी के ही फिरंगी के बच्चे की माँ बन गईं। फिरंगी निज़ाम-उल मुल्क के दरबार में निवास करते थे। तो माँ और दादी क्या कर सकती थीं, सिवाय शादी को मंज़ूरी देने के? यह सच है कि फिरंगी ने उसके साथ असाधारण स्नेह से व्यवहार किया, लेकिन उसने बच्चों को ईसाई बना दिया, उन्हें गाँव भेज दिया और तुरंत ही मर गया, जिससे बेचारी माँ बेसहारा रह गई। लड़का और लड़की हर चीज़ से अजनबी हो गए - अपनी जड़ों से, अपने धर्म से, अपनी संस्कृति से।

फिर सम्राट की एक और बेटी थी, जिसका विवाह लखनऊ के राजपरिवार में हुआ था। वहाँ उसके साथ इतना क्रूर व्यवहार किया गया कि वह कर्नल गार्डनर साहब के बेटे के साथ भाग गई, और उसका दूसरा विवाह पहले विवाह को रद्द किए बिना ही संपन्न हो गया।

उसे याद आया कि उसने पहले भी इसी तरह के तर्क दिए थे। वास्तव में, वह जीवन के बारे में आत्मनिरीक्षण करते समय लगभग हमेशा ही ऐसा करती थी। तो कितने उदाहरण देने चाहिए? क्या मैंने भी उन महान महिलाओं जैसा ही नहीं किया? और एक और बात है: उन बेगमों के जीवन का केंद्र बिंदु बस यही था—एक उपयुक्त उच्च कुल के या शक्तिशाली पति से विवाह, और फिर महल, हवेली, या जहाँ भी हो, में आजीवन कारावास। इतनी कठोर कैद कि न केवल उनका चेहरा और आवाज, बल्कि उनकी परछाई भी चादर में लिपटी रहती थी।

वज़ीर, क्या तुम उस चंचल घोड़ी की तरह नहीं थे, जो किसी के अधीन होना और बंधन में बंधना नहीं चाहती थी? लेकिन क्या तुमने भी वही नहीं किया? क्या तुमने पहले ही मौके पर किसी पुरुष का पट्टा अपने गले में नहीं पहना? नहीं! मैं इससे इनकार करती हूँ! मैंने किसी पुरुष का पट्टा अपने गले में नहीं पहना!

लेकिन इन सब बातों और आत्म-मंथन का क्या फायदा? क्यों न, भोली लड़की? क्या दुनिया के लिए सोचने लायक सिर्फ दो ही सवाल नहीं हैं: हमारी दुनिया में पुरुष का क्या स्थान है? स्त्री यहाँ क्या कर रही है? मुझे बस इन्हीं दो सवालों के जवाब चाहिए। क्या दोनों दो पैरों वाले जीव चौपाया होने का दिखावा कर रहे हैं? या वे सचमुच चौपाया हैं, भले ही वे सृष्टि के बाकी जीवों से ज़्यादा चतुर हों? क्या उनकी नज़र में जीने का मतलब सिर्फ पेट भरना और अपनी ही जितनी हो सके उतनी संतानें पैदा करना है?

लेकिन ये सवाल मुझे क्यों परेशान करें? मैं तो सिर्फ अपने बारे में ही बोल सकता हूँ। दूसरों को रोने, गाने या आजीवन मौन व्रत लेने दो। लेकिन मैं इतना ज़रूर जानता हूँ कि इंसान जो भी करता है, वो सिर्फ उसी का होता है। और फैसले और चुनाव करने का अधिकार सिर्फ इंसान को ही है।

मुझे बस इतना पता है: स्त्री पैदा होने से मैं बहुत असंतुष्ट हूँ... मैंने सुना है कि कुछ दवाइयाँ होती हैं, या अगर दवाइयाँ नहीं तो कुछ ऐसे मंत्र होते हैं, जिन्हें सही उच्चारण से पुत्र जन्म सुनिश्चित किया जा सकता है। मेरे मोहल्ले में एक नमाज़ पढ़ाने वाले थे, और उनके बारे में कहा जाता था कि उन्हें कुछ ऐसे मंत्र आते हैं, और उन मंत्रों का जाप करने से उनकी पत्नियों को हमेशा पुत्र जन्म होता था। मैं सोचती हूँ, मेरे अब्बा जी ने वे मंत्र क्यों नहीं सीखे? मेरे जीवन में असंतुष्टि का एक बड़ा कारण तो कम हो जाता। मैंने सुना है कि मौलवी साहब ने वे मंत्र कभी किसी को नहीं बताए। शायद, लेकिन इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए अन्य मंत्र या अन्य तरीके भी होंगे। या शायद मेरे पिता को लड़कियाँ बहुत प्रिय थीं; इसीलिए उन्होंने एक के बाद एक तीन बेटियाँ पैदा कीं, और हमारे जन्म पर वे बहुत खुश हुए। अम्मा अक्सर मुझसे कहती थीं कि अब्बा जी मेरे जन्म से इतने प्रसन्न हुए कि वे ज़ोर-ज़ोर से हँसने लगे।

ठीक है, जो भी हो, लेकिन मैं तो ऐसी स्थिति को बर्दाश्त नहीं कर सकती जहाँ दुनिया की आधी आबादी, और वो भी सबसे ताकतवर आबादी, दूसरी आधी आबादी को अपने पैरों तले रखना अपना जन्मसिद्ध अधिकार समझे। उसे कहावत याद आई, 'खेती से बाड़ सुरक्षित रहती है; बाड़ से खेती सुरक्षित रहती है,' और मन ही मन उसने नाक सिकोड़ी। हा, ये तो बस शब्द हैं, कोई योजना या कार्ययोजना नहीं। पर इस तरह सोचने का क्या फायदा, अपने जिगर को काटकर क्या नतीजा निकलेगा? हज़ारों पछतावे, ये आखिरी वाक्य ब्लाक साहब का पसंदीदा था। जब भी मैं किसी बात से परेशान होती, या जब कोई बात मुझे दुखी करती और मैं शयनकक्ष में बिस्तर पर लेट जाती, और ब्लाक साहब को पता चलता, तो वो आकर मुझे दिलासा देते और शांत करते। वो कहते, 'अपने जिगर को मत चबाओ, छोटी बेगम, मैं यहाँ हूँ, मैं तुम्हारा हूँ।'

अब मुझे लगता है कि बल्क साहब सच नहीं बोल रहे थे; उनके शब्द मात्र थे। शायद उन्होंने सोचा

होगा कि उनके पास अपने बच्चों और मेरे लिए स्थायी समझौता और वसीयत करने के लिए पूरा जीवन है। और वह जीवन एक दिन भी नहीं बीता... लेकिन बेचारे बल्क साहब को ही क्यों दोष दें? मेरे प्यारे, मेरे स्नेही नवाब साहब, उन्होंने मेरे और अपने बेटे के लिए जाने से पहले क्या किया? तो फिर मैं उनसे यह क्यों चाहूँ कि मैं उनके शोक वस्त्रों में जीवन भर रहूँ, उनकी यादों को अपने सीने से लगाए? फिर भी, आगा साहब थे। उन्होंने मुझ पर प्रेम बरसाया जैसे कोई झरना पानी बरसाता है। और वे ऐसा क्यों न करते, क्या मैं उनकी बुढ़ापे की पत्नी और उनके ही बुढ़ापे में जन्मी संतान नहीं थी? ऐसा लगता है मानो मैं ही उनके जीवन के लिए अशुभ और अपशगुन साबित हुई, जो मेरे बिना भी सहज और शायद सुखमय था।

मुझे वो बहुत पसंद थे; सचमुच, मुझे वो बहुत पसंद थे, और ये पसंद दिन-ब-दिन बढ़ती ही जा रही थी क्योंकि वो मेरा बहुत ख्याल रखते थे; मुझे ज़रा भी दुखी या निराश देखना उन्हें गवारा नहीं था। फिर भी, मेरी सारी ज़िद और यहाँ तक कि मुझे लाड़-प्यार करने से भी मेरे शहीद नवाब की याद नहीं मिटी। सच है, मुझे बल्क साहब याद हैं और उनकी कमी खलती है, और उनसे भी ज़्यादा, मुझे अपने प्यारे दोस्तों की याद आती है... लेकिन मेरे नवाब तो बिल्कुल ही अलग थे। न जाने उन्होंने मेरे दिलों पर कितने जादू किए और कितने जादुई शब्द इस्तेमाल किए। उनका हर एक शब्द और हर एक काम मेरे अंदर ऐसे बसा है जैसे नाखून के नीचे चुभता हुआ छोटा सा कांटा। अगर वो मुझे टुकड़ों में काट भी दें, तो भी मेरे शरीर की हर नस और खून की हर बूँद उनका नाम पुकारेगी। और ऐसा इसलिए नहीं था कि वो जवान थे, सुंदर थे, पाप से पीड़ित थे, अमीर थे और ताकतवर थे। वहाँ दिलों का एक अलग ही मिलन हुआ था, जिसे शब्दों में बयान नहीं किया जा सकता और शायद इसलिए भी अटूट था क्योंकि उसकी प्रकृति को समझा नहीं जा सकता था।

लेकिन देखिए, अभी कुछ देर पहले मैंने इन मामलों में फैसला करते समय खुद को बेहद सख्त और लगभग निर्दयी घोषित किया था। मैंने कहा था कि अगर कोई आदमी मुझे पसंद करे, तो मैं पहले यह तय करूँगी कि मैं उसे पसंद करती हूँ या नहीं। अगर मेरा यही मानना है, तो मैं एक ही सांस में यह कैसे कह सकती हूँ कि अगर नवाब साहब मुझे टुकड़े-टुकड़े कर दें, तो मेरे शरीर की हर नस...?

विचारों का प्रवाह उसे अनेक किनारों और उथले स्थानों तक ले गया, और रुका नहीं, और किसी न किसी तरह से उसे दिन गुजारने में मदद करता रहा। या शायद ये सारे विचार और आत्मनिरीक्षण एक ही दिन में घटित हुए। वज़ीर की दिनचर्या बदल गई थी; कभी-कभी उसे समय का पता ही नहीं चलता था। अक्सर, वह खाना खाना भूल जाती थी, यहाँ तक कि हबीबा के याद दिलाने पर भी। खाना ठंडा हो जाता था, कभी दोबारा गर्म करना पड़ता था, तो अक्सर बाँटना पड़ता था। नवाब मिर्ज़ा को खाना खिलाना कोई समस्या नहीं थी। वह घर पर टिफिन नहीं खाता था, और रात के खाने का कोई निश्चित समय नहीं था। वह जब चाहे खाना माँग लेता था। वह अपनी माँ के दर्द और यादों से अनजान नहीं था। लेकिन उसे समझ नहीं आ रहा था कि वह इसके बारे में क्या कर सकता है। चौदह साल के अधिकांश लड़के शादीशुदा होते थे, वास्तव में एक या डेढ़ साल से शादीशुदा होते थे। लेकिन नवाब मिर्ज़ा ने शब्दों या इशारों से ज़रा भी संकेत

नहीं दिया कि वह शादी करने के बारे में सोच भी रहा है।
वज़ीर ने नवाब मिर्ज़ा की शादी के बारे में सोचा था क्योंकि वह घर बसाने की उम्र का हो चुका था। लेकिन किसी तरह वह उससे इस विषय पर बात करने की हिम्मत नहीं जुटा पाई। उसकी उम्र और उनकी उम्र को देखते हुए, उसके अच्छे रूप और सभ्य व्यवहार के कारण शादी के द्वार हमेशा खुले थे। उस संस्कृति में प्रेम के अनेक अवसर थे—चाहे पुरुष हो या स्त्री। और नवाब मिर्ज़ा की परदादी का घर तो था ही, जहाँ कभी-कभार प्रेम प्रसंग या उससे भी अधिक के लिए जाया जाता था। वह कभी-कभार वहाँ जाता था, लेकिन केवल कर्तव्यवश। वज़ीर महीनों, शायद सालों से वहाँ नहीं गई थी। उसकी दादी अकबरी बाई का निधन कई साल पहले हो चुका था। फिर भी, नवाब मिर्ज़ा की शिक्षा अधूरी रह गई। इसका एक कारण रामपुर में मुल्ला ग़ियासुद्दीन से मिली उनकी उत्कृष्ट शिक्षा थी, और दूसरा कारण उनका स्वयं का अथक परिश्रम था; वे फ़ारसी, इतिहास और दर्शनशास्त्र में अपने सहपाठियों से बहुत आगे थे। अन्य विषयों में उनकी कोई विशेष रुचि नहीं थी। उन्हें पूरा विश्वास था कि वे एक बहुत अच्छे कवि बन सकते हैं और शीघ्र ही उस्ताद का दर्जा प्राप्त कर सकते हैं। उन्हें कविता लिखने में आनंद आता था, और उससे भी अधिक आनंद दूसरों के सामने कविता सुनाने में आता था। उनकी स्मृति अद्भुत थी। अनगिनत फ़ारसी और हिंदी या रेख़्ता छंद उनकी ज़बान पर रहते थे, जिसके कारण उनके सहपाठी उनसे ईर्ष्या करते थे। अमूर्त रूप से उनकी असाधारण स्मृति के अलावा, वे छंदों को याद रखने की अपनी सक्रिय क्षमता के लिए भी जाने जाते थे। कभी-कभी ऐसा होता था कि उनके द्वारा किसी छंद में प्रयुक्त कोई वाक्यांश या वाक्य रचना मानक भाषा में अपरिचित और किसी पूर्व उस्ताद के प्रयोग से मेल न खाने के कारण चुनौती का सामना करती थी। नवाब मिर्ज़ा हमेशा किसी मान्यता प्राप्त उस्ताद द्वारा उसके प्रयोग को स्मृति से उद्धृत करने में सक्षम होते थे। जिस व्यक्ति ने आपत्ति उठाई थी, उसे तब यह स्वीकार करना पड़ा कि वह गलती पर था।
नवाब मिर्ज़ा की एक कविता उन दिनों विद्वानों के बीच खूब उद्धृत और चर्चित की जाती थी:

मेरी निगाहें अपने प्रियतम के बहुमंजिला घर पर टिकी हैं; और क्यों नहीं? शाही बाज़ कभी भी अपने घोंसले के लिए नीची जगहें नहीं चुनता।
यह कविता अपनी खूबियों के कारण लोकप्रिय हुई; लेकिन इसका एक और कारण भी था। जिस समय नवाब मिर्ज़ा की कविता दिल्ली के साहित्यिक जगत में धूम मचा रही थी, उसी दौरान बदायूं से एक प्रतिष्ठित सैयद परिवार का युवक दिल्ली आया। वह सुसंस्कृत और सूफी विचारधारा वाला था, और नवाब मिर्ज़ा की ही तरह एक उभरता हुआ कवि था। उसका नाम सैयद दिलदार अली था और उसका उपनाम मज़ाक था। दिल्ली आते ही वह महान कवि शेख इब्राहिम ज़ौक का शिष्य बन गया, जिन्हें बादशाह के काव्य प्रशिक्षक होने का भी सौभाग्य प्राप्त था। दिलदार अली ज़ौक की रचनाओं का कट्टर प्रशंसक और प्रेमी था, और यद्यपि दिल्ली आने से पहले उनकी कभी मुलाकात नहीं हुई थी, फिर भी ज़ौक की कविता की नकल और प्रशंसा करते हुए उसने मज़ाक उपनाम चुना: दोनों शब्द एक ही अरबी मूल से आए हैं और दोनों का अर्थ लगभग एक ही है। इसलिए उसने ज़ौक के समक्ष शिष्य बनने का अनुरोध किया और तात्कालिक रूप से

निम्नलिखित कविता की रचना की:
मैंने मजाक उपनाम इसलिए चुना क्योंकि मैं आपका शिष्य बनने के लिए बहुत उत्सुक था।
यह तात्कालिक रचना बहुत सराही गई। महज़क, खाक़ानी-ए-हिंद, प्रसन्न हुए और उन्होंने तुरंत मज़ाक़ को अपना शिष्य स्वीकार कर लिया। 15 दिसंबर 1844 के दिल्ली उर्दू अख़बार में एक समाचार प्रकाशित हुआ:
कुछ दिन पहले एक घुमंतू कवि यहाँ आए। संयोगवश हमारी उनसे भी मुलाकात हुई। वे अत्यंत बुद्धिमान और तीक्ष्ण बुद्धि के धनी हैं, और काव्य कला में निपुण हैं। ईश्वर की कृपा से उन्हें जो काव्यमय स्वभाव प्राप्त हुआ है, वह खाकानी-ए-हिंद शेख मुहम्मद इब्राहिम ज़ौक़ के स्वभाव से बहुत मिलता-जुलता है। इस नगर में आकर उन्होंने शेख से शिष्यता प्राप्त की और अत्यंत प्रसन्न हुए। उनका नाम मौलवी दिलदार साहब है; वे बदायूं से हैं, जो सुल्तान जी साहब (उनकी समाधि सदा पवित्र रहे) की जन्मभूमि भी है। यह सच है कि उस स्थान की धरती प्रशंसनीय लोगों के जन्म के लिए प्रसिद्ध है: कहा जाता है कि वहाँ प्रेम और सच्ची भावना से परिपूर्ण अनेक व्यक्तियों का जन्म हुआ है। वे ज़हरुल्लाह खान नवा के निकट संबंधी वंशज हैं, जो मिर्ज़ा साहब (उन पर शांति हो) के समकालीन एक प्रसिद्ध कवि थे और उन्होंने हिंदी और फ़ारसी में दो-दो दीवान लिखे थे। हमारी उनसे तीन-चार बार मुलाकात हुई। वहाँ उपस्थित लोगों के अनुरोध पर, उन्होंने तात्कालिक रूप से कुछ छंद रचे और सभा में उनका पाठ किया। संक्षेप में, ऐसे तीव्र स्वभाव और संयमित, विवेकशील मस्तिष्क वाले व्यक्ति बहुत कम ही देखने को मिलते हैं।
संयोगवश नवाब मिर्ज़ा ऊपर वर्णित कहानी में से एक सभा में उपस्थित थे। वे शहीद नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान के पुत्र होने और लोहारू परिवार से अपने संबंध के कारण प्रसिद्ध थे। शहर के साहित्यकार भी जानते थे कि यद्यपि नवाब मिर्ज़ा काव्य जगत में नए थे, फिर भी वे इसकी पेचीदगियों से भलीभांति परिचित थे। मज़ाक़ साहब द्वारा अपनी रचनाएँ सुनाने के बाद, दिल्ली के कवियों से अपनी कविताएँ सुनाने का अनुरोध किया गया। नवाब मिर्ज़ा की बारी बिल्कुल अंत में आई। जब नवाब मिर्ज़ा ने वह छंद सुनाया जिसका हमने ऊपर उल्लेख किया है, तो उन्होंने देखा कि श्रोताओं में से किसी ने अपनी मुद्रा बदल ली है। यह सुनाए गए छंद में किसी बात को लेकर संदेह या अनिश्चितता का संकेत था। नवाब मिर्ज़ा ने बाद में पता लगाया कि वह व्यक्ति हकीम गुलाम मौला क़लक मेराथी था, जो हकीम मोमिन खान साहब मोमिन का शिष्य था। उन्हें हिंदी में फारसी शैली की रचनाएँ जैसे मोमिन बहुत पसंद थीं, और फारसी में मौलवी इमाम बख्श सहबाई के शिष्य होने के कारण यह पसंद और भी तीव्र हो गई थी।
सभा समाप्त होने पर नवाब मिर्ज़ा हकीम गुलाम मौला साहब के पास गए, उन्हें सलाम किया और अपनी मधुर हिंदी में, जिसमें रामपुरी पठानी शैली का हल्का सा तीखापन था, पूछा, “इस सेवक ने देखा कि आदरपूर्वक प्रार्थना कर रहे व्यक्ति ने अपनी मुद्रा में थोड़ा सा बदलाव किया। यदि इस सेवक की किसी कविता में कोई त्रुटि पाई गई हो, तो कृपया मुझे उसकी त्रुटि के बारे में सूचित करें।”
हकीम गुलाम मौला साहब स्वभाव से बेहद शर्मीले थे; इसीलिए उन्होंने खुलेआम सभा में दाग़ को चुनौती नहीं दी थी। अब जब दाग़ ने उनसे सीधे बात की, तो वे एक-दो पल चुप रहे, और फिर

संयमित स्वर में बोले, 'जी नहीं, महोदय। मुझे किसी दोष का पता नहीं था। दरअसल, मुझे बस कुछ ऐसा लगा जो मेरी समझ से परे था।'
यह एक रोचक संवाद होने की उम्मीद थी। जो लोग जा रहे थे या जाने वाले थे, वे सुनने के लिए रुक गए।
'महोदय, कृपया आदेश दीजिए। मैं ध्यान से सुन रहा हूँ।'

हाकिम साहब के चेहरे के भाव स्पष्ट रूप से प्रकट कर रहे थे कि उन्हें प्रश्न उठाने पर खेद हो रहा था। उन्होंने मन ही मन कहा कि उन्हें दाग़ की आयत में किसी भी तरह की 'समस्या' होने से इनकार कर देना चाहिए था; बात यहीं खत्म हो जाती। लेकिन अब उनके पास आगे बोलने के अलावा कोई विकल्प नहीं था, 'मियां साहब, मेरी समस्या बस इतनी सी है: आपने राजसी बाज़ के घोंसले की उपमा या छवि को बहुत अच्छे से गढ़ा है। लेकिन मुझे लगता है कि राजसी बाज़ के बारे में यह कहा गया है कि उसका कभी घोंसला नहीं होता। यह मुझे थोड़ा अटपटा लगा...'
हाकिम साहब अब इतने संकोची हो गए थे कि उन्होंने अपना वाक्य पूरा नहीं किया।
‘ईश्वर की उदारता ही है कि वह इतना ध्यान देते हैं। लेकिन वास्तव में, “बाज़ का घोंसला” वाक्यांश का प्रयोग कलीम हमदानी ने किया था।’ अब उन्होंने अपने हाथ सीने पर जोड़कर सत्रहवीं शताब्दी के महान फ़ारसी कवि की कविता को स्पष्ट और मधुर स्वर में सुनाया:
वह निर्दोषों का खून बहाकर किसी की परवाह नहीं करता: शाही बाज़ के घोंसले की ज़मीन पर गौरैया के पंख बिखरे पड़े हैं।
यह आंशिक रूप से आयत की उत्कृष्टता और आंशिक रूप से दाग़ द्वारा अपने प्रयोग के लिए अत्यंत उपयुक्त प्रमाण पत्र प्रस्तुत करने की तत्परता के कारण था कि सभा में देर तक और ज़ोरदार तालियाँ बजती रहीं। हकीम गुलाम मौला क़लाक़ उठे और नवाब मिर्ज़ा को गले लगाया।
‘केवल ईश्वर ही दोषरहित है! हे नौजवान, तुम सदा सुखी रहो। प्रमाण पत्र कितना उपयुक्त था, और आयत कितनी सुंदर थी! मैं उस्ताद की सभा में भी तुम्हारा ज़िक्र करूँगा। इसे जारी रखो; अल्लाह की मर्ज़ी से तुम जल्द ही दिल्ली का गौरव और सम्मान बनोगे।’
हकीम साहब कलीम हमदानी के शब्दों को गुनगुनाते हुए चले गए। दिलदार अली मज़ाक़ ने नवाब मिर्ज़ा की पीठ थपथपाई और कहा, 'बदाओं जाने से पहले, मैं आपसे कम से कम एक बार और मिलना चाहूँगा।' उन्होंने मन ही मन सोचा कि उन्हें इस नौजवान को तुरंत अपने उस्ताद से मिलवा देना चाहिए, कहीं ऐसा न हो कि हकीम गुलाम मौला क़लक अपने उस्ताद हकीम मोमिन साहब से उसका ज़िक्र कर दें और उन्हें नवाब मिर्ज़ा को अपने शिष्यों में शामिल करने के लिए मना लें। उन्होंने मन ही मन कहा, 'इतना प्रतिभाशाली नौजवान, उसे तो मेरे उस्ताद का शिष्य बना देना चाहिए।'
कवियों और काव्य जगत में एक तेजस्वी नए सितारे के उदय ने काव्य जगत में कार्यरत लोगों के दिलों को रोमांचित कर दिया। वरिष्ठ कवि यह देखने के लिए उत्सुक थे कि क्या यह नवोदित चिड़िया सिमुर्ग (पौराणिक ग्रिफिन) बन पाएगी। युवा कवि इस बात से सहमत थे कि इतनी कम उम्र में ऐसी प्रतिभा दुर्लभ है। दाग अन्य कवियों की कविताओं को याद रखने और दोहराने में

जितने कुशल थे, उतने ही सहज भाव से रचना करने में भी। अब उनके मित्र और परिचित कॉफी हाउस में उनके साथ शतरंज खेलते थे और शर्त यह थी कि यदि वे हार गए, तो उन्हें निर्धारित छंद और लय में एक ग़ज़ल की रचना करनी होगी।

यह जल्द ही एक आम नज़ारा बन गया: लोग दाग़ को खेलते देखने और उनके प्रतिद्वंदी को सबसे अच्छी चालों के बारे में सलाह देने के लिए इकट्ठा होते थे। हल्की-फुल्की हंसी-मज़ाक चलती रहती थी; कभी-कभी दाग़ का प्रतिद्वंदी सलाहों की भरमार से भ्रमित हो जाता था, जिससे दाग़ का खेल और बेहतर हो जाता था। ज़ाहिर है, उनका मकसद दाग़ को हराना और फिर उन्हें वहीं पर किसी कठिन लय और छंद में सात छंदों की ग़ज़ल रचने के लिए आमंत्रित करना था।

हालांकि, नवाब मिर्ज़ा एक कुशल खिलाड़ी थे, इसलिए खेल देखने वालों की सलाह और निर्देशों के बावजूद उनके प्रतिद्वंदियों के लिए उन्हें हराना मुश्किल हो जाता था।

'अरे यार हामिद! तुम्हारा घोड़ा (योद्धा) इस समय गधे से कम नहीं है। मेरे भाई, इसे वहाँ से हटाकर रानी के पीछे रख दो।'

नहीं, नहीं, बिलकुल नहीं, हामिद, मेरे भाई! इस मियां खान की अक्ल पूरी तरह से खराब हो गई है। हामिद मियां साहब, आप नवाब मिर्जा के खिलाफ रानी का मोहरा आगे बढ़ाइए, और फिर देखिए खेल कितना रोमांचक हो जाता है! खेल ऐसे ही खेला जाता है!

सचमुच! ये कैसे दोस्त हैं, ये तो अपने ही पक्ष के खिलाफ हो जाते हैं; ये तो दुश्मनों से भी बदतर हैं। अरे, प्यारे बड़े भाई, क्या तुम्हें समझ नहीं आ रहा? अगर प्यादा आगे बढ़ जाए, तो नवाब मिर्ज़ा का घोड़ा चलने के लिए स्वतंत्र हो जाएगा।

'यार, तुम लोग घोड़ों और गधों की लगाम से बंधे खच्चरों से भी बदतर हो। देखते नहीं? नवाब मिर्ज़ा पाँच मिनट में संभोग करने वाला है! मेरी सलाह मानो, अपने बादशाह को किलेबंदी के पीछे हटा लो। यह मोर्चा उसके लिए पल-पल खतरनाक होता जा रहा है!'

इस प्रकार अनावश्यक सलाहों से भ्रमित होकर, दोनों में से एक को जल्दी ही मात दे दी जाएगी। यदि नवाब मिर्ज़ा होते, तो सभा में उपस्थित कवियों को एक नमूना पंक्ति सुझाने के लिए आमंत्रित किया जाता। 'लेकिन देखिए, अंत्यानुप्रास घंटी की तरह बजना और झनझनाना चाहिए, और घोड़े की तरह तेज़ दौड़ना चाहिए। इस युवा मियां साहब को थोड़ा तो यह समझना चाहिए कि रामपुर से दिल्ली कैसे बिना रुके सरपट दौड़ते हुए जाया जाता है!'

इस पर ज़ोरदार हंसी गूंजी, नवाब मिर्ज़ा की हंसी बाकी सब की हंसी से भी ज़्यादा तेज़ सुनाई दी। फिर उन्होंने दर्शकों में से एक थोड़े उद्दंड व्यक्ति को संबोधित करते हुए कहा, 'अरे दोस्त! ज़रा इस खुले हाथी का ध्यान रखना। यह बड़े जोश में दहाड़ रहा है। इस पर नज़र रखना, कहीं यह अपनी ही पंक्तियों को तोड़ने न लगे!'

अब और भी ज्यादा हंसी गूंज उठी, और वहां मौजूद कई लोगों को एक हाथी के बारे में एक कुछ हद तक अश्लील कहावत याद आ गई जो अपनी ही सेना की पंक्तियों के खिलाफ मार्च करता है।

इस प्रकार, नवाब मिर्ज़ा को ग़ज़ल की रचना के लिए प्रस्तावित की जाने वाली पंक्ति के संबंध में

हंसी-मज़ाक और सुझावों तथा प्रति-सुझावों के आदान-प्रदान के दौरान, सर्वसम्मति से एक पंक्ति को मंजूरी दे दी जाती थी:
किसी ने भी उस घर के पास मौत को आते नहीं देखा।
यह पंक्ति ठीक से बोली भी नहीं गई थी कि नवाब मिर्जा ने हैरानी से कहा:
हे प्रभु, क्या मेरे शत्रु का निवास स्वर्ग है? उस घर के पास मृत्यु को आते हुए किसी ने कभी नहीं देखा!
तालियों की गड़गड़ाहट शांत होने से पहले ही नवाब मिर्जा ने दो और छंद पढ़े:
हे दयालु परामर्शदाता, बस इतना ही बता दीजिए: उस चाँद जैसे सुंदर चेहरे वाली स्त्री का चेहरा, क्या आपने कभी देखा था या नहीं? अफ़सोस की बात है, सच्चे प्रेमियों की कहानी के पन्ने, आपने कभी ध्यान से नहीं पढ़े।
नहीं! बिलकुल नहीं! तुम लोगों ने प्रतियोगिता जानबूझकर हारी! इतनी जल्दी और इतनी अच्छी रचना कोई नहीं कर सकता।
ये मीर बाकिर अली थे; उनका उपनाम जाफरी था। वे सभी कवियों के गौरव, मीर निज़ामुद्दीन ममनून के छोटे भाई और शिष्य थे, जिनका कुछ महीने पहले ही देहांत हो गया था, और जिनके शोक में जाफरी अब भी अपनी कमर पर काला पट्टा बांधे हुए थे। उनके बोलने का अंत अभी हुआ ही था कि नवाब मिर्ज़ा ने समापन छंद कहा:
मैंने हमेशा दाग को किसी न किसी मूर्ति-गृह में ही पाया; वह कितना नेक इंसान था, मैंने उसे कभी अपने घर में नहीं देखा!
तालियों की गड़गड़ाहट से कॉफी हाउस की छत लगभग गिर पड़ी, लेकिन मीर बाकिर अली का दाग पर भाषण अभी खत्म नहीं हुआ था। उन्होंने बाकी लोगों से ऊंची आवाज में अपना फैसला सुनाया, 'ठीक है, मैं मानता हूं कि शब्द रंगीन हैं, हर शब्द अर्थ से सही ढंग से जुड़ा हुआ है, लेकिन इसमें शुरुआती छंद कहां है? नवाब मिर्जा हमें शुरुआती छंद देने में असफल रहे हैं।'
कुछ श्रोता उसे घूर रहे थे। लेकिन श्रोताओं में एक प्रख्यात युवा कवि मीर मुहम्मद अली तिश्ना भी मौजूद थे। उनके नशे और शायद थोड़े पागलपन या 'मग्नता' के दिन अभी शुरू ही हुए थे। वे लगभग नग्न अवस्था में घूमते थे और अक्सर कवियों की सभाओं या कॉफी हाउसों में आते थे, लेकिन शायद ही कभी किसी चर्चा में भाग लेते थे। उनकी बुद्धि पूरी तरह तेज थी और उनका दिमाग पूरी तरह सक्रिय था। उन्होंने थोड़ी व्यंग्यात्मक मुस्कान के साथ कहा, 'तो ईश्वर कुछ क्यों न कहें? लड़के से हर मांग का जवाब दिलवाने की कोई जरूरत नहीं लगती।'
नवाब मिर्ज़ा तुरंत ही संकेत समझ गए। वे उठे, सलाम किया और मीर साहब के पैर छूते हुए बोले, 'महामहिम, सर्वशक्तिमान ईश्वर को परेशान होने की आवश्यकता नहीं है। मैं आपके विचारार्थ एक प्रारंभिक श्लोक प्रस्तुत करता हूँ।'
मेरी प्रिय मूर्ति, जो मेरी इंद्रियों को मोहित कर लेती है, यदि कोई ऐसा है जिसने उसे नहीं देखा, तो निश्चित रूप से स्वयं भगवान ने भी उसे नहीं देखा!
मीर मुहम्मद अली तिश्नाह मौन थे, नवाब मिर्ज़ा पर बरस रही तालियों की गड़गड़ाहट के बीच धीरे-धीरे झूम रहे थे। शोर थमने पर उन्होंने कहा, 'केवल ईश्वर ही दोषरहित है! प्रिय नौजवान, वह

दिन दूर नहीं जब तुम हम सबकी कविता की प्यास बुझाओगे। बस एक बात है: यदि तुम "उसने नहीं देखा" की जगह "द्रष्टा ने नहीं देखा" कह दो, तो तुम्हारी कविता एक सच्चे रत्न की तरह परिपूर्ण हो जाएगी।'

नवाब मिर्ज़ा ने फिर से तिश्ना साहब के पैर छुए। उन्होंने कहा, 'उस्ताद का पद खाली है।' उनका मतलब था कि मीर साहब जैसे उस्तादों के लिए हमेशा जगह रहेगी। तिश्ना साहब ने जवाब दिया, 'अरे, मैं न तो उस्ताद हूँ, न ही कविता का पारखी। आपको तो वास्तव में मियां इब्राहिम के दरवाजे पर दस्तक देनी चाहिए।'

'बहुत खूब, महोदय। मैं जल्द ही उनसे संपर्क करने का कोई तरीका ढूंढ लूंगा।'

एक मित्र के घर पर भी इसी तरह की एक सभा हुई, जिसमें दिल्ली के प्रमुख कवि घनश्याम लाल असी उपस्थित थे। वे ज़ौक़ की तरह शाह नासिर के शिष्य थे, लेकिन दोनों उस्ताद-भाइयों के बीच संबंध तनावपूर्ण थे। कई लोग उन्हें उनके दिवंगत उस्ताद शाह नासिर के समान ही दर्जा देते थे। वे जटिल तुकबंदी और अंत्यानुप्रास वाली ग़ज़लों की रचना में पूर्णतः निपुण थे। नए विषयों की रचना के लिए प्रसिद्ध, अत्यंत विद्वान, कुशल तैराक, सुलेखक और संगीतकार, ऐसा लगता था मानो कला और शिल्प कौशल उनकी रगों में खून की तरह दौड़ता हो। उन्होंने कभी दिल्ली से बाहर कदम नहीं रखा और स्वयं को दिल्ली की साहित्यिक और सामाजिक संस्कृति का आदर्श और संरक्षक मानते थे। नवाब मिर्ज़ा का नाम उन तक पहुँच चुका था, विशेषकर उनकी तात्कालिक कविताएँ रचने की क्षमता।

आसी साहब ज़ौक़ और बादशाह सम्राट दोनों को बहुत पसंद नहीं करते थे, लेकिन यह किसी कवि-प्रतिद्वंद्विता के कारण नहीं था। जब शाह साहब की एक ग़ज़ल पर ज़ोरदार बहस चल रही थी, तो आसी साहब ने स्वाभाविक रूप से शाह साहब का समर्थन किया; अपनी सशक्त रचनाओं से उन्होंने उस ग़ज़ल की आलोचना करने वालों को चुप करा दिया। ज़ौक़, जो बादशाह के गुरु थे, शाह साहब का विरोध कर रहे थे। बादशाह ज़ौक़ का समर्थन कर रहे थे, और यह आरोप लगाया गया कि बादशाह ने मौलवी राशिदुद्दीन नामक किसी व्यक्ति को पत्र लिखकर कहा था कि उन्हें 'हिंदू काफ़िर' की प्रशंसा नहीं करनी चाहिए। यह कथित पत्र सार्वजनिक सभा में पढ़ा गया। उपस्थित सभी कवियों ने इस निर्देश को अनुचित और बादशाह के हिंदू-विरोधी पूर्वाग्रह का खुलासा करने वाला बताया। उन्होंने आसी साहब की ग़ज़ल को ज़ौक़ की ग़ज़ल से कहीं अधिक श्रेष्ठ बताया।

इस पत्र की कहानी मनगढ़ंत लगती है, क्योंकि अबू ज़फ़र सिराजुद्दीन बहादुर शाह हिंदू और मुसलमानों के बीच सद्भाव और शांति के लिए जाने जाते थे, और अपनी सभी प्रजा के प्रति निस्वार्थ स्नेह रखते थे। वे निश्चित रूप से चाहते होंगे कि उनके गुरु ज़ौक़, आसी साहब से भी आगे निकल जाएँ, लेकिन वे मूर्ख या संकीर्ण सोच वाले नहीं थे, कम से कम इतने तो नहीं कि किसी अनजान व्यक्ति को ऐसा निर्देश लिखें। खैर, तब से आसी साहब के मन में अबू ज़फ़र सिराजुद्दीन बहादुर शाह के प्रति असंतोष का भाव था, और परिणामस्वरूप ज़ौक़ के साथ भी उनके संबंध तनावपूर्ण हो गए थे। शायद उन्हें कहीं से पता चला कि तिश्ना साहब दाग़ को सुझाव दे रहे थे कि उन्हें ज़ौक़ का शिष्य बन जाना चाहिए। इसलिए वे दिल्ली के साहित्यिक जगत में

उभरते इस नवोदित सितारे की प्रतिभा को परखने के लिए और भी उत्सुक थे। इस प्रकार, उस सभा में उन्होंने किसी से दाग़ के विरुद्ध युद्ध छेड़ने का आदेश दिया।
'प्रिय नौजवान,' उन्होंने कहा, 'हम आपको सुनने के लिए बेहद उत्सुक हैं। आप तात्कालिक रचना के लिए प्रसिद्ध हैं।'
'महोदय, मैं आपकी सेवा में तत्पर हूँ। कृपया आदेश दीजिए।'

'ठीक है, ये रही पिछली सदी के महान संगीतकार मियां जुरात की एक प्रारंभिक पंक्ति। हम चाहेंगे कि आप इसी के अनुरूप रचना करें।' उन्होंने पंक्ति सुनाई:
कोई उसकी आवाज़ के लिए खुद को कुर्बान कर देगा, और उसे बोलते सुनने के लिए मर जाएगा; कोई उसके नखरे के लिए खुद को कुर्बान कर देगा, और उसे बोलते सुनने के लिए मर जाएगा।
मुंशी घनश्याम लाल असी चुनौती वाले श्लोक से कुछ खास खुश नहीं थे। लेकिन उन्होंने चुप रहना ही बेहतर समझा। नवाब मिर्ज़ा ने तुरंत व्यंग्य भरे लहजे में जवाब दिया, 'महोदय, यह कोई खास परीक्षण का तरीका नहीं है। मैं इसके बाद झटपट श्लोक रच सकता हूँ। यह तो बस एक चाल है: आपको बस एक-दो शब्द बदलने हैं, और आपका श्लोक तैयार है। उदाहरण के लिए, जुरत साहिब के इस पहले श्लोक को फिर से देखिए।'
उन्होंने पाठ किया:
जब तुम यहाँ हँसते हुए आते हो, तो आश्चर्य और प्रशंसा का सैलाब उमड़ पड़ता है; और तुम्हारी मुस्कान: यह आश्चर्य और प्रशंसा का सैलाब उमड़ पड़ता है!
'तो आप देख सकते हैं, महोदय, आपको बस एक शब्द ढूंढना है, और आपकी कविता पूरी हो जाएगी। अब कृपया सुनिए।' नवाब मिर्ज़ा ने एक पल भी रुके बिना कविता सुनाना शुरू कर दिया:
कोई मित्र के लिए स्वयं को बलिदान कर देगा, और उसकी बातें सुनने के लिए मर जाएगा; कोई विश्वासपात्र के लिए स्वयं को बलिदान कर देगा, और उसकी बातें सुनने के लिए मर जाएगा। वह संगीत जो जुनून से भर देता है, वह वार्तालाप जो हलचल मचा देता है: कोई ऐसे संगीत के लिए स्वयं को बलिदान कर देगा, और ऐसी वार्तालाप सुनने के लिए मर जाएगा।
फिर उन्होंने एक-दो सांसों के लिए विराम लिया और फिर पाठ करना शुरू किया:
जब तुम रात में यहाँ आते हो, तो आश्चर्य और प्रशंसा का कोलाहल मच जाता है; जब तुम चले जाते हो, तो प्रलय का शोर मच जाता है। बस एक पल के लिए, जैसे इड के नए चाँद के समय, तुम्हारा यहाँ आना प्रलय का कोलाहल मचा देता है।
परीक्षा आयोजित करने वाला व्यक्ति वसंत ऋतु के आगमन की तरह प्रचुर मात्रा में प्रवाहित हो रही छंदों को देखकर अवाक रह गया। लेकिन घनश्याम लाल असी इतनी आसानी से अपनी प्रशंसा करने वाले नहीं थे। उनके होठों पर हल्की सी मुस्कान थी जब उन्होंने कहा, 'मियां नवाब मिर्जा, आप बिल्कुल सही हैं। ग़ज़ल के लिए ऐसे छंद रचना आसान है। यह स्पष्ट है कि आपकी रुचि अच्छी है और आपका स्वभाव कविता कला में निपुण है। लेकिन रुबाई, वह तो बिल्कुल अलग बात है।'

'जी सर, क्योंकि इसमें चार परस्पर जुड़ी हुई पंक्तियाँ प्रस्तुत करनी होती हैं, न कि केवल दो।'
‘बहुत बढ़िया। एकदम सही।’
नवाब मिर्ज़ा के चेहरे पर एक चतुर मुस्कान झलक रही थी। संयोगवश, उन्होंने ठीक एक दिन पहले ही एक रुबाई रची थी, जिसमें अंत्यानुप्रास बहुत लंबा था। वे बारहवीं शताब्दी के एक महान फ़ारसी कवि की नकल कर रहे थे।
‘तो, हे प्रभु, यदि आप चाहें तो मैं आपको एक रुबाई भेंट कर सकता हूँ।’
‘आपका मतलब अभी, इसी क्षण से है?’
‘ईश्वर इसे जिस तरह चाहे देख सकते हैं। मैं अभी एक रुबाई भेंट कर सकता हूँ।’ नवाब मिर्ज़ा ने जानबूझकर अपने शब्दों को कुछ अस्पष्ट रखा।
‘तो फिर यहीं और अभी क्यों नहीं,’ असी ने कहा। ‘हम सभी आपकी कविता सुनने के लिए उत्सुक हैं।’
‘बहुत खूब, महोदय, सुनना ही आज्ञा मानना है।’ नवाब मिर्ज़ा ने ये पंक्तियाँ बिना रुके, सहजता से बोलीं। किसी को भी यह अंदाज़ा नहीं था कि वे ये वाक्य बिना तैयारी के बोल रहे थे।
कोई नहीं समझ सका, संसार का स्वरूप क्या है; कोई नहीं बता सका, संसार का स्वरूप क्या है।
घनश्याम लाल असी खुशी से उछल पड़े। उन्होंने दोनों हाथ ऊपर उठाकर कहा, 'हे भगवान! यह निर्दयी लड़का कितनी अद्भुत पंक्तियाँ सुना सकता है! अब देखते हैं यह तीसरी पंक्ति कैसे सुनाता है। महोदय, कृपया सुनाइए, सुनाते रहिए!'
नवाब मिर्ज़ा अपनी सीट से आधा उठे, सलाम किया और फिर से बोलना शुरू किया:
कोई नहीं समझ सका, संसार का स्वरूप क्या है; कोई नहीं बता सका, संसार का स्वरूप क्या है।
‘अब महोदय, मैं तीसरी पंक्ति प्रस्तुत करता हूँ,’ उन्होंने कहा:
आकाश एक के बाद एक पहेलियाँ प्रस्तुत करता रहा;
तीसरी पंक्ति पूरी होने से पहले ही, एक आदरणीय सज्जन अपनी जगह से आधे उठकर बोले:
“कोई भी इस पहेली को नहीं सुलझा सका: संसार का स्वरूप क्या है?” केवल ईश्वर ही दोषरहित है! काश, उन होठों को चूमने का मन करे जिनसे ऐसी पंक्ति निकली हो! मियां दाग, अल्लाह आपको और भी रोशन करे! यह शाह नासिर का एक और शिष्य था; उसका नाम मिर्ज़ा फ़िदा हुसैन था और उपनाम फ़िदा था। वह नवाब हातिम खान का पोता था। इस भाषण की सुंदरता चौथी पंक्ति के पूरे अर्थ को सहज रूप से समझने में थी, और इस बात में भी कि ‘दाग’, जिसका अर्थ ‘निशान’ (घाव या जलने का) होता है, को उज्ज्वल माना जाता है।
दाग के कोमल, युवा चेहरे को देखकर, दर्शकों में से कई लोग मन ही मन मुस्कुराए और सोचने लगे, 'काश, जिसके होंठों से ऐसी पंक्ति निकली हो, उन्हें चूमने का मन करे!' तालियों की गड़गड़ाहट जारी रही; दाग 'वाह!', 'केवल ईश्वर ही दोषरहित है!' और 'सच है, बिलकुल सच!' जैसी प्रशंसा भरी आवाजों के बीच पूरे मन से रुबाई का पाठ करते रहे।
कोई नहीं समझ सका, संसार का स्वरूप क्या है; कोई नहीं बता सका, संसार का स्वरूप क्या है?
आकाश ने एक के बाद एक कई पहेलियाँ प्रस्तुत कीं; कोई भी इस पहेली को हल नहीं कर सका: संसार का स्वरूप क्या है?

जब तालियों की गड़गड़ाहट थम गई, तो घनश्याम लाल असी दाग के पास गए, स्नेहपूर्वक और आशीर्वाद देते हुए उनके सिर पर हाथ फेरा और कहा, 'अल्लाह की कसम, अगर हमारे शाह साहब, अल्लाह उनका दर्जा बुलंद करे, आज यहां होते, तो मैं आपको उनकी सेवा में ले जाता, क्योंकि ऐसा अनमोल रत्न उनके खजाने के लिए सबसे उपयुक्त होता।'
नवाब मिर्ज़ा ने झुककर सलाम किया, आसी और मेज़बान से विदा ली और सीधे अपनी माँ के पास चले गए। वज़ीर अपने बेटे का लाल चेहरा देखकर परेशान और दुखी हो गया।
'नवब मिर्जा, आप अस्वस्थ तो नहीं हैं? आपका चेहरा इतना गर्म क्यों है?'
'नहीं, अम्मा जान,' उसने थकी हुई मुस्कान के साथ कहा, 'बस मुझे लगता है...'
तब नवाब मिर्ज़ा को एहसास हुआ कि अगर उसने अपनी माँ के अकेलेपन या उनकी अनसुलझी समस्याओं के बारे में एक शब्द भी कहा, तो वह इसे उसकी धृष्टता समझकर गंभीर रूप से आहत हो जाएँगी। वह दिखावे या कल्पना से परे, किसी भी तरह के संरक्षण के प्रति विशेष रूप से संवेदनशील थीं। लेकिन नवाब मिर्ज़ा को स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहा था कि अब उनकी माँ के शेष जीवन में अकेलापन और तंगहाली ही उनका भाग्य था। आरामदेह, अक्सर ऐश्वर्यपूर्ण और विलासितापूर्ण जीवन, जिसकी उन्हें आदत हो गई थी, अब संभव नहीं था। अपने खर्चों को यथासंभव कम करते हुए, उन्होंने नौकरों को निकाल दिया था और हबीबा को घरेलू कामों में मदद करने लगी थीं। मंझली के रामपुर चले जाने के बाद वज़ीर का सामाजिक जीवन वैसे भी सीमित हो गया था। अब जब वज़ीर दिल्ली लौट आए थे, तो जब भी मंझली रामपुर से दिल्ली आती थीं, तो वह खुद खानम का बाज़ार जाती थीं, बजाय इसके कि वज़ीर को तिराहा बैरम खान स्थित अपनी हवेली आने की परेशानी उठानी पड़े, जिससे गाड़ी किराए पर लेने, महंगे कपड़े और मेज़बानी के उपहारों का खर्च बच सके। शहीद नवाब के मकबरे पर वज़ीर की यात्राएँ भी अब काफी कम हो गई थीं; वहाँ जाने का खर्च और वहाँ के भिखारियों को दान देना ऐसी प्रतिबद्धताएँ थीं जिन्हें वह अब वहन नहीं कर सकती थीं।
दूसरी ओर, नवाब मिर्ज़ा थे, जो पूरी तरह आश्वस्त थे कि उन्हें कविता को ही अपने जीवन का जुनून और पेशा बनाना है। अपनी माँ की व्यावहारिक सेवा और सहायता करना उनके लिए तभी संभव था जब उन्हें कोई नौकरी मिल जाए: किसी समृद्ध राज्य में दरबारी कवि की। लेकिन नवाब मिर्ज़ा की वर्तमान प्रतिभा और संभावनाओं के बावजूद, यह मंज़िल बहुत दूर थी: वे दरबारी कवि नियुक्त होने या किसी दरबार में कवि-कर्मचारी के रूप में काम करने के लिए बहुत छोटे थे। उनके विकल्प सीमित थे: वे कविता का जीवन त्यागकर किसी रईस के यहाँ किसी सांसारिक, गैर-साहित्यिक कार्य में लग सकते थे; या वे अपनी माँ के साथ रह सकते थे, जिससे उनका बोझ कम होने के बजाय और बढ़ जाता। फिर भी, ऐसे सांसारिक, 'व्यावहारिक' काम भी मुश्किल से मिलते थे। उनके पिता के परिवार में कोई भी ऐसा नहीं था जिसे उनसे और उनकी माँ से स्नेह हो, या कम से कम इतना गहरा रक्त संबंध हो कि उन्हें मदद या सहायता के योग्य समझे।
नवाब मिर्ज़ा की वरिष्ठ सौतेली माँ, अफ़ज़ल-उन निसा बेगम, वास्तव में उनके अस्तित्व को ही नकारना पसंद करती थीं। वह जानती थीं कि अंग्रेज़ी कानून के अनुसार—भले ही वह भारत में लागू न हो, फिर भी मौजूद हो—एक जन्मजात पुत्र भी, यदि वह पहला पुत्र हो, तो पिता की

संपत्ति का हकदार होता है। उन्हें आशंका थी, या कम से कम डर था, कि एक बार वज़ीर खानम को दुनिया में अपनी जगह बनाने का मौका मिल जाए, तो वह दिन दूर नहीं जब वे लोहारू के नवाबियों में हिस्सा मांग सकें। वह उन्हें लालची, साहसी और पारिवारिक परंपराओं, व्यक्तिगत समृद्धि या पैतृक संपत्ति से रहित मानती थीं। उनका मानना था कि ऐसे लोग लाभ के लिए कुछ भी कर सकते हैं।

इसके अलावा, नवाब मिर्ज़ा को एहसास हुआ कि वे दिल्ली में थे—एक ऐसी दिल्ली जहाँ अंग्रेजों का हर चीज़ में दबदबा था। उन्हें याद आया कि उनकी माँ ने उन्हें एक बार बताया था कि उनके पिता की गिरफ्तारी और मुकदमे के दौरान अंग्रेज इतने अत्याचारी थे कि उन्होंने नवाब शम्सुद्दीन खान के परिवार या दल के किसी भी सदस्य को शहर में कहीं भी बाहर निकलने से लगभग पूरी तरह रोक दिया था। तब से, अंग्रेजों की कठोर और भयानक शक्ति मूल निवासियों पर कई गुना बढ़ गई थी। कोई भी प्रभावशाली व्यक्ति नवाब मिर्ज़ा को किसी लाभकारी पद पर नियुक्त करने का साहस नहीं कर सकता था। आखिरकार, वह एक विद्रोही मूल निवासी नवाब का नाजायज पुत्र था, जिसने एक अत्यंत शक्तिशाली अंग्रेज अधिकारी की हत्या करवाई थी।

सभी बातों पर विचार करते हुए, नवाब मिर्ज़ा के लिए सबसे अच्छा विकल्प यही प्रतीत होता था कि वह जितनी जल्दी हो सके एक कवि के रूप में अपनी प्रतिष्ठा और वरिष्ठता स्थापित कर लें और किसी ऐसे देशी दरबार में कवि के रूप में रोजगार प्राप्त कर लें जहाँ का शासक उन्हें आराम से जीवन यापन करने और अपनी माँ का पूरा भरण-पोषण करने के लिए पर्याप्त वेतन दे सके।

‘तुम कहाँ हो, नवाब मिर्ज़ा, विचारों में खोए हुए? कुछ कह रहे थे तुम?’

उसकी मां के कोमल शब्दों ने उसे विचारों के भंवर से बाहर निकाल दिया, लेकिन उसने कुछ नहीं कहा; वह बस उदास निगाहों से अपनी मां को देखता रहा।

'बताओ, बेटा! तुम्हें क्या परेशान कर रहा है? तुम तो मुझे ऐसे घूर रहे हो जैसे कोई बेवकूफ हो! कुछ बोलो, बच्चे मियां साहब, तुम्हें क्या बात परेशान कर रही है?'

उसने पुकार कर कहा, 'हबीबा, तुम नीचे क्या कर रही हो, बीबी? क्या तुम बच्चे मियां के लिए रात के खाने का आयोजन नहीं करने जा रही हो?'

जी हां, सब कुछ तैयार है, खानम साहब। मैंने जानी राम को बेकरी से ताजी चपातियां लाने भेजा है। बस उन्हें वापस आने दीजिए, खाना अभी परोसा जाएगा। वैसे, क्या बात है, क्या मियां साहब को आज दोपहर थोड़ी भूख लगी है?

दिल्ली के अधिकांश मध्यमवर्गीय घरों, विशेषकर मुस्लिम घरों की तरह, चपातियाँ या अन्य रोटियाँ, जैसे कि अफगानी नान, बेकरी से ताज़ी मंगाई जाती थीं; घर पर केवल मांस या स्टू ही बनाया जाता था।

‘तो महोदया,’ नवाब मिर्जा ने हंसते हुए कहा, ‘आप चाहती हैं कि हम खाना न खाएं?’

‘युवक,’ हबीबा ने थोड़ा चिढ़ाते हुए मुस्कुराते हुए जवाब दिया। ‘असल बात तो यह है कि आप एक कवि हैं, और वो भी एक महान कवि। कवियों को देखते ही भूख बेकाबू हो जाती है।’ नवाब मिर्ज़ा को इस मज़ाक के दोनों अर्थ स्पष्ट थे। कवि गरीब होते हैं, उन्हें खाने को ज़्यादा नहीं

मिलता; दूसरा अर्थ प्रशंसात्मक था: हर कोई खाने जैसी सांसारिक चीज़ों में मशगूल होने के बजाय कवियों को सुनना चाहता है।
वज़ीर मुस्कुराया। 'अरे, ये क्या है, हबीबा? क्या तुम हमें ये बताना चाहती हो कि कवियों को खाने की ज़रूरत नहीं होती?'
कवियों की रुचि, या उसकी कमी का विषय, नवाब मिर्ज़ा को वह अवसर प्रदान कर गया जिसकी उन्हें तलाश थी। उन्होंने फ़ारसी मुहावरे का प्रयोग करते हुए कहा, 'अम्मा जान, असल बात तो यह है कि मुझे कवि होना चाहिए; मुझे कविता के माध्यम से अपनी रोजी-रोटी कमाने और आपकी सेवा करने और आपका ख्याल रखने के अलावा और कुछ नहीं करना चाहिए। वास्तव में, मैं इसके अलावा कुछ और कर ही नहीं सकता।'
वज़ीर के चेहरे पर एक हल्की सी मुस्कान आई, हालाँकि वह उसकी आँखों तक नहीं पहुँची। उसकी बड़ी, गहरी भूरी आँखों में चिंता के बजाय चिंतन स्पष्ट झलक रहा था। वह एक पल के लिए चुप रही, फिर धीरे-धीरे बोली, व्यंग्यपूर्ण लहजे का इस्तेमाल न करते हुए, 'अहा, एक सिपाही का बेटा, और कविता? बहुत बढ़िया, वाकई बहुत बढ़िया! तो फिर और क्या कहना? कविता की तलवार जैसी कोई चीज़ तो होती ही है, है ना?'
‘क्या मिर्ज़ा ग़ालिब एक सैनिक के बेटे नहीं हैं, अम्मा जान? और क्या वह खुद को कवि नहीं कहते?’
‘अरे, वो तो!’ वज़ीर ने कुछ तिरस्कारपूर्ण लहजे में कहा। ‘वो खुद को नवाब का बेटा भी बताता है।’
तो क्या मैं भी नवाब का पुत्र नहीं हूँ?
वज़ीर कहना चाहता था: लेकिन तुम्हारे जीवन के आकाश में चमकने वाला सूरज कई साल पहले डूब गया। तुम्हारे दूसरे पिता को भी मौत के लुटेरे ने छीन लिया। अब किसके समर्थन पर निर्भर करते हुए तुम जीवन की सुख-सुविधाओं का दावा कर सकते हो?

चिंता भरी निगाहों से अपने बेटे का चेहरा देखते हुए वह अपने मन की बात कहने की हिम्मत नहीं कर पा रही थी। उसने एक सुगठित, अंडाकार चेहरा देखा, जो जलती हुई काली लौ की तरह दमक रहा था। तुर्की शैली की नाक, लंबी, लेकिन थोड़ी मुड़ी हुई। उसके पिता की तरह उभरी हुई गाल की हड्डियाँ, और उसकी माँ से भी गहरा रंग; उसकी माँ जैसी आँखें: बड़ी, गहरे भूरे रंग की, जिनमें हल्की लाल रेखाएँ थीं। मजबूत और सीधी गर्दन, ऊँचा माथा। लंबा और संतुलित शरीर, जिसकी वाणी उसके पिता के आत्मविश्वास से भरी थी। चेहरे पर हल्की, नियमित दाढ़ी की शुरुआत हो रही थी, न कि जवानी के दिनों की तरह बिखरी हुई। वह इतना मोहक रूप से सुंदर दिख रहा था कि मन करता था कि बस बैठकर उसे निहारता रहे।
उसके घने बाल दिल्ली के नवीनतम फैशन के अनुसार थे: कंधे से थोड़े नीचे, चमकीले, थोड़े घुंघराले, जिन्हें करीने से कंघी किया गया था, लेकिन स्टाइल नहीं किया गया था। उसने चार कोनों वाली काली टोपी पहन रखी थी, जिसके कोने और किनारा सोने की भारी कढ़ाई से सजे थे। उसकी पतलून गुलबदन नामक फूलों वाले रेशमी कपड़े की थी। लंबी और ढीली, जो उस

समय के फैशन के अनुसार थी। यह पोशाक उस पर इतनी जंच रही थी कि वह एक चमकते हुए गुलदाउदी के फूल जैसा लग रहा था। वज़ीर ने मन ही मन सोचा, ऐसा करिश्माई युवक कहीं का राजा होना चाहिए। कितना अफ़सोस है, मेरे प्यारे बेटे को उसकी हैसियत के अनुसार दिन में दो वक्त का भरपेट खाना और चैन की नींद भी नहीं मिलती, राजसी सुख-सुविधाओं की तो बात ही छोड़िए।

सबसे बड़ी बात तो यह है कि उसे कविता से बेहद लगाव है; वह कविता को ही अपनी रोजी-रोटी का जरिया बनाना चाहता है। नवोदित कवियों को हर जगह भटकना पड़ता है, किसी बड़े, प्रसिद्ध कवि के साथ रहना पड़ता है, वर्षों तक उनके चरणों में बैठना पड़ता है, तब जाकर आखिरकार वे गुरु कहलाने का दावा कर पाते हैं; वह भी तब जब गुरु यह घोषणा करते हैं कि शिष्य अब स्वयं एक गुरु बन चुका है और उसे आगे अभ्यास और शिक्षा की आवश्यकता नहीं है। एक महान कवि बनना कोई आसान काम नहीं है। इसके लिए जी तोड़ मेहनत करनी पड़ती है, ठीक वैसे ही जैसे चक्की वाला दिन भर पीसता है और शाम को बस एक छोटी सी रोटी ही उठा पाता है। फिर भी, सफलता योग्यता से कहीं अधिक भाग्य पर निर्भर करती है।

उसने अपने बेटे के चेहरे को कुछ और ध्यान से देखा, मानो उसे बेहतर ढंग से समझने की कोशिश कर रही हो। नवाब मिर्ज़ा के चेहरे पर कई भाव थे: आत्मविश्वास, ज़िद्दीपन, और एक बिगड़े हुए बच्चे की तरह हर चीज़ को अपना बताने की ज़िद। वज़ीर ने मन ही मन कहा: खैर, शायद यह बच्चे की ज़िद है, इससे ज़्यादा कुछ नहीं। मुझे उसे समझाना चाहिए, उसे बताना चाहिए कि वह असल में क्या चाहता है, या फिर इस मामले को आगे बढ़ने से रोकना चाहिए। हो सकता है, समय आने पर उसका मन बदल जाए। मुझे कोई जल्दी नहीं है।

अचानक उसके मन में एक विचार आया: नवाब मिर्ज़ा शायद कविता को पेशे के तौर पर गंभीरता से नहीं लेते; उसे इस मामले में उनकी सोच की गहराई को परखने का कोई और तरीका ढूंढना चाहिए। वह मुस्कुराई और अपनी मधुर, सुरीली आवाज़ में मुशफ़ी की एक रुबाई सुनाई।

मेरे पास कविता के जुनून के सिवा कुछ नहीं है; मैं और कुछ नहीं कर सकता: न सांसारिक, न पवित्र। मुशफी, जो लोग पैसा कमाने के गुर जानते हैं, वे पत्थरों से भी रोटी बना सकते हैं!

उसने अपने बेटे को थोड़ी जिज्ञासा और थोड़ी शरारत भरी निगाहों से देखा, मानो पूछ रही हो कि क्या वह बड़े कवि की बुद्धिमत्ता का कोई कारगर जवाब सोच सकता है। नवाब मिर्ज़ा के चेहरे पर कुछ बेबसी झलक रही थी: क्या वह सचमुच इतनी सुंदर और इतनी प्रभावशाली कविता का जवाब दे सकता था? या क्या वह कविता के सार का खंडन करने के लिए अपनी कोई कहावत गढ़ सकता था? उसे एक जवाब सूझा, हालांकि कविता में नहीं। वह हँसा और बोला, 'लेकिन अम्मा जान, पत्थर की रोटी भी गला घोंट सकती है, या खुद ही एक तरह का फंदा बन सकती है!'

वज़ीर मुस्कुराईं, क्योंकि वह अपने बेटे के अर्थ की गहराई को तुरंत समझ गईं। 'बिल्कुल सही, रोटी की बेतहाशा लालसा हमारे हृदय की पवित्रता को सचमुच गला घोंट सकती है।' वह थोड़ी देर रुकीं। 'लेकिन मुझे लगता था कि रोटी की इस दीवानगी को काबू में रखा जा सकता है, ताकि गंदी चर्बी और खून दिल पर हावी न हो जाएं।'

नवाब मिर्ज़ा को गुस्सा आ गया। आखिर बेगम साहब क्या चाहती हैं? हम फारसी कवि के कहे शब्दों की बात नहीं कर रहे हैं:
क्या तुम ईश्वर और साथ ही इस सांसारिक दुनिया को भी चाहते हो? यह एक खोखला विचार है, असंभव है। यह पागलपन है!
हम तर्कसंगत अस्तित्व की बात कर रहे हैं। मेरा यह कहना नहीं है कि मुझे अपना कॉलर फाड़कर हमेशा के लिए पागल हो जाना चाहिए और मजनून की तरह पागलपन की शक्ति से प्रेरित होकर इधर-उधर भागना चाहिए, जो कभी-कभी कविता कवि में कुछ क्षणों के लिए उत्पन्न करती है। मेरा बस यही कहना है कि मनुष्य अपनी कविता के बल पर संसार में अपना स्थान बना सकता है और अपनी रोजी-रोटी भी कमा सकता है।
उन्होंने अपनी झुंझलाहट को दबाया और वास्तव में विनम्रता से कहा, 'अम्मा जान, मुझे लगता है कि मुशफी का मतलब यह कहना है कि वह कविता के प्रति अपने जुनून को बरकरार रखेंगे और अपनी बुद्धि का उपयोग करके अपनी रोजी-रोटी भी कमाएंगे?'
'माफ़ कीजिए, मुझे यहाँ वह अर्थ समझ नहीं आ रहा है। स्पष्ट रूप से, वह कह रहा है कि जो व्यक्ति कविता के प्रति दीवाना है, वह इस दुनिया में या दूसरी दुनिया में किसी काम का नहीं है।'

नवाब मिर्ज़ा के हृदय में तीव्र असंतोष की लहर उठी, लेकिन उन्होंने संयम बनाए रखा। 'हम काव्य रचनाओं से अपने मनचाहे या वांछित अर्थ निकालते हैं। बस मुझे बताइए, आप क्या चाहते हैं?'
वज़ीर ने गंभीर स्वर में कहा, 'मुझे कुछ नहीं चाहिए। मैं बस समझना चाहता हूँ, बस इतना ही।'
‘क्या बात है?’ नवाब मिर्जा ने जानबूझकर संक्षिप्त स्वर में कहा, हालांकि उनका स्वर कठोर नहीं था।
‘कुछ खास नहीं, बस कविता के प्रति वो उमंग और जुनून...’ उसने ठीक समय पर खुद को रोक लिया। वह कहना चाहती थी कि कविता में जीवन बिताना उन लोगों के लिए है जिनके पास खूब पैसा है, जो पेट भर खाते हैं और अगले भोजन की चिंता नहीं करते। उसने अपना रुख बदल लिया। ‘...कविता के प्रति वो उमंग और जुनून, ये आपको कहाँ ले जाएगा?’
‘अम्मा जान! ये तो पूछने लायक सवाल ही नहीं है,’ उसने अपनी माँ की आँखों में सीधे देखते हुए कहा। ‘क्या कविता मेरे लिए स्थिर आय के रास्ते नहीं खोलेगी, और क्या यह मेरे आध्यात्मिक, बौद्धिक और भावनात्मक जीवन में आनंद और चहल-पहल नहीं लाएगी?’
‘मुझे इसी बात का डर था,’ वज़ीर ने कहना शुरू किया, और यह उनके जीवन के उन कुछ मौकों में से एक था जब नवाब मिर्ज़ा ने उन्हें बीच में ही रोक दिया। उन्होंने तीखे स्वर में कहा, ‘अल्लाह की कसम, अम्मा जान, आपको मुझ पर इतना भी भरोसा नहीं है कि मैं एक कवि बन सकता हूँ और आपका अच्छे से ख्याल रखा जाए और आपको आराम से देखकर मेरा दिल तड़पता है! सफलता या असफलता हमारे हाथ में नहीं है, लेकिन कम से कम कोशिश तो कर सकते हैं।’
अपने बेटे के सामने वज़ीर की ज़बान पहली बार लड़खड़ा गई। 'मैं बस इतना ही कहना चाहती हूँ कि... तुम अभी भी काफी छोटे हो।'
नवाब मिर्ज़ा ने तीखी और कड़वी आवाज़ में कहा, 'मैं, और अभी भी जवान! यह तो वाकई बड़ी

बात है! मुझे हमारे लिए जितनी शिक्षा संभव थी, उतनी मिल चुकी है। क्या आप नहीं देखते? अगर आज हमारा कोई अभिभावक होता, तो वह मुझे बहुत पहले ही शादी करवा देता, मुझे किसान बना देता, परिवार का मुखिया बना देता। मुझसे बहुत छोटे कई लोगों को जीवन की भट्टी में धकेल दिया जाता है; उन्हें कुछ मिलता है, या शायद कुछ खो भी देते हैं, लेकिन वे उस आग से गुज़रते हैं। उनके पास कोई विकल्प नहीं होता।'

वह सांस लेने के लिए रुका, उसकी माँ उसे अचंभित होकर देख रही थी। क्या यही वह नन्हा बच्चा था जिसे मैं जीवन भर अपने सीने से लगाकर रखना चाहती थी? लेकिन नवाब मिर्ज़ा का तीखा हमला जल्द रुकने वाला नहीं था। वह पहले की तरह ही उग्र स्वर में बोला, 'देखो हमारी जागीर की क्या हालत है? तुम्हारा चेहरा बेजान है; तुम्हारा घर उजाड़ और असुविधाजनक है। जिस तरह का जीवन तुम पाने के लायक हो, जिस तरह का जीवन तुम्हारा जन्मसिद्ध अधिकार है, वह मेरे लिए कहीं दूर टंगी हुई चाँदी की मोमबत्ती के समान है, जो सभी आकाशों के आकाश से भी कहीं अधिक दूर है। अगर ये दिन-रात ऐसे ही चलते रहे, तो तुम्हारा जीवन एक कहानी बनकर रह जाएगा, जिसे सब भूल जाएँगे; तुम्हारा जीवन वृक्ष पूरी तरह खिलने और फलने से पहले ही काट दिया जाएगा। तुम्हारे पास बस मैं ही हूँ, आदमी, लड़का, जो भी कहो, जो दुनिया में जा सकता है, कुछ कर सकता है। लेकिन तुम मानती हो कि मुझे अभी भी हबीबा की लोरी और तुम्हारी बाहों की गर्माहट चाहिए! कब तक तुम मुझे एक सुरक्षित भूमिगत कक्ष में पालती रहोगी?'

नवाब मिर्ज़ा का गला भर आया। वज़ीर चुपचाप बैठी रही, उसकी आँखों में आँसू भरे थे, वह अपना भीगा चेहरा छुपाने के लिए कोई जगह ढूंढ रही थी। हबीबा चुपचाप दीवार का सहारा लेकर खड़ी रही। वह नवाब मिर्ज़ा की दुविधा और चिंता को वज़ीर से ज़्यादा समझती थी, लेकिन अब तक उसने कुछ कहने की हिम्मत नहीं की थी। अब उसने हिम्मत जुटाई। 'खानम साहब,' उसने लगभग फुसफुसाते हुए कहा, अपने दुपट्टे से आँसू पोंछते हुए। 'सच कहूँ तो, बच्चे मियां सही हैं। दुनिया बहुत बड़ी है; हमारी ज़िंदगी बहुत छोटी है। हम जैसे लोगों के लिए दुनिया में कदम रखे बिना कोई पनाह नहीं है। अल्लाह उन्हें सलामत रखे, बच्चे मियां घर के मुखिया हैं। उन्हें हमारी चिंता करने का, घर चलाने की चिंता करने का पूरा हक है।'

‘क्या मैंने कभी कहा था कि मैं उसे जीवन भर अपने सीने से लगाकर रखूँगी?’ वज़ीर ने थकी हुई, हताश आवाज़ में कहा। ‘क्या मैं इन बातों को नहीं समझती? लेकिन मेरे घर का कोई भी आदमी बाहर जाने के बाद कभी वापस नहीं लौटा। मैं अपने दिल के एक टुकड़े को अपने शरीर से निकालने की हिम्मत कैसे जुटा सकती हूँ?’

‘मेरी गुस्ताखी के लिए क्षमा करें,’ हबीबा रुक-रुक कर बोलीं। ‘खानम साहब बिल्कुल सही हैं। लेकिन बाहर की दुनिया अलग है, जो भी हो। अगर हमारे नवाब साहब आज जीवित होते…’

हबीबा, उसका नाम मत लो! यह मेरे दिल में छुरा घोंपने जैसा है। अल्लाह उसे जन्नत नसीब करे। उसकी उदारता के कारण ही हमारे सिर पर छत है और हम दिन में दो बार चूल्हे जला पाते हैं।

वज़ीर चुप थी, अपनी यादों में खोई हुई। किसी ने कुछ नहीं कहा। फिर उसने एक गहरी साँस ली और दोबारा बोलना शुरू किया, 'मैंने सुना है कि फिरंगियों ने उसके जैसे कई लोगों को झूठे बहाने बनाकर बेदखल कर दिया या अन्यायपूर्वक उनकी जान ले ली। हाँ, यह तेरहवीं शताब्दी है, कुछ

भी हो सकता है... हबीबा, तुम जो कह रही हो वह सच है। मैंने अपने बड़ों को कहते सुना है कि दुनिया में ऐसे जीना चाहिए जैसे साबुन में तार फंसा हो, जिसे कभी भी आसानी से निकाला जा सके। लेकिन इसमें उलझना आसान है, इससे अलग रहना कहीं ज़्यादा मुश्किल। जब तक जीवन है, तब तक इसके जाल और फंदे भी हैं।'
नवाब मिर्ज़ा अब अपनी माँ के चरणों के पास पालथी मारकर बैठ गया। “ठीक है, अम्मा जान, चलो इस बहस को यहीं खत्म करते हैं। मुझे भी दुनिया का सामना करने का अधिकार है, और कवि का पेशा सम्मान से परे नहीं है, और यह मेरे स्वभाव के बिल्कुल अनुकूल है... अपना क्रोध और अपना दर्द भूल जाइए। चलिए खाना खाते हैं; मुझे सचमुच भूख लगी है।”

वज़ीर ने अब देखा कि दोपहर ढल चुकी थी; खाने का समय बहुत पहले ही बीत चुका था। ‘हे भगवान!’ वह चिल्लाई। ‘मैं रोने में इतनी मग्न हो गई थी कि मुझे समय का पता ही नहीं चला! हबीबा, कृपया नई चपातियाँ मंगवाइए; ये पुरानी चपातियाँ अब मिट्टी जैसी लगेंगी।’
‘खानम साहब, बेकरी जाने की झंझट में पड़ने की कोई ज़रूरत नहीं है। मैं झटपट कुछ नई चपातियाँ बना लूँगी। हमारे बच्चे मियां और खानम साहब पंद्रह मिनट से भी कम समय में खाना खा लेंगे।’
हबीबा रसोई में चली गई, और वज़ीर चेहरा धोने के बहाने पानी के कमरे में चला गया। लेकिन नवाब मिर्ज़ा को मन ही मन शर्म आ रही थी: वह जानता था कि हाथ-चेहरा धोना तो बस आँसू पोंछने और आँसुओं के दाग मिटाने का बहाना था। उसके दिल में एक असहनीय तीव्र तड़प उठ रही थी। किसी भी तरह, चाहे इसके लिए उसे गुलामी भी करनी पड़े, उसे अपनी माँ के लिए इतना धन जुटाना चाहिए कि वह चार-पाँच भूखे पेटों को उत्तम भोजन खिलाने के बाद भी खा सके। और... उसे उससे और उसकी जान से ज़रा भी डर न हो।
अचानक, उनके मन में कदम शरीफ की छवि और उसमें स्थित उनके पिता की कब्र की तस्वीर उभर आई। उन्होंने सोचा, क्या वहाँ मेरे लिए कोई संकेत है? शायद नहीं, लेकिन उनकी पवित्र कब्र पर तीर्थयात्रा किए हुए काफी समय हो गया है। मैं कल अवश्य वहाँ जाऊँगा।

वह अगले दिन नहीं जा सका, लेकिन चौथे दिन या उसके बाद कदम शरीफ जाने का इंतजाम कर लिया। बेटे पर माँ के साथ लंबी बहस या वाद-विवाद का मानसिक दबाव था, वहीं माँ भी उतनी ही तनाव में थी। फिर भी, उसने इस मामले को दरकिनार कर दिया और बेटे के लिए रोज़ाना की मेहमाननवाज़ी का इंतज़ाम करने में व्यस्त होकर अपना समय बिताया। नवाब मिर्ज़ा इतने दृढ़ निश्चयी नहीं थे: उन्हें ज़ुकाम हो गया और वे दो दिन तक बुखार से बीमार पड़े रहे।
वह चौथे दिन कदम शरीफ गया, लेकिन उसने अपनी माँ को नहीं बताया: वह जानता था कि पर्याप्त साधनों की कमी के कारण वज़ीर का आना-जाना अब बहुत कम हो गया था। उसे लगा कि अगर वह अपनी माँ को इस यात्रा के बारे में बताएगा, तो वह ज़रूर जाना चाहेगी, लेकिन उसके लिए पैसे जुटाना मुश्किल होगा और वह और भी दुखी होगी।
सबसे पहले वे कदम शरीफ स्थित दरगाह में गए और कुछ देर ध्यान किया। फिर उन्होंने अपने पिता की समाधि पर उनके लिए आवश्यक प्रार्थनाएँ कीं। उन्होंने वहाँ दफ़न सभी लोगों के लिए भी प्रार्थना की और परिसर से बाहर निकलने ही वाले थे कि उन्हें मुख्य द्वार पर थोड़ी हलचल सुनाई दी। ऐसा प्रतीत हुआ कि कुछ राजदंड धारण करने वाले लोग पुकार रहे थे: 'रास्ता साफ़ करो!'; 'हटो, सज्जनों!'; 'चलते रहो!' तभी उन्होंने मुख्य द्वार पर एक भव्य, खुली पालकी देखी, जिसके चारों ओर लाल कपड़े पहने सेवक, हरे रंग की पगड़ी वाले राजदंड धारण करने वाले और सफेद वस्त्र पहने भाले धारण करने वाले लोग खड़े थे।
पालकी में सवार व्यक्ति अत्यंत सुंदर, सुव्यवस्थित और गरिमामय व्यक्तित्व वाला था। नवाब मिर्ज़ा ने राजा को कभी देखा नहीं था, लेकिन उनके राज्याभिषेक के चित्रों की प्रतियां आसानी से उपलब्ध थीं; इन चित्रों के कारण नवाब मिर्ज़ा स्वयं को ऐसा व्यक्ति बता सकते थे जो राजा को देखते ही पहचान लेगा। पालकी में बैठे व्यक्ति को देखकर उन्हें थोड़ा संदेह हुआ: क्या यह स्वयं ईश्वर की परछाई है? लेकिन उनका संदेह तुरंत दूर हो गया, क्योंकि यदि वह राजा होते, तो वे अपने निजी हाथी पर सवार होते और राजकुमारों और अधिकारियों के विशाल काफिले से घिरे होते। लेकिन जो व्यक्ति उनसे मिलने आया था, वह कम से कम राज्य का राजकुमार तो अवश्य ही होगा।
सामने की ओर सीधी और सम्मानपूर्वक निगाहें टिकाए हुए, उन्होंने विशिष्ट अतिथि को ध्यानपूर्वक देखने का प्रयास किया। वे लगभग तीस-पैंतीस वर्ष के थे, लंबे और दुबले-पतले, लेकिन स्पष्ट रूप से मजबूत और व्यायाम एवं एथलेटिक्स से चुस्त-दुरुस्त शरीर वाले थे। उनका चेहरा पूर्णतः अंडाकार था, ऊँची गाल की हड्डियाँ, लंबी और सीधी नाक, और ऊँची और तनकर खड़ी गर्दन। उनकी आँखें गहरे काले रंग की थीं, जो एक तीक्ष्ण और ज्ञानवान बुद्धि की चमक से दमक रही थीं; उनका रंग हल्का भूरा था, और उनका चेहरा लंबी, लेकिन नुकीली दाढ़ी से ढका हुआ था, जो बहुत घनी नहीं थी, उनके पूर्वज सम्राट बाबर की याद दिलाती थी। सुंदर ढंग से कटी हुई, उभरी हुई मूंछें चेहरे के दोनों ओर रेशमी गुच्छों की तरह लटक रही थीं, लेकिन ऊपरी होंठ पर बहुत कम

थीं।
उन्होंने हरे रंग की रेशमी पैंट पहनी थी, जिस पर सोने की कढ़ाई थी; ऊपर से ढाका मलमल की लंबी, फिटिंग वाली कुर्ती पहनी थी, जिस पर भारी कढ़ाई वाले कश्मीरी ऊनी कपड़े से बना 'जमाह वर' था। 'जमाह वर' एक विशेष जैकेट होती है जिसे केवल राजा और राजकुमार ही पहनते हैं। उन्होंने भारी ब्रोकेड से बनी चार कोनों वाली काली मखमली टोपी और बनारसी रेशम की हल्के हरे रंग की कमरबंद पहनी थी। कमरबंद के एक तरफ रत्नजड़ित कटार लटकी थी; दूसरी तरफ रत्नजड़ित चांदी की पिस्तौल थी। उनके गले में सात लड़ियों का मोतियों का हार था, लेकिन उन्होंने टोपी पर कोई आभूषण नहीं पहना था। दोनों हाथों की दो-दो उंगलियों में हीरे, माणिक और पन्ना की चमकदार अंगूठियां थीं। उनके हाथों में एक पतली किताब थी, शायद प्रार्थनाओं का संग्रह। पालकी के चारों ओर लोग सलाम कर रहे थे। उसने मुस्कुराते हुए जवाब दिया और अपना दाहिना हाथ अपनी छाती के बाईं ओर रखते हुए एक भी शब्द नहीं बोला।
किसी ने फुसफुसाते हुए कहा: 'ये तो मिर्ज़ा फथुल मुल्क बहादुर हैं! अल्लाह की मर्ज़ी से, कितने शाही शख्स हैं, और उन पर हर तरह के कपड़े कितने अच्छे लगते हैं! वो हमारे बादशाह की साक्षात छवि हैं, अल्लाह उन्हें सलामत रखे।'
नवाब मिर्ज़ा के कदम, मानो स्वतः ही, राजकुमार की ओर बढ़ते चले गए। उन्हें लगा कि इतनी सहजता से इतने महान व्यक्तित्व की ओर बढ़ना गुस्ताखी हो सकती है। लेकिन कहीं न कहीं कोई आकर्षण काम कर रहा था। वे खुद को उनकी ओर खिंचा हुआ महसूस कर रहे थे, मानो अपनी इच्छा के विरुद्ध ही। जब वे पास पहुँचे, तो उन्होंने औपचारिक मुगल सलाम किया और द्वार से मुख्य सड़क की ओर जाने ही वाले थे कि एक राजदंडधारी ने, शायद राजकुमार के किसी इशारे पर, उनके कंधे पर हल्का सा हाथ रखा और कहा, 'महामहिम को साहिब-ए आलम व आलमीयन, संसार के स्वामी और उसमें रहने वालों के स्वामी, याद करते हैं।'
क्या उन्हें मैं याद हूँ? नहीं, कहीं कोई गलती हो गई है। साहब आलम मुझे कैसे पहचानेंगे? नवाब मिर्ज़ा, जो काफी उलझन में थे, मना करने या विरोध करने ही वाले थे कि पालकी उठाने वालों ने राजकुमार की पालकी ज़मीन पर रख दी, और राजदंड उठाने वाले ने, जिसका हाथ अभी भी उस युवक के कंधे पर था, उसे राजकुमार के सामने पेश किया। नवाब मिर्ज़ा ने झिझकते हुए सलाम किया, उनकी नज़रें अपने जूतों पर टिकी हुई थीं। फिर वे वहीं खड़े रहे।
किसी ने अत्यंत परिष्कृत और सुरुचिपूर्ण स्वर में कहा, 'आपकी आयु दीर्घायु हो।' स्वर स्पष्ट था, मानो किसी कुशल संगीतकार का हो, जैसे किसी भारी पीतल की थाली को धीरे से बजाने पर निकलने वाली गूंजती हुई जीवंत ध्वनि।
हमें आपका विनम्र व्यवहार बहुत अच्छा लगा। आपका नाम क्या है और आपके पिता कौन हैं?
'माननीय महोदय... मैं... नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान का पुत्र हूँ। मेरा नाम नवाब मिर्जा है।'
'तो! आप फिरोजपुर झिरका और लोहारू के शासक नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान की संतान हैं?'
'माननीय न्यायाधीश ने सही कहा।'
'भाई, सुभान अल्लाह! वे सचमुच नेक स्वभाव के व्यक्ति थे। क्या उन्हें यहीं दफनाया नहीं गया है? और अब आप और आपके लोगों का क्या हाल है?'

‘महामहिम, आपका घरेलू दास और उसकी माता खानम के बाजार में आपकी कृपापूर्ण छत्रछाया में निवास करते हैं।’
‘मैं समझ गया। आपकी…’ राजकुमार रुक गए, शायद उन्हें याद आया कि सार्वजनिक रूप से महिलाओं के बारे में बात करना उचित नहीं था। ‘अच्छा, हमारा प्रणाम कहिए।’ उन्होंने अंतिम बात लगभग धीमी आवाज़ में कही और पालकी उठाने वालों को कोई अदृश्य इशारा किया। वे तुरंत समझ गए और उन्होंने पालकी को सहज, लगभग काव्यात्मक अंदाज़ में उठा लिया।
'ईश्वर की उपस्थिति हमारा पालन-पोषण करती है,' नवाब मिर्जा ने तीन सलाम किए और जुलूस के गुजरने तक वहीं जड़वत खड़े रहे।
वापसी की यात्रा के दौरान, नवाब मिर्ज़ा इस बात पर विचार करते रहे कि साहिब-ए आलम व आलमीयन ने उनमें दिलचस्पी क्यों दिखाई, लेकिन उन्होंने अपनी माँ को इस बारे में नहीं बताया। उन्होंने अपने दोस्तों से अनौपचारिक रूप से, झिझकते हुए पूछा कि क्या उनमें या उनकी माँ में कुछ ऐसा खास हो सकता है जिससे राजकुमार की दिलचस्पी जागी हो, लेकिन कोई उपयोगी परिणाम नहीं निकला। उन्हें बस इतना पता चला कि राजकुमार एक धर्मनिष्ठ, कोमल हृदय वाले व्यक्ति थे, और वे रमज़ उपनाम से कविताएँ लिखते थे, और शेख ज़ौक़ उनके रेख़्ता कविता के गुरु थे। नवाब मिर्ज़ा का मानना था कि शहर के प्रतिष्ठित लोगों से अधिक सामाजिक संबंध रखने से उन्हें अधिक ज्ञान प्राप्त होगा। उन्होंने दिल्ली के महान कवियों से परिचय करने का मन बना लिया था। उन्होंने सोचा कि उन्हें मिर्ज़ा ग़ालिब से शुरुआत करनी चाहिए। उन्होंने शाम को वज़ीर को बताया, 'अम्मा जान, कल मैं मिर्ज़ा ग़ालिब साहब से मिलने जाऊँगा।'
वज़ीर चिंता और इस कदम की बुद्धिमत्ता को लेकर अनिश्चितता के बीच फंसा हुआ था। 'मिर्ज़ा ग़ालिब साहब के बारे में... मुझे विश्वास है कि आप जानते होंगे... उनके बारे में जानते होंगे?'
'जी हां, बिल्कुल। वे फारसी के एक सच्चे महान विद्वान हैं; हिंदी कवि के रूप में भी उनका स्थान अतुलनीय है।'
लेकिन आपके स्वर्गवासी पिता के बारे में... मेरा मतलब है, उनके मन में उसके लिए अच्छे विचार नहीं थे, आप जानते हैं?
जी हां, महोदया, मैंने ऐसी खबरें सुनी थीं। लेकिन वह बात अलग है।
‘आपको यह याद रखना चाहिए कि ग़ालिब साहब का लोहारू के लोगों से अब भी बहुत गहरा संबंध है; उन्होंने वहीं शादी की है। और लोहारू के लोग भले ही आपके सक्रिय शत्रु न हों, लेकिन वे आपके मित्रों में भी नहीं हैं।’
लेकिन अम्मा जान, यह कवियों की दुनिया है। उस दुनिया की स्थिति अलग है।
वज़ीर ने अनिच्छा से ही सही, तीखे स्वर में कहा, 'अरे, तुम मुझे बोलने पर मजबूर कर रहे हो! मैं जानना चाहता हूँ, तुम अपने पिता के कट्टर शत्रुओं से सामाजिक संबंध क्यों रखना चाहते हो? क्या यह तुम्हें शोभा देता है?'
नवाब मिर्जा ने अपने शांत और संयमित अंदाज में कहा, 'अम्मा जान, क्या मैंने हमेशा यही नहीं कहा है कि सबसे अच्छी नीति यही है कि बीते हुए कल को भुला दिया जाए और अतीत को स्मृति के अभिलेखागार में कहीं दफना दिया जाए?'

‘कृपा करके मुझे ज्ञान सिखाओ! तुम्हारे पिता के हत्यारे यह देखकर अत्यंत प्रसन्न होंगे कि पुत्र ने सब कुछ क्षमा कर दिया है और भुला दिया है।’ वज़ीर की आँखों में आँसू भर आए थे।
नवाब मिर्ज़ा झट से पीछे हट गए। ‘कृपया नाराज़ न हों, अम्मा जान। सब कुछ आपकी मर्ज़ी के मुताबिक होगा। मैंने तो बस कवियों और कविता की दुनिया के बारे में कुछ व्यावहारिक बात कह दी। कवि एक अलग ही स्तर के होते हैं। और मिर्ज़ा ग़ालिब का इससे कोई सीधा संबंध नहीं था...। अगर मैं कवि बनूंगा, तो मुझे इन्हीं लोगों से मिलना-जुलना पड़ेगा। कुछ मेरे गुरु होंगे, कोई मेरा उस्ताद। उनमें से कुछ मेरे साथी और दोस्त भी बन सकते हैं।’ उन्होंने मुस्कुराते हुए अपनी बात से किसी भी तरह की नाराज़गी को दूर करने की कोशिश की। ‘और मुझे भी जल्द ही उस्ताद बनना है।’

वज़ीर ने भी अपना रुख बदल लिया: उनके लिए अपने बेटे से नाराज़ होना नामुमकिन था। उन्होंने कहा, 'प्यारे बेटे, मेरी सलाह तुम्हारे भले के लिए थी। पहले आगे का सोचो, फिर भागदौड़ भरी जिंदगी में कदम रखो। शहर महान कवियों से भरा पड़ा है।'
जी जी, महोदया। बिलकुल सही। कृपया बिल्कुल भी चिंता न करें।
नवाब मिर्ज़ा ने ग़ालिब से मिलने का विचार छोड़ दिया। दरअसल, वे कहीं गए ही नहीं, फिर भी उनका नाम काव्य जगत के हर वाकये में था। ग़ालिब साहब ने न केवल नवाब मिर्ज़ा के घर जाकर उनसे मुलाकात की, बल्कि वे स्वयं उस नौजवान को अपने यहाँ बुलाकर साहित्य के क्षेत्र में उनके प्रयासों को प्रोत्साहित करने के लिए उत्सुक थे।
लखनऊ के प्रख्यात कवि ख्वाजा हैदर अली अताश कई वर्षों से दृष्टिहीन थे। उनका स्वभाव सच्चे दरवेश जैसा था, उन्हें धन या प्रसिद्धि की कोई परवाह नहीं थी। उनका सामाजिक जीवन नीरस था; वे कहीं भी सामाजिक मेलजोल के लिए नहीं जाते थे और आगंतुकों को भी हतोत्साहित करते थे। फिर भी, जैसे ही वे कोई ग़ज़ल पूरी करते, उनके शिष्य और असंख्य प्रशंसक उसे तुरंत हर जगह मौखिक रूप से प्रकाशित कर देते थे। शेख नासिख के देहांत (1838) के बाद, ख्वाजा साहब पूर्वी क्षेत्र के इकलौते कवि थे जिन्हें आदर के साथ याद किया जाता था, भले ही श्रद्धा के साथ नहीं। वे बहुत बूढ़े नहीं थे, लेकिन दुर्बल थे, और आम धारणा यही थी कि वे इस दुनिया में ज्यादा समय तक नहीं रहेंगे। इसलिए उनकी एक झलक भी, और उनकी लिखी हर कविता, अत्यंत मूल्यवान थी। कौन जानता है, शायद वे कल हमारे बीच न हों?
ख्वाजा साहब की नई ग़ज़ल आना एक छोटी सी घटना की तरह था, जिसे मनाया और सराहा जाता था। उन दिनों दिल्ली में उनकी नई ग़ज़ल की खूब चर्चा होती थी; कई कवि उस्ताद की नकल करने या उनसे आगे निकलने की कोशिश करते थे। ख्वाजा साहब की ग़ज़ल की पहली पंक्ति थी:
ऐसा लगता है कि उसने नरगिस के फूल से नशे के गुर सीख लिए हैं, क्योंकि जब उसकी आंखें शराब के गिलास की तरह घूमती हैं, तो नशे में धुत लोगों की कतारें होश खो बैठती हैं और गिर पड़ती हैं।
कई सभाओं में, प्रारंभिक श्लोक की पहली पंक्ति को आदर्श माना जाता था; दिल्ली के कई

कवियों ने इस पर हाथ आजमाया। दाग ने भी इसी तर्ज पर एक ग़ज़ल रची; उनका प्रारंभिक श्लोक कुछ खास नहीं था।

काबा के निवासियों, मुझे मूर्तियों का घर कितनी अच्छी तरह याद है! नशे में धुत लोग बेफिक्र होकर इधर-उधर लोटते हैं, पागल लोग आते-जाते रहते हैं।
उनकी ग़ज़ल की कुछ अन्य पंक्तियाँ तो मानो कहावत बन गईं। उनमें से एक के बारे में कहा जाता था कि प्रेमिका के चेहरे का अप्रत्यक्ष वर्णन, उसके मिजाज और व्यवहार का वर्णन, विषय की रंगीनता, पहले कभी नहीं सुनी गई थी, और दो पंक्तियों की पंक्ति में इतनी खूबसूरती से रचित तो और भी कम।
अपने तेजस्वी चेहरे के सामने एक दीपक रखते हुए वह कहती है, अब देखते हैं: पतंगा कहाँ जाता है? दीपक की ओर, या मेरे चेहरे की ओर?
बाजार में हर पेशे से जुड़े लोग अपने-अपने काम में व्यस्त रहते हुए ग़ज़ल की कुछ और आयतें गाते थे, ठीक वैसे ही जैसे कभी महान मीर तकी मीर की प्रतिभाशाली आयतों के साथ हुआ करता था।
यह मेरे दिल तक तो पहुँच गया, पर सौ जगहों पर लड़खड़ा गया: क्या यह तुम्हारी निगाहों का तीर था, या किसी नशे में चूर व्यक्ति का? छल, नखरे, शरारत, धृष्टता, चारों ओर अशांति फैलाते हुए; अपनी शक्ति के नशे में चूर, क्या तुम कुछ और जानती हो, मेरी प्रिय आँखों, नरगिस के फूल की तरह मदहोश?
नवाब मिर्ज़ा के साथ शहर में घूमने वाले और अवसर मिलते ही अपनी नई कविताएँ सुनाने वाले दो युवक थे क़मरुद्दीन रकीम, जो ख्वाजा अमान के पुत्र थे, और सैयद ज़ाहिरुद्दीन हुसैन, जो प्रसिद्ध सुलेखक सैयद जलालुद्दीन हैदर मुरासा रकीम खान बहादुर याकूत रकीम सेकेंडस के पुत्र थे। रकीम की उम्र लगभग बारह या तेरह वर्ष थी और उन्होंने हाल ही में कविता लिखना शुरू किया था। वे औपचारिक रूप से मिर्ज़ा ग़ालिब के शिष्य थे, जिनसे उनका दूर का रिश्ता था। ज़ाहिर है कि उस उम्र में वे इतने अच्छे कवि नहीं हो सकते थे, लेकिन हवेली से संबंध होने के कारण उनका हर जगह स्वागत और सम्मान होता था। वे अल्लाह की देह से तीरंदाजी की शिक्षा लेते थे और अपने खाली समय में कविताएँ लिखते थे। ज़ाहिरुद्दीन अठारह या उन्नीस वर्ष के थे, लेकिन अविवाहित थे, इसलिए वे नवाब मिर्ज़ा और रकीम जैसे युवकों के साथ अपने हमउम्र लोगों की तुलना में अधिक जुड़ाव महसूस करते थे।
ज़ाहिर भी मिर्ज़ा ग़ालिब के काव्य-पाठक थे; वे कभी-कभार ग़ालिब से सुलेख की शिक्षा भी लेते थे। दरअसल, उनके पिता ने ही सम्राट ग़ालिब को सुलेख का प्रशिक्षण दिया था, इसलिए हवेली से उनका एक विशेष संबंध था। ज़ाहिर तीनों के अनौपचारिक मुखिया थे, लेकिन ज़रूरत पड़ने पर वे उनके साथ काफ़ी बेफ़िक्र और अनौपचारिक हो जाते थे। शहर में तीनों को पहले से ही होनहार, साफ़-सुथरे और संयमी नौजवानों के रूप में जाना जाता था। उनमें से दो का मिर्ज़ा ग़ालिब से पहले से ही संबंध था, और ग़ालिब की दाग़ में रुचि भी उस नौजवान पर अपना प्रभाव डाल रही थी। इसलिए ग़ालिब और दाग़ की मुलाक़ात होना तय था, चाहे देर से ही सही।

दाग़ की ग़ज़ल, और विशेष रूप से उसमें निहित 'दीपक और चेहरा' वाली पंक्ति, उनकी मुलाकात से कुछ दिन पहले मिर्ज़ा साहब के कानों तक पहुँच गई। संयोगवश, मिर्ज़ा साहब ने उन्हें अपने घर की ऊपरी बालकनी से देखा। उनकी कलाइयों पर फूलों की मालाएँ थीं; पैरों में फैशनेबल, घुमावदार चप्पलें थीं; टांगों में ढीली, फड़फड़ाती पतलूनें थीं; सोने की कढ़ाई वाली टोपियाँ थीं; आँखों के नीचे काजल की एक हल्की लेकिन स्पष्ट रेखा थी: मानो दुनिया की कोई परवाह न करते हुए, तीन युवक बाज़ार में ऐसे टहल रहे थे जैसे शहर में आए आम पर्यटक हों।
मिर्ज़ा साहब ने बालकनी की ऊँचाई से अचानक पुकारा, 'अरे नौजवानों, सभी सज्जनों, कहाँ जा रहे हो? इधर आओ, मेरे पास आओ!'
तीनों चौंककर ऊपर देखने लगे और उन्हें मिर्ज़ा ग़ालिब साहब का चेहरा दिखाई दिया, जो सद्भावना और उच्च बुद्धिमत्ता से दमक रहा था, अत्यंत सुंदर था और उत्सुकता से उनकी ओर देख रहा था। यदि वे इतने महान व्यक्तित्व द्वारा इतनी जल्दी संबोधित किए जाने से थोड़ा शर्माए और भ्रमित हुए भी, तो वे जल्दी ही संभल गए और 'जी साहब, ठीक है साहब' कहते हुए सीढ़ियों से चढ़कर बालकनी तक पहुँच गए। मिर्ज़ा साहब अपने कमरे में थे और तीनों के ऊपर आते ही संतुष्टि से मुस्कुरा रहे थे। तीनों ने तीन-तीन सलाम किए और दरवाजे पर खड़े हो गए। ज़ाहिर और रकीम को परिचय की आवश्यकता नहीं थी; नवाब मिर्ज़ा का मन उथल-पुथल में था। उन्हें अच्छी तरह याद था कि उनकी माँ ग़ालिब और लोहारू परिवार के बारे में क्या सोचती थीं और वे इस बात को लेकर असमंजस में थे कि उन्हें मिर्ज़ा साहब के साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए और मिर्ज़ा साहब उनके साथ कैसा व्यवहार करेंगे। मन ही मन सोचते हुए, 'जो होना है, होने दो', उन्होंने दहलीज पर कदम रखा और एक और सलाम किया।

'मैं अपनी उपस्थिति दर्ज कराता हूं।'
मिर्ज़ा साहब ने नवाब मिर्ज़ा को सिर से पैर तक देखा—उनका सुंदर चेहरा और सुगठित, युवा शरीर। लड़के का शरीर भले ही उसके मन की अनिश्चितता को ज़ाहिर कर रहा हो, लेकिन वह अपने पिता की तरह ही आत्मविश्वास से खड़ा था और मिर्ज़ा साहब की आँखों में देख रहा था। नवाब मिर्ज़ा का लंबा कद दरवाज़े को पूरी तरह से भर रहा था, बाकी लोग पीछे छूट गए थे। मिर्ज़ा साहब ने स्नेह से बाहें फैलाकर उनका स्वागत किया और कहा, 'अहा! तो ये तुम हो! मेरे भाई शम्सुद्दीन अहमद खान के अपने बेटे!' उन्होंने नवाब मिर्ज़ा के गाल पर थपथपाया और आगे कहा, 'अंदर आओ, मैं तुम्हें इतने दिनों से ढूंढ रहा था।' नवाब मिर्ज़ा की ओर हाथ हिलाते हुए उन्होंने रकीम को कान से धीरे से खींचा और कहा, 'अंदर आओ, मेरे प्यारे बदमाश! आओ और आराम से पालथी मारकर बैठो।' फिर उन्होंने ज़ाहिर के कंधे को छुआ और कहा, 'अंदर आओ, मियां ज़ाहिर, अंदर आ जाओ। अजनबियों की तरह वहाँ खड़े मत रहो!'
इस प्रकार, ग़ालिब साहब ने बड़ी सूझबूझ और समझदारी से तीनों नौजवानों का स्वागत किया और उन्हें सहज महसूस कराया। उन्होंने उनकी बैठने की व्यवस्था भी उतनी ही कुशलता से की: नवाब मिर्ज़ा उनके दाहिनी ओर, थोड़ा आगे, लगभग उनके सामने; ज़ाहिर ग़ालिब के दाहिनी ओर सीधा बैठा; रकीम उनके बाईं ओर। उन्होंने यह सब इतनी सहजता से किया कि मानो यह सब

अपने आप हो गया हो। ग़ालिब साहब ने अब नवाब मिर्ज़ा को प्रशंसा भरी निगाहों से देखा, 'युवक, कितना अच्छा समय था कि तुम मेरे घर से गुज़रे। पूरा दिल्ली तुम्हारे बारे में उत्सुक है, और इन दिनों जो एक व्यक्ति तुमसे मिल नहीं पाया, वह मैं ही था।' उन्होंने एक प्रसिद्ध फ़ारसी कविता को स्पष्ट, सशक्त और मधुर स्वर में सुनाया।

तुम्हारे साथ अलगाव की आग ने सभी दिलों को कबाब की तरह जला दिया; तुम्हारी इच्छा की बाढ़ ने सभी आत्माओं को तबाह और उजाड़ दिया।

“युवक, आज मैं आपसे वही ग़ज़ल सुनाने का अनुरोध करता हूँ जिसने आपको इतनी प्रसिद्धि दिलाई है... इतनी कम उम्र में इतना परिपक्व कवि! यह सच है कि अल्लाह का वरदान है... लेकिन बताइए, नन्हे कवि क्या खाएंगे?’ उन्होंने थोड़ा नाटकीय विराम लिया, शरारती मुस्कान के साथ कहा, “और क्या पिएंगे?”

युवा मेहमान मन ही मन सोच रहे थे कि क्या हमें विनम्रतापूर्वक यह कहकर चले जाना चाहिए कि हमें भूख नहीं है, तभी मध्यम कद का एक वृद्ध, लेकिन चुस्त-दुरुस्त व्यक्ति अंदर आया। उसने साफ सूती वस्त्र पहने थे, कंधे पर त्रिकोणाकार आकार में एक रंगीन रुमाल रखा था, गले में चांदी के मोतियों का हार था और दाहिनी तर्जनी उंगली में चांदी की फिरोजी अंगूठी थी। वह विभिन्न प्रकार के सूखे मेवों से भरी एक बड़ी धातु की थाली लेकर आया।

‘अरे, ये तो खुद मियां कल्याण हैं,’ ग़ालिब साहब मुस्कुराए। ‘उनकी थाली स्वादिष्ट पकवानों से भरी है।’ वे थोड़ा और मुस्कुराते हुए बोले, ‘वे जानते हैं कि यहाँ आए मेहमान संभ्रांत लोगों के बच्चे हैं: वे केवल वही खाएंगे जो मन और शरीर को शक्ति प्रदान करे।’

मिर्ज़ा साहब ने कमरुद्दीन रकीम की गर्दन को हल्के से पकड़ा और उस नौजवान का सिर सूखे मेवों की थाली की ओर झुकाते हुए हँसते हुए कहा, "छोटे बच्चे, फलों को अपने दाँतों से पकड़ो, अपने जबड़े भर लो, ताकि सबको पता चले कि तुम एक शेर के बच्चे हो। ये कैसी नज़ाकत है तुम्हारी, एक-एक करके उठा रहे हो, जैसे कोई मुर्गी ज़मीन पर चोंच मार रही हो?"

मिर्ज़ा साहब कमरुद्दीन की गर्दन पर अपना हल्का दबाव बनाए हुए थे, यह सुनिश्चित करते हुए कि वह आदेश का पालन करे। ग़ालिब साहब के हाव-भाव और वाणी से हर समय विनोद और प्रसन्नता झलकती थी। उन्होंने स्नेहपूर्ण लहजे में कहा, 'नवाब मिर्ज़ा, क्या आप जानते हैं, या मुझे लगता है कि आप जानते हैं, इस नौजवान सरदार के पिता मेरे भतीजे हैं। इसलिए मैं उनका दादा भी हूँ और उनका बड़ा प्रेमी भी!'

मिर्ज़ा साहब की हंसी मधुर थी, शोरगुल वाली नहीं, फिर भी संक्रामक थी। 'दादाजी' और 'महान प्रेमी' शब्दों के बीच के व्यंग्य और मिर्ज़ा साहब के बोलने के चंचल अंदाज़ पर सब लोग खिलखिलाकर हंस पड़े। नवाब मिर्ज़ा ने मन ही मन कहा, मैं बेवजह ही चिंता कर रहा था। वैसे भी, मिर्ज़ा नौशाह साहब के अलावा कोई और कूटनीति की इस कला को इतनी कुशलता से नहीं निभा सकता था और समय और परिस्थिति के अनुरूप इतने सुंदर शब्दों का प्रयोग नहीं कर सकता था।

नवाब मिर्ज़ा ग़ालिब साहब और रकीम तथा उनके दादा ख्वाजा हाजी के बीच के इतिहास से परिचित थे, जिनका कंपनी द्वारा मिर्ज़ा साहब और उनके परिवार के लिए निर्धारित पेंशन में किसी

भी हिस्से पर कोई अधिकार नहीं था। मिर्ज़ा साहब और शायद उनके परिवार के कुछ अन्य सदस्यों के अनुसार, यह ख्वाजा हाजी, जो एक निकम्मा व्यक्ति था और उनके परिवार से उसका कोई संबंध नहीं था, ने चालाकी से नवाब अहमद बख्श खान को बहला-फुसलाकर उस पेंशन का आधा हिस्सा अपने और अपनी संतान के लिए आवंटित करवा लिया था। मिर्ज़ा साहब ने बार-बार अपील की, लेकिन निर्णय अपरिवर्तित रहा। अब, पेंशन ख्वाजा हाजी के दो जीवित पुत्रों: शम्सुद्दीन, जिसे ख्वाजा जान के नाम से जाना जाता था, और बदरुद्दीन, जिसे ख्वाजा अमन के नाम से जाना जाता था, के बीच साझा की जाती थी। बाद वाला रकीम का पिता था। मिर्ज़ा साहब ने मानो पुराने विवादों को बुरी यादों के ढेर में धकेल दिया था। जब हंसी थम गई और सबने अपनी गंभीरता वापस पाई, तो ग़ालिब साहब ने नवाब मिर्ज़ा से अपनी ग़ज़ल पढ़ने को कहा जिसमें 'दीपक और चेहरा' वाली आयत थी। ग़ज़ल की बहुत प्रशंसा करने के बाद, उन्होंने ज़ाहिर की ओर रुख किया। 'अच्छा, मियां ज़ाहिर, क्या आपने हाल ही में कुछ रचा है?'

ज़ाहिर ने शर्मिंदगी से गला साफ किया। 'ईश्वर की कृपा हम पर हमेशा बनी रहे, लेकिन मुझे खेद है कि मैंने हाल ही में कुछ नया नहीं लिखा है।'

'ऐसा क्यों?' मिर्ज़ा साहब ने तीखे स्वर में पूछा।

'सर, उच्च किले में नौकरी मिलने के कुछ संकेत मिले हैं...'

'जॉब, इसका क्या मतलब है? क्या मुझे यह नहीं पता था कि आप वहां काफी समय से कार्यरत हैं?'

'परमेश्वर बिल्कुल सही कह रहे हैं। इस तुच्छ व्यक्ति को बारह वर्ष की आयु में शस्त्रागार का प्रबंधक और प्रबंधक नियुक्त किया गया था। यह लगभग छह-सात वर्ष पहले की बात है। अब शाही जुलूस के सहायक उपकरणों और मछली के शाही ध्वज के रक्षक के रूप में मेरी पदोन्नति और उच्च पद पर पहुंचने के संकेत मिल रहे हैं। इस प्रकार मुझे दिन में कई बार परमेश्वर के समक्ष बुलाया जाता है। यह ऐसा है मानो हर समय अनिश्चितता के फंदे पर लटका हुआ हो।'

'बहुत बढ़िया, मेरी बधाई हो। मौला की कृपा से, सब कुछ बहुत जल्द ठीक हो जाएगा।'

'मौला' शब्द का प्रयोग अक्सर ईश्वर या पैगंबर के दामाद अली के लिए किया जाता था। शिया विचारधारा के लोग आमतौर पर अली का ही अर्थ समझते थे, जबकि सुन्नी कभी-कभी दोनों में से किसी एक या दोनों का ही अर्थ समझते थे। ग़ालिब शिया नहीं थे, लेकिन वे खुले तौर पर शियावाद की ओर झुकाव रखते थे।

मैं आपसे मेरे पक्ष में प्रार्थना करने का अनुरोध करता हूँ। लेकिन जहाँ तक कविता की बात है, मियां नवाब मिर्जा का स्वभाव इन दिनों बहुत ही शानदार है।

जी हाँ, ज़रूर। जो लोग उनसे प्रतिस्पर्धा करने का साहस रखते हैं, उन्हें भी उनके द्वारा अभी सुनाई गई ग़ज़ल के सामने हार माननी पड़ेगी। मियां नवाब मिर्ज़ा, जब भी आपको सुविधा हो, आ जाइए; और देखिए, इस बार मैं आपसे शेख जुरत की ग़ज़ल की शैली में एक ग़ज़ल चाहता हूँ।

इसके बाद मिर्ज़ा साहब ने जुरत की ग़ज़ल की पहली पंक्ति पढ़ी:

मेरा बेचैन दिल और दर्द से तड़पना कभी अलग नहीं हुए; मुझे इस बात की परवाह नहीं कि मैंने अपनी जान गंवा दी: अब कम से कम मैं उस पीड़ा से मुक्त हूँ।

मिर्ज़ा साहब ने तालियों की गड़गड़ाहट के बीच फिर से वही आयत पढ़ी और कहा, “इस पंक्ति के प्रवाह पर ध्यान दीजिए: ‘मेरा बेचैन दिल और दर्द से उसका तड़पना कभी अलग नहीं हुए।’ हा, कथन को समाप्त करने का कितना सुंदर तरीका है: मेरे बेचैन दिल का दर्द से तड़पना और मरना ही मुझे छोड़कर गया। देखिए, प्राण त्यागने की अवस्था भी अपने आप में तड़पने और छटपटाने की अवस्था है। वाह! केवल ईश्वर ही दोषरहित है!”
नवाब मिर्ज़ा ने विनम्रतापूर्वक कहा, “शेख जुरात के बाद लिखने की क्षमता मुझमें नहीं है। लेकिन मैं अपनी पूरी कोशिश करूंगा और आपके आदेश का पालन करूंगा।”
‘बहुत बढ़िया,’ मिर्ज़ा ग़ालिब ने कहा। ‘और देखो, मियां ज़ाहिर, तुम्हें भी जुरात की नकल करते हुए अपनी बुद्धि का इस्तेमाल करना चाहिए।’
वह एक पल के लिए रुका, फिर बोला: 'भगवान न करे, मेरा आप दोनों के बीच प्रतिस्पर्धा पैदा करने का कोई इरादा नहीं है। बस इतना है कि तुकबंदी और अंत्यानुप्रास के पैटर्न अच्छे हैं, और मियां ज़ाहिर भी कल्पना शक्ति से संपन्न कवि हैं।'
‘ईश्वर की कृपा अत्यंत दयालु है,’ ज़ाहिर ने उत्तर दिया। ‘मैं भी थोड़ा प्रयास करूंगा और संघर्ष करूंगा।’
तीनों युवा अतिथि उठे, तीन सलाम किए और 'कृपया हमें अनुमति दें' कहते हुए पीछे की ओर दरवाजे की तरफ चले गए। उन्होंने अपने जूते पहने और गली में उतर आए।
‘उफ़! बाल-बाल बच गया,’ रकीम ने राहत की सांस लेते हुए कहा जब वे पूरी तरह से सुरक्षित निकल गए। ‘मिर्ज़ा साहब ने मुझे संगीत बनाने का आदेश नहीं दिया था!’
‘हेह, ये तुम्हारी नादानी की वजह से नहीं है, दोस्त।’ ज़ाहिर ने चिढ़कर कहा। ‘दरअसल, मिर्ज़ा साहब नहीं चाहते कि दिल्ली के जुआरी सट्टेबाजी का सिलसिला शुरू करें।’
‘सट्टेबाजी का चक्र?’ रकीम ने आश्चर्य से पूछा। ‘और यह क्या है, कृपया बताएं?’
“अरे मूर्ख, पूरा शहर जानता है कि मिर्ज़ा साहब को जुआ खेलने का बहुत शौक है। अब अगर वो कम से कम तीन नौसिखियों को एक ही पैटर्न में लिखने को कहें, तो सब समझ जाएंगे कि यहाँ किसी तरह की शर्त लगी है। देखते ही देखते, शहर के सारे जुआरी तुम पर दांव लगाने लगेंगे।”
‘अल्लाह हमें बचाए!’ दाग और रकीम एक स्वर में चिल्लाए। ‘क्या यह कोई शहर है या जुआघर? मानो दिल्ली की आबादी के पास करने के लिए और कुछ है ही नहीं!’
‘और क्या, प्यारे बेटे?’ ज़ाहिर खिलखिलाकर हँसा। ‘जुआ खेलने की लत महज़ लत नहीं है: यह दिमाग की बीमारी है। दिल्ली की आबादी सबसे तुच्छ चीज़ों पर सट्टा लगाती है। दरअसल, वे उन चीज़ों पर भी बहुत ज़्यादा सट्टा लगाते हैं जो तुच्छ से भी कम होती हैं!’

नवाब मिर्जा ने दो दिनों के भीतर अपनी ग़ज़ल की रचना की और तीसरे दिन उचित समय पर मिर्जा ग़ालिब के सामने उपस्थित हुए।
‘वाह, तुमने तो काम समय से पहले ही निपटा दिया!’ मिर्ज़ा साहब ने शायरी में नौजवान की प्रतिभा के प्रति अपना उत्साह स्पष्ट रूप से व्यक्त किया। ‘अल्लाह तुम्हें बुरी नज़र से बचाए! चलो अब तुम्हारी कविता सुनते हैं।’

युवा कवि दाग की ग़ज़ल में बाईस से कम छंद नहीं थे; शायद यह अधिकता भी दुनिया के प्रति एक प्रकार का जवाब थी। उन दिनों दाग रचना में वास्तव में पारंगत थे। विचार और विषय उनके सामने मानो सीने पर हाथ रखे, उनके आह्वान की प्रतीक्षा में खड़े थे। दाग के शुरुआती छंद में जुरात की तरह ही अज़ाब (पीड़ा) का प्रयोग किया गया था, और यदि न्याय को फैसला सुनाने के लिए कहा जाता, तो तेरह वर्षीय दाग, मीर और सौदा जैसे महान विद्वानों की संगति में रहे एक प्रमुख उस्ताद जुरात से कहीं आगे थे।
मेरे क्षत-विक्षत और घायल हृदय से प्रेम कब अलग हुआ? स्वर्ग में भी मैं प्रेम की पीड़ा से मुक्त नहीं हो सका।
दाग की कुछ और आयतें जिन्हें मिर्ज़ा साहब की स्वीकृति प्राप्त हुई थी, वे इस प्रकार हैं:
उसकी मदहोश आँखों ने मुझे मदहोश कर दिया: शराब का नशा उतर गया; शराब का नशा मुझ पर से उतर गया। ऐसे मिलन से मुझे ईर्ष्या क्यों न हो: गुलाब का रंग नहीं उतरा, शराब का नशा नहीं उतरा। दाग़ अपने गुणों का पूर्ण वर्णन कैसे कर सकता था? बू तुराब नाम के राजा ने दूसरों के लिए कोई गुण नहीं छोड़े।

ग़ालिब, अपने शिया झुकाव के कारण, इस अंतिम छंद से विशेष रूप से प्रसन्न हुए; क्योंकि 'बू तुराब' अली के सबसे लोकप्रिय नामों में से एक है, जिन्हें शिया धर्म के अनुयायी प्रथम और महानतम इमाम के रूप में पूजते हैं। ग़ालिब इतने प्रसन्न हुए कि उन्होंने दाग़ को अपना हुक्का पीने के लिए दिया। दाग़ ने संकोचपूर्वक मना कर दिया; मिर्ज़ा साहब ने बालक कवि के लिए गुड़हल से बना एक ठंडा पेय मंगवाया और साथ में पान का कोन भी दिया। शायद वे दाग़ द्वारा लिखे गए छंदों में एक-दो बदलाव सुझाना चाहते थे, लेकिन उन्होंने चुप रहना ही बेहतर समझा, कहीं ऐसा न हो कि कोई यह सोचे कि उस एक ग़ज़ल में सुधार या संशोधन सुझाकर वे दाग़ को अपने शिष्यों के समूह में शामिल करने की तैयारी कर रहे हैं।
असल बात यह थी कि ग़ालिब दाग़ की अथक रचनात्मकता और आविष्कारशीलता की बहुत प्रशंसा करते थे, फिर भी दाग़ में एक बचकाना चंचलपन था जो उनकी अपनी गंभीर, बौद्धिक और अमूर्तता से प्रेम करने वाली प्रतिभा से मेल नहीं खाता था। दाग़ की लेखन शैली अधिक परिष्कृत और सुरुचिपूर्ण थी, जिसमें मुहावरों और लगभग बोलचाल की भाषा का सहज प्रयोग करके प्रभाव उत्पन्न किया जाता था और प्रेमी-प्रेमिका के बीच प्रेमपूर्ण संवादों का चित्रण किया जाता था।
नवाब मिर्ज़ा अब जाना चाहते थे: उन्हें डर था कि कहीं वे यहाँ ज़रूरत से ज़्यादा समय तक न रुक जाएँ, पर ग़ालिब उनकी बात सुनने को तैयार नहीं थे। दाग़ की दिली तमन्ना थी कि ग़ालिब उन्हें अपनी कुछ कविताएँ सुनाएँ; कई बार, जब वे मिर्ज़ा साहब के कमरे में एक खास मेहमान की तरह ठहरे हुए थे, तो उन्होंने मिर्ज़ा साहब से अपनी कुछ कविताएँ सुनाने का अनुरोध करने के बारे में भी सोचा। वे जानते थे कि ऐसा अनुरोध गुस्ताखी समझा जा सकता है। अब, जब नवाब मिर्ज़ा तीसरी या चौथी बार कह रहे थे, 'महोदय, आप थक गए होंगे। कृपया मुझे जाने की अनुमति दें,' तभी कल्याण ऊपर आकर नवाब ज़ियाउद्दीन अहमद खान बहादुर के आने की सूचना देने आया।

ऐसा लगा मानो ग़ालिब उस दिन दोबारा खिल उठे हों। उन्होंने कहा, 'भाई वाह वाह! केवल ईश्वर ही दोषरहित है! मियां नैयर का हार्दिक स्वागत है!' उन्होंने दरवाजे की ओर इशारा करते हुए नवाब मिर्ज़ा से कहा, 'आइए, मैं आपको आपके एक रिश्तेदार और एक बेहद प्रतिभाशाली कवि से मिलवाता हूँ।'

इसी बीच नवाब ज़ियाउद्दीन अहमद खान आ गए और मिर्ज़ा साहब को विधिपूर्वक सलाम करके उनके ठीक बगल में दाहिनी ओर बैठ गए। नवाब मिर्ज़ा सीधे खड़े हो गए, दो बार सलाम किया और फिर जाने का इशारा किया। लेकिन ग़ालिब ने उन्हें फिर से हाथ हिलाकर अपनी जगह पर वापस बैठने का संकेत दिया।

नवाब मिर्ज़ा को ज़ियाउद्दीन अहमद खान बहादुर का सामना करने को लेकर संदेह और चिंता सता रही थी: मिर्ज़ा साहब मुझे उनसे कैसे मिलवाएंगे? ज़ियाउद्दीन अहमद खान बहादुर मेरी उपस्थिति पर कैसी प्रतिक्रिया देंगे? एक बार फिर, उनकी चिंताएँ निराधार साबित हुईं। अपनी हमेशा की सूझबूझ और सूझबूझ से मिर्ज़ा साहब ने उन दोनों से ऐसे बात की मानो अतीत की घटनाएँ और तनाव पूरी तरह से भुला दिए गए हों। और यह बात कमोबेश सच भी थी।

दिल्ली नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान को भूली नहीं थी, लेकिन अब उनके बारे में कोई चर्चा नहीं होती थी। उनके मकबरे पर लगने वाला वार्षिक मेला कई वर्षों से स्थगित था। बेशक, कदम शरीफ जाने वाले तीर्थयात्री नवाब की कब्र पर संक्षिप्त प्रार्थना करना नहीं भूलते थे। वास्तव में, दिल्ली के कुछ कुलीन वर्ग का मानना था कि लोहारू राज्य वज़ीर खानम को एक छोटी पेंशन दे सकता है। नवाब ज़ियाउद्दीन अहमद खान बहादुर भी इस विचार से सहमत थे। उनके इस तरह सोचने का एक कारण उनके बड़े भाई अमीनउद्दीन अहमद खान बहादुर के साथ उनके कुछ तनावपूर्ण संबंध हो सकते थे। अमीनउद्दीन अहमद खान बहादुर नवाब की उपाधि धारण करते थे, लेकिन वास्तव में उन्हें राज्य के राजस्व में अपने छोटे भाई के साथ बराबर हिस्सा बांटना पड़ता था। ज़ियाउद्दीन अहमद खान का आरोप था कि उनके बड़े भाई का उनके साथ व्यवहार पूरी तरह से न्यायसंगत या नियमों के अनुरूप नहीं था। उन्होंने यह भी आरोप लगाया कि उन्हें राज्य के राजस्व का आधा हिस्सा भी नहीं दिया जाता था, जबकि वे इसके हकदार थे।

उनके आयु अंतर में काफी अंतर था: अमीनउद्दीन अहमद खान बहादुर का जन्म 1814 में और जियाउद्दीन अहमद खान का जन्म 1821 में हुआ था। उनकी शिकायत यह थी कि आयु में इतने बड़े अंतर के कारण बड़े भाई को उनके साथ पिता तुल्य स्नेह और सम्मान से पेश आना चाहिए था; लेकिन ऐसा नहीं हो रहा था। जियाउद्दीन अहमद खान ने कई बार फिरंगी से याचिका दायर कर राज्य को दो भागों में विभाजित करने और प्रत्येक को स्वतंत्र शासक घोषित करने का अनुरोध किया। यह अनुरोध स्वीकृत नहीं हुआ। अब वे मांग कर रहे थे कि राजस्व में उनका हिस्सा कंपनी के अधिकारियों द्वारा गणना किया जाए और कंपनी के किसी एक कोष से उन्हें दिया जाए। यह याचिका कलकत्ता में नवाब गवर्नर जनरल बहादुर के दरबार में विचाराधीन थी।

अपने समय के कई युवा रईसों के विपरीत, ज़ियाउद्दीन अहमद खान ने अपनी संपत्ति और आय अर्जित करने की आवश्यकता से मुक्ति का उपयोग व्यापक ज्ञान प्राप्त करने के लिए किया। उन्हें फ़ारसी, अरबी और चगताई तुर्की भाषा का पूर्ण ज्ञान था, जो उनके पूर्वजों और प्रारंभिक मुगल

सम्राटों की भाषा थी। वे साहित्य, दरबारी पत्राचार, इतिहास, वंशावली, कुरान की व्याख्या, हदीस, ज्योतिष और खगोल विज्ञान में पारंगत थे। उन्हें अंग्रेज़ी का भी अच्छा ज्ञान था। जीवन के शुरुआती दौर से ही उन्होंने एक विशाल पुस्तकालय का निर्माण कर लिया था।

अफवाह थी कि ज़ियाउद्दीन अहमद खान को छोटी बेगम में दिलचस्पी थी, लेकिन इस बारे में कुछ भी पक्का पता नहीं था। आज शायद, अगर दिलचस्पी थी भी, तो वह फिर से जाग उठी। उन्होंने नवाब मिर्ज़ा पर सरसरी नज़र डाली। उस नौजवान के हाव-भाव और बोलने के तरीके में ज़ियाउद्दीन अहमद खान को अपने सौतेले भाई की झलक दिखाई दी। अमीनउद्दीन अहमद खान और ज़ियाउद्दीन अहमद खान दोनों ही अपने बड़े भाई से नफ़रत और घृणा करते हुए बड़े हुए थे। फिर भी, सच कहा जाए तो, शम्सुद्दीन अहमद खान ने हमेशा अपने सौतेले भाई-बहनों के साथ बेमिसाल दयालुता और उदारता का व्यवहार किया था। आज, शम्सुद्दीन अहमद खान का मृत व्यक्तित्व, उनके बेटे नवाब मिर्ज़ा के रूप में, ज़ियाउद्दीन अहमद खान के मन में लंबे समय से दबी हुई उथल-पुथल और काल्पनिक अपमानों और अन्याय की यादों को फिर से ताजा कर दिया। अगर मेरे बड़े भाई की पत्नी—जो मेरा सौतेला भाई है और हमारी जायदाद पर उसका अवैध कब्ज़ा है—मेरी शादी के लिए आ जाए... लेकिन भाई शम्सुद्दीन अहमद ने हमेशा मेरे साथ अच्छा बर्ताव किया... मुझे उनके निधन का कोई अफ़सोस नहीं हुआ—मैं उस समय बहुत छोटा था—लेकिन अब, जब मैं उनके बेटे को देखता हूँ, तो मुझे थोड़ा दुख होता है। उसके शरीर का हर कण वही आत्मविश्वास, वही शांत घमंड... वही ऊँची, सीधी गर्दन... उस लड़के को देखकर कोई नहीं कह सकता कि वो बुरे दौर से गुज़र रहा है। उसकी आँखों में उदासी का ज़रा भी निशान नहीं है, माथे पर निष्क्रिय स्वीकृति का कोई भाव नहीं है। वो ज़रूर एक कामयाब इंसान बनेगा... और जब बेटा इतना खूबसूरत है, तो उसकी माँ कितनी आकर्षक होगी! लेकिन क्या मुझे...? अगर मेरा दिवंगत भाई आज ज़िंदा होता... तो अब तक वो उसे छोड़ चुका होता, ज़ियाउद्दीन अहमद खान ने खुद से कहा। आख़िरकार, उसने उससे शादी तो नहीं की थी। और अगर उसने उससे शादी भी कर ली होती, तो इससे कोई खास रुकावट नहीं आती... मुझे हैरानी होती है कि भाई अमीनउद्दीन अहमद मेरे द्वारा उससे संबंध बनाने की कोशिश के बारे में क्या सोचते... लेकिन यह उनकी चिंता का विषय नहीं है।

इसी बीच नवाब मिर्ज़ा ने ज़ियाउद्दीन अहमद खान पर छुप-छुपकर नज़र डाली। उन्होंने एक लंबा, दुबला-पतला युवक देखा, जिसकी उम्र बाईस या तेईस वर्ष थी, चौड़े सीने और मजबूत कंधों वाला। उसकी दाढ़ी अभी पूरी तरह घनी नहीं थी, लेकिन चौकोर आकार में कटी हुई थी, जो राजपूत शैली का संकेत दे रही थी; मूंछें भी अभी घनी नहीं थीं, बल्कि ऊपर की ओर मुड़ी हुई थीं, जो राजपूती शैली की ही थी। उसके ऊपरी वस्त्र ढाका के दूध जैसे सफेद मलमल के बने थे। नीचे उसने बनारसी रेशम की धारीदार पतलून पहनी हुई थी, जिसे आरा कहते हैं। उसके हर हावभाव से वंश और बौद्धिक श्रेष्ठता झलक रही थी।

'प्यारे नवाब मिर्ज़ा, जिनका उपनाम दाग़ है, वो आपके जन्नत में रहने वाले भाई के जीवित वारिस हैं।' मिर्ज़ा साहब ने ज़ियाउद्दीन अहमद खान से बड़ी सहजता से कहा, मानो किसी औपचारिक

समारोह में परिचय करा रहे हों, मानो सौतेले छोटे भाई और शम्सुद्दीन अहमद खान के बीच कभी कोई इतिहास, कोई तनाव या कोई मतभेद रहा ही न हो।

“तो ये हैं वो नौजवान, नवाब मिर्ज़ा। बहुत अच्छे हैं,” ज़ियाउद्दीन अहमद खान ने रूखेपन से कहा, मानो अपने निजी विचारों को छुपा रहे हों। “अभी हाल ही में घनश्याम लाल असी साहब ने एक सभा में इनका ज़िक्र किया था।”

जी हां, मियां जियाउद्दीन अहमद, हमें उनसे बहुत उम्मीदें हैं। आपकी पीढ़ी के बाद दिल्ली में कोई भी प्रतिभाशाली युवा कवि नहीं हुआ था।’ मिर्ज़ा साहब ने आगे कहा, ‘आपने उनकी वो कविता तो सुनी ही होगी... है ना, जिसमें दीपक और चेहरे का विषय है?’

“जी हां, बिल्कुल सही,” उन्होंने सहजता से कहा:

पतंगा कहाँ जाता है? दीपक की ओर, या मेरे चेहरे की ओर?

उन्होंने निष्कर्ष निकालते हुए कहा, 'यह वास्तव में एक सराहनीय विषय था।'

‘हां, मैं चाहता था कि वह आपको जाने। अच्छा हुआ कि ऐसा हो गया। बढ़िया संयोग था, है ना?’ वह नवाब मिर्ज़ा की ओर मुड़ा, ‘बताइए, आपको दाग़ उपनाम किसने दिया?’

'सर, मेरी मां ने इसका सुझाव दिया था।'

‘जी हाँ, बढ़िया उपनाम है... अरे, क्या वह खुद कवयित्री नहीं हैं?’ मिर्ज़ा साहब ने पूछा। ‘वह अपनी कविताएँ किसे प्रस्तुत करती हैं?’

“महोदय, वह स्वर्गीय शाह नासिर साहब से सलाह लेती थीं; लेकिन अब वह संबंध कायम नहीं है। वह अब एक सक्रिय कवयित्री नहीं हैं।”

ज़ियाउद्दीन अहमद खान अचानक अपनी सीट से हिले और बोले, “लेकिन रामपुर की उनकी एक ग़ज़ल तो काफ़ी लोकप्रिय हो गई थी, है ना? और उसका पैटर्न क्या था...?” वे कुछ पल रुके। “हाँ, “चेन, बिल्कुल एक जैसी; तीर, बिल्कुल एक जैसे”।”

नवाब मिर्ज़ा ज़ियाउद्दीन अहमद खान की असाधारण स्मृति से परिचित थे; फिर भी, उन्हें यह देखकर कुछ आश्चर्य हुआ कि ज़ियाउद्दीन अहमद खान को अपनी माँ में इतनी गहरी रुचि थी कि उन्हें उनकी एक दुर्लभ ग़ज़ल याद थी। यह पूछने या जिज्ञासा दिखाने का समय नहीं था। उन्होंने आगा मिर्ज़ा तुराब अली के प्रसन्न चेहरे को याद किया, उन्हें शोक का संक्षिप्त आदर दिया, एक पल के लिए चुप रहे, मानो अपनी माँ की ग़ज़ल को याद करने की कोशिश कर रहे हों। फिर उन्होंने उसकी पहली पंक्ति पढ़ी:

उसकी एक निगाह में जादू सा असर होता है, बिलकुल सही। मेरी प्रेमिका के बाल और माला की कड़ियां बिल्कुल एक जैसी हैं, बिलकुल सही।

मिर्ज़ा साहब और ज़ियाउद्दीन अहमद खान दोनों ने ही इस आयत की प्रशंसा की। नवाब मिर्ज़ा ने सलाम में सिर झुकाया और कुछ मिनटों की अनौपचारिक बातचीत के बाद उन्हें जाने की अनुमति मिल गई।

घर लौटते समय—ग़ालिब का घर, बल्लीमारान में, खानम का बाज़ार स्थित उनके अपने घर से ज़्यादा दूर नहीं था—नवाब मिर्ज़ा अंदर ही अंदर उबल रहे थे, मानो आग बबूला हो रहे हों। उनके मानसिक और सांसारिक जीवन में सुधार की कोई उम्मीद नज़र नहीं आ रही थी, जबकि नए-नए

विवाद और उलझनें सिर उठा रही थीं। पहले मिर्ज़ा फ़तहुल मुल्क बहादुर का मामला था; अब ज़ियाउद्दीन अहमद खान का। मेरी माँ के बारे में उन्हें क्या फ़िक्र हो सकती है? उन्हें उनमें दिलचस्पी क्यों होनी चाहिए? क्या यह दिल का सच्चा आकर्षण था, या महज़ नई चीज़ों के लिए क्षणिक लालसा? क्या वे निर्लज्ज वासना के नग्न आवरण में लिपटे हुए थे, अपनी ही नीचता के कारण बेकाबू होकर इधर-उधर भाग रहे थे? क्या हम अपने लिए दो पल की शांति भी नहीं पा सकते?

नवाब मिर्ज़ा के लिए वे दिन प्रश्न-प्रश्नों से भरे थे: भाग्य की उलझी हुई गांठों पर प्रश्न-प्रश्न, जिन्हें सुलझाने के लिए कुशल नाखूनों का प्रयास, या असफल प्रयास; वह नियति जिसे टाला या रोका जा सकता था; वह नियति जिसे टाला या टाला नहीं जा सकता था; वे शुभ क्षण जब सर्वशक्तिमान ईश्वर प्रार्थना को स्वीकार करते थे; ताबीज़, जादुई रेखाचित्र और पंचकोण, शक्ति के शब्द; प्रार्थनाएँ या मंत्र जो निर्धारित तरीके से लंबे समय तक किए जाने पर निश्चित रूप से प्रभावी होते थे। ये सब क्या हैं? वे जानते थे कि कोई भी मनुष्य संदेह के अटूट बंधन से बच नहीं सकता। या शायद ईश्वर के मित्रों के लिए, या जिनके साथ ईश्वर है, जीवन संदेह से मुक्त था? लेकिन संदेह को ज़ुबान देना, या उनके लिए तर्कसंगत समाधान खोजने का प्रयास करना, या संदेह पर केंद्रित जीवन जीना: ये सभी कार्य खतरनाक थे।

नहीं, शायद वे खतरों से भरे न हों, लेकिन वे निश्चित रूप से मन की शांति के शत्रु थे; वास्तव में, वे उतने ही शत्रु थे जितने कि निराशाएँ, शिकायतें, योजनाओं और प्रस्तावों की विफलता का अनुभव और भाग्य की विडंबना की क्रूरताएँ। इसके अलावा, ये चीजें तेजी से प्रबल हो सकती थीं और जल्द ही उनकी सीमाएँ अस्वीकृति, कुफ्र, ईश्वर और मनुष्य के भाग्य और ईश्वर की शाश्वत इच्छा के इनकार की सीमाओं में विलीन होने लगतीं। फिर, ईश्वर उसकी मदद करे जो इन मामलों को खुलेआम उजागर करता है: मुल्ला और मौलवी बेचारे संशयवादी को काफ़िर, इनकार करने वाला, इस्लाम के दायरे से बाहर भटकने वाला घोषित करने में जरा भी देर नहीं करते। वे घोषणा करते कि उसका विवाह स्वतः ही रद्द हो गया है और पीड़ित का सामाजिक बहिष्कार कर देते। आप उनके हाथों कुछ भी, कुछ भी उम्मीद कर सकते थे।

भाग्य में जो लिखा है, वही सही है... लेकिन क्या लिखा है, और क्यों? नवाब मिर्ज़ा कभी-कभी खुद से घृणा करने लगते थे, मानवता के इस कुटिल और विकृत ढांचे से घृणा करने लगते थे, जिससे कभी कुछ सीधा नहीं बन सकता था। हमें इन सवालों के जवाब नहीं पता; न ही आकाश के पक्षियों को और न ही जंगल के जानवरों को। तो बताओ, कौन बेहतर स्थिति में है: वे या हम? न राजा का डर, न सेंसर का अधिकार, न कोई पुलिस प्रमुख 'चोर पकड़ो!' चिल्लाता है। न सवालों का बेहिसाब अंबार, न जवाबों पर कोई विवाद।

हम कवि वैसे भी अधिक चतुर हैं। कभी-कभी हम अस्पष्ट रूप से आकाश या स्वर्ग पर दोष मढ़ देते हैं; कभी-कभी हम भाग्य और नियति को दोषी ठहराते हैं, यह जताते हुए कि वे ईश्वर की वास्तविकता से अलग हैं; कभी-कभी हम धर्मनिष्ठ उपदेशक को दोषी ठहराते हैं, या प्रेमिका का वर्णन सुंदर तो करते हैं, लेकिन उसे पत्थर का हृदय वाला बताते हैं, ठीक वैसे ही जैसे हिंदू पूजते हैं। कभी-कभी हम केवल 'वे' या 'वह' की बात करते हैं, इस बात का ध्यान रखते हुए कि 'वे' या

'वह' की पहचान स्पष्ट न हो। इन छल-कपटों के बिना, हम कवियों को प्रतिदिन नास्तिक और काफ़िर करार दिया जाता।

कुछ समय से नवाब मिर्ज़ा सवालों के कांटों भरे जाल से निकलने की कोशिश कर रहे थे। इसी दौरान उन्होंने एक तीक्ष्ण, बल्कि रहस्यमय कविता की रचना की:

वे दमनकारी हैं; वे क्रोधी हैं; उनमें वही घमंड और अहंकार है: मूर्तिपूजक लोग ईश्वर हैं, सिवाय इसके कि वे सच्चे ईश्वर की तरह न्याय नहीं करते।

क्या उनका तात्पर्य यह था कि ईश्वर वास्तव में न्यायप्रिय है, परन्तु अत्याचार, क्रोध, अभिमान और घमंड उसके गुण हैं? या उनका तात्पर्य यह था कि मूर्तिपूजक प्रेमियों को, जब वे न्याय करने लगें, ईश्वर घोषित कर देना चाहिए? या शायद वे यह सुझाव दे रहे थे कि दो ईश्वर हैं, परन्तु एक ही स्थान है: एक ईश्वर स्वर्ग में, और दूसरा अन्याय के आकाश के शिखर पर? क्या दोनों के पास संसार में, या कम से कम प्रेमियों के संसार में हस्तक्षेप करने की शक्ति है?

लेकिन क्या यह ईश्वर के राज्य का प्रत्यक्ष खंडन करने से भी बदतर नहीं है? नहीं, शायद वह सचमुच उत्पीड़ित महसूस कर रहा था; शायद उसका मतलब यह था कि मूर्तिपूजक के दमनकारी शासन के विरुद्ध शिकायत करना मात्र एक दिखावा था। सच तो यह है कि स्वयं ईश्वर के राज्य में भी अत्याचार, क्रोध और अन्य सब कुछ मौजूद था। खैर, उसने स्वयं से कहा, क्रोधी ईश्वर को समझा जा सकता है, लेकिन उस क्रोध के बावजूद, एक दिन उनकी सर्वकृपा और क्षमाशीलता के गुण अवश्य प्रकट होंगे। यदि सर्वज्ञ सब कुछ जानता है, तो वह निश्चित रूप से देखेगा कि हम मनुष्य अत्याचार करने से कहीं अधिक उत्पीड़ित हैं।

दाग के लिए यह सौभाग्य की बात थी कि उनका जन्म एक ऐसे युग में हुआ जो उदार था और जो एक कवि को क्षमा कर सकता था, भले ही वह उसके अर्थ को न समझ पाए।

जियाउद्दीन अहमद खान खानम का बाजार स्थित घर में आते हैं; दाग प्रेम की उथल-पुथल का अनुभव करते हैं।

नवाब मिर्ज़ा ने अपनी माँ को मिर्ज़ा फ़तहुल मुल्क बहादुर से हुई मुलाक़ात के बारे में नहीं बताया। इसी तरह, उन्होंने नवाब ज़ियाउद्दीन अहमद खान से हुई जान-पहचान का भी ज़िक्र नहीं किया। फिर भी, उनके मन में एक तरह की जिज्ञासा, बल्कि चिंता भी थी, कि कहीं उनकी माँ में उन दोनों की दिलचस्पी (शायद अनजाने में) में कुछ सच्चाई तो नहीं है। और अगर सच्चाई थी, तो उन्हें इस पर क्या प्रतिक्रिया देनी चाहिए? नहीं, उन्हें पहले अम्मा जान को कुछ संकेत देना चाहिए, ताकि अगर उन्हें किसी और स्रोत से पता चले तो उन्हें आश्चर्य न हो। अचानक मिली हैरानी अप्रिय हो सकती है और उनके स्वास्थ्य पर बुरा असर डाल सकती है। लेकिन वे अपनी माँ के सामने इस विषय पर कैसे बात करें? उनकी कही कोई भी बात आसानी से अभद्र और अनुचित मानी जा सकती है। फिर भी, उन्हें लगा कि अपनी माँ को उन दोनों व्यक्तियों की अस्पष्ट दिलचस्पी के बारे में बताने में देरी करना शायद उचित नहीं होगा। साहिब-ए-आलम शायद कुछ सावधानीपूर्वक बातचीत शुरू कर दें और जल्दबाज़ी न करें, लेकिन ज़ियाउद्दीन अहमद खान एक तरह से रिश्तेदार थे। वह नियमों की परवाह किए बिना जब चाहे तब मिलने आ सकता है।

ये सज्जन मेरी माँ को क्या समझते हैं? उसने गुस्से से खुद से पूछा। लेकिन एक पल सोचने पर उसे जवाब मिल गया: बाहरी दुनिया अपने नियम खुद बनाती है। वह सत्ता के धनी लोगों के सामने खुद को नीचा दिखाती है, लेकिन कमजोरों, विशेषकर महिलाओं को कभी माफ नहीं करती। उसने महसूस किया कि उसकी माँ उन महिलाओं में से एक थी जिनका अपना इतिहास था, अपना अतीत था। दुनिया हमेशा ऐसी महिलाओं को शक और डर की नजर से देखती है; डर के साथ ही उन्हें आसानी से अपना शिकार बनाने की आशंका भी जुड़ी होती है, और यह कोई नई सोच भी नहीं थी: महिला भटक गई है, और हर पुरुष को उसका हाथ पकड़ने का अधिकार है।

तो नवाब मिर्ज़ा ने अपनी दोनों मुलाकातों का पूरा ब्यौरा दिया, और राजकुमार व नवाब के इशारों में कहे गए शब्दों के छिपे अर्थ के बारे में अपने विचार बताए। वज़ीर खानम ने बिना रुके उनकी सारी बातें सुनीं। वह जानती थीं कि उन्हें किसी पुरुष की ज़रूरत नहीं थी; उन्हें सहारे की ज़रूरत थी। लेकिन वह यह भी जानती थीं कि दुनिया के बाज़ार में दोनों का मतलब एक ही होता है। शायद उन्होंने आगा मिर्ज़ा तुराब अली से प्रेम नहीं किया था; उन्हें पसंद तो ज़रूर किया था। और... क्या उनकी सबसे अहम शर्त यही नहीं थी कि वह देखें, समझें और फिर स्वीकार करने का फैसला करें? लेकिन यह कब तक चलता रहेगा?

मानो संकेत मिलते ही, बातचीत के दो-तीन दिन के भीतर ही, मौसम की मार झेल चुका लेकिन शक्तिशाली दिखने वाला एक राजदंड धारण करने वाला व्यक्ति वज़ीर खानम के घर के गली वाले दरवाजे पर प्रकट हुआ और चिल्लाकर बोला, 'नवाब ज़ियाउद्दीन अहमद खान बहादुर आ गए हैं!'

हबीबा ने तुरंत वज़ीर को सूचना दी। संयोगवश, नवाब मिर्ज़ा उस समय वहीं मौजूद थे। वे जल्दी से नीचे गए और सुनिश्चित किया कि दीवान खाना साफ़-सुथरा हो और मेहमान के स्वागत के

लिए तैयार हो। यह कमरा अब लगभग अनुपयोगी था: इसे केवल कभी-कभार ही खोला जाता था जब नवाब मिर्ज़ा का कोई मित्र आता था। उन्होंने जल्दी से धूल साफ की और जानी राम को निर्देश दिया कि मेहमान को पालकी से पूरे सम्मान के साथ उतारा जाए और दीवान खाना में सबसे प्रमुख स्थान पर बैठाया जाए। जानी राम को फिर उन्हें हुक्का और पान के कोन पेश करने थे और उन्हें बताना था कि नवाब मिर्ज़ा साहब बहुत जल्द उपस्थित होंगे।

ज़ियाउद्दीन अहमद खान हमेशा की तरह सफेद कपड़ों में थे, लेकिन जाहिर तौर पर उन्होंने अधिक सलीके से कपड़े पहने थे। टोपी के बजाय, उन्होंने सफेद रंग की औपचारिक दिखने वाली रेशमी पगड़ी पहनी थी, जिस पर जंगली मुर्गे के दो लाल और नीले पंखों का मुकुट लगा हुआ था। उनकी बाजू पर एक चौड़ा रत्नजड़ित आभूषण था जो कवच के एक टुकड़े जैसा दिखता था। उन्होंने सोने और चांदी से सजी एक चौड़ी रेशमी कमरबंद पहनी थी; कमर के एक तरफ उन्होंने चांदी चढ़ी पिस्तौल रखी हुई थी। उनके सफेद बक के जूते मुगल शैली में आगे से खुले हुए थे। जूतों के ऊपरी हिस्से पर करीने से सिले हुए सफेद रेशमी फीते पर छोटे-छोटे सुनहरे पुखराज जड़े हुए थे। वह नवाब मिर्ज़ा की यादों से भी कहीं ज़्यादा दुबला-पतला और जवान दिख रहा था। उसकी पूरी शख्सियत में जवानी, शालीनता और शिष्ट परवरिश झलक रही थी। उसके पीछे एक और गदाधारी था, जिसके हाथ में तांबे की एक बड़ी, ढकी हुई थाली थी। जानी राम को थाली सौंपकर वह गदाधारी तेज़ी से सीढ़ियों से नीचे उतर गया। जैसे ही वह गदाधारी गली में उतरने लगा, ज़ियाउद्दीन अहमद खान ने नवाब मिर्ज़ा को सबसे ऊपरी मंज़िल से नीचे आते देखा। उसे अंदर आते देख ज़ियाउद्दीन अहमद खान थोड़ा सा उठा। दोनों ने एक साथ अभिवादन करते हुए अपने हाथ ऊपर उठाए।

'आपका स्वागत है। मुझे बेहद खुशी है कि आप आ सके।' इतना कहते हुए नवाब मिर्ज़ा अपने मेहमान के सामने बैठ गए, दोनों पैर उनकी जांघों के नीचे रखकर। 'हुक्का देख लीजिए। अगर आप चाहें तो अभी इसी वक्त ठंडा पेय परोस सकते हैं।'

नहीं, नहीं। कृपया बिलकुल भी परेशानी न उठाएं, महोदय। मिलना-जुलना ही सबसे महत्वपूर्ण है।

कुछ क्षणों के लिए सन्नाटा छा गया। नवाब मिर्ज़ा कुछ नहीं बोल पाए; ज़ियाउद्दीन अहमद खान मानो अपने मन में उचित शब्दों की खोज कर रहे थे। अंततः उन्होंने कहा, 'नवाब मिर्ज़ा, आपकी कविता दिन-प्रतिदिन निखरती जा रही है। आजकल साहित्य जगत की हस्तियों में आपका नाम अक्सर लिया जाता है।'

'यह महामहिम की उदारता और मेरे महत्व को बढ़ाने का ही परिणाम है। सचमुच, आपका सेवक प्राथमिक विद्यालय में एक नवोदित छात्र से अधिक कुछ नहीं है। वास्तव में, आपका सेवक कुछ बनने की आशा रखता है, यदि आप जैसे पूर्णतः सिद्ध पुरुष उसे कृपा दृष्टि से देखें।'

उसने शिष्टाचारवश औपचारिक रूप से बात की। लेकिन बोलने के बाद उसे एहसास हुआ कि उसके शब्दों में ज़ियाउद्दीन अहमद खान के समूह में शामिल होने की दबी हुई इच्छा का संकेत छिपा है। उसे अपनी नासमझी और मूर्खता पर बहुत गुस्सा आया। अगर वह थोड़ा बड़ा होता, या जीवन के उतार-चढ़ाव देख चुका होता, या दार्शनिक और तार्किक चर्चा की बारीकियों से वाकिफ

होता, तो वह कभी भी ऐसी जल्दबाजी और मूर्खतापूर्ण बातें न कहता। लेकिन शब्द उसके होंठों से निकल चुके थे, उन्हें वापस नहीं लिया जा सकता था; सबसे अच्छा यही था कि वह कुछ और न कहे। ज़ियाउद्दीन अहमद खान भी यह तय नहीं कर पा रहा था कि नवाब मिर्ज़ा की बातें उसकी नासमझी थीं या उनमें कुछ और भी छिपा था। उसने फैसला किया कि जब तक नवाब मिर्ज़ा अपनी बात स्पष्ट नहीं कर देता, तब तक वह इस मामले को आगे नहीं बढ़ाएगा।

जियाउद्दीन अहमद खान ने कहा, 'निस्संदेह, अगर किसी निपुण उस्ताद का मार्गदर्शन हो तो कविता के मार्ग पर यात्रा आसान हो जाती है। क्या आप अपनी कविता के लिए किसी से सलाह लेते हैं?'

'महोदय, मैंने अभी तक अपना काम किसी को भी नहीं दिखाया है। असल बात यह है कि मैं खुद को मेजर उस्ताद के प्रशिक्षण और मेहनत के लायक नहीं समझता।'

'क्यों? ऐसा क्यों?' जियाउद्दीन अहमद खान मुस्कुराए। 'जहां तक मैं देख सकता हूं, कोई भी प्रमुख उस्ताद कवि आपको सहर्ष स्वीकार कर लेगा।'

यह सब कहने के बाद, ज़ियाउद्दीन अहमद खान को एहसास हुआ कि उन्होंने भी युवा नवाब मिर्ज़ा जैसी ही गलती की है। उनके शब्दों में स्पष्ट संकेत था, अगर कोई उसे खोजना चाहे, कि युवा नवाब चाहते थे कि यह प्रतिभाशाली लड़का मिर्ज़ा ग़ालिब का शिष्य न सही, लेकिन उनका शिष्य बन जाए। ज़ियाउद्दीन अहमद खान मिर्ज़ा साहब के उत्तराधिकारी थे, जैसा कि स्वयं मिर्ज़ा साहब ने एक बार घोषित किया था, और यद्यपि ज़ियाउद्दीन अहमद खान का अभी तक कोई शिष्य नहीं था, वे जब चाहें शिष्यों को स्वीकार कर सकते थे।

ज़ियाउद्दीन अहमद खान मन ही मन खुद को कोसने लगे। जब काम की बात न हो तो बातचीत व्यर्थ ही होती है, और असल मकसद के लिए नुकसानदायक भी। उन्होंने हुक्के का मुख अपने मुंह से लगाया; तंबाकू की खुशबू अच्छी थी और वह ताज़ा था, लेकिन हुक्का शायद जल्दी में साफ किया गया था। ज़ाहिर है, उस घर में किसी को भी धूम्रपान पसंद नहीं था। उन्होंने तंबाकू की तारीफ में कुछ सोच-समझकर शब्द कहने का सोचा, लेकिन उन्हें एहसास हुआ कि यह एक और चाल होगी—जिससे और भी व्यर्थ और नुकसानदेह बातें ही होंगी। ऐसी बातचीत से कोई नतीजा नहीं निकल सकता था। चुप रहना ही बेहतर था; और वैसे भी अब नवाब मिर्ज़ा की बोलने की बारी थी।

'यह महामहिम की उदारता है कि उन्होंने मुझे योग्य समझा। निःसंदेह, मुझे एक दयालु और सहायक गुरु से बहुत लाभ होगा। आज दिल्ली में नवोदित कवियों के लिए असीमित संभावनाएं हैं। यहाँ के महान कवियों की सूची में मिर्ज़ा ग़ालिब का नाम सर्वोपरि है।'

'निस्संदेह। महामहिम मिर्ज़ा साहब की जादुई दृष्टि ने अनगिनत इच्छुक लोगों के कच्चे तांबे को चमचमाते सोने में बदल दिया है।'

ज़ियाउद्दीन अहमद खान के माथे पर अब थोड़ी झुर्रियाँ दिखने लगी थीं। कब तक हमारी बातचीत शिष्टाचार और निरर्थक बातों में उलझी रहेगी? कब तक इस तरह की बेमतलब की बातचीत को जारी रखना उचित था, जिसमें आनंद तो बिल्कुल नहीं था, लेकिन समझ भी नहीं आ रही थी? छोटी बेगम के प्रति उनकी नाराज़गी की एक छोटी सी चिंगारी उनके मन में भड़क रही थी। क्या

मुझे गिड़गिड़ाते हुए इंतज़ार कराना आतिथ्य सत्कार या सभ्यता थी? नवाब मिर्ज़ा भी अपनी तरफ से अधीर हो रहे थे: मुझे या तो उन्हें विनम्रता से विदा कर देना चाहिए, या उनसे सीधे-सीधे पूछ लेना चाहिए कि वे अम्मा जान से क्यों मिलना चाहते हैं। लेकिन, फिलहाल दोनों ही रास्ते मुमकिन नहीं थे। दोनों पक्षों को ऐसा व्यवहार करना था मानो ज़ियाउद्दीन अहमद खान का आना कोई असामान्य बात नहीं थी; यह तो बस उन भाईचारे वाली मुलाकातों में से एक थी जो रोज़मर्रा की भागदौड़ भरी गाड़ी को चलाने में मदद करती हैं।

'मैं उस्ताद ज़ौक़ की सेवा में जल्द ही हाज़िर हो जाऊँगा,' नवाब मिर्ज़ा ने थोड़ी हिचकिचाहट और थोड़ी बेबसी से कहा। सौभाग्य से, उनके बोलने से पहले ही ऊपरी मंज़िल से कदमों की आहट सुनाई दी। गलियारों से कमरे का दरवाज़ा खुला और वज़ीर खानम ने बेहद मधुर और परिष्कृत स्वर में कहा, जिसमें अभिवादन या स्वागत का कोई अंश नहीं बचा था। 'नवाब साहब, मैं आपको प्रणाम करता हूँ। कितना सौभाग्यशाली हूँ कि आपको यहाँ स्वागत करने का अवसर मिला!'

दोनों व्यक्ति अनायास ही उठ खड़े हुए और ज़ियाउद्दीन अहमद ने ऐसी आवाज़ में जवाब दिया जो उन्हें खुद भी कुछ बनावटी लग रही थी, जिसमें भाषा का स्वाभाविक प्रवाह नहीं था। "दरअसल, मेरी किस्मत चमक रही है, इसलिए मैं आपके निवास पर तीर्थयात्रा कर सका... कृपया अंदर आइए, अपने पैरों को अंदर आने की तकलीफ दीजिए।"

काले रंग की चादर को छोड़कर, वज़ीर पूरी तरह से सफेद वस्त्रों में लिपटी हुई थीं। उन्होंने चादर को ईरानी-मध्य एशियाई शैली में पहना था। यह उनके पूरे शरीर पर कसकर लिपटी हुई थी, जिससे उनका सिर पूरी तरह से ढका हुआ था, लेकिन उनका चेहरा आंशिक रूप से दिखाई दे रहा था: सामने से देखने पर उनकी भौंहों का एक हिस्सा, भौंहों के ऊपर काले घने बालों की एक झलक, आंखें, सुगठित नाक और नाजुक होंठ दिखाई देते थे; अन्यथा, एक साफ-सुथरे चेहरे का एकदम स्पष्ट दृश्य दिखाई देता था। सामने से देखने पर उनकी बड़ी, गहरी आंखें सब कुछ ढक लेती थीं। वह अंदर आईं और आगंतुक के सामने कालीन पर बैठ गईं, लेकिन पूरी तरह से नहीं: उनकी मुद्रा में पीठ मुड़ने का हल्का सा आभास था।

नवाब मिर्ज़ा ने कोई बहाना बनाया और उन्हें अकेला छोड़कर पर्दा खींचकर और दरवाज़ा थोड़ा खोलकर बाहर चले गए। जब से वज़ीर अंदर आई थी, वह ज़ियाउद्दीन अहमद खान को छुप-छुपकर देख रही थी। उसका रूप-रंग उसे शम्सुद्दीन अहमद खान की याद दिलाता था। छोटा भाई अब उसी उम्र का था जिस उम्र में मृत नवाब था, जब उसने उसे पहली बार देखा था। जितनी बार वह उसे देखती, उसका दिल उतना ही दुखता; बीते हुए पलों की हर याद—उसके सुख, आनंद और दुख—उसके दिल को लोहे की तरह जला रही थी। उसके मन का एक हिस्सा ज़ियाउद्दीन अहमद खान को पसंद करता था, क्योंकि वह उसके प्रिय प्रेमी की निशानी था। उसी क्षण, वह उससे नफरत भी करती थी, क्योंकि वह जीवित था जबकि उससे कहीं बेहतर इंसान को जीने का हक नहीं मिला। और इन्हीं अभागों की वजह से मेरे नवाब ने अपनी जान गंवाई; इन्हीं लोगों ने फिरंगियों के साथ मिलकर उसे बेदखल करने की साजिश रची और अंततः उसकी मौत का कारण बने। तो वह यहाँ किसलिए आया है? क्या वह मेरी इस हालत को देखकर मेरा उपहास उड़ाने और खुशी से नाचने आया है? लेकिन अगर मैं उनकी योजनाओं को नाकाम नहीं करता, तो

मैं भी वज़ीर खानम नहीं बनूंगा।
ज़ियाउद्दीन अहमद खान के शब्दों ने उसकी कल्पनाओं को तोड़ते हुए कहा, 'मैं तुमसे मिलने के लिए बहुत उत्सुक था।' वह 'मिलने' के निहितार्थों से भलीभांति अवगत थी, लेकिन वह उसे कोई अवसर नहीं देना चाहती थी।

'किस्मत और मौत के फरिश्ते ने हमें अलग कर दिया, या फिर मिलना और एक होना नामुमकिन नहीं था।' उसने रूखेपन से कहा, न तो किसी तरह की शिकायत का भाव था और न ही आत्म-दया का। लेकिन उसके परिवार की ओर से हुई इस छोटी सी चूक का संकेत ज़ियाउद्दीन अहमद की नज़र से नहीं बचा। हालांकि, यह बहस करने या स्पष्टीकरण देने का समय नहीं था।
जी हां, महोदया। हम मनुष्य अपने आप को अभिमानी समझते हैं, हमारा सिर हमेशा ऊँचा ही रहता है। परन्तु ईश्वर के विशाल वाणी, "हो जा!" के मानचित्र पर, हम सूखे हुए भूसे के टूटे हुए तिनके से अधिक कुछ भी नहीं हैं।
इसके बाद उन्होंने गंभीर स्वर में महान फारसी कवि साइब की एक कविता का पाठ किया:
जो भी इस दुःख नगर, इस संसार में आया; उसने धूल का स्वाद चखा, अपनी धुरी पर कुछ समय के लिए बवंडर की तरह नाचा, और फिर गायब हो गया।
'जी हाँ, महोदय,' वज़ीर ने कुछ व्यंग्यात्मक लहजे में कहा। 'लेकिन आखिर हम सॉरोटाउन में आए ही क्यों?'
ज़ियाउद्दीन अहमद खान को उचित जवाब देने में असमर्थता महसूस हुई। उन्होंने हल्की सी मुस्कान के साथ अंततः कहा, 'यह सवाल उमर खय्याम से पूछना बेहतर होता। लेकिन सच्चाई तो यह है, वज़ीर खानम, कि जिन्हें दिया जाता है वे हमेशा और अधिक की लालसा रखते हैं, और जिन्हें नहीं दिया जाता वे और अधिक पाने की तलाश में लगे रहते हैं।'
जियाउद्दीन अहमद खान ने अपने विवेक से वज़ीर के दोनों सवालों का जवाब दे दिया था और अपनी इच्छा भी बता दी थी। लेकिन वज़ीर इतनी आसानी से संतुष्ट होने वाली नहीं थीं। उन्होंने तीखे शब्दों में जवाब दिया, 'नवाब साहब ने शायद ऐसी स्थिति पर विचार नहीं किया जहां सभी इच्छाओं का त्याग करना, सभी इच्छाओं की पूर्ति के बराबर हो।'
'क्या ऐसा है? कैसे?' जियाउद्दीन अहमद खान स्पष्ट रूप से जानबूझकर अस्पष्ट बातें कर रहे थे।
वज़ीर ने सत्रहवीं शताब्दी के एक अन्य महान फ़ारसी कवि कलीम हमदानी की एक कविता से उत्तर दिया:
जिसने आशा छोड़ दी है, वह संसार के सुखों की इच्छा नहीं रखता: एक कटी हुई शाखा वसंत ऋतु की ओर नहीं देखती।

'भगवान न करे!' ज़ियाउद्दीन अहमद खान ने कुछ जोश के साथ कहा। 'तुम क्यों कटी हुई डाल बनो? मैं तो कहूंगा कि तुम्हारी इच्छाओं के वृक्ष में अनगिनत पत्तों और फलों के रहस्य अभी भी छिपे हुए हैं।'
'मैं आपको अपने बारे में गलतफहमी में डालने के आपके प्रयास के लिए धन्यवाद देता हूँ। लेकिन

घर की स्थिति तो घर में रहने वाले को ही बेहतर पता होती है। इसके अलावा, हर बाग का रखवाला और देखभाल करने वाला जीवन के हर पेड़ को फलने-फूलने के तरीके नहीं जानता। फारसी कहावत "हर पेड़ के लिए एक रखवाला और देखभाल करने वाला होता है" अवश्य ही माननीय के कानों तक पहुँची होगी।'

वज़ीर ने अपनी राय में सब कुछ स्पष्ट कर दिया था: नवाब ज़ियाउद्दीन अहमद खान को उनके बगीचे का फल पाने की उम्मीद नहीं करनी चाहिए। समस्या यह थी कि अपनी सारी विद्वत्ता और बुद्धि के बावजूद, ज़ियाउद्दीन अहमद खान अपने समय के बच्चे थे। उनके अनुसार, किसी भी महिला का चुनाव और पसंद-नापसंद से कोई लेना-देना नहीं हो सकता। चुनाव पुरुष का होता था, पसंद-नापसंद पुरुष की होती थी। या शायद ज़ियाउद्दीन अहमद खान में हास्यबोध की कमी थी: वे इस बात की कल्पना भी नहीं कर सकते थे कि कोई महिला उन पर सूक्ष्म व्यंग्य कर सकती है और उसका आनंद भी ले सकती है। अंततः, वे यह भी नहीं समझ पाए कि उनके घर आने में वज़ीर के प्रति किसी प्रकार का आकर्षण नहीं था।

ज़ियाउद्दीन अहमद खान इतिहास के विद्वान और दर्शन एवं तर्कशास्त्र के पारखी थे। दिल्ली नगर, जो उस समय लगभग सभी क्षेत्रों में निपुणता और असाधारण उपलब्धियों से भरा हुआ प्रतीत होता था, उनके समकक्ष मिलना मुश्किल था। लेकिन वे न केवल लोहारू के शासक अमीनउद्दीन अहमद खान के छोटे भाई थे, बल्कि लोहारू और फिरोजपुर झिरका के शासक शम्सुद्दीन अहमद खान के भी छोटे भाई थे। छोटे भाई हमेशा से बड़े भाई, विशेषकर उत्तराधिकारी भाई, से असंतुष्ट रहे हैं। लगभग जन्म से ही ज़ियाउद्दीन अहमद खान को शम्सुद्दीन अहमद की आकर्षक सुंदरता, उनके पहनावे और व्यवहार की समझ, और साथ ही उनके क्रूर स्वभाव, लालच और दूसरों की संपत्ति पर भी अपना हक जताने की प्रवृत्ति, और अपने छोटे भाइयों के साथ किए गए अन्यायपूर्ण व्यवहार की कहानियां सुनाई जाती रही थीं। ज़ियाउद्दीन अहमद खान को यह बात पूरी तरह से स्पष्ट थी कि शम्सुद्दीन अहमद को फिरंगी द्वारा फांसी दिए जाने पर उसे उसके कर्मों का फल ही मिला।

मिर्ज़ा ग़ालिब दोनों भाइयों के साहित्यिक गुरु थे, लेकिन ज़ियाउद्दीन अहमद ने शम्सुद्दीन अहमद खान के प्रति ग़ालिब की स्पष्ट नापसंदगी को भी आत्मसात कर लिया था। इस प्रकार, लगभग किसी को भी पता चले बिना, शम्सुद्दीन अहमद खान दोनों भाइयों, और विशेष रूप से छोटे भाई के लिए घृणा का पात्र बन गए थे, जो किसी न किसी रूप में बड़े भाई द्वारा वज़ीर खानम, एक प्रसिद्ध सुंदरी, एक तूफानी प्रतिष्ठा वाली महिला, जिसका आकर्षण किसी चमत्कार से कम नहीं था, को जीतने से नाराज़ थे। नाराज़गी के अलावा, ज़ियाउद्दीन अहमद खान को कभी-कभी बड़े भाई की सफलताओं के प्रति एक अनिश्चित सी ईर्ष्या भी महसूस होती थी। फिर भी, यह सब बहुत हद तक अस्पष्ट विचार के दायरे में था, या अधिक से अधिक, दूर की संभावना के दायरे में था। अपने दैनिक, व्यावहारिक जीवन में, उन्होंने इस मामले पर कभी विचार ही नहीं किया था। अब, जब शम्सुद्दीन अहमद खान की मृत्यु को काफी समय हो चुका था, तो अमीनुद्दीन अहमद खान भी एक अलग तरह का कांटा बनकर उनके लिए चुभ रहा था: अमीनुद्दीन अहमद खान ने लोहारू के किले और दरबार पर नियंत्रण कर लिया था, और उन्हें लगभग उसी तरह से बेदखल

कर दिया था जैसे शम्सुद्दीन अहमद खान ने किया था।
इसलिए, अगर ज़ियाउद्दीन अहमद खान छोटी बेगम की ओर आकर्षित हो रहे थे, तो यह पिछली हानियों और पीड़ाओं के प्रायश्चित से अधिक कुछ नहीं था। छोटी बेगम का भी इस प्रायश्चित में शामिल होना उचित होता। उन्हें अस्वीकार करके, वह दोहरा अन्याय कर रही थीं और उनके पुरुष गौरव को ठेस पहुँचा रही थीं। वह कल्पना भी नहीं कर सकते थे कि छोटी बेगम को भी दुनिया या भाग्य से कुछ शिकायतें हो सकती हैं। उन्होंने धीमी आवाज़ में, मानो मन ही मन में कुछ कहते हुए कहा, "जीवन रूपी वृक्ष, जिसे नियमित रूप से देखभाल करने वाला और सेवक मिलता है, दुर्भाग्य की शिकायत क्यों करे?"
'हर देखभाल करने वाला कुछ छंटाई, कुछ कटाई और कुछ कटौती करता है। वह केवल देता ही नहीं, बल्कि बहुत कुछ लेता भी है। यह एक प्रकार का सहजीवन है। इसलिए, यदि देखभाल करने वाले का अपना जीवन वृक्ष सूखकर नष्ट हो जाए, तो पतझड़ की जहरीली जीभ उस वृक्ष को खाने लगती है जिसकी देखभाल करने वाला कर रहा था। आप अभी भी...' वह कहना चाहती थी, 'आप अभी भी युवा हैं', लेकिन उसने समय रहते खुद को रोक लिया। 'आप अभी भी... इस तथ्य पर विचार करने के लिए, नवाब साहब: जिस प्रकार मनुष्य के जीवन में सुगमता की कमी अपरिहार्य है, उसी प्रकार वह अपने चंचल स्वभाव का गुलाम भी होता है। कभी-कभी वह नरम बिस्तर से नफरत करता है और उसे ठुकरा देता है; तो कभी-कभी गर्म राख उसे माँ की स्नेह भरी बाहों जैसी लगती है।'
'ऐसी सूक्ष्म बारीकियों को समझना मेरी क्षमता के भीतर भी है, छोटी बेगम,' जियाउद्दीन अहमद खान की आवाज ठंडी थी, भले ही उसमें कोई चिड़चिड़ापन न हो।
'यही वह दासी है जो आपके समक्ष प्रस्तुत है। कुछ लोगों के लिए यह दासी छोटी खानम है; कुछ के लिए यह वज़ीर खानम है।'
यह बात उस भावहीन युवा विद्वान-अभिजात व्यक्ति के लिए भी स्पष्ट थी। वह मन ही मन आहत हुआ, पर हार स्वीकार करना नहीं चाहता था। आख़िरकार, वह एक सैय्यद था, और साथ ही एक मिर्ज़ा भी।

'खैर, मैं आपसे सौहार्दपूर्ण मुलाकात करने के लिए काफी उत्सुक था। वह इच्छा अधूरी ही रह गई।' उसकी मुस्कान कड़वी थी, उसके शब्द रुक-रुक कर निकल रहे थे। 'क्या मुझे इस दहलीज पर एक बार फिर अपना माथा रगड़ने की अनुमति है?'
'नव साहब, यह द्वार किसी के लिए खुला नहीं है। लेकिन आप अजनबी नहीं हैं। आपके साथ किसी और की तरह व्यवहार नहीं किया जाना चाहिए।'
वह मुड़ी, जिससे उसका पूरा चेहरा अब ज़ियाउद्दीन अहमद खान के सामने था। उन्होंने गंभीरता से देखा, मानो किसी उत्साहवर्धक मुस्कान या थोड़ी सी व्यक्तिगत स्नेह की झलक पाने की कोशिश कर रहे हों। लेकिन वह बेहद खूबसूरत चेहरा कुछ सख्त, कुछ दृढ़ प्रतीत हुआ। ज़ियाउद्दीन अहमद खान ने बनावटी उदासीनता का भाव दिखाते हुए उठ खड़े हुए। अपने जूते पहनने के बाद, वे एक पल रुके और सोलहवीं शताब्दी के फ़ारसी कवि ज़ुहूरी की एक कविता पढ़ी, जिनकी ग़ालिब

बहुत प्रशंसा करते थे।
जब तक सांसें बातचीत का धागा थामे रखती हैं, तब तक इच्छाओं को बुनना जारी रखा जा सकता है।
उन्होंने औपचारिक मुगल सलाम के अंदाज में झुककर अपना दाहिना हाथ अपने दिल के ऊपर अपनी छाती पर रखा और कहा, 'क्या मुझे यह कहने की अनुमति है कि हमारे बीच अभी भी सैकड़ों हिसाब-किताब बाकी हैं?'
वज़ीर अपनी जगह से नहीं उठीं, लेकिन उनके शरीर में तनाव उतना ही स्पष्ट था जितना उनके चेहरे पर। उन्होंने लगभग अपनी पीठ उस युवा आगंतुक की ओर करके जानी राम के लिए ताली बजाई। नौकर के आने का इंतज़ार करते हुए, वह थोड़ी देर हँसीं और बोलीं, 'केवल ईश्वर ही दोषरहित है! मानो यहाँ अभी भी कुछ ऐसा बचा हो जिसका हिसाब-किताब करना बाकी हो।'
उन्होंने एक फ़ारसी कविता की एक पंक्ति उद्धृत की:
मैंने दोनों दुनियाओं से अपना नाता तोड़ लिया और सभी हिसाब-किताब निपटा दिए।
ज़ियाउद्दीन अहमद खान ने ऐसी कोमल, मधुर और उदास हंसी पहले कभी नहीं सुनी थी। उनके भीतर कुछ हलचल हुई और वह भावना उनके मन तक पहुंच गई। लेकिन हंसती हुई लड़की ने अपने युवा प्रेमी के भाग्य को अपने घर से बाहर भेज दिया था।
उस मुलाकात की निरर्थकता ज़ियाउद्दीन अहमद खान को काफी समय तक खटकती रही, लेकिन अगले दो महीनों में उन्होंने दो-तीन बार और मुलाकातें कीं। यह सिलसिला तब खत्म हुआ जब वज़ीर ने उन्हें साफ शब्दों में कहा कि उनकी उम्र में इतना बड़ा अंतर है कि उनकी नज़र में उनके बीच किसी भी तरह का संबंध संभव नहीं है। नवाब मिर्ज़ा ने हमेशा की तरह इस रिश्ते के विकास में कोई दिलचस्पी नहीं दिखाई और न ही कोई जिज्ञासा जताई। उन्हें पूरा यकीन था कि उनकी मां सबसे बुद्धिमान और भरोसेमंद न्यायाधीश हैं और सबसे आदर्श माता-पिता हैं। उनके किसी भी फैसले को जांच-पड़ताल या स्पष्टीकरण की ज़रूरत नहीं होती। लेकिन उन्हें सबसे आम बात की चिंता थी: अपनी मां के सुखमय जीवन की। अगर वह ज़ियाउद्दीन अहमद खान के साथ कोई रिश्ता बनाने का फैसला करतीं, तो यह स्पष्ट था कि इसमें शाह मोहम्मद आगा भी शामिल होंगे। और ऐसे में नवाब मिर्ज़ा रामपुर वापस जाकर वहां के दरबार में कोई छोटा-मोटा काम करने के बारे में सोच सकते थे। अगर किसी अनहोनी परिस्थिति में उसकी मां को शाह मोहम्मद आगा को एकांतवास में रखना पड़े, तो मांझली खाला हमेशा उसे अपने पास रखने के लिए मौजूद रहेगा, और रामपुर में नवाब मिर्जा का वेतन मांझली खाला द्वारा उस छोटे लड़के पर किए गए भौतिक निवेश की भरपाई के लिए पर्याप्त होगा।
उसके मन में अपने और अपने सौतेले भाई के बारे में एक और योजना थी। दिल्ली लौटने पर, वह पारिवारिक आदर के कारण अपनी बड़ी खाला से मिलने गया, और इसलिए भी क्योंकि बड़ी खाला के मन में उसके लिए विशेष स्नेह था। इसका एक कारण यह था कि उसके स्वर्गवासी पिता नवाब मिर्ज़ा से बहुत प्रेम करते थे, और दूसरा कारण यह था कि वह स्वयं उसके अच्छे रूप और विनम्र, सम्मानजनक व्यवहार के कारण उसकी ओर आकर्षित हो जाती थी। इसमें एक प्रकार का प्रतिफल या भरपाई भी थी: जो प्रेम वह अपनी सबसे छोटी बहन पर नहीं बरसा सकी,

वह अनजाने में ही अपने बेटे पर बरस गया। बड़ी खाला ने छोटी को अपने घर आने का निमंत्रण नहीं दिया, लेकिन नवाब मिर्ज़ा को स्पष्ट शब्दों में कहा कि उनका और शाह मोहम्मद आगा का उनके घर में हमेशा स्वागत है। वास्तव में, उन्होंने संकेत दिया कि यदि छोटी का विवाह उपयुक्त हो जाए लेकिन वह दोनों बेटों की देखभाल करने में असमर्थ हो, तो वे उनके साथ रहने के लिए आ सकते हैं।

बारी खाला के यहाँ नवाब मिर्ज़ा के लिए एक और आकर्षण था। वह थी उनकी बेटी, उनकी चचेरी बहन फातिमा। वह लगभग तेरह वर्ष की थी, बेहद खूबसूरत, रूप-रंग, व्यवहार, घरेलू कामों में निपुणता, धार्मिक रीति-रिवाजों का पालन और बड़ों की मदद करने की तत्परता में बिल्कुल अपनी माँ जैसी। गणित और इस्लामी इतिहास का थोड़ा-बहुत ज्ञान होने के साथ-साथ, वह हिंदी और फारसी भी जानती थी। उसकी आवाज़ बहुत सुरीली थी, और वह पैगंबर की प्रशंसा में कविताएँ गाने और उपयुक्त अवसरों पर इसी तरह की अर्ध-धार्मिक कविताएँ गाने में इसका बखूबी इस्तेमाल करती थी। नवाब मिर्ज़ा का दिल उस चंचल लेकिन सरल स्वभाव वाली युवती की ओर तुरंत आकर्षित हो गया। यह अभी स्पष्ट नहीं था कि फातिमा, जिसे नवाब मिर्ज़ा ने चिढ़ाने के लिए और उसकी सुंदरता के प्रति सच्ची श्रद्धा के रूप में परी बानो नाम दिया था, अपने बेहद खूबसूरत चचेरे भाई के लिए, जो एक कवि के रूप में तेजी से लोकप्रिय हो रहा था, कुछ हद तक प्रेम का भाव रखती थी या नहीं; लेकिन परी बानो के लिए प्रेम बहुत जल्दी नवाब मिर्ज़ा के दिल में बस गया।

यह स्पष्ट होना चाहिए कि दिल्ली में असंख्य बाज़ारों और प्रेम-मकानों की मौजूदगी और वहाँ जाने वाले युवकों पर किसी विशेष दोष का आरोप न होने के कारण, नवाब मिर्ज़ा, अपनी उम्र और वर्ग के अन्य युवकों की तरह, शयनकक्ष के मामलों से अछूता नहीं था। उन दिनों, कविता की एक लोकप्रिय पंक्ति थी:

मार-पीट और गाली-गलौज सहना प्रेमियों के लिए सम्मान की बात है।

आम धारणा यही थी कि लड़के गाली-गलौज करते थे और नाचने वाली लड़कियाँ मारती थीं। नवाब मिर्ज़ा उस उम्र के थे जब हर सुंदर चेहरा दिल को मोह लेता था। लेकिन फ़ातिमा बिल्कुल अलग थीं। नवाब मिर्ज़ा ने उन्हें 'परी बानो' नाम दिया, लेकिन अपने औपचारिक कारणों से नहीं: वे सचमुच उन्हें किसी अलौकिक प्राणी की तरह देखते थे, मानो वे इस दुनिया से परे हों। कभी-कभी उन्हें डर लगता था कि क्या फ़ातिमा जैसी कोमल, दुबली-पतली, दूध-चीनी जैसी प्यारी लड़कियाँ शारीरिक प्रेम के लिए बनी भी हैं या नहीं। उस समय उनके लिए ये बातें दूर की कौड़ी, नामुमकिन और यहाँ तक कि असंभव सी लगती थीं।

नवाब मिर्ज़ा की पहली समस्या यह थी कि हालाँकि बारी खाला उनसे बेहद प्यार करती थीं, लेकिन उनकी माँ से उनकी मुलाकात अच्छी नहीं रही और इसलिए वे उन्हें भावी दामाद के रूप में स्वीकार करने को भी तैयार नहीं थीं। आवश्यकता और स्वार्थ से प्रेरित इस दुनिया में अनुभवहीन किसी भी व्यक्ति की तरह, उन्हें यह नहीं पता था कि ऐसे मामलों में, लड़की के परिवार वाले दामाद को देखते हैं, न कि उसके माता-पिता को। और छोटी, आखिरकार, उनकी सबसे छोटी बहन थी, और लड़का, आखिरकार, केवल एक बेरोजगार कवि ही नहीं था: वह एक शक्तिशाली

नवाब का पुत्र भी था, भले ही पिता का निधन हो चुका था; नवाब मिर्ज़ा के कुलीन वंश का तथ्य बना रहा, और हमेशा बना रहेगा।

नवाब मिर्ज़ा की प्रारंभिक कविताओं में व्यक्तिगत अनुभवों और भावनाओं के अंश और संकेत मिलते हैं, लेकिन दिलचस्प बात यह है कि उनमें प्रेमिका की शारीरिक, स्त्रीत्वपूर्ण उपस्थिति का बहुत कम ज़िक्र है। शायद उन्होंने जानबूझकर और शालीनता के भाव से इन चीज़ों को छोड़ दिया था: उनकी प्रेमिका वास्तव में एक युवती थी जो पर्दा प्रथा का पालन करती थी और उनकी चचेरी बहन भी थी। आइए उन दिनों की उनकी कुछ कविताओं पर नज़र डालें जिनमें युवा प्रेमी अपने प्रेम की शक्ति का बखान करता है और अपनी इच्छाओं को शब्दों में व्यक्त करने में संयम और शालीनता बरतता है।

खुद ही फैसला कीजिए: क्या इससे पहले ऐसी शैली, ऐसी शारीरिक सुंदरता का संयोजन था? नहीं। मेरे प्रेम ने ही आपको एक नए रूप में ढाला है। मैं असंभव को कैसे संभव कर सकता हूँ? आपको 'तड़प' शब्द का अर्थ कैसे समझा सकता हूँ? यह तो बस एक शब्द है; मैंने इसे आपके कानों में फुसफुसाया है।

बाद के दौर के स्वघोषित कवियों और नैतिकता के आलोचकों ने दाग़ की कविता को गायन और नृत्य करने वाली युवतियों की पसंदीदा रचना बताया है। शायद यह उनका नजरिया था, लेकिन ऊपर उद्धृत दो छंदों में दिखाई देने वाली स्पष्ट, युवा गंभीरता, परिष्कार और संयम उन कामुक, आसानी से सुलभ भावनाओं से बिल्कुल मेल नहीं खाते जो शायद उन वर्गों को पसंद आनी चाहिए थीं। निश्चित रूप से, नवाब मिर्ज़ा के स्वभाव में भी उल्लास और युवावस्था का उत्साह था, लेकिन उनकी कविता में इसे बहुत कम ही जगह मिली। उनके जीवन का वह दौर, जिसकी हम बात कर रहे हैं, उनके लिए एक कठिन समय था, जहाँ उनका वर्तमान संकटों से भरा प्रतीत होता था और भविष्य की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। उनकी निम्नलिखित जैसी कविताएँ उसी समय की हैं:

पतंगा मोमबत्ती की लौ के पास है, बुलबुल प्रेमी अपने प्रिय गुलाब के पास है; मैं यहाँ तुम्हारे साथ हूँ, पर एकांत से व्याकुल हूँ। नई-नई जागृत इच्छाएँ मुझे सताएँ और लुभाएँ नहीं; मेरे उत्सुक पैर और तरसते हाथ, दोनों अब कटे हुए हैं।

पंद्रह या सोलह वर्ष का कोई युवक इस प्रकार की कविता तभी रचता था जब वह उन दिनों के प्रचलित नियम के अनुसार अमूर्त विषयों को गढ़ने के अलावा कुछ और करने का प्रयास कर रहा होता था। जब कवि अपने प्रियतम के साथ एक परिचित, घरेलू स्तर पर संबंध स्थापित करने का प्रयास करता था, तब निम्नलिखित जैसी पंक्तियाँ रची जाती थीं:

तो फिर उन लोगों की खबर का आप क्या करेंगे जिनकी बुद्धि बिखरी हुई है? जाइए, आराम से अपने बालों को समेटिए और संवारिए।

निम्नलिखित आयत भी उसी ग़ज़ल का हिस्सा है। इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि सहबाई जैसा विद्वान और गंभीर गुरु, जब उन्होंने यह आयत पढ़ी तो एक खुले मुशायरे में अपनी जगह से उठकर दाग़ को गले लगा लिया।

क्या हुआ है, दाग? तुम उदास हो और एकदम चुप हो गए हो। प्यारे अभागे लड़के, मुझे अपनी कहानी का कुछ हिस्सा बताओ।

अब इस श्लोक को देखिए—यह प्रेम की वही धुन है, जिसे एक नए विषय के साथ गाया गया है; ऐसी कविता तर्क की शक्ति के प्रयोग से या मात्र कृत्रिमता से रचित नहीं की जा सकती। सादगी, शालीनता, उदासीनता, शरारत, चंचलता: आपको शिष्टाचार के ऐसे उपहार मिले हैं जिनकी शक्ति को केवल प्रेमपूर्ण हृदय ही समझ सकता है, लेकिन कभी व्यक्त नहीं कर सकता। सोलहवीं शताब्दी में महान फारसी कवि उर्फीन ने इस विषय को अपने विशिष्ट बौद्धिक और जटिल अंदाज में बयान किया था:

हर समय, हर पल, मैं एक नए दुख से घिर जाता हूँ, क्योंकि आपकी कोई भी शैली दूसरी शैली से परिचित नहीं है।

निःसंदेह, उर्फी द्वारा एक ऐसे प्रियतम के विषय का चित्रण, जिसके व्यवहार के हज़ारो तौर-तरीके और शैली हैं, सूक्ष्म है और दाग़ की अपेक्षाकृत सरल अभिव्यक्ति की तुलना में अर्थ की अधिक संभावनाएँ रखता है, लेकिन युवा कवि की भाषा में एक सरलता और मुहावरेदार प्रवाह है जो उन्हें मुट्ठी भर शब्दों में ही बहुत कुछ कहने में सक्षम बनाता है। सहज प्रवाह और एक सरल लालित्य, जिसकी नकल करना असंभव है, बाद में दाग़ की रचनाओं के विशिष्ट गुणों के रूप में पहचाने गए, लेकिन वास्तव में, ये गुण उनकी कविता में हमेशा से मौजूद थे। संभवतः, फातिमा के प्रति उनके प्रेम ने ही कविता के उद्यान के इस नवोदित पौधे और फूल को अपनी प्रेमिका से अपने प्रेम को एक भावपूर्ण, अनौपचारिक भाषा में व्यक्त करने के लिए प्रेरित किया, जो रूपकों से जटिल नहीं थी। यहाँ हम कुछ उदाहरण देख सकते हैं:

विरह की रात से मृत्यु बेहतर है: कम से कम मैं चैन से सो तो सकूँगी। दाग, वह चक्र अवश्य मेरे पास आएगा, कभी न कभी; जैसे दिन-रात का चक्र चलता रहता है। वह मुझे कभी चैन नहीं लेने देती: जब मैं कहती हूँ, मैं प्रेम से मर रही हूँ, तो वह कहती है: तुम्हें जीना ही होगा! उस निर्दयी ने जब मेरी दुर्दशा सुनी, तो कहा: इससे बेहतर है कि वह मर जाए, ऐसे जीने से। तुम्हारा चेहरा सचमुच मोमबत्ती की लौ की तरह तेजस्वी है; लेकिन तुम्हें पिघलने और जलने के सुख का क्या ज्ञान? खैर, मेरी तुम्हारी सुंदरता की प्रशंसा सुनकर तुम्हें चिढ़ होती है। ठीक है, बुरी नज़र दूर रहे! मेरी सुंदरता श्रेष्ठ है! नहीं, नहीं। पश्चाताप मत करो! अपनी क्रूरताओं को मत छोड़ो! बिल्कुल भी चिंता मत करो, दाग अभी मर नहीं रही है।

विषयवस्तु के लिहाज़ से, ये कविताएँ प्रेमी-प्रेमिका के बीच काल्पनिक प्रेम प्रसंगों पर आधारित पारंपरिक कविताओं से अलग नहीं हैं। लेकिन इनका लहजा इच्छा और आकर्षण की एक सच्ची तीव्रता से भरा प्रतीत होता है; जितना अधिक हम इन्हें शाब्दिक रचना के रूप में ग्रहण करते हैं, उतना ही हम इनके व्यक्तिगत भावों की प्रामाणिकता के प्रति आश्वस्त होते जाते हैं। फातिमा का स्नेह पाना; उसके चेहरे पर मुस्कान लाने के लिए अनगिनत योजनाएँ बनाना; फातिमा की उपेक्षा के छोटे से इशारे पर, चाहे वह काल्पनिक हो या वास्तविक, घंटों तक दुखी रहना: इन सभी भावनाओं का सार उनकी प्रारंभिक कविताओं में व्याप्त प्रतीत होता है। किसी न किसी बहाने से प्रतिदिन एक या दो बार बारी खाला के घर जाना; किराने का सामान खरीदने के लिए अपनी

सेवाएँ देना; यदि किसी कारणवश फातिमा घर पर न हो, तो मन में हज़ारों शिकायतें पालते रहना जब तक कि अंततः फातिमा से आमने-सामने मुलाकात न हो जाए और वह मुस्कुराते हुए न पूछे कि वह इतनी देर कहाँ था: ये सब बातें उनके जीवन की दिनचर्या बन गईं।

दूसरी ओर, फातिमा थीं: नवाब मिर्ज़ा को पान का कोन या ठंडा पेय भेंट करती हुई, उनके चेहरे पर हल्की सी शर्मिंदगी झलक रही थी, एक हाथ से दुपट्टे को ठीक से ढके हुए, दूसरे हाथ से थाली और पान का कोना संभाले हुए। बिना किसी दिखावे के, वह इस बात का ध्यान रखती थीं कि मेज़पोश पर रखा सबसे अच्छा भोजन सबसे पहले नवाब मिर्ज़ा को ही परोसा जाए; नवाब मिर्ज़ा के दरवाज़े पर दस्तक देने की आहट उन्हें सहज ही समझ आ जाती थी; और अगर किसी दिन कई घंटे बीत जाने के बाद भी उन्हें वह दस्तक सुनाई नहीं देती थी, तो वह अनजाने में बार-बार मुख्य द्वार की ओर देखती रहती थीं। इन सब बातों का क्या अर्थ था, अगर दिल का उलझाव नहीं?

पुरुषों के विशिष्ट आत्म-प्रशंसा के कारण, नवाब मिर्ज़ा इन बातों से अनभिज्ञ थे। लेकिन वे भी देख सकते थे कि उनके दस्तक देने पर मधुर आवाज ने बड़ी तत्परता से जवाब दिया: एक ऐसी तत्परता जिसमें थोड़ी सी शर्म भी थी; एक ऐसी आवाज जिसमें पेरू के अद्भुत फूल जैसी कोमलता, रंग और गर्माहट थी, वह फूल जो दोपहर से ठीक पहले खिलता है, तेज धूप से बेपरवाह; एक ऐसी आवाज जो जीवन से भरपूर थी और पुकार रही थी, 'कृपया अंदर आइए। यहाँ कोई पर्दा नहीं है।' नवाब मिर्ज़ा स्पष्ट रूप से समझ गए कि उन्हें अंदर आने के लिए कहने वाली लड़की केवल औपचारिक आतिथ्य सत्कार नहीं कर रही थी: ऐसा लग रहा था मानो वह अनकहे शब्दों में अठारहवीं शताब्दी के महान फारसी कवि बेदिल की एक हिंदी कविता कह रही हो।

जब प्रेम हृदय के द्वार पर आया और पुकारा; प्रियतम ने पर्दे के पीछे से पुकारा: यहाँ बेदिल नाम का कोई नहीं है!

उस समय नवाब मिर्ज़ा का हृदय एक नहीं, बल्कि दो समस्याओं से बोझिल था: अपनी माँ को सुखमय और शांतिपूर्ण जीवन के लिए आवश्यक साधन उपलब्ध कराना और फ़ातिमा से विवाह करना। अल्पकाल में, या मध्यम काल में भी, दोनों ही लक्ष्य प्राप्त करना संभव नहीं लग रहा था। बेशक, एक कवि के रूप में उनकी ख्याति बढ़ रही थी, लेकिन वे उस ख्याति का उपयोग सम्मानजनक आजीविका कमाने के लिए नहीं कर पा रहे थे। उन्होंने लाल हवेली में ज़ाहिर से अपने लिए सिफारिश करने का अनुरोध करने पर विचार किया। लेकिन वास्तविकता यह थी कि उन्हें किसी कार्यालय की नौकरी या क्वार्टरमास्टर के पद में कोई रुचि नहीं थी। उनका मानना था, वास्तव में यह उनका विश्वास था, कि एक कवि के लिए कविता ही पर्याप्त है। पेशा हो या शौक, दिन गुजारने का साधन: कविता सभी उद्देश्यों के लिए पर्याप्त होनी चाहिए। समस्या यह थी कि उस समय उनकी कविता मुशफ़ी की रुबाई का सजीव चित्र प्रस्तुत करती थी: उनकी कविता किसी भी उद्देश्य के लिए उपयुक्त नहीं थी—चाहे सांसारिक हो या धार्मिक। जीवन की आवश्यकताएँ, कर्तव्य की माँगें; वह जवानी की चरम सीमा पर पहुँच रहा था, और प्रेम और

विवाह के सुखों की उसकी लालसाएँ और इच्छाएँ भी उसके हृदय में चरम सीमा पर पहुँच रही थीं: ये सब उसकी अंतरात्मा और चेतना के द्वार पर दस्तक दे रहा था। नवाब मिर्ज़ा को पूरा विश्वास था कि दिल्ली नगर में उससे अधिक निराश और दुर्भाग्य से पीड़ित कोई नहीं था।
नवाब मिर्ज़ा भली-भांति जानते थे कि उनकी माताजी, यदि चाहें तो, अपनी पसंद के किसी भी व्यक्ति से विवाह सहित या बिना विवाह के भी आसानी से संबंध बना सकती थीं। परन्तु वे यह भी देख रहे थे कि उनकी माताजी न केवल शारीरिक और शारीरिक रूप से, बल्कि आत्मा से भी वृद्ध होती जा रही थीं। मानो इतना कुछ खोने के बाद, उनमें और कुछ खोने की हिम्मत ही न बची हो। यह भी सच था कि उनकी माताजी के चाहने वालों में बेचारे ज़ियाउद्दीन अहमद के अलावा भी कई लोग थे। यहाँ तक कि साहिब-ए-आलम व आलमीयन मिर्ज़ा फतहुल मुल्क बहादुर भी अब भी उनमें रुचि रखते प्रतीत होते थे और वास्तव में सक्रिय रूप से उनमें दिलचस्पी रखते थे। ज़ाहिर दिहलवी ने एक बार किले में एक सभा के बाद उन्हें बताया कि साहिब-ए-आलम व आलमीयन ने दिल्ली के सबसे प्रसिद्ध चित्रकार उस्ताद गुलाम अली खान को बुलाया था और उनसे छोटी बेगम का चित्र बनवाने का अनुरोध किया था।
उस्ताद गुलाम अली खान काफी उम्रदराज हो चुके थे और उन्होंने कला पेशे से संन्यास ले लिया था। लेकिन वे एक कला कार्यशाला चलाते थे जिसमें कई प्रतिभाशाली चित्रकार और मानचित्रकार काम करते थे। संन्यास लेने के बावजूद, इस महान चित्रकार का किले से गहरा संबंध था, क्योंकि ईश्वर की कृपा से उन्हें दरबार में हमेशा सम्मान का स्थान प्राप्त था। चित्रकला के अलावा, वे सुलेख में निपुण थे, सामाजिक शिष्टाचार में माहिर थे और एक अद्भुत कथाकार थे। उनके पिता, उस्ताद मजहर अली खान, सम्राट अकबर शाह द्वितीय के शुभ और गौरवशाली शासनकाल के दौरान एक प्रतिष्ठित चित्रकार थे। मजहर अली खान साहब इमारतों के चित्र बनाने में माहिर थे, जिनमें बारीक से बारीक रेखाचित्र भी शामिल थे। उनके छोटे बेटे उस्ताद फैज अली खान थे; इस प्रकार उस्ताद गुलाम अली खान के छोटे भाई, उन्होंने कई साल पहले चित्रकारी छोड़ दी थी और केवल इमारतों के रेखाचित्र बनाने लगे थे। यह आंशिक रूप से जीवित प्राणियों के चित्र बनाने पर शरीयत के निषेध का पालन करने के कारण था और आंशिक रूप से अपने पिता की परंपरा को आगे बढ़ाने की इच्छा से था। ज़ाहिर ने नवाब मिर्ज़ा को बताया कि साहिब-ए आलम ने उस्ताद गुलाम अली खान को वादा किया था कि अगर वह वज़ीर खानम का चित्र प्रस्तुत कर दें तो उन्हें खान साहब की इच्छानुसार कोई भी इनाम दिया जाएगा।
नवाब मिर्ज़ा सोच में पड़ गए। क्या उन्हें अपनी माँ को इस बारे में बताना चाहिए? मियां गुलाम अली खान को उनकी माँ की तस्वीर कहाँ से मिल सकती थी? माँ से पूछने का मतलब था सब कुछ बता देना। वे अभी इस समस्या पर विचार ही कर रहे थे कि संयोग से उन्हें बारी खाला के घर पर पता चला कि उनकी माँ का एक चित्र उनकी जवानी के दिनों में बनाया गया था और अब वह किसी रईस के पास है। बारी खाला ने उन्हें यह जानकारी बड़ी नाराज़गी के साथ दी। यह बात पत्थर या कागज़ पर चित्र बनाने के बारे में चर्चा के दौरान उठी थी। उन्होंने कहा कि अल्लाह के पैगंबर ने इसे विशेष रूप से मना किया था क्योंकि इससे पर्दा प्रथा का उल्लंघन होता है। नवाब मिर्ज़ा के मन में कहीं न कहीं यह इच्छा थी कि किसी कुशल चित्रकार से फातिमा का चित्र

बनवाकर उसे जीवन भर अपने सीने से लगाकर रखें। दरअसल, चर्चा की शुरुआत प्रियजनों की याद में चित्र रखने के उनके अधूरे विचारों से हुई थी। वे अपने उद्देश्य में पूरी तरह सफल तो नहीं हुए, लेकिन कम से कम अपनी माँ के बारे में यह जानकारी तो प्राप्त कर ही ली।

मियां गुलाम अली खान उस दौर के सर्वमान्य चित्रकार थे; उन्हें चित्रकला, उसके इतिहास और उत्पत्ति का भी व्यापक ज्ञान था। उन्हें यह पता लगाने में कोई कठिनाई नहीं हुई कि मूल चित्र एक अंग्रेज को बेच दिया गया था, जबकि उसकी एक अपूर्ण प्रति पुराने चित्रों के व्यापारी के पास मौजूद थी। मियां गुलाम अली खान ने अपने एक शिष्य के माध्यम से बीस रुपये में वह चित्र खरीदा और उसे अपने कला स्टूडियो के प्रतिभाशाली चित्रकारों को सौंप दिया ताकि वे चित्र में व्यक्ति की आयु में कुछ वर्ष जोड़कर उसकी एक बेहतर प्रति तैयार कर सकें। चित्र कुछ ही दिनों में तैयार हो गया; फिर उस्ताद ने उसमें अपने विशिष्ट अंतिम स्पर्श और कुछ और बारीकियां जोड़ीं।

उस्ताद गुलाम अली खान ने अपने कलाशाला के चित्रकारों को मुख्य निर्देश दिया था कि वे चित्र को—पारंपरिक प्रथा के विपरीत—इस प्रकार बनाएँ मानो चित्र में दिखने वाला व्यक्ति चित्रकार या देखने वाले से अवगत हो; यह कंपनी शैली की चित्रकला के अनुरूप था और साहिब-ए आलम व आलमीयन की पसंद के अनुसार था, जो आधुनिकता की ओर झुकाव रखते थे। स्वयं प्राचीन उस्ताद भी तैयार चित्र को देखकर अचंभित रह गए। उन्होंने मन ही मन पैगंबर को सलाम भेजा... उनके हाथ एक पल के लिए काँप उठे: चित्र किसी जीवित मनुष्य से भी अधिक सजीव प्रतीत हुआ। क्या वज़ीर खानम की आत्मा किसी तरह उसमें समा गई और एक पल के लिए चित्र में जान डाल दी?

उस्ताद मन ही मन कांप रहे थे। लेकिन नहीं, ऐसा बिल्कुल नहीं हो सकता। मनुष्य कभी भी ईश्वर के नियमों को इस प्रकार आत्मसात नहीं कर सकता। और यहाँ बैठी बीबी को इस बात का ज़रा भी आभास नहीं हो सकता था कि उनका चित्र यहाँ या कहीं और बनाया जा रहा है। लेकिन यह कैसा रहस्य है? ऐसा लगता है मानो चित्र में बैठी महिला चित्र को छोड़कर बाहर निकलने ही वाली हो... यह केवल चित्र बनाना नहीं है: यह जादू को उकेरना है, और वह जादू केवल चित्र में बैठी महिला में ही समाया हुआ है; चित्र बनाने वाले ने कभी कल्पना भी नहीं की होगी कि तैयार चित्र एक ही समय में उस बूढ़े चित्रकार की इंद्रियों और कला दोनों को झकझोर देगा।

अपने बूढ़े, कांपते हाथों से उस्ताद ने चित्र को रेशमी म्यान में लपेटा और उस समय किले में उपस्थित हुए जब साहिब-ए आलम व आलमीयन का दरबार आमतौर पर इकट्ठा होता था। राजकुमार ने चित्र पर एक नज़र डाली, उसे अपने निजी बक्से में बंद कर दिया और उस्ताद गुलाम अली खान को दो सौ रुपये भेंट किए।

मिर्ज़ा फ़थुल मुल्क बहादुर अपने दरबार को समाप्त करने की जल्दी में थे, लेकिन उन्होंने सब कुछ अपनी प्रथा के अनुसार और अपने नियमों के अनुरूप किया। वे राज्य के किसी भी अन्य राजकुमार या राजकुमारी, या किले में रहने वाले सैकड़ों अन्य शाही वंशजों की तुलना में अपने राज्य की राजनीति और सत्ता की संरचना में आए गुणात्मक परिवर्तन से कहीं अधिक अवगत थे। शायद परम पूज्य राजा इस बात से कहीं अधिक भलीभांति अवगत थे, लेकिन उनके अलावा कोई

और इतना निश्चित नहीं था कि साम्राज्य का सूर्य फिर कभी उदय नहीं होगा। यह केवल एक शताब्दी पूर्व में उभरी साम्राज्य की अनेक कमजोरियों के कारण ही नहीं था। यह उनके बीच एक पराक्रमी उपस्थिति के कारण भी था। वह पराक्रमी उपस्थिति न केवल अर्थव्यवस्था, व्यापार और धन पर प्रभाव डाल रही थी, बल्कि राजनीतिक सत्ता, शासन पद्धतियों और सैन्य रणनीति के ताने-बाने पर सबसे प्रभावी उपस्थिति बन गई थी। फिरंगियों के प्रभाव ने कला, कविता, सामाजिक रीति-रिवाजों से जुड़े मूल्यों को बदल दिया; इसने राजनीतिक और सामाजिक मंच, इतिहास और किंवदंतियों पर प्रमुख समुदायों के मिथकों और कथाओं को बदल दिया। वे हिंदुस्तानी को यह सिखाने में उत्तरोत्तर सफल होते जा रहे थे कि जिन मूल्यों से वह प्रेम करता था, जिन प्रकाशों से उसे सांसारिक सफलता और स्वर्गिक कृपा प्राप्त होने की आशा थी, वे झूठे थे, या कम से कम अप्रचलित थे।

तीसरे उत्तराधिकारी का मानना था कि किसी राष्ट्र की परिस्थितियों में परिवर्तन में बुद्धिमानों के लिए एक छिपा हुआ संदेश होता है: चूंकि परिस्थितियाँ बदलती हैं, इसलिए उन्हें बदला भी जा सकता है, या उन्हें उन लोगों के अनुकूल ढाला जा सकता है जिनके पास आवश्यक इच्छाशक्ति और ज्ञान हो; या हम स्वयं नई क्षमताएँ विकसित कर सकते हैं ताकि हम बदली हुई परिस्थितियों का लाभ उठा सकें। उन्होंने अंग्रेजी सीखने के लिए एक अंग्रेजी शिक्षक नियुक्त किया, एक विशाल पुस्तकालय बनाए रखा, और शरिया के आदेशों का पालन करने में भी वे बहुत सतर्क थे, लेकिन उनके प्रति कोई कट्टरता नहीं रखते थे। बेशक, राजशाही प्रथम उत्तराधिकारी, मिर्ज़ा दारा बख्त को मिलनी थी, लेकिन तीसरे उत्तराधिकारी को दिल्ली के राजसिंहासन से अधिक अपने गौरवशाली पूर्वजों के इतिहास और परंपराओं से प्रेम था। उन्होंने अपनी जीवनशैली और आचरण को काफी हद तक उस आदर्श के अनुरूप ढाला था, जो उनके अनुसार राज्य के राजकुमार के रूप में उनकी स्थिति की मांग थी। कोई भी राजा बन सकता है; राजशाही ही सब कुछ नहीं है; मायने रखता है उन राजकुमारों का आचरण स्तर जिनके पूर्वज बाबर और अकबर थे।

अदालती कार्यवाही समाप्त हुई और मिर्ज़ा गुलाम फखरुद्दीन फथुल मुल्क बहादुर अपने निजी कक्ष की ओर जाने के लिए उठे; उनके मुख्य राजदंड वाहक राजकुमार के निजी बक्से के साथ तुरंत उनके पीछे थे, जबकि दो राजदंड वाहक आगे थे। अपने कक्ष में पहुँचते ही उन्होंने सभी को बाहर जाने का इशारा किया। उन्होंने बक्से से चित्र निकाला।

आँखों में यौवन और कामुकता की ऐसी प्रबल चेतना झलक रही थी कि राजकुमार मिर्ज़ा गुलाम फखरुद्दीन फथुल मुल्क बहादुर के हाथ से पेंटिंग लगभग छूट ही गई। ऐसा लग रहा था मानो चित्र कोई इशारा करने ही वाला हो—आँखों की एक झपकी, भौंहों का उठना—पर वह इशारा किसी भी तरह के आमंत्रण या अश्लीलता से रहित था। नाज़ुक, सुगठित चेहरा बड़ी-बड़ी आँखों से घिरा हुआ था, जिन पर लंबी पलकें थीं, लेकिन आँखें शर्मीली नहीं झुकी हुई थीं। वे गहरे भूरे रंग की थीं, जिनमें सफेद भाग में लाल रंग की हल्की-सी धारियाँ थीं; चेहरे से एक मनमोहक शीतलता निकल रही थी, मानो ताज़े खिले जंगली गुलाबों का गुच्छा हो। लंबी, गर्वित गर्दन हिरण जैसी थी, जिस पर पन्ना का हार था, जो कॉलरबोन के पास से लेकर स्पष्ट रूप से दिखाई देने वाले क्लीवेज तक फैला हुआ था। सभी पत्थर एक ही आकार के थे—एक चने के आधे के बराबर—

उनकी हरियाली शीतल थी, जो देखने वाले की आँखों को उसी तरह आकर्षित कर रही थी जैसे फूलों की क्यारी के चारों ओर हरी घास की कतार करती है। सिर दुपट्टे के किनारे से ढका हुआ नहीं था, लेकिन यह स्पष्ट था कि मॉडल को अपने खुले सिर की ज्यादा चिंता नहीं थी।
उसकी उम्र, मेरी ही उम्र के बराबर, लगभग एक-दो साल कम या ज़्यादा। लेकिन उम्र के इस अंतर से किसे फ़र्क पड़ता था? अहम बात तो यह थी कि चेहरा, गर्दन, कंधे, बाहें, मानो किसी ज़बरदस्त प्रेरणा से जीवंत हो उठे थे—उस दुनिया में ज़िंदा रहने की प्रेरणा जो उसके बिना मानो वीरान हो जाती। यह कोई पेंटिंग नहीं थी: यह जीवन की एक बहती हुई, जीवंत धारा थी, जिसमें चित्र में बैठी महिला का जीवन रक्त बह रहा था; एक ऐसी धारा जिसमें डूबने की तीव्र इच्छा होती थी।
मिर्ज़ा मुहम्मद सुल्तान गुलाम फखरुद्दीन फथुल मुल्क शाह बहादुर, जिन्हें हर जगह प्यार से मिर्ज़ा फखरू के नाम से जाना जाता था, उस समय चौंतीस वर्ष के थे। कालक्रम बनाने में माहिर किसी व्यक्ति ने कुरान की आयत 'इन्ना फतहना लका फतन मुबीनन' (निस्संदेह, हमने तुझे अत्यंत स्पष्ट विजय दिलाई) के संख्यात्मक मान का उपयोग करके उनकी जन्मतिथि 1254 हिजरी का कालक्रम बनाया, जो अंग्रेजी कैलेंडर के अनुसार 1812 के बराबर है। इसकी सुंदरता और उपयुक्तता उनके नाम: फथुल मुल्क (भूमि की विजय) पर विचार करने से स्पष्ट हो जाती है। वे अबू जफर मुहम्मद सिराजुद्दीन बहादुर शाह के चौथे पुत्र थे, जिन्होंने 29 सितंबर 1837 को साम्राज्य के सिंहासन को सुशोभित किया। उनके राज्याभिषेक के समय, मुहम्मद दारा बख्त बहादुर, जिन्हें प्यार से मीरान शाह के नाम से जाना जाता था, सबसे बड़े पुत्र थे। बहादुर शाह के सिंहासन पर बैठने के तुरंत बाद, थॉमस मेटकाफ ने मुहम्मद दारा बख्त बहादुर को उत्तराधिकारी घोषित किया और उन्हें नजर के रूप में पांच सोने के मोहर भेंट किए: जो एक औपचारिक, समारोहिक उपहार था।
मीरान शाह बहादुर के बाद उनके पुत्र मिर्ज़ा मुहम्मद शाह रुख बहादुर थे: उन्हें प्रधानमंत्री और पूर्णाधिकार प्राप्त सेनापति घोषित किया गया। तीसरे पुत्र, मिर्ज़ा कायमर्स बहादुर को द्वितीय उत्तराधिकारी नियुक्त किया गया। चौथे पुत्र, मिर्ज़ा मुहम्मद सुल्तान फथुल मुल्क शाह बहादुर को तृतीय उत्तराधिकारी घोषित किया गया। यह स्पष्ट नहीं है कि प्रधानमंत्री और पूर्णाधिकार प्राप्त सेनापति जैसे सर्वोच्च पदों पर नियुक्त होने के बावजूद (हमें याद करना चाहिए कि शाह आलम बहादुर शाह द्वितीय ने महादा जी सिंधिया को भी इसी प्रकार के पूर्णाधिकार प्राप्त और मुख्य मंत्री जैसे पद प्रदान किए थे) मिर्ज़ा मुहम्मद शाह रुख बहादुर को द्वितीय उत्तराधिकारी क्यों नहीं घोषित किया गया और उन्हें उत्तराधिकार क्रम में स्थान क्यों नहीं दिया गया।
संभवतः, सम्राट मिर्ज़ा मुहम्मद शाह रुख बहादुर को ज़्यादा पसंद नहीं करते थे। आम धारणा यह थी कि मिर्ज़ा कायमर्स बहादुर अपनी व्यक्तिगत योग्यता के बल पर प्रथम उत्तराधिकारी बनने के लिए स्वयं को सबसे योग्य समझते थे, हालाँकि कुछ लोगों का कहना था कि यह महत्वाकांक्षा से कहीं अधिक थी। मुगल साम्राज्य में उत्तराधिकारी का कोई पद या ओहदा नहीं था। सम्राट के उत्तराधिकारी का निर्धारण उनकी मृत्यु के बाद सीधे रक्तपात या गृहयुद्ध द्वारा होता था। अंग्रेजों ने, अपने विशिष्ट हस्तक्षेपवादी रवैये और भारतीय चीजों को अपने अनुरूप ढालने की इच्छा के

साथ, ज्येष्ठाधिकार का नियम लागू किया और अकबर शाह द्वितीय के शासनकाल में यह निर्णय लिया कि सम्राट का सबसे बड़ा पुत्र ही उत्तराधिकारी होगा। इसलिए, बहादुर शाह के राज्याभिषेक के साथ ही मिर्ज़ा दारा बख्त को उत्तराधिकारी घोषित किया गया। इससे अन्य राजकुमारों के लिए उत्तराधिकारी बनने के प्रयास, षड्यंत्र या चालबाज़ी बंद नहीं हुई।

मिर्ज़ा फ़खरू उस युग के लगभग सभी राजकुमारों की तरह उच्च शिक्षित थे। वे सुलेख की अनेक शैलियों में पारंगत थे और संगीत एवं नृत्य में सर्वोच्च गुरु का दर्जा रखते थे। वे कुशल घुड़सवार और धनुर्धर भी थे। उन्हें अंग्रेज़ी का अच्छा ज्ञान था। वे हिंदी (रेख़्ता) के एक प्रखर कवि थे। उनका उपनाम रमज़ था और वे इस विधा में शेख़ ज़ौक़ के शिष्य थे। वे फ़ारसी में रचना नहीं करते थे, परन्तु उसके गद्य और पद्य के उत्साही विद्यार्थी थे और फ़ारसी में सहबाई के शिष्य थे। जैसा कि हमने ऊपर देखा है, वे लगभग अपने पिता की हूबहू छवि थे। राज्य के अन्य राजकुमारों के विपरीत, मिर्ज़ा फ़खरू कभी-कभार नगर में आते-जाते थे और कुछ प्रतिष्ठित स्थानीय लोगों और फिरंगियों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध रखते थे।

अपनी असाधारण खूबियों के बावजूद, या शायद इन्हीं खूबियों की वजह से, मिर्ज़ा फ़खरू दरबार में ज़्यादा लोकप्रिय नहीं थे। वे वाकई बहुत समझदार थे: वे अपने पूर्वजों द्वारा शासित विशाल साम्राज्य में हर जगह समाज और राज्य में हो रहे बदलावों से भलीभांति परिचित थे। उनका मानना था कि सम्राट और उनकी सरकार के लिए इन बदलावों का विरोध करना या उनके अनुरूप ढलना ज़रूरी है। वे खुद को तेरहवीं सदी का व्यक्ति बनाना चाहते थे, जो विपरीत परिस्थितियों का सामना करने और उन पर विजय पाने के लिए नए हथियारों से लैस हो। शायद ईश्वर की छाया बदलाव और अनुकूलन के प्रति संशय में थी, और मिर्ज़ा फ़खरू इन्हीं गुणों का प्रतिनिधित्व करते थे। वे अपने मार्ग पर चलने के लिए दृढ़ थे।

अधिकांश तैमूरिद राजकुमारों के विपरीत, मिर्ज़ा फ़खरू का प्रेम जीवन कामुकता से भरपूर नहीं था। उनकी पहली और सच्ची प्रिय पत्नी उनकी चचेरी बहन फ़ज़िलत-उन निसा बेगम थीं, जो अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह के लिए प्रसिद्ध, साहसी और आकर्षक राजकुमार मिर्ज़ा जहांगीर बख्त की पुत्री थीं। जैसा कि हमने पहले बताया, उन्हें फिरंगी शासन द्वारा निर्वासित कर दिया गया था और 1821 में अपने दूसरे निर्वासन के दौरान उनका निधन हो गया। उनकी पुत्री लाल हवेली और तैमूरिद वंश में अपनी सुंदरता के लिए उतनी ही प्रसिद्ध थीं, जितनी उनके पिता अपनी सुंदरता के लिए। फ़ज़िलत-उन निसा बेगम भी दीर्घायु नहीं रहीं। वह मिर्ज़ा फ़खरू के साथ मिर्ज़ा अबू बक्र की माता थीं। युवा पुत्र ने अपने चाचा मिर्ज़ा ज़ाहिरुद्दीन, जिन्हें मिर्ज़ा मुगल के नाम से जाना जाता है, के साथ 1857 में फिरंगी शासन के विरुद्ध विद्रोह और फिर दिल्ली की रक्षा के दौरान प्रसिद्धि प्राप्त की। सितंबर 1857 में दिल्ली पर पुनः कब्जा करने के बाद हॉडसन द्वारा निर्मम रूप से हत्या किए गए राजकुमारों में मिर्जा अबू बक्र, मिर्जा मुगल और मिर्जा खिजर सुल्तान शामिल थे।

मिर्ज़ा फ़थुल मुल्क बहादुर ने फ़ज़ीलत-उन निसा बेगम की मृत्यु के बाद ही पुनर्विवाह किया। उनकी दूसरी पत्नी हातिम ज़मानी बेगम थीं, जो मिर्ज़ा हिदायत अफ़ज़ा, जिन्हें मिर्ज़ा इलाही बख्श के नाम से जाना जाता था, की पुत्री थीं। इस विवाह से एक पुत्री का जन्म हुआ। सम्राट ने पुत्री

के दूध छुड़ाने के समारोह में आयोजित संगीत और नृत्य कार्यक्रमों में उपस्थित होकर और वहाँ मौजूद सभी लोगों को पुरस्कार और उपहार देकर अपनी बहू, या शायद मिर्ज़ा इलाही बख्श, पर विशेष कृपा दिखाई। यही मिर्ज़ा इलाही बख्श वही हैं जो सम्राट के शत्रु माने जाते थे और उन पर अंग्रेजों के लिए हवेली की जासूसी करने का संदेह था। सितंबर 1857 में दिल्ली पर कब्ज़ा करने के बाद जब युद्ध समाप्त हुआ और अंग्रेज़ों का शासन बहाल हुआ, तो फिरंगियों ने उनका बहुत सम्मान किया। यहाँ तक कि उन्हें राजपरिवार का मुखिया भी घोषित कर दिया गया। संकेत मिलते हैं कि मिर्ज़ा फ़खरू और हातिम ज़मानी बेगम के बीच संबंध बहुत सौहार्दपूर्ण नहीं थे।
मिर्ज़ा मुहम्मद सुल्तान फथुल मुल्क बहादुर ने चित्र नीचे रख दिया, लेकिन उसे अपने सामने ही रखा। क़दम शरीफ़ में हुई संक्षिप्त मुलाकात के अलावा भी उन्हें नवाब मिर्ज़ा से कई बार मिलने का अवसर मिला था। अब वे समझ सकते थे कि वह युवक इतना सुंदर और इतना सांवला क्यों था। उन्होंने चित्र को अपने सुरक्षित बक्से में रखने का सोचा, ताकि किसी अवांछित व्यक्ति की नज़र उस पर न पड़े। लेकिन उन्हें डर था कि अगर उन्होंने उसे दोबारा अपने हाथों में लिया, तो वे खुद को रोक नहीं पाएंगे और उसे अपने कुर्ते के अंदर, अपने दिल के पास रख लेंगे। सचमुच, मियां गुलाम अली खान एक अद्भुत कलाकार थे।
लेकिन वह उससे मिलने या उसके पास जाने की कोशिश कैसे करे? क्या उसे शादी का प्रस्ताव रखना चाहिए, या सिर्फ उसके साथ रहने की व्यवस्था? लेकिन अगर वह मेरी रखैल बनने से इनकार कर दे, या मुझसे अलग रहकर सिर्फ मेरे साथ रहने से मना कर दे तो? उसने ज़ियाउद्दीन अहमद खान द्वारा उससे प्रेम निवेदन करने की कुछ अस्पष्ट खबरें सुनी थीं, लेकिन उसे इसके परिणाम का पता नहीं था। अगर वज़ीर खानम वाकई में गहन चिंतन, भावना, गरिमा और आत्म-संयम वाली महिला थी, जैसा कि चित्र में दिखती थी, तो यह पूरी तरह संभव था कि वह उसे एक अनुभवहीन युवक समझकर अपने दरवाजे से ठुकरा दे... मैं उससे बातचीत कैसे शुरू करूँ? सच है, शहर के प्रतिष्ठित लोगों से मेरे सामाजिक संबंध हैं, चाहे वे हमारे पक्ष के हों या फिरंगी पक्ष के, लेकिन उससे किसी औपचारिक, संयमित अवसर पर मिलना एक बात है, और उसके दरवाजे पर दस्तक देना बिल्कुल अलग बात है। अगर वह इनकार कर दे तो यह मेरे लिए बहुत बड़ा अपमान होगा... और मैं उसके बिना कैसे जी पाऊँगा?
एक राजदंड धारण करने वाले ने बड़ी नरमी से पर्दे को कुछ इंच हटाया और दबी आवाज में बोला, 'माननीय साहब आलम, उस्ताद आ गए हैं और अंदर आने की अनुमति चाहते हैं।'
मिर्ज़ा गुलाम फखरुद्दीन थोड़ा चौंके और जल्दी से वज़ीर की तस्वीर को उसके सुरक्षित बक्से में रख दिया। उन्होंने अपना चेहरा और आँखें मलीं, मानो अभी-अभी नींद से जागे हों।
‘क्या उस्ताद की गरिमामय उपस्थिति यहाँ है? बहुत अच्छा। उन्हें अंदर आने की अनुमति दी जा सकती है।’
‘महोदय, आदरणीय’, यह कहते हुए राजदंड धारण करने वाले ने संक्षेप में अपने ठीक पीछे खड़े उस्ताद ज़ौक़ को इशारा किया। ज़ौक़ ने पर्दा हटाया और उत्सुकता से भरे स्वर में प्रवेश किया, मानो साहिब-ए-आलम से मिलना ही उनके जीवन की सबसे बड़ी इच्छा रही हो।
‘मैं अपनी बात रखता हूँ, साहब आलम। आज आप कैसा महसूस कर रहे हैं?’

‘स्वागत है, आपका हार्दिक स्वागत है। अंदर आइए, महोदय; मेरे पास बैठिए।’ मिर्ज़ा फथुल मुल्क पूरी तरह से खड़े हो गए और सच्ची प्रसन्नता के साथ बोले।

शेख मुहम्मद इब्राहिम लगभग साठ वर्ष के थे, औसत कद-काठी के और सुगठित शरीर वाले थे। वे देखने में आकर्षक थे; उनकी दाढ़ी शरिया द्वारा निर्धारित न्यूनतम लंबाई से थोड़ी अधिक थी, काली-सफेद, घनी नहीं, नुकीली और करीने से संवारी हुई। उनकी मूंछें घनी नहीं थीं, लेकिन बहुत छोटी भी नहीं थीं, जैसा कि शरिया में उचित माना जाता है। उन्होंने चार कोनों वाली काली मखमली टोपी पहन रखी थी, जिसके किनारे पर चौड़ी लेस लगी थी। उनका कुर्ता हल्के हरे रंग के मलमल का था, और उस समय के चलन के विपरीत, मलमल इतना महीन नहीं था कि उसके नीचे से छाती की हल्की सी झलक दिखाई दे। कुर्ते के ऊपर उन्होंने नीमा नामक छोटा, सफेद, आधी बाजू का कोट पहन रखा था, जो औरंगाबादी कपड़े मशरू से बना था; नीमा के ऊपर उन्होंने हल्के रंग का चिंट्ज़ का कफ्तान पहन रखा था। उनकी पतलून संगी नामक पतले धारीदार सूती कपड़े की थी; उसके नीचे का हिस्सा इतना चौड़ा था कि अगर उन्होंने जूते पहने होते तो वे उन्हें ढक लेते। उन्होंने कक्ष में प्रवेश करने से पहले प्रोटोकॉल के अनुसार अपने जूते उतार दिए थे। उनका रंग गहरा था, भौंहें उठी हुई थीं और नाक सीधी थी, जिससे उनके जीवंत स्वभाव का आभास होता था। हालांकि उनके चेहरे पर चेचक के कई निशान थे, फिर भी उनमें सतर्कता और बुद्धिमत्ता झलकती थी, जिससे चेचक के निशान लगभग छिप जाते थे। उनकी आंखें बड़ी और चमकीली थीं, और उनकी नज़र तीक्ष्ण और जिज्ञासु थी। उनका हावभाव और चाल-ढाल उनकी तीक्ष्ण बुद्धि और आत्मविश्वास को दर्शाते थे।
उस्ताद ज़ौक़ बड़े कमरे में संभलकर आगे बढ़े, उनकी निगाहें सीधे सामने टिकी थीं। उन्होंने राजकुमार को सहज स्नेह से गले लगाया; मिर्ज़ा फ़तहुल मुल्क ने उनके दाहिने हाथ को चूमा और उन्हें अपने पास बिठाकर सोने की बारीक कारीगरी वाली एक छोटी सी डिब्बी खोली और उसमें से कुछ चांदी से लिपटी इलायची और सुगंधित तंबाकू और मसालों से सने सुपारी के कुछ छोटे टुकड़े निकाले। उन्होंने इन सामग्रियों को अपनी दाहिनी हथेली पर रखकर उस्ताद को भेंट किया और कहा, 'कृपया इन्हें देख लीजिए। हुक्का एक मिनट में तैयार हो जाएगा।'
‘महोदय, यह साहब आलम की बड़ी कृपा है, लेकिन अगर मुझे इस समय हुक्का न दिया जाए तो मैं इसे आपके सेवक का अपमान समझूंगा।’ उन्होंने दो इलायची उठाईं और सलाम किया।
राज्य के राजकुमार से आतिथ्य सत्कार के प्रतीक को अस्वीकार करना अन्य लोगों के मामले में लगभग राजद्रोह माना जाता। लेकिन ज़ौक़ राजकुमार के उस्ताद थे, और उन्हें इस प्रकार की आत्मीयता की अनुमति थी। मिर्ज़ा फ़खरू मुस्कुराए।
'सचमुच, आप सूक्ष्म बातों के पारखी हैं। अगर हमारी कोई बात आप तक न पहुंचे तो इसे हमारे लोगों के प्रति एक तरह का स्नेह ही माना जाना चाहिए।'

शेख ज़ौक़ को राजकुमार के शब्दों में हल्की सी फटकार का भाव महसूस हुआ। शायद राजकुमार को अपने उस्ताद का हुक्का न स्वीकार करना पसंद नहीं आया। उस्ताद ने तुरंत अपनी गलती

सुधारते हुए कहा, 'साहिब आलम का अपनी प्रजा के प्रति प्रेम सूर्य से भी अधिक स्पष्ट और उज्ज्वल है। हम सब सचमुच आपकी मेज़पोश से ही रोटी पाते हैं।' ज़ौक़ ने बड़ी सहजता से मुस्कुराते हुए कहा, 'आपके द्वार से हुक्का मिलना मेरा सौभाग्य है, बस इतना ही। महोदय, मुझे पिछले तीन दिनों से लगातार खांसी हो रही है। नींद मेरे लिए नामुमकिन हो गई है। उमदत-उल-हुकमा से निर्देश है कि मुझे धुएँ या काले वाष्प वाली हर चीज़ से पूरी तरह परहेज़ करना चाहिए।' लंबे स्पष्टीकरण ने राजकुमार के अच्छे मूड को बहाल कर दिया। उन्होंने कहा, 'नहीं, बिलकुल नहीं। मैं आपकी असुविधा का कारण कैसे बन सकता हूँ? अगर आपका मन नहीं है तो हुक्का मत पीजिए।'

इसी बीच, एक राजदंड धारण करने वाला व्यक्ति चांदी की थाली लिए हुए अंदर आया, जिस पर सूखे मेवों से भरी दो छोटी चांदी की थालियाँ रखी थीं। उस्ताद कमर झुकाकर थाली से दो बादाम उठाकर मुँह में डाले और मुस्कुराते हुए बोले, 'महामहिम, इन बादामों के लिए किसी को अपनी आँखें कुर्बान करनी चाहिए!'

'जी साहब,' फथुल मुल्क ने मुस्कुराते हुए जवाब दिया। 'देखिए, यहाँ एक छंदबद्ध पंक्ति है: "संकेत यह है कि आपको अपनी आँखें निकाल कर मुझे भेंट करनी होंगी।"' फिर उन्होंने अपने उस्ताद की ओर आशा भरी निगाहों से देखा, मानो वे अपनी पंक्ति को पूरा करने के लिए एक और पंक्ति चाहते हों, जिससे शायद एक प्रारंभिक छंद बन जाए। खैर, ज़ौक़ के सामने विषय विनम्रता से हाथ जोड़कर खड़े रहते थे, ध्यान आकर्षित करने की प्रतीक्षा करते हुए। यह बिल्कुल महान अरब कवि इमराउल कैस की तरह था, जिन्होंने एक बार लिखा था कि तुकबंदी वाले शब्द उनके सामने टिड्डियों के झुंड की तरह थे: जब तक वे दो को पकड़ पाते, चार उनकी पकड़ से निकल जाते।

उस्ताद ने हाथ जोड़कर कहा, 'मैं अपने गुरु और मार्गदर्शक के पुत्र के समक्ष मुख खोलने के योग्य नहीं हूँ। मैं केवल आदेश का पालन करते हुए एक प्रारंभिक श्लोक प्रस्तुत करता हूँ।'

'बहुत बढ़िया, उस्ताद। कृपया हुक्म चलाइए।'

अपने हाथों को अभी भी छाती पर जोड़े हुए, ज़ौक़ ने प्रारंभिक श्लोक का पाठ किया:

उसने मुझे एक छोटे से पर्स में कुछ बादाम भेजे; इसका संकेत यह है कि मुझे अपनी आंखें निकालकर उसे ये बादाम उपहार में देने होंगे।

'ओह मेरे प्यारे उस्ताद! आप इस युग के अनमोल रत्न हैं! अल्लाह की कसम, यह एक ऐसा प्रारंभिक श्लोक है जो सभी प्रारंभिक श्लोकों को मात देता है। इसके लिए हर कोई आपके हाथ चूमना चाहेगा!' मिर्ज़ा फतहुल मुल्क बहादुर भावविभोर हो गए।

ज़ौक़ अपनी जगह से आधा उठा, सलाम किया और बोला, 'हे प्रभु, यह मेरी अपनी रचना नहीं है। यह तो आपके घर से भेजा गया एक उदार संदेश मात्र है। लेकिन साहब आलम ने ज़रूर हाल ही में कुछ रचा होगा। क्या आप हमें, जो आपकी कविता के जीवनजल के लिए प्यासे हैं, रोते हुए घर वापस भेजेंगे, "हम जल रहे हैं"?'

मिर्ज़ा गुलाम फखरुद्दीन के चेहरे पर शर्मिंदगी और उलझन साफ झलक रही थी। कुछ पल चुप

रहने के बाद उन्होंने कहा, “उस्ताद, पता नहीं कल रात मुझ पर कौन सी विपत्ति या मुसीबत आ पड़ी। मुझे ज़रा भी नींद नहीं आई; पूरी रात गुज़र गई, बस करवटें बदलती रही और नींद आने की दुआ करती रही। और आपको शेख नासिख की लखनऊ की वो मशहूर ग़ज़ल तो याद ही होगी: मैं उसे भूल नहीं सकता, चाहे मैं कहीं भी जाऊं। मैं पूरी तरह से परेशान हूं: मुझे क्या करना चाहिए? मुझे कहां जाना चाहिए?

'कल रात मेरी हालत बिलकुल ऐसी ही थी। मैंने बार-बार यही आयत अपने मन में दोहराई। मुझे सुलाने के लिए मेरी मालिश और मालिश करने वाली नौकरानियों ने कुरान की आयत 'कुरान की कुर्सी' पढ़ी और कई बार मुझ पर फूँकी, लेकिन नींद नहीं आई, बिलकुल नहीं आई। अंत में, आपकी ही मशहूर कविता की आखिरी आयत ने मेरी हालत को सटीक रूप से बयां किया।'

ऐ मुअज़्ज़िन, आपका स्वागत है! आपने बिलकुल सही समय पर अज़ान दी। आपकी आवाज़ मक्का और मदीना तक पहुंचे!

ज़ीनत-उन निसा बेगम की मस्जिद के मुअज़्ज़िन ने सुबह की नमाज़ के लिए अज़ान दी। मैं बिस्तर से उछलकर उठा, वज़ू किया, जैसे-तैसे नमाज़ पढ़ी और वापस बिस्तर पर चला गया। मुझे नींद आ गई, पता नहीं कब। लेकिन जब मैं जागा, तो मेरी ज़बान पर फिर से वही अल्लाह की मौजूदगी, शेख नासिख, की आयत थी।

उस्ताद ज़ौक़ ने कान खड़े कर लिए, और राजकुमार की कहानी आगे बढ़ने के साथ-साथ ऐसा ही करते रहे। आख़िरकार, यह किला था: यहाँ हर दिन नई-नई अफवाहें फैलती थीं। जब तक एक अफवाह शांत होती या गलत साबित होती, उसी तरह की दो नई अफवाहें पल भर में फैल जातीं। सभी अच्छे दरबारी की तरह, ज़ौक़ भी हवेली में हर समय और हर मौसम में चलने वाली हर खबर, गपशप, अफवाह और छोटी-छोटी बातों से अवगत रहते थे। इस प्रकार, राजकुमार द्वारा उस्ताद गुलाम अली खान को बुलाकर छोटी बेगम का चित्र बनवाने की खबर किले से निकलते ही उन तक पहुँच गई। अब, जब उन्होंने साहिब-ए आलम की रातों की नींद हराम होने की कहानी सुनी, और उनके द्वारा नासिख की विरह की विषय पर लिखी गई शुरुआती कविता को याद करने की बात सुनी, तो उन्होंने अफवाहों की गहराई को तुरंत भांप लिया: निःसंदेह, साहिब-ए आलम दुखी हैं; उनका दिल कहीं न कहीं उलझ गया है। ईश्वर उन पर और हम पर दया करे; वह बुरी तरह से मोहित हो गया लगता है।

उनसे इस बारे में पूछने का तो सवाल ही नहीं उठता था। वे बस ध्यान से राजकुमार का भाषण सुनते रहे, उनके चेहरे पर सहानुभूति और चिंता के भाव स्पष्ट थे। अब जब साहिब-ए आलम ने ज़ौक़ की कविता पढ़ी और कुछ पल रुके, तो उस्ताद ज़ौक़ ने कहा, 'मुझे पूरा यकीन है; अनिद्रा ने महाराज के काव्य स्वभाव को और भी प्रज्वलित कर दिया होगा। विचारों से परिपूर्ण एक काव्य प्रतिभा भला कैसे रुक सकती है?'

राजकुमार ने हल्की सी मुस्कान बिखेरी। ‘महोदय, मैंने शेख नासिख की ग़ज़ल की तर्ज पर एक-दो छंद रचे हैं। समय आने पर मैं एक ग़ज़ल पूरी कर लूँगा। फिलहाल मैं आपके समक्ष कुछ छंद प्रस्तुत कर रहा हूँ, आशा है कि आप मुझे उनमें सुधार करने की कृपा करेंगे।’

आह! बहुत बढ़िया। केवल ईश्वर ही दोषरहित हैं! कृपया आदेश दें।

राजकुमार ने अपने हाथ छाती पर जोड़कर प्रारंभिक श्लोक कहा:
मैं जहाँ भी जाता हूँ, उसका कोई सुराग नहीं मिलता; अब मैं अपने इस बेचैन मन के साथ कहाँ जाऊँ?
'केवल ईश्वर ही दोषरहित हैं! साहिब-ए आलम, यह बहुत ही सुंदर आरंभिक श्लोक है।' उस्ताद ने सहज भाव से कहा। 'उच्चतर लोक में शेख की आत्मा भी आनंदित होती होगी!'
'हे प्रभु, तुम मुझे कांटों पर घसीट रहे हो!' मिर्ज़ा फ़खरू प्रसन्नता से मुस्कुराए। 'अब अगला सुनो; मुझे उम्मीद है कि यह सार्थक होगा।' राजकुमार ने पाठ किया:
यदि तुम्हारा दुःख मुझे रोक न सके, तो मैं इस दुनिया को छोड़कर अगली दुनिया में चला जाऊँगा।

उसने आशा भरी निगाहों से ज़ौक़ की ओर देखा। उस्ताद ने भी कोई कसर नहीं छोड़ी और उनकी जमकर प्रशंसा की। वह कुछ और कहने ही वाले थे कि राजकुमार ने कहा, 'उस्ताद जी, कृपया यह बात भी आप तक पहुंचाएं।'
'बिल्कुल, बिलकुल। देखते हैं कि क्या आप पिछली थीम से बेहतर कोई थीम ढूंढ सकते हैं! आजकल साहिब-ए आलम की काव्य प्रेरणा का प्रवाह गंगा और यमुना के प्रवाह से भी अधिक है।'
राजकुमार ने कहा:
मैं प्रत्यक्ष हूं; वह अप्रत्यक्ष की आत्मा है; मुझे वहां जाना चाहिए जहां मैं नहीं हूं।
उस्ताद ज़ौक़ ने उत्साहपूर्वक अपनी कमर पीटते हुए कहा, "निस्संदेह, अब साहिब-ए आलम ने उस्ताद का दर्जा प्राप्त कर लिया है। इसमें कोई संदेह नहीं! ऐसा काव्य और कौन रच सकता है? अल्लाह आपकी क्षमताओं को बार-बार बढ़ाए।"
मिर्ज़ा गुलाम फखरुद्दीन बहादुर की भावपूर्ण आँखों में नमी की एक झलक दिखाई दी। वे आधे उठे और अपने उस्ताद को सलाम किया। मन ही मन उन्होंने कहा: 'मानव जगत पर हमारी पकड़ अब लगभग शून्य हो चुकी है; हृदय की अवस्था भी एक संसार है, नरकीय और स्वर्गीय दोनों। काश, कम से कम उस संसार पर तो हमारा कुछ अधिकार होता!' उनकी कल्पना में वज़ीर खानम की रहस्यमयी मुस्कान उभर आई, एक ऐसी मुस्कान जो इश्कबाज़ी से कोसों दूर थी, बल्कि ऐसा प्रतीत होता था मानो यह घोषणा कर रही हो कि यदि कोई गुणवान व्यक्ति हो, कोई ऐसा जिसे वह चुन सकें, तो यह मुस्कान उनके लिए हृदय की इच्छाओं के खिलने का द्वार खोल सकती है, आनंद का एक ऐसा संसार जिसे केवल कवि और प्रेमी ही जान सकते हैं। आत्मा के बाग के हर कुंज में, यह जीवन और मृत्यु के सुखों की नई शाखाएँ खिला सकती है। ऊँची और गर्वित गर्दन सुंदरता के घमंड और वांछित होने के आत्मविश्वास से भरी हुई है; वह गर्दन जिसे कोई झुका नहीं सकता था, लेकिन जो दर्द से दोहरी हो जाने का वादा करती थी, या संभावना रखती थी, अगर उसके किसी प्रियजन को एक छोटा सा कांटा भी चुभ जाए। मैं घना, दृश्यमान, प्रत्यक्ष संसार से दूषित हूँ, और वह सूक्ष्म, कोमल और नाज़ुक है, जैसे अप्रत्यक्ष संसार। मैं वहाँ कैसे जा सकता हूँ, मैं उस तक कैसे पहुँच सकता हूँ?
उस्ताद शेख मुहम्मद इब्राहिम ज़ौक़ अपने बादशाह और राजसी किले में रहने वाले उनके सभी

संरक्षकों से भली-भांति परिचित थे, उनके स्वभाव और पसंद-नापसंद से भी। उन्हें साहिब-ए आलम की तल्लीनता और उनकी हाल की कविताओं के भाव का भी अच्छा ज्ञान था। उन्हें लगा कि छोटी बेगम के लिए एक द्वार खुल रहा है। पर इससे मेरा क्या लेना-देना? सल्तनत का काम तो अब था ही नहीं; अब तो बस दिलों को जीतना और उन पर हुकुम चलाना ही विजय कहलाता था और नए क्षेत्रों पर अपना प्रभुत्व स्थापित करना था। ईश्वर करे कि वह राजकुमार के लिए शुभ सिद्ध हों। छोटी बेगम एक हीरा थीं, पर जिसने भी उन्हें अपने पगड़ी पर आभूषण की तरह पहना, उसका अंत शीघ्र ही कूड़े के ढेर पर ही हुआ।

साहिब-ए आलम व आलमीयन मिर्ज़ा मुहम्मद सुल्तान फथुल मुल्क बहादुर ने अपना सिर उठाया और उस्ताद ज़ौक़ जैसे कठोर दरबारी भी राजकुमार के चेहरे और व्यक्तित्व को देखकर भीतरी तौर पर दंग रह गए। राजकुमार के चेहरे और व्यक्तित्व में एक ऐसी गरिमा, एक ऐसा अभिमानी आभास था, जो उन्होंने पहले कभी नहीं देखा था: ऐसा लग रहा था मानो उनके सामने इस सदी के जर्जर बगीचे का कोई पुराना और कमज़ोर, दीमक लगा बरगद का पेड़ नहीं, बल्कि समरकंद और खिवा के विशाल खुले मैदानों में फैला एक गौरवशाली, घना, छायादार चिनार का पेड़ हो, जो शान से अपना सिर उठाए और उदारता से अपना सीना फैलाए, पास और दूर के लोगों और प्राणियों को लाभ पहुँचा रहा हो। और...

'उस्ताद जी, हम आपके बहुत आभारी हैं।' राजकुमार की आवाज़ ने उनके विचारों को तोड़ दिया। ज़ौक़ समझ गए कि धन्यवाद देना उनके जाने का संकेत है। वे उठे और तीन बार सलाम किया। राजकुमार, जो पहले से ही अपने विचारों में डूबे हुए थे, अपनी जगह से हिले नहीं; उन्होंने बस अपना दाहिना हाथ अपनी बाईं छाती पर रखा और कहा, 'अल्लाह की हिफ़ाज़त में', और अपना सिर फिर से झुका लिया। उन्हें पता ही नहीं चला कि कब गदाधारी ने पर्दा हटाया, कब उस्ताद ने कमरे से बाहर कदम रखा, या कब जूताधारी ने उनके पैरों में जूते पहनाए।

उस्ताद एक महिला अंगरक्षक के पीछे चल रहे थे, उनकी निगाहें सामने टिकी थीं; उनके कदम सधे हुए और गंभीर थे। वे सजावटी तालाब और संगमरमर की सीटों (जिन्हें सावन भादों कहा जाता है - जो दो सबसे अधिक वर्षा वाले महीनों के भारतीय नाम हैं) के पास से गुज़रे, फिर फूलों की क्यारियों के चारों ओर बने रास्तों से होते हुए उस गहरे कुएँ तक पहुँचे जहाँ एक अन्य महिला अंगरक्षक ने उनका ज़िम्मा संभाला और उन्हें विशाल लाहौरी द्वार की ओर जाने वाले मार्ग तक ले गईं। वहाँ से दो ढालधारी उन्हें अपने साथ लाहौरी द्वार के चौकी तक ले गए, जहाँ उन्होंने सलाम किया और उन्हें वहीं छोड़ दिया।

उस्ताद ज़ौक़ के कमरे से बाहर निकलते ही, साहिब-ए आलम ने पीछे की ओर चलते हुए बक्सा खोला और उसमें से चित्र निकाला।

विद्वान और पहेलियों के रचयिता मौलवी इमाम बख्श सहबाई राजकुमार की दुविधा को सुलझाने का प्रयास करते हैं।

वह पूरी रात मिर्ज़ा फ़खरू के लिए बहुत कठिन थी: उस अंधेरे को सुबह तक घसीटना। वज़ीर खानम को जानना और उनसे संबंध स्थापित करना—सिर्फ़ संबंध ही नहीं, बल्कि जीवन भर की दोस्ती—उनके जीवन की सबसे बड़ी ज़रूरत बन गई थी। अगर वह वज़ीर को एक पेशेवर महिला मानते, चाहे उनका सामाजिक जीवन कितना भी सीमित हो और वह अपनी कृपा पाने के लिए कितनी ही शर्तें रखती हों, लेकिन फिर भी एक पेशेवर महिला, तो मामला बिलकुल भी मुश्किल नहीं होता। लेकिन उनका दिल उन्हें एक यौन वस्तु, एक बिकने वाली या बदली जा सकने वाली चीज़ के रूप में देखने से इनकार करता था। ऐसा नहीं था कि वह वज़ीर के अतीत से अनजान थे। वास्तव में, पूरा दिल्ली उनके इतिहास से वाकिफ़ था। और हर कोई जानता था कि एक सदी से भी पहले नूर बाई के बाद, अगर बेगमों के वर्ग से बाहर की कोई महिला, या बाज़ार की कोई महिला—आप अपनी पसंद चुन सकते हैं—जिसका नाम, जिसकी सुंदरता और पुरुषों का दिल जीतने की शक्ति पूरे शहर में चर्चा का विषय थी, तो वह वज़ीर खानम ही थीं। यह कहना गलत नहीं होगा कि एक पूरी पीढ़ी उसकी प्रेमिका थी, जिसे उसने कभी देखा भी नहीं था। एक और बात भी थी: हर कोई उसके दरवाजे तक पहुँचने का सपना भी नहीं देख सकता था। नवाब ज़ियाउद्दीन अहमद खान के साथ जो कुछ हुआ था, वह अब दिल्ली के उन नागरिकों के बीच खबर, अफवाह या गपशप के रूप में मशहूर हो चुका था, जो प्रेम और कामुकता से भरी गलियों में मौज-मस्ती को जीवन की आवश्यकता मानते थे; या अगर जीवन की आवश्यकता नहीं भी, तो उन गलियों में होने वाली घटनाओं की जानकारी रखना उनके लिए एक सुखद और आनंददायक शौक था।

मिर्ज़ा फ़थुल मुल्क बहादुर वासनाओं के धनी नहीं थे। अपने पिता के विपरीत, उन्हें बार-बार विवाह करने और पत्नियों से संतान उत्पन्न करने में कोई रुचि नहीं थी। सुख की प्रेमिकाओं और दिल जीतने या हारने के मामलों में उनकी रुचि उतनी ही थी जितनी उस समय धनी और कुलीन लोगों में आम बात थी। वज़ीर खानम में वे केवल एक सहेली की तलाश नहीं कर रहे थे, बल्कि जीवन साथी की तलाश कर रहे थे। उन्होंने उसे केवल उसकी सुंदरता की प्रसिद्धि के कारण नहीं चाहा, जो उन्हें अनेक स्रोतों से मिली थी और जिसकी सत्यता उसके चित्र से सिद्ध हो चुकी थी। किसी के साथ दिल लगाना उनके जीवन का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य था; लेकिन दिल लगाना और दिल का ध्यान भटकाना उनके लिए दो अलग-अलग बातें थीं।

काफी रात को, मिर्ज़ा फ़खरू अपने शिक्षक और मित्र इमाम बख्श सहबाई के बारे में सोच रहे थे, जो वर्षों से उन्हें फ़ारसी पढ़ाते आ रहे थे। शहर में एक विद्वान, कवि और कुछ सबसे पेचीदा शब्द पहेलियों के रचयिता के रूप में प्रसिद्ध, जिन्हें सुलझाने का प्रयास करना दुर्भाग्यवश होता था, सहबाई उम्र में मिर्ज़ा फ़खरू से कुछ ही बड़े थे। वे जल्द ही राजकुमार के दरबारी या उस्ताद से भी बढ़कर एक साथी बन गए। अपने हास्यबोध के कारण, वे लगभग हमेशा राजकुमार का मूड ठीक करने में सफल हो जाते थे जब भी वे किसी कारण से उदास या परेशान होते थे। सहबाई से

परामर्श करने का एक अतिरिक्त लाभ यह था कि शहर के धार्मिक और सूफी अभिजात वर्ग के साथ उनके अच्छे संबंधों के कारण, वे वज़ीर खानम से संपर्क करने के लिए आसानी से मध्यस्थ या बिचौलिए का काम कर सकते थे।

अगली सुबह, मौलवी साहब अपनी सुबह की नमाज़ पूरी ही कर चुके थे कि साहिब-ए आलम व आलमियां की ओर से एक राजदंड लेकर आया। उसके पास ठंडे दूध से भरा एक मध्यम आकार का मिट्टी का बर्तन, उससे थोड़ा बड़ा एक बर्तन जिसमें गरमा गरम गुलाब जामुन थे (दिल्ली में अमीर-गरीब दोनों को पसंद आने वाली गहरे रंग की, मुलायम और बेहद मीठी मिठाई), और एक ऐसा ही बर्तन जिसमें मालपुआ था (दिल्ली के संभ्रांत लोगों का पसंदीदा, गहरे तले हुए, चीनी से लथपथ पैनकेक)। वह यह संदेश भी लाया कि साहिब-ए आलम व आलमियां ने नाश्ता भेजा है और मौलवी साहब को शुभ हवेली में, तीसरे उत्तराधिकारी के विशेष कक्ष में आमंत्रित किया है। राजदंड लेकर जाने वाले को उचित इनाम देकर विदा कर दिया गया। लगभग पौने घंटे बाद, मौलवी साहब तेज़ी से लाल हवेली की ओर रवाना हो गए।

उस समय सहबाई की उम्र चालीस के करीब थी—वे दुबले-पतले थे, लगभग पतले, और उनके चेहरे के भाव सौम्य थे; इसलिए वे चालीस से ज़्यादा तीस के लगते थे। उनकी दाढ़ी मुगल शैली की थी, घनी नहीं, और ठुड्डी के ऊपर चेहरे के ऊपरी हिस्से में पतली थी। उन्होंने सफेद पतलून पहनी थी, जो उस समय के फैशन से अलग, संकरी थी, और एक सफेद रंग की चार कोनों वाली टोपी, जिसके किनारे पर हल्के नीले और सुनहरे रंग की लेस लगी थी। उनके बाल कंधे तक लंबे थे, प्रचलित फैशन के अनुसार, गहरे काले, चमकदार और करीने से कंघी किए हुए। उनकी लंबी सूती कुर्ती हल्के नीले रंग की थी, और उसके ऊपर उनका छोटा कोट गहरे नीले रंग का था। इन सबके ऊपर वे मौसम के अनुसार हल्का या भारी सादा कफ्तान पहनते थे। संक्षेप में, सहबाई एक सुंदर और सादगीपूर्ण वस्त्रधारी व्यक्ति थे, लेकिन यह पोशाक उनके दुबले-पतले शरीर पर बहुत अच्छी लगती थी। उनका हंसमुख स्वभाव उनके मुस्कुराते चेहरे में झलकता था।

फ़ारसी भाषा और साहित्य में, दिल्ली में उनका कोई सानी नहीं था, सिवाय मिर्ज़ा ग़ालिब और शायद हकीम मोमिन खान मोमिन के। अरबी में, मौलाना फ़ज़ल-ए हक खैराबादी को छोड़कर, हिंद की धरती पर उनका कोई मुकाबला नहीं था। अपने पिता की ओर से, उनका वंश इस्लाम के दूसरे खलीफ़ा उमर से जुड़ा था; अपनी माता की ओर से, वे एक सैयद थे, जिनका वंश बारहवीं शताब्दी के इराक के महान सूफी संत अब्दुल कादिर जिलानी से जुड़ा था। वे एक समृद्ध परिवार से नहीं थे और दिल्ली महाविद्यालय से मिलने वाले नियमित वेतन पर ही उनका गुजारा चलता था। उस समय के जीवन स्तर के अनुसार वेतन कम नहीं था, लेकिन बिना मेहनत के कमाने वाले और मेहनत से कमाने वाले के बीच हमेशा से एक सामाजिक अंतर रहा है। मिर्ज़ा ग़ालिब जैसे कुलीन कवि भी, उनकी विद्वत्ता के बावजूद, उन्हें अपने बराबर नहीं मानते थे। एक और महत्वपूर्ण बात यह थी कि सहबाई दिल्ली में अपने समकालीन प्रमुख विद्वानों में सबसे कम उम्र के थे। फिर भी, पहेलियाँ बनाने और छंदशास्त्र एवं अलंकारशास्त्र में सहबाई की निपुणता और विशेषज्ञता ने उन्हें दिल्ली में एक अत्यंत प्रतिष्ठित विद्वान बना दिया था। कहा जाता था कि वे दो पंक्तियों की एक कविता को पहेली के रूप में रचते थे, जिसमें सैकड़ों नाम छिपे होते थे। कई

जिज्ञासु या कुछ ऐसे लोग जो पहेलियों को सुलझाने में खुद को सक्षम समझते थे, अंततः हार मानकर हल जानने के लिए उनके पास जाते थे।

रेख्ता छंदशास्त्र, अठारहवीं शताब्दी के फारसी ग्रंथ के हिंदी अनुवाद के लिए सहबाई का सदा ऋणी रहेगा। शम्सुद्दीन फकीर द्वारा रचित 'हदाइक-अल बलागाह' नामक यह ग्रंथ भारत में लिखित फारसी छंदशास्त्र का सबसे प्रामाणिक ग्रंथ माना जाता है। सहबाई की नवीनता यह थी कि उन्होंने अपने अनुवाद में मूल अरबी और फारसी उदाहरणों को हिंदी उदाहरणों से प्रतिस्थापित कर दिया, जिससे यह ग्रंथ हिंदी साहित्य के छात्रों और अभ्यासकर्ताओं के लिए अधिक सुलभ हो गया।

जिन दिनों की हम बात कर रहे हैं, उन दिनों ईश्वर के निन्यानवे नामों पर बनी उनकी पहेलियाँ छात्रों के लिए एक चुनौती बन गई थीं; लेखक की व्याख्या के बावजूद भी वे उन्हें ठीक से समझ नहीं पाते थे। उनमें से कई पहेलियाँ हकीम मोमिन खान मोमिन को भी नहीं समझ आती थीं, जिन्हें पहेलियों में कुछ प्रतिभा थी। सहबाई की पहेलियों पर लिखी गई ग्रंथ 'गंजिनाह-ए रुमुज़' (पहेलियों का खजाना) उन दिनों शहर के साहित्यकारों के बीच चर्चा का विषय थी।

राजकुमार की यह प्रथा थी कि हर मुलाकात में वे सहबाई से पूछते, ‘उस्ताद जी, क्या आपके पास मेरे लिए कोई नई पहेली है?’ तब सहबाई अपनी पहेली सुनाते और राजकुमार उसे सुलझाने के लिए खूब दिमाग लगाते; वे अक्सर असफल रहते, लेकिन अलिखित नियम यह था कि अगर मिर्ज़ा फ़खरू पहेली सुलझा लेते, तो उस्ताद उन्हें एक चौथाई रुपये का सिक्का (उस समय लगभग शुद्ध चांदी का) इनाम में देते। अगर राजकुमार हार मान लेते, तो उन्हें उस्ताद को एक रुपये का जुर्माना देना पड़ता।

जिस दिन की हम बात कर रहे हैं, उस दिन मिर्ज़ा फ़खरू ने हमेशा की तरह यह कहकर बातचीत शुरू की, 'उस्ताद, कोई नई पहेली?'

मौलाना सहबाई ने अपना हाथ अपने हृदय पर रखा। “महोदय, मैं हज़ारों पहेलियाँ बना सकता हूँ। हमारा अस्तित्व स्वयं एक पहेली है। परन्तु यह पहेली एक विचित्र, सिरविहीन और पैरविहीन वस्तु है; यदि हम सिर को पैर की जगह और पैर को सिर की जगह रख दें, तो इसका अस्तित्व सामान्य हो जाएगा। तो फिर मेरी इस पहेली का क्या मूल्य है, साहब-ए आलम?”

स्पष्टतः, सहबाई का भाषण पहेली के लहजे में था। साहिब-ए आलम विचारमग्न हो उठे: उन्हें किसी भी तरह पहेली का हल निकालना होगा और उसी लहजे में उस्ताद को उचित पहेलीनुमा उत्तर देना होगा, अन्यथा वे बेहद शर्मिंदा हो जाएँगे। अचानक, उन्होंने गलियारे में एक नौकरानी को कुछ बुदबुदाते हुए सुना, जो 'खस्सी' ('नपुंसक') बकरियों के बारे में बात कर रही थी, जिनका मांस साहिब-ए आलम को पसंद नहीं था। विचार आते ही उनके मन में 'खास' ('विशेष') शब्द कौंधा; 'खास' से वे 'अख़स' ('अत्यंत विशेष') पर पहुँचे; फिर तुरंत ही वे इसके विलोम 'आम' ('आम', 'आम') पर आ गए। अब यह आसान था: यह सब अरबी मूल शब्दों पर आधारित था। अरबी और हिंदी में, 'पहेली' अरबी शब्द 'मुअम्मा' के समान है। इसका सिर काट दो, तो 'अम्मा' मिलता है। इसका पैर काट दो, तो 'अम्म' मिलता है। अब सिर और पैरों को उलट-पलट कर दो, तो ‘अमम’ बनता है, जिसका उच्चारण ‘आम’ होता है। लेकिन उच्चारण की दृष्टि से, यह शब्द ‘अमा’ का सुझाव देता है, जिसका अरबी में, और कभी-कभी रेख्ता या हिंदी में, अर्थ ‘अंधा’ होता

है।
तो उन्होंने कहा: 'उस्ताद को 'अमा' के बारे में कुछ कहना चाहिए।' उनका इशारा यह था कि उन्होंने 'आम' का हल निकाल लिया है और वे उन्हें 'अमा' से चिढ़ा रहे थे, जो कि एक बिल्कुल अलग मूल से था, लेकिन इससे एक समान मूल का भ्रम पैदा हो रहा था।
उन्होंने गंभीरता से कहा, 'साहिब आलम की तर्कशक्ति की व्यापकता की कौन प्रशंसा नहीं करेगा? लेकिन अगर आप एक बार फिर 'मुअम्मा' का सिर काटकर उनके पैरों से जोड़ दें, तो—भगवान न करे—क्या आप अपने आदरणीय चाचा को 'अंधा' मानेंगे?'
सहबाई का चेहरा एकदम गंभीर था, मानो कोई विद्वान परीक्षा ले रहा हो। किसी को अंदाज़ा भी नहीं था कि वो अब भी पहेलियों के दौर में हैं। लेकिन मिर्ज़ा फ़खरू अपने गुरु के तौर-तरीकों से भली-भांति परिचित थे; वो समझ गए कि उन्हें एक और पहेली का सामना करना पड़ रहा है। उन्होंने सोचा, 'मुअम्मा' का सिर काट दो तो 'अम्मा' मिलता है, जिसे सीधे 'अमा' पढ़ा जा सकता है क्योंकि हिंदी लेखन शैली में ध्वनि का दोहराव स्पष्ट रूप से नहीं दिखाया जाता। अब ये 'अमा' स्पष्ट रूप से 'अमा' (अंधा) से मिलता-जुलता है, जिसका ज़िक्र हमने पहले किया था। अब अगर हम 'मुअम्मा' का पैर, यानी 'अ', अलग करके 'अमा' से जोड़ दें... नहीं, नहीं, हमें इसे 'अमा' के पैर से जोड़ना चाहिए: तो हमें 'अमम' मिलता है, और हम जानते हैं कि ये 'अम्म' का बहुवचन है, जिसका अर्थ है 'चाचा'।
'नहीं, प्रेजेंस। कभी नहीं,' राजकुमार ने उत्तर दिया। 'हम "कुल्ला अमीन" में विश्वास करते हैं। हम किसी के बारे में बुरा कैसे सोच सकते हैं, खासकर अपने आदरणीय चाचाओं के बारे में?'
यह कहना बड़ी चतुराई भरा था। क्योंकि अरबी में 'आम' का अर्थ 'सामान्य' होता है, जबकि इसका अर्थ 'वर्ष' भी होता है। उन दिनों भी, और आज भी, अरबी में अभिवादन का यह मुहावरा 'कुल्ला अमीन वा अंतुम बिखैर' ('पूरा वर्ष, आप सभी कुशल मंगल रहें') काफी प्रचलित था।
सहबाई प्रसन्नता से मुस्कुराए। तो मेरा शिष्य वाकई होशियार है और मुझसे खूब सीखा है। लेकिन जाहिर है, उसने पहेलियाँ सुलझाने के लिए मुझे इतनी जल्दी नहीं बुलाया होगा। खैर, उसे राजकुमार के बोलने का इंतज़ार करना होगा। जैसे ही वे साहिब-ए आलम को सुझाव दे रहे थे कि वे अपनी पहेली सुलझाने की कला को उनकी एक कविता पर आजमाएँ, जिसे पहेली बनाने और सुलझाने के सभी जानकार लगभग असंभव मानते थे, तभी अचानक राजदंड धारण करने वाले ने राजकुमार मिर्ज़ा कादिर बख्श साबिर के आगमन की घोषणा की, जो मौलवी सहबाई के एक अन्य कवि और शिष्य थे। सहबाई के आगमन की खबर सुनकर वे उनसे मिलने आए थे। अफवाह थी (हवेली की अफवाहों से भगवान हमें बचाए!) कि साबिर की हिंदी कवियों की विशाल रचना, गुलिस्तान-ए सुखन (कविता का बाग) को विद्वान उस्ताद ने केवल सरसरी तौर पर नहीं पढ़ा था, बल्कि उन्होंने इसे अपने शिष्य को बोलकर लिखवाया था। मिर्ज़ा साबिर, मिर्ज़ा फ़तहुल मुल्क बहादुर से केवल कुछ ही साल बड़े थे और उत्तराधिकार की पंक्ति में उनका कोई स्थान नहीं था, लेकिन अपने वंश के कारण सभी राजकुमारों द्वारा उनका बहुत सम्मान किया जाता था: उनके पिता, मिर्ज़ा मुकर्रम बख्त, सम्राट औरंगज़ेब के प्रत्यक्ष वंशज थे।
उन्होंने सहबाई की ऊपर बताई गई पहेली पर कुछ देर बात की, लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ।

आखिरकार, सहबाई ने बेहद जटिल हल निकाला और मिर्ज़ा फतहुल मुल्क बहादुर के इस दावे को पूरी तरह से गलत साबित कर दिया कि वह आज उस्ताद को एक चौथाई रुपये में पीटेंगे। जब साबिर वहां से चले गए, तब तक सूरज आसमान में काफी ऊपर आ चुका था, और सहबाई मन ही मन राजकुमार को उसके असली मकसद तक लाने का कोई उपयुक्त तरीका सोचने लगे।
अचानक, मिर्ज़ा फतहुल मुल्क बहादुर ने सहज और अनौपचारिक लहजे में उस्ताद से पूछा, "उस्ताद जी, कुछ कहना है।"
जी हाँ, जरूर, साहब आलम। मैं सुनने के लिए पूरी तरह तैयार हूँ।
'क्या आपने छोटी बेगम के बारे में सुना है?'
'सर, क्या आपका मतलब उस महिला से है जिसका संबंध नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान से था? मैंने उसे नहीं देखा है, लेकिन...'
फथुल मुल्क बहादुर ने उनके लिए वाक्य पूरा किया, 'मैंने उनकी पौराणिक सुंदरता के बारे में सुना है!'
'जी हां, बिलकुल।'
'हमारे घराने की परंपरा थी, या यूँ कहें कि आज भी है, कि ईश्वर की छाया किसी का सुझाव देती थी... या परम पूज्य महारानी प्रस्ताव रखती थीं।' फथुल मुल्क बहादुर कुछ क्षण चुप रहे, फिर बोले। 'यदि कभी कोई औपचारिक प्रस्ताव रखा जाता था, तो वह हमेशा घर के भीतर ही होता था। दूल्हे का दल आगे बढ़ता था और हवेली के भीतर एक घर से दूसरे घर जाकर उनका स्वागत किया जाता था। यदि दुल्हन बाहर की होती थी, तो उसकी पालकी और साजो-सामान तय समय पर औपचारिक रूप से हवेली में पहुँच जाते थे। कोई भी कभी बाहर नहीं जाता था।'
सहबाई को बात तुरंत समझ आ गई। दरअसल, उन्हें राजकुमार से इस मामले पर इतनी विस्तृत व्याख्या की आवश्यकता नहीं थी। वे उच्चारित किले की सदियों पुरानी परंपराओं से भलीभांति परिचित थे। उन्होंने कहा, 'बिल्कुल सही। मुख्य बात यह है कि दोनों पक्षों से इस मामले पर केवल एक ही व्यक्ति ने बात की। या अधिक से अधिक, दोनों पक्षों के बीच एक ही बैठक वार्ता को समाप्त करने के लिए पर्याप्त थी।'
'जैसा कि आप देख सकते हैं, उस्ताद, स्थिति कुछ अनोखी है। हम पहल नहीं करते; हम बाहर विवाह के प्रस्ताव नहीं रखते। ईश्वर की छाया की सहमति तभी मिलेगी जब सभी प्रस्ताव दूसरी तरफ से हों, और दूसरी तरफ से प्रस्ताव शुरू होने के लिए भी महाबली महाराज की मौन या अप्रत्यक्ष अनुमति आवश्यक है।'
'Chhoti Begam has an elder sister ...' said Sahbai.
'जी हां, बिल्कुल। लेकिन फिर...?'
सहबाई ने तुरंत जवाब दिया, "तो फिर कोई समस्या नहीं है, साहिब-ए आलम। इहतिराम-उद-दौला हकीम अहसानुल्लाह खान साहब महाबली से इस बारे में बात कर लें। बाकी मैं संभाल लूंगा।"

'लेकिन... महाबली की नज़र... खैर, वो मुझ पर कभी मेहरबान नहीं होती...' मिर्ज़ा फ़खरू

हिचकिचाते हुए, अनिच्छा से बोले। दरबारी राजनीति का यह पहलू किसी से छिपा नहीं था, फिर भी राजकुमार और उनके करीबी सभी लोग इस बारे में बात करना पसंद नहीं करते थे।
सहबाई को ज़ौक़ की तरह हवेली की राजनीति में कोई दिलचस्पी नहीं थी, लेकिन वे इसके बुनियादी पहलुओं और इससे जुड़ी अहम बातों से ज़रूर वाकिफ़ थे। इसलिए, अपनी स्वाभाविक सूझबूझ और सूझबूझ का इस्तेमाल करते हुए उन्होंने कहा, "महोदय, इस युग की रानी, नवाब ज़ीनत महल साहब, जिनकी शान हमेशा बनी रहे और जिनके दिन अमर हों, के उच्च स्वभाव का सवाल ज़रूर उठता है। उन्हें मिर्ज़ा जवान बख्त के प्रथम उत्तराधिकारी बनने की संभावना को लेकर कुछ आशंकाएँ हो सकती हैं..."
राजकुमार प्रसन्नता से मुस्कुराया। 'चुप रहो, दीवारों के भी कान होते हैं! मुझे खुशी है कि उस्ताद ने मामले की जड़ तक इतनी अच्छी तरह से पहुँच गए।'
'संसार की संतान और संसार के लोगों के मार्गदर्शक और सलाहकार,' सहबाई ने औपचारिक रूप से शुरुआत की। 'अल्लाह ने आपको पहले ही एक पुत्र प्रदान कर दिया है। संसार के स्वामी, मीरान शाह साहब, को सुरक्षित रखें; इस समय किसी और के प्रथम उत्तराधिकारी बनने का प्रश्न मात्र काल्पनिक है; यह निरर्थक है। यदि इस संबंध में महारानी के कोई विचार हैं, तो वे इस समय व्यर्थ ही हैं। मुझे पूर्ण विश्वास है कि अल्लाह की छाया, उनकी कृपा शाश्वत रहे, इस विषय पर महारानी के सुझावों पर जरा भी ध्यान नहीं देंगे। मेरी सीमित बुद्धि कहती है कि सभी मामलों को इहतिराम-उद-दौला के माध्यम से अल्लाह की छाया के समक्ष रखा जाना चाहिए। खानम साहब के संबंध में, उनकी बड़ी बहन से विश्वास लिया जा सकता है।'
राजकुमार अत्यंत प्रसन्न हुए; उनके चेहरे पर नई चमक आ गई। 'अल्लाह की मर्ज़ी! उस्ताद जी, हमें आपकी शुभकामनाओं और आपकी सूझबूझ से अत्यंत प्रसन्नता हुई है। मुझे लगता है कि मैं इस मामले पर इहतिराम-उद-दौला से जल्द ही, शायद कल ही, बात करूँगा।'
'अत्यंत शुभ। अल्लाह की इच्छा से, मैं खानम साहब की बड़ी बहन के माध्यम से इस मामले को सुखद अंत तक पहुंचाने के लिए हर संभव प्रयास करूंगा।'
'ईश्वर आपको सफलता प्रदान करे।' अप्रत्याशित रूप से, राजकुमार ने एक गहरी आह भरी और एक अरबी कहावत दोहराई: 'मृत्यु और अलगाव में कोई अंतर नहीं है।'
"हे साहब आलम, कृपया ऐसे शब्द न बोलें। वह सृष्टिकर्ता, सृजनकर्ता और दयालु हैं। वह कृपा के सागर हैं। क्या आपने अरबी कहावत नहीं सुनी: "सागर चोरों से नहीं डरता"? और हम भीख मांग रहे हैं, चोरी नहीं कर रहे। वह देंगे; निश्चय ही देंगे।"
ऐसा हो सकता है। मैं तो बस सम्राट अकबर के महान खान-ए-खानन के शब्दों को ही उद्धृत कर सकता हूँ, "मेरा हृदय अत्यंत लालसा से भरा हुआ है।"
'साहिब आलम, मैं भलीभांति जानता हूँ,' सहबाई ने उसी ग़ज़ल की एक और पंक्ति उद्धृत की: प्रेम से धैर्य तक हज़ार मील की दूरी है। लेकिन प्रेम एक ही छलांग में सबसे लंबी दूरी को भी पार कर सकता है।
सहबाई की सुखद और आशा से भरी बातों के बावजूद, मिर्ज़ा फ़थुल मुल्क बहादुर का स्वभाव अब उदासी में डूबता हुआ प्रतीत हो रहा था। सहबाई को लगा कि अब और रुकना उचित नहीं है

और वे जाने की अनुमति पाने के लिए कोई युक्ति सोच रहे थे, तभी एक राजदंड धारण करने वाला आया और उसने सूचना दी, 'शायद महाराज ने उस्ताद मीर नासिर अहमद साहब बिनकार को बुलाया है। वे उपस्थित होने की अनुमति मांग रहे हैं।'
'ओह, हाँ। अच्छा हुआ कि आपने मुझे याद दिला दिया। उसे पेश होने दीजिए। शायद वह इस समय के अनुकूल कुछ गा सके। इससे मेरा ध्यान बँट सकता है।'
इससे सहबाई को प्रस्थान की अनुमति मांगने का स्वाभाविक अवसर मिल गया। वे खड़े हुए, तीन सलाम किए और प्रस्थान की अनुमति मांगी। मिर्ज़ा फ़खरू आधे उठे, सलाम किया और कहा, 'उस्ताद, अपना कर्तव्य याद रखिएगा।'
‘महान महोदय, यह मेरे हृदय रूपी अगेट पत्थर पर हीरे की कलम से उकेरा गया है। अल्लाह की मर्ज़ी से जल्द ही अच्छे परिणाम मिलेंगे।’
‘जाओ। ईश्वर के साथ जाओ,’ मिर्ज़ा फ़खरू ने गंभीर और भारी आवाज़ में कहा।
मौलाना के बाहर निकलते ही, एक राजदंड धारण करने वाला व्यक्ति अंदर आया, सलाम किया और धीमी आवाज़ में घोषणा की, 'साहिब आलम का सौभाग्य सदा बुलंद रहे, उस्ताद मीर नासिर अहमद साहब अंदर आने की अनुमति की प्रतीक्षा कर रहे हैं।'
राजकुमार ने उंगली से इशारा किया और राजदंड धारण करने वाला व्यक्ति द्वार पर जाकर बोला, 'ध्यान से देखें! कृपया पूरे आदर के साथ सलाम करें; साहिब आलम तृतीय उत्तराधिकारी बहादुर, अल्लाह उनकी रक्षा करे!'
उस्ताद मीर नासिर अहमद साहब न केवल उस्ताद थे जो उस समय बीना (एक मानक वाद्य यंत्र) और उसे बजाने की शैली के सर्वमान्य उस्ताद थे, बल्कि वे अठारहवीं शताब्दी के महान हिंदी और फारसी कवि, सूफी और संगीतज्ञ ख्वाजा मीर दर्द के प्रत्यक्ष वंशज भी थे। पूरा शहर नासिर अहमद साहब को श्रद्धा और सम्मान की दृष्टि से देखता था। वे आम तौर पर कहीं नहीं जाते थे, बल्कि मिर्ज़ा फतहुल मुल्क बहादुर के निमंत्रण का हमेशा पालन करते थे। सात सलाम करते हुए वे ध्रुपद गायन शैली के उस्ताद निज़ाम खान और पखावज वाद्य यंत्र के उस्ताद मुख्खु तथा चार अन्य संगीतकारों के साथ प्रवेश करते थे।

दिल्ली में हर कोई मिर्ज़ा फथुल मुल्क बहादुर के संगीत ज्ञान और विशेषज्ञता से भलीभांति परिचित था। उनके सामने प्रस्तुति देना एक तरह की परीक्षा थी। यहां तक कि मीर नासिर अहमद साहब के मन में भी थोड़ी अनिश्चितता थी, वे ईश्वर से प्रार्थना कर रहे थे कि उनकी प्रस्तुति अब तक की सबसे उत्तम हो और राजकुमार को अपनी हार्दिक स्वीकृति देने से इनकार करने का कोई अवसर न मिले।
जैसे ही नासिर अहमद साहब राजकुमार के सामने कालीन पर बैठे, उन्होंने तुरंत अपना बीना बजाना शुरू कर दिया; अन्य संगतकारों ने कानून, तानपुरा और मध्य-पूर्वी दफ़ जैसे दो छोटे वाद्य यंत्र बजाना शुरू कर दिया। पखावज के विशेषज्ञ और जन्नत में रहने वाले उस्ताद गुलाब सिंह जी के सभी शिष्यों के प्रमुख मुख्खु ने अपने वाद्य यंत्र पर कुछ नहीं किया; वे बस शुरू करने के संकेत की प्रतीक्षा करते रहे। जब सभी वाद्य यंत्र तैयार हो गए और सभी ध्वनियाँ एक साथ बजने लगीं,

तो मीर नासिर अहमद साहब ने बिना किसी वाद्य यंत्र के राग जौनपुरी के आरंभिक स्वर, आलाप, शुरू किया। लगभग आधे घंटे के आलाप के बाद, दोनों दफ़ वादकों ने अपना कोमल, लगभग संकोचपूर्ण संगत शुरू किया। जैसे ही आलाप समाप्त होने वाला था, उस्ताद मुख्खु ने पखावज की गहरी, लेकिन लचीली ध्वनि बजानी शुरू कर दी। अब, निज़ाम मियां ने अत्यंत कोमल स्वरों में अपना आलाप शुरू किया। कुछ समय तक वाद्य यंत्र गायन के साथ बजते रहे, फिर धीरे-धीरे शांत होने लगे, मंद पड़ते गए और फिर लगभग गायब हो गए, सिवाय कानून और तानपुरा की गूंज के। और भी धीरे-धीरे, वो गूंज एक शांत ढलान पर धीरे-धीरे बहती धारा की तरह हो गई। बीना एक प्रेम में डूबी स्त्री के सिसकने और आहों में बदल गई, जो अपने चंचल प्रेमी के लिए विलाप कर रही थी।

इस वातावरण के बीच, फ़ारसी कवि खलील शरवानी के शब्द धीरे-धीरे विशाल कक्ष में गूंज रहे थे; यह दूर से आती हुई पापीहा चिड़िया की पुकार की तरह थी, जो नज़दीक आ रही थी, पी... पी... पी कहान... मेरे प्रिय, मेरे प्रिय, कहाँ? कहाँ? पुकार नज़दीक आती हुई, मानो भारी पर्दों से ढके कक्ष की चारों दीवारों से निकल रही हो:

हाय, हाय उस पर जिसका प्रेमी तुम हो, और मैं ही वह हूँ; हाय, हाय उस पर जिसका साथी तुम्हारे लिए दीवाना है, और मैं ही वह हूँ; प्रियतम, तुम्हारे दुख से बढ़कर मेरे लिए कुछ भी नहीं कि मैं किसी का साथी और प्रेमी बनूँ, और मैं ही वह हूँ।

मिर्ज़ा फ़थुल मुल्क बहादुर स्तब्ध रह गए। ये क्या गाया जा रहा है? क्या ये लोग मेरी आंतरिक स्थिति से अवगत हैं? क्या इन्होंने मेरे सामने ये कविता गाने की साज़िश रची है? या ये मुझे नरम करके मुझसे सामान्य से अधिक इनाम पाना चाहते हैं? लेकिन कुछ ही क्षणों में संगीत, कविता और आवाज़ ने उनकी संगीत-प्रेमी आत्मा और हृदय को लीन कर दिया। सब कुछ भूलकर, वे अपनी जांघ पर ताल मिलाने लगे, ध्वनि और लय पर झूमने लगे। लगभग एक घंटे बाद, बीना की गति और गायक की लय तेज़ होती गई, फिर और तेज़, फिर इतनी तेज़ और ऊँची कि बीना की आवाज़ और मनुष्य की आवाज़ में कोई अंतर नहीं रह गया। मिर्ज़ा फ़थुल मुल्क खुलकर रोने लगे। कुछ ही मिनटों में, उनका रुमाल आँसुओं से भीग गया, उनका सिर घुटनों पर झुक गया, और ऐसा लगा जैसे वे बेहोश होकर गिर ही जाएँगे।

राजकुमार की बिगड़ती हालत देखकर सभी वाद्ययंत्र धीरे-धीरे बंद हो गए; गायक भी धीरे-धीरे रुक गया और उसकी आवाज़ धीमी होकर धीमी पड़ गई। निज़ाम मियां अपने बड़े रुमाल से माथे और गर्दन को पोंछने लगे; उन्हें इस बात का एहसास भी नहीं था कि पसीना उनकी बगल और छाती तक पहुँच गया था। कहा जाता है कि कभी-कभी उनकी उंगलियों से भी पसीना टपकने लगता था।

मिर्ज़ा फ़खरू का जलवाहक एक छोटे से चीनी मिट्टी के प्याले में औषधि लेकर आया; उनके गदावाहक ने मलमल के चौड़े रुमाल से उनके चेहरे और गर्दन को धीरे से पोंछा। गदावाहक ने उनके वस्त्रों को ठीक किया; अब सभी लोग सतर्क और सम्मानपूर्वक अपने-अपने स्थानों पर बैठ गए। मिर्ज़ा फ़खरू अपनी सामान्य मुद्रा में लौट आए। जब राजकुमार की स्थिति में सुधार प्रतीत

हुआ, तो निज़ाम मियां साहब ने मीर नासिर अहमद साहब से संकेत की प्रतीक्षा किए बिना, राग जय जयवंती में आलाप के प्रारंभिक स्वर शुरू किए। उन्होंने कमाल इस्माइल की एक रुबाई से शुरुआत की; इस बार कविता उन्माद और पीड़ा की नहीं थी। इस बार विषय परमानंद था: प्रियतम के साथ सच्चे, शारीरिक मिलन का परमानंद। रचना शैली वही थी, एक बहुत लंबी अंत्यानुप्रास:
मैंने अपने होंठ तुम्हारे होंठों पर रखे, क्या यह मैं हूँ, या नहीं? आज रात मैं तुम्हारे साथ हूँ, क्या यह मैं हूँ, या नहीं? हमारे होठों पर शराब, खुले होंठ, बंद दरवाजा, हे प्रभु, कृपया मुझे बताओ, क्या यह मैं हूँ, या नहीं?

मिर्ज़ा फ़खरू ने वो आवाज़ और स्वर सुने, मंत्रमुग्ध हो गए, अचंभित रह गए। राग, ताल, शब्द: मानो स्वयं ईश्वर ने उन्हें मेरे लिए, मेरे हृदय को सांत्वना देने के लिए, ऊपर से भेजा हो। और फिर, मियां निज़ाम की आवाज़, गहरी नहीं, बेस नहीं, बल्कि टेनर जो बैरिटोन की ओर झुकती है, अभ्यास से भरी सहजता से, थोड़ी पतली, लेकिन गूंजने की शक्ति से भरपूर; यह एक ऐसी आवाज़ थी जो एक ऐसे हृदय की गहराई को व्यक्त करने के लिए बिल्कुल उपयुक्त थी जो हज़ारों इच्छाओं से भरा था—या शायद केवल एक इच्छा से—और यह सब राग जय जयवंती के स्वरों में आकार और रूप धारण कर लिया और एक धारा बन गया, जो मिर्ज़ा फ़थुल मुल्क बहादुर की नसों और नसों को भिगोता और सराबोर करता हुआ बह निकला।
साहिब-ए आलम की तल्लीनता, पहले काव्य के गायन के समय उनकी आत्मा को झकझोर देने वाली उथल-पुथल के स्थान पर उनकी गहरी शांति, उस जादुई शांति को देखकर, जिसने मानो हर प्राणी को एक जागृत स्वप्न के समान आश्चर्य में डुबो दिया था, मीर नासिर साहब ने सत्र को आगे बढ़ाने का सोचा, लेकिन राजकुमार के मुख्य राजदंड-वाहक ने उन्हें चुप रहने का इशारा किया। फिर, संगीतकारों से पूछे बिना, उन्होंने राजकुमार के कानों में फुसफुसाया, 'साहिब-ए आलम, मीर नासिर साहब, मियां निज़ाम खान साहब और वादक कृपया चले जाएं।'
ऐसा लग रहा था मानो मिर्ज़ा फ़खरू नींद से जाग गए हों। दोपहर काफ़ी देर हो चुकी थी। मोमबत्तियाँ और छोटे लैंप धीरे से जलाए जा चुके थे। 'अरे, अब तो बहुत देर हो गई है!' उन्होंने मानो खुद से कहा। फिर ज़ोर से बोले: 'भाई, हमारे संगीत के उस्तादों और कलाकारों के लिए कोई भी अपनी जान कुर्बान कर सकता है। पल भर में ही वे हमें यहाँ से किसी दूर देश में ले गए!'
दोनों उस्तादों ने झुककर सलाम किया। मीर साहब ने कहा, "महामहिम, हमारा गला भर आया था और वाद्य यंत्रों पर हमारे हाथ कांप रहे थे। अल्लाह के सामने आलाप शुरू करना भी गुस्ताखी है, ध्रुपद गाना तो दूर की बात है। अल्लाह ने हमारी इज्जत बचाई।"
मिर्ज़ा फ़खरू ने आदेश दिया कि मंडली के सभी सदस्यों को उचित पुरस्कार और तीन टुकड़ों वाली औपचारिक दरबारी पोशाक भेंट की जाए। उनके जाने से पहले, उन्होंने फिर से उनकी प्रशंसा करते हुए कहा कि उनके बारी से आगे निकलने का कोई सवाल ही नहीं था। जिसके गले में राग के स्वर हों और जिसकी उंगलियों में राग का रोमांच हो, वह स्वयं ही ध्वनि, लय और स्वरों

के उतार-चढ़ाव का बंदी बन जाएगा। उन्होंने एक फ़ारसी छंद के साथ अपनी बात समाप्त की: लैंपशेड का हर धागा जाल की तरह है; पतंगे की धृष्टता उसके पंखों के कारण नहीं है। पतंगा खुद को रोक नहीं सकता।

नियुक्तियों की बात करें तो, उमदत-उल हुकामा इहतिराम-उद दौलाह हकीम मुहम्मद अहसानुल्लाह खान बहादुर केवल मुख्य क्वार्टरमास्टर थे और हमेशा क्वार्टरमास्टर भवन में ही अपना कार्यालय चलाते थे। उन्हें कभी प्रधानमंत्री कार्यालय या मुख्य वेतन अधिकारी भवन में नहीं देखा गया। जमीनी हकीकत यह थी कि शासन संबंधी मामलों में उनका प्रभाव प्रथम उत्तराधिकारी या प्रधानमंत्री से भी अधिक था। इसका एक कारण यह था कि वे सम्राट के निजी चिकित्सक थे, और दूसरा कारण यह था कि उनकी सलाह सर्वथा ईश्वर की छाया को स्वीकार्य होती थी, क्योंकि वे चापलूस नहीं बल्कि एक निस्वार्थ और राजनेता की तरह सलाहकार थे। प्रशासन में उनके बराबर शक्ति रखने वाला एकमात्र अन्य व्यक्ति बादशाह का निजी अधिकार धारक और मुख्य हिजड़ा महबूब अली खान था। हालांकि, लाल हवेली के भीतर, बादशाह पर प्रभाव रखने के मामले में मलिका-ए दौरां नवाब ज़ीनत महल के आस-पास भी कोई नहीं था। मुख्य बात यह है कि जनता की नज़र में, दरबारी अभिजात वर्ग में हकीम मुहम्मद अहसानुल्लाह खान बहादुर से अधिक सम्मानित और लोकप्रिय कोई नहीं था।

मुगल शासकों की यह स्थापित प्रथा थी कि औपचारिक भोजों को छोड़कर, बादशाह केवल अपने निकटतम रिश्तेदारों के साथ ही भोजन करते थे। राजपरिवार की महिलाएं हमेशा एकांत में ही भोजन करती थीं। इन प्रतिबंधों के बावजूद, शाही भोज का समय चहल-पहल भरा होता था, एक उन्मादपूर्ण लेकिन आनंददायक गतिविधि जिसमें थोड़ी हंसी-मजाक, नोकझोंक और यहां तक कि ईर्ष्या भी शामिल होती थी। भोजन के बाद, बादशाह कभी-कभी किसी उच्च अधिकारी या सिंहासन के करीबी किसी रईस को अतिथि के रूप में आमंत्रित करते थे और उनके साथ पान खाते थे। वे इस अवसर का उपयोग राज्य के किसी महत्वपूर्ण मामले पर चर्चा करने या किसी याचिका पर सुनवाई करने के लिए भी करते थे।

यद्यपि अबू जफर सिराजुद्दीन मुहम्मद बहादुर शाह द्वितीय की आर्थिक स्थिति सामान्य शासकों और राजाओं की तुलना में काफी तंग थी और उनकी ज़रूरतें बहुत अधिक थीं, फिर भी उन्होंने अपने महान पूर्वजों की जीवनशैली के सभी तत्वों को, भले ही कुछ हद तक कम, बरकरार रखा। उस दिन ऐसा ही हुआ। जब सम्राट ने दरबार का कामकाज समाप्त किया और जाने के लिए उठे, तो उनकी मुख्य महिला उद्घोषक और संदेशवाहक—जसोलनी रेजिमेंट की—ने सम्राट के माथे की हल्की सी हलचल से ही समझ लिया कि वे अपने मुख्य निवास कक्ष, जिसे तस्बीह खानाह कहा जाता था, में जाना चाहते हैं।

जसॉल्नी का पद कुलमक्नी से नीचे और उरदाबेग्नी से ऊपर होता था। उरदाबेग्नी आमतौर पर महल के अंदर द्वार या कमरों के दरवाजों पर तैनात रहते थे। जसॉल्नी हल्के हथियारों से लैस होते थे और उन्हें किले के अंदर, यहाँ तक कि ज़नाना में भी, पूरी आज़ादी थी। इसलिए उन्हें महल के अंदर संदेशवाहक और संदेशवाहक के रूप में सबसे उपयुक्त माना जाता था। जसॉल्नी दिल्ली के दक्षिण में स्थित जसोला नामक गाँव से आते थे। कुलमक्नी मूल रूप से मध्य एशियाई या

अबीसीनियाई होते थे। वे पूरी तरह से हथियारों से लैस होते थे और आवश्यकता पड़ने पर आग बुझाने में भी भाग लेने की उनसे अपेक्षा की जाती थी।
जसोल्नी ने पुकार कर कहा, 'सावधान! गुरु और मार्गदर्शक! परम पूज्य! महाराज, वे सदा सुरक्षित रहें! वे दीर्घायु हों!'
सम्राट के कदम सिंहासन से नीचे उतरे और तुरंत ही जसोलनी फुर्ती से और तेजी से आगे बढ़े, हर कदम पर कठोर और ऊँची आवाज में घोषणा करते हुए, 'संसार के शरणस्थल! महाबली! महाराज!'
'अपना ध्यान रखना!
'मार्गदर्शक और गुरु! परम पूज्य! महाराज! उनकी आयु दीर्घायु हो!'
'सारा लोकों का आश्रय! महाराज! महाबली! उनकी आयु दीर्घायु हो! उन्हें पूरे सम्मान के साथ सलाम!'
सभी आज्ञावाचक वाक्य एकवचन द्वितीय पुरुष में बोले गए; सम्मानसूचक बहुवचन द्वितीय पुरुष का प्रयोग नहीं किया गया। ज़नाना में सभी महिलाएं सीधी खड़ी होकर सलाम कर रही थीं; सम्राट सिंहासन पर विराजमान हुए, जिसके पीछे एक भव्य वस्त्रधारी हिजड़ा मोर पंखों से बना भारी पंखा लहरा रहा था। सभी महिलाएं पदक्रमानुसार आगे आईं और फिर से सलाम किया।
जब तक महिलाओं ने अपना सम्मान पूरा किया, मेज़पोश की दासियों ने सात गज लंबा और तीन गज चौड़ा चमड़े का मेज़पोश बिछाया। उस पर उन्होंने बर्फ़ जैसा सफ़ेद सूती कपड़ा बिछाया। मेज़पोश के ठीक बीच में उन्होंने दो गज लंबा, डेढ़ गज चौड़ा और छह इंच ऊंचा एक नीचा मेज़ रखा। उस पर उन्होंने फिर से चमड़े का मेज़पोश बिछाया और उसके ऊपर एक सूती कपड़ा। जैसे ही मेज़पोश बिछाया गया, वरिष्ठ दासियां अपने हाथों में खाने के सीलबंद धातु के पात्र लिए आगे बढ़ीं। ये पात्र भी रेशमी कपड़े से ढके हुए थे, जिस पर सोने की हल्की कढ़ाई की गई थी। सभी भोजन सोने या चांदी की पत्तियों से ढके हुए थे, जो वसंत की रात की रोशनी की तरह जगमगा रहे थे। सिंहासन के पीछे कस्तूरी, केसर, अंबरग्रीस, गुलाब और केओरा के फूलों से मिश्रित पानी की हल्की फुहारें चल रही थीं।
इस काम के लिए नियुक्त एक दासी ने बिस्मिल्लाह कहा, भोजन का एक टुकड़ा तोड़ा और सम्राट के मुंह में डाल दिया। जैसे ही उसने टुकड़ा उठाया, एक राजदंड धारण करने वाले ने जोर से पुकारा, 'शुभ भोज!'
जैसे ही यह अभिवादन सुना गया, बड़े-बड़े खाना पकाने के बर्तनों और भोजन के पात्रों से ढक्कन हटा दिए गए और भोजन नियमित भोजन करने वालों और आसपास मौजूद सभी लोगों को वितरित किया जाने लगा: बेसहारा, जरूरतमंद, और बेघर यात्री। भोजन के बाद, उन्हें मौसम के फलों से बने ठंडे पेय से भरपूर तृप्ति दी गई।
जैसे ही सम्राट ने अपना भोजन समाप्त किया, बाहर भोजन कर रहे सभी लोगों ने प्रार्थना में कहा, 'हमारे महाबली की आयु दीर्घायु हो! गुरु और मार्गदर्शक की छाया सदा बनी रहे; अल्लाह हमारे सम्राट के सिर पर जमशेद के सम्मान सहित अपनी सुरक्षा बनाए रखे!'
पान के डिब्बे की देखभाल करने वाली दासी ने महाबली को चांदी के डिब्बे भेंट किए जिनमें उत्तम

पत्तों के शंकु रखे थे: प्रत्येक शंकु सोने की पत्ती से लिपटा हुआ था; पत्तों की तहों को बनाए रखने के लिए प्रत्येक शंकु में एक पतली चांदी की सुई चुभाई गई थी। सम्राट ने एक शंकु उठाते ही वह चांदी की सुई पान परोसने वाली दासी को दे दी। जैसे ही वे लगभग सारे पान के शंकु समाप्त करने वाले थे, हुक्का की देखभाल करने वाली दासी ने उन्हें हुक्का भेंट कर दिया। एक गहरे और बड़े चांदी के पात्र में मजबूती से रखा हुआ समतल तल का जल पात्र पीतल का बना था और उस पर सोने और चांदी की नक्काशी की गई थी; इसे अभी-अभी धोकर, पॉलिश करके गुलाब जल से भरा गया था। बबूल की लकड़ी के कोयले की चिंगारियां धीमी लपटों के साथ चमक रही थीं, जो चांदी की नक्काशी वाले हुक्के के प्याले से निकलने की कोशिश कर रही थीं, जिस पर पीतल का ढक्कन था जिसमें छोटे-छोटे छेद थे; छेद इतने बड़े नहीं थे कि चिंगारियां बाहर निकल सकें। रंगीन रेशम से बनी चार गज लंबी हुक्का नली सोने और चांदी के तारों से मजबूत की गई थी, जो सिरे पर मोटी और माणिक जड़े सोने के मुखपत्र से जुड़ते हुए पतली होती जा रही थी। नली को गुलाब जल में भिगोया गया था और गुलाब की सुगंध तथा किण्वित सेबों से समृद्ध मीठे और कड़वे तंबाकू की खुशबू से कमरा गर्म सुगंधों और गुलदस्तों की महक से जगमगा रहा था। जब विश्व के शरणस्थल धीरे-धीरे हुक्का पी रहे थे, तो पंखा करने में लगे सेवक सिंहासन से थोड़ी दूरी पर खड़े थे, कहीं ऐसा न हो कि अचानक किसी हवा के झोंके से कोई चिंगारी उछल पड़े। नवाब ज़ीनत महल ने अपना हुक्का मंगवाया था। बादशाह की उपस्थिति में नवाब ज़ीनत महल के अलावा किसी को भी हुक्का पीने की अनुमति नहीं थी। वह हुक्का पीने के बाद, लेकिन दोपहर की नींद के लिए हम्माम (जिसे गुस्ल खाना भी कहा जाता है) जाने से पहले, विश्व के शरणस्थल के साथ कुछ पल बिताने की आशा कर रही थीं। वह अपने बेटे मिर्जा जवान बख्त के पांचवें जन्मदिन के समारोह के बारे में कुछ प्रस्तुतियाँ देना चाहती थी, जो सम्राट का भी प्रिय था।

हम्माम और गुस्ल खानाह दोनों का अर्थ 'शौचालय' होता है। इन नामों ने कई इतिहासकारों को भ्रमित किया है। जिस समय हम आपको इन घटनाओं के बारे में बता रहे हैं, उस समय गुस्ल खानाह का स्थान लगभग पूरी तरह से हम्माम नाम से ही लिया जा चुका था। यह एक विशाल इमारत थी, जो अपने ही परिसर में बनी हुई थी। सर्दियों में इसे गर्म और गर्मियों में ठंडा रखा जाता था। सम्राट के विश्राम का कक्ष मध्य में था, जिसके चारों ओर दो जलमार्ग थे जिनमें साल भर गर्म या ठंडा पानी बहता रहता था। यहाँ सजावटी तालाब भी थे, जिनमें सुगंधित जल भरा रहता था, जो मौसम के अनुसार गर्म या ठंडा होता था। इसकी सभी दीवारों पर सजावटी जालीदार नक्काशी या छोटी-छोटी खिड़कियाँ बनी हुई थीं, जिनके संगमरमर के पल्ले भी जालीदार थे। दीवारों, खिड़कियों और छिद्रों को बड़ी कुशलता से बनाया गया था: चाहे मौसम उमस भरा हो या हवा रहित, इमारत में हमेशा ताज़ी हवा आती रहती थी। इमारत में दो मंजिलें थीं: एक मंजिल जो यमुना नदी की ओर थी उसे ठंडा हमाम कहा जाता था और दूसरी मंजिल जो आलीशान हवेली के अंदर स्थित मोती मस्जिद की ओर थी उसे गर्म हमाम कहा जाता था। हम्माम वास्तव में एक अत्यंत विशिष्ट स्थान था जहाँ सम्राट के सबसे प्रिय और सम्मानित व्यक्तियों को ही विशेष मुलाकातें करने का अवसर मिलता था। शिवाजी की औरंगजेब से

मुलाकात हम्माम में ही हुई थी। ऐसी मुलाकातों के अलावा, सम्राट इसका उपयोग प्रार्थना करने, किसी विचार पर ध्यान केंद्रित करने, ध्यान लगाने या अपने अगले कर्तव्य की तैयारी से पहले शांतिपूर्ण विश्राम करने के लिए करते थे। उस दिन अप्रत्याशित रूप से, राजा ने हुक्का पीना सामान्य से जल्दी समाप्त कर दिया। नवाब ज़ीनत महल को इसकी सूचना नहीं मिली और उन्हें अपने इच्छित विषय पर बात करने का अवसर नहीं मिला। विश्व की शरणस्थली, नवाब ज़ीनत महल उठीं; जसोलनी आगे बढ़ीं और पुकार कर बोलीं, 'सावधान! उन्हें पूरे सम्मान के साथ सलाम करें! गुरु और मार्गदर्शक, महाराज!'

तब तक जसोलनी और अन्य दासियाँ समझ चुकी थीं कि महाबली हमाम की ओर जा रहे हैं। लगभग एक स्वर में सबने कहा, 'हम्माम शुभ हो! महाबली को शीतलता और शीतलता दोनों का सुख मिले!'

सम्राट दीवान-ए-खास से बाहर निकले; राजदंड धारण करने वाला, जिसका कर्तव्य हमेशा सम्राट के सामने रहना था, ने तीन सलाम किए और आदेशों की प्रतीक्षा करने लगा। ऐसा इसलिए था क्योंकि सम्राट कभी-कभी राज्य के किसी उच्च अधिकारी या राज्य के किसी राजकुमार को हमाम में बुलाते थे। सम्राट एक क्षण के लिए रुके और अत्यंत कोमल, परिष्कृत स्वर में आदेश दिया, 'इहतराम-उद-दौला ने मुलाकात की अनुमति के लिए याचिका दी है। क्या वे निशस्त में उपस्थित हैं?'

मुख्य क्वार्टरमास्टर (खान-ए समन) के कार्यालय वाली इमारत को आम लोग खान-ए समानी के नाम से जानते थे। पता नहीं क्यों, उच्च हवेली के लोग इसे निषास्त (बैठक कक्ष) कहते थे। राजदंड धारण करने वाले ने अपना हाथ अपनी छाती पर रखा और कहा, 'वह ईश्वर के आह्वान की प्रतीक्षा में है।'

'कृपया तीसरे उत्तराधिकारी बहादुर से अनुरोध करें कि वे हमाम में आकर हमसे बात करें।'

जैसा कि हमने ऊपर बताया है, राज्य के राजकुमार और कवि एवं बुद्धिजीवी के रूप में उनके अनेक गुणों के बावजूद, मिर्ज़ा फथुल मुल्क बहादुर को बादशाह का विशेष स्नेह प्राप्त नहीं था। मिर्ज़ा जवान बख्त सर्वकालिक प्रिय थे, न केवल इसलिए कि वे सबसे छोटे पुत्र थे और नवाब ज़ीनत महल, जो रानियों में सबसे छोटी और सबसे प्रिय थीं, के पुत्र थे। उनके बाद, बादशाह की कृपा दृष्टि प्रथम उत्तराधिकारी मिर्ज़ा दारा बख्त और फिर द्वितीय उत्तराधिकारी मिर्ज़ा कायमर्स बहादुर पर थी। फिर भी, परम आदरणीय बादशाह ने मिर्ज़ा फथुल मुल्क बहादुर की तीक्ष्ण बुद्धि और बौद्धिक उपलब्धियों को स्वीकार किया। इसके अलावा, मिर्ज़ा फथुल मुल्क बहादुर विश्व के शरणस्थल, बादशाह से बहुत मिलते-जुलते थे। वास्तव में, कुछ ईर्ष्यालु लोगों ने तो यहाँ तक कह दिया था कि राजकुमार ने स्वयं को ईश्वर की परछाईं के समान बना लिया था ताकि लोग उन्हें बादशाह का प्रतिनिधि मान लें।

असल बात तो यह है कि लगभग हर राजकुमार, चाहे वह उत्तराधिकार की पंक्ति में हो या न हो, सिंहासन पाने की लालसा रखता था। हर कोई सोचता था कि किसी भी क्षण पासा पलट सकता है। यह सच है कि फिरंगी बहादुर ने बादशाह के राज्याभिषेक के दिन ही मिर्ज़ा दारा बख्त को उत्तराधिकारी घोषित कर दिया था; लेकिन केवल उत्तराधिकारी होने के नाते कोई भी सिंहासन पर

दावा नहीं कर सकता था। मुगलों ने इस प्रथा को मान्यता नहीं दी। आखिरकार, शाहजहाँ ने दारा शिकोह को अपना उत्तराधिकारी घोषित किया, लेकिन वह सिंहासन पर नहीं, बल्कि फांसी पर चढ़ गया। अब, नवाब ज़ीनत महल के आगमन ने राजशाही और उत्तराधिकार की इस उलझन भरी और अनिश्चित दुनिया में एक नया और अनूठा पहलू जोड़ दिया।

सन् 1840 में, अबू ज़फ़र सिराजुद्दीन मुहम्मद बहादुर शाह द्वितीय ने एक अफ़ग़ान रईस की सुंदर पुत्री से विवाह किया और उन्हें नवाब ज़ीनत महल की उपाधि देकर अपनी मुख्य रानी बनाया। राजा की आयु पैंसठ वर्ष थी; रानी उन्नीस वर्ष की थीं, हालाँकि कुछ लोगों का दावा था कि वे सोलह वर्ष की थीं। घनश्याम लाल असी, जिनसे हमारी मुलाक़ात कुछ समय पहले हुई थी, राजा के प्रति कुछ खास श्रद्धा नहीं रखते थे। उन्होंने विवाह की 'स्मृति' में एक कविता लिखी और उसमें तिथि दर्शाने के लिए एक कालक्रम भी शामिल किया। यह कोई स्मृति नहीं थी; यह राजा पर तीखा प्रहार था, जिनके पास न तो शक्ति थी और न ही अपराध करने वाली को दंडित करने की इच्छा। खैर, कविता में सम्राट को सत्तर वर्ष का बताया गया है, जबकि दुल्हन की आयु ग्यारह वर्ष थी।

अंत में सम्राट की ही जीत हुई। एक साल भी पूरा नहीं बीता था कि फरीदून के समान वैभवशाली सम्राट ने नवाब ज़ीनत महल को एक ऐसे पुत्र से सुशोभित कर दिया, जिसकी सुंदरता चंद्रमा के समान थी। उनके दुश्मन अचंभित और भ्रमित थे। लेकिन नए राजकुमार के जन्म और ज़ीनत महल की महत्वाकांक्षाओं ने अपनी ही चुनौतियाँ खड़ी कर दीं। वह अपने पुत्र को प्रथम उत्तराधिकारी और फिर हिंदुस्तान का सम्राट बनाने का सपना देखने लगीं। इसकी कोई संभावना नहीं थी, क्योंकि मिर्ज़ा दारा बख्त, जिन्हें प्यार से मिर्ज़ा शब्बू कहा जाता था, घोषित और मान्यता प्राप्त उत्तराधिकारी थे। भाग्य के स्वामी, ईश्वर, किसी भी हालत में इस बदलाव को स्वीकार नहीं करते। फिर भी, ज़ीनत महल ने गुप्त रूप से ग्रैंड साहिब बहादुर को अपने पक्ष में करने का प्रयास शुरू कर दिया। उन्हें महंगे उपहार भेजने के अलावा, उन्होंने जॉन कंपनी के उच्च अधिकारियों के साथ सामाजिक संबंध भी स्थापित करने शुरू कर दिए। अब तक, इन प्रयासों का कोई फल नहीं मिला था; लेकिन ज़ीनत महल को इंतज़ार करना आता था, और उसके सामने वर्षों का विशाल मैदान था: वह और उसका बेटा इस संघर्ष में सबसे कम उम्र के थे।

सम्राट धीरे-धीरे कदम बढ़ाते हुए हमाम की ओर बढ़े। इसी बीच, मिर्ज़ा फ़तहुल मुल्क बहादुर को सूचना मिली कि महाबली ने उन्हें याद किया है। उनकी हवेली दीवान-ए-आम के सामने खुले मैदान के पार थी। इसलिए उनके घर से हमाम तक पहुँचने में लगभग बारह मिनट या उससे भी कम समय लगता था। सभी तैमूरिद राजकुमारों की प्रथा के अनुसार, और लखनऊ के राजकुमारों में प्रचलित चलन के विपरीत, मिर्ज़ा फ़तहुल मुल्क बहादुर सुबह जल्दी उठते थे और रात को सोने से पहले तक अपना पूरा दरबारी वस्त्र नहीं उतारते थे, चाहे दरबार में उनकी उपस्थिति की आवश्यकता हो या न हो। इस प्रकार उन्हें महामहिम के समक्ष उपस्थित होने के लिए कोई विशेष तैयारी नहीं करनी पड़ी। एक राजदंडधारी द्वार पर उनका इंतज़ार कर रहा था। वह बिना किसी देरी के राजकुमार को हमाम के भीतर ले गया।

धूप से जगमगाते पार्क और खुली हवा के बाद, मिर्ज़ा फ़थुल मुल्क को अंदर की हवा थोड़ी

धुंधली, लेकिन ठंडी और सुखद लगी। उन्हें अक्सर हमाम बुलाया जाता था, इसलिए उन्हें घबराहट नहीं हुई और न ही शाही कक्ष में जाने का रास्ता ढूंढने में कोई परेशानी हुई। वे थोड़ा बेचैन थे, लेकिन निश्चित रूप से यह जानने के लिए उत्सुक थे कि उन्हें उस समय वहाँ क्यों बुलाया गया था। ऐसा कुछ भी नहीं था जिससे यह पता चले कि किस विषय पर दिव्य शक्ति उनसे सलाह या परामर्श चाहती थी। लेकिन वे यह भी जानते थे कि भाग्य के स्वामी दिव्य शक्ति ने इहतिराम-उद-दौला को भी बुलाया था। इससे यह संकेत मिलता था कि यह कोई बहुत चिंता की बात नहीं हो सकती।

हम्माम की ऊपरी मंजिल एक मध्यम आकार का कमरा था, जो गलियारों से घिरा हुआ था जिनमें पानी की नालियाँ बनी हुई थीं। कमरे में छोटे-छोटे दीप और एक झूमर लगे थे, सभी हरे रंग के थे। कमरे के बीच में एक पानी की नाली थी जिसमें एक छोटा फव्वारा था जिसका पानी लौंग और दालचीनी की सुगंध से महकता था। शतरंज की बिसात की तरह चौकोर संगमरमर के फर्श पर कोई कालीन नहीं था। एक तरफ आबनूस की लकड़ी का एक भारी चबूतरा था, जिस पर नमाज की चटाई बिछी थी और चांदी के बने पारंपरिक स्टैंड में कुरान की एक बड़ी प्रति रखी थी। कुरान सोने की परत चढ़े चमड़े में बंधी थी। कुरान के बगल में अल्लाह तआला का जमावार कफ्तान और सोने की नक्काशी वाली चार कोनों वाली टोपी रखी थी। चबूतरे के दूसरी तरफ पीतल और चांदी से बना एक बड़ा पलंग था; उसके पैर ठोस चांदी के थे और पर्दे की छड़ें पीतल की थीं। दो मुलायम ब्रोकेड तकियों के सहारे झुके सम्राट आंखें बंद करके आराम कर रहे थे, और पन्ना की माला पर कुछ पवित्र शब्द जप रहे थे, उनकी उंगलियां धीरे-धीरे ऊपर-नीचे चल रही थीं। वे राजकुमार को उनके हल्के, सतर्क कदमों से पहचानते थे, इसलिए उन्होंने आंखें खोलीं और स्नेहपूर्ण स्वागत करते हुए फारसी कविता की प्रसिद्ध पंक्ति कही: 'ओह, आपके आने से मेरा हृदय प्रसन्न हो गया है! आइए, मिर्ज़ा फखरू, आइए बैठिए।'

सम्राट की उपस्थिति में किसी को भी बैठने की अनुमति नहीं थी, इसलिए कक्ष में कुर्सी या स्टूल जैसी कोई चीज़ नहीं थी। राज्य की बेगमें और राजकुमार, जब बैठने का आदेश दिया जाता, तो सम्राट की दृष्टि का इंतज़ार करते और उसी के अनुसार चबूतरा या पलंग चुनते। यहाँ, राजकुमार ने देखा कि उसे पलंग पर बैठना है। इसलिए वह धीरे से पलंग के किनारे पर बैठ गया। पलंग आठ-नौ इंच चौड़ा था और मुलायम चादर से ढका हुआ था, इसलिए इसमें कोई समस्या नहीं थी। मिर्ज़ा फ़खरू अपने पिता के पैरों को दबाने लगा, उसकी आँखें झुकी हुई थीं, वह सम्राट के चेहरे की ओर देखने की हिम्मत नहीं कर रहा था।

‘अमा मिर्ज़ा फ़खरू,’ समस्त जगत के ज्ञानी, ने अचानक चुप्पी तोड़ी। ‘तो विवाह का प्रस्ताव भेजने के बारे में आपके क्या विचार हैं और आपका क्या तरीका है?’

मिर्ज़ा फ़खरू अवाक रह गए। ईश्वर को कैसे पता चला? मैंने यह ज़िम्मेदारी इहतिराम-उद दौला को सौंपी थी। लेकिन अगर मैं इस सवाल को नज़रअंदाज़ करके गोलमोल जवाब दूं, तो सम्राट को मेरा टालमटोल पसंद नहीं आएगा। कम से कम उन्होंने 'अमा' से शुरुआत की, जो एक दोस्ताना संबोधन है, अंग्रेज़ी के 'हे' की तरह, जैसा कि उन्होंने अपने अंग्रेज़ी शिक्षक से सीखा था। बदले में, उन्होंने अपने शिक्षक को समझाया कि 'अमा' दो शब्दों को मिलाकर बना है: 'अय' और

'मियां'। 'म' पूरी तरह से नासिका से उच्चारित होता है।
कुछ देर रुकने के बाद उन्होंने उत्तर दिया, “अब तक ऐसे सभी मामले ईश्वर की कृपा और मार्गदर्शन में ही सुलझाए और समाप्त किए गए हैं।” वे फिर रुके और बोले, “दूसरी बात यह है कि परंपरा के अनुसार, तैमूर वंश में विवाह के प्रस्ताव कभी बाहर नहीं भेजे जाते, विशेषकर इस प्रतिष्ठित वंश के बाहर।”
‘सही है,’ राजा ने गंभीरता से कहा। ‘हमारी बेटियों के लिए याचिकाएँ प्राप्त होती हैं; ऐसी याचिकाएँ स्वीकार या अस्वीकार की जाती हैं। या कभी-कभी, चगताई वंश का मुखिया, जो शासक सम्राट होता है, घर की किसी लड़की के लिए वर का चयन करता है।’
‘मार्गदर्शक और गुरु बिल्कुल सही हैं। ऐसा हुआ है कि उपयुक्त वर के अभाव में, हमारी पवित्र और पर्दा-निरोधक कुंवारी कन्याओं ने आजीवन ब्रह्मचर्य का पालन करना पसंद किया है।’
'हमारे राजकुमारों के लिए, यदि हमारी कृपा दृष्टि राजमहल के बाहर की किसी पवित्र कुंवारी कन्या पर पड़ती है, तो हम विवाह समारोह यहीं संपन्न करते हैं और उस कन्या को उचित सम्मान के साथ अंदर लाते हैं।'
अब मिर्ज़ा फ़तहुल मुल्क बहादुर महाराज के शब्दों का सार समझ गए। लेकिन शर्म और मर्यादा ने उन्हें बोलने नहीं दिया। उन्होंने झुंझलाहट में खुद से पूछा, इहतराम-उद-दौला कहाँ हैं?
'मिर्ज़ा अबू बक्र (अल्लाह उन्हें सलामत रखे) की माता जब इस दुनिया से विदा हुईं, तो उन्होंने इस सेवक को बेहद अकेला छोड़ दिया।'
‘हम जानते हैं कि हातिम जमानी आपका दिल नहीं जीत सके।’ सम्राट ने धीमी और ज़ोरदार आवाज़ में कहा: ‘लेकिन हमें मिर्ज़ा इलाही बख्श पर पूरा भरोसा है।’
‘मेरे गुरु और मार्गदर्शक की सर्वोच्च बुद्धि को यह स्पष्ट है कि मैं शरीयत के विरुद्ध कुछ भी नहीं करता।’ राजकुमार ने रूखे स्वर में कहा। ‘और न ही मैं अपने से जुड़े किसी को अलग-थलग करना चाहता हूँ।’
धर्म के रक्षक, राजा के चेहरे पर संतोष की एक किरण दिखाई दी। इससे पहले कि वे बातचीत जारी रख पाते, राजदंड धारण करने वाले ने मानो संकेत मिलते ही, अपने विशिष्ट रूप से ऊंचे स्वर में, लेकिन मधुर और कोमल स्वर में घोषणा की, 'इहतिराम-उद-दौला हकीम मुहम्मद अहसानुल्लाह खान बहादुर!'
बादशाह ने हल्की सी ताली बजाई; तुरंत ही पर्दा कुछ इंच हट गया। हकीम अहसानुल्लाह खान ने प्रवेश किया और औपचारिक कुर्निश अदा की। फिर उन्होंने तीन सलाम किए, कमर के ठीक नीचे हाथ जोड़े और सीधे खड़े हो गए, उनकी निगाहें सामने थीं, लेकिन ईश्वर की ओर नहीं।
‘इहतराम-उद-दौला बहादुर,’ उस उपस्थिति ने हल्के, सौहार्दपूर्ण स्वर में कहा। ‘अम्मा, आप अच्छे समय पर आई हैं। और शायद जिस मामले को आप हमारे समक्ष रखना चाहती हैं, वह अभी हमारी बातचीत का विषय रहा हो।’
हकीम अहसानुल्लाह खान तुरंत समझ गए कि मामला क्या होगा। परम पूज्य अल्लाह हवेली में होने वाली हर बात से वाकिफ थे। शायद गुप्त दैनिक संवाददाता ने भी यही जिक्र किया होगा कि तीसरे युवराज को बेगम साहब में दिलचस्पी है। सम्राट का सभी तथ्यों से अवगत होना

स्वाभाविक था। हमेशा की तरह अपनी निगाहें सामने रखते हुए उन्होंने कहा, 'प्रभु अपने प्रजाजनों के दिलों की हर बात से भलीभांति परिचित हैं।'

'तो आप विवाह का प्रस्ताव भेजने की अनुमति मांग रहे हैं?' राजा ने तीखे स्वर में कहा।

मिर्ज़ा फ़थुल मुल्क ने बोलना शुरू किया और कुछ कहने ही वाले थे कि उन्होंने खुद को रोक लिया। प्रकाशमान उपस्थिति हकीम से बात कर रही थी। अगर वे बीच में बोलते, तो यह उनकी बारी से बहुत पहले की बात होती। उन्होंने आशा भरी निगाहों से हकीम की ओर देखा।

"यदि हम ईश्वर की छाया के पवित्र पूर्वजों द्वारा स्थापित प्रथा का एक बाल बराबर भी उल्लंघन करें, तो हम मृत्यु के पात्र होंगे।" उन्होंने पूरे सम्मान और दृढ़ता से कहा।

'अपनी बात स्पष्ट रूप से कहो। पहेलियों में बात मत करो।' राजा का लहजा अब भी काफी तीखा था।

'संसार के शरणस्थल, यदि मुझसे थोड़ी सी गुस्ताखी की जाए तो क्षमा मांगता हूँ। लेकिन असल बात यह है कि जिस पवित्र और पर्दा-नशील बेगम पर साहिब-ए-आलम व आलमीयन की दृष्टि पड़ी है, वह विधवा है। उसका पति एक अच्छे परिवार का और संपन्न व्यक्ति था। बदमाशों के हाथों उसकी मृत्यु हो गई। अब यह नेक बीबी दिल्ली लौट आई है, जो उसका जन्मस्थान है।'

'हम उनकी संपत्ति के प्रति सचेत हैं। हमें उम्मीद है कि अब वह निष्ठा और पवित्रता की मजबूत दीवारों से कभी बाहर कदम नहीं रखेंगी।'

सम्राट वज़ीर खानम के प्रारंभिक जीवन की ओर इशारा कर रहे थे। हालाँकि वे राजा के इस विचार से सहमत नहीं थे—मिर्ज़ा फथुल मुल्क का मानना था कि वज़ीर हमेशा से पवित्र और वफ़ादार रहे थे—फिर भी उन्होंने कुछ नहीं कहा।

'इस बीबी की बड़ी बहन का विवाह दिल्ली में मौलवी मुहम्मद नज़ीर रिफाई से हुआ है। मौलवी साहब सभी मामलों का प्रबंधन करेंगे। मौलवी साहब मध्यस्थ की भूमिका निभाएंगे।'

और विवाह की वास्तविक रस्में?

'शहर में शब्दों और अनुबंध का उच्चारण किया जाएगा। शुभ किले से किसी को भी परेशान नहीं किया जाएगा। बड़ी बहन दुल्हन की औपचारिक पालकी को शुभ हवेली में ले जाएगी।'

"ठीक है, अगर मिर्ज़ा फ़तहुल मुल्क की यही इच्छा है, तो इस हवेली की गरिमा के अनुरूप सभी कार्य संपन्न किए जाएं।" सम्राट ने कुछ देर मौन रहने के बाद आदेश दिया।

मिर्ज़ा फ़खरू ने कृतज्ञता भरी नज़रों से अपने पिता की ओर देखा। इहतिराम-उद दौला ने महसूस किया कि उनकी मुलाक़ात समाप्त हो चुकी है। उन्होंने रिवाज़ानुसार कुर्नीश की, फिर तीन सलाम किए और पीछे की ओर चलते हुए कमरे से बाहर निकल गए।

सम्राट ने राजकुमार के कंधे पर हल्के से थपथपाकर अपनी सहमति व्यक्त की और कहा, 'बहुत अच्छा। अल्लाह आपके साथ रहे।' आशीर्वाद के ये अंतिम शब्द अरबी में थे।

मिर्ज़ा फ़खरू खड़े हुए, कुर्निश की रस्म अदा की, फिर पलंग के किनारे पर बैठ गए और धीरे-धीरे अपने पिता के पैर दबाने लगे। कुछ ही मिनटों में बादशाह सो गए; मिर्ज़ा फ़खरू फिर कमरे से बाहर निकल गए, हालांकि बादशाह सो रहे थे।

मौलवी मुहम्मद नाज़िर स्वयं को रिफाई और मुजद्दिदी कहते थे, क्योंकि उनका संबंध सूफी परंपरा की दो शाखाओं से था। रिफाई संप्रदाय के लोग शेख अहमद अल-रिफ़ाई को अपना आध्यात्मिक वंश मानते थे, जबकि मुजद्दिदी संप्रदाय के लोग शेख अहमद सरहिंदी मुजद्दिद-ए अलफ़-ए सानी को अपना गुरु मानते थे। सूफी परंपराओं में सामंजस्य और समानता इस तथ्य से स्पष्ट होती है कि एक व्यक्ति एक या एक से अधिक वंशों से जुड़ सकता था।

मुहम्मद नज़ीर मूल रूप से दिल्ली के निवासी नहीं थे। वे इस्लाम के दूसरे खलीफ़ा उमर के वंशज थे; उनका जन्म गुजरात के प्रसिद्ध शहर बड़ौदा में हुआ था। उनके पिता शेख दीन मुहम्मद, सैय्यद नूरुद्दीन सैफुल्लाह अल-रिफाई के अनुयायी थे। वे कई वर्षों तक अपने गुरु के मठ में या उसके आस-पास रहे और ध्यान और प्रार्थना में समय व्यतीत किया, गुरु के निजी सेवक के रूप में कार्य किया और अपने गुरु के आदेशानुसार सामाजिक सेवाएँ भी कीं।

रिफाई सिलसिला की शुरुआत शेख अहमद अल-रिफाई (1106-82) ने की थी। वे अरब मूल के थे, लेकिन उन्होंने अपने जीवन का एक लंबा हिस्सा दक्षिणी इराक के दलदली इलाकों में स्थित बतैह नामक एक छोटे से गाँव में बिताया। वे स्वयं कादिरिया सिलसिले से संबंधित थे, लेकिन उनके मामा शेख मंसूर अल-बतैही ने उन्हें अपने द्वारा स्थापित एक सिलसिले का शेख नियुक्त किया, जिसका नाम उन्होंने बतैहिया और रिफाइया रखा। लेकिन इतिहास में इस सिलसिले को केवल अल-रिफाई के नाम से जाना जाता है। बहुत जल्द ही यह सिलसिला दूर-दूर तक लोकप्रिय हो गया। इब्न खलदून ने अपने इतिहास में शेख अहमद अल-रिफाई का उल्लेख किया है। चौदहवीं शताब्दी में इस सिलसिले के अनुयायी मालदीव, सीलोन (अब श्रीलंका), लक्षद्वीप और फिर दक्कन तक फैल गए। जल्द ही यह पूरे दक्कन और हिंद में फैल गया।

रिफाई सूफी सबसे पहले सोलहवीं शताब्दी में गुजरात में प्रकट हुए। वे जल्द ही बड़ौदा, सूरत और कई अन्य शहरों में स्थापित हो गए। सैय्यद नूरुद्दीन सैफुल्लाह अल-रिफाई अठारहवीं शताब्दी के सबसे प्रसिद्ध गुजराती सूफियों में से एक थे। शेख दीन मुहम्मद अपने गुरु के अत्यंत समर्पित और निष्ठावान अनुयायी थे, लेकिन उन्हें शेख के अनुयायियों के एक विशेष और सबसे बड़े समूह की विचित्र और अतिवादी प्रथाओं में कोई रुचि नहीं थी। इस प्रथा को 'रतिब' (दृढ़ अभ्यास) कहा जाता था और इसके अभ्यासकर्ताओं को 'रतिबदार' (दृढ़ अभ्यास का धारक) कहा जाता था। रतिबदार अपनी पीड़ा और हिंसा की लत के लिए जाने जाते थे। उन्मादपूर्ण नृत्य करते समय वे अपने शरीर पर चाकू या तलवार से घाव करते थे। सिर पर लोहे या कांसे का गदा मारना भी उनकी पसंदीदा प्रथा थी। कुछ रतिबदार तो अपने गाल, जांघ, पेट और यहाँ तक कि जीभ को भी किसी धारदार हथियार से छेद देते थे। कुछ रतिबदार ज़ोर से साँस खींचते, उसे रोके रखते, फिर नाक, मुँह और कान बंद करके गला घोंटते और इतनी ज़ोर से साँस छोड़ते कि आँख निकलकर चेहरे पर लटक जाती। ऐसे कृत्यों को आम तौर पर 'खेल' और 'खेलना' कहा जाता था; लेकिन चूंकि ये शब्द जिन्न या आत्मा के प्रभाव में महिलाओं (और कभी-कभी पुरुषों) द्वारा किए गए

उन्मादपूर्ण कृत्यों के लिए भी प्रयोग किए जाते थे, इसलिए संभव है कि रतिबदार जब ऐसा व्यवहार करते थे, तो उन्हें लगता था कि वे किसी अलौकिक शक्ति के प्रभाव में हैं।
पुराने समय के कुछ रतिबदारों के बारे में कहा जाता था कि वे बिना किसी नुकसान के जीवित साँप निगल सकते थे या जलते हुए अंगारों पर चल सकते थे। यह भी कहा जाता था कि किसी भी रतिबदार को स्वयं को घायल करने पर कभी कोई चोट नहीं आई: घाव से खून की एक बूँद भी नहीं गिरी। खेल शुरू करने से पहले, रतिबदार संत सैयद नूरुद्दीन सैफुल्लाह अल-रिफाई या उनके नियुक्त प्रतिनिधि का आशीर्वाद प्राप्त करते थे। संत कुछ प्रार्थनाएँ या पवित्र शब्द पढ़ते थे और अपने हथियार पर फूँक मारते थे। कहा जाता था कि कभी-कभी रतिबदार संत के सामने उपस्थित होकर अपनी जीभ या जांघ से अपना हथियार निकाल लेते थे। ऐसे अवसरों पर, संत अपनी लार घाव पर लगाते थे और कट का निशान तुरंत गायब हो जाता था।
रतिबदार अपने नाटकीय और विचित्र प्रदर्शनों के कारण बेहद लोकप्रिय थे, लेकिन शेख दीन मुहम्मद ऐसी चीजों को नापसंद करते थे, स्पष्ट रूप से अस्वीकार तो नहीं करते थे। उनका मानना था कि ऐसे कार्य जिनसे शरीर को चोट पहुंचे, या जो कलाबाजी या बाज़ीगरी जैसे लगें, या जो नाम और ध्यान आकर्षित करने के लिए किए जाते हों, उन्हें धार्मिक अनुष्ठानों का दर्जा नहीं दिया जाना चाहिए। ऐसी चीजें स्पष्ट रूप से पैगंबर की शिक्षाओं और उनकी शरीयत के खिलाफ थीं। शेख दीन मुहम्मद ऐसे प्रदर्शनों को नापसंद करते थे जिन्हें न केवल उनके शेख ने स्वीकार किया था, बल्कि स्पष्ट रूप से प्रोत्साहित भी किया था। यह शेख के प्रति उनके प्रेम का प्रमाण था, न कि इसके विपरीत। इन गतिविधियों के विशेष समय के दौरान, जो उनकी दृष्टि में अवांछनीय थीं, दीन मुहम्मद घर पर ही रहते थे, यहां तक कि अपने गुरु और मार्गदर्शक के समक्ष दैनिक प्रार्थना भी नहीं करते थे। रंग-बिरंगे झंडे और झालरें निकाली जाती थीं, जिन पर शेख नूरुद्दीन सैफुल्लाह अल-रिफाई अपना आशीर्वाद देते थे; इसी प्रकार, उन्होंने खेल में इस्तेमाल होने वाली तलवारों, चाकुओं, लोहे की कीलों और कटारों पर अपना आशीर्वाद फूँका। इसके बाद दल शहर में निकल पड़ते, अपनी भयावह कला का प्रदर्शन करते और नागरिकों की प्रशंसा और आस्था से प्रेरित प्रेम अर्जित करते।
कई साल इसी तरह बीत गए; इन अनुचित गतिविधियों के दिनों में दीन मुहम्मद व्यावहारिक रूप से अपने गुरु और मार्गदर्शक से अलग हो गए थे। एक बार, खेल का मौसम शुरू होने से ठीक पहले, शेख नूरुद्दीन सैफुल्लाह अल-रिफाई ने शेख दीन मुहम्मद को अपने निजी कक्ष में बुलाया और कहा: ‘दीन मुहम्मद, हम देख सकते हैं कि आप मार्ग पर आगे बढ़ने और एक के बाद एक उन्नत अवस्था प्राप्त करने के लिए हर संभव प्रयास करते हैं। आपके कर्म और वचन में कोई अंतर नहीं है। यह आप पर अल्लाह, संसार के स्वामी, की कृपा और हमारे महान पूर्वजों, अल्लाह के मित्रों, के आध्यात्मिक ध्यान का एक निश्चित संकेत है।’
दीन मुहम्मद ने हाथ जोड़कर, सिर झुकाकर और कांपती हुई आवाज में उत्तर दिया, 'यह तुच्छ वस्तु कुछ भी नहीं है। यह आपके द्वार की सूर्य-समान धूल की एक चमकदार किरण है जिसने मुझे स्पर्श किया है और इस तुच्छ कण को चमकदार बना दिया है।'
शेख नूरुद्दीन अल-रिफाई एक पल के लिए चुप रहे। फिर उन्होंने आदेश दिया, 'लेकिन मैंने काफी

समय से देखा है कि आपकी प्रगति स्पष्ट रूप से रुक गई है।'
शेख दीन मुहम्मद की आँखों में आँसू भर आए। उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि गुरु उन्हें कोई चेतावनी दे रहे हैं या फिर उस मुश्किल से निकलने का रास्ता बता रहे हैं जिसे वे एक गतिरोध मान रहे थे। उन्होंने सभी संभावनाओं पर विचार किया और कुछ देर चुप रहने के बाद भयभीत होकर कहा, 'आप ही मेरी मंजिल हैं। आप ही मेरे मार्गदर्शक भी हैं। तो मैं आपके दिव्य द्वार को छोड़कर कहाँ जाऊँ?'
'यहाँ प्रचलित कुछ प्रथाएँ और कुछ रीति-रिवाज आपकी राय में आपत्तिजनक हैं, वास्तव में शरिया के विपरीत हैं। और आप सही हैं, यदि इन चीजों को विशुद्ध रूप से धार्मिक दृष्टिकोण से देखा जाए।'
दीन मुहम्मद पूरी तरह से असमंजस में थे। क्या यह संभव है कि गुरु केवल मेरे लिए उन कार्यों और प्रथाओं को रोक दें? और यदि ऐसा हुआ, तो मैं उनके शिष्यों और असंख्य अनुयायियों और प्रशंसकों के सामने कैसे निहारूँगा? क्या मैं अपने गुरु के वचन या कर्म को अपनी बुद्धि की अपूर्ण कसौटी पर परखने में सक्षम या सशक्त हूँ? यदि मेरा हृदय यहाँ संतुष्ट नहीं होता, तो यह मेरा कर्तव्य है कि मैं उनकी शरण छोड़ दूँ और किसी अन्य पूर्ण पुरुष की खोज कर उनसे आशीर्वाद प्राप्त करूँ।
'बिल्कुल।' नूरुद्दीन सैफुल्लाह अल-रिफाई ने आदेश दिया, मानो उन्होंने दीन मुहम्मद के विचारों को खुली किताब की तरह पढ़ लिया हो। 'यही अल्लाह के दोस्तों का और सभी गुरुओं के गुरु शेख अब्दुल कादिर जिलानी का भी आदेश है: यदि तुम्हारे हृदय का फूल एक मार्गदर्शक की देखरेख में न खिले, तो दूसरे के पास जाओ।'
'क्या ईश्वर मुझे अपने द्वार से ठुकरा रहा है?' शेख दीन मुहम्मद बुरी तरह कांप रहे थे।
नहीं। हम आपके साथ रहेंगे, आप जहाँ भी जाएँगे। बीते समय में हमारे पूर्वजों ने ऐसी प्रथाएँ शुरू की थीं जो आपको नापसंद हैं। मैं या कोई और उन प्रथाओं को नहीं छोड़ सकता, क्योंकि ऐसा करने से हमारे पैगंबर के अनुयायियों में भ्रम और निराशा फैल सकती है, जिनके दिलों में हमारे सिलसिले के उन महान लोगों के लिए प्रेम और आस्था है जो अब सूफी जगत के इतिहास का हिस्सा हैं। चूंकि आपका मन यहाँ नहीं है, इसलिए आपकी प्रगति भी रुक गई है।
शेख दीन मुहम्मद आवेग में आकर अपने गुरु के निकट गए और उनके पैर छूने के लिए झुक गए। उनकी आँखों से आँसू बह रहे थे और वे विनती भरी आवाज़ में बोले, "महामहिम, मुझे यहीं आपके चरणों में मरने दीजिए, चाहे मैं कितना भी निर्दयी और अज्ञानी क्यों न हूँ। मुझे आपसे विमुख न होने दीजिए।"
उस महान शख्सियत, सैय्यद नूरुद्दीन सैफुल्लाह अल-रिफाई मुस्कुराए। उनकी मुस्कान ऐसी थी मानो पत्थर भी पिघल जाए। उन्होंने हुक्म दिया, 'अल्लाह की मर्ज़ी से मैं और तुम कभी अलग नहीं होंगे। लेकिन शरिया से प्रेम करने वाला तुम्हारा स्वभाव उन लोगों के साथ सफ़र करने से और भी मज़बूत होगा जिनके लिए शरिया और सफ़र एक हो जाते हैं, यहाँ तक कि उनमें कोई फ़र्क़ नहीं रह जाता। अब जाओ। मैं तुम्हें अल्लाह के भरोसे छोड़ता हूँ।'
ईश्वर की उपस्थिति में, शेख नूरुद्दीन सैफुल्लाह अल-रिफाई ने अपनी कमीज से कपड़े की एक

पट्टी फाड़कर दीन मुहम्मद के गले में डाल दी, ठीक उसी तरह जैसे फकीर और ईश्वर की खोज में भटकने वाले बेघर लोग धागों का हार पहनते हैं।

फिर गुरु ने अरबी में वह प्रार्थना पढ़ी, जो बारहवीं-तेरहवीं शताब्दी के महान सूफी संत शेख फरीदुद्दीन, जिन्हें गंजशकर (चीनी का खजाना) के नाम से भी जाना जाता है और जिन्हें प्यार से बाबा फरीद कहा जाता था, द्वारा पढ़ी जाती थी। यह अवसर दिल्ली के शेख निजामुद्दीन औलिया को अपने से विदा लेकर संसार में जाने की अनुमति देने का था: 'अल्लाह तुम्हें शुभ सुख प्रदान करे और तुम्हें लाभकारी ज्ञान और ऐसे कर्म प्रदान करे जो उसकी स्वीकृति के योग्य हों।'

जनवरी 1790 में शेख दीन मुहम्मद अपने गुरु की सामान्य सुरक्षा से भयभीत होकर बाहर निकले। उन्होंने कई महीने पंजाब और उत्तर-पश्चिम में यात्रा करते हुए सूफी दरगाहों और संतों के दर्शन किए। उन्होंने सरहिंद में शेख अहमद सरहिंदी नक्शबंदी की दरगाह पर काफी समय बिताया। शेख अहमद सोलहवीं-सत्रहवीं शताब्दी के सूफी थे, जो सत्ता के विरुद्ध अपने विचारों और इस दावे के लिए जाने जाते थे कि शरीयत के बिना सूफीवाद का कोई अस्तित्व नहीं है। उनकी अपनी श्रृंखला को मुजद्दिदिया कहा जाने लगा, क्योंकि उनकी छवि मुजद्दिद-ए अलफ-ए सानी (दूसरे इस्लामी सहस्राब्दी में धर्म का नवीकरण करने वाला) के रूप में थी। वे शेख अहमद की शिक्षाओं से बहुत प्रभावित हुए, विशेष रूप से शरीयत के कड़ाई से पालन पर उनके जोर से। शेख दीन मुहम्मद ने श्रृंखला के किसी जीवित सूफी की खोज और उनके बारे में जानकारी जुटाना शुरू किया ताकि वे उनसे और अधिक सीख सकें और संभवत: उनके शिष्य बन सकें।

वह भाग्यशाली थे। उन्हें पता चला कि दिल्ली के शाह गुलाम अली नक्शबंदी मुजद्दिदी, जो सूफी संत और कवि मिर्ज़ा मज़हर जान-ए-जनन नक्शबंदी मुजद्दिदी के प्रमुख शिष्य और उत्तराधिकारी थे, उस समय सरहिंद में ठहरे हुए थे। उन्होंने तुरंत गुरु से मिलने की अनुमति मांगी और प्राप्त कर ली, और उनका हृदय उस करिश्माई संत के आकर्षण में तुरंत मोहित हो गया। उन्होंने अपने हृदय को शाह गुलाम अली के आध्यात्मिक रथ की लगाम से बांध दिया। वे विशेष रूप से परम पूज्य मिर्ज़ा मज़हर जान-ए-जनन की शिक्षाओं से आकर्षित हुए, जो मानते थे कि वेद ईश्वर द्वारा प्रकट पवित्र ग्रंथ हैं, और श्री कृष्ण और श्री राम ईश्वर द्वारा भेजे गए पैगंबर हैं; इस प्रकार उन्होंने हिंदुओं को भी पुस्तक के अनुयायी होने का गौरव दिया।

शेख दीन मुहम्मद अपने नए गुरु और मार्गदर्शक की अनुमति से दिल्ली गए। गुरु के आदेशानुसार, दीन मुहम्मद ने राजकुमारी ज़ीनत-उन निसा बेगम द्वारा निर्मित मस्जिद से सटे मदरसे में शिक्षक का पद स्वीकार किया। गुरु के कहने पर ही उन्होंने एक गरीब विधवा से विवाह किया और समुदाय के एक उपयोगी सदस्य के रूप में अपना जीवन व्यतीत करने लगे। उन्हें रिफाई और मुजद्दिदी कहलाने की अनुमति भी मिल गई। शाह गुलाम अली के देहांत (1824) तक, दीन मुहम्मद सांसारिक और आध्यात्मिक दोनों दृष्टियों से एक सम्मानित व्यक्ति बन चुके थे। शाह गुलाम अली ने उन्हें अपना उत्तराधिकारी घोषित नहीं किया, लेकिन एक दिन उन्हें अत्यंत प्रसन्न किया; उस दिन गुरु का मन प्रसन्न और प्रसन्न था, और उन्होंने कहा, 'मियां दीन मुहम्मद, आप और आपके पूर्व गुरु दोनों हमारे साथ हैं।'

शेख दीन मुहम्मद ने अपने बेटे मुहम्मद नज़ीर को पर्याप्त शिक्षा दी, वास्तव में अपने ओहदे के

अधिकांश लोगों से बेहतर शिक्षा दी। उन्होंने उसे रिफाई और मुजद्दिदी सिलसिले में दीक्षित किया। अपने पिता की मृत्यु के बाद मुहम्मद नज़ीर का सामाजिक और आध्यात्मिक दायरा विस्तृत और विविध हो गया। उसके नए परिचितों में कुछ ऐसे लोग भी थे जो मुहम्मद यूसुफ सदाकार और अकबरी बाई फर्रुखाबादी के नियमित आगंतुक थे। मुहम्मद नज़ीर अब विवाह योग्य आयु का हो चुका था; वह धनी तो नहीं था, लेकिन संपन्न था। कुछ शुभचिंतकों ने मध्यस्थ की भूमिका निभाई और मुहम्मद यूसुफ की सबसे बड़ी बेटी अनवरी खानम, जिसे प्यार से बारी बेगम कहा जाता था, का विवाह मुहम्मद नज़ीर से धूमधाम और समारोह के साथ हुआ। कई वर्षों बाद उन्हें एक संतान हुई - एक अत्यंत सुंदर पुत्री। उसका नाम अमात-उल फातिमा रखा गया और उसे अत्यंत स्नेह और लाड़-प्यार से पाला-पोसा गया। जैसे-जैसे वह बड़ी हुई, उसे उच्च वर्ग के मध्यमवर्गीय मुस्लिम या हिंदू लड़कियों की तुलना में कहीं अधिक शिक्षा दी गई। उसने घरेलू कामकाज के सामान्य कौशल भी सीख लिए।

नवाब मिर्ज़ा अपनी चाची के घर पर मौजूद थे, रोज़ाना या दो बार की तरह उनसे मिलने आए थे। उनके और फ़ातिमा के बीच हल्की-फुल्की बातचीत चल रही थी, जिसमें किसी भी तरह का यौन संकेत नहीं था। हमेशा की तरह, वे नि:शुल्क घर के कामों में मदद करने की पेशकश भी कर रहे थे।

'बारी खाला, क्या आपके पास घी खत्म हो गया है? मैं आज सुबह कदम शरीफ के पास से गुज़र रहा था। मैंने वहाँ दर्जनों मेवाती लोगों को बढ़िया घी से भरे घड़े लिए देखा। अगर आप चाहें, तो मैं तुरंत जाकर आपके लिए पर्याप्त मात्रा में बेहतरीन घी ला सकता हूँ।'

‘जाओ, यहाँ से चले जाओ, शरारती बच्चे! क्या घी मंडी में तुम्हारे सिवा किसी और को नहीं है जो उसके कपड़ों पर तेल के धब्बे लगा दे? क्या मेरे पास नौकर नहीं हैं?’

‘अच्छा। क्या आपको पता है कि आज़ादपुर के फल बाजार में काबुल से दर्जनों खरबूजे भरे हुए ठेले आ गए हैं? वाह, मैं अभी जा सकता हूँ, इससे पहले कि वे बिक जाएँ। मैं ऐसे फल लाऊँगा... ऐसे फल जो मेरे चाचा और फातिमा को बहुत पसंद आएँगे!’

‘अल्लाह तुम्हें अक्ल दे!’ बारी बेगम ने बड़े प्यार से कहा। ‘अगर तुम्हारे चाचा को पता चल जाए कि मैंने छोटी के लाडले बेटे को आज़ादपुर सामान लाने-ले जाने के लिए भेजा है! तब तो भगवान ही जाने वो मेरे साथ क्या करेंगे!’

‘प्लीज़, नवाब भाई,’ फातिमा ने शरमाते हुए मुस्कान और शरारती निगाहों से कहा। ‘आप तो आसमान में तरह-तरह की पतंगें उड़ाते हैं!’ वह हल्के से हँसी, उसका दुपट्टा उसके मुँह पर था। ‘सच में, यहाँ हमें किसी चीज़ की कमी नहीं है।’

नवाब मिर्जा ने अपने विशिष्ट सौम्य दोहरे अर्थ वाले अंदाज में जवाब दिया, 'प्रिय महोदया, लेकिन मुझे हर चीज में कुछ न कुछ कमी नजर आती है।'

फातिमा शर्म से लाल हो गई; वह अपने चचेरे भाई का मतलब समझ गई थी, लेकिन जवाब में क्या कहे, यह उसे नहीं सूझ रहा था। तभी बाहर से एक आवाज़ आई, 'माननीय महोदय, निवेदन है कि पर्दा हटा दिया जाए। मौलाना सहबाई साहब और उनकी बेगम आ गए हैं।'

बड़ी बेगम थोड़ी घबराई हुई उठीं। मौलाना सहबाई साहब की बेगम बहुत कम ही आती थीं। ज़रूर कोई खास वजह रही होगी उन्हें यहाँ लाई होगी। उन्होंने नवाब मिर्ज़ा से अनुरोध किया कि वे मौलाना का दीवानखाने में पूरे आदर के साथ स्वागत करें और जब तक उनके चाचा, जो एक दोस्त से मिलने गए थे, वापस न आ जाएँ, तब तक उन्हें किसी काम में व्यस्त रखें।

'अब तुम यहाँ से जल्दी जाओ, ताकि मैं उसके बेगम को अंदर बुला सकूँ। मैं थोड़ी देर में मेहमान के लिए पान और हुक्का भेजूँगा।'

नवाब मिर्ज़ा ने अपनी टोपी और कुर्ता ठीक करते हुए, विद्वान अतिथि का स्वागत करने और उन्हें बैठक कक्ष में ले जाने के लिए जल्दी से बाहर प्रस्थान किया। इसी बीच, यह संदेश भेजा गया कि घर में अब पर्दा है और बेगम साहब कृपया अंदर आ सकती हैं। पालकी को मुख्य द्वार के ठीक बगल में खड़ा कर दिया गया; पूर्ण पर्दा सुनिश्चित करने के लिए चादरों का इस्तेमाल पर्दों के रूप में किया गया। बारी बेगम ने हॉल में, पर्दे के पीछे, अपने अतिथि का स्वागत किया। वह उन्हें बरामदे और भीतरी आंगन से होते हुए अपने कक्ष में ले गईं। यह पूछना बिल्कुल अनुचित था कि वे किस उद्देश्य से आए हैं। अतिथि और मेज़बान को हर समय यही आभास करना था कि यह केवल एक सामाजिक मुलाकात है, जिसमें किसी व्यावसायिक विषय पर चर्चा नहीं करनी है।

सहबाई की पत्नी लगभग तीस-पैंतीस वर्ष की थीं, लेकिन उनके बालों में सफ़ेदी साफ़ झलकती थी, शायद इसलिए कि उन्हें सर्दी-ज़ुकाम की पुरानी बीमारी थी: उन दिनों, इस बीमारी को समय से पहले बाल सफ़ेद होने का मुख्य कारण माना जाता था। वह कद में छोटी और थोड़ी गोल-मटोल थीं, और उनका रंग गेहूँ के रंग जैसा हल्का भूरा था, जो कैफ़े-औ-लेट से भी हल्का था और भारतीय समाज में बहुत पसंद किया जाता था। उनका चेहरा जीवंत था, जो उनके मधुर स्वभाव और हंसमुख प्रवृत्ति को दर्शाता था, जबकि उनकी आँखों में समझदारी और तेज़ बुद्धि झलकती थी। संक्षेप में, वह बेहद आकर्षक व्यक्तित्व की धनी थीं। उनके पति दिल्ली के कट्टर निवासी थे, लेकिन वह पानीपत से थीं, और उनकी आवाज़ में हरियाणवी लहजे की थोड़ी सी कड़कपन थी।

मौलवी सहबाई को उम्मीद थी कि इस समय मौलवी मुहम्मद नाज़िर घर पर होंगे, लेकिन नवाब मिर्ज़ा को देखकर उन्हें थोड़ी हैरानी हुई: नवाब मिर्ज़ा से, या वास्तव में मुहम्मद नाज़िर के अलावा किसी और से, बातचीत शुरू करना उचित नहीं था। वे नवाब मिर्ज़ा को एक उभरते हुए कवि के रूप में जानते थे। आपको याद होगा कि ज़ीनत बारी में आयोजित मुशायरे में सहबाई ने ही नवाब मिर्ज़ा की एक कविता की सहज और अत्यंत उत्साहपूर्वक सराहना की थी। उन्होंने मुहम्मद नाज़िर साहब के आने का इंतज़ार करने का फैसला किया। फिलहाल, उन्होंने नवाब मिर्ज़ा से अनौपचारिक बातचीत की और उनके बारे में ही बात की।

तो, नवाब मिर्ज़ा, आपको यहाँ देखकर अच्छा लगा। अल्लाह की मर्ज़ी से, आपकी शायरी और कवि के रूप में आपकी प्रतिभा की चर्चा पूरे शहर में फैल रही है। कुछ दिन पहले, शेख नासिख की एक तीन भागों वाली ग़ज़ल ने खूब सुर्खियाँ बटोरीं। पहली ग़ज़ल की पहली पंक्ति थी: सौंदर्य के सागर का केंद्र बिंदु, उसकी कमर/कितनी कोमल और मधुरता से लहराती है! वास्तव में, पूरी तीन भागों वाली ग़ज़ल बेहद लोकप्रिय हो गई है।

जी हाँ, महोदय। उस कविता की चर्चा आज भी हर जगह हो रही है, 'उपस्थिति'।' नवाब मिर्ज़ा ने जवाब दिया। 'उसका पहला श्लोक ही सचमुच विस्फोटक है।' फिर उन्होंने पूरा श्लोक सुनाया, जिसकी पहली पंक्ति सहबाई ने अभी-अभी पढ़ी थी:
सौंदर्य के सागर का केंद्रबिंदु, उसकी कमर, कितनी कोमल और मधुरता से लहराती है! कहो, क्या कभी कोई जल-लहर इतनी कोमल, इतनी लहराती हो सकती है?
'केवल ईश्वर ही दोषरहित है!' सहबाई ने प्रशंसा करते हुए कहा। 'मिर्ज़ा ग़ालिब ने भी इसी शैली में दो भागों वाली ग़ज़ल रची है। और सचमुच, मियां, मिर्ज़ा की कल्पना की पहुँच अद्भुत है।'
उन्होंने मुस्कुराते हुए कहा, 'और नौजवान, तुम्हारे लिए इस शैली में अपनी विचार शक्ति का परीक्षण करना बहुत अच्छा होगा; लोगों को देखने दो कि तुम प्रेम के लेन-देन के बारे में कितनी अच्छी तरह लिख सकते हो।'
नवाब मिर्ज़ा मुस्कुराया; उसकी मुस्कान कुछ धूर्तता भरी थी, मानो वह मन ही मन किसी ऐसे मजाक पर हंस रहा हो जिसका सहबाई को कोई अंदाजा नहीं था। लेकिन सहबाई अपनी सूक्ष्म समझ के लिए प्रसिद्ध था; उसने तुरंत समझ लिया कि उस नौजवान की मुस्कान के पीछे कुछ छिपा है, हालांकि उसने उस समय ऐसा व्यवहार करना ही बेहतर समझा जैसे उसने उस अर्थपूर्ण मुस्कान को देखा ही न हो।

जी हाँ, महोदय। लेकिन शेख साहब, जिन्हें अल्लाह ने कुबूल किया है, उन्होंने 'जवाब' (उत्तर) शब्द का प्रयोग नहीं किया। शायद इसलिए कि उन्हें यह बहुत घिसा-पिटा लगा?
'अरे, हममें से किसी को भी उस चूक का एहसास ही नहीं हुआ!'
"महोदय, और मिर्ज़ा नौशाह साहब ने शायद यह सोचा होगा कि शेख़—जिन पर अल्लाह की रहमत हो—ने वह कविता उनके लिए इसलिए छोड़ी थी ताकि वे उसका सर्वोत्तम उपयोग कर सकें। इसलिए, मिर्ज़ा साहब ने आदेश दिया:
मेरे संदेशवाहक के लौटने तक मैं एक और पत्र लिख दूँगी...
मौलवी साहब ने तुरंत ही आयत पूरी कर दी:
मुझे अच्छी तरह पता है कि वह जवाब में क्या लिखेगी!
उन्होंने आगे कहा, 'वाह! श्लोक को पूरा करने के लिए उनके मन में कितना रोमांचक वाक्य आया! केवल ईश्वर ही दोषरहित हैं!' फिर उन्होंने पूरा श्लोक दोहराया और कहा, 'यह आश्चर्य की बात है: ऐसे विषय की रचना और प्रेम के इतने नाजुक लेन-देन पर रचना करने के लिए इसका उपयोग!'
अब तक नवाब मिर्ज़ा की मुस्कान कुछ और चौड़ी हो गई थी, हालाँकि उन्होंने कुछ नहीं कहा; सहबाई अब उनकी मुस्कान का अर्थ स्पष्ट रूप से समझ गए थे। उन्होंने कहा, 'तो! यही तो सच्चाई है, नवाब मिर्ज़ा! आपने तो पहले ही उस शैली में 'जवाब' शब्द का प्रयोग करते हुए एक कविता रच ली है! बताइए, सुनाइए!'
नवाब मिर्जा ने विजयी भाव से पाठ किया, लेकिन अपनी सफलता पर जरा भी घमंड नहीं दिखाया:

मैंने अपनी बेचैनी और अधीरता में सैकड़ों बार अपने दिल को धोखा दिया:
'तो आपने शुरुआती पंक्ति बना ली? अच्छा। यह काफी अच्छी पंक्ति है। अब हमें पूरी पंक्ति दीजिए।'
नवाब मिर्जा ने सिर उठाए बिना, अद्भुत और सहज प्रवाह के साथ पूरी आयत पढ़ी:
अपनी बेचैनी और अधीरता में मैंने सैकड़ों बार अपने दिल को धोखा दिया: मैंने उसकी प्रतिक्रिया के रूप में खुद को ही अनगिनत पत्र लिखे।
ऐसा लग रहा था मानो सहबाई सदमे से सम्मोहन में चले गए हों। उन्होंने अपना हाथ अपने हृदय पर रखा, लड़खड़ाए और बार-बार धीमी आवाज़ में यही वाक्य दोहराते रहे, मानो स्वयं से बात कर रहे हों, "मैंने स्वयं को अनगिनत पत्र लिखे।" नवाब मिर्ज़ा स्तब्ध रह गए, उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि क्या करें। उन्होंने इत्र की डिब्बी उठाई, एक शीशी निकाली, अपने रुमाल पर कुछ बूँदें डालीं और उससे मौलवी सहबाई की कलाई और हथेलियों को धीरे से सहलाया। उन्होंने पान की डिब्बी से सोने की पत्ती में लिपटा हुआ एक पान का कोन निकाला, उन्हें भेंट किया और अत्यंत धीमी आवाज़ में बोले, "महोदय, कम से कम इस छोटे से कोन का स्वाद तो चख लीजिए।"
'अरे? तुमने क्या कहा? पान का कोन। लेकिन, मियां, "मैंने खुद को चिट्ठियों पर चिट्ठियां लिखीं"... केवल ईश्वर ही दोषरहित है! वाह, वाह! प्रेम के ऐसे वृत्तांत, इतनी सहजता और प्रियतम में तल्लीनता के साथ! अल्लाह तुम्हें और बुलंद करे, और फिर से बुलंद करे।' उन्होंने पूरी पंक्ति उसी जोश के साथ दोहराई, और फिर कहा, 'ठीक है, मियां, चलो तुम्हारी इस ग़ज़ल की कुछ और आयतें सुनाते हैं। वास्तव में, मेरी इच्छा है कि ऐसी ग़ज़लें दुनिया के शरणस्थल, ईश्वर की छाया की सेवा में प्रस्तुत की जाएं!'
नवाब मिर्ज़ा के जवाब देने से पहले ही मौलवी मुहम्मद नज़ीर रिफ़ाई मुजद्दिदी माफ़ी मांगते हुए अंदर आ गए। नवाब मिर्ज़ा ने सोचा कि अब वहाँ से चले जाना अच्छा रहेगा, लेकिन सहबाई ने कहा, 'प्यारे बच्चे, चलो उस कविता को फिर से सुनाते हैं। मौलवी साहब, ज़रा ध्यान दीजिए; यह नौजवान, आपका भतीजा, कविता से भरपूर है! विषय कितना नया है, और भाषा कितनी सहज और मुहावरेदार है!'
नवाब मिर्ज़ा अपने चाचा से बेहद भयभीत थे, हालाँकि वे हमेशा उनके साथ स्नेहपूर्ण और सौम्य व्यवहार करते थे। उन्हें उनकी धार्मिकता और गंभीरता से भी डर लगता था; वे हमेशा इस डर में रहते थे कि कहीं वे कुछ ऐसा कह या कर न दें जो उनके चाचा के स्वभाव को आहत कर दे: वरना वे उनसे नाराज़ हो जाएँगे। उन्होंने अपने चाचा की उपस्थिति में कविताएँ सुनाने से बचने की पूरी कोशिश की। लेकिन अब उनके पास कोई विकल्प नहीं था। उन्होंने हिम्मत जुटाई और दृढ़ और स्पष्ट स्वर में बोले, 'मैं पहला श्लोक प्रस्तुत करता हूँ।'
उन्होंने वह श्लोक दोबारा पढ़ा:
अपनी बेचैनी और अधीरता में मैंने सैकड़ों बार अपने दिल को धोखा दिया: मैंने उसकी प्रतिक्रिया के रूप में खुद को ही अनगिनत पत्र लिखे।
मौलवी सहबाई हमेशा की तरह भावविभोर थे; यहाँ तक कि मौलवी मुहम्मद नाज़िर भी अनायास ही 'वाह, वाह! केवल ईश्वर ही दोषरहित है! वह आयत फिर से कहो!' कहने से खुद को रोक नहीं

पाए।
नवाब मिर्ज़ा ने सलाम किया और आयत को दोबारा पढ़ा। फिर, जब दोनों विद्वान अभी भी तालियाँ बजा रहे थे, उन्होंने विनम्रता से हाथ जोड़कर कहा, 'अगली दो-तीन आयतें कुछ हद तक चंचल हैं, अगर उद्दंड नहीं तो। मैं आदरणीय सज्जनों से क्षमा चाहता हूँ।'
'जी हां, बोलिए,' सहबाई ने कहा। 'ये चीजें कविता का नमक हैं।'
Navab Mirza began:
हे धर्मात्मा लोगो, यह उस गौरवशाली क्षमा से बहुत दूर नहीं है जिसमें शराबियों के पाप शराब में डूबकर विलीन हो जाते हैं!
मौलाना सहबाई को यह आयत नापसंद होने के बजाय पसंद आई। उनकी प्रशंसा देखकर मौलवी मुहम्मद नज़ीर हल्के से मुस्कुराए। अब नवाब मिर्ज़ा का हौसला और भी बढ़ गया। उन्होंने कहा, 'महोदय, मैंने इस विषय का एक और पहलू व्यक्त किया है।' उन्होंने यह आयत पढ़ी:
हे शेख, जो प्रेम की मदिरा को मना करता है, उसे मदिरा में भीगे हुए जूते से पीटा जाना चाहिए, और फिर से पीटा जाना चाहिए!
अब तो मौलवी मुहम्मद नाज़िर भी अपनी सीट से उछल पड़े। 'वाह, क्या ही चालाकी भरा औचित्य है, और शरिया के बिल्कुल अनुरूप है!'
सहबाई ने चतुराई से टिप्पणी की, 'और मानक प्रयोग के तौर पर 'पानी में भिगोया हुआ' कहने के बजाय 'शराब में भिगोया हुआ' कहना अपने आप में एक अलग ही तीखापन पैदा करता है।'
नवाब मिर्ज़ा ने अगली आयत पढ़ी:
मैं हमेशा शराबखाने के मालिक को निराश न करने का पूरा ध्यान रखता था। शराब छोड़ने से पहले भी मैं प्रशंसा का पात्र था।
'कितना रोचक!' सहबाई ने कहा। 'यह आयत सचमुच हकीम मोमिन साहब की शैली में है, यह कितनी अप्रत्यक्ष है। और सत्य भी है, क्योंकि किसी को निराश न करना एक पुण्य कर्म है।'
नवाब मिर्ज़ा ने कहा, 'मैं समापन श्लोक प्रस्तुत करता हूँ,' और उन्होंने उसका पाठ किया:
दाग, मुझसे बड़ा पापी कोई नहीं हो सकता: मेरे पाप स्वयं नरक के लिए भी पीड़ा का कारण हैं।
इस बात की सहबाई और मुहम्मद नज़ीर दोनों ने प्रशंसा की। सहबाई ने मन ही मन कहा: 'इस लड़के में कविता के लिए अद्भुत प्रतिभा है। अगर मेरा प्रस्ताव सफल हो जाए, तो हवेली का श्रेष्ठ सांस्कृतिक वातावरण और शिक्षा उसे नि:शुल्क उपलब्ध हो जाएगी, जिससे उसकी प्रतिभा और भी निखर उठेगी... सच है, आज फैज़ी और तोडर मल जैसे कवि नहीं हैं, लेकिन यह दरबार भी अपने अनमोल रत्नों का महत्व जानता है। ईश्वर राजा को सदा शांति प्रदान करें, तो यदि संभव हो तो वे अपने दरबार के कवियों और विद्वानों को माणिक और मोती जैसे अनमोल रत्नों से नवाज़ेंगे।'
नवाब मिर्ज़ा को आभास हो गया था कि मौलाना सहबाई को मौलवी नाज़िर के सामने अपना उद्देश्य बताने और दोनों के आपस में बातचीत करने के लिए एकांत की आवश्यकता होगी। उन्होंने सलाम किया और विदा ली। उनका दिल फ़ातिमा की एक झलक पाने के लिए तड़प रहा था, भले ही उनसे कुछ शब्द न हो सकें, लेकिन झलक पाने की भी कोई गुंजाइश नहीं थी, क्योंकि

वहाँ पर्दा पूरी तरह से लागू था: एक अजनबी पक्षी को भी अंदर आने की अनुमति नहीं थी, उन्होंने मन ही मन कड़वाहट से कहा। वे रुके, बंद दरवाजे की ओर प्यार से फुसफुसाए, 'अल्लाह आपकी रक्षा करे; कल मिलेंगे', और चले गए।

ज़नाना हवेली में, महिलाओं ने बेगम सहबाई के आने के कारण को छोड़कर लगभग हर विषय पर चर्चा की। फ़ातिमा की विवाह योग्य आयु का विषय बड़ी सहजता से उठा; नवाब मिर्ज़ा का ज़िक्र भी इशारों-इशारों में संभावित दूल्हे के रूप में किया गया। जब हर संभव विषय पर चर्चा समाप्त हो गई, तो बेगम सहबाई ने कहा, 'बहन, मैं यहाँ घंटों से बैठी हूँ, आपका समय बर्बाद कर रही हूँ। अल्लाह आपके घर को सलामत रखे, आपके पास बहुत काम होगा। मुझे नहीं पता कि मौलवी नाज़िर साहब अपने दौरे से लौटे हैं या नहीं। मुझे जाने की अनुमति आपसे लेनी चाहिए, जब वे और मेरे मौलाना जी अपनी संक्षिप्त बातचीत कर लेंगे।'

नहीं, नहीं। मैं ये सब नहीं सुनूंगी। तुम अभी-अभी आए हो, और अब जब आ ही गए हो, तो जाने से पहले हमारे सादे भोजन का आनंद ले लो। मेरे मौलवी साहब तो काफी देर पहले ही आ गए हैं। उन्हें पान और ठंडे पेय दिए जा चुके हैं। मियां नवाब मिर्जा अपनी कविताएं सुनाकर सबका मनोरंजन कर रहे हैं और खूब तालियां बटोर रहे हैं।' बारी बेगम ने अपने भतीजे की काव्य प्रतिभा के बारे में गर्व से बताया।

जी हाँ, बिल्कुल! कितना होनहार और प्यारा नौजवान है! अल्लाह उसे सलामत रखे।' सहबाई बीबी ने कुछ देर रुककर बारी बेगम के करीब झुककर लगभग फुसफुसाते हुए उनके कान में कहा, 'अकबरी खानम, कुछ ज़रूरी बात है। ध्यान से सुनिए!'

'जी हां। कृपया मुझे बताएं। मैं सुन रहा हूं।'

सहबाई बीबी और करीब आ गईं और दबी आवाज़ में बोलीं, 'छोटी के लिए हमारे पास एक शादी का प्रस्ताव है।'

अकबरी खानम को अपने कानों पर विश्वास नहीं हुआ। उनकी दिली तमन्ना थी कि छोटी की नाव किसी सुखदायक किनारे पर पहुंचे। लेकिन छोटी ने तो इस बात का ज़िक्र तक नहीं होने दिया। और उनके करीबी लोगों से बिल्कुल बाहर से प्रस्ताव आया, और वो भी मौलाना सहबाई के ज़रिए! क्या वो सपना देख रही थीं? छोटी की क्या प्रतिक्रिया होगी? शायद वो ज़ोरदार 'ना!' कहेंगी। बड़ी बेगम मन ही मन परेशान थीं; सिर्फ़ परेशान ही नहीं, बल्कि चिंतित भी। कुछ पल बाद बनावटी खुशी जताते हुए बोलीं, 'वाह वाह! ये तो बिल्कुल उस कहावत की तरह है: "मेरा दिल और ब्राह्मण की किताब एक ही बात कहती है!" छोटी के लिए इससे बड़ा सौभाग्य क्या हो सकता है कि आप उसके लिए प्रस्ताव लेकर आए हैं!'

'इस प्रस्ताव का स्रोत मैं नहीं हूँ, बीबी,' सहबाई बीबी की आवाज़ अभी भी काफी धीमी थी। उनकी आवाज़ और भी धीमी हो गई। 'हवेली से खबर आई है। हम तो बस संदेशवाहक हैं।'

बारी को अपने कानों पर विश्वास नहीं हुआ और वह अपनी आवाज को रोक नहीं पाई। 'हवेली? कौन सी हवेली? ये लोग कौन हैं?'

'अरे बीबी, शहर में सिर्फ एक ही हवेली है। वे शादी के प्रस्ताव नहीं भेजते। वे सिर्फ दूसरे पक्ष की सहमति पूछते हैं। एक बार यह हो जाने के बाद, बाकी बातें अपने आप आगे बढ़ जाती हैं।'

‘आपका मतलब...? आपका मतलब है कि ईश्वर की दहलीज की छाया से, यह किसी पूर्व संप्रभु के परिवार से है... या राज्य के किसी छोटे राजकुमार से?’
‘ठीक है, आप इसे मान सकते हैं।’ अब उसने भी फुसफुसाना बंद कर दिया। ‘अंतर सिर्फ इतना है कि साहिब-ए आलम व आलमीयन, मिर्ज़ा फखरू बहादुर, तीसरे उत्तराधिकारी, आपकी सबसे छोटी बहन पर मोहित हैं।’
मिर्ज़ा फ़खरू बहादुर, तीसरे उत्तराधिकारी! उसे छोटी की कही हुई बात याद आ गई—ऐसा लग रहा था जैसे सदियों पहले की बात हो: अगर मेरी किस्मत में कोई राजकुमार लिखा है, तो वह ज़रूर आएगा। मैं तुच्छ लोगों को प्रोत्साहित नहीं करती। और अब ऐसा लग रहा था जैसे ये शब्द सच हो रहे हों!
‘अरे, मेरी बहन, तुम मुझे इस तरह मुंह खोलकर क्यों घूर रही हो? कृपया कुछ कहो!’
सहबाई बेगम का दिल भी तेज़ी से धड़क रहा था। अगर उन्हें अस्वीकृति मिली, तो साहिब-ए-अलमियान के सामने उनकी इज़्ज़त चली जाएगी। मेरे पति को भी बहुत दुख होगा।
'बीबी, यह प्रस्ताव मुझे दिल से मंजूर है। लेकिन छोटी की सहमति के बिना मैं कुछ नहीं कह सकती। आजकल तो वो इन सब बातों में दिलचस्पी नहीं दिखा रही। तुम्हें पता ही है उसने अपने पिछले पति के साथ कितना दुख झेला है...'

यह देखकर कि बारी बेगम सैद्धांतिक रूप से कोई आपत्ति नहीं कर रही थीं, सहबाई बीबी ने मौके का फायदा उठाते हुए एक बार फिर वार किया। ‘ठीक है। अब आपको उन्हें यह समझाना होगा कि उनके दुख खत्म हो गए हैं। वह तीसरे युवराज की विवाहित पत्नी के रूप में किले पर राज करेंगी। और समय के बदलावों के बारे में कौन जानता है? कौन जानता है कि कल ही तीसरा युवराज राजा बन जाए, अल्लाह उन्हें सलामत रखे।’ वह खुशी से हंस पड़ीं। ‘तब आपकी बहन हिंदुस्तान की रानी के नाम से जानी जाएंगी!’
‘मैं हर तरह से तैयार हूँ, प्रिय बहन। मैं तुरंत छोटी के घर जाऊँगी। और मुझे अपने पति से भी पूछना चाहिए कि वह इस प्रस्ताव के बारे में क्या सोचते हैं।’
सहबाई बेगम ने कहा, ‘उनसे पूछिए। लेकिन आप ही उनकी सच्ची अभिभावक हैं, और यह मामला सीधे आपकी छोटी बहन से जुड़ा है। आपको उन्हें बताना होगा कि उन्हें अपना भला सोचना चाहिए—वास्तव में, यह उनका स्वयं और अपने बच्चों के प्रति परम कर्तव्य है। यह संसार निर्दयी और अंधा है। उन्हें इस पर सकारात्मक रूप से विचार करना चाहिए: राजकुमारियों को भी इतने अच्छे पति मिलने का सौभाग्य नहीं होता।’
मौलवी मुहम्मद नज़ीर को ज़नाना में प्रवेश करने के लिए पर्दा लगाया गया। उन्होंने एक अलग कमरे में अपनी पत्नी से चुपचाप सलाह मशवरा किया। थोड़ी देर बाद वे मुस्कुराते हुए बाहर आए। उन्होंने अपनी पत्नी से इतनी ऊँची आवाज़ में बात की कि सहबाई बेगम भी सुन सकें,
“ठीक है महोदया, मैं आपकी बात मौलाना सहबाई को बता दूँगा। बाकी सब अल्लाह के हाथ में है।”
जी हाँ, कृपया। आप हमारी ओर से मौलवी सहबाई जी से अच्छे परिणाम के लिए प्रार्थना करने

का अनुरोध करें।
‘अल्लाह की मर्ज़ी के मुताबिक हम सब नमाज़ पढ़ेंगे। निश्चिंत रहें।’
मौलवी मुहम्मद नज़ीर के ज़नाना छोड़ने के तुरंत बाद, सहबाई की बेगम अपनी जगह से उठीं और नमाज़ की चटाई पर खड़ी हो गईं, अपने ऊपरी दुपट्टे को बाहों पर फैलाए हुए, जैसे कोई भिखारी हो। उन्होंने ज़ोर से दुआ की, ‘या अल्लाह, तेरे प्यारे पैगंबर के नाम पर, इस मामले का संतोषजनक निपटारा कर। हमारी ज़ुबान और इज़्ज़त की रक्षा कर। छोटी बेगम को उनके नए रिश्ते में खुशहाल और समृद्ध बना।’
बारी बेगम की आँखों में आँसू आ गए। उन्होंने अपने ऊपरी दुपट्टे से उन्हें पोंछा, ज़ोर से 'आमीन' कहा और चंदन पाउडर की एक चुटकी लेकर सहबाई बेगम के बालों की बीच की मांग पर सोने की धूल की तरह छिड़क दी।
‘प्रिय बहन, इस नेक काम के लिए ईश्वर तुम्हें सर्वोच्च से भी अधिक पुरस्कार देगा।’ उसकी आँखों में फिर से नमी आ गई। ‘जीवन भर मैं तुम्हारे इस परोपकारी कार्य को याद रखूँगी, जो तुमने मेरे और मेरी बहन के प्रति किया है। यदि तुम्हारे और तुम्हारे परिवार के शुभ हाथ मेरी बहन के जीवन रूपी नौका का पतवार बनें, तो उसे कभी भी तूफ़ान और जहाज़ डूबने का डर नहीं रहेगा।’
‘बीबी, हम जो कर रहे हैं वह एक सामान्य मानवीय क्रिया मात्र है। इसमें परोपकार का कोई भाव नहीं है। बस यही प्रार्थना करें कि सब कुछ यथाशीघ्र अपने उचित अंजाम तक पहुँच जाए। आजकल ईर्ष्या का माहौल छाया हुआ है।’ फिर उन्होंने इधर-उधर देखा और धीमी आवाज़ में फिर बोलीं, ‘और ध्यान रहे, यह बात नवाब ज़ीनत महल के कानों तक कभी न पहुँचे।’
बारी बेगम ने धीमी आवाज़ में उत्तर दिया, 'हे बहन, हम उनसे बहुत नीचे हैं। हममें से कौन है जो उस उच्च द्वार तक यह खबर पहुंचा सके?'
‘चुप रहो! दीवारों के भी कान होते हैं! मुझे अब चलना चाहिए। तुम्हारे पति मेरे पति की मेहमाननवाजी करते-करते थक गए होंगे!’
नहीं, ऐसी कोई बात नहीं है। उनका हमेशा स्वागत है। मैं आज शाम ही पालकी में बैठकर छोटी के घर जाऊंगा।
इसलिए, अगले एक-दो दिनों में सब कुछ सुलझ जाना चाहिए। अच्छे कामों में देरी नहीं होनी चाहिए।
‘कोई देरी नहीं होगी। छोटी की सहमति ही काफी है।’
जी हां, बेशक यही सबसे महत्वपूर्ण बात है। हम भली-भांति जानते हैं कि उनका दिल शायद किसी और से ज़्यादा बुरी तरह टूटा और घायल हुआ है। लेकिन बीबी, आपको उन्हें यह बात स्पष्ट रूप से समझानी होगी: अल्लाह मियां उनके जीवन को एक नया मोड़ देना चाहते हैं। उन्हें अल्लाह की कृपा को ठुकराने का अपराध नहीं करना चाहिए।
सहबाई बेगम ने अपने शरीर पर चादर को सावधानीपूर्वक लपेटा, बारी बेगम को गले लगाया, सलाम किया और उस दरवाजे की ओर मुड़ गईं जहाँ पर्दा पूरी तरह से लगा हुआ था। उनके पति खुली पालकी में सवार थे; सहबाई बेगम ने भी सुरक्षित भाव से अपनी पालकी में प्रवेश किया। दोनों घर के लिए रवाना हो गए।

बारी बेगम ने प्रार्थना की चटाई पर बैठकर अपनी माला निकाली। माला जपने से पहले उन्होंने छोटी बेगम के घर जाने के लिए पालकी का इंतजाम करने का निर्देश दिया।

Chhoti Begam hears from Anwari Khanam, and consults Bai Ji sahib for a solution to her dilemma

वह एक महिला थीं: पूर्णता की प्रतीक। उन्होंने अपना पूरा जीवन शाहजहानाबाद शहर के ठीक बाहर, पुरानी ईद मस्जिद के पास एक फूस की झोपड़ी में बिताया। उनका असली नाम किसी को नहीं पता था, लोग उन्हें बाई जी कहकर पुकारते थे। बातचीत के दौरान, वह अक्सर कुरान की आयतें, विशेष रूप से कौसर नामक तीन आयतों वाला एक सौ आठवां अध्याय सुनाती थीं। अक्सर देखा जाता था कि जब कोई उनसे अपनी समस्या का समाधान या प्रश्न पूछने आता था, तो वह भेंट के रूप में लाए गए पैसों में से सत्तर कौड़ियाँ अलग कर लेती थीं। फिर वह उन कौड़ियों को सत्तर बार उठातीं और हर बार उन्हें ज़मीन पर रख देतीं। ऐसा करते हुए वह उसी अध्याय को भी सुनाती थीं। इसके बाद, वह अपने मन में जो प्रेरणा आती, वह पूछने वाले के प्रश्न का उत्तर देने या उसकी समस्या का समाधान करने के लिए कहतीं। और अब देखिए ईश्वरीय नियति की शक्ति: उस समय वह जो कुछ भी कहतीं, वह ठीक वैसा ही हो जाता था जैसा वह कहती थीं। लगभग एक वर्ष हो गया है जब वह इस नश्वर दुनिया से विदा हो गई थी।
बारी बेगम सूर्यास्त की नमाज़ से पहले छोटी के घर पहुँचने की उम्मीद कर रही थीं। संयोग से, खानम का बाज़ार पहुँचने से ठीक पहले, उनके पालकी उठाने वालों में से एक को अचानक पेट में तेज़ दर्द होने लगा। उसने पालकी सड़क के किनारे छोड़ दी और कमर झुकाकर उल्टी करने की कोशिश करने लगा। लेकिन जो लोग शारीरिक श्रम करके अपना पेट भरते हैं, वे ज़्यादा खा नहीं सकते। इसलिए पेट में जो भी तकलीफ थी, उसे बाहर निकालने के उसके सारे प्रयास व्यर्थ गए। पास की एक दुकान से किसी ने दवा लाकर उसकी मदद करने की कोशिश की। इससे कुछ असर हुआ और कुछ ही मिनटों में उसे थोड़ा आराम मिला, लेकिन पालकी उठाने की ताकत उसमें नहीं थी। तीनों पालकी उठाने वाले अकेले भारी पालकी नहीं उठा सकते थे, और ज़ाहिर है, तीन लोगों के साथ उसे संतुलित रखना भी बेहद मुश्किल था। इसलिए वह अपने घर चला गया और कमज़ोर आवाज़ में वादा किया कि जल्द ही किसी और को भेज देगा।
बारी बेगम पालकी में तीन भारवाहकों की निगरानी में बैठी रहीं, लेकिन देरी से परेशान थीं, उन्हें डर था कि कहीं वे सूर्यास्त की नमाज़ में शामिल न हो पाएँ। वे चिंतित और परेशान भी थीं, क्योंकि उन्हें आशंका थी कि यह अचानक रुकावट अपशगुन हो सकती है। ऐसा अक्सर नहीं होता था कि वे अपने घर की सुरक्षा से बाहर निकलकर कोई ऐसा काम करें जिसे सचमुच एक अभियान कहा जा सके: ऐसा काम, जिसे अगर सफलतापूर्वक पूरा किया जाए, तो उनकी अभागी छोटी बहन का भविष्य फिर से उज्ज्वल हो सके। उन्हें व्यस्त बाज़ार में फँसे रहना, एक तरह से तंग जगह में बंद रहना बिल्कुल पसंद नहीं था। लेकिन इंतज़ार करने के अलावा कोई चारा नहीं था।
आखिरकार, लगभग आधे घंटे में, एक नया व्यक्ति दौड़ता हुआ आया। चारों व्यक्ति तेज़ी से दौड़े और देखते ही देखते उसे छोटी के घर ले गए। वह अपनी बहन के दरवाजे पर थी जब हर जगह मुअज़्ज़िन अज़ान दे रहे थे; वज़ीर पानी के कमरे में वज़ू कर रही थी। बारी के आने की खबर

सुनते ही वह तुरंत बाहर आई: उसकी आस्तीनें ऊपर चढ़ी हुई थीं, उसकी कलाई और बांहें गीली होने के बावजूद बैंगनी लपटों की तरह चमक रही थीं; उसके माथे और ठोड़ी पर साफ पानी की बूंदों ने उसके शरीर का रंग ले लिया था और ऐसा लग रहा था जैसे फालसा फल से बना कोई स्वादिष्ट ठंडा पेय हो; उसकी लंबी पलकों पर कुछ बूँदें काँप रही थीं, मानो पलकों के जाल से उसके चेहरे के गुलाब के बगीचे को झाँक रही हों।

अकबरी खानम जब भी वज़ीर को देखतीं, तो उन्हें खुद को फिर से यह यकीन दिलाना पड़ता कि यह वही छोटी बेगम हैं जो सोलह साल की उम्र से पहले ही माँ बन गई थीं और जिनके सीने का बगीचा तब से एक नहीं बल्कि चार गुलाबों से सजा हुआ था, अल्लाह उन्हें और उन्हें सलामत रखे। और ऐसा सिर्फ इसलिए नहीं था कि बारी उनसे कुछ साल बड़ी थीं और वज़ीर को बचपन में अपने माता-पिता के घर में पली-बढ़ी छोटी बच्ची के रूप में देखती थीं। दरअसल, उनके बीच उम्र का अंतर इतना ज़्यादा नहीं था। अंतर ज़रूर था; और उस ज़माने की संस्कृति और समाज में उम्र के अंतर को, चाहे वह कितना भी कम क्यों न हो, बहुत महत्व दिया जाता था, और वज़ीर हमेशा उस अंतर का यथासंभव सम्मान करती थीं। लेकिन वज़ीर के बगीचे की रौनक हमेशा वैसी ही क्यों नहीं रहती थी? बारी के पास इसका कोई जवाब नहीं था। इसलिए उन्हें इसे ईश्वर की शक्ति के चमत्कारों में से एक चमत्कार मानकर स्वीकार करना पड़ा। और उनकी युवा सुंदरता के साथ-साथ उनके व्यक्तित्व में एक गरिमा और ऊर्जा का भाव समाया हुआ था; वह इतनी आकर्षक थीं कि विलियम फ्रेजर जैसे शातिर और धूर्त व्यक्ति को भी चकित कर देती थीं। अकबरी खानम ऐसी किसी और स्त्री को नहीं जानती थीं जिन पर गरिमा, आत्म-जागरूकता, शालीनता और आत्मसम्मान की भावना किसी गर्म दोपहर में हल्की फुहार की तरह बरसती हो। यह स्पष्ट था कि वह कोई साधारण सुंदरता नहीं थीं: कोई भी पुरुष उन्हें दबा नहीं सकता था; उनकी आत्मनिर्भरता और नारी चेतना किसी मजबूत दीवार की तरह थी। अनिश्चितता या बचाव की कोई गुंजाइश नहीं थी।

उस शाम भी, अकबरी खानम ने सहज भाव से अपने मन में पैगंबर मुहम्मद को सलाम किया: किसी सुंदर व्यक्ति या वस्तु को दी जाने वाली सबसे बड़ी श्रद्धांजलि। जब वज़ीर ने अपने दरवाजे पर बारी बाजी को देखा, जिनकी दया और स्नेह के लिए वह हमेशा तरसती रही थी, तो वह खुशी से अभिभूत हो गई। सारी झिझक छोड़कर, उसने उन्हें कसकर गले लगाया, असीम स्नेह और आदर से उनकी ओर देखा और कहा, 'हे अल्लाह, बारी बाजी! आप मेरे साधारण दरवाजे पर कैसे आ गईं? यह मेरे लिए बहुत बड़ा सौभाग्य है, लेकिन आप मुझे आने के लिए कह सकती थीं! आप आमतौर पर कहीं बाहर नहीं जातीं, खासकर ऐसे समय में जब रात और दिन एक हो रहे हों।'

‘बस करो, बस करो! चुप हो जाओ, नन्हे बच्चे। पहले अपना प्यारा सा चेहरा देखो।’ बारी ने वज़ीर पर विपत्ति आने से रोकने के लिए ऐसा किया और आगे कहा, ‘इतना प्यारा चेहरा कौन नहीं देखना चाहेगा? चलो अब नमाज़ पढ़ते हैं, फिर गपशप करने का समय मिलेगा।’

लेकिन आप यहाँ अचानक कैसे आ गईं? क्या सब ठीक है? क्या आपके पति या फातिमा... ठीक हैं?

‘हे स्त्री, तुम खूब खिलखिला रही हो! सब ठीक है, प्रिये। पहले मुझे स्नान कर लेने दो और नमाज़ पढ़ लेने दो, समय कम होता जा रहा है।’
हबीब-उन निसा पानी से भरा एक बड़ा पीतल का बर्तन लेकर जल्दी से अंदर आईं। उन्होंने सलाम किया और कहा कि बारी बेगम को पानी वाले कमरे में जाने की ज़रूरत नहीं है, वह आँगन में ही वज़ू कर सकती हैं और बरामदे में नमाज़ पढ़ सकती हैं, जहाँ उनके लिए सब कुछ तैयार है।
‘बेगम साहब, आप यहीं नमाज़ पढ़ लीजिए, तब तक मैं आपके लिए एक ठंडा पेय तैयार रखूंगी।’
‘हम ठंडे पेय के बारे में देखेंगे, हबीबा,’ बारी बेगम ने मुस्कुराते हुए कहा, ‘लेकिन हाँ, मुझे यहीं वज़ू और नमाज़ करने दीजिए।’

वज़ीर ने जैसे ही अपनी नमाज़ पूरी की, वह हबीबा को चाय व अन्य चीज़ों का इंतज़ाम करने के लिए बुलाने ही वाली थी कि बारी बेगम ने आँख के इशारे से उसे रुकने को कहा और कमरे में जाने का संकेत दिया। बारी बेगम एक मिनट में उसके पीछे गई और अंदर जाते ही उसने दरवाज़ा बंद कर दिया और कुंडी लगा दी।
‘कृपया, सब ठीक है ना, बारी बाजी? आप…’
‘चुप रहो!’ बारी बेगम ने गुस्से से फुसफुसाते हुए वज़ीर को अपने करीब खींचते हुए कहा। ‘अब ध्यान से सुनो। और अभी किसी को मत बताना!’
वज़ीर की बड़ी-बड़ी, गहरे भूरे रंग की आँखें उलझन से भरी थीं। लेकिन वह आज्ञाकारी होकर अपनी बड़ी बहन के बगल में बैठ गई। बारी बेगम कुछ पल चुप रहीं, मानो साँस लेने की कोशिश कर रही हों। फिर उन्होंने वज़ीर को पूरी कहानी सुनाई। उनके वर्णन में उनका सामान्य आत्मविश्वास और प्रवाह नहीं था; यह धीमा और सावधानी भरा था, ठीक वैसे ही जैसे कोई स्वयं कुरान पढ़ रहा हो। उन्हें चिंता थी कि छोटी विवाह प्रस्ताव स्वीकार न करे और ज़्यादा से ज़्यादा नवाब शम्सुद्दीन अहमद के साथ हुए संबंध जैसी ही किसी व्यवस्था के लिए राज़ी हो जाए। उन्हें नहीं पता था कि वज़ीर किसी भी कीमत पर शम्सुद्दीन अहमद से विवाह करने को तैयार थे, और वह उनसे विवाह करना चाहती थीं। अनवरी खानम को दूसरा डर यह था कि वज़ीर न केवल विवाह से, बल्कि तीसरे उत्तराधिकारी से किसी भी प्रकार के संबंध से भी इनकार कर दें। वह कह सकती थीं कि उनका हृदय ऐसी बातों से भर चुका है और अब और नहीं।
दूसरी ओर, वज़ीर अपने ही विचारों में खोई हुई थी। इससे बारी के मन में और भी भय उत्पन्न हो गया। ईश्वर ही जाने वह कैसा समय था, शुभ था या अशुभ, जब उसने इस परियोजना को स्वीकार किया। वास्तव में, वज़ीर अपने बेटों को लेकर बहुत चिंतित थी: विवाह प्रस्ताव में उनके भविष्य के बारे में कुछ भी नहीं लिखा था। वह तय नहीं कर पा रही थी कि बेटों का प्रश्न विवाह प्रस्ताव स्वीकार करने से पहले उठाए या बाद में। यह तथ्य कि उसकी उम्र—उस समय के मानकों के अनुसार अधेड़ उम्र—में भी वह एक गंभीर प्रेमी को आकर्षित कर सकती थी, और वह प्रेमी तीसरा उत्तराधिकारी था, उसके लिए किसी भी प्रकार की संतुष्टि या गर्व का कारण नहीं था। वह अपने आकर्षण के बारे में भली-भांति जानती थी और उसे यह भी पता था कि उसकी सुंदरता महीनों और दिनों की सीमाओं में नहीं बंधी है। वह यह भी जानती थी कि सुंदरता केवल सुडौल

शरीर और सुंदर चेहरे तक ही सीमित नहीं होती।
‘बीबी, कुछ तो बोलो। तुम्हें घर पसंद नहीं है या परिवार?’ बारी ने स्थिति में थोड़ा हास्य जोड़ने की कोशिश की।
अंततः, वज़ीर ने चुप्पी तोड़ी, 'बारी बाजी, आपने मेरे लिए जो अच्छे काम किए हैं, उनके लिए मैं आपका एहसान नहीं चुका सकता...'

बड़ी बेगम अब सचमुच बेचैन हो गई थीं। ऐसा लग रहा था जैसे यह अस्वीकृति का संकेत हो। वह बीच में टोकना चाहती थीं, लेकिन छोटी ने हाथ उठाकर उन्हें रोक दिया और बोलीं, 'ऐसा प्रस्ताव कौन ठुकराएगा? यह मेरा सौभाग्य है और आपका प्यार और चिंता है कि आप मुझे इसके योग्य समझती हैं। लेकिन मुझे विचार करने के लिए कुछ समय चाहिए। इतनी बड़ी खुशखबरी सुनकर मेरा दिल बैठ गया है।'
“प्यारी नन्ही बहन, ये दिल डूबने की बात क्या है? तुम्हारे सामने एक पूरा, विशाल और अकेला जीवन पड़ा है। अब कोई है जो उन खाईयों से भरी सड़कों पर चलते हुए तुम्हारा हाथ थामना चाहता है। और वो कौन हो सकता है? हिंदुस्तान राज्य का राजकुमार, जो राजा भी हो सकता है। इसलिए सोच-विचार करने के लिए समय लो, लेकिन डरने या हिम्मत हारने का कोई कारण नहीं है।”
वज़ीर ने गहरी साँस ली और हकीम मोमिन खान की कविता की ये पंक्तियाँ सुनाईं:

मैं यहाँ हूँ, असीम पश्चाताप से भरा हुआ।

उसने आगे कहा, 'कौन जानता है कि मेरे लिए और क्या लिखा है, कितने जुड़ाव और कितने टूटना तय है।'
‘आगे क्या होगा, यह तो सिर्फ अल्लाह ही जानता है। हम इतना ही कह सकते हैं कि हमारे सामने जो कुछ भी है, वह स्पष्ट रूप से एक अच्छे भविष्य की उम्मीदों से भरा हुआ है।’
हाँ, लेकिन जब मुश्किल घड़ी आई, तो मेरे सारे सुनहरे सपने धूमिल हो गए। खैर, ये शिकायतें तो भगवान से ही करनी चाहिए, और ये सिर्फ एक पल की बात नहीं, बल्कि पूरी जिंदगी की बात है। आप सही हो सकते हैं। इस साझेदारी में कुछ अच्छा भी छिपा हो सकता है। हे भगवान! हे मेरे भगवान! मैं क्या करूँ?
वह लगभग रोने ही वाली थी। अगर बारी को उम्मीद थी कि तीसरे उत्तराधिकारी की पत्नी बनने की संभावना पर वज़ीर बहुत खुश होगा, तो वह गलत थी। वज़ीर की प्रतिक्रिया और उसकी मनस्थिति देखकर वह बहुत निराश हुई। लेकिन निराशा और हताशा के साथ-साथ उसे यह डर भी सता रहा था कि वज़ीर का अतीत—लगभग सफलताओं से भरा और असफलता के कड़वे घूंटों से भरा, जो उसे तब लगे जब वह कामयाबी के कगार पर थी—शायद उसे जीवन का एक और नया सफर शुरू करने से रोक दे। वह कुछ सोच-समझकर जवाब देना चाहती थी कि वज़ीर ने उसे बीच में ही रोक दिया और उदास स्वर में पूछा, 'बारी बाजी, मेरे बच्चों का क्या होगा? क्या मैं अपने घर को वैवाहिक जीवन के शोर-शराबे से भर दूं और अपने बच्चों से मुंह मोड़ लूं, उन्हें बेसहारा छोड़ दूं? मैं ऐसा कैसे कर सकता हूं?'

हम इन सब बातों पर विचार करेंगे। उन्होंने बच्चों के बारे में कोई शर्त नहीं रखी है। लेकिन अगर वे रखते भी हैं, तो क्या फर्क पड़ता है? नवाब मिर्ज़ा, अल्लाह उन्हें सलामत रखे, जल्द ही शादी कर लेंगे और अपने घर में रहेंगे। जहाँ तक शाह मुहम्मद आगा की बात है, मैं उन्हें खुशी-खुशी अपने घर में रख लूँगा और उनकी परवरिश करूँगा।

नहीं। क्या यह मेरा भाग्य है या मेरे जीवन का कोई कर्तव्य है कि मैं हमेशा अपने बच्चों को त्याग दूं? आप स्वयं कहते हैं कि नवाब मिर्ज़ा अब विवाह योग्य आयु का हो गया है। तो मुझ जैसी बूढ़ी औरत के लिए यह कैसे उचित है कि मेरे घर में एक जवान अविवाहित पुत्र रहे और मैं स्वयं विवाह समारोह मनाऊं?

"बच्ची, तुम कोई बूढ़ी औरत नहीं हो। न ही तुम किसी ऐसे विवाह का जश्न मना रही हो जिसमें प्रोथैलामियन संगीत रचा जा रहा हो और ढोल-नगाड़ों के साथ जुलूस निकाला जा रहा हो। क्या तुम्हें लगता है कि अगर तुम बूढ़ी औरत होती तो राज्य का कोई उत्तराधिकारी तुम्हें चाहता? और कुरान की छाया में पालकी में सवार होकर, आँसू भरी विदाई के साथ औपचारिक रूप से विदा होना, जबकि पृष्ठभूमि में घर-बार से बिछड़ने के दुख भरे गीत और अपने जीवनसाथी के साथ मिलन के मधुर, चंचल गीत गाए जा रहे हों: ये सब तुम्हारे लिए नहीं हैं। बात बस इतनी है कि ईश्वर तुम्हारे लिए एक नया रास्ता खोल रहा है, एक ऐसा रास्ता जो तुम्हें सीधे लाहौरी द्वार से हवेली तक ले जाएगा।"

फिर भी, मुझे नवाब मिर्जा से बात करनी होगी।

'उनसे बात जरूर करो। नवाब मिर्जा की सहमति के बिना तुम्हारा कोई भी काम, कोई भी नया कदम तुम्हारे लिए उचित नहीं होगा। अब, उस दूसरी बात के बारे में...' बारी बेगम अचानक रुक गईं।

'वह दूसरी चीज क्या है, बारी बाजी?' बुजुर्ग महिला की चुप्पी देखकर वजीर ने उससे पूछा।

अकबरी खानम नवाब मिर्ज़ा को बहुत पसंद करती थीं। उन्हें इस बात का भी अच्छा-खासा आभास था कि फातिमा भी उन्हें पसंद करती हैं, और यह बात उन्हें स्पष्ट रूप से ज्ञात थी कि नवाब मिर्ज़ा फातिमा से बेहद प्यार करते थे। शायद छोटी भी नवाब मिर्ज़ा के दिल की हालत से अनजान नहीं थीं। फिर भी, बड़ी बेगम स्वयं लड़के-लड़की के विवाह की दिशा में कोई पहल नहीं कर सकीं। विवाह के प्रस्ताव हमेशा भावी दूल्हे के परिवार से ही आते थे। अधिकांश सभ्य परिवारों में, लड़की के माता-पिता दूल्हा चुनने और विवाह का प्रस्ताव रखने की बजाय स्वयं मृत्यु और बेटी के लिए कुंवारेपन को प्राथमिकता देते थे, और इस तरह की बातचीत तो दूर की बात है। यहाँ एक कुछ असामान्य समस्या थी: बड़ी बेगम के लिए छोटी को मिर्ज़ा फखरू से विवाह के लिए राजी करना महत्वपूर्ण था; इस मोड़ पर, बारी बेगम के लिए नवाब मिर्ज़ा को अपने भावी दामाद के रूप में कुछ कहना और भी कठिन हो गया था, हालाँकि इससे वज़ीर के विवाह प्रस्ताव को स्वीकार न करने की एक बड़ी समस्या हल हो सकती थी। उन्हें थोड़ी झुंझलाहट हुई; छोटी के मन में क्या बंधन था, कौन सी झिझक छोटी को नवाब मिर्ज़ा के फ़ातिमा का पति बनने की संभावना के बारे में एक शब्द भी कहने से रोक रही थी?

संकोच भरी और हिचकिचाती हुई आवाज़ में उसने कहा, 'अरे, और कुछ नहीं, सच में। मैं नवाब मिर्ज़ा के बारे में ही सोच रही थी। अब उनके विवाह समारोह का आयोजन करने का समय आ गया है ताकि वे अपने दम पर एक व्यवस्थित और ज़िम्मेदार जीवन जी सकें।'
अब वज़ीर की बारी थी हिचकिचाने की। कुछ पल की चुप्पी के बाद उसने कहा, 'दरअसल, मेरा मन तो इस बारे में बहुत सोचता है। मैं अक्सर इसके बारे में सोचती हूँ, लेकिन... मुझे लगता है कि मुझे नवाब मिर्ज़ा के लिए कोई उपयुक्त नौकरी मिलने का इंतज़ार करना चाहिए, उसके बाद ही मैं फ़ातिमा के बारे में आपसे बात करूँगी।'
अब बारी बेगम को ऐसा लगा जैसे उसे नया जीवन मिल गया हो। अब उसके पास इस मामले को आगे बढ़ाने का एक उपयुक्त अवसर था। 'खैर, मैं भावी दूल्हे में अच्छे परिवार, अच्छे आचरण और प्रेमपूर्ण स्वभाव को देखना पसंद करती हूँ। जहाँ तक आजीविका के साधनों की बात है, ईश्वर ने हम सभी के लिए पर्याप्त से अधिक दिया है।'
वज़ीर का चेहरा खिल उठा। 'तो आपको लगता है कि मेरे बेटे के लिए शादी से पहले जीविका कमाना ज़रूरी नहीं है?'
'मैंने आपको पहले ही बता दिया है कि हम क्या चाहते हैं, बीबी। नवाब मिर्ज़ा उतना ही हमारा बेटा है जितना आपका, और फ़ातिमा उतनी ही आपकी बेटी है जितनी हमारी। घर नहीं बदलेंगे, दिलों में कोई बदलाव नहीं आएगा। मुझे बस अपने मौलवी साहब से बात करनी है। उन्हें मनाना कोई मुश्किल काम नहीं होगा!' अब, आख़िरकार, बारी बेगम अपनी खास हंसी हंस पड़ीं, ऐसी हंसी जिसकी कल्पना केवल वही लोग कर सकते हैं जिन्होंने लंबी गर्दन वाले कलश से शराब उड़ेलने की आवाज़ सुनी हो। उन्होंने आगे कहा, 'लेकिन कम से कम आपकी तरफ से एक फ़ोन तो आ जाए। हम जवाब देंगे और बिना देर किए स्वीकार कर लेंगे!'
जी हां, बारी बाजी, निःसंदेह। मैं फातिमा को अपनी जान से भी ज्यादा प्रिय मानता हूं। और मुझे लगता है कि नवाब मिर्जा भी बहुत प्रसन्न होंगे। बस मुझमें हिम्मत नहीं हुई। अल्लाह आपको सलामत रखे, आपने मेरे दिल से बहुत बड़ा बोझ उतार दिया है।
अकबरी खानम ने वज़ीर की सभी विपत्तियों को दूर करने का संकेत दोहराया और अत्यंत भावुक होकर कहा, "मेरे बच्चे, ईश्वर तुम्हें सदा सुख प्रदान करे। तुम जो भी कहो और करो, वह वसंत ऋतु के खिलने की तरह सत्य हो जाए और उसकी अच्छाई चंपक के फूलों की सुगंध की तरह दूर-दूर तक फैले। अल्लाह की मर्ज़ी से, दोनों विवाहों का विचार बहुत जल्द साकार हो जाएगा।"

लेकिन बारी बाजी, मुझे अभी भी सोचने और नवाब मिर्जा से बात करने के लिए कुछ समय चाहिए।
तो फिर कौन तुमसे कह रहा है कि तुम अभी इसी वक्त शादी का अनुबंध करवा लो, मूर्ख? अपने आप को काबू में रखो और जितना हो सके अपने दिल को तसल्ली दो। मैं एक-दो दिन में फिर आऊंगा।
'और बारी बाजी...'
'हां, मुझे बाकी सब कुछ बताओ। तुम्हारे सारे संदेह दूर हो जाएं।'

मैं शाह मोहम्मद आगा और नवाब मिर्जा को पीछे नहीं छोड़ूंगा।
‘मुझे लगता है कि अभी इस बारे में चिंता करना जल्दबाजी होगी। आपकी सभी शर्तें हवेली को पूरी ईमानदारी से बता दी जाएंगी। लेकिन पहले आपको अपना मन दृढ़ और इरादा स्पष्ट कर लेना चाहिए।’
'बिल्कुल सही। और मुझे पता है कि तुम हमेशा मेरे लिए सबसे अच्छा करोगे।'
अकबरी खानम अपनी पालकी में घर लौट आईं। वज़ीर ने हबीबा को अपने शयनकक्ष में आने को कहा। जब वह अंदर आईं, तो वज़ीर ने बिना किसी भूमिका के प्रश्नवाचक स्वर में पूछा, 'साहिब-ए आलम मिर्ज़ा फतहुल मुल्क बहादुर? उनका क्या हुआ?'
‘आपका मतलब मिर्ज़ा फ़खरू से है? जी हाँ, खानम साहब। उनके बारे में तो सब जानते ही हैं। कहते हैं कि वे अपने रूप और व्यवहार में ईश्वर की परछाईं जैसे लगते हैं...’ हबीबा धीरे से और थोड़ी शरमाते हुए हँसी। ‘लेकिन एक बात में नहीं।’
‘तो यह क्या हो सकता है?’ वज़ीर थोड़ा घबरा गया।
इस बार हबीबा खुलकर हंसी। ‘अरे, बात तो ये है कि ईश्वर की परछाई को शादियां करने का बहुत शौक है। इसके उलट, फथुल मुल्क बहादुर की सिर्फ एक ही पत्नी थी, और उन्होंने उसकी मृत्यु के बाद ही दूसरी शादी की। कहा जाता है कि वो अपनी दूसरी पत्नी से ज्यादा खुश नहीं हैं, लेकिन फिर भी उनकी नजर कहीं और नहीं है। उन्हें कविता का शौक है और संगीत का तो बहुत ही शौक है। मैंने सुना है कि उन्होंने ख्याल गायकों के लिए कुछ बिल्कुल नए गाने लिखे हैं।’
‘क्या वो... मेरा मतलब है, क्या उसे लड़कों की संगति पसंद है?’ वज़ीर शरमा रहा था।
‘उही अल्लाह! अल्लाह का नाम लो, खानम साहब। वे अत्यंत नेक हैं। वे दिन की पाँचों नमाज़ें नहीं छोड़ते और मुहर्रम के मातम के दिनों में तीस हज़ारी में मुफ्त पानी और ठंडे पेय की व्यवस्था भी करते हैं। वे निश्चित रूप से लूत के लोगों में से नहीं हैं!’
'खैर, मैंने सुना है कि किले में रहने वालों के पास पतंग उड़ाने, बटेरों की लड़ाई आयोजित करने और कौड़ियों से खेलने या पचीसी खेलने के अलावा और कुछ करने को नहीं है।'

‘खानम साहब, आखिर ये एक ही घर, एक ही कुल है। ये एक ही तवे पर बनी चपातियों की तरह है: कुछ मोटी, कुछ पतली। अब जब उनके पास शासन करने के लिए कोई राज्य नहीं बचा है, तो वे क्या करेंगे? ईश्वर ने पाँचों उंगलियों को बराबर नहीं बनाया। मैंने सुना है कि फथुल मुल्क बहादुर पैगंबर को सलाम किए बिना और कुरान से फातिहा पढ़े बिना कोई काम शुरू नहीं करते।’
‘हबीबा, तुम्हें ये सब कैसे पता है?’
“ओह, ये कोई राज़ नहीं हैं, खानम साहब। दिल्ली में हर कोई इतना तो जानता ही है। फथुल मुल्क बहादुर शहर के लोगों से दूसरे राजकुमारों से कहीं ज़्यादा मिलते-जुलते हैं। यहाँ तक कि उनके फिरंगियों से भी अच्छे संबंध हैं: मौत उन्हें ले जाए! लेकिन आप उनके बारे में क्यों जानना चाहते हैं, खानम साहब?”
‘मैं...मैं बहुत बड़ी मुसीबत में हूँ, हबीबा।’
हबीबा का दिल ज़ोर से धड़कने लगा और गले में अटक गया। ये क्या हो सकता है? तीसरे

उत्तराधिकारी से इसका क्या संबंध है? वज़ीर के जीवन का हर पल उसके लिए खुला था। वज़ीर का किसी से कोई वास्ता नहीं था। संबंध या समझौता तो दूर की बात थी; वह शहर के किसी भी प्रतिष्ठित व्यक्ति से परिचित नहीं थी, सिवाय शायद ज़ियाउद्दीन अहमद खान के, अगर उन्हें परिचित कहा जा सकता है। क्या ज़ियाउद्दीन अहमद खान, मिर्ज़ा फतहुल मुल्क बहादुर के ज़रिए उस पर दबाव डाल रहे हैं? हबीबा की चिंता और बढ़ गई जब उसने देखा कि वज़ीर नीचे देख रहे हैं और उससे नज़रें मिलाने को तैयार नहीं हैं। शायद यह उसकी इज़्ज़त से जुड़ा कुछ हो? ... भगवान न करे! काश ऐसा न हो, इतना दूर हो जितना समुद्र पार की कोई बात! या क्या उसे लगता है कि वह, हबीबा, इस मामले में उसकी कोई मदद नहीं कर सकती? उसने सोच-समझकर, सावधानी से और विचारपूर्वक कहा: 'मैं आपके लिए अपनी जान कुर्बान कर दूँ। खानम साहब, कृपया हिम्मत रखिए। सभी मुश्किलों को हल करने वाले मौला अली को याद रखिए।' मौला अली सब कुछ आसान कर देंगे। अगर मैं कुछ कर सकता हूँ, तो आपका वचन ही मेरे लिए आदेश है।

वज़ीर को एहसास हुआ कि शायद उसके शब्द और बोलने का तरीका दोनों ही सनसनीखेज थे, या कम से कम अचानक और अप्रत्याशित थे। अनजाने में ही उसने हबीबा को डरा दिया था, हालांकि असल में वह एक अनजान और अवर्णनीय डर से कांप रही थी। उसने सच बताने का फैसला किया, 'नहीं... हबीबा, ऐसी कोई गंभीर बात नहीं है। बस मुझे सही जवाब नहीं मिल रहा है। दरअसल... मिर्ज़ा फतहुल मुल्क बहादुर, मतलब साहिब-ए आलम मिर्ज़ा फतहुल मुल्क बहादुर, उन्होंने मुझसे शादी करने की इच्छा जताई है।'

हबीबा के शरीर में एक सिहरन दौड़ गई। वह लड़खड़ा गई और अगर उसने सहारा लेने के लिए वज़ीर के पलंग पर हाथ न रखे होते तो गिर ही जाती। साहिब-ए आलम मिर्ज़ा फ़तहुल मुल्क बहादुर! यही तो है अपने सुप्त भाग्य का जागना! मान-सम्मान में वृद्धि; चिंताओं और दुखों से मुक्ति; हिंद की धरती के हृदय में शांति के दिन-रात! जो कहते हैं वह सच है: जब ईश्वर देना चाहता है, तो वह किसी की छप्पर की छत को भी चीरकर सोना-चांदी बरसाता है।

उसके मन में एक विहंगम दृश्य खुल गया: केसरिया और गेरू रंग से रंगे पर्वतीय शरीर वाले हाथियों के विशाल माथे, जो चांदी की बिंदियों से जगमगा रहे थे; उनके शरीर बिलोन की कमरबंदों और सिर के मुकुटों से सुशोभित थे, जो अतिरिक्त सोने और चांदी के धागों से भारी हो गए थे; हाथियों के विशाल शरीरों को ढकने वाले रेशमी कोटों से चांदी और सोने के गुच्छे लटक रहे थे; उनकी चौड़ी पीठ पर चांदी के हौदे; प्रत्येक हाथी के साथ एक महावत था जो सोने या चांदी का अंकुश लिए अपने हाथी को कुशलतापूर्वक चला रहा था; सबसे आगे के हाथी चमकदार पोशाक में राजकुमारों को ले जा रहे थे, उनके पीछे राज्य के रईसों और उच्च अधिकारियों को ले जाने वाले हाथी थे; सबसे आगे, सबसे ऊँचा हाथी, जिसके दांत भारी, ठोस सोने के कंगनों से सजे थे, उसकी गर्दन से एक बड़ी चांदी की घंटी लटक रही थी; उसकी पीठ पर सबसे शानदार हौदे में, एक चांदी की छतरी के नीचे, जो स्वयं एक विशाल, जकूज़ी चंदोवे की छाया में थी, राजा बैठा था जिसका मंडप आकाश जितना ऊँचा था; हौदे में बादशाह के सामने जामी मस्जिद के इमाम सैयद मुहम्मद शाह बुखारी विराजमान थे; बादशाह के पीछे हौदे में मोर पंखों के भारी पंखे

लिए दो पंखेदार खड़े थे; लाल कपड़े से ढके, हाथों में भाले या लाठी लिए युद्धगीत गाने वालों का एक अग्रिम दस्ता था, जो गर्जनापूर्ण स्वर में वीरता की कविताएँ सुना रहे थे। उनके पीछे पूर्णतया सशस्त्र घुड़सवारों की कई पंक्तियाँ थीं। ठीक पीछे, और बादशाह से थोड़ा हटकर, धर्म के रक्षक, एक और हाथी था, जिस पर सोने और चांदी की अंगूठियों से भरी टोकरियाँ लदी थीं, जिन्हें दर्शकों और गरीबों में बाँटा जाना था; जमशेद की शान, बादशाह के ठीक पीछे, एक हाथी था, जिसने चमकीला नीला ब्रोकेड कोट पहना था; उस हाथी पर दूल्हा सवार था; उसका वस्त्र भव्य था, उसके गहने चमकदार, लगभग दीप्तिमान थे; उसके सिर पर विवाह की एक भारी औपचारिक माला, सिहरा थी; यह उसकी गर्दन और सामने के हिस्से को ढकती थी और लगभग उसके पैरों तक लटकती थी। वह सोने और चांदी के धागों से गुंथे लाल गुलाबों की लंबी मालाओं और मोतियों की एक माला से सुशोभित हैं। क्या यह साहिब-ए आलम मिर्जा मुहम्मद सुल्तान गुलाम फखरुद्दीन फथुल मुल्क बहादुर तृतीय उत्तराधिकारी की विवाह यात्रा है, और क्या यह मेरे खानम साहब के दरवाजे की ओर बढ़ रही है?

'क्या हुआ? हबीब-उन निसा, तुम कहाँ खो गई हो?' वज़ीर की आवाज़ हबीब-उन निसा के कानों में ऐसे पड़ी जैसे वो सो रही हो और कोई दूर से उसे पुकार रहा हो। 'मैं साँस लेने के लिए तड़प रही हूँ, लेकिन तुम साँस रोके हुए हो!' वज़ीर की आवाज़ में हल्की सी हँसी थी।

'मैं आपसे क्षमा मांगता हूँ, और ईश्वर से भी क्षमा चाहता हूँ,' हबीब-उन निसा ने लज्जित होकर कहा। 'लगता है मैं अपना होश ही खो बैठा हूँ। पहले आपने मुझे डरा दिया, और फिर आपने ऐसी खुशखबरी सुनाई कि मैं बिल्कुल स्तब्ध रह गया!'

'जाओ, अपना काम करो!' वज़ीर ने थोड़ा चिढ़ते हुए जवाब दिया। 'तुम्हें स्तब्ध होने की कोई वजह नहीं है। असल में मैं ही लगभग हताश हो चुका हूँ।'

'खानम साहब, आपको क्यों परेशान होना चाहिए?' हबीबा हिचकिचाते हुए वज़ीर के करीब आईं और उन्होंने वह इशारा किया जिससे यह संकेत मिलता था कि जो भी मुसीबत आए, वह सब उन पर आ जाएगी। 'आपको ऐसा वर मिलने वाला है, जो पूरे दिल्ली के लिए ईर्ष्या का कारण बनेगा, और यहाँ तक कि सबसे सम्मानित राजकुमारियाँ भी ईर्ष्या करेंगी। अल्लाह आपको सलामत रखे, अब आपकी किस्मत बदलने वाली है, और इस तरह बदलेगी कि क़यामत तक आपको किसी चीज की कमी नहीं होगी, जैसा कि अल्लाह चाहेगा।'

वज़ीर अब स्पष्ट रूप से परेशान था। 'हबीब-उन निसा बेगम, तुम्हें हर जगह सिर्फ हरियाली ही हरियाली दिखती है, जैसे बारिश के मौसम में कोई अंधा हो गया हो। अगर तुम किसी और की आँखों से देखो, तो तुम्हें चीजों का असली रंग दिखाई देगा!'

हबीब-उन निसा अब सचमुच असमंजस में थी। उसने मुंह फुलाकर गंभीरता से पूछा, 'मैंने अपनी जान आपके लिए कुर्बान कर दी। मुझे समझ नहीं आया।'

'अरे, तुम मूर्ख! क्या अब मैं उस उम्र का हो गया हूँ कि अपने लिए जीवनसाथी ढूंढूँ, या फिर नवाब मिर्ज़ा की दुल्हन के रूप में चाँद जैसी सुंदरी को घर लाऊँ?'

'प्लीज़। आप इतनी बूढ़ी नहीं हैं! अरे, आप तो हर महीने फूल लाती हैं—'

'बस करो, बस करो!' वज़ीर लगभग शर्म से लाल हो गया। 'मुझे ऐसी बातें पसंद नहीं हैं...

सोचो, दुनिया क्या कहेगी? और ये रईस लोग तो बेवफ़ा होते ही हैं। कौन जाने, शायद वो किसी और औरत को ले आए... और मैं अपने मुहम्मद आगा को पीछे नहीं छोड़ूंगा! हवेली भाड़ में जाए। मैं अपनी फूस की झोपड़ी में ही खुश हूं!'
'निस्संदेह, अपना घर बाकी सभी घरों से बढ़कर होता है। लेकिन मिर्ज़ा फथुल मुल्क बहादुर... हर कोई उन्हें एक गंभीर, सौम्य और विनम्र राजकुमार के रूप में जानता है। अगर उन्होंने आपको अपने यहाँ लाया है, तो वे निश्चित रूप से आपका बेहतरीन ख्याल रखेंगे।'
'तुम्हें कैसे पता?' वज़ीर ने थोड़ा तीखे लहजे में जवाब दिया।
"अरे, क्या तुमने सदियों से ये बात नहीं सुनी, "मैंने शादी नहीं की, लेकिन मैंने शादी के जुलूस देखे हैं!" उनके साफ-सुथरे आचरण को सब जानते हैं। वो उस तरह के रईस नहीं हैं जो बासी मांस और बाज़ार से लाए गए भेड़ के मांस के टुकड़ों के साथ मौज-मस्ती करते हैं।" वो हँसी, लेकिन ऐसे शब्दों का इस्तेमाल करने पर उसे शर्मिंदगी भी महसूस हुई।

वज़ीर ने अनसुना करने का नाटक किया और अपने विषय पर बात जारी रखी: 'और नवाब मिर्ज़ा और मुहम्मद आगा?'
'इन बातों की चिंता करने की क्या ज़रूरत है, खानम साहब? अल्लाह उनकी रक्षा करे। नवाब मिर्ज़ा भली-भांति जानते हैं कि अगर तीसरे उत्तराधिकारी जैसे महान व्यक्ति अपनी माता का हाथ थाम लें, तो उनकी और आपकी दोनों की आँखों से आँसू यथासंभव पोंछ दिए जाएँगे। वैसे भी, आपको पहले नवाब मिर्ज़ा को बताना चाहिए और उनकी प्रतिक्रिया जान लेनी चाहिए।'
लेकिन अगर किले के लोग लड़कों को स्वीकार करने के लिए सहमत नहीं होते हैं तो?
हबीबा ने एक मिनट सोचा। 'मेरी सीमित समझ के अनुसार, नवाब मिर्ज़ा, अल्लाह की मर्ज़ी से, एक महान व्यक्ति का बेटा है, होनहार है और अपने पूर्वजों का नाम रोशन करेगा। समाज उसे खुले दिल से स्वीकार करेगा। जहाँ तक छोटे बच्चे की बात है, शुरू में कुछ दिक्कत हो सकती है; इसलिए मैं यहाँ हूँ; हर हाल में, मैं उसे अपने पास रखूँगी।'
नहीं, मैं तुम्हें अपने साथ ले जाऊंगी... लेकिन वह बेचारा छोटा बच्चा मुझे याद करेगा और शायद बीमार भी पड़ जाए।
'आप काबुल या दक्कन नहीं जा रहे हैं, खानम साहब। आप यहीं रहेंगे।'
'बारी बाजी उसे ले जाएगी,' उसने मुझे बताया।
तो फिर कोई समस्या नहीं है; सब ठीक है।
मुझे डर है कि बारी बाजी ने उन्हें पहले ही बता दिया होगा; उन्होंने मेरी स्थिति की समस्याओं के बारे में नहीं सोचा।
नहीं महोदया, वह ऐसा कभी नहीं करेंगी। जो भी आपको जानता है, वह यह भी जानता है कि आप इन मामलों में किसी की इच्छा के आगे नहीं झुकतीं। हालांकि, निस्संदेह वह चाहती होंगी कि आप राजा की बहू बनें।
वज़ीर चुपचाप बैठी रही, उसका सिर शायद निराशा या असमंजस के कारण झुका हुआ था। उसकी पलकों पर दो छोटे-छोटे आँसू चमक रहे थे, जो चुपचाप गिरे और उसके कॉलर में समा

गए। हबीबा ने उसका हाथ अपने दोनों हाथों में लिया और धीरे-धीरे, लगभग प्यार से, जैसे कोई बच्चे को सहलाता है, उन्हें सहलाने लगी। कई मिनट बीत गए, हबीबा चुपचाप बैठी रही। अंत में, वज़ीर ने अपना सिर उठाया, अपनी आँखें पोंछीं और एक गहरी आह भरी।
हबीबा, अब मेरा मन इन बातों की ओर नहीं झुकता। और मुझे डर भी लगता है। मेरे साथ बार-बार यही हुआ है; मेरी कुछ दिनों की खुशी के बाद हमेशा सदियों का दुख आता है।
लगभग सिसकते हुए, उसने अठारहवीं शताब्दी के महान कवि जुरात की एक हिंदी कविता सुनाई:

जुरात, कुबड़ा आकाश कभी-कभी मुझे एक मुस्कान देता है, जैसे कोई नया घाव हो; फिर वह घाव मुझे लंबे समय तक दर्द के बड़े-बड़े आंसू बहाने पर मजबूर करता है।
'खानम साहब, यह जरूरी नहीं कि हर बार ऐसा ही हो। जैसा कि कहा जाता है: "कभी दिन लंबे होते हैं; कभी रातें लंबी होती हैं।"'
वज़ीर ने कड़वी मुस्कान के साथ कहा, 'क्या वे यह भी नहीं कहते: "गरीब आदमी के रोज़े रखने से दिन लंबे हो जाते हैं?"'
'अब शब्दों की लड़ाई और छंदों को समेटने में आपको कौन हरा सकता है, खानम साहब!' हबीबा खिलखिलाकर हंस पड़ीं। 'आखिर आप शाह नासिर साहब के शिष्य हैं। लेकिन मेरे पास आपके लिए एक सुझाव है, जिस पर आप विचार कर सकते हैं।'
'यह क्या है?'
'बाई जी से पूछो। वह जो कहे वैसा करो।'
'बाई जी साहब?' वज़ीर ने एक पल सोचा। 'लेकिन मुझे उनसे क्या पूछना चाहिए और अपना सवाल किस तरह से पूछना चाहिए?'
'यह सब मुझ पर छोड़ दो। कल का दिन भी अच्छा है; यह अमावस्या का पहला गुरुवार है। और अगर आपका मन करे तो आप वहां से कदम शरीफ जा सकते हैं।'
तो क्या सुबह की नमाज के तुरंत बाद वहां जाना उचित रहेगा?
'खानम साहब, यही सबसे अच्छा समय है। सूरज ढलने तक वहां भीड़ बहुत बढ़ जाती है।'
'बाई जी साहब सुबह कितने बजे उठते हैं?'
'उठो? ओह, मैंने सुना है कि वह बिल्कुल नहीं सोती। शायद वह दोपहर की नमाज़ के बाद थोड़ी देर झपकी ले लेती है। कुछ लोग कहते हैं कि वह बिल्कुल नहीं सोती। और सचमुच, उसकी आँखें हमेशा धधकती लाल रहती हैं।'
'ठीक है, कुछ कौड़ियाँ जुटा लो। मुझे पता चला है कि वह कौड़ियों का चढ़ावा पसंद करती है।'
'बहुत बढ़िया। मैं थोड़ी देर में जानी राम को चपातियाँ खरीदने भेजूँगा। मैं उससे कौड़ियाँ भी लाने को कहूँगा। आजकल कौड़ियों का भाव थोड़ा ज़्यादा है, एक रुपये के मुकाबले पाँच हज़ार कौड़ियाँ हैं।'
'जो भी हो, दो रुपये का सामान ले लो।'
हबीब-उन निसा घर के कामों में व्यस्त थीं। लेकिन कदम शरीफ की याद वज़ीर के मन में

अचानक चुभने वाले कांटे की तरह जाग उठी थी। अब उनका वहां जाना बहुत कम हो गया था। फिर भी, जब भी वह जातीं, पूरे रीति-रिवाज के साथ जातीं। और अब, जब उनके जीवन में एक नए पुरुष के आने की संभावना थी, तो उनकी याद ने उनके दिल में उथल-पुथल मचा दी थी। क्या वह मार्स्टन ब्लेक या आगा मिर्ज़ा तुराब अली की कब्रों पर उसी नियमितता और उसी भावना के साथ जातीं, अगर वे दिल्ली में दफ़न होते?

उसने अपने दिल में झाँका, और फिर से अपने दिल में झाँका, लेकिन काल्पनिक प्रश्न का उत्तर मिलने के बजाय, वह अपनी हमेशा की तरह आत्मनिरीक्षण की दुनिया में खो गई। वह बल्क साहब से बेहद प्यार करती थी; और आज भी, कभी-कभी रात में, उनके आलिंगनों की यादें उसके दिल को छू जाती थीं। उसे नहीं पता था कि बल्क साहब में ऐसा क्या था जिसने उसे इतनी जल्दी अपना दिल उन्हें सौंपने पर मजबूर कर दिया। क्या यह उनका करिश्माई व्यक्तित्व, उनका आकर्षक शरीर और आत्मविश्वास से भरा व्यवहार था? लेकिन अंग्रेज भी मानते थे कि नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान एक बेहद खूबसूरत नौजवान थे, जिनका व्यक्तित्व प्रभावशाली था... तो... क्या यह बल्क साहब की मुस्कुराती हुई, विनोदी मुस्कान, उनके अनगिनत चुटकुले और ताने थे? नहीं, वह इतने असाधारण नहीं थे। यह सच है कि उनके साथ कभी कोई नीरस पल नहीं होता था। वह अत्यधिक आत्ममुग्ध नहीं थे, और फिर प्रेम और प्रेम-संबंध बनाने के मामलों में उनकी विशेषज्ञता...

वज़ीर का चेहरा लाल हो गया; और अचानक अपनी उत्तेजना का एहसास होते ही, उसका लाल होना शर्मिंदगी में बदल गया, और वह सिकुड़ गई, मानो खुद को छोटा करने की कोशिश कर रही हो, अपने दुपट्टे को अपने ऊपरी शरीर के चारों ओर कसकर लपेट लिया, मानो खुद को छिपाने की कोशिश कर रही हो... लेकिन नहीं, कुछ और भी था; वह बल्क साहब की शारीरिक आकर्षण शक्ति और अनेक सांसारिक खूबियों के कारण हमेशा उनकी ओर खिंची चली आती थी। लेकिन उसे यह एहसास नहीं था कि अगर कुछ पुरुष अपनी शारीरिक शक्ति के बल पर महिलाओं से प्यार की मांग करते हैं, यहाँ तक कि उसे छीन भी लेते हैं, तो कुछ ऐसे पुरुष भी होते हैं जो अपनी शालीनता, गरिमा और स्वाभाविक कुलीनता के बल पर प्यार और सम्मान दोनों प्राप्त कर सकते हैं। यह बात उसे तभी पता चली जब शम्सुद्दीन अहमद खान उसके जीवन में आए। वह यह भी जानती थी कि भले ही फिरंगी फ्रेजर के मन में नवाब के प्रति पूर्वाग्रह थे, लेकिन कंपनी के अधिकारी आम तौर पर नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान की प्रशासनिक क्षमता और उनके राज्य के सफल शासन को बहुत सम्मान देते थे।

उसके मन में अतीत की एक याद ताज़ा हो गई। जब कंपनी के अधिकारी फ्रेज़र की हत्या की जाँच कर रहे थे, तब उनके जासूसों ने एक ऐसी घटना की सूचना दी जिसका इस्तेमाल बेचारे शम्सुद्दीन अहमद खान के खिलाफ किया जा सकता था। हुआ यूँ कि नवाब के राज्य में एक अनाज व्यापारी की रहस्यमय परिस्थितियों में हत्या कर दी गई थी। कंपनी ने नवाब पर जल्द से जल्द हत्यारे को ढूंढकर कंपनी के हवाले करने का दबाव डाला। शम्सुद्दीन अहमद खान ने साफ इनकार कर दिया और कहा कि हत्यारा उनके राज्य के कानूनों का उल्लंघन कर रहा है और उनके सिवा कोई और उसे पकड़वाकर हर तरह से उचित दंड नहीं दे सकता। अंग्रेज़ अधिकारियों ने

खुलेआम शम्सुद्दीन अहमद खान पर प्रशासन में अक्षमता और कमज़ोरी का आरोप लगाना शुरू कर दिया। लेकिन शम्सुद्दीन अहमद खान ने शक्तिशाली जॉन कंपनी से डरने से साफ इनकार कर दिया। उन्होंने कुछ ही समय में हत्यारे को पकड़वाकर फिरोज़पुर झिरका के बाज़ार में फाँसी पर लटका दिया।

वज़ीर ने किसी और में ऐसा दृढ़ निश्चय और दृढ़ संकल्प कभी नहीं देखा था। और इन सबके अलावा, नवाब का उत्तम स्वाद—कविता के प्रति उनका प्रेम, उनके वस्त्रों का चुनाव, उनकी वाणी, उनका जीवन-शैली—हर चीज़ में स्पष्ट था; वे हर मामले में अपने समकक्षों से श्रेष्ठ प्रतीत होते थे। यद्यपि कंपनी के अधिकारियों ने सीधे शब्दों में नहीं कहा, फिर भी उन्होंने संकेत दिए कि यदि नवाब शम्सुद्दीन अहमद हत्यारे को शीघ्र पकड़ लें और उसे गौरवशाली साहिबों के हवाले कर दें, तो फ्रेज़र की हत्या की जाँच का रुख बदल सकता है। नवाब ने इन तुच्छ संकेतों पर कोई ध्यान नहीं दिया। वज़ीर ने एक बार फिर अपने हृदय में झाँका। बलेक साहब का प्रेम-प्रसंग, उनके प्रति उनका स्पष्ट रूप से सच्चा प्रेम, उनकी दौलत, धन और शक्ति का बढ़ता प्रभाव—और इनमें से कुछ भी उनके लिए व्यर्थ—यह सब उन्होंने माना, फिर भी उन्हें स्पष्ट प्रतीत हुआ कि उनके नवाब महान अमीर खुसरो की प्रसिद्ध पंक्ति का साक्षात अवतार थे:

उन सभी खूबसूरत लोगों के पास जो कुछ भी है, वह केवल आपके पास ही है।

वह आगा मिर्ज़ा तुराब अली के बारे में सोच रही थी, वह सुंदर, सज्जन पुरुष, जो उससे उम्र में काफी बड़े और उच्च कुल के थे, लेकिन फिर भी मित्रवत और प्रेममय थे। वज़ीर सोचती थी कि उसने मिर्ज़ा तुराब अली द्वारा एक स्त्री के रूप में उसे दिए गए सम्मान को अपने सभी वैवाहिक कर्तव्यों को प्रसन्नतापूर्वक और अपनी सर्वोत्तम क्षमता से निभाकर पूरा किया था। उसे पूरा विश्वास था कि आगा साहब उससे दुखी होकर नहीं मरे होंगे। उसे यह भी यकीन था कि उस समय के हालात और प्रचलित पुरुषवादी स्वभाव और संस्कृति को देखते हुए, वह वास्तव में एक बहुत अच्छे पति थे।

तो क्या? क्या अब उसका जीवन उन तीनों के शोक में ही बीत जाना चाहिए जो उससे बिछड़ गए थे? क्या उसे हमेशा अपने दिल को दर्द के नाखूनों से खरोंचते रहना चाहिए, अपने अस्तित्व को अलगाव के कड़वे, विषैले जहर से भर देना चाहिए, और जीवन के रक्त और जल की एक बूंद को भी अपने भीतर तक नहीं पहुँचने देना चाहिए? नहीं। मैं ऐसा नहीं कर सकती। अज्ञात की संभावनाओं से उसका दिल काँप उठा और ठंडा पड़ गया। लेकिन और क्या विकल्प था? शम्सुद्दीन अहमद खान के शोक में वह संसार त्याग सकती थी, फकीर बन सकती थी; वह उसकी कब्र की ज़मीन को अपना छत बना सकती थी और वहाँ एकांतवासी की तरह रह सकती थी; वह गुमनाम और अकेली रह सकती थी। लेकिन क्या वह सचमुच ऐसा कर सकती थी? उसे फिर से मीर तकी मीर का भय पैदा करने वाला सत्य याद आया:

बाजार में ऐसी कोई चीज नहीं है जिसे सुंदरता ने आकर्षित न किया हो।

लेकिन क्या मैं किसी तरह अपने दिल में, अपनी ज़िंदगी में किसी नए के लिए जगह बना सकती हूँ? शायद, अपनी ज़िंदगी में। ये महान राजकुमार, मिर्ज़ा फ़तहुल मुल्क बहादुर, सब उनकी तारीफ़ करते हैं। लेकिन मुझे ये भी नहीं पता कि वो दिखते कैसे हैं। सच तो ये है कि औरत चाहे

खुद को कितना भी बड़ा समझे, मर्द हमेशा उसके सामने भारी पड़ता है। अगर मैं नवाब मिर्ज़ा की शादी करवा सकूँ, तो उनकी दुल्हन मेरे लिए बहुत बड़ा सहारा होगी। लेकिन लड़कों के बारे में कुछ कहा नहीं जा सकता। वो अपना घर बसाना पसंद करते हैं। यकीनन, वो अपनी माँ और अपने घर की ज़िम्मेदारी ज़्यादा दिन तक नहीं संभालेंगे। जहाँ तक शाह मुहम्मद आगा की बात है, मैं उनके लिए माता-पिता दोनों हूँ। बारी बाजी...

उसे पता ही नहीं चला कि वह कब सो गई, लेकिन उसकी नींद इतनी गहरी थी कि हबीबा के बार-बार उठकर खाना खाने के आग्रह पर भी उसने कोई प्रतिक्रिया नहीं दी। आखिरकार भोर होने से लगभग दो घंटे पहले वह जागी, और पूरी रात सो नहीं पाई, हालांकि उसने अपनी नींद वापस लाने के लिए हर संभव कोशिश की। अंत में, अंधेरे पूर्वी आकाश में भोर की हल्की सफेद किरण दिखाई दी, और कुछ मिनट बाद मुअज़्ज़िन अज़ान देने लगे, और वह नमाज़ अदा करने के लिए उठ गई।

हबीब-उन निसा ने पिछली रात कौड़ियाँ लाते समय अगली सुबह के लिए पालकी का भी ऑर्डर दे दिया था। जब वज़ीर खानम की पालकी पुरानी ईद मस्जिद की ओर जाने वाली ढलान पर पहुँची, तो मस्जिद के ऊँचे और चौड़े द्वार के अंदर और मस्जिद के खुले क्षेत्र के एक कोने में बनी एक जर्जर फूस की झोपड़ी के सामने पहले से ही काफी भीड़ जमा थी। यह एक मध्यम आकार का कमरा था, जिसके तीन तरफ एक लंबा बरामदा था। झोपड़ी का दरवाजा बंद था और बरामदे में कोई नहीं था। वज़ीर और हबीबा काले चादरों में लिपटे हुए पालकी से उतरे, केवल उनके चेहरे और हाथ दिखाई दे रहे थे। वे हिचकिचाते कदमों से बरामदे तक गए, उनके पीछे कौड़ियों के दो बोरे लिए एक पालकी उठाने वाला चल रहा था। बरामदे का चबूतरा बहुत नीचा था और उस तक जाने के लिए एक छोटी सी सीढ़ी ही काफी थी। उनके बेगम जैसे हाव-भाव और कीमती चादरों को देखकर भीड़ ने रास्ता दे दिया। लेकिन एक महिला ने वज़ीर की चादर का किनारा पकड़ लिया और प्रार्थना की, 'हे साहब, अभी दरवाजा नहीं खुला है। कृपया यहीं प्रतीक्षा करें। लेकिन जब आपको अंदर जाने की अनुमति मिल जाए, तो कृपया मुझे भी उनके सामने बुला लें।'

वज़ीर रुक गया और पालकी उठाने वाले को वहीं रुकने का इशारा किया। उसने अभी कुछ कहा भी नहीं था कि अचानक दरवाज़ा खुला और एक अधेड़ उम्र की महिला, जो स्पष्ट रूप से उच्च कुल की थी और जिसके चेहरे के भाव कोमल और आकर्षक थे—लेकिन मानो किसी महिला की परिचारिका का काम करती हो—दरवाज़े पर प्रकट हुई। उसने एक सुसंस्कृत और सहज स्वर में, जो आश्चर्यजनक रूप से प्रभावशाली था, पुकारा: “खानम के बाज़ार वाली महिला कौन हैं? बाई जी साहब उन्हें याद कर रहे हैं।” उसकी हिंदी से उसके दक्कनी मूल का पता चलता था, जो दिल्ली में आमतौर पर सुनी जाने वाली हिंदी से कहीं अधिक मधुर और लचीली थी।

वज़ीर और हबीबा ने चारों ओर देखा, और फिर एक-दूसरे को हैरानी से देखा। उन्हें कोई भी अपनी जगह से उठता हुआ नहीं दिखा। उसकी पहचान कैसे हुई होगी? वह तो पहले कभी यहाँ आई ही नहीं थी। उसने फिर से हबीबा की ओर देखा, जो अचंभित और कुछ डरी हुई लग रही थी। परिचारिका ने खुले कमरे से पीछे देखा। उसे कुछ और निर्देश बहुत धीमी आवाज़ में दिए गए, जो आसपास के लोगों को सुनाई नहीं दिए। परिचारिका भीड़ की ओर मुड़ी, और कुछ ऊँची, सधी

हुई आवाज़ में बोली, 'महोदय, मैं फिर से पूछती हूँ। खानम का बाज़ार की यह आदरणीय महिला कौन हैं, जो संग-ए-बासी मस्जिद के सामने से यहाँ आने की जहमत उठा रही हैं? कृपया देर न करें। बाई जी साहब के पास आज ज़्यादा समय नहीं है।'

अब वज़ीर के पास उठकर दरवाजे की ओर जाने के अलावा कोई चारा नहीं था। उसने हबीबा को अपने साथ चलने का इशारा किया और पालकी उठाने वाले से कौड़ियों के थैले लेने के लिए हाथ बढ़ाया। जिस महिला ने वज़ीर से उसके लिए सिफारिश करने का अनुरोध किया था, वह झट से आगे बढ़ी और बोली, 'मैं अपनी जान बचा लूँगी, आप इतनी परेशानी क्यों उठा रही हैं? कृपया मुझे ये थैले दे दीजिए।'

बाई जी की परिचारिका ने उसे घूरकर देखा। महिला भय से पीछे हट गई, लेकिन टस से मस नहीं हुई। परिचारिका ने आधे फटकार भरे लहजे में और आधे हल्के-फुल्के, हंसमुख स्वर में बात की। ‘नक्कू, साहब। अभी आपकी बारी नहीं है। थोड़ी देर धैर्य रखिए, मेरी बहन। और ये थैले, हम इन्हें लेने आए हैं!’

उन्होंने दोनों थैले हाथों में लिए और वज़ीर और हबीबा को अंदर आने का इशारा किया। उनके अंदर जाते ही दरवाज़ा बंद हो गया। उन्हें पता नहीं था, लेकिन यह असामान्य था, क्योंकि आगंतुकों के लिए एक बार खुलने के बाद, दिन की सभा समाप्त होने से पहले दरवाज़ा बंद नहीं किया जाता था। सावधानी से कदम रखते हुए, वज़ीर और हबीबा ने खुद को लगभग अंधेरे कमरे में पाया। दीवारों में दो-तीन दरारों से छनकर आती रोशनी के अलावा कोई प्रकाश नहीं था। कमरे के बीच में एक बड़ी चटाई बिछी हुई थी। बाई जी उस पर बैठी थीं, उनके पैर उनकी जांघों के नीचे थे, और बिना तकिए या गद्दे के। ऐसा लगता था कि चटाई का इस्तेमाल प्रार्थना और विश्राम दोनों के लिए किया जाता था, क्योंकि वहाँ बिस्तर या लकड़ी का चबूतरा जैसा कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था। एक कोने में एक नए मिट्टी के घड़े को एक छोटे लकड़ी के स्टैंड पर रखा गया था, जिसका मुँह एक साफ और अच्छी तरह से रगड़कर चमकाए गए पीने के कटोरे से ढका हुआ था। दाईं ओर एक ताक थी जिस पर कुरान एक नक्काशीदार लकड़ी के स्टैंड पर रखा हुआ था। बस इतना ही था। पानी के कमरे या शौचालय का कोई निशान नहीं था। शायद ये चीज़ें मुख्य झोपड़ी के पीछे किसी दूसरी झोपड़ी में थीं। वहाँ खाने-पीने की कोई चीज़ या बर्तन नज़र नहीं आ रहे थे। बाई जी के सामने कौड़ियों का ढेर था, और उसके आगे आगंतुकों के लिए एक पुराना सूती कालीन बिछा हुआ था।

परिचारिका ने दोनों थैलों का सामान पहले से रखे ढेर में डाल दिया और बाई जी के पीछे सीने पर हाथ जोड़कर खड़ी हो गई। वज़ीर ने डरते हुए आँखें उठाईं और बाई जी के चेहरे को ध्यान से देखने की कोशिश की। वह काफी दुबली-पतली थीं और औसत से लंबी लग रही थीं। उनका चेहरा अंडाकार था और आँखें बड़ी-बड़ी थीं, लेकिन वह नीचे देख रही थीं, मानो उन्होंने कभी आँखें उठाई ही न हों और ध्यान में लीन हों। उनकी आँखों के चारों ओर बैंगनी-काले घेरे लंबी रातों और कम नींद का संकेत दे रहे थे। चेहरे और हाथों को छोड़कर, उनका ऊपरी शरीर हल्के चमेली पीले रंग की मुल्तानी चिंट्ज़ चादर से ढका हुआ था, जिस पर हल्के नीले रंग की छोटी-छोटी टहनियाँ छपी हुई थीं। उनकी पतलून बर्फ़-सफ़ेद मलमल की थी, जिसके निचले हिस्से चौड़े

थे, जैसा कि कुछ साल पहले दिल्ली में फ़ैशन में था। न तो उनके चेहरे पर और न ही हाथों पर उनकी उम्र या बुढ़ापे का कोई निशान था: न झुर्रियाँ, न मांसपेशियों में ढीलापन। उनके बाल चादर से ढके हुए थे, लेकिन कुछ लटें जो मानो अपने आप बाहर निकल आई थीं, एकदम काली थीं और उनमें जवानी की चमक थी।
किसी को नहीं पता था कि उनकी उम्र कितनी थी। कुछ लोग कहते थे कि वे सत्तर से ऊपर थीं; किसी ने उनके दादाजी के हवाले से कहा कि जब वे छोटे बच्चे थे तब भी वे बिल्कुल वैसी ही थीं जैसी आज हैं। कुछ लोगों ने तो यहाँ तक कह दिया कि वे मुहम्मद शाह ग़ाज़ी की मृत्यु के वर्ष (1748) में कश्मीर से दिल्ली आई थीं, जो अब स्वर्ग में विराजमान हैं। इस हिसाब से तो उनकी उम्र अब सौ से अधिक होनी चाहिए। खैर, उनकी वास्तविक उम्र चाहे जो भी हो, वे निश्चित रूप से युवा नहीं थीं। वास्तव में, उन्हें अधेड़ उम्र का कहा जा सकता है।

हालाँकि उनकी आँखें झुकी हुई थीं, फिर भी उनके चेहरे से, या यूँ कहें कि उनके पूरे व्यक्तित्व से, ऐसी गरिमा, ऐसा संयम, ऐसी पवित्रता और ऐसी शक्ति झलक रही थी कि वज़ीर को बार-बार पलकें झपकानी और नज़रें हटानी पड़ रही थीं, और वह उस पल से डर रही थी जब बाई जी अपनी नज़रें उसकी ओर उठाएँगी। उसने अपने शरीर को और समेट लिया, चादर को जितना हो सके कसकर लपेट लिया, और कालीन के एक कोने में सावधानी से बैठ गई, कालीन पर बैठने के बजाय उसके किनारे पर। हबीबा उसके पास, लेकिन थोड़ा पीछे, कालीन पर बैठने के बजाय नंगे फर्श पर बैठी थी। अब बाई जी ने अपनी नज़रें उठाईं और वज़ीर को देखा। हे भगवान, कैसी आँखें थीं उनकी! गहरी काली, जिनमें बेहद नाजुक लाल रक्त वाहिकाएँ दिखाई दे रही थीं—लेकिन ऐसा लाल रंग जिसमें जीवन की कोई जीवंतता या गुलाबी रंगत नहीं थी। ऐसा लग रहा था मानो हर इच्छा, हर लालसा, हर ज़रूरत, सुख-दुख का हर एहसास, हर उम्मीद उन आँखों से विदा हो गई हो। एक गहरे काले, निर्मल सागर की तरह जिसमें हर दृश्य, हर भावना बिना किसी निशान के डूब जाएगी।
बेहद मधुर और दिल को छू लेने वाली आवाज़ में बाई जी ने बिस्मिल्लाह पढ़ा, फिर कुरान के 108वें अध्याय अल-कौसर की तीन आयतें पढ़ीं। पढ़ने में उन्हें ज़रा भी समय नहीं लगा। पढ़ने के बाद उन्होंने अपने सामने रखी कुछ कौड़ियों को उठाया और एक तरफ रख दिया। उन्होंने यह प्रक्रिया सत्तर बार दोहराई। वज़ीर मानो कुछ कर ही नहीं पा रहे थे, बस बाई जी की मधुर आवाज़ में आयतें पढ़ते हुए उन्हें महसूस करने की कोशिश कर रहे थे। बाद में हबीबा ने उन्हें बताया कि बाई जी ने पढ़ने की गिनती नहीं की; शायद उन्हें अंतर्ज्ञान से पता चल जाता था, या शायद पीछे खड़ी नौकरानी कोई इशारा करती थी। अल्लाह ही सबसे बेहतर जानता है।
अब बाई जी ने आगंतुकों को संबोधित करते हुए कहा, 'कृपया मुझे बताएं, आपकी क्या आवश्यकता है?'
उनकी आवाज में वही मधुरता थी जो उनके कुरान पाठ में थी।
'बाई जी के सामने सब कुछ दर्पण की तरह है,' वज़ीर ने रुक-रुक कर जवाब दिया, और एक-दो बार घूंट भरा।

'नवाब शम्सुद्दीन अहमद को छोड़ना ही पड़ेगा।'
हे अल्लाह! बाई जी आखिर क्या हुक्म दे रही हैं! वज़ीर का दिल भय और आशंका से भर गया। वह अपने कानों में कुछ डालना चाहती थी, और कुछ सुनना नहीं चाहती थी।
“किले की बेगमें खुलेआम मकबरों पर नहीं जातीं,” बाई जी ने धैर्यपूर्वक कहा, मानो किसी बच्चे को समझा रही हों। “वहाँ पर्दा प्रथा बहुत सख्त है।”
लेकिन... लेकिन, मेरे बच्चे? मेरे बच्चों के साथ क्या होगा... क्या होगा?
कुछ तो होगा। कुछ अच्छा जरूर होगा।

तो क्या बाई जी साहब का आदेश है कि मैं किले से आए प्रस्ताव को स्वीकार कर लूँ?
‘हम कुछ भी आदेश नहीं देते, बाबा। ये घटनाएँ अवश्य घटित होंगी।’
‘और...और फिर मेरे सारे दुख दूर हो जाएंगे, बाई जी साहब?’
सुख और दुख धूप और छांव की तरह हैं। सब कुछ परिवर्तनशील है। किले में स्थित राज्य के दिन भी एक दिन समाप्त हो जाएंगे।
यह कहते हुए बाई जी ने अपनी आँखें बंद कर लीं। दासी ने बाई जी साहब के पीछे से वज़ीर को इशारा किया कि मुलाकात समाप्त हो गई है। वज़ीर और हबीबा उठे, तीन सलाम किए और पीछे हटते हुए जाने ही वाले थे कि बाई जी ने अपनी आँखें आधी खोलीं और कहा, 'जो तुम्हारे बोरे उठाने की पेशकश कर रही थी, उसे बता दो कि उसका बच्चा अब वापस नहीं आएगा। लेकिन उसे धैर्य रखना चाहिए। उसे बदले में कुछ न कुछ ज़रूर मिलेगा।'
‘जी महोदया, बहुत अच्छा’ कहते हुए वे कक्ष से बाहर निकल गए। उनके बाहर आते ही, लापता बच्चे की माँ, जो वहीं खड़ी थी, ने आवेग में आकर उनकी ओर हाथ बढ़ाए और चिल्लाई, ‘हे बीबी जी! मैं आपके लिए अपनी जान कुर्बान कर दूँ! क्या मुझे बुलाया गया है?’
'नहीं, वह तुम्हें नहीं बुला रही है, बीबी; उसने कहा है कि हो सकता है तुम्हें तुम्हारा बच्चा वापस न मिले, लेकिन अल्लाह तुम्हें उसके बदले कुछ और देगा।'
‘हे अल्लाह!’ महिला सिसकते हुए बोली। ‘बाई जी ने मेरी दुनिया को पूरी तरह से तबाह कर दिया!’
ठीक उसी क्षण, बाई जी की दासी दरवाजे पर प्रकट हुई और उस महिला को डांटते हुए बोली, “चुप रहो! पाप की बातें मत करो! बाई जी साहब नाराज हो जाएंगी। अब यहाँ से जाओ।” फिर उसने पुकारा, “सभी महिलाएं कृपया अंदर आ जाएं!”
भीड़ जल्दी-जल्दी अंदर आने लगी, लेकिन अव्यवस्थित ढंग से नहीं। वज़ीर को बाहर आते देख पालकी उठाने वालों ने पालकी को बरामदे की सीढ़ियों के पास रख दिया; और जैसे ही वज़ीर और हबीबा अंदर बैठे, वे खानम के बाज़ार की ओर चल पड़े।

जब तक वज़ीर खानम की पालकी खानम का बाज़ार पहुँची, चांदनी चौक में सुबह की चहल-पहल और रौनक अपने चरम पर थी। मिठाई बनाने वालों, बेकरी वालों और ताज़ा दूध बेचने वालों की दुकानें कुशल रसोइयों, उनके युवा सहायकों और ग्राहकों की भीड़ से गुलज़ार थीं। उनमें से कई लोग वहीं छोटी-छोटी कुर्सियों या अस्थायी बेंचों पर बैठकर नाश्ता कर रहे थे। कुछ लोग खरीदी हुई चीज़ें घर ले जाना पसंद कर रहे थे: हलवा; कई तरह के तले हुए पैनकेक; जलेबी; गाढ़ी, आसानी से कटने वाली मलाई, जो देखने में दूध जैसे सफेद कागज़ के चिकने पैकेट की तरह लगती थी, जिसे मोड़कर परत दर परत रखा जाता था, हथेली के आधे हिस्से के आकार की, बर्फ के साथ या बिना बर्फ के; मछली के कबाब; बकरी और भेड़ के जिगर से बने कबाब; और शिरमल नामक विशेष, स्वादिष्ट ओवन में पकी हुई केसरिया रोटी, जिसकी मनमोहक सुगंध भूख न लगने वालों को भी लुभाती थी। बकरी के मांस का मसालेदार और गाढ़ा शोरबा, जिसे निहारी कहते थे, अस्थि मज्जा, दिमाग के टुकड़े और घी की बड़ी मात्रा डालकर और भी स्वादिष्ट बनाया जाता था। इसे गरमागरम, त्रिकोणीय या गोलाकार, कुरकुरी रोटी के साथ खाया जाता था जो ओवन से निकली होती थी। शाकाहारी भोजन पसंद करने वालों के लिए कई तरह की मसालेदार और तली हुई सब्जियां थीं, जिन्हें इतना पकाया जाता था कि वे लगभग गल जाती थीं: भिंडी—उस समय यह शब्द ज्ञात नहीं था—जिसे या तो तीखे मसालों के पेस्ट से भरकर पकाया जाता था; करेला, जिसे कद्दूकस करके तला जाता था, या फिर सबसे तीखे मसालों के पेस्ट से भरकर पकाया जाता था; और भी कई सब्जियां थीं जिनका वर्णन यहाँ करना संभव नहीं है। पूरा इलाका मीठी, केसरिया और मसालेदार खुशबुओं का एक अद्भुत मिश्रण प्रस्तुत करता था। मंदिर जाने वालों की जरूरतों को पूरा करने के लिए गेंदे की मालाएं, चमेली के गुलदस्ते और नियमित फूल बेचने वाले अब दिखने लगे थे।

पूर्वी क्षितिज का रंग तेज़ी से सिंदूरी लाल होता जा रहा है। चंद्रमा का तख़्ता आकाश के सबसे निचले स्तर तक पहुँच गया है और अब तांबे की थाली की तरह भद्दा दिख रहा है... ढोल-घरों से ढोलों की हल्की थाप शहनाई पर राग भैरवी की मधुर और भावपूर्ण धुनों के साथ गूंज रही है, जो हृदय को मोह लेने वाली और भावनाओं को जगाने वाली है। लाहौरी द्वार से निगमबोध घाट तक सुंदरता की नदी बह रही है। चांदनी चौक की मुख्य सड़क आकाशगंगा की तरह लग रही है। हजारों चंद्रमा के टुकड़े तारों की तरह चमकते हुए दर्शकों के सामने से गुजर रहे हैं... यमुना नदी, जिसमें फूलों से सजी सुंदरियाँ नहा रही हैं, फूलों के विशाल बिस्तर की तरह दिख रही है। सौंदर्य के स्वर्ग के हज़ारों सितारे, रेशमी साड़ियों में लिपटे हुए, कमर तक पानी में खड़े हैं... एक सुंदर स्त्री, पवित्र यमुना नदी में स्नान करके, अपने लंबे, चमकदार बालों से अतिरिक्त पानी निचोड़ रही है। दूसरी, सूखी साड़ी पहने हुए, अपनी गीली साड़ी को निचोड़ रही है।

मूंगे की उंगलियों ने काले बादल से मोती निचोड़ लिए; रात के अंधेरे आवरण से रोता हुआ चाँद प्रकट हुआ।

वज़ीर के घर में, मियां नवाब मिर्ज़ा सुबह जल्दी उठ गए, सुबह की रस्म अदा की और अपनी माँ के लौटने का बेसब्री से इंतज़ार करने लगे ताकि नाश्ता बन सके, या अगर जानी राम काम पर आ जाएँ तो उन्हें नाश्ते का सामान लाने के लिए भेजा जा सके। नवाब मिर्ज़ा को अपनी माँ के विचारों या कामों के बारे में कुछ भी पता नहीं था, सिवाय इसके कि उन्होंने उस सुबह बहुत जल्दी कहीं जाने का इरादा किया था। शायद उनका गंतव्य कदम शरीफ़ था, और यह कोई असामान्य बात नहीं थी। लेकिन जब वह लौटीं और पालकी से उतरीं, तो उन्हें यह देखकर बहुत चिंता हुई कि उनका चेहरा असामान्य रूप से गंभीर और विचारशील था। उन्होंने सलाम किया और जल्दी से पूछा, 'अम्मा जान, सब ठीक है? आप इतनी सुबह कहाँ गई थीं? आपका चेहरा इतना पीला और उदास क्यों दिख रहा है? क्या आप अस्वस्थ हैं? क्या आपने किसी हकीम से सलाह ली...?'
वज़ीर ने हाथ उठाकर उसके सवालों की बौछार रोक दी और लड़के की मासूम घबराहट पर अपनी स्नेहपूर्ण हंसी को रोकने की कोशिश करते हुए कहा, 'अरे, नौजवान! थोड़ा सब्र रखो! शांत रहो। पहले नाश्ता कर लेते हैं, फिर मैं तुम्हें सब कुछ बताऊंगी।'
‘अम्मा जान, कृपया सच बताइए। क्या कोई समस्या है?’
अरे बाप रे! क्या बात है? आप देख सकते हैं कि मैं बिल्कुल ठीक हूँ। नाश्ता कर लीजिए; आप सुबह से भूखे हैं। मैं आपको अपनी कहानी अभी सुनाता हूँ!
नाश्ता करने के बाद, और वज़ीर द्वारा दिन के घरेलू कामों के लिए आवश्यक निर्देश देने के बाद, माँ और पुत्र दोनों वज़ीर के शयनकक्ष में चले गए। उसने नवाब मिर्ज़ा को पूरी कहानी सुनाई, जिसमें बाई जी से मिलने का पूरा विवरण भी शामिल था। इस डर से कि इससे नवाब मिर्ज़ा किले से आए प्रस्ताव के पक्ष में पूर्वाग्रहित हो सकते हैं, उसने उन्हें यह नहीं बताया कि वह और बारी बाजी फातिमा से उनकी शादी के बारे में लगभग सहमत हो चुके थे। इसके बजाय, उसने उन्हें तीसरे उत्तराधिकारी की पत्नी के रूप में किले में जाने की संभावना को लेकर अपने सभी डर और अनिश्चितताओं के बारे में बताया।
नवाब मिर्ज़ा ने पूरी एकाग्रता से उनकी बात सुनी और माँ के बोलने के बाद कुछ देर तक चुप रहे। उन्होंने जल्दी से मन ही मन इस मामले पर विचार किया और फिर बोले, “अम्मा जान, मुझे लगता है कि आपको मेरे और शाह मोहम्मद आगा के बारे में बिल्कुल भी चिंता नहीं करनी चाहिए। मैं अपना ख्याल आसानी से रख सकता हूँ और बड़ी खाला शाह मोहम्मद आगा को अपने बेटे की तरह अपनाकर पालने में बहुत प्रसन्न होंगी।”
दुःख, झुंझलाहट और निराशा की छाया उसके हृदय के क्षितिज पर छा गई। तो युवा स्वामी को पूरा विश्वास है कि मैं हवेली का निमंत्रण स्वीकार कर लूंगी, मानो ऐसा करना मेरे लिए बिलकुल उचित और सही हो। मानो मेरे हृदय में अपने बच्चों के लिए कोई प्रेम ही न हो और मैं उन्हें पीछे छोड़ने के लिए सहर्ष तैयार हो जाऊं। खैर, शाह मुहम्मद आगा अभी इतने छोटे हैं कि वे कुछ ही दिन रोएंगे और खिलौनों और स्नेहपूर्ण देखभाल से जल्दी ही उनका ध्यान भटक जाएगा। लेकिन मेरे बच्चे मियां तो अभी छोटे हैं, अल्लाह की मर्ज़ी से। उनमें अधिक समझ है, अधिक सूझबूझ है। क्या उन्हें मेरी याद नहीं आएगी? क्या वे खुद को यह समझा लेंगे कि उन्होंने मुझे हवेली में नहीं, बल्कि कब्र में पहुँचा दिया है, इसलिए उन्हें पीछे मुड़कर देखने की ज़रूरत नहीं है? अगर उनकी

कोई बहन होती, तो क्या वे उसे इतनी आसानी से और इतने प्रसन्नतापूर्वक किसी परदेस में भेजकर दफना देते? शायद उन्हें लगता है कि अम्मा के रास्ते से हट जाने के बाद, उनके लिए फातिमा से शादी करने और कहीं चले जाने का रास्ता खुल जाएगा... शायद दक्कन। क्या शाह नासिर साहब दक्कन नहीं गए थे और फिर कभी वापस नहीं लौटे? क्या दक्कन की यात्रा शाहदरा जाने जैसी है? आप बैलगाड़ी में जगह किराए पर लेते हैं, नदी पार करते हैं और बस! आप वहाँ पहुँच जाते हैं। मुझे पता है आगरा की यात्रा में आठ दिन लगते हैं। क्या दक्कन उससे हज़ारों मील दूर नहीं है?

'अम्मा जान, आप इतनी बेचैनी से किस बारे में सोच रही हैं? आप बिल्कुल खोई हुई सी लग रही हैं।'

'नहीं, ऐसी कोई बात नहीं है,' वज़ीर थोड़ा घबराकर जल्दी से बोला। 'मैं बस यही सोच रहा था कि मेरी शादी और मौज-मस्ती करने की उम्र तो निकल चुकी है। मैं अपने बाकी दिन आप दोनों प्यारे बेटों के सहारे और सहयोग से बिताना चाहता था। कितना अच्छा होगा अगर आप दोनों को कोई नौकरी मिल जाए!'

'अम्मा जान, आपको मेरी नौकरी को लेकर चिंता नहीं करनी चाहिए। मुझे कहीं न कहीं कोई न कोई नौकरी मिल ही जाएगी। आप अभी काफी जवान हैं, और अगर आप अपना ख्याल रखेंगी तो अल्लाह की मर्ज़ी से और भी जवान दिखेंगी... और असल में, सबसे बड़ी बात तो ये है...' वो रुके, फिर थोड़ा लड़खड़ाते हुए बोले, 'किस्मत ने आपको कभी बसने का मौका ही नहीं दिया... मेरा मतलब है, कहीं आराम से और रोज़मर्रा की परेशानियों से दूर बसने का। अब लगता है कुछ होने वाला है... कुछ ऐसा जो आप सचमुच हकदार हैं। मेरा मतलब है, दूसरे आते-जाते रहते हैं, लेकिन अल्लाह का किला कहीं नहीं जाने वाला।'

वज़ीर को अब कम झुंझलाहट महसूस हो रही थी, क्योंकि उसे समझ आ गया था कि नवाब मिर्ज़ा ने उसके प्रति प्रेम से ये बातें कही थीं, न कि स्वार्थ से। फिर भी, हमारे अलग होने की संभावना को वो कैसे स्वीकार कर पा रहे थे?

नवाब मिर्ज़ा शायद अपनी माँ के मन की बात समझ गए थे। इसलिए उन्होंने दृढ़ और सधे हुए स्वर में कहा, "देखिए, अम्मा जान, आपके बिना हममें से कोई भी सचमुच जीवित नहीं रह सकता। मैं तो बिल्कुल नहीं। लेकिन हमें यह भी समझना होगा कि हमारा अस्तित्व पूरी तरह से आप पर निर्भर है। यदि आप आराम से रहें, अकेले जीवन की व्यवस्था करने की चिंताओं से मुक्त रहें, तो क्या आप अधिक समय तक जीवित नहीं रहेंगी? और क्या तब आप हमारे लिए और भी बेहतर नहीं कर पाएंगी?"

'क्या मुझे तुम दोनों को पीछे छोड़कर कहीं और आराम से रहना चाहिए? मैं यह स्वीकार नहीं कर सकता।'

'किसने कहा कि आप हमें पीछे छोड़ रहे हैं? हो सकता है कि हम दोनों को, या कम से कम हममें से एक को, आखिरकार किले में आपके साथ रहने के लिए कहा जाए। वैसे भी आप अपने किसी भी बेटे को कहीं दूर जाने के लिए नहीं कहेंगे।'

वज़ीर ने अधीरता से बीच में ही टोकते हुए कहा, उसकी आवाज़ लगभग टूट चुकी थी, 'नहीं, लेकिन अगर आपको दक्कन या रामपुर जैसी किसी जगह पर नौकरी मिल जाती है, तो मैं आपको कहाँ ढूँढूँगी?'

'जब मैंने नौकरी के लिए आवेदन ही नहीं किया है तो मुझे कहीं और नौकरी कैसे मिल सकती है?' नवाब मिर्जा ने अपनी चिंताओं को हंसकर दूर करने की कोशिश की। 'और यह घर, क्या आप इसे बेच देंगी?'

'ऐसा मुझसे कभी दूर रहे, उस सबसे दूर की नदी के पार से भी कहीं अधिक दूर! तुम कभी भी ऐसा कोई शब्द न कहो, कभी नहीं! तुम्हारे पिता का स्मारक, हमारे लिए सुरक्षा का एक कोना, क्या मैं इसे कभी भी जाने दूँ?'

'तो खुश रहो। तुम हवेली में राजसी वैभव के साथ रहोगे; हम यहाँ गर्व से अपनी गरीबी की खाल में लिपटे रहेंगे!'

'जाओ, आगे बढ़ो! तुम हमेशा इतनी मज़ाकिया रहती हो! अपनी बड़ी खाला के यहाँ, तुम...' वज़ीर ने समय रहते खुद को रोक लिया।

नवाब मिर्ज़ा ने अपनी माँ की ज़बान फिसलने को अनसुना कर दिया, या शायद ध्यान ही नहीं दिया, हालाँकि उन्हें कुछ हद तक उनकी बात समझ आ गई थी और वे इस मामले को सबके सामने लाने के लिए बेहद उत्सुक थे। वज़ीर को अब भी लगता था कि नवाब मिर्ज़ा और फ़ातिमा की शादी का ज़रा सा भी संकेत हवेली के प्रस्ताव के बारे में उनके विचारों को और भी मज़बूती से प्रभावित करेगा। नवाब मिर्ज़ा ने जानबूझकर उनकी बात को घुमा-फिराकर एक हानिरहित निष्कर्ष पर पहुँचा दिया।

"जी हां, अम्मा जान, बारी खाला तो हमेशा मौजूद हैं: वो आगा साहब की पूरी देखभाल करेंगी, और मैं यहां बेफिक्र होकर रहूँगा।" अपनी सुरीली आवाज में उन्होंने अठारहवीं सदी के फारसी कवि सुख राज सबकात की एक पंक्ति कही।

वह मेरी देखभाल में स्वयं को संलग्न करते हैं और मैं चिंतामुक्त हो जाता हूँ: ईश्वर का दास होना अपने आप में एक प्रकार का ईश्वरत्व है!

'अम्मा जान, आपको मानना ही पड़ेगा कि यह कितना अच्छा मुद्दा है और उन्होंने इसे कितनी खूबसूरती से व्यक्त किया है! वे बेदिल के शिष्य थे, यह कोई संयोग नहीं था। मैं देख सकती हूँ कि आपकी स्थिति भी कुछ ऐसी ही है: आप हमारी देखभाल में खुद को थका देती हैं, और हम खुश और बेफिक्र होकर घूमते रहते हैं।'

'हां, बिल्कुल,' वज़ीर ने शरारती अंदाज़ में कहा। 'अगर तुम दोनों की देखभाल करते-करते थकने की ज़िम्मेदारी मेरी नहीं, तो लोहारू की तो होनी चाहिए, है ना?'

उनकी चंचलता के बावजूद, उनके शब्दों में चिंता की एक धुंधली सी झलक स्पष्ट रूप से महसूस की जा सकती थी। इसके बाद उन्होंने जो कहा, उससे यह बात और भी पुष्ट हो गई, 'कृपया सोच-समझकर उत्तर दीजिए, प्रिय पुत्र, मेरे प्रिय युवा स्वामी। क्या आपको मेरे जाने का अफसोस नहीं होगा?'

"अरे साहब, अल्लाह न करे, क्या आप कहीं दूर जा रहे हैं? ये तो बस हवेली है। आप यहाँ से

बाहर निकलकर इसे देख सकते हैं।" नवाब मिर्ज़ा ने अपनी माँ को गले लगाया। "हवेली कोई जेल नहीं है! हम आपको हमेशा याद करेंगे।" उनकी आँखों में आँसू भर आए। "लेकिन क्या आपके जीवन में शांति, सुकून और चिंताओं से मुक्ति के लिए कुछ जगह नहीं होनी चाहिए?"
'क्या उस स्त्री को शांति मिल सकती है जो अपने बच्चों से बिछड़ गई हो?' इस बार वज़ीर की कड़वी सच्चाई से भरी थी।

'अरे, आप तो बहुत बढ़ा-चढ़ाकर बोलती हैं, अम्मा जान!' नवाब मिर्जा ने उन्हें चिढ़ाते हुए कहा। 'हम कहीं और नहीं बल्कि आपके चरणों में ही होंगे, भले ही वास्तविकता में न हों।'
अंततः, वज़ीर को यकीन हो गया कि उसके दिल में उसके लिए प्यार की कोई कमी नहीं थी, और न ही किले में उसकी शादी की संभावना से उसे कोई नाराज़गी थी; वह चाहता था कि उसकी माँ अपना जीवन नए सिरे से शुरू करे, जिसमें उसके दोनों बच्चों की भूमिका शायद न के बराबर हो। अगर नवाब मिर्ज़ा तीसरे उत्तराधिकारी से मेरी शादी के लिए राज़ी हैं, तो यह मेरे प्रति प्रेम या सहानुभूति की कमी के कारण नहीं, बल्कि पूरी तरह से उनके सच्चे प्यार के कारण है। हाँ—वज़ीर ने अपने मन से कहा—नवाब मिर्ज़ा की सहमति ठीक है, लेकिन मुझे भी पूरी तरह से सोच-समझकर फैसला लेना चाहिए। ये प्रेम-प्रसंग और रोमांस के मामले नहीं हैं, जो किसी लड़की को अंधाधुंध छलांग लगाने के लिए उकसा सकते हैं—जैसा मैंने एक बार किया था। मैं अब बड़ी और समझदार हो गई हूँ। अब मुझे सोच-समझकर कदम उठाने चाहिए।
पहले कदम के तौर पर, उन्होंने अब नवाब मिर्जा से उनकी शादी के बारे में बात करने का फैसला किया। उन्होंने कहा, 'एक और मामला है जिसके बारे में मुझे लगता है कि अब आपसे बात करना जरूरी है।'
'जी हां, अम्मा जान।' नवाब मिर्जा उनके करीब आ गए। 'मैं पूरी तरह से ध्यान देने के लिए तैयार हूं।' वे उनकी ओर झुके, उनका सिर लगभग उनके सीने के पास था, जैसा कि बचपन में हुआ करता था।
'दरअसल बात तो ये है कि...' वो थोड़ी देर रुकी। 'बात ये है कि अब आपकी शादी की उम्र हो गई है। किले से आया निमंत्रण मेरे लिए कुछ नतीजा लाए या न लाए, मेरी दिली तमन्ना यही है कि इस घर में बहू के शुभ कदमों की रोशनी फैले।'
नवाब मिर्ज़ा सचमुच हैरान रह गए। 'शादी? मतलब मेरी शादी? लेकिन अम्मा जान, मैं तो अब भी दिन-प्रतिदिन के जीवनयापन के लिए आप पर ही निर्भर हूँ!'
मैंने भी यही सोचा था। किसी की बेटी को लाना...
'किसी की बेटी' यह वाक्यांश नवाब मिर्ज़ा के लिए बेहद असहज था। आखिर वह किसकी बेटी की बात कर रही थी? उसने तुरंत उसे टोकते हुए कहा, 'लेकिन, अम्मा जान—'
वज़ीर ने उसे बीच में ही रोक दिया। 'प्यारे बच्चे, पहले मुझे अपनी बात पूरी करने दो; तुम्हें मेरी बात समझनी होगी। किस सुरक्षा और किसकी गारंटी पर मैं किसी और की बेटी को अपने घर लाऊं? यही बात मुझे परेशान कर रही है। लेकिन लगता है बारी बाजी के विचार अलग हैं।'
अब नवाब मिर्ज़ा अपना आपा नहीं रोक पाए। वे बहुत उत्तेजित होकर अपनी सीट से उठे और

लगभग रोते हुए बोले, 'तो बड़ी खाला ने क्या कहा, अम्मा जान? क्या उन्होंने मेरे बारे में कुछ कहा?'

वज़ीर मुस्कुराईं। वह अपने बेटे की बेचैनी का कारण भली-भांति जानती थीं। उन्होंने कहा, 'बारी बाजी इस बात का इंतज़ार कर रही थीं कि मैं फातिमा को तुम्हारी दुल्हन के रूप में माँगूँ। चूंकि मैंने उनसे इस विषय पर कभी बात नहीं की थी, इसलिए उन्होंने अपने विचार मन में ही रखे और कुछ नहीं कहा। अब जब हम किले के बारे में चर्चा कर रहे थे, तो तुम्हारे भविष्य का भी ज़िक्र आया, और उन्होंने इशारों में कहा कि वह तुम्हें दामाद के रूप में स्वीकार करेंगी जो उनके घर में रहेगा।'
नवाब मिर्ज़ा का चेहरा थोड़ा बदल गया। वह फ़ातिमा के लिए अत्यंत तड़प रहा था, लेकिन बारी खाला के घर में दामाद बनकर रहने का ख्याल उसके मन में दूर-दूर तक नहीं था। वह कहने लगा, 'अम्मा जान, यह घर चाहे जितना भी कीमती हो, मेरा भी है और फ़ातिमा का भी...'
“ओह, मेरे प्यारे बेटे, ये सब बातें बाद में हो सकती हैं। सबसे ज़रूरी बात ये है कि अगर तुम फातिमा से शादी करोगे तो बारी बाजी बहुत खुश होंगी, दिल से खुश होंगी। और ज़ाहिर है, यही मेरी भी दिली तमन्ना है। इसलिए मैंने उनसे कहा, “जिस तरह फातिमा मेरी बेटी हैं, उसी तरह नवाब मिर्ज़ा तुम्हारा बेटा है। हम दिल से इसे स्वीकार करते हैं।””
‘अल्लाह की कसम, अम्मा जान, आपने मेरे बेजान शरीर में नई जान फूंक दी!’ नवाब मिर्ज़ा ने एक बार फिर अपनी माँ को गले लगाया, इस बार और भी ज़्यादा जोश के साथ। ‘आपने मुझ पर हज़ारों बार दया दिखाई है, लेकिन यह दया सबसे बढ़कर है! मेरे शरीर का हर एक बाल पहले से ही आपका गुलाम था और अब मैं आपको धन्यवाद के रूप में क्या अर्पित करूँ, यह मुझे नहीं पता। मैं ज़िंदगी भर आपके लिए दुआ करूँगा। अल्लाह आपकी छत्रछाया मुझ पर सदा बनाए रखे।’
नवाब मिर्ज़ा अपनी माँ को बार-बार गले लगा रहा था; उनके हाथों को चूम रहा था; हँस रहा था; रुंधे हुए गले से उनके लिए दुआएँ कर रहा था। वज़ीर फूट-फूटकर रो रहा था। माँ बार-बार उसके दुखों को दूर करते हुए कह रही थी, 'बच्चे मियां, मेरे प्यारे बच्चे, मेरी लंबी उम्र के लिए दुआ मत करो। मेरी दुआ तो यही है कि मेरी उम्र तुम्हारी उम्र में जुड़ जाए। जो तुम्हें मिलना है, वो पहले मुझे ले जाए और मैं इस दुनिया से तब विदा होऊँगी जब मैं तुम दोनों को खुशहाल और खुशहाल देख लूँगी।'
जब उनके दिलों में उमड़ रही उथल-पुथल थोड़ी शांत हुई, तो नवाब मिर्ज़ा ने कहा, 'अम्मा जान, कृपया कभी यह मत सोचिएगा कि अगर मैं आपको किले से आए संदेश को स्वीकार करने का सुझाव देता हूँ, तो इसका कारण यह है कि आपके और बारी खाला के बीच मेरे और फातिमा के बारे में कोई बातचीत हुई है या होने वाली है।'
'नहीं, अब मुझे बिल्कुल भी संदेह नहीं है। पहले भी मुझे कोई संदेह नहीं था, लेकिन ईमानदारी की मांग थी कि मैं इस विषय पर बारी बाजी के साथ हुई अपनी बातचीत का खुलासा आपसे न करूं, ताकि आपकी राय पूरी तरह से निष्पक्ष रहे।'

जी महोदया, और मुझे यह स्पष्ट करने की अनुमति भी दी जाए कि मेरे विचार में ये दो अलग-अलग मुद्दे हैं: आपका शुभ किले में प्रवेश करना एक अलग बात है, और आप दोनों बहनों के बीच जो कुछ भी है वह बिल्कुल अलग है। मैं एक को दूसरे पर निर्भर नहीं मानता।

'नव मिर्ज़ा, आपके शुभ और प्रेमपूर्ण स्वभाव से मुझे और कुछ उम्मीद नहीं थी। ये सारी बातें मैं बारी बाजी को विस्तार से बता दूँगा, लेकिन आप निश्चिंत रहें कि किले में मौजूद लोगों के सामने मैं अपनी शर्तें रखूँगा।'

लेकिन अम्मा जान, कृपया, भगवान के लिए, उनके निमंत्रण को स्वीकार करने को उनकी शर्तों पर निर्भर न बनाएं।

'भाई... नवाब मिर्जा, सचमुच, आप तो वकील की तरह बात करते हैं!' वजीर मुस्कुराया।

'अम्मा जान, कृपया ध्यान दें, यह कोई हल्की-फुल्की बातचीत का विषय नहीं है!'

'गुरुजी, पहले मुझे अपनी शर्तें रखने दीजिए; फिर हम देखेंगे।'

'क्या बाई जी ने यह आश्वासन नहीं दिया था कि तुम्हारे बच्चों के साथ सब कुछ ठीक हो जाएगा?'

लेकिन उन्होंने यह भी कहा कि किले में राज करने के दिन भी एक दिन समाप्त हो जाएंगे।

'ओह, यह तो बस एक सामान्य बयान था, जैसा कि आप देख सकते हैं। हमें उसके वास्तविक शब्दों से आगे क्यों जाना चाहिए?'

'अच्छा, ठीक है। देखते हैं।' वज़ीर ने आह भरी। 'मैं कल बारी के घर जाकर उसे बता दूंगा। उसके बाद, अल्लाह ही हम सबका मालिक है।'

'हबीबा को ज़रूर संकेत दे देना। कुछ न्यूनतम तैयारियाँ करनी होंगी। और हमें मंझली खाला को काफ़ी पहले सूचना भेज देनी चाहिए। उन्हें यात्रा की व्यवस्था करनी होगी और नवाब साहब से अनुमति लेनी होगी।'

वज़ीर मन ही मन हिचकिचाई। बड़ी बाजी मंजली को ज़्यादा पसंद नहीं करती थीं। नवाब यूसुफ अली खान से बिना शादी के उसका रिश्ता और वह नापाक संबंध उन्हें बिलकुल भी अच्छा नहीं लगता था। यह सच है कि उन्होंने शिया धर्म के अनुसार अस्थायी विवाह का समझौता किया था, लेकिन हमारे धर्म में ऐसे समझौते का कोई महत्व नहीं है... खैर, जो भी हो, छोटी बेगम ने कंधे उचका दिए (यह बात उन्होंने मार्स्टन ब्लेक से सीखी थी, लेकिन दूसरों के सामने वह ऐसा कभी नहीं करती थीं)। मंजली बाजी मेरी बहन भी हैं। उन्होंने मेरे लिए जो भी अच्छे काम किए हैं, उनके लिए मैं उनकी आभारी हूँ। इसलिए मैं बड़ी बाजी को बता दूँगी कि मैं मंजली बाजी को आमंत्रित कर रही हूँ; मुझे उनकी अनुमति लेने की ज़रूरत नहीं है। और मुझे पूरा यकीन है कि मंजली बाजी के समारोह में आने से उन्हें बहुत खुशी होगी। मौलवी मुहम्मद नाज़िर साहब की बात करें तो, आजकल धर्मनिष्ठ और रूढ़िवादी पुरुषों समेत लगभग सभी पुरुषों के लिए एक या दो विवाहेतर संबंध रखना आम बात थी। शायद नाज़िर साहब का ऐसा कोई संबंध नहीं था, लेकिन उन्हें मंझली के अस्थायी विवाह से कोई आपत्ति नहीं थी।

'जी हां, बिल्कुल सही,' वज़ीर ने कहा। नवाब मिर्ज़ा सोच रहे थे कि उनकी माँ क्यों आनाकानी कर रही हैं। 'मामला सुलझते ही मैं डाक के ज़रिए उन्हें पत्र भेज दूंगा।'

अगले पाँच-सात दिनों में सभी मुद्दों पर विस्तार से चर्चा हुई। बच्चों के बारे में मिर्ज़ा फ़खरू बहादुर का विचार था कि नवाब मिर्ज़ा को विवाह के कुछ समय बाद किले में ले जाया जाएगा; उनका पालन-पोषण और शिक्षा तीसरे उत्तराधिकारी के अपने बेटे की तरह तीसरे उत्तराधिकारी के खर्चे पर होगी। वे अपनी माँ के साथ तीसरे उत्तराधिकारी के अपार्टमेंट में रहेंगे। शाह मुहम्मद आगा के बारे में निर्णय यह था कि चूंकि वे बहुत छोटे थे, इसलिए शुभ हवेली में उनकी उचित देखभाल और पालन-पोषण संभव नहीं होगा। उन्हें मासिक पेंशन दी जाएगी, लेकिन वज़ीर को उनके पालन-पोषण और उचित देखरेख की व्यवस्था स्वयं करनी होगी। वज़ीर अच्छी तरह समझती थीं कि असली कारण कुछ और ही होगा। निःसंदेह, शाह मुहम्मद आगा का दूध छुड़ा दिया गया था; लेकिन वे अभी भी बहुत छोटे थे और अगर वे माँ के साथ किले में जाते, तो उन्हें माँ के व्यक्तिगत ध्यान की बहुत आवश्यकता होती। उस स्थिति में वह अपना सारा समय और पूरा मन फथुल मुल्क बहादुर को समर्पित नहीं कर पाएगी, वज़ीर ने मन ही मन कड़वाहट से सोचा। लेकिन जब उसने इस मामले को शांत मन से देखा, तो किले का दृष्टिकोण न्यायसंगत प्रतीत हुआ। नवाब मिर्ज़ा को किले में स्वीकार करवाना ही वज़ीर के लिए एक बड़ी सफलता मानी जानी चाहिए, और साथ ही—अल्लाह उसे सलामत रखे—समझदार लोगों की नज़रों में उस नौजवान के महत्व का प्रमाण भी, जिन्हें भविष्य में उससे बड़ी उम्मीदें हैं।

दहेज के रूप में एक लाख शाह आलमी रुपये और सौ सोने के मोहर (शाह आलमी) प्रस्तावित किए गए थे। हालांकि, इसमें से कुछ भी तुरंत देय नहीं था: विवाह अनुबंध के हिस्से के रूप में सभी राशियों के भविष्य में भुगतान का पक्का वादा किया गया था। इसके बदले में, यह प्रस्ताव रखा गया कि दुल्हन पक्ष को दूल्हे या उसके परिवार को कोई भी शादी का उपहार देने या कोई अन्य खर्च करने की आवश्यकता नहीं होगी; न ही दूल्हे को दुल्हन को दहेज देना होगा। दहेज के रूप में एक या दो दासियां दुल्हन के साथ जा सकती थीं। सम्राट और दूल्हा दोनों दुल्हन को पूर्ण विवाह वस्त्र भेंट करेंगे। दूल्हे के परिवार और दोस्तों से दुल्हन को 'चेहरा नकाब के बदले उपहार' के रूप में जो कुछ भी मिलेगा, वह पूरी तरह से उसी का होगा। शरीयत के अनुसार एक विवाह अनुबंध तैयार किया जाएगा जिस पर विवाह संस्कार कराने वाले काज़ी के साथ-साथ दूल्हा और दुल्हन भी हस्ताक्षर करेंगे। विवाह संपन्न होने के बाद, एक नलकी, दो घुड़सवारों और चार गदाधारियों के साथ, शुभ किले से निकलता और दुल्हन को उचित सम्मान के साथ किले में लाता।

शाह मुहम्मद आगा से अलग होने के अलावा वज़ीर को सभी शर्तें मंज़ूर थीं। कभी-कभी उनके मन में एक तीव्र इच्छा उठती थी कि वे 'ना' कह दें! यह ऐलान कर दें कि अगर बच्चा इस सौदे का हिस्सा नहीं है, तो वे भी नहीं हैं। तब उन्हें बाई जी साहब की भविष्यवाणी याद आती थी कि उनके बच्चों का भला होगा और ये घटनाएँ होनी ही थीं। दूसरी ओर, जब वे अपने और नवाब मिर्ज़ा के भविष्य के बारे में सोचती थीं, तो किले के अंदर का जीवन उन्हें सबसे आकर्षक लगता था। उनके मन में यह ख्याल आया कि वे बाई जी साहब से दोबारा मिलें और आगे की शिक्षा लें; लेकिन उन्होंने ऐसा नहीं किया, क्योंकि यह गुस्ताखी होती।

अंततः, उसे एक समाधान मिल गया, एक तरह का बीच का रास्ता: वह शाह मुहम्मद आगा के

लिए किसी भरोसेमंद देखभालकर्ता का इंतजाम करेगी; लेकिन जब वह बड़ा हो जाएगा, तो उसे किले में शिक्षा प्राप्त करने की अनुमति दी जाएगी; और जब तक वह छोटा है, उसे समय-समय पर, और विशेष रूप से जब वह बीमार हो, तो उसे अपने पास लाने का अधिकार होगा।
तीसरे उत्तराधिकारी बहादुर ने अनिच्छा से ही सही, इसे स्वीकार कर लिया। राज ज्योतिषी से परामर्श करके एक शुभ तिथि निर्धारित की गई। उस तिथि से एक रात पहले, वज़ीर खानम बारी के घर में चले गए ताकि एक संक्षिप्त, लेकिन विधिवत 'विवाह विदाई समारोह' संपन्न किया जा सके। निर्धारित समय पर, मौलवी इमाम बख्श सहबाई बारी के घर आए और पर्दे के पीछे से, वज़ीर से एक लाख रुपये और एक सौ सोने के मोहरों के बदले में, हिंदुस्तान के सम्राट के तीसरे उत्तराधिकारी साहिब-ए आलम व आलमीयन मिर्ज़ा मुहम्मद सुल्तान गुलाम फखरुद्दीन फथुल मुल्क बहादुर के साथ वज़ीर खानम के विवाह की रस्में संपन्न करने की अनुमति मांगी। मौलवी मुहम्मद नज़ीर रिफाई मुजद्दिदी और इहतराम-उद-दौला उमदत-उल हुकमा हकीम मुहम्मद अहसानुल्लाह खान बहादुर गवाह के रूप में उपस्थित हुए। वज़ीर की स्वीकृति स्पष्ट रूप से सुनने के बाद, मौलवी मुहम्मद नज़ीर और मौलवी सहबाई किले में दाखिल हुए, जहाँ विवाह की घोषणा के लिए एक छोटा और चुनिंदा समूह एकत्रित था। उपस्थित सभी लोगों ने दूल्हे की सहमति सुनी। मौलाना सहबाई, दूल्हा और गवाहों ने विवाह अनुबंध पर हस्ताक्षर किए। बधाईयों का ज़ोरदार शोर मच गया और मिर्ज़ा फथुल मुल्क बहादुर के चेहरे पर चौड़ी मुस्कान थी, मानो यह उनका पहला विवाह हो, वैवाहिक सुख की सभी युवा इच्छाओं और आशाओं से भरा हुआ। मिठाईयाँ खूब बाँटी गईं, लेकिन रात्रिभोज नहीं हुआ।
मिर्ज़ा फ़तहुल मुल्क बहादुर ने सम्राट की अनुमति से दुल्हन के लिए राजसी नलकी भेजी। इससे पहले दिन में, उन्होंने वज़ीर के लिए अपनी पहली पत्नी का भव्य और कीमती विवाह वस्त्र भेजा था। यह उल्लेखनीय है कि मिर्ज़ा फ़तहुल मुल्क बहादुर ने अपनी पहली पत्नी फ़ज़ीलत-उन-निसा बेगम की मृत्यु के बाद, अपनी दूसरी पत्नी सहित किसी को भी वह वस्त्र नहीं दिया था। राजसी अभिजात वर्ग के रीति-रिवाजों से भलीभांति परिचित मंझली बेगम ने सुझाव दिया कि किले से भेंट या उपहार के रूप में जो कुछ भी भेजा जाए, उसके अलावा दुल्हन के साथ कुछ भी वापस नहीं भेजा जाना चाहिए। वज़ीर, जो अब तक चुपचाप सारी कार्यवाही देख रहा था, ने इसे मानने से इनकार कर दिया और ज़ोर देकर कहा कि हबीबा और उसकी बड़ी बहन की इच्छा के अनुसार अन्य सभी चीज़ें, जैसे वस्त्र और आभूषण, उसके साथ भेजे जाने चाहिए। यदि किले के लोग सहमत नहीं हैं, तो वे नरक में जाएँ।
उम्दा खानम ने घबराते हुए कहा, 'अरे, तुम क्या कह रही हो, लड़की! अगर किसी को पता चल गया तो ये दिन भर की गपशप बन जाएगी!'
‘आप सही कह रहे हैं, मंझली बाजी,’ वज़ीर ने उत्तर दिया, ‘लेकिन क्या मेरे लिए लगभग नग्न अवस्था में वहाँ जाना उचित होगा? अरे, यह तो उस कहावत की तरह होगा: “उसका सिर ही उसकी पालकी है, और उसके पैर ही उसकी पालकी उठाने वाले हैं; देखो, आ रही है वह महिला जिसका नाम है नया वसंत!” यह तो सचमुच बहुत ही अभद्र लगता है।’
‘दरअसल, रीति-रिवाज के लिहाज से मांझली सही है,’ बारी बेगम ने कहा। ‘लेकिन छोटी कोई

साधारण दुल्हन नहीं है; उसे विशेष रूप से बुलाया गया है, या यूं कहें कि आमंत्रित किया गया है। मुझे लगता है कि वह नवाबों के समय के अपने कुछ कीमती गहने और वस्त्र अपने साथ लाएगी।'

24 जनवरी 1845 की शाम ठंडी, लेकिन सुहावनी थी: कुछ धुंधली सी शाम, चूल्हों से निकलती रहस्यमय, मधुर और दिल को छू लेने वाली लकड़ी के धुएं से सराबोर, जब उमदा खानम, नवाब मिर्ज़ा, अमातुल फातिमा और मौलवी मुहम्मद नाज़िर ने आशा और प्रार्थना से भरे दिलों के साथ वज़ीर की औपचारिक विदाई की। उन्हें कुरान की छाया में बारी के मुख्य द्वार से होते हुए नलकी में ले जाया गया। अकबरी वज़ीर के साथ नलकी में सवार थे, उनके पीछे एक और पालकी थी जिसमें हबीब-उन निसा वज़ीर के गहनों का डिब्बा और उनके सबसे अच्छे कपड़े से भरा हुआ थैला लिए बैठी थीं। शाह मुहम्मद आगा बहुत दुखी थे और अपनी माँ के साथ जाने की ज़िद कर रहे थे, लेकिन बारी बेगम की वरिष्ठ दासी ने उनका ध्यान भटकाने के लिए उन्हें बाज़ार भेज दिया ताकि वे नज़ारे देख सकें और खिलौने खरीद सकें।

वज़ीर के साथ नलकी में सफर करते हुए, बारी बेगम फूट-फूटकर रो रही थीं, जो वज़ीर की मिन्नतों के बावजूद नहीं रुक रही थीं। उन्होंने कहा, ये खुशी के आंसू हैं। अल्लाह ने उन्हें अपनी छोटी बहन को अपने हाथों से सजाने-संवारने और उसे नए घर तक ले जाने का सौभाग्य दिया। जब मूक दुल्हन अपने पिता के प्यार भरे और सुरक्षित घर से विदा हुई, तो वहाँ कोई लड़कियाँ गीत गाकर उसे कुछ कहने का मौका नहीं दे रही थीं, लेकिन मैं दुखी भी हूँ और बेहद खुश भी। अगर हमारे पिता आज यहाँ होते और छोटी को अपने दुख की भरपाई पूरी खुशी से करते देखते, तो वे कितने खुश होते! मेरे और छोटी के लिए उनकी दुआएँ और दुआएँ कितनी भरपूर होतीं! अल्लाह इस जोड़े को सुरक्षा और स्थायित्व प्रदान करे और मुझे शाह मुहम्मद आगा की सर्वोत्तम देखभाल करने की शक्ति दे। उन्होंने फीकी मुस्कान के साथ कहा, डायपर बदले हुए कितना समय हो गया है। अल्लाह मेरी इज्जत बचाए रखे।

उच्च किले के अंदर, राजमहल की ओर जाने वाला पत्थर का रास्ता कुलमकनी, उरदाबेगनी, तुर्किस्तानी और अबीसीनियाई महिला अंगरक्षकों और कई अन्य लोगों से भरा हुआ था। वे तुरंत ही नल्की को पर्यटकों की भीड़ की तरह घेर लिया। कुछ साहसी और चंचल महिलाएं पास आईं और नल्की का दरवाजा कुछ इंच खोलकर अंदर झाँका और जल्दी से पीछे हट गईं, पैगंबर को जोर से सलाम करते हुए, जो किसी सुंदर चेहरे की प्रशंसा करने का सामान्य तरीका है। एक और महिला तो और भी ज्यादा शरारती थी—वह खुशी से हँसी और अपने बगल में खड़ी महिला से बोली, 'हा! केवल ईश्वर ही दोषरहित है! मैंने धुंधले शीत ऋतु के चाँद के बारे में सुना है, लेकिन यह शरद पूनम का चाँद है, जो शीत ऋतु की शुरुआत में दिखाई देता है! इसे देखो और तुम्हारा हृदय आनंद से भर जाएगा।'

'हाँ, बीवी, काली गुलाब की तरह धधकती हुई गर्म और काली!'

'अरे, तुम दुष्टो! देर मत करो। जल्दी से एक जसॉलनी को महाबली के महल में भेजो और उसे यह खबर दो कि उनकी बहू—सूर्य और चंद्रमा के समान तेजस्वी और मधुर—किले में अपनी

गरिमामय उपस्थिति दर्ज करा चुकी है!'
महाबली की यह प्रथा थी कि वे रात को काफी देर से विश्राम करते थे, और वे आम तौर पर सूर्यास्त की नमाज़ के बाद किसी को भी अपने सामने आने की अनुमति नहीं देते थे। आज उनका आदेश था कि यदि दुल्हन के आने में अधिक देरी न हो, तो उन्हें सूचित किया जाए, क्योंकि वे चाहते थे कि दुल्हन अपने महल में जाने से पहले उनसे 'चेहरा ढँकने के लिए उपहार' ग्रहण करे। तदनुसार, एक जसलनी यह खुशखबरी लेकर सम्राट के मुख्य निवास स्थान, तस्बीह खानाह की ओर तेज़ी से रवाना हुआ। नलकी-वाहक धैर्यपूर्वक आगे के आदेशों की प्रतीक्षा कर रहे थे। स्वागत दल में से जो लोग ज़ीनत महल पर नज़र रख रहे थे, उन्होंने दुल्हन के स्वागत में बाकियों की तुलना में अधिक उत्साह दिखाने वालों के नाम ध्यान से नोट कर लिए; जिन लोगों ने कोई विशेष रुचि नहीं दिखाई, उन्हें भी नोट कर लिया गया।
कुछ ही मिनटों में, फथुल मुल्क बहादुर आते हुए दिखाई दिए, उनके पीछे एक जसोली थी। उसने आदेश दिया कि सौभाग्य और समृद्धि के महाबली दुल्हन को याद कर रहे हैं। अब जुलूस आगे बढ़ा और तस्बीह खाना के मुख्य द्वार पर पहुँचा; भारवाहकों ने नलकी को पवित्र द्वार के सामने संगमरमर के चबूतरे पर रख दिया। मिर्ज़ा फखरू एक कदम आगे बढ़े, नलकी का द्वार खोलने और दुल्हन को अपनी बाहों में उठाकर, बिना उसके पैर ज़मीन पर रखे, उसे द्वार के अंदर ले जाने के इरादे से। उसी क्षण, दो विशालकाय अबीसीनियाई महिला अंगरक्षक, जो देखने में बेहद शक्तिशाली लग रही थीं, हालांकि उनकी जवानी ढल चुकी थी, ज़ोर से हँसीं और बेफिक्र और दोस्ताना अंदाज़ में बोलीं, 'अरे, अरे, साहिब-ए आलम, युवराज बहादुर! इतनी जल्दी नहीं! दुल्हन को नलकी से उतारना हमारा काम है! और क्या आप हम जैसे बेसहारा लोगों के लिए कुछ दान नहीं करेंगे?' अगर नहीं, तो तुम्हारी प्यारी छोटी बेगम अपनी नांकी में ही बंद रहेगी!
इस पर सब लोग खिलखिलाकर हंस पड़े। लेकिन मिर्ज़ा फ़खरू इतनी आसानी से पीछे हटने वाले नहीं थे। उन्होंने हंसते हुए कहा, 'याकुत-उन निसा, आपने न जाने कितनी दुल्हनों को नदी पार कराने में मदद की है। काश, आप मुझे भी कभी मौका देते!'
'माननीय न्यायाधीश महोदय, आपके पास दुनिया के सारे अवसर हैं। हम जैसे गरीब लोगों को ही शुद्ध सोने का टुकड़ा हाथ में लेने का सौभाग्य नहीं मिलता।'
इस आदान-प्रदान को अर्थपूर्ण मुस्कानों के साथ स्वीकार किया गया, क्योंकि याकूत-उन निसा और उनके साथी ज़ैतुन के बीच संबंध होने की अफवाह थी।
‘खैर, बहन, हम तुर्क हैं, यह तो आपको पता ही होगा। हम दूसरों को अपनी संपत्ति पर हाथ नहीं लगाने देते।’
‘हम जगत के पुत्र के मार्गदर्शक और सलाहकार के समक्ष समर्पण करते हैं: यह आपकी संपत्ति तभी होगी जब हम इसे उठा लेंगे और आपको सौंप देंगे।’
‘बीवी, यह सर्वशक्तिमान ईश्वर का स्वयं का उपहार है। यह कोई पका हुआ फल नहीं है जो डाल से गिरकर तुम उठाओ और मुझे दे दो।’
‘माननीय महोदय, मैं तीस प्रवचनों की कसम खा सकता हूँ। मैंने अभी-अभी नलकी में झाँका और मैं चकित रह गया! पका हुआ फल गिरने पर भी उसे छूता नहीं। मुझे ऐसा लगा मानो परम

पवित्र ईश्वर ने बिजली को टोकरी में भरकर वहाँ लटका दिया हो। फिर, प्रभु की शक्ति से एकता की हवा चली...'

'और टोकरी की रस्सी टूट गई और टोकरी आपके पवित्र हाथों में आ गिरी,' ज़ैतुन ने वाक्य पूरा किया।

इस पर फिर से ज़ोरदार ठहाका लगा। मिर्ज़ा फ़खरू की हंसी सबसे तेज़ थी। जब हंसी थोड़ी कम हुई, तो राजकुमार ने कहा, 'अब लेडी किट्टी चाहे जितना भी खुश हो जाएं, टोकरी अपने गंतव्य तक पहुंच गई है।'

इन औपचारिकताओं के दौरान, फथुल मुल्क बहादुर के उरदाबेगनी ने पद और वरिष्ठता के अनुसार उपस्थित लोगों को सोने या चांदी की पतली अंगूठियां वितरित कीं। तभी एक कुलमकनी ने सम्राट के दरबार का पर्दा खींचा और घोषणा की, 'सर्वोच्च सम्राट दूल्हा और दुल्हन को बुला रहे हैं!'

याकूत और ज़ैतून नलकी की ओर दौड़े, उसका दरवाज़ा खोला और भव्य वस्त्रों से सजे वज़ीर को, जो विशाल वाहन के एक कोने में दुबके बैठे थे, बड़ी विनम्रता से अपनी बाहों में उठाकर बाहर ले आए। चारों ओर 'बिस्मिल्लाह!', 'कुरान ही गारंटर हो!', 'चादर लाओ!' के नारों की गूंज सुनाई दी। चार महिलाओं ने उनके ऊपर एक बड़ा जकूज़ी का कपड़ा फैलाया, और याकूत और ज़ैतून ने वज़ीर को बड़ी सावधानी से, मानो किसी पार्सल की तरह, अपनी बाहों में उठाया हुआ था। वज़ीर को धीरे-धीरे जुलूस के साथ कक्ष की ओर ले जाया गया। बारी बेगम नलकी में ही रहीं, जबकि हबीब-उन निसा की पालकी को दो उरदाबेगनी (उत्तराधिकारी) तीसरे उत्तराधिकारी के कक्ष तक ले गए।

जैसे ही वे सभा कक्ष की दहलीज पार कर रही थीं, दोनों अबीसीनियाई महिलाओं ने वज़ीर को धीरे से ज़मीन पर उतारा और उसे आगे बढ़ने का इशारा किया। उसके भारी दुपट्टे का किनारा घूंघट की तरह उसके चेहरे के सामने लटका हुआ था, जिससे वज़ीर को लगभग कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था, लेकिन अबीसीनियाई अंगरक्षकों ने उसकी बांहें पकड़ रखी थीं और उसे धीरे से आगे बढ़ाया।

बाकी अंगरक्षक और स्वागत करने वाली दासियाँ बाहर ही रुकी रहीं। मिर्ज़ा फथुल मुल्क बहादुर आत्मविश्वास से भरे कदमों और धीरे-धीरे संभलकर दुल्हन को कमरे में ले गए, जो इतनी तेज़ रोशनी से जगमगा रहा था कि वज़ीर को अपने ऊपरी दुपट्टे के पीछे अपनी आँखें चौंधियाती हुई महसूस हुईं। अल्लाह, ऐसा लगता है जैसे पूरे शहर के दीपक यहीं जल रहे हों, उसने मन ही मन कहा।

'ज़रा बच के!'

'अल्लाह और उसके पैगंबर, सावधान रहो!'

'पूर्ण आदर के साथ प्रणाम करें! जगत के शरणस्थल, महाबली, वे सदा सुरक्षित रहें! प्रथम स्थान पर उपस्थित हों!'

'ध्यान दें! पूरे आदर के साथ प्रणाम करें! श्रोताओं का दूसरा स्थान!'

‘संसार के शरणस्थल, राजा, ईश्वर उनकी रक्षा करें!’
‘सामने देखो! श्रोताओं का तीसरा स्टेशन!’

दरबार का पहला पड़ाव मुख्य द्वार था; दूसरा पड़ाव लाल कपड़े का एक भारी पर्दा था जिसे पुलियों से खींचा जाता था; तीसरा पड़ाव पर्दे के बाद था, वह स्थान जहाँ आगंतुक रुकता था और जहाँ से सम्राट को देखा जा सकता था। इस पड़ाव पर, आगंतुक तीसरी बार सलाम करता, कमर के ठीक नीचे हाथ जोड़ता और सीधा खड़ा होता, उसकी निगाहें ठीक सामने होतीं, लेकिन सीधे सम्राट की ओर नहीं।
‘कृपा करके नवाब दुल्हन साहब का प्रणाम स्वीकार करें!’
‘बिस्मिल्लाह अल रहमान अल रहीम। अल्लाह और उसके पैगंबर की कृपा और दया! शत्रु को पैरों तले कुचल दिया जाए! विपत्तियों को दूर भगा दिया जाए! दुल्हन साहब सलाम करती हैं!’
पूरा फर्श कीमती कालीनों से ढका हुआ था। चारों ओर रेशम और सोने के पर्दे लगे थे और ठीक बीच में सम्राट का आसन था, जिस पर सम्राट औपचारिक मुद्रा में बैठे थे। सदियों पुराने राजसी रक्त की ऊर्जा और गरिमा उनमें समाई हुई थी; उनका शरीर पूर्णतः सीधा, गर्दन ऊंची और आत्मविश्वास से भरी हुई थी, मानो जलालुद्दीन मुहम्मद अकबर की आत्मा उस नर्म शरीर में समाई हुई हो। वज़ीर ने किसी तरह औपचारिक मुगल कुर्ती की, एक बार फिर सलाम किया, यह सोचकर असमंजस में थी कि आगे क्या करे। तभी उसने सम्राट की आवाज़ सुनी, परिष्कृत और सशक्त, शक्ति से भरपूर, मानो यह संकेत दे रही हो कि भले ही अब राजत्व न हो, फिर भी वह राजा हैं, और आवश्यकता पड़ने पर अब भी हथियार उठा सकते हैं।
‘केवल ईश्वर ही दोषरहित है! हम मिर्ज़ा फ़खरू की उत्कृष्ट पसंद को स्वीकार करते हैं। अल्लाह उन्हें बुरी नज़र से बचाए।’
याकूत-उन निसा ने धीरे से वज़ीर को एक-दो कदम आगे बढ़ने का इशारा किया। वज़ीर उस अवसर से इतनी अभिभूत थी कि वह एक कदम भी आगे नहीं बढ़ा पा रही थी। धीरे-धीरे, सिर झुकाकर, उसने एक-एक कदम बढ़ाते हुए उनकी उपस्थिति की ओर कदम बढ़ाया। विश्व के आश्रयदाता ने सोने से जड़ी आबनूस की पेटी लिए खड़ी कुलमकनी को एक संक्षिप्त संकेत दिया; उसने पेटी खोली और उसमें से मोतियों का हार निकाला; राजा के एक और संकेत पर, उसने वज़ीर के गले में हार पहना दिया। वज़ीर ने तीन सलाम किए और फिर से दुविधा में पड़ गई कि आगे क्या करे। फिर से, विश्व के आश्रयदाता ने आदेश दिया, 'हम तुम्हें शौकत महल कहते हैं। हमारी हार्दिक इच्छा है कि तुम दोनों को इस लोक और परलोक में अपने सभी उद्देश्यों की पूर्ति हो, और विवाह के सभी सुख तुम दोनों के चारों ओर एक सुरक्षा कवच के रूप में रहें।'
आमीन! अल्लाह और उसके पैगंबर की रहमत सदा बनी रहे! दूल्हा और दुल्हन के दिल हमेशा एक-दूसरे से जुड़े रहें! शौकत महल साहब को उनकी उपाधि के लिए हार्दिक बधाई!
जैसे ही ये आवाजें कम हुईं, कोर्ट कैरियर ने पुकारा, 'साम्राज्य के ताज का मोती, खलीफा के साम्राज्य का ऐग्रेट, तीसरा उत्तराधिकारी, गुलाम फखरुद्दीन फतहुल मुल्क मिर्जा मुहम्मद सुल्तान बहादुर!'

याकूत ने एक छोटे से इशारे से वज़ीर को पीछे हटने का संकेत दिया। वज़ीर किसी तरह तीन कदम पीछे हटकर एक तरफ खड़ा हो गया, जबकि मिर्ज़ा फ़खरू ने तीसरे प्रणाम स्थल से सलाम किया, चार कदम आगे बढ़े और महाबली को अपना नज़्र (औपचारिक भेंट) प्रस्तुत किया। सम्राट ने भेंट को दो उंगलियों से छुआ; भेंट ग्रहण करने वाले ने नज़्र लिया, उसे अपने सिर पर रखा और तीसरे युवराज बहादुर को सलाम किया, जो अब प्रणाम स्थल पर वापस चले गए। फिर, राजकुमार को औपचारिक वस्त्र, या खिलत, पहनाए जाने से पहले, महाराज ने अचानक कहा, 'अमा मिर्ज़ा फ़खरू बहादुर!'

'मैं आपकी सेवा में हूँ, मेरे गुरु और मार्गदर्शक।'

'क्या वहाँ कोई नौजवान कवि नहीं है, शम्सुद्दीन अहमद खान का स्मारक? एक अच्छा कवि।'

'बिल्कुल सही, मेरे गुरु और मार्गदर्शक।'

'वह यहाँ उपस्थित नहीं है... उसका नाम क्या है, कोई अच्छा सा नाम है क्या?'

'महोदय, इन्हें नवाब मिर्जा कहा जाता है।'

'अरे हाँ। नवाब मिर्ज़ा खान। तो उनका राज्य क्या है?'

'यह मेरी ओर से एक गंभीर भूल थी, परम पूज्य। मैंने उन्हें इस भव्य मंडप में प्रस्तुत करने के लिए माननीय सेवकों से अनुमति नहीं ली थी।'

उसे अपनी छत्रछाया में रखो। उसके लिए मासिक वजीफा देने के आदेश जारी किए जाएंगे।

'यह चमत्कार करने वाले गुरु और मार्गदर्शक द्वारा अपने अनुयायियों का पालन-पोषण और उनकी व्यापक उदारता है। राज्य की माननीय स्थापना के आदेशों का तुरंत पालन किया जाएगा।'

'बिल्कुल उचित।'

'भाग्यशाली नवाब मिर्जा खान और उनकी माता की ओर से, यह सेवक उस युवक को खान की उपाधि से सम्मानित किए जाने पर कृतज्ञता व्यक्त करता है और सम्राट के भव्य मंडप के द्वार पर अपना माथा झुकाता है।'

अब एक चर्मपत्र वाहक एक बड़ी चांदी की थाली पर औपचारिक वस्त्र लेकर प्रकट हुआ। राजकुमार ने तीन बार सलाम किया, वाहक से मुख्य बाहरी वस्त्र लिया और उसे धारण कर लिया। वे धर्म के रक्षक, राजा के पास गए और दूसरी बार कुर्नीश किया। महाराज ने अपने सेवक पर विशेष कृपा दिखाते हुए, राजकुमार की पगड़ी पर सामने रत्न जड़ित सूती रिबन - सर पेच - स्वयं बांधा और उसके बाद उस पर जड़ित रत्नयुक्त पिन - जिगाह - पहनाया। उन्होंने राजकुमार की पगड़ी के दोनों ओर गोशवरा नामक लंबा आभूषण लटकाया और राजकुमार के गले में मोतियों का हार पहनाकर समारोह का वस्त्र संपन्न किया। फिर उन्होंने कंधों के चारों ओर लिपटी चमड़े और लोहे की डोरी से राजकुमार की पीठ पर एक ढाल बांधी और अंत में, राजा ने तलवार के हैंडल में छेद से गुजरे मोटे सूती धागे से तलवार को राजकुमार के शरीर के सामने लटका दिया। राजकुमार ने औपचारिक वस्त्र के प्रति कृतज्ञता के प्रतीक के रूप में एक और नज़र डाली। सम्राट ने हमेशा की तरह अपनी दो उंगलियों से उसे छुआ; फिर भेंट ग्रहण करने वाले ने उसे लिया और रख दिया। सम्राट ने एक संक्षिप्त प्रार्थना करने के लिए अपने हाथ उठाए। जैसे ही प्रार्थना समाप्त हुई और सभी ने 'आमीन' कहा, दरबारी उद्घोषक ने बुलंद आवाज में कहा, 'दरबार

समाप्त होता है!'

महाराज ने अपनी मुद्रा शिथिल की और पैर नीचे रखे। उनके पैर ज़मीन को छूने से पहले ही, जूतावाहक ने रेशम और चांदी का कपड़ा बिछाया और मुग़ल जूतों का एक जोड़ा निकाला, जिनके ऊपरी हिस्से सोने की इतनी भारी कारीगरी से सजे थे कि मानो उन पर सोना रंगा गया हो। उसने जूते महाराज के चरणों में पहनाए और महाराज ने गरिमामय भाव से महल के भीतरी भाग में प्रवेश किया। वहाँ उपस्थित लोग तभी अपनी जगह से उठे जब यह आवाज़ सुनाई दी कि महाराज ने महल में प्रवेश करने के लिए अपने पैर ज़बरदस्ती किए हैं। नलकी बाहर संगमरमर के चबूतरे पर तैनात थी और वज़ीर को शिष्टतापूर्वक उस पर बिठाया गया। जूतावाहकों ने बिस्मिल्लाह का पाठ किया और मिर्ज़ा फ़तहुल मुल्क बहादुर की हवेली की ओर चल दिए।

उस चांदी जैसे शरीर के चारों ओर वासना बाघ की तरह मंडरा रही है।

मिर्ज़ा फ़खरू की हवेली पहुँचते ही हबीबा ने दुल्हन के श्रृंगार और उसके कमरे की सारी व्यवस्थाओं का जिम्मा संभाल लिया। बारी बेगम ने वज़ीर पर आने वाली किसी भी विपत्ति को स्वयं अपने ऊपर लेने की अपनी आदत के अनुसार विदा ले ली।

आंसू पोंछते हुए उसने कहा, “मैं तुम्हें ईश्वर और उसके प्रिय पैगंबर की सुरक्षा में सौंपती हूँ। मैं ईश्वर से प्रार्थना करती हूँ कि तुम्हें जीवन भर सुख और चिंतामुक्ति ही प्राप्त हो।”

वज़ीर ने अपनी बहन को गले लगाया और फुसफुसाते हुए कहा, 'कृपा करके, बड़ी बाजी, आप हमेशा मेरे लिए प्रार्थना करती रहें।'

हबीबा ने जल्दी से वज़ीर का ज़रूरी और तत्काल श्रृंगार किया और उसे दुल्हन के कमरे में ले गईं। स्वाभाविक रूप से, वज़ीर को वह पुरानी रात याद आ गई जब हबीबा ने बड़े प्यार से उसकी देखभाल की थी। उसका दिल खून से भर आया। क्या मैं अपने शहीद नवाब को कभी नहीं भूल पाऊँगी? इस पल भी नहीं, जब मेरा जीवन फिर से लिखा जा रहा है? हबीबा तुरंत समझ गईं कि ये खुशी के आँसू नहीं, बल्कि शोक के आँसू थे। या दूसरे शब्दों में कहें तो, शोक के भी नहीं: बस बीते दिनों की यादों की ओस, जो दिल के ज़ख्मों के सदाबहार फूलों की धरती में समा जाने और खो जाने के लिए बेताब थी। हबीबा ने एक मुलायम, हल्के हरे रंग के मलमल के रूमाल से उसके आँसू पोंछे और कहा, 'खानम साहब, कृपया खुद को संभालिए। राजकुमार आ रहे होंगे। उन दिनों की यादें हमेशा ताज़ा रहेंगी, लेकिन यह नए फूलों को खिलने देने का समय है। कृपया।'

सिसकते हुए वज़ीर ने सहमति में सिर हिलाया और फुसफुसाते हुए कहा, 'हबीबा, तुम बिल्कुल सही कह रही हो। लेकिन मेरा दिल बिना किसी वजह के उमड़ रहा है। पर तुम बिल्कुल सही कह रही हो, मुझे खुद को संभालना होगा। कृपया मुझे थोड़ा पानी दे दो।'

'लो, इस प्याले से पी लो। अब मैं विदा लेता हूँ, लेकिन मैं तुमसे अपनी जान की कसम खाकर विनती करता हूँ, अपने चेहरे से शोक के इन चिह्नों को मिटा दो।'

नीले और हरे रंग के फर्श लैंप और झूमर दुल्हन के कमरे को हल्की और समान रूप से रोशन कर रहे थे। कमरे में हर जगह हल्की लेकिन साफ रोशनी थी। पलंग फूलों और सुनहरी लेस से पूरी तरह सजा हुआ था। यह काफी ऊंचा था, इसलिए इस पर कदम रखने के लिए सीढ़ियों की जरूरत थी। लकड़ी की सीढ़ियाँ थीं, भारी और अच्छी तरह से सजी हुई; उनके पायदान इतने चौड़े थे कि कोई भी कदम छूटने की संभावना नहीं थी। हबीबा ने वज़ीर को पलंग के सिरहाने बिठाया; वह एक सच्ची दुल्हन लग रही थी: उसके घुटने उसकी छाती से लगे हुए थे, उसका सिर घुटनों पर टिका हुआ था; बेहद भारी, लगभग कड़े ब्रोकेड दुपट्टे का घूंघट जैसा किनारा उसके सिर और चेहरे को पूरी तरह से ढके हुए था; दोनों हाथ उसकी गोद में थे, लेकिन दुपट्टे के नीचे छिपे हुए थे। वज़ीर के मन में तनाव था, इतना कि उसके हाथ और घुटने हल्के से कांप रहे थे। हबीबा के बाहर जाने के बाद, वज़ीर ने शालीनता से अपनी आँखें बंद कर लीं, हालाँकि उसे एक नवविवाहित युवा

और अनुभवहीन दुल्हन की तरह व्यवहार करने में थोड़ी असहजता भी महसूस हुई।
हबीबा अभी शयनकक्ष के अग्रकक्ष से बाहर ही निकल रही थीं कि मिर्ज़ा फथुल मुल्क बहादुर वहाँ पहुँचे। उनके आगे दो मशालधारी थे और पीछे दो लाठीधारी। एक कुलमकनी ने घोषणा की, 'तीसरे उत्तराधिकारी बहादुर, ईश्वर उनकी रक्षा करे!'
नौकरों का अभिवादन स्वीकार करते हुए मिर्ज़ा फ़खरू अंदर चले गए। हबीबा पर नज़र पड़ते ही वे थोड़ा चौंक गए। उन्होंने एक अपरिचित महिला को देखा, जो वृद्धावस्था की दहलीज पर थी, सुंदर और अच्छे परिवार की महिला की तरह सजी-धजी। हबीबा उठीं, एक कदम आगे बढ़ीं, तीन सलाम किए और अपनी मधुर आवाज़ में बोलीं, "यह दासी संसार के गुरु और मार्गदर्शक के पुत्र के समक्ष अपनी आज्ञा का निर्वाह करती है। मेरा नाम हबीब-उन निसा है। मुझे दुल्हन बेगम साहब की सेवा में नियुक्त किया गया है।"
मिर्ज़ा फ़खरू को हबीब-उन निसा बहुत पसंद आईं और उनके शालीन शब्दों और अच्छे व्यवहार से वे मुग्ध हो गए। उन्होंने स्नेहपूर्वक उनकी ओर देखा और कहा: 'महोदया, आपके आने से मेरा हृदय प्रसन्न हो गया है, लेकिन "दुल्हन बेगम साहब" मत कहिए। "नव शौकत महल साहब" कहिए, क्योंकि राजमहल ने उन्हें यही उपाधि दी है।'
'केवल ईश्वर ही दोषरहित है! वास्तव में, यह कितना उपयुक्त और उचित शीर्षक है। अल्लाह आप दोनों के लिए इसे शुभ बनाए! कृपया अंदर कदम रखें। दुल्हन का कमरा आपका इंतजार कर रहा है।'
'बिस्मिल्लाह।'
हबीब-उन निसा राजकुमार को शयनकक्ष के दरवाजे तक ले गए, सलाम किया और पीछे की ओर चलते हुए बाहर निकल गए।
विश्व के गुरु और मार्गदर्शक का पुत्र प्रवेश किया; उसके कदम आत्मविश्वास से भरे और संयमित थे, परन्तु उसका हृदय सामान्य से अधिक तेज़ी से धड़क रहा था। जब उसने वज़ीर को नवविवाहित के रूप और मुद्रा में देखा, तो उसे शिष्टाचार के नियमों को भूलकर वज़ीर के मोहक शरीर को बाहों में भर लेने की तीव्र इच्छा हुई। परन्तु उसने स्वयं को रोक लिया, क्योंकि उसे रोकना ही था। उसके इस कार्य को असभ्यता का प्रदर्शन या कम से कम अवांछित और अनावश्यक जल्दबाजी माना जा सकता था। वह संयम से आगे बढ़ता रहा, और वज़ीर ने उसके कदमों की आहट सुनकर उठकर सलाम करने की इच्छा की, परन्तु मिर्ज़ा फ़खरू पहले ही पलंग तक पहुँच चुके थे।
'मैं सादर प्रणाम करता हूँ,' उन्होंने कहा और वज़ीर को उठने से रोकने के लिए अपना हाथ बढ़ाया। 'कृपया परेशान न हों,' वे मुस्कुराए। 'मैं यहाँ पहले से ही हूँ! इस शुभ क्षण के लिए सर्वशक्तिमान ईश्वर का कितना भी धन्यवाद पर्याप्त नहीं होगा।' वे पास आए, अपना दाहिना हाथ धीरे से वज़ीर के सिर पर रखा, मानो आशीर्वाद दे रहे हों, और एक फ़ारसी कविता पढ़ी:
ईश्वर की जय हो, मेरे दिल की हर इच्छा आखिरकार नियति के पर्दे के पीछे से प्रकट हो गई!
वह सीढ़ियाँ चढ़कर बिस्तर के किनारे पर बैठने के लिए आगे बढ़ा, लेकिन वज़ीर ने उसके बगल में थोड़ी जगह बनाई और थोड़ी कर्कश, कांपती हुई आवाज़ में, मन ही मन चिंतित होते हुए कि

क्या वह सही कर रही है, बोला, 'कृपया अपनी गरिमामय उपस्थिति यहाँ लाएँ; यहाँ पर्याप्त जगह है।'

'अगर आपके दिल में मेरे लिए जगह हो, तो यह मेरे लिए बहुत मायने रखेगा, महोदया। आप बिस्तर पर बैठी रहें या न रहें, लेकिन मैंने आपको अपने दिल में मजबूती से बसा लिया है।'

अब तक वज़ीर ने कुछ हिम्मत जुटा ली थी और कहा, 'अहलान व सहलान।' उसने अरबी वाक्यांश का प्रयोग किया जो बहुत पहले हबीबा ने उसके लिए इस्तेमाल किया था: तुम हमारे परिवार जैसी हो; इसलिए निश्चिंत और सहज रहो। शायद इसमें एक अचेतन प्रतीकवाद था, क्योंकि वज़ीर ने महान मीर दर्द की एक हिंदी पंक्ति उद्धृत की, जो शायद उसके अकेलेपन और जीवन में एक पुरुष की आवश्यकता को दर्शाती है।

कांच पूरी जिंदगी से पत्थर का इंतजार कर रहा है, बेसब्री से।

'अल्लाह की कसम, आपने क्या गजब की कविता सुनाई है, महोदया! लेकिन हम जैसे लोगों के जीवन में तो तत्परता ही रोजमर्रा की बात है...' मिर्ज़ा फ़खरू ने खेद से भरी एक गहरी साँस ली और हाफ़िज़ की एक अरबी-फ़ारसी ग़ज़ल की एक अरबी पंक्ति उद्धृत की:

तुमसे मेरा अलगाव एक लंबा और कठिन समय था, मानो प्रलय का दिन हो।

वज़ीर को अरबी का ज्ञान नहीं था, लेकिन मिर्ज़ा फ़खरू बहादुर को लगता था कि उन्हें अरबी आती है; या शायद उन्हें लगता था कि हाफ़िज़ शिराज़ी की उस ग़ज़ल की अरबी पंक्तियाँ तो उन्हें ज़रूर आती होंगी। असल में, शाही दरबार की शान-शौकत और औपचारिक नियमों को देखकर वज़ीर लगभग अवाक रह गई थीं। ऊपर से उनके सुनहरे दिनों की अनगिनत यादें भी उनके मन में बसी हुई थीं। ऐसी स्थिति में उनके लिए फ़ारसी कविता, विशेषकर अरबी मिश्रित कविता, याद करना नामुमकिन था। यह महज़ ईश्वर की कृपा थी कि उन्हें उसी ग़ज़ल की एक उपयुक्त पंक्ति याद आ गई।

मेरी आँखों में हमारे अलगाव के सैकड़ों निशान हैं: क्या मेरे आँसू प्रेमियों का सच्चा प्रतीक नहीं हैं?

मिर्ज़ा फ़खरू मुग्ध हो गए। 'हे ईश्वर, आपकी बुद्धि की तत्परता, आपकी स्मृति की शक्ति! क्या हमें भी आपकी स्मृति की कैद में इस कदर कैद होने की उम्मीद करनी चाहिए कि हमें कभी रिहाई न मिल सके?'

राजकुमार द्वारा वज़ीर की हाजिरजवाबी की स्पष्ट प्रशंसा देखकर उसकी मानसिक घबराहट लगभग गायब हो गई। उसकी याददाश्त भी अब पूरी तरह से सक्रिय हो गई थी। उसने अपना पूरा चेहरा दिखाया और उसी ग़ज़ल की एक पंक्ति पढ़ी:

सुबह की हल्की हवा ने अचानक मेरी छिपी हुई अवस्था से पर्दा हटा दिया, ठीक वैसे ही जैसे सुबह ढलते समय सूरज बादलों के पीछे से निकलकर प्रकट होता है।

मिर्ज़ा फ़खरू ने वज़ीर की ठुड्डी पकड़कर उनका चेहरा ऊपर उठाया, उनके माथे को चूमा और पुकार कर बोले, "सचमुच, मेरे दिल की यही तमन्ना है कि आप अभी की तरह मेरे सामने बैठी रहें और मैं आपको हमारे महान उस्तादों की आयतें एक-एक करके सुनाते हुए सुनूँ। लेकिन मेरे पास, या यूँ कहूँ कि हमारे पास, आगे और भी ज़रूरी और दिलचस्प काम हैं। फिलहाल, कृपया

शिराज़ी ख्वाजाह एक बार फिर सुनिए।" उन्होंने उसी ग़ज़ल की आखिरी आयत सुनाना जारी रखा।

अब जबकि हाफ़िज़ यहाँ शराब का कटोरा माँगते हुए आया है, उसे दे दो, उसे उसमें से चखने दो, अत्यंत उदारता से, और बदले में उसकी जान ले लो।

वज़ीर ने फुसफुसाते हुए उत्तर दिया, "विश्व के गुरु और मार्गदर्शक के पुत्र के पास वह सब कुछ है जिसकी कोई भी कामना कर सकता है। मैं तो एक दयनीय कंगाल हूँ। मैं आपके योग्य किसी चीज़ को पाने का सपना भी कैसे देख सकता हूँ?"

"मैं कसम खाता हूँ, महोदया, यह बनावटी और जानबूझकर दिखाई गई अज्ञानता मुझे मार डालती है! शायद आप यह जताना चाहती हैं कि मेरा जीवन इतना कीमती नहीं है कि एक चुंबन या आपके चेहरे की एक झलक के लायक भी हो। मैं पूरी तरह सहमत हूँ। लेकिन कभी-कभी खरीदार के लालची स्वभाव का थोड़ा ध्यान रखना भी उचित होता है। क्या फ़ारसी कवि बाबा फुघानी ने सभी चाहने वालों की ओर से पहले ही जवाब नहीं दे दिया है?"

'महोदय, आप इतने चतुर और विद्वान हैं कि आप अपने पक्ष में दिए जा सकने वाले तर्कों से भलीभांति परिचित होंगे। लेकिन मुझे बाबा साहब के शब्द सरासर बनावटी लगते हैं।' इसके बाद उन्होंने फुगानी की वह आयत पढ़ी जिसका जिक्र मिर्जा फखरू ने अभी किया था:

"तुम, जो मेरे जीवन से एक कटोरा शराब खरीदने पर आश्चर्यचकित हो, जाओ और साकी से पूछो कि शराब इतनी सस्ती कीमत पर क्यों बिक रही है।"

'मैंने अभी तक कुछ भी नहीं बेचा है, साहिब-ए आलम। दिखाने के लिए कुछ भी नहीं है।'

"ओह, निर्दयी दासी, ये क्या है? मुझे लगा था कि मेरे हृदय में प्रेम की शक्ति ने तुम्हें यहाँ खींच लाया है। लगता है बात बिल्कुल उलट है! महोदया, आपको किसी भी चीज़ की कीमत कम करने या कुछ भी मुफ्त देने की ज़रूरत नहीं है, लेकिन हम प्रेमियों पर थोड़ी कृपा कीजिए, हमारी भावनाओं का थोड़ा ध्यान रखिए। क्या आपको संत खुसरो के वचन याद नहीं हैं?" उन्होंने ये वचन सुनाए:

आप खुद को दो दुनियाओं के बीच आंकते हैं; कीमत थोड़ी और बढ़ा दीजिए, फिर भी आपकी कीमत कम ही रहेगी!

'महोदय, साहब-ए आलम, मुझे क्षमा करें, लेकिन आप गलत समझ रहे हैं।' वज़ीर ने अपना दुपट्टा चेहरे और गर्दन से हटा दिया, जिससे उसके चेहरे की कोमल वक्रता और समरूपता का चमत्कार पूरी तरह से प्रकट हो गया। उसने राजकुमार की ओर साहसपूर्वक देखा। 'केवल वही लोग मूल्य बढ़ा सकते हैं जो कभी न कभी सस्ते में प्रदर्शन पर रहे हों। आपने सुना ही होगा:

'आत्मजागरूक लोग स्वयं अपने रक्षक होते हैं: खसखस का फूल मोमबत्ती भी है और झूमर भी।'

'मुझे बाजार में मत ढूंढो, उस बाजार में भी नहीं, जहां प्रेमी और प्रेमिकाओं को खरीदा और बेचा जाता है।'

'कृपा करके। तुम पहेलियों में बात करते हो! क्या तुम मेरी चाहत नहीं हो, मेरी प्रियतमा नहीं हो?' दरअसल, साहब आलम, मैं यहाँ आपसे भीख माँगने और आपकी तलाश में आया हूँ, बिना बिके आपका दास बनने को तैयार हूँ। इसलिए, किसी भी प्रकार की कीमत बढ़ाने या घटाने की कोई

गुंजाइश नहीं है। लेकिन...
'लेकिन क्या? क्या बात है? कृपया मुझे बताइए!' मिर्ज़ा फ़खरू बहुत परेशान थे, वास्तव में चिंतित और व्याकुल थे। वह वज़ीर के गले लगना चाहते थे, लेकिन वज़ीर ने पहले ही यह समझ लिया और उनका हाथ अपने हाथ में लेकर राजकुमार की बांह को अपने गले में लपेट लिया। वह उनके करीब आईं और धीमी आवाज़ में बोलीं, 'मैं पूजा नहीं चाहती। मैं स्थिरता और धीरज चाहती हूँ। आपकी तरह, मैं भी उस अदृश्य शक्ति की ज़ुबान से बोलती हूँ, जिसने अपनी प्रेमिका को बुलाया था।'
मुझसे दूर मत जाओ, क्योंकि तुम मेरी आँखों की रोशनी हो।
मैं आपसे विनती करता हूं कि मुझे अंधेरे में अकेला न छोड़ें।
फथुल मुल्क बहादुर ने वज़ीर के दोनों हाथों को चूमा, उनके चेहरे को देर तक निहारा और कोमल, प्रेमपूर्ण स्वर में बोले, 'मेरी प्रियतमा, कुछ विरह ऐसे होते हैं जिन पर किसी का नियंत्रण नहीं होता। इनके अलावा और कोई विरह हमें विदा करने के लिए बाध्य नहीं कर सकता।' उन्होंने फिर से हाफ़िज़ की आयतें पढ़ीं।
हाफ़िज़, खुश रहो; दुश्मन से कहो कि तुझे नुकसान पहुँचाने की कोशिश में ही मर जाए। जब मुझे तुम्हारी गर्माहट मिली है, तो मुझे दुश्मन की ठंडी साँसों से क्यों डरना चाहिए?
मैं सर्वशक्तिमान ईश्वर से प्रार्थना करता हूं कि वह हमारे बीच हमेशा के लिए एकता की स्थिति बनाए रखे, और कुछ नहीं।
'वज़ीर खानम, मनुष्य में यथासंभव एकता होनी चाहिए। हम सर्वशक्तिमान ईश्वर से हमारे बीच संभव एकता की प्रार्थना करते हैं। यही सर्वोत्तम संसार है, क्योंकि ईश्वर ने इससे बेहतर कुछ नहीं बनाया। शायद अधिकतम यादृच्छिकता ही मानव अस्तित्व की कुंजी है। मृत्यु के बाद, हम फिर से जुड़ सकते हैं। हिंदुओं को देखिए, वे अपने मृतकों को जलाते हैं, मिट्टी को मिट्टी में मिलाते हैं, राख बिखेरते हैं। लेकिन सर्वशक्तिमान ईश्वर के पास सब कुछ वापस लाने की शक्ति है, जैसा कि कुरान में कहा गया है: "निःसंदेह अल्लाह उसे फिर से जीवित करने में सक्षम है!" वह समय होगा जब सब कुछ हमेशा के लिए एक साथ जुड़ जाएगा।'
'जब मनुष्य का स्वरूप विस्मृति और स्वार्थ से भरा हो तो एकता का क्या अर्थ रह जाता है? आप जगत के गुरु और मार्गदर्शक, साहिब-ए आलम के पुत्र हैं, और आपको ही मुझे इसका उत्तर देना चाहिए।'
'महोदया, क्या आप मनुष्य से उसके मानवीय होने के अलावा कुछ और मांग सकती हैं? वास्तविकता नहीं बदलेगी, चाहे कोई कभी आपकी पहेलियों को सुलझा ही दे। हमें अपने सत्य से संतुष्ट रहना चाहिए। यही हमारा स्थान है। यही हमारे लिए सबसे उपयुक्त है... लेकिन वज़ीर खानम, आप ये प्रश्न क्यों पूछते हैं? क्या हमारी शाम और रात तर्कशास्त्र के पाठ में मुख्य और गौण आधारों को प्रस्तावित करने और उनका विश्लेषण करने के लिए हैं? या ये सब हमारी आग को और भी भड़काने का बहाना मात्र है? बीबी, क्या आपको हमारे भीतर उथल-पुथल मचाते सागर की आवाज़ नहीं सुनाई देती? क्या आपको मेरी आत्मा में उमड़ती इच्छा की आंधी का कोई आभास नहीं है?'

वह कुछ क्षणों के लिए रुका। शायद वह अपने लंबे, जोशीले भाषण से थक गया था? नहीं। वह एक और हमले के लिए थोड़ा आराम कर रहा था। उसने वज़ीर के दोनों हाथ अपने एक हाथ में लिए, उसके होठों पर हल्का सा चुंबन किया और कहा, 'क्या तुम अली कुली सलीम की प्रसिद्ध आयत नहीं जानती?'

वज़ीर ने उसे जिज्ञासा भरी नज़रों से देखा, मानो उसे पूरी तरह समझ न आ रहा हो। मिर्ज़ा फ़खरू मुस्कुराए और बेहद मधुर स्वर में, मोहक अंदाज़ में और लगभग बेशर्मी से छेड़छाड़ करते हुए, ये शब्द सुनाए:

उस चांदी जैसी काया के चारों ओर वासना बाघ की तरह मंडरा रही है, क्योंकि उसने उसकी स्कर्ट के नीचे हिरण के खुरों के निशान देख लिए हैं।

मिर्ज़ा फ़खरू ने जब वह श्लोक पढ़ा तो उनका चेहरा थोड़ा लाल हो गया। दरअसल, उन्हें अपनी पहली ही मुलाकात में वज़ीर से इतना खुलेआम, बल्कि कहें तो आक्रामक, श्लोक कहने में शर्म आ रही थी। लेकिन सच तो यह है कि उनके पास कोई चारा नहीं था, क्योंकि वज़ीर के बौद्धिक प्रश्न-उत्तर सत्र से वे ऊब रहे थे, बल्कि चिढ़ ही रहे थे। अब वे वज़ीर को अपनी बाहों में भर लेना चाहते थे, सीने से लगा लेना चाहते थे, मानो किसी नए क्षेत्र में कदम रखने की तैयारी कर रहे हों। वज़ीर का चेहरा न केवल लाल हो गया, बल्कि उनके शरीर में एक बेशर्म इच्छा की गर्मी दौड़ गई और ऐसी इच्छा जागृत होने पर उन्हें शर्म भी महसूस हुई। ऐसा कामुक और उत्तेजक श्लोक तो महिलाएं भी अकेले में, जब आसपास कोई पुरुष न हो, कहने और उसका आनंद लेने के बारे में कभी नहीं सोचतीं।

अब तक वज़ीर के दिल में राजकुमार के लिए केवल यही था कि वह उसका पति है, और पत्नी के कर्तव्यों का उचित पालन करने के अलावा उसका कोई दायित्व नहीं था। निःसंदेह, वह नेक स्वभाव का, मनभावन और सुंदर था, और तीसरा उत्तराधिकारी था। उसने इन्हीं कारणों से उसे चुना था। लेकिन अब तक उसके दिल में बसे हुए लोग दूसरे युग के थे। वह साहिब-ए आलम व आलमीयन के साथ अपने रिश्ते को एक सुखद कर्तव्य के रूप में स्वीकार करने के लिए पूरी तरह तैयार थी, लेकिन वह उसे प्रेमी, प्रेमिका या मित्र के रूप में स्वीकार करने के बारे में सोच भी नहीं सकती थी।

अब, जब उसने सलीम की कविता को इतने स्पष्ट लेकिन शक्तिशाली आमंत्रण के साथ सुना, तो उसके मन में एक बदलाव आया; वह कुछ हद तक भयभीत थी, लेकिन यह बदलाव हुआ। ऐसा लगा मानो साहिब-ए आलम व आलमीयन ने उसके चारों ओर कोई मंत्र पढ़ा हो, और एक दिवंगत फ़ारसी कवि की केवल कामुक ही नहीं, बल्कि परिष्कृत कविता भी सुनाई हो। वह नाज़ुक, औपचारिक धागा जिसे वह अपने और राजकुमार के बीच का बंधन मानती थी, धार्मिक रीति-रिवाजों और सार्वजनिक मान्यताओं से बुना हुआ धागा, जैसे सूती धागे जिन्हें लोग अपनी कलाई या गले में पहनते हैं क्योंकि किसी ने उन पर फूँक मारकर उन्हें शुभ या प्रभावी बना दिया होता है, वह धागा अब वज़ीर के दिल से मकड़ी के सबसे पतले जाले की तरह कट कर अलग हो गया। अब यह उनके बीच केवल एक विवाह नहीं था, एक ठंडा, बंजर, लेकिन ईमानदार लेन-देन। ऊर्जा का एक नया तनाव, एक नई शक्ति, उसके शरीर की अब तक निष्क्रिय धमनियों में बाढ़

की तरह तेज़ी से बहने लगी। उसने महसूस किया कि उसके स्तन भर गए हैं और कस गए हैं। जहां इतने वर्षों में किसी भी उद्दंड प्राणी ने सिर नहीं उठाया था, वहां दो गर्वित और बैंगनी बिंदु प्रकट हुए, मानो कोई जादू उसकी गहरी भूरी आंखों के प्रतिबिंब को वहां ला रहा हो। क्योंकि उसके स्तन फूल गए और ऊपर उठ गए, उसकी उद्दंड आंखों का प्रतिबिंब उन पर पड़ रहा था, उसे एक फारसी कविता याद आ गई जो उसके मस्तिष्क से बहुत पहले खो गई थी। उसका शरीर एक नई गर्माहट से सिहर उठा। जीवन और सृजन के जल के भंवर के नीचे, शाश्वतता का जल जीवन के जल की गुफा में फूटने और फुहार मारने लगा। देखते ही देखते, वह स्थान फिसलने और संतुलन खोने का स्थान बन गया, यहां तक कि कठोर और पवित्र लोगों के लिए भी। वह, जिसकी आंखें इतनी चंचल हैं, अब आनंद के स्तर पर पहुंच गई प्रतीत होती है। उसकी त्वचा पर नमी है, जैसे कोई पका हुआ फल। गुलाब की पंखुड़ियों के किनारे पर हिरण के पैर का निशान गर्म और चमकदार हो गया और धीरे-धीरे खुलने लगा, जैसे प्रेमी के अंतर्मन में कोई घाव हो। प्रेमी की आशाओं से भरी सुबह के क्षितिज के नीचे, चाँद में दरार के गुप्त संकेत दिखने लगे। अब तक जो छवि לא (ला, 'नहीं') की थी, वह לא־לא (बाला, 'हाँ') में बदलने लगी। अब तक एक-दूसरे से मजबूती से जुड़े हुए दो अर्धचंद्र, जीवन के नमक से सींचे हुए, धीरे-धीरे अलग होने लगे।

वज़ीर ने कभी उम्मीद नहीं की थी कि गहरे बैंगनी रंग का ताला फिर से खुलेगा। दरअसल, पिछली सदी के हिंदी कवि इंशाअल्लाह खान की तरह, उसने 'ऐसी बातों को हमेशा के लिए भुला दिया था'। लेकिन साहिब-ए आलम व आलमीयन में कोई जादू था, या उन्होंने कोई शक्तिशाली ताबीज पहना था, या वज़ीर के लिए उनका प्यार उनकी आत्मा और शरीर को इतनी मजबूती से जकड़े हुए था कि वज़ीर की आत्मा और शरीर भी उसके चुंबकीय क्षेत्र से बाहर नहीं निकल पा रहे थे। कोमलता से, प्यार से, मिर्ज़ा फ़खरू ने उनके पैरों के तलवों को सहलाया, उनकी उंगलियों को चूमा, फिर उनकी पिंडलियों को टटोलने की कोशिश की, जो वायलेट की तरह मीठी खुशबू वाली और चंदन के पेड़ की दो पतली शाखाओं की तरह चिकनी थीं। वह जांघों तक जाना चाहते थे, प्रेम की शराब से भरे दो प्यालों तक, शराब को चूसना चाहते थे और आगे बढ़ना चाहते थे। जैसे ही उनकी उंगलियां उनकी पिंडलियों पर चलने लगीं, वज़ीर लगभग बेकाबू हो गईं। उसने उसे अपनी ओर खींचा, अपनी पतलून ऊपर उठाई, जिससे पतलून के निचले हिस्से तक उसके सुडौल और चिकने निचले अंगों का आकर्षक दृश्य दिखाई दिया। उसने अपने स्तनों को उसके हाथों के नीचे दबाया, कराहते हुए बुदबुदाई, मानो कुछ ऐसा कह रही हो: कितना अच्छा होता अगर ये कमीज़, ये चोली और ये पतलून सब हट जातीं। आवारा हिरनी भागना चाहती भी है और नहीं भी। वासना का शिकारी उसका पीछा करता है।

मिर्ज़ा फ़तहुल मुल्क बहादुर अत्यंत प्रसन्न हुए। उन्हें मिर्ज़ा ग़ालिब की हिंदी कविता याद आ गई: जब वह उदारतापूर्वक दुस्साहस और धृष्टता की अनुमति देती है: तो इसमें कोई दोष नहीं है, सिवाय दोष पर शर्मिंदा होने के।

लेकिन क्या यहाँ कुछ और भी चल रहा था? क्या वह कुछ इशारा नहीं कर रही थी, कुछ पूछ नहीं रही थी, और यहाँ तक कि कुछ माँग भी नहीं रही थी? वासना के उस शिकारी कुत्ते और उस ... आवारा हिरण के बारे में क्या था? उसने सलीम के बाघ के बारे में सोचा, और ... और हिरण के

खुरों के निशान के बारे में। हिंदी कवि मुशफी की एक कविता उसके दिमाग में और लगभग उसके शरीर में गूंज उठी:

अगर मुझे वह भटकती हुई हिरणी किसी अंधेरी रात में मिल जाए, तो मैं एक शिकारी कुत्ते की तरह व्यवहार करूंगा: मैं उसे काटूंगा, फाड़ूंगा और टुकड़े-टुकड़े कर दूंगा।

हे भगवान! कितनी बेशर्मी है! क्या दुस्साहस है, क्या ज़िद्दीपन है! क्या विद्वान यह नहीं कहते कि आपकी पत्नी को शयनकक्ष के बाहर एक मित्र और देखभाल करने वाली, यहाँ तक कि एक माँ भी होना चाहिए, लेकिन बिस्तर में, उसे एक वेश्या होना चाहिए?

वह और भी करीब आ गया और कोमल स्वर में बुदबुदाया, 'छोटी बेगम, तुम भटकती हुई हिरनी मत बनो। तुम्हारा गंतव्य मेरे प्रेम का कुटिया है। मैं तुम्हारी रक्षा करूँगा और तुम्हारी सेवा करूँगा... और ये कृत्रिम पर्दे अब हमारे बीच क्यों रहने दें?'

उसने उसका भारी दुपट्टा हटाया, उसकी पतलून की डोरी खोली और अपनी कमीज़ के बटन खोल दिए। वज़ीर ने अपने हाथ आगे बढ़ाए और उसकी चौड़ी छाती को ऐसे छुआ जैसे उस पर कुछ लिख रही हो। जैसे ही उनके शरीर एक-दूसरे से टकराए, कमरे की रोशनी मंद पड़ गई, लेकिन वे वास्तव में एक-दूसरे को देख नहीं रहे थे।

वज़ीर, जैसा कि हम जानते हैं, सुबह जल्दी उठने वाली थीं। आजकल तो वो और भी जल्दी उठने लगी थीं। वो रात भर जागती रहीं, और लगता है अब रात का आखिरी पहर चल रहा था। बात सिर्फ जागते रहने की नहीं थी: पिछली रात उनके जागने के लगभग सारे घंटे जुनून, उत्तेजना और उतार-चढ़ाव में ही बीत गए। मिर्ज़ा फ़तहुल मुल्क की प्रेममयी लेकिन कष्टदायक कोमलता ने उनके शरीर के हर जोड़ और मांसपेशी को दर्द से भर दिया था, लेकिन ये दर्द नशे की तरह सुखद था, एक ऐसा दर्द जो दूर नहीं हो रहा था और जिसे वो अलविदा कहना नहीं चाहती थीं। वो मुश्किल से आधे घंटे सोईं, लेकिन जब उठीं तो उनके रोज़ के समय से काफी देर हो चुकी थी। साहिब-ए आलम व आलमीयन अभी भी गहरी नींद में सो रहे थे, और लगता था कि वो बहुत देर तक सोते रहेंगे।

मोती मस्जिद के मुअज़्ज़िन ने अभी तक सुबह की नमाज़ के लिए अज़ान नहीं दी थी। उसे महसूस हुआ कि बाहर अभी भी बहुत अंधेरा है। हबीब-उन निसा कहाँ सो रही होंगी, उसने सोचा। हबीबा ने कहा था कि उन्हें कमरे की ज़रूरत नहीं है: वह वज़ीर के दरवाज़े के पास सो जाएँगी। लेकिन इतनी ठंड थी; उन्हें शायद किसी दूसरी वरिष्ठ नौकरानी के साथ कमरा दिया गया होगा या शायद सिर्फ़ उनके लिए। वैसे भी वह कहीं आस-पास नहीं सो रही होंगी। वज़ीर ने करवट बदलकर सोने का सोचा, लेकिन नींद अभी उससे बहुत दूर थी।

उसने देखा था कि पुरुष, चाहे थोड़े समय के लिए ही सही, प्रेम-प्रसंग के बाद कुछ देर तक जागते रहने की कोशिश करते थे, लेकिन अंततः जल्द ही नींद में डूब जाते थे। उनकी बातें रोमांटिक, चंचल या ज्यादातर घरेलू मामलों पर केंद्रित होती थीं। बोलते-बोलते वे महिला की ओर पीठ कर लेते थे, अक्सर बीच वाक्य में ही, और चुपचाप गहरी नींद में सो जाते थे।

वह अक्सर सोचती थी कि ऐसा क्यों होता है। क्या पुरुष का कर्तव्य नहीं है कि वह रक्षा करे, क्योंकि स्त्री के शरीर में उसी का वीर्य समाया होता है? शायद पुरुष को लगता है कि स्त्री हमेशा

उसकी सुरक्षा में है? यानी, जब तक वह उसके बगल में सोता है, स्त्री को कोई हानि नहीं हो सकती? कभी-कभी वह मन ही मन, कड़वाहट के साथ, कहती थी कि पुरुष को बस अपनी इच्छा की संतुष्टि चाहिए: एक बार जब वह उसे प्राप्त कर लेता है, तो उसे अपने बिस्तर पर सो रही स्त्री की स्थिति के बारे में जानने की परवाह नहीं होती... या जैसा कि उसने कुछ अनुभवी महिलाओं को कहते सुना था, यह पुरुष के लिए एक छोटी सी मृत्यु के समान है: अपनी इच्छा पूरी करने के बाद उसे आराम और विश्राम की आवश्यकता होती है। खैर, वज़ीर ने मन ही मन सोचा, मानो बिस्तर पर वह जो करता है वह आराम नहीं है! या शायद पीठ मोड़कर सो जाना उसकी साथी की वफादारी पर उसके विश्वास और भरोसे का प्रतीक है। लेकिन यह बात उसे बेतुकी लगती थी। उसे मिर्ज़ा ग़ालिब की एक हिंदी कविता याद आई:

क्या आपके मन में कोई संदेह है: क्या मिलन के बाद इच्छा क्षीण हो जाएगी और समाप्त हो जाएगी? लहर को देखो, जो मुख्य धारा में जीवित रहने के लिए संघर्ष कर रही है; यही वास्तविकता है।

वज़ीर को पूरा यकीन था कि उस रात उसे नींद नहीं आएगी। बेहतर होगा कि उठकर नहा लिया जाए और तरोताज़ा हो जाया जाए। उसने मज़ाक में गौर किया कि साहिब-ए आलम व आलमीयन उससे ज़्यादा थके हुए लग रहे थे: उनके जल्दी उठने की कोई उम्मीद नहीं थी, और अगर उठे भी तो शायद उसे वापस बिस्तर पर ले जाना चाहें। वैसे भी वज़ीर को नाश्ता करना ज़्यादा पसंद नहीं था। इसलिए सबसे अच्छा उपाय था नहाना और कपड़े बदलना।

वह उठी, थोड़ा अंगड़ाई ली और तुरंत ठंड महसूस करने लगी, क्योंकि उसने कपड़े नहीं पहने थे। उसने अपने शरीर पर एक भारी शॉल कसकर लपेटा और चुपके से पानी के कमरे में चली गई। उसने पाया कि वह कमरा हर ज़रूरत की चीज़ और कई विलासिता की वस्तुओं से सुसज्जित था: अंग्रेज़ी साबुन, सुगंधित चने का पाउडर, बाल धोने के लिए मुल्तानी मिट्टी की खली, इसी उद्देश्य के लिए अन्य मसालेदार पाउडर और खली; छोटे और बड़े चपटे तले वाले चमड़े के शीशे और इत्र और सुगंधित तेलों की बोतलें; अंग्रेज़ी स्पंज और प्यूमिस पत्थर, मृत त्वचा को साफ करने के लिए लूफा; कई जोड़ी छोटी कैंची और भारतीय नाखून छीलने वाले उपकरण; शरीर को सुखाने के लिए कई बड़े, मुलायम और भारी तौलिए; नहाने की चटाई के रूप में इस्तेमाल करने के लिए एक नीचा लकड़ी का चबूतरा: आप उस पर खड़े होकर या आराम से बैठकर नहा सकते थे; और कांच और धातु के कई बड़े, आदमकद दर्पण; धातु के दर्पणों के फ्रेम पर जटिल चित्रकारी थी, जबकि कांच के दर्पणों में भारी, अलंकृत लकड़ी के फ्रेम थे। कपड़े, तौलिए और रुमाल रखने के लिए एक लंबा आबनूस का कैबिनेट था। वज़ीर ने उसे खोला तो उसमें उसके रोज़मर्रा के कपड़े, जो वह अपने साथ लाई थी, और कुछ अन्य कपड़े करीने से ढेरों में रखे हुए थे।

वज़ीर को वहाँ एक नई चीज़ मिली - मज़बूत, अच्छी तरह से तैयार और चमकदार बांस के डंडों से बने पानी के पाइप और नल, जिन्हें छत में बने उपयुक्त छेदों से नीचे लाया गया था। वज़ीर ने सुना था कि राजमहल के कुछ स्नानघरों और पानी के कमरों में बांस या मिट्टी के पाइपों से चौबीसों घंटे गर्म और ठंडा पानी उपलब्ध रहता है। वह इन बातों पर यकीन नहीं कर पा रही थी; लेकिन वास्तव में उसने कुछ कंपनी अधिकारियों और दिल्ली के कुछ धनी नागरिकों के घरों में

वर्षों से इसी तरह की व्यवस्थाओं के बारे में भी सुना था। उसे शम्सुद्दीन अहमद खान की हवेली में जाने का अवसर तो नहीं मिला था, लेकिन नवाब के अतिथिगृह के पानी के कमरे में, जहाँ उसने अपनी पहली रात बिताई, उसने ऐसी कोई व्यवस्था नहीं देखी थी। प्रत्येक नल के नीचे दो बड़े कलश जैसे बर्तन थे और कलशों से पानी निकालने के लिए हैंडल वाला एक पीतल का बर्तन था, जिसे मशरबा कहते थे। वज़ीर ने नलों को चलाकर देखा और यह देखकर प्रसन्न और आश्चर्यचकित हुई कि वास्तव में उनसे गर्म और ठंडा पानी बह रहा था।

उसने अपना शॉल उतार दिया; ठंड के बावजूद, उसने पहले अपने चेहरे पर ठंडा पानी छिड़का; फिर उसने अपने चारों ओर गर्म पानी छिड़का, मानो कोई बच्चा पहली बार टब में नहा रहा हो। फिर उसने गर्म और ठंडे पानी को अपनी इच्छानुसार मिलाया और मशरबा से जी भर कर अपने शरीर पर डाला। बिस्तर की गर्माहट, छोटी, गहरी, उत्तेजित साँसें, खुद से अलग होने का एहसास, पूर्ण समर्पण की अनुभूति: ये सब यादगार था। लेकिन पानी की व्याप्त गर्माहट, शरीर के सुखद दर्द का दूर होना, आँखों से नींद के आखिरी कण तक धुल जाना: ये सब कुछ अलग ही था, और इनका अपना ही नशा था। कई वर्षों में पहली बार, उसे गीत गाने का मन हुआ। लेकिन नहीं, वह यह जोखिम नहीं उठा सकती थी कि मिर्ज़ा फथुल मुल्क बहादुर जाग जाएँ और उसे इस जल-कक्ष में पा लें। वह मन ही मन हाफ़िज़ की ग़ज़ल गुनगुनाने लगी, जिसकी पंक्तियाँ उन्होंने पिछली रात एक दूसरे से कही थीं, मानो वे छंदों को अंतिम रूप देने का प्रयास कर रही हों।

तुमसे मेरा अलगाव एक लंबा और कठिन समय था, मानो प्रलय का दिन हो।

कवि, जिन्हें सचमुच अदृश्य की ज़बान कहा जाता था, के संगीत, प्रवाह और मधुरता में वह इस कदर डूब गई कि जिन पंक्तियों और छंदों ने उसे सबसे ज़्यादा प्रभावित किया, उन्हें गुनगुनाते-गुनगुनाते पानी ठंडा पड़ गया। जब उसने देखा कि पानी अब आरामदायक नहीं रहा, तो वह उठी और रेशमी मुलायम तौलिए से अपने शरीर को ज़ोर से रगड़कर सुखाया, ताकि तेज़ी से ठंडे होते शरीर में रक्त संचार तेज़ हो सके। अनजाने में ही उसकी नज़र एक आदमकद दर्पण में अपने शरीर के प्रतिबिंब पर पड़ी, ठीक वैसे ही जैसे नवाब के अतिथिगृह में हुआ था। उसका अभी भी युवा शरीर, अपने सभी मोहक रहस्यों को समेटे हुए, उसे हाफ़िज़ के शब्दों को पूरी तरह भुलाकर उस रात में ले गया जब हबीबा ने अपनी युवा अतिथि के दुर्भाग्य को दूर करने की पूरी कोशिश करते हुए उसे नवाब के आगमन के लिए तैयार किया था। उसे अपना पहला प्यार याद आया और कैसे उसने उसे खो दिया, जबकि इसमें उसकी या उसकी कोई गलती नहीं थी। हबीबा को इस बात का एहसास नहीं था कि उस समय वह अपनी तैयारियों को लेकर इतनी उत्सुक नहीं थी, क्योंकि वह एक अनसुलझी अनिश्चितता से घिरी हुई थी: क्या आज की घटना महज़ एक क्षणिक घटना होगी, या यह एक ऐसी नींव होगी जिस पर वह अपना जीवन बना सकेगी? क्या वह अपने जीवन के उन पन्नों से अलग एक पन्ना पढ़ रही थी, जो सबसे चमकीले और मनमोहक रंगों में लिखा गया था? अगर यह थम भी जाए, तो एक रात का ही समय होगा; अगली रात तक नहीं टिकेगा, उसे फ़ारसी कविता की एक प्रसिद्ध पंक्ति याद आई। लेकिन... बीती रात तो निश्चित रूप से एक ऐसी किताब का पन्ना थी जिसकी बाइंडिंग कहीं ज़्यादा मज़बूत थी। बीती रात उसके दिल ने मंज़िल तक पहुँचने की, कहानी के आखिरी पन्ने तक पहुँचने की संतुष्टि महसूस की, एक ऐसी

कहानी जो सुखद अंत की ओर बढ़ रही थी, जबकि एक नई कहानी शुरू हो रही थी जिस पर शायद उसका ज़्यादा नियंत्रण था।

या क्या मेरे जीवन की कहानी केवल हानि और खोज की कहानी बनकर रह जाएगी? एक ठंडे डर ने उसके दिल को छलनी कर दिया। उसने कुछ खास तरह के लोगों के बारे में सुना था: वे अच्छी शुरुआत तो कर लेते हैं, लेकिन उसे पूरा नहीं कर पाते। तो क्या मैं भी उन्हीं में से एक हूँ? लेकिन क्या हम कभी किसी काम को अंजाम तक पहुँचाने में सक्षम होते हैं? वास्तव में, सच्चाई तो यही लगती थी कि हम किसी काम को शुरू करने में भी सक्षम नहीं हैं, उसे खत्म करना तो दूर की बात है। तुम जो चाहो करो, और बेवजह बदनामी हमें ही मिलती है, उसे मीर तकी मीर की एक प्रसिद्ध पंक्ति याद आई। नहीं, यह न्याय नहीं है। भाग्य के मार्ग में बदलाव अवश्य संभव है, कर्म से, रणनीति से, या प्रार्थना से, अगर सब कुछ विफल हो जाए। और यदि मनुष्य अपने भाग्य से समझौता कर ले, उसे स्वीकार कर ले, तो शायद यह भी उसके भाग्य में एक तरह का बदलाव होगा, क्योंकि तब मनुष्य अपने दुर्भाग्य के खिलाफ शिकायत नहीं करेगा; और जब स्वीकृति होती है, तो शायद कोई दुख नहीं होता, कोई दर्द नहीं होता।

उसे कुरान की एक प्रार्थना याद आई जो उसकी मां ने उसे बचपन में सिखाई थी:

हे हमारे प्रभु! यदि हम भूल जाएं या गलती कर बैठें तो हमें दोषी न ठहराएं; हे हमारे प्रभु! हम पर वैसा बोझ न डालें जैसा तूने हमसे पहले वालों पर डाला था; हे हमारे प्रभु! हम पर हमारी सहनशक्ति से अधिक बोझ न डालें।

तो फिर यह प्रार्थना क्यों? या शायद यह प्रार्थना, अगर पूरी हो जाए, तो प्रार्थना करने वाले का भाग्य बदल सकती है? लेकिन फिर वे क्यों कहते हैं कि जो हमारे भाग्य में लिखा है वह अटल है, यहाँ तक कि टाला भी नहीं जा सकता; क्या यह पत्थर पर खुदी हुई किसी रेखा की तरह है? लेकिन क्या बचपन में हमें वह अत्यंत प्रेरणादायक, अत्यंत आशापूर्ण हिंदी श्लोक नहीं सिखाया गया था? यदि पानी लगातार पत्थर पर गिरता रहे, तो निस्संदेह पत्थर घिस जाएगा। इसका क्या अर्थ है, यदि यह नहीं कि जिसने लिखा है वह मिटा भी सकता है, जैसे पानी पत्थर को मिटा देता है? या, वह अभाव में भी प्रसन्न हो सकता है? किसी प्राचीन कवि का वह फारसी श्लोक था: मुझे डर नहीं है अगर मुझमें देने की क्षमता नहीं है; मुझमें कम से कम न लेने की क्षमता तो है, जिसके लिए ईश्वर की स्तुति हो।

अचानक उसे एहसास हुआ कि उसे ठंड लग रही है। अपने विचारों में खोई हुई वह समय और बाथरूम के तापमान पर ध्यान देना भूल गई। वह कांप उठी। क्यों न एक और, हालांकि छोटा, गर्म पानी से स्नान कर लूँ और तुरंत नए कपड़े पहन लूँ? नहीं, यह अच्छा विचार नहीं है। मुझे नहीं पता कि मैं यहाँ कितनी देर से हूँ। कौन जाने, फथुल मुल्क बहादुर जाग गए हों और मुझे ढूंढ रहे हों? उसने अलमारी खोलकर वहाँ रखे कपड़ों को देखने के बारे में सोचा। पानी के कमरे के दरवाजे पर किसी के कदमों की आहट सुनाई दी... क्या कोई आ रहा था? उसे याद आया कि उसने दरवाजा अंदर से बंद नहीं किया था! शायद हबीबा... नहीं, कदमों की आहट तेज़ थी, और अब मिर्ज़ा फथुल मुल्क बहादुर ने धीमी, मधुर आवाज़ में पुकारा, 'वज़ीर खानम, क्या आप वहाँ हैं? क्या सब ठीक है, और क्या मैं अंदर आ सकता हूँ?'

इससे पहले कि वह कुछ कह पाती, मिर्ज़ा फथुल मुल्क बहादुर ने दरवाज़ा खोल दिया और अंदर आ गए। उन्होंने एक लंबा, ढीला लबादा जैसा नाइटड्रेस पहना हुआ था और वे पूरी तरह से जागृत लग रहे थे। वज़ीर ने शॉल उठाकर उसे अपने चारों ओर लपेटने की कोशिश की, लेकिन जल्दबाजी में वह उसके हाथ से गिर गई और वह उसे उठाने के लिए झुकी। फथुल मुल्क बहादुर वहीं जड़वत खड़े रह गए। सुडौल, आकर्षक, कसे हुए नितंब; जांघें मानो किसी कुशल कुम्हार के सांचे से तराशी गई हों; कमर चीते जैसी पतली; पेट किसी भी तरह से चिकना और सपाट था—वहाँ अतिरिक्त मांस का तो नामोनिशान नहीं था, चर्बी तो दूर की बात है; झुकी हुई कमर और पीठ के कारण स्तन ज़मीन की ओर लटके हुए थे, लेकिन ढीलेपन का कोई संकेत नहीं था; ठंडी हवा और निश्चित रूप से अपने साथी की उपस्थिति के कारण निप्पल उभरे हुए और सख्त थे; लंबे, चमकदार काले बाल चेहरे और कंधे से होते हुए लगभग ज़मीन तक गिर रहे थे; कोमल और आकर्षक गर्दन और गला झुर्रियों से रहित था। सोने की चेन और सम्राट के मोतियों के हार को छोड़कर, जिसे उसने उतारने की जहमत भी नहीं उठाई थी, आभूषणों की अनुपस्थिति में भी उसका पूरा शरीर जगमगा रहा था।

पूरी रात उसके शरीर के रहस्यों को निहारने, निहारने और उनका आनंद लेने में बिताने के बाद, राजकुमार को आश्चर्य से अभिभूत नहीं होना चाहिए था, लेकिन वह स्पष्ट रूप से हो गया था। उसे ऐसा लगा जैसे कोई अजनबी अचानक किसी अनजान जगह पर पहुँच गया हो, जहाँ प्रेम और इच्छा का एक हरा-भरा बगीचा बिना पूछे ही उसके लिए अपने द्वार खोल रहा हो। अब उसे एहसास हुआ कि अब तक उसे उसके शरीर के प्रत्येक अंग के उत्तम अनुपात, उसकी मोहक ऊँचाई, उसके कोमल शरीर पर फैली युवा पवित्रता की सुनहरी आभा, और उसके पैरों के नाखूनों से लेकर घने बालों तक फैली सदाबहारता का कोई वास्तविक अंदाजा नहीं था।

कुछ देर तक मिर्ज़ा फ़थुल मुल्क बहादुर अपनी काली सुंदरता के जादू में खोकर स्थिर खड़े रहे। इसी बीच वज़ीर ने शॉल उठाकर खुद को उनकी नज़रों से छुपा लिया। लेकिन जो कुछ दिखाई दे रहा था, वह उन्हें और भी आकर्षक लग रहा था। वज़ीर एक कदम आगे बढ़ीं ताकि बोलते समय उन्हें अपनी आवाज़ ऊंची न करनी पड़े, लेकिन फिर भी वह हिल नहीं पाईं और उनकी ज़बान बंद हो गई। उन्होंने राजकुमार को जाने का इशारा किया, लेकिन वह नहीं माने। वह वहीं खड़े रहे, वज़ीर की सुंदरता उनके दिल को गहरे गुलाबों की माला की तरह घेरे हुए थी। अंत में, धीमी और विनती भरी आवाज़ में बोलने से बचते हुए, वज़ीर ने कहा, 'कृपया मुझे क्षमा करें। मुझे पता नहीं था कि आप मुझे ढूंढेंगे...' वह कहना चाहती थीं, '...और पानी के कमरे में घुसकर मुझे नग्न देखेंगे।' ज़ाहिर है, वह ये बातें नहीं कह सकीं; और न ही इन्हें कहना ज़रूरी था। उसे बस कुछ शब्द बोलने थे, किसी तरह की बातचीत शुरू करनी थी और शर्मिंदगी के उस जाल से बाहर निकलना था। उसके शब्दों ने मिर्ज़ा फ़थुल मुल्क पर भी जादू तोड़ दिया और वह उसके करीब आकर बोला, 'माफ़ करने की क्या ज़रूरत है? आज सुबह एक मिनट पहले ही तुमने मेरे लिए इतना अच्छा काम किया है कि मैं जीवन भर कोशिश करने पर भी तुम्हारा एहसान नहीं चुका सकता!'

मिर्ज़ा फ़खरू पास आया, उसे अपनी बाहों में कसकर पकड़ लिया, उसका शॉल हटाया और

उसके सिर, चेहरे और स्तनों पर ज़ोर-ज़ोर से चूमने लगा। वज़ीर ने बार-बार उसे रोकने की कोशिश की; कहा कि पानी के कमरे में ठंड लग रही है; कि उन्हें वापस शयनकक्ष में चले जाना चाहिए, लेकिन फ़थुल मुल्क बहादुर टस से मस नहीं हुआ। वह या तो उसे चुंबन से रोक देता, या अपने हाथ से उसका मुँह कसकर बंद कर देता।

'कृपा करके, साहिब-ए आलम, मैं आपके बिस्तर से उठ गई, लेकिन क्या यह इतना बड़ा अपराध है कि मुझे इतनी कड़ी सजा मिले?' वज़ीर हांफते हुए हंस पड़ी।

मिर्ज़ा फ़खरू ने बिना ज़्यादा झुके आसानी से शॉल उठाया, उसे अपने कंधे पर रखा और वज़ीर को बड़ी सहजता से गोद में उठा लिया। फिर उन्होंने शॉल को बड़े ध्यान से उसके ऊपर लपेट दिया, मानो वह कोई नन्ही बच्ची हो जिसे दुलार और प्यार की ज़रूरत हो। वह उसे शयनकक्ष की ओर ले जाते हुए बोले, 'महोदया, आप इससे कहीं ज़्यादा सज़ा की हकदार हैं, लेकिन चलिए शयनकक्ष में चलते हैं, फिर हम आपके मामले का फैसला करेंगे।'

मिर्ज़ा फथुल मुल्क बहादुर ने वज़ीर को पलंग के सिरहाने लिटाया, उसकी पीठ के पीछे कई तकिए रखे, उसके निचले शरीर को नीले मखमली कंबल से ढक दिया, जिस पर फर और सुनहरे बॉर्डर बने थे, मानो दुल्हन को सजाने वाली के आने और उसे दोबारा सजाने का समय हो गया हो। वज़ीर ने मिर्ज़ा फखरू की पकड़ से छूटने की पूरी कोशिश की, लेकिन वह मजबूत और तगड़ा था, और उसे छोड़ने वाला नहीं था। उसने अपने घुटनों को अपनी छाती से लगा लिया, अपने हाथों से अपने स्तनों और कमर को छिपाने की कोशिश की। मिर्ज़ा फखरू ने प्यार से फुसलाते हुए और साथ ही सौम्य स्वर में आदेश देते हुए कहा, 'नहीं, नहीं, छोटी बेगम, ऐसे नहीं! अपने पैर फैलाओ, तकिये पर आराम से लेट जाओ। अगर तुम अपने घुटनों को अपनी छाती से चिपकाए रखोगी, तो मुझे तुम्हें थकाने और फिर से तरोताज़ा करने का मौका ही नहीं मिलेगा।'

'मैं ईश्वर से क्षमा मांगती हूँ! आप मुझे और भी थकाना चाहते हैं! आपकी दासी, फथुल मुल्क बहादुर में अब कुछ भी बाकी नहीं बचा है।'

'शायद, लेकिन अभी आराम से रहिए। आइए, अगर आप मेरी मांग मान लें, तो मैं आपके लिए कुछ गाऊंगा।'

वज़ीर चौकन्नी हो गई। वह जानती थी कि मिर्ज़ा फ़तहुल मुल्क एक उस्ताद संगीतकार थे, इतने महान कि उस दौर के सबसे प्रसिद्ध और सम्मानित गायक और वादक भी उनका नाम सुनकर विनम्रता के प्रतीक के रूप में अपने कान छू लेते थे। लेकिन वे कभी गाते या बजाते नहीं थे; कम से कम उसने यही सुना था। क्या वे अपनी पत्नी के लिए कुछ गाएँगे? यह तो अनसुना था; शायद ऐसा कभी हुआ ही नहीं था।

'मैं कितना भाग्यशाली हूँ!' वज़ीर ने सच्चे और स्पष्ट उत्साह से कहा। 'आपकी दाऊद जैसी मधुर आवाज़ मेरे कानों के लिए स्वर्ग है।' वह थोड़ी नज़ाकत से मुस्कुराई। 'कृपया आदेश दीजिए। आपकी सदा सुंदर गायकी सुनने का पुरस्कार पाने के लिए मुझे कौन सी सेवा करनी चाहिए?'

'सेवा? ओह, कुछ नहीं।' मिर्ज़ा फ़खरू ने एक धूर्त मुस्कान के साथ कहा, 'कुछ नहीं, महोदया, आप बस ऐसे ही लेटी रहिए, पैर फैलाकर। मुझे आपकी पिंडलियों और जन्नत के बेर के पेड़ की शाखाओं, और उनसे थोड़ा ऊपर के दृश्य से अपनी दृष्टि को तृप्त करने दीजिए।'

‘ओह, साहब आलम, क्या आप मुझे बिलकुल नंगा छोड़ देंगे?’ वज़ीर का चेहरा शर्म से लाल हो गया। ‘क्या आप मुझे पूरी तरह से बिना आवरण के छोड़ देंगे?’
‘खैर, मुझे लगा था कि हमारे बीच कोई पर्दा या रुकावट नहीं होगी।’ मिर्ज़ा फ़खरू ने हंसते हुए कहा। ‘ठीक है, लीजिए। इसे सुनिए और आनंद लीजिए। सौभाग्य से, मुझे अभी-अभी एक बेहद उपयुक्त ग़ज़ल याद आई—’ उन्होंने अर्थपूर्ण मुस्कान के साथ कहा, ‘कल रात के अपराधी अली कुली सलीम की।’
‘तुम्हारी दासी का पूरा शरीर ही उसके कान बन गया है।’
मिर्ज़ा फ़खरू ने लगभग एक मिनट तक गुनगुनाया, अपनी जांघों पर ताल मिलाते हुए, फिर गाना शुरू किया। राग नट भैरव था, जो सुबह-सुबह के समय प्रेम-प्रसंग के लिए सबसे उपयुक्त राग है। उनकी आवाज़ में निखार था, जो उनकी अपार प्रतिभा और सैकड़ों घंटों के अभ्यास का संकेत था। उनकी आवाज़ बहुत कोमल थी, लेकिन धीमी थी, निचले स्वरों में बास जैसी।
मेरी एक प्रेमिका है, रंगों और सुगंधों की भूमि से, और वह नग्न है; एक लंबा, सीधा, सर्व वृक्ष, और जलधारा के समान, नग्न। उसका शरीर नीली लिली की शाखा के समान नग्न है; उसकी भुजाएँ जंगली जलकुंभी की दो शाखाओं के समान हैं, और वह नग्न है। जंगली बटेर, ताकि वह उसके जल के समान प्रकाशमान रूप में गुजर सके, उसने अपने दोनों पैर जांघों तक नंगे कर लिए हैं। वह एक भारतीय की संतान है, जो ज्वाला के समान हर जगह विचरण करती है, और नग्न है। उसके प्रेम के कारण, धधकती आग राख के बीच योगी के समान नग्न बैठी है। सलीम, अपने हृदय से लालसा के काँटे निकाल दो, क्योंकि तुम्हारी प्रेमिका यहाँ है, वह नंगे पैर है और नग्न है।
आवाज, दृश्य, मनोदशा, कविता: वज़ीर इससे अधिक मनमोहक कुछ और कल्पना नहीं कर सकती थी। और कविता की उपयुक्तता ऐसी थी कि वज़ीर का सांवला शरीर भी उसमें अत्यंत प्रासंगिक रूप से समाहित हो गया। ऐसा लग रहा था मानो दो शताब्दी पहले सलीम ने वज़ीर खानम नामक एक सांवली सुंदरी का सपना देखा हो और अपने सपने को कागज पर एक रोमांचक कविता के रूप में चित्रित किया हो, और उसे वहीं छोड़ दिया हो ताकि उसका सपना साकार हो सके। जब मिर्ज़ा फ़खरू राग के मुख्य भाग में पहुँचे, तो वज़ीर ने कहा, 'वाह, वाह! कितना परिपूर्ण! सचमुच, केवल ईश्वर ही दोषरहित है!' लेकिन उस क्षण के बाद, ऐसा लगा जैसे वह स्तब्ध रह गई हो। उसका हृदय संगीत की लहरों के साथ उमड़ पड़ा। जैसे ही संगीत, एक बादल की तरह लहराता हुआ, उसके कानों पर और उसके पूरे अस्तित्व पर शक्तिशाली लहरों की तरह बरसने लगा, वह इस बात का बोध खो बैठी कि वह कहाँ है या कौन है; वह अपने संगीत से भरे हृदय को गायक, अपने पति, जिसे उसने चुना था और जिसने उसे चुना था, के हृदय में उड़ेल देना चाहती थी। उसकी आवाज़ धीमी थी, फिर भी सारंगी की झंकार की तरह तीखी थी। उसने पूरी तरह से आवाज़ नहीं निकाली थी, क्योंकि गायिका सो रहे लोगों को परेशान नहीं करना चाहती थी। फिर भी, जब बांसुरी वादक राग के चरम पर था, तो बांसुरी की घंटी जैसी मधुर ध्वनि ने उसे उसी रहस्यमय तल्लीनता से भर दिया, जिस तल्लीनता से गायक राग को अभिव्यक्त और प्रस्तुत कर रहा था।
भोर की बढ़ती रोशनी मोमबत्तियों की घटती रोशनी में घुलमिल रही थी। वज़ीर का हृदय और

आँखें दोनों भावों से भरी हुई थीं। उसकी आत्मा का जुनून नट भैरव के जुनून में विलीन हो गया था। कहने के लिए और कुछ नहीं बचा था।

पूरा एक साल पलक झपकते ही बीत गया। शादी के दसवें महीने के अंत में, अक्टूबर 1845 में, वज़ीर ने एक बेटे को जन्म दिया: एक ऐसा बच्चा जो सचमुच चाँद का अंश था। गुलाबी रंग का, गोरा, बड़ी-बड़ी आँखों और काले घुंघराले बालों वाला, बच्चा जैसे-जैसे बड़ा होता गया, उसकी सुंदरता की चर्चा होती रही। सब कहते थे कि उसके बाल और आँखें उसकी माँ जैसी थीं, लेकिन उसका बाकी रूप अकबर शाह द्वितीय जैसा था, जो अब स्वर्ग में विराजमान हैं। ईश्वर की छाया अबू ज़फ़र बहादुर शाह का रंग काफी सांवला था, और मिर्ज़ा फ़तहुल मुल्क बहादुर अपने पिता जैसे थे। अकबर शाह द्वितीय गुलाबी रंग के और गोरे थे, बिल्कुल अपने तुर्किस्तानी पूर्वजों की तरह।

बालक का कालानुक्रमिक नाम, और साथ ही आधिकारिक नाम, खुर्शीद आलम निर्धारित किया गया; दोनों शब्दों के अक्षरों का संख्यात्मक मान 1261 है, जो 1845 के बराबर है। राज अभिलेखों में नाम मिर्ज़ा खुर्शीद आलम के रूप में दर्ज किया गया था, जो लोकप्रिय रूप से खुर्शीद मिर्ज़ा के नाम से जाने जाते थे। फ़तहुल मुल्क बहादुर की खुशी का कोई ठिकाना नहीं था, क्योंकि ईश्वर ने उन्हें उसी वर्ष एक नहीं, बल्कि दो पुत्र दिए थे। खुर्शीद मिर्ज़ा के जन्म में कुछ समय लगा, जबकि नवाब मिर्ज़ा को वज़ीर खानम के तीसरे उत्तराधिकारी से विवाह के कुछ सप्ताहों के भीतर शुभ किले में उपस्थित होने का आदेश दिया गया। उन्हें पहले ही 'खान' की उपाधि प्रदान की जा चुकी थी, इसलिए वे अपने सभी परिचितों के लिए नवाब मिर्ज़ा खान बन गए। 'नवाब' शब्द उनके व्यक्तित्व का अभिन्न अंग बन गया, यहाँ तक कि बाद में लोग यह मानने लगे कि यह उनका नाम नहीं, बल्कि उनका पद और उपाधि थी।

दिल्ली में उनका उपनाम दाग पहले से ही सबकी ज़ुबान पर था; अब वे नवाब मिर्ज़ा खान दाग़ बन गए, जो उभरते हुए कवि थे, और मिर्ज़ा फथुल मुल्क बहादुर उन्हें 'पुत्र' कहकर पुकारते थे। राजकोष से उनके लिए पाँच रुपये प्रति माह की राशि स्वीकृत की गई। फिजूलखर्ची न करने के कारण, नवाब मिर्ज़ा अपनी तनख्वाह का लगभग आधा हिस्सा ही खर्च करते थे। बाकी राशि वे अपनी माता को दे देते थे, जो उसे उनके लिए समर्पित एक संदूक में और कभी-कभार दान-पुण्य के लिए रखती थीं। तीसरे युवराज ने नवाब मिर्ज़ा की शिक्षा और प्रशिक्षण का खर्च उठाया। मीर गुलाम हुसैन शिकेबा, मीर तकी मीर के शिष्य थे और कवि के रूप में अपने प्रारंभिक जीवन में महामहिम के उस्ताद रह चुके थे। मीर शिकेबा के पुत्र मौलवी अहमद हुसैन को नवाब मिर्ज़ा का अरबी और फ़ारसी का शिक्षक नियुक्त किया गया था। सुलेख के उस्ताद और अन्य कई विधाओं के ज्ञाता सैयद मुहम्मद अमीर ने उन्हें सुलेख, मुक्केबाज़ी और दो प्रकार की निहत्थे युद्धकलाओं - बैंक और बिनोट - में उन्नत शिक्षा दी। पहले प्रकार में एक छोटी, घुमावदार और नुकीली छड़ी का प्रयोग होता था; दूसरे में केवल शरीर का प्रयोग होता था। पंजा काश (हाथों से कुश्ती लड़ने वाला) मुहम्मद अमीर के नाम का अभिन्न अंग बन गया, लेकिन वे इसके अलावा भी कई विधाओं में निपुण थे: कुश्ती, विशेष प्रकार की अलंकृत सुलेख, कई प्रकार की निहत्थे युद्धकला,

चित्रकारी, पेंटिंग, शीर्षक पृष्ठों और अलंकृत शीर्षकों के लिए सुलेख, पृष्ठ तैयार करना (चित्रकला या सुलेख के लिए), पुस्तक की जिल्दबंदी और सोने की फीते बनाना।
इसके अलावा, नवाब मिर्ज़ा के किले में आने के कुछ ही समय बाद, मिर्ज़ा फ़खरू ने उन्हें शेख मुहम्मद इब्राहिम ज़ौक़ के शिष्य के रूप में औपचारिक रूप से दाखिला दिला दिया। दयालु गुरु ने उन्हें दाग़ उपनाम बनाए रखने की सलाह दी और यहाँ तक कहा कि यदि वे अपना गहन अभ्यास और अध्ययन जारी रखें, तो वे जल्द ही किसी भी मार्गदर्शन या सुधार की आवश्यकता से मुक्त हो जाएँगे और स्वयं एक उस्ताद भी बन सकते हैं। दाग़ किले के भीतर अन्य राजकुमारों के साथ कवियों की निजी सभाओं में नियमित रूप से उपस्थित रहने लगे; वे अक्सर शहर के महत्वपूर्ण मुशायरों में भी भाग लेते थे। हवेली के वंशज न होने के कारण उन्हें केवल मिर्ज़ा फ़खरू की अनुमति से बाहर जाने का लाभ मिला। इस लाभ ने उन्हें ग़ालिब जैसे अन्य उस्तादों के साथ बैठकर अपनी कविता को निखारने के अवसर दिए, साथ ही उन्हें बारी बेगम के यहाँ जितनी बार चाहें जाने और फ़ातिमा से मिलने और बात करने की स्वतंत्रता भी दी। वे अक्सर अपनी माँ से फ़ातिमा के साथ अपने प्रस्तावित विवाह के बारे में पूछने के बारे में सोचते थे, लेकिन कभी हिम्मत नहीं जुटा पाए। उन्हें पता था कि उनकी मां ने साहिब-ए आलम व आलमीयन से इस बारे में बात कर ली थी और उनकी सहमति भी ले ली थी; उन्होंने मन ही मन सोचा कि फिलहाल इतना काफी है। आखिर उनकी मां नौ महीने से गर्भवती थीं और अब शिशु खुर्शीद मिर्जा की देखभाल कर रही थीं। यह उनके लिए अपनी शादी का मुद्दा उठाने का समय नहीं था। उन्हें किले में बहुत कुछ करना और सीखना था और समय का सदुपयोग करने के कई तरीके भी थे।

ज़ाहिर दिहलवी और क़मरुद्दीन रकीम से मित्रता के कारण नवाब मिर्ज़ा दरबार के मामलों से सामान्यतः परिचित थे, परन्तु उन्हें इस बात का ज़रा भी आशय नहीं था कि राजमहल लगभग एक प्रशासनिक राज्य और परंपराओं, रीति-रिवाजों एवं शाही प्रोटोकॉल से परिपूर्ण एक संपूर्ण सांस्कृतिक जगत था। नवाब मिर्ज़ा के सोलह पुत्रों में से जो प्रशासन में सक्रिय थे, वे थे: प्रथम उत्तराधिकारी मिर्ज़ा मुहम्मद दारा बख्त बहादुर; प्रधानमंत्री एवं पूर्ण अधिकार प्राप्त सेनापति मिर्ज़ा शाह रुख; द्वितीय उत्तराधिकारी मिर्ज़ा कायमर्स बहादुर; और तृतीय उत्तराधिकारी मिर्ज़ा मुहम्मद सुल्तान गुलाम फखरुद्दीन बहादुर। उस समय ये सबसे प्रमुख थे। बाद में, छठे पुत्र, मिर्ज़ा ज़ाहिरुद्दीन बहादुर, जो लोकप्रिय रूप से मिर्ज़ा मुगल के नाम से जाने जाते थे, ने सभी मामलों में बहुत अधिक शक्ति और प्रभाव प्राप्त किया। इन सभी राजकुमारों ने राजमहल की तर्ज पर अपने-अपने दरबार स्थापित किए, यद्यपि उनका पैमाना काफी छोटा था।
भले ही ईश्वर की छाया का दरबार औरंगजेब, शाहजहाँ या यहाँ तक कि मुहम्मद शाह बादशाह गाज़ी (जो अब स्वर्ग में विश्राम कर रहे हैं) के दरबारों का मात्र एक क्षीण प्रतिबिंब ही क्यों न हो, समकालीन लेखक मुंशी फैजुद्दीन किसी उत्सव के अवसर पर बहादुर शाही दरबार का वर्णन इस प्रकार करते हैं:
अब देखिए, सभी रईस ढोल घर के द्वार [किले के मुख्य लाहौरी द्वार पर] अपने घोड़ों से उतरते हैं और पैदल दीवान-ए-आम की ओर बढ़ते हैं। यह सभा का पहला स्थान है, और ध्यान दीजिए:

दीवान-ए-आम के द्वार पर एक मोटी और भारी लोहे की जंजीर तिरछी लटकी हुई है; यह एक अवरोधक का काम करती है। इसके नीचे से कोई सीधा नहीं चल सकता। हर कोई जंजीर के नीचे से निकलने के लिए झुकता है। यह सभा का दूसरा स्थान है। अब देखिए! दीवान-ए-खास के द्वार पर एक बड़ा, लाल, कपड़े का पर्दा लगा है: इसे लाल पर्दा कहा जाता है। जंजीर रक्षक, पैदल सैनिक, द्वारपाल, सशस्त्र सैनिक और न्यायधीश लाल लाठियाँ लिए खड़े हैं। यदि कोई बाहरी या अनाधिकृत व्यक्ति अंदर जाने की कोशिश करता है, तो न्यायधीश अपनी हुक वाली लाठियों का उपयोग करते हैं, हुक से घुसपैठिए की गर्दन पकड़कर उसे बाहर घसीटते हैं... लाल पर्दे पर सलाम करने के बाद, जो सभा का तीसरा स्थान है, अधिकृत आगंतुक प्रवेश करते हैं; सिंहासन के सामने पहुँचकर वे झुककर सलाम करते हैं और अपने निर्धारित स्थानों पर बैठ जाते हैं। दीवान-ए-खास के ठीक बीच में संगमरमर का एक अष्टकोणीय चबूतरा है, जिस पर मयूर सिंहासन विराजमान है। सिंहासन के सामने एक भारी पर्दा लगा है [जो एक पड़ाव का काम करता है, इतना नीचा कि सम्राट दिखाई दे सकें]... मेहराबों की तरह डिज़ाइन किया गया है; प्रत्येक पर्दे में तीन मेहराब हैं; पर्दे चारों ओर हैं, फिर सिंहासन के चारों ओर लकड़ी की रेलिंग लगी है; सिंहासन के पीछे एक तकिया है; सिंहासन के सामने तीन सीढ़ियाँ हैं। सिंहासन पर एक गुंबदनुमा छत्र है, जो मेहराबों द्वारा समर्थित है और बंगाली शैली में चार परतों से मजबूत की गई है। गुंबद में सोने के शिखर हैं; सामने वाले मेहराब में दो मोर एक-दूसरे के सामने हैं और प्रत्येक अपनी चोंच में मोतियों की माला धारण किए हुए है... सिंहासन के दोनों ओर मोर के पंखों से बने पंखे लिए दो पंखाधारी खड़े हैं। सिंहासन के पीछे एक प्रार्थना चटाई बिछी है। मुतबर-उद-दौला इतिबारुल मुल्क बहादुर (प्रधानमंत्री); उमदतुल हुकामा हाज़िक-ए ज़मान इहतिराम-उद-दौला बहादुर... राजा मिर्ज़ा बहादुर, राजा बहादुर... मीर अदल बहादुर, मुंशी-ए दार-उल इंशा-ए सुल्तानी, मीर तुज़ुक और अन्य; सभी अपने-अपने निर्धारित स्थानों पर दाएं और बाएं खड़े हैं, दोनों हाथ अपनी छड़ियों पर रखे हुए... दीवान-ए खास के प्रांगण में: सम्राट के निजी वाहन एक तरफ खड़े हैं, उनके साजो-सामान चांदी के हैं; दूसरी तरफ, उनके निजी हाथी: मौला बख्श, खुर्शीद गंज, चांद मुरात और अन्य। कवचधारी ढालों से सुरक्षित उनके रंगे हुए माथे, सोने के सजावटी चिह्न, सोने और रेशम के हार और रिबन उनके कानों से लटक रहे हैं; उनके रेशमी कोट सोने की भारी कढ़ाई से सजे हैं। दूसरी तरफ, मछली का उच्च प्रतीक चिन्ह प्रमुखता से प्रदर्शित है; फिर औपचारिक मंडप और झंडे लहराते हैं। संगीतकार और ढोल वादक, ध्वजवाहक, ढालवाहक, सभी अपनी-अपनी जगह पर मजबूती से खड़े हैं। अबीसीनियाई, लाठी लिए हुए न्यायधीश, जिनके चांदी के सिर बाघ के जबड़ों की तरह बने हैं; तोपों से लैस मुख्य साजो-सामान वाहक लकड़ी के बलस्टर के ठीक नीचे खड़े हैं। महाराज [अपने निजी कक्ष के द्वार पर] प्रकट होते हैं। उद्घोषक और लाठीवाहक पुकारते हैं: 'बिस्मिल्लाह अल रहमान अल रहीम। ईश्वर और उसके पैगंबर की कृपा और दया! मित्र आनंदित हों! शत्रु पैरों तले कुचल दिए जाएँ! विपत्तियाँ दूर हो जाएँ!' हवदार (खुली पालकी, पालकी जैसी) के बाहरी वाहक महल के हवदार वाहकों से पालकी का भार लेने के लिए आगे बढ़ते हैं। सम्राट सबसे पहले सिंहासन के पीछे जाते हैं और प्रार्थना की चटाई पर खड़े होकर प्रार्थना करते हैं; ईश्वर से आशीर्वाद प्राप्त करने के बाद, वह फिर से हवदार पर विराजमान हो

जाते हैं (प्रार्थना की चटाई और सिंहासन के बीच की थोड़ी दूरी के लिए)। हवदार हवदार को सिंहासन के पास खड़ा कर देते हैं। सम्राट सिंहासन से उतरते हैं और अपना तेजस्वी स्वरूप सिंहासन पर स्थापित करते हैं। झंडे लहराए जाते हैं; तोपें दागी जाती हैं। पैदल सेना सलामी में बंदूकें दागती है। बधाई संगीत बजाया जाता है। राज्य के मुकुट का मोती, खिलाफत के सबसे बड़े पुत्र, युवराज बहादुर, सिंहासन के बाईं ओर खड़े होते हैं। अन्य उच्च पदस्थ राजकुमार, खिलाफत की आंखों के प्रकाश, राज्य के माथे के चंद्रमा, दाईं ओर खड़े होते हैं। कुलीन और दरबारी सामने खड़े होते हैं।

किले में रहने वाले और महाबली पर निर्भर लोगों की संख्या दो हजार से अधिक थी; कुछ लोग अनुमति लेकर किले के बाहर रहते थे। उन सभी को राजकोष से मासिक वेतन मिलता था। इसके अलावा मंत्रियों, क्लर्कों, अन्य पदाधिकारियों, सैनिकों और नौकरों का वेतन भी था। त्योहारों या उत्सवों के दिन, विवाह, बच्चों का मुंडन, खतना, जन्म, मृत्यु, यात्रा पर जाने या यात्रा से लौटने पर अतिरिक्त अनुदान दिए जाते थे: ये सभी नियमित वेतन के अतिरिक्त थे।

जैसा कि हमने ऊपर बताया है, सम्राट को गुरु और मार्गदर्शक कहकर संबोधित करने की परंपरा शाहजहाँ के शासनकाल में शुरू हुई। बहादुर शाह द्वितीय स्वयं एक अभ्यासी सूफी थे और उन्हें दिल्ली के समकालीन प्रमुख सूफियों में से एक काले साहब से अपने शिष्य बनाने की औपचारिक अनुमति प्राप्त थी। इस प्रकार, उनके दैनिक कार्यों में से एक महत्वपूर्ण कार्य अपने वर्तमान या भावी शिष्यों से मिलना, उनसे व्यक्तिगत रूप से या सामूहिक रूप से मिलकर उनकी आत्माओं पर ध्यान केंद्रित करना था, जो एक सूफी गुरु द्वारा शिष्यों को प्रदान की गई कृपा का एक हिस्सा था। वे अपने शिष्यों की आध्यात्मिक कठिनाइयों को भी सुनते थे और उनके लिए आध्यात्मिक उपाय सुझाते थे। वे अपने पुराने शिष्यों से परंपरा के अनुसार निर्धारित न्यूनतम राशि—दो रुपये—के अलावा कोई भेंट स्वीकार नहीं करते थे। वे नए शिष्यों को भी इतनी ही राशि का पुरस्कार देते थे।

स्पष्टतः, सम्राट का कुल नियमित व्यय उनकी ज्ञात आय से कहीं अधिक था। लेकिन अन्य अनियमित व्यय भी थे। बहादुर शाह द्वितीय, अपने से सौ वर्ष पूर्व के अन्य मुगल सम्राटों की तुलना में, नए भवन बनवाने और सम्राट बनने के बाद विरासत में मिले भवनों का उचित रखरखाव करने के शौकीन थे। ज़रा सोचिए, उस विशाल भवन को, जिसे बड़ी सरलता से मात्र 'हवेली' कहा जाता था, उचित स्थिति में बनाए रखने का खर्च कितना रहा होगा। यह सच है कि लुटेरों के हमलों और समय के प्रभाव से हवेली की हालत सौ वर्ष पहले की तुलना में कहीं अधिक खराब थी; फिर भी, यह एक कार्यशील भवन था। इसके भीतरी उद्यान, मंडप और फूलों की क्यारियाँ आज भी हरी-भरी और लगभग नई जैसी दिखती थीं। दीवान-ए-आम, दीवान-ए-खास, मोती मस्जिद, हमाम, मुख्य कक्ष, कई जलमार्ग और सजावटी तालाब, विशाल द्वार: ये सभी कमोबेश वैसे ही दिखते थे जैसे 1740 के दशक में दिखते थे। हमें यह याद रखना चाहिए कि लाल हवेली में आज जो कुछ हम देखते हैं, वह उस समय की तुलना में बहुत कम है। विजयी अंग्रेजों ने सितंबर 1857 के दौरान और उसके बाद लगभग पूरे आवासीय क्षेत्र, सचिवालय, अभिलेखागार, पुस्तकालय, साथ ही कई आंतरिक रास्तों और दर्शनीय स्थलों को नष्ट कर दिया था।

हवेली के बाहर स्थित कई प्रमुख मुगल इमारतें, जैसे हुमायूं का मकबरा, सभी ऐतिहासिक उद्यान, अधिकांश प्रमुख सराय (जहां यात्रियों से नाममात्र का शुल्क लिया जाता था या बिल्कुल मुफ्त), कई महत्वपूर्ण मस्जिदें और विद्यालय, और सबसे बढ़कर प्रसिद्ध चांदनी चौक और उससे होकर बहने वाली उतनी ही प्रसिद्ध नहर, अच्छी स्थिति में रखी गई थीं। सम्राट ने नए उद्यान और कुछ महल भी बनवाए या मौजूदा महलों में विस्तार किया; ये सभी अपनी गुणवत्ता और शैली में शाहजहाँ और उनके प्रतिभाशाली वास्तुकारों, उस्ताद अहमद और हामिद की याद दिलाते थे।
इन सब कामों के लिए पैसा कहाँ से आया? यह एक ऐसा रहस्य है जिसका हल आज तक नहीं निकल पाया है। शाह आलम बहादुर शाह द्वितीय (मृत्यु 1806), जो अब स्वर्ग में विराजमान हैं, एक महान मितव्ययी और धन संग्राहक थे। उनका लगभग सारा धन अकबर शाह द्वितीय (मृत्यु 1837) के शासनकाल में खर्च हो गया। उनके शासनकाल में और फिर अबू जफर बहादुर शाह द्वितीय के शासनकाल में भी कर्मचारियों और आश्रितों की संख्या में काफी वृद्धि हुई। स्थिति इतनी बिगड़ गई कि यह प्रस्ताव रखा जाने लगा, और यह केवल मजाक में नहीं था, कि अकबर शाह द्वितीय और बहादुर शाह द्वितीय के सत्तर प्रत्यक्ष वंशजों को छोड़कर हवेली में रहने वाले सभी लोगों को बेदखल कर दिया जाए और सम्राट उनका भरण-पोषण बंद कर दें, क्योंकि उनमें से अधिकांश वैसे भी हवेली समुदाय के लिए उपयोगी सदस्य नहीं थे। ऐसा नहीं हुआ, लेकिन इस तरह के विचार का समर्थन किया जाना अपने आप में एक प्रतीकात्मक तथ्य है।
तो सम्राट अपने खर्चों का निर्वाह कैसे करते थे? अंग्रेजों ने उन्हें एक लाख रुपये प्रति माह का वजीफा दिया। अनेक अनुरोधों के बावजूद, इसे बढ़ाया नहीं गया, जबकि वृद्धि के पक्ष में ठोस तथ्य मौजूद थे। अतिरिक्त आय का एक छोटा स्रोत वह नजऱ थी जो अंग्रेज साहिब नवाब गवर्नर जनरल बहादुर और साहिब नवाब कमांडर-इन-चीफ बहादुर ईद के दो दिनों, ईरानी नव वर्ष और सम्राट के जन्मदिन पर सम्राट को भेंट करते थे। बहादुर शाह द्वितीय के सिंहासनारोहण के कुछ समय बाद ही जॉन कंपनी ने इस ऐतिहासिक परंपरा का पालन करना बंद कर दिया। इसका कारण यह बताया गया कि सम्राट ने अपने राज्याभिषेक के अवसर पर सोने, चांदी और रत्नों से जड़ा एक अष्टकोणीय सिंहासन बनवाया था। (कुछ लोगों ने इसे मयूर सिंहासन कहा है, हालांकि वास्तव में इसे तख्त-ए-हुमा कहा जाता था।) गवर्नर जनरल और कमांडर-इन-चीफ को समारोह के दौरान सिंहासन पर बैठने की अनुमति नहीं दी गई थी। क्रोधित और अपमानित गवर्नर जनरल ने सम्राट को भविष्य में सिंहासन का उपयोग न करने का आदेश दिया। अत: चूंकि सिंहासन ग्रहण नहीं हुआ था, इसलिए गवर्नर जनरल और कमांडर-इन-चीफ को उपस्थित होने और नजर प्रस्तुत करने की कोई आवश्यकता नहीं थी।
कई वर्षों की विनती, पत्राचार और कूटनीतिक गतिविधियों के बाद, अंग्रेजों ने सम्राट का मासिक भत्ता बढ़ाकर तीन लाख रुपये करने पर सहमति जताई। यह अप्रैल 1849 में, उनके सिंहासन ग्रहण करने के बारह वर्ष बाद, लागू हुआ और कोई बकाया राशि नहीं चुकाई गई। अनुमान है कि अकेले दिल्ली शहर से चुंगी के रूप में प्रतिवर्ष 47 लाख रुपये प्राप्त होते थे। महाराजाओं ने इस राशि का एक छोटा सा कौड़ी का खोल भी सम्राट तक नहीं पहुंचने दिया। उनकी अपनी जमीनों और बागों से प्राप्त आय लगभग पच्चीस हजार रुपये प्रति वर्ष थी। ज़काउल्लाह, जो समकालीन

और कंपनी समर्थक इतिहासकार थे, इसे और भी कम बताते हैं।
ज़ाहिर दिहलवी लिखते हैं:
दिल्ली के सम्राट के पास भारत के सबसे छोटे राज्य के बराबर भी संसाधन नहीं थे। जैसा कि [अठारहवीं शताब्दी के कवि] मिर्ज़ा सौदा ने लिखा है: एक समय ऐसा भी था जब वह बाईस प्रांतों का स्वामी था; अब तो वह अलीगढ़ के छोटे से किले पर भी शासन नहीं कर सकता। उन्हें माननीय अंग्रेजों से प्रति माह मात्र एक लाख रुपये प्राप्त होते थे। उनकी निजी जमीनों, बागों, दुकानों के किराए और बाजार शुल्क से भी थोड़ी-बहुत राशि प्राप्त होती थी। हम कल्पना कर सकते हैं कि इन सबको मिलाकर लगभग एक लाख पच्चीस हजार रुपये बनते होंगे। फिर भी, शान-शौकत, वैभव, गरिमा, विस्तृत दरबारी प्रोटोकॉल और शाही परंपराओं, जुलूसों और सिंहासनारोहण के भव्य आयोजनों को देखकर यह प्रतीत होता था कि हाँ, अतीत में किसी समय यह गौरवशाली वंश निश्चित रूप से स्वर्ग के समान हिंदुस्तान की भूमि पर शासन करने के योग्य रहा होगा। फिर भी, पतन, धन की कमी और आजीविका के साधनों की कमी के बावजूद, मैंने व्यक्तिगत रूप से दो आश्चर्यजनक और विस्मयकारी बातें देखी हैं, जो आज भी मुझे आश्चर्य के भंवर में रखती हैं। पहली बात, जगत के स्वामी और स्वामी ईश्वर ने उन एक लाख रुपये पर इतनी सहजता और विशालता प्रदान की, जो मैंने उन राज्यों में भी नहीं देखी, जिनका राजस्व करोड़ों रुपये में था।
यदि कोई कुलीन व्यक्ति दुर्बल हो जाए, तो यह न समझें कि उसका उच्च पदस्थ व्यक्तित्व भी कमजोर हो जाएगा।
एक सिपाही महीने में चार रुपये कमाता है, फिर भी वह समृद्ध है; और जो अच्छी तनख्वाह कमाता है, वह भी धनवान होता है। मैंने उस समय की क्रांतियों के विरुद्ध किसी को शिकायत करते नहीं देखा। यह शासक के पवित्र इरादों का फल और उनकी उदारता का परिणाम है। दूसरे, सच्चे सल्तनत के दरबार के जो संकेत और सुझाव तथा राज दरबार में मैंने जो संप्रभुता और अधिकार देखा, वह मुझे किसी अन्य राज्य में नहीं मिला। राज के खर्चों और धन की निकासी को देखकर बुद्धि विस्मित हो जाती है। हे भगवान! राज खजाने में इतनी विशालता और प्रचुरता कहाँ से आई कि ऐसे खर्चों को पूरा किया जा सके?
नवाब मिर्ज़ा ने जब इस अपार समृद्धि को देखा, तो उन्हें लगा मानो वे अपना मानसिक संतुलन खो रहे हों। शाही प्रशासन के कार्यालयों और संस्थानों का जितना अधिक उन्होंने निरीक्षण और अवलोकन किया, उतना ही उन्हें नए-नए विभाग और कार्यालय मिलते गए, और उनके बारे में नए-नए तथ्यों की परतें खुलती गईं। किले के बाहर सक्रिय ठेकेदारों और नौकरों की बात तो छोड़ ही दें, इस शुभ किले में निम्नलिखित 'कार्यशालाएँ' या आज की भाषा में 'कार्यालय' कार्यरत थे: बड़े निजी रसोईघर के प्रमुख, छोटे निजी रसोईघर के प्रमुख, जल विभाग, वस्त्र और पोशाक विभाग, रत्नगृह, शस्त्रागार, मुख्य क्वार्टरमास्टर का कार्यालय, हाथीगृह, अस्तबल, रथ विभाग, तोप और तोप विभाग, ऊंटगृह, रथगृह, सिंहासनारोहण और जुलूस का कार्यालय, मछली, छत्र और ध्वज के उच्च प्रतीक चिन्हों का विभाग, सेना के मुख्य वेतन अधिकारी, अस्पताल, पुस्तकालय, कबूतरगृह, औपचारिक उपहारों के कार्यालय के अधीक्षक, कालीन और साज-सज्जा

विभाग, पालकी गृह, पालकी वाहकों के अधीक्षक, अग्रिम पंक्ति के सैनिकों के अधीक्षक, बच्चों के पर्यवेक्षक और नवाब नज़ीर (नपुंसकों के विभाग के प्रमुख)।

यदि किसी को लगे कि ये मात्र औपचारिक पदनाम थे, जिनका कोई वास्तविक अस्तित्व या व्यक्तिगत अनुभव नहीं था, तो ज़ाहिर दिहलवी कहते हैं कि वे 'अधिकारियों के नाम नहीं बता रहे हैं ताकि बात को लंबा न खींचा जाए'। हम कुछ विभागों, विशेषकर वित्त एवं सशस्त्र बलों से संबंधित विभागों के प्रभारी कुछ हिंदू सरदारों के नाम जानते हैं। उदाहरण के लिए: राजा ज़ोरावर चंद, राय बहादुर गेंदा मल, कुंवर देबी सिंह और राजा सुख राय, ये कुछ नाम हैं जो तुरंत याद आते हैं।

नवाब मिर्ज़ा को उपर्युक्त विभागों के खंडों और शाखाओं का विवरण जुटाने में कई सप्ताह लग गए। उदाहरण के लिए, सशस्त्र बलों ने, जिन्होंने जन्नत में विराजमान शाह आलम द्वितीय की मृत्यु के बाद से एक भी गोली नहीं चलाई थी, निम्नलिखित खंड या पलटनें बनाई थीं: काली पलटन, धूसर पलटन, नौजवानों की पलटन, अग्रिम पंक्ति के सैनिक और बटालियन नेताओं की पलटन। हालाँकि यह शब्द अंग्रेज़ी शब्द 'पलटन' से लिया गया है, लेकिन वास्तव में 'पलटन' एक रेजिमेंट की तरह थी; 'बटालियन' शब्द 'रिसाला' का एक सामान्य अनुवाद है, जिसका अर्थ है आठ सौ से एक हज़ार सैनिकों की सेना।

दरबार के कुलीनों और अभिजात वर्ग की एक अलग सूची थी। इस सूची में नाम दर्ज होना अत्यंत सम्मान की बात थी। रिश्वतखोरी या अक्षमता के कारण बर्खास्त किए गए अधिकारी का नाम सूची से हटा दिया जाता था। सूची से नाम हटवाना उसमें शामिल होने से प्राप्त सम्मान से कहीं अधिक कलंक था। ज़ाहिर दिहलवी ने दाग़ को बताया कि इस सूची में आम तौर पर निम्नलिखित प्रकार के प्रतिष्ठित व्यक्ति शामिल होते थे: राजकुमार, मंत्री, किसी विशेष विधा के उस्ताद, विद्वान, चिकित्सक, हिजड़ों के प्रमुख, सशस्त्र बलों के मुख्य वेतनदाता, सेनापति, किसी भी कला या शिल्प के उस्ताद, कार्यालयों के अधीक्षक और दरबार में याचिका प्रस्तुत करने वाले।

वेतन के भुगतान और उसके वितरण के लिए धन जुटाना अपने आप में एक महत्वपूर्ण कार्य था; इसके लिए अनेक विभाग समर्पित थे। ज़ाहिर दिहलवी ने अनुदान प्राप्तकर्ताओं की सूची इस प्रकार दी है: बेगम और राजकुमारियाँ, पूर्व प्रशासनों के अधिकारी [संभवतः पेंशनभोगी], सशस्त्र बलों के अधिकारी, दैनिक वेतनभोगी विभाग, हिजड़ों का विभाग और उससे जुड़े लोग, और सिपाही।

किले से मिलने वाला कोई भी वेतन, चाहे वह दो रुपये प्रति माह जितना कम ही क्यों न हो, एक विशेष सम्मान की बात थी, जिसे पीढ़ियों तक संजोकर रखा जाता था। इनके अलावा, किले के बाहर रहने वाले राजकुमारों और विभिन्न विषयों के शिक्षकों, कवियों, ज्योतिषियों और दरबार के बाहर के आधिकारिक मामलों में सहायक और सलाहकारों जैसे विविध कर्मचारियों को मासिक वजीफा दिया जाता था।

इसके अतिरिक्त, कुछ विशेष खर्चे भी होते थे, हालांकि वे इतनी बार होते थे कि उन्हें नियमित खर्चे ही कहा जा सकता है। भाग्य के विधाता, ईश्वर, अक्सर बाहर से आने वाले आगंतुकों और किले में रहने वालों को औपचारिक वस्त्र या धन भेंट करके सम्मानित करते थे। एक बार जब

राजकुमार मिर्जा शाह रुख ने हरिद्वार के कुंभ मेले में जाने की इच्छा व्यक्त की, तो उन्हें राजद्वार से औपचारिक वस्त्र और यात्रा अनुदान प्रदान किया गया। इसी प्रकार, विवाह, मृत्यु, जन्म, भ्रमण, शिकार और हज यात्रा के अवसरों पर भी अनुदान, उपहार या औपचारिक वस्त्र स्वीकृत और प्रदान किए जाते थे।
खलीफा के संरक्षक, महाराज, विवाह करने के शौकीन थे और उनकी संतानें असंख्य थीं। उनकी प्रत्येक रानी को अपना मासिक वेतन, निर्धारित आवास और नौकर मिलते थे, जिनका खर्च राजकोष से उठाया जाता था। स्वाभाविक रूप से, शाही विवाहों से संबंधित खर्च नियमित रूप से होता था, हालांकि इसके लिए कोई बजट निर्धारित नहीं था। इसके अलावा, महाराज अनेक मार्शल आर्ट, खेलकूद और कलात्मक विधाओं - सुलेख, घुड़सवारी, तीरंदाजी, आग्नेयास्त्रों से निशानेबाजी आदि - में निपुण थे, इसलिए उन्होंने इन सभी के लिए उचित वेतन पर प्रशिक्षक और अभ्यास साथी नियुक्त किए थे।
ज़ाहिर दिहलवी ने दाग़ को बताया कि उनके पिता ने स्वयं सम्राट की निशानेबाज़ी के कई उदाहरण देखे थे। अक्सर, जब सम्राट किसी पक्षी को उड़ते हुए देखते, तो वे हवदार में रखी बंदूक उठाकर बिना निशाना साधे ही गोली चला देते, और पक्षी लुढ़कते हुए पालकी के पास गिर जाता। तीरंदाजी में सम्राट के प्रशिक्षक एक प्रसिद्ध सिख थे जिनका नाम आपा सिंह था। जब सम्राट युवराज थे, तब उन्होंने दीवान-ए-खास में 'ब्लॉक-एंड-टैकल' प्रणाली स्थापित करवाई थी। तीन मन (लगभग ढाई सौ पाउंड) चने से भरी एक बोरी को चेन से बांधकर रखा जाता था। सम्राट नियमित रूप से अपने दाहिने हाथ की तर्जनी और अंगूठे की मदद से उसे नीचे खींचते थे। भाला फेंकना, तलवारबाजी और गदा से खेलना, इन कलाओं में सम्राट को उस समय के विख्यात उस्ताद मीर हामिद अली द्वारा प्रशिक्षित किया जाता था। युवावस्था में, द प्रेजेंस निहत्थे युद्ध में इतना निपुण था कि वह एक ही समय में आठ लड़ाकों के खिलाफ अभ्यास करता था, और आसानी से उनके वारों से बचाव करता था या उन्हें रोक देता था।

नवाब मिर्ज़ा को महाराज की असाधारण घुड़सवारी की कला के बारे में बताया गया था। सब कहते थे कि पूरे हिंदुस्तान में, दक्कन समेत, केवल ढाई ही सच्चे कुशल घुड़सवार थे। एक थे मिर्ज़ा अबू ज़फ़र बहादुर; दूसरे थे उनके उच्च पदस्थ भाई मिर्ज़ा जहांगीर बख्त, जिन्होंने अंग्रेजों से शर्त जीती थी जब उन्होंने इलाहाबाद किले की खाई को पार कर लिया था। तीसरे के बारे में कहा जाता था कि वे एक मराठा थे। यह बात महाराज के प्रशंसकों द्वारा की गई महज़ अतिशयोक्ति नहीं थी, इसका प्रमाण फैनी पार्क्स की डायरी में मिलता है, जहाँ वे लिखती हैं कि वे ग्वालियर की अपदस्थ रानी के दल में शामिल एक महिला घुड़सवार से व्यक्तिगत रूप से परिचित थीं, जो स्वेच्छा से इलाहाबाद में निर्वासन में रह रही थीं। फैनी पार्क्स कहती हैं कि वह महिला घुड़सवारी के अपने कौशल के बल पर हज़ार घुड़सवारों की सेना द्वारा घेर लिए जाने पर भी सुरक्षित बच निकलती थी।
ऐसे शौक और मनोरंजन के लिए फुर्सत की ज़रूरत थी, जो कि भरपूर थी, और पैसों की भी, जो ज़ाहिर तौर पर कम थे। आमदनी और खर्च का अंतर आमदनी के बराबर ही रहा होगा, जिसका

मतलब था कि सम्राट को अपनी रोज़मर्रा की ज़रूरतों को पूरा करने के लिए अपनी आमदनी से सौ प्रतिशत ज़्यादा की ज़रूरत थी। तो फिर मोती बिखेरने वाले दरबार का खर्च कैसे चलता था? नवाब मिर्ज़ा को इसका कोई संतोषजनक जवाब या स्पष्टीकरण नहीं मिला, हालाँकि उन्होंने इसे जानने के लिए हर संभव प्रयास किया। यह तो ज़ाहिर सी बात थी कि सम्राट कर्ज़ लेते थे। कंपनी बहादुर ने अतीत में कई बार सम्राट के कर्ज़ चुकाने में मदद करने की कोशिश की, लेकिन कोई सफलता नहीं मिली। नवाब मिर्ज़ा ने विश्वसनीय सूत्रों से यह भी सुना कि दरबार के कई अमीर रईस सम्राट को अपनी संपत्ति या अर्जित धन के बारे में नहीं बताते थे। इस गोपनीयता के दो कारण हो सकते थे: या तो व्यक्ति को अपनी संपत्ति का हिसाब देने का आदेश दिया जा सकता था; या सम्राट उस अमीर व्यक्ति से कर्ज़ लेना चाहते थे। नवाब मिर्ज़ा ने मन ही मन सोचा, अगर यह सच भी होता, तो महामहिम इतने संदिग्ध तरीकों से कितना धन जुटा सकते थे? यह अंतर इतना बड़ा था कि इसे भरना नामुमकिन था। उनके पास धन का कोई गुप्त, अप्रकट स्रोत अवश्य होना चाहिए।

कभी-कभी नवाब मिर्ज़ा को ऐसे अवसरों की जानकारी मिलती थी जब दरबार नई नियुक्तियाँ करता था या उपाधियाँ प्रदान करता था। नियुक्ति के लिए आवेदन करने वाले उम्मीदवारों की नज़र में काफ़ी सम्मान होता था। उन्हें बताया गया कि कभी-कभी नीलामी जैसी स्थिति उत्पन्न हो जाती थी, जब प्रतिद्वंद्वी एक-दूसरे से आगे निकलने की होड़ में लग जाते थे। नवाब मिर्ज़ा ने मन ही मन सोचा, तो यह धन का एक और स्रोत है, लेकिन साथ ही उन्होंने यह भी पूछा: एक वर्ष में ऐसे कितने अवसर आते होंगे, और इससे दरबार को कितना लाभ होता होगा? निश्चित रूप से यह बीस हज़ार से अधिक नहीं हो सकता था, जबकि ऐसा लगता था कि शुभ हवेली से धन नालियों से पानी की तरह बह रहा है।

कुछ लोगों का दृढ़ विश्वास था कि सम्राट के पास पारस पत्थर का एक टुकड़ा है, जो किसी भी साधारण धातु को पल भर में सोने में बदल सकता है। लेकिन नवाब मिर्ज़ा का मानना था कि अगर राजकोष में सचमुच ऐसा पारस पत्थर होता, तो सम्राट और भी अधिक उदारतापूर्वक खर्च करते। कुछ लोगों का उतना ही दृढ़ विश्वास था कि महाराज के पास सूफियों द्वारा वर्णित 'दस्त-ए-गैब' ('रहस्यमय शक्ति') है। सूफियों का मानना था कि जिसे यह शक्ति प्राप्त होती है, वह बिना किसी प्रयास के रहस्यवाद से जितना चाहे उतना धन प्राप्त कर सकता है। एक अन्य मत यह था कि महाराज के पास कई जिन्न थे जो उनकी सेवा में तत्पर थे। ऐसा माना जाता था कि एक जिन्न अपने स्वामी के लिए कहीं से भी कुछ भी ला सकता है।

यही आपत्ति अन्य सभी सिद्धांतों पर भी लागू होती है। यदि ऐसा होता, तो और भी अधिक भव्यता होनी चाहिए थी; किसी भी चीज़ में कमी नहीं होनी चाहिए थी। कम से कम लूटे गए चांदी, सोने और रत्नों को तो बहाल किया जाना चाहिए था। वास्तविकता यह थी कि परम पूज्य महाराज अपने समय में हवेली के एक बुर्ज से चोरी हुए सोने से मढ़े तांबे के शिखर को भी बदलवाने में असमर्थ थे।

कभी-कभी, दो-तीन पुरानी अफवाहें नए सिरे से जोर पकड़ लेती थीं: किले के भीतर एक गुप्त खजाना था, जो स्वर्ग में निवास करने वाले, शुभ संयोग के स्वामी, शिहाबुद्दीन शाहजहाँ के

शासनकाल से चला आ रहा था। कहने की आवश्यकता नहीं है कि केवल महाराज को ही उस तक पहुँच प्राप्त थी; वे उसमें से उतना ही निकालते थे जितना उन्हें अपने कामकाज के लिए आवश्यक होता था। एक और कहानी शाहजहानाबाद के लाल किले को आगरा के लाल किले से जोड़ने वाली एक गुप्त सुरंग की थी। केवल शासक सम्राट ही इसके दोनों सिरों पर गुप्त प्रवेश और निकास द्वारों को जानते थे। और महाबली ने आगरा के किले में छिपे खजाने में से कुछ को गुप्त रूप से बाहर निकालने के लिए इस सुरंग का इस्तेमाल किया था।

'अम्मा मियां साहब, यह दिल्ली की महान नगरी है,' ज़ाहिर दिहलवी ने नवाब मिर्ज़ा को शहर के लोकप्रिय नाम का इस्तेमाल करते हुए जवाब दिया, जब नवाब मिर्ज़ा ने आगरा सुरंग की खबरों के बारे में कुछ गहन पूछताछ की। 'हम अफवाहें गढ़ने, खबरें बनाने और फैलाने, हर तरह के मौसम में हर तरह की बातें फैलाने में माहिर हैं। इसके अलावा, हम जो कुछ भी गढ़ते हैं, वह पल भर में चारों कोनों तक फैल जाता है। आधा घंटा भी नहीं लगता!'

लेकिन इन सब बातों में कुछ न कुछ आधार तो जरूर होगा, कुछ न कुछ सच्चाई जरूर होगी। आखिर वह कौन सी शक्ति है जो इस विशाल प्रशासन को घड़ी की तरह सुचारू रूप से चलाने में सक्षम बनाती है?

'प्यारे बेटे, क्या कभी किसी ने ईश्वरीय और चमत्कारिक रहस्यों को जानने की कोशिश की है? न कोई वेतनदाता है, न कोई सेनापति, न कोई प्रबंधक, न कोई सैन्य दस्ता, सब कुछ आकाश में सही समय पर घटित होता है: सूरज उगता है, फिर डूबता है; बारिश का मौसम धूल और गर्मी के मौसम के बाद आता है... तो मियां, तुम इससे खुद ही निष्कर्ष निकाल लो।' अब वह दिल्ली के कारीगर के लहजे में बोलने लगा। 'बेटा, अल्लाह बहुत बड़ा बादशाह है!'

दाग संतुष्ट नहीं थे। न ही वे राज प्रशासन के सुचारू संचालन की पहेली को कभी सुलझा सके। खैर, इससे मुझे क्या फर्क पड़ता है? उन्होंने खुद से कहा। अल्लाह की छाया मुझ पर कृपा दृष्टि रखती है; मिर्ज़ा फखरू साहब बहादुर की मुझ पर इतनी कृपा है कि अब जाकर मुझे समझ आया है कि एक पिता अपने बेटे के लिए कितनी ताकत और कितना बड़ा आशीर्वाद हो सकता है। और मियां नवाब मिर्ज़ा, उन्होंने खुद से थोड़ा घमंड से कहा, हालांकि उतना ही अफसोस भी था, कल को पहले से कौन देख सकता है? आज के लिए और आने वाले दिनों के लिए अल्लाह का शुक्र अदा करो, और वही कहो जो ख्वाजा मीर दर्द साहब ने बहुत पहले कहा था:

ओह साकी, यहाँ से हर पल शराब पीने वालों की भीड़ निकल रही है: शराब का गिलास जितना हो सके उतना देर तक चलता रहे!

हे प्रभु, मेरे ईश्वर, मेरी प्यारी अम्मा जान, मेरी प्रिय फातिमा, मिर्ज़ा फखरू बहादुर और मेरी दोनों मौसियों को सुरक्षित रखें, क्योंकि उन्हीं की साँसों से मेरा संसार प्रकाशित होता है। और हवेली में जीवन के बाज़ार और कारखाने की चहल-पहल के बारे में, मैंने कई बार ईश्वर की छाया को यह कहते हुए सुना है कि उनके बाद न तो किला रहेगा और न ही राज। यह कितना अजीब है कि राजकुमारों में ऊपर से एकता दिखती है, लेकिन अंदर ही अंदर फूट और दूरी है। हर कोई राजा बनने के सपने और आकांक्षाएँ पाले हुए है। यहाँ की स्थिति सुधारने की आवश्यकता पर कोई ध्यान नहीं देता।

किले में अपने प्रवास के पहले चार-छह महीनों के भीतर ही नवाब मिर्ज़ा हवेली के भीतर के खींचतान और संघर्षों से अवगत हो गए। प्रथम उत्तराधिकारी मिर्ज़ा दारा बख्त बहादुर और मिर्ज़ा फ़खरू बहादुर के बीच कोई खास सौहार्द नहीं था। अगर सुनी-सुनाई बातों पर विश्वास किया जाए, तो प्रथम उत्तराधिकारी हमेशा मिर्ज़ा फ़खरू बहादुर के खिलाफ़ सम्राट के कान भरने की कोशिश करते रहते थे। सम्राट को शायद यकीन हो या न हो, लेकिन मिर्ज़ा फ़खरू बहादुर की गलतियों और गुनाहों, चाहे वे वास्तविक हों या काल्पनिक, का ज़िक्र लगातार सम्राट के सामने होता रहता था। यह कोई मुश्किल काम नहीं था, क्योंकि किसी अज्ञात कारण से सम्राट मिर्ज़ा फ़खरू बहादुर को पसंद नहीं करते थे। फिर तीसरे पुत्र, मिर्ज़ा कायमर्स बहादुर थे, जो द्वितीय उत्तराधिकारी थे। उनके बारे में कहा जाता था कि वे बेहद महत्वाकांक्षी थे और उन्हें पूरा विश्वास था कि केवल वही तैमूरिद वंश के सच्चे उत्तराधिकारी हैं। इस तथ्य को उन्होंने कई बार परम पूज्य साहिबों के समक्ष प्रकट करने का पूरा ध्यान रखा। मिर्ज़ा शाह रुख बहादुर को शिकार और भ्रमण में अधिक रुचि थी। वे एक सरल, सौम्य और सामान्यतः उदासीन एवं महत्वाकांक्षाहीन राजकुमार थे। जाहिर तौर पर, उन्हें इस बात से कोई आपत्ति नहीं थी कि यद्यपि वे प्रधानमंत्री और पूर्णाधिकार प्राप्त प्रतिनिधि थे, द्वितीय उत्तराधिकारी का पद उनसे छोटे मिर्ज़ा कायमर्स के पास था। हालांकि, मिर्ज़ा शाह रुख की माता ने मन ही मन प्रार्थना की कि यदि, ईश्वर न करे, मिर्ज़ा दारा बख्त बहादुर को कोई दुर्भाग्य हो जाए, तो उनके पुत्र को ही उत्तराधिकारी घोषित करने पर विचार किया जाए।

मिर्ज़ा शाह रुख की माता एक साधारण नवाब की पुत्री थीं, इसलिए उनका किसी पर कोई प्रभाव नहीं था। इसके विपरीत, सम्राट की प्रिय नवाब ज़ीनत महल यह बताने में कभी नहीं थकती थीं कि सबसे प्रिय पत्नी होने के साथ-साथ वे एक प्रतिष्ठित परिवार से थीं, क्योंकि उनके पिता नवाब अहमद कुली खान दिल्ली पर आक्रमण करने वाले ईरानी राजा अहमद शाह अब्दाली के सीधे वंशज थे। ज़ीनत महल के बारे में कहा जाता था कि वे गर्व से कहती थीं कि मिर्ज़ा शाह रुख या यहाँ तक कि मिर्ज़ा दारा बख्त भी उनके पुत्र मिर्ज़ा जवान बख्त के सामने कुछ भी नहीं थे, जो उत्तराधिकारी और फिर राजा बनने के पूर्ण योग्य थे। अपनी बुद्धिमत्ता और गरिमा के बावजूद, सम्राट ने ज़ीनत महल के किसी भी दावे का कभी विरोध नहीं किया; उन्होंने केवल इतना कहा, 'समय आने पर देखेंगे। इस समय नवाब गवर्नर जनरल बहादुर को इसके बारे में कुछ भी लिखना व्यर्थ है।' जवान बख्त अभी मुश्किल से पाँच साल का है, और मिर्ज़ा शब्बू—ईश्वर के नाम पर—जवान और सेहतमंद हैं, और बादशाहत को लेकर भी कोई निश्चितता नहीं है।' इन आदेशों के बावजूद, ज़ीनत महल अपने बेटे के पक्ष में अंग्रेज़ दरबार में लगातार और अथक प्रयास करती रहीं। जब उन्हें पता चला कि ग्रैंड साहिब बहादुर थॉमस मेटकाफ जवान बख्त के पक्ष में नहीं हैं, तो वह उनकी कट्टर दुश्मन बन गईं और दिन-रात उन्हें कोसती रहीं।

यदि नवाब मिर्ज़ा किले के खर्चीले प्रबंधन के पीछे की सच्चाई या रहस्य को नहीं जान पाए, तो वे उस दयालुता और स्नेहपूर्ण ध्यान की गहराई को भी नहीं समझ पाए जो सर्वोच्च पद के सम्राट ने उस नौजवान पर निस्वार्थ भाव से बरसाया था। खलीफ़ा के संरक्षक सम्राट ने नवाब मिर्ज़ा को

घुड़सवारी, तीरंदाजी और निहत्थे युद्ध में अपना शिष्य चुना। उन्होंने यह सुनिश्चित करने में कोई कसर नहीं छोड़ी कि उन्हें सर्वोत्तम शिक्षा मिले। एक कवि के रूप में, नवाब मिर्ज़ा औपचारिक रूप से ज़ौक़ के शिष्य थे, लेकिन सम्राट ने दाग़ में विशेष रुचि दिखाई और कभी-कभी उन्हें अपनी नई कविताएँ सुनाने के लिए आमंत्रित करते थे और कभी-कभी सुधार या सुझाव देकर उन्हें सम्मानित करते थे। दाग़ ने निश्चित रूप से सम्राट के इन दयालु शब्दों को कृतज्ञतापूर्वक और प्रसन्नता से स्वीकार किया। किले और शहर में, विशेष रूप से नवाब मुस्तफ़ा खान शेफ़्ता की हवेली में, साहित्यिक बैठकों और औपचारिक या अनौपचारिक सभाओं में दाग़ की भागीदारी किसी भी सभा की सफलता के लिए आवश्यक मानी जाने लगी। इसका कारण केवल सम्राट की उस नौजवान पर कृपा दृष्टि ही नहीं थी, बल्कि एक कवि के रूप में उनका उत्कृष्ट प्रदर्शन भी था। यह महज संयोग नहीं था कि पहला औपचारिक मुशायरा, जहाँ दाग़ को राजमहल में बसने के बाद अपेक्षाकृत बड़े श्रोताओं के सामने अपनी कविताएँ सुनाने का अवसर मिला, नवाब मुस्तफा खान शेफ्ता की हवेली में 1845 की पहली तिमाही में आयोजित किया गया था। उस मुशायरे में दाग़ की शुरुआती कविता की बहुत सराहना हुई और वह जल्द ही पूरे शहर में लोकप्रिय हो गई।
यह न तो उड़ती हुई चिंगारी है, न बिजली, न ज्वाला, न पारा; तो फिर मेरा बेचैन दिल क्यों ठहर कर इंतजार करने से इनकार कर देता है?
विषयवस्तु में तो कुछ खास नहीं था, लेकिन पंक्तियों का प्रवाह और शुद्ध भाषा अद्भुत थी। बढ़ती ख्याति और युवा आकर्षण: युवा कवि को आगे बढ़ाने के लिए इससे अधिक कुछ नहीं चाहिए था। यदि ज़ौक़ और मिर्ज़ा फ़तहुल मुल्क बहादुर इस स्थिति से प्रसन्न थे, तो यह स्वाभाविक ही था। ग़ालिब और मोमिन जैसे अन्य उस्तादों ने भी दाग़ की प्रशंसा की और उन्हें सराहा। वे देख सकते थे कि हिंदी कविता के उद्यान में एक नया गुलाब का पौधा खिल रहा है, और उसके फूल पुराने गुलाबों से प्रतिस्पर्धा कर रहे हैं, मानो उन्हें एक शरारती मुस्कान के साथ देख रहे हों। देखते हैं उनका यह असाधारण साहस उन्हें कहाँ तक ले जाएगा। ये उस्ताद, जिन्हें अक्सर इस बात का अफसोस रहता था कि उनके बाद कविता के क्षेत्र को सींचने के लिए कोई योग्य और सक्षम व्यक्ति नहीं दिख रहा था, दाग़ को एक संभावित और योग्य उत्तराधिकारी के रूप में प्रसन्नता और आशा के साथ देख रहे थे।
जैसे-जैसे नवाब मिर्ज़ा की लोकप्रियता और प्रतिष्ठा बढ़ती गई, वैसे-वैसे उनके साथियों में उनका सम्मान भी बढ़ता गया। जैसा कि हम जानते हैं, मुंशी घनश्याम लाल असी अपने प्रिय गुरु शाह नासिर की अनुपस्थिति और फिर उनकी मृत्यु पर हमेशा शोक मनाते थे; दाग उनके जैसे उस्ताद के योग्य थे—उन्हें शाह नासिर से सर्वश्रेष्ठ शिक्षा मिलती और वे अपने गुरु के खजाने में एक अनमोल रत्न होते। दाग के राजसी ... कभी-कभी उस्ताद खुले तौर पर उन्हें अपना बचाव स्वयं प्रस्तुत करने के लिए प्रोत्साहित करते थे, यह कहते हुए कि यद्यपि वे युवा कवि की सहायता के लिए हमेशा मौजूद थे, लेकिन कवि को स्वयं ही अपने बचाव प्रस्तुत करने का ज्ञान और साहस होना चाहिए।
एक बार दाग ने शहर में कहीं एक सभा में ग़ज़ल प्रस्तुत की। उसका पहला श्लोक था:
प्रियतम, भले ही सम्मानवश या अपनी प्रतिष्ठा बचाने के लिए मैं आपके बहाने स्वीकार करता हूँ;

लेकिन क्या आपने झूठी शपथ खाकर अपना विश्वास नहीं खोया?
तुरंत ही तालियों की गड़गड़ाहट गूंज उठी। साहित्यिक संस्कृति इस तरह की कविता के लिए तरस रही थी, जो हल्के-फुल्के हास्य से भरपूर हो, फिर भी गंभीर हो; शब्द सहजता से प्रवाहित हों; भाषा अत्यंत परिष्कृत हो; लहजा संवादात्मक हो; और विषय, हिंदी ग़ज़ल के एक अति प्रयोगित, लगभग घिसे-पिटे विषय का एक मौलिक रूपांतरण हो। दाग ने इसके बाद ऐसी ही अनूठी पंक्तियाँ प्रस्तुत कीं:
उससे अपने प्यार का इज़हार करना वाकई बेहद शर्मनाक और अपमानजनक था; लेकिन मैंने उसे बताया; कम से कम उसे एहसास तो दिलाया। उसने मेरा दिल मुफ्त में ले लिया, और अब वो कहती है, इसकी कोई कीमत नहीं है; तो मैंने अपना नेक काम व्यर्थ कर दिया, और बदले में सिर्फ़ शिकायतें ही मिलीं!
अपनी कविताओं के भाव में डूबे हुए, दाग तालियों की गड़गड़ाहट से पूरी तरह बेखबर होकर कविता पाठ करते रहे। वे अंतिम छंद पर पहुँचे:
दाघ, मेरी इंद्रियाँ, मेरी बुद्धि, मेरी ऊर्जा, मेरी शक्ति: सब कुछ चला गया है। अब मेरे जाने का समय आ गया है; मेरा सामान पहले ही आगे जा चुका है।
जब तालियाँ थोड़ी थम गईं, तो दर्शकों में बैठे एक सम्मानित बुजुर्ग ने कहा, 'वाह वाह! मेरे प्यारे नौजवान, केवल भगवान ही दोषरहित हैं! इतने युवा, और इतना शानदार विषय!'
अब दर्शकों में से एक और प्रशंसात्मक टिप्पणी आई: 'मेरे नौजवान, मैं ईश्वर के नाम पर कसम खाता हूँ, आप अभी जवानी की परिपक्वता से भी बहुत दूर हैं, बुढ़ापे की तो बात ही छोड़िए। आपने अपने जीवन के इस पड़ाव पर यह विषय कैसे चुना?'
‘महोदय, क्या मैं निवेदन कर सकता हूँ?’ एक अधेड़ उम्र का व्यक्ति, जो प्राथमिक विद्यालय के शिक्षक जैसा दिखता था, कक्ष के दूसरे छोर से उठा।
‘जी जी जी, मौलवी साहब, आदेश दीजिए!’ दर्शकों में से आवाजें आईं।
मौलवी साहब ने गला साफ किया और घोषणा की, 'दरअसल, यह विषय कविता के स्वामी, मीर मुहम्मद ताकी मीर साहब की ओर से आया है; अल्लाह उनकी प्रतिष्ठा बढ़ाए।' उन्होंने सीने पर हाथ जोड़कर बुलंद स्वर में कहा:
समझ? बुद्धिमत्ता? देखने-सुनने की उत्सुकता? बुद्धि, ऊर्जा, शक्ति? खैर, ये सब चले गए। दरअसल, मुझे अंततः मृत्यु की ओर ही जाना था; इसलिए मैंने अपना सामान आगे भेज दिया।
कुछ क्षणों के लिए चारों ओर सन्नाटा छा गया; फिर नवाब मुस्तफा खान शेफ्ता ने आदेश दिया, 'भाई, इसमें कोई संदेह नहीं है कि मीर साहब ने इस विषय का प्रयोग पहले भी कई बार किया है। लेकिन मियां दाग ने एक सहजता, एक प्रवाह प्राप्त कर लिया है, जो उनकी कविता को अत्यंत मनमोहक बनाता है।'
‘माननीय महोदय,’ दाग उठकर बोले, ‘अंतर्मुखता के लिए क्षमा करें, लेकिन इस सेवक को बिल्कुल याद नहीं है कि उसने कवि के इन छंदों को कब पढ़ा था, या उसने इन्हें कभी पढ़ा भी था या नहीं।’
‘खैर, अगर इसे साहित्यिक चोरी न भी कहें, तो भी इसमें निश्चित रूप से समानता है,’ मौलवी

साहब ने तीखे लहजे में कहा।
दाग ने थोड़ी शरारती मुस्कान के साथ जवाब दिया, “निस्संदेह यहाँ समानता है। नौकर तो साहित्यिक चोरी का आरोप भी स्वीकार करने को तैयार है। लेकिन अब मैं दो छंद सुनाता हूँ: एक कविता के स्वामी मीर मुहम्मद ताकी मीर साहब का है, जबकि दूसरा उनसे कहीं पहले के फारसी कवि मीर मुइज़्ज़ी का है। मौलवी साहब इन्हें सुनें और फैसला करें कि किसने साहित्यिक चोरी की है, या समानता थी?”
मौलवी साहब ने कुछ तीखे स्वर में उत्तर दिया, 'चर्चा को अपनी ही आयतों तक सीमित रखें!'
श्रोताओं में से कुछ आवाजें आईं: 'नहीं, महोदय। आइए, बाकी छंद भी सुनें।'
दाग़ ने कहा, 'बहुत अच्छा, महोदय। मैं दोनों छंद प्रस्तुत करूँगा।' उन्होंने सबसे पहले मीर मुइज़्ज़ी का फ़ारसी छंद पढ़ा:
तुम कहते हो: हमारे बीच एकता है; हाँ, हे क्रूर व्यक्ति, कहो: हम विश्वास करते हैं!
तालियों की गड़गड़ाहट समाप्त होने के बाद, दाग ने मीर ताकी की हिंदी कविता का पाठ किया:
आप कहते हैं: हमारे बीच एकता है; हाँ, बिल्कुल। लेकिन यह भी कहें: हमें विश्वास है!
कुछ क्षणों के लिए फिर सन्नाटा छा गया। फिर किसी ने कहा, 'यदि मुइज़्ज़ी पूर्ववर्ती हैं, तो हमारे मीर साहब निःसंदेह साहित्यिक चोरी के दोषी हैं।'
अब मामला एक अलग क्षेत्र में चला गया: फ़ारसी कविता का इतिहास। कुछ श्रोता नवाब मुस्तफ़ा खान की ओर देखने लगे; कुछ अन्य मौलवी सहबाई की ओर देखने लगे, जिन्होंने आदेश दिया, 'अमीर-उल शुअरा मीर मुइज़्ज़ी सलजूकी काल के थे। सुल्तान संजर सलजूकी ने उन्हें अमीरुल शुअरा की उपाधि प्रदान की थी। उनका निधन हिजरी 520 में हुआ, यानी मीर मुहम्मद ताकी मीर साहब से सात सौ वर्ष पहले, जिनका निधन हिजरी 1225 में हुआ था।'
‘इसलिए यह हमारे मीर साहब द्वारा साहित्यिक चोरी का मामला होना चाहिए,’ दर्शकों में से एक आवाज आई।
‘नहीं, साहित्यिक चोरी और समानता का सिद्धांत काफी जटिल है,’ सहबाई ने टिप्पणी की।
‘पांचवीं हिजरी शताब्दी के महान सिद्धांतकार जुरजानी ने व्यावहारिक रूप से साहित्यिक चोरी की संभावना से इनकार किया है।’
‘महोदय, मैं विनम्रतापूर्वक निवेदन करता हूँ कि साहित्यिक चोरी या समानता, यह किसी से भी हो सकती है,’ दाग ने कहा, जो अभी भी अपनी जगह पर खड़ा था। फिर उसने महान सादी की एक प्रसिद्ध पंक्ति उद्धृत की:
यह पाप आपके शहर में भी होता है।
सहबाई ने कहा, 'संभवतः मीर साहब मुइज़्ज़ी की कविताओं का अनुवाद कर रहे थे। दूसरों की कविताओं के अंशों का अनुवाद करना या उन्हें अपनी कविता में शामिल करना भी कला के रूप में मान्यता प्राप्त है।'
नवाब शेफ्ता ने कहा, 'यह सच है, लेकिन अरबी कहावत के अनुसार: "जो पहले आया, वह श्रेष्ठ है।"'
'जी हां, महोदय। सेवक तदनुसार कविता के स्वामी की श्रेष्ठता को पूरे दिल से और बिना किसी

संकोच के स्वीकार करता है,' दाग ने कहा और सलाम में सिर झुकाया।
यह घटना हर जगह चर्चा का विषय बन गई। आम राय यह थी कि अगर डैग ने साहित्यिक चोरी की भी थी, तो उसने इसे बड़े ही शानदार ढंग से किया था, और उसने अपने प्रतिवाद में एक अच्छा तर्क प्रस्तुत किया था।

दिल्ली में मौत: समय के मुँह में फंसे सड़े हुए दाँत की तरह, जिसे मामूली से बहाने पर निकाल लिया जाता है।

दो और साल बीत गए; इन वर्षों की सबसे उल्लेखनीय घटना नवाब मिर्ज़ा और अमात-उल फ़ातिमा का विवाह था। मिर्ज़ा फ़थुल मुल्क बहादुर दूल्हे की बारात में तो नहीं गए, लेकिन जब दाग़ जुलूस के आगे शहर की ओर निकला, तब वे वहाँ मौजूद थे, और अगले दिन उन्होंने नवविवाहित जोड़े का किले में स्वागत किया। हालाँकि नवाब मिर्ज़ा के पालन-पोषण का अधिकांश भार उमदा खानम ने उठाया था, फिर भी उन्होंने बड़ी बहन के प्रति अपनी एकजुटता दिखाते हुए कहा कि वे 'दुल्हन के पक्ष' से हैं और अकबरी खानम के घर से शादी से जुड़े सभी मामलों में सक्रिय रूप से भाग लिया। फ़ातिमा कुछ दिनों तक हवेली में रहीं; सबकी सहमति से वे खानम का बाज़ार स्थित वज़ीर के घर में रहने लगीं। उन्हें जब चाहे हवेली आने-जाने की पूरी छूट थी। इसी प्रकार, नवाब मिर्ज़ा भी अपनी सुविधानुसार खानम का बाज़ार जा सकते थे। राहत अफ़ज़ा और उनके पति, जिनके अब एक बच्चा था, नई दुल्हन को घर बसाने में मदद करने और कुछ समय के लिए फ़ातिमा के साथ रहने के लिए राज़ी हो गए। जैसे-जैसे दिन बीतते गए, उम्र में छोटी फ़ातिमा राहत अफ़ज़ा को और भी ज़्यादा पसंद करने लगी और उनकी तारीफ़ करने लगी। नवाब मिर्ज़ा, ज़ाहिर है, राहत अफ़ज़ा के पुराने दोस्त थे और उनके लिए भाई समान थे।

मिर्ज़ा फ़थुल मुल्क और वज़ीर खानम के बीच प्यार दिन-रात बढ़ता गया। खुर्शीद मिर्ज़ा अब घुटनों के बल रेंगने लगा था और सहारे से लगभग चलने लगा था। उसने शब्द बोलने की कोशिश की और कुछ हद तक समझ में आने वाली आवाज़ें निकालने में कामयाब रहा। माता-पिता को पूरा भरोसा था कि लड़का बड़ा होकर एक नेक, हट्टा-कट्टा नौजवान बनेगा, जो अपने माता-पिता के प्रति समर्पित होगा और राज्य के राजकुमार के रूप में कला और युद्ध कला में निपुण होगा। वज़ीर को अपने दिल में पूरा यकीन था कि खुशहाल दिन और रातें जीवन भर रहेंगी। इतना कुछ खोने और इतना कष्ट सहने के बाद, उसे लगा कि अब वह जीवन के उस पड़ाव पर है जहाँ वह महान जलालुद्दीन रूमी की भाषा में बोल सकती है।

मनुष्य का सार समुद्र और भूमि को ग्रहण करता है, चितकबरे लोग: बलि के दिन वध किए गए! अब वह पूरे विश्वास के साथ कह सकती थी कि बीते दिनों में उसने जो कुछ खोया था, वह अब उसके पास मौजूद धन-दौलत के सामने नगण्य था। उससे जो कुछ छीना गया था, वह उसके द्वारा बलिदान किए गए कुछ कीमती रत्नों से अधिक कुछ नहीं था।

एक दिन ज़ोरदार अफवाह उठी: ईश्वर की परछाई अस्वस्थ है। हालाँकि राजाओं और शासकों की अस्वस्थता को अत्यंत गुप्त रखा जाता है, इस बार मामला बहुत जल्दी ही स्पष्ट हो गया। क्योंकि, सम्राट ने लगातार दो-तीन दिनों तक दरबार नहीं लगाया; वे अपने निजी बैठक कक्ष में भी दिखाई नहीं दिए। इसके अलावा, यह भी देखा गया कि हकीम अहसानुल्लाह खान बहादुर प्रतिदिन अठारह से बीस घंटे हवेली में बिता रहे थे। अब अफवाहें तेज़ी से फैलने लगीं, और सबसे चर्चित अफवाह यह थी कि द्वितीय उत्तराधिकारी मिर्ज़ा कायमर्स बहादुर ने सम्राट को ज़हर दिया है ताकि सिंहासन तक पहुँचने का उनका मार्ग प्रशस्त हो सके।

यह बात बिलकुल भी संभव नहीं लग रही थी। क्योंकि प्रथम उत्तराधिकारी मीरान शाह मिर्ज़ा दारा बख्त बहादुर जीवित थे—अल्लाह उन्हें सलामत रखे—और जब संसार के शरणस्थल अपने ईश्वर से मिल जाएंगे, तो सिंहासन और ताज स्वाभाविक रूप से उन्हीं को मिलेगा, न कि मिर्ज़ा कायमर्स को, जो केवल द्वितीय उत्तराधिकारी थे। लेकिन जिस प्रकार झूठ का कोई आधार नहीं था, उसी प्रकार अफवाह को फैलाने के लिए सौ मुख थे। अर्श तैमूरी ने अपनी पुस्तक 'ग्लिम्प्स ऑफ़ द एक्ज़ाल्टेड फ़ोर्ट' में अफवाहों से संबंधित विवरण दर्ज किए हैं:

सम्राट के पुत्र, राजकुमार कायमार्स बहादुर, जो कि उत्तराधिकारी थे, बुरी संगति में पड़कर और लालच में आकर सम्राट को पान के कोन में बाघ की मूंछ का एक बाल खिला दिया, इस उम्मीद में कि पिता की मृत्यु के बाद सिंहासन उन्हीं को मिलेगा। खैर, जब सम्राट की हालत चिंताजनक रूप से बिगड़ने लगी, तो चिकित्सकों ने उन्हें भारी मात्रा में उल्टी कराने वाली दवाइयाँ देना शुरू कर दिया। सम्राट इतनी अधिक मात्रा में खून की उल्टी करने लगे कि देखते ही देखते सारे वॉशबेसिन उनके खून से भर गए। अंत में, मूंछ का बाल भी खून के साथ बाहर आ गया। मामले की जाँच की गई... पता चला कि यह काम राजकुमार कायमार्स बहादुर ने किया था। जब सम्राट की सेहत में सुधार आया, तो उन्होंने राजकुमार कायमार्स को बुलाया और उनके सामने विष से भरा एक कटोरा तैयार रखा। अपनी मनमानी करने वाला राजकुमार डरा हुआ, सिर झुकाए हुए आया। उसने सलाम किया और अपने पिता के आदेश की प्रतीक्षा करने लगा। सम्राट ने अपने हाथ में विष का प्याला लिया, राजकुमार को इशारा किया और आदेश दिया, “पुत्र, जिस प्रकार तुमने मुझे बाघ के बाल खिलाए थे, अब तुम्हें उसका प्रायश्चित करना होगा। इसी क्षण इस विष का प्याला पी लो।” मिर्ज़ा कायमर्स ने हाथ जोड़ लिए, कुछ कहना चाहा, लेकिन सम्राट दहाड़ते हुए बोले, “घृणित! क्या तुम भी अपने पूर्वजों के अयोग्य होना चाहते हो?” हाथ जोड़े हुए मिर्ज़ा कायमर्स दरबार के पास गए और बोले, “ठीक है,” और एक ही साँस में विष का प्याला पी गए। कुछ ही क्षणों में वे अपने पिता के चरणों में गिर पड़े, मृत्यु के ठंडे पड़ चुके थे।

इसमें कोई शक नहीं कि यह वृत्तांत नाटकीय और प्रभावशाली है; लेकिन इसमें रत्ती भर भी सच्चाई नहीं है। अर्श तैमूरी समकालीन नहीं थे, और किसी भी समकालीन स्रोत में इस घटना का ज़िक्र नहीं है। स्पष्ट है कि ऐसा हो ही नहीं सकता था। चिकित्सकीय दृष्टि से, बाघ की मूंछों में कोई विषैलापन नहीं होता, न ही उन्हें निगलने से खून की उल्टी हो सकती है। यदि यह घटना 1847 से पहले की है, तो प्रथम उत्तराधिकारी मिर्ज़ा दारा बख्त बहादुर और प्रधानमंत्री मिर्ज़ा शाह रुख बहादुर दोनों उस समय जीवित थे, यानी मिर्ज़ा कायमार और सम्राट के बीच दो राजकुमार थे। यदि यह घटना जनवरी 1849 के बाद हुई, जब मिर्ज़ा दारा बख्त की मृत्यु हुई, तो सम्राट मिर्ज़ा जवान बख्त के पक्ष में और मिर्ज़ा फखरू सिंहासन के उत्तराधिकारी घोषित होने के उनके दावे को आगे बढ़ाने के लिए पहले से ही कदम उठा रहे थे। इसलिए, यदि मिर्ज़ा कायमार उस समय जीवित थे, तो उनके पास अपने लिए कुछ करने का कोई अवसर नहीं था।

यह सच है कि महाराज को एक समय पेट की गंभीर और कष्टदायी बीमारी हुई थी, लेकिन यह बहुत बाद की बात है। उन दिनों पेट की बीमारियाँ आम थीं; अंग्रेज साहब अक्सर इन बीमारियों का शिकार हो जाते थे। यह भी सच है कि लगभग 1847 में मिर्ज़ा कायमर्स का निधन हो गया।

उनकी मृत्यु की सही तारीख ज्ञात नहीं है, लेकिन यह अत्यंत संभव है कि यह 1847 की शुरुआत में अचानक हुई हो। उन दिनों अचानक होने वाली मौतों को अक्सर जहर देने की अफवाहों का विषय बना दिया जाता था। उनकी मृत्यु के कुछ समय बाद ही, दूसरे उत्तराधिकारी मिर्ज़ा शाह रुख बहादुर भी ईश्वर के प्रिय बन गए। यह अप्रैल 1847 की बात है।

इन मौतों से राजमहल प्रशासन में तत्काल कोई दरार नहीं आई: प्रथम उत्तराधिकारी मिर्ज़ा दारा बख्त बहादुर जीवित थे, स्वस्थ थे और अभिजात वर्ग एवं आम जनता में समान रूप से लोकप्रिय थे। दुर्भाग्यवश, 11 जनवरी 1849 को उनका भी निधन हो गया। उनके निधन से कुछ दिन पहले, उन्हें सर्दी-जुकाम हुआ और हल्का बुखार पाया गया। उनके चिकित्सक ने कफ प्रकृति का निदान करते हुए कफ निकालने की दवाइयाँ दीं। दो दिनों के भीतर ही उन्हें तेज बुखार हो गया, जिससे फेफड़ों में सूजन आ गई (जिसे आधुनिक भाषा में निमोनिया कहते हैं) और वे बेहोश हो गए। केवल चार दिनों तक बीमार रहने के बाद, 11 जनवरी की शाम को उनका निधन हो गया, और महाराज एवं पूरे किले ने उनके निधन पर शोक व्यक्त किया। तीन दिनों तक दरबार नहीं लगा और कई दिनों तक हवेली की दीवारों पर रोने-धोने की आवाजें गूंजती रहीं। स्तब्ध और शोकग्रस्त सम्राट ने तिथि दर्ज करने के लिए एक फारसी कालक्रम तैयार किया:

दारा बख्त नामक युवराज, जब इस नश्वर संसार से विदा हुए, तो जनता की आत्माएं शोक से भर उठीं; उनकी मृत्यु का वर्ष आत्मा का शोक बन गया। 1265 = 1849

तीसरे दिन पुष्पांजलि का आयोजन किया गया—यह मुगलों द्वारा अपनाई गई एक हिंदू प्रथा थी —प्रार्थनाएं पढ़ी गईं, फिर छोटी-छोटी थालियों में फूल रखकर उपस्थित लोगों में बांटे गए। शुद्ध सफेद चीनी से बनी पांच-नुकीले तारे के आकार की छोटी-छोटी मिठाइयां—जिन्हें किसी कारणवश 'इलायची दाना' कहा जाता है—शोक मनाने वालों के सामने रखी गईं। प्रत्येक इलायची दाना पर सत्तर हजार बार आस्था की पहली प्रतिज्ञा पढ़ी गई। इसके बाद यह प्रार्थना की गई कि इन प्रार्थनाओं का पुण्य मृतक को मिले, और फिर उपस्थित लोगों में मिठाइयां बांटी गईं। मृतक के नाम पर, जिन पर ईश्वर की कृपा हो, भोजन, वस्त्र और शॉल दान में दिए गए।

समारोह के बाद, महाराज अपने निजी कक्ष में लौट आए। उन्होंने मृतकों के पुत्रों, पुत्रियों, दामादों और बहुओं को तीन दिनों के शोक की समाप्ति के उपलक्ष्य में नए शॉल भेंट किए। मृतकों की पत्नियों को उन्होंने विधवाओं के वस्त्र दिए। महल में विलाप और शोक की गूँज सुनाई दे रही थी। महाराज भी रो पड़े और उन्होंने स्त्रियों से कहा, ‘अम्मा, रोना मत। अपने इस दुःख को सहने का धैर्य रखो। ईश्वर की इच्छा के विरुद्ध आह भरने का साहस कोई नहीं कर सकता।’

नौवें, उन्नीसवें और चालीसवें दिन फिर से प्रार्थनाएँ की गईं। दिवंगत राजकुमार की समाधि पर फूलों और रेशम की एक नई औपचारिक चादर डाली गई। शोक की समाप्ति का संकेत देने के लिए सभी को इलायची दानास नामक विशेष मिठाई की गोलियाँ वितरित की गईं।

अगर कोई एक व्यक्ति था जो मिर्ज़ा दारा बख्त के लिए शोक नहीं मना रहा था, तो वह ज़ीनत महल थीं। उनकी नज़र में, उनके बेटे के उत्तराधिकार के रास्ते से तीन प्रमुख बाधाओं का तुरंत हट जाना, सर्वशक्तिमान ईश्वर की ओर से उनकी महत्वाकांक्षा को स्वीकृति का स्पष्ट संकेत था। उन्होंने जवान बख्त को प्रथम उत्तराधिकारी घोषित करवाने के लिए तुरंत अपने प्रयास और तेज़

कर दिए। उन्होंने महाराज पर पहले से भी अधिक दबाव डाला; उन्होंने कंपनी के वरिष्ठ अधिकारियों, विशेष रूप से थॉमस मेटकाफ ग्रैंड साहिब बहादुर और उनके सहायक साइमन फ्रेजर साहिब बहादुर को मनाने के प्रयास भी शुरू कर दिए, उन्हें महंगे उपहारों और ज़ोरदार याचिकाओं से भर दिया। उन्होंने दिल्ली में दफ़न सभी महत्वपूर्ण सूफ़ियों और धर्मगुरुओं की कब्रों पर भी कई बार जाकर उनसे अपने बेटे के लिए मध्यस्थता करने की अपील की। उन्होंने संत की आत्मा को साक्षी मानकर प्रतिज्ञा की कि यदि उनकी प्रार्थना स्वीकार हो जाती है, तो वह कुछ निश्चित अच्छे कर्म करेंगी, जैसे कि कुछ गरीबों को भोजन कराना, उनकी कब्र पर एक कीमती रेशम और फूलों की चादर चढ़ाना, इत्यादि।

उस समय बादशाह के मन में दो बातें सबसे अहम थीं: ज्योतिषियों ने कई वर्षों से भविष्यवाणी की थी कि बहादुर शाह द्वितीय के बाद कोई राजा नहीं होगा। इसके अलावा, भले ही फिरंगी सरकार जवान बख्त को प्रथम उत्तराधिकारी घोषित करने पर सहमत हो जाए, और बाद में शायद राजा भी बना दे, जवान बख्त के पास शाही कर्ज चुकाने का कोई साधन नहीं था। वहीं, मिर्ज़ा फखरू ने कई बार कहा था कि जब वह प्रथम उत्तराधिकारी बनेंगे, तो वह सारा शाही कर्ज चुका देंगे, चाहे इसके लिए उन्हें खुद को बेचना ही क्यों न पड़े।

दूसरी ओर, फिरंगी साहिब बहादुर अपनी कुटिल चालें चलने में व्यस्त थे। कलकत्ता के दरबार को स्पष्ट था कि मुगल बादशाहत को हमेशा के लिए मिटाने और तैमूर वंश के सिर से संप्रभुता का धुआं उड़ाने का यह एक अनूठा अवसर था। सम्राट को लगभग नजरअंदाज करते हुए (जीनत महल का वैसे भी कोई खास महत्व नहीं था), फिरंगी ने मिर्ज़ा फतहुल मुल्क बहादुर के साथ सीधी बातचीत शुरू कर दी। वास्तव में, यदि अर्श तैमूरी के (लगभग अविश्वसनीय) वृत्तांत पर विश्वास किया जाए, तो मिर्ज़ा खुर्शीद आलम ने उन्हें बताया था कि उनके पिता, मिर्ज़ा फतहुल मुल्क बहादुर ने मिर्ज़ा दारा बख्त के निधन से पहले ही अंग्रेजों से उत्तराधिकार के लिए बातचीत शुरू कर दी थी। हालांकि यह संभव नहीं लगता, लेकिन इसमें कोई संदेह नहीं है कि फथुल मुल्क बहादुर ने अंग्रेजों से बातचीत शुरू कर दी थी, और जब सब कुछ उनके पक्ष में हो गया, तो उन्होंने एक ही दिन—3 सितंबर 1852—को खिलाफत के संरक्षक को तीन याचिकाएँ भेजीं, जिनमें उन्होंने उनके प्रति अपनी वफादारी का आश्वासन दिया और प्रथम उत्तराधिकारी नियुक्त होने की स्थिति में आकाश के समान महिमावान बादशाह के प्रति अपनी शाश्वत दासता और अधीनता का वादा किया। दूसरी याचिका में, राजकुमार ने संपूर्ण शाही ऋण चुकाने का वादा किया। तीसरी याचिका में, उन्होंने नवाब ज़ीनत महल की इच्छाओं के विरुद्ध कभी न जाने का वादा किया और पुष्टि की कि उनके और मिर्ज़ा जवान बख्त के सभी विशेषाधिकार पहले की तरह ही बने रहेंगे। यह संभव है कि सम्राट को जब फथुल मुल्क बहादुर और अंग्रेजों के बीच हुए समझौते की भनक लगी, तो उन्होंने फथुल मुल्क बहादुर पर नैतिक दबाव डाला होगा कि वे उन याचिकाओं को सम्राट और दुनिया में उनके दो सबसे प्रिय लोगों के प्रति उनकी वफादारी और सद्भावना की घोषणा के रूप में लिखें।

ऐसे संकेत मिलते हैं कि प्रथम उत्तराधिकारी की मृत्यु की खबर मिलते ही अंग्रेजों ने एकतरफा फैसला लेते हुए मिर्ज़ा फतुल मुल्क को प्रथम उत्तराधिकारी घोषित कर दिया और अबू ज़फर

मुहम्मद सिराजुद्दीन बहादुर शाह द्वितीय की मृत्यु के बाद राजशाही और साम्राज्य की संस्था को समाप्त कर दिया। कई वर्षों की जटिल बातचीत के बाद उन्होंने मिर्ज़ा फतुल मुल्क की उम्मीदवारी को मंजूरी दी। यह राजकुमार के लिए एक व्यर्थ विजय थी: भाग्य के विधाता, सच्चे गुरु और मार्गदर्शक, मुगल सम्राट की मृत्यु के बाद कोई राजशाही नहीं रहेगी; हवेली खाली हो जाएगी; मुगल संप्रभुता और स्वायत्तता के सभी चिह्न और प्रतीक हमेशा के लिए मिट जाएंगे। न कोई औपचारिक हाथी छत्र, न मछली का चिन्ह, न कोई औपचारिक ढोल। सम्राट के नाम पर सिक्के ढाले जाने का सिलसिला बहुत पहले ही बंद हो चुका था। इलाहाबाद और ग्वालियर की शाही टकसालें शाह आलम द्वितीय के समय में बने सांचों से सिक्के ढालती थीं। ये सिक्के वैध मुद्रा थे, लेकिन जॉन कंपनी द्वारा ढाले गए सिक्के प्रचलन में अधिकाधिक आने लगे थे। बहादुर कंपनी ने अरकोट, सूरत और मुर्शिदाबाद स्थित शाही टकसालों में राजा के नाम से सिक्के ढाले। 1835 में यह सिलसिला बंद हो गया जब सिक्कों पर अंग्रेज राजा का नाम और चित्र अंकित होने लगे। 1840 में जॉन कंपनी के सिक्कों पर महारानी विक्टोरिया का चित्र अंकित हुआ।

हिंद और दक्कन के अधिकांश भाग में संप्रभुता के प्रतीक के रूप में केवल राजा के नाम का उल्लेख और शहर या कस्बे की मुख्य मस्जिद और सभी प्रमुख मस्जिदों में शुक्रवार की नमाज़ से पहले औपचारिक भाषण में उनकी सुरक्षा के लिए प्रार्थना करना ही शेष रह गया था। जॉन कंपनी ने निर्णय लिया कि चूंकि अब कोई राजा नहीं होगा, इसलिए राजा का कोई उल्लेख या उनकी कुशलता के लिए कोई प्रार्थना नहीं की जा सकती। मिर्ज़ा फ़खरू को तैमूरिद वंश का मुखिया माना जाएगा, लेकिन उन्हें महरौली गाँव में कहीं रहना होगा और वहाँ अपना घर बनाना होगा। वे नवाब गवर्नर जनरल बहादुर और पूर्वोत्तर प्रांत के नवाब लेफ्टिनेंट गवर्नर बहादुर को समान पद प्रदान करेंगे। हवेली खाली करने के लिए उन्हें कोई मुआवज़ा नहीं दिया जाएगा।

3 सितंबर 1852 को, मिर्ज़ा फ़खरू को साहिब-ए आलम व आलमीयन की उपाधि से सम्मानित किया गया। उन्हें समस्त विश्व के गुरु, मिर्ज़ा मुहम्मद सुल्तान गुलाम फ़खरुद्दीन फ़थुल मुल्क शाह बहादुर का पुत्र घोषित किया गया। उनकी वंश-परंपरा और समृद्धि सदा बनी रहे। किसी भी ओर कोई उत्सव नहीं मनाया गया। फ़थुल मुल्क बहादुर इस बात से दुखी थे कि चग़ाता वंश की राजशाही की लौ उन्होंने बुझा दी। परन्तु उन्होंने स्वयं को यह कहकर सांत्वना दी कि अब राजशाही केवल नाम की रह गई है; इसका अस्तित्व हो या न हो, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। इसका जीवन हो या निर्जीवता, कोई मायने नहीं रखती। कम से कम मैंने अपने वंश का नाम तो बचा लिया।

ज़ीनत महल का अपार्टमेंट वीरान और असहनीय मातम से भरा हुआ था। ज़माने की रानी ज़ोर-ज़ोर से मेटकाल्फ़ साहब को कोस रही थीं, दोनों हाथ आसमान की ओर उठाकर नाटकीय अंदाज़ में चिल्ला रही थीं कि ग्रैंड साहिब बहादुर को उनकी बेईमानी और अन्याय के लिए ज़रूर सज़ा मिलेगी। कुछ लोग कहते हैं कि उन्होंने ऐलान किया, 'ग्रैंड साहिब बहादुर और उनकी पत्नी दोनों को ज़हर खाने पर मजबूर किया जाएगा और वे खून की उल्टी करते हुए मरेंगे।' उन्होंने तुरंत न्याय की मांग करते हुए एक याचिका तैयार कर सर्वोच्च महारानी विक्टोरिया को भेजी। लेकिन उनकी याचिका पर कोई ध्यान नहीं दिया गया। किले में रहने वाले और शहर के लोग आम तौर पर मिर्ज़ा

फ़तहुल मुल्क बहादुर के युवराज नियुक्त होने से खुश थे। वे एक सज्जन राजकुमार थे, बेदाग चरित्र वाले, विद्वान और वास्तव में इस सम्मान के योग्य थे।

मिर्ज़ा फ़थुल मुल्क बहादुर के युवराज घोषित होने के कुछ ही महीनों बाद, ग्रैंड साहिब बहादुर थॉमस मेटकाल्फ़ को पेट में ऐंठन की शिकायत हुई। पेट की मांसपेशियों में मरोड़, उल्टी, दस्त और लगातार हल्का बुखार ने उन्हें जल्दी ही कमज़ोर कर दिया और वे पूरी तरह से बीमार पड़ गए। अंग्रेज़ चिकित्सकों के असफल होने पर, उन्होंने यूनानी-इस्लामी चिकित्सा पद्धतियों, फिर आयुर्वेदिक चिकित्सकों और अंत में तांत्रिकों और भूत-प्रेत भगाने वालों से भी मदद ली। उनकी बीमारी कम होने के बजाय, लगभग हर घंटे बढ़ती ही गई। मेटकाल्फ़ बार-बार कहते रहे कि उन्हें ज़हर दिया गया है और वे बच नहीं पाएंगे। अंग्रेज़ चिकित्सक, ताबीज़ और कवच बनाने में माहिर मुसलमान, तांत्रिक और हर तरह के योगी समान निश्चितता के साथ कहते रहे कि उन्हें शरीर या मन से ज़हर नहीं दिया गया है। मेटकाल्फ़ को यकीन नहीं हुआ; और उन्हें यकीन कैसे होता? दवा या भोजन के रूप में जो कुछ भी वे निगलते थे, उसका अधिकांश भाग उल्टी और थूक के माध्यम से उनके शरीर से बाहर निकल जाता था।

अब दिल्ली के अफवाह फैलाने वालों के लिए यह एक सुनहरा अवसर था। सबसे प्रचलित अफवाह यह थी कि युग की रानी ज़ीनत महल ने ग्रैंड साहिब बहादुर को ज़हर देकर मरवा दिया था, क्योंकि वह अपने बेटे को युवराज पद से वंचित करने के कारण उनसे बहुत नाराज़ थीं। सम्राट ने स्वयं बार-बार औपचारिक रूप से इसका खंडन किया, लेकिन जब ग्रैंड साहिब बहादुर ने स्वयं स्वीकार किया कि उन्हें ज़हर दिया गया था, तो भला इस अफवाह को कौन नकार सकता था?

थॉमस मेटकाफ साहिब बहादुर ने कहा कि जब तक वे दिल्ली की जहरीली, धूल भरी हवा में सांस ले रहे हैं, तब तक वे ठीक नहीं हो सकते। उन्होंने मांग की कि उन्हें पहाड़ों पर ले जाया जाए; दिल्ली से दूर, उनके दुश्मनों को उन्हें जहर देने का मौका भी नहीं मिलेगा। उनके आदेशानुसार, रेजिडेंसी का पूरा स्टाफ, उनके निजी सेवक, उनके कार्यालय के अधिकांश लोग और अधिकारी रथों, बैलगाड़ियों और पालकियों में शिमला के लिए रवाना हुए। अंबाला तक शेर शाही राजमार्ग चौड़ा और अच्छी तरह से बना हुआ था। कुछ ही देर बाद, उन्हें संकरी, गड्ढों वाली सड़कें मिलीं। पहाड़ों की चढ़ाई जल्द ही शुरू हो गई; संकरी सड़क घुमावदार और वास्तव में बीमार व्यक्ति के लिए खतरनाक हो गई। वे एक और दिन तक चलते रहे, फिर कुछ अग्रिम संदेशवाहक कुछ मील आगे भूस्खलन, ऊपरी ढलानों पर चारों ओर बर्फबारी और उससे आगे घने जंगलों की सूचना लेकर लौटे। आगे का रास्ता, अगर पूरी तरह से दुर्गम नहीं था, तो निश्चित रूप से बहुत कठिन था। मेटकाफ के दल के वरिष्ठ सदस्य उनके स्वास्थ्य और जीवन को और अधिक जोखिम में नहीं डालना चाहते थे, इसलिए पूरा काफिला दिल्ली लौट गया और अक्टूबर 1853 के अंत में वहाँ पहुँचा। इस दौरान मेटकाफ बार-बार यह दावा करते रहे कि उन्हें जहर दिया गया है। उनका वजन दिन-प्रतिदिन घटता गया और निर्जलीकरण बढ़ता गया।

अंततः, 3 नवंबर 1853 को, मिर्ज़ा फ़खरू के युवराज घोषित होने के ठीक चौदह महीने बाद, महामहिम के विशेष समर्पित सेवक, सल्तनत के कुलीन और प्रख्यात पुत्र, मुअज़्ज़म-उद-दौला

अमीन-उल मुल्क इख्तिसास यार खान थॉमस थियोफिलस मेटकाफ फ़िरोज़ जंग साहिब बहादुर, नवाब गवर्नर जनरल बहादुर के प्रतिनिधि और समृद्धि और शक्ति के केंद्र, इंग्लिश कंपनी बहादुर के शासन से संबंधित मामलों में पूर्णाधिकार प्राप्त प्रतिनिधि, और शाहजहानाबाद और दिल्ली के राजधानी क्षेत्र के आयुक्त साहिब बहादुर ने अपने प्राणों को ईश्वर को सौंप दिए। उन्हें अगले दिन सिकंदर साहब के गिरजाघर से सटे कब्रिस्तान में दफनाया गया। यह वही कब्रिस्तान था जहाँ अठारह वर्ष पहले विलियम फ्रेजर साहिब बहादुर के अवशेषों को धूल में मिला दिया गया था। मैंने पौराणिक राजा फरीदून के द्वार पर किसी को देखा, उसने दरवाजे की जंजीर खड़खड़ाकर पुकारा: क्या वहाँ कोई है?

अंग्रेज़ हलकों में अब भी ये अफवाहें प्रचलित हैं कि मेटकाफ को ज़हर दिया गया था और नवाब ज़ीनत महल ने इसे अंजाम दिया था। कलकत्ता स्थित नवाब गवर्नर जनरल साहिब बहादुर के उच्च पदस्थ कार्यालय द्वारा इस मामले की कोई जाँच नहीं की गई। कंपनी के दस्तावेज़ों में भी इस मामले पर कोई टिप्पणी या जानकारी नहीं है।

अंग्रेजी नव वर्ष का प्रारंभ हुआ। किले में रहने वाले, विशेषकर महामहिम, भाग्य के विधाता, मिर्ज़ा फतहुल मुल्क बहादुर और वज़ीर खानम, सभी आशा और प्रार्थना कर रहे थे कि उनके शेष दिन शांतिपूर्ण ढंग से बिना किसी नए आघात के गुजरें। लेकिन वर्ष समाप्त होने से पहले ही, 16 नवंबर 1854 को, कवियों के सुल्तान, खाकानी-ए-हिंद शेख मुहम्मद इब्राहिम ज़ौक, जो महामहिम के काव्य गुरु थे, निवास भवन में रहने के लिए प्रस्थान कर गए। 14 मई 1852 को, दिल्ली के एक अन्य प्रख्यात कवि, हकीम मोमिन खान मोमिन, निरंकुश सत्ताधारी हकीम के दरबार में जा चुके थे। अब दिल्ली के पास गौरव करने के लिए केवल मिर्ज़ा असदुल्ला खान ग़ालिब ही बचे थे, जो अतीत के उस्तादों की स्मृति और फ़ारसी और रेख़्ता काव्य के उद्यान में हजारों गीतों के बुलबुल के रूप में विराजमान थे, और इस क्षेत्र में सभी पर श्रेष्ठता रखते थे। खलीफा शासन की दहलीज से ही मिर्ज़ा ग़ालिब को काव्य के गुरु का दर्जा मिलने के बाद, मिर्ज़ा फ़तहुल मुल्क शाह बहादुर ने भी ग़ालिब के शिष्य के रूप में अपना नाम दर्ज करा लिया। यद्यपि मिर्ज़ा ग़ालिब की कृपा दृष्टि और स्वीकृति पहले की तरह ही दाग़ पर बनी रही, फिर भी दाग़ ने किसी कारणवश उनके शिष्यों के समूह में शामिल होना नहीं चाहा। संभवतः उन्हें लगता था कि उनकी माता उन्हें ग़ालिब के साथ औपचारिक रूप से घनिष्ठ संबंध बनाने की अनुमति नहीं देंगी। या शायद ज़ौक़ के उत्कृष्ट मार्गदर्शन ने उन्हें हर तरह से परिपूर्ण बना दिया था और उन्हें किसी अन्य उस्ताद की आवश्यकता महसूस नहीं हुई। दाग़ और ग़ालिब के संबंध सुखद और मैत्रीपूर्ण बने रहे, और वास्तव में उन्होंने ग़ालिब की पेंशन से संबंधित मामलों में उनकी कुछ सहायता भी की: 1855 से ग़ालिब रामपुर राज्य से पेंशन प्राप्त करते थे, जहाँ दाग़ का अपने मंझली खाला के कारण कुछ प्रभाव था, जिनकी रामपुर में किस्मत चमकती रही।

1 अप्रैल 1855 को रामपुर के शासक नवाब मुहम्मद सईद खान बहादुर, फुफ्फुसशोथ (प्लूरिसी) से पीड़ित होकर स्वर्ग सिधार गए। उनके उत्तराधिकारी नवाब यूसुफ अली खान बहादुर ने नवाब की गद्दी की गरिमा को और बढ़ाया। नए नवाब और उमदा खानम के बीच संबंधों को देखते हुए, कुछ मित्रों ने नवाब मिर्जा को रामपुर में बसने का सुझाव दिया। लेकिन दाग अपनी मां की

छत्रछाया और फथुल मुल्क बहादुर से संबंध तोड़ना नहीं चाहते थे, और यही वज़ीर की इच्छा थी, हालांकि उन्होंने नवाब मिर्जा के सामने अपनी इच्छा ज़ाहिर नहीं की। उन्हें उम्मीद थी कि खुर्शीद मिर्जा की तरह उनके दूसरे बेटे और बहू भी सुरक्षा और शांति के शहर दिल्ली में रहेंगे। नवाब मिर्जा का अपने बड़े सौतेले भाई मिर्जा अबू बक्र बहादुर से अच्छा तालमेल था। मिर्जा खुर्शीद आलम लगभग दस वर्ष के थे; शाह मुहम्मद आगा पंद्रह वर्ष के थे। यद्यपि वे सौतेले भाई थे, फिर भी उनमें पूर्ण एकता और मित्रता थी, मानो वे सगे भाई हों। मिर्ज़ा अबू बक्र को कविता में कोई रुचि नहीं थी, परन्तु शाह मुहम्मद आगा का स्वभाव दिल्ली के साहित्य-अनुकूल वातावरण में निखर रहा था। उन्होंने शैक़ उपनाम अपनाया, परन्तु रेख़्ता से अधिक फ़ारसी में रुचि रखते थे; शायद यह उनके ईरानी मूल का प्रभाव था। मिर्ज़ा खुर्शीद ने भी खुर्शीद उपनाम अपनाया और कविता का अभ्यास करने लगे। मिर्ज़ा फ़तहुल मुल्क बहादुर ने वज़ीर से कहा कि यह निश्चित रूप से उनकी ही देन है कि उनके पुत्र कवि बने; वे स्वयं तो कभी कवि संतान उत्पन्न नहीं कर सकते थे। वज़ीर ने उत्तर दिया, 'अल्लाह आपको आपके इस अद्भुत स्वभाव से सुरक्षित रखे; आप उन सभी कवियों से बढ़कर हैं जिन्हें मैं जन्म दे सकता था।' परन्तु मिर्ज़ा फ़तहुल मुल्क बहादुर कभी-कभी उदास मन से सोचते थे: काश, मैं साधारण गुलाम फ़खरुद्दीन होता।

फिरंगी शासकों के अड़ियल हठधर्मिता और भारतीय राज्यों पर कब्ज़े की खबरें चारों ओर से आती रहीं। 1856 की सबसे भयावह घटना लगभग साल की शुरुआत में ही घटी। 7 फरवरी 1856 को फिरंगी सेना लखनऊ में दाखिल हुई और अवध के राजा को सशस्त्र सुरक्षा में जबरन इलाहाबाद और फिर कलकत्ता भेज दिया गया। बेचारे राजा ने अपनी लंबी कविता 'हुज़्न-ए-अख्तर' (अख्तर के दुख) में रास्ते में अपने कष्टों और अपमान का वर्णन किया। फिरंगियों ने एक ब्लू बुक प्रकाशित की जिसमें राजा के कुशासन, अक्षमता और निर्दयता का अंग्रेज़ी में विवरण था, जिससे उनके स्पष्ट रूप से अनुचित सैन्य हस्तक्षेप और उन्हें पदच्युत करने को उचित ठहराया जा सके। राजा ने अपनी सरकार के खिलाफ सभी आरोपों का विस्तृत खंडन तैयार करके जवाब दिया। ब्लू बुक का यह जवाब फारसी, अंग्रेज़ी और हिंदी में प्रकाशित हुआ और राजा के दूतावास के माध्यम से लंदन भी भेजा गया। हालांकि, राजा के जवाब और उनके दूतावास से कुछ हासिल नहीं हुआ।

अवध की घटनाओं की गूंज जल्द ही दिल्ली तक पहुंच गई, जिससे सदमा और व्याकुलता फैल गई। अवध से पहले, फिरंगियों ने उन्नीस वर्षीय रानी लक्ष्मीबाई को उनके निःसंतान पति की मृत्यु के बाद झांसी की रियासत से बेदखल कर दिया था। इन घटनाओं से दिल्ली, विशेषकर अवध के राजा के निष्कासन से, बहुत विचलित हुई, क्योंकि वहां का राजघराना दिल्ली के ही उन रईसों की संतान था जो अठारहवीं शताब्दी में दिल्ली के प्रभुत्व से अलग हो गए थे। लखनऊ के शासकों ने प्रारंभ में स्वयं को नवाब वज़ीर कहा और उन्होंने शाही दरबार से उपाधियाँ स्वीकार कीं; वे उचित अवसरों पर सम्राट को नज़र लगाते थे और दिल्ली के राजकुमारों के साथ व्यवहार में सभी प्रोटोकॉल का पालन करते थे। अंग्रेजों ने 1819 में अवध के शासक को राजा का दर्जा दिया। दिल्ली हमेशा से मानती रही कि प्रतिद्वंद्वी राज्य एक कृत्रिम रचना थी। सम्राट के रिश्तेदार, जो किसी न किसी कारण से लखनऊ में बस गए थे, उन्हें दिल्ली के शाही खजाने से मासिक भत्ता

दिया जाता था और उन्हें नाममात्र के लिए ही सही, दिल्ली की प्रजा माना जाता था।
अवध का हाथ से निकल जाना राजनीतिक और भावनात्मक रूप से बहुत दुखद था; लखनऊ के नरसंहार को पूरे भारत में देखी जा रही एक घटना का हिस्सा मानते हुए, सम्राट ने मैसूर के टीपू सुल्तान के बारे में एक कविता में भारत के राजनीतिक पतन पर अपना दुख और असंतोष व्यक्त किया, जिसमें मैसूर सल्तनत भारत के विघटन का प्रतीक बन गई।
ज़फ़र, मैं अपनी शक्ति और धैर्य पर कितना भरोसा रखूँ? क्या हिंदुस्तान की सेना ने टीपू के प्रति वफ़ादारी निभाई?

हिंदुस्तान शब्द का प्रयोग करके, जो सुदूर दक्षिण के लिए हमेशा नहीं किया जाता था, ग़ालिब स्पष्ट रूप से एक व्यापक वास्तविकता की बात कर रहे थे। अवध की घटनाओं से दिल्ली के लोगों को लगे सदमे का कुछ अंदाजा मिर्ज़ा ग़ालिब द्वारा अवध राज्य के अंत के कुछ सप्ताह बाद लिखे गए एक पत्र से लगाया जा सकता है। उन्होंने 23 फरवरी 1856 को अपने मित्र क़द्र बिलग्रामी को लिखा:
अवध राज्य के विनाश ने मेरे हृदय को भी दुखी किया, यद्यपि अवध से मेरा कोई संबंध नहीं है। वास्तव में, मैं उन हिंदवासियों को सबसे क्रूर और अन्यायपूर्ण मानता हूँ जो दुखी नहीं हुए। अल्लाह, अब हर जगह अल्लाह ही है।
1856 की गर्मियों में दिल्ली में असामान्य रूप से भीषण गर्मी पड़ी। दिल्ली आमतौर पर गर्म, शुष्क पश्चिमी हवाओं (लू) के प्रकोप से बची रहती थी, जो उत्तर भारत के अधिकांश हिस्सों में दिन में बारह घंटे तक चलती हैं। लेकिन 1856 में ऐसा नहीं था: मई और जून के पहले पखवाड़े के दौरान, राजपुताना और पूर्वी हरियाणा से तेज पश्चिमी हवाएँ, मानो विनाश के देवता शिव के भयानक तांडव नृत्य कर रहे हों, प्रतिदिन दिल्ली पर आक्रमण करती रहीं। अलीपुर से दिल्ली गेट तक, सैकड़ों महिलाएं, बच्चे, मजदूर और घरेलू नौकरानियां लू लगने से पीड़ित होकर दर्दनाक मौत मर गईं। उनके हाथों की हथेलियां और पैरों के तलवे ऐसे जल रहे थे मानो उन्हें जलते अंगारों पर रगड़ा गया हो, प्यास असहनीय थी और पानी पीने पर और भी बढ़ जाती थी: कुओं या यमुना नदी में जो थोड़ा-बहुत पानी था, वह मीलों तक सूखा और रेतीला था। पानी की कमी से शरीर में जल्द ही तेज बुखार हो गया, कभी-कभी इसके बाद प्रलाप भी हो जाता था। कुछ लोग प्यास से लगभग पागल होकर, शरीर के ठंडा होने का इंतजार किए बिना ही अत्यधिक मात्रा में पानी पी जाने के कारण मर गए। चूंकि शरीर के आंतरिक अंग इतनी अधिक और अचानक पानी की मांग को संभालने और अवशोषित करने में असमर्थ हो गए थे, इसलिए पानी के अत्यधिक सेवन से रोगी को अत्यधिक उल्टी हुई और वह कोमा में चला गया, जिससे उबरना एक दुर्लभ घटना थी। फिर जून के दूसरे पखवाड़े में सूखे शहर पर मूसलाधार बारिश हुई। नदी का जलस्तर बढ़ता ही गया, यहाँ तक कि वह सम्राट हुमायूँ के मकबरे और हजरत निज़ामुद्दीन के दरगाह की दीवारों को चीरता हुआ बहने लगा। दिल्ली गेट और हजरत निज़ामुद्दीन के बीच बसे निचले गाँव नक्शे से मिट गए। लेकिन फिर, तेज धूप निकली, हालांकि गर्म पश्चिमी हवा नहीं थी। बारिश और बाढ़ से कमजोर हो चुके सैकड़ों घर अब बहुत तेजी से सूख गए और दरारें पड़कर ढह गए। उस गर्म

सप्ताह या दस दिनों के बाद एक और बरसाती हमला हुआ। लकड़ी, मिट्टी, कीचड़, उखड़े हुए पेड़, मवेशियों के मृत शरीर, सब कुछ सड़ने और गलने लगा, जिससे न केवल एक भयानक, असहनीय दुर्गंध फैली, बल्कि सतह पर प्रदूषण और उसके नीचे के पानी के दूषित होने का खतरा भी पैदा हो गया। गर्म, नम और उमस भरे मौसम की महामारी, हैजा ने मंगोलों के एक और झुंड की तरह शहर को अपनी चपेट में ले लिया।

कंपनी बहादुर के अधिकारियों ने शहर को जल्दी से खाली करना शुरू कर दिया और अपनी सामर्थ्य और साहस के अनुसार सुरक्षित स्थानों पर चले गए। अमीरों ने लगभग खुद को घरों में बंद कर लिया। गरीब, जिन्हें अपने हाल पर छोड़ दिया गया था और पारंपरिक तरीकों से राहत न मिलने के कारण, मरने लगे। सफाईकर्मी कम होते गए, फिर लगभग न के बराबर हो गए। बंद नालियों को साफ करने, सड़ते शवों और लाशों को हटाने और खुले या बंद शौचालयों को साफ करने वाला कोई नहीं था। ऊँची ज़मीन पर बसा शाहजहानाबाद बाढ़ से तो सुरक्षित था, लेकिन बारिश से नहीं। अंग्रेजों या उनके अधीनस्थों और अनुयायियों द्वारा बसाया गया लगभग पूरा शहर उत्तर की ओर नीची ज़मीन पर था। जल्द ही, हैजा ने शहर की लगभग आधी आबादी को संक्रमित कर दिया, और यह सिर्फ शाहजहानाबाद तक ही सीमित नहीं था।

9 जुलाई 1856 की सुबह, विश्व के मार्गदर्शक, मिर्ज़ा फ़थुल मुल्क बहादुर के पुत्र साहिब-ए आलम व आलमियान को जी मिचलाने की शिकायत हुई, जो जल्द ही मतली, उल्टी और हल्के बुखार में बदल गई। उन्हें पेट में हल्का खालीपन भी महसूस हो रहा था, मानो उन्होंने कुछ समय से कुछ खाया न हो। उनके निजी चिकित्सक, हकीम मुहम्मद नक़ी खान को तुरंत बुलाया गया। उन्होंने रोगी के पित्त संबंधी स्वभाव, उनकी सामान्य कमजोरी और पेट में खालीपन को देखते हुए निदान किया कि यह पित्त का अचानक बढ़ना मात्र है। उन्होंने हल्का भोजन और सादा सूप दिया और यह आश्वासन देकर विदा ली कि राजकुमार जल्द ही ठीक हो जाएंगे। निर्धारित भोजन दिए जाने के कुछ ही समय बाद, राजकुमार को उल्टी आने लगी और उन्होंने सब कुछ उगल दिया। उल्टी एक घंटे तक जारी रही; इसके बाद रोगी कोमा में चले गए या कमजोरी के कारण बेहोश हो गए। शाम को हकीम अहसानुल्लाह खान से परामर्श लिया गया। उन्होंने मरीज की सावधानीपूर्वक जांच की और बड़ी आंत में रुकावट का पता लगाया, जिसके लिए उन्होंने गर्म एनीमा देने की सलाह दी। इसका कोई असर नहीं हुआ; राजकुमार दूसरी तरफ मुड़ गए और उनकी बेहोशी गहरी अचेतना में बदल गई। उन्हें होश में लाने के सभी प्रयास विफल रहे। सुबह लगभग छह बजे, बिना होश में आए ही उनकी मृत्यु हो गई।

पूरी हवेली सदमे, विलाप और विस्मय एवं घबराहट की तेज़ चीखों से कांप उठी। हर कोई स्तब्ध था; लोग रोते हुए ज़ोर-ज़ोर से चिल्ला रहे थे, 'क्या हुआ? यह कैसे हुआ?' राजकुमार के बेहोश होते ही अफवाहें तेज़ी से फैलने लगीं। मुख्य अफवाह यह थी कि ज़ीनत महल ने हकीम मुहम्मद नाकी खान को राजकुमार को ज़हर देने के लिए रिश्वत दी थी। दूसरी अफवाह यह थी कि महाराज मौजूदा इलाज से संतुष्ट नहीं थे और उन्होंने अंग्रेज़ डॉक्टर को बुलाकर निदान और उपचार की सलाह मांगी थी। लेकिन ये अफवाहें झूठी निकलीं, जैसा कि अफवाहें लगभग हमेशा होती हैं। 81 वर्षीय सम्राट में न तो इतनी इच्छाशक्ति थी और न ही इतना शारीरिक बल कि वे इस बीमारी

को किसी षड्यंत्र का परिणाम मान सकें।
इसमें कोई शक नहीं कि युवराज की बीमारी के लक्षण हैजा के लक्षणों से लगभग बिल्कुल अलग थे। फिर भी, किसी भी विश्वसनीय विवरण में इस बात का कोई सबूत नहीं है, यहाँ तक कि कोई अफवाह भी नहीं है, कि फथुल मुल्क बहादुर की मृत्यु अप्राकृतिक थी। यह सच है कि हैजा कई तरह से फैलता है, और उस समय शहर निस्संदेह इससे ग्रस्त था। वज़ीर ने सबकी ओर ऐसे घूरकर देखा जैसे वह होश में न हो, और फुसफुसाते हुए कहा, 'कृपया उनकी नब्ज़ फिर से जाँचें। मेरे साहब आलम बेहोश हैं। वे मरे नहीं हैं।' ज़ीनत महल अकेली हँस रही थी। वह खुशी से चिल्लाई, 'देखो! वे गिर पड़े! अब कोई मेरे बेटे को युवराज बनने से नहीं रोक सकता!'
जब महाराज ने सांसारिक मामलों को संभालने की थोड़ी सी भी क्षमता महसूस की, तो उन्होंने अपनी निजी दासी के माध्यम से वज़ीर को शोक संदेश भेजा। उन्होंने संबंधित अधिकारियों को अंतिम संस्कार की व्यवस्था करने का आदेश दिया। मौसम गर्म और उमस भरा था; अंतिम संस्कार में देरी न करना उचित था। सम्राट के निर्देशों के अनुसार शव को तैयार करने और कब्र खोदने के लिए तत्काल कदम उठाए गए। वज़ीर अपना सिर पीट रही थी, तड़प रही थी और रोते हुए ज़मीन पर गिर पड़ी थी। मिर्ज़ा अबू बक्र, नवाब मिर्ज़ा और खुर्शीद मिर्ज़ा, उसे सांत्वना देने और शांत करने की कोशिश में, बार-बार रोने लगे। यद्यपि वह बेदखल पत्नी थी और वज़ीर को घुसपैठिया मानती थी, फिर भी हातिम ज़मानी बेगम रोते हुए, खुले बालों के साथ वज़ीर के कमरे में आई। उसने वज़ीर को सांत्वना देने की कोशिश की और अपने मृत पति के शरीर के चारों ओर सात बार परिक्रमा की, जो इस बात का प्रतीक था कि वह उसके लिए अपना प्राण देने को तैयार है। वहाँ मौजूद कुछ लोगों का मानना था कि ऐसे भावों का कोई महत्व नहीं था, क्योंकि वे व्यर्थ थे।
अकबरी खानम, मौलवी मुहम्मद नज़ीर और शाह मुहम्मद आगा शहर से आए; मौलवी मुहम्मद नज़ीर, अपने गरिमामय व्यवहार और गहरी धार्मिक प्रकृति के बावजूद, वज़ीर की बिगड़ती हालत देखकर अपने आँसू नहीं रोक पाए। वे और शाह मुहम्मद आगा कई अन्य लोगों के साथ पुरुषों के कमरे में कुरान पढ़ने या सुनाने में जुट गए। अकबरी खानम ने वज़ीर को गले लगाया, उनके माथे पर कई बार चूमा और कहा, 'बीबी, धैर्य रखो। तुम्हें धैर्य रखना होगा। सर्वशक्तिमान की इच्छा का कोई विरोध नहीं कर सकता।'
बारी ने वज़ीर को गले लगाकर बिस्तर पर लिटाने की कोशिश की, तभी वज़ीर बेहोश हो गईं। उनके साहिब-ए आलम को पूरे रीति-रिवाज और सम्मान के साथ नहलाया और कफ़न पहनाया गया। हबीबा और अन्य लोगों ने उनके चेहरे पर गुलाब जल छिड़ककर और नाक के नीचे औषधीय जड़ी-बूटियाँ रखकर उन्हें होश में लाने की कोशिश की। चारों बेटों ने राजकुमार को ताबूत में रखा और फिर ताबूत को नलकी में रखने में मदद की।
मुंशी फैजुद्दीन ने अपनी पुस्तक 'बज़्म-ए-आखिर' में युवराज के अंतिम संस्कार का वर्णन किया है: नीले रेशमी ब्रोकेड कपड़े से नलकी को ढका गया था। पुत्र, भतीजे, प्रमुख सरदार, रुमाल से अपना मुंह और आधा चेहरा ढके, फूट-फूटकर आंसू बहाते हुए, शोक से व्याकुल नलकी के साथ चल रहे थे। आस-पास खड़े लोगों के हृदय गहरे तक थरथरा गए थे; उन्हें ऐसा लग रहा था मानो

उनका हृदय शरीर से बाहर निकल जाएगा। आगे सम्राट के अग्रिम दल के घुड़सवार अपनी तोपों को उल्टा करके, बड़े और छोटे ढोल उल्टे पकड़े हुए थे; उनके पीछे हाथी थे, जिन पर दूध और केसर की रोटी और विभिन्न मूल्यवर्ग के सिक्के लादे गए थे, जिन्हें दान में दिया जाना था; पूरा शहर अंतिम संस्कार जुलूस देखने के लिए उमड़ पड़ा था; पुरुष और महिलाएं जोर-जोर से रो रहे थे। शवयात्रा जामा मस्जिद पहुंची; नलकी को ताबूत के साथ प्रांगण के बीच में स्थित वज़ू तालाब के पास रखा गया। हजारों लोग वहां जमा थे। अंतिम संस्कार की नमाज अदा की गई; फिर नलकी को शहर के बाहर दफनाने के लिए ले जाया गया, केवल प्रमुख मातम मनाने वाले ही साथ थे। अंतिम संस्कार महरौली स्थित ख्वाजा कुतुब साहब के दरगाह में हुआ। गरीबों को छोटे-बड़े सिक्के बांटे गए। दरगाह के सेवकों को नकद भेंट दी गई। मृतक के लिए प्रार्थना की गई; कब्र पर शॉल ओढ़ाई गई। कुरान पढ़ने के लिए एक हाफ़िज़ नियुक्त किया गया; कब्र की रखवाली के लिए एक रक्षक नियुक्त किया गया। सभी लोग चले गए। सम्राट ने अंतिम संस्कार के बाद शोक सभा में भोजन भेजने का आदेश दिया।

साहिब-ए आलम व आलमियान, विश्व के मार्गदर्शक, मिर्ज़ा मुहम्मद सुल्तान गुलाम फखरुद्दीन फथुल मुल्क शाह बहादुर के पुत्र, को 10 जुलाई 1856 की शाम को ख्वाजा कुतुब साहब के मकबरे में, शाह आलम बहादुर शाह प्रथम की कब्र के पास दफनाया गया था। नवाब मिर्ज़ा खान दाग ने फ़ारसी में एक कालक्रम तैयार किया।

सुल्तान फथुल मुल्क के लिए शोक आत्मा का कष्ट था; इसलिए दयालु क्षमाकर्ता ने उन्हें स्वर्ग में स्थान दिया। जब दुखी हृदय ने उनकी मृत्यु के वर्ष के बारे में पूछा, तो दाग ने दो सौ बारह बार पीड़ा भरी आह भरी। 212 x 6 = 1272 = 1856

हालांकि यह बहुत शानदार नहीं था, लेकिन यह एक काफी सक्षम कालक्रम था: 'आह' के लिए शब्द 'आह' है और इसका संख्यात्मक मान 6 है; इसे 212 से गुणा करने पर 1272 प्राप्त होता है, वह तारीख जब मिर्ज़ा फ़खरू ने शाश्वत दुनिया के लिए प्रस्थान किया।

चालीस दिन के शोक समारोह और दरबार में आधिकारिक शोक समाप्त होते ही, ज़ीनत महल ने महाराज पर दबाव डालना शुरू कर दिया कि वे जवान बख्त को युवराज घोषित करने के मामले में माननीय कंपनी बहादुर से औपचारिक बातचीत शुरू करें। महाराज इस विचार के प्रति बहुत उत्सुक नहीं थे, आंशिक रूप से इसलिए कि वे नए मोर्चे खोलने के लिए बहुत बूढ़े हो चुके थे, आंशिक रूप से इसलिए कि उनका स्वास्थ्य और मनोबल ठीक नहीं था, और आंशिक रूप से इसलिए कि उन्हें पूरा विश्वास था कि उनके बाद हवेली में कोई राजा नहीं होगा। वास्तव में, कंपनी बहादुर और फथुल मुल्क बहादुर के बीच हुए समझौते ने इस मामले में कोई संदेह नहीं छोड़ा था। दूसरी ओर, ज़ीनत महल के प्रति उनके प्रेम ने उन्हें इस प्रश्न को अनदेखा नहीं करने दिया।
यह अवश्य कहा जा सकता है कि ज़ीनत महल सम्राट से अपने तरीके से प्रेम करती थीं, और उनका प्रेम केवल विवाह के औपचारिक बंधन या स्वार्थ से प्रेरित नहीं था। सोलह वर्ष पूर्व, जब उन्हें पता चला कि उनका विवाह सम्राट से होने वाला है, जिनकी शान-शौकत महान जमशेद के बराबर थी, तो उन्हें एक रोमांच का अनुभव हुआ, जो शारीरिक से अधिक मानसिक था: क्या यह सचमुच सनसनीखेज नहीं था, कि उनका विवाह पूरे देश के सबसे महान व्यक्ति से होने वाला था? लेकिन उन्हें निराशा तो नहीं हुई, पर थोड़ी झुंझलाहट भी हुई: उनके होने वाले पति नाममात्र के राजा थे, और वे अपने जीवन के सातवें दशक को पूरा करने वाले थे। ऐसे में वे उनसे सांसारिक या शारीरिक सुखों की क्या अपेक्षा कर सकती थीं? लेकिन जब उन्होंने किले की शान-शौकत और वैभव देखा, और राजा का उनके प्रति सौम्य, प्रेमपूर्ण और परिष्कृत व्यवहार देखा, और सबसे बढ़कर, जब उन्होंने अपने पति को अपने वैवाहिक कर्तव्यों को पूरी सफलता और कुशलता से निभाते हुए पाया, तो उनका हृदय धीरे-धीरे उनके प्रति नरम हो गया। समय बीतने के साथ, ज़ीनत महल के प्रति उनका कोमल भाव उनके सुंदर और गरिमामय पति के प्रेम में बदल गया। इस प्रकार सम्राट और ज़ीनत महल का रिश्ता केवल एक वृद्ध पति के जीवन में एक लापरवाह युवती और उसकी सुंदरता के कारण होने वाली अनबन तक सीमित नहीं था। उनके बीच सच्चा प्रेम था; इसीलिए सम्राट के लिए अपनी प्रिय पत्नी की इच्छा को अनदेखा करना असंभव था।
पूर्ण विचार-विमर्श के बाद, परम पूज्य सम्राट ने रेजिडेंट को एक शाही संदेश भेजा। साइमन फ्रेजर ने अस्थायी रूप से यह पद संभाला। साइमन फ्रेजर सम्राट के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध रखते थे, मुख्यतः इसलिए क्योंकि युवराज होने के नाते उन्होंने दिलावर-उल मुल्क नवाब शम्सुद्दीन अहमद खान की कुख्यात गिरफ्तारी, मुकदमे और अंततः फांसी के दौरान तटस्थ रुख अपनाया था। इतना ही नहीं, उन्होंने अपने पिता, स्वर्ग में निवास करने वाले सम्राट अकबर शाह द्वितीय को इस मामले पर कोई पक्ष न लेने की सलाह दी थी। इसलिए, सम्राट को जवान बख्त के बारे में प्रस्ताव लेकर साइमन फ्रेजर के पास अपना प्रतिनिधि भेजने में कोई संकोच नहीं हुआ।
सम्राट ने गवर्नर जनरल को मिर्ज़ा जवान बख्त के बारे में जो संदेश भेजे, उनमें उनके प्रतिष्ठित वंश

और उच्च शिक्षित होने तथा अनेक भाषाओं के ज्ञान पर विशेष बल दिया गया था। ज़ीनत महल, या शायद जवान बख्त ने, कई राजकुमारों से एक दस्तावेज़ पर हस्ताक्षर करवाए, जिसमें यह लिखा था कि वे जवान बख्त को उत्तराधिकारी घोषित करने पर सहमत हैं। सम्राट के दो पुत्रों, मिर्ज़ा कुवैश बहादुर और मिर्ज़ा ज़ाहिरुद्दीन बहादुर, जो मिर्ज़ा मुग़ल के नाम से प्रसिद्ध थे, ने इस दस्तावेज़ पर हस्ताक्षर नहीं किए, यह कहते हुए कि उत्तराधिकार का उनका अधिकार जवान बख्त से बेहतर है। लेकिन जहाँ निर्णय लेना आवश्यक था, वहाँ निर्णय लिया जा चुका था: बहादुर शाह ज़फ़र के बाद कंपनी बहादुर साम्राज्य और सम्राट दोनों को समाप्त करने के लिए दृढ़ संकल्पित थी। मिर्ज़ा फ़तहुल मुल्क बहादुर के साथ हस्ताक्षरित समझौता इसी दिशा में पहला कदम था। कंपनी बहादुर ने सम्राट या राजकुमारों द्वारा मिर्ज़ा जवान बख्त के समर्थन में भेजे गए दस्तावेजों पर कोई ध्यान नहीं दिया। शाही संदेश और राजकुमारों द्वारा प्रस्तुत याचिकाएँ रेजिडेंसी में प्राप्त हुईं, लेकिन उन्हें गवर्नर जनरल को नहीं, बल्कि आगरा में लेफ्टिनेंट गवर्नर बहादुर को भेज दिया गया, जहाँ उन्हें अभिलेख कक्ष में जमा कर दिया गया।

सम्राट ने मिर्ज़ा फ़तहुल मुल्क बहादुर के लिए चालीसवें दिन के शोक समारोह की तिथि तय की। किले में सभी को सफेद कागज़ पर सूचनाएँ वितरित की गईं। मुख्य वास्तुकार ने कब्र के एक कोने को तोड़ा—जो तब तक मिट्टी का टीला था—और उसमें थोड़ी मात्रा में गुलाब जल, केओरा जल और इत्र डाला। फिर उन्होंने उस पर पत्थर का काम करवाया और सफेद संगमरमर का एक समाधि-पत्थर बनवाया; उसके ऊपर संगमरमर की एक छोटी सी समाधि, जिसे 'तवीज़' कहते हैं, बनवाई गई; उन्होंने समाधि के चारों ओर संगमरमर की एक नीची जाली बनवाई। अंत में, उन्होंने समाधि के ठीक आसपास के क्षेत्र को सफेद संगमरमर से पक्का करवाया, इस प्रकार मकबरे का काम पूरा हुआ।

राजकुमार के देहांत के बाद उनतीसवीं रात को, सभी करीबी रिश्तेदार दिवंगत राजकुमार की हवेली में एकत्रित हुए। ठीक उसी स्थान पर जहाँ समस्त विश्वमार्गदर्शक के पुत्र ने अंतिम सांस ली थी, निम्नलिखित वस्तुएँ रखी गईं: भोजन से भरी बड़ी थालियाँ; नए कपड़ों का एक पूरा सेट; एक शॉल; एक प्रार्थना चटाई; मालाओं का एक सेट; जूतों की एक नई जोड़ी; एक कंघी; और टूथब्रश के रूप में उपयोग करने के लिए नीम की एक टहनी। ये सात बड़ी थालियों में रखी थीं। इसके अलावा, चीनी मिट्टी और तांबे के बर्तनों का पूरा भोजन सेट; चम्मच और अन्य चांदी के बर्तन; एक चांदी की थाली; भोजन की थालियों को ढकने के लिए एक बड़ा मेज़पोश; स्नान के लिए एक पानी का पात्र; और एक वॉशबेसिन भी था। दो बड़ी, लाल और हरी मोमबत्तियाँ, जिनमें से प्रत्येक में 1¼ मन (लगभग 105 पाउंड) शुद्ध चर्बी और मोम जल रहा था, मृत राजकुमार के पलंग के सिरहाने पर रखी थीं। ये मोमबत्तियाँ रात भर जलती रहीं, जबकि कमरे का वातावरण बडेलियम और लोबान के धुएँ से भरा हुआ था और विलाप और सिसकियों की गूँज से गूंज रहा था। सुबह, सभी पुरुष रिश्तेदार समाधि पर पहुँचे, जिस पर चार चाँदी के खंभों पर जटाओं का एक चंदवा लटका हुआ था। अब समाधि के चारों ओर फूलों का एक भारी पर्दा लगाया गया। फिर समाधि को जटाओं के एक आवरण से ढक दिया गया; आवरण पर फूलों की मालाएँ इस प्रकार रखी गईं कि वे जटाओं के ऊपर एक और छोटी चादर की तरह लगें। भोजन, भोजन की थालियाँ

और अन्य वस्तुएँ समाधि के सिरहाने पर रखी गईं; जूते पैरों के पास रखे गए। फिर पुरुष वहाँ से चले गए; ज़नाना की महिलाओं के लिए पर्दे लगाए गए, जो रोती हुई, बिखरे बालों के साथ आईं। वे रोती-बिलखती रहीं। पुरुषों के क्षेत्र में शोक की अंतिम प्रार्थना की गई; उपस्थित सभी लोगों को मुट्ठी भर इलायची दाना वितरित किए गए। कव्वाली गाई गई, जिसके बाद सभी को, विशेषकर गरीबों को, भोजन परोसा गया। दिन के तीसरे चरण में, शोक की अंतिम प्रार्थना दूसरी बार की गई। भोजन की थालियाँ, उनमें रखा भोजन, वस्त्र और अन्य सभी वस्तुएँ ख्वाजा साहब के पवित्र मंदिर के परिचारकों में वितरित कर दी गईं। इसके बाद सभी राजकुमार और बेगम उच्च किले में लौट गए।

लगातार रोने से वज़ीर की आँखें सूजी हुई थीं। जब से उनके साहब आलम का निधन हुआ था, तब से उन्होंने पलंग पर नहीं सोया था; न ही दिन में दो वक्त का भोजन किया था। अब उनकी आदत हो गई थी कि वे ज़मीन पर सोती थीं और दिन में केवल एक बार थोड़ा-बहुत मोटा-मोटा खाना खाती थीं। जब तक समस्त जगत के गुरु के पुत्र जीवित थे, वे इतनी प्रसन्न और उनके प्रेम में इतनी लीन थीं कि शौकत महल की उपाधि होने के बावजूद उन्होंने किले में होने वाली गतिविधियों और समारोहों में शायद ही कभी भाग लिया था। एकमात्र अपवाद तब था जब प्रथम उत्तराधिकारी मिर्ज़ा मुहम्मद दारा बख्त बहादुर का निधन हुआ था। वे उनके अंतिम संस्कार की तैयारी के समय, फिर दूसरे दिन के मातम में, तीसरे दिन के मातम में और छठे महीने के मातम में उपस्थित थीं।

यह नियति का ही विडंबनापूर्ण उदाहरण था कि उन समारोहों की भव्यता और किले के भीतर एवं बाहर दिवंगत राजकुमार के प्रति प्रेम एवं शोक की सच्ची भावनाओं को देखकर वह विचित्र रूप से प्रसन्न और संतुष्ट हुई। इन औपचारिक एवं भावपूर्ण प्रदर्शनों के अलावा, ये किले में रहने वाले अनेक व्यक्तित्ववान व्यक्तियों के समुदाय की एक-दूसरे के प्रति एकजुटता की अभिव्यक्ति भी थे। उसने हमेशा स्थायित्व और निरंतरता की खोज की थी; और वह हमेशा एक ऐसी महिला के रूप में जीना चाहती थी जिसे चाहा जाता हो, न कि एक ऐसी महिला के रूप में जिसे, कम से कम भारत-इस्लामी साहित्य में, अपनी इच्छा पूरी किए बिना गुमनाम मृत्यु प्राप्त होती थी। ऐसा प्रतीत होता है कि उसे इस शुभ हवेली में ये दोनों चीजें मिल गईं: स्थायित्व और एक सच्चे चाहे जाने वाले व्यक्ति का दर्जा।

इसलिए, राजकुमार के लिए आयोजित होने वाले लंबे, विस्तृत, औपचारिक और भावनात्मक एवं परंपरा से भरे अनुष्ठानों और रीति-रिवाजों को देखकर उसे एक प्रकार की खुशी मिली, यदि इसे खुशी कहा जा सकता है, क्योंकि राजकुमार का जीवन और मृत्यु वास्तव में उसके निकट और प्रियजनों के अलावा किसी के लिए भी मायने नहीं रखता था।

चालीस दिन के मातम के बाद तीसरे दिन वज़ीर को सूचना मिली कि ज़माने की रानी उसे याद कर रही हैं और उसे तुरंत उनके दरबार में हाज़िर होना है। वज़ीर को शक हुआ कि कुछ गड़बड़ है, क्योंकि ज़माने की रानी ने उसे पहले कभी इस तरह नहीं बुलाया था। शायद वह उससे सांत्वना देना चाहती हों, वज़ीर ने खुद को समझाने की कोशिश की। दरअसल, जब से उनके साहिब-ए आलम को युवराज नियुक्त किया गया था, नवाब ज़ीनत महल ने वज़ीर या अपने बच्चों, जिनमें

मिर्ज़ा अबू बक्र भी शामिल थे, से शायद ही कभी बात की थी। शायद अब उन्हें मेरे लिए थोड़ा दुख हो रहा हो, वज़ीर ने खुद को तसल्ली देने की कोशिश की। उसने अपने चेहरे पर थोड़ा पानी छिड़का, उंगलियों से अपने बाल संवारे, सूती कपड़े का सादा, सफेद वस्त्र पहना और अकेले नवाब ज़ीनत महल की हवेली की ओर चल पड़ी। उसका स्वागत सादे, ठंडे शिष्टाचार से किया गया और उसे रानी के सामने बैठाया गया। कुछ क्षणों की चुप्पी के बाद, महारानी ने कहा, “छोटी बेगम, हमें आपके विधवा होने का बहुत दुख है।” वह थोड़ी देर रुकीं। वज़ीर कृतज्ञता के कुछ शब्द कहने ही वाले थे कि नवाब ज़ीनत महल ने तुरंत अपनी बात दोहराई: “पर आप ऐसी विकट परिस्थितियों की आदी हैं, है ना? आप इसे भी सह लेंगी। कहते हैं ना, जिसने अनेक पुरुषों के साथ संबंध बनाए हों, उसका हृदय मजबूत होता है।”

रानी की सहेलियों में से कुछ पसंदीदा सहेलियों ने अपने ऊपरी दुपट्टे का एक कोना अपने मुँह पर खींचकर अपनी मुस्कान छिपाने का नाटक किया। लेकिन कुछ अन्य के चेहरे पर बेचैनी साफ झलक रही थी। वज़ीर को स्पष्ट समझ आ गया था कि इन अपमानजनक शब्दों के पीछे रानी को उकसाना था ताकि वह कुछ अभद्र या अपमानजनक बात कह दें, जिसका इस्तेमाल उनके खिलाफ किया जा सके। रानी ने अपना सिर नीचे झुकाए रखा और विनम्रता से कहा, 'युग की रानी, कहते हैं कि मृत्यु के समय भी मनुष्य को नींद आ जाती है। चाहे मृत्यु कितनी भी कठिन और भयावह क्यों न हो, उसे किसी न किसी तरह सहना ही पड़ता है। मैं हमेशा ईश्वर से आपके और ईश्वर की परछाई के निरंतर कल्याण, स्वास्थ्य, दीर्घायु और सौभाग्य की प्राप्ति के लिए प्रार्थना करती हूँ। आप दोनों संरक्षकों की परछाई मेरे लिए पर्याप्त है।'

ज़ीनत महल को इतने सीधे और स्पष्ट जवाब की उम्मीद नहीं थी, इसलिए वह कुछ पल चुप रहीं। फिर उन्होंने बात बदल दी। 'राजकुमार ने तुम्हारे लिए कितनी संपत्ति छोड़ी, छोटी बेगम?'

अब वज़ीर ने अपना सिर उठाया और पीठ व गर्दन सीधी करके रानी के चेहरे की ओर देखते हुए बोली, ‘राजकुमार बहादुर का रुतबा और स्थिति आपके और ईश्वर की छाया के सामने मुझसे कहीं अधिक स्पष्ट है।’

आपको उनके अपार्टमेंट खाली करने होंगे।

'शायद युग की रानी भूल गई हैं। मैं सिर्फ छोटी बेगम ही नहीं, शौकत महल भी हूं।'

'तुम शौकत महल थे,' जीनीत महल ने हर शब्द को कठोर स्वर में कहा। 'अब तुम नहीं हो।'

‘यह निर्णय लेने का अधिकार उसी को है जिसने यह उपाधि प्रदान की।’

‘छोटी बेगम, किसी भ्रम में मत रहो। तुमने हमारे भोले-भाले और विनम्र मिर्ज़ा फ़खरू बहादुर को बहकाकर राजमहल में अपना पैर जमाया। तुम्हें उम्मीद थी कि इस तरह तुम तैमूर वंश की राजकुमारी कहलाओगी। फिर, बड़े ही सौभाग्य से, बिल्ली को चिड़िया निगलने का मौका मिल गया। और तुम तीसरे युवराज की पत्नी बनकर संतुष्ट होने के बजाय, हिंदुस्तान की रानी बनने की संभावना के नशे में चूर हो गईं। तुम जैसी स्त्रियों ने संगमरमर के महलों को चूर-चूर कर दिया है। लेकिन याद रखना, सर्वशक्तिमान की शक्ति जैसी कोई चीज होती है...’

वज़ीर, अपने आप को संयमित रखने में असमर्थ होकर, अब नियमों का उल्लंघन करते हुए रानी को धीमी लेकिन दृढ़ आवाज़ में टोकते हुए बोली, “जिन परिस्थितियों में मैं किले में आई, वे विश्व

की रानी को भली-भांति ज्ञात हैं। मैं अपने साहिब-ए आलम व आलमीयन के चरणों की धूल के भी बराबर नहीं हूँ। मैं किसी तरह अपनी विधवा का जीवन अपने अंधकारमय कारागार में गुज़ार रही थी। उन्होंने ही मुझे धरती से आकाश तक पहुँचाया।"

'हाँ, लेकिन जिसने तुम्हें धरती से आकाश तक पहुँचाया, वह स्वयं मिट्टी में मिल गया है,' ज़ीनत महल ने तीखे स्वर में कहा। 'अब तुम फिर से वही तुच्छ धूल का कण हो, जो तुम यहाँ आने से पहले थे।'

'परन्तु, महाराज।' वज़ीर ने अपनी आवाज़ ऊँची नहीं की, परन्तु उसका व्यंग्य वहाँ मौजूद किसी से भी छिपा नहीं रहा होगा, 'मुझे हमेशा हिंदुस्तान के प्रथम युवराज की विधवा के रूप में ही जाना जाएगा। मेरे बाद जितने भी युवराज हों, जितने भी राजा हों, कोई भी मेरे तुच्छ सिर से उस छत्र को नहीं हटा सकता।'

'क्यों नहीं?' ज़ीनत महल ने तीखे स्वर में जवाब दिया। 'हम कर सकते हैं, और हम करेंगे!'

'हे युग की रानी, आप अपने ऊंचे किले में ढोल बजाकर उद्घोषणाएं करवा सकती हैं, लेकिन आप जनता की आवाज़ को दबा नहीं सकतीं, जो ईश्वर के उद्घोषक की आवाज़ है,' वज़ीर ने गंभीर और कठोर स्वर में कहा। 'परन्तु आदेश दीजिए, आप अपनी दासी से क्या सेवा चाहती हैं? वह पूरी तरह से तैयार है।'

'यह सिर्फ हमारे किले का मामला नहीं है। हम आज भी हिंदुस्तान की रानी हैं। हमारे सिर पर वह ताज जगमगा रहा है जिसने नूरजहाँ और अर्जुमंद बानो के सिर को सुशोभित किया था। हमारे प्रिय पुत्र मिर्ज़ा फ़खरू का इस दुनिया से विदा लेना एक ईश्वरीय संकेत है। अल्लाह नहीं चाहता कि उनके बाद कोई अजनबी सिंहासन और ताज का उत्तराधिकारी बने।'

'राजमुकुट और सिंहासन सदा के लिए आपके ही रहें। मुझे ऐसी बातों में कोई दिलचस्पी नहीं है।' लेकिन हमें यह सूचना मिली है कि आप और मिर्जा मुगल मिलकर मिर्जा मुगल को बादशाह बनाने और खुर्शीद मिर्जा को उत्तराधिकारी घोषित करने की साजिश रच रहे हैं।

वज़ीर सदमे में थी। उसने इसे ज़ाहिर न होने देने की कोशिश की, लेकिन उसे महसूस हुआ कि उसका चेहरा पीला पड़ गया है। साफ़ था कि उसके और फ़तहुल मुल्क बहादुर की संतान के खिलाफ़ कोई साज़िश रची जा रही थी। या शायद किसी ऐसे व्यक्ति ने, जो उससे नफ़रत करता था, ज़ीनत महल के कानों में झूठी कहानियाँ भर दी हों? कारण चाहे जो भी हो, नतीजा तो वही था। उसने एक गहरी साँस ली, अपनी साँसों को नियंत्रित करने और दिल की धड़कन को धीमा करने की कोशिश की। उसने विनम्रता से, लेकिन स्पष्ट और दृढ़ स्वर में कहा, 'महोदय महारानी, क्या आपको एक साधारण तथ्य पर विचार नहीं करना चाहिए था? मुझ जैसी कमज़ोर और निकम्मी विधवा से मिर्ज़ा मुग़ल बहादुर को इतने बड़े प्रोजेक्ट में क्या मदद मिल सकती थी? फिर, मेरे बेचारे बेटे खुर्शीद मिर्ज़ा का क्या भविष्य था जब मिर्ज़ा अबू बक्र बहादुर हमारे बीच थे? अल्लाह उन्हें सलामत रखे।'

हमें बताया गया है कि ये सब तुम्हारी ही चालें हैं। गरीब और माँ-बाप विहीन मिर्ज़ा अबू बक्र अब पिताविहीन भी हो गया है। तुम किसी न किसी तरह से इस भोले-भाले लड़के को बहला-

फुसलाकर अपनी योजना में शामिल करने की साजिश रच रहे हो।
अल्लाह उन्हें सलामत रखे; मिर्ज़ा अबू बक्र एक प्रतिभाशाली नौजवान हैं। वे दृढ़ निश्चयी और सुशिक्षित हैं।
'छोटी बेगम, हमें आपकी ज़रूरत नहीं है कि आप हमारे सामने हमारे बच्चों की प्रशंसा करें। मैं मिर्ज़ा अबू बक्र के गुणों से भली-भांति परिचित हूँ। लेकिन मिर्ज़ा मुगल के साथ उनकी घनिष्ठ मित्रता किसी से छिपी नहीं है।'
'माननीय न्यायाधीश महोदय, आपके पास शक्ति है और अंतिम निर्णय भी उन्हीं का होगा, लेकिन मुझे महाबली के समक्ष अपना पक्ष रखने और उन्हें अपनी निर्दोषता साबित करने की अनुमति दी जानी चाहिए।'
'सब कुछ ईश्वर के सामने स्पष्ट है। उनका निर्णय है कि आपको दो दिनों के भीतर हवेली खाली करनी होगी,' ज़ीनत महल ने ठंडे स्वर में कहा। 'आप खुर्शीद मिर्ज़ा को अपने साथ ले जा सकते हैं, और यदि मिर्ज़ा अबू बक्र चाहें तो उन्हें भी ले जा सकते हैं।'
वज़ीर एक बार फिर स्तब्ध रह गई। उसने ज़ीनत महल से इतनी आसानी से और अचानक बर्खास्तगी की उम्मीद नहीं की थी। ज़्यादा से ज़्यादा उसने यही सोचा था कि उसे तीसरे उत्तराधिकारी की हवेली खाली करने और एक विदेशी विधवा होने के नाते अपनी स्थिति के अनुसार किसी तंग, हवा रहित कमरे में रहने के लिए कहा जाएगा; नवाब मिर्ज़ा का भत्ता बंद हो जाएगा और उसका अपना भत्ता भी कम हो जाएगा; खुर्शीद मिर्ज़ा की शिक्षा, जो उन्हें राज्य के किसी भी राजकुमार की तरह दी जा रही थी, रुक जाएगी। लेकिन उसने अपने सबसे बुरे सपने में भी हवेली से निष्कासन की कल्पना नहीं की थी।
कई वर्षों में पहली बार, शायद अपने पूरे जीवन में, वज़ीर स्तब्ध रह गई, उस नई विपत्ति की खबर को समझ नहीं पा रही थी जो उस पर कयामत की तरह आ गिरी थी। यह स्पष्ट था कि जब तक रानी उस पर अपने या सम्राट के विरुद्ध षड्यंत्र रचने का आरोप लगाकर उसे दोषी ठहराने की धमकी देती रहेगी, तब तक उसे ज़ीनत महल का विरोध या संघर्ष नहीं करना चाहिए। वास्तव में, उसका विरोध उसके लिए स्थिति और भी बदतर बना सकता था। सम्राट के दरबार में प्रवेश पाना असंभव था; लेकिन अगर वह प्रवेश पा भी लेती, तो वह, एक अजनबी, विधवा, जिसका अतीत अंधकारमय था, महाबली की सबसे प्रिय ज़ीनत महल के विरुद्ध खड़ी थी, जिसमें हकीम अहसानुल्लाह खान और मुख्य हिजड़ा महबूब अली खान भी शामिल थे। इसलिए उसकी सफलता की संभावना बहुत कम थी और अपमान और पराजय की पूरी संभावना थी। महाराज रानी के हाथों में भले ही मिट्टी के ढेले न हों, लेकिन उनकी आयु अस्सी वर्ष से अधिक थी। वह बुढ़ापे की वजह से बिल्कुल भी कमजोर नहीं थे, लेकिन हवेली के अंदरूनी मामलों को ज़ीनत महल पर छोड़ना ही बेहतर समझते थे। उनमें ऐसे मामलों से निपटने के लिए शारीरिक और मानसिक ऊर्जा की कमी थी। ज़ीनत महल ने जो बिगाड़ा था, उसे ठीक करने की उनसे अपेक्षा करना व्यर्थ था।
कुछ क्षणों के शांत चिंतन ने उन्हें वह कहने के लिए पर्याप्त कर दिया जो उन्होंने अब कहा, "मैं परम पूज्य रानी के आदेश को अपनी आँखों और अपने सिर पर रखती हूँ। परन्तु मुझे उन्हें उस

दिन की याद दिलाना होगा जब किसी राजा या सत्ता को आदेश देने का अधिकार नहीं होगा। केवल ईश्वर और उनके न्याय का तराजू होगा। यदि आप कुरान जानते हैं, तो आपको सर्वशक्तिमान की यह घोषणा याद होगी: "उस दिन, आदेश केवल अल्लाह का विशेषाधिकार होगा।" अल्लाह दिलों की अंतर्मन की अवस्थाओं और रहस्यों को जानता है। इस दासी को नहीं पता कि परम पूज्य रानी के दिल में मेरे विरुद्ध जहर के बीज किसने बोए। परन्तु मैं अपने हृदय की अवस्था जानती हूँ और कहती हूँ कि मेरे धन्य दिवंगत साहिब-ए आलम, मेरे राजा, ईश्वर की छाया और युग की रानी के लिए मेरे हृदय में प्रेम और आदर के सिवा कुछ नहीं है।"

'जो भी हो,' ज़ीनत महल ने एक रूखी, कुछ हद तक विजयी मुस्कान के साथ कहा। 'लेकिन ईश्वर की छाया के आदेशों का बिना किसी देरी के पालन किया जाना चाहिए।'

'ठीक है, ऐसा ही होगा,' वज़ीर ने अपनी जगह से उठते हुए कहा। उसने उठने या सभा से विदा होने की अनुमति नहीं मांगी। 'मैंने अतीत में कभी रानी को निराश नहीं किया, और अब भी नहीं करूंगी। यदि आपकी समृद्ध छत्रछाया में हमारे लिए कोई जगह नहीं है, तो हम किसी और जगह चले जाएंगे और वहां ईश्वर से अपना हिस्सा मांगेंगे। प्रजा ईश्वर की है, और यह भूमि भी। मैं अपनी निवेदन स्वीकार करती हूं।'

ज़िनत महल के सामने से पीछे हटने के बजाय, वज़ीर ने उसकी ओर पीठ फेर ली और ज़िनत महल की हवेली से बाहर निकल गई। वह बाहर से तो मज़बूत दिख रही थी, लेकिन अंदर से पूरी तरह टूट चुकी थी। जब तक वह अपनी हवेली तक पहुँची, तब तक वह लड़खड़ा रही थी और उसकी आँखों के सामने काले-काले धब्बे नाच रहे थे। उसे चक्कर आ रहा था, दिल टूट चुका था और आत्मा कमजोर हो चुकी थी। जैसे ही वह अपने कमरे में पहुँची, वह खुद को सीधा नहीं रख पाई और बिस्तर पर ऐसे गिर पड़ी जैसे पेड़ से कोई डाल टूटकर गिर गई हो।

संयोगवश, तीनों बेटे हवेली में मौजूद थे, जिनमें से दो शतरंज खेल रहे थे और सबसे छोटा बेटा खुर्शीद मिर्ज़ा अपने दोनों बड़े भाइयों को सलाह दे रहा था। तीनों ने सब कुछ छोड़कर अपनी माँ के चारों ओर घेरा बना लिया और चिल्लाने लगे, 'अम्मा जान, सब ठीक है? आप कैसी हैं?'

लेकिन वज़ीर का जबड़ा भींचा हुआ था, चेहरा पीला पड़ गया था और आँखें बंद थीं। मिर्ज़ा अबू बक्र ने तुरंत एक लाठीवाहक को हकीम मुहम्मद नक़ी खान को बुलाने के लिए भेजा। हबीबा और अन्य लोगों ने उनके चेहरे पर गुलाब जल छिड़का, नाक के नीचे स्मेलिंग सॉल्ट रखा और धीरे-धीरे उनके पैरों के तलवों को रगड़ा और जड़ी-बूटी वाले पंखे से हवा की। हकीम के आने तक वज़ीर को होश आ गया था। उनका चेहरा अभी भी पीला और भावहीन था, मानो किसी मृत्यु के मुखौटे जैसा। हकीम ने पर्दे के पीछे से उनकी नाड़ी जाँची, उनके नाखूनों की जाँच की और निष्कर्ष निकाला कि कोई शारीरिक समस्या नहीं थी: यह केवल सदमा और शोक था। उन्होंने कुछ मनोदशा सुधारने वाली दवाएं दीं, अपनी खुद की बनाई हुई एक विशेष दवा की एक खुराक उन्हें अपनी उपस्थिति में दी, तीन दिनों तक पूरी तरह से बिस्तर पर आराम करने की सलाह दी और सभी को आश्वस्त करने के बाद चले गए कि चिंता की कोई बात नहीं है।

वज़ीर से पूरी कहानी सुनकर तीनों बेटे बेहद नाराज़ और परेशान हो गए। नवाब मिर्ज़ा और खुर्शीद मिर्ज़ा ने गुस्से में कहा कि वे हवेली की धूल अपने कपड़ों के किनारों और जूतों के तलवों से झाड़

देंगे और उसी क्षण अपनी माँ के साथ किला छोड़ देंगे। अम्मा जान जहाँ चाहें जाएँ, हम उनके साथ हैं। कम से कम चांदनी चौक में उनका घर तो है ही। हम उनके साथ किसी भी जंगल, किसी भी रेगिस्तान में जाने को तैयार हैं। हम लकड़ी काटेंगे, जंगली फल खाएँगे, लेकिन किले की ओर फिर कभी नज़र नहीं डालेंगे।

मिर्ज़ा अबू बक्र ने अधिक संयमित दृष्टिकोण अपनाया। उन्होंने कहा, 'अम्मा, जल्दबाजी में कोई काम मत कीजिए। मैं अभी निशास्त जाऊंगा और हकीम अहसानुल्लाह खान से मिलूंगा। मैं उनसे बात करूंगा और उनसे अल्लाह की छाया से सिफारिश करने का अनुरोध करूंगा। वह हकीम अहसानुल्लाह खान की सलाह को आसानी से अस्वीकार नहीं करेंगे।'

'साहिब आलम, कृपया इस मामले पर थोड़ा और विचार कीजिए।' वज़ीर ने मिर्ज़ा अबू बक्र की आस्तीन को गंभीरता से पकड़ लिया। 'भले ही मुख्य क्वार्टरमास्टर इस मामले को अपने हाथ में लेने के लिए राज़ी हो जाएँ—हालाँकि मुझे इस पर संदेह है—और नवाब ज़ीनत महल को अपनी बात वापस लेनी पड़े, यह कब तक चलेगा? आपको क्या लगता है कि वह कभी हार मान लेंगी? और वह साज़िश का शैतान, जिसे उन्होंने रचा है, या जिसके अस्तित्व के बारे में कुछ अन्य लोगों ने उन्हें समझाया है, अपना कुरूप रूप दिखाता रहेगा। हमारा जीवन अभी से भी ज़्यादा नरकमय हो जाएगा।'

'तो अम्मा जान, आपकी क्या इच्छा है?' मिर्ज़ा अबू बक्र थोड़े चिढ़कर बोले। 'क्या हमें उन्हें बिना किसी रोक-टोक के अपनी इच्छा के अनुसार काम करने देना चाहिए?'

'साहिब आलम, यह बिलकुल भी ऐसा नहीं है कि उसे उसकी इच्छा पूरी करने की खुली छूट दे दी जाए। वह जो चाहे कर सकती है, बिना किसी रोक-टोक के। क्या वह तआला की प्रिय बेगम नहीं है? आप जानते हैं कि नवाब ज़ीनत महल ने आपके दिवंगत पिता के प्रति उस दिन से द्वेष पाल रखा है, जिस दिन आपके पिता—अल्लाह उन्हें जन्नत नसीब करे—प्रथम उत्तराधिकारी बने और उसकी अपनी योजनाएँ विफल हो गईं। अब मेरी पहली प्राथमिकता अपने बच्चों को हानि और कठिनाई से बचाना है।'

मिर्ज़ा अबू बक्र सोचने लगे, फिर बोले, 'क्या मुझे इस मामले में कम से कम चाचा मिर्ज़ा मुगल से सलाह नहीं लेनी चाहिए?'

'आप ऐसा क्यों करें, साहब-ए आलम? क्या वह पहले से ही उनके और मिर्ज़ा कुवैश बहादुर के प्रति ईर्ष्या से लाल-लाल नहीं हो रही है? हमें अब मिर्ज़ा मुगल बहादुर को एक और मामले में क्यों घसीटना चाहिए?'

मिर्ज़ा अबू बक्र थोड़ा नाराज़ थे। 'क्या तुम्हें अपने अधिकार के लिए नहीं लड़ना चाहिए?'

'मेरा अधिकार क्या है, साहब आलम?' वज़ीर ने एक कड़वी, गंभीर मुस्कान के साथ कहा। 'क्या मैं जीवन भर अपने अधिकार के अलावा कुछ और खोजता रहा हूँ? शायद यह पहाड़ों की भूमिगत गुफाओं में छिपा हो। यह तो आसमान के नीचे कभी दिखाई ही नहीं दिया।'

मिर्ज़ा अबू बक्र चुप हो गए और कुछ हद तक भयभीत भी हो गए। वज़ीर के शब्दों में उन्होंने पहली बार इतना उग्रता और कड़वाहट देखी थी। वे सोच रहे थे कि अपनी बात को आगे कैसे

बढ़ाएँ, तभी नवाब मिर्ज़ा बोले, “साहिब आलम, कृपया मेरी सलाह पर विचार करें: आप हमारे साथ चलें। मुझे लगता है कि यह शुभ किला अब ज़्यादा समय तक शुभ और सुरक्षित नहीं रहेगा।” उनके शब्दों में उनके चेहरे पर चिंता और तनाव साफ झलक रहा था, और उन्हें केवल अपनी माँ की ही चिंता नहीं थी।

‘नवाब मिर्ज़ा, आपका क्या मतलब है? मैं किला क्यों छोड़ूँ?’ मिर्ज़ा अबू बक्र और नवाब मिर्ज़ा लगभग एक ही उम्र के थे—पच्चीस—और एक-दूसरे के साथ काफी सहज और दोस्ताना थे। मिर्ज़ा अबू बक्र थोड़े शांत हुए, लेकिन फिर वे नवाब मिर्ज़ा के करीब झुके और धीमी लेकिन संयमित आवाज़ में बोले: ‘हम, यानी मैं, मिर्ज़ा मुग़ल बहादुर और कुछ अन्य लोग, सोच रहे हैं... खैर, हमें लगता है कि अगर कोई उपयुक्त अवसर आए, तो इन फिरंगी क्रिस्तनों को हमारी ज़मीन से निकाल देना चाहिए!’

नवाब मिर्ज़ा दुविधा में पड़ गए और चिंतित हो गए। वे काफी देर तक सोचते रहे, जबकि बाकी सब लोग उन्हें और मिर्ज़ा अबू बक्र को संदेह भरी निगाहों से देख रहे थे। फिर उन्होंने कहा, ‘भाई, यह सच है कि प्रजा में, और विशेषकर कंपनी के देशी सैनिकों में, नाज़रीन शासकों के विरुद्ध कुछ अशांति है। पूरब में, लखनऊ में, मौलवी अहमद उल्लाह शाह नाम का एक व्यक्ति है, जो ईश्वर का सच्चा सेवक, वास्तव में एक सूफी माना जाता है। उन्हें आम तौर पर दंका पीर (ढोल बजाने वाला गुरु) के नाम से जाना जाता है क्योंकि वे जहाँ भी जाते हैं, ढोल बजाने वाले उनके आगे चलते हैं। वे खुलेआम लोगों से कहते हैं कि फिरंगी हिंदू धर्म और मुसलमान के सच्चे मार्ग के कट्टर शत्रु हैं। वे कहते हैं कि अगर फिरंगी यहाँ बने रहे तो हिंदू और मुसलमान दोनों नष्ट हो जाएँगे और धरती से मिट जाएँगे। लेकिन मुझे लगता है... मैं सोचता हूँ... क्या एक अकेला योद्धा पूरी जंग जीत सकता है?’

‘भाई, इसी तरह की सोच ने हमें कार्य करने की इच्छाशक्ति से वंचित कर दिया है!’ मिर्ज़ा अबू बक्र ने तीखे लहजे में जवाब दिया।

नवाब मिर्ज़ा ने कुछ बचाव भाव से मुस्कुराते हुए कहा, ‘साहिब-ए आलम, आप ज़ाहिरुद्दीन मुहम्मद बाबर की संतान हैं। उन्होंने दुनिया के विरोध के बावजूद आगे बढ़कर बुखारा पर विजय प्राप्त की। तब उनकी उम्र मुश्किल से सोलह वर्ष थी। जल्द ही, उन्होंने और कुछ निस्वार्थ योद्धाओं ने काबुल पर कब्ज़ा कर लिया, फिर काबुल से लेकर खारे पानी तक फैले हिंद के भूभाग पर। लेकिन आपके इस प्रखर स्वभाव को यह बात स्पष्ट रूप से समझ आनी चाहिए कि इमाम अबू हनीफ़ा के अनुसार, किसी अत्याचारी के विरुद्ध विद्रोह तभी जायज़ है जब उसमें सफलता की संभावना हो।’

मिर्ज़ा अबू बक्र ने चिढ़कर कहा, 'विद्रोह अभी मीलों दूर है, प्रिय भाई नवाब मिर्ज़ा। लेकिन क्या आपने स्वयं नहीं कहा था कि प्रजा में भारी असंतोष है?'

“सच है। लेकिन भाई ज़ाहिरुद्दीन हुसैन ने मुझे बताया कि उनके ससुर के अनुसार, शहर में तलवारों की लड़ाई होगी और अकल्पनीय नरसंहार होगा। भाई ज़ाहिरुद्दीन हुसैन ने उनसे पूछा, “क्या रूस की सेना आने वाली है?” उन्होंने उत्तर दिया, “यह तो अल्लाह को ही पता है।”

‘कृपया तलवारों और बंदूकों की बात न करें,’ वज़ीर ने विनती की। ‘पता नहीं कौन सुन रहा है और इसका क्या मतलब निकालेगा। मैं बस इतना जानना चाहता हूँ: मुझे बहुत खुशी होगी अगर मिर्ज़ा अबू बक्र बहादुर हमारे साथ आएँ। लेकिन उन्हें राजसी जीवन शैली की आदत है, और हम...’

'माफ़ कीजिए, अम्मा जान, मैं बीच में टोकना ठीक नहीं कर रही, लेकिन यह राजसी जीवन शैली का मामला नहीं है। यह सिद्धांत और विरासत का सवाल है। मेरा घर यहीं हवेली में है। और हवेली नवाब ज़ीनत महल की संपत्ति नहीं है। तो मैं यहाँ से बाहर क्यों जाऊँ?'

‘साहिब आलम, मुझे डर है कि यहाँ आपके लिए खतरा है।’ वज़ीर ने गिड़गिड़ाती निगाहों से उनकी ओर देखा। ‘और अब रकीम-उद दौला साहब ने नवाब मिर्ज़ा को जो बताया है, उससे मामला और भी चिंताजनक हो गया है।’

नवाब मिर्ज़ा ने कहा, ‘दरअसल, रक़ीम-उद-दौला साहब मुझे बता रहे थे कि एक मजज़ूब, जो सदा अल्लाह में लीन रहता है, ने उनसे कहा था, “अरे, तुम यहाँ दिल्ली में क्या कर रहे हो, अपना समय बर्बाद कर रहे हो? तुम सांसारिक व्यक्ति हो, जाओ और अमेरिका की यात्रा करो!”’

‘अमा नवाब मिर्ज़ा!’ मिर्ज़ा अबू बक्र चिल्लाए, स्पष्ट रूप से उनका धैर्य टूट चुका था। ‘मुझे नहीं पता था कि आप और रकीम-उद दौला अंधविश्वासी बुढ़िया हैं! खैर, इस मामले को यहीं खत्म करें, मैं भी ऐसा ही करता हूँ।’

वज़ीर उस अभिमानी नौजवान राजकुमार को किला छोड़ने के लिए मनाने की कोई कोशिश नहीं कर सकी। उसे यह नहीं पता था कि उसके लिए खतरा किले के अंदर नहीं, बल्कि बाहर था। मौत ने उसे चुन लिया था। कुछ ही महीनों में अंग्रेजों के खिलाफ जो भीषण सशस्त्र विद्रोह होने वाला था, और दिल्ली की घेराबंदी के दौरान और उसके बाद होने वाले खूनी संघर्षों की श्रृंखला में मिर्ज़ा मुगल और मिर्ज़ा अबू बक्र दोनों को अंग्रेजों के खिलाफ लड़ना था। अंग्रेजों द्वारा दिल्ली पर कब्जा करने के बाद, चाचा और भतीजे दोनों को कंपनी बहादुर के एक कनिष्ठ अधिकारी द्वारा निहत्था करके गोली मार दी गई। मौत ने राजकुमार के पैर जकड़ लिए थे। चाहकर भी वह हवेली नहीं छोड़ सकता था।

‘इस युग की रानी ने संकेत दिया है कि मैं हवेली से वह कुछ भी नहीं ले जा सकती जो आपके दिवंगत पिता साहिब-ए आलम व आलमीयन ने मुझे या मेरे बच्चों को दिया हो,’ वज़ीर ने दृढ़ स्वर में कहा; अब वह मानसिक रूप से मजबूत हो रही थी। ‘आप, नवाब मिर्ज़ा और खुर्शीद मिर्ज़ा, कृपया आज बैलगाड़ियाँ, मजदूर और पैदल कामगारों का इंतजाम करें। नवाब नज़ीर महबूब अली खान की उपस्थिति में अपनी सारी संपत्ति की सूची बनवाने के बाद हम कल यहाँ से निकलेंगे। नवाब नज़ीर की देखरेख में हम बैलगाड़ियों पर अपना सामान लादेंगे और कल सूर्यास्त से पहले किले से निकल जाएंगे।’

‘लेकिन हमें कहाँ जाना चाहिए?’ खुर्शीद मिर्जा ने पूछा।

वज़ीर ने कुछ देर सोचा। ‘चांदनी चौक में मेरा घर है, इसलिए हम फिलहाल वहीं चले जाएंगे। लेकिन अब मेरा दिल्ली में रहने का मन नहीं है। मैं बारी बाजी से सलाह लेने के बाद फैसला करूंगा।’

‘क्या मैं कुछ जमा कर सकता हूँ?’ नवाब मिर्ज़ा ने झिझकते हुए स्वर में कहा।
‘जी हां, जरूर। अगर आपके मन में कोई और सुझाव हो तो हमें बता दीजिए,’ मिर्ज़ा अबू बक्र ने कहा।
‘महोदया, मेरा मतलब है... रामपुर एक विकल्प हो सकता है; वहाँ मंजली खाला जान है। रामपुर में हम बिल्कुल सुरक्षित रहेंगे।’ शायद नवाब मिर्ज़ा, रकीम-उद-दौला की बातों पर जितना विश्वास करते थे, उससे कहीं ज़्यादा विश्वास करते थे।
सब लोग चुप हो गए, सोच में डूबे हुए। दिल्ली छोड़ने का ख्याल उनके दिलों पर खुरदरे कागज की तरह चुभ रहा था।
‘ठीक है,’ वज़ीर ने कहा। ‘मुझे पहले मंझली बाजी से बात करनी चाहिए। और अगर हम रामपुर चले गए तो यहाँ वाले घर का क्या होगा?’
मिर्ज़ा अबू बक्र ने तुरंत जवाब दिया, 'नहीं, आपको इसे छोड़ना नहीं चाहिए। आपके जाने के बाद मैं इसका इंतज़ाम करवा दूंगा।'

अगले दिन, सूर्यास्त की नमाज़ के बाद, शुभ किले के लाहौरी द्वार पर एक छोटा सा काफिला दिखाई दिया। वज़ीर पालकी में सवार थीं; एक बड़ी बैलगाड़ी में उनका सारा सामान था और हबीब-उन निसा पहरा देने के लिए उसमें बैठे थे। पालकी के दाएं और बाएं नवाब मिर्ज़ा खान और राजकुमार खुर्शीद मिर्ज़ा सवार थे, उनके सिर ऊँचे और कमर सीधी थी। पहरेदार ने उन्हें रुकने का इशारा किया, लेकिन वे अनसुने ही आगे बढ़ते रहे। वे गुजरते हुए मुट्ठी भर चांदी और तांबे के सिक्के बिखेरते गए, उनके चेहरे पत्थर की तरह स्थिर थे। सिर झुकाए और पालकी के भारी वस्त्र के पीछे चादर में लिपटे शरीर के कारण वज़ीर खानम कुछ भी नहीं देख पा रही थीं।

याकूब और दाऊद राजपूताना के कठोर रेगिस्तान से होते हुए किशनगढ़ की यात्रा करते हैं।

* उर्दू मौखिक प्रेम कहानी आफताब-ए-शुजाअत (खंड 1) का अनुवाद, शेख तसद्दुक हुसैन द्वारा सुनाया गया। लखनऊ: नवल किशोर प्रेस। पृष्ठ 153-154। 1893

* जवाद-उद-दौला सैयद अहमद खान बहादुर, मकालात-ए सर सैयद से, खंड। 16, संस्करण. मौलाना मुहम्मद इस्माइल पानीपती. 1847

* रकीम-उद दौला ज़ाहिर दिहलवी, दास्तान-ए ग़द्र से, जो उनकी आत्मकथा और दिल्ली में 1857 की घटनाओं का प्रत्यक्ष विवरण है। 1910

प्रकार पर एक टिप्पणी

डांटे फॉन्ट को सर्वप्रथम 1950 के दशक के मध्य में एक धातु फॉन्ट के रूप में बनाया गया था। यह प्रिंटर, पुस्तक डिजाइनर और फॉन्ट कलाकार जियोवानी मार्डरस्टिग और बीसवीं सदी के महान पंच-कटरों में से एक चार्ल्स मालिन के सहयोग का परिणाम था। दोनों ने मिलकर एक विशिष्ट, सुपाठ्य और आकर्षक फॉन्ट विकसित करने के लिए घनिष्ठ सहयोग किया। छोटे अक्षरों के सेरिफ और ऊपरी वक्रों के डिजाइन पर विशेष ध्यान दिया गया ताकि एक सूक्ष्म क्षैतिज तनाव उत्पन्न हो सके, जिससे आंखों को पृष्ठ पर सुचारू रूप से घूमने में सहायता मिलती है।

स्वीकृतियाँ

यह कहना शायद जरूरी नहीं है कि 'द मिरर ऑफ ब्यूटी' जैसी किताब के लेखक असंख्य लेखकों, दोस्तों और दयालु अजनबियों के प्रति कृतज्ञता से भरे हुए हैं, जिन्होंने किसी न किसी रूप में किताब के मूल स्वरूप में योगदान दिया, या जिसे कुछ अलग लेकिन सार रूप में समान रूप में समाहित किया गया।

मैंने जो किताबें पढ़ीं, उनकी संक्षिप्त सूची देना भी संभव नहीं है। ज़रूरी नहीं कि मैंने उन्हें उपन्यास के लिए इस्तेमाल करने के इरादे से ही पढ़ा हो, बल्कि वास्तव में तो मैंने उन्हें इस उपन्यास का विचार आने से बहुत पहले ही पढ़ लिया था। यह प्रक्रिया जीवन भर साहित्य, राजनीति, इतिहास और संस्कृति के विषयों को आत्मसात करने और समझने की थी; पिछले चार दशकों में मेरा अधिकांश काम मूल रूप से साहित्य और संस्कृति के प्रति मेरे प्रेम का परिणाम है, जिसकी कुछ झलक शायद इस किताब में देखी जा सकती है। यह एक ऐसा इतिहास और साहित्यिक संस्कृति है जो दुर्भाग्य से आज हममें से अधिकांश के लिए सुलभ नहीं है—बल्कि अस्तित्वहीन है।

इन परिस्थितियों में, मुझे लगता है कि इस पुस्तक के निर्माण में किसी न किसी रूप में ठोस योगदान देने वाले मित्रों और परिवार के सदस्यों के नामों की सूची बनाना मेरे लिए बुरा नहीं होगा।

गोरखपुर विश्वविद्यालय में उर्दू के दिवंगत प्रोफेसर अफगानुल्लाह, जिनकी असामयिक मृत्यु का मुझे हमेशा अफसोस रहेगा, जिन्होंने मुझे ज़ाहिर दिहलवी की आत्मकथा के दुर्लभ प्रथम संस्करण की एक प्रति भेंट की थी।

मेरे प्रिय मित्र और प्रख्यात आधुनिक कवि अहमद मुश्ताक, जो अब ह्यूस्टन, टेक्सास में रहते हैं, जिनकी कविता की एक पंक्ति को मैंने इस उपन्यास के उर्दू और हिंदी संस्करणों के शीर्षक के रूप में अपनाया है।

प्रसिद्ध उर्दू कथाकार और आलोचक आसिफ फारुखी, जो मुझे उपन्यास का उर्दू संस्करण जल्द से जल्द पूरा करने की याद दिलाने से कभी नहीं थकते थे, और जिन्होंने इसे कराची में अपने प्रकाशन गृह 'शेहेरजादे' से प्रकाशित किया था।

पाकिस्तान के वरिष्ठ विद्वान, निबंधकार और विख्यात कवि असलम फारुखी ने सलीम जाफर के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान की।

मेरी छोटी बेटी बरन फारूकी, जो नई दिल्ली के जामिया मिलिया विश्वविद्यालय के अंग्रेजी विभाग में पढ़ती है, ने उर्दू पांडुलिपि के काफी अंश पढ़े और वास्तव में मुझे पहले पचास पृष्ठ दोबारा लिखने के लिए कहा। उसने अपनी बड़ी बेटी नैसन फातिमा के साथ पाठ्य सामग्री के रूप में उर्दू के कुछ अध्याय भी पढ़े। बरन और उसकी बड़ी बहन मेहर ही वे दो लोग हैं जिन्हें अंग्रेजी संस्करण तैयार करने के प्रलोभन में डालने के लिए सबसे अधिक जिम्मेदार ठहराया जाना चाहिए।

पाकिस्तान के मीरपुर खास के बशीर उनवान, जिन्होंने सलीम जाफर के बारे में बहुत सी उपयोगी

जानकारी प्रदान की और उनकी जीवनी के बारे में मेरी त्रुटियों को सुधारा; पाकिस्तान के मीरपुर खास के करण सिंह, जिन्होंने बहुमूल्य जानकारी प्रदान की और सलीम जाफर के बारे में मेरी त्रुटियों को सुधारा।

प्रख्यात इतिहासकार और मेरे मित्र विलियम डेलरिम्पल, जिनसे हुई बातचीत से मुझे बहुत कुछ सीखने को मिला। मैं उन्हें थॉमस बेकन की अत्यंत दुर्लभ पुस्तक 'फर्स्ट इंप्रेशन्स' के पन्ने भेजने के लिए भी धन्यवाद देना चाहता हूँ, जिसमें शम्सुद्दीन अहमद खान की फांसी का प्रत्यक्ष विवरण दिया गया है।

जमीला, जो उर्दू का अच्छा-खासा हिस्सा पढ़ती थीं, ने उपयोगी टिप्पणियाँ दीं और कपड़ों व आभूषणों के बारे में जानकारी प्रदान की; उन्हीं की बेजोड़ सुरीली आवाज़ में मैंने पहली बार याह्या बदगामी की उपस्थिति में नौहा सुना था; उन्होंने इमाम हुसैन के बेटे कासिम के कर्बला में हुए विवाह समारोहों से संबंधित कई पुराने नौहों की प्रतियाँ भी उपलब्ध कराईं। हमेशा की तरह, उन्होंने मेरा बहुत ख्याल रखा। पत्नी, देखभाल करने वाली और दोस्त, उन्होंने मेरे लिए जीवन आसान बना दिया और उपन्यास लिखने में लगने वाले मेरे कभी-कभी ज़्यादा घंटों पर कभी शिकायत नहीं की। हिंदी और अंग्रेज़ी संस्करणों को देखने के लिए उनका जीवित न रहना मेरे चिरस्थायी दुःखों में से एक रहेगा।

पुरस्कार विजेता आधुनिक उर्दू कवि और चित्रकार, और मेरे मित्र, अहमदाबाद के जयंत परमार, जिन्होंने मुझे गुजरात के सिदी समुदाय के बारे में बहुमूल्य जानकारी दी और मुझे उनके एक ज़िक्र की प्रति प्रदान की।

मेरे युवा मित्र क्रांति कुमार शुक्ला, जो हिंदी लेखक और राजनीतिक कार्यकर्ता हैं, उन्होंने मेरे साथ हिंदी संस्करण (जो पेंगुइन द्वारा 2010 में प्रकाशित हुआ था) को शब्द-दर-शब्द और शुरू से अंत तक पढ़ा और इसे परिपूर्ण बनाने में अतुलनीय सहायता प्रदान की।

बनारस हिंदू विश्वविद्यालय के जाने-माने हिंदी आलोचक और मेरे मित्र, कृष्ण मोहन ने बहुमूल्य सलाह दी और यहां तक कि हिंदी संस्करण के अंतिम प्रूफ को भी पढ़ा।

दास्तान पाठकर्ता, इतिहासकार, फिल्म निर्माता, रोड्स स्कॉलर और इसके अलावा भी बहुत कुछ, मेरे भतीजे महमूद फारूकी ने रवि सिंह को उर्दू संस्करण से परिचित कराया और अक्सर रवि सिंह और चिकी सरकार के साथ मेरे मध्यस्थ के रूप में काम करते थे।

मेरी बड़ी बेटी मेहर फारूकी, जो वर्जीनिया के चार्लोट्सविले विश्वविद्यालय में पढ़ती है और जिसने उर्दू के शुरुआती मसौदे का अधिकांश भाग पढ़ा, ने सुझाव दिए और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि उसने मुझे अंग्रेजी संस्करण तैयार करने के लिए लगातार प्रेरित किया।

प्रख्यात उर्दू कथाकार और आलोचक मुबीन मिर्ज़ा से भी मुझे माफी मांगनी है। मैंने उनसे वादा किया था कि मैं कराची स्थित उनके प्रकाशन गृह, अकादमी बाज़्याफ़्त से उर्दू संस्करण प्रकाशित करवाऊंगा, लेकिन भूलवश मैंने यही वादा आसिफ से कर दिया। मुबीन मिर्ज़ा ने सहर्ष अपना वादा वापस ले लिया।

मेरे छोटे भाई और मध्यकालीन भारत के प्रमुख इतिहासकार, नईमुर रहमान फारूकी का, जिन्होंने

मुझे इतिहास के कई अस्पष्ट विवरणों से अवगत कराया।
प्रसिद्ध उर्दू-हिंदी अनुवादक और पत्रकार नरेश नदीम को मूल उर्दू का हिंदी अनुवाद लगभग रिकॉर्ड समय में तैयार करने के लिए सम्मानित किया गया।
बनारस हिंदू विश्वविद्यालय में उर्दू के प्रोफेसर नसीम अहमद ने राजस्थान के पुराने गजेटियरों पर शोध किया और कर्नल एल्व्स के सही नाम और वर्तनी का पता लगाया।
उर्दू के प्रमुख कथाकार नैयर मसूद, आधुनिक उर्दू के प्रमुख कवि इरफान सिद्दीकी, विख्यात पुस्तकप्रेमी असलम महमूद, और मेरे सभी प्रिय मित्र, जो जब भी मिलते थे, फोन पर या व्यक्तिगत रूप से मुझसे मिलकर उर्दू पांडुलिपि की प्रगति के बारे में पूछते थे। यह बहुत दुख की बात है कि इरफान इसके प्रकाशन को देखने के लिए जीवित नहीं रहे।
मेरी लंबे समय से मित्र, सहयोगी और कोलंबिया विश्वविद्यालय की अनौपचारिक शिष्या फ्रांसेस प्रिचेट, जिन्होंने पूरे अंग्रेजी संस्करण को पढ़ा और मेरी अंग्रेजी को सुधारा तथा अनुवाद कला के बारे में बहुमूल्य सुझाव दिए।
कानपुर के मेरे चचेरे भाई काज़ी नूरुस सलाम को मेरे द्वारा उर्दू संस्करण और अब उसके अंग्रेजी संस्करण को सफलतापूर्वक पूरा करने पर ज़रा भी संदेह नहीं था। उन्हें पूरा विश्वास था कि उपन्यास सफल होगा। उर्दू और हिंदी संस्करण काफी हद तक सफल रहे। उनके आश्वासनों को देखते हुए, वर्तमान संस्करण के बारे में भी ऐसी ही उम्मीदें रखी जा सकती हैं।
रवि सिंह, पेंगुइन बुक्स इंडिया, नई दिल्ली में मेरे पहले प्रकाशक, और नावेद अकबर, मेरे पहले संपादक और एक उत्साही एवं जानकार पाठक। उर्दू और हिंदी संस्करणों की तैयारी और प्रकाशन के दौरान रवि का सहयोग अविश्वसनीय था। चिकी सरकार, पेंगुइन में मेरी वर्तमान प्रकाशक, एक आदर्श मुख्य संपादक, प्रकाशक और प्रमोटर होने के साथ-साथ एक सहानुभूतिपूर्ण श्रोता भी रही हैं। मेरी वर्तमान अंग्रेजी संपादक आर. शिवप्रिया एक ऐसी संपादक हैं, जिनका सपना अधिकांश लेखक देखते हैं, लेकिन उन्हें शायद ही कभी मिलती हैं। यह उपन्यास उनका बहुत ऋणी है। महीनों और वर्षों तक हमने साथ काम किया है, और इस दौरान हमारे बीच एक तरह का सहजीवन विकसित हुआ है: हम दोनों ने उपन्यास को एक साझा ब्रह्मांड में विद्यमान महसूस किया है। शानदार कवर डिज़ाइन, उसके विचार और क्रियान्वयन के लिए मैं पेंगुइन के कला निर्देशक गैविन मॉरिस का धन्यवाद करना चाहता हूँ। मुझे नहीं पता कि किसने वज़ीर खानम के उस रहस्यमय अवतार, उस दिव्य-परी जैसी सुंदरता को खोजा, जो अर्श्या छाबड़ा सिंह (मैं उनसे कभी नहीं मिली) के नाम से जानी जाती हैं (उनका नाम भी उतना ही मनमोहक है), लेकिन मुझे लगता है कि उनके लिए उपयुक्त पोशाक और आभूषण खोजने के लिए मैं एक बार फिर चिकी सरकार की आभारी हूँ। और मुझे ब्रियाना ब्लास्को का भी धन्यवाद करना चाहिए जिन्होंने अर्श्या की सबसे कल्पनाशील मुद्राओं में तस्वीरें खींचीं: निडर, जागरूक और पूरी तरह आत्मनिर्भर, उपन्यास के पाठ को सुशोभित करने वाले कई महिला चित्रों में से एक की तरह। मुझे खुशी है कि अर्श्या पुस्तक के तीनों संस्करणों - उर्दू, हिंदी और अंग्रेजी - के कवर पर दिखाई देती हैं। इस पूरे पहनावे को तैयार करने के लिए गैविन और उनकी टीम को एक बार फिर हार्दिक धन्यवाद।

पैराग्राफ को बहुत लंबा करने से बचने के लिए, मैं यहाँ थोड़ा विराम लेकर अपने संपादकों, शानुज वी.सी., अंबर साहिल चटर्जी, रेनू अगल और रियाजुल हक को धन्यवाद देना चाहता हूँ। मेरा हमेशा से मानना रहा है कि कॉपी एडिटर्स को उन ग्रंथों से नफरत होती होगी जिन्हें उन्हें बड़ी मेहनत से संवारना पड़ता है, छोटी से छोटी त्रुटि को भी निकालना पड़ता है। लेकिन शानुज ने मुझे बताया कि उन्हें वास्तव में इस पुस्तक पर काम करने में आनंद आया; जैसा कि किसी ने कहा है, आश्चर्य कभी खत्म नहीं होते। रेनू और रियाजुल ने नए उर्दू और हिंदी संस्करणों को तुरंत तैयार और प्रकाशित किया। इसके बाद, मैं अलंकृता श्रीवास्तव और प्रियंका सभरवाल को पुस्तक को हर जगह, और विशेष रूप से महत्वपूर्ण लोगों के बीच, प्रचारित करने के उनके प्रयासों के लिए धन्यवाद देना चाहता हूँ।
उर्दू पृष्ठ बनाने और टाइपिंग की गलतियों को सुधारने के लिए रियाज अहमद कातिब और मेरी कागजी फाइलों को संभालने और आम तौर पर खुशी-खुशी मेरी सहायता करने के लिए अमीन अख्तर का धन्यवाद।
मेरे मित्र और कश्मीर के आधुनिक उर्दू कवि शफाक सोपोरी ने तालीम के बारे में बहुमूल्य जानकारी प्रदान की और मुझे एक प्राचीन तालीम का एक पृष्ठ दिया।
मेरे मित्र और आधुनिक उर्दू लेखक सैयद इरशाद हैदर, जो इलाहाबाद के रहने वाले हैं, ने उर्दू संस्करण की प्रूफरीडिंग में कोई कसर नहीं छोड़ी।
अहमदाबाद के तनवीर एजाज, जो उर्दू कवि और अंग्रेजी पत्रकार थे, उन्होंने अहमदाबाद की सिदी सईद मस्जिद के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान की।
यात्रा बुक्स में, मैं नीता गुप्ता और नमिता गोखले को धन्यवाद देना चाहता हूं जिन्होंने उर्दू और हिंदी संस्करणों के निर्माण में महत्वपूर्ण और सहायक भूमिका निभाई।

मेरे मित्र जुल्फकार अहमद तबिश, जो एक प्रसिद्ध पाकिस्तानी कवि और चित्रकार हैं, ने कवर के लिए एक सुंदर चित्र बनाया था; जिसका उपयोग आसिफ फर्रुखी ने अपने उर्दू संस्करणों (2006, 2011) और पेंगुइन ने अपने पहले उर्दू संस्करण (2006) के लिए किया था।

शुरुआत

चलिए बातचीत शुरू करते हैं...

Penguin को Twitter.com@PenguinIndia पर फॉलो करें

हमारी सभी खबरों से अपडेट रहने के लिए YouTube.com/PenguinIndia पर जाएं।

Facebook.com/PenguinIndia पर 'PenguinBooks' को लाइक करें

लेखक के बारे में और अधिक जानने के लिए और इस तरह की अन्य कहानियों के लिए penguinbooksindia.com पर जाएं।

हैमिश हैमिल्टन
यूके | कनाडा | आयरलैंड | ऑस्ट्रेलिया | न्यूजीलैंड | भारत | दक्षिण अफ्रीका
पेंगुइन बुक्स, पेंगुइन रैंडम हाउस समूह की कंपनियों का हिस्सा है, जिनके पते global.penguinrandomhouse.com पर देखे जा सकते हैं।

यह संग्रह 2006 में प्रकाशित हुआ था।
Copyright © Shamsur Rahman Faruqi, 2013
लेखक के नैतिक अधिकार का दावा किया गया है।
ISBN: 978-0-143-42273-0
यह डिजिटल संस्करण 2013 में प्रकाशित हुआ था।
ई-आईएसबीएन: 978-8-18475993-8
यह पुस्तक इस शर्त के अधीन बेची जाती है कि इसे प्रकाशक की पूर्व सहमति के बिना, व्यापारिक रूप से या किसी अन्य तरीके से, उधार नहीं दिया जाएगा, पुनर्विक्रय नहीं किया जाएगा, किराए पर नहीं दिया जाएगा या किसी अन्य प्रकार से प्रसारित नहीं किया जाएगा, सिवाय उस रूप में जिसमें यह प्रकाशित हुई है, और बाद के खरीदार पर भी इसी तरह की शर्त लागू की जाएगी।